Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एलोपैथिक डायग्नोसिस एण्ड ट्रीटमेण्ट

(प्रैक्टिस ऑफ मेडिसिन)

• डॉ. जहान सिंह चौहान

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

॥ श्रीः ॥

व्रजजीवन आयुर्विज्ञान ग्रन्थमाला

१४

एलोपैथिक डायग्नोसिस एण्ड ट्रीटमेण्ट

[ALLOPATHIC DIAGNOSIS & TREATMENT]

(PRACTICE OF MEDICINE)

With Prescription Notes

लेखक

डॉ० जहानसिंह चौहान

एम० एस-सी० ए०, डी० एस-सी० ए०, डी० लिट्० ए०

PHONE : (Shop) 320414 (Office) 333445
चौखम्भा संस्कृत भवन
CHAUKHAMBHA SANSKRIT BHAWAN
Post Box No. 1160
(Opp. Chitra Cinema)
Chowk, Varanasi-221 001

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान

३८ यू० ए०, बंगलो रोड, जवाहरनगर

दिल्ली

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशक

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान

(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)

३८ यू. ए., बंगलो रोड, जवाहरनगर

पो० बा० नं० २११३

दिल्ली ११०००७

दूरभाष : २३६३९१

सर्वाधिकार सुरक्षित

द्वितीय संस्करण १९९३

मूल्य २५०-००

अन्य प्राप्तिस्थान

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

के० ३७/११७, गोपालमन्दिर लेन

पो० बा० नं० ११२९, वाराणसी २२१००१

दूरभाष : ३३३४३१

*

प्रमुख वितरक

चौखम्बा विद्याभवन

चौक (बनारस स्टेट बैंक भवन के पीछे)

पो० बा० नं० १०६९, वाराणसी २२१००१

दूरभाष : ३२०४०८

मुद्रक

ए० के० लिथोग्राफर्स

दिल्ली

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमिका

आधुनिक युग की चिकित्सा-प्रणालियों में 'एलोपैथी' को सर्वोच्च स्थान प्राप्त है, यह कहने की आवश्यकता नहीं है। एलोपैथिक औषधियाँ, यथा—इन्जेक्शन, कैप्सूल्स, टेबलेट, सिरप आदि आशुफलप्रद सिद्ध होती हैं। यही कारण है कि विश्व के प्रायः सभी देशों में यह चिकित्सा-प्रणाली न केवल लोकप्रिय हुई है, अपितु दिन-प्रतिदिन यह प्रगति भी करती जा रही है। इस चिकित्सा-पद्धति के क्षेत्र में नित होने वाले नवीनतम अनुसन्धान सम्पूर्ण मानवता के लिए वरदान सिद्ध हो रहे हैं।

वर्तमान समय में राष्ट्रभाषा हिन्दी में एलोपैथिक चिकित्सा पर अनेकानेक पुस्तकें उपलब्ध हैं। परन्तु उनमें कुछ ही पुस्तकों को उच्च श्रेणी में रखा जा सकता है। इन श्रेणी की पुस्तकों में भी भाषा की दुरूहता तथा विषयों की अस्पष्टता परिलक्षित होती हैं। उन सभी कमियों के निराकरण हेतु इस ग्रन्थ का निर्माण किया गया है। इस ग्रन्थ को सरल एवं सुबोध भाषा में लिखने का प्रयास किया गया है। साथ ही इसे ऐसे ढंग से प्रस्तुत किया गया है कि चिकित्सक के अभाव में पाठकगण स्वयं ही सावधानतापूर्वक इसके निर्देशानुसार रोग-निदान तथा उसका उपचार करने में काफी हद तक सफलता प्राप्त कर सकें।

इस ग्रन्थ में एलोपैथिक चिकित्सा का व्यावहारिक स्वरूप प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। अतएव पुस्तक में कुछ वैशिष्ट्य परिलक्षित होता है—

○ सबसे पहली बात यह है कि चिकित्सा करने से पहले रोग-निदान (Diagnosis) करना आवश्यक है। अतः इसकी पूर्ति के लिए प्रस्तुत ग्रन्थ में अति आधुनिकतम टेस्टों/परीक्षणों आदि का यथाशक्य विवेचन करते हुए रोग के निश्चित स्वरूप को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। रोग के द्वारा शारीर-क्रिया के किस अंग-विशेष में विकृति है अथवा अवयव-विशेष में रचना सम्बन्धी कौन-सी विकृति है, इनका शीघ्र एवं स्पष्ट पता चल जाता है।

○ रोग के निदान या विनिश्चय (Diagnosis) के बाद उसकी चिकित्सा करना ही चिकित्सक का प्रमुख ध्येय होता है। उस चिकित्सा को एक निश्चित प्रक्रिया के अन्तर्गत प्रयुक्त किया जाय तो निश्चय एवं प्रभावी परिणाम प्राप्त होते हैं। उक्त ग्रन्थ में रोगों के चिकित्सा-सिद्धान्तों एवं उपक्रमों का शास्त्रानुमत उल्लेख किया गया है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ चिकित्सा-सिद्धान्तों के उल्लेख के बाद तदनुरूप औषधि व्यवस्थाओं को एक निश्चित क्रम से प्रस्तुत करने का उद्देश्य यह है कि चिकित्सक को चिकित्सा करते समय कठिनाई का अनुभव न हो। प्रस्तुत ग्रन्थ में औषधि का एक से अधिक व्यवस्था-पत्रों में उल्लेख करके चिकित्सक के सामने सुव्यवस्थित रूप में विकल्प भी प्रस्तुत कर दिया है, जिससे कि वह रोगी और और रोग की स्थिति को देखकर तदनुरूप व्यवस्था कर सके। एक बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि इन व्यवस्था-पत्रों में प्रचलित एवं बाजारों से सुलभ औषधियों का ही समावेश किया गया है। औषधि व्यवस्था-पत्रों के अतिरिक्त अन्य औषधियों का भी एकत्र उल्लेख करके औषधि-चयन में चिकित्सक की स्वतंत्रता को बनाये रखने का यत्न किया गया है। प्रत्येक रोग की चिकित्सा के साथ-साथ पथ्यापथ्य के प्रचलित एवं उपयोगी द्रव्यों का उल्लेख करके चिकित्सा की व्यावहारिक परिपूर्णता का यत्न किया गया है। ग्रन्थ के आरम्भ में एक चिकित्सक के लिए निदान एवं चिकित्सा में व्यवहृत विषयों एवं पुस्तक के अन्त में सरकार के राष्ट्रीय कार्यक्रमों (चिकित्सा स्वास्थ्य) का भी स्पष्ट उल्लेख किया गया है।

○ पाठकों, चिकित्सकों एवं मेडिकल छात्रों की सुविधा की दृष्टि से इस ग्रन्थ को अनेक खण्डों में बाँटा गया है। प्रत्येक खण्ड में सम्बन्धित रोगों का वर्णन क्रम से किया गया है। इस प्रकार यह एलोपैथिक चिकित्सा का एक अद्वितीय नवीनतम अनुसन्धानात्मक जानकारी देने वाला कायचिकित्सा का सर्वमान्य ग्रन्थ बन सका है।

○ चिकित्सा में शिक्षा-प्राप्ति के बाद भी प्रैक्टिस आरम्भ करने वालों के लिए तो यह पुस्तक पूर्णतः सहायक सिद्ध होगी; तथा इसके लिखे जाने का उद्देश्य एवं प्रयास उस समय पूरा होगा जब प्रत्येक मेडिकल प्रेक्टिशनर्स एवं चिकित्सक की मेज पर यह पुस्तक रखी होगी। साथ ही उनके सुझाव एवं टिप्पणी समय समय पर प्रकाशक को प्राप्त होते रहेंगे ताकि आवश्यकतानुसार इसमें और भी संशोधन किये जा सकें।

○ कठिन भाषा का प्रयोग न करके पुस्तक में सरल एवं सुबोध हिन्दी भाषा का प्रयोग किया गया है, जिससे कि आधुनिक युग का प्रत्येक विद्यार्थी एवं चिकित्सक विषय को भली प्रकार समझ सके। इस ग्रन्थ में 'कैंसर' एवं 'एड्स' आदि भयावह एवं जटिल विषयों को भी सुबोध बनाने का पूर्ण प्रयास किया गया है।

○ यह 'एलोपैथिक डायग्नोसिस एण्ड ट्रीटमेण्ट' का प्रथम भाग है। इसका द्वितीय एवं पूरक भाग 'मेडिकल इमर्जेन्सीज' अर्थात् 'आपातकालीन

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा' नाम से पृथक् से प्रस्तुत किया गया है। इसके अन्तर्गत संकटकालीन अवस्था में जब रोगी के प्राण जाने को होते हैं, उस समय चिकित्सक द्वारा तत्काल अपनी सूझ-बूझ से सावधानीपूर्वक प्राणरक्षक औषधियों का प्रयोग कर रोगी को बचाया जा सकता है। इस आधार पर इस पुस्तक के द्वितीय भाग की एक स्वतन्त्र ग्रन्थ के रूप में पृथक् से रचना की गयी है। इसमें १०० से अधिक संकटकालीन रोगों का पेटेण्ट औषधि व्यवस्थापत्रों, सारणियों, सामान्य निर्देशों एवं चिकित्सा के साथ खुलासा वर्णन किया गया है।

पुस्तक का यह परम उपयोगी अद्वितीय संस्करण मेडिकल कालेज के छात्रों, चिकित्सकों एवं चिकित्सा-क्षेत्र में कार्यरत मेडिकल प्रैक्टिशनर्स के लिए एक नवीन दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रोत्साहित करेगा। चिकित्सा-जगत् का यह अभूतपूर्व ग्रन्थ जिसमें 'मेडिकल प्रेस्क्रिप्शन' (रोगी-व्यवस्थापत्र) एवं कई औषधियाँ को एक साथ मिलाकर चिकित्सा (Combination therapy) दी गई है, जिससे आप अपने रोगियों को शीघ्र स्वास्थ्य-लाभ प्राप्त करा सकते हैं और नगर में ख्याति प्राप्त कर सकते हैं। अब तक ऐसा विषय किसी भी हिन्दी भाषी ग्रन्थ में अन्यत्र देखने को नहीं मिलेगा। इसमें इंग्लैण्ड एवं अमेरिका के तमाम चिकित्सा सम्बन्धी ग्रन्थों, मेडिकल जर्नल्स, पम्पलेट्स आदि का अच्छे से अच्छा नवीनतम शोधपूर्ण निचोड़ प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत ग्रन्थ में कतिपय 'सामयिक रोग और उनकी प्रभावी चिकित्सा' जैसे—'एड्स', 'संक्रामक पीलिया', 'विचित्र ज्वर' आदि को विस्तार रूप से प्रस्तुत किया गया है।

○ हमे पूर्ण आशा है कि हमारी लिखित 'आयुर्वेद की पेटेण्ट औषधियाँ' 'सचित्र स्त्रीरोग चिकित्सा', 'सचित्र इन्जेक्शन चिकित्सा' आदि पुस्तकों की भाँति यह ग्रन्थ भी चिकित्सक वर्ग, कालेज के छात्र और नये शिक्षार्थियों, मेडिकल प्रेक्टिसनर्स एवं सर्व साधारण के लिए परमोपयोगी सिद्ध होगी।

○ पुस्तक में मैंने अनेक सुकृतियों विशेषकर अंग्रेजी पुस्तकों से सहायता ली है। तत्तद् महनीय रचनाओं का स्थल-स्थल पर उल्लेख भी किया है। उन सभी ग्रन्थकारों तथा अन्य कृतियों का जिनसे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में प्रस्तुत रचना में सहायता ली गई उनका मैं परम कृतज्ञ हूँ। मैं अपने उन सभी सहयोगियों एवं मित्रों विशेषकर चिकित्साधिकारी डॉ० वहीद मलिक एम० बी० बी० एस० एवं हितैषी श्रीमती रजनी जी का भी आभारी हूँ, जो बराबर मुझे कुछ न कुछ लिखते रहने की प्रेरणा देते रहे हैं। उनकी प्रेरणा ही मेरा सम्बल है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ मेरी धर्मपत्नी श्रीमती रेशमदेवी चौहान के सौहार्दपूर्ण सहयोग एवं श्रीमती उमाकान्ती चौहान के निरन्तर प्रोत्साहन तथा गृहस्थ कार्यों के दायित्व के आधिक्येन निर्वाह से मुझे ग्रन्थ-लेखन में एकाग्रता एवं निश्चिन्तता प्राप्त हुई है; उसी के परिणामस्वरूप ग्रन्थ का लेखन दोनों के सामंजस्यपूर्ण सहयोग से सम्पन्न हुआ है। मेरे छोटे से घर-संसार का निरन्तर ख्याल रखने वाले पुत्र-त्रय ओमप्रकाश सिंह, रामप्रकाश सिंह एवं शिवप्रकाश सिंह ने लेखन कार्य में अपना व्यवस्थित, सुनियोजित एवं सुरुचिपूर्ण सहयोग देकर मुझे मानसिक तोष प्रदान किया है।

○ ग्रन्थ का सुन्दर एवं आकर्षक मुद्रण तथा नयनाभिराम साज-सज्जा चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान की अपनी विशेषता है। ग्रन्थ इतने आकर्षक रूप में शीघ्रता के साथ प्रकाश में आ सका, इसका सारा श्रेय प्रकाशन-संस्थान को ही है। इस प्रतिष्ठान के व्यवस्थापक और इनके परिवार जनों का जो स्नेह एवं सौहार्द मुझे मिला है, उसके लिए मैं इनका आभारी हूँ।

विनीत

जहानसिंह चौहान

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषयानुक्रम

विषय-प्रवेश

एलोपैथिक चिकित्सा प्रणाली	१
चिकित्सक का रोगी के प्रति कर्तव्य	५
रोग-निदान एवं चिकित्सा में बरतने योग्य सावधानियाँ	७
तापमान (Temperature)	१३
रक्तचाप (Blood pressure)	१७
चिकित्सक के लिए इमर्जेन्सी बैग	२०
टीकाकरण (Vaccination)	२२
चिकित्सकीय डॉक्टरी माप	२५
मैट्रिक पैमाने को अंग्रेजी पैमाने में बदलने का सूत्र	२६
अंग्रेजी पैमाने को मैट्रिक पैमाने में बदलने का सूत्र	२६
मात्रा का समप्रभावी स्थूल अनुमान	२७
मूत्र की विशेषताएँ	२७
प्रेस्क्रिप्शन लिखना	२८
परीक्षण या जाँच की पर्ची	२९
मेडिकल ड्रग्स लिटरेचर	२९
विशिष्ट उपयोगी फार्मूले	३०
संयोग-विरुद्ध औषधियाँ	३१
चिकित्सा में आकस्मिक औषधि-प्रतिक्रियाएँ	३२
स्वास्थ्य से सम्बन्धित कुछ आवश्यक बातें	३७
प्रतिशत शक्ति के विलयन (सोल्यूशन) बनाने की तालिका	३८
डॉक्टरी शब्दों के संक्षिप्त रूप एवं उनके अर्थ	३९
कुछ अन्य चिह्न जिनका प्रयोग चिकित्सक अपने व्यवस्था-पत्रों में करते हैं	४१
List of Abbreviation	४२
बन्द हो चुकी औषधियाँ और उनके निर्माताओं के नाम	४५

*

प्रथम खण्ड

पाचन-संस्थान के रोग

(Diseases of Digestive System)

१. अग्निमांद्य/अजीर्ण (Despepsia/Indigestion)	३
२. अरुचि (Anorexia)	१२

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. मुखपाक (Stomatitis)	१८
४. हृद्दाह (Pyrosis/Heart burn)	२८
५. जठर-अत्यम्लता (Hyperacidity)	३२
६. स्प्रू/ग्रहणी रोग (Sprue)	३८
७. आध्मान (Flatulence)	४५
८. मलावरोध/कोष्ठबद्धता (Constipation)	५४
९. शूल (Colic)	६५
१०. जठरशोथ/आमाशयशोथ (Gastritis)	७९
११. पेचिस (Dysentery)	८८
१२. अमीबा-रुग्णता (Amoebiasis)	१०७
१३. अन्त्रावरोध (Intestinal obstruction)	१३०
१४. आन्त्र-यक्ष्मा (Intestinal tuberculosis)	१४०
१५. प्रादेशिक आन्त्रशोथ (Regional Enteritis)	१४४
१६. आमाशय का विस्फार (Dilatation of the Stomach)	१४६
१७. अरक्तता/रक्तक्षीणता (Anaemia)	१४८
१८. कृमिरुग्णता (Helminthiasis)	१५७
१९. यकृत्-संन्यास/यकृत्पात (Hepatic coma/Hepatic failure)	१७८
२०. बवासीर (Piles)	१८१
२१. उदरावरणशोथ (Peritonitis)	१९०
२२. उण्डुकपुच्छशोथ (Appendicites)	२०२
२३. पूयजन्य पित्तवाहिनीशोथ (Pyogenic Cholangitis)	२१३
२४. कुक्षि-सम्बन्धी रोग (Coeliac Disease)	२१४
२५. आमाशय-व्रण (Peptic ulcer)	२१८
२६. अग्न्याशयशोथ (Pancreatitis)	२३५
२७. पित्ताश्मरिता (Cholelithiasis)	२४५
२८. जलोदर (Ascites)	२५०
२९. यकृत्शोथ (Hepatitis)	२५८
३०. पित्ताशयशोथ (Cholecystitis)	२७१
३१. यकृत् का सिरोसिस (Cirrhosis of the Liver)	२८३
३२. हायटस हर्निया (Hiatus Hernia)	२९३
३३. यकृद्-वृद्धि (Enlargement of the Liver)	२९६
३४. व्रणीय बृहदन्त्रशोथ (Ulcerative colitis)	२९९
३५. मुखगुहा का कैंसर (Cancer of the Buccal cavity)	३०६
३६. आमाशय का कैंसर (Cancer of the Stomach)	३१३
३७. यकृत् का कैंसर (Cancer of the Liver)	३२४

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३८. उदरगत यक्ष्मा/क्षयोदर (Abdominal Tuberculosis) ३२८
३९. पित्ताशय का कैंसर (Cancer of the Gall-bladder) ३३१
४०. बृहदन्त्र एवं मलाशय का कैंसर (Cancer of the Colon and Rectum) ३२४
○ उदररोगों की पेटेण्ट मिश्रित औषधि-चिकित्सा (Combination Therapy of Patent Medicines for Abdominal Disorders) ३३७

*

द्वितीय खण्ड

श्वसन-संस्थान के रोग
(Diseases of Respiratory System)

१. प्रतिश्याय/सामान्य सर्दी (Coryza/Common cold) ३५५
२. खाँसी/कास (Cough) ३७२
३. श्वसनीशोथ (Bronchitis) ३८३
४. फुप्फुसशोथ (Pneumonia) ३९८
५. श्वसनी-फुप्फुसशोथ (Broncho-pneumonia) ४१५
६. श्वसनी-विस्फार (Bronchiectasis) ४२५
७. श्वसनिका दमा/श्वास (Bronchial Asthma) ४३३
८. फुप्फुसावरणशोथ (Pleurisy) ४६०
९. उष्णकटिबन्धीय इओसिनोफीलिया (Tropical Eosinophilia) ४७०
१०. वातस्फीति (Emphysema) ४७८
११. अन्तःपूयता (Empyema) ४८६
१२. फुप्फुस-तन्तुमयता (Pulmonary Fibrosis) ४८९
१३. फुप्फुस-विद्रधि (Lung Abscess) ४९३
१४. तीव्र श्वासप्रणाल-श्वसनीशोथ (Acute Tracheo-bronchitis) ४९७
१५. फुप्फुस-धूलिमयता (Pneumoconiosis) ४९८
१६. फुप्फुसपात (Atelectasis) ५००
१७. स्वतःस्फूर्त वातवक्ष (Spontaneous Pneumothorax) ५०३
१८. परिफुप्फुस-निःसरण (Pleural Effusion) ५०६
१९. फुप्फुसी घनास्र-अन्तःशल्यता (Pulmonary Thrombo-embolism) ५०८
२०. श्वसनिका कार्सिनोमा (Bronchiolar Carcinoma) ५१०
२१. श्वसनीजन्य कार्सिनोमा (Bronchogenic Carcinoma) ५११

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२२. वक्ष का दर्द (Thoraxic Pain) ५१९
२३. वायुविवरशोथ (Sinusitis) ५२०

*

तृतीय खण्ड

हृद्वाहिका-संस्थान के रोग
(Diseases of Cardio-vascular System)

१. कोर पल्मोनेल (Cor Pulmonale) ५२५
२. हृदय की धड़कन (Palpitation) ५२९
३. हृद्रोध (Heart-block) ५३७
४. मूर्च्छा (Syncope) ५४२
५. हृत्मन्दता (Bradycardia) ५४४
६. हृदयावरोध (Cardiac Arrest) ५४५
७. हृत्क्षिप्रता (Tachycardia) ५४७
८. हृत्पात (Heart Failure) ५५५
९. हृत्शूल (Angina Pectoris) ५७२
१०. हृद्-धमनी घनास्रता (Coronary Thrombosis) ५८८
११. हृदयावरणशोथ (Pericarditis) ५९९
१२. अन्तर्हृत्शोथ (Endocarditis) ६११
१३. द्विकपर्दीकपाटिका-अक्षमता (Mitral Incompetence) ६२२
१४. अल्प रक्तदाब (Hypotension) ६३४
१५. अति रक्तदाब (Hypertension) ६४२
१६. धमनीकाठिन्य (Arteriosclerosis) ६५३

*

चतुर्थ खण्ड

मूत्र-प्रजनन-संस्थान के रोग
(Diseases of Urogenital System)

१. मूत्रकृच्छ्र (Dysuria) ६६१
२. मूत्र-असंयति (Incontinence of Urine) ६६२
३. अमूत्रता/मूत्राघात (Anuria) ६६३
४. वृक्कशोथ (Nephritis) ६६५
५. मूत्राशयशोथ/वस्तिशोथ (Cystitis) ६८२
६. तीव्र गोणिकावृक्कशोथ (Acute Pyelonephritis) ६८७

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. मूत्रपथ का संक्रमण (Infection of Urinary Tract) ६९४
८. मूत्रविषमयता (Uraemia) ६९७
९. पुनःस्थग्रन्थिशोथ (Prostatitis) ७०५
१०. वृक्कशूल/गुर्दे की पथरी (Renal colic/Renal calculus) ७०७
११. शैंकराभ/साफ्ट सोर (Chancroid/Soft sore) ७१३
१२. अविशिष्ट मूत्रमार्गशोथ (Nonspecific Urethritis) ७१४
१३. मूत्र-मार्ग का दर्द (Pain in Urethra) ७१६
१४. रक्तमेह (Haematuria) ७१६
१५. मधुमेह (Diabetes Mellitus) ७१७
१६. उदकमेह (Diabetes Insipidus) ७२४

*

पञ्चम खण्ड

मानसिक विकार
(Psychic Disorders)

१. तन्त्रिकादौर्बल्य/तन्त्रिकावसाद (Neurasthenia) ७२९
२. विखण्डित मनस्कता (Schizophrenia) ७३१
३. अनिद्रा (Insomnia) ७४०
४. उन्माद/पागलपन (Mania/Insanity) ७४५
५. मद्यसार-व्यसन (Alcohol Addiction) ७५२
६. योषापस्मार (Hysteria) ७५७
७. मनोलैंगिक विकार (Psycho-sexual Disorders) ७६८

*

षष्ठ खण्ड

तन्त्रिका-तन्त्र के रोग
(Diseases of Nervous System)

१. शिरःशूल (Headache) ७८७
२. गृध्रसीरोग (Sciatica) ८०२
३. कटिवेदना (Lumbago) ८०७
४. लास्य/कम्पवात (Chorea) ८१२
५. बहुतन्त्रिकाशोथ (Polyneuritis) ८१४
६. अपस्मार/मिर्गी (Epilepsy) ८१८
७. त्रिधारा तन्त्रिकार्ति (Trigeminal Neuralgia) ८२९
८. भ्रमि (Vertigo) ८३२

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. अधरांगघात (Paraplegia) ८३९
१०. पक्षाघात (Hemiplegia) ८४१
११. अर्दित (Facial Paralysis) ८५२
१२. मस्तिष्कशोथ (Encephalitis) ८५४
१३. अपतानिका (Tetany) ८५५
१४. सकम्प पक्षाघात (Parkinsonism) ८५६
१५. मस्तिष्क विद्रधि (Brain Abscess) ८५९

*

सप्तम खण्ड

संक्रामक रोग
(Infectious Diseases)

१. मस्तिष्कशोथ (Encephalitis) ८६३
२. पूतिजीवरक्तता (Septicaemia) ८७२
३. पूयरक्तता (Pyaemia) ८७५
४. बाटुलिज्म (Botulism) ८७८
५. जियार्डिया-ग्रणता (Giardiasis) ८८०
६. आमाशयान्त्रशोथ (Gastroenteritis) ८८४
७. गलसुआ (Mumps) ८९०
८. कुक्कुरखाँसी (Whooping Cough) ८९७
९. इन्फ्लूएञ्जा (Influenza) ९०८
१०. मलेरिया (Malaria) ९१८
११. खसरा/रोमान्तिका (Measles) ९४२
१२. छोटी माता (Chicken Pox) ९५२
१३. आन्त्रज्वर (Typhoid) ९५८
१४. फाइलेरिया रोग (Filariasis) ९७८
१५. मस्तिकावरणशोथ (Meningitis) ९८६
१६. रोहिणी (Diphtheria) १००८
१७. सुजाक (Gonorrhoea) १०२१
१८. आतसक (Syphilis) १०२९
१९. हर्पीज ज़ोस्टर (Herpes Zoster) १०३९
२०. जलसन्त्रास (Hydrophobia) १०४२
२१. विसर्प (Erysipelas) १०४७
२२. आमवातिक ज्वर (Rheumatic Fever) १०५०
२३. विसूचिका/हैजा (Cholera) १०६२

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२४. बालपक्षाघात (Poliomyelitis) १०८६
२५. पुनरावर्ती ज्वर (Relapsing Fever) १०९८
२६. स्कार्लेट फीवर (Scarlet Fever) ११००
२७. मूषकदंश ज्वर (Rat-bite Fever) ११०२
२८. टाइफस फीवर (Typhus Fever) ११०३
२९. डेंग्यू ज्वर (Dengue Fever) ११०७
३०. लीशमैनिएसिस (Leishmaniasis) १११२
३१. ब्रूसेलोसिस (Brucellosis) ११२९
३२. हर्पीज जेनिटेलिस (Herpes Genitallis) ११२०
३३. ग्रेनूलोमा वेनेरियम (Ganuloma Venereum) ११२१
३४. लिम्फोग्रेनुलोमा इन्वीनल (Lymphogranuloma Inguinale) ११२३
३५. रोहे (Trachoma) ११२५
३६. जर्मन मीजिल्स (Germen Measles) ११२९
३७. कुष्ठरोग (Leprosy) ११३०
३८. चेचक/मसूरिका (Small Pox) ११४०
३९. राजयक्ष्मा (Tuberculosis) ११४४
४०. एड्स (AIDS) ११७२

*

अष्टम खण्ड

कतिपय सामयिक रोग और उनकी चिकित्सा

१. संक्रामक पीलिया (Infectious Hepatitis) १२०३
२. क्यों हो जाती है शरीर पर सूजन ? १२१०
३. वमन : कारण पहिचानिए ! १२१७
४. मस्तिष्कगत रक्तस्राव (Brain Haemorrhage) १२२६
५. रक्तवमन १२२७
६. घेंघा रोग (Goitre) १२२९
७. साँस फूलना १२३०

परिशिष्ट

१. राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रम १२३७
२. विभिन्न रोगों में भोजन-व्यवस्था एवं पथ्यापथ्य १२४४

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एलोपैथिक डायग्नोसिस एण्ड ट्रीटमेण्ट

(प्रैक्टिस ऑफ मेडिसिन)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-प्रवेश

एलोपैथी चिकित्सा प्रणाली

आज संसार के तमाम देशों में एलोपैथी चिकित्सा बहुत उन्नति कर चुकी है। एलोपैथी में ऐसी-ऐसी औषधियों का अविष्कार हो चुका है, जिससे पुराने एवं असाध्य रोग भी थोड़े समय में दूर हो सकते हैं। इसकी एक-एक औषधि गले से नीचे उतरते ही तत्काल प्रभावी हो जाती है। इञ्जेक्शन द्वारा दी गई औषधि (I/V) रोगी को मौत के मुँह से खींच लाती है। आपत्कालीन चिकित्सा (Emergency treatment) जो मरणासन्न रोगी की एकमात्र चिकित्सा है, एलोपैथी की ही देन है। ऐसी चिकित्सा किसी अन्य पैथी में उपलब्ध नहीं है। आजकल अनेकों प्रकार के उपकरणों का अविष्कार हो गया है, जिसकी सहायता से रोगी के अंगों की विभिन्न अवस्थाओं का बड़ी शीघ्रता एवं सरलता से पता लगाया जा सकता है।

एलोपैथी चिकित्सा के नित नये बढ़ते कदम और खोजों तथा अनुसंधान से प्रायः सभी रोगों का निदान तथा उपचार करना आज के युग में सम्भव हो गया है। इस सन्दर्भ में नित्य नये-नये अनुसंधान इस चिकित्सा-पद्धति में हो रहे हैं; साथ ही नई नई मशीनों तथा औजारों का आविष्कार किया जा रहा है। कैंसर जैसे असाध्य रोगों का इलाज आज एलोपैथी चिकित्सा में ही उपलब्ध है। चिकित्सा विज्ञान इस बात के लिए पूर्णरूपेण आश्वस्त है कि कैंसर की सर्वसुलभ चिकित्सा शीघ्र ही उपलब्ध हो सकेगी। आज वह समय आ गया है और वह दिन दूर नहीं जबकि कैंसर जैसा भयानक रोग गम्भीरावस्था में पहुँचने के पश्चात् भी बिलकुल ठीक हो सकता है। आज के वैज्ञानिक तथा कैंसर-विशेषज्ञ इस बात के लिए भी प्रयासरत हैं कि कैंसर की आरम्भिक अवस्था में ही रोग का निदान हो सके तथा इसकी गम्भीरावस्था का भी सटीक उपचार किया जासके।

आजकल संसार के प्रत्येक देश में बड़े-बड़े चिकित्सक अपने पुराने और असाध्य रोगियों तक की चिकित्सा पेटेण्ट औषधियों से करने लग गये हैं। पेटेण्ट औषधियों से चिकित्सा करने पर चिकित्सा-जगत् में क्रान्ति पैदा कर दी है। औषधि कूटने-पीसने और उसके मिक्श्चर बनाने की आवश्यकता अब प्रायः नहीं रही। मृत्यु के मुँह में गये असाध्य और भयानक रोगियों तक को पेटेण्ट ड्रग्स से थोड़े समय में ही स्वस्थ बनाया जा सकता है।

संसार की बड़ी-बड़ी औषधि-निर्माता कम्पनियाँ जो करोड़ों रुपयों से स्थापित की गई हैं, योग्य वैज्ञानिकों और चिकित्सकों के संरक्षण में भयंकर

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोगों और उनकी चिकित्सा पर वर्षों तक अनुसंधान करती हैं। वर्षों के अनुभवों के बाद उस औषधि को लाखों रोगियों पर सफलता से प्रयोग करने के बाद बाजार में लाया जाता है। पेटेण्ट ड्रग्स से चिकित्सा प्रभावशाली होने के कारण थोड़े समय में ही संसार के तमाम देशों में प्रचलित हो चुकी है।

विगत वर्षों में चिकित्सा-अनुसंधान के क्षेत्र में बहुत कार्य हुआ है, जिसके फलस्वरूप कुछ समय पूर्व तक जो औषधियाँ रामबाण समझी जाती थीं, वे अब निरुपयोगी अथवा हानिकारक सिद्ध हो रही हैं। अतः उनके स्थान पर अब नई प्रभावशाली औषधियाँ विकसित की जा रही हैं। योरप, अमेरिका और भारत में पिछले कई वर्षों से रोगियों की चिकित्सा 'कॉम्बीनेशन थेरापी' से की जा रही है और लाखों चिकित्सक अपने रोगियों की चिकित्सा इस विधि से कर रहे हैं।

एलोपैथी में 'इञ्जेक्शन चिकित्सा' का अपना विशिष्ट स्थान है। इञ्जेक्शन द्वारा दी गई सम्पूर्ण औषधि शरीर में शोषित हो जाती है। इसलिएं इञ्जेक्शन द्वारा दी गई थोड़ी-सी भी औषधि अपना समुचित प्रभाव दिखलाती है। जबकि मुख द्वारा दिये जाने पर इसका बहुत-सा अंश आमाशय में ही नष्ट हो जाता है। अन्तःशिरा इञ्जेक्शन (I/V) से मरणासन्न रोगी के प्राणों की रक्षा की जाती है। यह अत्यधिक रक्तस्राव, औषधियों की प्रतिक्रियास्वरूप उत्पन्न तीव्रग्राही स्तब्धता, डिहाइड्रेशन (Dehydration), कॉमा (Coma), हार्ट फेल आदि गम्भीर अवस्थाओं में रोगी के प्राणों को बचाने का सर्वश्रेष्ठ उपाय है। इस मार्ग द्वारा रोगी के शरीर में ब्लड, ग्लूकोज, ग्लूकोज सेलाइन इत्यादि उपयोगी द्रव बड़ी मात्रा में पहुँचाकर रोगी को मौत के मुँह से निकाला जा सकता है।

एलोपैथी में आज शल्यचिकित्सा-पद्धति बड़ी ही तीव्र गति से उन्नति कर रही है। शरीर का ऐसा कोई भी अंग अब नहीं बचा है जिस पर कि सर्जन शस्त्र-क्रिया न कर सके। इस क्षेत्र में पिछले कुछ वर्षों के अन्दर आश्चर्यजनक प्रगति हुई है। बहुत-से कठिन एवं बड़े ऑपरेशन जो पहले नहीं हो सकते थे (जैसे मस्तिष्क का ऑपरेशन) किन्तु नवीनतम आविष्कारों के फलस्वरूप वे अब अधिक सुरक्षित रूप में किये जा सकते हैं। वक्ष की शल्य-चिकित्सा (Chest surgery) में भी 'हृदय की शल्य-चिकित्सा' (Surgery of heart) में बड़ी तेजी से उन्नति हो रही है। आशा है निकट भविष्य में यह एक साधन-सम्पन्न शाखा बन जायेगी। हृदय की शल्य-चिकित्सा में प्रशिक्षित सर्जन (कार्डियोलाजिस्ट), हृदयरोग चिकित्सक, संज्ञाहरक, रेडियोलाजिस्ट, जीवरसायन विशेषज्ञ (Biochemist) तथा कुशल परिचायक (Nurshing staff) सम्मलित हैं। इन रोगियों में रोग का ठीक-ठीक निदान करना आवश्यक है। इसके लिए हृदय कैथीटर प्रवेशन (Cardiac catheterisation)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा एञ्जियो-कार्डियोग्रैफिक क्रियाएँ विकसित की गई हैं। हाइपोथर्मिया एवं अतिरिक्त कार्मिक परिसंचरण (Extra corporal circulation) की सहायता से अब हृदय को खोलकर प्रत्यक्ष रूप से देखते हुए अंदर की जन्मजात (Congenital) अथवा बाद में उत्पन्न व्याधियों को शस्त्रक्रिया द्वारा ठीक कर सकते हैं। रक्तधर शल्य-चिकित्सा (Vascular surgery) भी काफी विकसित हो चुकी है।

मानव के प्रत्येक अंग की शल्य चिकित्सा अब सम्भव हो गई है। शरीर-क्रिया विज्ञान (Physiology) और जीवरसायन विज्ञान के आधार पर आधुनिक शल्य-चिकित्सा का अनुसंधान कार्य तेजी से आगे बढ़ रहा है। शल्य-चिकित्सा की इन प्रमुख समस्याओं के रहस्यों के उद्घाटन में रेडियो-सक्रिय आइसोटोप्स' का सहयोग उल्लेखनीय है। इन पदार्थों के उपयोग की सहायता से शरीर में प्रवेश के बाद विभिन्न रासायनिक द्रव्यों की क्रिया, गति और परिणाम का ठीक-ठीक ज्ञान हो सकता है।

○ अनेक चमत्कारिक आविष्कारों के साथ-साथ 'एक्स-रे' (X-ray) की उपयोगिता नवीन चिकित्सा विज्ञान के अन्तर्गत अत्यधिक बढ़ गई है। आजकल एक्स-रे तथा रेडियम चिकित्सा (X-ray and Radium therapy), 'इन्फ्रारेड किरणें' (Infrared rays), 'अल्ट्रासाउण्ड, मेडिकल डायथर्मी का अत्यधिक उपयोग चिकित्साजगत् में किया जा रहा है। यह सब एलोपैथी चिकित्सा विज्ञान की ही देन है। रेडियम चिकित्सा का उपयोग त्वचा के रोग (पामा Eczema), खुजली, दाद, किलायड, त्वचा-कैंसर आदि घातक रोगों में किया जा रहा है। प्रायः सभी कर्कट रोगों (Malignant diseases) की चिकित्सा विकरण तथा शस्त्रकर्म द्वारा की जाती है। इन्फ्रारेड का उपयोग शरीर के बाह्य अंगों के शोथ में किया जाता है; विशेषकर मांसशोथ (मायोसाइटिस), सौत्रिकतन्तु शोथ (Fibrosis), नाड़ी शोथ (Neuritis), कटिशूल (Lumbago), वातनाड़ी शूल (Neuralgia), मोच, कंटूजन आदि में। अल्ट्रावायोलेट किरणों का उपयोग ऑस्टोमलेसिया, अस्थिमज्जाशोथ (ऑस्टियोमाइलाइटिस), क्षयज नाड़ीव्रण, अस्थिभग्न, बालकों की उचित शारीरिक वृद्धि न होना, नासाग्रसनिका के जीर्ण उपसर्ग, लूपस बल्गेरिस, सोरिएसिस, विसर्प, मुँहासे, एलोपेसिया तथा ई० एन० टी० आदि रोगों में होता है।

○ प्लास्टिक सर्जरी शरीर की रचना को सुधारने की पद्धति है। इसके द्वारा विकृत अंग-रचना को सामान्य रूप तथा सामान्य रचना को अधिक आकर्षक रूप दिया जाता है। विरूपता से उत्पन्न कुंठा को दूर करने में प्लास्टिक सर्जरी वरदान सिद्ध हुई है। इसका उपयोग केवल सौन्दर्य-वृद्धि ही नहीं है, अपितु यह कैंसर तथा कुष्ठ एवं जले रोगियों के लिए जीवन का वरदान

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी है। लोगों को चाहिए कि शरीर की विरूपताओं को ईश्वर का अभिशाप न मानकर प्लास्टिक सर्जरी की उपलब्धियों का अधिक से अधिक लाभ उठायें।

○ एलोपैथी में एक से एक उत्तम प्रभावशाली और प्राणरक्षक औषधियाँ मौजूद है। यह एलोपैथिक औषधियों का ही चमत्कार है कि संसार से प्लेग और चेचक जैसे भयंकर प्राणलेवा रोगों का नामोनिशान तक मिटा दिया गया है। इन्हीं औषधियों के प्रताप से आज भारतीय नागरिकों की औसत आयु ३५ वर्ष से बढ़कर ५२ वर्ष हो गई है।

एलोपैथी में त्वचा-चिकित्सा (Dermatology) आधुनिक चिकित्सा विज्ञान का प्रमुख अंग है। रूस, अमेरिका और यूरोप के दूसरे देशों में चर्म और उसके रोगों पर काफी अनुसंधान हो चुके हैं। बड़े-बड़े सरकारी अस्पतालों में 'चर्मरोग चिकित्सा' के पृथक्-पृथक् विभाग हैं।

○ आधुनिक समय में विभिन्न अंगों के प्रतिरोपण का कार्य भी तेजी से हो रहा है। अब 'किडनी' के गम्भीर रोगियों को भी प्रतिरोपण (Transplantation) द्वारा जीवनदान मिल रहा है। इसी प्रकार विकारग्रस्त हृदय, यकृत् इत्यादि अन्य अंगों को भी निकाल कर उनके स्थान पर स्वस्थ अंग लगाये जा रहे हैं। इनके द्वारा इन रोगियों में स्वस्थ अंगों की ही भाँति कार्य सम्पन्न हो रहा है।

○ सन् १९६७ में 'सफल हृदय प्रतिरोपण' के बाद सम्पूर्ण विश्व में सर्जनों ने इसे प्रारम्भ किया। सन् १९७१ तक १६९ हृदय-प्रतिरोपण किये जा चुके थे। यकृत, अग्न्याशय (Pancrease) और फुप्फुस (Lungs) का भी प्रतिरोपण किया जा रहा है। अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के प्रतिरोपण का भी प्रयत्न किया जा रहा है। डिम्बग्रन्थियों और वृषण के स्व-प्रतिरोपण मनुष्यों में किये जा रहे हैं और उनमें कुछ सफलता भी मिली है। पैराथाइराइड और थाइराइड ग्रन्थियों के प्रतिरोपण का प्रयास मनुष्यों में किया गया है और इसके लिए प्रतिरोपण किसी अन्य व्यक्ति या पशुओं से प्राप्त किया जाता है। प्रतिरोपण के लिए अस्थियाँ, नेत्रवाहिनियाँ आदि पर्याप्त समय तक रखे जा सकते हैं और इनके बैंक भी स्थापित हो गये हैं।

○ आधुनिक चिकित्सा विज्ञान (एलोपैथी चिकित्सा) को संक्रमण को नियंत्रित करने में महत्त्वपूर्ण सफलता मिली है।

○ चिकित्सा विज्ञान के 'नित नये चरण और बढ़ते कदम'—हमें यह लिखने में तनिक भी संकोच नहीं है कि एलोपैथी चिकित्सा विज्ञान ने आज इतनी उन्नति कर ली है कि कल तक के असाध्य रोग अब साध्य हो गये हैं। एलोपैथी की 'सल्फा ड्रग्स' एवं 'एण्टी-बायोटिक्स' दवाओं ने असाध्य रोग को साध्य बना दिया है। इसके लिए किसी भी रोगी को जवाब देने से पहले आपको कई बार सोचना चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि आप जिसको असाध्य

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं अनिष्टकारक घोषित कर दें और वह एलोपैथिक की चमत्कारिक औषधियों से स्वस्थ और निरोग हो जाय।

○ यही नहीं आज एड्स जैसे भयानक और जानलेवा रोग जिससे सम्पूर्ण विश्व भयभीत है और जिसकी कोई विशिष्ट चिकित्सा नहीं है और अन्ततः इससे रोगी की मृत्यु निश्चित है। आज वैज्ञानिक एवं चिकित्सक इसकी चिकित्सा के समाधान में लगे हुए हैं। बचाव हेतु वैक्सीन का निर्माण जो कभी सम्भव नहीं था, कर लिया गया है और अभी प्रायोगिक स्थिति में कार्य चल रहा है, जिसमें अवश्य ही पूर्ण सफलता मिलकर रहेगी। यह सब एलोपैथी चिकित्सा-प्रणाली की ही देन है।

एलोपैथी चिकित्सा आज सम्पूर्ण संसार की अन्तर्राष्ट्रीय माननीय चिकित्सा स्वीकार की जा रही है। जिसमें निरन्तर खोज एवं शोधकार्य चल रहे हैं। यह चिकित्सा प्रणाली आज मानव के लिए वरदान सिद्ध हो रही है।

चिकित्सक का रोगी के प्रति कर्त्तव्य

चिकित्सक और रोगी में एक अच्छा सम्बन्ध या समझौता होना चाहिए। चिकित्सक के जीवन में आने वाले अनेकों रोगियों में यद्यपि वह एक होता है। किन्तु रोगी के जीवन में चिकित्सा का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है और वह चिकित्सक के प्रति बहुत बड़ा विश्वास एवं बहुत बड़ी आशा लेकर आता है। अतः प्रत्येक चिकित्सक के लिए यह आवश्यक है कि वह रोगी का विश्वास प्राप्त करे। साथ ही उससे सम्बन्धित समस्याओं के सम्बन्ध में उससे विचार-विमर्श करना चाहिए।

○ चिकित्सालय के सभी सेवा-कार्य रोगी के लिए किये जाते हैं। अतः सभी सम्बन्धित लोगों का उद्देश्य रोगी की भलाई करना है। यदि सर्जन में रोगी के प्रति हार्दिक सहानुभूति नहीं है तो वह शस्त्र-क्रिया में चाहे जितना दक्ष हो, किन्तु रोगी की चिकित्सा में उसे अप्रशिक्षित ही माना जायेगा। **चिकित्सक का यह कर्त्तव्य है कि वह अपने रोगी को सदैव आश्वासन देता रहे। रोग-निवारण सम्बन्धी आशाजनक तथ्यों को रोगी के सामने तत्परता-पूर्वक रखना चाहिए।**

रोग के निदान, निदान सम्बन्धी तकनीकिक विधियों, औषधि-योजना एवं शस्त्रकर्म के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी प्राप्त करने की उत्सुकता रोगी को होना स्वाभाविक है। कुछ चिकित्सक इन तथ्यों की पूर्ण रूप से उपेक्षा करते हैं और परिणाम यह होता है कि रोगी के मन में सर्जन अथवा चिकित्सक के प्रति

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्वास उत्पन्न नहीं हो पाता है। बहुत संक्षेप में बतला भी दिया जाय तो रोगी सन्तुष्ट नहीं होता है और वह चिकित्सालय के अन्य कर्मचारियों से इस सम्बन्ध में प्रश्न पूछता रहता है। इस प्रकार से औषधि-चिकित्सा अथवा शस्त्रकर्म की प्रक्रिया (Medicine treatment or surgical procedure) के सम्बन्ध में रोगी और उसके सम्बन्धियों को विस्तारपूर्वक समझा देना चाहिए। इस प्रकार की बातचीत और विचार-विमर्श से रोगी और उसके सम्बन्धियों के साथ अच्छा सम्बन्ध स्थापित हो जाता है और पश्चात् कर्म की अवधि में किसी उपद्रव के उत्पन्न हो जाने पर चिकित्सक की स्थिति सुरक्षित बनी रहती है।

○ वास्तव में चिकित्सालय में सर्वाधिक ध्यान रोगी पर रखना चाहिए, और सभी प्रयत्न उसकी रोग-मुक्ति के लिए ही होना चाहिए।

○ रोगी के साथ आत्मीयता अभिव्यक्त करना तथा बन्धु-सदृश उसका विश्वास प्राप्त करना आवश्यक है। उसे प्रारम्भ से ही भली प्रकार से आश्वस्त करना चाहिए।

रोगी से प्रथम भेट में एक चिकित्सक को प्रत्येक चिकित्सा के विशेषज्ञ की भाँति तथा एक ही स्थान पर चिकित्सक एवं सर्जन का कार्य करना पड़ता है जो कल्पना करने पर अत्यन्त कठिन कार्य प्रतीत होता है। किन्तु चिकित्सा विज्ञान का पर्याप्त ज्ञान होने पर यह कार्य उतना ही सरल हो जाता है। बात केवल सिद्धान्त रूप से रोगी का विश्वास प्राप्त करने एवं चिकित्सा आरम्भ करने की है।

जब कोई रोगी आपके क्लिनिक में आता है तो उसको यह विश्वास होना आवश्यक है कि वह सुरक्षित स्थान पर आ गया है। जिसके लिए चिकित्सक को सदैव चुस्त रहना चाहिए। रोगी को बैठने के लिए उचित प्रबन्ध हो तथा निरीक्षण में उसे कम से कम कष्ट हो। रोगी का निरीक्षण कम से कम समय में एवं फुर्ती के साथ होना चाहिए। साथ ही जो रोगी अत्यधिक पीड़ित हो अथवा इमर्जेन्सी की स्थिति में हो, तो पूर्व के आये अन्य रोगियों से निवेदन करते हुए उस रोगी का निरीक्षण एवं चिकित्सा पहले करनी चाहिए।

किसी भी रोगी को अपने निजी अनुभव एवं मधुर स्वभाव के आधार पर आप इसे तैयार कर सकते हैं कि वह स्वेच्छा से अपनी परेशानियाँ आपको बतला दे। रोगी जो भी परेशानियाँ बतलाये चिकित्सक को उसे ध्यानपूर्वक सुनना चाहिए। रोगी को विश्वास में लेने का संतोषजनक उत्तर एक ही है— **'आप जो कुछ बता रहे हैं वह रोग नहीं है, केवल रोग के लक्षण हैं, जो आपको प्रतीत हुए है या हो रहे हैं'**। ऐसा सुनकर रोगी यदि किसी मानसिक रोग का शिकार नहीं है तो वह अवश्य सन्तुष्ट हो जायेगा तथा आपके साथ पूरा सहयोग करेगा। तत्पश्चात् रोगी से प्रश्न पूछकर आवश्यक जानकारी प्राप्त

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर सकते हैं, जो कि रोग-निदान में सहायक सिद्ध होगी। रोगी के प्रस्तुत लक्षणों के सम्बन्ध में यह पूछा जा सकता है कि रोग कब और किस प्रकार पैदा हुआ है। सामाजिक एवं पारिवारिक जानकारी से भी रोगों के निदान में सहायता मिलती है।

उपरोक्त सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त करने के बाद चिकित्सक को चाहिए कि अब वह रोगी का निरीक्षण स्वयं करें। रोग के चिह्न (Signs) देख कर अपनी योग्यता के आधार पर उसका निर्णय करे। यह सारी प्रक्रिया फुर्ती एवं चुस्ती के साथ इस प्रकार करें कि रोगी के मस्तिष्क पर आपकी कार्य-कुशलता की अमिट छाप पड़ जाये।

○ रोगी के लिए भी नितान्त आवश्यक है कि वह जिस चिकित्सक के अधीनस्थ चिकित्सा करा रहा है, वह उसकी हर सम्भव भलाई का कार्य कर रहा है। जीवन को बचाने के लिए उसके द्वारा किये जाने वाले सभी कार्य उसके भले के लिए हैं। वह चिकित्सक का विश्वास कर चिकित्सा कराये और चिकित्सक के हर निर्देशों का विधिपूर्वक पालन करे। निर्दिष्ट औषधियों को समयानुसार बतलाई गई मात्रा के अनुरूप सेवन करे। वह अपने मन से सभी शंकाओं को निकाल दे और दृढ़ विश्वास रखे कि अब वह एक कुशल चिकित्सक के अधीनस्थ चिकित्सा के अन्तर्गत चल रहा है अतः बिलकुल ठीक हो जायेगा।

रोग-निदान एवं चिकित्सा में बरतने योग्य सावधानियाँ

किसी भी रोगी की सफल चिकित्सा के लिए रोग-निदान (Diagnosis) परम आवश्यक है। चिकित्सक को चाहिए कि वह रोगी की परीक्षा बड़ी ही सावधानी एवं विवेकपूर्वक करे। रोग का ठीक-ठीक निदान न हो सकने पर चिकित्सक को उसकी चिकित्सा में सफलता नहीं मिलती है और वह अपयश का भागी होता है। इसलिए रोग-निदान में विशेष सावधानी की आवश्यकता पड़ती है। त्रुटिपूर्ण रोग-निदान अनिष्टकारी हो सकता है।

○ रोगी का निदान करने के लिए उसकी कई प्रकार से परीक्षा करनी चाहिए। इसमें रोगी की व्यक्तिगत जानकारी प्राप्त करना महत्त्वपूर्ण है।

○ रोग का क्या पूर्वानुमान होगा। अन्त में रोगी स्वस्थ हो जायेगा या मौत के मुँह में चला जायेगा—यह समझकर निश्चित कर लेना चाहिए।

○ आपके पास उपचार के लिए जो भी रोगी आये तो सबसे पहले आपको रोगी के लक्षणों को सावधानी से देखकर तथा रोगी से प्रश्न पूछकर रोग का निदान करना चाहिए। अर्थात् यह निश्चय करना चाहिए कि उसे कौन-सा रोग है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ रोग-निदान में सहायक कोई महत्त्वपूर्ण बात छूटने न पाये। इसके लिए आपको एक नियम बना लेना चाहिए और लक्षणों तथा रोगी की बतायी शिकायतों को एक कागज पर नोट कर लेना चाहिए। ये नोट उस समय चिकित्सा के लिए बड़े सहायक सिद्ध होते हैं। जब कभी भविष्य में उस रोगी का इलाज करना पड़ता है। अतः रोगी का हाल ध्यानपूर्वक लिखना चाहिए, ताकि कोई महत्वपूर्ण बात छूट न जाये। उसे कब से कष्ट है और कैसे आरम्भ हुआ, रोग कैसे बढ़ा और वर्तमान में उसकी स्थिति क्या है। इस बीच कोई चिकित्सा कराई गई है तो उसका परिणाम क्या रहा? यह जानकारी लेना भी आवश्यक है। रोगी से यह भी पूछना चाहिए कि उसके माता-पिता को कौन से रोग थे। क्योंकि उपदंश, आमवात, मधुमेह, राजयक्ष्मा, अपस्मार, उन्माद आदि रोगों के विषय में यह प्रवृत्ति रहती है कि यह माता-पिता से सन्तान में आ जाते हैं। इससे सही निदान में भूल नहीं होती है। गरीब लोगों में हरे-शाक-सब्जी न खाने से विटामिन की न्यूनता से रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इसी प्रकार अधिक मांस खाने वाले तथा मद्यपान करने वालों को गठिया (Gout) प्रायः उत्पन्न हो जाता है।

○ स्त्रियों में रोग-निदान करते समय इस बात को भी देखना चाहिए कि रोगिणी गर्भवती तो नहीं है। यदि वह गर्भवती है तो अत्यन्त सावधानी पूर्वक औषधि का चुनाव करना चाहिए। क्योंकि बहुत-सी औषधियाँ जो सामान्य अवस्था में हानिरहित होती हैं, वे गर्भावस्था में शिशु को हानि पहुँचा सकती है।

चिकित्सा में एक चिकित्सक को कुछ विशेष सावधानियों की आवश्यकता पड़ती है—

○ किसी रोग का सफलतापूर्वक उपचार करने के लिए यह आवश्यक है कि आप उस रोग की प्रकृति एवं उससे उत्पन्न लक्षणों से भली-भाँति परिचित हो जायें। उदाहरण के लिए एक व्यक्ति आपके पास सिर-दर्द की शिकायत लेकर आता है। यह दर्द विभिन्न कारणों से हो सकता है। अतः इसकी सफलतापूर्वक चिकित्सा करने के लिए पहले आपको यह पता लगाना जरूरी है कि वह दर्द किस कारण से है। यह पीड़ा सड़े हुए दाँत (Dental caries) के कारण भी हो सकती है। ऐसी अवस्था में दाँत का उखाड़ना ही एकमात्र प्रभावशाली चिकित्सा है। अथवा यह दर्द किसी तंत्रिका में पीड़ा के कारण हो सकती है। इस दशा में केवल 'एस्प्रिन' या 'पैरासिटामोल' देकर दर्द को दूर किया जा सकता है। यह भी हो सकता है कि दर्द मस्तिष्क के किसी ऐसे रोग के कारण हो जिसका कोई इलाज न हो। जो कुछ भी हो; परन्तु आपके लिए यह आवश्यक है कि आप इसकी चिकित्सा शुरू करने से पहले यह निश्चित कर लें कि वास्तव में क्या रोग है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ चिकित्सा करते समय औषधि-योजना के अन्तर्गत यह देख लेना चाहिए कि अमुक औषधि रोगी में एलर्जी कारक तो नहीं है। इसका पूर्व बचाव आवश्यक है। अथवा उस औषधि का किसी विशेष अंग पर हानिकारक प्रभाव (Contra-indication) तो नहीं होगा।

○ इञ्जेक्शन शरीर में औषधि पहुँचाने का एक सर्वोत्तम साधन है। इस माध्यम से दी गई औषधि तत्काल लाभ दिखलाती है। साथ ही रक्त-परिसंचरण में सीधे पहुँचने से वह शीघ्र विकृत स्थान पर पहुँचकर तत्काल चमत्कारिक प्रभाव दिखलाती है। जहाँ इञ्जेक्शन चिकित्सा के इतने प्रभावकारी लाभ हैं, वहाँ कभी-कभी यह चिकित्सक के लिए एक भारी समस्या उत्पन्न कर देते हैं और कभी-कभी घातक भी सिद्ध होते हैं। इसलिए किसी भी इञ्जेक्शन का प्रयोग करने से पहले इसकी प्रयोग-विधि, विपरीत निर्देश (Contra-indications) इत्यादि सभी बातों की पूर्ण जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए। कुछ इंजेक्शन ऐसे होते हैं जो इण्ट्रामस्कुलर देने पर पूर्ण लाभ पहुँचाते हैं और कोई हानिकारक प्रभाव नहीं होता है। परन्तु यदि उन्हें अज्ञानतावश अथवा असावधानी से अन्तःशिरा मार्ग से (Intravenous) लगा दिया जाता है तो रोगी के प्राण खतरे में पड़ जाते हैं। उदाहरणतः 'पेनिसिलीन' इसी प्रकार की औषधि है। इसका प्रयोग केवल अन्तःपेशी मार्ग से ही किया जाना चाहिए। केवल सुग्राहिता परीक्षण (Sensitivity test) के लिए कुछ मात्रा अन्तः-स्त्वक् (Intradermal) अथवा अधस्त्वक् (Subcutaneons) मार्ग से दी जा सकती है। परन्तु यदि भूल से पेनिसिलीन 'अन्तःशिरा मार्ग' से प्रविष्ट करा दी जाती है तो रोगी की मृत्यु तक हो सकती है।

○ पेनिसिलीन का इञ्जेक्शन अन्तःपेशी मार्ग से देते समय सिरिञ्ज के पिस्टन को पीछे खींचकर अवश्य देख लेना चाहिए। यदि रक्त आता है तो सुई को आगे या पीछे हटाकर और एक बार फिर स्थान निश्चित करके तब औषधि को प्रवेश कराना चाहिए।

○ पेनिसिलीन के अतिरिक्त लगभग सब इञ्जेक्शनों के मार्ग निश्चित होते हैं। इसलिए इञ्जेक्शन देने से पूर्व यह देख लेना बहुत जरूरी है कि जिस मार्ग से उसे दिया जा रहा है उस मार्ग से औषधि दी भी जा सकती है अथवा नहीं।

○ इञ्जेक्शन देने से पूर्व समस्त सम्बन्धित उपकरणों का जीवाणुरहित होना बहुत आवश्यक है, अन्यथा इञ्जेक्शन के स्थान पर संक्रमण (Infection) पहुँचकर वहाँ विद्रधि (Abscess) उत्पन्न हो सकती है।

○ इञ्जेक्शन की अन्य हानि यह है कि यदि अज्ञानतावश अथवा असावधानी के फलस्वरूप इञ्जेक्शन गलत स्थान पर लग गया तो कोई भी तंत्रिका

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(Nerve) क्षतिग्रस्त हो सकती है। जिससे रोगी का हाथ अथवा पैर सदा के लिए बेकार हो सकता है।

○ **रोगी किसी औषधि विशेष के प्रति एलर्जिक हो सकता है**—इन्जेक्शन द्वारा यदि ऐसी औषधि शरीर में प्रविष्ट करा दी जाती है तो प्रतिक्रिया स्वरूप खुजली, शीतपित्त आदि उत्पन्न हो सकते हैं। ये लक्षण तो साधारण प्रकार के होते हैं और किसी भी 'प्रति-हिस्टामिनिक' औषधि से ठीक किये जा सकते हैं। परन्तु कभी-कभी कुछ रोगियों में एक तीव्र प्रकार की प्रतिक्रिया उत्पन्न हो सकती है, जिसे तीव्रग्राही स्तब्धता (Anaphylactic shock) कहते हैं।

○ **'तीव्रग्राही स्तब्धता' एक गम्भीर अवस्था होती है। इसमें रोगी का रक्तदाब (B. P.) एकाएक गिरने लगता है। वह पसीने से तर हो जाता है और साँस लेने में कठिनाई महसूस करता है। यदि तत्काल उपचार (Emergency treatment) न किया जाये तो रोगी की मृत्यु तक हो सकती है।**

○ **सावधान**—प्रायः पेनिसिलीन आदि के इन्जेक्शन से इस प्रकार की स्थिति आ जाती है। ऐसे इन्जेक्शनों का प्रयोग सदैव सुग्राहिता परीक्षण करने के बाद करना चाहिए और चिकित्सक के पास वे सब इन्जेक्शन होने चाहिए जिनके द्वारा रोगी को ऐसी गम्भीर स्थिति से निकाला जा सके। यदि चिकित्सक के पास एड्रीनलीन, डेकाड्रान, एविल, मैफेण्टाइन आदि इन्जेक्शन उपलब्ध नहीं हैं तो पेनिसिलीन भूल कर भी नहीं लगाना चाहिए। ग्लूकोज सैलाइन ५% की बोतलें भी चिकित्सक के पास होनी चाहिए, ताकि आई० वी० ड्रिप (I/V Drip) की तत्काल व्यवस्था की जा सके।

नोट—इसलिए यह मार्ग जहाँ अनेक गुणों से परिपूर्ण है, वहाँ कभी-कभी चिकित्सा की असावधानी से अनर्थकारी भी सिद्ध हो सकता है। अतएव चिकित्सक को इन्जेक्शन मार्ग से औषधि प्रवेश कराते समय इन्जेक्शन सम्बन्धी पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।

○ इन्जेक्शन सम्बन्धित प्रत्येक वस्तु चाहे वे सिरिंज हो अथवा नीडिल अथवा चिकित्सक के हाथ—इन सभी का स्वच्छ और जीवाणुरहित होना परम आवश्यक है, अन्यथा घातक परिमाण उत्पन्न हो सकते हैं। इन्जेक्शन सदैव विश्वसनीय औषधि-निर्माताओं के ही प्रयुक्त करना चाहिए। एम्पुल और वायलों को धूल, मिट्टी आदि से बचाकर ढके पात्र में रखना चाहिए, ताकि उनको प्रयोग में लाते समय धूल आदि के कण हाथों पर लगकर उनको संक्रमित न कर दें। मल्टीडोज वायलों को मेज पर खुला हुआ नहीं रखना चाहिए। वायल को प्रयोग में लाने से पूर्व वायल की रबर पर स्प्रिट अवश्य लगा लेना चाहिए। चिकित्सक को चाहिए कि वह इन्जेक्शन लगाने से पूर्व अपने हाथों को भलीभाँति धोकर साफ कर ले।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ आजकल इंग्लैण्ड और अमरीका आदि देशों में बाहु और कूल्हे पर इण्ट्रामस्कुलर इञ्जेक्शन लगाने की प्रथा प्रायः समाप्त-सी हो गई है, क्योंकि ये स्थान खतरे से खाली नहीं हैं। वहाँ आजकल जाँघ (Thigh) के बाहरी भाग में इञ्जेक्शन लगाया जाता है। **दो वर्ष से कम आयु के बच्चों में तो नितम्ब प्रदेश पर इञ्जेक्शन कदापि नहीं लगाना चाहिए, बल्कि जाँघ में इसी स्थान पर लगाना चाहिए।**

○ ब्लड और औषधि के द्रव का तापमान और pH समान होना आवश्यक है अन्यथा उपद्रव उत्पन्न हो सकते हैं।

○ **अन्तःशिरा मार्ग से औषधि-प्रवेश कराने में सावधानी की बहुत आवश्यकता होती है। यदि औषधि के साथ हवा के बुलबुले रक्त में प्रविष्ट हो जाते हैं तो अचानक कभी-कभी रोगी की मृत्यु भी हो सकती है।**

○ शिरा में इञ्जेक्शन बहुत धीरे-धीरे लगाना चाहिए। लगभग १० मिली० औषधि में २ मिनट का समय लगना चाहिए।

○ चिकित्सक को अन्तःशिरा में इञ्जेक्शन लगाने से पूर्व प्रयुक्त होने वाली औषधि के विषय में पूर्ण जानकारी कर लेनी चाहिए। उदाहरणतः कैल्शियम का इञ्जेक्शन लगाने पर शरीर में एकाएक गर्मी महसूस होना एक प्राकृतिक घटना है। यदि यह सत्य मालूम है तो रोगी को आश्वस्त किया जा सकता है कि कुछ देर बाद उसकी यह गर्मी स्वतः ठीक हो जायेगी, अन्यथा इस प्रकार की **स्वाभाविक घटनाएँ चिंता का विषय बन जाती हैं।**

○ एम्पुल या वायल पर छपे निर्देश देख लीजिए कि इञ्जेक्शन इण्ट्रावीनस प्रयोग के लिए है अथवा इण्ट्रामस्कुलर के लिए। जो इञ्जेक्शन जिस मार्ग से प्रयोग के लिए हों उसे उसी मार्ग से प्रयोग कीजिए, अन्यथा रोगी के प्राण संकट में पड़ सकते हैं। इञ्जेक्शन तभी लगाने चाहिए जब अनिवार्य हो अथवा वह औषधि मुख से सेवन के लिए बनाई ही न गई हो।

○ पेनिसिलीन का इञ्जेक्शन लगाने से पहले रोगी से पूछ-ताछ कर लेनी चाहिए कि पहले भी कभी उसे पेनिसिलीन के इञ्जेक्शन लग चुके हैं अथवा नहीं। यदि लगे थे तो कोई प्रतिक्रिया तो नहीं हुई थी। यदि कोई प्रतिक्रिया हुई थी तो बहुत ही सोच-समझ कर और पेनिसिलीन की सैन्सीटिविटी का टेस्ट करने के पश्चात् ही इञ्जेक्शन लगाना चाहिए।

○ **यह टेस्ट करने के लिए १००० यूनिट पेनिसिलीन प्रति मिली० इञ्जेक्शन जल में घुले हों; ऐसे घोल में से ०.२ मिली० लेकर इसका अन्तस्त्वचीय(I/D) इञ्जेक्शन लगा देते हैं और रोगी को २० मिनट तक बैठा रहने को कहा जाता है, ताकि इञ्जेक्शन के स्थान पर उत्पन्न प्रतिक्रिया को देखा जा सके।**

याद रखिये—यह देखने में आया है कि कोई-कोई रोगी इतने अधिक सैन्सिटिव (Sensitive) होते हैं कि त्वचीय टेस्ट से ही उनमें एनाफिलैक्टिक शॉक उत्पन्न हो जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ अधिकांशतः इन्जेक्शन लगाने का कार्य कम्पाउण्डर या नर्स ही करती हैं। अतः चिकित्सक को चाहिए कि वह उन्हें निर्देश दे दें कि जिस रोगी को भी पेनिसिलीन इन्जेक्शन लगाये, उन्हें २०-२५ मिनट तक चिकित्सालय में किसी बहाने बैठाये रखे और उन पर नजर रखे। यदि इस दौरान में रोगी के कानों में झनझनाहट हो, साँस लेने में रुकावट महसूस हो और चक्कर आने लगें तो समझना चाहिए कि उसे एनाफिलैक्टिक शॉक होने वाला है। ऐसे समय उसके उपचार की तत्काल व्यवस्था करनी चाहिए।

○ रोगी के लक्षणों एवं चिह्नों का बारीकी से अध्ययन करके रोग का निश्चय करने के पश्चात् उचित चिकित्सा का प्रबन्ध करना चाहिए।

○ हमारे चिकित्सक एक और बड़ी गलती करते हैं कि दूध पीते बच्चों को ही मल्टी-विटामिन्स के यौगिक सेवन कराने लगते हैं। माताएँ भी वर्षों तक इन्हें बे-रोकटोक सेवन कराती रहती हैं। यह स्मरण रखना चाहिए कि विटामिन 'ए' और 'डी' यदि अधिक मात्रा में सेवन कराये जाते हैं तो शरीर में एकत्रित होकर ये हानि पहुँचाते हैं। क्योंकि बच्चों के इन विटामिन यौगिकों में दो विटामिन ही मुख्य रूप से होते हैं। अतः बच्चों को हानि न पहुँचे, यह सावधानी रखनी चाहिए।

○ शक्तिवर्धक औषधि के रूप में विटामिनों का कोई उपयोग नहीं। यह भी स्मरण रखना चाहिए कि जिन बच्चों को समुचित मात्रा में दूध पीने को मिलता है, उन्हें कैल्शियम के योग का सेवन कराने का कोई औचित्य नहीं। अधिक मात्रा में कैल्शियम का सेवन करने से वृक्कों में पथरी तथा अन्य उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं।

○ **बाजार में आज सैंकड़ों तरह के लिवर टॉनिक बिक रहे हैं** तथा नई-नई कम्पनियाँ अपने-अपने ब्रॉण्ड से कोई न कोई लिवर टॉनिक बाजार में लाती रहती हैं। हमारे अधिकांश चिकित्सक यकृत की वास्तविक कार्य-प्रणाली को प्रायः भूल बैठे हैं। अतः जब भी कोई मरीज उनके पास यह शिकायत लेकर आता है कि उसे भूख कम लगती है, खाना भलीभाँति हजम नहीं होता है तथा गैस बनती है---तो चिकित्सक उनकी गहराई से जाँच करने की बजाय घोषणा कर देते हैं कि आपका लिवर कमजोर हो गया है, अतः अमुक लिवर टॉनिक पीना शुरू कर दें। वास्तव में लिवर की कमजोरी चिकित्सकों एवं सामान्य जनता के मस्तिष्क की कल्पना है, यह कोई रोग नहीं।

○ वास्तव में उदर सम्बन्धी समस्त विकारों के लिए यकृत को दोषी ठहराना गलत है। कई बार आमाशय में ही कुछ ऐसी गड़बड़ी हो जाती है कि पाचनक्रिया विकृत हो जाती है। कई बार आँतों में बिना किसी स्पष्ट कारण के ऐंठन जैसी होने लगती है। पित्ताशय में भी रोग होने से पाचन

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्बन्धी विकार हो जाते हैं। कई रोगियों में मानसिक तनाव के कारण भी अपचन का रोग हो जाता है।

○ आमतौर पर कुछ समय के पश्चात् केवल खान-पान की सावधानी रखने से यह समस्त लक्षण अपने आप शान्त हो जाते हैं। परन्तु चिकित्सक यह समझता है कि चूँकि उसने रोगी को अमुक लिवर टॉनिक पीने को दिया था। अतः उसी की करामात से रोगी रोग मुक्त हुआ है।

तापमान

(Temperature)

तापमान की विभिन्न अवस्थाएँ

शीतकायावस्था (Collapse)	९५° फा० से नीचे
स्वाभाविक से कम ताप (Subnormal)	९६° से ९७° फा० तक
साधारण ज्वरावस्था (Slight febrile)	९९° से १०१° फा० तक
मध्य ज्वरावस्था (Moderate febrile)	१०१° से १०३° फा० तक
अधिक ज्वरावस्था (High fever)	१०३° से १०५° फा० तक
तीव्र ज्वरावस्था (Hyperpyrexia)	१०५° फा० से ऊपर

○ युवकों की अपेक्षा बच्चों में ताप कुछ अधिक होता है।

तापक्रम के लिए फारेनहाइट (फा०) एवं सेण्टीग्रेट (सें०) की डिग्रियों में अन्तर

फारनहाइट	सेण्टीग्रेड	फारनहाइट	सेण्टीग्रेड
९५	३५	१०१.	३८.३
९६	३५.६	१०१.३	३८.५
९६.८	३६	१०२	३८.९
९७	३६.१	१०२.२	३९
९७.७	३६.५	१०३	३९.५
९८	३६.७	१०४	४०
९८.४	३६.९	१०४.९	४०.५
९८.६	३७	१०५	४०.६
९९	३७.२	१०५.८	४१
९९.५	३७.५	१०६	४१.१
१००	३७.८	१०६.७	४१.५
१००.४	३८	१०७.६	४२

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फारनहाइट से सेण्टीग्रेड तथा सेण्टीग्रेड से फारनहाइट परिवर्तन के लिए निम्न सूत्र (Formula) का उपयोग कर सकते हैं—

$$\text{फारनहाइट} = \frac{\text{सेण्टीग्रेड (C)} \times ९}{५} + ३२$$

$$\text{सेण्टीग्रेड} = \frac{\text{फारनहाइट} - ३२}{९} + ५$$

रोगी का टेम्परेचर चार्ट्स

दिनांक	प्रातःकाल		दोपहर और सायंकाल		रात्रि	
	४ बजे	८ बजे	१२ बजे	४ बजे	८ बजे	१२ बजे

विभिन्न स्थानों से लिये हुए टेम्परेचरों में अन्तर

क्रम	स्थान	औसत टेम्परेचर	सामान्य टेम्परेचर
१	मुँह में	९७.० से ९९° फा०	९८.४° फारेनहाइट
२	बगल में	९७ से ९८.४° फा०	९७.८° फा०
३	गुदा में	९८ से ९९.५° फा०	९८.६° फा०
४	योनि में	९८.५ से १००° फा०	९९.६° फा०

○ मुँह की अपेक्षा बगल का तापक्रम $\frac{१}{२}$ डिग्री कम होता है।

○ गुदा और योनि में मुँह की अपेक्षा $\frac{१}{२}$ डिग्री ताप अधिक होता है।

○ भयंकर अवस्था में ५ से १० मिनट के अन्तर पर भी थर्मामीटर लगाया जा सकता है। आमतौर पर दिन में ४ बार (सुबह, दोपहर, शाम और रात में) थर्मामीटर लगाना चाहिए।

○ रोगी को अधिकतम टेम्परेचर प्रायः दोपहर के बाद या शाम को होता है। न्यूनतम तापमान सुबह के समय होता है।

○ एक बार ज्वर सामान्य होने के बाद यदि ज्वर दुबारा तीव्र हो जाय तो समझ लीजिये कि रोगी को कोई न कोई उपद्रव (Complication) होने वाला है।

○ रोगी के लक्षणों में सुधार न होते हुए भी यदि ज्वर नीचे चला जाय तो रोगी की रोगनिरोधक शक्ति में कमी, तापक्षीणता, ऊष्माहीनता

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(Deficiency of heart production) समझना चाहिए। यह हिमांग, पतनावस्था (Collapse), शरीर के किसी आशय में छिद्र (Perforation of Hoilo woragam) तथा रक्तस्राव आरम्भ होने के आगमन का भी सूचक है।

○ न्यूमोनिया, मलेरिया, प्रदाहिक ज्वर, विसर्पजन्य ज्वर, खसरा, तथा आभाशय एवं आँत के रोगों में ज्वर का आक्रमण अकस्मात् होता है।

○ टीका लगाने के बाद प्रायः १०४° फा० तक बुखार हो जाता है। किन्तु वह ४८ घण्टे के अंदर कम हो जाता है।

○ थकावट और शरीर में ऊष्मा की कमी हो जाने से रोगी का टेम्परेचर 'नार्मल' से नीचे गिर जाता है।

○ **विषमयता (Toxaemia), हैजा, राजयक्ष्मा, अवसाद, विषाद, मस्तिष्क ट्यूमर, सांघातिक रक्तस्राव, रक्तसंचार सम्बन्धी दुर्बलता, रक्तस्राव, संन्यास, मूर्च्छा, मधुमेह, कैंसर आदि रोगों में रोगी का तापमान नार्मल से भी नीचे चला जाता है।**

○ कम से कम ९५° फा० और अधिक से अधिक १०५° फा० टेम्परेचर तक रोगी को विशेष खतरा नहीं होता। किन्तु इससे कम या अधिक होने पर रोगी का जीवन संकट में पड़ जाता है।

○ वृद्धावस्था में १०१° फा० टेम्परेचर पर मूर्च्छा आने लगती है।

○ मस्तिष्कावरणशोथ, न्यूमोनिया, टाइफस फीवर, सविराम ज्वर, मुखीय विसर्प आदि में शरीर का टेम्परेचर १०६-१०७° फा० तक हो जाता है।

○ यदि १०५° फा० तक टेम्परेचर लगातार कई दिनों तक बना रहे तो रोगों की मृत्यु सन्निकट समझें।

○ मलेरिया, गठिया, रक्तविष आदि रोगों में टेम्परेचर बहुत अधिक बढ़ जाता है।

○ प्रसूत ज्वर, न्यूमोनिया एवं आंत्रिक ज्वर में टेम्परेचर ऊँचा होकर एकाएक घट जाता है।

○ टेम्परेचर की धीरे-धीरे वृद्धि होने पर 'टाइफाइड' की आशंका समझनी चाहिए।

○ यदि 'टाइफाइड ज्वर' में टेम्परेचर अकस्मात् घट जाये तो 'आँतों का रक्तस्राव' समझना चाहिए।

○ **अन्य लक्षणों के न होने पर सुबह के समय टेम्परेचर के सामान्य से नीचे चले जाने और शाम के समय बढ़ जाने पर 'पल्मोनरी 'ट्युबरकुलोसिस' की प्रारम्भिक अवस्था समझनी चाहिए।**

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ टेम्परेचर का अत्यधिक बढ़ना और अत्यन्त नीचे गिरना ये दोनों अवस्थाएँ खतरनाक हैं।

○ कभी-कभी टाइफाइड फीवर में रोगी का टेम्परेचर साधारण टेम्परेचर से नीचे गिर जाता है, जो हानिकारक है।

○ बच्चों में टेम्परेचर की वृद्धि की अपेक्षा टेम्परेचर के ह्रास में अधिक खतरा है।

○ रोगी के टेम्परेचर की स्थिति का सही जायजा लेने के लिए आवश्यक है कि निश्चित समय पर टेम्परेचर मापा जाय। इसके लिए पूर्व में दर्शाये 'तापक्रम चार्ट्स' पर नियमित रूप से रोजाना एक ही बँधे हुए समय पर तापमान लेना चाहिए। ताकि ज्वर के क्रम का पता लग सके।

○ थर्मामीटर को सदैव निर्जीवीकृत रखना आवश्यक है। एक चौड़े मुँह की शीशी में जीवाणुनाशक लोशन भर कर उसमें थर्मामीटर को डुबोकर रखना चाहिए। जीवाणुनाशक घोल पानी में डेटोल या सेवलान मिलाकर बनाया जा सकता है। इसकी जगह स्प्रिट भी काम में ला सकते हैं।

○ एक पात्र में ठंडा पानी अलग से रखा जाये, जिसमें थर्मामीटर को प्रत्येक बार प्रयोग से पहले और बाद में धोया जाय और फिर जीवाणुनाशक घोल में रखा जाय।

सावधान--जब रोगी छोटा बालक हो, रोगी बेसुध और अचेत पड़ा हो, रोगी को श्वास लेने में कठिनाई हो तथा विशेषकर रोगी अपनी नाक से श्वास न ले सकता हो तो इन दशाओं में थर्मामीटर मुँह में नहीं लगाना चाहिए।

ताप, नाड़ी एवं श्वास का तुलनात्मक विवरण

ताप	नाड़ी प्रति मिनट	श्वास प्रति मिनट
९८.४° फा०	७५ बार	१८ बार
१००° फा०	८७–९० बार	२३ बार
१०२° फा०	१०५–११० बार	२८ बार
१०५° फा०	१३५–१४० बार	३५ बार

ध्यान रहे—टायफाइड ज्वर में नाड़ी की गति इस हिसाब में कम रहती है।

आयु के अनुसार नाड़ी की गति—

○ नवजात शिशु में तथा प्रथम वर्ष के अंत तक १४० स्पंदन प्रतिमिनट
○ शैशवावस्था में और तीसरे वर्ष के अंत तक १२० से १०० ,,
○ बाल्यावस्था में तथा छठे वर्ष के अन्त तक १०० से ९० ,,
○ ७ से १४ वर्ष तक ९० से ७५ ,,
○ १४ से २४ वर्ष तक ८५ से ७५ ,,

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ २१ से ६५ वर्ष ७५ से ६५ स्पन्दन प्रति मिनट
○ वृद्धावस्था ८५ से ७० ,,

ध्यान रहे—○ लेटे रहने की अपेक्षा उठकर खड़े होने में नाड़ी की गति ५ से १० बार प्रति मिनट बढ़ जाती है।

○ दौड़कर आने में नाड़ी की गति १६० प्रति मिनट या इससे भी अधिक हो जाती है।

○ सदमा की स्थिति में नाड़ी की गति प्रति मिनट में ५० बार से भी नीचे हो जाती है।

○ ताप के एक डिग्री बढ़ने पर नाड़ी की स्पन्दन गति ८-१० बार प्रति मिनट बढ़ जाती है।

रक्तचाप

(Blood Pressure)

व्यावहारिक दृष्टि से औसत प्रकुंचन (Systolic) तथा अनुशिथिलन (Diastolic) चाप निर्धारित किये गये हैं जो इस प्रकार हैं—

आयु (Age in year)	प्रकुंचन रक्तचाप (Systolic B. P.)	अनुशिथिलन रक्तचाप (Distolic B. P.)
२०	११८	७८
२५	१२०	८०
३०	१२२	८२
३५	१२४	८४
४०	१२७	८६
४५	१३०	८८
५०	१३३	९०
५५	१३८	९२
६०	१४३	९४
६५	१४८	९६

याद रखिये—वृद्ध व्यक्तियों में प्रकुंचन चाप १६० मिमी० तक हो सकता है। लेकिन प्रकुंचन में १७० मिमी० से ऊपर और अनुशिथिलन में ९० मिमी० से ऊपर रक्तचाप विकृतिजन्य हो सकता है।

Note—Doctors tend to speak of a patient's Blood Pressure as being, say '110 over 75'. This means that the systolic pressure is 110, the diastotic 75 and those figures are roughly normal for a healthy goung adult.

○ प्रत्येक व्यक्ति की आयु में ९० का अंक जोड़ने से जो संख्या बने वही उस व्यक्ति का ऊपर का अनुकूलतम (Optimum) रक्तचाप कहलाता है। अर्थात् यदि एक व्यक्ति की आयु ४० वर्ष है तो उसका रक्तचाप १३० होगा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए। पर यदि अधिकतम चाप १०० से कम हो तो उसे मन्द रक्तचाप समझना चाहिए।

अनुशिथिलन रक्तचाप (D. B. P.) इस प्रकार हुआ करता है—

क्रम	आयु	अनुशिथिलन रक्तचाप
१	१० से १५ वर्ष की आयु	६०–७५ मिलीमीटर (mm) होता है।
२	२१–२२ वर्ष की आयु.	६५–८० मिलीमीटर (mm) होता है।

नोट—○ इस आयु के बाद यह अधिक हो जाता है।

○ १०० मिलीमीटर (mm) से अधिक होना खतरनाक है।

○ सामान्य (Normal) रक्तचाप आयु और स्थिति के अनुसार होता है।

○ रोगी की आयु में ९० जोड़ देने से 'प्रकुंचन रक्तचाप' और फिर इस संख्या में ४० से ५० घटा देने से अनुशिथिलन रक्तचाप निकल आता है।

उदाहरण के लिए—यदि किसी की आयु ६० वर्ष की है तो ६० में ९० जोड़ देने से जो संख्या १५० मिलीमीटर (mm) आयेगी वही प्रकुंचन रक्तचाप होगा।

○ इस (१५०) संख्या में ५० घटाने से १०० मिलीमीटर (mm) अनुशिथिलन रक्तचाप आ जायेगा।

○ दोनों विधियों में ५० मिलीमीटर का अंतर पड़ता है।

रक्तचाप : आयु रक्तचाप के पारद के घन मि० मी० (mm. hg.) में–

आयु	प्रकुंचन रक्तचाप (Systolic B.P.)	अनुशिथिलन रक्तचाप (Diastolic B.P.)	नाड़ी चाप Pulse Pressure
१५ से १९ वर्ष	१००	७०	३९ होता है।
२० से २४ वर्ष	१११	७२	३९ होता है।
२५ से २९ वर्ष	११२	७२	४० होता है।
३० से ३४ वर्ष	११४	७२	४२ होता है।
२५ से ३९ वर्ष	११९	७३	४६ होता है।
४० से ४४ वर्ष	१२०	७३	४७ होता है।
४५ से ४९ वर्ष	१२३	७५	४८ होता है।
५० ते ५४ वर्ष	१२६	७७	४९ होता है।
५५ से ५९ वर्ष	१२७	८०	४७ होता है।
६० से ६४ वर्ष	१२८	८२	४६ होता है।
६५ से ६९ वर्ष	१२९	८३	४६ होता है।
७० वर्ष से ऊपर	१३०	८३	४७ होता है।

सुषावस्था में एक सामान्य भारतीय का रक्तचाप—

○ प्रकुंचन रक्तचाप (Systolic Blood Pressure) प्राय: ११५;

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुशिथिलन रक्तचाप (Diastolic Blood Pressure) ७६ तथा नाड़ी चाप (Pulse Pressure) ३९ होता है।

याद रखिये—

○ भारत के भिन्न-भिन्न भागों में यह संख्या कम या अधिक हो सकती है।

○ स्त्रियों में यह संख्या प्रायः ५ कम होती हैं।

○ शाकाहारी मनुष्यों का 'प्रकुंचप रक्तचाप' पीछे की संख्या से २ कम तथा मांसाहारी मनुष्यों में २ अधिक हो सकता है।

○ प्रातःकाल की अपेक्षा सायंकाल को प्रकुंचन रक्तभार (सिस्टोलिक ब्लड प्रेशर) बढ़ जाता है।

○ खड़े होने पर लगभग २ मिलीमीटर 'सिस्टोलिक ब्लड-प्रेशर' बैठने की अपेक्षा अधिक हो जाता है। इसके विपरीत डायस्टोलिक ब्लड-प्रेशर कम बढ़ता है।

○ क्रोध, चिन्ता एवं घबराहट के कारण 'सिस्टोलिक ब्लड प्रेशर' बढ़ जाता है।

प्रत्येक मिनट में नाड़ी की स्वाभाविक गति

गर्भावस्था में भ्रूण की नाड़ी की गति	१२०–१५०	३ वर्ष के बच्चे की	८०–१००
जन्म के बाद बच्चे की	१२०	७ वर्ष के बच्चे की	७२–९०
१ महीने के बच्चे की	१२०	१२ वर्ष की उम्र में	७०
१ वर्ष के बच्चे की	१२०–१३०	युवावस्था में	८०–८५
२ वर्ष के बच्चे की	९०–११५	मध्यम या प्रौढ़ावस्था में	७०–७५
		वृद्धावस्था में	६०–६५

नाड़ी की गति के साथ ताप का क्रम

ताप (फा०)	नाड़ी की गति	ताप (फा०)	नाड़ी की गति
९०°	६०	१०४°	१२०
९९°	७०	१०५°	१३०
१००°	८०	१०६°	१४०
१०१°	९०	उक्त संख्या के ऊपर प्रत्येक ८ से	
१०२°	१००	१० स्पन्दन में लगभग १ डिग्री ज्वर	
१०३°	११०	बढ़ता है।	

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सक के आपातकालीन बैग में क्या-क्या होना चाहिए

चिकित्सक को जब कभी आपातकालीन (Emergency) रोगी को देखने का अवसर मिले तो उसे अपने इमर्जेंसी बैग में आवश्यकतानुसार निम्न वस्तुएँ, यंत्र एवं औषधियाँ रखनी चाहिए।

○ आवश्यक वस्तुएँ एवं यन्त्र—

१. स्टेथोस्कोप (Stethoscope)।
२. स्फिग्मो-मेनोमीटर (Sphygmo-menometer)।
३. सिरिञ्ज या डिस्पोजेबल सिरिञ्ज विभिन्न साइजों की।
४. स्टेरिलाइज्ड की हुई सुइयाँ २२, २३ एवं २४ नम्बर की।
५. रायल्स टचूब (Ryles tube)।
६. एक डिस्पोजेबल इन्फ्यूजन सैट अर्थात् I/V सैट।
७. मेथीलेटिड स्प्रिट।
८. थर्मामीटर।
९. एक तेज प्रकाश वाली टॉर्च।
१०. स्काल्पल (Scalpal)
११. आर्टरी फॉरसेप्स (Artery forceps)
१२. कैंची (Curved scissor)
१३. चिमटी (Forceps)
१४. कॉटन थ्रेड (Cotton thread) आदि।

○ आपातकालीन आवश्यक औषधियाँ—

१. इञ्जे० एड्रीनलीन (Inj. Adrenaline) १ मि० ली० एम्पुल में किसी स्टैण्डर्ड कम्पनी के २ एम्पुल।

२. इञ्जे० एविल (Inj. Avil) (नि० हैक्स्ट) २ मि० ली० के २ एम्पुल।

३. इञ्जे० एमिनोफाइलीन (Inj. Aminophyllin) १० मि० ली० के २ एम्पुल।

४. इञ्जे० एट्रोपीन सल्फेट (Inj. Atropine Sulphate) १ मि० ली० के २ एम्पुल।

५. इञ्जे० कैल्शियम ग्लूकोनेट (Inj. Calcium gluconate) (नि० सैण्डोज) १० मि० ली० के २ एम्पुल।

६. इञ्जे० कोरामीन (Inj. Coramine) या इञ्जे० रेस्टीमुलेन के २ एम्पुल।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. इञ्जे० बेरालगन (Inj. Baralgan) (नि० हैक्स्ट) २ एवं ५ मि० ली० के २-२ एम्पुल या इञ्जे एनाफोर्टेन (Inj. Anaforten) ३ मि० ली० के २-२ एम्पुल ।

८. इञ्जे० स्वीक्विल (Inj. Siquil) (साराभाई) १ मि० ली० के २ एम्पुल एवं वायल ।

९. इञ्जे० लार्गेक्टिल (Inj. Largactil) (एम० बी०) २ मि० ली० के २ एम्पुल ।

१०. इञ्जे० कॉम्पोज (Inj. Calmpose) (रैनबैक्सी) २ मि० ली० के २ एम्पुल ।

११. इञ्जे० स्टेमेटिल (Inj. Stemetil) (एम० बी) १ मि० ली० के २ एम्पुल ।

१२. इञ्जे० लैसिक्स (Inj. Lasix) (हैक्स्ट) २ मि० ली० के २ एम्पुल ।

१३. इञ्जे० नोवाल्जिन (Inj. Novalgin) या इञ्जे० सेमीजोल (Inj. Cemizol) २ मि० ली० के २ एम्पुल एवं ५ मि० ली० के २ एम्पुल ।

१४. इञ्जे० सर्पासिल (Inj. Serpasil) (सिबा) १ मि० ली० के २ एम्पुल ।

१५. इञ्जे० पोलीबियोन (Inj. Polybion) (मर्क) २ मि० ली० के ५ एम्पुल ।

१६. इञ्जे० मेफेण्टीन (Inj. Mephentine) (वाईथ) १ मि० ली० के ५ एम्पुल ।

१७. इञ्जे० अरिस्टोन्यूरोल (Inj. Aristoneurol) (अरिस्टो) १ मि० ली० के ५ एम्पुल ।

१८. इञ्जे० जेण्टीसीन (Inj. Genticyn) (निकोलस) २ मि० ली० का एक वायल ।

१९. इञ्जे० कैम्पीसिलीन (Inj. Campicilin) (कैडिला) २५० एवं ५०० मि० ग्रा० का १-१ वायल ।

२०. इञ्जे० स्टिप्टोबियोन (Inj. Styptobion) (मर्क) २ मि० ली० के दो एम्पुल ।

२१. इञ्जे० बाल (Inj. BAL) (बूट्स) २ मि० ली० के २ एम्पुल ।

२२. इञ्जे० टी० टी० (Inj. T. T.) (बी० ई०) १० मि० ली० के २ एम्पुल ।

२३. इञ्जे० डेक्स्ट्रोज २५% (Inj. Dextrose 25%) २५ मि० ली० के २ एम्पुल

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२४. इन्जे० सोडा बाईकार्ब ७·५% (Inj. Soda bicarb 7·5%) २५ मि० ली० के २ एम्पुल ।

२५. विश्वसनीय इन्फ्यूजन द्रव (Standard Infusion fluids) जैसे– डेक्स्ट्रोज ५% (Dextrose 5%), नार्मल सैलान (Normal saline), डैक्स्ट्रोज नार्मल सैलाइन ।

२६. मैनिटाल (Manitol) २०% ।

२७. पोटाशियम परमैंगनेट (Potassium permangnate) एवं सेवलान (Savlon) एण्टीसेप्टिक लोशन एवं वेटाडीन तथा नियोस्पोरिन आइण्टमेण्ट ।

अन्य औषधियाँ—

१. एविल–५० (Avil–50 (हैक्स्ट) १० गोली ।

२. बेरालगन (Baralgan) (हैक्स्ट) १० गोली ।

३. कैम्पीसिलीन (Campicillin) (कैडिला) २५० मि० ग्रा० के १० कैप्सूल ।

४. कामोड (Kalmod) (आई० डी० पी० एल०) ५ मि० ग्रा० की १० गोली ।

५. काल्पोल (Calpol) (वरोज वेल्कम) की १० गोली ।

६. स्टेमेटिल (Stemetil) (एम० बी०) की १० गोली ।

७. सीक्विल (Siquil) (साराभाई) की १० गोली ।

८. नोवाल्जिन (Novalgin) (हैक्स्ट) की १० गोली ।

९. डिपेण्डाल-एम (Dependal-M) की १२ गोली ।

१०. टेट्रासाइक्लीन कैं० (रेस्टिक्लिन Resticlin) (साराभाई) के १० कैप्सूल ।

११. ब्रूफेन ५०० या ६०० (Brufen 400 & 600) की १० गोली ।

○ उपरोक्त औषधियाँ भी आप आवश्यकतानुसार बैग में रख सकते हैं ।

टीकाकरण

(Vaccination)

○ गर्भवती महिलाओं के लिए टीकाकरण
(Vaccination for pregnant women)

	गर्भावस्था में जितनी जल्दी हो सके	टेटनस के माह बाद
टेटनस–१	१ टीका	—
टेटनस–२ (बूस्टर)	—	१ टीका

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ बच्चों के लिए टीकाकरण
(Vaccination for children)

टीका	१½ माह	२½ माह	३½ माह	९ माह	१६ से २४ माह	५ वर्ष	१०–१६ वर्ष
बी.सी.जी.	१ टीका						
डी.पी.टी.	पहला टीका	दूसरा टीका	तीसरा टीका		बूस्टर टीका		
पोलियो	पहली खुराक	दूसरी खुराक	तीसरी खुराक		बूस्टर खुराक		
खसरा				१ टीका			
डी. टी.						१ टीका	
टी. टी.							१ टीका

○ यदि बच्चे का जन्म अस्पताल/क्लिनिक में हुआ है, तो उसे जन्म के समय ही बी० सी० जी० का टीका लगायें।

रक्षक टीका सूची

○ गर्भवती महिलाओं और शिशुओं के सम्पूर्ण टीकाकरण के लिए पूर्व चार्ट्स पर दी गई सूची का ध्यानपूर्वक पालन कीजिये।

○ गर्भावस्था के दौरान ही टेटनस के दो टीके जरूर दिये जाने चाहिए। टेटनस–१ का टीका गर्भावस्था में जितनी जल्दी हो सके दिया जाना चाहिए। उसके एक माह बाद टेटनस–२ (बूस्टर) का टीका दिया जाना चाहिए। टेटनस–२ (बूस्टर) का टीका प्रसव होने की सम्भावित तिथि से कम से कम एक माह पहले दिया जाना चाहिए।

○ यदि गर्भवती महिला को अपना नाम दर्ज कराने में विलम्ब हो जाये, तो भी उसे टेटनस के दोनों टीके जरूर दिये जाने चाहिए। यदि गर्भवती महिला को पिछले ३ वर्षों में टेटनस के दोनों टीके लग चुके हों तो इस बार उसे केवल टेटनस का एक बूस्टर टीका लगाना चाहिए।

○ बेहतर यही है कि बच्चा जब १½ माह का हो तो उसे बी० सी० जी० का टीका, डी० पी० टी० का पहला टीका तथा पोलियो की पहली खुराक दी जाये।

○ इसके एक महीने बाद (अर्थात् २½ माह पर) डी० पी० टी० का टीका और पोलियो की दूसरी खुराक दी जानी चाहिए। उसके एक महीने

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाद (अर्थात् ३½ माह पर) डी० पी० टी० का टीका और पोलियो की तीसरी खुराक दी जानी चाहिए ।

○ यदि डी० पी० टी० का टीका और पोलियो की पहली खुराक देने के लिए माँ अपने बच्चे को लाने में देर कर देती है; तो भी १ साल का होने से पहले बच्चे को तीनों टीके तथा पोलियो की खुराक एक-एक महीने के अंतर पर दिये जाने चाहिए ।

○ जब बच्चा ९ माह का हो जाये तो उसे खसरे का टीका लगाना चाहिए । यदि माँ अपने बच्चे को लाने में देर कर देती है तो भी यह टीका बच्चे को १ साल का होने से पहले जरूर देना चाहिए, क्योंकि खसरे के टीके के बिना बच्चे के स्वास्थ्य की रक्षा पूरी तरह से नहीं हो पाती ।

○ इस बात का पूरा ध्यान रखिये कि बच्चे को १ वर्ष का होने से पहले बी० सी० जी० का १ टीका, डी० पी० टी० के ३ टीके, पोलियो की ३ खुराकें और खसरे का १ टीका अवश्य दे दिया जाना चाहिए ।

—राष्ट्रीय टीकाकरण मिशन, भारत सरकार

याद रखिये—

○ यदि बच्चे को लाने में देर हो गई है और उसे कोई भी टीका नहीं लगा है, तो जरूरत पड़ने पर उसे 'बी० सी० जी०', 'डी० पी० टी०', 'पोलियो' और 'खसरे' का एक-एक टीका/खुराक एक साथ दिये जा सकते हैं ।

○ १६ से २४ माह के बीच में बच्चे को 'डी० पी० टी०' एवं 'पोलियो' की बूस्टर टीका/खुराक दी जानी चाहिए ।

○ ५ वर्ष की उम्र में बच्चे को डी० टी० का टीका दिया जाना चाहिए ।

○ १० से १६ वर्ष की उम्र में बच्चों को विशेषरूप से लड़कियों को 'टेटनस' का एक-एक टीका दिया जाना चाहिए ;

○ भारत सरकार के व्यापक टीकाकरण कार्यक्रम के अन्तर्गत जन्म से लेकर १ वर्ष तक के बच्चों को छः जानलेवा बीमारियों—तपेदिक, पोलियो, गलघोंटू (डिफ्थीरिया), काली खाँसी, टेटनस एवं खसरा से बचाव के टीके लगाये जाते हैं ।

○ खसरा से बचाव के टीके (मात्र एक सुई) ९ माह की उम्र में अथवा ९ से १२ माह के मध्य लगाये जाते हैं ।

यह टीका सभी सरकारी चिकित्सालयों, उपकेन्द्रों, स्वास्थ्य केन्द्रों एवं मेडिकल कालेजों के बाल-विभाग में निःशुल्क लगाये जाते हैं ।

सावधान—खसरा का टीका कुछ परिस्थितियों जैसे—स्टेरॉयड या इम्यूनोसप्रेसिव औषधियों से उपचार की अवधि में, टीके के किसी अवयव से अतिसंवेदनशीलता (एलर्जी), झटके के रोगी एवं सक्रिय तपेदिक आदि में नहीं लगाया जाता ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सकीय डाक्टरी माप

१ मिलीग्राम = $\frac{१}{६५}$ ग्रेन
२ ,, = $\frac{१}{३२}$,,
३ ,, = $\frac{१}{२२}$,,
४ ,, = $\frac{१}{१६}$,,
६ ,, = $\frac{१}{११}$,,
१६ मिलीग्राम = $\frac{१}{४}$ ग्रेन = १५ मि० ग्रा० (mg.)
२० मिलीग्राम = $\frac{१}{३}$ ग्रेन = २० मि० ग्रा०
६५ मिलीग्राम = १ ग्रेन = ६० मि० ग्रा०
$\frac{१}{२}$ रत्ती = १ ग्रेन = ६० मि० ग्रा०
१ रत्ती = १२० मि० ग्रा०
१५ ग्रेन = १ ग्राम
४ ग्राम = १ ड्राम (४ मि० ली०)
३० ग्राम = १ औंस = ३० मि० ली०
१ C. C. = १ मि० ली०
०·५ ग्राम = ५०० मि० ग्रा०
१ चम्मच = १ ड्राम = ४ मि० ली०
१ ग्राम = $\frac{१}{२}$ चम्मच
२ ग्राम = १ चम्मच
५ मि० ली० = १ चम्मच
१० मि० ली० = २ चम्मच
१५ मि० ली० = ३ चम्मच
१ मिनिम या १ बूँद = ०·६ C. C.
६० बूंद या १ ड्राम = ४ C. C.
८ ड्राम या एक औंस = ३० C. C.
१ पाइण्ट या २० औंस = ६०० मि० ली० या ०·६ लीटर
१ औंस = २८·३५ ग्राम
१ C. C. = १६·९ बूंद = १ मिलीलीटर (ml.)
१००० माइक्रोग्राम = १ मिलीग्राम
१०० सी० सी० = ३·५१९६ फ्लुइड औंस
१ मिलीलीटर = १५ मिनिम (या १५ बूंद)
$\frac{१}{२}$ मिनिम (Minim) = ०·०३ मिलीलीटर
$\frac{१}{४}$,, = ०·०५ ,,
१ ,, = ०·०६ ,,

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१½	,,	=०·१	मिलीलीटर
३	,,	=०·२	,,
४	,,	=०·२५	,,
५	,,	=०·३	,,
८	,,	=०·५	,,
१०	,,	=०·६	,,
१२	,,	=०·७५	,,
१५	,,	=१·००	,,
३०	,,	=२·००	,,
४५	,,	=३·००	,,

१ फ्लुइड ड्राम (Fluid drachm)=४ मि० ली०

१½	,,	=५	,,
२	,,	=८	,,
२½	,,	=१०	,,
४	,,	=१५	,,
१	,, औंस	=३०	,,

२ पाइण्ट=१ क्वार्टर
४ क्वार्टर=१ गैलन।

मैट्रिक पैमाने को अंग्रेजी पैमाने में बदलने के सूत्र—

ग्राम को ग्रेन में बदलने के लिए—१५·४३२ से गुणा करें।
ग्राम को औंस में बदलने के लिए—२८·३५ से भाग करें।
किलोग्राम को पौण्ड में बदलने के लिए—२·२०४६ से गुणा करें।
मिलीलीटर को मिनिम में बदलने के लिए—·०५९२ से भाग करें।
मि० ली० को फ्लुइड औंस में बदलने के लिए—·०३५२ से गुणा करें।
लीटर को पाइण्ट में बदलने के लिए—१·७५९८ से गुणा करें।

अंग्रेजी पैमाने को मैट्रिक पैमाने में बदलने के सूत्र—

ग्रेन को ग्राम में बदलने के लिए—०·०६४८ से गुणा करें।
औंस को ग्राम में बदलने के लिए—२८·३५ से गुणा करें।
मिनिम को मिलीलीटर में बदलने के लिए—०·०५९२ से गुणा करें।
पौण्ड को किलोग्राम में बदलने के लिए—०·४५३६ से गुणा करें।
फ्लुइड औंस को मिलीलीटर में बदलने के लिए—२८·४१ से गुणा करें।
पाइण्ट को लीटर में बदलने के लिए—०·५६८ से गुणा करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा का समप्रभावी स्थूल अनुमान

(Approximate equivalent of doses)

Apothecary's Weight or Measure	Grammes or Millilitres	Grains or Minims	Grammes or Millilitres
Zxx	600	50	3·2
Zxvi	500	45	3
Zxii	350	40	2·6
Zx	300	30	2
Zviii	250	25	1·6
Zvi	180	20	1·3
Ziv	125	15	1
Ziiiss	100	12	0·8
Ziii	90	10	0·6
Ziiss	75	8	0·5
Zii	60	6	0·4
Ziss	45	5	0·3
Zi	30	4	0·25
Zss	15	3	0·2
Ziii	12	$2\frac{1}{2}$	0·15
Ziiss	10	2	0·12
Zii	8	$1\frac{1}{2}$	0·1
Ziss	6	$1\frac{1}{5}$	0·08
Zi	4	1	0·06

मूत्र की विशेषताएँ

○ स्वस्थ मूत्र में निम्नलिखित विशेषताएँ पायी जाती हैं—

मूत्र त्याग २४ घण्टे में	१२०० से १५०० मिलीलीटर
लिटमस पेपर के साथ प्रतिक्रिया	हल्की-सी अम्लीय
विशिष्ट गुरुत्व	१००५ से १०२०
रंग	हल्का-सा भूसे के रंग का

○ २४ घण्टे के कुल मूत्र में उपस्थित घटक—

यूरिया	२०–३० ग्राम
सोडियम	६ ग्राम

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पोटाशियम	२ ग्राम
ग्लूकोज	नहीं

प्रेस्क्रिप्शन (नुस्खा) लिखना

चिकित्सालय अथवा क्लिनिक में अपने पास रिकार्ड रखने हेतु पर्ची लिखने या रोगी को औषधि खरीदने के लिए पर्ची देने के कुछ डाक्टरी सिद्धान्त होते हैं, जिनके अनुसार नुस्खा या पर्ची लिखने से चिकित्सक की योग्यता, अनुभवशीलता एवं सतर्कता का परिचय मिलता है। अंग्रेजी भाषा में आधुनिक औषधियों के व्यापारिक नाम लिखने होते हैं। पर्ची में—

- सर्वप्रथम—रोगी का नाम और उसकी आयु।
- लिंग—स्त्री/पुरुष अथवा बच्चा।
- रोग-निदान अथवा रोगी की शिकायतें अति संक्षेप में।
- पर्ची के बायीं ओर ℞ चिह्न लिखा जाये।

- ℞ लैटिन भाषा का एक शब्द जो संक्षिप्त रूप में एक संकेत मात्र है। जिसका अर्थ होता है—'लीजिये' या प्रयोग कीजिये।

तत्पश्चात्—

- ℞ चिह्न के ठीक नीचे बाईं ओर से रोग की मुख्य औषधि—उसका व्यापारिक नाम (Trade name)।
- मात्रा—मि० ग्रा०; ग्राम अथवा मि० ली० (mg, gm या ml) में।
- कितनी बार लेना है—एक बार (O. D.)
  दो बार (B. D.) या (B. I. D.)
  तीन बार (T. D. S.) या (T. I. D.)
  चार बार (Q. D. S.) या (Q. I. D.)
  आवश्यकतानुसार (S. O. S.)
  सोते समय (H. S.)
  कितने घण्टे के अंतर से (hrly.)
- अन्त में रोगी के लिए आवश्यक हिदायतें।
- दूसरे नम्बर पर—
- अधिक कष्टदायक लक्षण के लिए औषधि और उसका नाम।
- तीसरे-चौथे नम्बर पर—अन्य सहायक औषधि अथवा हिदायतें।
- इसके पश्चात्—कितने दिन औषधि लेनी है, यह लिखें।
- अन्त में—पर्ची के दाहिनी ओर अपना नाम/हस्ताक्षर/योग्यता की मुहर।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परीक्षण या जाँच (Test) की पर्ची

क्लिनिक में आये रोगी के सही निदान की पुष्टि के लिए रोगी को किसी 'पैथोलॉजिकल लैबोरेटरी' में भेज देना चाहिए। आजकल निदान में चिकित्सा से पूर्व परीक्षण (Test) किये जाते हैं। यह चिकित्सक के विवेक पर निर्भर करता है कि उसे कौन-कौन सा परीक्षण करवाना है, जिससे निदान में रोग की सही-सही पुष्टि हो सके। **अनावश्यक परीक्षणों में रोगी का समय और धन व्यर्थ में नष्ट नहीं करना चाहिए।**

परीक्षण कराने हेतु चिकित्सक को पर्ची बनानी पड़ती है, जिसमें निम्न विवरण होने चाहिए—

- ○ सर्वप्रथम—रोगी का नाम
- ○ आयु ○ लिंग
- ○ सम्भावित रोग
- ○ निदान लिखने के बाद पहले नम्बर पर उस अंग (भाग) का नाम लिखें, जिसका आप परीक्षण करवाना चाहते हैं। जैसे—
- ○ रक्त (Blood for) हीमोग्लोबिन (Hb.%) या टी० एल० सी० (T. L. C.) कुल श्वेत रक्तकणों के लिये।
- ○ डी० एल० सी० (D. L. C.) भिन्न संख्या रक्तकणों को जानने के लिये। अथवा—ई० एस० आर० (E. S. R.) या शुगर (Sugar) आदि।
- ○ एक्स-रे (X-ray) के लिये एक्स-रे परीक्षण। तत्पश्चात् अंग का नाम चेस्ट (Chest) ○ खोपड़ी (Skull), ○ जाँच की अस्थि (Femer) आदि। एक्स-रे चित्रण कैसा चाहते है 'A. P.' या 'P. A.' या Lateral आदि।
- ○ सबसे नीचे परीक्षण करने वाले के लिए यदि कोई हिदायत हो तो उसे भी लिखें।
- ○ अन्त में चिकित्सक के हस्ताक्षर एवं मुहर।

मेडिकल ड्रग्स लिटरेचर

अधिकांशतः प्रत्येक औषधि के साथ 'चिकित्सा साहित्य' (Literature), जो औषधि-निर्माताओं द्वारा प्रस्तुत की जाती है, रहता है। इसको पढ़ने तथा समझने का सामर्थ्य प्रत्येक चिकित्सक में होना चाहिए। यह एक अति महत्त्व-पूर्ण विषय है। इस साहित्य में दिये गये संकेतों में, यथा—अमुक औषधि किन-किन रोगों में तथा कितनी मात्रा में और कितनी बार प्रयोग करानी है; उसकी हानियाँ तथा साइड इफेक्ट्स क्या है; किन रोगों में यह औषधि प्रयोग नहीं करानी चाहिए इत्यादि महत्त्वपूर्ण जानकारी होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशिष्ट उपयोगी फार्मूले

कार्मिनेटिव मिक्श्चर (Carminative mixture)—

सोडा बाई-कार्ब (Soda bi-carb) १० ग्राम, मैग कार्ब (Mag carb) १० ग्राम, कैल्शियम कार्ब (Calcium carb) १० ग्राम, टिं० बेलाडोना (Tinct. Bell.) १ मि० ली०, टिं० जिन्जिबर (Tinct. Zingiber) २० मि० ली०, टिं० कार्डमम (Tinct. card.) १० मि० ली०, डिस्टिल्ड वाटर (Aqua distl.) ४०० मि० ली०।

मात्रा—२५ से ५० मि० ली०।

○ **श्वास पाउडर** (Asthma powder)—

टे० एफेड्रीन (Ephedrine tab.) १५ मि० ग्रा०, एमीनोफाइलीन (Aminophylline) १०० मि० ग्रा० की १ गोली, फीनोबार्बीटोन या गार्डिनल (Peno. & Gardenal tab.) १५ मि० ग्रा० की ½ गोली।

मात्रा—तीनों का पाउडर बनाकर १–१ मात्रा प्रातः-सायं दें।

○ **टिंक्चर बेञ्जोइन को० इन्हेलेशन** (Tinct. Benzoin co. inhalation)—

२५ से ५० बूंद उबलते हुए गर्म जल में डालकर भाप (Steam) सूँघें। यह खाँसी, बिगड़ा जुकाम, गले का शोथ (Laryngitis) में उपयोगी है। यदि इसके साथ चार क्रिस्टल या पिपरमेण्ट (मेंथाल-Menthal) भी डाल दें तो नाक व कान के गाढ़े द्रव पदार्थ के बहने में लाभकारी है। अथवा तारपीन का तेल १५-२० बूंद मिलाया जा सकता है।

○ **बोरो-स्प्रिट लोशन** (Boro-spirit lotion)—

बोरिक एसिड २ ग्राम, स्प्रिट २० मि० ली०, पानी १०० मि० ली०—लोशन बनाकर कानों में २–३ बार डालने से बहते कानों को सुखा देता है।

○ **सोडी-ग्लिसरीन लोशन** (Sodi-glycerine lotion)—

सोडा बाई-कार्ब ५ ग्राम, ग्लिसरीन ३० मि० ली० एवं जल १०० मि० ली०। यह ड्राप्स कान के मैल को घोलता है।

अथवा—टायोटोसिन (Tyotocin) ईयर ड्राप (नि० मेरिण्ड) एक विशिष्ट पेटेण्ट औषधि है। यह एक उत्तम एण्टीबायोटिक, फंजीसाइडल (फंगस-नाशक), दर्द-निवारक (एनाल्जेसिक) डिहाईड्रेटिंग (सुखाने वाला) इन्फेक्शन निरोधी उत्तम योग है।

○ **मैण्डल्स पेण्ट** (Mandl's paint)—

आयोडीन १ भाग, पोटाश आयोडाइड ५ भाग, पिपरमेण्ट आइल १ भाग, ग्लिसरीन १०० भाग। पेण्ट को गले में लगायें। यह फैरिञ्जाइटिस में लाभकारी है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ गृध्रसी (सियाटिका दर्द)—

मैक्राबेरिन १ गोली, नोवाल्जिन १ गोली, एस्जीपायरीन १ गोली तीनों को मिलाकर इसकी एक-एक मात्रा दिन में २–३ बार खिलायें। साथ ही—आइबुडेक्स १ कै०, बूटा प्रॉक्सीवान १ कै० दिन में २ बार। अथवा—ब्रूफेन ६०० मि० ग्रा० दिन में २–३ बार। रिलैक्सिल मलहम पीड़ित स्थान पर।

○ पायरिया-नाशक योग—

अल्ट्राजिन २ गोली, पेण्टिड्स (Pentids) १ गोली, वैक्ट्रिम ½ गोली, सीलिन ५०० मि० ग्रा० १ गोली—ऐसी १ मात्रा भोजनोपरान्त दिन में २ बार। तीव्र दशा में—'कैम्पिसिलिन' ५०० मि० ग्रा० के १–२ कै० प्रति ८ घण्टे पर।

○ शोफ (सूजन Dropsy) निवारक—

लैसिक्स १ गोली + फर्सोलेट १ गोली—ऐसी १ मात्रा जल से प्रातः-सायं २ बार। साथ में—लिवर इक्स्ट्रेक्ट २ मि० ली० मांस में प्रति तीसरे दिन।

○ यूनिइञ्जाइम १ गोली, सोडामिण्ट २ गोली, सीलिन ५०० मि० ग्रा० की ½ गोली तीनों को मिलाकर एक मात्रा गर्म जल से दिन में २-३ बार दें। साथ ही रैलक्रियाजाइम १-२ गोली भोजन के बाद दें।

○ माइक्रोपाइरिन २ गोली, सीलिन ५०० मि० ग्रा० की १ गोली, क्रोसिन १ गोली—ऐसी १ मात्रा गर्म चाय के साथ दें। आधे सिरदर्द में उपयोगी ल्यूमिनाल ३० मि० ग्रा० की १ गोली, प्रोमैल्जिन १ गोली, सोसेगेन १ गोली—ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार अर्धकपारी के समय।

○ मोंच एवं दर्द-सूजन में—

आयल टर्पेण्टाइन (Oil terpentine) ३० मि० ली०, कैम्फर (Camphor) ४५ ग्राम, लिक्विड एमीन फोर्ट (Liquid Ammona fort) ३० मि० ली०, स्प्रिट मैथेलेटेड (Spt. Methylated) १५ मि० ली०, सॉफ्ट सोप (Soft soap) ९० ग्राम, पानी (Aqua) ५०० मि० ली०—इसकी मालिश करें।

संयोग-विरुद्ध औषधियाँ

(संयोग-विरुद्ध औषधियों को मिलाकर प्रयोग करने का निषेध)

○ अनेक संयोग-विरुद्ध ऐसी भी औषधियाँ हैं जिनको आपस में मिला कर एक साथ प्रयोग करने से हानिकारक, भयानक और विषैले प्रभाव हो सकते हैं।

○ आधुनिक युग में आज कॉम्बिनेशन थेरापी (दो या इससे अधिक औषधियों को एक साथ मिलाकर देना) का प्रयोग चिकित्सक अपने रोगियों

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर बहुत करने लगे हैं। ऐसी स्थिति में एक साथ प्रयोग करते समय चिकित्सकों को चाहिए कि वह उनके फार्मूला (योग) को ध्यान से पढ़े और नीचे बताये अनुसार उन पर विचार कर तभी प्रयोग करें।

इन योगों को—	इनके साथ प्रयोग न करें
* एनासिन, एस्प्रो, ए० पी० सी, सैरिडान, कोडोपायरिन, डिस्प्रिन, कॉडरल, डेपायरिन, एस्प्रिन, फेनसिक आदि एस्प्रिन वाले योग।	एरोमेटिक, एसिड सल्फ्युरिक, एसिड हाइड्रोक्लोरिक, एल्कलीज, फर्सोलेट टेबलेट, आयरन साल्ट के योग एवं यूरोट्रोपिन आदि के योग।
* बोरोग्लिसरीन, फेरिलैक्स आदि ग्लिसरीन वाले योगों को	पोटाशियम परमैंगनेट, कैल्शियम हाइपोफॉस्फेट, पोटाशियम क्लोरेट, क्रोमिक एसिड नाइट्रिक एसिड के योगों के साथ।

सावधान—इनके प्रयोग से जलन एवं धमाका होकर आग लग जाती है।

* मिल्क ऑफ मैग्नेसिया	कोई भी एसिड
* केमाक्विन, नेवाक्विन आदि क्विनीन के योग	अमोनिया, एस्ट्रिजेण्ट्स, जिलेटिन, एल्कलाइन कार्बोनेट।
* इर्वोलिन आदि अर्गट के योग	टैनिक एसिड एवं लवण।
* लेनोक्सिन (डिजोक्सिन) आदि डिजीटेलिस के योग	एल्कलीज, आयरन, क्विनीन, सिनकोना, स्ट्रॉग एसिड।
* एट्रोपीन सल्फेट, मॉर्फीन, स्ट्रिक्नीन, कोकेन, कोडीन आदि एल्कलाइड्स	आयोडाइड्स, ब्रोमाइड्स, टैनिक एसिड, स्प्रिट ईथर नाइट्रोसाई, पोटाशियम परमैंगेनेट, एल्कलीज, मिनरल साल्ट्स एवं वानस्पतिक टिंक्चर।
* एल्कोहल, एल्कोहल मिश्रित सिरप, टिंक्चर, लिक्विड, एलिक्जिर, एक्स्ट्रेक्ट, ड्रॉप्स	जिलेटिन, एल्ब्युमिन, एकेसिया, पोटाशियम परमैंगनेट, पोटाशियम क्लोरेट आदि।
* मैगसल्फ को—	लाइम वाटर, लेड एसिटेड, एल्केलाइन, कार्बोनेट आदि औषधियों के साथ न मिलायें।
* मॉर्फीन को—	सोडा बाई-कार्ब या पोटाशियम बाई कार्बोनेट के साथ कभी न मिलायें।
* पोटाश आयोडाइड	टैनिक एसिड।
* पोटाशियम परमैंगनेट	चर्बी, तेल, ग्लिसरीन, वनस्पति एक्स्ट्रेक्ट, आर्गेनिक कम्पाउण्ड, शक्कर आदि के साथ कभी न मिलायें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन योगों को—	इनके साथ प्रयोग न करें
* पेप्सिन अथवा इसके योग जैसे एसिडोल पेप्सिन, डायापेप्सिन, पेप्सिण्डोन, एसिपेप्सिन	एल्कोहल, एल्कलीज, टिंक्चर, फेरी-सल्फ, केलोमल ।
* आयरन साल्ट्स	बेजिटेबिल एस्ट्रिंजेण्ट ।
* लाइकर स्ट्रिक्नीन हाइड्रोक्लोर	स्प्रिट अमोनिया एरोमेट ।
* कैल्शियम हाईड्रोक्साइड	सोडा बाई-कार्ब एवं लाइम वाटर ।
* टिंक्चर आयोडीन	अमोनिया या अमोनिया के लवण के साथ ।

सावधानी—इनको आपस में मिलाने से आग लग जाती है ।

* टिंक्चर आयोडीन	क्लोरल हाइड्रेट्स ।
* लैड साल्ट्स	अफीम, मार्फिया या इससे बनी दवायें ।
* अघुलनशील दवा को	जल के साथ न मिलायें ।
* सल्फर	क्लोरॉइड्स ऑफ लाइम, पोटाशियम क्लोरेट, पोटाशियम परमैंगनेट, मिनरल साल्ट्स ।
* क्लोरेट्स, बाईक्रोमेट्स, आयोडाइड्स, नाइट्रेट्स	कार्बन, सल्फर, कार्बोलिक एसिड, गिलसरीन, आयोडीन, हाइपोफॉस्फेट, टर्पेण्टाइन, और समस्त प्रकार के आर्गेनिक कम्पाउण्ड्स ।
* क्लोरल हाइड्रेट्स को	एल्कली या स्प्रिट अमोनिया एरोमेट में न मिलायें ।

सावधानी—इनको साथ में मिलाने से 'क्लोरोफार्म' सदृश्य योग बन जाता है ।

चिकित्सा में औषधि की आकस्मिक प्रतिक्रियाएँ

(Emergency Drug Reactions in Treatment)

कोई भी औषधि किसी भी रोगी में प्रतिक्रिया (Reaction) पैदा कर सकती है । यहाँ तक कि विटामिन-'बी' (Vit-B) से भी प्रतिक्रियां हो सकती है । यह आवश्यक नहीं है कि जो औषधि रोगी द्वारा पहले से ही निरन्तर प्रयोग की जा रही है उसकी प्रतिक्रिया न हो । बल्कि वह भी एक समय रोगी में विषैलापन उत्पन्न कर सकती है । अतः रोगी को दूसरे चिकित्सक अथवा विशेषज्ञ के पास भेजते समय आपके क्लीनिक में रोगी को जो चिकित्सा दी गई हो, उसका संक्षिप्त विवरण लिखकर दे देना चाहिए ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ रोगी की चिकित्सा के मध्य में यदि कोई भी नया लक्षण या चिह्न मिलता है जो वास्तव में सामान्य रूप से नहीं होना चाहिए। ऐसा होने पर तत्काल गम्भीरतापूर्वक विचार करें और उसका कारण जानने का यत्न करें।

याद रखिए—किसी भी औषधि से प्रतिक्रिया होने पर निम्नलिखित में से किसी एक क्रिया का परिणाम होता है—

○ यदि कोई औषधि किसी भी कारण से एक निश्चित मात्रा से अधिक मात्रा में दी जाती है, तो रोगी में हानिकारक एवं विषैला प्रभाव हो सकता है। इसे ड्रग टॉक्सीसिटी (Drug toxicity) कहते हैं।

○ कोई भी औषधि भले ही निश्चित मात्रा में दी गई हो, रोगी में विभिन्न प्रकार की 'एलर्जी' उत्पन्न कर सकती है। जैसे—पेनिसिलीन एवं एण्टीसीरम (Penicillin and Anti-seram) आदि औषधियों के प्रयोग से ऐसा सम्भव होता है। चिकित्सकों में इसका विशेष स्थान माना जाता है।

○ अज्ञानतावश अथवा किसी औषधि के गुण, दोष एवं उसकी प्रयोग विधि की जानकारी के बिना रोगी में प्रयोग करने से कभी-कभी गम्भीर स्थिति पैदा हो जाती है। जिसे 'मेडिकेशनल इरर' (Medicational error) कहते हैं। जैसे—किसी-किसी इन्जेक्शन पर यह संकेत नहीं मिलता है कि वह किस मार्ग से दिया जाये, फलस्वरूप I/M की जगह I/V दे दिया जाता है। जिससे कभी-कभी संकट की स्थिति पैदा हो जाती है।

○ यदि कुछ औषधियाँ दूसरी औषधियों के साथ प्रयोग की जाती हैं तो उनमें एक-दूसरे से मिलकर रासायनिक क्रिया होती है, जिसे ड्रग-इण्टर एक्शन्स (Drug Inter-actions) कहते हैं।

○ याद रखिए—प्रत्येक औषधि के साथ उत्पादकों/कम्पनियों द्वारा इस प्रकार की प्रतिक्रियाओं का संकेत 'ड्रग लिटरेचर' में लिखा होता है, जिसे प्रयोग करने से पूर्व ध्यानपूर्वक देख लेना चाहिए।

○ जनरल प्रैक्टिस में—'पेनिसिलीन एण्टीबायोटिक' की प्रतिक्रियाओं का अपना विशिष्ट महत्त्व होता है। जिसके लिए हर चिकित्सक को सावधानी बरतनी चाहिए।

इस प्रकार की अन्य प्रतिक्रियाओं की चिकित्सा एवं सावधानी के सम्बन्ध में याद रखें—

(१) यदि साधारण प्रतिक्रिया है तो—औषधि के रक्त में प्रवेश करने के कुछ समय के उपरान्त रोगी में ○ मितली (Nausea), ○ वमन (Vomiting) ○ स्वाद तथा गन्ध का विकार ○ कानों में घूँ-घूँ की आवाजें तथा चेहरे में सुई की सी चुभन का आभास, ○ खुजली तथा शीतपित्त (Urticaria) आदि प्रतिक्रियाएँ हो सकती हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) **तीव्रस्वरूप की प्रतिक्रियाएँ**—अचानक अथवा औषधि-प्रयोग के तुरन्त बाद एनाफाइलैक्टिक शॉक (Anaphylactic shock) के रूप में ऐसी प्रतिक्रियाएँ होती हैं। मांस में (I/M) इञ्जेक्शन देने के ३० मिनट बाद इस प्रकार की प्रतिक्रियाएँ हो सकती हैं। ऐसी स्थिति में—○ चक्कर आना ○ आसपास की प्रत्येक वस्तु के घूमने (Fainting) का आभास ○ शरीर का शीतल पड़ जाना एवं माथे पर पसीने की उपस्थित ○ रोगी का अचेत होना ○ रक्तचाप कम तथा हाथ की कलाई में नाड़ी का आभास न होना ○ चेहरे में नीलापन (Cynosis) एवं साँस में रुकावट आदि लक्षण मिलते हैं।

○ कुछ रोगियों में श्वास जैसी स्थिति एवं शरीर के ऐंठन (Convulsions) की दशा बन जाती है।

(३) **गम्भीर स्वरूप की प्रतिक्रिया**—ऐसी प्रतिक्रिया औषधि देने के तत्काल बाद होने लगती है, जो फैटल (Fatal) कहलाती है।

इसमें ऐसा होता है—

इधर इञ्जेक्शन द्वारा औषधि शरीर की कोशिकाओं को छूती है और सुई भी बाहर नहीं निकल पाती कि रोगी में शॉक (Shock) की स्थिति हो जाती हैं।

नोट—○ रोगी अचेत अवस्था में ही मृत्यु द्वार तक पहुँच जाता है।

○ यह सब कुछ ही क्षणों में हो जाता है।

○ ऐसी स्थिति चिकित्सक एवं विशेषज्ञ के नियन्त्रण के बाहर हो जाती है।

चिकित्सा—प्रत्येक औषधि की प्रतिक्रिया का लक्षण एवं चिह्न देखकर उसी के अनुरूप चिकित्सा करें—

○ **साधारण प्रकार की प्रतिक्रिया में**—

○ एक इञ्जेक्शन एड्रीनलीन (Inj. Adrenaline) त्वचा में (S/C) लगायें। तत्पश्चात्—

एक इञ्जेक्शन एविल (Inj. Avil) (हैक्स्ट) मांस या सिरा में।

आवश्यकतानुसार—पुनः आधे घण्टे बाद।

○ स्थानीय खुजली के लिए—

लाइकोर्टिन आइण्ट० (Lycortin eye oint. (लायका) लगायें।

○ **एनाफाइलैक्टिक शॉक**—

इञ्जे० एड्रीनलीन ५ मि० ली० मांस में प्रति ५ मिनट पर उस समय तक लगायें जब तक कि रोगी का रक्तचाप तथा रक्तसंचार सामान्य होकर नाड़ी का आभास न हो।

तत्पश्चात्—इञ्जे० हाइड्रोकार्टीसोन १०० मि० ग्रा० I/V दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ प्रति ५ मिनट बाद—इञ्जे० मैफेण्टीन (Inj. Mephentine) (वाइथ) १५ मि० ग्रा० १५ मिनट बाद दें। इसके बाद—

इञ्जे० नॉरड्रिन (Inj. Nordrin) (यूनिकेम)।

२ एम्पुल का ५% ग्लूकोज सैलाइन एक बोतल में डालकर शिरा द्वारा (I/V) देना प्रारम्भ कर दें जिससे रक्तचाप का सन्तुलन कायम हो सके।

यदि रोगी को साँस लेने में कठिनाई हो रही हो तो—

एमिनोफाइलीन इञ्जे० (B. W.)

२० मि० ली० ग्लूकोज में हल्का करके I/V मार्ग से धीरे-धीरे गति से दें।

○ **प्रतिक्रिया की तीसरी स्थिति में—**

यदि रोगी गिर गया है और उसकी हृदयगति बन्द हो गई है तो ऐसी स्थिति में तत्काल बाह्यरूप से हृदय की मालिश (External cardiae massage) करें।

इसके लिए रोगी को तुरन्त पीठ के बल सीधा करके लिटा दें। गर्दन को सीधा करके सिर को पीछे की ओर झुका दें और अपने हाथ की मुट्ठी बनाकर ३ बार छाती की हड्डी के निचले भाग पर मुक्के मारे। इससे हृदयगति चालू हो जाती है।

○ यदि इस विधि से भी हृदय की धड़कन सुनाई न दे तो छाती की हड्डी पर हाथ की मुट्ठी रखें और दूसरे हाथ से उसपर दबाव डालकर एक मिनट में ४० या ५० बार दबायें।

○ साथ ही मुख द्वारा कृत्रिम साँस रोगी के मुख में फूंके। इसके लिए रोगी के मुख पर एक बारीक कपड़ा रख लेना चाहिए तथा हृदय की मालिश के साथ-साथ दूसरे आदमी की सहायता से ५-१० सैकिण्ड के बाद यह क्रिया करते रहें।

जब हृदय अपना कार्य प्रारम्भ कर दे तब एनाफाइलेक्टिक शॉक की चिकित्सा करें, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है।

याद रखिये—इन सब प्रयासों के बाद भी यदि रोगी की मृत्यु हो जाती है तो प्राइवेट चिकित्सक स्वयं पुलिस को सूचित कर दें, क्योंकि यह एम० एल० डी० (M. L. D.) अर्थात् 'Medico Legal Death' कहलाती है और इसमें चिकित्सक को कतई दोषी नहीं ठहराया जा सकता है; यदि उसने चिकित्सा के सिद्धान्तों के अनुरूप चिकित्सा की है।

संवेदना-परीक्षण (Sensitivity test)—

यदि रोगी को कोई औषधि अनुकूल (Suitable) नहीं पड़ती है तो वह उस औषधि के प्रति संवेदक (Sensitive) कहलाता है। इस प्रकार की औषधि के लिए 'संवेदना परीक्षण' कर लेना चाहिए। इसके लिए—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोगी के हाथ (Fore arm) पर कोहनी तथा कलाई के बीच सामने की ओर पेनिसिलीन अथवा अन्य औषधि ०.१ मि० ली० का त्वचा में इञ्जेक्शन लगाकर रंगीन पेन के साथ उसके चारों ओर गोलाकार चिह्न लगा दिया जाये। आधा घण्टे तक प्रतीक्षा की जाये कि इञ्जेक्शन के स्थान पर कोई फूला हुआ चिह्न तो नहीं है। अथवा शरीर में कोई असामान्य क्रिया तो नहीं हो रही है। इस सन्दर्भ में रोगी से प्रत्येक ५ मिनट बाद पूछते रहें।

अन्य विधि द्वारा प्रतिक्रिया की जाँच—

औषधि की एक बूँद रोगी की आँख में डालने के कुछ देर बाद उसकी प्रतिक्रिया देखें।

○ यदि आँख लाल हो जाती है तथा आँख में खुजली (Itiching) होती है तो यह औषधि रोगी के अनुकूल नहीं है।

स्वास्थ्य से सम्बन्धित कुछ आवश्यक बातें

○ सुरक्षित प्रसव हेतु गर्भवती महिला को समय से टिटेनस का दो टीका लगवायें तथा पौष्टिक आहार दें।

○ नन्हें-मुन्ने बच्चों को छः जानलेवा बीमारियों—'गलघोंटू', 'काली-खाँसी', 'टिटेनस', 'पोलियो', 'टी० बी०' एवं 'खसरा' से बचाव हेतु जन्म से १ वर्ष के अन्दर ही सभी टीके लगवायें।

○ खसरा प्राणघातक बीमारी है। इसे देवी माता या भवानी का प्रकोप मानना अन्धविश्वास है। इसका सही इलाज कराकर इस बीमारी से तथा इससे होने वाली अन्य बीमारियों यथा—दस्त, न्यूमोनिया, दिमागी कमजोरी, अन्धापन आदि से बच्चों को बचाया जा सकता है।

○ बच्चों को दस्त रोग से बचाने हेतु स्वच्छ जल, तरल पेय पदार्थ एवं माँ का दूध ही देना चाहिए। यदि दुर्भाग्यवश बच्चा दस्त रोग से ग्रसित हो ही जाये तो उसे इलेक्ट्राल अथवा 'जीवन रक्षक घोल' युक्त पानी के साथ-साथ माँ का दूध, सब्जी-जूस एवं दाल का पानी आदि उसकी इच्छा या आवश्यकता के अनुसार देना चाहिए। अन्यथा बच्चा कमजोर हो जायेगा और मर भी सकता है।

○ परिवार की खुशहाली के लिए यह आवश्यक है कि लड़का की शादी २१ वर्ष और लड़की की शादी १८ वर्ष की आयु के पहले न करें। या बच्चे के बीच कम से कम ३-४ वर्ष का अन्तर रखें तथा 'हम एक हमारे एक' का नारा सार्थक करें।

○ अन्त में आपसे पुरजोर अपील है कि इन बातों पर ध्यान दें, समझें और अमल करें। अधिकाधिक जानकारी के लिए स्वास्थ्यकर्मियों या पास के उपकेन्द्र, अस्पताल या प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र से संपर्क स्थापित करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिशत शक्ति के विलयन (सोल्यूशन) बनाने की तालिका

तालिका नं० १

प्रतिशत	५ मिली०	२५ मिली०	५० मिली०	५०० मिली०
०·५	०·०२५ ग्राम	०·१२५ ग्राम	०.२५ ग्राम	२·५ ग्राम
१	०.०५ ,,	०.२५ ,,	०·५ ,,	५ ,,
२	०· १ ,,	०. ५ ,,	१ ,,	१० ,,
३	०·१५ ,,	०·७५ ,,	१·५ ,,	१५ ,,
४	०· २ ,,	१ ,,	२ ,,	२० ,,
५	०·२५ ,,	१·२५ ,,	२·५ ,,	२५ ,,
६	०· ३ ,,	१· ५ ,,	३ ,,	३० ,,
७	०·३५ ,,	१·७५ ,,	३·५ ,,	३५ ,,
८	०·४ ,,	२ ,,	४ ,,	४० ,,
९	०·४५ ,,	२·२५ ,,	४·५ ,,	४५ ,,
१०	०· ५ ,,	२· ५ ,,	५ ,,	५० ,,
११	०·५५ ,,	२·७५ ,,	५·५ ,,	५५ ,,
१२	०. ६ ,,	३ ,,	६ ,,	६० ,,
१३	०·६५ ,,	३·२५ ,,	६·५ ,,	६५ ,,
१४	०· ७ ,,	३· ५ ,,	·७ ,,	७० ,,
१५	०·७५ ,,	३·७५ ,,	७·५ ,,	७५ ,,
२०	१ ,,	५ ,,	१० ,,	१०० ,,
२५	१·२५ ,,	६·२५ ,,	१२·५ ,,	१२५ ,,
५०	२·५० ,,	१२· ५ ,,	२५ ,,	२५० ,,
७५	३·७५ ,,	१८·७५ ,,	३७.५ ,,	३७५ ,,

नोट—इस तालिका से यह जानकारी मिल सकेगी कि. कितने प्रतिशत शक्ति के विलयन बनाने के लिए कितने पानी या तरल घोलक (Solvent) में कितने ग्राम सूखी औषधि घोली जाये। जैसे ५० मिली० पानी में नमक का १ प्रतिशत विलयन बनाने के लिये ०·५ ग्राम (५०० मिग्रा०) नमक मिलाना पड़ता है।

तालिका नं० २

विलयन शक्ति	१० मिली. (ग्राम में)	२० मिली. (ग्राम में)	५० मिली. (ग्राम में)	१०० मि (ग्राम में)	५०० मि. (ग्राम में)	१००० मि. (ग्राम में)
१:५०० (१/५%)	०·०२	०·०४	०·१	०·२	१	२
१:१००० (१/१०%)	०·०९	०·०२	०·०५	०·१	०·५	१
१:२००० (१/२०%)	०·००५	०·०१	० ०२५	०·०५	०·२५	०·५
१:५००० (१/५०%)	०·००२	०·००४	०·०१	०·०२	०·१	०·२

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डाक्टरी शब्दों के संक्षिप्त रूप एवं उनके अर्थ

a c	Before eating	खाने से पहले
a d	to, upto	को, तक
ad lib	As desired	इच्छानुसार
ad part.dolent	To the painful parts	वेदनायुक्त भागों पर।
aeq	Equal	बराबर
alt. dieb	every other day	प्रत्येक तीसरे दिन
aq	Water	जल, पानी
B. I. D.	Twice daily	प्रतिदिन २ बार
B. I. N.	Twice a night	रात्रि में २ बार
Cap.	Capsule	कैप्सूल
C. M. S.	To be taken tomorrow morning	कल सुबह लिया जाने वाला
C. N.	Tomorrow night	कल रात
Collyr	An eye wash	आँख धोने का लोशन
D	Dose	मात्रा
D. & C.	Dilatation and curretage	विस्फारण एवं आखुरण
D. D. in D.	From day to day	दिन-प्रतिदिन
Div.	Divide	विभाजित करो
emp.	Plaster	प्लास्टर
emuls	An emulsion	कोई इमल्शन
en	Enema	एनीमा
F	Fahrenheit	फारेनहाइट
F. A.	First aid	प्राथमिक चिकित्सा
Garg.	A gargle	गरारा
h	hour	घण्टा
haust	A draught	एक घूँट
H. N.	To night	रात को
Ind.	Daily	प्रतिदिन
Inhal	Inhalation	अभिश्वसन
I. U.	International unit	अन्तर्राष्ट्रीय इकाई
L	Litre	लीटर
Liq.	Liquid, Fluid	द्रव, तरल
Z	Drachm	ड्राम
Z	Ounce	औंस

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Lot.	Lotion	लोशन
M	Mix	मिश्रित करो
M. et n	Morning and night	सुबह और रात
Mist	Mixture	मिश्रण
O	Pint	पिण्ट
OB.	Obstetrics	प्रसूति-विज्ञान
O C.	Oral contraceptive	मुखी गर्भनिरोधक
O. D.	Right eye	दाहिनी आँख
O. L.	Left eye	बाईं आँख
P. C.	After meal	भोजन के पश्चात्
Pil	Pill	गोली
P. O.	By mouth	मुँह से
P. R.	Through the rectum	मलाशय से होकर
Pulv.	Powder	पाउडर
P. V.	Through the vagina	योनि से होकर
Q. h.	Every hour	प्रत्येक घण्टे पर
Q. 2 h.	Every two hours	प्रत्येक २ घण्टे में
Q. S.	Sufficient quantity	पर्याप्त मात्रा
Quotid	Daily	प्रतिदिन
Rep.	To be repeated	दुहराना है
S.	Mark	चिह्न, निशान
Sig.	Write	लिखो
Sol.	Solution	विलयन, घोल
Solv.	Dissolve	घोलो
S. O. S.	If necessary	यदि आवश्यक हो
Spt.	Spirit	स्पिरिट
SS	A half	एक अर्धभाग
Suppos	Suppository	वर्तिका
Sym.	Symptoms	लक्षण
Syr.	Syrup	सीरप, शर्बत
T.	Temperature	तापमान
Tab.	Tablet	टिकिया, गोली
T. I. N.	Three times a night	रात्रि में ३ बार
Tinct.	Tincture	टिंक्चर
Top.	Topically	स्थानीय

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

U. S. P.	United States Pharmacopeia	यूनाइटेड स्टेट्स फार्मा-कोपिया
UR.	Urine	मूत्र, पेशाब
UV.	Ultraviolet	अल्ट्रावॉयोलेट
Wt.	Weight	भार

कुछ अन्य चिह्न जिनका प्रयोग चिकित्सक अपने व्यवस्था-पत्रों में करते हैं

Add	ऐड	मिलाओ
Cum	कम	साथ में
Co	को	मिश्रित
M	एम	मिलाओ
Re	आर (Recipe)	लो
State	स्टेट (Statim)	उसी क्षण
Mitt	मिट	भेजो
Ad lib	At pleasure	इच्छानुसार या जब चाहे
Cont. rem	Let the medicine	जो दवा दी गई थी वही चलेगी ।
Aq. bull	Boiling water	खौलता हुआ पानी
Aq. dist.	Distilled water	शुद्ध जल (परिश्रुत जल)
Det	Let it be gives	वही दी जाय
Dieb alt.	Every other day	एक दिन छोड़कर या हर दूसरे दिन
Dieb test.	Every third day	हर तीसरे दिन
H. S. or horsom	Just before going to bed	रात को सोने से पहले
Hd.	At going to bed	रात में सोते समय
Oz	Ounce	लगभग २½ तोला
Q. S.	Sufficient	काफी मात्रा में
T. D. S.	Three times daily	दिन में ३ बार
T. D.		दिन में ३ बार
Talis		ऐसी
Ung.	Ointment	मलहम
Vac-ven		खाली पेट, बिना खाये हुए
Vesp.		शाम, सन्ध्या
I. M.	Intramuscular	मांसपेशीगत

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

I. V.	Intravenous	शिरान्तर्गत, इण्ट्रावेनस इं०
Inj.	Injection	सूचीवेध
Mitis	Light	हलका
O	Pint	पाइण्ट
S. C.	Subcutaneous	अधस्त्वक् या हाइपोडर्मिक इञ्जे०
I. D.	Intradermal	इण्ट्राडर्मल इञ्जे०

List of Abbreviations

AA	Amino acid
Ab	Antibody
ACTH	Adrenocorticotropic hormone.
ADH	Antidiuretic hormone.
ADP	Adenosine diphosphate.
ADS	Antidiphtheritic serum.
AF	Auricular fibrillation.
AFI	Auricular flutter.
Ag	Antigen.
AHG	Antihaemophilic globulin
AMA	Antimicrobial agent.
Amp.	Ampoule
ARS.	Antirabies serum.
ATS	Antitetanic serum.
A. V.	Atrioventricular.
B_{12}	Vitamin B_{12}
BCG	Bacillus calmetee guerin
BD.	Twice daily.
BHC	Benzene hexachloride.
BL	Borderline lepromatous leprosy.
BMR	Basal metabolic rate.
BP	Blood pressure.
BSA	Body surface area.
BT	Borderline tuberculoid leprosy.
BW	Body weight.
CAT	Computerized axial tomography.

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CBF	Cerebral blood flow.
CD	Collecting duct.
CG	Chorionic gonadotropin.
Ch	Cholesterol.
CHF	Congestive heart failure.
CNS	Central nervous system.
CO	Cardiac output.
Cpz	Chlorpromazine.
CSF	Cerebrospinal fluid.
CVP	Central venous pressure.
CVS	Cardiovascular system.
Da	Dopamine.
DDS	Diamino diphenyl sulphone.
DDT	Dichloro diphenyl trichloroethane.
DI	Diabetes insipidus.
DPT	Diphtheria-Pertussis-Tetanus triple antigen.
DT-DA	Diphtheria-Tetanus double antigen.
ECG	Electrocardiogram.
EEG	Electroencephalogram.
Emb.	Ethambutol.
ESR.	Erythrocyte sedimentation rate.
FA	Folic Aid.
FSH	Follicle stimulating hormone.
GH	Growth hormone.
G. I. T.	Gastrointestianl tract.
HB	Haemoglobin
hr.	hour.
HR.	Heart rate
ICSH	Interstitial cell stimulating hormone.
I. M.	Intramuscular.
I. O. T.	Intraocular tension.
IPV.	Inactivated poliomylitis vaccine.
Iso	Isoprenaline.
IU	International unit.
IUCD	Intrauterine contraceptive device.

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

LA.	Local anaesthetic.
LH	Luteinizing hormone.
Liq.	Liquid.
LVF	Left ventricular failure.
Max.	Maximum.
MI	Myocardial infarction.
MRV	Mixed respiratory vaccine.
MT.	Monotherapy (of leprosy)
NLEP	National leprosy eradication programme.
OC	Oral contraceptive.
OD	Once daily.
OPV	Oral poliomylites vaccine.
ORS	Oral rehydration salt. (Solution)
PABA	Para-amino benzoic acid.
PAS	Para-amino salicylic acid.
PG	Prostaglandin.
PP	Partial pressure.
PPH	Post partum haemorrhage.
QID	Four times a day.
RBC	Red Blood cells.
RC	Respiratory centre.
REM	Rabid eye movement. (Sleep)
RMP	Rifampin.
S. C.	Subcutaneous.
S. I.	Sublingual.
Sm.	Streptomycin.
S. O. S.	As required.
Susp.	Suspension.
Syr.	Syrup.
Tab.	Tablet.
TABC	Typhoid, Paratyphoid A & B and Cholera vaccine.
TDS	Three times a day.
T. P. R.	Total peripheral resistance.
TRH	Thyrotropin releasing hormone.

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

TSH	Thyroid stimulating hormone.
TT	Tuberculoid leprosy.
U	Unit
UGDP	University group diabetic programme.
W. H. O.	World health organization.
W. B. C.	White blood cells.
Vio.	Viomycin.
VT.	Ventricular tachycardia.

बन्द हो चुकी औषधियाँ और उनके निर्माताओं के नाम

औषधि नाम.		निर्माता
एक्ट्रीओल	Actriol	विनमेडिकेयर
एमीकार	Amicar	सायनामिड
एमीटोन	Amitone	इण्टास
बीकोफराल	Becofral	डुफार
बीजेक्टाल	Bejectal	अब्बोट
बेलामिल	Belamyl	साराभाई
बीना-फेडरिन	Bena-Fedrin	पार्कडेविस
बेटानोल	Betanol	एम० ए० लैब्स
बायोमेबिक-एफ	Biomebic-F.	बायोकेम
ब्रॉन्कोफिल-इलिक्जिर	Broncophyl Elixir	सी० एफ० एल०
कैल्सीड्रिन	Calcidrine	अब्बोट
सेफलेड	Cefled	वाल्टर बुशनेल
सिल्फर-१२ एफ. ओरल	Cilfer-12 F. Oral	डुफार
सिलटोन	Ciltone	डुफार
सिपलार इन्जेक्शन	Ciplar Inj.	सिपला
क्लौक्सीकैप	Cloxycaps	वाल्टर बुशनेल
कॉर्टिना	Cortina	लुपिन
कोसकिन लिक्टस	Coskin Linctus	वार्नर
क्रेमोसक्सीडिन	Cremosuxidine	मेरिण्ड
डासोवास	Dasovas	वाल्टर बुशनेल
डेकाड्रान क्रीम	Decadran Cream	मेरिण्ड
डेल्टा इफेलिन	Delta-efelin	इण्डोको
डेप्सोल	Depsol	इण्टास
डेरोबिन एच० सी०	Derobin H. C.	एलनबरीज

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डेक्स्ट्रान-७०	Dextran-70	रैलीज
डियापोमाइड	Deapomide	आई. डी. पी. एल.
डेक्स्ट्रावेन	Dextraven	रैलीज
डायवोल सस्पे०	Diovol Susp.	वालेस
डोपाजिट-एच	Dopagyt-H	थेमिस केमिकल्स
डॉक्सिन	Doxin	इण्टास
डिसेनक्लोर	Dysenchlor	एस,० जी० फार्मा
इफकोरलिन-एन आई/ईअर	Efcorlin-N Eye/Ear	एलेनवरीज़
इडरौक्स	Edrox	खण्डेलवाल
एल-बी	Ele-B	यू० एस० बी
इण्टेरोजेट	Enterojet	फार्मड
इण्टेरोस्ट्रेप	Enterostrep	डेज
इक्वाजेसिक	Equagesic	वाईथ
इसबेटाल	Esbatal	वेलकम
फेरटाबोलिन	Fertabolin	इन्फार
फोल्वरोन-एफ	Folvron-F	सायनेमिड
गामाक्विल	Gamaquil	मैक
गैसट्रिलसर	Gastrilsar	बायोकेम
जेनसिल	Gencyl	आई. डी. पी. एल.
जियार्डिल	Giardyl	इपका
ग्लैक्सेना	Glaxenna	एलेनवरीज
हिस्टाप्रेड	Histapred	वाईथ
हॉर्मो-डुवाडीलॉन	Hormo-Duvadilan	डुफार
हाइपर-डाइन	Hyperdine	एस० जी० फार्मा
हिथाल्टोन-आर	Hithalton-R	एस० जी० फार्मा
आइडीग्लोविन सीरप	Idiglobin syrup.	आई. डी. पी. एल.
आइडीमाइड	Idimide	आई. डी. पी. एल.
आई-डी-टोल	Iditol	मर्क
आइलोबान	Iloban	मर्क
इनाबुटोल	Inabutol	थेमिस
इन्फेक्ट्रा	Infectra	यूनीकेम
इन्जेस्टिन	Ingestin	आई. डी. पी. एल.
आयोडोमेजिल	Idomegyl	इण्डोको
आइसोप्रिन	Isoprin	आई. डी. पी. एल.
आइसोजोन	Isozone	फाइजर

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेक्सीकोन ड्रॉप्स	Laxicon drops	स्टेडमेड
लेडरमाइसीन आइण्टमेण्ट	Ledermycin Oint.	सायनेमिड
लिपोमिड	Lipomid	सिपला
लोमोटिल लिक्विड	Lomotil Liquid	सरले
लुपिसाइक्लीन	Lupicycline	लूपिन
लाइकॉर्टिन स्किन	Lycortin Skin	लायका
लाइकॉर्टिन स्किन आई आ.	Lycortin Eye oint.	लायका
लाइकॉर्टिन ऑफ्थेल्मिक	Lycortin ophthalmic	लायका
लायका-सेटिन	Lykacetin	लायका
लाइमेसाल	Lymesal	वाल्टर बुशनेल
एम-क्विन	M-Quin	स्टेडमेड
मानाडोल	Manadol	मैनर्स
मैनीलाइन	Maniline	यूनिकेम
मेल्लोजिन	Mellozine	इण्टास
मेन्सट्रोजिन	Menstrogen	इन्फार
मेसाण्टोइन	Mesantoin	सैण्डोज
मेटाकेल्फिन	Metakelfin	वाल्टर वुशनेल
मेटाटोन	Metatone	पार्क डेविस
मेट्रीजामिड	Metrizamide	विन मेडिकेयर
माइक्रोपाइरीन-सी	Micropyrin-C	निकोलस
मिडीकेल	Midikel	पार्क डेविस
मिड्रिसिन	Midricin	एफ० डी० सी०
मिडोव्लर-ई. डी.	Midovlar-E. D.	जर्मन रेमेडीज
मिण्टेजोल	Mintezol	मेरिण्ड
मोनोड्राल	Monodral	डेज
मुकोसोल	Mucosol	ईस्ट्रा आई. डी. एल.
माइएडेक	Myadec	पार्क डेविस
माइनाटाल	Mynatal	ईस्ट्रा आई. डी. एल.
नेटाबैक	Natabec	पार्क डेविस
नेटामाइसीन	Natamycin	मार्टेल हेमर
नेटलेस	Natles	पी० सी० आई०
नेवीड्रैक्स	Navidrex	सीबा गायगी
नाक्सिड	Naxid	सिपला
नेबाकॉर्ट्रिल स्किन	Nebacortril skin	फाइजर
नियो-फेरम	Neo-Ferrum	डुफार

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नियो-फ्लाजिवोन	Neo-Flagivon	युनिलॉइड्स
नेफ्रिल	Nephril	फाइजर
नेपोडेक्स	Nepodex	आई. डी. पी. एल.
न्यूराबोल-एच	Neurabol-H	कैडिला
न्यूरावोलिन फोर्ट	Neurabolin Forte	मर्क
न्यूट्राडोन्ना	Neutradonna	निकोलस
निफिकार्ड	Nificord	रैनबैक्सी
निरवेन	Nirven	एफ० डी० सी०
नोरासाइक्लीन	Noracyclin	सीबा गैगी
नॉर-ड्रिन	Nor-Drin	यूनिकेम
नोरी-ए	Nori-A	वैलकम
नोवोकेन	Novocaine	हॉचेस्ट
न्योसोनिल फोर्ट	Nuesonil-Forte	पी० सी० आई०
न्यूट्रिप्लोन	Nutriplon	खण्डेलवाल
नाइड्राजिड	Nydrazid	साराभाई
ऑइल ब्लेओ	Oil-Bleo	खण्डेलवाल
ओनिकोफाइटेक्स	Onycophytex	खण्डेलवाल
ओप्टालीडोन	Optalidon	सैण्डोज
ओप्टीलेट्स-एम	Optilets-M	अब्बोट
ओरीसुल	Orisul	सीबा गैगी
ओरलीस्ट-२८	Orlest-28	पार्क डेविस
ओरफालजिन	Orphalgen	विडल सायवर
ऑर्थो-गायनोल	Ortho-Gynol	इथनॉर
ऑर्थो-नोविन	Grtho-Novin	इथनॉर
ओस्टेरोन	Osterone	लायका
ओबूलेन-५०	Ovulen-50	सरले
पारवोन-पी	Parvon-P	जगसन पाल
पासोनेक्स-एस	Pasosnex-S	फाइजर
पानामैक्स	Panamex	विन मेडिकेयर
पेडीएट्रिन	Padiatrin	पी० सी० आई०
पेनीड्यूर-ए० पी०	Penidure-A. P.	वाईथ
पेनप्रोड्यूराल	Penprodural	मेरिण्ड
पेनस्ट्रेप	Penstrep	मेरिण्ड
पेण्टिड्स सीरप	Pentids Syrup	साराभाई
पेरीकोर्ट	Pericort	थेम्मिस

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेरीड्रौन	Peridron	मेरिण्ड
पर्नेक्सिन	Pernexin	जर्मन रेमिडीज
परफाइलोन	Perphylon	जर्मन रेमिडीज
पेसुलिन	Pesulin	कैंडिला
फेनीमाइसिन-५००	Phenimycin 500	पी० सी० आई०
पिनाडोल	Pinadol	रैनवैक्सी
प्लासीडिन	Placidin	लुपिन
प्रालीडौक्सीम	Pralidoxime	मेथाने
सल्फोनेट	Sulphonate	यूनिकेम
प्रेसेप्टिन	Preseptin	इथनॉर
प्रेडनीफ्लेक्स	Predniflex	इथनॉर
प्रेओइस्ट	Preoest	पार्के-डेविस
प्रोकासेनोल	Procasenol	मेरिण्ड
प्रोडोर्म	Prodorm	वेलकम
प्रोनोल-४०	Pronol-40	लुपिन
प्रोक्सीमर	Proxymer	एस० जी० फार्मा
पायरीस्पाम सीरप	Pyrispam Syrup	विडल सायवर
रैनबैक्सीज टॉनिक	Ranbaxy's Tonic	रैनबैक्सी
रैनवीडौन एरोसोल	Ranvidone Aerosol	रैनबैक्सी
रैनविट	Ranvit	रैनबैक्सी
रेरीकैप-टी	Raricap-T	इथनॉर
रेडीप्लेक्स लिक्विड	Radiplex liquid	वार्नर
रेफागान	Rafagan	वायर
रेलकोफ	Ralkof	डुफार
रेनोकैब टैब०	Renokab tab.	मैनर्स
रिसोचिन इन्जेक्शन	Resochin Inj.	बायर
रेसोट्रेन कंपोजीटम	Resotren Compositum	वायर
रेस्पीनेक्स	Respinex	एलेम्बिक
रीओफिन	Rheofin	रैलीज
रोलिन	Rholin	एरिस्टो
रुब्रीमेण्ट	Rubriment	जर्मन रेमेडीज
स्काबालसिड	Scabalcid	एफ० डी०-सी०
सेडामोन	Sedamon	सिपला
सेडो-कोरोडिल	Sedo-corodil	वाण्डर
सेडिन-ए फोर्ट	Sedyn-A Forte	एम० एम० लैब्स

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेगोण्टिन	Segontin	हॉचेस्ट
सायोमेथिआनिन	Siomethionine	अल्वर्ट डेविस
सोपेन	Sopen	मैरिण्ड
स्पोरिडाइन	Sporidine	रैनबैक्सी
स्पोरोस्टासिन	Sporostacin	इथनॉर
स्पाज्मीजोल इञ्जेक्शन	Spasmizol Inj.	आई. डी. पी. एल.
स्टेप्टोबिओन	Styptobion	मर्क
सुगानरिल ऑफ्थे०	Suganril oph.	एस० जी० फार्मा
सरबैक्स सीरप/टैब	Surbex Syrup/Tab.	अब्बोट
साइब्रोन	Sybron	पार्क डेविस
साइनेल्जेसिक	Synalgesic	मैनर्स
साइनिस्टामिन क्रीम	Synistamin cream	एस० जी० फार्मा
सिस्ट्राल	Systral	खण्डेलवाल
टेण्टुम क्रीम	Tantum cream	वाल्टर वुशनेल
तापाल	Tapal	विन मेडिकेअर
टारसोलोन	Tarsolon	हॉचेस्ट
टेलेब्रिक्स-३८	Telebrix-38	रैनबैक्सी
टेनोफॉस	Tenophos	रैनबैक्सी
टरबोलॉन	Terbolan	हॉचेस्ट
टेराकॉर्ट्रिल स्किन	Terracortril skin	फाइजर
टेरकोर्ट	Tercort	थेमिस
टेटमोसोल सोलू	Tetmosol solu.	आई० सी० आई०
टेट्रालिसाल	Tetralysal	एम० ए० सी०
थियोसेविट	Thiocevit	डूफार
टिबामाइसीन	Tibamycin	ईस्ट्रा आई. डी. एल.
टिनाजिल	Tinagyl	सिपला
टिनेएफेक्स	Tineafax	वेलकम
टोनो-लिवर	Tono-Liver	स्टेडमेड
ट्रीबेटा	Tribeta	निकोलस
ट्रीबुसिन्थ	Tribusynth	ईस्ट्रा आई. डी. एल.
ट्रीडीओन	Tridione	एब्बोट
ट्रीपेरीडोल इञ्जे०	Triperidol Inj.	इथनॉर
ट्रीसोप्रिम	Trisoprim	डीफार्मा
ट्रीस्टीना कैपसूल	Tristina capsules	एम० ए० सी०
ट्राईरेडीसोल टैब/ड्रॉप्स	Triredisol tab/drops	मेरिण्ड

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ट्राइसन	Trycin	मेरिण्ड
टुलीप्रिम	Tuliprim	बिडल सायवर
टाइरोडर्म	Tyroderm	यूनिकेम
यूबीसिड फोर्ट	Ubicid Forte	यूनिकेम
अल्ट्रामाइसिन	Ultramycin	कॉनसेप्ट
अनाबोल	Un bol	यूनिकेम
यूनिपम्बा	Unipamba	यूनिकेम
यूरोबियोटिक	Urobiotic	फाइजर
वरमीटेल	Vermitel	ईस्ट्रा आई. डी. एल.
वरसालिन	Versalin	यूनिलोइड्स
वी-मेगना कै०	Vi-Megna Cap.	साइनेमिड
विनब्लास्टिन	Vinblastin	खण्डेलवाल
वीसाइनेराल इन्जे०/कैप०	Visyneral Inj./Cap.	यू० एस० वी०
विटालमिन	Vitalmin	आई. डी. पी. एल.
विटाहैक्स्ट	Vitahext	हॉचेस्ट
विटमोल कम्पाउण्ड	Vetmol Compound	मेरिण्ड
विटोफेरिन	Vitoferrin	ईस्ट्रा आई. डी. एल.
विनट्रेक	Vintrac	विनमेडिकेअर
एक्सीडॉक्स	Xidox	साराभाई

नोट—उपरोक्त समस्त औषधियाँ बंद हो चुकी हैं, अतः अब चिकित्सक परामर्श देते समय अपने प्रेस्क्रिप्शन में इन औषधियों को निर्देशित न करें।

ऐसी औषधि-कम्पनी जिसका नाम बदल गया है—

कम्पनी का पूर्व नाम	वर्तमान का नाम
मे एण्ड बेकर (एम० बी०)	रोन पोलेन्क
May & Baker (M. B.)	Rhone Poulenc

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रथम खण्ड

*

पाचन-संस्थान के रोग

(Diseases of Digestive System)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अग्निमान्द्य/अजीर्ण
(Despepsia/Indigestion)

पर्याय—(Synonyms) अग्निमान्द्य, भूख की कमी, मन्दाग्नि, अजीर्ण, भोजन का ठीक प्रकार से पाचन न होना, भूख न लगना तथा सामान्य बोल-चाल की भाषा में में इसे बदहज्मी भी कहते हैं। इसे हाईपोक्लोरहाइड्रीया (Hypochlorhydria) नाम से भी जाना जाता है।

परिचय—Dyspepsia is a term used to describe abdominal discomfort that occurs after eating and includes symtoms such as heartburn, nausea and pain in stomach. The underlying cause may be deficiency indigestive enzymes or in acid in the stomach.

अर्थात् डिस्पैप्सिया एक ऐसा शाब्दिक प्रयोग है, जिसमें किये हुए भोजन के पश्चात् असामान्य असुविधा उत्पन्न होती है। साथ ही छाती की जलन (Heart burn), मिचली तथा आमाशयिक दर्द आदि के साथ लक्षण उत्पन्न होते हैं। यह पाचक इञ्जाइम्स की कमी अथवा आमाशय में अम्ल की उपस्थिति के परिणामस्वरूप होता है। इसमें खाये हुए पदार्थ भलीभाँति नहीं पचते, जिससे बार-बार डकारें आती हैं। सिर में चक्कर, हृदय का अधिक धड़कना, कब्ज की शिकायत, थूक की अधिकता आदि इस रोग के विशेष लक्षण हैं।

रोग के कारण (Causes)—इस रोग को उत्पन्न करने वाले अनेक कारण हैं—

(१) **ऑर्गेनिक डिजीज**—१. कण्ठनली का ट्यूमर, २. कार्डियोस्पाज्म, ३. डायाफ्राग्मेटिक हर्निया, ४. गैस्ट्राइटिस, ५. पेप्टिक अलसर तथा ६. आमाशय का कैंसर आदि।

(२) **रिफ्लेक्स डिस्पेप्सिया**—१. एपेण्डीसाइटिस, २. कोलीसिस्टाइटिस, ३. पेन्क्रियेटाइटिस, ४. एमीबिएसिस, ५. स्वास्टिक कोलन, ६. हेल्मेन्थिएसिस आदि।

(३) **सिस्टेमिक डिजीज**—१. कार्डियक फेल्योर, २. पल्मोनरी ट्यूबरकुलोसिस, ३. अनीमिया, ४. एडीसन्स का रोग, ५. यूरीमिया, ६. हाइपरपैराथायराइडिज्म आदि।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४) **क्रियात्मक कारण** (Functional causes)—१. बुरी आदतें जैसे—आवश्यकता से अधिक खाने या रात में देर से खाने, शराब पीने की आदत से प्रायः स्थायी डिस्पैप्सिया का रोग हो जाता है।

२. शोक, चिन्ता, क्रोध एवं अन्य मानसिक संक्षोभ के कारण आमाशयिक रस की उत्पत्ति कम होती है और इससे भी पाचन-शक्ति क्षीण हो जाती है।

३. शीघ्र भोजन करना, बिना चबाये जल्दी-जल्दी खाना, भोजन करते समय पढ़ते जाना अथवा भोजन के तुरन्त बाद पढ़ने लगना आदि कारणों से भी अजीर्ण का रोग हो जाता है।

४. अधिक चटपटा व मसालेदार भोजन, सोडावाटर या लेमनेड पीने अथवा अधिक चाय-काफी के सेवन से अम्ल की अधिकता के कारण भी अजीर्ण हो जाता है।

५. अधिक आइस्क्रीम या बर्फ के सेवन से उदरकलाशोथ होकर अग्निमान्द्य का रोग हो जाता है।

६. आमाशय की मांसपेशियाँ कमजोर हो जाने से भी स्थायी अजीर्ण रोग उत्पन्न हो जाता है।

७. कभी-कभी आमाशयिक रस (हाइड्रोक्लोरिक एसिड) सामान्य से भिन्न गुणों का बनता है, जिससे डिस्पैप्सिया का रोग हो जाता है।

८. तन्त्रिका-दौर्बल्य (न्यूरेस्थीनिया) से ग्रसित रोगी को प्रायः अजीर्ण की शिकायत रहती है।

९. अधिक पानी पीने, अधिक शारीरिक या मानसिक परिश्रम अथवा बिल्कुल ही परिश्रम न करने; खटाई, अचार तथा अन्य खट्टे पदार्थों का अधिक सेवन; अस्वास्थ्यकर मकान में निवास, कमर पर खूब कस कर कपड़े पहनना, व्यायाम के पश्चात् कुछ समय विश्राम किये बिना ही तुरन्त भोजन कर लेने आदि कारणों से भी अजीर्ण का रोग हो जाता है।

१०. दाँतों का रोग विशेषकर पायरिया भी इसका एक प्रमुख कारण है।

विशेष—इस रोग में यथासम्भव कोष्ठबद्धता (Constipation) का निराकरण करना चाहिए।

लक्षण (Symptoms)—इस रोग में निम्नलिखित सामान्य लक्षण होते हैं—

१. रोगी को भूख नहीं लगती, उसे खट्टी डकारें आती हैं तथा छाती में जलन होती है। रोगी का जी मिचलाया करता है और उसके मुँह में पानी भर आता है।

२. सिर भारी रहता है, कभी-कभी सिर में चक्कर भी आते हैं।

३. भोजन के बाद प्रायः रोगी का पेट फूल जाता है।

४. दिल धड़कने की भी शिकायत मिलती है।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. रोगी को खाने-पीने की इच्छा नहीं होती। उसे या तो कब्ज रहता है अथवा पतले दस्त आते हैं।

६. किसी भी कार्य में उसका मन नहीं लगता है। वह थोड़ा भी परिश्रम करने से थक जाता है।

७. जीभ मलावृत रहती है तथा कभी-कभी मुँह से दुर्गन्ध भी आने लगती है।

८. रोग के पुराने होने पर पेट में गैस बनने लगती है। पेट के निचले स्थान पर अर्थात् नाभिप्रदेश की हड्डी के नीचे बेचैनी, भारीपन तथा भोजन करने के बाद पेट में गुड़गुड़ाहट, सुस्ती, थकान, नाड़ी-दौर्बल्य, स्नायु-दौर्बल्य (न्यूरेस्थीनिया) तथा अनिद्रा आदि लक्षण हो जाते हैं।

विशेष—यह कोई रोग विशेष नहीं है। यह केवल एक लक्षण मात्र है, जो अनेक रोगों में भी दिखलाई देता है।

उपद्रव (Complications)—पर्निसियस अनीमिया इसका एक प्रमुख उपद्रव है।

निदान (Diagnosis)—भूख न लगना, भोजन के बाद पेट में भारीपन अथवा पीड़ा, मलावृत जिह्वा, मितली या वमन, मुँह से पीला या हरा पानी आना, सिर में भारीपन, तबीयत का गिरा रहना, पेट में गैस का बनना आदि लक्षणों से इसके निदान में कोई कठिनाई नहीं होती।

प्राग्ज्ञान (Prognosis)—रोग के दीर्घ काल तक बने रहने से पेट में गैस बनने लगती है, जिससे स्नायु-दुर्बलता, सिर चकराना, अनिद्रा, दिल का धड़कना आदि विकार उत्पन्न हो सकते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा एवं आवश्यक निर्देश—

१. रोग के प्रमुख कारणों की चिकित्सा करने से अजीर्ण स्वतः ठीक हो जाता है।

२. आमाशयिक रस की कमी में आमाशयिक रस (Hcl.) बढ़ाने की व्यवस्था करनी चाहिए।

३. यथासम्भव दीपन-पाचन (Digestive stimulent and carminative) औषधियाँ देनी चाहिए।

४. मानसिक उत्तेजना से बचना चाहिए।

५. हलका शारीरिक श्रम, प्रातःकालीन भ्रमण तथा नित्य स्नान करे।

६. अधिक मैथुन, दिवाशयन, रात्रिजागरण तथा मिथ्या आहार-विहार का त्याग करे।

७. खाने के पश्चात् ब्राण्डी १ चम्मच १०० मि० ली० जल में मिलाकर दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. यदि दाँत में कोई रोग हो तो उसकी समुचित चिकित्सा करें।

९. भोजन के समय अधिक पानी नहीं पीना चाहिए। भोजन के बीच-बीच में आधा गिलास पानी पर्याप्त होता है।

१०. भोजन में अन्य वस्तुओं की मात्रा घटाकर दूध-दही की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए, परन्तु दूध अधिक गाढ़ा न हो।

११. कभी-कभी उपवास भी आवश्यक होता है।

१२. अम्लाधिक्य तथा पेप्टिक अलसर की अवस्था में तम्बाकू तथा सिगरेट का पूर्ण निषेध करे।

१३. रोगी को लघु पाचक आहार, पुराने चावल का भात, कच्चे पपीते का शाक आदि दें। पका हुआ पपीता इसमें विशेष उपयोगी होता है।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

(i) ℞ टाका कॉम्बेक्स कैपसूल (नि०—पी० डी० एण्ड कं०)।

मात्रा—१ कै० दिन में २ बार प्रातः-सायं।

अथवा—लीडप्लेक्स कैपसूल (Leaderplex cap.)।

मात्रा—१-१ कै० दिन में ३ बार भोजनोपरान्त।

साथ ही—डीजीप्लेक्स इलिक्जिर (Digiplex Elixir)।

मात्रा—२ चाय चम्मच दिन में ३ बार भोजनोपरान्त।

अथवा—लिवोजिन सिरप या बीकोजाइम फोर्ट।

मात्रा—२ चम्मच दिन में ३ बार भोजनोपरान्त।

साथ ही—इन्जेक्शन विटामिन 'बी' कॉम्प्लेक्स (लीडर्ले)।

मात्रा—२ मि० ली० इण्ट्रामस्कुलर नित्य या प्रत्येक तीसरे दिन।

(ii) ℞ वार्डेज इलिक्जिर (Bardese Elixir) (पी० डी० कं०)।

मात्रा—२-२ चम्मच दिन में २ बार एवं रात्रि में सोते समय।

नोट—यह आमाशयिक शूल (गैस्ट्रिक पेन) युक्त डिस्पैप्सिया में उपयोगी है।

(३) हाइड्रोक्लोरिक एसिड की कमी की स्थिति में—

℞ एसिड हाइड्रोक्लोरिक डिल	०.६ मि० ली०
टिंक्चर कार्मीनेटिव	१ मि० ली०
सिरप जिंजर	१ मि० ली०
विटामिन 'बी' कॉम्प्लेक्स सिरप	१ मि० ली०
इन्फ्यूजन चिरायता	३० मि० ली०
	१ मात्रा।

ऐसी एक मात्रा दिन में २ बार भोजन से पूर्व दें।

चेतावनी—इस मिक्श्चर को इस प्रकार से पीना चाहिए कि दाँतों में न लगे।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४) भूख की कमी में निम्न योग दें—

℞ डायस्टेज	६० मि० ग्रा०
पेपेन	६० मि० ग्रा०
एरोमेटिक स्प्रिट आफ अमोनिया	१ मि० ली०
टि० कार्डे को०	०·६ मि० ली०
पिमरमेण्ट वाटर	३० मि० ली०
	१ मात्रा ।

ऐसी एक मात्रा दिन में २ बार भोजनोपरान्त दें ।

अथवा—℞ सोडाबाईकार्ब	६०० मि० ग्रा०
टिंक्चर कार्डे को०	०·६ मि० ली०
स्प्रिट क्लोरोफार्म	१ मि० ली०
एक्वा मेन्था पिपरेटा कुल	३० मि० ली०
	१ मात्रा ।

ऐसी एक मात्रा दिन में ३ बार भोजनोपरान्त दें ।

नोट—यह अपचन को ठीक करके भूख को बढ़ाता है । इसे कार्मीनेटिव मिक्श्चर कहते हैं ।

(५) अजीर्ण, कब्ज तथा गैस के रोगियों के लिए—

℞ गैसटोल टेबलेट (Gastol tablet)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार भोजनोपरान्त चुसवायें ।

साथ ही—मिल्क आफ मैगनेसिया (डेज़)

मात्रा—१-४ छोटे चम्मच दिन में २ बार ।

साथ ही—निम्न कार्मीनेटिव मिक्श्चर बनाकर दें—

℞ सोडाबाईकार्ब	१ ग्राम
स्प्रिट अमोनिया एरोमेट	१ मिली०
स्प्रिट क्लोरोफार्म	१ मिली०
टिं० कार्डे को०	१ मिली०
टिं० सिरप	२ मिली०
सिनेमम वाटर	३० मिली०
	१ मात्रा ।

ऐसी एक मात्रा दिन में ३ बार भोजनोपरान्त दें ।

नोट—यदि रोगी के पेट में ऐंठन के साथ दर्द भी हो तो इस मिक्श्चर की प्रत्येक मात्रा में १ मि० ली० टिंक्चर बेलाडोना और मिला दें ।

ज्ञातव्य—इससे भोजन हजम होता है और कब्ज दूर होकर मल खुलकर आता है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्देश—उक्त मिक्श्चर के १ घण्टे पश्चात् कॉम्बीजाइम टेबलेट (Combizyme tab.) १-१ गोली हर खाने के बीच में पानी से निगलवा दें।

अथवा—अल्ट्राकार्बन की १-१ गोली हर खाने के बाद दिन में ३ बार।

विशेष कब्ज की स्थिति में—

℞ कैलोमेल पाउडर	९० मि० ग्रा०
एक्स्ट्रेक्ट हायोसायमस	१५ मि० ग्रा०
एक्स्ट्रेक्ट कोलोसिन्थ कम्पाउण्ड	१५० मि० ग्रा०
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा प्रातःकाल पर्याप्त जल से दें।

(६) फ्लेटचुलेन्स डिस्पैप्सिया में—

℞ अल्माजेल (Almagel) (नि०—आई० डी० पी० एल०)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार अथवा आवश्यकतानुसार चूसें।

नोट—इसका सस्पेंशन (Almagel Suspension) भी आता है।

मात्रा—१०-२० मि० ली० दिन में ३-४ बार।

अथवा—अल्माकार्ब (ग्लैक्सो) २ टेबलेट दिन में ३-४ बार अथवा आवश्यकतानुसार।

विशेष—यह उत्तम गैस-निरोधक है।

अथवा—	℞ टिं० कैप्सीकम	०·३ मि० ली०
	टिं० जिंजर	१ मि० ली०
	टिं० कार्ड को०	२ मि० ली०
	स्प्रिट ईथर नाइट्रोसी	१ मि० ली०
	स्प्रिट क्लोरोफार्म	०·६ मि० ली०
	एक्वा मेन्था पिपरेटा कुल	३० मि० ली०
		१ मात्रा।

इस मात्रा में से १५ से ३० मि० ली० आवश्यकतानुसार पिलायें।

नोट—इससे अजीर्ण तथा अफारा दूर होकर डकारें आकर वायु निकल जाता है।

(७) अम्लयुक्त इण्डाइजेशन तथा डिस्पैप्सिया में—

℞ एलूसीनोल (Alucinol) (नि०—फ्रेंको इण्डिया)

मात्रा—२-३ गोली दिन में ४ बार भोजनोपरान्त।

नोट—इसका सस्पेंशन भी आता है।

मात्रा—५-१० मि० ली० दिन में ३-४ बार भोजन के बाद।

अथवा—न्यूट्राडोना (Neutradona) (नि०—निकोलस)

मात्रा—२ टेबलेट दिन में ३-४ बार भोजन से पूर्व।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—इसका पाउडर (Neutradona Powder) भी आता है।

मात्रा—१ चम्मच पाउडर दिन में ३-४ बार भोजन से पूर्व जल के साथ।

विशेष—यह एसिड डिस्पैप्सिया में विशेष लाभकारी है।

(८) एसिड (Hcl.) की कमी से उत्पन्न डिस्पैप्सिया में—

℞ एसिड हाइड्रोक्लोरिक डिल	२ मि० ली०
क्लोरोफार्म वाटर	३० मि० ली०
ग्लूकोज पाउडर	८ ग्राम
जल (Aqua) कुल	६० मि० ली०
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा भोजन करते समय दिन में २ या ३ बार।

साथ ही—विटाहैक्स्ट (Vitahext) (निर्माता—हैक्स्ट)

मात्रा—२-२ चम्मच सिरप भोजन के बाद दें।

(९) नर्वस डिस्पैप्सिया में—

℞ स्पेजरिल टेबलेट (Spasril tab.) (नि०—मोण्टारी)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार।

अथवा—टेबलेट स्टेलाबिड (Tab. Stalabid) (नि०—इस्केलेब)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

नोट—इसका एक अन्य योग स्टेंलाबिड-२ भी आता है।

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

(१०) सामान्य इण्डाइजेशन तथा डिस्पैप्सिया में—

℞ टेबलेट डिस्पैप्टाल (Tab. Dispeptal) (नि०—वोहरिंगर कं०)

मात्रा—१-२ ड्रेंगी भोजन के साथ।

(११) हाइपर एसिडिटी, पेट का फूलना, डिस्पैप्सिया, इण्डाइजेशन, एनोरेक्सिया में—

℞ डिस्पेप्टेज लिक्विड (Dispeptase liquid) (नि०—पाश्चर कं०)

मात्रा—५-१० मि० ली० भोजनोपरान्त दिन में २ या ३ बार।

अथवा—डिजीटोन लिक्विड (Dizytone liquid) (नि०—यूनीकेम)

मात्रा—५-१० मि० ली० दिन में २-३ बार।

विशेष—भूख बिलकुल न लगना (Poor digestion) एवं अरुचि (Anorexia) में विशेष लाभकारी।

(१२) पेट फूलना, इण्डाइजेशन, डिस्पैप्सिया तथा छाती की जलन (Heart Burn) में—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

℞ टेबलेट इनजार (Tab. Enzar) (नि०—बाल्टर बुशनेल)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार भोजन के मध्य में।

नोट—इसे धीरे से निगल जायें, चबायें नहीं।

(१३) इण्डाइजेशन, पेट फूलना तथा वृद्धावस्था का डिस्पैप्सिया रोग—

℞ इन्जाइमेक्स एम० पी० एस० (Enzymex M P S)
(नि०—इपका)

मात्रा—१-२ गोली भोजनोपरान्त।

(१४) इण्डाइजेशन, डिस्पैप्सिया, पेट फूलना, गैस्ट्रिक फर्मेण्टेशन, छाती की जलन, विटामिन डेफिसियेन्सी—

℞ लूपीजाइम सिरप (Lupizyme Syrup) (नि०—लूपिन)

मात्रा—१० मि० ली० दिन में २ बार भोजनोपरान्त।

(१५) हीन डाइजेशन (Poor digestion) में—

℞ रालक्रीजाइम (Ralcrizyme) (नि०—रेलिस)

मात्रा—१-२ ड्रेगी दिन में २ बार भोजन के बाद अथवा आवश्यकतानुसार।

(१६) पेट फूलना, डिस्पैप्सिया, क्रॉनिक गैस्ट्राइटिस, कन्वल्सेंस आदि में—

℞ यूनी इन्जाइम (Uni enzyme) (नि०—यूनीकेम)

मात्रा—१-२ गोली दिन में २-३ बार भोजन के बाद।

(१७) हाइड्रोक्लोरिक एसिड की कमी, बच्चों में बार-बार होने वाले दस्त तथा डिस्पैप्सिया में—

℞ विल्को इन्जाइम (Vilco enzyme) (नि०—विल्को कं०)

मात्रा—बालक—१·२५ मि० ली०।

वयस्क—५-१० मि० ली० भोजन अथवा दूध से पूर्व।

नोट—इसकी गोली भी आती है।

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार भोजन के बाद।

(१८) इण्डाइजेशन, फर्मेण्टेटिव डिस्पैप्सिया, छाती की जलन तथा एनोरेक्सिया में—

℞ विटाजाइम (Vitazyme) (नि०—ईस्ट इण्डिया)

मात्रा—१०-१५ मि० ली० दिन में २ बार भोजन के समय या भोजन के बाद।

नोट—इसका ड्राप (Vitazyme drops) भी आता है।

मात्रा—शिशु—१ वर्ष से कम—०·५ मि० ली० (लगभग १० बूंद)
दिन में १ बार जल में मिलाकर।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालक—१ वर्ष आयु के—०·५ मि० ली० दिन में २ बार जल में मिलाकर।

(१९) फ्लेटचुलेण्ट डिस्पैप्सिया में—

℞ अल्माजेल (Almagel) (नि०—आई० डी० पी० एल०)

(२०) अजीर्ण के कारण डकारें (Eructations) आने पर—

℞ डिस्पेप्टाल अथवा सोडामिण्ट।

मात्रा—१-२ गोली भोजन के बाद दिन में ३-४ बार।

(२१) अजीर्ण, अग्निमांद्य के कारण नींद न आना तथा आमाशय में बेचैनी—

℞ डिस्पेप्टाल (Dispeptal)

मात्रा—१ ड्रेगी दिन में २ बार भोजन के बाद।

साथ ही—लिबरियम १ गोली नित्य सोते समय १ माह तक दें।

(२२) डिस्पैप्सिया तथा इण्डाइजेशन के साथ दुर्बलता में—

℞ मेटाटोन (Metatone)

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३ बार।

(२३) सामान्य पाचन न होने पर—

℞ नॉर्मोजाइम (Normozyme) (नि०—यूनी लुआइड्स)

मात्रा—१० मि० ली० दिन में २ बार।

नोट—इसकी ड्रेगी भी आती है।

मात्रा—१ ड्रेगी दिन में २ बार।

(२४) इण्डाइजेशन, डिस्पैप्सिया, क्रॉनिक गैस्ट्राइटिस तथा पाचक रसों की कमी में—

℞ ओरीजाइम (Orizyme) (नि०—कोप्रान)

मात्रा—२.५ से ५ मिली० दिन में २ या ३ बार अथवा आवश्यकतानुसार।

(२५) मानसिक अजीर्ण में—टिं० बेलाडोना १ ड्राम तथा इलिक्जिर फीनोबार्बीटोन २ औंस मिलाकर १-१ ड्राम की मात्रा में दिन में ३ बार दें।

इण्डाइजेशन (अजीर्ण) तथा डिस्पैप्सिया (अग्निमांद्य) नाशक अन्य पेटेण्ट औषधियाँ

टेबलेट—बीकोजाइम, बीकोजाइम सी० फोर्ट, एलूजेल, कॉम्बीजाइम, एल्बीजाइम, ट्राईजाइम, पेण्टोजाइम, बीप्लेक्स, सिण्टोजेल, कैम डाईजिस्टोन फोर्ट, डिप्लोजाइम, डेमागाल, फेस्टाल, लैक्टोफर्मेण्ट, पेटसीलेक्स, टाकाजाइम।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिक्विड—लिवरजिन, लिवोजिन, टीनियाजोल, डीजीप्लेक्स, नीओफेरीलेक्स, पेप्सिनोजाइम, मीनाडेक्स सिरप, बीकोजाइम फोर्ट, डायापेन, जाइमोटोन, इयूपेप्टिन, टाका कम्बेक्स इलिक्जिर।

इन्जेक्शन—बीकोजाइम फोर्ट, लिवर एक्स्ट्रेक्ट, विटामिन बी$_{१}$, विटामिन 'बी'-कॉम्प्लेक्स।

एक्यूट डिस्पैप्सिया की चिकित्सा—केलोमेल (Calomel) ३ ग्रेन अथवा ब्लूपिल (Bluepill) और दूध का सेवन लाभकारी पाया गया है।

विस्मथ कार्बोनेट एवं सोडियम कार्बोनेट युक्त मिक्श्चर दिया जा सकता है। □

पाचन-संस्थान के रोग 1/2

अरुचि
(Anorexia)

पर्याय—(Synonyms) अरुचि, खाना खाने की इच्छा न होना, अरोचक। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में इसे 'Loss of appetite' भी कहते हैं।

परिभाषा (Definition)—भोजन में अनिच्छा (अरुचि) को 'ऐनोरेक्सिया' कहते हैं। इसमें प्रधान विकृति आमाशय, अग्न्याशय अथवा यकृत् में होती है। प्रधान रूप से यह किसी शारीरिक विकृति का एक लक्षण मात्र हैं। इस रोग में थोड़ा भी भोजन करने की इच्छा नहीं होती है। यदि रोगी जबर्दस्ती भोजन करने बैठ भी जाये तो दो-चार कौर से अधिक नहीं खा पाता। उसका पेट गैस से भरा रहने के कारण बिना कुछ खाये ही भारी रहता है।

रोग के कारण (Causes)—सामान्य रूप से अरुचि (एनोरेक्सिया) निम्न रोगों अथवा अथवा अवस्थाओं में मिलती है—

(१) **हाइड्रोक्लोरिक एसिड की कमी**—तीव्र तथा क्रॉनिक आमाशयशोथ (गैस्ट्राइटिस) आदि रोगों में जब आमाशय की ग्रन्थियाँ हाइड्रोक्लोरिक एसिड (Hcl.) का कम मात्रा में निर्माण करती हैं, तब रोगी को अरुचि हो जाती है।

(२) **मानसिक कारण**—चिन्ता, भय, क्रोध, घबड़ाहट, हिस्टीरिया, अनिद्रा तथा अन्य मानसिक स्थितियों में रोगी को भूख लगना बन्द हो जाता है।

(३) **संक्रामक व्याधियाँ**—किसी भी संक्रमण की प्रारम्भिक अवस्था में रोगी को प्रायः अरुचि हो जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४) **चिरकारी रोग** (Chronic diseases)—यक्ष्मा आदि चिरकारी रोगों में मुख्यतया भोजन के प्रति अरुचि हो जाती है।

(५) **चयापचयी (Metabolic) क्रिया में मन्दता**—एडीसंस तथा मिक्सीडीमा आदि ऐसे रोग हैं, जिनमें शरीर में सम्पादित होने वाली चयापचयी क्रिया बहुत मन्द हो जाती है। परिणामस्वरूप रोगी में अरुचि हो जाती है।

(६) **शरीर में विटामिन की न्यूनता**—आज के युग में विटामिन की कमी भी अरुचि का एक प्रधान कारण माना जा रहा है। विशेष रूप से शरीर में विटामिन 'बी'-कॉम्प्लेक्स की कमी हो जाती है। ऐसी अवस्था में भूख समाप्त हो जाती है।

(७) **शरीर-क्रियात्मक कारण**—अधिक पौष्टिक आहार लेने तथा पूरे दिन कार्य न करने आदि कारणों से भी अरुचि हो जाती है।

(८) **कृमि रोग** (Worms diseases)—शरीर में आन्तरिक कृमियों की उपस्थिति भी अरुचि का एक प्रधान कारण है।

(९) **कोष्ठबद्धता**—आमांश का अधिक मात्रा में संचय होने पर तथा मलावरोध के कारण भी भोजन के प्रति अरुचि हो जाती है।

(१०) **आमाशय व्रण** (Peptic ulcer)—आमाशय और आँत के अनेक रोगों तथा कैंसर के कारण रोगी को भोजन के प्रति अरुचि हो जाती है। ऐसा प्रायः आमाशय और लिवर की खराबी से होता है।

नोट—संक्रामक ज्वर (Infectious Fever), ट्युबरकुलोसिस तथा मेलिग्नेण्ट डिजीज इसके लिए विशेष उत्तरदायी हैं। गैस्ट्रिक अलसर की प्रारम्भिक अवस्था इसका प्रधान कारण हो सकता है। अलसर में कभी-कभी भोजन लेने के प्रति भय-सा प्रतीत होता है।

रोग के कारणों की महत्ता—अरुचि के अधिकांश रोगी मानसिक विषमता से ग्रसित रहते हैं। अरुचि में शारीरिक कारणों की अपेक्षा मानसिक कारणों का विशेष महत्त्व माना जाता है।

रोग लक्षण (Symptoms)—१. इस रोग में रोगी को खाना खाने की इच्छा नहीं होती है। यदि वह अपनी इच्छा के विरुद्ध या सबके कहने पर खाने के लिए राजी भी होता है तो वह दो-चार कौर अथवा एक-दो रोटी से अधिक नहीं खा पाता।

२. थोड़ा-सा खाने के बाद ही उसे ऐसा प्रतीत होता है कि उसका पेट खूब भर गया है और तबीयत भारी हो जाती है।

३. रोगी को खट्टी अथवा सूखी डकारें आती हैं।

४. बिना खाये-पिये ही उसका दिल भरा-सा मालूम होता है।

५. रोगी का पेट भारी मालूम पड़ता है और मुँह में कभी-कभी पानी भी भर आता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. किसी कार्य में उसका मन नहीं लगता है। वह सदैव मलिन मुख रहता है। भोजन के बाद भी उसका चेहरा खुश नजर नहीं आता है।

७. रोगी अल्प श्रम करने पर ही थक जाता है।

८. रोग के दीर्घकाल तक बने रहने से उसके शरीर-भार में काफी कमी आ जाती है और वह अनीमिक हो जाता है।

९. अनेक बार यकृत दोष एवं दूषित पित्त के संचय के कारण स्वाद की कटुता तथा अरुचि भी उत्पन्न हो जाती है।

निदान (Diagnosis)—भूख की कमी, खाने के प्रति अनिच्छा, मलावरोध, भार में कमी, बेचैनी, किसी कार्य में जी न लगना आदि लक्षणों से इसे सरलतापूर्वक पहचाना जा सकता है।

प्राग्ज्ञान (Prognosis)—रोग के चिरकाल तक बने रहने और उचित चिकित्सा न करने से रोगी की रस, रक्त और मांस आदि धातुएँ सूखने लगतीं हैं और उसका भार अत्यधिक गिर जाता है।

चिकित्सा—सामान्य चिकित्सा एवं आवश्यक निर्देश—

१. रोगी को चिन्ता, भय, शोक आदि कारणों से बचना चाहिए।

२. रोग के मूल कारण की चिकित्सा आवश्यक है।

३. रोगी के मन को सदैव खुश तथा प्रसन्न रखें। उसे कभी अकेला न छोड़ें।

४. शरीर में रक्त की कमी की स्थिति में रक्तवर्धक, दीपन, पाचन औषधियाँ, लिवर एक्स्ट्रेक्ट आदि का प्रयोग करना चाहिए।

५. कृमि की स्थिति में कृमिनाशक तथा कृमिशोधक चिकित्सा करें।

६. अजीर्ण तथा आमाशयशोथ की उचित चिकित्सा करें। तत्पश्चात् विटामिन 'सी', विटामिन 'बी'-कॉम्प्लेक्स आदि के द्वारा एनोरेक्सिया का शमन करें।

७. आमांश एवं मल के शोधन के लिए कॉस्टर आयल (Castor Oil), केलोमल आदि का प्रयोग आवश्यक है।

८. इस रोग की चिकित्सा में मानसिक प्रसन्नता का वातावरण, रुचिकर भोजन व्यवस्था, स्थान-परिवर्तन तथा मानसिक विषमयता के मूल कारणों का निराकरण करें।

९. रोगी को खाने से पूर्व टहलने का निर्देश दें। प्रातः और सांयकाल खुली हवा में रोगी को सैर करायें।

१०. रोग की पुरानी स्थिति में होने पर शरीर पर तैल-मालिश की व्यवस्था करें।

११. मसूडों और दाँतों से निकलने वाले खून (पायरिया रोग) की चिकित्सा व्यवस्था करें।

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१२. सप्ताह में एक दिन उपवास रखने से क्षुधा में वृद्धि होकर अरुचि का विकार नष्ट होता है।

औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

(१) यदि अरुचि किसी तीव्र अथवा चिरकारी (Chronic) रोग के कारण नहीं है तो निम्नलिखित क्षुधावर्धक योग दें—

℞ साइप्रोहेप्टाडीन ४ मि० ग्रा०।
व्या० नाम—टेब० सिप्लैक्टिन (Tab. Ciplectin)।
मात्रा—१-२ गोली दिन में २ बार भोजन से एक घण्टा पूर्व।
बच्चों में—आयु के अनुसार।
साथ ही—लिवोजिन सीरप (Livogin Syrup)।
मात्रा—२-२ चम्मच दिन में दो बार भोजन के बाद।

अथवा—सीरप विटाहैक्स्ट (Syrup Vitahext)।
मात्रा—२ चम्मच दिन में ३ बार।

अथवा—बीकोजाइम सिरप (Becozyme Syrup) (रोशे कं०)।
मात्रा—२-३ बड़ा चम्मच दिन में २ या ३ बार।

अथवा—बीकोजाइम फोर्ट इन्जे० (Inj. Becozyme forte)।
मात्रा—२-४ मिली० इण्ट्रामस्कुलर अथवा इण्ट्रावीनस।
कोर्स—१० इन्जेक्शन तक।

अथवा—'फॉस्फोमिन इलिक्जिर' अथवा 'बी० जी० फॉस'।
मात्रा—१ बड़ा चम्मच खाने से पूर्व दिन में ३ बार जल में मिलाकर।

नोट—इससे पाचन क्रिया उत्तेजित होती है।

भूख बढ़ाने के लिए निम्न योग भी दिया जा सकता है—

℞ एसिड साइट्रिक	९०० मि० ग्रा०
सिरप लेमन जूस	४ मि० ली०
एक्वा क्लोरोफार्म कुल	३० मि० ली०
	१ मात्रा

ऐसी एक मात्रा भोजनोपरान्त दिन में ३ बार पिलायें।

(२) आमाशयिक अम्ल की न्यूनता से उत्पन्न अरुचि में—

℞ टिं० नक्स वोमिका	५ बूँद (5 minim)।
एसिड हाइड्रोक्लोरिक डिल०	१० बूँद।
ग्लिसरीन एसिड पेप्सिन	३० बूँद।
इन्फ्यूजन जेन्शियन	१ औंस
	१ मात्रा

ऐसी एक मात्रा भोजन से १५ मिनट पूर्व दिन में ३ बार दें।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) अपचयी पदार्थ (एनाबोलिक एजेन्ट्स) क्षुधा बढ़ाने में विशेष क्रियाशील होते हैं; इसके लिए—

℞ मिथोनडिएनोन ५ मि० ग्रा०

व्यापा० नाम—टे० डायनाबाल (Tab. Dianabol)

मात्रा—वयस्कों में—५ मि० ग्रा० की १ गोली दिन में १ बार ४ सप्ताह तक।

बालकों में—१ मि० ग्रा० की १ गोली दिन में १ बार।

नोट—कम आयु के बच्चों में इसका ड्राप प्रयोग में लाना चाहिए।

अथवा—इन्जे० ट्राइनर्जिक (Inj. Trinergic)।

मात्रा—वयस्कों में—१ मि० ली० का एम्पुल सप्ताह में २ बार।

पूरा कोर्स—कुल ६ इन्जेक्शन लगाने पड़ते हैं। इसमें मिथानडिएनोन तथा विटामिन बी$_{१}$, बी$_{२}$ तथा बी$_{१२}$ होता है।

चेतावनी—एनाबोलिक एजेन्ट्स का प्रयोग कम से कम करना चाहिए। इनके अधिक प्रयोग से शरीर में हार्मोन्स का सन्तुलन बिगड़ जाता है। इनका प्रयोग तभी करना चाहिए जब शरीर में अन्य कोई रोग न हो।

आवश्यक निर्देश—इन औषधियों के प्रयोग काल में प्रोटीनयुक्त खाद्य पदार्थ का पर्याप्त मात्रा में सेवन करना चाहिए। इससे दुबले-पतले बालक अथवा वयस्क स्त्री-पुरुष हृष्ट-पुष्ट तथा मोटे बन जाते हैं।

(४) यकृत् दोष तथा दूषित पित्त के संचय के कारण एनोरेक्सिया रोग में—

℞ कैलोमल (Calomel)

विभक्त मात्रा में २ दिन तक। तत्पश्चात् तीसरे दिन प्रातः मैगसल्फ का विरेचन दें।

अथवा—℞	कैलोमल	४ मि० ग्रा०
	सोडाबाईकार्ब	६०० मि० ग्रा०
	मेन्थोल	१५ मि० ग्रा०
	ग्लूकोज	६०० मि० ग्रा०
		१ मात्रा।

ऐसी एक मात्रा प्रति २ घण्टे के अंतर पर २ दिन तक—कुल १२ से १६ मात्राएँ दें।

विशेष—१. कुछ रोगियों में लिवर एक्स्ट्रेक्ट से पर्याप्त लाभ मिलता है।

२. २–४ ड्राम ब्राण्डी भोजन से पूर्व या पश्चात् लेने से अरुचि दूर होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(५) सामान्य चिकित्सा से लाभ न मिलने पर—इन्सुलिन (Insulin) १०-२० यूनिट की मात्रा में 'सबक्युटेनियस' (S/C) भोजन से पूर्व देने से भोजन के प्रति रुचि उत्पन्न हो जाती है।

(६) यदि अरुचि के साथ इण्डाइजेशन (अजीर्ण) भी हो तो—

℞ टेबलेट डिस्पेप्टाल (नि०—बोहरिंगर नोल)

मात्रा—१-१ टेबलेट भोजन के बाद दिन में ३ बार।

एनोरेक्सिया की पेटेण्ट मिश्रित औषधि चिकित्सा—

(i) विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स	(ग्लैक्सो)	१०० मिग्रा० १ गोली
विटामिन 'सी'	(सीलिन) (,,)	५०० मिग्रा० की ½ गोली
यूनीइन्जाइम	(यूनीकेम)	१ गोली
सोडामिण्ट	(बूट्स)	२ गोली
		१ मात्रा।

इन सभी को पीस कर ऐसी एक मात्रा भोजनोपरान्त दिन में २ बार दें।

नोट—इससे अरुचि, भूख न लगना, सुस्ती एवं दुर्बलता आदि दूर होकर रोगी को पर्याप्त शक्ति मिलती है।

(ii) लिबरियम	१ गोली
बीकोजाइम	१ गोली
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा भोजनोपरान्त दिन में २ बार दें।

विशेष—यह मानसिक विकार जन्य एनोरेक्सिया में उपयोगी है।

(iii) ℞ टेब० सीलिन (ग्लैक्सो)	१०० मि० ग्रा० की १ गोली
विटामिन 'बी'-कॉम्प्लेक्स विद फोलिक एसिड	१ ड्राम
सिरप जिंजर	१ ड्राम
एक्वा एनीसी	१ औंस
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा प्रत्येक भोजन के बाद।

विशेष—यह अरुचि तथा अजीर्णनाशक योग है। इससे भोजन का पाचन भलीभाँति होता है।

अरुचिनाशक अनुभूत योग—

(i) ℞ सोडाबाईकार्ब	०·३ ग्राम
स्प्रिट अमोनिया एरोमेट	१ मि० ली०
पेप्सिन	६० मि० ग्रा०
डायस्टेज	६० मि० ग्रा०
सिरप पेरीएक्टिन	५ मि० ली०

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्फ्यूजन आफ चिरायता	२ मि० ली०
एनीसी वाटर	३० मि० ली०
	१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा भोजन से एक घण्टा पूर्व दिन में २ बार ।

(ii) ℞ विटामिन 'बी'-कॉम्प्लेक्स	२ ड्राम
टिं० नक्सवोमिका	५ मिनिम
स्प्रिट वाइनम गैलसी	१ ड्राम
एक्वा	१ औंस
	१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा भोजन के बाद दिन में २ बार दें ।

नोट—यह योग रोग-निवृत्ति के पश्चात् देना लाभकारी होता है ।

एनोरेक्सिया में प्रयुक्त अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

टेबलेट—पेप्सीलेक्स, डिस्पेप्टाल, एम्बीजाइम, पोलीवियोन, बीकोजाइम फोर्ट, मैगसिल, लैक्टोफर्मेण्ट ।

सिरप—ओरिहेप्टाल, बायोफोल-१२, फॉस्फोटोन, हिप्रोना (Heprona), बीकोजाइम, इम्बेलिक्स, मेटाटोन ।

इन्जेक्शन—विटामिन 'बी'-कॉम्प्लेक्स, हिपेटेक्स-टी, बिबेलान, लिवर एक्स्ट्रेक्ट विद विटामिन 'बी'-कॉम्प्लेक्स, बीकोजाइम फोर्ट, परकोर्टन ।

चिरकाल तक रोगी रहने के कारण उत्पन्न हुई अरुचि में—

शरीर में तेल की मालिश और भोजन के बाद बी० जी० फॉस, लिवोजिन, मिनाडेक्स, एनग्रान, ऑस्टोमाल्ट, निगोडीन, हैप्टाग्लोबिन, प्रोटोजेस्ट-एल—इनमें किसी एक या दो या अधिक औषधियों का प्रयोग सद्यः फलदायक होता है । साथ ही—डायानाबोल की १ गोली प्रतिदिन ४ सप्ताह तक दें । □

पाचन-संस्थान के रोग 1/3

मुखपाक
(Stomatitis)

पर्याय (Synonyms)—मुखपाक, मुँह आना, मुँह का पकना ।

परिचय (Definition)—मुख की श्लैष्मिककला के शोथ को मुखपाक (Stomatitis) कहते हैं । इस रोग में मुख के भीतर, ओष्ठ, जिह्वा, तालु और कपोलों के अन्दर व्रण व छाले हो जाते हैं । इससे रोगी को अतिशय कष्ट तथा पीड़ा होती है । प्रभावित भाग लाली लिये हुए, शोथयुक्त तथा संवेदनशील

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(Tenderness) होता है। अधिकांश केसों में ओष्ठ पर सूजन मिलती है, मुँह से लार आती है तथा ऊपरी सरवाइकल लिम्फ ग्लैण्ड्स (Upper cervical lymphglands) बढ़ जाते हैं। कोई भी वस्तु खाने में कष्ट होता है, जिसके निवारणार्थ मन व्याकुल रहता है।

रोग के सामान्य कारण (General causes)—

१ तीक्ष्ण औषधि तथा गरम मसाले के अधिक सेवन से।

२. अशुद्ध पारद तथा कच्चे अशुद्ध मेटल्स एवं भस्मों के कुछ काल तक लगातार सेवन करने से।

३. कृमिदन्त, दन्तवेष्टशोथ आदि के कारण।

४. विशेष कीटाणुओं यथा—डिफ्थीरिया, विन्सेण्ट्स ऑर्गेनिज्म, स्ट्रेप्टोकोकस तथा सिफिलिस जीवाणु।

५. पर्नीसियस अनीमिया, स्प्रू (Sprue), बेरी-बेरी आदि के प्रभाव से।

६. विटामिन 'बी' का अभाव तथा विटामिन 'सी' की न्यूनता।

सहायक कारण—निर्बलता इसका प्रमुख सहायक कारण है।

रोग के प्रकार (Varieties of stomatitis)—

१. कटारल स्टोमेटाइटिस।
२. एप्थस स्टोमेटाइटिस।
३. इन्फेक्टिव स्टोमेटाइटिस।
   (क) बैक्टीरियल स्टोमेटाइटिस।
   (ख) वायरल स्टोमेटाइटिस।
   (ग) फंगल (थ्रश अथवा मोनीलिएसिस)।
४. एलर्जिक स्टोमेटाइटिस।
५. कुपोषणजनित स्टोमेटाइटिस।
६. औषधि तथा भारी मेटल्स जन्य स्टोमेटाइटिस।
७. रक्तगत रोग से उत्पन्न स्टोमेटाइटिस।
८. चर्मरोग जनित स्टोमेटाइटिस।
९. गैंग्रीनस स्टोमेटाइटिस।

(१) **कटारल स्टोमेटाइटिस** (Catarrhal stomatitis)—इसे श्लैष्मिक मुखपाक भी कहते हैं।

कारण (Causes)—१. स्थानीय कारण (Local causes)—

(क) अधिक तम्बाकू, शराब (एल्कोहोल) तथा शराब की अन्य किस्मों का सेवन।

(ख) ब्राडस्पेक्ट्रम एण्टीबायोटिक तथा अन्य औषधियाँ, विशेषकर—आयोडाइड अथवा गोल्ड के सेवन से।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. सामान्य कारण (General causes)—

(क) दुर्बलता (Debility) ।

(ख) संक्रामक रोग (Infections diseases) ।

(ग) गम इन्फेक्शन (Gum infection), इरुप्शन आफ टीथ (Eruption of teeth) ।

लक्षण (Symptoms)—१. म्यूकस मेम्ब्रेन लाल तथा कंजेस्टेड हो जाती है ।

२. जीभ शुष्क रहती है ।

३. जीभ सूखी हुई, शोथयुक्त, कंजेस्टेड तथा मोटी सतह (Thick coating) से ढँकी रहती है ।

४. रोगी की श्वास में दुर्गन्ध आती है ।

चिकित्सा (Treatment)—१. सर्वप्रथम रोग के कारण को दूर करें ।

२. मुख को नमकीन घोल से धोयें (Alkaline wash)—इसके लिए निम्न योग का प्रयोग किया जा सकता है—

℞	मेन्थोल	६० मि० ग्रा०
	डिटाल	१ मि० ली०
	आयल आफ पिपरमेण्ट	०·२ मि० ली०
	जल कुल	१०० मि० ली०

अथवा मुख को Weak Hydrogenperoxide अथवा Glyc. thymol Co. (B. P. C.) युक्त घोल से धोयें ।

तत्पश्चात्—

३. बोरो ग्लिसरीन (Boroglycerine) अथवा ग्लिसरीन वोरेक्स को दिन में ३-४ बार स्थानीय रूप से (Local application) लगायें ।

साथ ही—

४. इन्जेक्शन 'बी'-कॉम्प्लेक्स विद बी$_{१२}$ १ मि० ली० इण्ट्रामस्कूलर नित्य १० दिनों तक ।

नोट—इसमें पेनिसिलीन तथा टेट्रासाइक्लीन भी (विशेष रूप से) प्रयुक्त किये जा सकते हैं ।

निषेध—तम्बाकू, गरम भोजन तथा शराब का सेवन बिल्कुल न करें ।

(२) **एप्थस स्टोमेटाइटिस** (Apthus stomatitis)—इसे ग्लॉसिटिस (Glossitis) भी कहते हैं । वेसिकुलर अथवा शैंकर सोर (Chancre sores) नाम से भी इसे सम्बोधित किया जाता है । इसे मुखविस्फोट भी कहते हैं ।

कारण (Causes)—यह सामान्य रूप से युवा महिलाओं में मिलता है । बच्चों तथा युवा व्यक्तियों में विभिन्न आमाशय आन्त्रगत रोगों (Gastro-

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

intestinal diseases) में भी देखने को मिलता है। अब तक इसके वास्तविक कारण का पता नहीं लगाया जा सका है। कुछ लोग इसे वाइरस जन्य मानते हैं। ऐसा समझा जाता है कि आजकल का तनावयुक्त जीवन भी इस रोग के लिए विशेष उत्तरदायी है।

लक्षण(Symptoms)— १. इसमें जीभ के अंकुर नष्ट हो जाते हैं और छोटे-छोटे व्रण (Ulcers) बन जाते हैं जो दर्दयुक्त (Painful) होते हैं। यह अल्सर एक के बाद दूसरे निकलते जाते हैं। एक अथवा अनेक अलसर भी मिल सकते हैं।

२. यह व्रण पीले रंग के होते हैं। इनके चारों तरफ लाल रंग का घेरा होता है।

३. रोग का आक्रमण कुछ दिनों अथवा सप्ताह तक रहता है और फिर स्वतः ठीक हो जाता है। किन्तु रोग का आक्रमण इसी प्रकार से बार-बार होता रहता है।

४. इस रोग में रोगी के भोजन में तनिक-सी भी मिर्च होने से उसका मुँह जलने लगता है।

नोट—यह वेदनायुक्त छाले या विस्फोट ओष्ठ के अंदर के पृष्ठ या गाल पर अथवा जीभ पर होते हैं, जो फट कर २-४ घण्टे में ही अलसर का रूप ले लेते हैं। अलसर में तीव्र दर्द के कारण भोजन चबाने (Mastication) में रोगी को अतिशय कष्ट होता है। अम्लीय भोजन और शराब से पीड़ा और अधिक बढ़ती है।

विशेषता—एथ्थस अल्सेरशन, ट्रॉपिकल स्प्रू तथा इडियोपैथिक स्टेटोरिया में विशेष रोग के रूप में यह देखने को मिलता है।

चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ इफकोर्लिन पैलेट (ग्लैक्सो) २·५ मि० ग्रा० ओरल पैलेट।

मात्रा—१ पैलेट दिन में ३-४ बार मुख में डालकर चूसते रहें।

अथवा—ट्राइमसिनोलोन (Triamcinolone) ०·१% डेण्टल पेस्ट के रूप में अल्सर पर दिन में ३ बार पतली परत (Coating) में लगावें।

डेक्वाडीन पेण्ट स्थानीय अलसर पर दिन में ३-४ बार लगावें।

'टेट्रासाइक्लीन' अथवा 'मिस्टिक्लीन' कैपसूल २५० मि० ग्रा०।

१ कै० को पानी में घोलकर दिन में ३ बार मुख में मलें।

अथवा—'मिस्टिक्लीन सिरप' पानी में घोलकर मुख को साफ करें।

नोट—यदि पीड़ा हो तब इसका प्रयोग करें। सिल्वर नाइट्रेट का स्थानीय प्रयोग पीड़ा-शमन के लिए किया जा सकता है।

साथ ही—टेबलेट क्रोसिन अथवा मेटासीन १ गोली दिन में ३ बार दें।

ट्रैंक्विलाइजर (Tranquillisers) का आवश्यक मात्रा में प्रयोग करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि मासिकधर्म के पूर्व बार-बार अलसर निकलते हों तो—

℞ टेबलेट लाइनोरल (इथीनिल इस्ट्राडियोल) २ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली प्रतिदिन।

सूचना—स्थानीय औषधि प्रयोग के लिए हाइड्रोजन परऑक्साइड को बराबर जल में मिलाकर भी प्रयोग किया जा सकता है। अथवा सिलवर नाइट्रेट २०% का घोल अथवा ट्राइमसिनोलोन एसीटोनाइड १% का मलहम भी लगाया जा सकता है।

आवश्यक निर्देश—यदि उपर्युक्त चिकित्सा से ५-६ दिनों में लाभ न हो तो टेट्रासाइक्लीन (१५ मि० ग्रा०) की १-१ ट्राची दिन में ४ बार मुख में रखकर धीरे-धीरे चूसें।

साथ ही—टेट्रामीजोल (Tetramezol)

व्या० नाम—लेवरोल (Levral) १५० मि० ग्रा० की टेबलेट।

मात्रा—१ गोली दिन में एक बार ३ दिन तक। इसके २ सप्ताह पश्चात् पुनः ३ दिन तक १-१ गोली दें।

ज्ञातव्य—यह रोग औषधियों से तो ठीक नहीं होता, परन्तु आंशिक लाभ अवश्य मिलता है।

सेविल्स सिस्टम ऑफ क्लिनिकल मेडिसिन के अनुसार चिकित्सा—

सिल्वरनाइट्रेट स्टिक (Silvernritrate stick) के द्वारा लीजन्स का कॉटराइजेशन कर दिया जाये।

अथवा—टेबलेट हाइड्रोकार्टीसोन हेमीसक्सीनेट (Tab. Hydrocortisone hemisuccinate) २·५ मि० ग्रा० के दुग्धशर्करा (Lactose) के घोल में १ गोली मुख में रख कर धीरे-धीरे घुलानी चाहिए। इस गोली को दिन में ३-४ बार ३६ से ४८ घण्टे तक या जब तक अलसर भर (Healup) न जाये, प्रयोग में लाना चाहिए।

बचाव चिकित्सा (Preventive treatment)—इसमें सामान्य स्वास्थ्य को बढ़ाना विशेषकर अधिकाधिक स्वच्छ वायु का सेवन, व्यायाम एवं नींद अपेक्षित है। अनीमिया की चिकित्सा करें। इसके लिए सायनोकोबालामिन (Cyanocobalamin) विटामिन $बी_{१२}$ १,००० यूनिट का सप्ताह में २ बार, इण्ट्रामस्कुलर ३-४ सप्ताह तक दें।

विशेष चिकित्सा-सूत्र—एथ्यस स्टोमेटाइटिस में निम्न योग विशेष लाभकारी पाया गया है—

℞ हाइड्रोकार्टिसोन सोडियम सक्सीनेट	२.५ मि० ग्रा०
स्ट्रेप्सिल्स (बूट्स)	१ लाजेञ्ज
	१ मात्रा।

दोनों को पीस कर मिला लें। ऐसी १ मात्रा प्रति ३ घण्टे पर चुसवायें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही—स्टेराडेण्ट (Steradent) पाउडर (नि०-रेकिट्स) आवश्यकतानुसार ५ से ७ ग्राम हलका गर्म जल ७५-२०० मिली० में भलीभाँति घोल कर प्रति आधे घण्टे पर कुल्ला करायें।

नोट—यह एप्थस जन्य व्रणों (Apthus ulcers) को शीघ्र दूर करता है।

(३) **इन्फेक्टिव स्टोमेटाइटिस** (Infective Stomatitis)—मुख की म्यूकस मेम्ब्रेन में वास्तविक इन्फेक्शन के द्वारा यह रोग होता है। यह अनेक प्रकार का होता है, जो निम्नवत् है—

(क) **बैक्टीरियल स्टोमेटाइटिस**—यह सिफिलिस, डिफ्थीरिया, स्कार्लेट फीवर के जीवाणुओं के द्वारा होता है। इसमें अलसर मुखगुहा (Mouth Cavity) के भीतर कहीं भी अनियमित रूप में देखे जा सकते हैं। इस प्रकार के कुछ केसों में विन्सेण्ट्स, स्पाइरो कीट तथा फ्यूजीफार्म बैसिलाई अलसर में देखने को मिलते हैं। इस प्रकार को 'विन्सेण्ट्स एञ्जाइना' के नाम से जाना जाता है।

लक्षण (Symptoms)—१. इस प्रकार के स्टोमेटाइटिस में अलसर एक कूटकला (Pseudo membrane) से ढँका होता है।

२. इसमें रोगी को अधिक लार आती है।

३. मसूड़ों में शोथ होकर रक्तस्राव होता है।

४. रोगी की लसीका ग्रन्थियाँ बढ़ जाती हैं। ऐसी अवस्था में रोगी को ज्वर रहता है।

चिकित्सा (Treatment)—१. ओरल हाईजीन की व्यवस्था करें। छालों पर मर्करोक्रोम का २% घोल फुरेरी से लगायें।

२. स्ट्रेप्सिल्स (बूट्स) अथवा टेट्रासाइक्लीन ट्राची मुख में रखकर चुसवायें। या बेन्जोसिन (एलेम्बिक) अथवा 'ट्रौक्स' लोजेञ्जिज चुसवायें।

३. रोगी के सम्पर्क में आये सभी बर्तनों आदि को पूर्ण विसंक्रमित रखें।

४. विन्सेण्ट एञ्जाइना के लिए—'मेट्रोनिडाजोल' २०० मि० ग्रा०।

मात्रा—१ गोंली दिन में ३ बार ५-७ दिन तक।

(ख) **वाइरल** (Viral)—इसे एक्यूट हर्पेटिक जिंजीवो-स्टोमेटाइटिस कहते हैं।

कारण (Causes)—यह हर्पीज सिम्प्लेक्स, हर्पीज जोस्टर, मिजिल्स तथा स्मालपॉक्स के केसों में देखने को मिलता है। यह बच्चों में विशेष रूप से मिलता है।

लक्षण (Symptoms)—१. मुख की म्यूकस मेम्ब्रेन में अनेक अलसर मिलते हैं।

२. लिम्फ ग्लैण्ड्स बढ़ जाती हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. बुखार (Fever)।

४. घबराहट (Malaise)।

५. अलसर बनने के कुछ घण्टों बाद फूट जाते हैं।

कोर्स—इसका कोर्स ७ से १८ दिनों का होता है।

चिकित्सा (Treatment)—१. इसकी लाक्षणिक चिकित्सा की जाती है।

२. शय्या पर विश्राम (Bed Rest)।

३. पूर्व बतलाये गये एल्कलाइन माउथ वाश (Alakaline mouth wash) से मुख की सफाई करें। अथवा 'डिटोलिन गारगल्स' दिन में कई बार करें। इससे द्वितीयक संक्रमण का निरोध होता है।

४. हर्पीज के लिए—उपर्युक्त चिकित्सा के साथ-साथ ५% I D O in D. M. S. O. अथवा ५% जोवीरेक्स-२ Ovirex (Acyclover) क्रीम का प्रयोग करें।

(ग) **फंगल** (थ्रश या मोनीलिएसिस)—इस प्रकार के फंगल जन्य स्टोमेटाइटिस को पैरासिटिक स्टोमेटाइटिस (Parasitic stomatitis) एवं स्यूडो-मेम्ब्रेनस कैण्डीडिएसिस आदि नामों से भी जाना जाता है। इस प्रकार का स्टोमेटाइटिस किसी भी उम्र में मिल सकता है। विशेषकर शिशुओं (Infants) तथा कमजोर युवा, व्यक्तियों में अधिक मिलता है।

कारण (Causes)—१. इस प्रकार का स्टोमेटाइटिस 'केण्डिडा मोनीलिया एल्बीकेन्स (Candida Monilia Albicans) द्वारा होता है, जो इसका प्रधान कारण है।

२. 'स्टेराइड्स' तथा 'एण्टीबायोटिक' औषधियों के लम्बे समय तक सेवन करने से।

३. बोतल का दूध पीने वाले बच्चों में यदि निपिल और बोतल को सावधानी पूर्वक साफ न किया जाये तो बच्चों को यह रोग हो जाता है। माँ का गन्दा स्तन पान भी इसका प्रधान कारण प्रतीत होता है।

४. वयस्क रोगियों में Senility, Carcinoma तथा Wasting Diseases इसके कारण हैं।

५. मुख की भलीभाँति सफाई न होना भी रोग का कारण हो सकता है।

६. एक्यूट सुप्युरेटिव (Acute Suppurative) पेरोटाइटिस एक कष्ट-दायक उपद्रव है।

लक्षण (Symptoms)—१. इस रोग में मुँह के अन्दर श्लेष्मकला पर सफेद रंग के प्रान्त-से बन जाते हैं, जिन पर नाजुक झिल्ली चढ़ी होती है। अन्त में आगे चल कर यह प्रान्त आपस में मिलकर बड़े आकार के व्रण (ulcers) बन जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. इनमें छोटे-छोटे उभरे हुए क्षतों पर पूय (Slough) की तह छाई हुई दीखती है। ये पूय युक्त क्षत पहले जीभ और फिर ओष्ठ, गाल, तालु आदि पर हो जाते हैं। देखने में मुख अन्दर से खुश्क होता है।

नोट—यह स्टोमेटाइटिस प्रधान रूप से गाल अथवा जीभ की ओर से प्रारम्भ होता है। कभी-कभी होंठ, मुख के सम्पूर्ण भाग तथा ग्रसनी (Pharynx) को भी प्रभावित कर देता है।

चिकित्सा (Treatment)—१. सोडाबाईकार्ब के सेचूरेटिड् सोल्यूशन से मुख को साफ करें।

२. जेन्शियन वायोलेट के १% घोल (जेन्शन वायोलेट ०·५ ग्रा० में १२० मिली० जल) को अलसर पर पेण्ट करें। अथवा 'बोरो-ग्लिसरीन' को सर्जिकल गॉज़ से लगायें। अथवा मुलायम ब्रश से श्वेत प्रान्त (White patches) को रगड़ कर साफ कर दें। तत्पश्चात् जेन्शियन वायोलेट (Gentian violate) १% का घोल दिन में एक बार लगायें।

३. 'निस्टेटिन' टेबलेट या 'माईकोस्टेटिन' (Mycostatin) टेबलेट ग्लिसरीन में घोल कर लगायें।

अथवा—निस्टेटिन (Nystatin) सस्पेन्शन (१००,००० यूनिट प्रति मि० ली०) या एम्फोटेरीसिन-बी सोल्यूशन (Amphotericin B Solution) १५ मि० ग्रा० १०० मि० ली० स्टेराइल वाटर में मिलाकर लगायें।

नोट—बच्चों और शिशुओं में—०·५% जेन्शियन वायोलेट सोल्यूशन दिन में ३ बार ३ दिनों तक लगायें।

युवकों में—माईकोस्टेटिन प्रतिदिन मुख द्वारा २ सप्ताह तक।

४. निस्टेटिन टेबलेट ५००,००० यूनिट की १ गोली दिन में ३ बार मुख मार्ग से १ सप्ताह तक दें।

अथवा—निस्टेटिन पेसरी दिन में ३ बार चूसें।

अथवा—निस्टेटिन सस्पेन्शन ४-६ घण्टे पर दें।

नोट—इससे मुख के जख्म भरते हैं।

साथ ही—रोगी बालक की कृशता एवं निर्बलता के लिए विटामिन युक्त औषधियाँ दें और पौष्टिक आहार की व्यवस्था करें।

निर्देश—खाने के बाद मुख को अवश्य साफ कर लें।

ज्ञातव्य—इस प्रकार के स्टोमेटाइटिस में पेनिसिलीन प्रभावकारी नहीं है।

बचाव (Prevention)—प्रत्येक खाने के बाद मुख की सफाई आवश्यक है। वयस्कों को सेव तथा अन्ननास को चूसने का निर्देश दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४) एलर्जिक स्टोमेटाइटिस (Allergic Stomatitis)—

कारण (Causes)—इस प्रकार का स्टोमेटाइटिस (मुखपाक) एञ्जियोन्यूरोटिक ईडिमा, एण्टीबायोटिक औषधिजन्य स्थानीय एलर्जी अथवा कुछ प्रकार के पेलीटेविल आहार के केसों में देखने को मिलता है। यहं स्टीवेन्स-जॉन्सन सिण्ड्रोम (Stevens-Johnson Syndrome) में अवश्य देखने को मिलता है।

कुछ डेण्टल पेस्ट तथा डेण्टूरस में केमिकल के प्रयोग सें भी एलर्जिक स्टोमेटाइटिस हो जाती है।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ क्लोरफेनिरामीन मैलिएट २ मि० ग्रा०
प्रेडनीसोलोन २·५ मि० ग्रा०
१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल से दें।

तथा—ट्रिमेप्राजीन टार्ट्रेट मधु में मिलाकर रुई की फुरेरी से जीभ पर दिन में २-३ बार लगायें।

साथ ही—वेलार्गन फोर्ट सिरप (M. B.) ५ मि० ली० दिन में २ बार भोजन के बाद दें।

(५) कुपोषण जनित स्टोमेटाइटिस (Stomatitis due to malnutrition)—

कारण (Causes)—इस प्रकार का मुखपाक विटामिन की कमी (Vitamin deficiancy) के परिणामस्वरूप होता है। इसमें विशेष कर विटामिन 'बी'-कॉम्पलेक्स, रिवोफ्लेबिन, निकोटिनिक एसिड, फोलिक एसिड एवं बी$_{१२}$ आदि प्रमुख हैं। आइरन डेफिसिएन्सी में अनीमिया अवश्य देखने को मिलता है।

चिकित्सा (Treatment)—विटामिन थेरापी का उचित प्रयोग ही इसकी समुचित चिकित्सा है। इसमें निम्न योग अधिक लाभकारी पाया गया है—

℞ बीकोजाइम-सी फोर्ट (रोशे) १ गोली
निकोटिनिक एसिड (पैलोमिन टेबलेट-ग्लैक्सो) ५० मि० ग्रा०
१ मात्रा।

दोनों को पीस कर ऐसी एक मात्रा दिन में १ बार दें।

साथ ही—विटाहैक्स्ट (Vitahext) १० मिली० बराबर जल में प्रतिदिन २ बार दें।

तथा मुख के छालों पर लगाने के लिए—

बोरिक एसिड पाउडर ३०० मि० ग्रा०
ग्लिसरीन ८ मि० ली०

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों को भलीभाँति घोल कर थोड़ा गर्म कर लें। इसे फुरेरी से दिन में २ बार लगायें।

(६) **औषधि तथा भारी मैटल्स जन्य स्टोमेटाइटिस**—विविध धातु जैसे—आर्सेनिक, विस्मथ, गोल्ड (सोना), लेड एवं मरकरी आदि मुखपाक को बढ़ा देते हैं। एण्टी-इपीलेप्टिक औषधियाँ एवं डिलाण्टिन आदि मुखपाक का एक प्रधान कारण है।

चिकित्सा (Treatment)—एप्थस स्टोमेटाइटिस के समान।

(७) **रक्तरोग के कारण मुखपाक** (Stomatitis due to blood disease)—

एप्लास्टिक अनीमिया एवं ल्यूकीमिया के केसों में यह बढ़ जाता है।

(८) **चर्मरोग के कारण मुखपाक** (Stomatitis due to skin disease)—

कारण (Causes)—१. लिचिनप्लेन्स—इसमें ५०% रोगियों में मुख प्रभावित हो जाता है।

२. पेम्फीगस वल्गेरिस।

३. एरीथीमा मल्टीफार्म—यह सदैव पहले चर्म पर देखा जाता है। मुख में यह आर्द्रव्रणीय विक्षति (Moist ulcerative lesion) उत्पन्न करता है। बड़े एरीथीमा मल्टीफार्म में त्वचीय लीजन्स अन्य मुखीय तथा वेजाइना (Vagina) से सम्बन्धित होते हैं। जब ये कॉर्निया को प्रभावित कर लेते हैं तब रोगी में अन्धापन (Blindness), पाइरेक्सिया (Pyrexia) तथा आकारिकी (Constitutional) लक्षण देखने को मिलते हैं।

(९) **गैंग्रीनस स्टोमेटाइटिस** (Gangrenous stomatitis)—

कारण (Causes)—यह आजकल कम मात्रा देखने को मिलता है। यह बालकों में २-५ वर्ष की आयु में उत्पन्न होता है, लड़कियों में नहीं। यह मुख्य रूप से मिजल्स के दौरों (कन्वल्सेन्स), टायफाइड के पश्चात् एवं क्रॉनिक कालाजार के समय देखने को मिलता है। इसके अतिरिक्त अन्य तीव्र स्वरूप के संक्रामक ज्वरों तथा विशिष्ट ज्वरों (Specific fevers) में भी मिल सकता है।

लक्षण (Symptoms)—इसमें तीव्र स्वरूप का शोथ (Acute inflammation) हो जाता है। इसका प्रारम्भ गाल अथवा होठों से होता है। गाल के अन्दर का टिशू नष्ट हो जाता है। इसमें रोगी उच्च तापक्रम तथा ट्रेकीकार्डिया के फलस्वरूप टॉक्सिक हो जाता है। रोगी उच्च ताप (High fever) के कारण अत्यधिक दुर्बल हो जाता है और कभी-कभी ब्रान्कोन्यूमोनिया तथा शरीर के अन्य भागों में गैंग्रीन (Nomapudendi) उत्पन्न हो जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा (Treatment)—पेनिसिलीन तथा अन्य एण्टीबायोटिक का प्रयोग लाभकारी होता है। साथ ही प्रभावित भाग (Ulcerative area) को ऑपरेट (Free excision) कर नष्ट हुए टिशू को अलग कर प्लास्टिक रिपेयर (Plastic repair) कर देना चाहिए।

नोट—एक अन्य प्रकार में—सिस्टेमिक डिजीज में जैसे—सिफिलिस की द्वितीय अवस्था में मुख में हलके अल्सर बन जाते हैं। इसमें मुख की श्लैष्मिक झिल्ली पर पतली श्वेत झिल्ली बन जाती है। □

पाचन-संस्थान के रोग 1/4

हृद्दाह
(Pyrosis/Heart-burn)

पर्याय (Synonyms)—इसे हृद्दाह, छाती की जलन, Pyrosis तथा Burning pain नाम से भी जाना जाता है।

परिचय (Definition)—Heart burn is a burning sensation passing up the mid-line of the chest from the epigastrium for a variable distance, some times even to the pharynx.

उदर के ऊपरी भाग में दोनों ओर की पसलियों के बीच के भाग के भीतर दाह या जलन का होना हृद्-दाह (Heart Burn) कहलाता है। इसमें मुखप्रसेक (Water brash) तथा गले में जलन ये दो अन्य लक्षण हृद्-दाह के साथ मिलते हैं। इसमें बहुत बार मुँह में खट्टा द्रव भर आता है।

कारण (Causes)—१. लाल मिर्च, खट्टे अचार, तेज व चरपेर पदार्थ आदि के अधिक सेवन से।

२. रात को मसाले-मिर्च युक्त चटपटे भोजन से पेट को भर कर सो जाने से प्रायः ऐसा होता है। इस कारण आमाशय हृद्-द्वार के समीप के भाग में अति अम्लीयता (Hyperacidity) हो जाती है।

३. ग्रासनलिका का अन्तिम भाग जो आमाशय में खुलता है, उसके शोथ तथा आक्षेपक से भी ऐसा हो जाता है। इस प्रकार ग्रासनलिका के निचले सिरे का आक्षेपक विशेष कारण प्रतीत होता है।

४. क्रॉनिक हर्ट-बर्न—क्रॉनिक ईसोफेजाइटिस (Chronic Esophagitis) तथा हाइटस हर्निया आफ दी स्टमक (Hiatus hernia of stomach) के के कारण होता है।

५. इस प्रान्त में एकत्रित आहार का उत्क्षोभन (Fermentation) भी इसका कारण हो सकता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैथोलीजी (Pathology)—वैज्ञानिकों का विचार है कि पहले आमाशय में उपरोक्त कारणों से अम्ल की मात्रा सामान्य से अधिक बन जाती है। रोगी के नाभि-प्रदेश में जहाँ आमाशय स्थित होता है, जलन प्रतीत होती है। आमाशय में अम्ल की अधिक मात्रा से क्षोभ (Irritation) उत्पन्न होकर रिफ्लेक्स एक्शन द्वारा आमाशय में उपस्थित पदार्थ पीछे को वापिस होने लगते हैं, ताकि वे बाहर निकल सकें। जब पीछे को लौटा हुआ खाद्य पदार्थ ग्रासनली (ईसोफेगस) में आता है, तब उरोस्थ के पीछे और गले में जलन प्रतीत होती है। मुख की ग्रन्थियाँ अत्यधिक मात्रा में लालास्राव (Saliva) छोड़ती है, जो क्षारीय होता है। अधिक लालास्राव की उत्पत्ति ही मुखप्रसेक (Water brash) कहलाता है। इसमें रोगी के मुँह में बार-बार पानी भर आता है।

इस प्रकार से उरोस्थ के पीछे नाभि-प्रदेश और गले में जलन अथवा दाह तथा मुख में पानी का भरना आदि क्रम चलते हैं।

रोग-लक्षण (Symptoms)—१. इसमें रोगी के उदर के ऊपरी भाग में दोनों ओर की पसलियों के बीच (उरोस्थ के पीछे अथवा नाभि-प्रदेश) के भाग में जलन अथवा दाह होती है।

२. तत्पश्चात् मुख में पानी भर आता है।

३. इसमें रोगी की भूख पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। भूख प्रायः सामान्य रहती है।

४. रोगी के हृदय-प्रदेश में बेचैनी मालूम होती है। साथ ही हृदय की धड़कन बढ़ जाती है।

५. हृद्-दाह (Heart Burn)—यह अवस्था प्रायः भोजन करने के एक घण्टे बाद उत्पन्न होती है और कुछ घण्टों तक बनी रहती है।

६. रोगी को खट्टी डकारें आती हैं।

७. खट्टे खाद्य पदार्थ वाले भोजन, मद्य तथा शारीरिक परिश्रम से इसमें वृद्धि होती है।

८. कंठ में जलन और क्षोभ होता है।

९. छाती में जलन के साथ कभी-कभी आमाशय में दर्द, नाभि-प्रदेश में पीड़ा, बेचैनी, अनिद्रा आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं।

निदान (Diagnosis)—उपरोक्त लक्षणों के आधार पर निदान में कोई कठिनाई नहीं होती है।

सापेक्ष निदान (Differantial Diagnosis)—हृदय-प्रदेश में बेचैनी तथा हृदय की धड़कन आदि को देखकर हृदय रोग का भ्रम हो सकता है। अतः चिकित्सकों को चाहिए कि वह इसका अन्य हृदय-रोगों (Cardiac diseases) से पृथक्करण अवश्य कर लें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा (Treatment)—

(१) **सामान्य चिकित्सा** (General treatment)—

१. रोगी को परिश्रम से बचायें।

२. चिन्ता, भय, शोक आदि मानसिक विकारों से रोगी को दूर रखने का यत्न करना चाहिए।

३. भोजन में अधिक मिर्च, मसाले, घी-तैल में तले पदार्थ, पकवान, चाय-कॉफी तथा मद्य का सेवन नहीं करना चाहिए।

४. अम्लीयता निवारक औषधियों का उचित मात्रा में प्रयोग।

(२) **औषधि चिकित्सा** (Medicinal treatment)—

℞ म्यूकेन जैल (Mucaine gel)।

मात्रा—२ चाय चम्मच दिन में ३-४ बार भोजन के $\frac{1}{2}$ घण्टे पश्चात्।

अथवा—एल्यूड्रॉक्स एम० एच० सस्पेन्सन (नि० बीथ कं०)।

मात्रा—२ चाय चम्मच दिन में ४-५ बार।

नोट—इसकी टेबलेट भी आती है।

मात्रा—१-१ गोली दिन में ४ बार।

अथवा—टेबलेट डायजीन (Tab. Digine)।

मात्रा—१-२ टेबलेट दिन में ३-४ बार प्रति ४ घण्टे पर चूसने को दें।

साथ ही—टेबलेट 'एस्पिरिन' १-२ गोली दिन में २ बार दें।

अथवा—

मैगनेशियम ट्राई सिलिकेट	६२५ मि० ग्रा०।
ड्राइड अल्युमिनियम हाइड्रोक्साइड जेल	३१२ मि० ग्रा०।
सिरप जिंजर कुल	५ मिली०
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार प्रातः-सायं। वयस्कों को इसकी दूनी मात्रा दे सकते हैं।

नोट—इससे अम्लीयता नष्ट होती है।

अथवा—

℞ एल्यूसिनाल (फ्रन्को-इण्डियन)	२ गोली
डाओवाल सस्पेन्शन (कार्टर वालेस)	२० मिली०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार दें।

अथवा—

℞ इयूगैस्ट्रिड (नि० हैक्स्ट)	२ गोली
पोलीक्राल फोर्ट जेल (निकोलस)	१० मिली०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार भोजनोपरान्त।

अथवा—

℞ सोडा बाईकार्ब	१२०० मि० ग्रा०
मैगकार्ब	९०० मि० ग्रा०

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विस्मथ कार्ब	६०० मि० ग्रा०
सीरप जिंजर	४ मि० ली०
जल—कुल मिलाकर	३० मि० ली०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार भोजन के बाद दें।

हर्ट-बर्न में उपयुक्त अन्य औषधियाँ—

१. अल्माकार्ब (Almacarb) नि०—ग्लैक्सो।

मात्रा—२ गोली दिन में ३-४ बार अथवा आवश्यकतानुसार।

२. गैटोक्सी मैग ओ-जैल (Gatoxy mag. O. gel) नि०—रेप्टाकोस।

मात्रा—५-१० मि० ली० ४ बार नित्य भोजन से १५ मिनट पूर्व तथा सोते समय।

नोट—यह गर्भावस्था के हृद्-दाह में उपयोगी है।

३. डायजीन-जैल (Digine-gel) नि०—बूट्स।

मात्रा—५-१० मि० ली० प्रति ४ घण्टे पर एवं सोते समय।

नोट—इसकी गोली भी आती है।

मात्रा—१-२ गोली दिन में ४ बार सोते समय चूसें।

४. पेरीनोर्म (Perinorm) नि०—इपका।

मात्रा—वयस्क—१० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

अथवा—इन्जे० पेरीनार्म (Inj. Perinorm)।

मात्रा—२ मि० ली०।

नोट—इसका लिक्विड भी आता है।

मात्रा—०·५–१ मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर भार पर। १ वर्ष तक के बच्चों में ०·५ मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर भार पर।

५. म्यूकेन (Mucaine) नि०—वीथ।

मात्रा—५-१० मिली० दिन में ४ बार भोजन से १५ मिनट पूर्व तथा रात में सोते समय।

नोट—यह गर्भावस्था के हृद्दाह में उपयोगी है।

उपरोक्त औषधियों के असफल होने पर—

℞ टे० रेगलान अथवा मेक्सोरोन अथवा पेरीनार्म (मेटोक्लोप्रोमाइड)

मात्रा—१० मि० ग्रा० दिन में २ बार भोजन से पूर्व तथा सोते समय।

फिर भी सफलता न मिले तो—

℞ टेबलेट 'सिमेटीडीन' (Tab. Cemetidine)

मात्रा—४०० मि० ग्रा० रात में सोते समय।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवश्यक निर्देश—यदि उपरोक्त चिकित्सा-व्यवस्था से भी लाभ न मिले तो रोगी की नैदानिक परीक्षा कराकर मूल कारण को दूर करना चाहिए। विशेष कर पेप्टिक अलसर, यकृत् के रोग आदि में। ऐसा करने से स्थायी लाभ मिल जाता है। □

पाचन-संस्थान के रोग 1/5

जठर-अत्यम्लता
(Hyperacidity)

पर्याय (Synonyms)—अम्लता, एसिडिटी, हाइपर क्लोरहाइड्रीया (Hyper chlorhydria)।

परिचय (Definition)—आमाशय के किन्हीं विशेष कारणों से उत्तेजित होने के कारण प्राकृतिक रूप से बनने वाला हाइड्रोक्लोरिक एसिड (Hcl.) सामान्य से अधिक बनने लगता है। जिससे नाभि-प्रदेश में जलन, खट्टी डकारें आदि लक्षण हो जाते हैं। इस अवस्था को 'हाइपर एसिडिटी' या 'एसिड डिस्पैप्सिया' कहते हैं।

रोग के कारण (Causes)—१. जिन कारणों से आमाशय रस अधिक बनता है, उन्हीं कारणों से इसके लक्षण पैदा होते हैं।

२. कुछ व्यक्तियों में यह अम्ल स्वाभाविक रूप से ही अधिक बनता है।

३. अधिक चिन्ता और सोच-विचार में डूबे रहना।

४. भोजन के समय में अनियमितता।

५. शराब और धूम्रपान तथा उत्तेजक खाद्य पदार्थों का सेवन।

६. पित्ताश्मरी, क्रॉनिक एपेण्डीसाइटिस एवं आमाशय व्रण (पेप्टिक अलसर) आदि रोगों से पीड़ित व्यक्तियों में आमाशयिक रस अधिक बनता है।

लक्षण (Symptoms)—१. खट्टी डकारें आती हैं।

२. मुँह का स्वाद बिगड़ जाता है।

३. नाभि-प्रदेश में जलन प्रतीत होती है।

४. चाय, कॉफी आदि लेने से सम्पूर्ण ग्रासनलिका में जलन होती है।

५. मुँह में खट्टा पानी भर आता है।

६. लक्षण भोजन के एक या दो घण्टे पश्चात् प्रारम्भ होते हैं।

७. सोडावाईकार्ब आदि एल्कलाइन के खाने से अथवा थोड़ा-सा आहार आदि कर लेने से कुछ समय के लिए लाक्षणिक शान्ति मिल जाती है।

८. अधिक उग्रावस्था में उदर में पीड़ा तथा वायु संचित होती प्रतीत होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. कोई-कोई रोगी इससे बेचैन होकर अर्धरात्रि के समय उठकर बैठ जाता है।

१०. मल में अधपचा भोजन निकलता है और कभी-कभी अतिसार भी हो जाता है।

११. नाभिप्रदेश में पीड़ा, कण्ठ में जलन और क्षोभ, बेचैनी, अनिद्रा आदि लक्षण भी उत्पन्न होते हैं।

निदान (Diagnosis)—उपरोक्त लक्षणों के आधार पर निदान में कोई कठिनाई नहीं होती है।

अम्लशूल (Acidity) ज्ञात करने हेतु उपकरण—

ब्रेडफर्ड विश्वविद्यालय (उत्तरी इंग्लैण्ड) के वैज्ञानिकों ने शरीर में अम्लशूल (एसिडिटी) ज्ञात करने और उसे नियंत्रित करने हेतु एक उपकरण विकसित करने में सफलता प्राप्त की है। यह उपकरण रोगी की भोजन नली में अम्लीय पदार्थ का पता लगाता है।

यह उपकरण बहुत ही साधारण होता है। इसमें एक पतली-सी नली होती है, जिसे नथुने में से हलक में पहुँचाया जाता है। नली के सिरे पर सेंसर लगा होता है, जो भोजन नली से अम्लीयता को मापता है। साथ ही इसकी सूचना एक छोटे से इलेक्ट्रानिक उपकरण पर आ जाती है, जिसे रोगी अपनी कमर पर पहनता है। वीडियो कैसेट के आकार का यह उपकरण रोगी अपने कपड़ों के नीचे पहन सकता है और इससे चलने-फिरने में कोई बाधा नहीं होती है। रोगी का परीक्षण समय समाप्त हो जाने पर आकड़े अस्पताल में कम्प्यूटर विश्लेषण के लिए दे दिये जाते हैं। इसके बाद पूरी रिपोर्ट, आकड़े एवं जानकारी अध्ययन के लिए चिकित्सक के पास भेज दिये जाते हैं।

चिकित्सा (Treatement)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी के भोजन की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। खट्टे, चरपरे एवं अधिक मसालेदार भोजन का निषेध होना चाहिए।

२. इसमें प्रोटीन (दूध, मांस, अण्डा) खाने से लाभ मिलता है, परन्तु इनका दीर्घकाल तक उपयोग करते रहने से रोग बढ़ सकता है।

३. भोजन के पूर्व जैतून का तेल देना लाभकारी होता है। मृदु अवस्था या कुछ समय पश्चात् मक्खन, मलाई आदि भी दिया जा सकता है।

४. भोजन के समय अधिक पानी नहीं पीना चाहिए भोजन के कुछ समय पश्चात् आवश्यक मात्रा में पानी-लिया जा सकता है।

५. एक बार ही भर पेट खा लेने की अपेक्षा थोड़ा-थोड़ा कई बार खाना चाहिए। निम्न क्रम से—(i) प्रातः अण्डा, (ii) पूर्वाह्न में लघु भोजन,

 CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(iii) दोपहर में दूध, (iv) अपराह्न में मक्खन, टोस्ट आदि। (v) सायंकाल पुनः स्वल्प लघु आहार।

(२) **औषधि चिकित्सा** (Medicinal treatment)—हाइपर-एसिडिटी को दूर करने के लिए एण्टेसिड (Antacid) का प्रयोग किया जाता है। यह अम्ल को निष्क्रिय कर देते हैं। साथ ही कुछ अम्ल का शोषण भी करते हैं। जिससे लक्षण शान्त हो जाते हैं। इन एण्टेसिड द्रव्यों में 'एल्यूमिनियम हाइड्रोक्साइड' तथा 'मैगनेशियम कार्बोनेट' अथवा 'मैगनेशियम ट्राइसिलिकेट' आदि प्रमुख होते हैं। इन्हीं के आधार पर निम्न चिकित्सा-व्यवस्था की जाती है—

(१) ℞ एसीडिन (Acidin) (नि०—ईस्ट इण्डिया)

मात्रा—१ गोली दिन में ४ बार।

एसीडिन एम० पी० एस० (Acidin M. P. S.) भी आता है—

मात्रा—१-२ गोली ½-१ घण्टे के पश्चात् दिन में ३-४ बार अथवा आवश्यकतानुसार।

अथवा—एग्री-एण्टेसिड (Agre-Antacide) (नि०—डूफर)

मात्रा—१-२ गोली चूसें अथवा निगलवा दें।

इसका ग्रेनूल्स भी आता है—

मात्रा—२-४ चम्मच चूसना।

अथवा—टेबलेट एल्माकार्ब (Tab. Almacarb)।

मात्रा—२ टेबलेट दिन में ३-४ बार।

अथवा—सस्पेन्शन एल्यूड्रॉक्स एम-एच०।

मात्रा—२ चाय चम्मच दिन में ४-५ बार।

अथवा—न्यूट्राडोना टेबलेट (Tab. Neutradonna)।

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार।

(२) उपर्युक्त में से कोई एक औषधि दें। साथ ही निम्न योग का सेवन भी करायें—

(i) सोडियम बाई कार्बोनेट	०.६ ग्राम
सिम्पल सिरप	४ मिली०
एनीसी वाटर	१५ मिली०
(ii) लेमन जूस	४ मिली०
जल	१५ मिली०

दोनों मिक्श्चरों को मिलाकर तत्काल दें।

अथवा—℞ इयूगैस्ट्रिड (नि० हैक्स्ट) २ गोली

पोलीक्राल फोर्ट जैल (निकोलस) १० मिली०

१ मात्रा।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी १ मात्रा भोजन के बाद दिन में ३-४ बार पिलायें।

अथवा—℞ एल्यूसिनाल (फ्रेन्को इण्डिया) २ गोली
डायोबाल सस्पेन्शन (कार्टर-वालेस) २० मिली०
१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार दें।

अथवा—℞ सोडाबाई कार्ब १२०० मि० ग्रा०
मैगकार्ब ९०० मि० ग्रा०
विस्मथ कार्ब ६०० मि० ग्रा०
सिरप जिंजर ४ मिली०
जल-कुल मिलाकर ३० मिली०
१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार भोजनोपरान्त दें।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—इस रोग की लाक्षणिक चिकित्सा निम्न प्रकार है—

(१) **उदर-पीड़ा** (Pain in Stomach)—

यदि अम्लता के साथ उदर में पीड़ा भी हो तो ऊपर बतलाई गई टेबलेट ही देना पर्याप्त होता है। इसके अतिरिक्त इसमें 'सिबेला' टेबलेट (Sebella tablet) (नि० 'वीथ') भी पर्याप्त लाभकारी होती है।

इसमें निम्न योग भी दिया जा सकता है—

℞ अल्युमिनियम हाइड्रोक्साइड जैल (एलूड्रोक्स जैल) १ ग्राम
एक्स्ट्रेक्ट बेलाडोना (ड्राई) १० मि० ग्रा०
वेञ्जोकेन २० मि० ग्रा०
सिरप जिंजर ०.५ मि० ली०
एनीसी वाटर ३० मि० ली०
१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार अथवा आवश्यकतानुसार।

(२) **अम्लीयता के साथ मलावरोध** (Constipation with acidity) **होने पर**—

मिल्क आफ मैगनेसिया + एल्युमिनियम हाइड्रोक्साइड जेल (Aluminium Hydroxide gel) के साथ दें।

पेटेण्ट योग—१. डायजीन जैल (Digine gel) (नि० बूट्स कं०)।
२. डायोबोल सस्पेन्शन (नि० कार्टर-वालेस)।
३. यूगेस्ट्राइड (Eugastride) (नि० हैक्स्ट)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) यदि आमाशय में दर्द न हो तो—

℞ एण्टीसाइडल टेबलेट (Anticidal tablet) (नि० वाण्डर)

मात्रा—१ गोली दिन में ३-४ बार ।

नोट—डिस्पैप्सिया रोग में बतलाया गया कार्मिनेटिव मिक्श्चर भी दिया जा सकता है ।

हाइपर एसिडिटी में प्रयुक्त अन्य औषधियाँ—

१. एलूसिनोल (Alucinol) (नि० फ्रेन्को इण्डिया)

मात्रा—२-३ गोली दिन में ३-४ बार भोजनोपरान्त ।

इसका सस्पेन्शन भी आता है—

मात्रा—५-१० मिली० दिन में ३-४ बार भोजनोपरान्त ।

२. डायजीन जेल (Digine gel) (नि० बूट्स)

मात्रा—५-१० मिली० प्रति ४ घण्टे पर तथा सोते समय ।

इसकी टेबलेट भी आती है—

मात्रा—१-२ गोली दिन में ४ बार सोते समय ।

३. डिसीलोक्स (Disilox) (नि० स्टेडमेड)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार चबायें या निगलें ।

लिक्विड की मात्रा—दिन में ४ बार; प्रति मात्रा १०-१५ मिली० ।

४. जेलूसिल एम० पी० एस० (Jelucil M. P. S.) (नि० बारनर)

मात्रा टेबलेट—१-२ गोली आवश्यकतानुसार ।

मात्रा लिक्विड—५-१० मिली० भोजन के ३० मिनट बाद अथवा आवश्यकतानुसार ।

५. लोगासिड टेबलेट (Logascid tablat) (नि० एस्ट्रा-आइडिल ।)

मात्रा—१-२ गोली भोजन के बीच में चूसें अथवा रात्रि में सोते समय आवश्यकता पड़ने पर ।

यह औषधि 'लोगासिड फोर्ट' के नाम से भीं आती है—

मात्रा—१-२ गोली भोजन के मध्य में तथा सोते समय ।

इसका सस्पेन्शन भी आता है—

मात्रा—५-१० मिली० भोजन के मध्य में ।

६. मैगसिल (Magsil) (नि० बंगाल केमिकल)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार ।

७. न्यूट्रालोन (Neutralon) (नि० निकोलस)

मात्रा—२ गोली दिन में ३-४ बार ।

८. ऑरबिट्स (Orbits) (नि० फार्म्ड कं०)

मात्रा—१० मिली० प्रति ४ घण्टे पर ।

९. पेप्टिका (Peptica) (नि० जेनी)

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१-२ गोली भोजन के १ घण्टे बाद तथा रात्रि में सोते समय।

१०. पोलीक्रोल फोर्ट जैल (Polycrol forte gel) (नि० निकोलस)

मात्रा—५-१० मिली० भोजनोपरान्त दिन में ३-४ बार।

११. सिलोक्स फोर्ट (Silox forte) (नि० सेरले कं०)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार चबायें या निगलें।

१२. साइलोक्सोजेन (Siloxogene) (नि० सेरले कं०)

मात्रा—१-२ गोली भोजनोपरान्त दिन में ३-४ बार चबायें अथवा निगलें।

इसका 'साइलोक्सोजेन जेल' योग भी आता है—

मात्रा—१०-२० मिली० दिन में ३-४ बार।

१३. सिमेको (Simeco) (नि० वीथ कं०)

मात्रा—१० मिली० दिन में ४ बार।

इसकी टेबलेट भी आती है—

मात्रा—१-२ गोली दिन में ४ बार।

१४. सिमगाल (Simgal) (नि० मरकरी)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार अथवा आवश्यकतानुसार।

इसका सस्पेन्शन भी आता है—

मात्रा—५-१० मिली० दिन में २-३ बार नित्य अथवा आवश्यकतानुसार।

१५. सोलासिड (Solacid) (नि० डेज कं०)

मात्रा—१-२ गोली आवश्यकतानुसार चूसें।

१६. सोरबासिड (Sorbacid) (नि० एल्केम)

मात्रा—टेबलेट—१-२ गोली दिन में ३-४ बार भोजन के मध्य में।

लिक्विड—१० मिली० दिन में ३-४ बार।

१७. टाकाजाइम (Takazyme) (नि० पी० डी० कं०)

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३ बार जल के साथ।

१८. वोजेल (Wogel) (नि० बुकार्ड)

मात्रा—१-२ गोली आवश्यकतानुसार चूसें।

१९. पेरीनार्म (Perinorm) (नि० इपका)

मात्रा—वयस्क १० मि० ग्रा० दिन में ३ वार।

इसका सस्पेन्शन भी आता है—

मात्रा—०.५–१ मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर भार पर। १ वर्ष से कम उम्र के बच्चों को ०.५ मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर भार पर।

यह इन्जेक्शन रूप में भी उपलब्ध होता है—

मात्रा—२ मिली०।

२०. स्पास्कोल (Spascol) (नि० विल्को)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

२१. स्टेलाबिड (Stelabid) (नि० स्केलेव)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

२२. डिस्पेप्टेज (Dispetase) (नि० पाश्चर कं०)

मात्रा—५-१० मिली० भोजनोपरान्त।

नोट—इन उपरोक्त पेटेण्ट औषधियों में से किसी एक अथवा २-३ को मिलाकर आवश्यकतानुसार दिया जा सकता है।

चेतावनी—इस रोग में 'स्टेराइड्स' औषधियों का प्रयोग कदापि नहीं करना चाहिए। क्योंकि यह अम्लीयता को बढ़ा देती हैं।

आहार-व्यवस्था की प्रमुखता—इस रोग की चिकित्सा में आहार-व्यवस्था का प्रमुख स्थान है। इसमें दूध सर्वोत्तम होता है। आहार को दिन में कई बार थोड़ा-थोड़ा करके लेना चाहिए। □

पाचन-संस्थान के रोग 1/6

स्प्रू/ग्रहणी रोग (Sprue)

पर्याय—ग्रहणीरोग, ग्रहणीशोथ, श्वेतातिसार, चिरस्थायी आमातिसार, कुपोषण संलक्षण (Malabrorption syndrome), ट्रॉपिकल स्प्रू (Tropical Sprue)।

परिभाषा (Definition)—It is an alimentary dysfunction characterised by deficieney in gastric sacretion and inability to absorb adequantely fat, glucose, calcium and certain other food constituents and characterised by morning diarrhoea, bulky gaseous stool, sore tounge, megalocytic anaemia and wasting.

जब क्षुद्र अन्त्र (Small intestine) में स्नेह, ग्लुकोज तथा विटामिन्स का शरीर में विलयन घट जाता है, जिससे प्रात: दो-एक मात्रा में बहुत ढीले, झागदार तथा बदबूदार दस्त आ जाते हैं।

दूसरे शब्दों में यह नमी वाले गर्म प्रदेशों में पाया जाने वाला एक चिरस्थायी आमातिसार है।

कारण (Causes)—अब तक इसके वास्तविक कारणों का पता नहीं लगाया जा सका है। इसके कुछ अनुमानित कारण निम्नलिखित हैं—

१. फोलिक एसिड डेफिसिएन्सी (Folic acid deficiency)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. वाइरल संक्रमण (Viral infections)—उत्तरी भारत में यह जानपदिक (Epidemic) रूप में उत्पन्न होता है।

३. कुछ लोग इसे अजीर्ण से उत्पन्न होने वाला रोग मानते हैं।

४. कुछ लोग इसे कार्बोहाइड्रेट्स तथा फैट के चिरकारी अजीर्ण के कारण तथा जीवाणु-संक्रमण से उत्पन्न हुआ मानते हैं।

५. प्राइमरी और सेकेण्ड्री एविटमिनोसिस (Avitaminosis) को इस रोग का कारण बताया जाता है।

६. कुछ लोग इसे भोजन में बिटामिन बी$_{१२}$ की न्यूनता से उत्पन्न रोग मानते हैं; इसीलिए इसे अभाव रोग (Deficieney disease) कहते हैं।

७. कुछ लोगों का कथन है कि आमाशय की श्लैष्मिककला से उत्पन्न होने वाले एक इञ्जाइम्स की न्यूनता के कारण भोजन द्वारा आने वाला विटामिन 'बी'$_{१२}$ शरीर में विलीन नहीं हो पाता, जिससे रक्त की यथोचित मात्रा में उत्पत्ति नहीं हो पाती और फिर उससे मन्दाग्नि होकर यह रोग हो जाता है। इसलिए इसे अभाव रोग ही मानना चाहिए।

८. कुछ चिकित्सकों का मत है कि यह एक विशेष प्रकार के कीटाणु से होता है, जिसे 'मेनिलिया साइलोसिस' कहते हैं।

९. यह रोग प्रायः 'अमीबिक डिसेण्ट्री' के बाद होता है।

१०. भोजन में कार्बोहाइड्रेट की कमी, वसा और प्रोटीन का अधिक प्रयोग, कैल्शियम के आत्मीकरण का अभाव तथा अग्न्याशय की विकृति के कारण अग्न्याशयिक रस की भोजन पर समुचित क्रिया न होना आदि कारणों से होता है।

११. उम्र—यह विशेष रूप से मध्यम आयु में होता है।

लिंग—स्त्रियों में अधिक विशेष कर जब वह गर्भवती होती हैं।

ऋतु—वर्षा ऋतु के बाद इसका आकस्मिक आक्रमण होता है।

सारांश—इस रोग के कारण का ठीक-ठीक पता नहीं चलता है। अजीर्ण, किसी वस्तु का अभाव या कोई जीवाणु इस रोग का कारण नहीं है। आँतों में वसा तथा ग्लूकोज का समुचित ढंग से विलयन का न होना इस रोग की विशेषता है।

रोग लक्षण—(Symptoms) १. यह अज्ञात रूप में धीरे-धीरे प्रारम्भ होता है।

२. रोगी को प्लेलेण्ट डिस्पैप्सिया रहता है। खाने के बाद पेट भारी हो जाता है। साथ ही अपक्व मल के ३-४ या ५-६ प्रातःकालीन दस्त हो जाते हैं। रात भर पेट भारी रहता है।

३. दस्त सामान्य से ३-४ गुना ढीला, फीके रंग का, झागदार, खट्टी दुर्गन्ध वाला तथा मलहम के सदृश चिकनाई लिये हुए एक दस्त बिना किसी दर्द के

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो जाता है। जिसका वेग रोकना कठिन हो जाता है। इसके बाद दोपहर तक दो या तीन अथवा कभी-कभी इससे भी अधिक बार दस्त इसी प्रकार के वेग के साथ होते हैं। इनका रंग सफेद मायल होता है।

४. शरीर में वसा की मात्रा घट जाती है, जिससे रोगी कृश एवं निर्बल हो जाता है।

५. त्वचा तथा नख खुश्क दिखलाई पड़ते हैं।

६. रक्त का निर्माण कम होने से पाण्डुता (Megalo-blastic Anaemia) का लक्षण उत्पन्न हो जाता है।

७. जीभ तथा मुँह में छालों (Sores) की उत्पत्ति मिल सकती है।

८. शरीर का भार कम हो जाता है।

प्रधान लक्षण—(Main Symptoms) १. रोग की प्रथमावस्था में बड़े अतिसार का होना।

२. रोग की द्वितीयावस्था में भार का घटना।

३. रोग की तृतीयावस्था में पाण्डुता के लक्षण मिलना।

परीक्षा—१. परीक्षा करने पर रोगी का तापक्रम, नाड़ी तथा श्वास की गति प्रायः सामान्य ही मिलती है।

२. जिह्वा शुष्क तथा उसके किनारे लाल होते हैं। यदि रोग पुराना है तो उसके 'पेपेलाई' क्षीण हुए होते हैं, जिससे वह नग्न-सी सफाचट्ट दीखती है। जीभ का आना इस रोग का प्रधान लक्षण है।

३. **रक्त परीक्षा** (Blood Examination)—श्वेतकण (W. B. C.) कुछ घटे हुए होते हैं। उनमें लिम्फोसाइट्स की अपेक्षाकृत वृद्धि होती है। रक्त में कैल्शियम तथा एल्ब्यूमिन की मात्रा घटी हुई मिलती है। प्रोथोम्बिन की मात्रा भी कम होती है। रक्तकणों (R. B. C.) की मात्रा भी प्रायः कम ही मिलती है।

४. **आमाशय रस की परीक्षा**—इस परीक्षा में हाइपोक्लोराइड्रिया का लक्षण मिलता है। पैन्क्रियाज का पाचक रस सामान्य होता है।

५. **एक्स-रे परीक्षा**—इस परीक्षा के अन्तर्गत क्षुद्रान्त्र में बेरियम के विषम आकृति वाले ढेर दीखते हैं। अर्थात् रुई के ढेर जैसी छाया दीखती है तथा फैली हुई आँत में वायु भी मिलती है।

६. **इण्टेस्टिनल बायोप्सी**—इसमें जेजुनम म्युकोजा (Jegunum mucosa) को देखने से पता चलता है कि वहाँ की श्लेष्मकला पतली पड़ गई है। इण्टेस्टिनल विलि (Intestinal Villi) छोटे तथा चपटे हो जाते हैं। म्युकोसा के अंदर ईडिमा की उपस्थिति मिलती है।

विभेदक निदान (Differential Diagnosis)—स्प्रू का निम्न रोगों से विभेद करना चाहिए—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. क्रॉनिक पेन्क्रियाटाइटिस ।
२. पेन्क्रियाज का कार्सीनोमा ।
३. परनीसियस अनीमिया ।
४. गैस्ट्रो-जेजुनो कॉलिक फिस्चुला ।
५. रीजनल इण्टेराइटिस ।
६. इण्टेस्टाइनल टी० बी० ।

भावीफल (Prognosis)—१. यह घटने-बढ़ने वाला तथा बहुत दिनों तक रहने वाला रोग है, जो अन्त में घातक हो जाता है, परन्तु मारक नहीं है ।

२. युवावस्था में यह शीघ्र ठीक हो जाता है । मध्य अवस्था में लम्बी अवधि तक चिकित्सा करने से इसके ठीक होने की आशा की जाती है ।

३. रोग ठीक होने पर यदि इसका ३ वर्षों तक पुनराक्रमण न हो तो यह समझना चाहिए कि अब रोग नहीं होगा ।

४. वृद्धावस्था में जब आँतों की अन्न को विलीन करने की झिल्ली नष्ट हो जाती है, तब रोग ठीक नहीं होता है ।

५. जब रोग बार-बार होता है और अतिसार प्रातःकाल ही नहीं दिन में भी होता रहता है तब पैरों पर शोथ हो जाता है और रोगी का रंग श्याव वर्ण का हो जाता है ।

६. लक्षणों की नियमित चिकित्सा करते रहने से रोग को नियन्त्रित किया जा सकता है, जिससे यह चिकित्स्य (Curable) हो जाता है । इसकी चिकित्सा महीनों तक नियमित रखी जाती है ।

७. रोगी के जलवायु में परिवर्तन अर्थात् किसी दूरस्थ मनोरम स्थान पर चले जाने से रोग के ठीक होने की पर्याप्त सम्भावना बढ़ जाती हैं ।

उपद्रव (Complications)—१. पाण्डुता (Anaemia) ।
२. नाड़ीशूल (Neuritis) ।
३. पैरों पर शोथ (Oedema of the feet) ।
४. आर्तवनाश ।

चिकित्सा (Treatmant)—

सामान्य चिकित्सा— इस रोग की प्रधान भोजन द्वारा चिकित्सा है । इसके बिना मात्र औषधि चिकित्सा से लाभ की विशेष आशा नहीं करनी चाहिए । भोजन चिकित्सा के साथ-साथ औषधि चिकित्सा शीघ्र लाभकारी होती है ।

१. रोगी को शय्या पर विश्राम देना चाहिए ।

२. चिकिनाई रहित दूध लाभकारी है । ऐसा दूध २५० मिली० की मात्रा में दिन में ६-७ बार दिया जा सकता है । कुछ दिनों बाद गाय का दूध चिकनाई निकाले बिना भी दिया जा सकता है । ताजा दूध के अभाव में डिब्बों

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में बन्द स्नेह रहित दूध का पाउडर क्रमशः बढ़ाते हुए मात्रा में पानी में मिलाकर दिया जा सकता है। 'लेक्टोडेक्स' तथा 'कोसीलान' (ग्लेक्सो मिल्क प्रोटीन) भी दिया जा सकता है।

नोट—दूध अधिक उबला हुआ न हो।

३. दूध के ५-६ सप्ताह के प्रयोग से प्रायः रोगी की अवस्था सुधर जाती है। तत्पश्चात् दूध के अतिरिक्त किसी मौसमी फल का रस जैसे—आम, सन्तरा, टमाटर का रस दिन में २-३ बार दिया जा सकता है।

४. इसके कुछ दिनों बाद दूध के साथ हलका उबला हुआ अण्डा भी कभी-कभी दिया जा सकता है।

५. अण्डे के हजम होने पर सेका हुआ टोस्ट पहले खुश्क तत्पश्चात् मक्खन चुपड़ा हुआ दिया जा सकता है।

निर्देश—इस प्रकार से रोगी को क्रमशः ऐसे सामान्य भोजन पर ले आना चाहिए, जिसमें प्रोटीन आहार अधिक हो तथा कार्बोहाइड्रेट्स एवं फैट की मात्रा कम हो।

औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

'सेविल्स (Savill's) सिस्टम आफ क्लिनिकल मेडिसिन' के अनुसार—

१. सभी रोगियों को हाई प्रोटीन (High Protein), लो फैट (Low fat), लो कार्बोहाइड्रेट (Low Carbohydrate) वाला भोजन ही देना चाहिए।

२. कुछ रोगियों को आराम (Bed rest) की आवश्यकता पड़ती है। उचित आहार के साथ-साथ रोगी को टेट्रासाक्लीन ग्रुप का कोई एण्टीबायोटिक अवश्य देना चाहिए।

३. होल लिवर एक्स्ट्रेक्ट (Whole liver extract) थेरापी आवश्यक होती है। इसे इण्ट्रामस्कुलर रूप में दें। अधिकांश रोगियों में २० मि० ग्रा० नित्य एक सप्ताह तक 'फोलिक एसिड' साथ में देने से उत्तम लाभ देखने को मिलता है। तत्पश्चात् इसकी मेण्टिनेन्स डोज ५ मि० ग्रा० नित्य के हिसाब से दें।

४. 'लिवर एक्स्ट्रैक्ट' के साथ उचित आहार की व्यवस्था चलाते रहने से रोगी २ महीनों में स्वास्थ्य-लाभ कर लेता है।

५. आहार-व्यवस्था की कमी तथा इन्फ्लूएञ्जा जैसे संक्रमण से इसके पुनराक्रमण (Relapse) की सम्भावना रहती है।

जब बाह्य लक्षण (Oral symptoms) गम्भीर हों, तब—

निकोटिनिक एसिड (Nicotinic Acid) ५० मि० ग्रा० दिन में ३ बार दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एन्गुलर स्टोमेटाइटिस (Angular stomatitis) की स्थिति में—

रिबोफ्लेविन (Riboflavin) ३ मि० ग्रा० नित्य दें।

एक्लोरहाइड्रिया (Achlorhydria) की स्थिति में—

एसिड हाइड्रोक्लोर डिल० (Acid Hydrochlor dil.) ३०-६० बूंद दिन में तीन बार भोजन के साथ दें।

कैल्शियम-न्यूनता (Calcium deficiency) की स्थिति में—

कैल्शियम लैक्टेट (Calcium Lactate) ३० ग्रैन दिन में ३ बार।

'करेण्ट मेडिकल डायग्नोसिस एण्ड ट्रीटमेण्ट' के अनुसार स्प्रू की चिकित्सा—

फोलिक एसिड १०-२० मि० ग्रा० नित्य मुखमार्ग से अथवा इण्ट्रामस्कुलर कुछ सप्ताह तक।

नोट—इससे डायरिया, एनोरेक्सिया, शरीर-भार की कमी (Weight loss), ग्लॉसिटिस (Glossitis) तथा अमोनिया में लाभ मिलता है।

इसके अतिरिक्त—टेट्रासाइक्लीन २५० मि० ग्रा० मुख द्वारा नित्य दें।

इसके बाद जब रोगी को स्वास्थ्य-लाभ प्राप्त हो जाये, तब—

फोलिक एसिड ५ मि० ग्रा० नित्य मेण्टिनेन्स डोज के रूप में दें।

यदि रोगी में एक्लोरहाइड्रिया (Achlorhydria) उपस्थित हो तो—

विटामिन बी$_{१२}$ इण्ट्रामस्कुलर देने की व्यवस्था करें।

हाइपोक्रोमिक अनीमिया की स्थिति में—मुख-मार्ग से आयरन (Iron) दें। साथ ही हाई केलोरी, हाई प्रोटीन, लो फैट डाइट देना चाहिए।

स्प्रू-नाशक पेटेण्ट औषधि चिकित्सा : प्रेस्क्रिप्शन्स—

℞ इन्जे० विटामिन बी$_{१२}$ (Inj. Vit. B_{12})

मात्रा—५०० माइक्रोग्राम इण्ट्रामस्कुलर इन्जेक्शन प्रतिदिन।

साथ ही—फोलिक एसिड टेबलेट (Folic Acid tab.)

मात्रा—५ मि० ग्रा० की गोली दिन में दो बार।

अथवा—फोलिक एसिड १५ मि० ग्रा० मांसपेशीगत प्रतिदिन लक्षण शान्त हो जाने तक।

तत्पश्चात्—५ मि० ग्रा० नित्य मुख मार्ग से।

यदि रिस्पांस सन्तोषजनक न हो तो—

लिनकोमाइसिन (Lincomycin) ५०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार दें।

उपरोक्त चिकित्सा के साथ-साथ—

इन्जे० इम्फेरोन (Inj. Imferon)—१ एम्पुल मांसपेशीगत प्रति दूसरे दिन।

जब मुख द्वारा आयरन सहन न हो तो—

टेरामाइसिन २५० मि० ग्रा०।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१ कैप्सूल दिन में ४ बार, ४ से ६ सप्ताह तक।

प्रेडनीसोलोन (Prednisolon)

मात्रा—५० मि० ग्रा० नित्य ७ दिनों तक। तत्पश्चात् १५ मि० ग्रा० प्रतिदिन।

विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स मुख द्वारा अथवा इन्जेक्शन के रूप में।

पैन्क्रिएटिक इन्जाइम टेबलेट (Pancreatic enzyme tab.)

मात्रा—०.४ ग्राम दिन में २ बार भोजनोपरान्त।

(३) **लाक्षणिक चिकित्सा** (Symptomatic treatment)—

१. कैल्शियम न्यूनता (Calcium deficiancy)—

℞ कैल्शियम लैक्टेट या कैल्शियम ग्लूकोनेट १५-३० ग्रेन दिन में ३ बार दें।

अथवा—ऑस्टो-कैल्शियम (Osto-calcium) या कैल्शी-ऑस्टेलिन दें।

२. गम्भीर अनीमिया की स्थिति में—'ट्रान्स्फ्यूजन' की आवश्यकता पड़ती है।

३. माल-एब्जार्प्शन (Malabsorption) तथा स्टेटोरिया (Steatorrhoea) के लिए—

℞ पेन्जीनॉर्म अथवा मरकेन्जाइम टेबलेट (Panzynorm or Merckenzyme tab.)

मात्रा—२-२ गोली दोनों समय भोजन के साथ।

नोट—रोगी के स्वस्थ हो जाने पर भी फोलिक एसिड तथा विटामिन बी$_{१२}$ का अल्प मात्रा में प्रयोग करते रहना चाहिए।

जिह्वा का कष्ट—विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स में उपस्थित निकोटिनिक एसिड से ठीक हो जाता है। इसके लिए अलग से भी निकोटिनिक एसिड ५० मि० ग्रा० दिन में ३ बार दिया जा सकता है।

स्प्रू में प्रयोग आने वाली पेटेण्ट औषधियाँ—

टेबलेट—निकोटिनिक एसिड, बीकोजाइम फोर्ट, फोलिक एसिड, मेक्राफोलीन, विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स, कैम्पोफेरान, एसीडोल पेप्सिन, पेण्टोजाइम, यूनीहेम-१२, प्लास्ट्यूल्स विद फोलिक एसिड।

लिक्विड—लिवो बी-काम्प्लेक्स बिद बी$_{१२}$, टोटलिन 'बी' सिरप, मेक्राफोलिन, बीकोजाइम, कैम्पोफेरान, मैक्राबिन, क्रूलीवेक्स।

इन्जेक्शन—लिवर एक्स्ट्रेक्ट विद बी-कॉम्प्लेक्स, विटामिन बी$_{१२}$, हेपाफोलीन पेरेण्टेरल, मेक्राफोलीन, फोलिक एसिड, इन्जे० निकोटिनेमाइड (झंडु), कोलोजल कैल्शियम विद विटामिन 'डी'। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आध्मान
(Flatulence)

पर्याय—आध्मान, अफारा, वायु का एकत्रित होना, आनाह, पेट का फूलना।

परिचय (Definition)—Flatulence is a distension of the stomach and intestines by gas, which may be brought up by the mouth or passed by rectum.

जठरान्त्र-पथ (Gastro-intestinal tract) में गैस के एकत्रित होने की अवस्था को फ्लेटचुलेन्स (Flatulence) कहते हैं। अजीर्ण, मन्दाग्नि (Dyspepsia) तथा अतिसार के परिणामस्वरूप पेट में वायु एकत्रित होकर पेट फूल जाता है तथा पेट में अफारा हो जाता है। जब तक उदर स्थित वायु बाहर नहीं निकलती है, रोगी को काफी कष्ट एवं बेचैनी होती है। इसमें रोगी का दिल धड़कता है, श्वास कठिनाई से ले पाता है, मन घबराता है, पेट में दर्द और गैस एकत्रित होने के कारण उदर-प्रदेश की नसें तन जाती है।

रोग का कारण (Causes)—१. डिस्पैप्सिया—आहार का भलीभाँति पाचन न होने से।

२. पित्त की न्यूनता के कारण—आहार के किण्वीकरण तथा दूषित वायु के अत्यधिक निर्माण से।

३. मलबद्धता (Constipation)।

४. आँतों की शिथिलता के कारण उदर में संचित वायु का निष्कासन न हो पाना।

५. संक्रामक व्याधियों में विशेष कर आन्त्रिक ज्वर, न्यूमोनिया, मस्तिष्कावरणशोथ आदि में तीव्र विषमयता के कारण।

६. वायुभक्षण या वायु-निगरण (Aerophagia)।

७. रूक्ष अंश (Roughage) युक्त खाद्य पदार्थों का अधिक मात्रा में सेवन करने से।

८. अमीबा-रुग्णता (Amoebiasis)।

९. आमाशय, आन्त्र एवं यकृत् के पाचन में सहायक स्रावों की कमी।

१०. काइम (Chyme) में उपस्थित कार्बोहाइड्रेट्स और प्रोटीन के किण्वीकरण (Fermentation) से भी गैस उत्पन्न होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. कुछ व्यक्तियों में अधिक मात्रा में अधोवायु निकलती है। यदि वह दुर्गन्धित है तो समझना चाहिए कि प्रोटीनों का किण्वीकरण हो रहा है, जिसके लिए छोटी आँत (Small Intestine) की गति का अधिक होना अथवा अग्न्याशय रस (Pancreatic Secretion) की अल्पता या क्रियाक्षीणता उत्तरदायी है।

१२. ऐसे रोग जो आन्त्र की गति में बाधा डालते हैं। यकृत् तथा फेफड़ों में रक्तप्रवाह की कमी से भी आध्मान की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

इस प्रकार ये निम्न रोगों में आध्मान (Flatulence) के लक्षण के रूप में प्रकट होता है—

१. आमाशय की अम्लीयता (Achlorhydria), २. पेचिस, ३. अतिसार, ४. यकृत् का सिरोसिस, ५. संग्रहणी (स्प्रू), ६. पित्ताशयशोथ, ७. अन्त्रावरोध (Intistinal obstruction), ८. पायलोरिक ऑव्स्ट्रक्शन, ९. आमाशय का तीव्र विस्तृत रोग (Dilatation of stomach), १०. कंजेस्टिव हार्ट-फेल्योर, ११. पल्मोनरी टचुबरकुलोसिस, १२. श्वास रोग, १३. क्रॉनिक ब्रोंकाइटिस, १४. हृदयशूल (Angina Pectoris)।

नोट—कुछ ऐसे आहार हैं, जिनके सेवन से अत्यधिक गैस बनती है। जैसे—मटर, चना और अरहर की दाल। सामान्य रूप से यह गैस बाहर निकल जाती है, परन्तु पेट की मांसपेशियाँ कमजोर रहने पर यह आँतों में फँसकर अफारा उत्पन्न करती है।

अन्य लक्षण—टायलिज्म (Ptyalism), क्रॉनिक गैस्ट्राइटिस, गालब्लेडर डिस्पैप्सिया तथा ईसोफेजियल हायटस हर्निया में गैस्ट्रिक फ्लेट्युलेंस एक सामान्य लक्षण है।

इण्टेस्टिनल फ्लेट्युलेन्स अधिकांशत वायुभक्षण (Swallowed air), स्टार्च, शुगर फर्मेण्टेशन, कोष्ठबद्धता तथा डायरिया के परिणामस्वरूप होता है।

लक्षण (Symptoms)—१. रोगी का पेट वायु से फूल जाता है।

२. घबराहट तथा बेचैनी होती है।

३. श्वसन-क्रिया में रोगी को बाधा उत्पन्न होती है।

४. पेट की नसें तन जाती हैं।

५. मलावरोध (Constipation) होता है।

६. छाती में जलन (Burning sensetion in chest)।

७. छाती में वायु का दबाव पड़ने से दिल की गति तीव्र हो जाती है।

८. रोगी उदर में गुड़गुड़ाहट महसूस करता है।

९. डकार के साथ-साथ गुदमार्ग से रह-रहकर वायु निकलती है। मल-

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

त्याग के समय भी वायु आवाज के साथ निकलती है। वायु के निकल जाने से रोगी को कुछ राहत मिल जाती है।

१०. सिरदर्द, चक्कर आना, नाड़ी-दुर्बलता आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं।

निदान (Diagnosis)—१. उपरोक्त लक्षणों के आधार पर इसका निदान आसानी से हो जाता है।

२. परिताड़न परीक्षा—यह परीक्षा करने पर उदर से अति अनुनादी ध्वनि निकलती है, जैसे कि किसी ढोल को हल्के-हल्के बजाया जा रहा हो।

३. एक्स-रे परीक्षा—एक्स-रे चित्रण से आन्त्र में गैस की विशेष मात्रा एकत्रित होने का कोई प्रमाण नहीं मिलता है। जब आन्त्र का अंगघात (Paralysis) होता है, नब इसका प्रमाण अवश्य मिलता है।

सापेक्ष्य निदान (Differential Diagnosis)—हृदय की धड़कन (Palpitation) तथा हृदय-गति में अतालबद्धता (Irregularity) और हृदय से सम्बन्धित अन्य लक्षण भी मिलते हैं। जिनको देख कर हृदय की विकृति का भ्रम होने लगता है। किन्तु वस्तुतः हृदय में कोई विकार नहीं होता। वायु के अधिक भर जाने से वह डायाफ्राम (Diaphragm) को ऊपर धकेल देती है, जिससे हृदय पर दबाव पड़ता है और उसके कार्य में बाधा पड़ने से हृदय की धड़कन तथा अतालबद्धता उत्पन्न हो जाती है।

भावीफल (Prognosis)—१. यह एक अत्यत्र कठिनाई से नियन्त्रण में आने वाला रोग है।

२. पेट की गैस उठ कर जब हृदय पर दबाव डालती है, तब हृदय की धड़कन तथा बेचैनी बढ़ जाती है।

३. पेट की गैस उठकर जब मस्तिष्कावरण को प्रभावित करती है, तब सिरदर्द तथा सिर चकराने के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

४. नाड़ी-दुर्बलता भी मिलती है।

चिकित्सा (Treatment)—

सामान्य चिकित्सा—आध्मान के शमन में निम्न बातों का ध्यान रखते हुए चिकित्सा करनी चाहिए—

१. आँतों की शिथिलता को दूर करना।

२. आमाशय तथा पक्वाशय में संचित सेन्द्रिय विषों एवं दूषित वायु को आत्मसात कर निष्क्रिय बनाना।

३. इस प्रकार संचित हुए दूषित मल एवं वायु को अनुलोमक औषधियों अथवा बस्ति (Enema) के प्रयोग से बाहर निकालना।

जनरल प्रेक्टिस में जो रोगी मिलते हैं, उनमें आध्मान का कारण प्रायः अग्निमान्द्य (Despepsia), मलोवरोध, अमीबारुग्णता (Amoebiasis)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा प्रवाहिका आदि होते हैं। अतः आध्मान के रोगी में इन बातों को दृष्टिगत रखते हुए चिकित्सा करनी चाहिए।

१. प्रथम कारण को दूर करें।

२. कार्मीनेटिव (Carminatives) द्रव्य जैसे—ब्राण्डी, स्प्रिट, अमोनिया एरोमेट, जिंजर, पिपरमेण्ट एवं फीनोल (Phenol) मिलाकर दें।

३. मैग्नेसिया (Magnesia) बाइल के स्राव को बढ़ाता है तथा छोटी तथा बड़ी आँत को खाली रखता है। अतः इसमें Gregory's Powder मुख्य रूप से लाभकारी होता है। चारकोल (Charcoal), एट्रोपीन एवं ट्रेसिण्टिन (Trasentin) इण्टेस्टिनल फ्लेटचुलेन्स में दिया जा सकता है।

औषधि चिकित्सा (Medicinal Treatment)—

१. डिस्पैप्सिया तथा अजीर्ण के कारण उत्पन्न आध्मान की अवस्था में निम्न क्रमानुसार चिकित्सा करनी चाहिए—

कार्मीनेटिव मिक्श्चर—

℞ सोडा बाईकार्ब	१ ग्राम
स्प्रिट अमोनिया एरोमेट	१ मिली०
स्प्रिट क्लोरोफार्म	१ मिली०
टिंक्चर कार्ड को०	१ मिली०
सिनमम वाटर	३० मिली०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार १० दिनों तक अथवा आवश्यकतानुसार।

नोट—पीड़ा की स्थिति में—इस योग में टिं० बेलाडोना भी मिलाना चाहिए।

साथ ही—टेबलेट विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स	१ गोली
टेबलेट यीस्ट	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रति २ घण्टे पर क्रमशः कार्मीनेटिव मिक्श्चर और यह दोनों टेबलेट बारी-बारी से दें।

अथवा—℞ सोडाबाईकार्ब	९०० मि० ग्रा०
स्प्रिट अमोनिया एरोमेट	२ मि० ली०
स्प्रिट क्लोरोफॉर्म	२ मि० ली०
टिंक्चर कार्डीमम कम्पाउण्ड	१·२ मि० ली०
जल (Aqua)	३० मि० ली०
	१ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी १ मात्रा आवश्यकतानुसार दें।

नोट—यह योग गैस को पचाकर बाहर निकालता है।

अथवा—℞ सोडामिण्ट (बूट्स) २ गोली
फेस्टाल (हैक्स्ट) २ गोली
१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार जल से।

साथ ही—वयस्कों में—ग्लिसरीन सपोजिटरी गुदा में लगायें।

बच्चों को—ग्लिसरीन का एनीमा (सिरिञ्ज में २० मिली० ग्लिसरीन भर कर) दें।

नोट—इससे अफारा, अजीर्ण, डिस्पैप्सिया, आमाशय की अम्लीयता तथा अपान वायु की रुकावट में लाभ मिलता है।

अथवा—निम्न तीन औषधियों को सेवन करायें—

१. सिरप कार्मीसिड (स्ट्राँग) (Syrup Carmicide Strong)

मात्रा—२ चाय चम्मच दिन में ३ बार।

२. टेबलेट मर्केञ्जाइम (Tab. Merckenzyme)

मात्रा—१ गोली भोजन के तुरन्त बाद दिन में २ बार।

३. सिरप डिजीप्लेक्स (Syrup Digiplex)

मात्रा—२ चाय चम्मच दिन में ३ बार नाश्ते या दोनों समय भोजन के उपरान्त थोड़ा जल मिलाकर।

अथवा—टेबलेट जैलूसिल एम. पी. एस. (Tab. Gelusil M. P. S.)

मात्रा—२ टेबलेट भोजनोपरान्त दिन में २ बार चूसें।

अथवा—सिमीकोल (Simicol) अथवा पोलीक्रोल (Polycrol)

अथवा—कार्मीसिड फोर्ट (Carmicide forte)

मात्रा—१ चम्मच दिन में २ बार जल से भोजनोपरान्त।

(२) आन्त्र की शिथिलता दूर करने के लिए—

पिट्रेसिन ½ मिली० या लिस्पामिन २ मिली० या प्रास्टिग्मीन इण्ट्राम-स्कुलर दें।

कुछ रोगियों में 'कैल्शियम पेण्टोथिनेट' का शक्तिशाली मात्रा में प्रयोग लाभकारी होता है।

साथ ही—टेबलेट मर्केञ्जाइम अथवा टेबलेट कॉम्बीजाइम।

मात्रा—१ गोली भोजन के बाद दिन में २ बार।

निषेध—गैस उत्पन्न करने वाले खाद्य यथा—बन्दगोभी (Cabbage), फूलगोभी, सेम, मटर, प्याज, मूँगफली, सेव आदि का सेवन बिलकुल न करें।

अमीबिक इन्फेक्शन को दूर करें। यदि दस्त अधिक आते हों तो शक्कर की मात्रा कम से कम दें।

 CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) **मलबद्धता** (Constipation)—इसके कारण भी अधिकांश रोगियों में आध्मान (Flatulence) की स्थिति पैदा हो जाती है। ऐसी स्थिति में कोष्ठबद्धता (अध्याय १/८) के अन्तर्गत निर्दिष्ट चिकित्सा करनी चाहिए।

(४) **अमीबाजन्य आध्मान** (Flatulence due to Amoebiasis)—इसके ७०% रोगी मिलते हैं। इसके लिए अमीबारोधी औषधियों (अध्याय १/१२) का प्रयोग करने से आध्मान स्वतः दूर हो जाता है।

(५) **कारण की चिकित्सा**—इसके अतिरिक्त कारण की चिकित्सा अवश्य करनी चाहिए। इस चिकित्सा के साथ-साथ कार्मीनेटिव मिक्श्चर, एण्टेसिड, एन्जाइम्स आदि द्वारा लाक्षणिक चिकित्सा करनी चाहिए।

फ्लेटचुलेन्स नाशक विशिष्ट प्रेस्क्रिप्शन्स—

(i) ℞	टेबलेट कैल्शियम पेण्टोथिनेट	१ गोली
	टेबलेट कार्विण्डोन (Mild)	१ गोली
	टेबलेट एलीसेटिन (Tab. Allisatin)	½ गोली
	टाका डायस्टेज	३०० मि० ग्रा०
	टेबलेट यीस्ट	१ गोली
		१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार भोजनोपरान्त।

नोट—इस योग को भोजन के तुरन्त बाद देना चाहिए। यह आध्मान की सामान्य अवस्थाओं में विशेष लाभकारी है।

अथवा— ℞	स्प्रिट अमोनिया एरोमेट	०.५ मिली०
	टिं० कार्ड को	१ मिली०
	स्प्रिट क्लोरोफॉर्म	१ मिली०
	सिरप जिंजर	१ मिली०
	पिपरमेण्ट वाटर कुल	३० मिली०
		१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल के साथ।

अथवा— ℞	सोडाबाईकार्ब	६०० मि० ग्रा०
	मैगकार्ब	९०० मि० ग्रा०
	स्प्रिट क्लोरोफॉर्म	१० मिनिम
	टिंक्चर जिंजर	१० मिनिम
	टिंक्चर हायोसैयमस	१० मिनिम
	टिंक्चर बेलाडोना	५ मिनिम
	टिंक्चर असाफटीडा	५ मिनिम

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिरप ओरिंसियायी	६० मिनिम
जल	१ औंस
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा भोजन के २ घण्टे बाद दिन में २-३ बार।

(ii) ℞ टेबलेट लिबरियम १ गोली
टेबलेट डिस्पेप्टाल १ गोली
टे० विटामिन 'बी'-कॉम्प्लेक्स विद बी$_{१२}$ (ग्लैक्सो) १ गोली
टे० वेरिन (५० मि० ग्रा०) १ गोली
टेबलेट सीलिन (५० मि० ग्रा०) १ गोली

१ मात्रा। पीस कर पुड़िया बना लें।

ऐसी १ पुड़िया दिन में ३ बार भोजनोपरान्त।

विशेष—आमाशय और आँतों में गैस बनने के कारण तीव्र कष्ट, उदर-शूल, आध्मान तथा अत्यधिक निर्बलता आदि में उपयोगी है। यह एक अच्छा पेटेण्ट योग है।

(iii) ℞ टेबलेट बेलार्गन १ गोली
मेडीसिनल चारकोल ६०० मि० ग्रा०
टेबलेट प्रोस्टिग्मीन १ गोली
सोडामिण्ट २ गोली
१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा प्रति ३-४ घण्टे पर आवश्यकतानुसार गर्म जल से।

नोट—इससे आँतों की शिथिलता, आमाशय एवं पक्वाशय में संचित सेन्द्रिय एवं दूषित वायु को निष्क्रिय बनाने तथा दूषित मल को निकालने में सहायता मिलती है।

आध्मान-नाशक अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. अल्माजेल (Almagel) (नि० आइ० डी० पी० एल०)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार आवश्यकतानुसार चूसें।
इसका सस्पेन्शन भी आता है—
मात्रा—१०–२० मि० ली० दिन में ३-४ बार।
नोट—यह फ्लेटचुलेण्ट डिस्पैप्सिया में लाभकारी है।

२. डिसीलॉक्स (Disilox) (नि० स्टेडमेड)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार चूसें अथवा निगलें।
इसका लिक्विड भी आता है—
मात्रा—१०–१५ मिली० दिन में ३-४ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. मैगसिल (Magsil) (नि० बंगाल केमिकल)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार।
४. पेराक्टोल (Peractol) (नि० जर्मन रेमेडीज)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार भोजन के पूर्व या बाद में चबायें।
५. सिलोक्सोजेन (Siloxogen) (नि० सेर्ले कं०)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार भोजन के बाद चबायें।
इसका 'जेल' (Gel) भी आता है—
मात्रा—१०–२० मिली० दिन में ३-४ बार।
६. सिमेको (Simeco) (नि० वीथ कं०)
मात्रा—१० मिली० दिन में ३-४ बार।
इसकी टेबलेट भी आती है—
मात्रा—१-२ टेबलेट दिन में ३-४ बार।
७. सिमगाल (Simgal) (नि० मरकरी)
मात्रा—१-२ गोली दिन में २-३ बार अथवा आवश्यकतानुसार।
इसका सस्पेन्शन भी आता है—
मात्रा—५-१० मिली० दिन में २-३ बार।
८. सोंलासिड (Solacid) (नि० डेज)
मात्रा—१-२ गोली आवश्यकतानुसार।
९. कॉलीमेक्स (Colimex) (नि० वैलेसी)
मात्रा—वयस्क एवं बालक—१-२ मिली० दिन में ३ बार।
शिशु—½-१ मिली० भोजन से १५ मिनट पूर्व।
अधिकतम मात्रा—२४ घण्टे में केवल ४ मिली०।
१०. डिमोल (Dimol) (नि० वैलेसी)
मात्रा—शिशु—¼–½ टेबलेट।
वयस्क—१ गोली भोजन से पूर्व या मध्य में।
११. विल्कोजाइम टेबलेट (Vilcozyme tab.) (नि० बिल्को)
मात्रा—१ गोली भोजन के बाद।
नोट—यह डिस्पैप्सिया में भी लाभकारी है।
१२. यूनीइन्जाइम (Unienzyme) (नि० यूनीकेम)
मात्रा—१-२ गोली दिन में २-३ बार भोजन के बाद।
१३. मेरीजाइम (Merizyme) (नि० मरकरी)
मात्रा—१-२ गोली दिन में २-३ बार भोजन के बाद।
इसका इलिक्सिर भी आता है—
मात्रा—१५ मिली० दिन में २-३ बार भोजनोपरान्त।
१४. ओरीजाइम (Orizyme) (नि० कोप्रान)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—२·५ से ५ मिली० दिन में २-३ बार आवश्यकतानुसार।

१५. पेप्सीनोजाइम (Pepsinozyme) (नि० स्टेडमेड)

मात्रा—१-२ गोली दिन में २ बार भोजनोपरान्त।

१६. डिस्पेप्टेज (Dispeptase) (नि० पाश्चर कं०)

मात्रा—५-१० मिली० भोजन के बाद।

१७. इन्जार (Enzar) (नि० वाल्टर बुशनिल)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार भोजन के साथ। गोली को निगल जाना चाहिए।

१८. इञ्जाइमेक्स एम० पी० एस० (Enzymex M. P. S.) (नि० इपिका)

मात्रा—१-२ टेबलेट भोजनोपरान्त।

१९. डिस्पेप्टाल (Dispeptal) (नि० बोहरिंगर नोल)

मात्रा—१-२ ड्रेगी भोजन के साथ।

२०. डिग-इञ्जाइम्स (Dig-enzymes) (नि० बंगाल केमिकल)

मात्रा—१०-१५ मिली० भोजन के बाद जल से।

बालक—पूरी वयस्क मात्रा की $\frac{1}{2}$ खुराक।

२१. बिलामिड (Bilamid) (नि० इथनोर)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार भोजनोपरान्त।

नोट—औषधि को कुछ दिन बाद रोक देना चाहिए।

विशेष—यह मलबद्धता युक्त आध्मान में उपयोगी है।

२२. एल्वीजाइम (Alvizyme) (नि० एलेम्बिक)

मात्रा—१-२ टेबलेट भोजन के मध्य अथवा बाद में निगल जाना चाहिए।

आध्मान की सहायक चिकित्सा—

उपर्युक्त औषधि चिकित्सा के साथ-साथ निम्न चिकित्सा करने से शीघ्र लाभ मिलता है तथा वायु के निर्हरण में पर्याप्त सुविधा होती है—

(i) नासामार्ग से राइल्स ट्यूब डालकर प्रचूषण करने से पर्याप्त लाभ मिलता है।

(ii) गुदामार्ग से आध्मान नलिका (फ्लेट्स ट्यूब) का प्रवेश कराकर उदर के ऊपर तारपीन तैल की सिंकाई करने से पर्याप्त लाभ मिलता है।

रोग की अन्य लाक्षणिक चिकित्सा—

(i) पेट में अधिक गैस बनना—

यूपेप्टाइन (Eupeptine) (नि० रेप्टाकोस)

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३ बार भोजन के बाद।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ii) ऐंठन के साथ पेट फूलना—
प्रोस्टिग्मीन या कार्बोकोल ।
मात्रा—१-१ गोली दिन में ३ या ४ बार ।
(iii) शूलयुक्त आमाशय में गैस का होना—
पॉलीकोल (Polycol) (नि० निकोलस)
मात्रा—इसकी १ हरी तथा १ सफेद गोली मिलाकर दिन में २ बार ।
साथ ही—टेबलेट नियो-ओक्टीनम दिन में ३ बार जल से दें ।
(iv) अरुचि के साथ अफारा होना—
टेबलेट फेस्टाल (Tab. Festal)
मात्रा—१-१ टेबलेट दिन में ३-४ बार ।
साथ ही—'सोडामिण्ट' की २ गोली प्रत्येक भोजन के बाद जल के साथ दें । □

पाचन-संस्थान के रोग 1/8

मलावरोध/कोष्ठबद्धता
(Constipation)

पर्याय (Synonyms)—मलावरोध, मलबन्ध, कब्ज, कोष्ठबद्धता ।

परिचय (Definition)—Constipation is insufficient action of the bowels, delay in the passage of the contents of the intestine, causing hard, dry faeces (Scybala).

—*Savill's System of Clinical Medicine*

मल-विसर्जन कर्म या रिफ्लेक्स (Reflex) २४ या ४८ घण्टों में नियमित रूप से एक बार न हो तो उसे मलावरोध (Constipation) कहा जाता है । इसमें शौच साफ नहीं होता है । मल सूखा और कम निकलता है । निरन्तर बैठे रहने, लिखने-पढ़ने का अधिक कार्य करने, मानसिक कार्य में अत्यधिक व्यस्तता तथा शारीरिक श्रम न करने से मल का त्याग अल्पमात्रा में तथा अनियमित होता है । कभी-कभी अत्यधिक कुंथन करने अथवा घण्टों शौच के लिए बैठने पर थोड़ा-बहुत मल बाहर आता है । किसी-किसी को तो कई-कई दिनों तक मलविसर्जन ही नहीं होता । निरन्तर मलावरोध रहने से सिरदर्द, शरीर में आलस्य, सुस्ती, चिड़चिड़ापन तथा मानसिक दबाव आदि लक्षण पैदा हो जाते हैं ।

रोग के कारण (Causes)—१. उच्च प्रकार की रिफाइण्ड (Highly refined) अथवा निम्न कोटि के फाइबर युक्त भोजन तथा द्रव पदार्थों के अधिक सेवन से ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. शारीरिक परिश्रम न करना, घर में बैठे रहना, शय्या पर बहुत समय तक विश्राम करना आदि कारणों से।

३. गर्भावस्था (Pregnancy) के कारण।

४. औषधियाँ (Drugs)—अनीस्थीसिया (बेहोश करने वाली औषधियाँ), एण्टेसिड (Antacid), गैंग्लियन को ब्लाक करने वाले एजेण्ट्स, आयरन साल्ट्स तथा अफीम आदि के सेवन से।

५. रात्रि-जागरण, तेज काफी या चाय और विभिन्न नशीले पदार्थों का सेवन।

६. चिन्ता, भय, शोक आदि।

७. यकृत् के रोग।

८. मलाशय (Rectum) की वातिक निर्बलता (Nervous weakness)—यह इस रोग का प्रमुख कारण माना जाता है।

९. मलत्याग की प्रेरणा (Reflex) की अवहेलना करने से—मलाशय में मल के आ जाने पर भी मलत्याग के लिये न जाना। इससे धीरे-धीरे मलाशय में मल के प्रवेश से उत्पन्न होने वाली संवेदना या बेचैनी की प्रतीति उत्तरोत्तर हलकी पड़ती जाती है। जिससे मलाशय में मल जमा होकर खुश्क हो जाता है।

१०. विटामिन 'बी' की न्यूनता से आन्त्र की प्रेरक शक्ति मन्द पड़ जाती है, जिससे मलबन्ध हो जाता है।

११. शरीर में मेदवृद्धि हो जाने पर अथवा पाण्डुरोग होने पर या किसी तीव्र ज्वर के पश्चात् अथवा क्षय रोग में या मधुमेह में तथा वृद्धावस्था के कारण भी आँतों का निर्बल हो जाना स्वाभाविक है। जिससे रोगी को मलबन्ध रहता है। इसे 'एटॉनिक' या 'कोलोनिक' कॉन्स्टीपेशन कहते हैं।

१२. पित्ताशय, एपेण्डिक्स, गुदा तथा गर्भाशय में शोथ होने पर बड़ी आँत में स्तम्भ (In condtion of spasm) होकर मलबन्ध हो जाता है। बवासीर के मस्सों के सूज जाने तथा प्रोस्टेट ग्रन्थि में शोथ होने पर भी बड़ी आँत में स्तम्भ होकर मलबन्ध हो जाता है। आँत में कैंसर होने पर बार-बार शौच जाने की आदत पड़ जाती है, परन्तु मलत्याग अधूरा ही रहता है।

१३. पथरीली चट्टानों अथवा पथरीली मैदानी भूमि का—जिसमें चूने का पानी रहता है—जल पीने से आँतों में कैल्शियम कार्बोनेट अधिक मात्रा में पहुँच जाता है, जिसके शोषक होने से भी मलबन्ध हो जाता है।

१४. जहाँ का पानी भारी होता है, वहाँ भी लोगों में अधिकांशतः मलबन्ध की शिकायत रहती है।

रोग-लक्षण (Symptoms)—१. रोगी को शौच साफ नहीं आता है। मल सूखा और कम मात्रा में निकलता है। कभी-कभी मल कुन्थन करने

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

या घण्टों बैठने पर बाहर निकलता है। किसी-किसी को तो कई दिनों तक पाखाना नहीं होता।

२. इसमें रोगी की भूख मर जाती है, पेट भारी रहता है एवं मीठा-मीठा दर्द भी रहता है।

३. शरीर तथा सिर भारी रहता है।

४. जीभ मलावृत रहती है तथा मुँह का स्वाद खराब हो जाता है। कभी-कभी मुँह से दुर्गन्ध आती है।

५. सिर तथा कमर में दर्द रहता है।

६. शरीर में आलस्य एवं सुस्ती, चिड़चिड़ापन तथा मानसिक तनाव सम्बन्धी लक्षण भी मिलते हैं।

७. बहुत दिनों तक मलावरोध की शिकायत रहने से रोगी को बवासीर तथा गृध्रसी आदि रोग भी हो जाते हैं।

८. प्राचीन विचारधारा के लोगों के मतानुसार मलावरोध (Constipation) से—

(i) मस्तिष्क तथा नाड़ीमण्डल में अवसाद रहता है। मानसिक तथा शारीरिक कार्यशक्ति घट जाती है। अर्थात् उसमें स्वाभाविक स्फूर्ति नहीं रहती है।

(ii) रक्त पर इसका दुष्प्रभाव होने से रक्त का भार (B. P.) बढ़ जाता है।

(iii) पाण्डुता हो जाती है, जिससे शरीर का रंग फीका पड़ जाता है।

(iv) आँतों में गैस बनने से रोगी की नींद बीच में ही खुल जाती है।

(v) जननेन्द्रिय सम्बन्धी अवयवों पर प्रभाव पड़ने से (गैस द्वारा) 'स्वप्नदोष' का रोग हो जाता है।

(vi) आँतों में अधिक समय तक मल रुका रहने से अर्शरोग (Piles) हो जाता है।

वैज्ञानिक तथ्य—इन लक्षणों का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है। वास्तविकता यह है कि विरेचन गुण वाली औषधियों का प्रतिदिन प्रयोग करने वालों में बड़ी आँतों में मल के तरल हो जाने से उसमें से बाह्य इण्टाक्सीकेशन का भय अधिक रहता है।

विद्वानों का विचार है कि कोष्ठबद्धता के उपर्युक्त अवसाद आदि लक्षण मलाशय के अन्दर दबाव (Distension) के बढ़ जाने से होते हैं, टॉक्सीमिया से नहीं।

निदान (Diagnosis)—उपरोक्त लक्षणों के आधार पर निदान में कोई कठिनाई नहीं होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा—१. इस रोग की चिकित्सा में विरेचक (Cathartic) तथा एनीमा का प्रयोग न करें।

२. उच्च सैलूलोज (रेशे वाली) जैसे—भूसी तथा Raw fruits एवं शाक लाभकारी होते हैं।

३. ८-१० गिलास द्रव पदार्थ (Fluids) प्रतिदिन लेना चाहिए।

४. कोष्ठबद्धता के रोगी को दोनों समय नियमित रूप से मलत्याग के लिए जाना चाहिए। मलत्याग के पूर्व १ प्याला चाय या दूध लेने से सुविधा होती है। मलत्याग के निश्चित समय को कभी नहीं टालना चाहिए।

५. यदि निश्चित समय पर मलत्याग न हो तो ग्लिसरीन की बत्ती (ग्लिसरीन सपोजिटरी) लेकर ८-१० मिनट बाद पुनः शौच के लिए जाना चाहिए। अथवा ४ ड्राम ग्लिसरीन को बराबर जल में मिलाकर ग्लिसरीन सिरिंज से उसे गुदा में प्रविष्ट कर १० मिनट बाद मलत्याग करना चाहिए।

उक्त ग्लिसरीन न लेने पर शीर्षासन या सर्वांगासन करना चाहिए। इससे पेल्विक कोलन में हरकत होकर मलत्याग की संवेदना होती है।

६. कोष्ठबद्धता के रोगी को कम चिकनाई वाले आहार जैसे—गाय का दूध, पनीर, सूखा फुलका लेना चाहिए। चोकर मिले आटे की रोटी, मोसम्मी फल का नित्य सेवन तथा भोजन में दाल की अपेक्षा सब्जी, बथुआ, पालक आदि शाकों का अधिक सेवन करना चाहिए। कोष्ठबद्धता के रोगी के लिए उबली गाजर तथा पके अमरूद का सेवन सर्वोत्तम होता है।

७. आँतों में खुश्की न हो, इसके लिए रोगी को आहार के अतिरिक्त ३-४ लीटर जल प्रतिदिन लेना चाहिए।

८. दूध तथा स्टार्च वाले पदार्थ अधिक मात्रा में नहीं लेना चाहिए।

९. नियमित रूप से प्रातःकाल पेट तथा मूलाधार प्रदेश (Perineum) की मांसपेशियों को गति प्रदान करने वाले व्यायाम करने चाहिए।

१०. चिकित्सा में औषधियों का कुछ समय तक के लिए ही सहयोग लेना चाहिए और आगे के लिए औषधियों पर निर्भर नहीं रहना चाहिए। कुछ समय बाद वही औषधियाँ निष्फल हो जाती हैं।

११. जो औषधियाँ आँत का स्नेहन (Lubrication) करती हैं; वे कॉन्स्टीपेशन के लिए विशेष उपयोगी होती हैं।

१२. कुछ रोगियों में उनका मेदा बहुत सख्त होता है, उन्हें शौच बहुत कठिनाई से आता है। अतः उन्हें रात्रि में १ बड़ा ग्लास गर्म दूध में ५०–६० ग्राम देशी गुड़ मिलाकर पी लेने से चमत्कारी लाभ होता है। यह लिक्विड थेरापी का कार्य करता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) **औषधि चिकित्सा** (Medicinal treatment)—जनरल प्रैक्टिस में चिकित्सक के पास कॉन्स्टीपेशन के विविध प्रकार के रोगी आते हैं। इस रोग की अनेक स्थितियाँ हो सकती हैं। अतः उनकी चिकित्सा उन स्थितियों के अनुरूप ही करनी चाहिए।

कॉस्टीपेशन की निम्न स्थितियाँ हो सकती हैं—

(क) मल का प्रतिदिन नियमित रूप से न होना, अथवा अल्प मात्रा में होना।

(ख) मल का सख्त होना।

(ग) कठोर एवं बड़े मल पिण्ड (Faecal mass) के कारण कॉन्स्टीपेशन।

(घ) अस्थायी कोष्ठबद्धता।

(क) मल का प्रतिदिन नियमित रूप से न होना अथवा अल्प मात्रा में होना—

℞ ईसबगोल की भूसी।

मात्रा—१०–१५ ग्राम सोने से पूर्व दही या दूध में मिलाकर।

अथवा—आइसोजेल (Isogel) (नि० ग्लैक्सो)

मात्रा—१ बड़ा चम्मच दिन में २ बार २५० मिली० दूध या जल के साथ।

नोट—'आइसोजेल' ईसबगोल का ही एक उत्तम योग है।

अथवा—मेटामूसिल (वेजिटेबल म्यूसीलेज)

मात्रा—१-२ चम्मच १ गिलास जल के साथ दिन में एक या दो बार।

अथवा—कारबिण्डोन (Carbindon) (नि० इण्डो फार्मा)

मात्रा—१-२ गोली रात्रि में सोते समय गर्म जल के साथ।

नोट—यह सनाय तथा फिनोलैफ्थलीन का योग है।

(ख) मल का सख्त होना—कॉन्स्टीपेशन की इस अवस्था में निम्न औषधियों का प्रयोग करना चाहिए—

℞ क्रीमाफिन ह्वाइट (Cremaffin white)

मात्रा—(i) वयस्कों तथा १२ वर्ष से अधिक आयु के बालकों को—½-१ बड़ा चम्मच रात्रि में सोने से पूर्व गर्म दूध में।

(ii) ५ से १२ वर्ष की आयु के बालकों को—१-२ चाय चम्मच सोने से पूर्व गर्म दूध से।

(iii) १ से ५ वर्ष के बच्चों को—½-१ चाय चम्मच रात्रि सोने से पूर्व दूध के साथ।

अथवा—℞ क्रीमाफिन पिंक (Cremaffin Pinke)

मात्रा—१. वयस्कों तथा १२ वर्ष से अधिक आयु के बालकों को ½-१ बड़ा चम्मच रात्रि में सोने से पूर्व दूध के साथ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. ५ से १२ वर्ष तक--१-२ चाय चम्मच सोने से पूर्व दूध के साथ।

३. २ से ५ वर्ष तक—½-१ चाय चम्मच रात्रि में सोने से पूर्व दूध के साथ।

नोट—पिंक (गुलाबी) क्रीमाफिन अपेक्षाकृत अधिक तीव्र होती है।

निषेध—इसका प्रयोग २ वर्ष से कम की आयु वाले बालकों में नहीं करना चाहिए।

अथवा—टेबलेट बीसाकोडाइल ५ मि० ग्रा० (व्या० नाम 'डल्कोलेक्स')

मात्रा—२ गोली रात में सोते समय।

अथवा—परसेनिड विद डी० ओ० एस० (Pursennid with D. O. S.)

अथवा—बाईकोलेट्स अथवा डिस्कोलेट्स

मात्रा—२ गोली रात्रि में सोने से पूर्व गर्म दूध के साथ।

यदि आवश्यक समझें तो—डल्कोलेक्स या ग्लिसरीन सपोजिटरी या प्रेक्टोसाइस (Practocys) अथवा प्लेन वाटर एनीमा का प्रयोग करें।

नोट—बाईकोलेट्स, कोलेक्स, ग्लैक्सीना, लैक्सिल, डयूकोलैक्स—इनमें से किसी भी औषधि की १-२ गोली रात में सोते समय सेवन करना चाहिए। मिल्क आफ मैगनेसिया ५-६ गोली रात में सोते समय दी जा सकती है।

अथवा—℞ मिल्क आफ मैगनेसिया १० मिली०
लिक्विड पैराफिन १५ मिली०
बबूल की गेंद का लुआब—आवश्यकतानुसार
एनीसी वाटर ३० मिली०
१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा रात्रि में सोते समय।

नोट—यह हलका मृदुरेचक है। यह मल को चिकना कर बाहर निकालता है।

(ग) कठोर एवं बड़े मल-पिण्ड के कारण कॉन्स्टीपेशन—वृद्धों एवं बहुत दिनों से किसी दीर्घकालिक क्रॉनिक डिसीज से पीड़ित व्यक्ति में, जिन्हें शय्या पर ही अधिकांश समय तक लेटना पड़ता है, उनका मल कठोर तथा इतना मोटा हो जाता है कि उसका गुदा से निकलना कठिन हो जाता है। ऐसी अवस्था में मुख-मार्ग से रेचक (Purgative) औषधियों के प्रयोग से भी कोई विशेष लाभ नहीं मिलता। इस स्थिति में मलाशय का स्थानीय उद्दीपन (Local stimulation) तत्काल लाभकारी होता है। इसके लिए ग्लिसरीन सपोजिटरी अथवा एनीमा का प्रयोग करना चाहिए।

नोट—ग्लिसरीन सपोजिटरी २ ग्राम और ४ ग्राम की आती है।

मात्रा—१ या २ सपोजिटरी आयु के अनुसार जो अपेक्षित हो, गुदा-मार्ग से मलाशय में प्रविष्ट करा देने के पश्चात् १० मिनट बाद मल-त्याग के के लिए जाना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—साबुन एवं जल का एनीमा दें।

अथवा—'प्रैक्टो-क्लिस' एनीमा का प्रयोग करें।

विशेष—प्रैक्टो-क्लिस एनीमा एक नवीनतम वैज्ञानिक विधि है। इसमें १६% सोडियम डाई हाइड्रोजन फास्फेट तथा ६% सोडियम फॉस्फेट घोल के रूप में एक प्लास्टिक की ट्यूब में आते हैं। जिनमें एक नली लगी होती है। इस नली को लेटे हुए व्यक्ति की गुदा में प्रविष्ट कर (शनैः-शनैः) ट्यूब को दबा कर गुदामार्ग से मलाशय में सम्पूर्ण घोल को प्रवेश करा दिया जाता है।

(घ) अस्थाई कोष्ठबद्धता (Temporary Constipation)—

(अ) नाजुक कार्य की अवस्था में (Mild action) विशेष कर ज्वर की अवस्थाओं में—

℞ केस्टर आयल (Castor Oil)

मात्रा—५-१५ मिली० आयु के अनुसार गर्म दूध में रात्रि में सोने से पूर्व। इसके लेने के ३ से ६ घण्टे पश्चात् दस्त आते हैं।

नोट—इसका प्रयोग बालकों तथा गर्भवती स्त्रियों में भी किया जा सकता है। वृद्ध व्यक्तियों के लिए भी यह पूर्ण सुरक्षित परगेटिव है।

बालकों को—१ चाय चम्मच रात में सोते समय।

शिशुओं को—$\frac{1}{4}$-$\frac{1}{2}$ चाय चम्मच सोते समय।

निषेध—इसका प्रयोग मासिकधर्म से प्रभावित स्त्री तथा बवासीर से पीड़ित रोगी में नहीं करना चाहिए।

अथवा—बच्चों में 'कैस्टर आयल' निम्न प्रकार से दे सकते हैं—

℞ कैस्टर आयल (Castor Oil)	४ मिली०
म्यूसीलेज आफ अकेसिया	आवश्यकतानुसार
ग्लिसरीन	०.३ मिली०
ऑरेञ्ज सिरप	४ मिली०
पिपरमेण्ट वाटर	३० मिली०

बच्चों की मात्रा—१ चाय चम्मच (५ मिली०)।

अथवा—टेबलेट बीसाकोडाइल ५ मि० ग्रा० (व्या० नाम 'डल्कोलैक्स')

मात्रा—२ टेबलेट रात्रि में सोने से पूर्व।

नोट—यह ६ से १२ घण्टे में अपना प्रभाव दिखलाती है।

(ब) सेलाइन एक्शन के लिए—

℞ मैगनेसियम सल्फेट	८ ग्राम
ऑरेञ्ज सिरप	४ मिली०
पिपरमेण्ट वाटर	३० मिली०

बच्चों की मात्रा—१ चाय चम्मच (५ मिली०)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—यह स्मरण रखना चाहिए कि ग्लिसरीन सपोजिटरी कठोर होते हुए मल पर अपना प्रभाव नहीं दिखलाती है।

कब्जनाशक विशिष्ट प्रेस्क्रिप्शन्स—

(i) ℞ मैगसल्फ १५० मिग्रा०
एक्स्ट्रेक्ट ग्लिसराइजा लि० ३० मिली०
टिं० कार्ड को० ६० मिली०
इन्फ्यूजन सेना (सनाय) कुल ६०० मिली०

मात्रा—१५-३० मिली०। औषधि को प्रयोग के पूर्व भलीभाँति मिला लें।

नोट—यह नवीन कब्ज रोग में विशेष उपयोगी है। इससे दस्त खुलकर आता है।

(ii) ℞ मैग सल्फ (Mag Sulph) २ ग्राम
मैगकार्ब ९०० मि० ग्रा०
टिं० रिहाई कं० १·२ मि० ली०
टिं० नक्स वोमिका ०·३ मि० ली०
एसेन्स मेंथापिप ०·३ मि० ली०
जल कुल ३० मि० ली०
१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २ या ३ बार भोजन के ½ घण्टे पूर्व।

(iii) ℞ सल्फर (Sulphur) ३·७५० ग्राम
पोटेसियम एसिड टार्टारिक ७५० मि० ग्रा०
मिलाकर २५ गोली बना लें।

मात्रा—१ से २ गोली दिन में २ या ३ बार जल से दें।

(iv) ℞ पल्व ग्लिसराइजा ६ ग्राम
फेनाल्फथैलीन १८० मि० ग्रा०
१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा रात्रि में सोने से पूर्व गर्म दूध के साथ।

कब्जनाशक पेटेण्ट औषधियाँ—

(i) एगारोल (Agarol) (नि० बारनर)

मात्रा—७·५ से १५ मिली०।

बालक—६ से १२ वर्ष की आयु में—५-१० मिली० सोने से पूर्व।
५ से ६ से वर्ष की आयु में—५ मिली० सोने से पूर्व।

(ii) सेलूब्रिल (Cellubril) (नि० आस्ट्रा आइडिल)

मात्रा—१ कै० दिन में २-३ बार।

बालक—६ वर्ष और उससे अधिक आयु में—१ कै० सोने से पूर्व।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(iii) इवेकुओल (Evacuol) (नि० ग्राइफोन)।

मात्रा—१ चम्मच ग्रेन्यूल्स रात्रि में सोते समय लेना आरम्भ करें, आगे आवश्यकतानुसार २ चाय चम्मच तक।

(iv) ग्लेक्सीना (Glaxenna) (नि० ग्लैक्सो)

मात्रा—२ गोली रात्रि में सोने से पूर्व।

(v) जूलेक्स (Julex) (नि० रैलिस)

मात्रा—१-२ गोली रात्रि में सोने से पूर्व।

(vi) कनोरमल (Kanormal) (नि० जर्मन रेमेडीज)

मात्रा—१ बड़ा चम्मच प्रातः-सायं।

बालक—१ चाय चम्मच प्रातः-सायं।

नोट—इसे भोजन के बाद न दें।

(vii) लैक्जेटिन (Laxatin) (एलेम्बिक)

मात्रा—२-३ गोली रात्रि में सोते समय।

बालक—(६-१२ वर्ष) १ गोली रात्रि में सोते समय।

(viii) लैक्सीकोन (Laxicon) (नि० स्टेडमेड)

मात्रा—सिरप रूप में—५०-५०० मि० ग्रा० नित्य विभाजित मात्रा में।

ड्रॉप रूप में—बालक—५ मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर भार पर प्रतिदिन।

विशेष उपयोग—इसका प्रयोग गर्भावस्था, बालकों, रिसेण्ट मायोकार्डियल इन्फार्क्शन, गम्भीर स्वरूप का उच्च रक्तदाब, एब्डॉमिनल हर्निया, ऑपरेशन के पश्चात् के रोगी, बवासीर के घाव (Piles fissure), दीर्घकाल तक बिस्तर पर पड़े रहने वाले रोगी, हेबीचुअल गैस्ट्रिक ऑब्स्ट्रक्शन आदि से पीड़ित कोष्ठबद्धता के रोगी में होता है।

(ix) लैक्सिल (Laxil) (नि०—बंगाल केमिकल)

मात्रा—१ गोली सोने से पूर्व।

(x) परसेनिड-इन (विद—डी० ओ० एस०) (नि० सैण्डोज कं०)

मात्रा—२ गोली सोने से पूर्व। अधिक से अधिक ४ गोली एक बार में।

नोट—यह एक्यूट तथा क्रॉनिक दोनों प्रकार के कॉन्स्टीपेशन में उपयोगी है।

निषेध—इसका उपयोग 'इण्टेस्टिनल ऑब्स्ट्रक्शन' की स्थिति में नहीं करना चाहिए।

बालकों में कोष्ठबद्धता (Constipation in children)—

सामान्य कब्जियत की अवस्था में (In mild cases)

(i) शहद (Honey)—१ चम्मच प्रातः।

(ii) कैस्टर आयल—१ चाय चम्मच दूध में मिलाकर।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(iii) मिल्क ऑफ मैगनेसिया—१ वर्ष तक के बच्चों में १० बूंद; २ वर्ष तक ½ ड्राम; ३ से ५ वर्ष तक १ चाय चम्मच जल में मिलाकर प्रातः के आहार के पश्चात् ।

अथवा—℞ मिल्क आफ मैगनेसिया १० मिली०
लिक्विड पैराफिन ४ मिली०/प्रति १५ मिली० पर
½ चम्मच जल के साथ दें ।

(व्या० नाम क्रीमाफिन—Cremaffin) (नि० वूट्स)

(iv) इलिक्जिर केस्केरा सिग्रेडा—१ मिली० जल के साथ ।

जब तीव्र दस्तावर की आवश्यकता हो तब—

(i) ग्लिसरीन ३० मिली० + गर्म जल ३० मिली०—
दोनों को मिलाकर सिरिञ्ज द्वारा रेक्टम में इन्जेक्ट करना ।

नोट—बच्चों में एनिमा का प्रयोग न करें ।

(ii) ℞ मैगसल्फ ०·६ ग्राम
सिरप जिंजर ०·० मिली०
एक्वा मेन्थापिप ४८ मिली०
१ मात्रा

आवश्यक निर्देश—कोष्ठबद्धता-नाशक औषधियों का सेवन कभी-कभी ही करना चाहिए, क्योंकि इनके नियमित सेवन से रोगी इनका अभ्यस्त हो जाता है और कुछ दिनों के पश्चात् इनसे भी कोई लाभ नहीं मिलता है ।

सेविल्स सिस्टम ऑफ क्लिनिकल मेडिसिन के अनुसार कॉन्स्टिपेशन की औषधि चिकित्सा—

१. कभी-कभी के होने वाले मलावरोध में सायंकाल के भोजन में सेना (Senna) तथा प्रातः 'Scidlitz-Powder' का सेवन सर्वथा हानिरहित होता है ।

२. अस्थाई प्रयोग के लिए 'Phenolphthalein' एक उत्तम योग है ।

३. केस्केरा, एलोज तथा सेना (Senna) का उपयोग बिना किसी हिचकिचाहट के किया जा सकता है ।

४. निम्न वेजीटेबल पिल्स लाभकारी होती है—

℞ Pil Colocynth co
Pil rhei co. aa 1 gm.
Hyoscyami ½ gm.
Dose—one or two at bedtime.

अथवा—℞ Tr. nuc. vom.
Tr. Belladonna aa m 5

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Tr. Hyoscyami m 10
Ext. Casc. sag liq. ad. m 60
1 dose.

५. Salines कुछ सप्ताह तक नित्य दें। इन्हें मिनरल्स वाटर जैसे—Carlsbad अथवा उसके समकक्ष २०-६० ग्रेन सल्फेट ऑफ सोडा, कभी-कभी Alkalies के साथ देना चाहिए। इन्हें खाली पेट देना अधिक उपयुक्त रहता है।

बच्चों में केस्केरा (Cascara) तथा माल्ट (Malt) आपस में १०-२० m. के अनुपात में मिलाकर देना उपयुक्त रहता है। अर्थात् केस्केरा १०-२० m. को १ चम्मच माल्ट में मिलाकर।

६. **Enemata**—Atony of the descending and pelvic colon तथा dilated rectum की स्थिति में प्रयोग करना। १-२ पिन्ट्स (Pints) जल से दिया जा सकता है।

१½ औंस ग्लिसरीन का एनिमा दिया जा सकता है। पर इसे कुछ सप्ताह से अधिक नहीं देना चाहिए।

क्रॉनिक कॉन्स्टीपेशन की अवस्था में—ओलिव आयल (Olive oil) ½–½ पिन्ट (Pint) प्रति रात्रि दिया जा सकता है। इसके एक या दो सप्ताह के प्रयोग से 'Bowel' अपना कार्य सुचारु रूप से करने लगते हैं।

७. Lumbar Sympathectomy—इसका प्रयोग तभी किया जाता है जब उपरोक्त सभी उपाय (Measure) असफल हो जाते हैं।

अन्य अवस्थाएँ—सीकम (Caecum) में कठोर पुंज (Hard masses) प्रतीत होने पर नॉर्मल सेलाइन से कभी-कभी बृहदान्त्र-धावन (Colonic irrigation) आवश्यक होता है। १ से २ पिन्ट्स (Pints) एक बार में शरीर तापक्रम पर धीरे-धीरे प्रवेश करना चाहिए। साथ ही तत्काल बाहर निकाल देना चाहिए। जब तक Washing साफ न आने लगे तब तक इसकी पुनरावृत्ति आवश्यक होती है।

गर्म ओलिव आयल (Olive oil) इन्जेक्शन रूप में ३ फ्लड औंस (Fl. oz.) की मात्रा में एनिमा द्वारा देना लाभकारी होता है। इसे प्रति-दिन कुछ सप्ताह तक, उसके बाद एक दिन छोड़कर तत्पश्चात् सप्ताह में एक बार दें।

नोट—यह बृहदान्त्र (Colon) के संचित मल (Accumulated faeces) की सफाई के लिए विशेष लाभकारी होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शूल
(Colic)

पर्याय (Synonyms)—उदरशूल, आमाशयिक शूल (Abdominal pain), पेट का दर्द, गैस्ट्राल्जिया, गैस्ट्रोडायनिया (Gastrodynia), पेन इन द स्टमक, तीव्र उदर (Acute abdomen)।

परिचय (Definition)—विभिन्न अन्तरांगों (Viscera) में तीव्र एवं उद्वेष्टक (Spasmodic) पीड़ा को शूल (Colic) कहते हैं।

इस रोग में पेट में रुक-रुक कर होने वाले मरोड़ से इतना तीव्र दर्द उठता है कि रोगी पेट को हाथ या तकिया आदि से दबाता है। दर्द के कारण रोगी करवटें बदलता है। उसकी अपान वायु रुक जाती है। कब्ज एवं जी मिचलाने के भी लक्षण मिलते हैं। इसमें प्रायः ज्वर नहीं रहता है।

शूल (Pain) की विशेषताएँ—

१. पीड़ा प्रायः प्रवेगी (Paroxysmal) होती है। इसमें कभी एकाएक तीव्र पीड़ा होती है और कभी रुक जाती है।

नोट—निरन्तर रहने वाली पीड़ा को शूल (Colic) के अन्तर्गत नहीं माना जाता है।

२. पीड़ा प्रायः ऐंठन युक्त होती है।

३. रोगी को ठंड की अनुभूति होती है।

४. तीव्रता के कारण वमन (Vomiting) भी होने लगता है।

५. भोजन के बाद आमाशय में नख से खरोंच डालने जैसी पीड़ा होती है।

६. खाये हुए पदार्थ वमन के द्वारा बाहर निकल जाते हैं, जिससे दर्द कुछ कम हो जाता है।

७. इसमें ज्वर प्रायः नहीं रहता है।

८. उदर की मांसपेशियों में कोई कठोरता नहीं होती, केवल दर्द के समय उनमें कुछ कठोरता उत्पन्न हो जाती है।

९. उदर को दबाने पर पीड़ा कुछ कम महसूस होती है। इसलिए रोगी दोनों टाँगों को मोड़कर पड़ा रहता है। परन्तु शीघ्र ही शूल का वेग उसे पुनः विचलित कर देता है और रोगी दर्द के कारण तड़पने लगता है।

१०. दर्द प्रायः एकाएक अत्यन्त तीव्र स्वरूप का होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. पीड़ा तथा बेचैनी से रोगी प्रायः दुहरा हो जाता है। इधर-उधर लुढ़कता हुआ ठंडा पसीना छोड़ता है।

१२. रोगी का चेहरा फीका (Pale) तथा व्याकुल (Anxious) होता है।

१३. गम्भीर अवस्था के रोगी में उसकी नाड़ी तीव्र गति से चलती हुई प्रतीत होती है। कभी-कभी यह नाड़ी-गति (Pulse rate) १०० तक हो जाती है।

१४. उदर पर कोई शारीरिक लक्षण नहीं मिलते हैं। पेट पर दबाव डालने से प्रायः दर्द कम हो जाता है।

कॉलिक के प्रकार (Types of colic)—

१. आन्त्रशूल (Intestinal colic)।
२. उण्डुकपुच्छ शूल (Appendicular colic)।
३. पित्ताश्मज शूल (Biliary colic)।
४. वृक्क शूल (Renal colic)।
५. गर्भाशय शूल (Uterine colic)।
६. डिम्बवाहिनी शूल (Fallopian colic)।

उपरोक्त सभी प्रकार के शूल अकस्मात् तीव्र शूल के रूप में प्रकट होते हैं, जो यह सूचित करते हैं कि रोगी के उदर में कोई अत्यन्त गम्भीर स्थिति उत्पन्न हो रही है, जिसके कारण उसका जीवन संकट में है। ऐसी परिस्थिति में उसका तात्कालिक उपचार अत्यन्त आवश्यक हो जाता है।

(१) आन्त्रशूल (Intestinal Colic)

इस प्रकार का शूल उदर के ऊपरी भाग तथा नाभि के चारों ओर होता है। इसमें उदर को दबाने तथा वायु के निकलने से रोगी को आराम मिलता है। इस प्रकार का शूल घटता-बढ़ता रहता है। यह एकाएक आरम्भ होता है और प्रायः वैसे ही एकाएक शान्त हो जाता है। अनेक कारणों से छोटी तथा बड़ी आँत में उद्वेष्टन उत्पन्न होकर इस प्रकार के शूल की उत्पत्ति होती है।

मुख्य कारण—

१. तीव्र अजीर्ण रोग (Acute Indigestion)।
२. वृहदान्त्रशोथ (Colitis)।
३. आँतों में कृमि की उपस्थिति (Worms infastation)।
४. पित्ताश्मरी (Gall stones) अथवा मलाश्मरी।
५. आन्त्रान्त्र-प्रवेश (Intussusception)।
६. वाल्वुलस (Volvulus)।
७. आशय-भ्रंश (Visceroptosis)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. विपुटीशोथ (Diverticulitis)।
९. हिर्शस्प्रंग रोग(Hirschsprung's disease)।
१०. लेड पायजनिंग (Lead poisoning)।
११. कार्सीनोमा (Carcinoma)।
१२. Due to distension and spasm of the bowel.
१३. Sometimes it is followed or accompanied by Diarrhoea and Vomiting as in Gestro-interites or by Constipation.

चिकित्सा (Treatment)—

१. स्थाई चिकित्सा के लिए मूल कारण को खोज कर उसे दूर करना आवश्यक है।

२. लाक्षणिक लाभ के लिए निम्न चिकित्सा आन्त्रशूल के लिए लाभकारी होती है—

(क) साधारण दर्द में—

℞ टेबलेट बेरालगन (Tab. Beralgan) (नि०–हैक्स्ट)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार।
अथवा—टेबलेट स्पैजमिण्डौन (Tab. Spasmindon) (इण्डोफार्मा)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ४ बार गर्म जल से प्रति ४ घण्टे पर।
अथवा—टेबलेट बेलाफोलीन (Tab. Bellafoline) (नि० सैण्डोज)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार गर्म जल से।
अथवा—टेबलेट स्पाज्मो-सिबाल्जिन (Spasmo-cibalgin)
(सीबा कं०)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार जल से।
अथवा—एण्ट्रेनिल या एण्ट्रेनिल डूप्लेक्स (नि० सीबा)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार।
बच्चों को ड्रॉप—१०-१५ बूंद दिन में ३ बार।

(ख) तीव्र स्वरूप के दर्द में—

℞ इन्जेक्शन बेरालगन (Inj. Beralgan) (नि० हेक्स्ट)
मात्रा—१-२ मिली० इण्ट्रामस्कुलर। अधिक तीव्रता में I/V दें।
अथवा—इन्जे० पैथीडीन (Inj. Pethidine)
मात्रा—१०० मि० ग्रा० मांसपेशीगत (I/M)।
अथवा—इन्जे० स्पैजमिण्डौन (Inj. Spasmindon) (इण्डोफार्मा)।
मात्रा—२ मिली० मांसपेशीगत आवश्यकतानुसार प्रति ४ घण्टे पर।
अथवा—मार्फीन एण्ड एट्रोपीन (वरोज वेल्कम)
मात्रा—½–१ मिली० S/C या I/M

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—इसे बार-बार प्रयोग न करें।

अथवा—इन्जे० नीओ ऑक्टीनम (Neo Octinum)
(बोहरिंगर-नाल)

मात्रा—½–१ मिली० मांसपेशीगत नित्य लगायें।

अथवा—इन्जे० बेलाफोलीन (Inj. Bellafoline) (सैण्डोज कं०)

मात्रा—०·५–१ मिली० S/C या I/M.

साथ ही—उपर्युक्त चिकित्सा के साथ-साथ आन्त्रशूल के रोगियों में निम्न कार्मीनेटिव मिक्श्चर भी दें—

℞ सोडा बाईकार्ब	०·६ ग्राम
टिं० कार्ड को	१ मिली०
टिं० बेलाडोना	०·६ मिली०
पिपरमेण्ट वाटर	३० मिली०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार।

नोट—तीव्र दर्द (Severe colic pain) की स्थिति में—इन्जे० वेरालगन दें। इसके असफल होने पर 'पेथीडीन' १०० मि० ग्रा० २ मिली० इण्ट्रामस्कुलर तत्काल लगायें।

निषेध—मार्फीन का प्रयोग न करें।

बच्चों के आन्त्रशूल (Intestinal colic) **में**—

℞ स्पैजमिण्डौन पीडियाट्रिक ड्राप (Spasmindon Ped drop)
(इण्डोफार्मा)

मात्रा—१ वर्ष की आयु तक—६-१२ बूंद दिन में ३ बार।
२ वर्ष से ३ वर्ष तक—१८ बूंद दिन में ३ बार।
३-६ वर्ष की आयु—२४ बूंद दिन में २ या ३ बार।

अथवा—बेरालगन ड्राप्स (Beralgan drops) (नि० हैक्स्ट)

मात्रा—स्पैजमिण्डौन पीडियाट्रिक ड्राप्स के अनुसार।

अथवा—ड्राप्स कालीमेक्स (Drops Colimex) (कार्टर वालेस)

मात्रा—शिशुओं में—½–१ मिली० दूध पिलाने के १५ मिनट पूर्व।

साथ ही—रबर की बोतल में पानी भर कर उदर की सेंकाई करें।

नोट—ड्राप्स कॉलीमेक्स १० मिली० के पैकिंग में आता है।

(२) उण्डुकपुच्छ शूल (Appendicular Colic)

इस प्रकार का शूल एकाएक नाभि-प्रदेश में प्रारम्भ होता है। साथ ही यह पीड़ा दक्षिण श्रोणिप्रदेश में पहुँच जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एपेण्डिकुलर शूल में निम्न लक्षण मिलते हैं—

१. तीव्र वेदना के साथ रोगी को मितली और कै आती है।

२. कम्पन होकर १०१ से १०२° फा० (३८.५–३९° सेण्टीग्रेट) तक ज्वर रहता है।

३. नाड़ी की गति १२० बार प्रति मिनट तक पहुँच जाती है।

४. रोगी अपना दाहिना पैर खींच कर रखता है। उसे इस पैर को सिकोड़ने तथा फैलाने में कष्ट होता है।

५. कष्ट के कारण रोगी हिलता-डुलता भी नहीं है।

६. यदि रोग प्रारम्भ हुए दो-तीन दिन व्यतीत हो चुके होते हैं तो 'एपेण्डिक्स' सूज कर बहुत मोटा हो जाता है। साथ ही टटोलने पर पिण्ड जैसा प्रतीत होता है।

७. शोथयुक्त अवयव के ऊपर उदर की भित्ति को दबाया जाय तो उस स्थान पर पीड़ा होती है।

८. उदर की उपास्थि-मांसपेशियों में कठोरता मिलती है। दाहिनी ओर के पेट और पट्टे ऐंठ कर सख्त हो जाते हैं।

९. रोगी को कब्ज रहता है अथवा किसी-किसी को दस्त आने लगते हैं।

१०. रक्त में श्वेतकणों की वृद्धि हो जाती है।

विशेष—एपेण्डिकुलर कॉलिक उग्र रूप धारण कर लेता है और कई घण्टों तक बना रहता है।

निरीक्षण (Inspection)—'पित्ताशय शोथ' या 'आमाशय के घाव' से इसका विभेद कर शूल का निश्चय करना चाहिए। यह दर्द सर्वदा होता रहता हैं तथा व्यायाम और परिश्रम से बढ़ जाता है। एक्स-रे तथा वेरियम के एनीमा से रोग की ८० फीसदी परीक्षा हो जाती है। कई बार ऐसी गर्भवती स्त्रियों में जिनकी डिम्बवाहिनी में ही गर्भ ठहर जाता है, उनमें प्रायः तीसरे या चौथे महीने में डिम्बवाहिनी के फट जाने से गर्भ उदर में आ जाता है। इस दशा के लक्षण भी एपेण्डिसाइटिस से मिलते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ एम्पीसिलीन २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल दिन में ४ बार ७ दिनों तक।

अथवा—क्रिस्टेलाइन पेनिसिलीन 'जी'

मात्रा—५० हजार यूनिट इण्ट्रामस्कुलर प्रति ३ घण्टे पर।

अथवा—कैपसूल टैरामाइसीन (फाइजर)

मात्रा—१ कैपसूल दिन में १ या २ बार।

साथ ही—टेबलेट बेरालान (Tab. Beralgan) (नि० हैक्स्ट)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार गर्म जल से।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा तीव्र प्रकार के शूल में (In acute severe pain)—

इन्जे० बेरालगन (Inj. Beralgan)

मात्रा—२ मिली० मांसपेशीगत अथवा I/V.

साथ ही—केलीजेसिक मलहम (Caligesic Oint.) (नि० मर्क शार्प)

दर्द के स्थान पर दिन में २-३ बार मलें।

आवश्यक निर्देश—लाभ न मिलने पर रोगी को किसी बड़े अस्पताल में भेज देना चाहिए, ताकि आवश्यकता पड़ने पर शल्यक्रिया द्वारा इस अंग को काटकर निकाला जा सके। क्योंकि आपरेशन न कराने पर शोथ में कमी आ जाने पर भी वह पुनः हो सकता है।

चेतावनी—एपेण्डिकुलर कॉलिक का संदेह होते ही रोगी को कोई भी दस्तावर औषधि नहीं देनी चाहिए।

(३) पित्ताश्मज शूल (Biliary Colic)

बिलियरी कॉलिक के अन्तर्गत अधिकांश रोगियों में चिरकारी पित्ताशय शोथ का इतिहास मिलता है।

जब अश्मरी सामान्य पित्तवाहिनी में पहुँच जाती है, तब निम्न प्रकार से शूल सम्बन्धी लक्षण उत्पन्न होते हैं—

१. रोगी में कुछ अन्तराल पर पित्ताश्मज शूल (Biliary colic) का आक्रमण होता रहता है।

२. शूल के समय रोगी में उत्क्लेश और वमन की उपस्थिति मिलती है। रोगी अत्यन्त बेचैन रहता है। कुछ समय पश्चात् शूल ठीक हो जाता है। पुनः आक्रमण के समय शूल फिर प्रकट होता है और रोगी में फिर से उत्क्लेश तथा वमन आदि लक्षण मिलने लगते हैं।

३. यदि अश्मरी सामान्य पित्तवाहिनी से निकल कर ड्यूडेनम में पहुँच जाती है, तब दक्षिण अधःपर्शुक-प्रदेश (Hypochondriac region) में तीव्र शूल होता है, जो कुछ समय के उपरान्त शान्त हो जाता है।

४. प्रायः दक्षिण अधःपर्शुक-प्रदेश में दाब वेदना मिलती है।

निदान (Diagnosis)—इसमें उत्पन्न उग्र स्वरूप का शूल एकाएक कौड़ी अथवा दक्षिण अधःपर्शुक-प्रदेश में प्रकट होता है। रोगी को वमन होता है और तीव्र वेदना के कारण रोगी को ठंडा पसीना आने लगता है।

इस पीड़ा की विशेषता है कि यह दक्षिण अंसफलक अथवा दक्षिण कन्धे की ओर जाती हुई प्रतीत होती है। कुछ समय पश्चात् पीड़ा एकाएक समाप्त हो जाती है। ऐसा उस समय होता है, जब अश्मरी सामान्य पित्तवाहिनी से निकल कर ग्रहणी में आ जाती है अथवा पुनः पित्ताशय में लौट जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा (Treatment)—

१. रोगी को पूर्ण विश्राम दें।

२. Ⓑ इन्जे० पैथीडीन (Inj. Pethidine)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० मांसपेशीगत। दूसरा इन्जे० ६ घण्टे बाद—यदि आवश्यक हो तो।

अथवा—इन्जे० बेरालगन (Inj Beralgan) (नि० हैक्स्ट)

मात्रा—१-५ मिली० रोग की तीव्रता के अनुसार I/M अथवा I/V दें।

नोट—३० मिली० वाली वायल की औषधि I/V मार्ग से नहीं देना चाहिए।

अथवा—इन्जे० स्पैजमिण्डौन (Inj. Spasmindon) (इण्डो फार्मा)

मात्रा—१-२ मिली० मांसपेशीगत आवश्यकतानुसार ४-४ घण्टे पर दिये जा सकते हैं।

अथवा—इन्जे० फोर्टविन (Inj. Fortwin)

मात्रा—३०-६० मि० ग्रा० इण्ट्रामस्कुलर एक बार में। इसे ३-४ घण्टे बाद पुनः दे सकते हैं।

३० मि० ग्रा० औषधि I/V मार्ग से भी दी जा सकती है। आवश्यकतानुसार ३-४ घण्टे पर पुनः दी जा सकती है।

३. टेबलेट बेरालगन (Tab. Beralgan) (नि० हैक्स्ट)

मात्रा—१ गोली दिन में ३-४ बार।

४. **संक्रमण पर नियंत्रण हेतु**—किसी ब्रॉडस्पेक्ट्रम एण्टीबायोटिक, यथा—'एम्पीसिलीन' दें।

५. **वमन की स्थिति में**—५% डेक्स्ट्रोज सैलाइन I/V ड्रिप द्वारा देना आवश्यक होता है।

६. विटामिन 'के' और कैल्शियम की उचित मात्रा देनी चाहिए।

७. रोगी को सुपाच्य तथा वसारहित भोजन की व्यवस्था करें।

नोट—शूल के उपरान्त ऑपरेशन द्वारा पित्तवाहिनी की अश्मरी (Stones) को निकाल देना ही रोग की मुक्ति का सर्वोत्तम उपाय है।

(४) वृक्क शूल (Renal Colic)

इस प्रकार का शूल निम्न स्थितियों में होता है—

१. जब पथरी वृक्क में होती है, तब रोगी की कमर में मीठा-मीठा दर्द होता है। परन्तु जब यह पथरी गुर्दे से निकलकर मूत्रप्रणाली (Ureter) में जाकर फँस जाती है, तब रोगी को तड़पा देने वाला दर्द होने लगता है। यह दर्द वृक्कों के स्थान से प्रारम्भ होकर पुरुषों में वृषणों (Testicles) और स्त्रियों में गुप्तांग तथा जाँघों तक पहुँच जाता है। थोड़ा भी हिलने अथवा चलने से शूल में अत्यधिक वृद्धि हो जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. इसमें रोगी को उत्क्लेश तथा वमन भी होता है।

३. रोगी का पूरा शरीर ठंडे पसीने से गीला हो जाता है।

४. शूल की तीव्रता के कारण हाथ-पैर ठण्डे हो जाते हैं।

५. रोगी को बार-बार मूत्र-त्याग की इच्छा होती है। परन्तु हर बार थोड़ा-सा मूत्र आता है। कभी-कभी मूत्र में रक्त की उपस्थित भी मिलती है।

६. शूल की अवधि कुछ घण्टों से लेकर कई घण्टों तक अथवा कुछ मिनटों तक रह सकती है। यदि अश्मरी (Stones) यूरेटर से निकल कर मूत्राशय में पहुँच जाती है तो शूल एकाएक शान्त हो जाता है और अश्मरी मूत्र के साथ निकल जाती है, जिससे रोगी को स्थाई रूप से आराम मिल जाता है। यदि इसके विपरीत अश्मरी खिसक कर वापिस वृक्क में पहुँच जाती है तो रोगी में शूल का पुनः आक्रमण हो सकता है।

निदान (Diagnosis)—

१. एक्स-रे में पथरी की उपस्थिति मिल सकती है।

२. दर्द की अधिकता से रोगी रोने लगता है तथा पेट को दबाता एवं मलता है।

३. यह दर्द प्रायः नाभि के आस-पास होता है।

चिकित्सा (Treatment)—

वृक्क शूल की चिकित्सा निम्नलिखित दो क्रमों में की जाती है—

(क) शूल के समय की चिकित्सा।

(ख) शूल के पश्चात् की चिकित्सा।

(क) शूल के समय की चिकित्सा—

१. रोगी को शय्या पर पूर्ण विश्राम दें।

२. पर्याप्त मात्रा में तरल पदार्थों का सेवन करायें।

३. ℞ इन्जे० पैथीडीन (Inj Pethidine) १०० मि० ग्रा०

इन्जे० एट्रोपीन सल्फेट (Inj Atropin sulphate) ०.६ मि० ग्रा०

दोनों को मिलाकर इण्ट्रामस्कुलर दें।

अथवा—इन्जे० मार्फीन १५ मि० ग्रा०

इन्जे० एण्ट्रोपीन सल्फेट ०.६ मि० ग्रा०

दोनों को मिलाकर मांसपेशीगत।

नोट—उपरोक्त इन्जेक्शनों के देने से आराम न मिलने पर पुनः एक घण्टे पश्चात् दूसरा इन्जेक्शन देना चाहिए।

टेबलेट बेरालगन (Tab. Beralgan) (नि० हैक्स्ट)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—टेबलेट स्पैजमिण्डौन (Tab. Spasmindon) (इण्डो फार्मा)

मात्रा—१ गोली दिन में ३-४ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—मेथाडोन हाइड्रोक्लोराइड

मात्रा—५ मि० ग्रा० की गोली दिन में ३-४ बार।

अथवा—पैथीडीन हाइड्रोक्लोराइड ५ मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३-४ बार।

आजकल बेलाफोलीन (Belafoline) (नि० सैण्डोज) के एक एम्पुल का S/C इन्जे० और 'क्लोरोप्रोमाजीन' २५–५० मि० ग्रा० का इञ्जे० मांसपेशी में लगाया जाता है, जिसके अच्छे परिणाम देखने में आये हैं।

अथवा—एवाफोर्टन (Avofortan) (नि० आस्टावर्क)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ४ बार।

साथ ही—इसी का इञ्जेक्शन. मांसपेशी में।

नोट—शूल की शान्ति के लिए 'बेराल्गन' इञ्जे० अथवा 'नीओ-ऑक्टीनम' इन्जे० अथवा मार्फीन तथा एट्रोपीन १-२ मिली० की मात्रा में भी दिया जा सकता है।

(ख) शूल के बाद की चिकित्सा—यदि अश्मरी (Stone) केवल एक ओर है और आकार में बड़ी नहीं है और जल-वृक्कता तथा पूय-वृक्कता की अवस्था उत्पन्न नहीं हुई है तो निम्न चिकित्सा करनी चाहिए—

१. रोगी को पर्याप्त मात्रा में तरल पदार्थ दें।

२. मूत्रल औषधियाँ—टेबलेट फ्रूसीमाइड आदि का उपयोग करें।

३. इञ्जे० डेप्रोपानेक्स (Inj. Depropanex)

मात्रा—२ मिली० मांसपेशीगत नित्य ५ दिनों तक।

नोट—यह ५ या १० मिली० के वायलों में आता है। आजकल इसका उपयोग अधिक हो रहा है। यह यूरेटर का उद्वेष्ट (Spasm) समाप्त कर अश्मरी को बाहर निकालने में सहयोग प्रदान करती है।

४. मूत्र की प्रतिक्रिया क्षारीय बनाये रखने के लिए—

अल्कासिट्रौन १ चम्मच दिन में ३ बार दें।

५. विटामिन 'ए' पर्याप्त मात्रा में प्रतिदिन दें।

शल्य-चिकित्सा—निम्न अवस्थाओं में रोगी को किसी बड़े अस्पताल में शल्य-चिकित्सा हेतु निर्दिष्ट कर देना चाहिए, यदि—

(i) उपरोक्त चिकित्सा के बाद भी अश्मरी यथास्थान पड़ी रहे।

(ii) जल-वृक्कता अथवा पूय-वृक्कता की सम्भावना हो।

(iii) अश्मरी (Stone) का आकार बड़ा हो।

(iv) दोनों वृक्कों में अश्मरी की उपस्थिति मिलने पर।

(v) अमूत्रता (Anuria) की सम्भावना में।

इन अवस्थाओं के मिलने पर रोगी को ऑपरेशन हेतु अविलम्ब अस्पताल भेज देना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाइलाइटिस (Pyelitis) की स्थिति में—पाइलाइटिस की चिकित्सा करें।

ऑपरेशन की आवश्यकता—१. स्टोन (Stone) के बड़े आकार (Large size) के होने पर।

2.Becomes impacted in the lower end of the ureter.

(५) गर्भाशय शूल (Uterine Colic)

इस प्रकार का शूल गर्भाशय में उद्वेष्ट (Spasm) उत्पन्न होने के कारण स्त्रियों में मिलता है। शूल प्रायः कमर से प्रारम्भ होकर दोनों जाँघों में जाता हुआ प्रतीत होता है। पेड़ू में भी पीड़ा की अनुभूति होती है। प्रायः इसमें मासिकधर्म बन्द रहता है। पेड़ू में बोझ तथा कमर, जाँघों और कूल्हों में दर्द रहता है।

इस प्रकार के शूल के निम्न कारण होते हैं—

१. कृच्छ्रार्तव (Dysmenorrhoea)।
२. प्रसव (Delivery)।
३. गर्भपात (Abortion)।
४. हाइडेटिडीफार्म मोल (Hydatidiform mole)।

चिकित्सा (Treatment)—इसकी कारण के अनुसार चिकित्सा की जाती है।

कृच्छ्रार्तव (डिस्मेनोरिया जन्य) शूल—

(i) ℞ टेबलेट कोडीन कम्पाउण्ड (Tab. Codine co.)
मात्रा—१-२ गोली दिन में २-३ बार।
अथवा—ब्राण्डी २ बड़े चम्मच गर्म जल में।
(ii) प्रोजेस्टेरोन (Progesteron)
मात्रा—५ मि० ग्रा० I/M मासिकधर्म आरम्भ होने के पूर्व।
अथवा—टेबलेट इयूमेनाल (Tab. Eumenal) (मर्क क०)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार मासिकधर्म के कुछ दिन पहले।
अथवा—ल्यूटोसाइक्लीन टेबलेट (Leutocycline tab.) (सीबा क०)
निओ-ऑक्टीनम (Neo. Octinum) (नि० नोल)
उक्त दोनों की १-१ गोली मिलाकर दिन में एक या दो बार, दर्द में आराम होने तक।

नोट—मासिकधर्म आने के पूर्व गर्भाशयशूल में उपयोगी।
साथ ही—बेरालगन (Beralgan) या 'बेलरगाल' (Bellergal) (नि० सैण्डोज)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ४ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मासिकधर्म के समय होने वाले तीव्र गर्भाशयशूल में—

℞ गाइनोव्लर २१ (Gynovlar–21) (नि० शैरिंग)

मात्रा—१-१ गोली मासिकधर्म आरम्भ होने के ५ वें दिन से जल के साथ २१ दिनों तक। इसके पश्चात् दूसरे और तीसरे महीने मासिकधर्म आरम्भ होने के १०वें दिन से इस कोर्स की पुनरावृत्ति करें।

साथ ही—न्यूरोट्रासेण्टिन (Neurotrasentin) (नि० सीबा)

मात्रा—१-२ गोली दिन में २ बार।

प्रसव के समय का गर्भाशय शूल (Uterine colic due to labour pain)—अधिकांश स्त्रियों में प्रसव के समय काफी दर्द तथा कष्ट होता है। प्रसव-पीड़ा पीठ की ओर से आरम्भ होकर धीरे-धीरे पेड़ू के चारों ओर फैल जाती है। इन दर्दों के प्रभाव से गर्भाशय में ठहर-ठहर कर सुकड़ाव की लहरें उठकर गर्भाशय का मुख खुलना आरम्भ हो जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—१. १ औंस कैस्टर ऑयल गर्म दूध में मिलाकर पिलायें।

२. वच्चेदानी का मुख दो अंगुल तक खुल जाने पर—

पैथीडीन हाइड्रोक्लोइड (Pethidine Hcl.)

मात्रा—५० मि० ग्रा० इण्ट्रामस्कुलर।

नोट—इससे प्रसव में सुविधा होती है।

अथवा—पिटोसिन (Pitocin) (नि० पार्क डेविस कं०)

मात्रा—½ मिली० का १ या २ इन्जेक्शन मांसपेशीगत।

साथ ही—३. टेबलेट कोम्प्राल (Tab. Compral) (नि० बायर)

मात्रा—१-२ गोली दिन में २-३ बार जल के साथ।

अथवा—कोडोपायरीन (नि० ग्लैक्सो)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

यदि स्त्री मोटी हो तो—'ओलिव ऑयल' की पीठ और उदर पर गर्म मालिश करने से बच्चा आसानी से पैदा हो जाता है और पीड़ा कम होती है।

अन्त में—फीनोबार्बीटोन ३० मि० ग्रा० की १ गोली तथा सेरिडोन १ गोली जल के साथ दिन में १ या २ बार दें।

प्रसव होने के बाद के दर्द में—

℞ सिबाल्जिन कम्पोजीटम (Cibalgin compositum) (सीबा कं०)

मात्रा—१-२ गोली दिन में १ या २ बार।

साथ ही—डोवर्स पाउडर ३०० मि० ग्रा० तथा एस्प्रीन ३०० मि० ग्रा० दिन में २ बार।

अथवा—एस्प्रीन २४० मि० ग्रा० तथा कैफीन १२० मि० ग्रा०।

मात्रा—ऐसी १ पुड़िया तत्काल सेवन करायें। दूसरी पुड़िया रात में।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गर्भपातजन्य कालिक में (Colic due to Abortion) —

℞ इन्जे० पैथीडीन (Inj. Pethidine)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० मांसपेशीगत ।

अथवा—इन्जे० डाइजीपाम (व्या० नाम) इन्जे० 'कम्पोज' ।

मात्रा—१ एम्पुल मांसपेशीगत अथवा I/V मार्ग से ।

शेष गर्भपात की चिकित्सा तथा 'हाइडेटिडीफार्म मोल' की चिकित्सा करें । इसकी चिकित्सा का वर्णन लेखक की पुस्तक 'सचित्र स्त्री रोग-चिकित्सा में विस्तारपूर्वक किया गया है ।

(६) डिम्बवाहिनी शूल (Fallopian Colic)

इस प्रकार का शूल केवल एक पार्श्व में डिम्बवाहिनी के ऊपर स्पष्ट सूजन और रोगिणी में आर्तव का इतिहास रोग के निदान में सहायक होता है ।

कारण (Causes)—कभी-कभी फर्टीलाइज्ड ओवम गर्भाशय में स्थापित होने के बजाय डिम्बवाहिनी में ही रुक जाता है और वह क्रमशः बढ़ने लगता है । इसका आकार जैसे-जैसे बढ़ता जाता है, डिम्बवाहिनी की पतली प्राचीरें फैलने लगती हैं और स्त्री को शूल की अनुभूति होने लगती है ।

चिकित्सा (Treatment)—इसकी चिकित्सा के लिए लेखक की पुस्तक 'सचित्र स्त्रीरोग-चिकित्सा' का अवलोकन करें ।

कॉलिक में प्रयुक्त कुछ उपयोगी प्रेस्किप्शन्स—

(i) ℞ वेरालगन (हैक्स्ट) १ गोली
इण्टेरोक्वीनल (ई० आई०) २ गोली
१ मात्रा

दोनों को पीसकर १ पुड़िया बना लें । ऐसी १ पुड़िया प्रति ६ घण्टे पर ।

(ii) ℞ बैलेरियन कम्पाउण्ड लिक्विड २ मिली०
स्प्रिट क्लोरोफार्म १ मिली०
स्प्रिट मार्फीन हाइड्रोक्लोर १५ मि० ग्रा०
एक्वा एनेसी कुल ३० मिली०
१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा पीड़ा के समय आवश्यकतानुसार ।

(iii) ℞ सोडा बाईकार्ब १२०० मि० ग्रा०
टिं० कार्ड को० १·२५ मिली०
नींबू का रस ५ मिली०
जल—कुल मिलाकर १२० मिली०
१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा तत्काल दें । लाभ न मिलने पर दूसरी मात्रा दे सकते हैं ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—यह सभी प्रकार के दर्द में लाभकारी है।

कॉलिक नाशक अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. मेफ्टाल-स्पाज-ब्लू-क्रॉस (Meftal-Spas-Blue-cross)
(नि० ब्लूक्रॉस)।

मात्रा—२ कैपसूल तत्काल। तत्पश्चात् १ कै० आवश्यकतानुसार।

विशेष—यह बिलियरी कॉलिक में लाभकारी है।

निषेध—एक्यूट पेप्टिक अलसर तथा गर्भावस्था में इसका प्रयोग न करें।

२. पाइपेन ड्राप्स (Pipen drops) (नि०—क्रोप्रान)

मात्रा—बालक—१-२ मिली० ३ बार भोजन से १५ मिनट पूर्व।

शिशु—½-१ मिली० भोजन से १५ मिनट पूर्व। २४ घण्टे में अधिक से अधिक ३ मिली०।

नोट—यह 'इन्फेण्ट्स कॉलिक' में उपयोगी है।

३. जेलूमिना-डी (Gelumina-D) (नि० सी० एफ० एल० फार्मा)

मात्रा—१-२ गोली भोजनोपरान्त चूसें अथवा निगलें।

निषेध—ग्लोकोमा के रोगी में इसका प्रयोग न करें।

४. पिप्टाल ड्राप्स (Piptal drops) पीडियाट्रिक (नि०-कीमो फार्मा)

मात्रा—शिशु ६ मास—६ बूँद दूध पिलाने से पूर्व।
½ मास से १ वर्ष तक—८-१० बूँद भोजन से पूर्व।
बालक—१ से ३ वर्ष तक—१६ बूँद।
५ वर्ष से ऊपर—१ मिली० दिन में ४ बार।

५. स्पालसिन (Spalcin) (नि० मार्टेल हेमर)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

विशेष—'रीनल कॉलिक' में विशेष उपयोगी।

६. स्पाज्मोलिसिन (Spasmolysin) (नि० स्टैण्डर्ड)

मात्रा—१ गोली प्रति ३-४ घण्टे पर।

विशेष—इण्टेस्टाइनल रीनल एवं बिलियरी कॉलिक में लाभकारी।

निषेध—ग्लोकोमा, प्रोस्टेटिक हाइपर-टॉफी तथा पाइलोरिक ऑब्स्ट्रक्शन में इसका सेवन न करें।

७. स्पाज्मो-प्रोक्सीवान (Spasmo-Proxyvan) (नि० बोकार्ड कं०)

मात्रा—१-२ कै० दिन में २-३ बार।

८. ट्राइडल (Tridal) (नि० कीमो-फार्मा)

मात्रा—१ गोली दिन में २-३ बार और रात में सोते समय।

९. बारडेज (Bardase) (नि० पी० डी०)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसका लिक्विड भी आता है—

मात्रा—१ चम्मच (५ मिली०) दिन में ३ बार।

१०. बेलाडीनल-इन (Belladenal-in) (नि० सैण्डोज)

मात्रा—१ गोली दिन में २-३ बार।

बालक—$\frac{1}{8}$-$\frac{1}{2}$ वयस्क की मात्रा।

बेलाडीनल-इन रिटार्ड (लॉंग एक्टिंग) भी आता है।

मात्रा—१-२ गोली प्रातः-सायं।

बालक—$\frac{1}{8}$-$\frac{1}{2}$ वयस्क की मात्रा।

नोट—गैस्ट्रो-इण्टेस्टाइनल स्पाज्म तथा रीनल कॉलिक में लाभकारी।

११. बुस्कोपान कम्पोजीटम (Buscopan Compositum) (जर्मन रेमेडीज़)

मात्रा—१-२ ड्रेगी दिन में ३ बार।

बुस्कोपान कम्पोजीटम इन्जेक्शन भी आता है—

मात्रा—१ एम्पुल I/V अथवा Intragluteal Inj.

नोट—रीनल एवं बिलियरी कॉलिक में लाभकारी।

१२. कोडोल्सिक (Codolsie) (F. D. C.)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार अथवा आवश्यकतानुसार।

नोट—'इण्टेस्टाइन कॉलिक', 'रीनल कॉलिक', 'बिलियरी कॉलिक' तथा 'स्पाज्मोडिक डिस्मेनोरिया' में लाभकारी।

१३. कॉलीमेक्स (Colimex) (नि० बालेसी)

मात्रा—बालक और वयस्क—१-२ मिली० दिन में ३ बार भोजन से १५ मिनट पूर्व।

शिशु—$\frac{1}{2}$-१ मिली० भोजन से १५ मिनट पूर्व।

अधिकतम मात्रा—४ मिली० २४ घण्टे में।

विशेष—गैस्ट्रो-इण्टेस्टाइनल स्पाज्म तथा शिशुओं के कॉलिक में लाभकारी।

निषेध—ग्लोकोमा के रोगी में इसका प्रयोग न करें।

१४. कोलीनोल (Colinol) (नि० नोल कं०)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार।

बालक—६-१२ वर्ष—$\frac{1}{2}$-१ गोली दिन में ३ बार।

विशेष—इण्टेस्टाइनल कॉलिक, बिलयरी कॉलिक, रीनल कॉलिक तथा डिस्मेनोरिया में लाभकारी।

१५. साइक्लोमिनोल (Cyclominol) (नि० नोल कं०)

मात्रा —वयस्क तथा बालक (२ वर्ष से ऊपर)—

१ गोली दिन में ३ बार भोजन से पूर्व या बाद में।

नोट—गैस्ट्रो-इण्टेस्टाइनल स्पाज्म में लाभकारी। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जठरशोथ/ आमाशयशोथ
(Gastritis)

पर्याय (Synonyms)—जठरार्ति, उदर-प्रदाह तथा आमाशय का प्रदाह ।

परिभाषा (Definition)—आमाशय की श्लैष्मिक झिल्ली के प्रदाह (शोथ) को गैस्ट्राइटिस (Gastritis) कहते हैं ।

प्रकार (Types)—यह सामान्य रूप से दो प्रकार का होता है—

(क) तीव्र आमाशय शोथ (Acute Gastritis) ।

(ख) चिरकारी आमाशय शोथ (Chronic Gastritis) ।

(क) एक्यूट गैस्ट्राइटिस (Acute Gastritis)

कारण (Causes)—१. केमिकल्स इरिटेण्ट (Chemicals irritant)—एस्प्रिन, सैलीसिलेट, बूटाजोलीडीन, एल्कोहल (मद्य-शराब), आयरन आदि ।

२. बैक्टीरियल इन्फेक्शन्स तथा टॉक्सिन्स (Bacterial infections and toxins)—जैसे–इण्टेरिक फीवर, वाइरल गैस्ट्रो-इण्टेराइटिस, इन्फ्लुएञ्जा, वाइरल हेपेटाइटिस, स्टेफिलोकोकल फूड-पायजनिंग, स्कार्लेट फीवर, न्यूमोनिया आदि ।

३. कोरोसिव (Corrosives)—एसिड, अल्कली (Acid & Alkali) आदि ।

४. अनूर्जता (Allergy) ।

शारीरिक लक्षण (Clinical Features)—१. तीव्र आक्रमण, एनोरेक्सिया, मितली एवं कै (Nausea & Vomiting), आमाशय में अत्यधिक जलन तथा दर्द होता है ।

२. श्लेष्मा और पित्त के साथ खाये हुए पदार्थ वमन में निकलते हैं । साथ ही रोगी को कोष्ठबद्धता भी रहती है ।

३. रोगी के उदर के ऊपरी भाग पर कष्ट की अनुभूति होती है ।

४. औषधि से उत्पन्न गैस्ट्राटटिस में—हीमेटिमेसिस और मेलीना (Melaena) एवं अनीमिया (खून की कमी) आदि लक्षण मिलते हैं ।

५. निर्जलीभवन (Dehydration), बुखार, एपिगैस्ट्रिक-प्रदेश में काफी कठोरता (Epigastric tenderness) की उपस्थिति अथवा उदर के ऊपरी भाग में कँपाने वाला दर्द (Cramp-like pain) होता है । अरुचि और एक समय छाती में जलन (Heart-burn) होती है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशिष्ट प्रकार के लक्षण—१. अरुचि (Anorexia) इसका एक प्रमुख लक्षण है।

२. Epigastric fullness and pressure तथा मितली और कै की उपस्थिति।

३. केमिकल इरीटेण्ट (Chemical irritant), जैसे—सेलीसिलेट तथा एल्कोहल में हीमोरेज (Haemorrhage) मिलता है।

४. इन्फेक्शन्स तथा टॉक्सिन्स में—डायरिया, कॉलिक (Colic), घबड़ाहट (Malaise), बुखार, कँपकँपी (Chills), सिरदर्द तथा मांसपेशी में कंपन (Muscles cramp) आदि सामान्य लक्षण मिलते हैं।

५. रोगी बेदम-सा (Prostrated) तथा निर्जलित (Dehydrated) होता है।

६. रोगी-परीक्षा में अधिजठर में स्पर्शासह्यता (Epigastric tenderness) मिलती है।

निदान (Diagnosis)—

१. रेडियोलाजी (Radiology)—एक्स-रे द्वारा इसका कोई महत्त्वपूर्ण निदान सम्भव नहीं हो पाता। फोल्डस (Folds) मोटे होते हैं अथवा कुछ केसिस में पूर्णतया अनुपस्थित मिलते हैं।

२. गैस्ट्रोस्कोपी परीक्षा (Gastroscopy Examination)—इसमें सूजन (Swelling) तथा अतिरक्तता (Hyperaemia) दिखलायी देती है।

३. गैस्ट्रिक एनालिसिस (Gastric analysis)—एसिड आउटपुट (Acid output) मिलता है।

नोट—वाइरल इन्फेक्शन्स में लेबोरेटरी जाँच में हलकी ल्यूकोसाइटोसिस (Mild Leukocytosis) तथा श्वेतकोशिकाल्पता (Leukopaenia) मिलती है।

चिकित्सा (Treatment)—

१. शय्या पर पूर्ण-विश्राम दें।

२. प्रमुख इन्फेक्शन्स की चिकित्सा करें।

३. जल तथा इलेक्ट्रोलाइट्स की कमी को दूर करे।

४. जब तक दर्द तथा मितली के तीव्र लक्षण शान्त न हो जायें, तब तक मुख से कुछ नहीं देना चाहिए। तत्पश्चात् स्वच्छ द्रव्य तथा हलका आहार दें।

५. शामक (Sedatives), फीनोथायाजीन, प्रशान्तक (Tranquilisers) अथवा निद्रावह (Opiates) औषधि का प्रयोग करें।

नोट—प्रायः १ से ७ दिनों में लक्षण समाप्त हो जाते हैं।

विशिष्ट चिकित्सा—

℞ टेबलेट रेगलान अथवा मेक्सीरोन (Tab. Reglan or Maxeron)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार भोजन से पूर्व।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही—म्यूकेन जैल (Mucaine gel)

मात्रा—२ चाय चम्मच दिन में ३ बार भोजन के बाद। एवं अक्षोभक मृदु आहार (Bland soft diet) २-३ दिनों तक दें।

१. यदि मितली हो तो (If nausea present)—

℞ टेबलेट स्टेमेटिल (Tab. Stemetil)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार भोजन से पूर्व।

अथवा—टेबलेट सीक्विल (Tab. Siquil)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार भोजन से पूर्व।

२. यदि तीव्र शूल हो तो (If acute pain)—

१. उदर के ऊपरी भाग पर सेंक करें।

२. बर्फ के ठंडे जल से जठर-धावन (Gastric lavage)।

३. ℞ म्यूकेन जैल (Meuken gel)

मात्रा—२ चम्मच दिन में ३ बार।

साथ ही—टेबलेट प्रोबेन्थीन (Tab. Probanthine)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—टेबलेट एण्ट्रीनिल डूप्लेक्स (Tab. Antrenyl Duplex)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—टेबलेट स्टेलाबिड (Tab. Stelabid)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—टेबलेट स्पेजरिल (Tab. Spasril)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

एवं—डूमासूल्स अथवा फोलीनेट 'बी'$_{१२}$ (Dumasules or folinate B_{12})।

मात्रा—१ गोली नास्ते के पश्चात्।

३. यदि संक्रमण की सम्भावना हो तो—

संक्रमण (Infection) की विशेष चिकित्सा 'एण्टीबायोटिक औषधियों' यथा—पेनिसिलीन, टेट्रासाइक्लीन तथा एम्पीसिलीन आदि से की जाये।

४. करोसिव पायजनिंग के लिए—

उसका एण्टीडोट (Antidote) दें।

नोट—गैस्ट्राइटिस की चिकित्सा में उसके कारण को खोजकर चिकित्सा करना विशेष महत्त्वपूर्ण होता है।

५. यदि गैस्ट्राइटिस का रोग आहार की खराबी से हो तो—

(i) ℞ मिल्क आफ मैगनेसिया (Milk of magnesia)

मात्रा—२ चम्मच १ ग्लास जल में दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ii) इण्डाजेशन की चिकित्सा (Treat. of Indigestion)—

℞ सोडियम बाईकार्बोनेट	०·६ ग्राम
स्प्रिट क्लोरोफार्म (Spt. Chloroform)	१ मिली०
टिं० बेलाडोना (Tr. Belladona)	०·६ मिली०
सिरप जिंजर (Syrup zinzer)	०·३ मिली०
पिपरमेण्ट वाटर (Piperment water)	३० मिली०
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजनोपरान्त।

एट्रॉफिक गैस्ट्राइटिस में (In Atrophic Gastritis)—

लिवर एक्स्ट्रेक्ट (Liver Extract)

मात्रा—२ मिली० मांसपेशीगत सप्ताह में २ बार।

आहार (Diet)—गैस्ट्राइटिस के रोगी का आहार हलका पौष्टिक तथा विटामिन 'बी'-कॉम्पलेक्स से युक्त होना चाहिए।

(ख) क्रॉनिक गैस्ट्राइटिस (Chronic Gastritis)

पर्याय—इसे चिरकारी आमाशय-प्रदाह भी कहते हैं।

परिभाषा (Definition)—Chronic gastritis is a common form of chronic dyspepsia. It was formerly called atonic or nervous dyspepsia.

कारण (Causes)—१. यह आमाशय के चिरकारी प्रदाह (Chronic irritation of stomach) के कारण विशेषकर तम्बाकू, मद्य, गर्म पेय आदि से उत्पन्न होता है।

२. क्रॉनिक गैस्ट्राइटिस 'परनीसियस अनीमिया', 'गैस्ट्रिक अलसर', 'कार्सिनोमा' 'गैस्ट्रेक्टोमी' 'गैस्ट्रोजेजूनोस्टोमी', घाव आदि से भी सम्बन्धित होता है। अर्थात् इन रोगों में मिल सकता है।

शारीरिक चिह्न (Clinical features)—१. यह रोग शनैः शनैः होता है।

२. युवावस्था तथा मध्यम आयु में विशेषकर होता है।

३. एनोरेक्सिया, मितली, कै आदि विशेषरूप से प्रातःकाल मिलते हैं।

४. रोगी उदर के ऊपरी भाग पर तकलीफ महसूस करता है।

५. कभी-कभी रोगी को अधिक दस्त भी आते हैं।

६. कभी-कभी रक्तस्राव के लक्षण भी मिलते हैं।

७. भूख में पूर्वापेक्षा कमी होती जाती है।

८. मुख का स्वाद खराब हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. छाती में जलन (Heart burn), मितली तथा कभी-कभी वमन भी होता है।

१०. सिरदर्द, डिप्रेशन, नींद न आना, थकावट एवं अन्य हृदय सम्बन्धी लक्षण मिलते हैं।

११. भोजन के बाद मुख का सूखना, दिल का धड़कना (Palpitation), श्वास-कष्ट (Dyspnoea) के लक्षण मिलते हैं।

१२. कभी-कभी मुँहासे तथा आर्टीकेरिया की उपस्थित भी मिलती है।

अवस्थाएँ (Stages)—ऐसे रोगी की प्रायः तीन अवस्थाएँ होती हैं—

(१) **प्रथमावस्था** (First stage)—इसे सामान्य रक्ताधिक्य (Simple cogestion) की अवस्था भी कहते हैं। इसमें 'हाइड्रोक्लोरिक एसिड' का अभाव रहता है।

(२) **द्वितीयावस्था** (Second stage)—इसे श्लेष्मा प्रतिश्याय (Mucous catarrh) की अवस्था भी कहते हैं। इस अवस्था में श्लेष्मा का अधिक स्राव होता है। साथ ही हाइड्रोक्लोरिक एसिड का पूर्णतया अभाव हो जाता है।

(३) **तृतीयावस्था** (Third stage)—इस अवस्था के अन्तर्गत श्लेष्मलकला का शोष (Atrophy of the mucous membrane) हो जाता है। हाइड्रोक्लोरिक एसिड, पेप्सिन एवं म्यूकस का अधिक ह्रास हो जाता है। अथवा ये इस समय में अनुपस्थित रहते हैं।

आयरन डिफीसिएन्सी (Hypochromic) एवं न्यूट्रीशनल अनीमिया एवं एडीसोनियन (Addisonian) अथवा अन्य माइक्रोसाइटिक अनीमिया इस अवस्था से सम्बन्धित रहते हैं। एक वर्ष बाद मेलेग्नेण्ट डिजीज अपना स्थान ले लेती है।

निदान (Diagnosis)—**१. एक्स-रे परीक्षा में**—१. म्यूकोजल फोल्ड्स मोटे दिखलाई देते हैं।

२. आमाशय टयुवलर (Tubular stomach) आकृति में होता है।

३. **डिस्टेमाइन टेस्ट**—इसके लिए 'गैस्ट्रिक एसिड सेक्रेशन' लेकर परीक्षा करें। इसके प्रत्येक सेम्पुल में 'म्यूकस' की उपस्थिति मिलती है।

चिकित्सा (Treatment)—१. तीव्र शूल (Acute pain) की अवस्था में रोगी को शय्या पर पूर्ण विश्राम दें।

२. आमाशय को गर्म

३. जलन पैदा करने वाले आहार तथा पेय का सेवन करना बन्द कर दें। विशेषकर मद्य, तम्बाकू, स्वाइसिप एवं गर्म पेय तथा आहार।

४. दाँत, टॉन्सिल्स, मसूड़ों तथा श्वसन-संस्थान के ऊपरी भाग के सेप्टिक फोसाई (Septic foci) का निराकरण (Eradication) करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. प्रशामक (Tranquilisers) का प्रयोग करें।

६. एक्लोरहाइड्रिया (Achlorhydria) के लिए—

डायलूट हाइड्रोक्लोरिक एसिड (Dil. Hcl.)।

मात्रा—१-२ बड़ा चम्मच फलों के रस में भोजन के साथ पी जाना चाहिए।

नोट—निम्न औषधियाँ विशेषरूप से सैलीसिलेट, स्टेराइड्स, फेनिल बूटाजोन, इण्डोमेथासीन, रिसरपीन आदि का सेवन न करें।

७. दर्द के लिए (For pain)—लिग्नोकेन (Lignocaine) १० मि० ग्रा० + एल्यूमिनियम हाइड्रोक्साइड—१ चाय चम्मच दोनों को मिलाकर दिन में ३ बार लें।

८. रक्तस्राव के लिए—बर्फ का प्रयोग तथा अन्य रक्तस्राव निरोधी औषधियों का सेवन।

गैस्ट्राइटिस की मिश्रित औषधि चिकित्सा—

℞	टेबलेट सल्फाडायजीन	१ गोली
	टेबलेट सिबाजोल	१ गोली
	टे० विटामिन सी	५०० मि० ग्रा० की १ गोली
	सोडाबाईकार्ब	३०० मि० ग्रा०
		१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।

गैस्ट्राइटिस में लाभकारी अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. अल्माकार्ब (Almacarb) (ग्लैक्सो)

मात्रा—२ गोली दिन में ४ बार अथवा आवश्यकतानुसार खाली पेट।

२. एलूसिनोल सस्पेन्शन (Alucinol susp.) (फ्रेन्को-इण्डिया)

मात्रा—५-१० मिली० (१-२ चाय चम्मच) दिन में ३-४ बार भोजनोपरान्त।

३. एनीटाल (Anital) (नि० रोवाफार्म)

मात्रा—१-२ गोली भोजन के ½ से १ घण्टे पश्चात् चबायें।

४. अल्ट्रासिल (Ultracil) (नि० ब्लू क्रॉस)

मात्रा—१ गोली भोजनोपरान्त अथवा जब लक्षण बढ़े हों, चूसें।

इसका Ultracid लिक्विड भी आता है—

मात्रा—१ चम्मच भोजनोपरान्त अथवा जब लक्षण बढ़े हों।

५. एण्ट्रीनिल (Antrenyl) (हिन्दुस्तान सिवा-गाइगी)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ४ बार।

एण्ट्रीनिल डूप्लेक्स (Antrenyl Duplex) भी आता है—

मात्रा—१-२ गोली प्रातः-सायं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. सिक्लोमीनोल (Cyclominol) (नि० नोल)

मात्रा—वयस्क और २ वर्ष की आयु के बालक—१ गोली दिन में ३ बार भोजन के पूर्व अथवा बाद में।

७. इमेक्सोल (Emaxol) (नि० एम० एम० लैबोरेटरीज)

मात्रा—वयस्क—१० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

इसका इमेक्सोल इन्जेक्शन (Emaxol Inj.) भी आता है—

मात्रा—१० मि० ग्रा० दिन में २-३ बार अथवा आवश्यकतानुसार।

नोट—यह २ मिली० और १५ मिली० के वीयल में आता है।

८. एपीडोसिन (Epidosin) (नि० टी० टी० के० फार्मा)

मात्रा—१ मिली० गहरे मांसपेशी में।

इपीडोसिन ड्रेगीज (Epidosin dragees) भी आती है—

मात्रा—१-२ ड्रेगीज दिन में ३ बार अथवा आवश्यकतानुसार।

नोट—जब दर्द गैस्ट्राइटिस से सम्बन्धित होता है, तब यह विशेष लाभकारी होता है।

९. गैस्ट्राबिड-१ (Gastrabid-1) (नि० टोरेण्ट)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

नोट—जब रोगी गम्भीर रूप से पीड़ित हो तब 'गैस्टाविड-२' का प्रयोग करें।

निषेधात्मक निर्देश—कार्डियो-वेस्कुलर डिजीज तथा १२ वर्ष से नीचे की आयु वाले बालकों में प्रयोग न करें।

१०. मेक्सेरोन (Maxeron) (नि० वैलेसी)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार भोजन से पूर्व।

इसका मेक्सेरोन लिक्विड (Maxeron liquid) भी आता है—

मात्रा—वयस्क—१० मिली० दिन में ३ बार भोजन से पूर्व।

बालक—(५-१४ वर्ष) २·५ से ५ मिली० दिन में ३ बार भोजन से पूर्व।

११. म्यूकेन (Mucaine) (वीथ कं०)

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ४ बार भोजन के पूर्व तथा सोते समय।

१२. पेरीनार्म (Perinorm) (इपका)

मात्रा—१ गोली (१० मि० ग्रा०) दिन में ३ बार।

पेरीनॉर्म इन्जे० (Perinorm Inj.) तथा इसका एक अन्य योग पेरीनॉर्म लिक्विड (Perinorm liquid) भी आता है।

मात्रा—०·५-१ मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर भार पर।

निषेध—ब्रेस्ट कैन्सर तथा इपीलेप्सी में इसका प्रयोग न करें।

१३. प्रोबेंन्थीन (Probanthine (नि० Searie)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१-२ गोली दिन में २-३ बार।

निषेध—ग्लोकोमा तथा 'इण्टेस्टाइनल एटोनी' में प्रयोग न करें।

१४. रेग्लान (Reglan) (नि० सी० एफ० एल० फार्मा)

मात्रा—वयस्क—१० मि० ग्रा०

१५-२० वर्ष ५-१० मि० ग्रा०

५-१४ वर्ष के बालक २·५–५ मि० ग्रा०

इसका रेग्लान इंजेक्शन भी आता है—

मात्रा—वयस्क—१० मि० ग्रा० I/M १-३ बार नित्य। अथवा १० मि० ग्रा० I/V।

बालक—५ वर्ष तक १-२ मि० ग्रा० I/M नित्य।

रेग्लान सिरप (Reglan syrup) भी आता है—

मात्रा—बालक—१ वर्ष की आयु→०·३ मिली० दिन में २ बार।

१-३ वर्ष →०·३ मिली० २-३ बार नित्य।

३-६ वर्ष →०·६ मिली० दिन में ३ बार।

६-१२ वर्ष →½-१ चम्मच दिन में ३ बार।

१५. सेरीवेन्थीन (Sere-Banthine) (नि० Searie)

मात्रा—१ कै० दिन में २-३ बार।

निषेध—ग्लोकोमा, इण्टेस्टाइनल एटोनी तथा गर्भवती स्त्री में इसका प्रयोग वर्जित है।

१६. स्पेजरिल (Spasril) (नि० मोण्टेरी)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार।

निषेध—ग्लोकोमा तथा प्रोस्टेट ग्रन्थि-वृद्धि के रोगी में इसका प्रयोग निषेध है।

१७. स्टेलाबिड (Stelabid) (नि० Eskayef)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

'स्टेलाबिड-२' भी आता है।

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

निषेध—ग्लोकोमा, पायलोरिक स्टेनोसिस, प्रोस्टेटिक हाइपरट्राफी में इसका प्रयोग निषेध है।

अन्य—उपरोक्त के अतिरिक्त इस रोग में निम्न औषधियों का भी प्रयोग किया जा सकता है। टेबलेट सिण्ट्रोजेल, टे० अल्ट्राकार्बन, सिव्वेला टेबलेट, एण्टेरोबायोफार्म, कैपसूल मिस्टेक्लीन बी, केरीकेपेप्ट्रोल (O. R. C. L.), डाइसोजेल टेबलेट (Disogel tab.) एवं डाइसोजेल लिक्विड, जेलूमिना एम. एच. (Gelumina MH) (नि० CFL Pharma), जेलूसिल टेबलेट

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(नि० वार्नर), न्यूट्राडोना टेबलेट, न्यूट्राडोना पाउडर (नि० निकोलस), ऑर्विट्स जैल, साइलोक्सोजेन (Siloxogene) (नि० Searie)।

नोट—'साइलोक्सोजेन' क्रॉनिक गैस्ट्राइटिस में विशेष लाभकारी है।

सेविल्स सिस्टम आफ मेडिसिन के अनुसार गैस्ट्राइटिस की चिकित्सा—

१. कारण को दूर करें।

२. भोजन चबाने की गलत आदत में सुधार करें।

३. नाक के स्राव (Catarrh of the nose) अथवा टॉन्सिल्स के इन्फेक्शन की चिकित्सा करें।

४. एल्कोहल (मद्य) तथा तम्बाकू का पूर्ण निषेध।

५. **स्थानीय चिकित्सा** (Local treatment)—जठर-धावन (Gastric lavage) पानी के साथ अथवा सोडाबाईकार्ब (gr. 60 to Ōi) हाइड्रोजन परऑक्साइड (m 30 to Ōi) का प्रयोग।

६. Achylia में—डायलूट हाइड्रोक्लोरिक एसिड m 60 सन्तरे के रस में मिलाकर भोजन के साथ पीना।

७. विटामिन 'बी' का (ह्वीट जर्म अथवा मारमिट अथवा उपयुक्त इञ्जेक्शन के रूप में) प्रयोग।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

१. दर्द के लिए—विस्मथ अथवा मैगनेशियम कार्बोनेट, डायलूट हाइड्रोसाइनिक एसिड।

२. फर्मेण्टेशन के लिए—सोडियम फीनोल सल्फोनेट (B. P. C.) + एल्कलीज भोजन के २ या ३ घण्टे बाद।

३. म्यूकस वोमिटिंग में—नास्ते से पूर्व Hot water draughts + Alkalies।

४. अफारा के लिए (For Flatulance)—सोडियम बाई कार्बोनेट २० ग्रेन + टिं० जिंजर m 20 एक कप गर्म जल में।

नोट—कुछ केसिस में पेप्सिन, लेक्टोपेप्टीन, टाकाडायस्टेज अथवा अन्य कृत्रिम डाइजेस्टिव (Artificial digestives) लाभकारी होते हैं।

सामान्य प्रबन्ध—१. सामान्य स्वास्थ्य की ओर ध्यान रखें।

२. आरम्भ में व्यायाम, भोजन तथा अनिद्रा की चिकित्सा की ओर विशेष ध्यान रखा जाये।

३. एब्डॉमिनल व्यायाम (Abdominal exercises) मांसपेशियों की टोन (Tone) को बढ़ाता है।

४. नर्वस केसिस में भोजन के पूर्व और बाद में विश्राम आवश्यक है।

५. एसिड गैस्ट्राइटिस में ओलिव आयल m 60 भोजन से पूर्व।

अथवा—'एट्रोपीन' $\frac{1}{150}$ ग्रेन दें। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेचिस
(Dysentery)

पर्याय—पेचिस, आमातिसार, प्रवाहिका।

परिभाषा (Definition)—श्लेष्मा, पूय तथा रक्तमिश्रित मल का बार-बार होना डिसेण्ट्री कहलाता है। मल त्याग के समय रोगी के उदर में ऐंठन युक्त पीड़ा होती है।

प्रकार (Kinds)—डिसेण्ट्री दो प्रकार की होती है—

१. तीव्र बेसिलरी डिसेण्ट्री (Acute bacillary dysentery)

२. अमीबी डिसेण्ट्री (Amoebic dysentery)

तीव्र बेसिलरी डिसेण्ट्री, दण्डाणु अतिसार
(Acute Bacillary Dysentery)

पर्याय—संक्रामक प्रवाहिका, सिगेलोसिस (Shigellosis), दण्डाणवीय प्रवाहिका कीटाणु जन्य पेचिस।

परिभाषा (Definition)—विशिष्ट प्रकार के सिगेला (Shigella) जाति के जीवाणुओं के उपसर्ग से प्रवाहित तीव्र ज्वर एवं तीव्र विषमयता, बृहदन्त्रशोथ आदि के साथ उत्पन्न होनेवाला तीव्र स्वरूप का संक्रामक ज्वर है, जिसमें अत्यधिक संख्या में पतले रक्त-मिश्रित मल के साथ अतिसार का कष्ट मुख्य रूप से होता है।

कारण (Causes)—यह सिगेला (Shigella) जाति के विशेष जीवाणुओं के द्वारा उत्पन्न होती है। यह मुख्य रूप से ४ श्रेणी के होते हैं। हमादे देश में प्रायः बी० शिगा (B. Shiga) दण्डाणु का ही संक्रमण मिलता है। यह एक प्रबल प्रवाहिका जनक जीवाणु है।

संक्रमण (Infection)—रोगी के मल के साथ बहुत बड़ी मात्रा में यह जीवाणु बाहर निकलते हैं। कई रोगियों में अच्छे हो जाने पर भी कई महीने तक उनके मल के साथ बाहर आते रहते हैं। यह किसी जलाशय के जल में महीनों तक जीवित रहते हैं। वहाँ से यह जीवाणु दूसरे के भोजन में प्रवेश कर उन्हें रोगी बना देते हैं।

गर्मी तथा वर्षा ऋतु में जहाँ लोग बड़ी संख्या में एकत्रित होते हैं, यथा—मेलों में, तीर्थयात्रा में तथा कैम्पों की भीड़ में मल से निकले जीवाणुओं के भोजन तथा जल में संक्रमण कर जाने से रोग-ग्रसित होते हैं। मक्खियों

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा लक्षण युक्त रोगियों के हाथों तथा बर्तनों से भी इस रोग का प्रसार होता है।

संक्रमित होने वाले व्यक्ति—यह रोग स्त्री तथा पुरुष दोनों में समान रूप से होता है। वैसे तो यह रोग किसी भी आयु के व्यक्ति में हो सकता है। फिर भी इसके जीवाणु का आक्रमण बच्चों, कमजोर व्यक्तियों तथा उदर विकार से पीड़ित व्यक्तियों में अधिक होता है।

विकृति विज्ञान (Pathology)—शिगेला जीवाणु खाद्यपदार्थों के माध्यम से हमारे शरीर में पहुँचकर बृहदन्त्र (Large intestine) को अपना निवास स्थान बनाते हैं। जिससे वृहदन्त्र की श्लेष्मकला शोथयुक्त हो जाती है और वहाँ पर बड़े-बड़े व्रण बन जाते हैं। इन व्रणों के ऊपर की श्लेष्मकला में परिगलन (Necrosis) उत्पन्न हो जाती है। यह परिगलित श्लेष्मकला (Necrolised mucous membrane) ही मल के साथ निकलती है। आन्त्र में जो व्रण बन जाते हैं, उनसे ही रक्तस्राव होता है।

इन्क्यूबेशन पीरियड (Incubation period)—सामान्य रूप से २४ से २८ घण्टे।

लक्षण एवं चिह्न (Symptoms and signs)—१. रोग का आक्रमण एकाएक (Onset is acute) होता है।

२. ज्वर के साथ उदर में तीव्र शूल की उपस्थिति मिलती है।

३. दिन भर में २० से ३० बार तक मल की प्रवृत्ति होती है। मल में प्रायः रक्त मिला हुआ होता है और कभी-कभी मलत्याग के समय केवल रक्त ही उत्सर्गित होता है।

४. रोगी को हर समय मलत्याग की इच्छा बनी रहती है। प्रत्येक मलत्याग के समय बृहदन्त्र के प्रदेश में ऐंठन युक्त पीड़ा (Tenesmus) होती है।

५. रोगी को दिन में अनेक बार मलत्याग के लिए जाना पड़ता है और उसमें हर बार रक्त, पूय और श्लेष्मा (Mucous) होता है।

६. दस्तों की संख्या प्रत्येक रोगी में रोग की उग्रता के अनुसार ८ या १० से लेकर १०० या इससे भी अधिक प्रतिदिन होती है।

७. उदर-पीड़ा, अत्यधिक मरोड़ तथा बार-बार मलत्याग की प्रवृत्ति से रोगी अत्यधिक बेचैन रहता है।

८. प्रारम्भ में रोगी को १०० से १०२ डि० फा० टेम्परेचर रहता है। जो रोगी की उग्रता के अनुसार बढ़ भी जाता है।

९. नाड़ी की गति चंचल रहती है।

१०. अतिसार के कष्ट के कारण जलाल्पता (Dehydration) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। साथ ही साथ सोडियम क्लोराइड तथा अन्य इलेक्ट्रो-

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाइट्स की भी कमी आ जाती है। जिसके कारण स्तब्धता के अनेक लक्षण विशेषकर रक्तचाप-न्यूनता, अवसामान्य तापक्रम (Subnormal temperature), अन्दर को धसी आँखें, अत्यधिक प्यास, जीभ का सूखापन, हृल्लास (मितली), वमन आदि लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

११. दस्तों की संख्या अधिक होने से रोगी अत्यधिक कमजोर हो जाता है।

१२. विषमयता के कारण सिरदर्द, अत्यधिक अवसाद, कमर में दर्द, क्षुधानाश आदि लक्षण भी उत्पन्न हो जाते हैं।

१३. रोग के बढ़ने पर तापक्रम बढ़ जाता है। परन्तु निर्जलीभवन के कारण जब स्तब्धता प्रारम्भ हो जाती है तब तापक्रम गिर कर अवसामान्य (Subnormal) हो जाता है।

१४. अल्पमूत्रता (Oliguria) और अमूत्रता (Anuria) की उत्पत्ति रोग के उग्र होने पर क्रमशः बढ़ जाती है। इसका कारण निर्जलीभवन ही होता है।

१५. समस्त उदर में दाबवेदना (Tenderness) पायी जाती है। श्रोणि बृहदन्त्र का क्षेत्र दाबवेदना से मुक्त रहता है।

१६. घातक अवस्था में निपात (Collapse) होकर रोगी की शीघ्र मृत्यु हो जाती है।

रोग का स्वरूप—

(१) अत्यधिक तीव्र आक्रमण (Fulminating attacks)—

१. रोग का तीव्र आक्रमण होने पर कंप के साथ तीव्र ज्वर, गम्भीर स्वरूप की विषमयता एवं पेरीफेरल फेल्योर के लक्षण उत्पन्न होते हैं।

२. इस प्रकार के लक्षण बालकों तथा दुर्बल व्यक्तियों में अधिक मिलते हैं। इसमें अधिकांश रूप से रोग का निर्णय होने से पूर्व ही रोगी की मृत्यु हो जाती है।

३. बड़ी आँत में गैंग्रीन होने से मल के साथ अन्य कोषाएँ अधिक निकलती हैं।

४. मल अत्यधिक दुर्गन्ध वाला तथा रक्त की अधिकता से श्यामवर्ण का होता है, जो बाद में श्लेष्मा तथा रक्तमिश्रित और अन्त में हरे रंग के पानी की तरह होता है।

५. जीभ सूखी तथा मल से ढकी होती है।

६. निपात के कारण सारा शरीर ठंडे पसीने से युक्त होता है।

७. नाड़ी क्षीण तथा तीव्र गति वाली होती है।

८. उदर में तीव्र वेदना के कारण रोगी पैरों को मोड़ कर नाभि के पास हाथ का सहारा देकर रखता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) हैजे के समान आक्रमण (Choleric attack)—

१. तीव्र संक्रमण के समय इसके लक्षण हैजे के समान होते हैं।

२. इसका प्रकोप ग्रीष्म तथा वर्षा ऋतु में एपीडेमिक रूप में होता है।

(३) तीव्र प्रवाहिका के समान (Acute dysentery)—

१. इसका आक्रमण तीव्र ज्वर, कँपकँपी, सिरदर्द, कमरदर्द, सर्वांग वेदना के साथ होता है।

२. इसमें प्रधानरूप से मितली, वमन, अधिक प्यास तथा बेचैनी आदि लक्षण मिलते हैं।

३. उदर में पीड़ा, गुड़गुड़ाहट एवं ऐंठन के साथ निरन्तर मल की प्रवृत्ति होती है।

४. प्रारम्भ में मल अधिक तथा रक्त की मात्रा कम होती है। बाद में रक्त मिश्रित श्लेष्मा निकलता है और २-३ घण्टे पश्चात् केवल रक्त ही आता है।

५. मल के बराबर आने के कारण गुदा शोथ एवं वेदना युक्त हो जाती है।

६. मल आने के समय अत्यधिक कुंथन होने के कारण कभी-कभी प्रोलेप्स का उपद्रव मुख्यरूप से मिलता है।

७. मल के साथ जल तथा रक्त अधिक निकलते रहने के कारण निर्जलीभवन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

८. इसमें नाड़ी अत्यधिक क्षीण, मलावृत जिह्वा, गम्भीर वेदना, तीव्र वेदना क्षमता आदि लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

९. विषमयता के कारण १०२–१०५° फा० तक तीव्र ज्वर, अनिद्रा, बेचैनी, प्रलाप तथा हृदय-दुर्बलता के लक्षण पैदा हो जाते हैं।

१०. यह अवस्था ८-१० दिनों तक रहती है। इसके पश्चात् लक्षणों में शनैः-शनैः कमी आने लगती है।

११. ज्वर एवं प्यास की अधिकता में कमी तथा जिह्वा की स्वच्छता उत्पन्न होने पर व्याधि के उपशम का अनुमान हो जाता है।

(४) सामान्य प्रकार (Mild type)—इस प्रकार में पेट में हल्की पीड़ा एवं मरोड़ के साथ दिन में ८ से १० बार श्लेष्मा के साथ मिश्रित दस्त की प्रवृत्ति होती है। अन्य लक्षणों का अभाव रहता है।

(५) जीर्ण प्रकार (Chronic type)—कोष्ठबद्धता (Constipation) तथा प्रवाहिका के लक्षण बीच-बीच में उत्पन्न होते रहते हैं। वेग के समय रक्त तथा श्लेष्मा निकलता है। अनेक बार रोगी अत्यधिक दुर्बल तथा क्षीण हो जाता है। अत्यधिक रक्तक्षय के कारण पाण्डुता तथा सर्वांग शोथ के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसकी उचित चिकित्सा न करने पर न्यूमोनिया, इन्फ्लूएञ्जा आदि संक्रमण विकारों के कारण रोगी की मृत्यु हो जाती है।

निदान (Diagnosis)—वर्षा तथा वसन्त ऋतु में रोग का सहसा आक्रमण, एक ही परिवार के कई सदस्यों का एक साथ बीमार होने का इतिहास, एपिडेमिक रूप में रोग का प्रसार, ज्वर के साथ मरोड़ युक्त श्लेष्मा तथा रक्तमिश्रित मल का उत्सर्ग, निर्जलीभवन तथा विषमयता के लक्षण, रक्त-परीक्षा में पोलीमार्फ्स, श्वेत कयाणुओं की वृद्धि आदि विशिष्ट लक्षणों से रोग का निदान हो जाता है।

लेबोरेटरी परीक्षा (Laboratory test)—(१) **रक्तपरीक्षा** (Blood test)—१. श्वेत कोशिकाओं की अधिकता (Leucocystosis) की उपस्थिति मिलती है।

२. पोलीमार्फ्स में वृद्धि विशेषरूप से मिलती है।

(२) **मूत्र-परीक्षा** (Urine test)—मूत्र मात्रा में कम होता है। एल्बूमीनूरिया (Albuminuria) भी मिल सकती है।

(३) **मल-परीक्षा** (Stool test)—मल में रक्त तथा श्लेष्मा उपस्थित मिलता है। रोग की उग्रावस्था में केवल रक्त और श्लेष्मा ही मिलता है। मल की प्रतिक्रिया क्षारीय होती है। माइक्रोस्कोपिक परीक्षा में R. B. C. तथा Pus cells दिखलाई देते हैं। मल का कल्चर करने पर विशिष्ट जीवाणुओं की वृद्धि मिलती है।

सापेक्ष निदान (Differential Diagnosis)—जैसा कि पूर्व में डिसेण्ट्री के दो प्रकार बतलाये गये हैं—१. तीव्र बेसिलरी डिसेण्ट्री, २. अमीबी डिसेण्ट्री। इन दोनों में बहुत समानता होती है, जिससे चिकित्सा की दृष्टि से दोनों में सापेक्ष निदान अति आवश्यक है। दोनों रोगों का अन्तर आगे की तालिका में दर्शाया गया है।

इसके अतिरिक्त कॉलरा, मलेरिया, अन्नविषमयता (Food poisoning), टायफाइड फीवर, इण्टस्ससेप्शन (Intussusception), काला ज्वर तथा वृद्ध व्यक्तियों में मलाशय के घातक अर्बुद आदि से इसका पार्थक्य करना चाहिए।

१. कॉलरा में मरोड़ तथा मल में रक्त का अभाव रहता है।

२. विषम ज्वर तथा कालाजार जनित प्रवाहिका में विशिष्ट ज्वरों का इतिहास मिलता है।

३. अन्नविषजनित प्रवाहिका में—वमन एवं मितली की अधिकता मिलती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मध्य-अन्तर (Difference between)—

	बेसिलरी डिसेण्ट्री	अमीबी डिसेण्ट्री
१. जीवाणु	शिगेला (Shigela)	ई० हिस्टोलिटिका
२. प्रारम्भ	एकाएक	प्रायः धीरे-धीरे
३. ज्वर	प्रायः उपस्थित	अनुपस्थित
४. शीत (Chill)	अनुपस्थित	उपस्थित
५. दस्तों की संख्या	५० से १०० तक	२० से ३० तक
६. पीड़ा युक्त कुंथन (Tenesmus)	अधिक	कम
७. उदर में पीड़ा	विस्तृत	मुख्य रूप से सीकम तथा पेल्विक कोलन के ऊपर
८. टॉक्सीमिया	उपस्थित	अनुपस्थित
९. अनीमिया	उपस्थित	नहीं (Nil)
१०. निर्जलीभवन	उपस्थित	अनुपस्थित
११. रक्तचाप	गिरा हुआ	सामान्य
१२. रक्त-परीक्षा	ल्यूकोसिटोसिस (न्यूट्रोफिल की वृद्धि के साथ)	कोई अन्तर नहीं
१३. मल	मलांश अधिकतर अनुपस्थित, रक्तश्लेष्मा, पूय अधिकतर मल क्षारीय होता है।	मलांश उपस्थित, रक्तश्लेष्मा आदि अपेक्षाकृत कम। मल प्रायः एसिडिक होता है।
१४. भावीफल (Prognosis)	उपद्रवों के कारण भावीफल अच्छा नहीं होता।	बुरा नहीं होता है।
१५. चिकित्सा	एण्टीबायोटिक एवं केमोथेराप्यूटिक एजेण्ट्स।	एण्टी-अमीबिक ड्रग्स
१६. इओसिनोफिल	अनुपस्थित	उपस्थित

उपद्रव (Complications)—

१. तीव्र स्वरूप का रक्तस्राव तथा रक्ताल्पता।
२. परफोरेशन (Perforation)।
३. पेरिटोनाइटिस (Peritonitis)।
४. गुदभ्रंश (Rectal prolapse)।
५. पेरिफेरल सरकुलेटरी फेल्योर (Peripheral circulatory failure)
६. टॉक्सिक कार्डाइटिस (Toxic carditis)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. रीनल फेल्योर (Renal failure) ।

८. न्यूमोनिया (Pneumonia) ।

९. नॉन टॉक्सिन सुपुरेटिव आर्थ्राइटिस (Nontoxin suppurative arthritis) ।

१०. कंजंक्टिवाइटिस एवं आईराइटिस ।

११. इलेक्ट्रोलाइट असन्तुलन (Electrolytus imbalance) ।

१२. क्युटेनियस हीमोरेज (Cutaneous haemorrhage) ।

भावीफल (Prognosis)—१. अत्यधिक तीव्र प्रकार तथा कॉलरा के समान प्रकोप में चिकित्सा में विलम्ब होने पर रोग साध्य नहीं होता है ।

२. विषमयता तथा निपात के लक्षणों की उग्रता होने पर भी असाध्यता बढ़ती जाती है ।

३. छोटे बालकों तथा दुर्बल व्यक्तियों में इसका प्रभाव प्रायः घातक होता है ।

नोट—प्रारम्भ से ही विशिष्ट औषधियों के प्रयोग से रोग की साध्यता बढ़ती ही जाती है ।

चिकित्सा सिद्धान्त—इस रोग की चिकित्सा के निम्न सिद्धान्त हैं—

१. सामान्य चिकित्सा ।

२. औषधि चिकित्सा ।

३. आहार चिकित्सा ।

(१) सामान्य चिकित्सा—

१. इस रोग में शर्करा-प्रधान पेय अधिक मात्रा में देना चाहिए ।

२. रोगी को शय्या पर पूर्ण विश्राम आवश्यक है । थोड़ा-सा भी हिलने-डुलने पर उदर-वेदना बढ़ती है । साथ ही मल त्यागने की प्रवृत्ति होती है । मल-मूत्र के परित्याग के लिए लेटे-लेटे ही मल पात्र लगाकर व्यवस्था करनी चाहिए ।

३. उदर पर रुई गर्म कर सेंक करने तथा फलालैन के मुलायम कपड़े को गर्म कर बाँधने से रोगी को पर्याप्त आराम मिलता है ।

४. प्रथम २४ घण्टे रोगी को केवल जल, चावल का पानी या ग्लूकोज मिश्रित जल पर ही रखना चाहिए ।

५. दस्तों द्वारा जल की अधिक मात्रा निकल जाती है । अतः रोगी को प्रतिदिन ३-४ लिटर जल पीने के लिए देते रहना चाहिए ।

६. विषमयता तथा निर्जलीभवन (Dehydration) के लक्षणों की तरफ प्रारम्भ से ही विशेष ध्यान देना चाहिए ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. बालकों तथा वृद्धों में न्यूमोनिया, पेरीटोनाइटिस, आर्थ्राइटिस, एसाइटिस तथा सर्वांगशोथ आदि उपद्रवों की विशेष सम्भावना रहती है। अतः प्रारम्भ से ही इनके रुकावट हेतु एवं प्रतिबन्धक चिकित्सा करनी चाहिए।

(२) औषधि चिकित्सा—

तीव्र स्वरूप के आक्रमण में—

℞ कोट्री-मोक्साजोल (Cotrimoxazole)

मात्रा—२ गोली दिन में दो बार।

अथवा—एम्पीसिलीन (Ampicillin) ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैप्सूल प्रति ६ घण्टे पर ५-६ दिनों तक।

अथवा—इण्टरोस्ट्रेप (डेज) या स्ट्रेप्टोसेटिन (नि० एम० बी०)

मात्रा—१ कैप्सूल प्रति ६ घण्टे पर ५-६ दिनों तक।

अथवा—क्लोरम्फेनिकोल १२५ मिग्रा० + स्ट्रेप्टोमाइसिन १२५ मिग्रा०
(क्लोरोस्ट्रेप या स्ट्रेप्टोपेराक्सिन) २-६ घण्टे पर ५ दिन तक।

अथवा—१ कै० प्रति ३-४ घण्टे के अन्तर पर २ दिन तक।

तत्पश्चात् ६-६ घण्टे के अन्तर पर ४ दिन तक।

नोट—आवश्यकता पड़ने पर दिन में २ बार ३ दिनों तक और दे सकते हैं।

अथवा—स्ट्रेबेसिन (Strebacin)—स्ट्रेप्टोमाइसिन-बेसीट्रेसिन।

प्रारम्भिक मात्रा—२ गोली; बाद को १-१ गोली प्रति ४ घण्टे पर ४ दिन तक। अन्त में १ गोली दिन में ३ बार ४ दिन तक।

नोट—यह दोनों योग तीव्रावस्था में त्वरित लाभ देते हैं : मरोड़, प्रवाहिका तथा ज्वर एवं विषमयता आदि लक्षणों में शीघ्र लाभ मिलता है।

अथवा—टेट्रासाइक्लीन (Teracycline) या टैरामाइसीन

मात्रा—१ कैपसूल प्रति ४ घण्टे के अन्तर पर ४ दिन तक।

तत्पश्चात् ८ घण्टे के अन्तर पर ४ दिन तक।

तीव्रावस्था में (In acute stage)—२५० मि० ग्रा० २५% ग्लूकोज के १०० मिली० घोल में I/V प्रति १२ घण्टे पर अथवा १०० मि० ग्रा० प्रति ४ घण्टे पर मांसपेशीगत २ दिनों तक।

नोट—१. इसके स्थान पर 'साइनरमाइसिन' (Synermycin) तथा 'लेडरमाइसिन' का प्रयोग किया जा सकता है।

२. स्ट्रेप्टोमाइसीन + सल्फा ड्रग्स का संयुक्त प्रयोग सभी दृष्टि से पूर्ण कार्यक्षम होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—'फूराजोलिडीन' १०० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ४ बार। बच्चों में ५ मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर भार पर ४ मात्राओं में विभाजित कर दें।

अथवा—फूरोक्सेन टेबलेट (Furoxene tab.)

मात्रा—१ गोली ३-४ घण्टे पर ३-४ दिन तक।

नोट—पोलीमिक्सन (Polymixin), कार्वेनीसिलीन, सेफेलोस्पेरिन, केनामाइसिन, जेण्टामाइसिन, नीओमाइसिन एवं कोट्रीमोक्साजोल का प्रयोग भी लाभकारी होता है।

अथवा—सल्फा ग्वानेडीन ४-८ गोली या थैलाजोल २-४ गोली प्रति घण्टे पर स्ट्रेप्टोमाइमिन के साथ ४ दिनों तक। बाद में पूर्वतः ६ घण्टे पर ४ दिनों तक।

अथवा—नेलीडिक्सिक एसिड (Nalidixic acid) १ ग्राम प्रति ४ घण्टे पर।

साथ ही—'नार्मल सैलाइन' से Bowel का वाश किया जाये।

अथवा मिश्रित प्रकार के संक्रमण में—

℞ कैप्सूल क्लोरोस्ट्रेप २ कै०
टेबलेट मेट्रोजिल २०० मि० ग्रा० १ गोली
टेबलेट फूराजोलिडिन १०० मि० ग्रा० १ गोली

१ मात्रा। पीसकर पुड़िया बना लें।

ऐसी १ मात्रा प्रति ४-४ घण्टे पर।

यदि पीड़ायुक्त कुंथन उग्रस्वरूप के हों तो निम्न इन्जेक्शन लगावें—

इन्जेक्शन एट्रोपीन सल्फेट ०.६ मि० ग्रा० अधत्वक् मार्ग से। एक ही इन्जेक्शन पर्याप्त होता है। बच्चों को आयु के अनुसार दें। वृद्धों को कम मात्रा में दें।

अथवा—टेबलेट प्रोपैनकीलीन ब्रोमाइड १५ मि० ग्रा०।
(व्या० नाम) टेबलेट प्रो० वैन्थाइन (Tas. Pro-Banthine)

मात्रा—१ गोली दिन में २-३ बार।

अथवा—ड्राप्स स्पैजमिण्डौन (Drops Spasmindon)

मात्रा—१ वर्ष की आयु तक—६-१२ बूंद (m.) दिन में ३-४ बार।
२-३ वर्ष की आयु में—१८ बूंद दिन में ३-४ बार।
३-६ वर्ष के बालकों को—२४ बूंद दिन में ३-४ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेसिलरी डिसेण्ट्री में प्रयुक्त होने वाले पेटेण्ट अनुभूत प्रेस्क्रिप्शन्स—

१. ℞ क्लोरोस्ट्रेप (पी० डी०) १ कैप्सूल
इण्टेरोवायोफार्म (सिबा-गायगी) २ गोली
सुप्रिनल (बायर) १ गोली
१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर । बच्चों को ¼-½ मात्रा पीसकर मधु के साथ दिन में ३ बार चटायें ।

२. ℞ फ्युराक्सॉन (स्केलैब) १ गोली
डिपेण्डाल एम० (स्केलैब) १ गोली
इण्टरोस्ट्रेप सस्पेन्शन (डेज) १० मिली०
१ मात्रा ।

ऐसी मात्रा दिन में ३-४ बार । बच्चों को उनकी आयु के अनुसार उपरोक्त मात्रा की ¼-½ मात्रा दिन में ३-४ बार ।

३. ℞ टेबलेट सल्फा ग्वानेडीन २ गोली
टेबलेट डिपेण्डाल एम० १ गोली
टेबलेट विक्ट्रिम डी० एस० १ गोली
१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार जल से ।

४. ℞ टेबलेट सल्फामेथाजीन १ गोली
सल्फाक्वीनोवेल ग्रैन्यूल्स (स्टैण्डर्ड) २ छोटे चम्मच
गाण्टिसिन (रोशे) २ गोली
१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार जल से दें ।

५. ℞ एम्पीसिलीन (Ampicilline) ५०० मि० ग्रा० १ कै०
थैलाजोल (M. B.) २ गोली
यूनिजाइड कम्पाउण्ड (यूनिकेम) १ गोली
१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार तथा रोग में आराम होने पर २-३ बार जल से । बच्चों को ¼-½ मात्रा आयु के अनुसार फलों के रस या माँ के दूध में मिलाकर ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—यह योग नई और पुरानी दोनों प्रकार की डिसेण्ट्री में लाभकारी है।

६. ℞	क्लोरम्फेनिकाल पाउडर	१२५ मि० ग्रा०
	स्ट्रेप्टोमायसिन सल्फेट पाउडर	१२५ मि० ग्रा०
	लाइट केओलिन पाउडर	५०० मि० ग्रा०
	पैक्टिन पाउडर	७५ मि० ग्रा०
	सिम्पुल सीरप	१० मिली०
		१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार। बच्चों को $\frac{1}{4}$-$\frac{1}{2}$ मात्रा दिन में ३-४ बार।

नोट—यह सभी प्रकार की बेसिलरी डिसेण्ट्री में लाभकारी योग है।

७. ℞	क्लोरोडीन (Chlorodine) लि०	१ मिली०
	एक्स्ट्रैक्ट कुर्ची लिक्विड	४ मिली०
	सीरप टोलू	४ मिली०
	जल कुल	३० मिली०
	ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।	१ मात्रा।

साथ ही—सल्फाग्वानेडीन १ गोली + सोडाबाईकार्ब ३०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार दें। अथवा—सेप्ट्रान की १ गोली २ बार नित्य ७ दिनों तक। साथ में पेक्टो-केओलिन १ चम्मच हर पतले दस्त के बाद दें।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

१. वमन निरोध हेतु (For vomiting)—

℞ क्लोरप्रोमेजीन हाइड्रोक्लोराइड टेबलेट

मात्रा—१ गोली दिन में २-३ बार। बालकों में ५-१० मि० ग्रा० सिरप रूप में।

अथवा—एन्कोलोक्सिन (Ancoloxin) दें।

२. डीहाइड्रेशन (For Dehydration)—प्रारम्भ से ही 'इलेक्ट्राल फोर्ट पाउडर' अथवा एमलाइट जल में घोल कर पिलाते रहें। आवश्यकता पड़ने पर ५% 'ग्लूकोज सैलाइन' आई० वी० ड्रिप दें। १ पाइण्ट तथा ग्लूकोज सैलाइन का प्रयोग करना चाहिए।

सम्भव होने पर प्लाज्मोसान डेक्स्ट्रावेन या पेरिस्टान आदि रक्तरस के समान योगों को दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. **अनिद्रा तथा बेचैनी**—इसके लिए निम्न प्रेस्क्रिप्शन लाभकर होता है—

℞ सोडियम गार्डीनल ½ ग्रेन दिन में २-३ बार।

अधिक बेचैनी में विषमयता के उपचार के अतिरिक्त निम्न योग दें—

सिबाल्जिन	१ गोली
मेडोमिन	½ गोली
कैफीन साइट्रास	१२० मि० ग्रा०
कोडीन फास	१५ मि० ग्रा०
कैम्फर मीनोंब्रोम	६० मि० ग्रा०
	१ मात्रा।

ऐसी के मात्रा दिन में १ या २ बार।

४. **अधिक मरोड़ की स्थिति में**—इसके लिए निम्न योग दें—

℞ स्पैजमिण्डौन	१ गोली
चारकोल टेबलेट	१ गोली
कैल्शियम पेण्टोथिनेट	२५ मि० ग्रा०
कैल्शियम लैक्टेट	६०० मि० ग्रा०
विटामिन 'सी'	१०० मि० ग्रा०
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा प्रति ४-६ घण्टे पर आवश्यकतानुसार।

५. **आध्मान** (Flatulance) **तथा प्रवाहरण**—

(i) 'मेडिसिनल चारकोल', आस्मो-केओलिन (Osmokaolin), केओपेक्टिडिन आदि को पानी में घोलकर बार-बार पिलावें।

(ii) आध्मान अधिक होने पर—कार्बोकोल या एट्रोपिन सल्फ का का उचित मार्ग से प्रयोग।

(iii) पेट में आर्द्र सेंक।

(iv) उपर्युक्त योगों से लाभ न मिलने पर—फ्लेटस ट्यूब (Flatus tube) धीरे-धीरे प्रवेश करने से अधिक लाभ मिलता है।

६. **अधिक रक्त निकल जाने पेर**—ब्लड ट्रान्सफ्यूजन का प्रयोग करें।

७. **शॉक एवं कोलैप्स में**—मेफेण्टरमाइन (Mephentermine) ३० मि० ग्रा० से ६० मि० ग्रा० २-४ घण्टे पर ड्रिप के साथ।

८. **टॉक्सीमिया** (Toxaemia)—ग्लूकोज सोल्युशन ५% नार्मल सैलाइन में ५०० मिली० I/V धीरे-धीरे दें।

CC-0. Public Domain. Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीर्ण स्वरूप के रोग में (In chronic type)—

℞ थैलाजोल २ गोली
सल्फा डायजिन १ गोली

१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ४ बार १ सप्ताह तक।

अथवा—स्ट्रेप्टोमाइसिन ५०० मि० ग्रा० दिन में २ बार ५ दिन तक। मांसपेशीगत।

साथ ही—सल्फा ग्वानेडीन ४ गोली प्रति ४ घण्टे पर ४ दिनों तक। तत्पश्चात् ६ घण्टे पर ४ दिनों तक। आगे ८ घण्टे पर ४ दिनों तक।

उपद्रवों की चिकित्सा (Treatment of complications)—

१. जलोदर (Ascitis)—

(i) उदर पर उष्ण प्रयोग (Hot fomentation on abdomen)।

(ii) एण्टीबायोटिक (Antibiotic) का प्रयोग।

(iii) सुपाच्य पोषक आहार।

(iv) नमक का परित्याग।

(v) दूध का अधिक प्रयोग।

(vi) आवश्यक होने पर—'इसीड्रेक्स' अथवा न्यूनेकलेक्स दिन में २-३ बार ४-५ दिनों तक।

२. सन्धिशोथ—

(i) बालू या नमक की पोटली से स्थानीय सेंक।

(ii) विण्टोजिनो (Wintogino), आयोडेक्स या लिनीमेण्ट टेरीविन्थ की मालिश कर गर्म रुई बाँधना।

३. न्यूमोनिया—

पेनिसिलीन, टेट्रासाइक्लीन, एम्पीसिलीन का प्रयोग।

४. गुदभ्रंश—

नूपरकेनोल या प्रोक्टोसेडिल या एन्यूजेल मलहम का स्थानीय प्रयोग।

गुदा में शोथ होने पर—ओम्नामाइसिन अथवा अन्य एण्टीबायोटिक का प्रयोग।

५. हृदयदौर्बल्य तथा निपात में—

इसके लिए कोरामिन (Coramine), बेरीटाल, कार्डियाजोल आदि हृदयोत्तेजक औषधियाँ दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कभी-कभी नाड़ी क्षीण हो जाती है और हाथ-पैर ठण्डे हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में बोतल में गर्म पानी से अथवा बिजली के वाल्व से गर्मी पहुँचाना चाहिए। I/V ग्लूकोज प्लाज्मोसान दें। डोका अथवा कोर्टिन का सूचीवेध दिया जा सकता है।

बीमारी के पश्चात् शरीर को स्वस्थ करने के लिए—

१. विटामिन 'बी', हाइड्रोक्लोरिक एसिड तथा पाचन सहायक औषधियों का प्रयोग।

२. सुपाच्य तथा पौष्टिक आहार।

रोग से बचाव (Prophylaxis)—

१. एपीडेमिक के समय—सल्फा ग्वानेडीन या थैलाजोल २ गोली दिन में ३ बार ८-१० दिनों तक।

२. सड़े-गले फल एवं बासी भोजन, आइस्क्रीम आदि पदार्थों का परित्याग।

(३) आहार चिकित्सा—

१. रोग की तीव्रावस्था में ग्लूकोज का शर्बत दें।

२. शर्करा-प्रधान पेय अधिक दें।

३. प्रथम २४ घण्टे रोगी को केवल चावल के पानी तथा जल अथवा ग्लूकोज मिला जल ही देना चाहिए। तत्पश्चात् दूध, चाय अथवा बार्लेवाटर, हॉर्लिक्स अथवा बेन्गर का दूध देना चाहिए। इसके बाद पहले अरारोट, साबूदाना आदि को जल में बनाकर, तत्पश्चात् दूध में बनाकर देना चाहिए। इसके बाद अकेला दूध ही दिया जा सकता है। इसके बाद चावल और दूध तथा फल का रस देना चाहिए। साधारण भोजन १ माह बाद प्रारम्भ करना चाहिए। भारी भोजन कदापि न दें।

नोट—उपरोक्त सिद्धान्तानुसार चिकित्सा करने से चिकित्सक को पूर्ण सफलता का यश प्राप्त होता है।

बेसिलरी डिसेण्ट्रीनाशक कुछ अन्य योग—

१. ℞	कोट्रीमोक्साजोल (पाउडर रूप में)	१ गोली
	केओलिन	२ ग्राम
	म्यूसीलेज आफ अकेसिया	आवश्यकतानुसार (qs)
	एनीसी वाटर	३० मिली०
		१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ४ बार रोग ठीक होने तक।

२. ℞	टिंक्चर ओपियम	०·३ मिली०
	टिंक्चर कैटिक्यू	२ मिली०

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टिंक्चर बेलाडोना	०·३ मिली०
टिंक्चर कोटो	०·६ मिली०
जल कुल	३० मिली०
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा प्रति ६ घण्टे पर।

विशेष—यह बेसिलरी डिसेण्ट्री को समूल नष्ट करने वाला उत्तम योग है।

नोट—'टिंक्चर कोटो' कपास की जड़ की छाल का टिंक्चर है।

३. ℞ टेबलेट डिपेण्डाल (Tab. Dipendal)	१ गोली
सल्फा डायजीन	१ गोली
सल्फा ग्वानेडीन	२ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार प्रत्येक भोजन के बाद।

साथ में इलेक्ट्राल पाउडर २-२ चम्मच पानी में घोलकर।

बेसिलरी डिसेण्ट्री नाशक रिसेण्ट पेटेण्ट मेडिसिन—

१. मेबीनोल कॉम्पलेक्स (Mebinol complex) (मैक)

मात्रा—२ गोली दिन में तीन बार ५-१० दिन तक।

बचाव हेतु (Chemo-prophylaxis)—२ गोली सप्ताह में २ बार ५-१० सप्ताह तक।

नोट—यह इन्फेक्टिव डायरिया एवं इन्टेस्टाइनल एमीबिएसिस में भी लाभकारी है।

२. पेक्टोकेव एम० एफ० सस्पे० (Pectokab M. F. Susp.)
(नि० Chemage)

मात्रा—वयस्क—१०-१५ मिली०। बालक—२·५ से ५ मिली० दिन में ३-४ बार अथवा आवश्यकतानुसार।

३. रिओफिन (Rheofin) (नि० रेलिस)

मात्रा—२ कैप्सूल प्रति ६ घण्टे पर।

नोट—यह शिगेला जनित बेसिलरी डिसेण्ट्री में लाभकारी है।

४. एण्टेरोमाइसेटीन सल्फा (डेज)

मात्रा—२-२ गोली दिन में ३-४ बार।

५. एण्टेरोबायोफार्म (सीबा कं०)

मात्रा—२-२ गोली दिन में ३-६ बार।

६. क्विक्सलीन (Quixalin) (साराभाई)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार १५ दिन तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. डिसनिल (Dysnil) (इनका कं०)

मात्रा—२-२ गोली दिन में ४ बार प्रति ४ घण्टे पर।

८. एण्टोबेक्स (Entobex) (सीबा)

मात्रा—२-२ गोली दिन में ३ बार १० दिन तक।

९. डेपेण्डाल एम० (Dependal M.) (स्मिथ-क्लिन)

मात्रा—१-१ गोली दिन में ४ बार।

१०. थैलोसिड (Thalosid) (ईस्ट-इंडिया)

मात्रा—४-४ गोली प्रति ४ घण्टे पर दिन में ४ बार।

११. हयूमेटीन (Humatin) (नि० पी० डी० कं०)

मात्रा—१-२ कै० प्रति ६ से ८ घण्टे पर दिन में ३-४ बार ७ दिन तक।

१२. मेक्साफार्म (Mexaform) (सीबा कं०)

मात्रा—२-२ गोली दिन में ३ बार १० दिन तक। १० दिन तक दवा बन्द करने के बाद फिर २-२ गोली दिन में ३ बार १० दिनों तक।

१३. डेक्वीनोल (Dequinol) (डेज कं०)

मात्रा—१-२ गोली भोजनोपरान्त दिन में ३ बार १० दिनों तक। १ सप्ताह औषधि बन्द रखने के बाद पुनः दूसरा कोर्स दें।

१४. बेसीप्लोन (Basiplon) (खण्डेलवाल)

मात्रा—पहली मात्रा २ कैप्सूल, तत्पश्चात् १-२ कै० प्रति ६ घण्टे पर।

१५. स्ट्रेप्टोसेटीन (Streptocetin) (एम० बी० कं०)

मात्रा—२-४ कैप्सूल प्रति ६ घण्टे पर।

१६. सल्फाग्वानेडीन (Sulphaguanedine) (एम० बी० तथा आई० डी० पी० एल०)।

मात्रा—पहले ६ गोली। तत्पश्चात् २-४ गोली प्रति ३-४ घण्टे पर।

सेविल्स सिस्टम आफ क्लिनिकल मेडिसिन के अनुसार बेसिलरी डिसेण्ट्री (Acute and chronic type) की चिकित्सा—

१. प्रारम्भ में 'सल्फाग्वानेडीन' ६-८ ग्राम, तत्पश्चात् ३-४ ग्राम प्रति ४ घण्टे पर जब तक कि दस्तों (Stools) की संख्या ५ न हो जाये। तत्पश्चात् प्रति ८ घण्टे पर दस्तों के नार्मल होने तक। सम्पूर्ण कोर्स—१० दिन से अधिक नहीं।

२. सक्सीनिल सल्फाथायाजोल (Succinyl sulphathiazole) २० ग्राम प्रतिदिन अथवा थेलिल-सल्फाथायाजोल (Phthalyl-Sulphathiazole) २० ग्राम नित्य विभाजित मात्रा में प्रति ३ घण्टे के अंतर पर। साथ ही—सल्फाडायजीन १ ग्राम प्रति ४ घण्टे पर।

३. रोग की गम्भीर अवस्था में जब टॉक्सीमिया की अधिकता हो—शिगेला इन्फेक्शन का निश्चित प्रमाण मिले अथवा इसका अनुमान लगे तब—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कंसण्ट्रेटिड शिगा एण्टी-टॉक्सिन (Concentrated shiga antitoxin) १००,००० यूनिट्स अथवा अधिक का तत्काल I/V दें। यदि आवश्यक हो तो १२ घण्टे बाद दुहरायें।

४. डिहाइड्रेशन (Dehydration) की चिकित्सा के लिए मुख से पर्याप्त तरल (Fluids) दें। यदि इण्ट्रावेनस देना हो तो ५% डेक्स्ट्रोज सैलाइन को I/V दें।

गम्भीर अवस्था में—जब सरक्यूलेटरी फेल्योर (Circulatory failure) की अवस्था उत्पन्न हो गई हो, तब सीरम (Serum), प्लाज्मा अथवा ब्लड ट्रान्सफ्यूजन की विशेष आवश्यकता होती है।

५. आहार (Diet)—प्रथम एवं दूसरे दिन तरल रूप में। तत्पश्चात् बढ़ाते हुए उच्च कैलोरी (High calorie), हाई विटामिन्स डाइट (High vitamins diet) की व्यवस्था।

६. Gripping तथा Tenderness के शमन के लिए उदर (Abdomen) का सेंक।

७. कभी-कभी आर्गेनिज्म (Organism) सल्फोनामाइड के प्रति रेसिस्टेण्ट हो जाते हैं। ऐसी अवस्था में ऑरियोमाइसिन (Aureomycin) ०·५ ग्राम प्रति घण्टे पर ७ दिन तक देना अधिक उपयुक्त रहता है।

अथवा—टेट्रासाइक्लीन २ ग्राम ओरली अथवा एम्पीसिलीन १०० मि० ग्रा०। प्रति किलो शरीर भार पर देना लाभकारी होता है।

अमीबी डिसेण्ट्री
(Amoebic Dysentery)

पर्याय—अमीबिक पेचिस, अमीबा से होने वाली पेचिस। इसे प्रोटोजुअल डिसेण्ट्री (Protozoal dysentery) भी कहते हैं। क्योंकि यह प्रोटोजुअल डिसेण्ट्री के अन्तर्गत आती है।

परिचय—Amoebic dysentery is characterised by a febrile diarrhoea with several voluminous foetid stools daily, containing brownish mucus and dark red blood; tenesmus occurs in the rectum be involved. In 10 per cent. of patients the condition is more acute, fever is present and the bowels may act a dozen times in the 24 hrs.

Savill's System of Clinical Medicine.

नोट—'अमीबी डिसेण्ट्री' का विस्तृत वर्णन आगे के अध्याय १/१२ के अन्तर्गत एमीबिएसिस (Amoebiasis) में किया जायेगा।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्य प्रकार की प्रोटोजुअल डिसेण्ट्री—

(१) बेलेण्टाइडिल डिसेण्ट्री (Balantidial dysentery)—

परिचय तथा लक्षण—इस प्रकार की डिसेण्ट्री उन व्यक्तियों में फैलती है जो शूकर (Pig) पालते हैं। इसमें स्वतंत्र रूप से 'Muco-sanguineous stools' तथा अनीमिया मिलती है। अल्सर प्रायः अमीबिक अलसरेशन के रूप में उत्पन्न होते हैं।

निदान (Diagnoss)—इसका निदान दस्तों (Stools) अथवा अलसर के Material curetted द्वारा माइक्रोस्कोपिक परीक्षण द्वारा होता है। इसमें 'बेलेण्टीडिएम कोलाई' वेजीटेटिव फार्म अथवा सिस्ट के रूप में दिखलाई देते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—टेबलेट ऑक्सीटेट्रासाइक्लीन डिहाइड्रेट वी० पी० (टेट्रासाइक्लीन)।

मात्रा—२ ग्राम प्रतिदिन, ७ दिन तक।

(२) मलेरियल डिसेण्ट्री (Malarial dysenery)—

परिचय एवं लक्षण—मेलिग्नेण्ट टरसियन मलेरिया (Plasmodium falciparum) द्वारा इसका संक्रमण होता है।

इसमें रोगी को अनेकों दस्त (Several diarrhoea) आते हैं। कभी-कभी रक्त और म्यूकस भी मिला होता है। गम्भीर अवस्था में हीमोरेजिक प्रदेश भी देखने को मिलते हैं।

निदान—रक्त-परीक्षा (Blood smears) में पैरासाइट्स की उपस्थिति मिलती है। साथ ही प्लीहावृद्धि (Splenomegaly), अनीमिया तथा फीवर इसके निदानात्मक लक्षण हैं।

३. काला-जार डिसेण्ट्री (Kala-azar dysentery)

काला-आजार में डायरिया एक असामान्य उपद्रव नहीं है। लीशमेनिया (Leishmania) की उपस्थिति इण्टेस्टाइनल विलाई में रहती है। अथवा आन्त्र की दीवाल (Gut wall) में पोलीपोइड टिशू (Polypoid tissue) बन जाते हैं। कभी-कभी रक्त और म्यूकस उत्सर्जित होता है।

४. हेल्मिन्थिक डिसेण्ट्री (Helminthic dysentery)—यह तीन प्रकार की होती है—

(i) सिस्टोसोमल डिसेण्ट्री (Scistosomal dysentery)।

(ii) ईसोफेगोस्टोमिएसिस द्वारा उत्पन्न डिसेण्ट्री (Dysentery due to oesophagostomiasis)।

(iii) ट्राईकूरिस ट्राईकूरा द्वारा उत्पन्न डिसेण्ट्री (Dysentery due to trichuris trichiura)।

(i) सिस्टोसोमल डिसेण्ट्री—इसमें सर्वप्रथम डायरिया अथवा रक्त तथा म्यूकस मिले पतले दस्त (Loose motions containing mucus and

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

blood) आते हैं। तत्पश्चात् कभी-कभी [illegible] बंधे हुए दस्त आते हैं। कुंथन (Tenesmus), भार की कमी (Loss of weight) तथा द्वितीयक अनीमिया के लक्षण भी आगे चलकर मिलते। सब-एक्यूट तथा क्रॉनिक सिस्टोसोमल एपेण्डीसाइटिस, कोलन तथा रेक्टोसिग्मोइटा, फिश्चुला तथा पेरीपोर्टल सिरोसिस आफ दी लिवर उत्पन्न हो जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—सोडियम एण्टीमनी टाइट्रेट I/V दिन छोड़कर, १ माह तक।

मात्रा—½ ग्रेन प्रारम्भिक मात्रा। तत्पश्चात् ½ ग्रेन बढ़ाते हुए अधिकतम २½ ग्रेन। प्रति मात्रा को १० मिली डेक्स्ट्रोज सोल्यूशन में घोलकर २ मिली० प्रति मिनट के हिसाब से इन्जेक्ट करें।

नोट—इस औषधि के देने के पश्चात् रोगी में खाँसी, वमन अथवा रियूमेटिक जैसी पीड़ा उत्पन्न हो जाती है।

अथवा—स्टीबोफेन (Stibophen) ६·३% सोलूशन।

मात्रा—१·५ मिली, ३·५ मिली० तत्पश्चात् ५ मिली० इन्ट्रामस्कुलर १ दिन छोड़कर। सम्पूर्ण मात्रा ६० मिली०।

अथवा—एन्थियोमलीन (6 per cent. solution)

मात्रा—४ मिली० I/M १ दिन छोड़कर। सम्पूर्ण मात्रा—६० मिली०।

अथवा—मिरासिल (Miracil)

मात्रा—१-२ ग्राम दिन में २ बार मुख द्वारा ३ दिन तक। इसके १ माह बाद पुनः दोहरायें।

(ii) ईसोफेगोस्टोमिएसिस द्वारा उत्पन्न डिसेण्ट्री—

इसका संक्रमण प्रायः नाइजीरिया देश के लोगों में मिलता है।

(iii) ट्राईकूरिस ट्राईकूरा द्वारा उत्पन्न डिसेण्ट्री—इस प्रकार की डिसेण्ट्री का भारी संक्रमण (Heavy infection) कभी-कभी गरीब परिवार के बच्चों में हो जाता है। इसमें १ ग्राम मल (Faeces) में ओवा की संख्या १००,००० से ऊपर मिलती है। इस प्रकार की डिसेण्ट्री का सम्बन्ध गुदभ्रंश (Rectal prolapse) तथा क्रानिक डिसेण्ट्री से माना जाता है।

चिकित्सा—डाइथायजानीन आयोडीन (Dithiazanine iodide)

व्या० नाम—टेल्मिड (Telmid)

मात्रा—१०० एम० जी० प्रति १० पौण्ड शरीर भार पर प्रतिदिन ३ मात्राओं में विभाजित कर ७ दिनों तक। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमीबा-रुग्णता
(Amoebiasis)

पर्याय (Synonyms)—अमीबा-रुग्णता, आमप्रवाहिका, अमीबा से होने वाली पेचिस ।

परिचय—गरम देशों का ऐसा रोग जो 'एण्ट-अमीबा हिस्टोलिटिका' नामक जीवाणु के मनुष्य-शरीर में संक्रमण के फलस्वरूप उत्पन्न होता है, अमीबा-रुग्णता (एमीबिएसिस) कहलाता है ।

अमीबाजन्य रोग को चिकित्साशास्त्र की नई परिभाषा में अमीबिकता (एमीबिएसिस Amoebiasis) कहा जाता है । जिस अंग में अमीबा संक्रमण करते हैं, उसे उसी अंग की अमीबिकता कहते हैं । यदि इसका संक्रमण आँतों में हो तो 'इन्टेस्टाइनल एमीबिएसिस' और यदि संक्रमण यकृत् में हो तो 'यकृत् की अमीबिकता' (Hepatic amoebiasis) कहते हैं ।

इस परिभाषा के अनुसार अमीबिक पेचिस को 'आन्त्रगत अमीबिकता' अथवा केवल 'अमीबिकता' कहते हैं ।

इसमें प्रवाहिका के अतिरिक्त यकृतशोथ (Hepatitis), यकृद्-विद्रधि (Liver abscess), फुफ्फुस-विद्रधि (Lung abscess) तथा न्यूरेस्थेनिया आदि उपद्रव हो जाते हैं ।

इन्क्यूबेशन पीरियड (Incubation period)—यह १ सप्ताह से ५-६ माह तक लम्बा हो सकता है । प्रायः वर्षा ऋतु में इसका प्रकोप अधिक होता है ।

इसका संक्रमण (Infection) सबसे पहले बड़ी आँत (Large intestine) में होता है । यहाँ से फिर संक्रमण आँतों से बाहर अन्य अंगों में जैसे—यकृत, फेफड़े आदि में पहुँच जाता है । जब तक संक्रमण केवल आतों में रहता है तो रोग 'आन्त्रगत अमीबा-रुग्णता' (Intestinal amoebiasis) कहलाता है । और जब संक्रमण आँतों से बाहर पहुँच कर अन्य अवयवों में विकृति उत्पन्न करता है, तब उसे रोग को बाह्य आन्त्रगत अमीबा-रुग्णता (Extra intestinal amoebiasis) कहते हैं । इस प्रकार से अमीबारुग्णता निम्न ३ प्रकार की होती है—

१. आन्त्रगत अमीबा-रुग्णता (Intestinal amoebiasis) ।
२. बाह्य आन्त्रगत अमीबा-रुग्णता (Etra-intestinal amoebiasis)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. प्राइमरी अमीबिक मेनिंगो इन्सेफेलाइटिस (Primary meningo-encephalitis)।

१. आन्त्रगत अमीबा-रुग्णता
(Intestinal Amoebiasis)

(i) तीव्र अमीबी अतिसार (Acute amoebic dysentery)।
(ii) तीव्र अमीबा प्रवाहिका (Acute amoebic diarrhoea)।
(iii) अमीबी बृहदान्त्रशोथ (Amoebic coiltis)।

२. बाह्य आन्त्रगत अमीबा-रुग्णता
(Extra-intestinal Amobeiasis)

यह रोग निम्न अवस्थाओं में प्रकट होता है—
(i) हेपेटिक एमीबिएसिस (Hepatic amoebiasis)।
(ii) पल्मोनरी एमीबिएसिस (Pulmonary amoebiasis)।
(iii) सेरिब्रल एमीबिएसिस (Cerebral amoebiasis)।
(iv) क्युटेनियस एमीबिएसिस (Cutaneous amoebiasis)।
(v) अन्य (Others)।

३. प्राइमरी अमीबिक मेनिंगो-इन्सेफेलाइटिस
(Primary Meningo-encephalitis)

यह नेगलेरिया ग्रबेरी (Naegleria gruberi) के द्वारा होता है।

नोट—उपरोक्त दोनों अमीबा-रुग्णता ई० हिस्टोलिटिका के संक्रमण से होती है।

(क) तीव्र अमीबी अतिसार (Acute amoebic dysentery)—

लक्षण (Symptoms)—१. पीड़ायुक्त कुंथन (Tenesmus) के साथ पतले दस्त (Loose stool) का आना।

२. मल में पूय तथा श्लेष्मा (Pus and mucus) मिला होता है।

३. २४ घण्टे में रोगी को ५ से १० बार तक मलत्याग के लिए जाना पड़ता है।

४. आरम्भ में रोगी को केवल मरोड़ की शिकायत रहती है। धीरे-धीरे रोग जैसे-जैसे बढ़ता जाता है, श्लेष्मा और रक्त मल के साथ आने लगता है।

५. ज्वर प्रायः अनुपस्थित रहता है। यदि होता भी है तो वह ९९° फा० से अधिक नहीं मिलता है।

६. निम्न उदर में विशेष कर नाभि के चारों ओर तीव्र मरोड़ होती है।

७. रोगी में अरुचि, क्षुधानाश, दुर्बलता आदि सार्वदैहिक लक्षण मिलते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संक्षेप में—'अमीबा' नामक जीवाणु के संक्रमण से उत्पन्न इस रोग में मरोड़ के साथ बार-बार थोड़ी मात्रा में आँव युक्त एवं लाली लिये हुए मलत्याग होता है।

चिह्न (Signs)—१. उण्डुक और श्रोणि बृहदन्त्र (Caecum and pelvic colon) के ऊपर दाब-वेदना (Tenderness) पायी जाती है।

२. मल विशेष रूप में दुर्गन्धित होता है।

३. मलत्याग में अधिक रक्त तथा श्लेष्मा की उपस्थिति मिलती है।

४. श्लेष्मा साबूदाने के कणों के रूप में दिखलाई पड़ता है।

विशिष्ट प्रकार के अन्य लक्षण—

१. रोगी को दस्त मात्रा में अधिक, शीघ्रकारी तथा ढीला होता है जिसमें आँव मिला होता है।

२. अथवा खून और आँव दोनों दस्तों के साथ मिश्रित रूप में आते हैं। खून के दूर से आने के कारण वह काला होता है। साथ ही मल के साथ अच्छी तरह मिश्रित रहता है।

३. रक्त के कारण दस्तों में बदबू भी आती है।

४. कभी-कभी भोजन सम्बन्धी अपथ्य होने पर दस्त और भी ढीला हो जाता है। जैसे—दूध और दूध से बना भोजन या तीक्ष्ण आहार।

५. कुछ एक रोगियों में तो इसके वेगों के बीच-बीच में मलबन्ध (Constipation) की भी शिकायत रहती है। कुछ एक में रक्तातिसार (Melaena) का ही लक्षण विशेष होता है। इस प्रकार इसमें रक्त तथा पूय की उपस्थिति दिखलाई नहीं पड़ती है।

६. कुछ एक में मल कभी ढीला हो जाता है और कभी मलबन्ध हो जाता है।

७. वर्षों तक रोगी को दस्तों के वेग होते रहते हैं, जिसके बीच में रोगी अच्छा भी होता रहता है।

८. इस रोग में पेट के इन लक्षणों के अतिरिक्त शुष्क कास अथवा श्वास रोग के लक्षण होते है। कभी-कभी शारीरिक परिश्रम से शीघ्र थक जाना, मानसिक परिश्रम करने से सिर में चक्कर अथवा मन में विक्षोभशीलता (Nervousness) के लक्षण भी हो जाते हैं।

९. इस रोग के विष का प्रभाव नाड़ियों पर भी होते देखा गया है। इसलिए नाड़ीशोथ (Neuritis), नाड़ीशूल (Neuralgia), तथा न्यूरेस्थीनिया के उपद्रव भी होते हैं।

उक्त नाड़ी रोगों के कारण ही सम्भवतः मांसशूल (Myalgia), सन्धि-शूल, कटि-शूल, क्रेम्प्स के लक्षण भी होते देखे जाते हैं।

१०. जब इस रोग का वेग बढ़ता है तब कुछ ज्वर भी हो सकता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. विष की अनूर्जता के कारण श्वास की भाँति पामारोग (एक्जिमा) भी हो सकता है।

नोट—अन्य एक्जिमा अथवा शीतपित्त (Articaria) हो तो पता लगाना चाहिए कि यह रोग तो नहीं है। इस रोग के कारण प्रायः पाण्डुता का लक्षण अवश्य मिलता है।

अन्य विशेषाएँ—१. चिरकारी तथा विषमयता रहित होने के कारण रोगी को शय्या ग्रहण नहीं करनी पड़ती।

२. अतिसार की अपेक्षा कोष्ठबद्धता का लक्षण अधिक मिलता है।

३. मानसिक एवं शारीरिक परिश्रम करने की अनिच्छा, पल्पीटेशन एवं अवसाद के लक्षण होते हैं। इससे रोगी अपने को अनेक रोगों से पीड़ित हुआ समझता है।

निदान (Diagnosis)—इस रोग का निदान करना सुगम नहीं है। इसकी निदानात्मक परीक्षा निम्न प्रकार से की जाती है—

(१) मल-परीक्षा (Stool test)—

(i) रोगी के मल की प्रतिक्रिया अम्लीय (Acidic) होती है।

(ii) मल में पूय सेल (Pus cells) तथा सिस्ट्स भी होते हैं। प्रेडनीसोलोन ५ मिली० मात्रा में दिन में दो बार देने से, हाइड्रोकार्टीसोन का जल गुदा में डालने से अधिक आने लगता है।

(iii) रक्त का मिश्रण होने से दस्त भूरे रंग का चटनी की तरह का (Brown colour) तथा कुछ दुर्गन्धयुक्त होता है।

(iv) मल में निकले रक्त मिश्रित आँव की परीक्षा करने से उसमें अमीबा तथा ट्राईकोमोनास इण्टेस्टाइनेलिस देखे जा सकते हैं।

(v) मल की सैल सम्बन्धी (Cytological) परीक्षा करने पर साधारण डिसेण्ट्री में ९०% सैल (पोलीमार्फ्स) होते हैं। क्रॉनिक डिसेण्ट्री में सैल कम मात्रा में मिलते हैं।

(२) रक्त-परीक्षा (Blood test)—

(i) रक्त परीक्षा में—१० हजार के लगभग ल्यूकोसिटोसिस मिलते हैं।

(ii) इओसिनोफिल्स ८% से ऊपर होते हैं।

(iii) ई० एस० आर० (E. S. R.) कुछ बढ़ा हुआ होता है।

(३) एक्स-रे परीक्षा—

(i) इस परीक्षा में 'सीकम' अथवा 'कोलन' में शोथ तथा स्तम्भ (Spasm) के कारण विषम आकृति के अथवा संकुचित (Stenosid) दिखलाई पड़ते हैं।

(ii) वृहदन्त्र के निचले भाग में पाया जाने वाला हास्ट्रेशन या सैकूलेशन (Sacculation) लुप्त हुआ दीखता है।

CC-0. Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष निदान (Special diagnosis)—अमीबिक डिसेण्ट्री की परीक्षा मलाशय तथा अवग्रहान्त की परीक्षा विशेष यंत्र (सिगमो-आइडोस्कोप) द्वारा की जाती है। इसमें मलाशय तथा अवग्रहान्त में विशेष प्रकार के व्रण तथा अमीबा की उपस्थिति से निदान की पुष्टि होती है।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—बेसिलरी डिसेण्ट्री, कृमिज अतिसार (Diarrhoea due to worms), बड़ी आँत की सूजन, संग्रहणी आदि व्याधियों से इसका विभेदक निदान करना चाहिए।

भावीफल (Prognosis)—१. यह रोग बहुत साधारण प्रतीत होने पर भी एक बार रोगी को आक्रान्त कर लेने पर आसानी से नहीं छोड़ता है।

२. आँत की म्यूकस मेम्ब्रेन में बोतल या सुराही के समान व्रण बनकर स्थायी रूप ले लेते हैं।

३. इसमें मृत्यु नहीं होती है, परन्तु शारीरिक एवं मानसिक अवसाद से रोगी निरन्तर कष्ट पाता रहता है।

(ख) तीव्र अमीबी डायरिया (Acute amoebic diarrhoea)—

इस रोग को तीव्र अमीबी अतिसार का मृदु प्रकार कहा जा सकता है।

लक्षण (Symptoms)—१. रोगी को बार-बार पतला मल विसर्जित होता है।

२. श्लेष्मा मात्रा में बहुत कम होता है। तथा रक्त की अनुपस्थिति इस रोग की विशेषता है।

३. क्षुधानाश (Loss of appetite), कमजोरी आदि सार्वदैहिक लक्षण मिलते हैं।

४. उदर-पीड़ा (Abdominal pain) की उपस्थिति।

चिह्न (Signs)—१. रोगी की जीभ हल्की मलावृत रहती है।

२. अन्य चिह्न उपरोक्त अनुसार होते हैं।

३. दस्त के चिह्न उपरोक्त अनुसार, परन्तु R. B. C., पूय सैल्स बहुत कम अथवा नहीं होते।

(ग) अमीबी बृहदन्त्र शोथ (Amoebic colitis)—

आन्त्रगत अमीबा-रुग्णता का क्रॉनिक स्वरूप अमीबी बृहदन्त्र शोथ कहलाता है। इस रोग में अमीबी विक्षतियाँ (Lesions) मुख्य रूप से कोलन (Colon) में मिलती हैं।

लक्षण (Symptoms)—१. इस रोग में रोगी को जरा-सी आहार की अनियमितता होने से पेचिस उत्पन्न हो जाती है। शराब, मिर्च-मसाले आदि का सेवन करते ही पीड़ायुक्त कुंथन के साथ श्लेष्मा तथा रक्त मिश्रित मल का उत्सर्ग होने लगता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. रोगी अपने को थका हुआ एवं दुर्बल महसूस करता है।

३. तापक्रम (Temperature) सामान्य ही रहता है।

४. उण्डुक तथा श्रोणि बृहदन्त्र पर दाब-वेदना (Tenderness) मिलती है।

५. मल की माइक्रोस्कोपिक परीक्षा करने पर उसमें 'एण्ट-अमीबा हिस्टोलिटिका' के सिस्ट मिलते हैं।

आन्त्रगत अमीबा-रुग्णता की चिकित्सा (Treatment of intestinal amoebiasis)—

रोग की तीव्रावस्था में (In acute stage)—

(i) कुछ दिनों तक शय्या पर पूर्ण विश्राम।

(ii) आहार (Diet)—तरल आहार (Liquid diet) जैसे—ग्रीन कोकोनट वाटर, वार्ले वाटर, दही, चावल, हरी सब्जी आदि प्रचुर मात्रा में सेवन कराना।

निषेध—मिर्च-मसाला तथा मद्यपान का पूर्ण निषेध।

३. विशिष्ट औषधियाँ (Specific drugs)—

℞ डीहाइड्रो-इमेटीन (Dehydro-emetine)।

मात्रा—६० मि० ग्रा० गहरे मांसपेशी में ८-१० दिनों तक।

१ मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर भार पर यदि रोगी < ६० किलो।

नोट—प्राय: कोई Side affect नहीं होता है।

मैट्रोनिडाजोल (Metronidazole)

मात्रा—८०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार ५ दिन तक।

बालक—५० मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर भार पर नित्य ३ मात्राओं में विभक्त कर।

अथवा—सिरप एरिस्टोजिल-एफ (Syrup Aristogyl-F)

नोट—यह बालकों में विशेष उपयोगी है।

अथवा—टेबलेट टिनिडाजोल (Tab. Tenidazole)

मात्रा—२ ग्राम नित्य ५ दिन तक।

अथवा—टेबलेट डाइरेड-एम (Tab. Dyrade-M)।

(मैट्रोनिडाजोल + डाइलोक्सानाइड-फूरोएट)।

मात्रा—२ टेबलेट दिन में ३ बार ५ दिन तक।

बालकों में—१ टेबलेट दिन में ३ बार ५ दिन तक।

शिशुओं में—आयु के अनुसार।

अथवा—डिलोक्सानिड फूरोएट (फूरामाइड—Furamide)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार १० दिन तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही—१. **यदि उदरशूल** (Abdominal pain) भी हो तो—
टेबलेट एण्ट्रिनिल अथवा बुसकोपान (Buscopan)
मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।
२. यदि गम्भीर स्वरूप का कालिक हो तो (If severe pain)—
इन्जे० वेराल्गन २ मिली० मांसपेशीगत (I. M.)।
३. यदि मल में पूयसैल की उपस्थिति मिले तो—
कैप्सूल टैरामाइसिन (Cap. Terramycine) २५० मि० ग्रा०
मात्रा—१ कै० दिन में ४ बार १० दिन तक।
अथवा—कै० टैरामाइसिन एस० एफ० १ कै० दिन में २ बार १० दिन तक।

४. यदि निर्जलीभवन हो तो (If dehydration)—
इन्जे०—ग्लूकोज सेलाइन ड्रिप दें।
१० दिनों के पश्चात्—
℞ टेबलेट फूरामाइड (Tab. Furamide)
मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार १० दिन तक। तत्पश्चात्—
टेबलेट इण्टोबेक्स (Tab. Entobex)
अथवा—टेबलेट डिपेण्डाल (Tab. Dipendal)
मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार १० दिन तक।
अथवा—टेबलेट डिपेण्डाल एम० (Tab. Dipendal M.)
मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार १० दिनों तक।
नोट—यह एक रिसेण्ट मेडिसिन है।
चिरकारी अमीबी प्रवाहिका (Chronic amoebic dysentery)—
℞ टेबलेट डायडोक्वीन (Tab. Diodoquin) २५० मि० ग्रा०
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार १० दिन तक।
अथवा—टेबलेट फूरामाइड ५०० मि० ग्रा०
२ गोली दिन में ३ बार १० दिन तक।
अथवा—डिपेण्डाल एम० (Dipendal M.)
मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार १० दिन तक।
साथ ही—संक्रमण को रोकने के लिए 'एण्टीबायोटिक' औषधियाँ दें।
रेसिस्टेण्ट केसिस में—
℞ याट्रीन (Yatren) अथवा चिनोफोनम एनीमा (Chinofonum enema) २½ प्रतिशत २०० मिली० जल में नित्य १०-१४ रात्रि। १०-१४ बूंद प्रति मिनट के रेट से।

इण्टेस्टाइनल एमीबिएसिस की चिकित्सा योजना (Plan of treatment)—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इमेटीन। डिहाइड्रो इमेटीन + ओक्सी टेट्रासाइक्लीन एवं डिओडो-हाइड्रोक्सी क्वीनोलिनेस।

अथवा—मेट्रोनिडाजोल (Metronidazole)। तत्पश्चात्—डिओडो-हाइड्रोक्सी-क्वीनोलिनेस दें।

हिपेटिक एमीबिएसिस की चिकित्सा (In case of hepatic involvement)—

यकृत् में शोथ होने पर यकृत प्रदेश में वेदना का अनुभव, दाहिने कंधे तथा कुक्षि में वेदना, ज्वर, मितली, क्षुधानाश एवं दौर्बल्य के लक्षण होते हैं।

℞ इन्जे० डिहाइड्रो-इमेटीन (Inj. Dehydro-emetine)
मात्रा—६० मि० ग्रा० गहरे मांसपेशी में नित्य १० दिन तक।
१ मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर भार पर, यदि रोगी < ६० किलो।
टेबलेट मैट्रोनिडाजोल (Tab. Metronidazole) ४०० मि० ग्रा०
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार भोजनोपरान्त १० दिन तक।
अथवा—टेबलेट टिनिडाजोल (Tab. Tinidazole) ३०० मि० ग्रा०
मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक।
अथवा—ग्लायकोवायरसोल (Glycobiarsol) ५०० मि० ग्रा० टेबलेट
मात्रा—१-१ गोली दिन में ३ बार १० दिन तक।
आवश्यकता पड़ने पर—१ सप्ताह छोड़कर अगले १ सप्ताह पुनः देते हैं।
'मिलिबिस' तथा 'वायसेप्ट' इसके व्यापारिक नाम हैं।
साथ ही—कैप्सूल टैरामाइसिन (Cap. Terramycine) २५० मि० ग्रा०
मात्रा—१ कै० दिन में ४ बार १० दिन तक।

यदि बुखार हो तो—
टेबलेट क्रोसिन (Tab. Crocin)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।
यदि मितली तथा कै उपस्थित हो तो—
टेबलेट सीक्विल (Tab. Siquil) १० मि० ग्रा० की गोली
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।
अथवा—टेबलेट इस्केजीन (Tab. Eskazine) १ मि० ग्रा०
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।
यदि अम्लीयता की अधिकता (Hyper acidity) हो तो—
टेबलेट एण्टेसिड (Tab. Antacid)
मात्रा—२ गोली दिन में २ बार।
यकृत्शोथ युक्त एमीबिएसिस में निम्न योग विशेष लाभकर होता है—
नीवाक्वीन (Nivaquin) ½ गोली
विटामिन सी (सीलिन Celin) २५० मि० ग्रा० की १ गोली

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिओनिन (Meonine)	१ गोली
पल्व रिहाई कं०	२४० मि० ग्रा०
ब्रेवर्स ईस्ट	४२० मि० ग्रा०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार नीबू के शर्बत के साथ।

नोट—यकृतशोथ का बहुत दिनों तक अनुबन्ध रहता है जिससे आन्तरिक कोषाओं की पर्याप्त विकृति हो जाती है। ऐसी अवस्था में निम्न चिकित्साक्रम चलाना चाहिए—

℞ इमेटीन ३० मि० ग्रा० प्रातः-सायं दिन में २ बार १० दिन तक।

साथ ही—टेट्रासाइक्लीन	२५० मि० ग्रा०
रिसोचिन	½ गोली
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार ग्लूकोज के शर्बत के साथ।

ग्लूकोज २५%–५० मिली० + विटामिन-सी ५०० मि०ग्रा० + निओमेथिडिन १० मिली० + बीकोजाइम (I. V.)। सबको मिलाकर I/V धीरे-धीरे दें।

नोट—७-१० दिन तक इसका प्रयोग पर्याप्त होता है।

अग्निमांद्य तथा एनोरेक्सिया की लाक्षणिक चिकित्सा—

आम प्रवाहिका के सभी प्रमुख लक्षण मुख्य व्याधि की चिकित्सा से ठीक हो जाते हैं। जीर्णता होने पर अग्निमांद्य तथा एनोरेक्सिया का कष्ट भी स्वतंत्र चिकित्सा की अपेक्षा रखता है। जीर्ण मलावरोध तथा आमांश की अधिकता से पाचनशक्ति अवश्य न्यून हो जाती है। ऐसी अवस्था में निम्न योग लाभकारी होता है—

℞ टाका डायस्टेज	३०० मि० ग्रा०
पेन्क्रियाटिन	३०० मि० ग्रा०
पेप्सिन	३०० मि० ग्रा०
टेबलेट एलीसेटिन (Allisatin)	१ गोली
लेक्टो-पेप्टिन	३०० मि० ग्रा०
मेन्थोल	६० मि० ग्रा०
सोडावाईकार्ब	६०० मि० ग्रा०
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजनोपरान्त जल के साथ।

इसके साथ ही—विटामिन 'बी' कॉम्प्लेक्स + लीवर एक्स्ट्रेक्ट २ मिली० दोनों को मिलाकर इण्ट्रामस्कुलर। कुल ८-१० इन्जेक्शनों तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—डायपेप्सीन (Diapepsin), डीजीप्लेक्स, विटाजाइम, डायजेञ्जाइम (Digenzyme) आदि पेटेण्ट औषधियों में से किसी का व्यवहार पाचनशक्ति को बढ़ाने के लिए किया जा सकता है।

आध्मान (Flatulence)—

बिना पचा हुआ भोजन बड़ी आँत में पहुँचने के कारण उसमें सड़न होने लगती है जिससे वायु की अधिक उत्पत्ति होती है। आँतों में संचित वायु के अनुमोलन हेतु निम्न योग दें—

℞ सोडावाईकार्ब	६०० मि० ग्रा०
विस्मथ कार्ब	३०० मि० ग्रा०
टिंक्चर कार्मीनेटिव	१५ बूंद
टिं० हायोसायमस	१५ बूंद
टिं० कार्ड को०	१५ बूंद
सीरप जिंजर	१ ड्राम
जल-कुल	१ औंस।
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ या ३ बार भोजनोपरान्त।

कोष्ठबद्धता (Constipation)—

क्रॉनिक अवस्था (Chronic stage) का लक्षण कोष्ठबद्धता माना जाता है। इसके लिए—'एगरोल' (Agrol), 'पेट्रोल्गर' (Petrolgar) आदि का प्रयोग किया जा सकता है।

अमीबी प्रवाहिका नाशक विशिष्ट चिकित्सा-क्रम—

यहाँ पर जनरल प्रेक्टिस में प्रयुक्त होने वाले कुछ अमीबी प्रवाहिका नाशक विशिष्ट चिकित्साक्रम प्रस्तुत किये जा रहे हैं जो अधिक लाभकारी पाये गये हैं—

तीव्रावस्था में—प्रथम चिकित्सा-क्रम—

℞ इमेटीन ६० मि० ग्रा०+स्ट्रिक्नीन १ मि० ग्रा०+विटामिन बी१ १०० मि० ग्रा०—मांसपेशीगत प्रतिदिन ५ दिन तक।

साथ ही—याट्रिन या ऑक्सी-क्विनोलिन ·५ ग्राम+स्ट्रेप्टोट्राइड (Streptotried) १ गोली दिन में ३ बार १० दिन तक।

याट्रिन या 'इण्टरोवायोफार्म' की अनुवासन बस्ति १० दिन तक।

उपरोक्त १० दिन की चिकित्सा के बाद १५ दिनों तक औषधि का प्रयोग बन्द रखा जाता है। तत्पश्चात् पुनः निम्न क्रम से चिकित्सा चलायी जाती है—

℞ 'डायडोक्विन' या 'सायोस्टेरान'।

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार ८ दिन तक।

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८-१२ औंस की मात्रा में मट्ठे की अनुवासनवस्ति १० दिनों तक।

उपरोक्त चिकित्सा-क्रम के अभाव में द्वितीय चिकित्सा-क्रम का प्रयोग किया जा सकता है—

द्वितीय चिकित्सा-क्रम—

विस्मथ आयोडाइज्ड ६० मि० ग्रा० रात में सोने से पूर्व प्रथम दिन।

सात्म्यता होने पर (Tolerance)—१२० मि० ग्रा० इमेटीन विस्मथ आयोडाइज्ड + सोनेरिल १ गोली प्रति रात्रि १२ दिनों तक।

साथ ही—'एण्टरोवायोफार्म' २ गोली

टेरामाइसिन २५० मि० ग्रा० १ कैपसूल

१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार ७ दिनों तक।

अनुवासनवस्ति पूर्वोक्त अनुसार १ सप्ताह तक।

'कारबारसोन'—१० दिन के विराम के बाद अनुवासनवस्ति के द्वारा ७ दिन तक।

उपरोक्त दोनों चिकित्सा-क्रमों का प्रयोग भी सम्भव न होने पर—

℞ टैरामाइसिन २५० मि० ग्रा० १ कैप्सूल।

कैमाफार्म २ गोली

१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार ७ दिन तक।

साथ ही—८वें दिन से 'कारबारसोन' दिन में २ बार भोजनोपरान्त १५ दिन तक।

'अमीबी प्रवाहिका' नाशक कुछ अन्य उपयोगी पेटेण्ट प्रेस्क्रिप्सन्स—

१. ℞ मेट्रोनिडाजोल (Metronidazol) २०० मि० ग्रा० की १ गोली

सीरप ऑरेञ्ज—कुल १० मिली०

ऐसी १ मात्रा दिन में ४ बार। १ मात्रा।

२. ℞ एण्टरोबायोफार्म २ गोली

कै० टैरामाइसिन १ कैप्सूल

मेट्रोन सीरप (सस्पेंशन) १० मिली०

ऐसी १ मात्रा प्रति ६ घण्टे पर। १ मात्रा।

३. ℞ फूरामाइड (बूट्स) १ गोली

न्यूविआसेप्ट (हैक्स्ट) २ गोली (ड्रेगी)

निम्बेम्वीन या निवेम्बीन (M. B.) १ गोली

डीहाइड्रो-इमेटीन (रोशे) १ गोली

१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार भोजनोपरान्त।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही—डीहाइड्रो-इमेटीन (Dehydro-emetine) का इन्जेक्शन लगावें।

आवश्यक चिकित्सा के सुझाव—

१. आम प्रवाहिका के जीर्ण विकारों में 'लिवर एक्स्ट्रेक्ट' का इन्जेक्शन तथा फोलिक एसिड एवं लौह के मिश्रित योगों का व्यवहार पर्याप्त समय तक करना चाहिए।

२. जब तक निर्दिष्ट किसी एक क्रम से पूरा लाभ नहीं होता है, तब २-३ मास के विराम के बाद पुनः १ या २ बार उपरोक्त विधि से इसका प्रयोग करना चाहिए।

३. पूरे विधान से 'इमेटीन' का सूचीवेध, मुख तथा गुदामार्ग से औषधियों के तीन चक्र पूरा करने पर रोग प्रायः निर्मूल हो जाता है। यथेष्ट मात्रा तथा यथेष्ट समय तक प्रयोग करने से केवल लाक्षणिक सुधार होता है, स्थायी लाभ नहीं।

४. रोग मुक्ति के पश्चात् पर्याप्त समय तक तली हुई मसालेदार चीजों का परित्याग। रस वाले ताजे फल, पपीता, मट्ठा, दही के सेवन से रोगी को शीघ्र बल मिल जाता है। लौह, यकृत सत्त्व, एवं मल्टी विटामिन्स का प्रयोग लाभकारी होता है।

अमीबा नाशक औषधियों का प्रभाव क्षेत्र—

चिकित्सा में सुविधा के लिए औषधियों के चयन हेतु निम्न सारिणी को प्रस्तुत किया जा रहा है। अमीबानाशी औषधियों में से कुछ आन्त्रमार्ग में उपस्थित अमीबा पर, कुछ आन्त्र के ऊतकों (Tissues) में उपस्थित अमीबा पर और कुछ यकृत में पहुँचे अमीबा पर अपना विशिष्ट प्रभाव डालती हैं जैसा कि नीचे की सारिणी में दिखाया गया है—

अमीबानाशी औषधियों का प्रभाव क्षेत्र—

औषधि का नाम	आन्त्र मार्ग में अमीबा	आन्त्र के ऊतकों में अमीबा	यकृत् में अमीबा
१. मैट्रोनिडाजोल	+	+	+
२. इमेटिन	०	+	+
३. क्वीनोडोक्लोर	+	०	०
४. कारबारसोन	+	०	०
५. ग्लायकोवायरसोल	+	०	०
६. क्लोरोक्विन	०	+	+

संकेत— + प्रभावशाली ० व्यर्थ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एमीबिएसिस नाशक अन्य पेटेन्ट औषधियाँ—

१. एण्टोबेक्स (Entobex) (नि० सीबा कं०)
मात्रा—२-२ गोली दिन में ३ बार।
२. एमीबायोटिक (Amebiotic) (नि० फाइजर कं०)
मात्रा—२-२ कैप्सूल दिन में ३ बार १-२ सप्ताह तक।
३. एरालिस (Aralis) (नि० डेज)
मात्रा—२-२ गोली दिन में ३ बार १ सप्ताह तक।
४. एम्बीक्वीन (Embequin) (नि० एम० वी० कं०)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार १-३ सप्ताह तक।
५. एण्टेरो क्वीनोल (नि० ईस्ट इंडिया)
मात्रा—२-२ गोली दिन में ३ बार भोजनोपरान्त १० दिन तक।
६. एण्टेसेप (Intesep) (नि० ड्यूफार कं०)
मात्रा—२-२ गोली दिन में ३-४ बार प्रति ४ घण्टे पर।
७. एमीविण्डोन (Amoebindon) (नि० इण्डोन)
मात्रा—२-२ गोली दिन में ३ बार १४ दिन तक रोगानुसार।
८. क्विक्सालीन (Quxalin) (नि० साराभाई)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार १४ दिन तक।
९. केमोफार्म (Camoform) (नि० पी० डी० कं०)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार भोजनोपरान्त ५ दिन तक।
१०. डाइआयोडो हायड्रोक्सी क्वीनोलीन
मात्रा—२-२ गोली दिन में ३ बार १०-१५ दिन तक।
११. डायोडोक्वीन (Diodoquin) (नि० सीयरले)
मात्रा—१ गोली (६५० मि० ग्रा०) दिन में ३ बार २० दिन तक।
१२. डायरेक्स (Diarex) (नि० हिमालय ड्रग कं०)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार।
नोट—यह पुरानी पेचिस में लाभकारी है।
१३. डिस्ट्रिण्डोन (Dystrindon) (नि० इण्डोन)
मात्रा—२-२ गोली दिन में ३ बार ८-१० दिन तक।
१४. डिसनिल (Dysnil) (नि० इनगा)
मात्रा—२-२ गोली दिन में ४ बार प्रति ४ घण्टे पर १० दिन तक।
१५. डीहाइड्रोमेटीन (Dehydrometine)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार प्रति ४ घण्टे पर।
१६. डेपेण्डाल एम (Dependal M) (नि० स्मिथ क्लिन)
मात्रा—१-१ गोली दिन में ४ बार प्रति ४ घण्टे पर।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१७. निओवायासेप्ट (Neo-viasept) (नि० हैक्स्ट)

मात्रा—२-२ गोली दिन में ४ बार ८ दिन तक।

१८. निवेम्बिन (Nevembin) (नि० एम० बी०)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार १ सप्ताह तक।

१९. नीवाक्वीन (Nevaquin) (नि० एम० बी०)

मात्रा—पहले ४ दिन १-१ गोली (६०० मिग्रा०) दिन में ३ बार। तत्पश्चात् ३०० मि० ग्रा० प्रतिदिन १ माह तक।

२०. फ्यूरामाइड कम्पाउण्ड टेबलेट या
फ्यूरामाइड-सी० एस० कैप्सूल (नि० बूट्स कं०)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार। अथवा १-२ कै० दिन में ३-४ बार।

२१. फ्लेजिल (Flagyl) (नि० एम० बी०)

मात्रा—२-४ गोली दिन में ३ बार ५-१० दिन तक।

२२. मिलीबिस (Milibis) (नि० डेज कं०)

मात्रा—बड़ों को २-२ गोली दिन में ३ बार ७ दिन तक।

२३. ह्यूमेटीन (Humatin) (नि० पी० डी०)।

मात्रा—१-२ कै० ६-८ घण्टे पर दिन में ३-४ बार ७ दिन तक।

२४. एमीबामेगमा (Amebamagma) (नि० वीथ कं०)

मात्रा—६०० मि० ग्रा० दिन में २ बार ५ दिन तक। इसकी ३०० मिग्रा० की गोली आती है।

बालक—५०-६० मि० ग्रा०। प्रति किलो शरीर भार पर दिन में केवल एक बार ५ दिन तक।

२५. एमीलास्ट (Amelast) (नि० वाल्टर वुशनैल)

मात्रा—वयस्क—२ गोली दिन में २ बार ५ दिन तक।

बालक—५-१२ साल की आयु तक—१ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक। बार-बार होने वाले रोग में १० दिन तक।

नोट—यह एक्यूट तथा क्रॉनिक 'इण्टेस्टाइनल एमीबिएसिस' में लाभकारी है।

२६. एमीबैक्टिन (Amibactin) (नि० सी० एफ० एल० फार्मा)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार अथवा आवश्यकतानुसार।

नोट—यह एक्यूट तथा क्रॉनिक दोनों प्रकार की इण्टेस्टाइनल एमीबिएसिस में लाभकारी है।

निषेध—गर्भावस्था के प्रारम्भिक दिनों (First trimester of pregnancy) अर्थात् प्रथम तीन माहों में इसका प्रयोग न करें।

२७. एमीक्लीन प्लस (Amicline Plus) (नि० ग्रीफीन)

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक। तत्पश्चात् 'एमीक्लीन' २ गोली दिन में ३ बार १० दिन तक।

२८. एमीवान (Amivan) (नि० खण्डेलवाल)

मात्रा—२-४ गोली दिन में ३ बार ५-१० दिन तक।

२९. एरिस्टोजिल (Aristogyl) (नि० एरिस्टो)

मात्रा—४०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार ५-७ दिन तक।

नोट—इसका 'एरिस्टोजिल सीरप' भी आता है।

३०. बायोमेबिक (Biomebic) (नि० बायोकेम)

मात्रा—४०० मि० ग्रा० (गोली) अथवा ८०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार ५ दिन तक।

३१. साइक्लोक्सानिड (Cycloxanid) (नि० विडल शायर)

मात्रा—२ गोली दिन में २ बार ५ दिन तक।

बालक—१ गोली दिन में २ बार ५ दिन तक।

३२. डीहाइड्रो-इमेटीन इञ्जे० (Dehydroemetine) DHE Inj. (नि० रोश कं०)

मात्रा—१० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर नित्य ६-१० दिन तक। यदि आवश्यक हो तो १५ दिन तक।

निषेध—गर्भावस्था में इसका प्रयोग न करें।

३३. डायरेड-एम (Durade-M) (नि० सिपला)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक।

बालक—१ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक। रिफ्रेक्टरी केसिस में १० दिन तक चिकित्सा जारी रखनी चाहिए।

३४. डायरेड-एम डीएस. (Dyrade M. DS.) (नि० सिपला)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक।

३५. डायरेड-एम सस्पेन्शन (Dyrade M. Susp.) (नि० सिपला)

मात्रा—बालक ५-१२ साल—१० मिली० दिन में ३ बार ५ दिन तक।

५ साल से नीचे—५ मिली० दिन में ३ बार ५ दिन तक।

३६. एन्टामीजोल (Entamizole) (नि० बूट्स)

मात्रा—वयस्क—२ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक।

बालक (५-१२)—१ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक। रिफ्रेक्टरी केसिस में १० दिन तक।

विशेष—एक्यूट अमीबिक डिसेण्ट्री, क्रॉनिक इण्टेस्टाइनल एमीबिएसिस, हेपेटिक एमीबिएसिस में लाभकारी।

३७. एण्टेरोबेरिस फोर्ट (Enteroberis Forte) (नि० विडल शायर)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार। इण्टेस्टाइनल एमीबिएसिस में।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३८. फूरान (Furan) (एसोसिएटिड)
मात्रा—७-१० साल–४ चम्मच दिन में ३ बार ५ दिन तक।
३-७ साल–२-३ चम्मच दिन में २ बार ५ दिन तक।
१-३ साल–१-२ चम्मच दिन में ३ बार ५ दिन तक।
विशेष—यह डायरिया तथा बेसिलरी डिसेण्ट्री में भी लाभकारी है।
३९. इण्टेस्टोपान फोर्ट (Intestopan Forte) (नि० सैण्डोज)
मात्रा—१-२ कै० दिन में ३ बार ५ दिन तक।
इसका इण्टेस्टोपान सस्पेन्शन भी आता है—
मात्रा—१-३ चम्मच दिन में ३ बार १० दिन तक।
४०. लूमीजिल (Lumigyl) (नि० प्लाज्मा कं०)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार ७ दिन तक।
बालक—½–१ गोली दिन में २ बार ७ दिन तक।
इसका सीरप (Lumigyl Syp.) भी आता है—
मात्रा—बालक–५-१० मिली० दिन में २ बार ७ दिन तक।
४१. लूमीजिल प्लस (Lumigyl Plus) (नि० प्लाज्मा)
वयस्क—२ गोली दिन में २ बार ५ दिन तक।
बालक—१ गोली दिन में २ बार ५ दिन तक।
४२. मेबीनोल (Mebinol) (नि० मैक)
मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार १० दिन तक।
केमोप्रोफिलेक्सिस—२ गोली सप्ताह में २ बार।
विशेष उपयोगता—यह एक्यूट, सब एक्यूट तथा क्रानिक एवं बार-बार (Relapsing form) होने वाली डिसेण्ट्री में लाभकारी है।

४३. मेट्रोजिल आई/वी० (Metrogyl I/V.) (नि० इफ्यूनिक)
मात्रा—७.५ मिग्रा/प्रतिकिलो शरीर भार की दर से दिन में ३ बार I/V. Inj. रूप में।
वयस्क और बालक १२ साल से ऊपर ५०० मिग्रा० (100 ml) प्रति ८ घण्टे पर। ५ मिली० प्रति मिनट की दर से।

बालक—१२ साल के अंदर—७.५ मिग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर I/V. इन्फ्यूजन।
नोट—हर प्रकार के एमीबिएसिस में।
४४. मेट्रोजिल (Metrogyl) (नि० यूनीक्यू)
मात्रा—वयस्क–४००-८०० एम० जी० दिन में ३ बार ७-१० दिन तक।
बालक—७-१० साल—२००-४०० एम० जी० दिन में ३ बार ७-१० दिन तक।
१-७ साल—१००-२०० एम० जी० दिन में ३ बार ७-१० दिन तक।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेट्रोजिल सस्पेन्शन (Metrogyl Susp.) भी आता है।

४५. मेट्रोक्वीन (Metroquin) (नि० नोल कं०)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक।

४६. मेजोल-क्यू (Mejol-Q) (नि० एम० एम० लैब्स०)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक।

४७. निडिल (Nidil) (नि० गूफिक)

मात्रा—६०० मि० ग्रा० की गोली दिन में २ बार ५-१० दिन तक।

४८. ओरोजिल (Orogyl) (नि० एफ० डी० सी०)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार ५-१० दिन तक।

इसका 'ओरोजिल सस्पेन्शन' भी आता है।

४९. ओरोजिल डी० एफ० (Orygul D. F.) (नि० एफ० डी० सी०)।

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक।

बालक (५-१२ साल)—१ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक।

५०. प्रोबिट (Probit) (नि० पी० सी० आई०)

मात्रा—६०० मि० ग्रा० की गोली दिन में २ बार २-६ दिन तक। 'इण्टेस्टाइन एमीबिएसिस' में ६०० मि० ग्रा० की गोली दिन में २ बार ५-१० दिन तक।

५१. क्यूजिल (Qugyl) (नि० Searie)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार ५-१० दिन तक।

इसका 'क्यूजिल सीरप' भी आता है।

बालक—४ साल तक—५ मिली०। ५ साल से ऊपर १० मिली०। प्रत्येक को ५-१० दिन तक।

५२. क्वीनाजिल (Quinagyl) (नि० सिन्थिको)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक।

इसका सस्पेन्शन भी आता है—

मात्रा—१ चम्मच दिन में ३ बार ५ दिन तक।

५३. रेसोट्रीन कम्पोजीटम (Resotren Compositum) (नि० वेयर कं०)

मात्रा—वयस्क—Mild cases—१ गोली दिन में ३ बार ७ दिन तक। Severe cases—२ गोली दिन में ३ बार ४ दिन तक। तत्पश्चात् १ गोली दिन में ३ बार ७ दिन तक।

बालक—साथ का लिटरेचर देखें।

विशेष—एक्यूट तथा क्रॉनिक डिसेण्ट्री तथा एमीबिएसिस में विशेष लाभकारी।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५४. टिनाजिल ३००/५०० (नि० सिपला)

मात्रा—६०० मि० ग्रा० दिन में २ बार ५-१० दिन तक।

बालक—५०-६० मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर भार पर दिन में १ बार ३-५ दिन तक।

५५. टिनी—३००/५०० (नि० कोप्रान)

मात्रा—६०० मि० ग्रा० (२ गोली) दिन में २ बार ५ दिन तक। इसका 'सिरप' और 'सस्पेन्शन' भी आता है।

५६. टिनीबा (Tiniba) (नि० केडिला)

मात्रा—२ टेबलेट (३०० मिग्रा०) दिन में २ बार ५ दिन तक। अथवा ४ गोली (५०० मिग्रा०) २-५ दिन तक।

५७. टिनीसाइड फोर्ट (Tinicide Forte) नि० (ब्लूक्रॉस)

मात्रा—२ टेबलेट दिन में २ बार ५ दिन तक।

५८. ट्राइडाजोल (Tridazole) (नि० फ्रेन्को इण्डियन)

मात्रा—६०० मि० ग्रा० दिन में २ बार ५-१० दिन तक।

५९. यूनीमिजोल सस्पेन्शन-२०० (Unimezole Susp. 200)

(नि० यूनीकेम)

मात्रा—बालक—१ वर्ष तक—½ चम्मच दिन में ३ बार।

१-४ साल—½-१ चम्मच दिन में ३ बार।

४-८ साल—१-१½ चम्मच दिन में ३ बार।

८-१० साल—१-२ चम्मच दिन में बार।

६०. यूनीमिजोल-४०० (नि० यूनीकेम)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार ५-१० दिन तक।

विशेष—यह Frank amoebic dysentery, Intestinal amoebiasis एवं Chronic amoebic hepatitis में लाभकारी है।

६१. वोटीनेक्स (Wotinex) (नि० वोखार्ड)

मात्रा—२ गोली दिन में २ बार ५ दिन तक।

बालक—७-१२ साल—१ गोली दिन में २ बार ५ दिन तक।

६२. जिल (Zil) (नि० साराभाई)

मात्रा—वयस्क—६०० मि० ग्रा० दिन में २ बार ५ दिन तक।

बालक—५०-६० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर दिन में १ बार ३-५ दिन तक।

विशेष—इण्टेस्टाइनल तथा हेपेटिक एमीबिएसिस में लाभकारी।

६३. जोआसाइड-५०० (Zoacide-500) (नि० टाटाफार्मा)

मात्रा—२ ग्राम की एक मात्रा तत्काल ३ दिन तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निषेध—गर्भावस्था की प्रथम तिमाही दुग्धावस्था तथा न्यूरोलोजिकल डिजीज में इसका प्रयोग न करें।

अन्य—टीनिड (सेवी फार्मा), टिनिडाफाइल प्लस-Tinidafyl plus (जगसन पाल), टिनीस्टेन-३०० (स्टेण्डर्ड ऑर्गेनिक), ट्रेग-३०० (मारटेल हेमर) आदि औषधियाँ।

अमीबिक पेचिस की अनुभूत चिकित्सा—

१. ℞ कार्बासोन (Carbasone), २५ ग्राम की १ गोली दिन में २ बार २ दिन तक दें।

१०वें दिन से १५वें दिन तक 'क्वीनोडोक्लोर' (Quinodochlor) ३०० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३ बार दें।

साथ ही—'इमेटीन हाइड्रोक्लोराइड' १ मिली० इण्ट्रामस्कुलर १ सप्ताह तक दें।

२. **पुरानी अमीबिक पेचिस में** (In Chronic amoebic dysentery)—

℞ फ्लेजिल ४०० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३ बार १० दिन तक। तत्पश्चात् फ्यूरामाइड (Furamide) २ गोली दिन में ३ बार १० दिन तक दें। इसके बाद—एण्टोबेक्स (Entobex) २ गोली दिन में ३ बार १० दिन तक। यह १ माह का पूरा कोर्स है। इससे रोगी निश्चय ही ठीक हो जायेगा।

साथ में यदि पेट में दर्द भी रहता हो तो—उपरोक्त चिकित्सा के साथ-साथ बेण्टिलजेसिक (Bentylgesic) की १-१ गोली दिन में ३ बार दें।

ट्रॉपिकल लिवर एब्सेस
(Tropical Liver Abscess)

परिचय—इसे अमीबिक लिवर एब्सेस (Amoebic liver abscess) भी कहते हैं। यह एक मेटास्टेटिक एमीबिएसिस का एक सामान्य प्रकार है, जो इण्टेस्टाइन एमीबिएसिस के केसिस में २-५% तक मिलता है।

कारण (Causes)—यकृत् शोथ की बहुत दिनों तक चिकित्सा न होने से यकृत् कोषाओं का अपजनन (Degeneration) होकर विद्रधि का रूप उत्पन्न हो जाता है।

लक्षण—(Symptoms)—१. **बुखार** (Fever)—३८-३९° सें० शीत और कँपकँपी (Chill) के साथ आता है और पसीना आकर उतर जाता है। बुखार प्राय: ८०% रोगियों में मिलता है। हैक्टिक टाइप (Hectic type temperature) मुख्य रूप से रोगी को रहता है।

२. दक्षिण हाइपोकोण्ड्रियक प्रदेश में (११%) पीड़ा मिलती है। खाँसी और छींक, दुर्बलता, एनोरेक्सिया, हिक्कफ, पैरों में ईडिमा (Oedema) आदि विकार वृद्धि कर जाते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. कभी-कभी रक्तवमन (Heamoptysis) भी मिलता है। अर्थात् थूक टिपिकल कोकोलेट रंग वाला होता है।

४. यकृत प्रदेश में पीड़ा, मन्द स्वरूप की विषमयता, धूसर वर्ण, नेत्रों का पीलापन, अंगुलियों के अग्र भाग मोटे और दक्षिण स्कन्ध में संवाहित रूप का शूल अनुभव होता है।

५. रक्त-परीक्षा में श्वेतकणों की वृद्धि मिलती है।

६. यकृत् पर भेदन तथा चुभने वाली पीड़ा होती है। शोथ की अवस्था में यह पीड़ा मन्द-मन्द बेचैनी (Dull aching) के रूप में होती है। कुछ एक में वेदना कंधे के आस-पास होती है।

७. ज्वर सायंकाल रहता है और प्रातः नार्मल हो जाता है।

चिह्न (Signs)—१. सब एक्यूट तथा क्रॉनिक केस में मुख्य रूप से इमेसिएशन (Emaciation) उपस्थित मिलता है।

२. तापक्रम बढ़ा हुआ, अनीमिया की उपस्थिति, कभी-कभी पीलिया (Jaundice) आदि भी रोगी में मिलते हैं।

३. ईडिमा (Oedema) प्रायः पैरों में मिलता है।

४. रोगी की जीभ शुष्क होती है।

५. एब्डोमिन (Abdomen)—दक्षिण हाइपोकोण्ड्रियक प्रदेश की खाल लाल होती है तथा शोथयुक्त मिलती है। प्रायः हरकत अनुपस्थित रहती है। लिवर बढ़ा हुआ तथा स्पर्श में कठोर मालूम होता है। Hepatic rub कठोर होती है।

६. **फुप्फुस** (Lungs)—छाती के दक्षिण निचले भाग में हरकत की कमी मिलती है। प्लूरल फ्रिक्शन (Pleural friction) साउण्ड कठोर होती है। कभी-कभी इफ्यूजन के चिह्न साफ प्राप्त होते हैं। श्वास-प्रश्वास की ध्वनियाँ मन्द अथवा नहीं भी सुनाई देती हैं। वाचिक कम्पन (Vocal fremitus) भीं घटी हुई होती है। गहरी श्वास लेने में रोगी को दर्द भी होता है।

७. रोगी पीठ के बल दाहिने पार्श्व में लेटना पसन्द करता है।

विशेष अन्वेषण (Special investigation)—१. **रक्त-परीक्षा** (Blood test) ल्यूकोसिटोसिस १५०००–३००००/cmm/ परन्तु पोलीमार्फ्स अधिक बढ़े हुए नहीं मिलते।

२. **लिवर पूय परीक्षा** (Liver pus test) लिवर से पूय लेकर (By respiration) परीक्षा करने पर कोकोलेट कलर, R. B. C., अपजनित लिवर सैल्स, कोलेस्ट्रोल एवं चारकोट लीडन क्रिस्टल आदि माइक्रोस्कोपिक परीक्षा में मिलते हैं।

३. **मल-परीक्षा** (Stool test)—मल की बार-बार परीक्षा करने पर 'एण्ट-अमीबा-हिस्टोलिटिका' के सैल्स मिलते हैं।

CC-0. Jia Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. **एक्स-रे परीक्षा**—इस परीक्षा में यकृत तथा दक्षिण डायाफ्राम ऊपर की ओर बढ़ा हुआ दीखता है।

५. स्क्रीनिंग से उधर का डायाफ्राम श्वास के साथ भी हिलता हुआ नहीं दीखता है।

विशेष निदानात्मक लक्षण—(Special diagnostic symptoms) पेट या पीठ पर दाहिनी ओर कोई उभार निकल आवे और रोगी पेचिस से पीड़ित हो तथा वह मद्य पीने का आदी हो तो विद्रधि का सन्देह करना चाहिए।

उपद्रव (Complications)—१. लिवर एब्सेस कई रास्तों से फूट सकता है। यदि दक्षिण फुफ्फुस में खुल जाय तो पल्मोनरी एब्सेस होकर रक्त युक्त पूय मुख से निकलने लगता है। जिसे देखकर पल्मोनरी टी० बी० का सन्देह हो जाता है।

२. यदि विद्रधि फेफड़े में फूट जाती है तो भावीफल (Prognosis) अच्छा होता है।

३. यदि विद्रधि प्लूरा में फूट जाती है तो Pleuricy with infusion या इम्पाइमा का रोग हो जाता है।

४. आमाशय में फूटने से पूय वमन तथा आँत में खुलने से मल में पूय के लक्षण मिलते हैं।

५. पेरीटोनियम में इसका खुलना अधिक भयंकर उपद्रव है।

६. कोष्ठ की अगली दीवाल के साथ इसके चिपक जाने से यह विद्रधि आमाशय-प्रदेश (एपीगैस्ट्रियम) में मुख बना सकती है।

चिकित्सा (Treatment)—१. **विशिष्ट औषधियाँ** (Specific drugs)—अर्थात् 'अमीबिक हेपेटाइटिस' की भाँति चिकित्सा करे।

२. **सहायक औषधियाँ** (Supporting drugs)—विटामिन 'बी' कॉम्पलेक्स, ग्लूकोज I/V।

एस्पिरेशन (Aspiration)—पूय को लिवर से खींचकर निकाल लेना चाहिए। इसके लिए वोटेन्स एस्पिरेटर या पिचकारी का उपयोग करना चाहिए। इससे भी लाभ न मिलने पर शल्य-चिकित्सा द्वारा पूय का संशोधन करना पड़ता है।

जहाँ तक हो सके विद्रधि का औषधि चिकित्सा द्वारा ही शमन करना चाहिए। सामान्य रूप से अमीबिक हेपेटाइटिस में बतायी गई क्रमानुसार इमेटिन, क्लोरोक्वीन, टेट्रासाइक्लीन आदि का प्रयोग करना चाहिए। यथा—

℞ इमेटीन इन्जेक्शन—पूर्वोक्त

यदि आवश्यक हो तो—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्जे० यूनीमिजोल (Unimizol Inj.) अथवा मेट्रोजिल (Metrogyl) २०० मि० ग्रा० । (५ मिली०) ४०० मिली० I/V ड्रिप नित्य ।

१० दिन के पश्चात्—

टेबलेट डिओडोक्विन (Tab. Diodoquin)
मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार ।
टेबलेट रिसोचिन (Tab. Resochin)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार
} ३ सप्ताह तक ।

द्वितीयक संक्रमण को रोकने के लिए—टेट्रासाइक्लीन अथवा आक्सीटेट्रा-साइक्लीन ।

मात्रा—२५० मि० ग्रा० दिन में ४ बार १० दिन तक ।

अमीबिक यकृत विद्रधि की अन्य चिकित्सा-व्यवस्था—

℞ टेबलेट क्लोरोक्वीन (Chloroquine) २५० मि० ग्रा० ।

मात्रा—२-२ गोली दिन में २ बार २ दिन तक । तत्पश्चात् १-१ गोली दिन में २ बार ३ सप्ताह तक ।

अथवा—टेबलेट मेट्रोनिडाजोल (Tab. Metronidazole)

२-२ गोली दिन में ३ बार ८ दिन तक ।

इससे लाभ न मिलने पर इमेटीन का प्रयोग करें । यह अत्यन्त प्रभाव-शाली चिकित्सा है । इसके लिए—

इमेटीन ६० मि० ग्रा० मांसपेशीगत १० दिन तक ।

साथ ही दूसरे जीवाणुओं के निराकरण के लिए—

टैरामाइसिन ·५ ग्राम दिन में ३ वार ७ दिन तक ।

इस चिकित्सा के बाद रोगी को २ सप्ताह तक उपर्युक्त किसी अमीवा नाशक औषधि को ३$\frac{3}{8}$ ग्रेन की मात्रा में दिन में ३ बार दें ।

'क्लोरोक्वीन फास्फेट' को १० दिन देने के वाद २ सप्ताह ठहर कर फिर इसका और 'इरीथ्रोमाइसीन' का एक कोर्स देते हैं ।

अथवा—मेट्रोनिडाजोल (फ्लेजिल Flagyl) ४०० मि० ग्रा० टेबलेट १ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक ।

नोट—प्रवाहिका तथा यकृत विद्रधि दोनों में एक साथ लाभ हो जाता है । यदि विद्रधि बड़ी हो तथा 'इमेटिन', 'क्लोरोक्वीन फास्फेट' एवं फ्लेजिल के २००–४०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार ७ दिन तक देने से शान्त न हो सके तो उसमें से एस्पिरेशन (Aspiration) द्वारा पूय को निकाल लेना चाहिए । पूय की जितनी मात्रा निकाली जा सके, निकाल लेना चाहिए । इसके बाद फ्लेजिल ६००–१२०० मि० ग्रा० नित्य दें ।

नोट—आधुनिक चिकित्सा पद्धति में यकृत विद्रधि का छेदन (Aspiration) नहीं करना पड़ता । छोटी विद्रधियाँ प्रायः अमीबानाशी चिकित्सा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से बैठ जाती हैं। पूय को श्वेतकण (W. B. C.) खा जाते हैं और विद्रधि गुहा भर जाती है। शोथ समाप्त हो जाता है। परन्तु कुछ केसिस में एस्पिरेशन के द्वारा पीब को निकालना आवश्यक हो जाता है।

आहार-चिकित्सा—इस रोग में रोगी को प्रोटीनयुक्त आहार बहुत कम मात्रा में देना चाहिए। भोजन स्टार्च प्रधान हो, ताकि अमोनिया विष का संचार शरीर में न हो सके।

इण्टेस्टाइनल एमीबिएसिस का एक आधुनिक व्यवस्थापत्र—

℞ (a) Metronidazole—orally or I/V. (atleast 1200 mg daily) for 7–10 days.

(b) Diloxinamide—500 mg. T. D. S. for 10 days. Occasionally combination of Metronidazol with Diloxinamide is used.

(c) Chloroquine Phosphate—200 mg. T. D. S. for 7 days.

(d) Dihydro-emetine—60 mg. I. M./S. C. daily for 7–10 days (with F. C. G. menitoring every few days)

(e) Tetracyclines alone or with combination with Broxyquinoline—1000–1500 mg. daily for 7 days.

सेविल्स सिस्टम आफ क्लिनिकल मेडिसिन के अनुसार अमीबिक यकृत विद्रधि की चिकित्सा—

१. पायोजेनिक एब्सेस के लिए पेनिसिलीन + स्ट्रेप्टोमाइसिन उच्च मात्रा में दें। अथवा 'टेट्रासाइक्लीन' का प्रयोग करें।

२. सम्भावित चिकित्सा हेतु रोगी को शय्या पर पूर्ण विश्राम दें।

३. यदि स्थिति साफ न हो (If condition does not clear-up) तो स्थानीय संज्ञाहरण देकर लिवर को Puncture कर पूय की खोज करें। यदि पूय की उपस्थिति मिले तो उसका एस्पिरेशन करें। साथ ही यथेष्ठ मात्रा में पेनिसिलीन और दें। अथवा कोई भी टेट्रासाइक्लीन औषधि का प्रयोग करें।

४. आजकल छेदन (Incison) तथा चूषण (Aspiration) की बहुत कम आवश्यकता पड़ती है।

५. यदि अब भी मल में सिस्ट की उपस्थिति मिले तो अमीबा-नाशी औषधियों के आधार पर चिकित्सा करें। □

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्त्रावरोध
(Intestinal Obstruction)

पर्याय—बद्धोदर, बद्धान्त्र, आँत में रुकावट ।

परिचय (Introduction)—यह वह अवस्था है जिसमें आन्त्र में मल की अग्रगति (Forward movement) रुक जाती है । मल वहीं पर रुककर सड़ने लगता है और उस सड़न से गैस उत्पन्न होकर आध्मान (Flatulence) उत्पन्न होता है । संडास युक्त पदार्थ के आन्त्र की दीवाल में लीन होने से विष के लक्षण उत्पन्न होते हैं । जैसे—वमन, मितली, शीतकाय नाड़ी-दौर्बल्य आदि ।

संक्षेप में—इस विकृति में आन्त्रगत पदार्थ की प्रगति अवरुद्ध हो जाती है ।

रोग की भयानकता एवं विषय—यह एक भयानक रोग है, जिसमें अधिकांश रोगियों की तत्काल मृत्यु हो जाती है ।

यह एक ऑपरेशन सम्बन्धी रोग (Surgical disease) है, जिसमें प्रायः शल्य-चिकित्सा की सहायता लेनी पड़ती है । फिर भी प्रथम बार रोगी को देखने का अवसर बहुधा मेडिसिन के चिकित्सक (Doctor of medicine) को ही मिलता है । पहले रोगी अपने निकटतम पारिवारिक चिकित्सक से ही सम्पर्क करता है । रोगी की पूर्ण परीक्षा करके चिकित्सक को यह निर्णय लेना होता है कि रोगी को तत्काल ऑपरेशन की आवश्यकता है । इसमें शल्य-चिकित्सक के साथ परामर्श करके ही उपयुक्त चिकित्सा की व्यवस्था करना उचित है । इस रोग में किसी भी समय ऑपरेशन की आवश्यकता पड़ सकती है । इसलिए रोगी को अस्पताल में पहले से ही रखना आवश्यक है ।

इस रोग को भलीभाँति पहिचानना काय-चिकित्सक का कर्त्तव्य है । शल्य-प्रधान रोग होने पर भी यहाँ इसका संक्षिप्त वर्णन आवश्यक है, जिससे कि चिकित्सक को इसके निदान में कोई भ्रम न हो और उसकी तत्काल उचित व्यवस्था की जा सके ।

आरम्भ के लक्षण रोगी को काय-चिकित्सक (Doctor of medicine) के ही पास ले आते हैं । इसी अभिप्राय से इसका वर्णन 'कायिक व्याधियों' (Medicinal diseases) में ही किया गया है ।

अन्त्रावरोध स्वयं कोई रोग नहीं है—अन्त्रावरोध एक ऐसी अवस्था है जिसमें आँत में किसी स्थान पर किसी कारण से अवरोध उत्पन्न हो जाता है ।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वास्तव में यह कोई रोग नहीं है, बल्कि यह कई प्रकार की आन्तरिक विकृतियों से उत्पन्न हुआ एक लक्षण पुंज मात्र है। अतः सफल चिकित्सक के लिए उन विकृतियों को दूर करना आवश्यक होता है। चिकित्सक को तत्काल चिकित्सा का आयोजन करने के लिए निम्न २ प्रकार की दशाओं (Conditions) को पहिचान लेना चाहिए—

१. मेकेनिकल (Mechanical)—इसमें आँत में किसी प्रकार के अर्बुद (Tumour) बन जाने, बन्ध वन कर उसके आँत में फँस जाने अथवा आँत में मोड़ पड़ जाने आदि कारणों से तो क्या आँत का भाग अवरुद्ध नहीं हो गया है ? अथवा—

२. आँत का पैरालिसिस होने से—क्या आँत की गति बन्द हो गई है, जिससे आँत में स्थित वस्तु का प्रवाह रुक गया है ?

नोट—इन दोनों दशाओं की चिकित्सा अलग-अलग प्रकार से की जाती है। अन्त में चिकित्सक को दोनों विशिष्ट प्रकारों को समझ लेने के पश्चात् यह निर्णय करना चाहिए कि अवरोध अर्थात् आब्स्ट्रक्शन कहाँ है। 'जेजुनम' में है या 'इलियस' में अथवा वृहदान्त्र में ।

इतना जानने के पश्चात् एक अन्य स्थिति 'विपाशन' (Strangulation) को भी समझ लेना चाहिए। कहीं यही तो नहीं है ? ऐसी दशा में अवरोध के स्थान पर आँत की दीवालों पर स्थित रक्तवाहिनियों में तथा नर्व्स पर दबाव पड़ने से बन्ध-सा हो जाता है, जिससे वहाँ का रक्तसंचार अवरुद्ध हो जाता है। साथ ही नाड़ियों के निष्क्रिय होने से आँत का पोषण रुक जाता है। ऐसी दशा में तत्काल बन्धता को दूर करने के लिए आपरेशन की आवश्यकता पड़ती है।

अन्त्रावरोध के कारण (Causes of intestinal obstruction)—

यान्त्रिक कारण—

१. बन्ध अथवा जोड़।
२. हर्निया (Hernia)।
३. वृहदान्त्र का कैंसर।
४. वालवूलस (Volvulus)।
५. इण्टससेप्शन (Intussusception)।
६. आँत में बाह्य वस्तुएँ (Foreign bodies)।

एक्यूट इण्टेस्टाइनल ऑब्स्ट्रक्शन (Acute intestinal obstruction)—An acute intestinal obstruction may be with or without 'Strangulation.'

कारण (Causes)—

(a) In the wall—Structure, Atresia, Tumour, Spasm (Viz. Hirschsprung's disease).

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(b) In the lumen—Intussusception, Faecoliths, Gall-stone ileus, Meconium ileus.

(c) Out side the wall—Bands, Volvulus, Tumour pressing from out side, herniae.

रोग लक्षण (Symptoms)—

१. कोष्ठबद्धता अर्थात् मल-त्याग न होना (Constipation)—रोगी को मल त्याग न होना—यही इसका विशेष लक्षण होता है। रोग के प्रारम्भ में अवरुद्ध स्थान से अनुलोमन गति प्रारम्भ होकर नीचे चली जाती है और रोगी को १–२ विरेचन आ जाते हैं। जो वस्तु बद्धस्थान से अधोभाग में स्थित होती है वह बाहर निकल जाती है। यह अवस्था प्रारम्भ में थोड़े समय के लिए रहती है। इसके पश्चात् पुनः एकाएक कोष्ठबद्धता आ जाती हैं। इस समय रोगी को वायु भी नहीं सरती है। बस्ति द्वारा दिया गया पानी भी बाहर नहीं आता है।

२. पीड़ा (Pain)—शूल के समान पीड़ा (Colicky pain) होती है। प्रारम्भ में पीड़ा रुक-रुक कर होती है, किन्तु आगे चलकर यह बराबर बनी रहती है।

तीव्र रूप में पीड़ा अकस्मात् शूल के समान प्रारम्भ होती है, जो नाभि के पास प्रतीत होती है, जो आगे चलकर पूरे उदर (Abdomen) में फैल जाती है। रोग की विलम्बित अवस्था में बराबर बनी रहती है।

३. वमन (Vomiting)—वमन शीघ्र आरम्भ होता है और शनैः शनैः बढ़ता जाता है। अवरोध ड्यूडेनम के जितने निकट होता है उतने ही अधिक वमन होते हैं। प्रथम १-२ वमनों में आमाशय के अन्दर जो कुछ होता है बाहर निकल जाता है। इसके पश्चात् 'गैस्ट्रिक जूस' निकलता है, तब वमन में पित्त निकलने लगता है और ड्यूडेनम से पक्वाहार लौट कर आमाशय में आने लगता है। वमन में दुर्गन्ध आती है।

अन्त में वमन का रंग और गन्ध मल के समान हो जाता है और रोगी की मृत्यु के कुछ समय पूर्व मल के टुकड़े निकलने लगते हैं।

रोगी को वमन निरन्तर और बार-बार होता है। उसके मुँह में पानी भर आता है और सहज ही में वमन हो जाता है। वमन के अधिक होने से शरीर में जल की कमी (Dehydration) हो जाता है। इसके कारण बच्चों की स्थिति अधिक खराब हो जाती है।

४. नाड़ी (Pulse)—वमन के साथ-साथ पीड़ा बढ़ती जाती है और अवसाद के लक्षण उत्पन्न होने के साथ ही नाड़ी की गति तीव्र होती चली जाती है। नाड़ी खाली प्रतीत होती है और हल्के से ही दबाने पर वह दब जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. श्वास (Respiration)—रोगी की श्वास-गति बढ़ जाती है। वह उथला श्वास लेता है तथा उनकी गहराई कम हो जाती है। वह वक्ष से ही श्वास खींचता प्रतीत होता है।

६. पसीना (Sweats)—रोगी को ठंडा पसीना आता है। जितना ही अवसाद बढ़ता जाता है इसकी मात्रा क्रमशः उतनी ही बढ़ती जाती है।

७. ताप (Temperature)—अवसाद के कारण रोगी का टेम्परेचर गिरता जाता है।

८. रक्तचाप (Blood pressure)—अवसाद के साथ-साथ रोगी का रक्तचाप (B. P.) निरन्तर गिरता जाता है।

९. आध्मान (Flatulence)—मल के रुके रहने से फरमेण्टेशन के द्वारा गैस उत्पन्न होती है। इन गैसों के उत्पन्न होने से उनकी रुकावट से आन्त्र-पाश विस्तृत हो जाते हैं और उदर फूल जाता है। आन्त्र में अवरोध की स्थिति के अनुसार उदर का भाग फूला हुआ दीखता है। क्षुद्र आन्त्र (Small intestine) के अवरोध में उदर के बीच का भाग अधिक फूला हुआ होता है।

१०. प्यास की वृद्धि (Intense thirst)—प्यास की वृद्धि हो जाती है और रोगी बराबर पानी पीने को माँगता है।

११. डिस्टेन्सन (Distension)—Large bowel के आब्स्ट्रक्शन में अधिक मिलता है।

विशिष्ट लक्षण—(i) Complete constipation.

(ii) Pain may be acute at first, and referred to the umbilicus, colicky pain.

(iii) Vomiting is a prominent symptom from the onset.

(iv) Abdominal distension is generally present; it is more in the flanks with obstruction to the colon.

(v) Peristalsis may be visible.

(vi) Constitutional symptoms gradually supervene, with prostration and a thready, rapid pulse. These also are more urgent when the small intestine is involved.

(vii) 'Tetany' can occur in high obstruction of the small intestine.

रोग निदान (Diagnosis)—पूर्ण मलबद्धता (Complete constipation), पीड़ा (Colicky pain), आध्मान, वमन, क्षीणता, नाड़ी की अति तीव्रता आदि इस रोग को स्पष्ट कर देती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोष्ठबद्धता में एनीमा देने से पानी और कुछ न कुछ मल निकल आता है तथा अन्य चिकित्सा से वायु भी सरने लगती है। परन्तु अन्त्रावरोध में न तो एनीमा द्वारा दिया गया पानी ही निकलता है और न किसी प्रकार वायु ही सरती है। साथ ही वमन आदि लक्षण भी उपस्थित रहते हैं।

पूर्ण कोष्ठबद्धता में वमन का निरन्तर आते रहना इस रोग का पूर्ण साक्षी है। चिरकारी अवस्था (Chronic stage) में यह लक्षण इतना तीव्र तथा स्पष्ट नहीं होता है।

उपर्युक्त लक्षणों के साथ-साथ यदि नाड़ी भी तीव्र हो तो रोग बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है।

रोगी परीक्षा—१. उदर की दैहिक परीक्षा आवश्यक है, विशेष कर हर्निया के लिए। जिन-जिन स्थानों पर हर्निया हो सकती है, उन-उन स्थानों की परीक्षा करनी चाहिए।

२. यह भी देखना चाहिए कि उदर में कहीं कोई पिण्ड तो स्पर्श में नहीं आ रहा है।

३. उदर का कौन-सा भाग अधिक विस्तृत है।

४. स्टेथिस्कोप द्वारा आन्त्र के शब्दों को सुनना चाहिए। इससे शान्त अथवा कोलाहल युक्त उदर का पता चलता है।

५. गुद-परीक्षा (Rectal examination)—यह परीक्षा विशेषकर बालकों में विशेष आवश्यक होती है। अन्त्रावरोध का कारण मुख्य रूप से 'इण्टस्ससेप्शन' हो सकता है। अंगुली से इण्टस्ससेप्टिड पिण्ड प्रतीत हो सकता है। जिससे अंगुली में रक्त लग जाता है। ऐसी अबस्था में प्रायः बालकों को रक्त और श्लेष्मा आता है।

एक्स-रे परीक्षा—इस परीक्षा में आँतों में गैस की उपस्थिति को देखकर अवरोध का पता लगना सम्भव हो सकता है।

इण्टेस्टाइनल आब्स्ट्रक्शन के प्रकार (Types of intestinal obstruction)—

(१) एडीनेमिक (Adynamic)—
१. Neurogenic.
२. Vascular.

(२) मेकेनिकल (Mechanical)—
१. एक्यूट (Acute)।
२. क्रॉनिक (Chronic)।
३. एक्यूट-आन-क्रोनिक (Acute-on-chronic)।
४. सब-एक्यूट (Sub-acute)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा (Treatment)—१. इसकी कोई औषधि-चिकित्सा नहीं है। चिकित्सा मुख्यरूप से अस्पताल में होनी चाहिए। मेकेनिकल इण्टेस्टाइनल आब्स्ट्रक्शन में उदर को खोलना नितान्त आवश्यक होता है। जिसकी सुविधा हास्पिटल में हो सकती है।

२. यदि घर पर ही चिकित्सा करने की आवश्यकता प्रतीत हो रही हो तो परामर्श आदि के लिए सर्जन को अपने पास रखना चाहिए।

३. यदि अन्त्रावरोध बन्ध अथवा हर्निया के कारण है तो तत्काल आपरेशन आवश्यक होता है।

नोट—अधिकांश रोगियों में हर्निया ही अवरोध का कारण माना जाता है। ऐसी अवस्था में अति शीघ्र आपरेशन की व्यवस्था करनी चाहिए।

जैसे-जैसे समय निकलता जाता है रोगी की दशा खराब होती जाती है। यदि चिकित्सक को देखने के पूर्व ही अधिक समय निकल चुका है तो वमन आदि के कारण रोगी की दशा पहले से ही अधिक क्षीण हुई होती है। ऐसी अवस्था में रोगी का सामान्य स्वास्थ्य सुधार कर शीघ्रता से आपरेशन के लिये तैयार करना चाहिए ताकि वह आपरेशन को सहन कर सके।

स्वास्थ्य-सुधार के लिए निम्न कार्य आवश्यक है—

१. द्रवों एवं लवणों की क्षति-पूर्ति।

२. अवरोधयुक्त आँत में एकत्रित स्राव अथवा द्रवों को वहाँ से हटाना। आँत को जितना ही अधिक मल रहित किया जाय उतना ही अच्छा है।

१. द्रवों एवं लवणों की क्षति-पूर्ति के लिए—'नार्मल सैलाइन' I/V दें। प्रातः-सायं १ पाइण्ट नार्मल सैलाइन (लवण विलयन) देना आवश्यक होता है। दशा की क्षीणता में यह मात्रा बढ़ाई जा सकती है।

२. द्रवों को आँत से हटाना—इसके लिए 'नियोस्टिग्मीन' देकर आँत की गति बढ़ानी चाहिए और तीव्र संकोचों द्वारा आँत के विषैले द्रव को बाहर निकालना चाहिए।

नोट—विषैले द्रव के न निकलने के कारण आन्त्रपेशी में गेन्ग्रीन हो जाती है और वह गलने लगती है।

विषैले द्रव को निकालने के लिए—आन्त्र में एक रबर की नली को प्रविष्ट करके उसे खींचा जाता है। यह क्रिया निरन्तर २४–४८ घण्टे तक जारी रखी जाती है। कभी-कभी इससे भी अधिक समय तक इसे जारी रखना पड़ता है।

इसके लिए रायल या 'मिलर-ऐक्ट' की रबर-नलिका को नासिका द्वारा आमाशय में होते हुए पक्वाशय में प्रविष्ट किया जाता है। नलिका को कई दिन तक उसी प्रकार छोड़ दिया जाता है। रोगी को उससे कोई असुविधा नहीं होती है, बल्कि रोगी को आराम मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नली के बाहर सिरे पर अथवा स्वचालित चूषक यंत्र लगा दिया जाता है जो आन्त्र के भीतर का द्रव खींचता रहता है। जैसे-जैसे आन्त्र रिक्त होती जाती है, वैसे-वैसे शक्ति लौटती जाती है। आक्रान्त भाग को रिक्त करना नितान्त आवश्यक है।

जिस समय चूषण के द्वारा अन्त्रावरोध का द्रव बाहर निकलता रहता है उस समय नार्मल सैलाइन रक्त में I/V द्वारा पहुँचाते रहना आवश्यक होता है।

ऐसी दशा में आक्षेपों को दूर करने के लिए—

एट्रोपीन १ मि० ग्रा० I/V दें।

नोट—इससे आन्त्र में गड़गड़ाहट तथा पीड़ा दोनों शान्त हो जाते हैं।

शोथ एवं संक्रमण के लिए—'एण्टीबायोटिक' का प्रयोग उचित मात्रा में करना चाहिए।

आपरेशनों के पश्चात् भी अन्त्रावरोध का रोग होते देखा जाता है। ऐसी स्थिति में ऑपरेशन के लिए कोई स्थान नहीं है। ऐसी अवस्था में चूषण द्वारा आन्त्र को खाली करना तथा 'नियोस्टिग्मीन' का प्रयोग—यही दो उपाय हैं। साथ में 'नार्मल सैलाइन' का प्रयोग भी I/V द्वारा करना चाहिए।

आध्मान की स्थिति रोगी के लिए अत्यन्त कष्टकारक होती है। ऐसी अवस्था में रोगी को ऑक्सीजन सुंघाना लाभकारी होता है।

नोट—औषधि चिकित्सा में—१. एण्टीबायोटिक का प्रयोग जीवाणुनाश के लिए किया जाता है।

२. आन्त्र की गति बढ़ाने के लिए—एट्रोपीन, स्ट्रिक्नीन, ऐसरीन, एस्टिल कोलीन आदि औषधियों का प्रयोग किया जाता है। इसमें 'एस्टिलकोलीन' अधिक शक्तिशाली औषधि है।

निर्देश—१. इन औषधियों का प्रयोग तब किया जाता है, जब आपरेशन थियेटर में पूर्ण तैयारी कर ली जाती है।

२. यह औषधियाँ शस्त्रकर्म के पश्चात् बहुत उपयोगी हैं।

ऑपरेशन (Operation)—उदर को खोलने के पश्चात् दो कार्य किये जाते हैं—

१. अन्त्रावरोध के कारण को हटाना।

२. एकत्रित मल को बाहर निकालना।

ऑपरेशन में उदर का भेदन उदर सीवनी पर ऊपर से नीचे की ओर किया जाता है। त्वचा तथा पेशियों को काटने के पश्चात् पेरीटोनियम को काटने पर आन्त्र का फूला हुआ भाग सामने आ जाता है और छेद से बाहर निकलने का प्रयत्न करता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब गरम विलयन में तौलिया (Towel) भिगोकर उसे ढकने के पश्चात् आन्त्र के फूले हुए कुछ थोड़े से भाग को छेदन से बाहर निकाल कर उसका भेदन करके भीतर के उपस्थित मल को बाहर निकाल दिया जाता है। मल को निकालने के लिए 'पौल की कॉच की नलिका' का प्रयोग किया जाता है।

इस प्रकार अन्त्रियों को रिक्त करने के पश्चात् उदर को सिल (Suturing) दिया जाता है। नलिका अन्त्रियों में ही लगी रहती है।

रोगी की दशा में सुधार होने पर अवरोध के कारण को मिटाने के पश्चात् नलिका को निकाल कर और अन्त्रियों को सिल कर उदर को बन्द कर दिया जाता है।

ऑपरेशन के पश्चात् की चिकित्सा—

१. ऑपरेशन के पश्चात् रोगी में चेतना आने पर उसको फाउलर स्थिति में रखना चाहिए।

२. समय-समय पर आमाशय से चूषण आवश्यक होता है। इसलिए पहले से ही रायल नलिका को आमाशय में रख देना चाहिए।

३. रोगी को बर्फ के टुकड़े चूसने को दिये जायें।

४. आवश्यकतानुसार रोगी को फार्मीन ५ मि० ग्रा० दिया जा सकता है।

५. स्ट्रिक्नीन तथा ऐसरीन का प्रयोग मुख से किया जाता है।

चिरकालिक अन्त्रावरोध
(Chronic Intestinal Obstruction)

परिचय—यह धीरे-धीरे होने वाला रोग है। इसमें मल-त्याग अकस्मात् नहीं रुकता है। यह दशा धीरे-धीरे उत्पन्न होती है। इसमें कोष्ठबद्धता शनैः शनैः बढ़ती है। समय-समय पर रोगी को प्रवाहिका (Dysentery) के समान आक्रमण होते रहते हैं, जिसमें मल का त्याग भी होता है।

कारण (Causes)—

1. Extrinsic—

(i) Adhesions and bands.

(ii) Pressure from outside by tumour ete.

2. Intrinsic—

(i) Carcinoma of rectum and colon.

(ii) Stricture.

(iii) Ileo-caecal T. B.

(iv) Chronic diverticulitis.

(v) Chronic intussusception—often predisposed by tumours.

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—यह रोग नवयुवकों तथा मध्य आयु के पुरुषों में विशेष 'कामन' होता है।

१. साधारण कारण से अथवा अर्बुद (Tumour) की उपस्थिति के कारण आन्त्र का मार्ग छोटा हो जाता है। आन्त्र के विपुटीशोथ (Diverticulitis), मल का संचय, आन्त्र में अर्बुद, आन्त्र में बाह्य पदार्थ की उपस्थिति तथा आन्त्र में बाहर से दबाव पड़ने के कारण यह विकृति उत्पन्न होती है।

२. प्रवाहिका तथा सिफिलिस के कारण आन्त्र का मार्ग छोटा हो जाता है।

३. कोलन में कैंसर के कारण आन्त्र का मार्ग संकीर्ण हो जाता है।

लक्षण (Symptoms)—1. Gradually increasing constipation.

2. Mild colicky pain.

3. Mild distension.

4. Alternate constipation and diarrhoea.

5. Gradually the general health breaks down, general weakness, anorexia, loss of weight etc occur.

विशेष—१. यह दशा धीरे-धीरे प्रारम्भ होती है। प्रथम रोगी को सामान्य कब्ज रहता है, किन्तु धीरे-धीरे वह जाती रहती है और मल-त्याग ठीक होता है। कुछ समय के पश्चात् पुनः मलावरोध (Constipation) का आक्रमण होता है और विरेचक औषधियों से मलत्याग हो जाता है। अन्त में कोष्ठबद्धता स्थाई रूप ले लेती है तथा विरेचकों से भी कोई लाभ नहीं होता है।

२. स्थाई कोष्ठबद्धता होने पर विरेचकों के प्रयोग करने पर केवल मरोड़ के समान पीड़ा होती है। रोगी का जी मिचलाता है। कभी-कभी उसे श्लेष्मायुक्त पतले दस्त आते हैं।

नोट—रोगी प्रायः इसको अपच तथा अतिसार का आक्रमण समझता है। किन्तु यह अवरोध से नीचे के आन्त्र के शोथ का परिणाम होता है। इसमें—

(i) कोष्ठबद्धता (Constipation) प्रारम्भ से ही रहती है और शनैः शनैः बढ़ती जाती है।

(ii) जब कोष्ठबद्धता रहती है तब उदर फूल जाता है और तन जाता है। कभी-कभी आँत में व्रण बन कर फट जाते हैं और पेरीटोनाइटिस हो जाता है।

३. कोष्ठबद्धता के पश्चात् अतिसार के बार-बार आक्रमण बृहदान्त्र के अवरोध का विशेष लक्षण होता है। अन्त में कोष्ठबद्धता पूर्णरूपेण चलने लगती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—ऐसी अवस्था में बस्तिकर्म (एनीमा) तथा विरेचक औषधियों से भी कोई लाभ नहीं मिलता है।

४. **उदर शूल** (Abdominal pain)—यह प्रारम्भ में न होकर अन्त में होता है। प्रारम्भ में केवल उदर में भारीपन प्रतीत होता है।

५. उदरशूल के साथ कभी-कभी उदर फूला हुआ प्रतीत होता है और वमन भी हो जाता है।

परीक्षा (Test)—इस दशा में आँत के विस्तृत कुंडल उदरभित्ति द्वारा दिखलायी देते हैं। आन्त्रगति भी देखी जा सकती है। परन्तु बृहदान्त्र की गति स्पष्ट नहीं होती है।

यदि गुदा में अंगुली डाल कर देखा जाये तो वह विस्तृत मिलता है।

इन्वेस्टिगेशन (Investigation)—बेरियम एनीमा (Barium enema) देकर आब्स्ट्रक्शन की साइट को निश्चित किया जा सकता है।

चिकित्सा (Treatment)—1. Labarotomy is performed.

2. Obstruction is relived.

3. Cause of obstruction is removed, otherwise short circuit anastomosis or colostomy.

नोट—इसके लिए उदर-छेदन आवश्यक होता है और इसी के द्वारा कारण को दूर किया जाता है।

भावीफल (Prognosis)—रोग का निदान जितने विलम्ब से होगा, रोगी के बचने की उतनी ही कम आशा की जाती है। यदि दो-एक दिन में निदान न हो सका और तत्काल चिकित्सा न प्रारम्भ की गई तो रोगी का बचना असम्भव हो जाता है।

शल्य-चिकित्सा जितनी देर से आरम्भ होती है, जीवन की आशा उतनी ही क्षीण होती जाती है। अन्त में स्तब्ध हो जाने पर आशा निराशा में बदल जाती है।

आवश्यक निर्देश एवं विनम्र निवेदन—अन्त्रावरोध शल्य-चिकित्सा विभाग का विषय है। अतः सर्जन को जहाँ तक हो सके ऐसे रोगी को अपनी जनरल प्रेक्टिस में नहीं लेना चाहिए। उसे किसी साधन-सम्पन्न हॉस्पिटल में शल्य-चिकित्सा हेतु निर्दिष्ट कर देना चाहिए। इसी में चिकित्सक को यश प्राप्त होता है। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आन्त्र-यक्ष्मा
(Intestinal Tuberculosis)

पर्याय—आन्त्र-क्षय, आँत की टी० बी०, आन्त्र-यक्ष्मा ।

परिचय एवं क्रिया-विज्ञान—यह १५ से ३० वर्ष के युवकों तथा युवतियों में पल्मोनरी टचुबरकुलोसिस (Pulmonary tuberculosis) के उपद्रव रूप में होती है । इसमें फुफ्फुस (Lungs) से जीवाणु अत्यधिक मात्रा में पेट से आँतों में पहुँचकर वहाँ व्रण उत्पन्न कर देते हैं । ये विशेषरूप से इलियम तथा सीकम की म्यूकस मेम्ब्रेन को प्रभावित करते हैं । इससे श्लेष्मकला में शोथ उत्पन्न हो जाता है । वहाँ एकत्रित हुए श्वेतकण (W. B. C.) जीवाणुओं को पकड़ लेते हैं । ऊपर से आये जीवाणु म्यूकस मेम्ब्रेन से नीचे की तह (Submucous layer) में चले जाते हैं और वहाँ रोहण करते हैं, जिससे वहाँ पर क्षयांकुर बन जाते हैं ।

श्लेष्मकला के नीचे बने क्षयांकुरों में पनीर जैसा पदार्थ बन कर भर जाता है । अर्थात् श्लेष्मकला के नीचे वहाँ पनीरभाव (Caseation) एवं पूयभाव (Sloughing) होकर व्रण बन जाते हैं । इलियक से आरम्भ होकर यह व्रण क्षुद्रान्त्र और बृहदान्त्र दोनों ओर फैल जाते हैं । इसके कारण श्लेष्मकला के नीचे के अवयव में मृदुभाव (Caseation) तथा पूयभाव होकर आँतों की दीवार का बहुत सारा अवयव नष्ट हो जाता है । अन्त में फाइब्रोसिस टिशू बन कर ये व्रण अच्छे हो जाते हैं और तन्तु के छोटे हो जाने से आँत गोलाकार रूप में सिकुड़ जाती है । इस प्रकार से आँतों में स्थान-स्थान पर मार्ग तंग हो जाता है, जिससे मलमार्ग में अवरोध उत्पन्न हो जाता है । अन्त्र के बाह्य आवरण में शोथ होकर वहाँ चिपचिपे स्राव के जम जाने से आँतें एक दूसरे से चिपक जाती है । इनसे भी मलमार्ग का अवरोध हो जाता है ।

बालकों में मलावरोध का लक्षण अधिक मिलता है ।

रोग का कारण (Causes)—१. बालकों में क्षय-पीड़ित गाय का दूध पीने से ।

२. बड़ों में प्रायः राजयक्ष्मा (T. B.) में क्षय जीवाणु युक्त श्लेष्मा के निगलने से ।

बालकों में भी जिन्हें राजयक्ष्मा रोग होता है, उन्हें भी आँत की टी० बी० हो जाती है । बड़ी आयु में गाय का दूध पीने से यह रोग कम होता है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकार (Types)—यह २ प्रकार का होता है—

(क) अलसरेटिव टाइप (Ulcerative type) ।

(ख) हाइपरप्लास्टिक टाइप (Hyperplastic type) ।

अलसरेटिव टचुबरकुलोसिस ऑफ इण्टेस्टाइन
(Ulcerative Tuberculosis of Intestine)

लक्षण (Symptoms)—१. आन्त्रक्षय का रोग युवतियों में अधिक होता है । बहुत से रोगियों में इसके कोई विशेष लक्षण नहीं मिलते ।

२. कुछ समय बाद जब व्रणभाव अधिक हो जाता है, तब इस रोग का सूचक लक्षण 'अतिसार' होने लगता है ।

३. **अतिसार**—रात-दिन में अनेक दस्त होते हैं । दस्त पतले तथा दुर्गन्ध-युक्त होते हैं जो साधारण औषधियों से ठीक नहीं होते हैं ।

४. **शूल** (Abdominal pain)—पेट में विशेष कर दक्षिण निम्न भाग (Right ileac region) में शूल के समान (Colicky) प्रतीत होता है जो बिना खाये भी होता है, किन्तु खाने से और बढ़ जाता है ।

नोट—यह इस रोग का महत्त्वपूर्ण लक्षण है ।

५. **स्पर्शाक्षमता** (Tenderness)—नाभि के आस-पास के प्रदेश पर स्पर्शाक्षमता का लक्षण मिलता है ।

६. **कभी मलबन्ध तो कभी अतिसार का लक्षण**—छोटी आँत में व्रण होने पर मलबन्ध का लक्षण मिलता है । सीकम तथा वृहदान्त्र में व्रण होने पर अतिसार का लक्षण होता है । अथवा कभी मलबन्ध तो कभी अतिसार रहता है ।

७. **अफारा** (Flatulence)—अफारा (पेट का फूलना) का लक्षण भी रोगी में मिलता है ।

८. अतिसार के अतिरिक्त रोगी में सायंकालिक ज्वर, रात्रि के समय पसीना, कृशता (Weakness), अन्न के प्रति अरुचि (Anorexia), पाण्डुता, सामान्य दुर्बलता आदि क्षयरोग सूक्षक लक्षण भी मिलते हैं ।

क्लिनिकल फीचर्स (Clinical features)—अधिकांश केसिस में पल्मोनरी टचुबरकुलोसिस के लक्षण मिलते हैं । परन्तु कुछ केसिस में पल्मोनरी टी० बी० के चेस्ट एक्स-रे के बाद ही इसका निर्णय होता है ।

लक्षण प्रायः अतिसार से मिलते-जुलते हैं । दस्तों में म्यूकस तथा रक्त भी आता है । कभी-कभी पूय की भी उपस्थिति मिलती है । भार की कमी, अनीमिया, कभी दस्त तो कभी कब्ज (Alternate diarrhoea and constipation) मिलते हैं ।

निकुंचन (Stricture) बनने के बाद सब-एक्यूट अथवा एक्यूट इन्टेस्टाइनल आन्स्ट्रक्शन (Intestinal obstruction) के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्वेषण (Investigation)—

१. एक्स-रे परीक्षा—बेरियम पिलाकर एक्स-रे परीक्षा करने पर रोग ग्रस्त आँत में बेरियम शीघ्र आगे निकल जाता है। अर्थात् वहाँ बेरियम की छाया (Filling defect) न हो तो रोग का निर्णय हो जाता है।

२. एरीथ्रोसाइट सेडीमेण्टेशन (Erythrocyte sedimentation) रेट बढ़ा हुआ होता है।

३. X-Ray Chest 'ट्यूबरकुलोसिस' प्रदर्शित करता है।

४. बायोप्सी करने से आंत्रगत टी० बी० का निदान होता है।

५. रक्त-परीक्षा में अनीमिया के लक्षण मिलते हैं।

सामान्य निदान (General diagnosis)—१. बालकों में आन्त्रक्षय होने पर सायंकालिक ज्वर मिलता है।

२. कृशता अधिक रहती है।

३. पेट पर अफारा मिलता है, स्पर्श में ग्रन्थियाँ सूजी हुई प्रतीत होती हैं।

४. अतिसार की उपस्थिति जो औषधियों से ठीक नहीं होती है।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—'टाइफाइड' तथा 'एपेण्डीसाइटिस' से इसका भेद करना चाहिए।

चिकित्सा (Treatment)—१. 'सामान्य चिकित्सा-प्रबन्ध' तथा 'केमोथेरापी' पल्मोनरी टचुबरकुलोसिस के समान हैं।

२. इसके साथ ही हीमेटिनिक्स (Haematinics), विटामिन्स तथा हाई प्रोटीन डाइट की व्यवस्था।

३. अवरोध (Obstruction) की स्थिति में ऑपरेशन आवश्यक होता है। 'आन्त्रगत रक्तस्राव' तथा 'उदरकलाशोथ' होने पर भी ऑपरेशन की आवश्यकता पड़ सकती है।

४. स्ट्रेप्टोमाइसीन १ ग्राम प्रतिदिन मांसपेशीगत (I/M)।

साथ ही—'आइसोनियाजिड' ५० ग्राम दिन में २–३ बार।

तथा विटामिन C (Celin) एवं कैल्शियम का प्रयोग यथावश्यक मात्रा में।

विशेष व्यवस्था—५. पहले 'विश्राम चिकित्सा' तथा 'कैमोथेरापी' का प्रयोग १२ मास तक करें।

तत्पश्चात्—आवश्यक होने पर केवल I. N. H. तथा P. A. S. का प्रयोग कुछ मास तक करें।

साथ ही—६. 'बी० कॉम्प्लेक्स', कैल्शियम ग्लूकोनेट तथा विटामिन 'सी' एवं 'डी' का प्रयोग करने से व्रणों का शीघ्र रोहण होता है।

शूल के लिए (For abdominal pain)—एण्टीस्पैजमोडिक (Anti-spasmodic) औषधियों का प्रयोग आवश्यक है।

आहार (Diet)—मृदु एवं पौष्टिक आहार दें। इसके लिए दूध, मांस,

CC-0. Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अण्डा अथवा कृत्रिम दूध का प्रयोग करें। रोग बढ़ने पर 'माल्टेड मिल्क' की व्यवस्था करें।

हाइपरप्लास्टिक इलियो-सीकल टचुबरकुलोसिस
(Hyperplastic Ileo-caecal Tuberculosis)

कारण (Etiology)—1. Common in relatively young subjects with high resistance.

2. Usually a primary lesion.

3. Mode of infection–Ingestion of tubercle bacilli with food.

लक्षण (Clinical features)—१. रोग का आक्रमण धीरे-धीरे होता है।

२. अजीर्ण (Indigestion)।

३. दक्षिण इलियक फोसा (Right iliac fossa) में Vagul pain की उपस्थिति।

४. भूख की कमी (Loss of appetite)।

५. टी० बी० के समान सामान्य लक्षण, जैसे—हल्का बुखार तथा भार की कमी।

६. कभी अतिसार तो कभी मलावरोध (Alternate diarrhoea and constipation)।

७. कभी-कभी कॉलिक (Colic), वमन तथा कॉस्टीपेशन के साथ 'सब-एक्यूट इण्टेस्टाइनल ऑब्स्ट्रक्शन' का आक्रमण होता है।

८. कभी-कभी क्रॉनिक इण्टेस्टाइनल ऑब्स्ट्रक्शन के लक्षण पैदा होते हैं, जिससे शनैः-शनैः कॉस्टीपेशन बढ़ जाता है।

९. Gradually a lumb appears in the right ileac fossa.

चिह्न (Findings)—1. कठोरता–(Tenderness)—Slight or moderate.

2. Mesentric lymph nodes may be palpable.

चिकित्सा (Treatment)—

१. सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

(i) एण्टी-टचुवरकुलर औषधियों की व्यवस्था।

(ii) विटामिन्स (Vitamins)।

(iii) शरीर में रक्त की कमी दूर करना (Improvement of anaemia)।

२. स्थानीय (Local)—**शल्य-चिकित्सा**—

शल्य चिकित्सा २ प्रकार की होती है—

(i) Right hemicolectomy.

(ii) Ileo-transverse anastomosis—सामान्य अवस्था के दुर्बल होने पर यह ऑपरेशन किया जाता है। □

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रादेशिक आन्त्रशोथ
(Regional Enteritis)

पर्याय—इसे रीजिनल इलीआइटिस (Regional ileitis), क्रोहन्स डिजीज (Crohn's disease) आदि नामों से जाना जाता है।

परिभाषा (Definition)—It is a non-specific granulomatous inflammation of the small and rerely the large gut involving sharply or multiple areas.

कारण (Causes)—इसका कोई स्पष्ट कारण मालूम नहीं हो पाया है। लोगों का विचार है कि इसके लिए आउटो-इम्यूनिटी तथा जेनेटिक कारण उत्तरदायी हैं। जालिकाकोशिकता (Reticulosis) तथा इन्फेक्शन (Infection) इसके कारण हैं।

पैथोलाजी (Pathology)—आमाशय-आन्त्र-संस्थान में मुख से लेकर गुदा तक किसी स्थान पर यह रोग अपना प्रभाव दिखलाता है। इसमें सब-म्यूकोजा की मोटाई लिम्फोडीमा, लिम्फाइड, हाइपरप्लैसिया तथा म्यूकोजा का अलसरेशन (Ulceration) भी देखा जा सकता है।

१. इसका आक्रमण धीरे-धीरे होता है। यह सामान्यतया २० से ४० वर्ष की उम्र में विशेष रूप से पुरुषों में अधिक होता है।

२. उदरशूल (Abdominal pain)—रोगी को तीव्र उदरशूल होता है, जो नाभि के आस-पास अथवा दक्षिण इलियक फोसा पर प्रतीत होता है।

नोट—यह इस रोग का विशेष लक्षण है।

३. **अतिसार** (Diarrhoea)—उदरशूल के पश्चात् रोगी को अतिसार हो जाता है। यह दूध तथा क्षोभक पदार्थ (Irritative food) के लेने पर बढ़ जाता है।

४. रोगी के मल (Stool) में रक्त आता है।

५. हल्का बुखार रहता है।

६. आन्त्र-अवरोध का लक्षण (Intestinal obstruction) मिलता है।

७. रोगी का भार शनैः शनैः घटता जाता है।

क्लिनिकल फीचर्स (Clinical features)—

प्रथम अवस्था (Stage-1)—

(i) अतिसार (Diarrhoea)—रोगी को अतिसार शूलयुक्त अथवा बिना शूल के होता है।

(ii) बुखार (Pyrexia)।

(iii) Tenderness in the R. I. F.

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(iv) Slight anaemia.

(v) Blood and mucous in the stool.

(vi) Perineal inflammations.

द्वितीयावस्था (Stage-2)—

(i) Obstructive signs (Signs of chronic or acute intestinal obstruction)

तृतीयावस्था (Stage-3)—

(i) Slow perforation of the intestine with formation of fistula.

अन्वेषण (Investigation)—

१. **रक्त-परीक्षा** (Blood test)—माइक्रोसाइटिक अनीमिया एवं ल्युकोसिटोसिस मिलते हैं। E. S. R. बढ़ा हुआ मिलता है।

२. **मल-परीक्षा** (Stool test)—मल में पूयसैल की उपस्थिति।

३. **एक्स-रे परीक्षा**—Filling defect मिलती है।

४. **सिग्मो-आइडोस्कोपिक परीक्षा** (Sigmoidoscopic examination)—इस परीक्षा में प्रभावित म्यूकोजा शोथयुक्त मिलती है। कभी-कभी अलसर की उपस्थिति मिलती है।

औषधि चिकित्सा (Medical treatment)—

(i) विश्राम (Rest)

(ii) मेट्रोनिडाजोल (Metronidazole) मुख द्वारा या I/V ड्रिप द्वारा।

(iii) High protein and high caloric diet rich in vitamins.

(iv) Symptomatic :

(a) Codeine phosphate for diarrhoea.

(b) Probanthine 15-30 mg. T. S. D. for spasm.

(v) Cortisone by mouth—Prednisolone १० मि० ग्रा० दिन में ३ बार उग्रावस्था तक।

(vi) Azathiaprine in small doses.

(vii) 'एम्पीसिलीन' अथवा 'टेट्रासाइक्लीन' २५० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर ७-८ दिन तक।

अथवा—सल्फाथायजोल (Sulphathizole)

मात्रा—२ ग्राम प्रति ६ घण्टे पर।

नोट—कुछ लोग सालाजोपाइरीन (Salazopyrine) टेबलेट देना अधिक पसन्द करते हैं।

शल्य-चिकित्सा (Operation)—परफोरेशन (Perforation—आन्त्र छिद्रीकरण), रक्तस्राव, इण्टेस्टाइनल ऑब्स्ट्रक्शन आदि स्थितियों में शल्य चिकित्सा आवश्यक होती है। मेडिकल चिकित्सा के असफल होने तथा फिस्चुला की स्थिति में शल्य-चिकित्सा का सहारा लिया जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आमाशय का विस्फार
(Dilatation of the Stomach)

पर्याय (Synonyms)—आमाशय-विस्तृति, डाइलेटेशन ऑफ द स्मटक (Dilatation of the stomach) ।

परिभाषा (Definition)—यदि किसी व्यक्ति का आमाशय पूर्व की अपेक्षा बढ़ जाये और अपना कार्य सुचारु रूप से न कर सके तो उसे 'डाइलेटिड स्टमक' कहते हैं ।

कारण (Causes)—१. जन्मजात आमाशय की दीवार का दुर्बल होना ।

२. अधिक भोजन कर लेने से ।

३. कोमल स्वभाव के व्यक्तियों में अग्निमांद्य (Dyspepsia) तथा अजीर्ण (Indigestion) होने पर आमाशय बढ़ जाता है ।

४. आमाशय के मार्ग में अवरोध तथा रूकावट होना ।

५. उदर पर ऑपरेशन होने के पश्चात् बिना किसी विशेष कारण के आमाशय विस्तृत हो जाता है ।

६. तीव्र संक्रामक रोग (Acute infectious disease) ।

लक्षण (Symptoms)—१. भोजन करते समय ही प्रायः उसके थोड़ी देर बाद आमाशय में भारीपन प्रतीत होता है ।

२. थोड़ा-सा भोजन लेने पर ही पेट भरा-सा प्रतीत होता है । रोगी को कष्ट का अनुभव होने लगता है । इसलिए वह कम से कम भोजन लेना पसन्द करता है ।

३. रोगी का शरीर अत्यन्त दुर्बल हो जाता है ।

४. शरीर के साथ-साथ आमाशय भी अधिक क्षीण तथा दुर्बल हो जाता है ।

५. रोगो को थोड़ा-सा भी भोजन नहीं पचता है ।

६. आमाशय अधिक फूलने पर रोगी का पेट फूलता जाता है । रोगी को उत्क्लेश होने लगता है । कभी-कभी वमन भी होने लगता है ।

७. आमाशय की अनुलोमन गति का ह्रास हो जाता ।

निदान (Diagnosis)—जब आमाशय में भोजन अधिक देर तक रुका रहे तथा भारीपन, उत्क्लेश, वमन आदि लक्षण उत्पन्न हों तब इसे आमाशय-विस्तृति समझना चाहिए ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Public Domain.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिताडन (Percussion)—आमाशय पर ठेपण करने अथवा ठोकने से आमाशय बढ़ा हुआ प्रतीत होता है।

आमाशय स्राव की परीक्षा—गैस्ट्रिक एनालिसिस (Gastric analysis) करने पर प्रातःकाल भी आमाशय में भोजन का अंश मिलता है।

अन्य निदानात्मक लक्षण एवं चिह्न—१. रोगी को भोजन के ३ घण्टे पश्चात् भी हिलाने पर आमाशय में ध्वनि (Splashing) होती है।

२. उदर पर पुरस्सरण की तंरगें (Visible peristalsis) दिखलाई पड़ती है।

भावीफल (Prognosis)—तीव्र अवस्था में जब अकस्मात् सहसा आमाशय विस्तृत हो जाता है और ठंडा पसीना आकर शरीर शीतल हो जाता है तो ऐसे ७५% रोगी की मृत्यु हो जाती है।

चिकित्सा (Treatment)—

सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोग के कारण का पता लगाकर कारण के अनुरूप समुचित चिकित्सा करनी चाहिए।

२. रोगी को लघु तथा सुपाच्य भोजन देना चाहिए, जिसमें तरल पदार्थों की मात्रा कम से कम हो।

३. भोजन के १ घण्टे पश्चात् तक दाईं करवट लेटे रहना चाहिए। प्रातः काल दूध तथा दोपहर को लघु आहार दें।

४. रोगी को पाचनार्थ 'डिस्पैप्सिया' में बतलाई गई औषधियाँ देनी चाहिए।

५. रोग की उग्रावस्था में अधपचा दूध (Peptonized milk), मांस-रस, अधपका अण्डा आदि देना चाहिए।

नोट—इस अवस्था में दूध उपयोगी नहीं है।

६. कोष्ठबद्धता के लिए वस्ति (एनीमा) का प्रयोग।

औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—आमाशय के अकस्मात् फूल जाने पर 'रायल' की नलिका को नाक में प्रवेश कर आमाशय का प्रक्षालन (Stomach wash) करना चाहिए।

℞ प्रोस्टिग्मीन (Prostigmine)

मात्रा—१ मि० ग्रा० दिन में ३ बार S/C दें।

शरीर में जल की कमी में—

नार्मल सैलाइन (Normal saline) ५००-१००० मिली० I/V ड्रिप दें।

अथवा—डेक्स्ट्रोज (Dextrose) I/V दें।

नोट—१. इन्हें गुदामार्ग से भी प्रवेश करा सकते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. जहाँ तक हो सके रोगी को तरल आहार तथा औषधि मुख से न दें।

आहार-चिकित्सा—इस रोग में आहार-चिकित्सा विशेष महत्त्व रखती है।

१. प्रथम सप्ताह—पहले रोगी को पेप्टोनाइज्ड दूध दें।

२. द्वितीय सप्ताह—आधा उबला हुआ अण्डा, मांस का जूस, गेहूँ का दलिया, चावल की पतली खीर, नरम केक, दूध में टोस्ट, सेव आदि दें।

३. तृतीय सप्ताह—इस सप्ताह भोजन की मात्रा बढ़ाते जायें। साथ ही २० से २५ दिन में रोटी, नरम सब्जी तथा नरम फल आदि दें।

१½ मास तक मांस, दाल और साधारण रोटी तथा खिचड़ी आदि दे सकते हैं।

निषेध—१. मद्यपान तथा तीक्ष्ण मशालों का सर्वथा निषेध करें।

२. धूम्रपान का त्याग करें।

पाचन-संस्थान के रोग 1/17

अरक्तता/रक्तक्षीणता
(Anaemia)

पर्याय—अरक्तता, रक्तक्षीणता, पाण्डुरता तथा शरीर का पीलापन।

परिचय—रक्त में लोहित कणिकाओं (Red Blood Carpuscles) की संख्या और उसमें उपस्थित 'हीमोग्लोबिन' की मात्रा का कम हो जाना अनीमिया कहलाता है। आधुनिक चिकित्सा-शास्त्र में पाण्डु के लक्षण अनीमिया से ही मिलते-जुलते हैं।

आधुनिक दृष्टिकोण से अनीमिया के अनेक कारण होते हैं, अतः यह अनेकों प्रकार की होती है—

१. लौह की कमी से उत्पन्न अनीमिया (Iron deficiency anaemia)।

२. परनीसियस अनीमिया (Pernicious anamia)—इसे एडीसोनियन अनीमिया (Addisonian anaemia) भी कहते हैं।

३. फोलिक एसिड डिफीसियेन्सी (Folic acid deficiency)।

४. एप्लास्टिक अनीमिया (Aplastic anaemia)।

५. अनीमिया ऑफ लेड पायजनिंग (Anemia of lead poisoning)

६. अनीमिया ऑफ मिक्सीडीमा (Anaemia of myxedema)।

७. प्योर रैड सैल एप्लासिया (Pure red cell aplasia)।

८. हीमोलीटिक अनीमिया (Hemolytic anaemia)।

९. हेरिडिटेरी स्फेरोसिटोसिस (Hereditary spherocytosis) (Congenital hemolytic anaemia)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(Congenital hemolytic Jaundice)।

१०. सिडरोब्लास्टिक अनीमिया (Sideroblastic anaemia)।

१२. मैगालोब्लास्टिक अनीमिया (Megaloblastic anaemia)।

मुख्यरूप से अनीमिया २ प्रकार की होती है—

१. **लौह की कमी से उत्पन्न अनीमिया** (Iron deficiency anaemia)—यह अनीमिया जन साधारण में सबसे अधिक देखने को मिलती है।

२. **विटामिन बी$_{१२}$ अथवा फोलिक एसिड की कमी से उत्पन्न अनीमिया**—इसमें प्रणाशी अरक्तता (Pernicious anaemia) तथा मैगालोब्लास्टिक अरक्तता (Megaloblastic anaemia) गर्भावस्था आदि की कभी-कभी देखने को मिलती है।

लौह की कमी से उत्पन्न अरक्तता
(Iron Deficiency Anaemia)

भारतवर्ष में यही अनीमिया सर्वाधिक मिलती है।

कारण (Causes)—इस अनीमिया के निम्न कारण हैं—

१. भोजन में आयरन की कमी।

२. गरीब और मध्यम वर्ग की स्त्रियों में जल्दी-जल्दी प्रसव होने तथा मासिकधर्म आदि में अधिक रक्त निकल जाने के कारण।

३. पुरुषों में बवासीर (Piles) के कारण अधिक रक्त निकल जाने तथा आँतों में उपस्थित अंकुश कृमि (Hook worms) के कारण।

सामान्य लक्षण—सामान्य रूप से अरक्तता के लक्षण अस्पष्ट से होते हैं।

१. अधिकांश रोगियों में कमजोरी (Weakness) तथा थकावट के लक्षण मिलते हैं।

२. रोगी का साँस फूलता है।

३. हाथ-पैर में चींटी-सी लगना अथवा सुन्न पड़ना।

४. भूख की कमी (Loss of appetite)।

५. हृदय की धड़कन बढ़ जाती है।

६. किसी-किसी केसिस में चेहरे और पैरों में शोथ हो जाता है।

७. **शरीर का पीलापन**—यह इस रोग का विशिष्ट लक्षण है। इसमें हाथ की हथेलियों में, जीभ पर, नाखूनों पर तथा आँखों में नीचे के ओर की पलक के भीतरी भाग में पीलापन दिखलायी देता है।

८. जीभ का रंग पीला पड़ने के अतिरिक्त उसके अंकुर नष्ट हो जाते हैं। जिससे जीभ साफ, चमकदार तथा तथा गंजी प्रतीत होने लगती है।

९. थोड़ा-सा परिश्रम करने पर रोगी का साँस फूलने लगता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. नाखूनों की प्राकृतिक चमक समाप्त हो जाती है और उनका सहज में टूटने योग्य होना लौह की कमी जन्य अरक्तता का प्रमुख चिह्न है। अरक्तता बढ़ने पर नाखून चपटे-से हो जाते हैं। साथ ही अधिक उग्रावस्था में वे नतोदर (Concave) हो जाते हैं। यहाँ तक कि कुछ केसिस ऐसे भी देखने में आये हैं कि इसमें नाखून चम्मच की आकृति के हो जाते हैं। यह चिह्न लौह अल्पता जन्य अरक्तता (Iron deficiency anaemia) का निश्चयात्मक चिह्न माना जाता है।

११. रोगी की त्वचा कान्तिहीन तथा पीली-सी मालूम पड़ती है।

नोट—चेहरे के पीलेपन से रोग का सही पता नहीं चलता है, क्योंकि बहुत से सामान्य भारतीय लोगों के चेहरे पर प्रायः पीलापन देखने को मिलता है।

विशिष्ट पहिचान—नाखूनों का सूखा होना तथा उनकी चमक समाप्त हो जाना।

२. अरक्तता अधिक बढ़ने पर नाखून का चम्मच की आकृति का होना।

गर्भवती स्त्रियों में अनीमिया (Anaemia in pregnant women)—

हमारे देश में अधिकांशतः स्त्रियाँ ही (५०% के लगभग) अनीमिया की शिकार होती हैं। अधिकांश स्त्रियाँ अरक्तता के कारण प्रसव के समय मृत्यु को प्राप्त होती देखी जाती हैं। अतः आजकल एहतियात के तौर पर समस्त गर्भवती स्त्रियों को औषधि के रूप में प्रतिदिन आयरन (Iron) देना परम आवश्यक होता है।

नोट—अतएव प्रत्येक स्त्री के लिए यह आवश्यक है कि वह गर्भवती होते ही चिकित्सक के पास जाये और अपनी जाँच करा ले कि कहीं उसे अनीमिया तो नहीं है।

अधिकांश चिकित्सक गर्भवती स्त्रियों को रक्त-परीक्षण (Blood test) हेतु पैथोलॉजिस्ट के पास भेज देते हैं। यदि रिपोर्ट में 'हीमोग्लोबिन' ८५% से कम हो तो तुरन्त उस गर्भवती को आयरन के योग देने की व्यवस्था करनी चाहिए।

Essential of Diagnosis—

1. Pallor, lassitude.
2. Hypochromia, Microcytosis. Red cell count less reduced than haemoglobin.
3. Serum ferritin below 12mg/ml.
4, Serum iron low, total iron-binding capacity increased.
5. Blood loss usually chronic and occult.

Clinical Findings—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

1. Easy fatigability.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

2. Dyspnoea.
3. Palpitation.
4. Angina and tachycardia.
5. Waxy pallor, brittle hair and nails.]
6. Smooth tounge. |
7. Cheilosis. | are late findings
8. Dysphagia. |
9. Pica.]

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—आयरनजन्य अरक्तता का विभेद अन्य हाइपोक्रोमिक अनीमिया से करना चाहिए।

उपद्रव (Complications)—

१. Severe dysphagia (Plummer-vinson syndrom)

२. जो रोगी 'हार्ट डिजीज' से पीड़ित होते हैं, उनमें गम्भीर स्वरूप की अनीमिया एञ्जाइना पेक्टोरिस (Angina pectoris) अथवा कंजेस्टिव हार्ट फेल्योर को उत्पन्न करती है।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ टे० फैरस सल्फेट (Tab. Ferrous sulphate) २०० मि० ग्रा०
व्या० नाम—टे० फर्सोलेट (Tab. Fersolate)
मात्रा—२–४ गोली नित्य भोजन के तत्काल बाद।
साथ ही—फोलिक एसिड टे० ५ मि० ग्रा०
मात्रा—१ गोली दोपहर के भोजन के बाद।
अथवा—सीरप डैक्स ऑरेञ्ज (Syrup dexorange)
मात्रा—वयस्कों में—१–२ चम्मच दिन में २ बार भोजन के बाद।
बालकों में—२–५ वर्ष—१ चम्मच दिन में २ बार भोजन के बाद।
५–१२ वर्ष की आयु—२ चम्मच दिन में २ बार भोजनोपरान्त।

नोट—जिन्हें फैरस सल्फेट उपयुक्त नहीं पड़ता है, उन्हें यह सीरप उपयुक्त रहता है।

यदि अनीमिया अधिक हो तो—

℞ १. इञ्जे० आयरन डेक्स्ट्रान १०० मि० ग्रा० प्रति २ मिली०
व्या० नाम—इन्जे० इम्फेरोन (Inj. Imferon)
मात्रा—१–२ मिली० मांसपेशीगत अवस्थानुसार।
निर्देश—यह इञ्जेक्शन गहराई में कूल्हे में दिया जाता है।
२. कैप्सूल फैरो-रैडोक्सोन (Cap. Ferro-redoxon)
मात्रा—१ कै० नित्य भोजन के बाद।
अथवा—इलेक्सिर रुब्राटोन (Elexir Rubraton)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—२ चम्मच दिन में ३ बार।

नोट—गर्भावस्था के अन्तिम तीन महीनों में इस प्रकार आयरन सेवन करना आवश्यक होता है। यदि प्रसव के पश्चात् भी ३-४ महीनों तक सेवन जारी रखा जाये तो अधिक लाभकारी होता है।

चेतावनी—जहाँ तक सम्भव हो, आयरन के इन्जेक्शन नहीं लगाना चाहिए, क्योंकि इससे कई प्रकार की जटिलताएँ उत्पन्न हो जाती हैं।

३. अनीमिया के अन्य कारणों की भी चिकित्सा करनी चाहिए।

फैरस सल्फेट के कुछ योगों (Preperations) की मात्रायें नीचे दी जा रही है—

१. फैरस सल्फेट—२०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

२. फैरस फूमेरेट—२०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

३. फैरस ग्लूकोनेट—३००–६०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

४. फैरस सक्सीनेट—१५०–३०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

निर्देश—इन्जेक्शन के लिये–टेस्ट डोज ०.५ मि० ली० पहले दे देना चाहिए। कोई प्रतिक्रिया न होने पर ३–५ मिनट बाद अन्य मात्रा देना चाहिए।

अन्य चिकित्सकों के अनुसार—

(i) फैरस सल्फेट–०.३ ग्राम दिन में ३ बार भोजनोपरान्त। अथवा—

(ii) फैरस ग्लूकोनेट—०.३ ग्राम दिन में ३ बार भोजनोपरान्त।

नोट—ओरल आयरन की मात्रा ३ महीने तक जारी रखनी चाहिए। जब तक कि हीमोग्लोबिन का सामान्य मूल्य (Normal Values) सामान्य न हो जाये।

प्रणाशी अरक्तता
(Pernicious Anaemia)

परिचय—इसे एडीसोनियन अनीमिया (Addisonian anaemia) भी कहते हैं। इसमें लालकणों (R. B. C.) की मात्रा अत्यधिक घट जाती है। किन्तु कणिकाओं का आकार बड़ा हो जाता है। इसमें हीमोग्लोबिन ३०–४०% तक रह जाती है।

यह रोग प्रायः हमारे देश में नहीं होता है। यहाँ इक्का-दुक्का व्यक्ति ही इससे आक्रान्त होते हैं। यह रोग गोरी चमड़ी वाले व्यक्तियों में अधिक होता है।

कारण (Causes)—यह एक हीनताजनित रोग है, जो अरक्तता-रोधी घटक (Anti-anaemic factor) की कमी से होता है।

आक्रमण—धीरे-धीरे होता है।

उम्र (Age)—मध्यावस्था–४० से ६० वर्ष की अवस्था।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिंग (Ssx)—महिलायें ।

लक्षण (Symptoms)—१. दुर्बलता (Weakness) ।

२. शरीर का पीलापन (Pallor) ।

३. हृदय का धड़कना (Palpitation) ।

४. रुक-रुक कर अतिसार तथा उदर-पीड़ा ।

५. जिह्वा का व्रणयुक्त होना ।

६. निम्न स्वरूप का बुखार (Low grade temperature) ।

७. रोगी की भूख मारी जाती है (Loss of appetite) ।

८. अफारा रहता है, जी मिचलाता है, वमन और दस्त होते हैं ।

९. रोग के आगे बढ़ने पर मेरुरज्जु (Spinal cord) का अपजनन (Degeneration) होने लगता है, जिसके परिणामस्वरूप पहले हाथ-पैरों में सुन्नता तथा चीटियाँ-सी चलना आदि लक्षण होते हैं । आगे चलकर हाथों को हिलाना तथा चलाना कठिन हो जाता है ।

Other symptoms—1. Easy fatigability.

2. Dyspnoea.

3. Angina and tachycardia.

4. Vitamin B_{12} deficiency may lead to glossitis and gastro-intestinal symptoms such as–**Belching, Indigestion Anorexia,** and **Diarrhoea.**

नोट—प्राय: चिकित्सक की सलाह उस समय तक नहीं ली जाती, जब तक कि रोग काफी बढ़ नहीं गया होता है ।

यदि प्रारम्भ में ही इसका निदान कर चिकित्सा न की गयी तो रोगी मर जाता है । बाद में 'टॉनिक्स' के सेवन से भी लाभ की आशा संदिग्ध रहती है ।

Essential of diagnosis—1. Anorexia, dyspepsia, smooth, sore tongue.

2. Constant symmetric numbness and tingling of the feet.

3. Pallor and a trace jaundice.

4. Oval macrocyts, Pancytopnenia, hyper segmented neutrophils.

5. Megaloblastic bonemarrow.

परीक्षा (Examination)—

१. गैस्ट्रिक एनालिसिस में सहायता मिलती है ।

२. शिलिंग टेस्ट पोजीटिव (+) होता है ।

चिकित्सा (Treatment)—

१. शय्या पर पूर्ण विश्राम (Complete rest in bed) ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. गम्भीर अवस्था में ब्लड-ट्रान्स्फ्यूजन (Blood transfusion)।

℞ हाइड्रोक्सी-कोबालामीन (Hydroxy-cobalamine) १०० माइक्रोग्राम

अर्थात्—विटामिन बी$_{१२}$ १०० माइक्रोग्राम मांसपेशीगत प्रतिदिन १ सप्ताह तक। तत्पश्चात् १०० माइक्रोग्राम का १ इन्जेक्शन महीने में १ बार अनिश्चित काल तक।

नोट—१. इस प्रकार की अरक्तता में 'फोलिक एसिड' बिलकुल नहीं देना चाहिए।

२. विटामिन बी$_{१२}$ का मुँह से सेवन कराना व्यर्थ होता है। अतः इसे नहीं भूलना चाहिए।

३. रोगी को जीवन भर विटामिन बी$_{१२}$ लेने की सलाह देनी चाहिए।

मेगालोब्लास्टिक अनीमिया
(Megaloblastic Anaemia)

परिचय—इसमें भी रक्तकणिकाएँ बड़ी आकार की हो जाती हैं।

कारण (Causes)—शोधों से पता चला है कि शरीर में विटामिन बी$_{१२}$ के पदार्थों और फोलिक एसिड की कमी इसके लिए उत्तरदायी होती है। फोलिक एसिड हरी पत्तियों में रहता है।

प्रभावित होने वाले व्यक्ति—इस प्रकार की रक्ताल्पता कभी-कभी गर्भवती स्त्रियों में हो जाती है। विशेष कर गर्भावस्था के अन्तिम दिनों में अथवा प्रसव के पूर्व।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ १. फोलिक एसिड टेबलेट (Folic acid tab.)।

मात्रा—१ गोली नित्य।

२. विटामिन बी$_{१२}$ १०० माइक्रोग्राम का १ इन्जेक्शन मांसपेशीगत १ सप्ताह तक।

अनीमिया नाशक आधुनिक पेटेण्ट मेडिसिन्स—

(१) आउट्रिन (Autrin) (लीडर्ले)

मात्रा—१ कै० नित्य भोजन के बाद।

विशेष—यह आयरन डेफिसियेन्सी अनीमिया तथा मेगालोब्लास्टिक अनीमिया (गर्भावस्था में) की विशेष औषधि है।

(२) बेनोगेन (Benogen) (रेलिस)

मात्रा—१ कै० दिन में २ बार।

विशेष—विभिन्न कारणों से उत्पन्न अनीमिया में।

(३) डेक्सोमिन-१२ (Dexomin-12) (Sol)

मात्रा—१ कै० दिन में २ बार भोजनोपरान्त।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लौह की कमी से उत्पन्न अनीमिया, गर्भावस्था तथा दुग्धावस्था की अनीमिया में विशेष लाभकारी।

(४) डेक्स्ट्रोफर (Dextrofer) (नि० डेक्ट्रोमेड)

मात्रा—१-२ कै० नित्य अथवा आवश्यकतानुसार।

इसका लिक्विड भी आता है—

मात्रा—५ मिली० दिन में १ या २ बार।

बालकों को—वयस्क की $\frac{1}{3}$ मात्रा।

यह मेगालोब्लास्टिक अनीमिया तथा आयरन जन्य रक्ताल्पता में उपयोगी है।

इसका 'डेक्स्ट्रोफर ड्राप' भी आता है।

मात्रा—शिशु—१०-२० ड्राप दिन में २-४ बार भोजन के बाद।

बालक—१-२ मिली० दिन में २-३ बार भोजनोपरान्त।

(५) डूमासूल्स (Dumasules) (फाइजर कं०)

मात्रा—२ कैपसूल नित्य नाश्ते अथवा डिनर के बाद।

यह गर्भावस्था, रक्त की कमी तथा न्यूट्रीशनल अनीमिया में उपयोगी है।

(६) इरीथ्रोटोन (Erythrotone) (निकोलस)

मात्रा—१ कै० भोजन के साथ या भोजन के बाद।

यह गर्भावस्था की रक्ताल्पता तथा दुग्धावस्था में लाभकारी है। इसका लिक्विड भी आता है।

(७) फेफोल स्पेन्सूल (Fefol spansule) (स्केलैब)

मात्रा—१ कै० नित्य सम्पूर्ण गर्भावस्था तथा दुग्धावस्था तक।

यह गर्भावस्था तथा दुग्धावस्था में लौह तथा फोलिक एसिड की कमी में उपयोगी है।

(८) फेमूट्रिन (Femutrin) (एसोसिएटिड)

मात्रा—१ कै० नित्य भोजन के पूर्व अथवा बाद में।

(९) फैरोफोलिण्डोन (Ferofolindon) (इण्डो फार्मा)

मात्रा—१ गोली दिन में २-३ बार भोजन के बाद।

यह चिरकारी रक्त की कमी (Chronic blood loss) जन्य अनीमिया तथा हुकवर्म्स जन्य अनीमिया में लाभकारी है।

(१०) फैरोचिलेट (Ferrochelate) (एल्वर्ट डेविड)

मात्रा—१ कै० नित्य।

इसका Ferrochelate drop भी आता है—

मात्रा—१-५ ड्राप दिन में २ बार।

(११) फेरोवान (Ferrowan) (वाण्डर)

मात्रा—१ कै० दिन में २ बार भोजनोपरान्त।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह गर्भावस्था (Pregnancy) की रक्ताल्पता, ट्रॉपिकल न्यूट्रीशनल मेक्रोसाइटिक अनीमिया तथा शल्य-चिकित्सा के उपरान्त उत्पन्न अनीमिया में लाभकारी है।

(१२) फेरविट (Fervit) (वाल्टर बुशनैल)
मात्रा—१ कै० नित्य भोजन के मध्य या बाद में।

(१३) फेसोफॉर स्पेन्सूल (Fesofor spansule) (स्केलैव)
मात्रा—१-२ कै० रोग की गम्भीरता के अनुसार।
आयरन डिफीसिएन्सी तथा Chronic Blood-loss में लाभकारी है।

(१४) फोलीनेट बी$_{१२}$ (Folinate B_{12}) (एलेम्बिक)
मात्रा—१ कै० नित्य भोजन के बाद।
इसका लिक्विड भी आता है—
मात्रा—वयस्क—१० मिली० भोजनोपरान्त।
बालक—१.२५–२.५ मिली० भोजनोपरान्त।
शिशु—१ मिली० भोजनोपरान्त।

अन्य—१. फोलीट्रिन (Folitrin) (नि० बायोकेम)
२. फूमीरोन कै० (Fumiron caps) (स्टेडमेड)
३. हीमाट्रिन कै० (Hematrin caps) (सैण्डोज)
४. हेपेटोग्लोबिन (Hepetoglobin) (रेप्टाकोस)
५. हेप्टूल्स-TR कै० (Heptules-TR.) (मैक)
६. इबेरोल (Eberol) (एब्वोट)
इसकी टेबलेट तथा लिक्विड दोनों आता है।
७. इडिग्लोबिन (Idiglobin) (IDPL)
८. इम्फेरोन इं० (Imferon Inj.) (रेलिस)
९. इम्फेरोन बी$_{१२}$ इञ्जे० (नि० रेलिस)
१०. जेक्टोफर इं० (Jectofer Inj.) (नि० CFL फार्मा)
११. काइनेटोन लिक्विड (बूट्स)
१२. लिवीब्रोन लि० (पी० डी०)

विशेष—लिवोजिन कै०, माइनाटाल कै०, निओफेरीलेक्स सस्पे०, न्यू फेरम इन्फेंट्स ड्राप, नोरी-ए टेबलेट, प्लास्टूल्स बी$_{१२}$ कै०, प्रोबोफेक्स सीरप, रेरीकैप HT टेबलेट, रेडीप्लेक्स टे० एवं लिक्विड, रूब्राप्लेक्स इलेक्सिर, सोल-रेञ्ज लि०, साइब्रोन लि०, टोनोफेरोन सीरप, विमफेर कै०, विटकोफोल इञ्जे० एवं विटकोफोल सीरप आदि।

अनीमिया-नाशक पेटेण्ट प्रेस्क्रिप्शन्स—

(१) B$_{१२}$ मैक्रोफोलीन
मात्रा—१ मिली० इण्ट्रामस्कुलर नित्य या एक दिन छोड़ कर।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—बेलामाइल (Belamyl)
मात्रा—१ मिली० मांसपेशीगत नित्य या तीसरे दिन।
साथ ही—डेल्फिकोल (Delphicol) (नि० लीडर्ले)
मात्रा—२-२ चम्मच दिन में ३ बार भोजनोपरान्त।
अथवा—हिकोसिटोन (Hicositon)
मात्रा—२-२ चम्मच दिन में ३ बार भोजनोपरान्त।

(२) **भयंकर प्रकार की रक्ताल्पता में** (In severe anaemia)—

℞ सोल्यूजाइम	१ एम्पुल
सिंकाविट	१० मि० ग्रा०
रीडोक्सोन	५०० मि० ग्रा०
ग्लूकोज २५%	५० मिली०
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा I/V द्वारा धीरे-धीरे लगावें।
इसके साथ ही—मैगसल्फ ४ ड्राम की १ मात्रा दें।

(३) **अनीमिया में उपसर्ग** (Infection) **की उपस्थिति मिलने पर**—

℞ होस्टासाइक्लीन (Hostacycline) (हैक्स्ट)
मात्रा—२५० मि० ग्रा० का १ कैपसूल दिन में ३ बार।
साथ ही—डेकाड्रॉन (Decadron) ५ मि० ग्रा०
मात्रा—१-१ गोली दिन में २ बार भोजनोपरान्त। लाभ मिलने पर हर तीसरे दिन मात्रा कम करके अन्त में इसे बन्द कर दें।

नोट—बीकोनेक्स (Beconex), मेक्रोफोलीन आयरन, एनीमाटोन, परनेक्सिन (Pernexin), परनाविट, एनाफोलीन; मेक्रोफोलीन आयरन—इनमें से किसी १ अथवा २ को मिला कर आवश्यकतानुसार दिया जा सकता है। □

पाचन-संस्थान के रोग 1/18

कृमिरुग्णता
(Helminthiasis)

पर्याय (Synonyms)—कृमिरुग्णता, इण्टेस्टाइनल वर्म्स, आन्त्र-कृमि, आँतों में रहने वाले कीड़े।

परिचय (Introduction)—परजीवी कृमियों (Parasitic worms) की मनुष्य की आँत में उपस्थिति को कृमिरुग्णता (Helminthiasis) कहते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रधान रूप से निम्नलिखित ४ प्रकार के कृमि मनुष्य की आँतों में पहुँच कर निम्न प्रकार के लक्षण उत्पन्न करते हैं—

१. गोल कृमि (Round worm)।
२. सूत्र कृमि (Thread worm)।
३. फीत कृमि (Tape worm)।
४. अंकुश कृमि (Hook worm)।

गोलकृमि
(Round worm)

परिचय—चिकित्सा के क्षेत्र में गोल कृमियों का नाम ऐस्केरिस लम्ब्रीकॉइडिस (Ascaris Lumbricoidis) है। इन्हें अंग्रेजी में एस्केरिस (Ascaris) एवं हिन्दी में गण्डूपद कृमि की संज्ञा दी जाती है। इसीलिए गोलकृमियों की आँतों में उपस्थिति को 'एस्केरिएसिस' कहते हैं।

मिट्टी, गन्दा जल, शाक, मधुर पदार्थ आदि के सेवन से आँत में सफेद रंग के गोलकृमि (Round worm–केंचुए) पैदा हो जाते हैं। इस प्रकार इन कृमियों के कारण उदर में पीड़ा रहती है एवं पेट फूल जाता है। सोते समय दाँतों को कटकटाना, बच्चों का नींद में चीख उठना, नाक के अग्रभाग एवं गुदा में खुजली आदि कष्टदायक लक्षण होते हैं। दस्तों में इन कृमियों की उपस्थिति मिलती है।

जीवन-चक्र (Life cycle)—यह बालकों तथा नवयुवकों की छोटी आँत में विचरने वाला और वहाँ विद्यमान आहार में रहने वाला गोल आकृति का पारदर्शक श्वेत-भूरे रंग का, दोनों सिरों पर नुकीली आकृति का होता है। इसका नर कृमि ६-७ इंच और मादा कृमि ८-१० इंच लम्बा होता है। मादा कृमि के २ लाख की संख्या में एम्ब्रियो (Embryo) मल के साथ बाहर आते हैं और गर्मी तथा खुश्की में भी चिरकाल तक जीवित रह सकते हैं। इस प्रकार धूल व जल आदि में जहाँ ये एम्ब्रियो बन जाते हैं, दूसरों के पेट में पहुँचते हैं।

ड्यूडेनम में इनसे लार्वा निकल कर श्लेष्मकला को छेद कर ये हृदय, यकृत आदि अंगों में पहुँच कर बढ़ते हैं। इसके बाद यह वायु पथ में पहुँचकर ग्रास-नली (Oesophagus) से होते हुए क्षुद्र आन्त्र को अपना निवास-स्थान बनाते हैं।

इसे पूर्ण आकार का वयस्क बनने में १ मास का समय लगता है। इस कृमि के गुच्छे छोटी आँत के प्रथम भाग (जेजुनम) में रहते हैं। साथ ही आँत में विद्यमान भोजन पर पलते हैं। जिससे बालक तथा नवयुवकों का पोषण कम हो जाता है।

लक्षण (Symptoms)—१. **अजीर्ण सम्बन्धी लक्षण** (Indigestional

CC-0. Dr. Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

symptoms)—क्षुधानाश (Loos of appetite) अथवा अतिक्षुधा, उदर-पीड़ा, पाण्डुता आदि लक्षण मिलते हैं।

२ **एलर्जीजन्य लक्षण** (Allergic symptoms)—शीतपित्त, ओडिमा, श्वास-कास आदि लक्षण होते हैं।

३. **कृमियों के फुप्फुस में वृद्धि करने के परिमाणस्वरूप**—खाँसी तथा न्यूमोनिया हो जाता है। जब संक्रमण मृदु स्वरूप का होता है, तब रोगी में केवल खाँसी तथा ज्वर मिलता है। परन्तु संक्रमण की उग्रावस्था में उग्ररूप का श्वास कष्ट (Dyspnoea) मिलता है। साँस के साथ घर्र-घर्र की आवाज निकलती है और कभी-कभी रक्तनिष्ठीवन (Haemoptysis) भी मिलता है।

४. **वात प्रधान लक्षण**—रात को दाँत किटकिटाना, अनिद्रा, चिड़-चिड़ापन, आक्षेप, कृशता आदि लक्षण भी मिल सकते हैं।

५. **ज्वर की उपस्थिति**—गोल कृमियों के कारण ज्वर की उपस्थिति मिल सकती है। ज्वर प्रायः मन्थर ज्वर, क्षय ज्वर आदि ज्वरों के समान होता है।

६. **यकृत सम्बन्धी लक्षण**—किन्हीं-किन्हीं रोगियों में यकृत भी बढ़ जाता है।

कृमि की वयस्कावस्था के लक्षण—

मृदु स्वरूप के संक्रमण में—आन्त्रशूल के लक्षण मिलते हैं। कभी-कभी मल के साथ वयस्क कृमि मल में देखने को मिलते हैं।

उग्र स्वरूप के संक्रमण में—इनकी संख्या अधिक होती है, तब आन्त्रावरोध (Intestinal obstruction) के लक्षण उत्पन्न हो सकते हैं।

इस अवस्था में कृमियों का एक गुच्छा-सा बन कर आन्त्रमार्ग को रोक देता है, जिससे मल के ऊपर ही रुकने के कारण रोगी के प्राण संकट में पड़ जाते हैं। देखने में आया है कि किसी-किसी रोगी में गुच्छे के रूप में २०० तक कृमि मिले हैं।

विशिष्ट लक्षण (Special symptoms)—कृमियों की आँतों में उपस्थिति के कारण—

१. अपावशोषण (Malabsorption)।

२. कुपोषण (Malnutritions)।

३. आध्मान (Flatulence) आदि सामान्य लक्षण प्रायः मिलते हैं।

नोट—कभी-कभी यह कृमि ऊपर चल कर आमाशय में पहुँच जाते हैं और वमन के द्वारा मुख से निकलते हुए देखे जाते हैं।

निदान (Diagnosis)—१. इस कृमि के मल में निकलने अथवा वमन द्वारा या नाक द्वारा बाहर आने से रोग का निदान स्वतः हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. १०% 'इओसिनोफीलिया' से इसका पर्याप्त निदान हो जाता है। यह शरीर में लार्वास्टेज को सूचित करता है।

३. **वेरियम एक्स-रे**—वेरियम पीलाने के ६ घण्टे बाद एक्स-रे लेने से आँत में धुंधले-से कृमियों को देख कर इस रोग का निदान हो सकता है।

४. **माइक्रोस्कोपिक परीक्षा**—मल में अण्डों को देख कर इस रोग का निश्चय हो जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—गोल कृमियों की उपस्थिति में निम्न औषधियाँ दी जाती हैं—

℞ टेबलेट लिवामीसोल (Tab. Levamisole) १५० मि० ग्रा०

व्या० नाम—टेबलेट डीवर्मिस (Tab. Dewormis), टेबलेट बर्मीसोल (Tab. vermisol) आदि।

मात्रा—१ गोली सोने से पूर्व (१५० मि० ग्रा० टेबलेट)

बालकों को—५० मि० ग्रा० वाली १ गोली दें।

नोट—बर्मीसोल का लिक्विड भी आता है। इसे सोने से पूर्व २.५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर दें।

अथवा—पिपराजीन (Piperazine) ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—८ टेबलेट (४ ग्राम) की १ मात्रा सोते समय।

व्या० नाम—'एण्टीपार' (B. W.), अरपेजीन (M. S. D.), इण्टेसिल (Entacyl) (नि० B. H.), हेल्मासिड (ग्लेक्सो), पिनूजान (डेज), पिप्रान (एलेम्बिक), आक्सीकर लिक्विड (बार्नर), वरमासिड (Vermacid) (नि० B. C. P. W.)।

पिपराजीन साइट्रेट सीरप (Piperazine citratc syrap)

मात्रा—वयस्कों में—२ चम्मच (१० मिली०) दिन में २ बार ५ दिन तक।

बच्चों में—दिन में २ बार ५ दिन तक निम्न मात्रा के अनुसार दें—

६ माह से २ वर्ष तक—½ चम्मच (२.५ मिली.), २५० मि० ग्रा०।

३ से ६ वर्ष तक—१ चम्मच (५ मिली.), ५०० मि० ग्रा०।

७ से १२ वर्ष तक—१½ चम्मच (७.५ मिली.), ७५० मि० ग्रा०।

अथवा—टेबलेट मेबेण्डाजोल (Tab. Mebendazol)

व्या० नाम—टेबलेट वर्मिन (Tab. Wormin) आदि।

मात्रा—१ गोली दिन में ४ बार ३ दिन तक।

नोट—१. इसकी १०० मि० ग्रा० की गोली आती है।

२. बच्चों में—इसे सीवेण्डाजोल सस्पैन्शन (Cevendazole suspension) के नाम से प्रयुक्त किया जाता है।

मात्रा—बालकों एवं शिशुओं में—

½–१ चम्मच दिन में २ बार ३ दिन तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—थियावेण्डाजोल (Thiabendazole) ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—२ गोली दिन में २ बार २ दिन तक लगातार दोपहर तथा शाम के भोजन के बाद।

नोट—गोली को चबाकर निगल जाना चाहिए।

बालकों के लिए—सीरप थियावेण्डाजोल (Syrup Thiabendazole) ०.५ ग्राम (५ मिली०)

२५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर २ दिन तक।

व्यापारिक नाम—मिण्टेजोल (Mintezol) (नि. M. S. D.)

नोट—पिपराजीन साइट्रेट (व्या० नाम—एण्टीपार), टेट्रामिजोल (Tetramisole) नामक औषधियाँ भी गोल कृमियों पर प्रभाव डालती हैं।

टेट्रामिजोल—टे० डेकारिस (Tab. Decaris), टे० ऐस्केरिस (Tab. Ascaris), टे० निलकारिस (Tab. Nilcaris) आदि नामों से मिलती है।

निम्न औषधियाँ भी गोल कृमियों में विशेष उपयोगी हो सकती हैं—

१. केप्रोकोल (Caprokol) अथवा क्रिस्टॉइड पिल्स (Crystoid Pills) (नि० M. S. D.), जेलेटीन कैप्सूल।

प्रथम सायंकाल ४ ड्राम मैगसल्फ देकर पेट साफ कर लिया जाता है। तत्पश्चात् प्रातःकाल—

वयस्कों को—५ कैपसूल तथा बालकों को (९ से १२ वर्ष तक) ४ गोली, ६ से ८ वर्ष तक–३ गोली, ६ वर्ष से नीचे–२ गोली निगलवा दें। इसके ४ घण्टे पश्चात् सोडा सल्फ दें। इस बीच भोजन न दें।

२. एल्कोपार ग्रेन्यूल्स (Alcopar granules) (B. W.)

मात्रा—५ ग्राम की मात्रा प्रातः खाली पेट ५ दिन तक।

३. हेट्राजान (लीडर्ले), बेनोसाइड (बी. डब्लू), हेरोगेन, यूनीकार्बाजोन (Unicarbazon) की गोलियाँ तथा शर्बत।

मात्रा—५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार के अनुसार दिन में ३ बार ७ दिन तक।

आवश्यक निर्देश—चिकित्सा के १ सप्ताह बाद मल-परीक्षा (Stool test) कराना चाहिए। यदि मल में 'ओवा' (Ova) की उपस्थिति मिले तो इसका दूसरा कोर्स दूसरे सप्ताह पुनः दोहरा देना चाहिए।

४. डाईकार्ब (Dicarb) (इनगा कं०)

मात्रा—२–४ गोली दिन में ३ बार भोजनोपरान्त ७ दिन तक।

५. हेल्मासिड (Helmacid) (ग्लैक्सो)

वयस्क—१२ गोली १ बार में सोते समय। दूसरे दिन 'मैगसल्फ' का जुलाब दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. हेल्मासिड विद सेना (Helmacid with Senna) (ग्लैक्सो)
मात्रा—वयस्क—१० ग्राम का १ पैकिट १ बार में।
६ वर्ष से कम आयु के बालकों को—१½-२ चम्मच १ बार में।
७. ईओसीनोपिन (Eosinopin) गोली या सीरप (डेज कं०)
वयस्क—१३ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर दिन में केवल १ बार, ४ दिनों तक लगातार दें।
८. क्रिस्टायड (Crystoid) गोली (नि० M. S. D.)
वयस्क—५ बड़ी गोली १ बार में निगलवा दें। इसे चबायें नहीं।
९. बिटर पिल्स (Bitter Pills) (ईस्ट इण्डिया)
मात्रा—२ गोली शाम को सोते समय केवल १ बार में।
१०. ℞ मेबेण्डाजोल पाउडर १०० मि० ग्रा०
सीरप सिम्पल १० मिली०
१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा प्रातः-सायं ३ दिनों तक।

विशेष उपयोगिता—यह योग गोल कृमियों के अतिरिक्त टेप वर्म, विप वर्म, हुक वर्म तथा थ्रेड वर्म में भी परम उपयोगी है।

११. ℞ डेकेरिस (Decaris) (नि० एथनार)
मात्रा—५०-१५० मि० ग्रा० की १ गोली
सिम्पल सीरप ५ से १५ मिली०
१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा बच्चों को ५० मि० ग्रा० वाली तथा वयस्कों को १५० मि० ग्रा० वाली रात में सोते समय तथा प्रातः मैगसल्फ का जुलाब दें।

नोट—यह 'राउण्ड वर्म्स' के साथ-साथ 'हुक वर्म्स' को भी नष्ट करती है।

कोई एक औषधि का चयन—उपरोक्त में से किसी एक औषधि को सुविधानुसार दिया जा सकता है।

सेविल्स सिस्टम आफ क्लिनिकल मेडिसिन के अनुसार राउण्ड वर्म्स की चिकित्सा—

1. ℞ A Saline purgative is given overnight;
Next morning–
Oil of chenopodium 1 ml.
Tetrachlorethylene 4 ml.
1 dose.
Followed in 2 hrs. by another saline purgative.
2. ℞ Hexylresorcinol 1 gram for adult.

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूत्र कृमि
(Thread Worm)

परिचय—इसका वैज्ञानिक नाम 'एण्टीरोबियस वर्मीक्यूलैरिस' (Enterobias vermicularis) थ्रेड वर्म भी है। इस संक्रमण को इण्टेरोबिएसिस (Enterobiasis) कहते हैं।

कृमि (Worms)—इन कृमियों को 'गुदकृमि', 'ऑक्सीयूरिस वर्मीकुलेरिस' (Oxyuris vermicularis), 'पिन वर्म्स' (Pin worms), 'ऑक्सी-यूरिएसिस' (Oxyuriasis) आदि नामों से जाना जाता है।

सामान्य भाषा में इसे चुरने भी कहते हैं। इनके कारण नाक का अग्र भाग अथवा गुदामार्ग खुजलाता रहता है। सांस से बदबू आती है। शौच के समय अत्यन्त दर्द होता है। गुदामार्ग को खुजलाते रहने से नींद नहीं आती है। सोते समय बालक दाँतों को कटकटाता है। प्रायः पाखाने के साथ सफेद रंग के सूत्र कृमि निकलते रहते हैं। यह वयस्कों में भी मिलते हैं।

संक्रमण का क्रम (Modes of infection)—हमारे देश में इन कृमियों का संक्रमण अति व्यापक रूप में मिलता है। बड़ों के साथ ही विशेष रूप में बच्चों के मल में तथा गुदा पर एक छोटा-सा श्वेतवर्ण का सूत्राकार कृमि पाया जाता है। नर कृमि प्रायः बाहर नहीं आता, अतः वह देखने को कभी-कभी ही मिलता है। वह लगभग ३ मिलीमीटर लम्बा होता है। मादा कृमि प्रायः गुदा पर आता है। वह लगभग १० मिलीमीटर लम्बा होता है। गुदा की समीपवर्ती त्वचा पर इसके सहस्रों अण्डे पाये जाते हैं। जहाँ से वह अँगुली एवं नाखूनों के माध्यम से अपने व दूसरों के मुँह एवं पेट में पहुँच जाते हैं। अथवा गुदा को साफ करने के लिए जो पानी प्रयोग में लाया जाता है उसमें यह अण्डे पहुँच जाते हैं। जब यह पानी किन्हीं कारणों से पीने के स्वच्छ जल में मिल जाता हैं तो वह पानी भी संक्रमित हो जाता है और वह पानी पीने वाला व्यक्ति सूत्रकृमि का रोगी बन जाता है।

आँतों में पहुँच कर कुछ दिन बाद अण्डों से लार्वा निकलते हैं और यह लार्वा बड़ी आँत और मलाशय की ओर बढ़ते रहते हैं। वहाँ बढ़कर यह वयस्क रूप ले लेते हैं।

पुनरावर्तन क्रम (Relapse infection)—इनका संक्रमण बार-बार होता रहता है। अण्डों की उपस्थिति के कारण गुदा में खुजली होती है। खुजलाते समय अण्डे रोगी की अंगुलियों तथा नाखूनों में लग जाते हैं। इन अंगुलियों के मुँह में लगने अथवा खाद्य पदार्थों में लगने से उन पर उपस्थित अण्डे आँतों में प्रवेश पा जाते हैं और पुनः संक्रमण की अवस्था उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार से संक्रमण का क्रम चलता ही रहता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृमियों से उत्पन्न लक्षण (Symptoms produced by thread worms)

१. गुदा और उसके आस-पास रात को भारी कण्डू/खुजली पायी जाती है।

२. इओसिनोफीलिया का लक्षण भी मिलता है।

३. रोगी की भूख मारी जाती है।

४. उदर में कष्ट (Abdominal discomfort) होता है।

५. लड़कियों में भगयोनि-शोथ (Vulva vaginitis) वृद्धि कर जाता है।

६. यदि कृमियों की संख्या अधिक है तो कण्डू की अधिकता के कारण रोगी में अनिद्रा की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

७. कुछ केसिस में अरुचि (Anorexia) भी देखने को मिलती है।

निदान (Diagnosis)—१. गुदा पर बिजली के बल्ब का प्रकाश डालने से ये कृमि खिंच कर बाहर आने लगते हैं।

२. 'ग्राहम' स्कोच सैलोफेने टेप' (Grahm Scotch celloyaphne tape) २ इंच लम्बा लेकर उसे लकड़ी से रात में गुदा पर चिपकाकर प्रातः इसे अलग कर उसमें इस कृमि के अण्डों को माइक्रोस्कोप यंत्र द्वारा देखकर इस रोग का निदान हो जाता है।

३. वयस्क कृमि मल में उपस्थित मिलते हैं, जिन्हें आँखों से देखा जा सकता है।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ पाइरैंटल थायोएट पाल्मेटेट सस्पेन्शन (Pyrantal, thioate palmatate suspension)

व्या० नाम—वैनकुइन सस्पैन्सन (Vanquin suspension)

नोट—यह एक नवीनतम औषधि है। सूत्र-कृमियों पर इसका व्यापक प्रभाव होता है।

विशेष—इसकी १ मात्रा ही सूत्र कृमियों को नष्ट करने के लिए पर्याप्त होती है।

मात्रा—५ मिली० सस्पेन्सन/प्रति १० किलो शरीर भार के अनुसार एक मात्रा के रूप में रात के भोजन के तत्काल बाद।

अथवा—वैनपार सस्पेन्सन (Vanpar suspension)

नोट—यह एक शक्तिशाली औषधि है। इसमें पाइरैंटल थायोएट तथा पिपराजीन का सम्मिश्रण है।

मात्रा—०·५ मिली/प्रति किलो शरीर भार के अनुसार १ मात्रा रात में भोजन के तत्काल बाद।

अथवा—मेबेन्डाजोल (Mebendazole)

CC-0. Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१०० मि० ग्रा० की १ मात्रा। १ सप्ताह बाद पुनः दोहरायें।

अथवा—पिपराजीन सीरप (Piperazine syrup)

मात्रा—७५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर ७ दिन तक। १ सप्ताह बाद पुनः दोहरायें।

बालकों की मात्रा—

बालक—२ वर्ष से कम—½ चम्मच दिन में २ बार।

२–४ ,, —½ चम्मच दिन में ३ बार।

४–७ ,, —१ चम्मच दिन में २ बार।

७–१२ ,, —१ चम्मच दिन में ३ बार।

अन्य औषधियां—१. वोर्मिन (Wormin) (नि० केडिला)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में २ बार ताजे जल के साथ।

अथवा—सीरप एण्टीपार (Syrup Antipar)

मात्रा—१–४ चम्मच दिन में ३ बार ७ दिन तक।

२. पेण्टेलमिन (नि० एथनोर)—१०० मि० ग्रा० की १ गोली

सिम्पल सीरप १० मिली०

१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा प्रातः-सायं ३ दिन तक।

नोट—इसके बाद जुलाब की कोई आवश्यकता नहीं।

३. एण्टीपार विद लक्जेटिव (Antipar with Laxative) (B. W.)

मात्रा—वयस्क और बालक ६ वर्ष से ऊपर—पूरा सचेट (Full sachet)

बालक—२–६ वर्ष के बीच— ½ ,,

बालक—२ वर्ष से नीचे और शिशु—चिकित्सक के निर्देशानुसार।

४. बेसाण्टिन (Besantin) (खण्डेलवाल)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।

५. सेवेण्डाजोल (Cevendazol) (सीवी फार्मा)

यह कैपसूल तथा सस्पेंसन दोनों रूपों में आता है—

मात्रा—१ कै०/१ चम्मच दिन में २ बार ३ दिन तक।

६. इबेन (Eben) (गूफिक लेबो०)

यह टेबलेट और सस्पेंन्सन दोनों रूपों में आता है—

मात्रा—१ गोली/१ चम्मच प्रातःसायं ३ दिन तक।

७. इमेन्थाल (Emanthal) (M. M. Labs.)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० की १ गोली केवल १ बार।

८. किट-काट (Kit-Kat) (एरिस्टो)

मात्रा—१ गोली तत्काल।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. मेबेक्स (Mebex) (सिपला कं०)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार २ दिन तक।

इसका सस्पैन्सन भी आता है—

मात्रा—५ मिली० दिन में २ बार ३ दिन तक।

निषेध—गर्भावस्था में इसका प्रयोग न करें।

१०. मेण्डाजोल (Mendazole) (विडल शायर)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।

निषेध—गर्भावस्था में इसका प्रयोग न करें।

११. नूमाण्टेल (Numantel) (सीरी)

मात्रा—११ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर। अधिक से अधिक १ ग्राम की १ मात्रा। २-४ सप्ताह बाद पुनः दोहरायें।

नोट—इसका लिक्विड तथा ग्रेनूल्स भी आता है।

१२. पायरोमेट टे० (Pyromate tabs) (फ्रेंको-इण्डिया)

इसकी २५० मि० ग्रा० की गोली आती है—

मात्रा—११ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर।

इसका सस्पैन्सन भी आता है।

१३. सुगाण्डाजोल (Sugandazol) (S. G. Pharma)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।

निषेध—गर्भावस्था की प्रथम तिमाही में इसका प्रयोग न करें।

१४. वेनपार (Vanpar) (P. D.)

मात्रा—०.५ मिली०/प्रति किलो शरीर भार पर १ मात्रा २ दिन तक। अधिक से अधिक २५ मिली० प्रतिदिन। ३ सप्ताह पर इसे पुनः दोहरायें।

१५. वरमीटेल (Vermitel) (Astra-IDL)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।

१६. एक्स्पेल टेबलेट (Xpel tab.) (मोर्टेल हेयर)

मात्रा—१ गोली की केवल १ मात्रा। १ सप्ताह बाद पुनः दोहरायें।

थ्रेड वर्म्स में स्थानीय चिकित्सा (Local treatment in thread worms infestation)—एमोनिएटिड मरकरी आइण्टमेण्ट (Ammoniated mercury oint.) ३० ग्राम गुदा पर रात्रि के समय लगावें।

अथवा—जिंक आक्साइड आइण्टमेण्ट गुदा पर लगावें।

डेविल्स सिस्टम आफ क्लिनिकल मेडिसिन के अनुसार—

१. पिपराजीन एडीपेट या साइट्रेट (Piperazine adipate or citrate)

वयस्क—६०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार ७ दिन तक।

बालक—६ वर्ष के अन्दर ३०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

थ्रेड वर्म्स का परीक्षण करने के पश्चात् १ सप्ताह बाद पुनः दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. ऑक्सीटेट्रासाइक्लीन (टेरामाइसीन-Terramycin) बहुत प्रभावकारी औषधि है।

बचाव (Preventive measures)—१. भोजन करने से पूर्व हाथों को साबुन तथा पानी से साफ कर लें।

२. नाखून सदैव कटे हुए होने चाहिए।

३. बालकों को सोते समय लम्बा पायजामा पहनायें।

४. बालक के नितम्ब (Buttocks) को एण्टीसेप्टिक साबुन से धोते रहें।

५. उपरोक्त किसी औषधि का प्रयोग।

सूत्रकृमि में प्रयुक्त कुछ अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. (i) पिपराजीन एडीपेट (इण्टेसिल-Entacyl)

(ii) पिपराजीन हाइड्रेट (एण्टीपार इलेक्सिर) (B. W.)

(iii) पिपराजीन साइट्रेट (एण्टीपार)

(iv) पिपराजीन फॉस्फेट (Piperazine phosphate)

२. डाईफेनाल आयोडाइड (Diphenal Iodid)

व्या० नाम—बूटोलान, ऑक्सीलान (Butolan, Cxylan)

मात्रा—०·५ ग्राम की टेबलेट दिन में ३ बार ७ दिन तक।

बालकों में—१½ वर्ष तक—½ गोली दिन में ३ बार ७ दिन तक।

१० वर्ष तक—½ गोली दिन में ३ बार ७ दिन तक।

१२ वर्ष तक—१ गोली दिन में ३ बार ७ दिन तक।

३. डाईथियाजानीन (Dethiazanine)

व्या० नाम—टेलमिड (इली-लिली), डेल्वेक्स (Delvex)

मात्रा—२०० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३ बार भोजनोपरान्त ५ दिन तक।

४. टैरामाइसीन (Terramycin)

मात्रा—१ ग्राम नित्य १-२ सप्ताह तक।

विषालुता एवं उपद्रव (Toxic and side effects)—१. पिपराजीन योग—कभी-कभी हलका अतिसार (Mild diarrhoea), कीटशूल एवं आर्टीकेरिया।

२. वेनक्वाइन—मितली, कै एवं अतिसार। प्राय: मल के रंग का होता है।

फीता कृमि
(Tape Worm)

परिचय—यह अनेक प्रकार के होते हैं और उन सबको सिस्टोड वर्ग अथवा टेनाई (Taeniae), टेनिएसिस (Taeniasis) के अन्तर्गत रखा जाता है। यह ह्यूमेन पैरासाइट (Human parasites)—टीनिया सेजीनेटा,

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीफ टेपवर्म (Beaf tapeworm) तथा टीनिया सोलियम (पॉर्क टेपवर्म Pork tapeworm) होते हैं। इन्हें सामान्य बोलचाल की भाषा में कद्दू दाने भी कहते हैं।

इन सभी कृमियों के शरीर फीते के समान लम्बे और चपटे होते हैं। इनमें हुक के समान संरचनाएँ होती हैं, जिनकी सहायता से यह कृमि आँतों में चिपटा रहकर आँत से अपना आहार लेता है। इसका शरीर अनेक खण्डों में विभाजित रहता है। किसी-किसी में २०० खण्ड (Sigments) तक होते हैं। समस्त कृमि को देखने से ऐसा प्रतीत होता है मानों फीते के छोटे-छोटे टुकड़े आपस में जोड़ दिये गये हों। इनका अन्तिम खण्ड गर्भाशय होता है जिसमें अण्डे भरे रहते हैं।

इस वर्ग के २ कृमि मनुष्य में प्रधान रूप से रोग उत्पन्न करते हैं—

१. टीनिया सेजीनेटा (Taenia Seginata)।

२. टीनिया सोलियम (Taenia Solium)।

(१) टीनिया सेजीनेटा (Taenia Seginata)—यह कृमि कई मीटर तक लम्बा पाया गया है और गाय-भैंस की आँतों में रहता है। इन कृमियों के सिस्ट इन जानवरों की मांसपेशियों में रहते हैं। बकरी में भी यह अधिकांश रूप से मिलते हैं।

जब व्यक्ति इन गाय-भैंस, भेड़-बकरी आदि का मांस खाता है तो इनके सिस्ट मनुष्य की आँतों में चले जाते हैं और वहाँ जाकर यह फट जाते हैं, जिससे लार्वा निकल आते हैं। सिस्ट एक अण्डा है जो एक कठोर आवरण से ढका होता है। यह आवरण मांस के पकाने से भी नष्ट नहीं होता। लार्वा तीन माह में वयस्क बन जाता है और 'जेजुनम' को अपना निवास स्थान बनाता है।

लक्षण (Symptoms)—१. रोगी का वजन कम हो जाता है।

२. भूख अधिक लगती है।

३. उदर में पीड़ा होती है।

○ ४. पेट में गड़गड़ाहट (Gurgling) इसका विशेष लक्षण है। जो सुनाई देता है।

५. पेट का दर्द नाभि के आस-पास या हाइपोक्रोडियम में होता है।

(२) टीनिया सोलियम (Taenia Solium)—यह कृमि अधिकतर सूअर में रहते हैं। इनके सिस्ट उसकी मांसपेशियों में रहते हैं। यह सिस्ट अण्डा ही होता है जो लार्वा बनकर सूअर की मांसपेसियों में पड़ा रहता है।

○ सूअर के अर्ध पक्व (Half boil) मांस को खाने से यह सिस्ट मनुष्य के आमाशय में पहुँच जाते हैं और आमाशय-रस की क्रिया से आवरण घुल जाता है और स्वतंत्र लार्वा निकल आता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ लार्वा मनुष्य की ऐच्छिक मांसपेशियों अथवा मस्तिष्क को अपना निवास बनाते है।

लक्षण (Symptoms)—**प्रारम्भिक लक्षण**—१. ज्वर, शिरःशूल, शीत-पित्त एवं 'इओसिनोफीलिया' से सम्बन्धित लक्षण मिलते हैं।

२. मांसपेशियों तथा त्वचा पर स्थानीय (Locally) लक्षण लगभग ३-७ वर्ष बाद दिखलाई देते हैं। इस समय त्वचा पर हाथ फेरने से सिस्ट गाँठों की भाँति प्रतीत होते हैं।

३. जब इनकी संख्या अधिक होती है तब यह मस्तिष्क में पहुँच जाते हैं। जिससे मिरगी (Epilepsy) के समान लक्षण मिलते हैं।

○ मस्तिष्क में मृत सिस्ट जमा होते रहते हैं, जिन्हें एक्स-रे द्वारा देखा जा सकता है। मांसपेशियों में मृत सिस्टों की गाँठें तथा नीचे के (त्वचा) एक्स-रे में दिखलाई देते हैं।

४. कृमियों के आँत से भोजन लेने के कारण रोगी को अतिक्षुधा तथा कृशता की शिकायत रहती है।

५. यह कृमि जो थोड़ी देर निकलने के बाद भी हिलते रहते हैं, मल में देखकर इस कृमि का निश्चय हो जाता है।

इनमें से निकले हुए अण्डे तथा ओवा सप्ताहों तक जीवित रहते हैं और सूअर के पेट में पहुँच जाते हैं।

इस प्रकार से इन कृमियों का जीवनचक्र (Life cycle) सूअर और मनुष्य शरीर में बराबर चलता रहता है।

अन्य लक्षण—इनकी उपस्थिति से मलद्वार कुटकुटाता है। रोगी अपनी नाक खुजलाता है। साथ ही दाँत पीसना, मुँह में पानी भर आना, सिर चकराना, हृदय का धड़कना (Palpitation), कानों में भों-भों की आवाज, खट्टी डकारें, अफारा, अत्यन्त पतले (पिचकारी छोड़ने जैसे) दस्त एवं कभी-कभी दर्द आदि के लक्षण भी मिलते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—

(i) ℞ टेबलेट निक्लोसामाइड (Niclosamide) ५०० मि० ग्रा०

व्या० नाम—टेबलेट निकलोसान (Tab. Niclosan) (विडलशायर)

मात्रा एवं प्रयोग—प्रातः खाली पेट २ गोली चबाकर ऊपर से पानी पियें। प्रथम मात्रा के १ घण्टे बाद दूसरी मात्रा लें।

नोट—१. इसे वयस्कों को केवल ४ गोली (२ ग्राम) २ बार दी जाती है।

२. औषधि देने के एक दिन पूर्व की शाम को रोगी को कोई ठोस पदार्थ खाने को नहीं देना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपरोक्त औषधि की दूसरी मात्रा देने के २ घण्टे पश्चात्—'मैगसल्फ' या 'कैस्टर आयल' आदि कोई विरेचन दें। इससे कृमि के समस्त खण्ड (Sigments) बाहर निकल आते हैं।

बालकों को—

१. २ वर्ष से अधिक आयु में—२ ग्राम औषधि विभाजित मात्रा में।
२. २ वर्ष से कम आयु में—१ ग्राम (१½ गोली) विभाजित मात्रा में।
अथवा—१. वयस्क तथा ८ वर्ष से अधिक आयु के बच्चे —४ गोली।
२. २ से ८ वर्ष तक आयु के बच्चे —२ गोली।
३. २ वर्ष से कम आयु के बच्चे —१ गोली।

पूरी मात्रा केवल एक बार ली जाती है। टेबलेट को चबाकर निगल जाना चाहिए।

नोट—यह फीताकृमि (Tape worm) के लिए विशेष रूप से निर्मित की गई नवीनतम और सुरक्षित औषधि है।

(ii) ℞ टेबलेट मेबेण्डाजोल (Tab. Mebendazole) १०० मि० ग्रा०
व्या० नाम—पेण्टेलमिन (नि०—एथनोर) १ गोली
सिम्पल सीरप १५ मिली०
१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा प्रातः और रात में सोते समय २-३ दिन तक।
(iii) ℞ टेट्राकैप (Tetracap) (वरोज वैल्कम)
मात्रा—१-२ कै० रात में सोते समय।
साथ ही—सुबह मैगसल्फ का जुलाब दें।
(iv) ℞ नीवाक्वीन (Nivaquin) (M. B.)
मात्रा—पहले ६०० मि० ग्रा० (१ गोली) दिन में ३ बार।
तत्पश्चात्—३०० मि० ग्रा० प्रति घण्टे में ३ बार।
(v) मिण्टेजोल (Mintezol) (M. S. D.)
मात्रा—२-२½ गोली दिन में २ बार २ दिन तक।

अथवा—**टेप वर्म** (Taenia Solium) **की चिकित्सा में निम्न मिक्स्चर का प्रयोग करें**—

℞ इक्स्ट्रे० फिलिक्समास	४ मिली०
ग्लूकोज	४ ग्राम
म्यूसीलेज अकेसिया	४ ग्राम
सिनामोम वाटर	३० मिली०

पहले दिन—रोगी को तरल आहार देना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरे दिन सुबह—२ मिली० उपरोक्त मिक्श्चर १५ मिनट के अन्तराल पर ६ दिन तक।

२ घण्टे के पश्चात्—३० ग्राम मैगसल्फ पानी में घोल कर दे।

नोट—'कैस्टर आयल' का प्रयोग कदापि न करें।

निषेध—उपरोक्त मिक्श्चर का प्रयोग कार्डियक, हेपेटिक (लिवर रोगों), गैस्ट्रो-इण्टेराइटिस, पेप्टिक अलसर, गर्भावस्था एवं शिशुओं में वर्जित है।

अथवा—बालकों में—यूमेजान (Yomesan)

२ वर्ष के नीचे—१ ग्राम विभाजित मात्रा में।

२ वर्ष के ऊपर—२ ग्राम।

एक घण्टे बाद सैलाइन परगेटिव।

अथवा—टे० मेपाक्रीन (Mepacrine) १०० मि० ग्रा०

बालक (६ वर्ष)—५०० मि० ग्रा०।

बड़े बच्चे—८०० मि० ग्रा०।

उपरोक्त टेबलेट—१ मात्रा में अथवा विभाजित (४ बराबर) मात्रा में प्रति ८ मिनट के अन्तराल से।

१ घण्टे बाद—मैगसल्फ अथवा कैस्टर आयल परगेटिव।

नोट—सीरप फेनरगान (Syrup Phenergan)

१ चम्मच सिरप गोली देने के १ घण्टे पूर्व। इससे वमन नहीं होता है।

निर्देश—१. विरेचन होने के बाद रोगी को आहार दें।

२. यदि पुनः चिकित्सा की आवश्यकता पड़े तो ३ माह के पश्चात् उपरोक्त कोर्स दें।

कोर्स—कुछ केसिस में ३-४ कोर्स की आवश्यकता पड़ती है।

टेपवर्म नाशक अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. सिवेण्डाजोल (Sevendazole) कैपसूल तथा सीरप

मात्रा—२ कैप्सूल/२ चम्मच दिन में १ बार ३ दिन तक।

२. इवेन (Even) (गूफिक लेबोरेटरी)

यह टेबलेट तथा सस्पेन्सन दोनों रूपों में आती है।

मात्रा—१ गोली/१ चम्मच प्रातः-सायं ३ दिन तक।

३. इमेन्थाल (Ementhal) (M. M. Labs.)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० की गोली दिन में २ बार २–३ दिन तक।

नोट—इसमें जुलाब की आवश्यकता नहीं है।

४. किट-कैट (Kit-Kat) (एरिस्टो)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।

५. मेवेक्स (Mebex) (सिपला)

मात्रा—२ गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसका सस्पैन्सन भी आता है—

मात्रा—१० मिली० दिन में २ बार ३ दिन तक।

निषेध—गर्भावस्था में इसका प्रयोग न करें।

६. मेण्डाजोल (Mendazole) (विडल शायर)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० की गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।

७. सुगाण्डाजोल (Sugandazol) (S. G. Pharma)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।

८ वर्मी टेल (Vermitel) (एस्ट्रा-आइडियल)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।

९. वर्मिन (Wormin) (केडिला)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।

१०. इक्सपेल (Xpel) (मोर्टल हेमर)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार २–३ दिन तक।

हुक वर्म
(Hook Worm)

परिचय—इसे एंकिलोस्टोमा ड्यूडीनेल (Ancylostoma duodenale) कहते हैं। 'नेक्टार अमेरिकैन्स' नामक कृमि भी इस रोग का कारण होता है। हमारे देश में ६०% लोगों में इसका संक्रमण मिलता है।

जीवन-चक्र (Life cycle)—हुकवर्म के अण्डे रोगी के मल द्वारा बहुत संख्या में बाहर निकलते हैं। गरम आर्द्र प्रदेश में रहने से इनके लार्वा निकल कर घास पर पलते हैं। ये जल, भोजन तथा नंगे पैर चलने वाले व्यक्तियों के पैरों की अँगुलियों के बीच की त्वचा को छेद कर उसकी रक्त अथवा लसीका वाहिनियों द्वारा फेफड़े में पहुँच जाते हैं। जहाँ से यह कंठनली में ओर वहाँ से शरीर में प्रवेश कर एक महीने के अन्दर-अन्दर मुख द्वारा आँत में पहुँच जाते हैं। यह छोटी आँत की प्रथम भाग की श्लैष्मिककला में चिपके हुए पड़े रहते हैं। ये कृमि रोगी के मल से सीधे पोषण लेते हैं। आँतों में कुछ समय बाद यह लार्वा पूर्ण विकसित कृमि बन जाता है। नर कृमि प्रायः १ सेण्टी-मीटर तथा मादा कृमि १½ सेण्टीमीटर लम्बा होता है।

इन कृमियों का रंग लाल होता है। इनके मुख में ६ दाँत होते हैं। जिनके सहारे यह आँतों में चिपके रहते हैं।

लक्षण एवं चिह्न (Symptoms & Signs)—१. यदि इनकी मात्रा अधिक हो तो रक्त की न्यूनता हो जाती है। इससे रोगी को तीव्र पाण्डु रोग (Hypochromic microcytic anaemia) हो जाता है।

२. हृत्कम्प, निर्बलता तथा इओसिनोफीलिया के लक्षण मिलते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. थोड़े ही परिश्रम से रोगी का श्वास फूलने लगता है।

४. अरुचि तथा भूख की कमी।

५. हृदय की धड़कन।

६. भार की कमी।

Essential diagnosis—○ Weakness, fatigue, pallor, palpitation, dyspnoea, associated with a hypochromic and microcytic anaemia.

○ Diarrhoea, flatulence, abdominal discomfort, weight loss.

○ Transient episodes of coughing, with sore throat and bloody sputum.

○ Pruritic, erythematous, maculopapular or vascular dermatitis.

○ Characteristic eggs in the stool; guaiac-positive stool.

विशेष निदान (Special diagnosis)—१. मल में अण्डों की उपस्थिति निदान में विशेष सहायक होती है। इसीलिए रोग की सम्भावना होने पर मल की माइक्रोस्कोपिक परीक्षा अवश्य करनी चाहिए।

मल के एक ग्राम में लगभग ५ हजार ओवा (Ova) मिलते हैं।

२. तीव्र पाण्डु के लक्षणों को देखकर रोग का निश्चय हो जाता है।

नोट—दिन-प्रतिदिन रक्त की कमी बढ़ते जाना, पाचन-शक्ति का दुर्बल पड़ जाना, हृदय की धड़कन, नेत्र की ज्योति कम पड़ जाना, उदर में सूजन, प्लीहा और यकृत की वृद्धि, थकावट, बच्चों के विकास में कमी, रक्ताल्पता, भार की कमी आदि लक्षणों से भी रोग का निदान सम्भव है।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ टेबलेट मेबेण्डाजोल (Tab. Mebendazole)

व्या० नाम—टेबलेट वर्मिन (Tab. Wormin), (मेबेक्स आदि)।

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।

टेट्रामिजोल (Tetramisole)

व्या० नाम—टेबलेट डेकारिस (Tab. Decaris)

मात्रा—वयस्क—१५० मि० ग्रा० की १ गोली। दूसरी मात्रा १२ घण्टे बाद।

बालक—५० मि० ग्रा० की १ गोली। दूसरी मात्रा १२ घण्टे बाद।

सिरप लिवामिसोल (Syrup Levamisole)

व्या० नाम—सिरप वर्मीसोल (Syrup Vermisole)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—वयस्कों में—३ चाय चम्मच दिन में १ बार १२ घण्टे के अन्तराल पर।

बालकों में—१ चाय चम्मच दिन में २ बार १२ घण्टे के अन्तराल पर।

अथवा—बेफेनियम हाइड्रोक्सीनेफ्थोएट

व्या० नाम—एल्कोपार (Alcopar) (B. W.)

मात्रा—५ ग्राम की मात्रा आधा ग्लास मीठे द्रव में मिलाकर प्रातः खाली पेट।

नोट—इसकी एक ही मात्रा कृमि को नष्ट करने के लिए पर्याप्त होती है।

२ वर्ष के बालकों के लिए भी यही मात्रा उपयुक्त रहती है। यह मंहगी औषधि है।

विशेष—इसके बाद विरेचन की आवश्यकता नहीं पड़ती।

अथवा—टेट्राक्लोरथाइलीन (Tetrachlorethylene)

मात्रा—४ मिली० १ मात्रा जिलेटीन कै० में रखकर प्रातः खाली पेट।

नोट—४ घण्टे तक कोई आहार न दें।

बालक—२० किलो शरीर भार तक २ मिली० तक।

चेतावनी—हुक वर्म के साथ राउण्ड वर्म भी हों तों इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए। ऐसी अवस्था में—

बेफेनियम (Bephenium) ५ ग्राम प्रातः दें।

अथवा—मिण्टेजोल (Mintezol) १·२५ ग्राम

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार २ दिन तक।

अथवा—बिसेण्टीन (Besantin) १०० मि० ग्रा० (खण्डेलवाल)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ३ दिन।

अथवा—क्रिस्टॉयड (Crystoids) (M. S. D.)

वयस्क—५ गोली एक साथ निगलवा दें।

बच्चों के लिए विशेष चिकित्सा—

℞ 'डेकेरिस' अथवा 'वर्मीसोल' ५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली तत्काल। १२ घण्टे बाद दूसरी मात्रा।

अथवा—'डेकेरिस' अथवा वर्मीसोल सस्पैन्शन

मात्रा—१ चम्मच दिन में १ बार।

अथवा—पेण्टेल्मिन (Pantelmin) अथवा वर्मिन गोली ५० मि० ग्रा०

मात्रा—२ गोली विभाजित मात्रा में १२ घण्टे के अन्तर से ३ दिन तक।

अथवा—नीमोसिड (Nemocid)

हुक वर्म की उपस्थिति में रोगी के अन्दर अनीमिया (रक्ताल्पता) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। संक्रमण दूर करने के साथ रक्ताल्पता को भी दूर करना आवश्यक हो जाता है। इसके लिए निम्न चिकित्सा करनी चाहिए—

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

℞ टेबलेट फैरस सल्फेट

व्या० नाम—टेबलेट फर्सोलेट (Tab. Fersolate)

मात्रा—१-१ गोली दिन में ३-४ बार भोजन के साथ।

अथवा—नियो-फेरम टेबलेट (Neo-ferrum tab.)

मात्रा—१-१ गोली दिन में २ बार।

नोट—बालकों के लिए फेरम लिक्विड आता है—

मात्रा—½ चम्मच दिन में २ बार।

यदि मुख द्वारा आयरन सहन न हो तो—

इन्जे० यूनीफेरोन (Inj. Uniferon)

वयस्कों में—२ मिली० I/M १ दिन छोड़कर।

कोर्स—कुल ३-४ इन्जेक्शनों की आवश्यकता पड़ती है।

अथवा—इन्जे० नीओ-रोक्सोन-१२ (Neo-roxon-12)

मात्रा—२ मिली० मांसपेशीगत १ दिन छोड़कर अथवा रोजाना।

हुक वर्म में प्रयुक्त अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. सेवेण्डाजोल (Cevendazol) कै० (सीवी फार्मा)

मात्रा—१ कै० दिन में २ बार ३ दिन तक।

२. सेवेण्डाजोल सस्पें० (Cevendazol susp.) (सीवी फार्मा)

मात्रा—१ चम्मच दिन में २ बार ३ दिन तक।

३. डीवार्मिस-१५० (Dewormis-150) (विडल शायर)

मात्रा—१५० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर, ४ मात्राएँ।

४. डीवार्मिस-५० (Dewormis-50) (विडल शायर)

मात्रा—५० मि० ग्रा० टे० प्रति ६ घण्टे पर ४ मात्राएँ बालकों में।

५. इवेन (Even) (गूफिक लेबो०)

मात्रा—१ गोली प्रातः-सायं ३ दिन तक।

६. इवेन सस्पेंसन (Even susp.) (गूफिक लेबो०)

मात्रा—१ चम्मच प्रातः-सायं ३ दिन तक।

७. एक्सपेण्ट सस्पेंसन (Expent susp.) (टाटा फार्मा)

मात्रा—१० मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर भार पर। १ ग्राम की मात्रा से अधिक नहीं।

८. इडीबेण्ड (Edibend) (IDPL)।

मात्रा—१०० मि० ग्रा० टे० दिन में २ बार २ दिन तक। आवश्यकतानुसार २ सप्ताह बाद पुनः।

नोट—इसका 'इडीवेण्ड सस्पेंसन' भी आता है।

९. किट-काट (Kit-Kat) (एरिस्टो)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. मेबाजोल (Mebazole) (टोरेण्ट)
मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।
११. मेबेक्स (Mebex) (सिपला)
मात्रा—२ गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।
१२. मेबेक्स सस्पेंसन (Mebex susp.) (सिपला)
मात्रा—१० मिली० दिन में २ बार ३ दिन तक।
१३. मेण्डाजोल (Mendazole) (विडल शायर)
मात्रा—१०० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।
१४. पाइरोमेट टेब्स (Pyromate tabs.) (फ्रेन्को इण्डिया)
मात्रा—११ मि० ग्रा० टे० प्रति किलो शरीर-भार पर।
इसका सस्पेंसन भी आता है।
१५. सुगाण्डाजोल (Sugandazole) (S. G. Pharma)
मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।
१६. वर्मीसोल (Vermisol) (खण्डेलवाल)
मात्रा—वयस्क—१५० मि० ग्रा० की १ गोली।
बालक—५० मि० ग्रा० की १ गोली।
इसका Vermisol syrup भी आता है।
१७. वर्मीटेल (Vermitel) (Astra-IDL)
मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।
१८. वाइजोल (Vizole) (M. M. Labs.)
मात्रा—१५० मि० ग्रा० कै० प्रति ६ घण्टे पर ४ मात्राएँ।
१९. वाइजोल सस्पेंसन (Vizole susp.) (M. M. Labs)
मात्रा—५० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर ४ मात्राएँ।
२०. वर्मिन (Wormin) (केडिला)
मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ३ दिन तक।
२१. एक्स्पैल (Expel) (मार्टेल हेमर)
मात्रा—१ गोली दिन में २ बार २-३ दिन तक।

ऐसी औषधियाँ जो सभी कृमियों तथा मिले-जुले संक्रमण (Mixed infection) में उपयोगी है—

१. एस्केरिस टेबलेट (मरकरी कं०)
२. बेसेण्टिन (Besantin) टेबलेट (खण्डेलवाल)
३. सिवेण्डाजोल (Cevendazole) कैपसूल (सीवी फार्मा)
४. सिवेण्डाजोल सस्पें० (Cevendazole susp.) (सीवी फार्मा)
५. इवेन टेबलेट (Even tab.) (ग्रफिक लेबो०)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. इवेन सस्पेंन्सन (Even susp.) (गूफिक लेबो०)
७. इमेन्थाल (Emanthal) (M. M. Labs.)
८. एक्सपेण्ट (Expent) (टाटा फार्मा)
९. किट-काट टेबलेट (Kit-Kat) (एरिस्टो)
१०. मेवेक्स टेबलेट (Mebex tab.) (सिपला)
११. मेवेक्स सस्पेंन्सन (Mebex susp.) (सिपला)
१२. मेण्डाजोल टेवलेट (Mendazole tab.) (विडल शायर)
१३. पाइरोमेट टेब्स एवं सस्पेंन्सन (Pyromate tabs. & susp.) (फ्रेक्को इण्डिया)
१४. सुगाण्डाजोल टेबलेट (Sugandazole tab.) (एस० जी० फार्मा)
१५. वर्मीसोल टेबलेट (Vermisol tab.) (खण्डेलवाल)
१६. वर्मीसोल सीरप (Vermisol susp. or syrup) (खण्डेलवाल)
१७. वर्मिन टेबलेट (Wormin tab.) (केडिला)
१८. वर्मीटेल टेबलेट (Vermitel tab.) (ईस्ट्रा-आइडियल)
१९. एक्स्पेल टेबलेट (Xpel tab.) (मार्टेल हेमर)
२०. एल्बेण्डोल (Albendol)
व्या० नाम—एल्बेण्डाजोल (Albendazole) (टोरेण्ट ड्रग्स)
मात्रा—२ गोली की केवल १ मात्रा।
इसका सीरप भी आता है—
मात्रा—१० मिली० तत्काल केवल १ मात्रा।

विशेष—यह एक नवीनतम एन्थिलमेण्टिक + ब्राड स्पेक्ट्रम सिंगल थेरापी वाली औषधि है। यह औषधि राउण्ड वर्म, हुक वर्म, पिन वर्म, विप वर्म, थ्रेड वर्म, टेपे वर्म (टीनिया सोलियम) सभी में एक समान उपयोगी है।

नोट—जब इस बात का सही निर्णय नहीं हो पा रहा हो कि कौन-सा वर्म है; अथवा कई कृमियों के सम्मिलित इन्फेक्शन की सम्भावना है, तब उपरोक्त क्रम १ से २० तक की किसी भी औषधि का प्रयोग किया जा सकता है। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यकृत्-संन्यास/यकृत्-पात
(Hepatic Coma/Hepatic Failure)

पर्याय—कॉलीमिया (Cholaemia), एक्यूट यलो एट्रॉफी ऑफ लिवर (Acute yellow atrophy of liver), पोर्टल सिस्टेमिक इनसेफेलोपैथी (Portal systemic encephalopathy), एक्यूट हेपेटिक फेल्योर (Acute hepatic failure) ।

परिचय (Introduction)—This is a syndrome with neurological and psychiatric manifestation which can complicate liver disease of almost all type, and occurs as a result of hepeto-cellular failure.

कारण (Causes)—

(१) **यकृत्-सैल के रोग**—

१. इन्फेक्टिव हेपेटाइटिस ।

२. लिवर सिरोसिस ।

३. टॉक्सिक हेपेटाइटिस ।

४. विलयरी सिरोसिस ।

५. कार्सिनोमा ऑफ लिवर ।

६. इन्फेण्टाइल सिरोसिस ऑफ लिवर ।

(२) **मेकेनिज्म** (Mechanism)—

१. अमोनिया विषाक्तता (Ammonia intoxication)—लोगों का ऐसा विचार है कि यह इस रोग का प्रमुख कारण है ।

२. इलेक्ट्रोलाइट्स एसिड बेस (Acid base) तथा कार्बोहाइड्रेट, मेटाबोलिज्म जब अनियन्त्रित (Disturbed) हो जाता है ।

३. इन्वेन्सन ऑफ कोलोनिक ऑर्गेनिज्म ।

४. जब फीनोल (Phenol—एसिड कार्बोलिक), मिथियोनीन, इण्डोल्स (Indoles) एवं ट्रिप्टोफेन (Tryptophane) का रक्तस्तर (Blood level) बढ़ जाता है, तब कोमा (Coma) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है ।

(३) **क्षिप्रकारण** (Precipitating factors)—

आमाशय-आन्त्र रक्तस्राव (गैस्ट्रो-इण्टेस्टाइन हीमोरेज), एब्डॉमिनल पैरासेण्टेसिस, सर्जिकल ऑपरेशन, इन्फेक्शन, मूत्रल औषधियों का अधिक सेवन, सेडेटिव अथा हिप्नोटिक आदि रोग के आक्रमण में सहायक होते हैं ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्षण एवं चिह्न (Symptoms & sign)—

१. आक्रमण धीरे-धीरे, परन्तु तीव्र हो सकता है।

२. गहरे कामला की वृद्धि (Development of deep jaundice)।

३. मानसिक परिवर्तन (Mental changes)।

४. अल्पमूत्रता (Oliguria)।

५. रक्तचाप का गिरना (Hopotension)।

६. हाथों का काँपना।

७. रोगी का हैण्ड-राइटिंग दुर्बल हो जाता है और वह कठिनाई से लिखता है।

८. तन्द्रालुता का बढ़ना, मस्तिष्क का फेल होना, रोगी का बेचैन रहना—इन मानसिक लक्षणों के साथ मांसकम्प, प्रलाप, आक्षेप, कण्डराओं में प्रतिक्षेप (Tendon reflex) आदि लक्षण होते हैं।

९. श्वास गहरा तथा Cheyne strokes किस्म का हो जाता है। नाड़ी की गति तीव्र तथा निर्बल होती है। मूत्र में पित्त तथा एल्ब्युमिन के कास्ट्स होते हैं।

१०. रोग की विलम्बित अवस्था में तापक्रम तीव्रतर (Hyperpyrexia) हो जाता है।

मूत्र-परीक्षा—ल्यूसीन तथा टाइरोसिन क्रिस्टल्स दीखते हैं।

निदान—इसके सही निदान के लिए निम्न परीक्षाएँ की जाती हैं—

१. लिवर फंक्शन टेस्ट (Liver function test)।

२. इलेक्ट्रो-इन्सेफेलोग्राफी (Electro-encephalography)।

३. रक्त अमोनिया स्तर (Blood ammonia levels)—आर्टीरियल ब्लड-प्रेशर बढ़ा हुआ मिलता है।

४. लिवर सामान्यतया स्पर्श-क्षम नहीं होता है। साथ ही प्रधान बीमारी के लक्षण तथा चिह्न मिलते हैं।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—१. विल्सन्स रोग।

२. मद्यपान जनित डिलीरियम ट्रेमेन्स (Dilirium tremens in alcoholics)।

चिकित्सा (Treatment)—

१. **सामान्य चिकित्सा**—रोगी को शय्या पर विश्राम।

२. **मेडिकल चिकित्सा**—इस चिकित्सा के मुख्य ३ उद्देश्य होते हैं—

(क) लिवर के कार्य को बढ़ाना (Improve liver function)।

(ख) काउण्टरेक्ट एसिडोसिस (Counterect acidosis)।

(ग) न्यूरोलॉजिकल लक्षणों की चिकित्सा (Treatment of neurological symptoms)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(क) लिवर के कार्य को बढ़ाना (Improve liver function)—

℞ डेक्सामेथाजोन (Dexamethasone) I/M. १०० मिग्रा०

मात्रा—२ मिली० स्टेराइल वाटर में घोलकर मांसपेशीगत ।

अथवा 'प्रेडनीसोलोन' या 'बीटामेथासोन' आदि स्टेराइड्स इन्जे० के रूप में ।

रोग की गम्भीर अवस्था में—

℞ हाइड्रोकार्टीसोन सोडियम सक्सीनेट

(Hydrocortisone Sodium Seccinate)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० I/M. प्रति ८ घण्टे पर ।

(ख) काउण्टरेक्ट एसिडोसिस में—

℞ इन्जे० ५% डेक्स्ट्रोज इन नार्मल सैलाइन सोलूशन I/V (ड्रिप रूप में) ।

(ग) न्यूरोलॉजिकल लक्षणों की चिकित्सा—

℞ लीवो-डोपा (Levo-dopa) ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—½ गोली दिन में २ वार भोजनोपरान्त ।

व्या० नाम—लेरोडोपा (Lerodopa) (रोशे) ।

साथ ही रोगी की अवस्थानुसार अन्य चिकित्सा करनी चाहिए—

१. रोगी को केवल कार्बोहाड्रेट (Carbohydrate) आहार (ग्लूकोज अथवा लैक्टोज २०%) एवं कुछ दिनों तक प्रोटीन का पूर्णतया निषेध ।

२. सेडेटिव—मार्फीन, पेथीडीन, लार्गेक्टिल आदि का पूर्णतया निषेध । यदि आवश्यक हो तो—डायजीपाम ५ मि० ग्रा०-१० मि० ग्रा० I/M दें ।

३. नियोमाइसिन (Neomycin)

मात्रा—१ ग्राम मुख द्वारा प्रति ६ घण्टे पर ।

४. लैक्टोज अर्थात् लैक्टूलोज (Lactulose) ४५-६० मि० ग्रा० नित्य मुख द्वारा । साथ ही—

५. विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स तथा विटामिन 'के' इन्जे० रूप में एवं बी१२ ५०० माइक्रोग्राम नित्य देने से लाभ मिलता है ।

६. मोनोसोडियम ग्लूटामेट (Monosodium glutamate) I/V ड्रिप रूप में दें ।

७. प्रिसिपिटेटिंग फेक्टर्स (Precipetating factors) को ठीक करें ।

८. आमाशयिक पदार्थ (गैस्टिक लेवीज) के लिए आँतों को साफ रखें तथा मैगनेसियम सल्फेट का परगेटिव दें ।

९. एक विशेष चिकित्सा के अन्तर्गत लिवर को बदल दिया जाता है (Liver transplantation) ।

१०. रक्तस्राव में ट्रान्सफ्यूजन दें ।

११. मार्फीन रिएक्शन में—नेलोरफीन (Nelorphine) ।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१२. इण्ट्रागैस्ट्रिक ड्रिप २५% ग्लूकोज + पोटैसियम क्लोराइड २-३ ग्राम प्रतिदिन।

१३. **मेण्टल चेंजिज के लिए**—सोडियम गार्डीनल २०० मि० ग्रा० I/M दें। आवश्यकता पड़ने पर १०० मि० ग्रा० की मात्रा दुबारा दें।

साथ ही—बेनाड्रिल ५० मि० ग्रा० दिन में २-३ बार मुख-मार्ग से दें।

१४. **इन्फेक्शन रोकने के लिए**—एम्पीसिलिन अथवा फ्रीनोक्सी मिथाइल पेनिसिलिन २५० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

१५. **हीमेटिमेसिस** (Haematemesis)—फ्रेश ब्लड-ट्रान्सफ्यूजन के द्वारा धीरे-धीरे (१०-१५ ड्राप) प्रति मिनट।

१६. **रक्तचाप-न्यूनता की स्थिति में** (In condition of hypotension)—मेफेण्टरमाइन सल्फेट (Mephentermine sulphate) मेफेण्टीन (Mephentine) १ एम्पुल I/M आवश्यकतानुसार प्रति २ घण्टे पर।

नोट—रिस्पॉन्स सन्तोषजनक न हो तो—

नॉर एड्रीनलीन (Nor-adrenaline) देना प्रारम्भ कर दें।

'एण्टीबायोटिक' (Antibiotic), पेरामोमाइसिन (ह्यूमेटिन Humetin) अथवा नीओमाइसिन २ कै० (२५० मि० ग्रा०) मुख-मार्ग से प्रति २-३ घण्टे पर १ सप्ताह तक।

सामान्य प्रबन्ध (General measures)—

१. दूध, फलों का रस एवं २०% ग्लूकोज दें। २००० कैलोरी का आहार नित्य।

२. इण्ट्रागैस्ट्रिक फीडिंग के रूप में—५०० मिली० (२५%) ग्लूकोज I/V धीरे-धीरे दें।

१ दिन में २ लीटर तक (१·५ लि० इण्ट्रागैस्ट्रिक ड्रिप तथा ०·५ लिटर I/V ड्रिप रूप में दें। ⊡

पाचन-संस्थान के रोग 1/20

अर्श/बवासीर
(Piles/Haemorrhoids)

पर्याय (Synonyms)—इसे हीमोराइड्स, अर्श, बवासीर आदि नामों से जाना जाता है। यह औषधि-चिकित्सा तथा शल्य-चिकित्सा दोनों विभागों से सम्बन्धित रोग है।

परिचय (Introduction)—जब गुदद्वार के अंदर चारों ओर की शिराओं—जो कि श्लैष्मिकाकला के नीचे रहती है, में उग्रदाह हो जाता

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। परिणामस्वरूप वहाँ छोटे-छोटे अर्बुदों की तरह प्रतीति होने लगती हैं। ये प्रसरित शिराओं के गुच्छे ही अर्श कहलाते हैं।

अर्थात् इस अवस्था में मलाशय की शिराएँ (अंदर और बाहर की) फूल जाती हैं और वह टेढ़ी-मेढ़ी हो जाती हैं। साथ ही वहाँ की त्वचा सख्त और संकुचित होकर उस पर अंगूर जैसे मस्से हो जाते हैं।

प्रकार (Types)—पाइल्स ३ प्रकार के होते हैं—

१. बाह्य अर्श (External piles)।
२. आन्तरिक अर्श (Internal piles)।
३. मिश्रित अर्श (Combined piles)।

रोग के कारण (Aetiology)—१. अधिक निकम्मे बैठे रहना अर्थात् अत्यधिक विश्राम-प्रियता।

२. कॉनिक कॉंस्टीपेशन अर्थात् चिरकारी कब्ज।
३. मूत्राशय में पथरी बनने के परिणामस्वरूप।
४. अति मद्यपान।
५. वृद्धों में प्रोस्टेट ग्रन्थि के बढ़ जाने से।
६. गर्भावस्था के कारण।
७. गर्भाशय का अपने स्थान से खिसक जाना।
८. यकृत में विकृति उत्पन्न होने पर।
९. पोर्टल रक्तप्रवाह में रुकावट।
१०. मलाशय का कैंसर।
११. पैतृक परम्परा भी इस रोग में सहायक होती है।
१२. रेक्टल ग्रोथ अथवा अल्सरेशन।
१३. पेल्विक ट्यूमर (महिलाओं में)।
१४. Chronic straining during micturition.
१५. Cirrhosis of liver or any cause of portal obstruction.

विशेष—यह रोग अधिकतर २० वर्ष की आयु में प्रारम्भ होता है तथा प्रायः पुरुषों में अधिकांश होता है।

बाह्य अर्श
(External Piles)

ये गुद-द्वार (Anus) के चारों ओर की त्वचा में लम्बी और गहरी लाल रंग की सिकुड़नों के रूप में प्रकट होते हैं। सामान्य अवस्था में जब यह रिक्त होते हैं, तब यह महसूस नहीं होते हैं। किन्तु प्रकुपित होने पर अर्थात् रक्त से भर जाने पर यह फूल जाते हैं और प्रत्येक शिरा का अन्तिम भाग एक छोटा-सा अंगूर अथवा गाँठ जैसा प्रतीत होता है। इसके चारों

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओर फाइब्रस टिसू होता है। फाइब्रस टिसू का आकार बढ़ने पर यह एक कठोर गाँठ की भाँति प्रतीत होने लगता है।

लक्षण (Symptoms)—

शिराओं के प्रकुपित न होने पर—रोगी को खुजली तथा भारीपन प्रतीत होता है।

शिराओं के प्रकुपित होने पर—

१. अर्श (Piles) छोटे-छोटे अर्बुदों की भाँति कड़े प्रतीत होते हैं।

२. इनका रंग कुछ पीला-सा होता है।

३. पीड़ा होती है और उनको दबाने से रोगी को अत्यधिक कष्ट होता है।

४. रोगी सरलता से चलने-फिरने में असमर्थ रहता है। बैठने में भी उसको कष्ट होता है।

५. शिरा के भीतर रक्त जमकर घनास्र बन जाता है, जिससे शिरा का अन्तिम भाग फूल जाता है।

६. इस प्रकार के अर्श में किसी प्रकार का रक्त नहीं निकलता है। इसलिए इसे सामान्य भाषा में 'बादी बवासीर' कहते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—१. रोगी को शय्या पर विश्राम दें।

२. एनीमा तथा परगेटिव ओषधि दें जिससे कि मलाशय पूर्ण स्वच्छ रहे।

३. अर्श (मस्से) के ऊपर 'हेमेमिलिस' का मलहम (Hemamilis oint.) लगावें।

४. पीड़ा दूर करने के लिए पैथीडीन १०० मि० ग्रा० इन्जेक्शन के रूप में दें। अथवा उष्ण स्वेद का प्रयोग करें।

फिर भी पीड़ा के कम न होने पर—प्रोकेन के १% घोल को प्रविष्ट कर एक-एक मस्से को पकड़ कर उनका छेदन करना तथा उनमें जमा रक्त निकालना आवश्यक है। साथ ही किनारों को काट देने तथा कुछ दिन चिकित्सा करते रहने से क्षत ठीक हो जाता है।

आन्तरिक अर्श
(Internal Piles)

इस प्रकार के अर्श गुद-द्वार तथा गुद-संकोचनी से ऊपर मलाशय (Rectum) के अन्तिम भाग में होते हैं और श्लैष्मिककला से ढँके होते हैं।

कारण (Causes)—१. यह ५०–६० वर्ष की आयु में अधिक मिलते हैं।

२. क्रॉनिक हैबीचुअल कॉंस्टीपेशन इसका प्रमुख कारण है।

३. यकृत में रक्त-परिवहन में अवरोध।

४. गर्भावस्था के अर्बुद।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. पेल्विक शोथ आदि दशाएँ अर्श रोग को उत्पन्न करती हैं।

६. ब्लड-प्रेशर बढ़ने से भी इसकी उत्पत्ति हो सकती है।

७. कुछ रोगियों में इसका पैतृक प्रभाव भी देखा जाता है।

प्रकार (Types)—ये अर्श २ प्रकार के देखने में आते हैं—

१. लम्बे आकार वाले अर्श।

२. गोल आकार वाले अर्श।

१. **लम्बे आकारवाले अर्श**—ऐसे अर्श श्लैष्मिककला से ढँके होते हैं। इनका रंग पीला अथवा कुछ काले रंग का होता है। प्रत्येक अर्श नीले अंगूर के दाने की भाँति चमकता है। इन अर्शों के बीच रिक्त स्थान में मल जमा हो जाता है। इन अर्शों से रक्त-प्रवाह कम होता है।

२. **गोल आकार वाले अर्श**—ऐसे मस्से श्लैष्मिककला से एक पतले डंठल के समान जुड़े होते हैं। यह चिकने नहीं होते हैं। इन अर्शों से रक्तप्रवाह अधिक होता है।

लक्षण (Symptoms)—१. जब तक शिरा प्रकुपित नहीं होती है तब तक रोगी को कोई असुविधा प्रतीत नहीं होती है।

२. मलद्वार के भीतर कुछ भारीपन एवं खुजली प्रतीत होती है।

३. समय-समय पर रक्त निकलता रहता है।

जब पूरा अर्श फूल कर बाहर निकल आता है तब—

१. रोगी को अतिशय कष्ट होने लगता है। रोगी को चलने अथवा बैठने में भी कष्ट होता है।

२. थोड़े बहुत समय के पश्चात् इनसे रक्त अवश्य निकलता रहता है। पहले केवल मल-त्याग के समय अथवा उसके पूर्व कुछ रक्त आता है। किन्तु कुछ समय के पश्चात् अधिक रक्त आने लगता है।

३. रक्त के अधिक निकलने से रोगी में दुर्बलता तथा रक्ताल्पता के लक्षण उपस्थित रहते हैं। रोग जितना अधिक तीव्र होता है उतना ही अधिक रक्त निकलता है और रोगी में दुर्बलता तथा रक्ताल्पता भी उतनी ही अधिक प्रदर्शित होती है।

४. **पीड़ा** (Pain)—अर्श में जलन, टपकन, अकड़न तथा काट फेंकने जैसा दर्द होता है।

५. **मलावरोध**—अर्श का रोगी मलावरोध से सदैव दुखी-सा रहता है। उसको कभी पतले दस्त आते ही नहीं, और दस्तों में रक्त आता ही रहता है। मल त्याग के समय पीड़ा होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

६. **गुदा की स्थिति**—रोगी की गुदा चारों तरफ से लाल-सी हो जाती है। गुदा में दर्द, जलन और खुजली होती है।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. **जोड़ों का दर्द**—रोगी के जोड़ों में टूटने जैसा दर्द होता है। उठने-बैठने में उसके जोड़ चटकते हैं। उसकी जाँघों में भी पीड़ा रहती है।

८. **मन्दाग्नि** (Dyspepsia)—पेट साफ न रहने से रोगी की भूख मारी जाती है।

रोग के अवस्थानुसार लक्षण (Symptoms according to stage)—

(a) **प्रथमावस्था** (Stage or degree–I)—

(i) Painless bleeding per rectum during defaecation.

(ii) Character of bleeding—Fresh blood and not mixed with motion.

(b) **द्वितीयावस्था** (Stage or degree–II)—

(i) Bleeding is more marked.

(ii) There is a fleshy swelling around disappears after defaecation.

(iii) Pain is absent or slight discomfort is felt.

(c) **तृतीयावस्था** (Stage or degree–III)—

(i) Bleeding is slight or absent (which may be due to thrombosis of vessel)

(ii) There is a constant swelling around the anus.

(iii) There may be mucous discharge or pruritis ani.

(iv) Painless bleeding may become painful if there is infection or strangulation and at times due to associated fissure in ano.

○ Uncomplicated piles never produces painful bleeding per rectum.

निदान (Diagnosis)—इसके निदान में कोई कठिनाई नहीं होती है। उपरोक्त लक्षणों के आधार पर इसका निदान आसानी से हो जाता है।

निदानात्मक चिह्न (Diagnostic signs)—

1. In first and second degrees—No exteral swelling.

2. In third degree—There is a fleshy swelling around the anus. The swelling may be tender.

3. P/R–in the early stage nothing is felt, but later piles can be felt as an elongated fleshy mass.

4. Sigmoidoscopy is done to exclude rectal lesions.

5. Rectal speculum—Piles can be seen as prinkish mass.

6. In chronic cases anaemia is present.

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भावीफल (Prognosis)—

(१) शुष्कार्श (बादी बवासीर)—इसका आक्रमण बार-बार होने से रोगी की गुदा संकुचित हो जाती है और उस पर व्रण बन जाता है। जो आगे चल कर कैंसर में बदल जाता है। यह एक गम्भीर अवस्था है।

(२) रक्तार्श (खूनी बवासीर)—इसमें रक्तस्राव होता है। कभी-कभी अत्यधिक रक्तस्राव से रोगी काफी दुर्बल हो जाता है।

चिकित्सा (Treament)—

(१) सामान्य चिकित्सा—१. रोग के मूल कारण को दूर करें।

२. रोगी को कब्ज कभी न रहने दें। कब्ज की अवस्था में दस्त (Stool) को पतला मुलायम (Softner) करने के लिए 'Cellubril' तथा लक्जेटिव जैसे—'मिल्क आफ मैगनेसिया' अथवा क्रीमाफिन (Cremaffin) का प्रयोग करें। इसमें हरी सब्जियाँ, इसबगोल (भूँसी) आदि भी सहायता प्रदान करते हैं।

३. अनीमिया के रोगी में खून बढ़ाने वाली औषधियाँ (Haematinics) यथा—'आयरन' तथा 'लिवर एक्स्ट्रेक्ट' का प्रयोग करे।

○ **नोट**—यह ध्यान रखना चाहिए कि लौह (Iron) भी कुछ अंशों में कोष्ठबद्धता को प्रोत्साहित करता है।

४. रक्तार्श (Bleeding piles) में डेफ्लोन (Daflon) जैसी औषधियों का प्रयोग करें।

५. हल्का व्यायाम आवश्यक है।

६. शोथावस्था में रोगी को पूर्ण विश्राम दें।

७. लक्षणों की उपयुक्त चिकित्सा करनी चाहिए।

८. शुष्कार्श के लिए ऑपरेशन आवश्यक नहीं है। इसके विपरीत रक्तार्श की चिकित्सा में ऑपरेशन करके मस्सों को काटना होता है।

९. उच्च रक्तचाप के रोगी की अर्श-चिकित्सा नहीं करनी चाहिए।

१०. कैंसर की सम्भावानाओं की ओर सदैव ध्यान रखना चाहिए।

११. मलाशय के कैंसर के रोगी की अर्श-चिकित्सा व्यर्थ है।

स्थानीय (Local)—

१. मलहम का प्रयोग, यथा—गैलिक एसिड, जायलोकेन (Xylocaine) अथवा हाइड्रोकार्टीसोन का मलहम।

नोट—यह प्रथम Degree के पाइल्स में विशेष लाभकारी होता है।

२. वादी बवासीर में विशेषकर सूचीवेध चिकित्सा करें।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

रेगुलेशन ऑफ वॉवेल हैबिट (Regulation of vowel habit)—

CC-0. Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

℞ इसबगोल (Isaphgul) दें। यदि आवश्यकता पड़े तो 'एगारोल' (Agarol) अथवा क्रीमेफिन (Cremaffin) रात्रि में सोते समय दें।

अथवा—प्रोटोलागर (Protolagar) १-२ चम्मच सोते समय।

अथवा—ग्लेक्सीना (Glaxena) २ बड़े चम्मच सोते समय।

मल के अधिक कठोर होने पर—

'ग्लिसरीन सपोजिटरी' का प्रयोग करें।

वेनस्मिन टेबलेट (Venusmin tab.)

अथवा—डेफलोन कैप्सूल (Deflon capsules)

मात्रा—३ कै० दिन में ३ बार ३-४ दिन तक।

तत्पश्चात्—२ कै० दिन में २ बार।

अधिक पीड़ा की स्थिति में—

पेथीडीन अथवा मार्फीन का प्रयोग करें।

सामान्य स्थिति में—

पिलीकोन टेबलेट (Pilicon tab.)) (कार्ट राइट कं०)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ या ४ बार।

अथवा—कैल्शियम विद विटामिन 'सी' एण्ड 'डी'

मात्रा—१ गोली दिन में ३-४ बार।

अथवा—सिन्काविट (Synkavit) (रोश कं०)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

मस्सों में टपकन की स्थिति में—

पाइलेक्स १ गोली + लिव-५२ की १ गोली दोनों को पीसकर १ पुड़िय बना लें। ऐसी १ पुड़िया दिन में ३ बार।

मस्सों में सामान्य पीड़ा की स्थिति में—

सैरिडोन १ गोली तथा पाइलेक्स टेबलेट २ गोली

मात्रा—ऐसी १ मात्रा आवश्यकतानुसार दें।

अत्यधिक रक्तस्राव की स्थिति में—

डीकाप्लेक्स फोर्ट कैपसूल (Decaplex forte caps)

मात्रा—१-२ कै० दिन में १ या २ बार।

रक्त की कमी की स्थिति में—

आयरन + लिवर एक्स्ट्रेक्ट के योग दें।

डायरेक्ट ट्रीटमेण्ट (Direct treatment)—

हेडेन्सा आइण्टमेण्ट (Hedensa oint.)

अथवा—पाइलेक्स मलहम अथवा न्यूपरकेनाल आइण्टमेण्ट (सीबा कं०) अथवा एनीथेन मलहम (ग्लैक्सो) अथवा एनोवेट (Anovat) या प्रेक्टो-

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीडिल आइण्टमेण्ट (Prectosedyl oint) इनमें से किसी एक मलहम को गुदा में मलत्याग से पूर्व एवं मलत्याग के बाद लगावें।

साथ ही—प्रेक्टोसीडिल कै० का भी प्रयोग किया जा सकता है।

शोथयुक्त बाह्य अर्श में—

हेमीमेलिडिस आइण्टमेण्ट लगावें।

पीड़ा और क्षोभ की स्थिति में—

डीहीमोराइड्स (Dehaemorrhoids) एवं जाइलोकेन आइण्टमेण्ट (Xylocaine)—इनमें से किसी एक को गुदा में लगावें।

रक्तार्श की अधिक जलन तथा खुजली में—

रेक्सोल (Rexole) को गुदा में लगावें। अथवा एनूसोल आइण्टमेण्ट का प्रयोग करें।

निर्देश—शोथ और घनास्रता (Thrombosis) की स्थिति में ऑपरेशन नहीं करना चाहिए और न ही इन्जेक्शन चिकित्सा का उपयोग ही। ये नितान्त वर्जित हैं।

जब शोथ शान्त हो जाए ओर औषधि चिकित्सा से अधिक लाभ न मिले तब इन्जेक्शन अथवा ऑपरेशन चिकित्सा का विचार करना चाहिए।

अर्श की इन्जेक्शन चिकित्सा—

प्रारम्भिक स्थिति में इसका प्रयोग लाभकर होता है, परन्तु जीर्णावस्था तथा उपद्रवों की स्थिति में इन्जेक्शन चिकित्सा का उपयोग न करें।

इसके लिए निम्न इन्जेक्शनों में से किसी को मस्सों पर लगाया जा सकता है—

१. एड्रीनलीन क्लोराइड (बंगाल इम्युनिटी)—४ गुना डिस्टिल्ड वाटर में मिलाकर।

२. क्विनीन यूरिया हाइड्रोक्लोराइड—१ मिली० सप्ताह में १ बार।

३. क्विनीन एण्ड यूरीथेत (स्टेडमेड)—१-२ मिली०।

४. सोडियम मौर्हुएट (बंगाल इम्युनिटी)—आन्तरिक बवासीर में—१ मिली० सप्ताह में केवल १ बार।

नोट—इन्जे० प्रत्येक अर्श की ग्रीवा में जहाँ वह मलाशय की भित्ति से जुड़ा होता है, उसके थोड़ा नीचे देना चाहिए।

कोर्स—अर्श को सुखाने के लिए कुल ३-४ इन्जे० पर्याप्त होते हैं।

चेतावनी—पहली बार में केवल एक ही मस्से में इन्जेक्शन देकर देखना चाहिए कि रोगी उसको कैसा सहन करता है।

Site of injection—In the submucous coat above the base of piles.

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Quantity injectcel—3-5 c. c. in each quadrant (To be repeated after 2-3 weeks) mostly 2 sittings are required.

(३) शस्त्र चिकित्सा (Operation)—

बवासीर (Piles) की वास्तविक चिकित्सा ऑपरेशन द्वारा की जाती है। इसमें रोगी को स्थानिक संज्ञाहरण देकर लिगेचर तथा इक्सीजन विधि से अर्शों को एक-एक करके निकाल दिया जाता है। तत्पश्चात् वहाँ १ औंस शुद्ध वैसलीन भर कर एक चौड़ी रबर-नलिका पर गॉज लपेट कर वैसलीन मल-कर भीतर रख दी जाती है। इसके बाहरी सिरे पर एक सेफ्टी पिन लगा दिया जाता है और रुई रख कर पट्टी बाँध दी जाती है।

पश्चात् चिकित्सा—

(i) प्रथम ३६ घण्टों में रोगी को १-२ बार 'ओम्नोपॉन' या पैथाडीन का सूचीवेध दें।

(ii) व्रण से सम्बन्धित वस्त्रों को २४ घण्टे पश्चात् बदल देना चाहिए।

(iii) भोजन में फलों का रस तथा तरल आहार दें।

(iv) तीसरे दिन ४ औंस 'ओलिव आयल' या लिक्विड पैराफिन रबर-नलिका से मलाशय में भर दें। कुछ समय पश्चात् रबर-नलिका को निकाल कर दूसरी नलिका पर गॉज लपेट कर पहले की भाँति रख दिया जाता है।

(v) चौथे दिन विरेचक दें। मल-त्याग के पश्चात् मलाशय का प्रक्षा-लन करके थोड़ा लिक्विड पैराफिन डाल दें।

(vi) धीरे-धीरे रोगी के भोजन की मात्रा बढ़ानी चाहिए।

नोट—इससे लगभग १ सप्ताह में आन्त्र की क्रिया ठीक हो जाती है।

हीमोराइड्स (Haemorrhoids) **में प्रयुक्त अन्य पेटेण्ट औषधियाँ**—

१. मेडीथेन (Medithane) (मेनर्स कं०)

प्रातः और सायं शौच जाने के पश्चात् गुदा में आइण्टमेण्ट को लगायें।

२. अल्ट्राप्रोक्ट (Ultraproct) (जर्मन रेमेडीज)

दिन में २ बार से ४ बार तक मलहम को लगायें। इनकी सपोजिटरी भी आती हैं।

३. वेनस्मिन (Venusmin) (मार्टिन हेरिस)

मात्रा—२ गोली दिन में २ बार भोजन के साथ।

रोग की तीव्रावस्था में (In acute condition)—४ गोली दिन में ३ बार २-३ दिन तक /अथवा ४ सप्ताह तक चलाया जा सकता है।

निम्न पेटेण्ट योग अर्श की चिकित्सा में विशेष लाभकारी हैं—

हेडेन्सा प्रिपेरेशन या प्रोक्टोसीड्रिल (नि० राउमेल)

मलहम को मस्सों पर ३-४ बार लगायें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही—'सोडियम मोहुंएट' ५% १ मिली० हर तीसरे दिन मस्सों पर लगायें।

सोते समय—पाइलेक्स २ गोली।

एवं—अल्ट्राजीन (Ultragin) १-२ गोली दिन में ३-४ बार।

अधिक पीड़ा की स्थिति में—अल्ट्राजीन इन्जेक्शन २ पा० ५ मिली० मांसपेशीगत दें।

पाचन-संस्थान के रोग 1/21

उदरणावरणशोथ
(Peritonitis)

परिचय (Introduction)—उदरावरण/पर्युदर्या (Peritoneum) में शोथ की उत्पत्ति को 'पेरिटोनाइटिस' कहते हैं। इसकी उत्पत्ति संक्रमण के परिणामस्वरूप होती है, जो उदर की भित्ति के घाव अथवा क्षत द्वारा बाहर से उदर में प्रविष्ट हो जाते हैं। अथवा उदर के भीतर स्थित किसी विकृत अंग से पेरिटोनियम में पहुँच जाता है।

यह 'मेडिसिन चिकित्सा' तथा 'सर्जिकल चिकित्सा'—इन दोनों विभागों के अन्तर्गत आने वाला रोग है।

प्रकार (Types)—यह रोग मुख्य रूप से २ प्रकार का होता है—

(१) एक्यूट पेरिटोनाइटिस (Acute peritonitis)।

(२) जीर्ण पेरिटोनाइटिस (Chronic peritonitis)।

नोट—जीर्ण पेरिटोनाइटिस प्रायः क्षयजन्य (Tuberculous) होता है।

एक्यूट पेरिटोनाइटिस
(Acute Peritonitis)

परिचय—पेरिटोनियम में उग्र स्वरूप का शोथ (Inflammation) होता है। इस अवस्था में उदरावरण में शोथ होने के कारण ज्वर, सहसा उदर पीड़ा, रिजीडिटी तथा वमन आदि लक्षण मिलते हैं।

रोग के कारण (Causes of disease)—इसका प्रमुख कारण जीवाणु संक्रमण होता है। विशेष रूप से स्ट्रेप्टोकोकस, स्टेफिलोकोकस, न्यूमोकोकस, गोनोकोकस, टी० वी० दण्डाणु, टायफाइड दण्डाणु (Salmonella typhosi) आदि इसके लिए उत्तरदायी होते हैं।

संक्रमण (Mode of infection)—प्रायः यह जीवाणु (Micro-organism) आन्त्र से पेरिटोनियम में निम्न माध्यमों से पहुँच कर वहाँ शोथ उत्पन्न करते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. आन्त्र की भित्ति में किसी स्थान पर विकार हो जाने पर यह जीवाणु पहुँच जाते हैं।

२. विदार (Perforation) हो जाने से इनका मार्ग खुल जाता है। जैसा कि पेप्टिक अलसर, रक्तप्रवाह तथा एपेण्डीकुलर आदि में।

३. रक्तप्रवाह द्वारा।

४. पित्ताशय, यकृतविद्रधि, वृक्कशोथ, अग्न्याशयशोथ, गर्भाशयशोथ तथा फैलोपियन ट्यूब्स का शोथ—इन सब रोगों से पेरिटोनियम में संक्रमण पहुँच जाता है।

५. उदरभित्ति के घाव द्वारा।

६. उदर पर आघात, ऑपरेशन, अवैधानिक गर्भपात, टाइफाइड में व्रण का फटना आदि तमाम कारणों से पेरिटोनियम में इन्फेक्शन पहुँच जाता है।

७. आन्त्र में गाँठ पड़ना (Volvulus), इण्टससेप्शन (Intussusception) आदि में आँत की दीवार में आघात होने की पूर्ण सम्भावना रहती है।

८. स्त्रियों में पूयमेह (Gonorrhoea) होने पर उपसर्ग का विस्तार जननेन्द्रिय मार्ग से एसेण्डिग इन्फेक्शन के रूप में उदर में प्रवेश कर सकता है।

स्त्रियों में गर्भपात या प्रसव के बाद गर्भाशय या उसकी प्रणालियों में तीव्रशोथ (Metritis), सालपिञ्जाइटिस (Salpingitis) हो जाने पर उनमें से लिम्फेटिग के द्वारा स्ट्रेप्टोकोकाई का संक्रमण हो सकता है।

नोट—स्त्री-रोगों के सम्बन्ध में विशेष जानकारी हेतु लेखक की 'स्त्रीरोग-चिकित्सा' का अवलोकन करें।

९. आन्त्र-वृद्धि के रोग में—आँत के उतरकर बद्ध हो जाने पर उसके उपद्रव-स्वरूप यह रोग हो जाता है।

संक्षिप्त मुख्य ७ हैडिंग्स (Seven headings)—

1. Acute appendicitis is the most common.

2. Perforation of or slow leakage from some part of the alimentary canal.

3. Repture of an organ or of an abdominal cyst (ovarian cyst or of an abscess of the appendix) of the fallopian tube or rupture of the gallbladder.

4. Injury or operation.

5. Various blood infections.

6. Any condition such as volvulus or intussusception.

7. Local peritonitis from Crohn's disease.

विकृति-विज्ञान (Pathology)—इन्फेक्शन के द्वारा आक्रान्त होने पर पेरिटोनियम में शोथ उत्पन्न हो जाता है और वह मोटा पड़ जाता है। साथ

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही उसकी चमक तथा स्निग्धता जाती रहती है। उसके आक्रान्त पृष्ठ से स्राव (Secretion) बनने लगता है जो एब्डॉमिनल केविटी में एकत्रित होता रहता है। इस स्राव में फाइब्रिन की अधिकता रहती है। जिससे आन्त्र के कुण्डल आपस में अथवा अन्य अंगों के साथ जुड़ जाते हैं। यह स्राव जो प्रारम्भ में सीरमी (Serum) होता है, आगे चल कर पूययुक्त (Purulent) हो जाता है और अन्त में पूय का निर्माण होने लगता है। जीवाणुओं से टॉक्सिन्स की उत्पत्ति होकर वे सम्पूर्ण शरीर में फैल जाते हैं और रोगी की सामान्य दशा को क्षीणकर देते हैं।

शोथ के कारण जो विषैला स्राव (Toxins) बनता है, उसके विषों के कारण अंगघात (Paralysis) हो जाता है। आन्त्र-गति बन्द हो जाती है।

जब संक्रमण तीव्र नहीं होता है तो उसमे जीर्ण प्रकार (Chronic type) का रोग हो जाता है। इससे जोड़ अधिक बनते हैं।

यह रूप प्रायः क्षयजन्य होता है। जोड़ों के बीच में स्राव जो केवल सीरमयुक्त होता है, एकत्रित होकर इनसिस्टेड एसाइटिस (Encysted asci. tis) उत्पन्न कर सकता है।

एक्यूट पेरिटोनाइटिस के भी २ रूप होते हैं—

१. स्थानिक या एकदेशीय (Acute localised peritionitis)।

२. परिविस्तृति (Acute diffuse peritonitis)।

लक्षण एवं चिह्न (Symptoms & signs)—**१. कोष्ठशूल** (Colic)—पेरिटोनियम में शोथ होते ही सहसा कोष्ठशूल का लक्षण प्रारम्भ हो जाता है, जिसकी तीव्रता बढ़ती ही जाती है। जब एब्डोमिन की दीवार अन्दर की मेम्ब्रेन में यह शोथ प्रसरण कर जाता है तब यह शूल और भी तीव्रतर हो जाता है। रोगी के जरा-सा हिलने तथा खाँसने से भी शूल बढ़ जाता है। पेट को हिलने से बचाने के लिए रोगी टांगों को सिकोड़ कर पीठ के बल पड़ा रहता है। प्रथम श्वास-प्रश्वास भी उथले रहते हैं।

२. स्पर्शाक्षमता—यह रोग का दूसरा लक्षण है। उदरप्राचीन लकड़ी की तरह कड़ी रहती है तथा उस पर की त्वचा को छूने से रोगी को कष्ट होता है।

३. मलबन्ध (Constipation)—शोथ होने पर आँतें निश्चेष्ट-सी हो जाती हैं। उनकी गतिशीलता मन्द पड़ जाती है, जिससें घोर मलबन्ध रहता है। कुछ केसिस में प्रारम्भ में अतिसार रहता है, लेकिन तत्काल कोष्ठबद्धता प्रारम्भ हो जाती है।

४. अरुचि एवं वमन (Anorexia & vomiting)—आँतों के अन्दर उपस्थित स्रावों तथा मल के रुके रहने से अरुचि तथा वमन के लक्षण मिलते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. वायु से उदर का फूलना—रुके मल के विदग्ध होने से आँतों में गैस बन जाती है तथा वहीं रुक जाती है। जिससे रोगी में आध्मान के लक्षण हो जाते हैं।

६. मितली एवं वमन (Nausea and vomiting)—पेरिटोनियम में विक्षोभ (Irritation) होने से वमन तथा मितली का लक्षण हो जाता है। वमन प्रायः स्थायी रूप का होता है।

७. डीहाईड्रेशन तथा हृदय-निर्बलता—आँत में होने वाले विष-संचार (Toxaemia) के कारण ठंडा पसीना तथा वमन के कारण बहुत से द्रव के निकल जाने से तथा उदरगुहा में होते हुए स्राव के कारण रक्त में जलाभाव (Dehydration) हो जाने से हृदय निर्बल हो जाता है, जिससे नाड़ी का स्पन्दन कम हो जाता है। रक्तभार (B. P.) गिर जाता है और रोगी के हाथ-पैर शीतल हो जाते हैं।

८. नाड़ी (Pulse)—नाड़ी तीव्र तथा कड़ी होती है। कोलैप्स तथा स्तब्धता के कारण ज्वर की अपेक्षा नाड़ी की गति तीव्र होती है। यह रोगी की दशा की अत्यन्त विश्वस्त सूचक होती है। नाड़ी सदा क्षीण अर्थात् तीव्र एवं दुर्बल (रिक्त-सी) प्रतीत होती है। जैसे-जैसे रोगी की दशा गिरती जाती है, वैसे-वैसे नाड़ी की क्षीणता बढ़ती जाती है। उसकी प्रति मिनट गति संख्या अधिक होती जाती है और रिक्तता भी बढ़ती जाती है। रोगी की दशा में सुधार होने पर नाड़ी की गति संख्या घटने लगती है और उसका आयतन (Volume) भी बढ़ जाता है।

९. रोगी की स्थिति तथा चेहरे का भाव—रोगी टाँगों को उदर की ओर समेट कर प्रायः करवट में चुपचाप लेटा रहता है। निश्चल रहने का प्रयत्न करता है, क्योंकि हिलने-डुलने से उसकी पीड़ा बढ़ती है। रोगी अत्यन्त व्याकुल तथा कष्टमय प्रतीत होता है। रोगी की मानसिक स्थिति अन्त तक प्राकृत ही रहती है। रोगी के मुख पर चिन्ता तथा विषाद के भाव स्पष्ट होते हैं। रोगी के नेत्र धँसे हुए दिखलाई देते हैं।

१०. तापक्रम (Temperature)—रोगी का तापमान कुछ बढ़ा हुआ होता है। साधारण जाड़ा लगकर ज्वर प्रारम्भ होता है। ज्वर निरन्तर एक समान रहता है। आँत का विदारण (Perforation) अथवा फटते समय (In time of rupture) तापक्रम नार्मल से भी कम हो जाता है।

११. थोरेसिक रेस्पिरेशन (Thorasic respiration)—पीड़ा में वृद्धि के कारण रोगी वक्ष से साँस लेता है।

१२. रक्त में श्वेतकणों की मात्रा बढ़ जाती है। रोग के प्रारम्भ के कुछ ही घण्टों में इन कणों की मात्रा बढ़ जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३. **अन्य लक्षण**—दौर्बल्य, मूत्र का न बनना या अमूत्रता (Anuria) आदि लक्षण होते हैं। किसी-किसी रोगों में हिचकी का भी लक्षण मिलता है।

Essentials of diagnosis—

1. History of abdominal illness.
2. Abdominal pain, vomiting, fever and prostration.
3. Abdominal rigidity and diffuse or local tenderness.
4. The Pain is severe and constant.
5. Vomiting is persistent.
6. The abdomen is rigid and immobile.
7. Thin rapid pulse of 100 to 140 per minute.
8. The temperature is elevated only 2° or 3° F. above normal.
9. There is acute tenderness on pressure, so much so that the weight of the bed-clothes can hardly be borne.
10. Later abdominal distention and paralytic ileus.
11. Leucocytosis is found.

विशेष निदान (Special diagnosis)—१. उपरोक्त लक्षणों से निदान में कोई कठिनाई नहीं होती।

२. परीक्षा करना कठिन होता है, क्योंकि रोगी तनिक भी हिलना नहीं चाहता है। रोगी के उदर पर हाथ लगाते ही उसको पीड़ा होने लगती है।

३. स्टेथिस्कोप से परीक्षा करने पर कोई शब्द सुनाई नहीं देता। उदर प्रायः शान्त भाव में मिलता है।

४. श्वेतकणों की वृद्धि (Leucocytosis) रोग को पहचानने में विशेष सहायक होती है

५. उदर में वायु-प्रवेश के कारण यकृत् प्रदेश पर ठेपण (Percussion) करने से यकृत प्राकृत से छोटा प्रतीत होता है।

६. X-Ray findings—Abdominal films show gas and fluid collections in both large and small bowel

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—

१. एक्यूट इण्टेस्टाइनल आब्स्ट्रक्शन (Acute intestinal obstruction)।

२. एक्यूट कोलिसिस्टाइटिस (Acute cholecystitis)।

३. पेन्क्रीटाइटिस (Pancretitis)।

४. रीनल कॉलिक (Renal colic)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. गैस्ट्रो-इण्टेस्टाइनल हीमोरेज (Gastro-intestinal haemorrhage)।

६. लोवर लोब न्यूमोनिया (Lower lobe pneumonia)।

७. पिरीयाडिक फीवर (Periodic fever)।

८. हिस्टीरिया (Hysteria)।

उपद्रव (Complications)—इस रोग में पेल्विक एब्सिस (Pelvic abscess) बनने की प्रबल सम्भावना रहती है; विशेष कर स्त्रियों में।

भावीफल (Prognosis)—१. जनरल पेरिटोनाइटिस एक बहुत ही गम्भीर अवस्था है।

२. टॉक्सीमिया के कारण रोग असाध्य होता है और उसमें रोगी की मृत्यु हो जाती है।

३. पेरिटोनाइटिस में व्यापक रूप में शोथ होने पर लक्षण तीव्र स्वरूप के होते हैं और रोग असाध्य होता है।

४. स्थानिक (Localized) रूप में शोथ होने पर औषधि-चिकित्सा अथवा ऑपरेशन से रोगी ठीक हो जाता है।

५. जिस रोगी में विष-संचार के लक्षण हों, नाड़ी तीव्र हो, तापक्रम सब-नार्मल हो गया हो, आँतों की चेष्टा नष्ट हो गई हो, तो ऐसा रोगी ठीक नहीं होता है।

६. उग्र रोग २४ घण्टे में रोगी का प्राणान्त कर सकता है। स्थानिक (Localized) से विस्तृत रूप होने में रोगी को कुछ घंटों से अधिक नहीं लगते हैं।

७. हिचकी होना विशेष गम्भीर स्थिति का सूचक है।

चिकित्सा-सिद्धान्त (Principles of treatment.)—

१. इण्ट्रावीनस फ्लूइड देने से डिहाइड्रेशन तथा इलेक्ट्रोलाइटिक डिफीसियेन्सी को ठीक किया जा सकता है।

२. बैक्टीरियल इन्फेक्शन पर काबू पाने के लिए 'एण्टीबायोटिक' का प्रयोग आवश्यक है। एनारोबिक इन्फेक्शन (Anaerobic infection) के लिए मेट्रोनिडाजोल (Metronidazole) I/V दें।

३. रोग का कारण खोज कर उचित ऑपरेशन की व्यवस्था करें। यदि व्यापक स्वरूप का रोग हो तो ऑपरेशन नितान्त आवश्यक होता है।

४. यदि रोग की विकृति सीमित है तथा रोगी की नाड़ी की गति १०० बार प्रति मिनट से कम है अथवा किसी कारणवश ऑपरेशन में विलम्ब हो तो निम्न चिकित्सा-व्यवस्था का यथाशीघ्र आयोजन करना चाहिए।

चिकित्सा (Treatment)—१. रोगी को फाउलर के आसन (Fowler position) में लिटाना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. यदि आमाशय में विदार हो तो केवल मुख से बर्फ चूसने को देना चाहिए अथवा केवल दूध दें।

३. मुख से कुछ न दें। I/V ग्लूकोज सैलाइन दें। जब तक आँत की गति वापिस न हो आये तब तक नेजो-गैस्ट्रिक एस्पिरेशन करना चाहिए।

४. ग्लूकोज २५%–१०० मिली० + रेडेक्सोन ५०० मि० ग्रा० का घोल बनाकर I/V मार्ग से दें।

५. जब तक संक्रामक जीवाणु का निश्चय न हो जाये तब तक—

℞ टेट्रासाइक्लीन (Tetracycline) ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर तापक्रम नार्मल होने तक दें। तत्पश्चात् ५०० मि० ग्रा० ७ दिन तक।

अथवा—इञ्जेक्शन गैरामाइसिन (Inj. Garramycin) ८० मि० ग्रा०

मात्रा—ऐसी १ मात्रा प्रति ८ घण्टे पर मांसपेशीगत।

अथवा—इञ्जे० सेफलोरीडीन (Cephaloridine) ०·५ ग्राम

मात्रा—ऐसी १ मात्रा प्रति ८ घण्टे पर मांसपेशीगत।

साथ ही—सल्फाडायजिन (Sulphadaizine)

मात्रा—४ ग्राम प्रति ४ घण्टे पर। तत्पश्चात् १½ ग्राम की मात्रा प्रति ४ घण्टे पर।

नोट—विरेचक औषधि (Purgative) का पूर्ण निषेध करें।

उपरोक्त इञ्जेक्शनों के स्थान पर—प्रोसिलिन (हिन्दुस्तान एण्टीबायोटिक) का इञ्जेक्शन दिया जा सकता है। स्ट्रेप्टोमाइसिन १-२ ग्राम प्रतिदिन अथवा क्लोरोमाइसिटीन ४ ग्राम प्रतिदिन देने से भी लाभ होता है।

यदि एनारोबिक (Anarobic) इन्फेक्शन हो तो—

℞ इञ्जे० यूनीमिजोल (Inj. Unimizol) २ मि० ग्रा०/मिली० के हिसाब से ५% डेक्स्ट्रोज ५४० मिली० I/V ड्रिप द्वारा दिन में १ बार नित्य।

निर्देश—१. जब तीव्र रोग में उपरोक्त चिकित्सा से लाभ न मिले तो तुरन्त ऑपरेशन करना चाहिए।

२. पेरिटोनाइटिस का कारण यदि आन्त्र के एक भाग में छिद्र (Perforation) हो अथवा नेक्रोसिस हो या पूययुक्त एपेण्डिसाइटिस हो तो तत्काल ऑपरेशन द्वारा इसका निराकरण करना चाहिए। ऐसी अवस्था में—

(i) रोगी को मुख से कुछ नहीं देना चाहिए।

(ii) जल तथा इलेक्ट्रोल [illegible] द्वारा देते रहना चाहिए।

(iii) पीड़ा के लिए [illegible] जेक्शन दें।

(iv) निर्बलता के लिए ब्लड-ट्रान्सफ्यूजन।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(v) अफारे के लिए गैस्ट्रिक ट्यूब लगाकर सक्सन द्वारा गैस को खींचना चाहिए।

ऑपरेशन के पश्चात् की चिकित्सा—

१. शल्यकर्म के पश्चात् भी सावधानी की आवश्यकता है।

२. रोगी को I/V मार्ग से निरन्तर विधि से 'नार्मल सैलाइन' या प्लाज्मोसान (Plasmosan), पैरिस्टोन आदि देना आवश्यक है। इससे विषों का शरीर से परित्याग होता रहता है।

३. रोगी को फाउलर स्थिति में रखकर उसके आमाशय को नाक के द्वारा चूषण नलिका को डालकर प्रति ½ घण्टे पर रिक्त रखा जाये।

४. 'एण्टीबायोटिक' तथा सल्फा ड्रग्स का प्रयोग तब तक जारी रखना चाहिए, जब तक रोगी की अवस्था सन्तोषजनक न हो जाय।

नोट—ऑपरेशन के पश्चात् भी आन्त्र के स्तम्भ का भय रहता है।

सेविल्स सिस्टम ऑफ क्लिनिकल मेडिसिन के अनुसार पेरिटोनाइटिस की चिकित्सा—

(१) **जनरल स्वरूप के रोग में** (In general type)—सही निदान कर तत्काल ऑपरेशन तथा ड्रेनिज की व्यवस्था करनी चाहिए। साथ ही एण्टीबायोटिक औषधियों का प्रयोग करें। इसके लिए—

पेनिसिलीन + स्ट्रेप्टोमाइसीन पूरी मात्रा में दिन में २ बार I/M दें।

एक दिन छोड़कर—

क्लोर-टेट्रासाइक्लीन (Chlortetracycline) B. P.

व्या० नाम—आरियोमाइसिन (Aureomycin) ०·५ ग्राम

मुख अथवा I/V (5·0 per cent. in saline) प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—टेट्रासाइक्लीन (Tetracycline) दें।

(२) **लोकल पेरिटोनाइटिस में** (In local peritonitis)—इसकी प्रारम्भिक अवस्था में मेडिकल चिकित्सा की जाती है। रोगी को 'फाउलर पोजीशन' में रखकर कारण की चिकित्सा करनी चाहिए। आहार (Diet) तरल, फलों का रस + ग्लूकोज, सूप्स (Soups), जैली, मिल्क तथा ब्राण्डी को नाड़ी की अवस्था के अनुसार मिलाकर देना चाहिए। गुदा (Rectal) तथा शिरामार्ग (I/V) से ५% डेक्स्ट्रोज सोलूशन तथा एण्टीबायोटिक देना उपयुक्त रहता है। गम्भीर दशा तथा वमन की तीव्रावस्था में—रायल्स ट्यूब को स्टमक में डालकर लगातार एस्पिरेशन (Continuous respiration) करना चाहिए। अथवा 'मिलर्स एव्वोट ट्यूब' को डचूडेनम में भी डाला जा सकता है। इसमें स्थानीय सेंक (Local fomentation) लाभकारी होता है। दर्द के लिए मार्फिया का प्रयोग उत्तम रहता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसमें परगेटिव खतरनाक होता है। परन्तु आँतों को एनिमा के द्वारा साफ रखना चाहिए। हिचकी की स्थिति में बर्फ चूसने को दें। इञ्जेक्शन के रूप में मार्फिया अथवा क्लोरप्रोमेजीन अथवा 'क्लोरल' रेक्टम के द्वारा दें।

जीर्ण पेरिटोनाइटिस
(Chronic Peritonitis)

परिचय (Introduction)—यह शोथ जीर्ण होता है। इसमें अधिकतर फाइब्रोसिस का निर्माण होता है। यह क्षयजन्य तथा कैन्सरीय अथवा दुर्दम्य (Malignant) होता है।

कारण (Etiology)—१. गर्म देशों में यह रोग प्रायः डिसेण्ट्री के कारण होता है। रोग की अन्तिम अवस्था में जलोदर हो जाता है।

२. ठंडे देशों में यह प्रायः एब्डॉमिनल टचूबरकुलोसिस के कारण होता है।

३. उदर कैंसर अथवा ओवेरियन सिस्ट द्वारा।

४. ४५ वर्ष से ऊपर की आयु के व्यक्ति में दीर्घकालिक उदररोग पेरिटोनियम में कैंसर के अंकुरों अथवा गुल्मों (Mass) के हो जाने से होता है।

५. कभी-कभी बिना कारण के भी यह उत्पन्न हो जाता हैं।

संक्रमण (Infections)—इसमें जीवाणु का संक्रमण फेफड़ों से लसिका वाहिनियों एवं रक्त के द्वारा होता है। जो पहले मेसेण्ट्रिक में और बाद में पेरिटोनियम में होता है।

लक्षण एवं चिह्न (Symptoms & signs)—१. यह रोग अधिकतर बाल्यावस्था में होता है। ५ से २० वर्ष वालों को सबसे अधिक होता है।

२. **प्रारम्भ**—रोग का प्रारम्भ शनैः-शनैः होता है।

३. **अस्वस्थता**—रोगी में अरुचि एवं बढ़ती हुई दुर्बलता इसके प्रथम लक्षण होते हैं। बालक अथवा युवक का भार घटता जाता है। कमजोरी बढ़ती जाती है।

४. **ज्वर**—शाम अथवा रात के समय हल्का ज्वर रहता है।

५. **पेट सम्बन्धी लक्षण**—ज्वर के पश्चात् रोगी को मलबन्ध या अतिसार तथा मल का अधिक मात्रा में आना इसके उदरीय लक्षण होते हैं। साथ ही पेट में कुछ बेचैनी रहती है। पूरे पेट में स्पर्शाक्षमता का लक्षण मिलता है। कभी-कभी उदर में शूल की भी अनुभूति होती है।

६. मन्दाग्नि, तीव्रगामी नाड़ी, भार की कमी, रक्ताल्पता, स्त्रियों को मासिकधर्म न होना, अनार्तव (Primary and secondary amenorrhoea), रात के समय पसीना आना आदि यक्ष्मा के विशिष्ट लक्षण मिलते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. उपसर्ग के उदर में फैल जाने के कारण उदर में अनेक उभार (Masses) मिलते हैं। अथवा जलोदर के लक्षण मिलते हैं।

८. पेट में जल का संचय होने के कारण अथवा जलोदर के कारण उदर के परिमाण में वृद्धि हो जाती है। साथ ही जलोदर के अन्य लक्षण भी मिलते हैं। जलोदर होने पर जल में प्रोटीन अधिक होता है। पेट उभरा हुआ होता है। निर्बलता एवं कृशता के लक्षण अधिक वृद्धि को प्राप्त होते हैं।

९. पेट की ग्रन्थियों के अतिरिक्त वंक्षण-संधि तथा ग्रीवा की ग्रन्थियाँ भी सूजी हुई हो सकती हैं।

निदान (Diagnosis)—१. उदर-परीक्षा करने पर परिस्पर्शन से आन्त्र-पाशों के जुड़ जाने एवं हल्का शोथ होने से उदर की प्रतीति गुथे हुए आटे के समान हो जाती है।

२. आन्त्र में छोटे-छोटे पिण्ड तथा परिवर्धित लसग्रन्थियाँ प्रतीत हो सकती हैं।

३. यदि द्रव युक्त सिस्ट का निर्माण हो गया है तो उन पर परिताड़न से ठोस (Dull) शब्द होता है और तरल तरंग (Fluid thrill) प्रतीत होती है।

४. आन्त्रपाश जुड़े हुए प्रतीत हो सकते हैं।

५. जलोदर के समान उदर में स्वतन्त्र द्रव का भी अनुभव किया जा सकता है।

६. रोगी को प्रायः मलावरोध रहता है।

भावीफल (Prognosis)—यह एक असाध्य रोग है। इस रोग के होने पर रोगी ६ माह से अधिक जीवित नहीं रहता है।

चिकित्सा (Treatment)—इसकी चिकित्सा यक्ष्मा (T. B.) की 'सामान्य चिकित्सा' के समान है।

℞ (i) स्ट्रेप्टोमाइसिन (Streptomycin)
½ ग्राम प्रतिदिन २ बार मांसपेशीगत ३ माह तक।
साथ ही—PAS–८-१२ ग्राम प्रतिदिन ६ माह तक।
अथवा—आइसोनियाजिड २०० मि० ग्रा० प्रतिदिन ६ माह तक।

(ii) द्रव के अधिक होर पर उसको 'ट्रोकार केनुला' से उदर में भेद कर जल को निकालना पड़ता है।

(iii) अन्य उपद्रवों की लाक्षणिक चिकित्सा की जाती है।

नोट—उपर्युक्त चिकित्सा से रोग-मुक्ति की आशा की जाती है। इसमें शस्त्र-चिकित्सा की आवश्यकता नहीं पड़ती और न ही इससे कोई लाभ ही होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशिष्ट प्रकार का पेरिटोनाइटिस—यह प्रायः २ प्रकार का मिलता है—
१. न्यूमोकोकसजन्य पेरिटोनाइटिस (Pneumococcal peritonitis)।
२. गोनोमेहजन्य पेरिटोनाइटिस (Gonorrheal peritonitis)।

न्यूमोकोकसजन्य पेरिटोनाइटिस
(Pneumococcal Peritonitis)

परिचय—यह रोग प्रायः ४ से १४ वर्ष की बालिकाओं में मिलता है।

संक्रमण (Modes of infection)—न्यूमोनिया अथवा एम्पाइमा में उपद्रवस्वरूप यह रोग फुप्फुस अथवा थोरेसिक केविटी से एब्डॉमिनल केविटी में प्रसरण कर जाता है।

बालिकाओं में भग और योनि द्वारा संक्रमण के रूप में यह रोग अधिकतर एकदेशीय (Localized) होता है और उदर के भीतर किसी स्थान पर पूय एकत्रित हो जाता है।

लक्षण (Symptoms)—१. उदर पीड़ा (Abdominal pain)।
२. मितली तथा वमन (Nausea and vomiting)।
३. बुखार (Fever)।
४. प्रायः ३-४ दिन में रोग के लक्षण प्रकट हो जाते हैं। बालिकाओं की विषम स्थिति उत्पन्न हो जाती है। प्रायः योनि से स्राव होता रहता है।

नोट—निदान के लिए योनि-परीक्षण (योनिगत स्राव का) आवश्यक है।

चिकित्सा (Treatment)—१. इसकी न्यूमोनिया की भाँति चिकित्सा करनी चाहिए।
२. 'पेनिसिलीन' तथा 'सल्फा ड्रग्स' का भरपूर मात्रा में प्रयोग करें।
३. एम्पीसिलीन २५० मि० ग्रा० दिन में ४ बार १-१ कैपसूल दें।
४. ब्लड-ट्रान्सफ्यूजन या प्लाज्मा अथवा प्लाज्मोसान देना आवश्यक होता है।
५. इसका ऑपरेशन सन्तोषजनक नहीं है।
६. रोग के एकदेशीय होने अथवा निदान सही न हो पाने पर एब्डॉमिनल केविटी को खोल कर पूय अथवा स्राव को निकाल कर पेरिटोनियम का शोधन करके केविटी को बन्द कर देना चाहिए।

गोनोमेहजन्य पेरिटोनाइटिस
(Gonorrheal Peritonitis)

परिचय एवं कारण—इस प्रकार का पेरिटोनाइटिस गोनोकोकस जीवाणु के परिणामस्वरूप होता है। यह भी स्त्रियों में मिलता है।

संक्रमण (Infection)—प्रायः रोगग्रस्त पुरुष के साथ समागम के ३-४ दिन पश्चात् रोग प्रारम्भ हो जाता है। इसका संक्रमण भग, योनि, गर्भाशय

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा डिम्ब-प्रणाली से होकर एब्डॉमिनल केविटी में पहुँच कर पेरिटोनियम को आक्रान्त कर देता है।

○ यह प्रायः योनि में ही सीमित हो जाता है।

लक्षण एवं चिह्न (Symptoms and signs)—

१. प्रारम्भ—अकस्मात् होता है।

२. पीड़ा—उदर के निचले भाग में पीड़ा होती है। शीघ्र ही उदर फूल जाता है।

३. स्पर्शाक्षमता—दोनों ओर इन्ग्वाइनल लिगामेण्ट के ऊपर श्रोणिघात में स्पर्शाक्षमता का मिलना।

४. स्राव—योनि से पर्याप्त मात्रा में स्राव आता है।

५. ज्वर—१०१–१०२° फा० तक रहता है।

६. रोगी की स्थिति—इसमें रोगिणी की स्थिति अधिक विषम नहीं होती है। स्थिति प्रायः सामान्य रहती है।

चिकित्सा (Treatment)—१. गरम एण्टीसेप्टिक लोशन से योनि का प्रक्षालन।

२. यदि निदान में सन्देह हो तो उदर के निचले भाग को खोलकर देखना चाहिए। यदि वहाँ पर पूय की उपस्थिति मिले तो उसके निर्हरण का यत्न करना चाहिए।

३. एम्पीसिलीन तथा सल्फा ड्रग्स का प्रयोग।

जीर्ण स्वरूप (Chronic type)—इस रोग का जीर्ण स्वरूप भी मिलता है। इसमें श्रोणि (Pelvis) के अंदर शोथ चिरकाल तक बना रहता है।

लक्षण (Symptoms)—१. रोगिणी के निचले उदर में सदैव पीड़ा बनी रहती है।

२. निचला उदर दबाने पर पीड़ा एवं स्पर्शाक्षमता मिलती है।

३. शोथ के कारण पेल्विस में कुछ न कुछ स्राव अवश्य बना रहता है।

४. श्रोणि के भीतरी भाग आपस में जुड़ जाते हैं।

५. वमन तथा ज्वर के आक्रमण समय-समय पर होते रहते हैं।

६. रोगी का स्वास्थ्य क्षीण हो जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—१. इसकी चिकित्सा कठिन है।

२. प्रायः ऑपरेशन द्वारा डिम्बग्रन्थि तथा डिम्बवाहिनी को गर्भाशय के साथ निकालना पड़ता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उण्डुकपुच्छशोथ
(Appendicitis)

पर्याय (Synonyms)—आन्त्रपुच्छशोथ, आन्त्रपरिशिष्टशोथ, आन्त्र-गुल्म, पेट का टॉन्सिल एवं एब्डॉमिनल टॉन्सिल्स ।

परिचय—एपेण्डिक्स (Appendix) के शोथ को एपेण्डिसाइटिस कहते हैं । इस रोग में एपेण्डिक्स के छिद्र में रुकावट होने से शोथ उत्पन्न हो जाता है । एपेण्डिक्स में उपसर्ग रक्त के द्वारा पहुँच सकता है । यह रोग बालकों तथा युवकों में अधिक होता है । इसका प्रारम्भ अर्धरात्रि के समय अकस्मात् होता है । रोग प्रारम्भ होने के पूर्व अनियंत्रित भोजन का इतिहास मिलता है ।

○ इस रोग में दाहिनी ओर पेट में तीव्र शूल (Appendicular pain or colic) होता है । मितली और वमन होता है । रोगी को अफारा रहता है । कब्ज के साथ ज्वर आदि विकार होते हैं ।

○ रोग के आक्रमणों का अनेक बार होना इस रोग की विशेषता है । अनेक बार आवेगों के आक्रमण के कारण रोग की चिरकालिक अवस्था हो जाती है । जिससे डिस्पैप्सिया के लक्षण प्रधान हो जाते हैं ।

प्रकार (Types)—एपेण्डिसाइटिस प्राय: २ प्रकार का होता है—

१. तीव्र एपेण्डिसाइटिस (Acute appendicitis) ।

२. चिरकालिक एपेण्डिसाइटिस (Chronic appendicitis) ।

तीव्र एपेण्डिसाइटिस
(Acute Appendicitis)

परिचय—Acute appendicitis may consist simply of a catarrhal inflammation of the vermiform appendix, which is relatively benign : or a virulent form with ulceration, gangrene local or diffuse peritonitis.

—*Sevill's System of Clinical Medicine.*

○ इस विकृति में एपेण्डिक्स में तीव्र शोथ हो जाता है । यह स्त्री-पुरुष दोनों में समान रूप से मिलता है । विशेष रूप से युवावस्था वाले पुरुष अधिक प्रभावित होते हैं ।

○ यह रोग अत्यन्त उग्रस्वरूप का होता है । यह विकृति की एक अवस्था है जो ऑपरेशन के अन्तर्गत आती है । पर आजकल की नवीन औष-

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धियों, एण्टीबायोटिक्स तथा सल्फा ड्रग्स की सहायता से अनेक बार शान्त हो जाता है।

○ तीव्र एपेण्डिसाइटिस की यदि तत्काल चिकित्सा न की गयी तो वह शीघ्र ही प्राणघातक हो जाती है। इसलिए चिकित्सक को तत्काल दैहिक तथा प्रायोगिक परीक्षाओं द्वारा इस रोग का तुरन्त निदान करके उपयुक्त चिकित्सा का शीघ्र आयोजन करना चाहिए।

कारण (Etiology)—१. रक्त का कम मिलना (Poor blood supply)।

२. पेल्विक इन्फ्लेमेशन (Pelvic inflammation)।

३. बाह्य पदार्थ (Foreign bodies)।

४. फीकोलिथ्स (Faecoliths)।

५. जनरेलाइज्ड इन्फेक्शन (Generalized infection)।

६. सहायक कारण या प्रवृत्ति उत्पन्न करने वाले कारण भी कई प्रकार के होते हैं, जैसे—

(i) एपेण्डिक्स का लम्बा होना।

(ii) उसमें घुमाव पड़ जाना।

(iii) शोथ का पूर्व में हल्का आक्रमण।

७. वयस्क पुरुषों में कामन तथा वृद्धों में कभी-कभी।

८. कामन इन सिविलाइज्ड रेस।

९. आहार (Diet) में प्रोटीन की अधिकता तथा रेशेदार की कमी।

१०. Drainage against gravity.

○ रोग का विशिष्ट कारण पूयोत्पादक जीवाणु, विशेषकर स्ट्रेप्टोकोलाई, पायोजेनीज एवं 'बैक्टीरियम कोलाई' होते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य आँत के बैक्टीरिया (Intestinal bacteria) भी इसके लिए उत्तरदायी हो सकते हैं।

संक्रमण (Mode of infection)—1. Directly from the lumen.

2. Blood stream.

लक्षण (Symptoms)—१. उदर-पीड़ा (Abdominal colic)।

२. हल्का बुखार (Fever of low grade)।

३. मितली एवं कै (Nausea & vomiting)।

४. कब्ज एवं अतिसार (Constipation & diarrhoea)।

५. अरुचि (Anorexea)।

६. तीव्रगामी नाड़ी।

७. उदर प्राचीर का कड़ा होना तथा उसे दबाने से पीड़ा होना।

८. श्वेतकणों की वृद्धि (Leucocytosis)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. **उदर-पीड़ा** (Abdominal pain or colic)—

(i) अकस्मात् पेट में दर्द उत्पन्न होना इस रोग का प्रधान लक्षण है। यह दर्द विशेष रूप से रात्रि के अन्तिम भाग में और प्रातःकाल आरम्भ होता है। रोगी सोते से जाग जाता है।

(ii) रोगी को चुभने जैसा शूल होता है, जो नाभि-प्रदेश पर प्रतीत होता है तथा २४ घण्टे में दक्षिण इलियक फोसा में केन्द्रित हो जाता है।

(iii) Constant & aching in nature.

(iv) In case of obstruction it may be colicky to start with.

(v) Sudden disappearance of pain with cut improvement of general condition means gangrene & perforation, but pain invariably returns later.

O **नोट**—कभी-कभी ऐपेण्डिक्स अपने प्राकृत स्थान पर न रह कर दूसरे स्थान पर खिसक जाता है। इस अवस्था में पीड़ा दाहिनी ओर की पसलियों के नीचे (Hypochondrium) या दाहिनी ओर कमर के पास होती है।

O एपेण्डिक्स के पेल्विस में चले जाने से स्थानिक लक्षण नहीं होते हैं। किन्तु गुदा-परीक्षण (Rectal examination) करते समय 'रेक्टो-विसिकल पाउच' में पीड़ा मिलती है।

२. **हल्का बुखार** (Fever of low grade)—९९–१००° फा० अथवा १०१–१०२° फा० तक रहता है।

३. **मितली एवं कै** (Nausea & vomiting)—पीड़ा प्रारम्भ होने पर रोगी का जी मिचलाता है और १-२ बार वमन भी होता है। किन्तु वमन का लक्षण देर तक नहीं रहता है और मितली सदैव उपस्थित रहती है।

४. **कब्ज एवं अतिसार** (Constipation & diarrhoea)—प्रायः कब्ज (Constipation) उपस्थित रहता है। रेक्टम, पेल्विक कोलन (Pelvic colon) के आक्रान्त होने पर श्लेष्मा युक्त अतिसार (Mucous diarrhoea) विशेषकर बच्चों में मिलता है। इलियल टाइप के एपेण्डिक्स में पानी जैसे दस्त (Watrly diarrhoea) आते हैं।

O पूर्ण मलबन्ध का होना इसका दूसरा विशिष्ट लक्षण है। कभी-कभी वमन के साथ अतिसार की प्रवृत्ति देखी जाती है। पर कब्ज अधिक सामान्य रहता है।

५. **एनोरेक्सिया** (Anorexia)—रोगी में अरुचि का लक्षण भी बहुधा मिलता है।

६. **तीव्रगामी नाड़ी** (Quick pulse)—नाड़ी की गति बढ़ी होती है और ज्वर की अपेक्षा अधिक गतिमान हो जाती है। नाड़ी की गति प्रति मिनट वास्तव में रोग की उग्रता की विश्वस्त सूचक होती है। उसका घटना

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोगी की दशा में सुधार का सूचक है और यदि वह नहीं घटती है एवं निरन्तर बढ़ती ही जाती है तो यह समझना चाहिए कि रोगी की दशा अति विषम हो रही है और उसका तत्काल ऑपरेशन करना आवश्यक है।

○ नाड़ी की गति का बढ़ना रोगी की क्षीणता का विशिष्ट लक्षण है। उसका कारण अवसाद (Shock) हो सकता है। रोग जितना उग्रस्वरूप का होगा अवसाद उतना ही गाढ़ा होगा और नाड़ी की गति उतनी ही तीव्र होगी।

७. उदरप्राचीर का कड़ा होना तथा उसे दबाने से पीड़ा का होना—'मैकबर्नी पाइण्ट' के समीप प्राचीर कड़ी हो जाती है तथा उसको दबाने से पीड़ा होती है।

८. श्वेतकणों की वृद्धि (Leucocytosis)—इस रोग में श्वेतकणों की वृद्धि १५-२० हजार तक ही जाती है। साथ ही विष-संचार (Toxicity) के लक्षण बढ़ जाते हैं।

अन्य लक्षण (Other symptoms)—कुछ समय पश्चात् अर्थात् दूसरे दिन दर्द का लक्षण समाप्त होने लगता है और रोगी प्रायः १ सप्ताह में ठीक हो जाता है। और यदि न ठीक हुआ तो एपेण्डिक्स में विद्रधि (Abscess) अथवा पूयभाव उत्पन्न हो जाता है। ऐसी स्थिति के एपेण्डिक्स में विद्रधि बन जाने पर 'मैकबर्नी बिन्दु' के समीप एक उभार (Mass) छुआ जा सकता है।

○ पेल्विक एपेण्डिसाइटिस में गुदा की कठोरता (Rectal tenderness) कामन होती है।

नोट—सेप्टिक फीवर, कँपकँपी (Chills), हेपेटोमेगाली (Hepatomegali) तथा कामला (Jaundice) भी एपेण्डिसाइटिस के साथ हो तो वह स्थिति **एपेण्डीकुलर परफोरेशन** (Appendicular perforation) **तथा पाइलोफ्लेबाइटिस** (Pyelophlebitis) **की ओर इंगित करती है।**

Essential of diagnosis—(i) Right lower quadrant abdominal pain & tenderness with signs of peritoneal irritation.

(ii) Anorexia, nausea, vomiting & constipation.

(iii) Low grade fever & mild polymorphonuclear leucocytosis.

(iv) Local rigidity.

(v) Quickened pulse; pulse is quick & thready.

(vi) The tongue is almost always coated.

निदान (Diagnosis)—**जनरल सर्वे** (General survey)—

१. रोगी दाहिनी टाँग को पेट पर सिकोड़ कर सीधा पड़ा रहता है।

२. यदि रोगी टाँग को फैलाता है तो पेट की मांसपेशियों पर खिचाव पड़ने से उसे पीड़ा प्रतीत होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. रोगी के पेट की दीवार अकड़ी हुई प्रतीत होती है। श्वास-प्रश्वास के साथ हिलती भी नहीं है।

४. रोगी की जीभ शुष्क तथा मैली दीखती है।

स्पर्श-परीक्षा—○ 'मैकबर्नी पाइण्ट' पर स्पर्श करने से स्पर्शाक्षमता का लक्षण मिलता है। तथा स्पर्श करने पर रोगी अपने पेट को ऐसा तान लेता है कि गहरा स्पर्श करना कठिन हो जाता है।

○ पेरिटोनियम में शोथ के प्रसरण कर जाने पर एपेण्डिक्स अथवा पेट की मध्यरेखा तथा नाभि के बाहर की ओर सीधी खींची हुई रेखा से बने त्रिकोणात्मक रीजन की त्वचा में भी स्पर्शाक्षमता का लक्षण मिलता है।

नोट—मध्य आयु से नीचे के व्यक्तियों में यदि यह चिह्न मिले तो इस रोग का निश्चय हो जाता है।

रक्त-परीक्षा (Blood test)—१. रक्तपरीक्षा में टोटल ल्यूकोसाइट्स काउण्ट १२,००० से २०,००० के मध्य प्रति क्यूबिक मिलीमीटर होती है।

२. यदि उक्त काउण्ट २० हजार से ऊपर हो और २-३ दिन तक ऐसी ही बनी रही तो एपेण्डिक्स में पूयभाव की आशंका करनी चाहिए।

नाड़ी-परीक्षा—१. नाड़ी-परीक्षा में उसकी गति तीव्र अर्थात् ८०-९० तक मिलती है तथा नाड़ी का बल कम होता है।

२. नाड़ी की गति जितनी अधिक होती है, रोग उतना ही बढ़ा हुआ समझना चाहिए।

३. यदि तापक्रम के बिना बढ़े ही नाड़ी की गति तीव्र हो जाये तो हृदय पर विष का प्रभाव समझना चाहिए।

४. नाड़ी की गति तीव्र होने पर रोगी की अवस्था गिरती जाती है।

Rectal examination—Rectal examination must be done. This is always helpful to distinguish it from gynaecological condition.

PSOAS test—Passive extension of hip is painful in retro-caecal appendix in contact with psoas muscle.

Obturator test—Passive internal rotation of hip is painful if the appendix is in contact with obturator internus.

अन्य संदेहात्मक लक्षण—१. यदि बालक के पेट में समय-समय पर दर्द होता रहता हो तो इस रोग का संदेह करना चाहिए।

२. एपेण्डिक्स रीजन पर स्पर्शाक्षमता का होना इस रोग का प्रमुख निदानात्मक लक्षण है।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—निम्न रोगों से इसका विभेद करना चाहिए—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. एक्यूट कोलीसिस्टाइटिस।
२. परफोरेटिड पेप्टिक अलसर।
३. नान स्पेसिफिक मेसेण्टेरिक एडिनाइटिस।
४. अर्ली स्माल बोवल ऑब्स्ट्रक्शन।
५. एक्यूट रीजिनल इलीआइटिस।
६. रप्चर इक्टोपिक प्रेग्नेन्सी, एक्यूट सालपिञ्जाइटिस, टॉर्सन आफ (R) ओवेरियन सिस्ट।
७. पोरफाइरिया (Porphyria)।
८. यूरेटेरिक कॉलिक।

नोट—वृक्कशूल तथा पित्ताशयशूल से इसका भेद करना विशेष रूप से आवश्यक है।

उपद्रव (Complications)—१. चिरकारी अवस्था का उत्पन्न होना।
२. एपेण्डिक्स का अन्य अवयवों से चिपक जाना।
३. एपेण्डिक्स में सड़न (Gangrene)।
४. व्रण (Wound)।
५. विद्रधि की उत्पत्ति (Abscess formation)।
६. ग्रन्थि (Cyst) की उत्पत्ति अथवा छिद्र का होना।
७. एपेण्डिक्स में छिद्र होने के पश्चात् 'पेरिटोनाइटिस' का होना अनिवार्य है।
८. डायाफ्राम के नीचे सब-फ्रेनिक-एब्सिस की उत्पत्ति।
९. पोर्टल पायमिया।
१०. पेरीनेफ्रिक एब्सिस आदि उपद्रव हो सकते हैं।

भावीफल (Prognosis)—१. यदि रोग का पहला वेग होता है तो वह २-३ दिन में शान्त होने लगता है और रोगी १ सप्ताह के अन्दर ही अन्दर ठीक हो जाता है।

२. इस रोग में पुनरावर्तन की सम्भावना रहती है। यदि रोग शान्त न हो तो एपेण्डिक्स में 'पूयभाव' अथवा 'व्रणभाव' हो जाता है। और रोगी १ सप्ताह के बाद भी ठीक नहीं होता है। रोगी को ठंड के साथ ज्वर चढ़ता है। एपेण्डिक्स पर एक गुल्म-सा अनुभव होता है। रोगी अतिशय कृश हो जाता है और अन्तर्विद्रधि के लक्षण प्रकट हो जाते हैं।

नोट—एपेण्डिक्स में पूय की उत्पत्ति होने पर ऑपरेशन अवश्यम्भावी हो जाता है।

मृत्यु-सम्बन्धी सूचना—इस रोग में मृत्यु 'व्यापक पेरिटोनाइटिस' के कारण होती है। बालकों और वृद्धों में मृत्यु की अधिक सम्भावना रहती है। शल्यकर्म में मृत्यु संख्या ३ प्रतिशत ही रहती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा (Treatment)—इस रोग की प्रधान चिकित्सा शल्यचिकित्सा है। इसमें एपेण्डिक्स को निकाल दिया जाता है।

चिकित्सा-सिद्धान्त—(i) Rest in a hospital.

(ii) Nothing by mouth, except sips of water, and no purgative.

(iii) Antibiotics—Usually broadspectrum antibiotics like 'Ampicillin' are given.

(iv) Intravenous alimentation—with I/V glucose.

(v) $\frac{1}{2}$ hourly pulse and temperature are recorded.

(vi) If gangrene, perforation, generalized peritonitis or abscess formation, operation is indicated.

औषधि-व्यवस्था (Medicinal treatment)—यदि रोग मृदु हो, नाड़ी की गति प्रति मिनट न बढ़ रही हो, लक्षण भी क्रमशः शान्त हो रहे हों तो जब तक रोगी का तापक्रम तथा नाड़ी की गति सामान्य न हो जाये, तब तक निम्न व्यवस्था करनी चाहिए—

१. रोगी को निराहार 'फाउलर पोजीशन' में रखकर पूर्ण विश्राम देना चाहिए।

२. गुदा अथवा शिरामार्ग (I/V) द्वारा जल देना चाहिए। जल में लेक्टोज मिलाकर दिया जा सकता है।

३. दर्द के लिए—पेट पर गरम बोतल का प्रयोग अथवा 'एण्टी-फ्लोजिस्टीन प्लास्टर' का प्रयोग करना चाहिए।

४. मलबन्ध को दूर करने के लिए (To remove the constipation)—'ग्लिसरीन सपोजिटरी' का प्रयोग करें। अथवा रात्रि के समय 'लिक्विड पैराफिन' २ ड्राम की मात्रा में दें।

५. एपेण्डीकुलर कॉलिक को दूर करने के लिए—

℞ पैथीडीन (Pathidine) १०० मि० ग्रा०
१ एम्पुल इण्ट्रामस्कुलर (I. M.)।

अथवा—मार्फिया १० मि० ग्रा० S/C दें।
अथवा—केलोमल १० मि० ग्रा०
मेन्थोल १५ मि० ग्रा०
एक्स्ट्रेक्ट बेलाडोना ८ मि० ग्रा०
एक्स्ट्रेक्ट हायोसायमस ८ मि० ग्रा०
एक्स्ट्रेक्ट जेन्शन से निर्मित गोली प्रति २ घण्टे पर।

६. इण्ट्रावीनस ग्लूकोज चढ़ाएं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. संक्रमण के निराकरण हेतु (Treatment of infection)—

℞ क्रिस्टेलाइन पेनिसिलीन (Crystalline penicillin)

मात्रा—१ लाख यूनिट मांसपेशीगत (I. M.) प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—इञ्जे० जेण्टामाइसिन ४० मि० ग्रा०

मांसपेशीगत (I/M) प्रति ६ घंटे पर।

स्ट्रेप्टोकोकाई तथा बैक्टेरियम कोलाई के उपसर्ग होने पर—

टेट्रासाइक्सीन (Tetracycline)।

अथवा—डाइक्रिस्टासीन (D. C.) या प्रोसिलीन फोर्ट (हिन्दुस्तान एण्टी बायोटिक), ओम्नामाइसीन अथवा क्रिस्टामाइसीन (ग्लैक्सो) का उपयोग किया जा सकता है।

एक्यूट पेरिटोनाइटिस की स्थिति में (In acute peritonitis)—

℞ गैस्ट्रिक सक्शन के द्वारा फ्लूइड (Fluid) का निष्कासन।

तथा ब्राड एण्टीबायोटिक का प्रयोग।

मेट्रोनिडाजोल (Metronidazole) इण्ट्रावीनस

अथवा—१ ग्राम सपोजिटरी प्रति ८ घण्टे पर ३ मात्रा तक ऑपरेशन से १ घण्टे पूर्व।

एपेण्डिक्स मास में (In appendix mass)—

कंजरवेटिव ट्रीटमेण्ट (Consurvetivc treatment)—

१. शय्या पर पूर्ण विश्रास (Complete rest in bed)।

२. द्रव आहार (Fluid diet)।

३. तापक्रम, नाड़ी तथा मास (Mass) का आकार रिकार्ड करें।

नोट—इस स्थिति में 'एण्टीबायोटिक' का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

ऐब्सिस ड्रेनेज (Abscess drainage)—

यदि एब्सिस काफी बड़ा हो और बुखार निरन्तर रहता हो तो—३ माह के रिसोलूशन (Resolution) के पश्चात् एपेण्डिसेक्टोमी (Appendicectomy) की आवश्यकता होती है।

आवश्यक निर्देश—मृदु रोग में साधारण चिकित्सा के पश्चात् बहुधा ऑपरेशन की आवश्यकता नहीं पड़ती। परन्तु रोग कुछ तीव्र रूप में हो तथा एडेसन—जुड़ाव (Adhesions) हो गये हों तो तुरन्त अथवा उपयुक्त चिकित्सा से रोगी के रोग मुक्त हो जाने के ३ माह बाद ऑपरेशन का निर्देश करना चाहिए।

गम्भीर संक्रमण की स्थिति में (In severe infection)—

○ Full dose of antibiotics are essential (Intramuscular streptomycin 12 hourly and/or intravenous chlortetracycline B. P.–Aureomycin–10 ml. of a 5% solution in N. saline 6-hourly.)

 CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

O If delay in undertaking operation is necessary or if operation is refused, the patient should be put to bed in the Fowler position and nothing but fluids given by mouth : purgatives are especially dangerous but injections of anti-bioatics are helpful. Morphine or pethidine should never be given until the diagnosis has been firmly established as analgesics hide the presence of the disease and of its complications once the diagnosis has been settled a small dose may be employed to relieve pain pending operation being performed.

ऑपरेशन के पश्चात् की व्यवस्था (Postoperative care)—

उपद्रव रहित एपेण्डिसाइटिस (Uncomplicated appendicitis) में प्रायः गैस्ट्रिक सक्सन की आवश्यकता नहीं पड़ती है। ऑपरेशन के पश्चात् प्रथम दिन एम्बुलेशन (Ambulation) प्रारम्भ करना चाहिए। दूसरे दिन से ५ वें दिन तक रोगी को स्वच्छ तरल पदार्थ दें। यदि आवश्यक हो तो Parenteral fluid supplements की व्यवस्था करें। एनीमा के प्रयोग का पूर्णतया निषेध रहता है। यदि आवश्यक हो तो तीसरे दिन से मिल्क आफ मैगनेशिया अथवा सोते समय कोई मृदुविरेचक दें।

साथ ही एण्टीबायोटिक थेरापी ('पेनिसिलीन' एवं 'जेण्टामाइसीन' अथवा 'क्लिण्डामाइसीन')—५ से ७ दिन तक दें। यदि उदरीय द्रव (Abdominal fluid) पूय युक्त हो (ऑपरेशन के समय) तब इनका प्रयोग लम्बे समय तक करना चाहिए।

यदि Culture पॉजिटिव (Positive) हो अथवा एपेण्डिक्स में सड़न हो तो रोगी को १ सप्ताह तक अस्पताल में भर्ती रखना चाहिए। उपद्रवहीन केसिस में सर्जरी के २-३ सप्ताह के पश्चात् रोगी की सामान्य क्रियाएँ वापिस आ जाती है।

इमरजेन्सी में नॉन-सर्जिकल ट्रीटमेण्ट (Nonsurgical treatment in emergency)—जब सर्जिकल ट्रीटमेण्ट की सुविधा प्राप्त न हो, तब इसकी चिकित्सा 'एक्यूट पेरिटोनाइटिस' की भाँति करनी चाहिए।

नोट—यदि ऑपरेशन के द्वारा 'एपेण्डिक्स' को न निकाला गया तो पुनः तीव्र आक्रमण की सम्भावना रहती है।

तीव्र पुनरावर्ती एपेण्डिसाइटिस
(Recurrent Acute Appendicitis)

लक्षण एवं चिह्न (Symptoms & signs)—१. दाहिने इलियक फोसा (Right iliac fossa) में हल्का दर्द होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. जनरल मेनिफेस्टेशन्स (General manifestations)—

(i) अजीर्ण (Indigestion) ।

(ii) Malaise & slightly coated tongue.

(iii) Occasionally slight fever.

३. एपिगैस्ट्रिक पेन, एसिडिटी, हर्ट-बर्न ।

४. राइट इलियक फोसा पर हल्की कठोरता ।

चिकित्सा (Treatment)—ऐपेण्डिसेक्टोमी (Appendicectomy) ।

चिरकालिक एपेण्डिसाइटिस
(Chronic Appendicitis)

परिचय—यह तीव्र एपेण्डिसाइटिस की दीर्घकालिक अवस्था है। ऐसी अवस्था में शोथ कम हो जाता है, पर बिल्कुल समाप्त नहीं होता। अधिकांश रोगियों में यह रोग प्रारम्भ से ही जीर्ण स्वरूप का (Chronic type) होता है। समय-समय पर इसके आक्रमण होते रहते हैं। आक्रमणों का अन्तर-काल निश्चत नहीं होता है। या तो एक-दो माह के अन्तराल पर आक्रमण होता है अथवा १ वर्ष के अन्तराल पर दूसरा आक्रमण होता है।

लक्षण (Symptoms)—१. इस अवस्था में ताप तथा नाढ़ी की गति नार्मल रहती है।

२. **एपेण्डिक्स शूल**—रोगी के उदर के बीच में अथवा दाहिने भाग में तीव्र या मन्द पीड़ा होती है। जो कुछ ही समय पश्चात् राइट इलियक फोसा में परिणत हो जाती है। कभी-कभी तीव्र पीड़ा भी होती है।

३. जी मिचलाना (Nausea), वमन, कान्स्टीपेशन या अतिसार आदि विशेष लक्षण होते हैं।

४. रोगी अल्पकाल के बाद ही उपरोक्त लक्षणों से रोग-मुक्त हो जाता है और वह शीघ्र स्वस्थ दीखने लगता है।

५. कुछ समय के अन्तराल पर उसको फिर ऐसा ही आक्रमण होता है।

६. अनेक बार रोगी को अजीर्ण जैसे अपचन के लक्षण होते हैं।

निदान (Diagnosis)—**रोगी-परीक्षा**—परीक्षा करने पर प्रायः राइट इलियक फोसा में 'मैकबर्नी बिन्दु' पर दबाने से रोगी को पीड़ा-स्पर्शक्षमता मिलती है। अधिक गहरा दबाने पर वहाँ एक पिण्ड अथवा शोथयुक्त एपेण्डिक्स प्रतीत होता है।

एक्स-रे परीक्षा—एक्स-रे में बेरियम के भर जाने पर प्रतीत होता है। पर कभी-कभी बेरियम के न भरने पर इसकी प्रतीति नहीं होती है। क्योंकि बार-बार शोथ होने से एपेण्डिक्स में फाइब्रस टिशू बनने से नली का रास्ता अवरुद्ध हो जाता है, जिससे वहाँ बेरियम नहीं पहुँचता है। अतः एक्स-रे चित्र में उसकी छाया नहीं दिखलाई देती।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेशी-काठिन्य—आक्रमण काल में पीड़ा के साथ प्रायः दाहिनी ओर नीचे के भाग में पेशी-काठिन्य का चिह्न मिलता है।

मल-परीक्षा (Stool test)—इसमें अव्यक्त रक्त की उपस्थिति मिल सकती है।

रोग-विनिश्चय—१. सामान्य दशा में—

(i) निदान में कोई कठिनाई नहीं होती है।

(ii) अन्य लक्षणों के साथ पीड़ा का पुनः-पुनः आक्रमण होना रोग का विशिष्ट निदानात्मक लक्षण है।

२. असामान्य स्थिति और रोग की उग्रावस्था में—ऐसी स्थिति में उदर के प्रत्येक रोग के साथ भ्रम हो सकता है। ऐसी स्थिति में फिजिकल तथा प्रायोगिक परीक्षाओं द्वारा रोग को पहिचानना आवश्यक होता है।

चिकित्सा (Treatment)—इसकी चिकित्सा एक्यूट एपेण्डिसाइटिस की तरह दो प्रकार से की जाती है—

१. आक्रमण के समय की चिकित्सा—इस समय एण्टीबायोटिक तथा सल्फा ड्रग्स का उपयोग करने से रोग का शमन हो जाता है। इसका पुनराक्रमण फिर हो सकता है। इसलिए निम्न चिकित्सा ही इसका एकमात्र अन्तिम साधन है।

पीड़ा को शान्त करने के लिए—शामक (Analgesic) औषधियों का प्रयोग करना चाहिए।

२. अन्तरकाल की चिकित्सा—उग्र आक्रमण के लक्षण उपरोक्त चिकित्सा से शान्त हो जाने पर 'एपेण्डिसेक्टोमी' (Appendicectomy) का ऑपरेशन करना चाहिए। ⊡

पाचन-संस्थान के रोग 1/23

पूयजन्य पित्तवाहिनीशोथ
(Pyogenic Cholangitis)

परिचय—जब पित्तवाहिनी (Bile duct) में पूययुक्त शोथ हो जाता है, तब उसे 'पायोजेनिक कोलेञ्जाइटिस' कहते हैं। यह एक 'इण्टेरिक ग्रुप ऑफ ऑर्गेनिज्म' जीवाणुजन्य रोग है।

लक्षण (Symptoms)—रोगी में निम्न लाक्षणिक इतिहास मिलता है—

१. उदर के ऊपरी भाग में पीड़ा।

२. बुखार।

३. कामला (Jaundice)।

४. यकृद्-वृद्धि (Enlargement of liver)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. इसमें कभी-कभी गालब्लैडर का भी स्पर्श किया जा सकता है।

परीक्षा (Examination)—१. मूत्र-परीक्षा में पित्त (Bile) की उपस्थिति मिलती है।

२. एल्कलाइन फॉस्फेट बढ़ा हुआ मिलता है।

चिकित्सा (Treatment)—कंजरवेटिव मेथड द्वारा इन्फेक्शन की चिकित्सा करें।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

(१) इन्फेक्शन चिकित्सा—

℞ बेञ्जिल पेनिसिलीन ३०० मि० ग्रा०
स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट ०·५ ग्राम

मात्रा—५००,००० यूनिट मांसपेशीगत दिन में २ बार; जब तक बुखार शान्त न हो जाये।

अथवा—इन्जे० प्रोसिलिन (Inj. Procellin) (हिन्दुस्तान एण्टी०) इसे इण्ट्रामस्कुलर दिन में २ बार।

अथवा—'ओम्नामाइसिन' का प्रयोग करें।

उपरोक्त इन्जेक्शन-चिकित्सा के पश्चात्—

℞ एम्पीसिलीन (Ampicillin)

मात्रा—१ कैप्सूल (२५० मि० ग्रा०) दिन में ३ बार मुख द्वारा।

(२) पीड़ा के लिए (For pain)—

गम्भीर अवस्था में (In severe stage) जब वमन आ रहा हो—

℞ पेथीडीन हाइड्रोक्लोराइड (Pethidine Hcl.) १०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ एम्पुल मांसपेशीगत।

अथवा—डेक्ट्रोप्रोपोक्सीफेन हाइड्रोक्लोराइड

व्या० नाम—डोलोक्सेन (Doloxene), सुधीनोल (Sudhinol)

मात्रा—६५ मि० ग्रा० मुख द्वारा।

(३) वमन के लिए (For vomiting)—लगातार वमन (Persistent vomiting) में आमाशय का एस्पिरेशन (Aspiration) आवश्यक है।

नोट—क्लोरप्रोमेजीन (Chlorpromazine) का प्रयोग न करें।

ऐसी अवस्था में—

℞ थाइथीपेराजीन (Thiethyperazine)

व्या० नाम—टोरेकान (Torecan) टे०

मात्रा—१० मि० ग्रा० की १ गोली मुख द्वारा दें।

(४) शल्य-चिकित्सा (Surgery)—निम्नलिखित अवस्थाओं में रोगी को शल्य-चिकित्सा के लिए निर्दिष्ट करना चाहिए—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(i) **गम्भीर उदर पीड़ा** (Severe colic)—पीड़ा के साथ जब गाल-ब्लेडर का स्पर्श मिले।

(ii) जब एनाल्जेसिक औषधियों द्वारा पीड़ा का शमन न हो।

(iii) जब रोगी में सामान्य पेरिटोनाइटिस की स्थिति दिखलाई दे।

सामान्य प्रबन्ध (General measures)—१ तरल आहार दें।

२. आवश्यकतानुसार विटामिन 'के' ३० मि० ग्रा० प्रतिदिन मांसपेशीगत दें। □

पाचन-संस्थान के रोग 1/24

कुक्षि-सम्बन्धी रोग
(Coeliac Disease)

पर्याय—इस रोग को इडियोपैथिक स्टेटोरिया (Idiopathic steatorrhoea), नान-ट्रॉपिकल स्प्रू (Non-tropical sprue), ग्री का रोग (Gee's disease), ग्रीहर्टर का रोग (Gee-Herter's disease), अग्न्याशय कर्महीनता एवं आन्त्र कर्महीनता (Pancreatic or intestinal infantilism) आदि नामों से जाना जाता है।

परिभाषा (Definition)—This is a gluten sensitive enteropathy characterized by deformity of the normal villous pattern of mainly jejunum resulting in impaired absorption particular of fat.

रोग का विशेष विकार आहार के स्नेह (Fat) के अवशोषण (Non absorption) की त्रुटि होती है। बच्चों में कार्बोहाइड्रेट के अवशोषण में भी कठिनाई होती है। युवावस्था में कैल्शियम और फॉस्फोरस का चयापचय भी विकृत हो जाता है।

यह रोग बाल्यावस्था तथा युवावस्था दोनों में मिलता है। पर स्त्री-जाति में अधिक मिलता है।

बाल्यावस्था का सीलियक रोग
(Coeliac Disease in Childhood)

लक्षण (Symptoms)—१. रोग शैशवावस्था (Infantile stage) में ही प्रारम्भ हो सकता है।

२. बालक की वृद्धि रुक जाती है। वह देखने में अपनी आयु से कम मालूम पड़ता है। उसका चलना देर से प्रारम्भ होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. शरीर में खाल से सम्बन्धित फैट का लोप-सा हो जाता है। उसके नितम्बों की गोलाई जाती रहती है। उसकी बाहु तथा टाँगें आदि सूखे-सूखे से दिखलाई देते हैं। वसा न रहने पर त्वचा में झुर्रियाँ पड़ जाती हैं।

४. त्वचा में रंग कण एकत्रित हो जाते हैं।

५. उदर तथा आन्त्र में गैस की उपस्थिति के कारण उदर सामने को उभरा हुआ दीखता है। यकृत और प्लीहा की आकृति नार्मल ही रहती है।

६. **मलत्याग**—यह इसका विशेष लक्षण होता है। रोगी बालक को दिन में ५-६ बार मलत्याग होता है। मल विशेष रूप से सुबह के समय आते हैं। मल फूला हुआ, अत्यन्त दुर्गन्धित, मात्रा में अधिक तथा हल्का-पीला अथवा कभी-कभी श्वेत रंग का होता है।

नोट—कभी-कभी मलत्याग की संख्या सीमित ही होती है।

७. दुर्बलता (Weakness) तथा इमेसिएसिस (Emaciasis) के लक्षण मिलते हैं।

८. पेलर (Pallor) तथा अनीमिया धीरे-धीरे वृद्धि करता जाता है।

९. रोगी की अंगुलियाँ तथा एड़ी (Toes) मोटे हो जाते हैं।

१०. रक्तचाप कम रहता है।

११. हल्का बुखार रहता है।

१२. माल-एब्जॉर्प्शन सिण्ड्रोम जन्य लक्षणों का मिलना।

क्लिनिकल स्टेज (Clinical stage)—

(१) **प्रथम अवस्था** (First stage)—

(i) शारीरिक शक्ति का ह्रास।

(ii) आध्मान तथा स्टेटोरिया।

(२) **द्वितीय अवस्था** (Second stage)—

(i) प्रोटीन अल्पता के सिण्ड्रोम (Dificiency syndrome of protein)।

(ii) फैट, कार्बोहाइड्रेट्स एवं विटामिन्स।

(३) **तृतीयावस्था** (Third stage)—

(i) मैक्रोसाइटिक अनीमिया (Macrocytic anaemia) सह मेगालोब्लास्टिक बोनमैरो।

परीक्षा (Examination)—(१) **मल-परीक्षा** (Stool test) ५०% वसा की उपस्थिति मिलती है।

नोट—यह सामान्यतया १०–१२% तक ही होती है। उसमें भी अधिकतर वसा अम्ल होते हैं।

(२) **एक्स-रे परीक्षा**—अस्थियों का विकास अपूर्ण मिलता है।

○ बेरियम मील एक्स-रे में छोटी आँत म्यूकोजल पैट्र्न प्रदर्शित करती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

O आन्त्र-विस्तृति, मुड़ना तथा स्केटरिंग बेरियम।

(३) 'जेजुनम बायोप्सी' से भी निदान में सहायता मिलती है।

निदान (Diagnosis)—१. शिशु या बालक की वृद्धि का रुक जाना, २. त्वचा के नीचे वसा का अभाव तथा ३. मल-विकार—ये इस रोग के निदानात्मक विशेष लक्षण हैं। अतः रोग-निर्णय में कठिनाई नहीं होती।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—अग्न्याशय रोग तथा स्प्रू (Sprue) में इसका भेद करना होता है।

अग्न्याशय रोग में—मल में वसा अधिक मात्रा में आती है। पर शरीर वृद्धि नहीं रुकती है।

स्प्रू रोग में—क्षुधा की कमी नहीं होती है और न ही वृद्धि रुकती है।

चिकित्सा (Treatment)—१. ग्लूटिन युक्त अन्न के आटे का प्रयोग करना चाहिए।

२. रोगी को आयरन, कैल्शियम तथा विटामिन का प्रयोग पोषण के लिए आवश्यक है।

३. यह रोग एक बार होकर पुनः हो जाता है। ऐसे रोगियों में स्टेरॉइड्स (Steroids) का प्रयोग करना चाहिए।

४. रोग की तीव्रावस्था में रोगी को केवल मखनिया दूध दिया जाता है। साथ में विटामिन 'ए-बी-सी' इन तीनों को पर्याप्त मात्रा में देना आवश्यक होता है।

५. 'शार्क लिवर आयल', 'वेरिन' या विनर्वा टेबलेट तथा विटामिन-सी टेबलेट २५–५० मि० ग्रा० दिन में ३ बार देना चाहिए।

अवस्था में सुधार होने पर—साधारण आहार थोड़ी मात्रा में तथा आलू, अन्य शाक, मक्खन, अण्डा, मांस आदि धीरे-धीरे आहार में क्रमशः बढ़ाते हुए दे सकते हैं।

नोट—इस रोग में समुचित आहार-व्यवस्था ही एकमात्र चिकित्सा है।

वयस्कों का सीलियक रोग
(Coeliac Disease in Adult)

परिचय—वयस्कों में यह रोग अधिकतर मिलता है। वसा का शरीर से अधिक मात्रा में त्याग इसका विशेष चिह्न है। इसके साथ ही वयस्कों में रक्त के अन्तर्गत कैल्शियम तथा फॉस्फोरस की कमी हो जाती है।

लक्षण (Symptoms)–१. रोगी के शरीर की वृद्धि रुकी हुई होती है।

२. पेट सामने को निकला हुआ होता है।

३. रोगी को ऐसा प्रतीत होता है जैसे उसकी आयु बहुत ही कम है।

४. बाहु और टाँगों की अस्थियों में पीड़ा की उपस्थिति।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. अतिसार तथा दुर्बलता।
६. पेशियों में ऐंठन।
७. त्वचा के रोग।

परीक्षा (Examination)—

रक्त-परीक्षा (Blood test)—१. रक्त की क्षीणता की उपस्थिति।
२. सीरम में कैल्शियम तथा फॉस्फोरस दोनों की कमी।
३. रक्तगत शर्करा (Blood sugar) की अल्पता।

मल-परीक्षा (Stool test)—मल में वसा की अधिकता। यह ४० से ७०% तक होती है।

नोट—सामान्यतया वसा १० से २७% तक ही होती है।

चिकित्सा (Treatment)—इसकी चिकित्सा 'बाल्यावस्था का सीलियक रोग' के समान ही है।

○ ग्लूटिन युक्त आहार हो।
○ साथ ही—

℞ कैल्शियम लैक्टेट (Calcium lactate)
मात्रा—२·५ ग्राम दिन में तीन बार मुख द्वारा दें।
इसके साथ ही—

℞	एडेक्सोलीन	५ बूँद
	विनर्वा	५ मि० ग्रा०
	राइबोफ्लेवीन	१० मि० ग्रा०
	विटामिन-सी	५० मि० ग्रा०
	ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।	१ मात्रा।

रक्त-क्षीणता के लिए—

न्यूरोक्सिन बी$_{१२}$ इञ्जेक्शन (Neuroxin B_{12} Injection)
मात्रा—२ मिली० मांसपेशीगत १ दिन छोड़कर। कुल १० इञ्जेक्शन आवश्यक होते हैं।
तथा—लिवर एक्स्ट्रेक्ट इञ्जेक्शन २ मिली० सप्ताह में केवल १ बार।
अथवा—लिवोजिन सीरप (Livogin syrup)
मात्रा—२–२ चम्मच दिन में ३ बार भोजनोपरान्त समान जल अथवा फलों के रस के साथ।
अथवा—बी० जी० फॉस (B. G. Phos)
मात्रा—२–२ चम्मच दिन में ३ बार भोजन के बाद।

नोट—यह कोई घातक रोग नहीं है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—निम्न व्यवस्थानुसार चिकित्सा करें—

आहार (Diet)—ग्लूटिन-फ्री आहार दें।

निषेध—गेहूँ की बनी चपाती, रोटी (Bread), केक्स, पेस्ट्रीज आदि।

℞ टेबलेट प्रेडनीसोलोन ५ मि० ग्रा०

मात्रा—२ गोली दिन में ४ वार १० दिन तक।

तत्पश्चात्—इन्जेक्शन विटामिन बी$_{१२}$।

मात्रा—५०० माइक्रोग्राम मांसपेशीगत प्रतिदिन।

इन्जे० इम्फेरोन (Inj. Imferon)

मात्रा—२ मिली० मांसपेशीगत नित्य, १० दिन तक।

तत्पश्चात्—आउट्रिन (Autrin)—१ प्रतिदिन।

यदि हड्डी में पीड़ा हो तो (If bone pain & osteomalacia)—

ऑस्टोकैल्शियम (Ostocalcium) अथवा कैल्सीनोल (Calcinol) टे०

मात्रा—१ गोली दिन में २ वार।

○ एक्वासोल (Aquasol) १ गोली प्रतिदिन।

○ ओरावोलिन (Oravolin) १ गोली प्रतिदिन।

करेण्ट मेडिकल डायग्नोसिस एण्ड ट्रीटमेण्ट के अनुसार चिकित्सा—

○ Diet should be high in caloris and protein, low in fat, and gluten free.

○ Treatment of Hypocalcemia or tetany—

℞ Calcium Phosphate or Gluconate.

मात्रा—२ ग्राम मुख द्वारा अथवा I/V दिन में ३ बार।

विटामिन 'डी' ५ से २० हजार यूनिट।

○ माइक्रोसाइटिक अनीमिया में—विटामिन-बी$_{१२}$ इण्ट्रामस्कुलर प्रत्येक माह जब तक रोग ठीक न हो जाये।

○ गम्भीर अवस्था के रोगियों में—कॉर्टीकोस्टेरॉइड चिकित्सा लाभकारी होती है। इसके लिए—कोर्टीसोल (Cortisol) १००–३०० मि० ग्रा० इन्ट्रावीनस। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आमाशय-व्रण
(Peptic Ulcer)

पर्याय—पेप्टिक व्रण, परिणामशूल-आमाशय व्रण, ग्रहण्याशय व्रण, प्रपाचीय व्रण ।

परिभाषा---These are acute or chronic ulcers in any part of the gastro-intestinal tract caused by combined action of hydrochloric acid & pepsin.

पेप्टिक अलसर (घाव) पाचन-तंत्र का आम रोग है, जो लगभग १% रोगियों को प्रभावित करता है ।

विकृति-विज्ञान (Pathology)—स्वस्थ आमाशय की म्यूकस मेम्ब्रेन सदैव आमाशय रस से तर रहती है । आमाशय रस में अधिक भाग स्वतंत्र हाइड्रोक्लोरिक एसिड का होता है । इसमें पाचक रस, एञ्जाइम्स, पेप्सिन मिला रहता है । सामान्य अवस्था में आमाशय रस केवल आमाशय में आये हुए भोजन पर ही क्रिया करता है । परन्तु यदि हाइड्रोक्लोरिक एसिड अधिक गाढ़ा हो जाये अथवा बहुत अधिक मात्रा में बनने लगे तो यह भोजन के साथ-साथ आमाशय की दीवार पर क्रिया करने लगता है, जिसके परिणामस्वरूप आमाशय की दीवार में कहीं पर श्लेष्मीय अस्तर का थोड़ा-सा अंश उखड़ जाता है और वहाँ व्रण बन जाता है । ऐसे व्रण को 'आमाशयिक व्रण' अथवा 'गैस्ट्रिक अलसर' कहते हैं ।

○ कभी-कभी आमाशय के आगे ड्यूडेनम (Duodenum) में भी उसके प्रथम डेढ़ इंच के भाग में व्रण बन जाता है, जिसे **'ड्यूडेनल अलसर'** (Duodenal ulcer) कहते हैं ।

○ पेप्टिक व्रण का अर्थ—इन दोनों में से किसी भी स्थान में हुए व्रण से है । यह मुख्यतः छोटी आँत के ऊपरी भाग में; आमाशय में अथवा भोजन निगलने की नली के निचले हिस्से में बन जाता है ।

साइट ऑफ पेप्टिक अलसर (Site of peptic ulcer)—

१. आमाशय (Stomach) ।
२. डूयूडेनम (Duodenum) ।
३. जेजुनम (Jejunum) ।
४. Lower end of oesophagus due to regurgitation (specially in haitus hernia)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

O Meckel's diverticulum (due to ectopic gastric mucosa.)

कारण (Etiology)—१. ऐसे १०% व्यक्ति हैं, जिनमें अधिक मात्रा में और तेज़ हाइड्रोक्लोस्कि एसिड उत्पन्न करने की जन्म से ही प्रवृत्ति पायी जाती है और आगे चलकर ये ही व्यक्ति पेप्टिक व्रणों के शिकार होते हैं।

२. अधिक धूम्रपान, चिन्ता, मानसिक परेशानियाँ और तनाव पेप्टिक व्रण बनने में सहायक होते हैं।

३. गरीब व्यक्तियों में रूखी-सूखी रोटी प्याज या चटनी के साथ खाने से भी इन कठोर वस्तुओं से आमाशय का अस्तर छिल जाता है। जिससे पेप्टिक व्रणों का निर्माण हो जाता है।

४. अधिक मसालेदार भोजन करने से आमाशय में क्षोभ उत्पन्न होता है, जो आमाशय व्रण के कारण बन सकते हैं।

५. कुछ औषधियाँ विशेषकर एस्प्रिन (Asprin) पेप्टिक व्रण उत्पन्न करने की दोषी पाई गई हैं। O सिगरेट पीने वाले लोगों को यह अधिक प्रभावित करता है।

O प्रयोग में यह देखा गया है कि यदि कोई व्यक्ति ८-१० दिन तक एस्प्रिन अथवा ए० पी० सी० (A. P. C.) औषधियाँ लेता है, तो उसके आमाशय में पेप्टिक व्रण उत्पन्न हो जाते हैं।

६. जब कोई पुराना व्रण खुलकर हरा हो जाता है तब यह विकृति उत्पन्न हो जाती है।

७. आमाशयिक व्रण पुरुषों में अधिक होते हैं। इसके विपरीत ग्रहणी व्रण (ड्यूडेनल अल्सर) पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में चार गुना अधिक मिलते हैं।

८. जब आमाशय और आन्त्र में ऑपरेशन द्वारा सीधा सम्बन्ध स्थापित किया जाता है, तब जिस स्थान पर आमाशय तथा आँत काट कर जोड़े जाते हैं, वहाँ पर इस व्रण की उत्पत्ति हो सकती है।

९. यह रोग प्रायः युवावस्था में २५ से ४० वर्ष की आयु में विशेषकर पुरुषों में होता है।

१०. आहार-विपर्यय, अनियमित दिनचर्या, चाय का अत्यधिक उपयोग, प्रत्येक कार्य में जल्दी करना—विशेषकर भोजन करते समय, कॉन्स्टीपेशन, विटामिन-सी की कमी, आघात, विषमयता, पूयदन्त (पायरिया रोग), दरिद्रता, सुप्रारीनल स्राव की कमी, व्यापक दग्धव्रण (Burns wound), खाली पेट धूम्रपान (Smoking) से इस रोग की उत्पत्ति का सम्बन्ध ज्ञात होता है।

११. रोग के पुनरावर्तन (Relapse), उपसर्ग (Infection), अनियमित आहार एवं शीतवात आदि से भी इसका सम्बन्ध प्रतीत होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१२. एम्फीसीमा, कॉरपल्मोनेल, रियूमेटिक डिजीज, पोलीसिस्थेमिया, सिरोसिस, क्रुसिंग सिण्ड्रोम, हाइपर पैराथायोडिज्म आदि रोगों तथा सैली-सिलेट, स्टेराइड्स का उच्च मात्रा में प्रयोग, फेनिल बूटाजोन, इण्डोमेथासिड, कोल्चिसिन, टोलबूटामाइड, सेप्टीसीमिया आदि से भी इसका सम्बन्ध प्रतीत होता है। 'रिसरपीन' के प्रयोग से भी ऐसा होता है।

१३. ACTH तथा 'कॉर्टीकोस्टेराइड्स' का लम्बे समय तक प्रयोग मनुष्यों में आमाशय के स्राव को उत्तेजित करता है। गर्भावस्था भी पेप्टिक अल्सर को बढ़ावा देती है।

नोट—यह देखा गया है कि तीक्ष्णाग्नि प्रकृति के जो व्यक्ति व्यवहार में शीघ्र ही चिन्तित, क्रुद्ध या व्याकुल हो जाते हैं, उनमें यह रोग अधिकांश होता है।

१४. विद्वानों का विचार है कि 'ओ' ब्लड-ग्रुप ('O' Blood group) के व्यक्तियों में यह रोग मिलता है। उससे कम 'B' ग्रुप में, उससे भी कम 'A' ग्रुप में तथा उससे भी कम 'A-B' ग्रुप में।

१५. सम्भवतः विटामिन 'ए' और 'बी' की न्यूनता के कारण आमाशय की झिल्ली में निर्बलता रहती है, जिससे उसमें व्रण हो जाता है।

१६. देहातों की अपेक्षा नगरों में यह रोग अधिक होता है। क्योंकि शहर का मनुष्य सदैव अशान्त रहता है। व्याकुलता के कारण एड्रीनल कॉर्टेक्स के सूक्ष्म रस की अधिकता भी रोग का कारण हो सकती है।

नोट—डयूडेनल अल्सर आमाशय की अपेक्षा ४-६ गुना अधिक मिलता है। आमाशयव्रण तथा डयूडेनल अल्सर प्रायः एक-से ही होते हैं।

प्रकार (Types)—पेप्टिक अल्सर २ प्रकार के होते हैं—

१. तीव्र स्वरूप का पेप्टिक अल्सर (Acute peptic ulcer)।

२. चिरकारी स्वरूप का पेप्टिक अल्सर (Chronic peptic ulcer)।

प्रकार-भेद से पेप्टिक अल्सर के कारण—

(१) तीव्र स्वरूप के पेप्टिक अल्सर के कारण—विशेषरूप से टॉक्सिक तथा इन्फेक्टिव डिजीज, जैसे—यूरीमिया (Uraemia), बैक्टीरीमिया (Bacteriaemia) आदि। यह एस्प्रिन तथा स्टेराइड्स के अधिक समय तक सेवन करने से भी उत्पन्न हो जाते हैं।

(२) क्रॉनिक पेप्टिक अल्सर के कारण—

1. Genetic and blood-group factors.
2. Role of hyper chlorhydria.
3. Ulcer diathesis.
4. Nervous factors.
5. Dietetic factors.

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

6. Role of trauma.
7. Endocrine factors.

लक्षण (Symptoms)—१. यह रोग धीरे-धीरे अज्ञात रूप में प्रारम्भ होता है तथा चिरस्थायी अजीर्ण के रूप में रहता है। जिससे छाती में दाह तथा जलन प्रतीत होती है।

२. आमाशयव्रण के लक्षण पहली बार तब दिखलाई देते हैं, जब रोगी ने कई दिनों तक भरपेट मात्रा में गरिष्ठ भोजन किया हो। रोगी को प्रारम्भ में भोजन के ½–२ घण्टे तक के बीच में उदर में बेचैनी अथवा भारीपन प्रतीत होता है। यह बेचैनी धीरे-धीरे पीड़ा का रूप ले लेती है। यह पीड़ा जलन के रूप में होती है, साथ ही बहुत तेज होती है। यह पीड़ा ऊपरी उदर (एपीगैस्ट्रियम) में दाहिनी या बाईं ओर या बीच में स्टर्नम के छोर से कुछ दूर परन्तु नाभि से ऊपर अनुभव होती है। पीड़ा एक नियमित स्थान पर होती है। यदि रोगी से कहा जाये कि वह अँगुली से पीड़ा स्थल को बतलाये तो वह उसी स्थान पर अँगुली रखता है।

३. पीड़ा-स्थल को दबाने पर रोगी को कष्ट होता है। पीड़ा लगभग आधे घण्टे के पश्चात् स्वतः समाप्त हो जाती है।

४. वमन होने से अथवा क्षारीय औषधि (यथा—सोडाबाईकार्ब) देने से पीड़ा शान्त हो जाती है।

५. प्रातःकाल के नाश्ते से पूर्व प्रायः पीड़ा नहीं होती।

६. इस शूल में रोगी को पेट में दाह की अथवा काटने जैसी प्रतीति अथवा बुभुक्षा-वेदना (Hunger pain) मालूम होती है। कभी-कभी यह शूल पीछे पीठ की ओर जाता प्रतीत होता है।

७. इसका मुख्य लक्षण पेट के ऊपरी भाग में दर्द तथा जलन का होना है। हमारे यहाँ लाला लाजपत राय चिकित्सालय (हैलेट हॉस्पिटल) कानपुर में बहुत से रोगी ऐसे आते हैं, जिनको अचानक खून की कै (उल्टी) तथा कोलतार जैसी काली टट्टी होने लगती है या कुछ रोगियों को पेट में अचानक भयंकर दर्द उठता है। चूँकि इसमें आँत का अल्सर वाला भाग फट जाता है। पेप्टिक अल्सर के कुछ अन्य रोगियों को लगातार उल्टी होने की शिकायत रहती है।

८. रात के भोजन के २-३ घण्टे बाद सोते समय मध्य रात्रि में १२ बजे से २ बजे के बीच यह शूल प्रतीत हो सकता है।

९. ग्रहणी व्रण (ड्यूडेनल अल्सर) में रात के समय शूल विशेषरूप से होता है, जिसके कारण रोगी की नींद टूट जाती है। मद्य और मसालों के सेवन से शूल बढ़ जाता है, किन्तु क्षार के सेवन से घट जाता है।

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. कुछ रोगियों में शूल का लक्षण नहीं होता है, किन्तु अन्य लक्षण होते हैं, जैसे—भोजन का कुछ अंश मुँह में आना (Regurgitation) तथा अति निष्ठीवन (Ptyaiism) आदि। कभी-कभी मुँह में पानी भर आने का लक्षण भी होता है।

○ समय-समय पर लक्षणों की तीव्रता में कमी होना इस रोग की एक विशेष प्रकृति है।

⊙ क्रॉनिक पेप्टिक अल्सर संख्या में एक होता है। गैस्ट्रिक अल्सर की पीड़ा भोजन के १-२ घण्टे बाद प्रारम्भ होती है। जब कि ड्यूडेनल अल्सर की पीड़ा प्रारम्भ होने में अधिक विलम्ब होता है। भोजन करने पर पीड़ा का शमन हो जाता है। आमाशय के सामने 'एब्डॉमिनल वाल' कड़ी रहती है। भूख उत्तम रहती है। परन्तु गैस्ट्रिक अल्सर में भोजन से पीड़ा की वृद्धि होने के कारण रोगी भोजन करने से डरता है और दुर्बल होता चला जाता है। ड्यूडेनल अल्सर में भोजन से पीड़ा का शमन होने के कारण रोगी प्रायः दुर्बल नहीं होता है। कभी-कभी वमन होता है तथा रक्त के कारण मल काला हो जाता है।

आवश्यक विवेचन—ड्यूडेनल अल्सर में उपरोक्त जैसे ही लक्षण होते हैं। परन्तु पीड़ा भोजन करने के अधिक समय बाद (प्रायः २ से ३ घण्टे बाद) प्रतीत होती है। ○ इस पीड़ा में ऐसा प्रतीत होता है कि उसे बड़े जोर की भूख लगी है। वास्तव में इस समय रोगी जरा भी भोजन ले ले तो पीड़ा प्रायः समाप्त हो जाती है। इसे भूख की पीड़ा कहते हैं।

○ पेप्टिक अल्सर में इस तरह की भूख की पीड़ा के आक्रमण कुछ सप्ताह या महीनों तक होते रहते हैं। उसके बाद बहुत दिनों तक रोगी में कोई लक्षण नहीं दिखलाई देता है। वह रोगमुक्त-सा हो जाता है।

○ इस प्रकार से आक्रमण का नियमित रूप में कुछ सप्ताहों तक रहना और फिर लक्षण मुक्त रहने का क्रम वर्षों तक चल सकता है।

○ यदि रोगी के इतिहास से इस बात का पता चले तो निश्चित रूप से उसे पेप्टिक व्रण का रोगी समझना चाहिए।

○ उक्त आक्रमण अधिक चिन्ता, अधिक गरिष्ठ भोजन करने, धूम्रपान या मदिरापान अथवा श्वसन-मार्ग से संक्रमण के कारण अचानक प्रारम्भ होने लगते हैं।

○ गैस्ट्रिक अल्सर के कारण कुछ रोगियों में वमन भी होने लगता है। वमन में अम्ल (Acid) तथा पचा हुआ भोजन बाहर निकलता है। कुछ केसिस में वमन में काले रंग का रक्त भी आता है। अथवा काले रंग का दस्त आता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ कुछ रोगियों में कोष्ठबद्धता निरन्तर बनी रहती है। पर उसकी भूख अच्छी बनी रहती है। वजन तथा शारीरिक शक्ति में कोई अंतर नहीं आता है।

गैस्ट्रिक अल्सर तथा ड्यूडेनल अल्सर के निदानात्मक लक्षण—

१. गैस्ट्रिक अल्सर (Gastric ulcer)—

(i) Epigastric distress on an empty stomach, relieved by food, antacid or vomiting.

(ii) Epigastric tenderness and voluntary muscles guarding.

(iii) Anaemia, occult blood in stool, gastric acid.

(iv) Ulcer demonstrated by x-ray or gestroscopy.

(v) Acid present or gastric analysis.

२. ड्यूडेनल अल्सर (Duodenal ulcer)—

(i) Epigastric distress 45-60 minutes after meals or nocturnal pain, both relieved by food, antacid or vomiting.

(ii) Epigastric tenderness and guarding.

(iii) Chronic and periodic symptoms.

(iv) Gastric analysis shows acid in all cases and hyper-secretion in some.

(v) Ulcer crater or deformity of duodenal bulb on x-ray or with oral endoscopy.

परीक्षात्मक निदान (Examinational diagnosis)—

१. उपरोक्त लक्षणों के आधार पर निदान में कोई कठिनाई नहीं होती।

२. आमाशय प्रदेश पर मध्य रेखा के कुछ दाहिनी ओर दबाने से एक सीमित स्थान पर स्पर्शाक्षमता का लक्षण मिलता है।

३. रोग के वेग काल में इस स्थान को दबाने पर पेट की मांसपेशियाँ स्तब्ध हो जाती हैं।

४. रोगी की जीभ साफ दीखती है।

५. यदि उपरोक्त स्पर्शाक्षमता के अतिरिक्त समय-समय पर शूल होने का लक्षण हो तो इस रोग का निदान हो जाता है।

६. आमाशय से निकले स्राव की परीक्षा करने पर दैनिक मात्रा १-२ लीटर अधिक होती है। साथ ही उसमें स्वतंत्र एसिड की मात्रा अधिक होती है।

७. मूत्र में 'यूरोपेप्सीनोजेन' की मात्रा बढ़ी हुई मिलती है।

८. एक्स-रे परीक्षा करने पर बेरियम का घोल लेसर कर्वेचर के 1 m. m. से 1 c. m. प्रदेश में आमाशय की दीवार के अंदर धँसा हुआ दीखता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. मल-परीक्षा में स्पष्ट या अदृश्य रक्त का प्रमाण मिलता है।

१०. आमाशय-परीक्षण यंत्र द्वारा परीक्षा करने पर व्रण देखा जा सकता है।

○ पूर्व बतलाये गये लक्षणों से चिकित्सक इसका अनुमान लगा लेते हैं। इसके बाद दो प्रकार की जाँच उपलब्ध है—**प्रथम** जाँच-विधि ऐण्डोस्कोपी द्वारा भोजन नलिका, आमाशय या आँत को अंदर से देखकर यह पता चलता है कि अल्सर (घाव) किस भाग में है; घाव छोटा है या बड़ा, उनकी संख्या कितनी है, उससे खून बह रहा है या नहीं, अल्सर ताजा है या दवा के प्रभाव से भर रहा है। **द्वितीय** विधि में रोगी को एक प्रकार का सफेद घोल (बेरियम मील) पिलाकर एक्स-रे द्वारा जाँच की जाती है।

उपद्रव (Complications)—

१. व्रण से रक्तस्राव (Haemorrhage)।

२. छिद्रीकरण (Perforation)।

३. भोजन के मार्ग में रुकावट।

४. व्रण के चारों ओर फाइब्रोसिस की वृद्धि।

५. आमाशय तथा ड्यूडेनम का निकट के अंगों से चिपक जाना।

६. पेरिटोनाइटिस (Peritonitis)।

७. आमाशय का दो भागों में विभाजित होना।

८. पायलोरिक द्वार का संकोच (Pyloric stenosis)।

९. घातक अर्बुद (मेलिग्नेण्ट ट्यूमर) की उत्पत्ति।

१०. सब-डाया-फ्रामेटिक एब्सिस की उत्पत्ति।

११. पैन्क्रियाज में विकृति।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

(i) विश्राम चिकित्सा—

१. रोगी को चिकित्सा की सम्पूर्ण अवधि पर्यन्त मानसिक तथा शारीरिक विश्राम आवश्यक है। ३-६ सप्ताह तक रोगी को शय्या पर पूर्ण विश्राम करना चाहिए।

२. मानसिक विश्राम के लिए रोगी को आश्वासन देना तथा मनोवैज्ञानिक चिकित्सा करनी चाहिए। इसके लिए एस्केजीन (Eskazine) ५ मि० ग्रा० की मात्रा में अथवा फीनोबार्बीटोन का प्रयोग ३० मि० ग्रा० अथवा ½ ग्रेन की मात्रा में दिन में २-३ बार देना चाहिए।

○ रात को ६ से ८ घण्टे की नींद लेनी आवश्यक होती है।

३. भावना (Emotion) को कम करने के लिए शामक अ. यों (Sadatives) देनी चाहिए।

४. रोगी को चिन्ता नहीं करनी चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. उपसर्ग (Infection) की समुचित चिकित्सा करनी चाहिए। विशेष कर दाँतों की स्वच्छता तथा पायरिया की ओर ध्यान देना चाहिए।

६. धूम्रपान, मद्यपान तथा एसिडिक पदार्थों का सेवन जीवन-पर्यन्त के लिए बन्द कर देना चाहिए, अन्यथा रोग के पुनराक्रमण की सम्भावना बनी रहती है।

७. रोग की विधिवत् चिकित्सा करने पर भी ३-४ दिन में पीड़ा कम न हो, तो समझना चाहिए कि निदान में कुछ त्रुटि हुई है।

८. ○ विश्राम, उपयुक्त आहार तथा अम्ल-निरोधी औषधियाँ (Antacid drugs) का प्रयोग इसकी विशिष्ट चिकित्सा है।

९. पुराने पेप्टिक अल्सर के अच्छे होने में अधिक समय लग जाता है। अतः रोगी की चिकित्सा बड़ी सावधानी तथा तत्परता के साथ कम से कम ६ महीने तक होनी चाहिए। ताकि व्रण खुलकर दुबारा हरा न हो जाये।

१०. रोगी को यथासम्भव शीत से बचना चाहिए।

११. अल्प मात्रा में उपयुक्त आहार देने से तथा अम्ल-निरोधी औषधियों के प्रयोग से आमाशय भी भित्ति के तनाव तथा स्पाज्म में कमी होती है। साथ ही पीड़ा का शमन होता है।

१२. चिकित्सा की सम्पूर्ण अवधि-पर्यन्त विटामिन 'सी' का प्रयोग करते रहना चाहिए, ताकि व्रण शीघ्र भर जाये।

(ii) **आहार चिकित्सा**—इस रोग में दूध, घृत या क्रीम अथवा मक्खन इनका अल्प मात्रा में थोड़ी-थोड़ी देर के बाद प्रयोग करने से लाभ होता है। अतः सबसे पहले रोगी को गर्म जल घूँट-घूँट कर पीना चाहिए।

तत्पश्चात् सिप्पी की भोजन-व्यवस्था के अनुसार—

१. प्रथम सप्ताह का कार्य-क्रम—(i) रोगी को प्रातः ७ बजे या १० बजे तक प्रत्येक घण्टे पर १ औंस दूध + १ औंस क्रीम पीने को दें। क्रीम न मिलने पर दूध २-३ औंस की मात्रा में १-१ घण्टे बाद दें।

(ii) १ औंस दूध में १२० मि० ग्रा० सोडियम साइट्रेट तथा सेक्रीन मिला सकते हैं। इससे पाचन अच्छा होता है।

(iii) साथ ही दिन में १-२ बार १-१ कप संतरे अथवा टमाटर आदि का रस ग्लूकोज के साथ मिलाकर देना चाहिए।

(iv) दिन में १ बार के दूध के स्थान पर एक हल्का-सा उबला हुआ अण्डा भी दिया जा सकता है।

(v) रात्रि के समय रोगी के पास दूध रहना चाहिए। उसे जागते ही १-१ कप एक-दो बार में पी लेना चाहिए।

नोट—दूध हल्का गरम होना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. द्वितीय सप्ताह का कार्य-क्रम—इस सप्ताह में प्रति २ घण्टे पर १ कप दूध का क्रम जारी रखना चाहिए। साथ ही दिन में ३ बार ३ औंस टोस्ट + मक्खन आदि का सेवन और बढ़ा देना चाहिए। इसके अतिरिक्त दिन में ३ बार दूध के साथ १-१ हल्का उबला हुआ अण्डा देना चाहिए।

३. तृतीय सप्ताह का कार्य-क्रम—इसमें दूसरे सप्ताह के भोजन के अतिरिक्त दोनों समय किसी भी सब्जी का घृत-मिश्रित यूष या घृत-मिश्रित कोई भी पिसी हुई मुलायम सब्जी देनी चाहिए।

४. चतुर्थ सप्ताह का कार्य-क्रम—प्रति २ घण्टे बाद दिये जाने वाले दूध एवं १-१ कप क्रीम के अतिरिक्त प्रातः तथा सायं दोनों समय के भोजन में आहार की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए। अर्थात् मुलायम रोटी, पिसी हुई सब्जी, खीर, उबले चावल, कस्टर्ड आदि दे।

५. चौथे सप्ताह के बाद छठे सप्ताह तक—चतुर्थ सप्ताह की भोजन व्यवस्था जारी रखी जाती है।

व्रणरोपण के लिए—विटामिन-सी १०० मि० ग्रा० लेना अथवा १ कप किसी भी फल का रस।

इसके अतिरिक्त दिन में १-२ बार हल्की चाय ली जा सकती है।

अथवा—केजीन हाइड्रोलाइसेट ३०० ग्राम + माल्ट ४०० ग्राम—इनको १ लीटर गर्म जल में मिलाकर ८ मात्राओं में विभक्त कर प्रति २ घण्टे पर १-१ मात्रा ले सकते हैं।

○ भोजन के बाद रोगी को ½ घण्टे तक लेट जाना चाहिए।

नोट—इस प्रकार बिना किसी औषधि-प्रयोग के भी केबल विश्राम और आहार सम्बन्धी उपर्युक्त चिकित्सा को ६ सप्ताह तक जारी रखने से रोगी का शूल शान्त हो जाता है और व्रण भर जाता है।

आवश्यक निर्देश—यदि रोगी आयु भर इसी प्रकार के आहार को स्वल्प तथा स्निग्ध मात्रा में २½ घण्टे के अन्तर पर लेता रहे तो उसे रोग के पुनराक्रमण की सम्भावना नहीं रहती है।

निषेध—तले हुए भोजन, कच्ची सब्जी, अचार-चटनी तथा सलाद, धूम्रपान तथा मद्य-सेवन, तेज काफी तथा चाय, सिरका, सोडावाटर, बादाम, अखरोट तथा गर्म मसाले, तिल एवं मूँगफली का तेल, खट्टा दही, तम्बाकू, बीजों तथा छिलका युक्त सब्जी, छिलके वाली दाल, अधिक गर्म अथवा शीतल पेय का निषेध करें। इसके अतिरिक्त—

कोर्टीकोट्रॉपिन, एड्रीनल स्टेराइड्स, फेनिल बूटाजोन, एस्प्रिन आदि तीक्ष्ण गुण वाली औषधियों का पूर्ण परित्याग आवश्यक है।

नोट—जल भी एक समय में ½ गिलास (१ कप) से अधिक नहीं पीना हिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्य व्यवस्था—१. रोगी का पेट साफ रहना चाहिए। इसके लिए लिक्विड पैराफिन अथवा मिल्क आफ मैगनेसिया को दिन में २ बार लिया जा सकता है।

२. रोगी को चाहिए कि वह दाँत, गले आदि से पेट में इन्फेक्शन न जाने दे।

३. चिन्ता, क्रोध, कलह आदि से बचे।

४. निद्रा कम होने पर फीनोबार्बीटोन ३० मि० ग्रा० या इमाइलोबार्बीटोन ९० मि० ग्रा० दिन में २-३ बार लें।

५. यदि रोगी को ज्वर हो तो दिन में विश्राम आवश्यक है।

६. यदि रोगी को जरा भी शूल हो तो उसे शीघ्र ही मैग० ट्राईसिलिकेट या एलूमिनियम हाइड्रोक्साइड (एल्यूड्रोक्स) १ चम्मच ले लेना चाहिए।

७. पेट में किसी ठोस वस्तु को न जाने दें।

८. ○ चिकित्सा के तीसरे, छठे, नौवें और बारहवें महीनों में क्रमशः रोगी की बेरियम भोजन द्वारा परीक्षा आवश्यक होती है।

तत्पश्चात्—प्रत्येक एक वर्ष के बाद 'बेरियम भोजन' की परीक्षा करना चाहिए।

भोजन के सम्बन्ध में अन्वेषकों के अपने विचार—भोजन दिन में २-३ बार, अल्प मात्रा में और जो मृदु हो बार-बार चबाकर खाना चाहिए। जिससे कि उसमें अधिक से अधिक लार (Saliva) मिल सके। इससे भोजन का पाचन शीघ्र होता है जिससे रोगी को अधिक आराम प्रतीत होता है।

(२) **औषधि-चिकित्सा** (Medicinal treatment)—पेप्टिक अल्सर के रोगी के लिए आजकल मुख्यतः 'रेनिटिडीन' अथवा 'साइमेटिडीन' नामक औषधियाँ अच्छी समझी जाती हैं। लेकिन इनका प्रयोग चिकित्सक की सलाह के बिना न करें। इनका उपयोग परम लाभकारी होता है।

℞ सिमेटिडीन (Cimetidine) ३०० मि० ग्रा०

मात्रा—दिन में ४ बार भोजन से १ घण्टे पूर्व एवं रात्रि में सोते समय।

अथवा—सिमेटिडीन २०० मि० ग्रा०

मात्रा—१-१ गोली भोजन के साथ ८-८ घण्टे पर तथा १ टेबलेट रात्रि में सोते समय ४ से ६ सप्ताह तक।

नोट—यदि रोग पुनः पलट जाये तो २-३ गोली प्रातः-सायं कम से कम ६ माह तक।

विशेषता—○ यह औषधि गैस्ट्रिक अल्सर तथा ड्यूडेनल अल्सर दोनों में लाभकारी है। यह एक नवीन क्रान्तिकारी पेटेण्ट औषधि है।

इसके साथ ही—

℞ एलूड्रॉक्स एम० एच० (Aludrox M. H.) (ऑन ब्राइथ)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१-१ गोली दिन में २-३ बार भोजनोपरान्त ।

नोट—इसे पेट के दर्द में भी लिया जा सकता है ।

उपचार के प्रारम्भिक ४-५ दिनों तक प्रत्येक २ घण्टे बाद ।

तत्पश्चात्—१०-१५ दिन तक दिन में ४-५ बार और इसके बाद दिन में ३ बार कम से कम ६ माह तक लें ।

यदि इसके प्रयोग से रोगी को कब्ज हो तो—रात्रि में सोते समय लिक्विड पैराफिन १५-२० मिली० दें ।

इसके साथ ही—एण्ट्रिनिल (Antrenyl) टेबलेट ५ मि० ग्रा० ।

मात्रा—१-१ गोली दिन में ४ बार भोजन के ½ घण्टे पूर्व तथा १ गोली रात में सोते समय ।

अथवा—प्रोबेन्थीन (Probanthine) (सेरले कं०)

मात्रा—२ गोली रात में सोते समय ।

अथवा—टेबलेट डिसोजिल (Tab. Disogyl)

मात्रा—१-१ गोली मुख्य भोजन के २-२½ घण्टे बाद ।

एवं—ल्यूमिनल ३० मि० ग्रा० प्रातः और ३० मि० ग्रा० रात में सोते समय ३-४ सप्ताह तक ।

नोट—इससे रोगी को मानसिक शान्ति मिलती है तथा व्रण भरने में विलम्ब नहीं होता है ।

विटामिन 'सी' ५०–१०० मि० ग्रा० I/M या I/V प्रतिदिन । जीवन पर्यन्त । अथवा इनकी टेबलेट दें ।

इञ्जे० प्लेसेण्ट्रेक्स (Inj, Placentrex)

मात्रा—१-२ मिली० १ दिन छोड़कर मांसपेशीगत ।

पूरा कोर्स—१५ से २० इञ्जेक्शन ।

अथवा—इञ्जेक्शन 'हैपरिन' (Inj. Heperin)

मात्रा—१५००–५००० यूनिट्स इण्ट्रामस्कुलर अथवा इण्ट्रावीनस ।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

(१) यदि गम्भीर स्वरूप का दर्द हो तो—

३-४ औंस दूध प्रति घण्टे प्रातः से सायं एवं रात तक ।

अथवा—रायल्स ट्यूब को पास कर कॉस्टेण्ट दूध का ड्रिप क्लॉक (Clock) के आस-पास दें ।

३० मिली० एलुड्रॉक्स अथवा जेलुसिल ४ पाइण्ट दूध में ।

(२) यदि निरन्तर दर्द रहता हो तो—

℞ टेबलेट सिमेटिडीन २०० मि० ग्रा० ।

मात्रा—१-१ गोली भोजन से पूर्व और २ गोली रात्रि में सोते समय ४-६ सप्ताह तक । तत्पश्चात् बन्द कर दें ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—२ गोली रात के समय अथवा १ गोली दिन में २ बार ६-१२ माह तक।

यदि गोली न देने पर पुनः आक्रमण हो जाए तो इसे पुनः देना प्रारम्भ कर देना चाहिए।

अथवा—टेबलेट जेण्टेक (Tab. Zantac)

व्या० नाम—रेनिटिडीन (Ranitidine) १५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार अथवा २ गोली रात्रि में सोते समय।

टेबलेट बेलियम (Tab. Balium) अथवा फ्लूओरिल (Fluoril) २ मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३ बार।

(३) रात के दर्द को नियंत्रित करने के लिए—

एलूड्रोक्स १ औंस रात्रि के समय।

स्टेलविड-२ (Stelvid-2) अथवा 'प्रो-बेन्थीन'

मात्रा—२ गोली रात्रि में सोते समय।

नोट—यदि रोगी रात्रि में जाग जाये, तो १ ग्लास दूध के साथ किसी अम्ल-निरोधी औषधि के साथ ले लेना चाहिए।

उपद्रवों की चिकित्सा (Treatment of complications)—

१ **रक्तस्राव**—यदि रोगी को काले रंग का वमन होने लगे या काले रंग का पतला मल (Melaina) आने लगे, रोगी को तीव्र उदर-पीड़ा होने लगे, बेचैनी बढ़ जाये, माथे से ठंडा पसीना आने लगे, नाड़ी की गति तीव्र हो जाये, ब्लड-प्रेशर कम होने लगे तो ऐसी स्थिति में रोगी का जीवन संकटमय होता है। उसे तत्काल अस्पताल में भर्ती करा देना चाहिए।

अस्पताल में रोगी की ब्लड-ट्रान्स्फ्यूजन की व्यवस्था की जाती है। यदि तुरन्त रक्त न मिले तो ६% डेक्स्ट्रान सोलूशन या ५% डेक्स्टोज नार्मल सैलाइन १ लिटर देना चाहिए। इसके कुछ घण्टे बाद ५% 'डेक्स्ट्रोज इन वाटर' दे देना चाहिए। ऑक्सीजन की व्यवस्था भी की जाती है।

साथ ही—रोगी को २ दिन ४-४ औंस घूंट-घूंट कर बरफ से हलका किया हुआ दूध कई बार देना चाहिए। १-१ औंस जल पिलाते रहें अथवा ४-४ घण्टे बाद ४-६ औंस नार्मल सैलाइन ५% ग्लूकोज मिलाकर शनैः-शनैः गुदा मार्ग से दें। अथवा I/V नार्मल सैलाइन २ पाइण्ट तक दिन भर में दे देना चाहिए।

साथ ही—एलुड्रॉक्स या जेलुसिल ½ औंस दूध के समय बीच-बीच में देते रहें। आवश्यकता पड़ने पर २-३ बार बस्ति द्वारा आँतों को साफ किया जा सकता है।

रक्त की कमी को देखते हुए—फैरस सल्फेट, ग्लूकोनेट या सक्सीनेट (Succinate) १८० मि० ग्रा० की मात्रा में दिन में ३ बार दें। तथा विटा-

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिन-सी २०० मि० ग्रा० ३ से ५ दिन तक दें। १-२ सप्ताह बाद मल में रक्त आना बन्द हो जाता है।

नोट—रक्तस्राव यदि बार-बार हो रहा हो, तो शल्यकर्म (वेगोटोमी विद एण्ट्रेक्टोमी) करना आवश्यक होता है।

२. छिद्रीकरण (Perforation) की स्थिति में—मार्फीन का इञ्जेक्शन १०० मि० ग्रा० की मात्रा में दें। रेलिस ट्यूब को पेट में लगाकर निरन्तर सक्सन कर पेट को ऊपर से साफ करना चाहिए। रोगी को बड़े अस्पताल में चिकित्सार्थ निर्दिष्ट कर दें।

३. पायलोरस में अवरोध—अपना कान रोगी के उदर के ऊपरी भाग पर रखने से और उदर को हाथ से जोर से हिलाने पर यदि जल के घलघलाने जैसा (Splashing) शब्द सुनाई पड़े तो पायलोरस का अवरोध समझना चाहिए। यह एक जटिल समस्या है। इसकी चिकित्सा केवल ऑपरेशन है।

४. पेप्टिक अल्सर में कैंसर की उत्पत्ति—यदि पेप्टिक अल्सर के रोगी का वजन घटता जाय और भूख मारी जाय और उसकी आयु ४५ वर्ष से अधिक की है तो इस बात की आशंका करनी चाहिए कि उसे व्रण कैंसर बन रहा है।

चेतावनी—चिकित्सकों को एक सिद्धान्त बना लेना चाहिए कि ४०-४५ वर्ष से अधिक आयु का व्यक्ति जो गत २-३ सप्ताह से अग्निमांद्य से पीड़ित हो और उचित चिकित्सा करने पर भी उसकी दशा में सुधार न हो रहा हो; अथवा उसे बार-बार अग्निमांद्य के आक्रमण हो रहे हों तो उसके आमाशय में कैंसर का संदेह करते हुए किसी बड़े अस्पताल या कैंसर अस्पताल में चेक-अप करा लेने का परामर्श देना चाहिए।

विशेष निर्देश—पेप्टिक अल्सर के रोगी की उपसर्ग-निरोधी चिकित्सा भी नितान्त आवश्यक है। १-३ माह में व्रण ठीक न होने पर घातक अर्बुद (Malignant tumour) की सम्भावना ध्यान में रखनी चाहिए, जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है।

पेप्टिक अल्सर नाशक रिसेण्ट पेटेण्ट मेडिसिन्स—

१. अल्टेक (Ultac)

व्या० नाम—रेनीटिडीन टे० १५०-३०० मिग्रा० (सिप्ला)।

मात्रा—१५० मि० ग्रा० टेबलेट दिन में २ बार या ३०० मि० ग्रा० रात में सोते समय।

२. एसीलोक (Aciloc) (केडिला)

मात्रा—१५० मि० ग्रा० टेबलेट दिन में २ बार ४ से ६ सप्ताह तक।

मेण्टिनेन्स मात्रा—१५० मि० ग्रा० की १ गोली रात में सोते समय ६ माह से १ वर्ष तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष—यह ड्यूनेल अल्सर की उत्तम औषधि है।

३. एन्सीबान (Anciban) (ब्लु क्रॉस)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार अथवा २ गोली रात में सोते समय ४-६ सप्ताह तक। अथवा घाव भरने तक।

विशेष—'गैस्ट्रिक' तथा ड्यूडेनल अल्सर' एवं रोग के पुनरावर्तन (Prevention of relapse) में लाभकारी।

४. सिमेटीजेट-४०० (Cimetiget-400) (फ्रेन्को इण्डियन)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ४-८ सप्ताह तक। अथवा १ गोली रात में सोते समय ६-१२ माह तक।

ड्यूडेनल अल्सर, बिनाइन गैस्ट्रिक अल्सर (Benign gastric ulcer), रिकरेण्ट तथा स्टोमल अल्सर में लाभकारी।

५. लोक-२ (Lock-2) (केडिला)

मात्रा—२ मिली० I/M या I/V अथवा इण्ट्राबीनस इन्फ्यूजन के साथ। २०० मि० ग्रा० ४-६ घण्टे बाद पुनः दे सकते हैं।

रक्तयुक्त (Bleeding) गैस्ट्रिक तथा ड्यूडेनल अल्सर में लाभकारी।

६. रेनिटिजेट (Ranitiget) (फ्रेन्को इण्डियन)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ४ सप्ताह तक। आवश्यकतानुसार २ सप्ताह और दी जा सकती है। अथवा—१ गोली रात में सोते समय ६ माह तक। अथवा १ गोली दिन में २ बार ६ सप्ताह तक।

ड्यूडेनल अल्सर, गैस्ट्रिक अल्सर, रिकरेण्ट तथा स्टोमल एवं बिनाइन अल्सर में लाभकारी।

अन्य औषधियाँ—

७. रेनीटेब (Ranitab)) (माइक्रो लेब)

मात्रा—१५० मि० ग्रा० की गोली दिन में २ बार ४-८ सप्ताह तक।

रेनीटेब-३०० की टेबलेट भी आती है—

मात्रा—१ गोली सोते समय।

८. एसीडिन (Acidin) (ईस्ट इण्डिया)

मात्रा—१ गोली दिन में ४-५ बार।

'एसीडिन एम० पी० एस०' भी आती है।

९. एक्ट्रीओल (Actriol) (विन मेडिकेयर)

मात्रा—१-४ गोली दिन में ३-४ बार निगलें या चूसें।

१०. एलूजेट डी-एफ (Allujet D-F) (यूनीकेम)

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३-४ बार।

११. अल्माकार्ब (Almacarb) (ग्लैक्सो)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—२ गोली दिन में ३-४ बार ६-८ सप्ताह तक। अथवा और अधिक समय तक।

१२. एनीटाल (Anital) (टी० टी० के० फार्मा)

मात्रा—१-२ चम्मच भोजन के ½-१ घण्टे बाद।

इसकी गोली भी आती है।

१३. ○ सिमेटिडीन (Cimetidine) (सिप्ला कं०)

मात्रा—२०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार भोजन के साथ तत्पश्चात् ४०० मि० ग्रा० रात में सोते समय। ४-६ सप्ताह तक नियमित रूप से।

मेण्टेनेन्स मात्रा—४०० मि० ग्रा० रात में सोते समय।

१४. ○ सिमेटीडिन (Cemetidine) (केडिला)

मात्रा—२०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार भोजन के साथ और ४०० मि० ग्रा० रात में सोते समय। ४ सप्ताह तक।

इसका 'सिमेटीडिन' सिरप भी आता है।

१५. ○ सिमेटीडिन-S. G. (S. G. Pharma)

मात्रा—२०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार और ४०० मि० ग्रा० रात में सोते समय।

मेण्टेनेन्स मात्रा—४०० मि० ग्रा० रात में सोते समय ६ माह तक।

१६. डायोवोल (Diovol) (वैलेसी)

मात्रा—१०-२० मिली० दिन में ३ बार।

१७. डायोवोल टे० (Diovol tab.)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार।

१८. डिसीलोक्स एम० पी० एस० (स्टेडमेड)

मात्रा—१-२ गोली आवश्यकतानुसार।

१९. डोपसिड सस्पेंसन० (Dopciad sus.) (डॉप्सोन)

मात्रा—१५ मिली० दिन में ३ बार।

२०. गैस्ट्रिल्सर (Gastrilcer) (बायोकेम)

मात्रा—२ कै० दिन में २ बार भोजन से पूर्व १ सप्ताह तक।

तत्पश्चात्—१ कै० दिन में ३ बार ४-६ सप्ताह तक। १२ सप्ताह तक दी जा सकती है।

२१. ○ निलसर (Nilcer) (खण्डेलवाल)

मात्रा—३०० मि० ग्रा० केवल एक मात्रा रात में सोते समय अथवा २ मात्राओं में विभक्त कर।

मेण्टेनेन्स मात्रा—१५० मि० ग्रा० रात में सोते समय।

विशेष—यह डयूडेनल अल्सर, बिनाइन गैस्ट्रिक अल्सर, पोस्ट-ऑपरेटिव अल्सर में लाभकारी है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२२. ○ रेनीटिन (Ranitin) (टोरेण्ट कं०)

मात्रा—३०० मि० ग्रा० की १ गोली की १ मात्रा रात में सीते समय अथवा २ मात्राओं में विभक्त कर। ४-६ सप्ताह तक।

मेण्टेनेन्स तथा पुनराक्रमण से बचाव हेतु—१५० मि० ग्रा० की १ गोली रात में सोते समय। यह ड्यूडेनल तथा गैस्ट्रिक अल्सर में उपयोगी है।

२३. ○ रेनटेक (Rantac) (यूनीक्यू)

मात्रा—१५० मि० ग्रा० टेबलेट दिन में २ बार अथवा आवश्यकतानुसार।

विशेष—एक्टिव ड्यूडेनल अल्सर में उपयोगी।

२४. ○ रिनटिड (Rintid) (कोप्रान)

मात्रा—३०० मि० ग्रा० की १ गोली की १ मात्रा रात में सोते समय अथवा २ मात्राओं में विभक्त कर। मेण्टेनेन्स तथा पुनः आक्रमण से बचाव के लिए १५० मि० ग्रा० रात में सोते समय।

विशेष—ड्यूडेनल/गैस्ट्रिक अल्सर तथा पुनराक्रमण (Relapsing) एवं चिकित्सा में लाभकारी।

२५. ○ अल्सीवान (Ulciban) (टोरेण्ट)

मात्रा—२०० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३ बार एवं ४०० मि० ग्रा० की १ गोली रात में सोते समय। कुछ केसिस में ४०० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर ४-६ सप्ताह तक। मेण्टेनेन्स मात्रा—४०० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में केवल एक बार ६ माह तक।

विशेष—ड्यूडेनल बिनाइन गैस्ट्रिक, रिकरेण्ट तथा स्टोमल अल्सरेशन में लाभकारी। यह सिमेटिडीन का पेटेण्ट योग है।

२६. अल्सीटेब (Ulcitab) (थेमिस)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ४-६ सप्ताह तक अथवा घाव भरने तक।

बचाव हेतु—१ गोली रात में सोते समय।

अल्सीटेब-३०० भी आती है।

मात्रा—१ गोली रात में सोते समय। ड्यूडेनल अल्सर में उपयोगी।

○ अल्सर के सम्बन्ध में नवीनतम अनुसंधान—

केले से अल्सर का उपचार—इंग्लैण्ड के एस्टन विश्वविद्यालय के औषधि विज्ञान विभाग के अध्यक्ष डा० 'डेविड लुइस' के अनुसार पेट के अल्सर के लिए केला सबसे अधिक प्रभावशाली है। हरे केले की सब्जी खाना सर्वाधिक उपयोगी रहता है। इस औषधीय गुणों की जाँच करने की पेशकश काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के एक प्रवक्ता ने एस्टन विश्वविद्यालय के औषधि विज्ञान विभाग के समक्ष रखी। उक्त विभाग के अध्यक्ष डा० डेविस लुइस ने सूखे

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केले के चूर्ण से सक्रिय तत्त्व निकाल कर उसकी प्रभाविकता में पाया कि पेट के अल्सर के लिए केला निश्चय ही प्रभावकारी है।

○ **नवीनतम शोध-कार्यों के अनुसार पेप्टिक अल्सर में अब दूध लाभदायक नहीं है—**

कुछ समय पहले तक ऐसे रोगियों के इलाज के लिए दूध अत्यन्त लाभकर समझा जाता था और इनको प्रत्येक एक या दो घण्टे के अन्तर पर काफी मात्रा में लगभग डेढ़ माह तक भोजन के रूप में केवल दूध ही दिया जाता था, लेकिन हाल में किये गये रिसर्च द्वारा यह देखा गया है कि इन रोगियों को दूध से कोई भी लाभ नहीं होता है।

○ अक्टूबर ८६ में पटना में हुए 'पाचनतंत्र' के रोगों के वार्षिक सम्मेलन में इस विषय पर किये गये शोध-कार्य के परिणामों को प्रदर्शित किया गया। इनके अनुसार जिन रोगियों को भोजन के रूप में केवल दूध दिया गया उनको कोई लाभ नहीं हुआ और जिनको सामान्य भोजन दिया गया उनको लाभ हुआ। दोनों ही ग्रुप के रोगियों को 'साइमेटिडीन' औषधि भी समान रूप से दी गई थी। शोधकर्त्ताओं ने इस बात पर जोर दिया कि पेप्टिक अल्सर के रोगी को भोजन के रूप में केवल दूध ही देना हानिकारक भी सिद्ध हो सकता है।

पेप्टिक अल्सर नाशक पेटेण्ट मिश्रित योग—

१. ℞ सिमेटिडीन (Cemetidine) १ गोली
सल्फा क्वीनो-बेल (Sulpha-Quino-Bel) २ छोटे चम्मच ग्रेन्यूल्स
१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार ४-६ सप्ताह तक।

२. ℞ स्टेलाबिड (Stelabid) १ गोली
म्यूकेन सस्पेन्सन (Mucaine susp.) १० मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार। १ मात्रा □

पाचन-संस्थान के रोग 1/26

अग्न्याशयशोथ
(Pancreatitis)

परिचय—अग्न्याशय (Pancreas) के शोथ को पैन्क्रियाटाइटिस (अग्न्याशयशोथ) कहते है। यह काफी फैला हुआ रोग है और एपेण्डिसाइटिस तथा कोलेसिस्टाइटिस के बाद आमाशय व आँत की बीमारियों में यह तृतीय श्रेणी में आता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ अग्न्याशय जीवन के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अवयव है। यह प्रोटीन, वसा तथा कार्बोहाइड्रेट को विखंडित करने वाले इञ्जाइमों का स्रावण करता है और इन्सुलिन की सहायता से कार्बोहाइड्रेट्स के उपापचयन का नियमन करता है। अग्न्याशय में सहसा सूजन हो जाने पर इन पाचक इञ्जाइमों का सन्तुलन गम्भीर रूप से गड़बड़ा जाता है। अक्सर सहसा और कुछ समय तक होने वाली सूजन ऐसी पुरानी बीमारी में बदल जाती है जो समय-समय पर भड़कती रहती है। बीमारी का जोर सामान्यतया वसा युक्त भोजन अथवा शराब पीने के उपरान्त शुरू होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि अग्न्याशय काबू के बाहर हो गया है। वह इञ्जाइमों को बड़ी मात्रा में रक्त में डालने लगता है। इसमें पेट में शूल-सी उठती है और रक्तचाप घट जाता है।

प्रकार (Types)—यह २ प्रकार का होता है—

(१) तीव्र अग्न्याशयशोथ (Acute pancreatitis)।
(२) चिरकारी अग्न्याशयशोथ (Chronic pancreatitis)।

तीव्र अग्न्याशयशोथ
(Acute Pancreatitis)

कारण (Etiology)—१. संक्रमण (Infection) इसका विशेष कारण माना जाता है।

२. नवयुवकों तथा वृद्ध व्यक्तियों में यह विशेष कामन होता है।

३. गालब्लैडर (Gall-bladder) की बीमारियों तथा बिलीयरी डक्ट की बीमारियों से इसका विशेष सम्बन्ध रहता है।

४. कुछ पारिवारिक लोग ऐसे हैं जिनमें हाइपरपैरायोडिज्म, मम्प्स, डिफेक्टिव एमीनो एसिड मेटाबोलिज्म तथा एल्कोहोलिज्म (Alcoholism) आदि से इसका सम्बन्ध रहता है।

५. बाहरी आघात (Trauma)—डायरेक्ट इंज्योरी अथवा नली में रुकावट होने पर (Obstruction of the duct)।

लक्षण (Symptoms)—१. इस रोग में अकस्मात् एपिगैस्ट्रियम प्रदेश में तीव्र पीड़ा तथा निपात (Collapse) के लक्षण होते हैं।

२. निपात की प्रधानता के कारण ज्वर अनियंत्रित रहता है।

३. **पीड़ा** (Pain)—पीड़ा हर समय एक-सी रहती है अथवा कम या अधिक होती रहती है। पीड़ा का संवहन कंधे की तरफ को अथवा कटि प्रदेश की ओर होता है। आमाशय के ऊर्ध्व प्रदेश को दबाने से पीड़ा होती है तथा कठोरता (Rigidity) मिलती है।

४. इसके अतिरिक्त वमन, आध्मान, कोष्ठबद्धता (Constipation), आन्त्रघात (Paralytic ileus) आदि लक्षण मिल सकते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. यह एक असाध्य रोग है। पेरिटोनियम पर प्रभाव पड़ने के कारण आमाशय के सामने अकस्मात् तीव्र पीड़ा तथा गम्भीर निपात होता है।

६. कभी-कभी अग्न्याशय की अकार्यक्षमता के लक्षण भी मिल सकते हैं।

○ रोगी में क्रॉनिक कोलीसिस्टाइटिस (Cholecystitis) का इतिहास मिलता है।

○ Acute pain in the epigastrium which spreads rapidly into the whole of abdomen and towards the back on both sides. *Pain is very severe* and associated with marked vomiting and collapse due to shock.

○ Abdomen is distended.

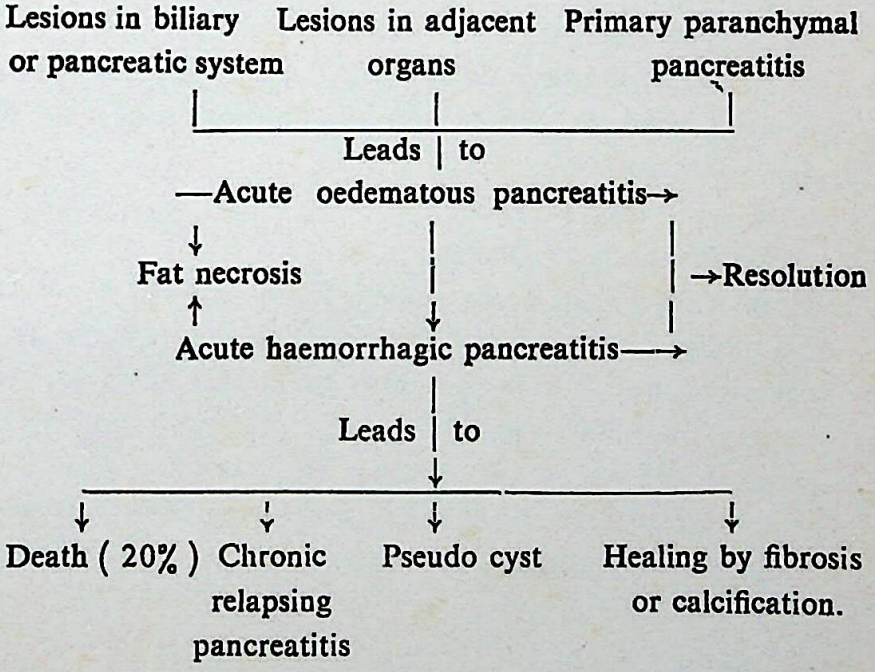

निदान (Diagnosis)—

रक्त-परीक्षा (Blood test)—१. इस परीक्षा में श्वेतकणों की वृद्धि मिलती है, जिसे Leucocystosis कहते हैं।

२. सीकम में इमाइलेज तथा लाइपेज की मात्रा बढ़ जाती है।

३. मूत्र-परीक्षा में शर्करा की उपस्थिति मिल सकती है।

४. **इतिहास**—रोगी में पेप्टिक अलसर, पित्ताशयशोथ अथवा अजीर्ण का इतिहास मिल सकता है।

५. स्टेथिस्कोप द्वारा परीक्षा करने पर आन्त्र की ध्वनियों की गति सुनाई नहीं देती।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. यदि रोगी को मम्प्स हुआ है, अथवा रोगी बहुत अधिक मदिरा-सेवन करने वाला है, तो अग्न्याशयशोथ का सन्देह किया जा सकता है।

Essentials of diagnosis—1. Abrupt onset of dull epigastric pain, often with radiation to the back.

2. Nausea, vomiting, sweating, weakness.

3. Abdominal tenderness and distention, fever.

4. Leucocytosis, elevated serum and urinary amylaise, elevated serum lipase.

5. History of previous episodes, often related to alcohal intake.

6. Faint jaundice.

7. Bluish discolouration around the umbilicus & acchymosis and pigmentation of the back and appearance of a swelling after a few days.

8. Low serum calcium.

9. Glycosuria in some cases.

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—एपेण्डिक्स में शोथ तथा आन्त्र-अवरोध के लक्षण भी इसी रोग जैसे होते हैं। प्रतिष्ठित एवं अनुभवी चिकित्सक भी इन रोगों के निदान में धोखा खा जाते हैं। ऐसे भी केस देखने में आये हैं कि एपेण्डिक्स-शोथ के लिए उदर का ओपरेशन कर दिया गया और बाद में पता चला कि रोगी अग्न्याशय रोग से ग्रस्त है। इसके विपरीत कई बार ऐसा भी देखा गया है कि रोग का आक्रमण स्वतः शान्त हो जाता है।

उपद्रव (Complications)—'पल्मोनरी ईडिमा' तथा 'पैन्क्रियेटिक एब्सिस' इसके प्रमुख उपद्रव हैं।

चिकित्सा (Treatment)—**चिकित्सा के सिद्धान्त**—

१. दर्द को दूर करना (Relief of pain)।

२. शॉक की चिकित्सा (Treatment of shock)।

3. Suppression of pancreatic secretion.

4. Treatment of infection.

५. रोग की चिकित्सा रोगी की अवस्थानुसार की जानी चाहिए।

६. आजकल तीव्र अग्न्याशयशोथ तथा तीव्र पेरिटोनाइटिस की चिकित्सा आधुनिक औषधियों से करना चाहिए।

७. औषधियों से लाभ न मिलने पर ऑपरेशन करना चाहिए।

८. रोगी को मुख से आहार तथा जल नहीं देना चाहिए।

९. शय्या पर पूर्ण विश्राम।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. आमाशय में संचित पदार्थ तथा श्लेष्मा आदि को उसके नासामार्ग में रायल की नलिका प्रवेश कर सिरिञ्ज से निकालते रहना चाहिए।

११. प्रति आधा घण्टे पर रोगी की नाड़ी, श्वसन की गति तथा रक्तचाप देखते रहना चाहिए।

१२. रोगी की तीव्र शूल में राहत दिलाने के लिए पैथिडीन आदि पीड़ा तथा ऐंठन नाशक औषधियाँ देकर उसे तुरन्त अस्पताल भेज देना चाहिए।

कंजरवेटिव चिकित्सा (Conservative treatment)—१. इञ्जे० पैथीडीन (Inj. Pethidine) १०० मि० ग्रा० I/M प्रति ६ घण्टे पर।

२. डिस्टेंशन को दूर करने के लिए निरन्तर इण्ट्रागैस्टिक सक्सन का प्रयोग करना चाहिए।

३. शॉक को दूर करने के लिए I/V फ्लूइड (Glucose solution, blood & plasmex or halmaccel) का प्रयोग।

4. To combact peripheral circulatory failure—Noradrenaline 4-8 mg / bottle or Hydrocortisone 50-100 mg I/V 4 or 6 hourly may be required.

5. Injecto cal-gluconate I/V to raise serum calcium.

6. Injection of Probanthine or Propantheline (15-30 mg I/V or I/M 6 hourly) reduces the pancreatic secretions.

7. Antibiotic (broad specirum) to combact infection.

8. Artikallikrein enzymes (Trasylon)–5000-10,000 units I/V 6 hourly for 7 days may be tried to reduce enzymatic activity.

विस्तृत मेडिकल चिकित्सा (Broad medical treatment)—चिकित्सा लक्षणों के आधार पर (उपरोक्त क्रमानुसार) की जाती है। इस रोग में वैसोमोटर नर्व्स का कोलैप्स होने के कारण स्तब्धता के लक्षण मिलते हैं। इसलिए इसकी चिकित्सा रोगी की अवस्था के अनुसार की जाती है, यथा—

स्तब्धता के लिए (For collapse)—

तत्काल नार्मल सैलाइन १-२ पाइण्ट, डेक्स्ट्रोज ५% १-२ पाइण्ट तथा प्लाज्मा ½-१ पाइण्ट I/V दें। प्लाज्मा २५० मिली० ड्रिप द्वारा दें। 'ब्लड' अथवा 'डेक्स्ट्रान' भी दे सकते हैं।

नोट—इसमें प्लाज्मा का उपयोग सर्वोत्तम रहता है। आवश्यकतानुसार इन औषधियों को कई बार दे सकते हैं।

पीड़ा के लिए (For pain)—

℞ पेथिडीन हाइड्रोक्लोराइड १०० मि० ग्रा०

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१ एम्पुल मांसपेशीगत आवश्यकतानुसार प्रति ६ घण्टे पर दोहराते हैं। अथवा—०.६ मि० ग्रा० ६-८ घण्टे पर दें।

अथवा—इञ्जे० फोर्टविन (Fortvin) ३० मि० ग्रा० मांसपेशीगत।

अथवा—मेपेरीडीन (Meperidine) अर्थात् डेमेरोले (Demerol)।

मात्रा—१००-१५० मि० ग्रा० I/M प्रति ४-६ घण्टे पर।

पैन्क्रियाज के स्टिमुलेशन को कम करने के लिए—

एण्टेसिड (Antacid) प्रति ४ घण्टे पर।

यथा—टेबलेट 'एण्ट्रेनिल' अथवा 'प्रोबेन्थीन'।

यदि शूल में पर्याप्त लाभ न मिले तो—

मार्फीन सल्फेट १५ मि० ग्रा० S/C+एट्रोपीन सल्फेट ०.६ मि० ग्रा० मैगनेशियम ट्राई सिलिकेट १ चम्मच ३ घण्टे पर दें।

नोट—४८-७२ घण्टे तक मुख से कोई आहार तथा द्रव न दें।

अधिक गम्भीर अवस्था में (In severe condition)—

इलेक्ट्रोलाइट्स, प्लाज्मा यदि आवश्यक हो तो ब्लड-ट्रान्सफ्यूजन I/V दें।

साथ ही—इञ्जेक्शन पेथिडीन १०० मि० ग्रा०+इञ्जे० एट्रोपीन ०.६ मि० ग्रा० मांसपेशीगत प्रति ६ घण्टे पर।

नेसोगैस्ट्रिक सक्सन (Nasogastric sucction) द्वारा आमाशय में संचित पदार्थ निकालें तथा आक्सीजन सुँघायें।

लासिक्स (Lasix) १० मि० ग्रा० I/M दें।

○ इन्फेक्शन को कण्ट्रोल में करने के लिए—

℞ पाइरोलिडीनोमिथाइल टेट्रासाइक्लीन

(Pyrrolidinomethyl tetracycline)

व्या नाम०—रेवरिन (Reverin) २७५ मि० ग्रा०

मात्रा—ऐसी १ मात्रा I/V प्रति १२ घण्टे पर दें जब तक कि औषधि मुख द्वारा न दी जा सके। इसे ट्रान्सफ्यूजन ट्यूब द्वारा लगायें।

अथवा—इञ्जे० एम्पीसिलीन अथवा स्पोरीडीन ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—५०० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर दें।

इञ्जे० ग्लूकागोन (Inj. Glucagon) १ मिग्रा० प्रति घण्टे पर I/V दें।

इञ्जे० डेकाड्रोन अथवा डेक्सोना (Dexona)

मात्रा—८ मि० ग्रा० I/V प्रति ८ घण्टे पर।

अथवा—मुख द्वारा कोई भी टेट्रासाइक्लीन कैप्सूल प्रति ६-८ घण्टे पर ५ दिन तक।

○ डिहाइड्रेशन को ठीक करने के लिए—

प्रथम ४८-७२ घण्टे तक फ्लूइड्स तथा एलेक्ट्रोलाइट्स (Electrolytes) I/V ड्रिप से दें। ड्राई प्लाज्मा को २०० मिली० 'रि-डिस्ट्रिल्ड वाटर' में मिला-

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर ट्रान्सफ्यूजन देना प्रारम्भ कर दें। इसे ८० से १०० बूंद प्रति मिनट की दर से दें। प्लाज्मा के पश्चात् १ लीटर नार्मल सैलाइन + १० मिली० (१०%) कैल्शियम ग्लूकोनेट ६०-८० बूंद प्रति मिनट की दर से दें। प्रति लीटर नार्मल सैलाइन के पश्चात् ५०० मिली० (५%) ग्लूकोज सोलूशन दें। ट्रान्सफ्यूजन का रेट ४०-६० बूंद प्रति मिनट होना चाहिए। ग्लूकोज सोलूशन के पश्चात् १ लीटर (५%) नार्मल सैलाइन ग्लूकोज दें।

○ **हाइपोकैल्सियम के लिए** (For hypocalcemia)—

१० मिली० (१०%) कैल्सियम ग्लूकोनेट प्रतिदिन तब तक दें, जब तक कैल्सियम सीरम (Calcium serum) सामान्य न हो जाये।

विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स का जलीय घोल (Aqueous solution of vit. B-complex.) और विटामिन-के १० मि० ग्रा० तथा विटामिन-सी ५०० मि० ग्रा० प्रतिदिन ५% ग्लूकोज इन्फ्यूजन के साथ दें।

स्तब्धता के पश्चात् की चिकित्सा (Treat. after collapse)—

○ रक्त-परीक्षा आदि में यदि शोथ में कमी प्रतीत हो तो औषधियों द्वारा ही चिकित्सा करनी चाहिए, अन्यथा ऑपरेशन करना चाहिए।

१. रोगी को २ दिन तक कुछ भी खाने को नहीं देना चाहिए और 'रायल्स' की नलिका से उसका पेट निरन्तर खाली रखना चाहिए।

२. तत्पश्चात् आमाशय खाली करने की क्रिया धीरे-धीरे बन्द करनी चाहिए और रोगी को तरल आहार पर लाना चाहिए। अवस्था में सुधार होने पर आहार में वृद्धि करनी चाहिए।

नोट—आहार में फैट की मात्रा कम तथा मद्यपान का पूर्ण निषेध हो।

३. रक्त-परीक्षा द्वारा शोथ की स्थिति मालूम करते रहना चाहिए। शोथ कम न होने पर शल्यकर्म करना चाहिए।

४. शिरा द्वारा ग्लूकोज, समलवण जल (Normal saline) घोल बराबर देते रहना चाहिए।

५. अग्न्याशय के स्राव को कम करने के लिए एट्रोपीन $\frac{1}{600}$ ग्रेन S/C दिन में दो या तीन बार देते रहना चाहिए।

६. तत्पश्चात् रोग-निवृत्ति होने के बाद रोग के मुख्य कारण का पता लगाना चाहिए और उसकी उचित चिकित्सा करनी चाहिए। क्योंकि अब तक बतलाई गई चिकित्सा केवल 'इमरजेन्सी चिकित्सा' ही थी, वास्तविक चिकित्सा नहीं।

७. वास्तविक चिकित्सा—कारण को दूर करना ही चिकित्सा का मुख्य उद्देश्य है। इसके साथ ही पित्ताशयशोथ, पितवाहिनियों में शोथ, पित्ताश्मरी तथा पेप्टिक अल्सर आदि रहने पर उपयुक्त चिकित्सा करनी चाहिए। अन्यथा रोग के पुनराक्रमण का भय रहता है।

 CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. सभी अवस्थाओं में एण्टेसिड (एसिड-निरोधी) औषधियों का प्रयोग करते रहना चाहिए।

नोट—रोग के सही निदान के लिए कभी-कभी पेट को शल्य-कर्म द्वारा खोलने की आवश्यकता पड़ सकती है।

आवश्यक निर्देश—जहाँ तक हो सके एक सामान्य चिकित्सक को अपनी जनरल प्रेक्ट्रिस में ऐसे रोगियों को नहीं लेना चाहिए। उसे किसी बड़े अस्पताल में अथवा नर्सिंग होम में भर्ती होने के लिए निर्दिष्ट कर देना चाहिए।

क्रॉनिक पैंक्रियाटाइटिस
(Chronic Pancreatitis)

परिचय—एक्यूट पैंक्रियाटाइटिस की दीर्घकालिक अवस्था को 'क्रॉनिक पैंक्रियाटाइटिस' कहते हैं। पैंक्रियाज के इस प्रकार के शोथ में फाइब्रोसिस होने लगता है; जिसके परिणामस्वरूप अग्न्याशय के अन्तःस्राव में कमी हो जाती है, जिससे मधुमेह तथा पाचन-क्रियाएँ विकृत हो जाती हैं।

कारण (Etiology)—विकृतियाँ निम्न कारणों से उत्पन्न होती हैं—

१. अग्न्याशय में विकृति।
२. शोथ (Inflammation)।
३. उपसर्ग (Infections)।
४. अश्मरी (Stones)।
५. कोलीसिस्टाइटिस (Cholecystitis)।
६. घातक कैंसर (Malignant tumor)।
७. पेप्टिक अल्सर।
८. हेपेटाइटिस (Hepatitis)।
९. आर्टीरियोस्क्लेरोसिस।
१०. कॉलेञ्जाइटिस।

अनेक बार उग्रशोथ के आक्रमण से रोगी के मुक्त होने पर भी रोग जीर्णरूप में बना रहता है। इस रोग में उदर के ऊपरी भाग में विशेषकर एपिगैस्ट्रियम प्रदेश में पीड़ा होती है, जो पीठ में भी इसी क्षेत्र में प्रतीत हो सकती है। यह ५० से ७० वर्ष की आयु में उन रोगियों में अधिक मिलता है जो 'मद्यपान' के अभ्यस्त होते हैं।

लक्षण (Symptoms)—१. एपिगैस्ट्रियम में बार-बार पीड़ा का होना।
२. उदर दबाने पर पीड़ा की अनुभूति।
३. मल में वसा की वृद्धि।
४. मूत्र में शर्करा की उपस्थिति।
५. आध्मान।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. कभी-कभी कामला की उपस्थिति।

७. पेट में वायु भर जाती है और अधिक मात्रा में चिकने दस्त आते हैं।

८. मल अनियमित, दुर्गन्धित, वसायुक्त तथा सफेद रंग का होता है। मल में अपचित आहार के अवशेष मिलते हैं।

९. ○ पीड़ा के आक्रमण प्रायः होते रहते हैं।

10. ○ Anorexia, nausea, vomiting, constipation and flatulence are common.

11. Persistent upper abdominal pain with backache.

12. Malabsorption syndrome with steatorrhoea etc.

13. Diabetes mellitus.

निदान (Diagnosis)—

1. **लेपेरोटोमी** (Laparotomy) निदान में विशेष सहायक होती है।

2. Serum amylase and bilirubin may be elevated during acute attacks.

3. Glycosuria may be present.

4. Excess faecal fat may be demonstrated on chemical analysis of the stool.

5. X-ray—Plain films often show pancreaticolithiasis and mild ileus.

उपद्रव (Complications)—१. नॉर्कोटिक एडिक्शन कामन होता है।

२. डायबिटिस मेलीटस।

३. पैंक्रिएटिक सूडोसिस्ट अथवा एब्सिस।

४. कोलिस्टेटिक लिवर डिजीज—कामला युक्त अथवा बिना कामला के।

५. स्टेटोरिया (Steatorrhoea)।

६. मालन्यूट्रीशन (Malnutrition)।

७. पेप्टिक अलसर (Peptic ulcer)।

चिकित्सा (Treatment)—१. रोगी को कम चिकनाई वाला आहार निर्दिष्ट करें।

२. मद्यपान पर पूर्ण निषेध।

३. रोग के कारण तथा लक्षणों की समुचित चिकित्सा करनी चाहिए।

४. भोजन में कार्बोहाइड्रेट्स तथा कैल्सियम की मात्रा अधिक हो।

५. मधुमेह की उचित चिकित्सा आवश्यक है।

६. एण्टीकोलिनेर्जिक्स (Anticholinergics) तथा हल्की शामक (Mild sadative) औषधियाँ लाभकारी होती हैं।

७. जहाँ तक सम्भव हो नार्कोटिक न दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. स्टेटोरिया (Steatorrhoea) की चिकित्सा पैंक्रिएटिक सप्लीमेन्ट्स के द्वारा करें। इसके लिए कोटाजाइम (Cotazyme), फेस्टल (Festal), आइलोजाइम (Ilozyme), कू-जाइम (Ku-Zyme H. P.), पैंक्रियाज एवं Viokase का प्रयोग करें।

९. रक्ताल्पता की स्थिति में—लौह के योग तथा फैरस फल्फेट १८० मि० ग्रा० की मात्रा में दिन में ३ बार भोजन के बाद दें।

साथ ही—लिवर एक्स्ट्रेक्ट २ मिली० मांसपेशीगत सप्ताह में ३ बार दें।

पैंक्रिएटिन (Pancreatin) ३००–९०० मि० ग्रा० भोजन के बाद दें।

एवं—प्रोटीन हाइड्रोलेट, कोलीन आदि दें।

१०. पीड़ा के आक्रमण के समय—

℞ टेबलेट बुस्कोपेनको (Buscopanco)

एण्टेसिड (Antacid)

एण्टीकोलीनेर्जिक्स (Anticholinergics)

टे० पैंक्रियोन या सेरूटान (Tab. Pankreon or Serutan)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार भोजनोपरान्त।

अन्य चिकित्सा—इस रोग में विटामिन ए०, डी०, बी० तथा ईस्ट का भरपूर मात्रा में प्रयोग करें।

आन्त्र को स्वच्छ रखने के लिए—

हाइड्रोक्लोरिक एसिड (Hydrochloric acid)

मात्रा—१५-६० बूंद दिन में ३ बार भोजन के बाद।

साथ ही—'सोरविटाल मोनोओलियेट' दें।

कैल्शियम ग्लूकोनेट १०%–५-१० मिली० सप्ताह में २ बार I/V दें।

अथवा—६०० मि० ग्रा० दिन में तीन बार मुख से दें।

○ जीर्ण अग्न्याशयशोथ का संदेह निम्न रोगियों में करना चाहिए—

१. जिन रोगियों में जीर्ण पित्ताशयशोथ है।

२. जिन रोगियों में 'कामला' के साथ खुजली हो और सफेद रंग का मल आता हो।

३. जिन रोगियों में बहुत दिनों से चिकनाईयुक्त दस्त आ रहे हों तथा जिन्हें मधुमेह भी हो।

४. जो रोगी ड्यूडेनल अल्सर के पुराने रोगी हों।

५. जिन्हें आगे झुकने से उदर पीड़ा कम प्रतीत होती हो।

इन सन्देहात्मक लक्षणों के मिलने पर अग्न्याशयशोथ की प्रबल सम्भावना रहती है। परन्तु निश्चय करने के लिए उदर का एक्स-रे करवा कर देख लेना चाहिए। एक्स-रे में अश्मरियाँ (Stones) दिखलाई पड़ जाती हैं। अग्न्याशय में निर्मित 'फाइब्रोसिस' भी एक्स-रे में दिखलाई देता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अग्न्याशयशोथ में प्रयुक्त पेटेण्ट औषधियाँ—

१. एल्वीजाइम (Alvizyme) (एलेम्बिक)

मात्रा—१-२ टेबलेट दिन में २ बार।

२. बिलामाइड (Bilamide) (इथनोर)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार भोजन के बाद।

ऑपरेटिव (Operative)—

(i) Sphincterotomy or pancreaticojejunostomy for free drainage.

(ii) Splanchnicectomy or pancreatoduodenectomy for pain. □

पाचन-संस्थान के रोग 1/27

पित्ताश्मरिता
(Cholelithiasis)

पर्याय—इसे पित्ताशय की पथरी अर्थात् गालस्टोन (Gallstone), बिलियरी केलकुलस (Biliary calculus) आदि नामों से जाना जाता है।

परिचय—Cholelithiasis is the condition in which gall stones are developed. When gall stones move along any of the ducts, they give rise to biliary colic.

पित्ताशय में अश्मरी की उपस्थिति को पित्ताश्मरिता (Cholelithiasis) कहते हैं। सामान्यतः ५% व्यक्तियों के पित्ताशयों में अश्मरी की उपस्थिति का अनुमान किया जाता है। एक बड़ी अश्मरी से लेकर १४०० छोटी-छोटी अश्मरियाँ तक पायी गई हैं।

कारण (Etiology)—पित्ताशय में अश्मरी-निर्माण का कोई ठोस कारण नहीं ज्ञात हो सका है। फिर भी निम्न कारणों का अनुमान किया जाता है—

१. पित्ताशय का जीर्णशोथ इसका विशेष कारण प्रतीत होता है।

२. ○ **चयापचयी विकृति**—पित्त लवणों (Bile salts) एवं कोलेस्टेरॉल का सामान्य अनुपात २५ : १ होता है। यदि किसी प्रकार चयापचयी विकृति के कारण यह अनुपात १३ : १ हो जाता है तो कोलेस्टेरॉल का अवक्षेप (Precipitate) होकर वह पित्ताश्मरियों का रूप धारण कर लेता है।

३. ○ **संक्रमण**—इन अश्मरियों के निर्माण में जीवाणु-संक्रमण का विशेष स्थान है। पित्ताशय के अंदर जीवाणु श्लेष्मा और पूय की उत्पत्ति करते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसके चारों ओर कोलेस्टेरॉल तथा अन्य पदार्थ जमा होते रहते हैं और कुछ समय बाद इन अश्मरियों की उत्पत्ति हो जाती है।

४. ○ पित्त के मार्ग में किसी प्रकार की रुकावट आने से।

५. ○ यह रोग पुरुषों की अपेक्षा उन स्त्रियों में अधिक होता है जो ४०-४५ वर्ष की स्थूल शरीर एवं अधिक सन्तान वाली होती है तथा कार्बोहाइड्रेट तथा फैट का अधिक सेवन करती हैं।

६. ○ पित्त में बिलीरूबिन (Bilirubin) की मात्रा अधिक होने पर पित्ताश्मरी बन सकती है।

प्रकार (Types)—**१. वर्णक अश्मरी** (Pigment stones)—इस प्रकार की अनियमित आकार वाली अश्मरियाँ बहुत छोटी होती हैं। इसका रंग गहरा हरा अथवा काला-सा होता है। यह वर्षों तक अपने स्थान पर बिना कोई लक्षण उत्पन्न किये ही स्थिर रहती हैं।

२. कोलेस्टेरॉल अश्मरी (Cholesterol stones)—जैसा कि पूर्व में बतलाया जा चुका है कि इस प्रकार की अश्मरियाँ कोलेस्टेरॉल तथा पित्त लवणों के असन्तुलन होने से उत्पन्न होती हैं। इनका रंग हलका पीला तथा पीला-सफेद होता है। ○ इसकी विशेषता यह है कि ये हल्की होती हैं और पानी पर आसानी से तैर सकती हैं। यह गोल तथा अण्डाकार होती हैं।

३. मिश्रित अश्मरी (Mixed stones)—यह पित्त लवणों तथा कोलेस्टेरॉल दोनों से मिलकर बनती हैं। यह २ प्रकार की होती हैं—

(i) **एसेप्टिक**—इसमें पूय अनुपस्थित रहता है।

(ii) **सेप्टिक**—इस प्रकार की अश्मरी में पूय तथा जीवाणु दोनों उपस्थित मिलते हैं।

लक्षण एवं चिह्न (Symptoms & signs)—१. पित्ताशय में अश्मरी के पड़े रहने के बावजूद अनेक लोगों में कोई लक्षण उत्पन्न नहीं होते हैं। उनमें तो शव-परीक्षा (Post-mortum) के समय ही अश्मरी मिलती है।

२. अधिकांश रोगियों में चिरकारी पित्ताशयशोथ का इतिहास मिलता है।

३. यदि अश्मरी सामान्य पित्तवाहिनी में पहुँच जाती है तो निम्नलिखित लक्षण उत्पन्न होते हैं—

(i) रोगी में कुछ अन्तराल पर पित्ताशयशूल (Biliary colic) का आक्रमण होता रहता है।

(ii) शूल के समय रोगी में उत्क्लेश तथा वमन की उपस्थित होती है। रोगी अत्यन्त व्याकुल रहता है। कुछ समय बाद शूल ठीक हो जाता है। पुनः आक्रमण के समय शूल फिर प्रकट हो जाता है और रोगी में उत्क्लेश तथा वमन के लक्षण फिर से मिलने लगते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(iii) रोगी के पित्ताशय का कष्ट आमाशय में प्रक्षिप्त (Reflex) हुआ प्रतीत होता है। भोजन करने के कुछ समय बाद पेट में भारीपन तथा आध्मान (Flatulence) के लक्षण हो जाते हैं।

(iv) आमाशय-प्रदेश (Epigastrium) में अथवा उसके दाहिनी ओर और पेट के ऊपर के भाग में हल्का-हल्का दर्द उठने लगता है। रोगी को खट्टी डकारें आती हैं। भोजन के बाद शूल आदि लक्षण बढ़ जाते हैं। भोजन में घी, तैल आदि के पकवान अधिक लेने से यह दर्द बढ़ जाता है।

(v) जब पित्ताश्मरी पित्तवाहिनी में प्रवेश कर रुक जाती है तो उस नली पर इसका दबाव पड़ने से अश्मरी शूल (Biliary colic) का दौरा प्रारम्भ हो जाता है। इसका शूल आमाशय-प्रदेश में होता है। शूल अत्यन्त दारुण होता है।

○ प्रायः शूल रात्रि में अकस्मात् प्रारम्भ होता है। शूल उदर के दाहिने, यकृत् के नीचे पित्ताशय के प्रान्त में आरम्भ होता है और वहाँ से पीठ में वक्ष के निचले भाग में और दाहिनी ओर स्कन्धफलक तथा उसके शिखर तक फैल जाता है। ठहर-ठहर कर शूल की लहरें-सी प्रतीत होती हैं। शूल की तीव्रता के कारण रोगी छटपटाता है, बिस्तरे या फर्श पर लोटता है, चीखने-चिल्लाने और रोने लगता है। ठंडा पसीना आ जाता है, वमन होता है, नाड़ी तीव्र और क्षीण हो जाती है।

○ शूल घण्टों तक होता रहता है और अकस्मात् वैसे ही बन्द हो जाता है, जैसे प्रारम्भ हुआ था।

(vi) अश्मरी के पित्तवाहिनी में रुकने से इसके अन्दर श्लैष्मिक शोथ (Catarrhal cholangitis) हो जाने के कारण कामला के लक्षण पैदा हो जाते हैं।

(vii) रोगी को कभी-कभी ज्वर भी हो जाता है। किसी-किसी रोगी को ज्वर ठंड एवं कँपकँपी के साथ चढ़कर १०२° फा० अथवा इससे भी अधिक पहुँच जाता है। ऐसी अवस्था में २४ घण्टे के अन्दर कामला स्पष्ट रूप से परिलक्षित होने लगता है।

(viii) यदि अश्मरी सामान्य पित्तवाहिनी से निकल कर ड्यूडेनम (Duodenum) में पहुँच जाती है तो दक्षिण अधःपर्शुका-प्रदेश में तीव्र शूल की उत्पत्ति हो जाती है। यह शूल कुछ समय के उपरान्त शान्त हो जाता है। प्रायः अधःपर्शुका-प्रदेश में दाब-वेदना (Tenderness) मिलती है।

(ix) शूल के समय रोगी की परीक्षा करने पर उदर के दाहिने भाग में विशेषतया पेशियाँ कड़ी प्रतीत होती हैं। स्पर्शासह्यता भी मिलती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्वेषण (Investigation)—१. **एक्स-रे परीक्षा में**—प्लेन एक्स-रे से भी १०–१५% तक का पता लग जाता है। इसमें हल्की गोलाकृति धुंधली-सी दीखती है।

२. पित्ताशय चित्र (Cholecystogram) से भी अश्मरियों का ज्ञान आसानी से हो जाता है।

३. **वेण्डेन वर्ग रीएक्शन परीक्षा**—यह धनात्मक (Positive) होती है।

४. **सीरम बिलीरूबिन परीक्षा**—इसकी सामान्य से अधिक मात्रा 'कामला' की परिचायक होती है।

५. **मूत्र-परीक्षा** (Urine test)—'यूरोबिलीनोजन' और 'विलीरुबिन' की उपस्थिति का ज्ञान कामला का निदान करने में सहायक होता है।

नोट—पित्ताश्मरी के निदान में पित्ताशय शूल (Biliary colic) एक महत्त्वपूर्ण लक्षण है।

क्रम और उपद्रव—'पित्ताशय शूल' कुछ मिनटों से लेकर कुछ घण्टों तक रह सकता है। पित्ताश्मरी की उपस्थिति से निम्न उपद्रव अवश्यम्भावी हैं—

१. पित्ताशय का जीर्ण शोथ।

२. व्रणोत्पादन विदार।

३. ग्रहणी तथा आमाशय में संयोजन।

४. आमाशय, ग्रहणी तथा आन्त्र में फिस्चुला का बनना।

५. बृहदन्त्र तथा अग्न्याशयशोथ।

६. पेरिटोनाइटिस की उत्पत्ति।

चिकित्सा (Treatment)—पित्ताशय शूल (Biliary colic) के आक्रमण के समय रोगी के शूल का शमन प्रमुख रूप से अभीष्ट है। इस चिकित्सा को २ भागों में विभक्त कर सम्पन्न किया जाता है।

१. पित्ताशय शूल के आक्रमण के समय की चिकित्सा।

२. शूल के उपरान्त की चिकित्सा।

(१) शूल के समय की चिकित्सा—

(i) रोगी को पूर्ण विश्राम दें।

(ii) ℞ इञ्जे० बेरालगन (Inj Beralgan) (हैक्स्ट)

मात्रा—२ मिली० I/V अथवा I/M दें।

नोट—३० मिली० वीयल की औषधि I/V मार्ग से प्रयुक्त नहीं करनी चाहिए।

स्पाज्मो-प्रोक्सीवॉन (Spasmo-Proxyvon) अथवा प्राइडोनल (Prydonnal) अथवा बुस्कोपान (Buscopan) कम्पोजीटम।

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—इञ्जे० स्पैजमिण्डौन (Inj. Spasmindon)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१–२ मिली० मांसपेशीगत। आवश्यकतानुसार प्रति ४ घण्टे पर।

अथवा—इञ्जे० पैण्टाजोसीन (Inj. Pentazocine)

व्या० नाम—इञ्जे० फोर्टविन (Inj. Fortwin)

मात्रा—३०–६० मि० ग्रा० मांसपेशीगत। अथवा ३० मि० ग्रा० इण्ट्रावीनस।

नोट—आवश्यकता पड़ने पर ३-४ घण्टे बाद पुनः दोहराया जा सकता है।

(iii) साथ ही—टेबलेट बेरालगन (Tab. Beralgan)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

यदि तीव्र स्वरूप का गम्भीर शूल हो तो—

℞ इञ्जे० एट्रोपीन ०·६ मि० ग्रा० मांसपेशीगत दें।

तत्पश्चात्—इञ्जे० पैथीडीन १०० मि० ग्रा० दें।

साथ ही—ट्रिनी-ट्रिनी की १ गोली जीभ के नीचे रखें।

ट्रासेण्टीन की १ गोली दिन में ३ बार दें।

गर्म पानी की थैली उदर पर रखें।

एण्टीबायोटिक औषधियाँ—संक्रमण पर नियंत्रण पाने के लिए किसी ब्राडस्पेक्ट्रम एण्टीबायोटिक, यथा—टेट्रासाइक्लीन, एम्पीसिलीन अथवा सिफेलेक्सिन आदि में से किसी का उपयोग करें।

यदि वमन अधिक हो रहा हो तो—I/V ड्रिप द्वारा 5% ग्लूकोज सैलाइन दें।

साथ ही—रोगी को उचित मात्रा में विटामिन 'K' भी देते रहें।

नोट—आक्रमण शान्त हो जाने के पश्चात् भी कई दिनों तक हल्की पीड़ा एवं बेचैनी बनी रहती है। ऐसी स्थिति में—

टि० बेलाडोना २ मिली० (३० बूँद) दिन में ३ बार देना पर्याप्त है।

(२) शूल के उपरान्त की चिकित्सा—शूल के उपरान्त ऑपरेशन द्वारा पित्ताशय की अश्मरी निकाल देना ही रोग से मुक्ति दिलाने का सर्वोत्तम उपाय है। इसमें 'कोलीसिस्टोस्टोमी' एवं 'कोलीडोकोस्टोमी' का ऑपरेशन किया जाता है।

यदि ऑपरेशन में अवरोध हो रहा हो तो—

℞ टेबलेट चेण्डोल (Tab. Chendol) अर्थात् चीनोडियोक्सीकोलिक एसिड।

मात्रा—१५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर प्रतिदिन रात्रि में सोते समय ६–१२ माह तक।

नोट—यदि अतिसार प्रारम्भ हो जाय तो थोड़ी मात्रा में ३–४ माह तक दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ रोगी को पौष्टिक सुपाच्य आहार दें। साथ ही कुलथी की दाल का पानी पीने को दिया जाता है।

कोलीलिथिएसिस में प्रयुक्त अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

(i) बेलाडेनल-इन (Belladenal-in) (सैण्डोज)

मात्रा—१ गोली दिन में २-३ बार प्रतिदिन।

बच्चों में—$\frac{1}{2}$–$\frac{1}{3}$ गोली।

बेलाडेनल-इन रिटार्ड (Belladenal-in retard) भी आता है।

मात्रा—१-१ गोली प्रातः एवं रात को। बालक—$\frac{1}{2}$–$\frac{1}{3}$ मात्रा।

नोट—यह एक दीर्घ प्रभावी (Long acting) औषधि है।

(ii) बुस्कोपान कम्पोजीटम (Buscopan compositum)
(जर्मन रेमेडीज)

मात्रा—१-२ ड्रेगी दिन में ३ बार।

बुस्कोपान कम्पोजीटम इञ्जे० भी आता है।

मात्रा—१ एम्पुल I/V धीमी गति से अथवा इण्ट्रा-ग्लूटियल इञ्जे०।

(iii) कोडोल्जिक (Codolgic or codolsic) (आनन्द)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार।

(iv) कोलीनोल (Colinol) (Noel co.)

मात्रा—वयस्क–१-२ गोली दिन में ३-४ बार।

बालक—६-१२ वर्ष—$\frac{1}{2}$-१ गोली दिन में ३-४ बार।

५. डेसीकोल (Desicol) (P. D.)

मात्रा—१-१ कै० दिन में ३ बार खाने के तत्काल बाद।

मिश्रित योग—ट्रांसेण्टीन १ गोली + सल्फाडायजीन २ गोली + लिट्रीसन १ गोली—यह एक मात्रा है। ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार दे। ⊡

पाचन-संस्थान के रोग 1/28

जलोदर
(Ascites)

पर्याय—जलोदर, जलन्दर, उदर में पानी भर जाना।

परिभाषा—यह एक ऐसी क्लिनिकल अवस्था है जिसमें उदरावरण कोष (Peritoneum cavity) में जल एकत्रित हो जाता है। यह सिरोसिस ऑफ द लिवर, दक्षिण हृदय कंजेस्टिव फेल्योर, नेफ्रोटिक सिण्ड्रोम तथा एब्डॉमिनल टयुबरकुलोसिस का एक कामन उपद्रव है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रायः यकृत् की बीमारी की अन्तिम अवस्था में पेट पर सूजन आ जाती है और पेट में पानी इकट्ठा हो जाता है, बस यही जलोदर है।

कारण (Etiology)—

१. ट्यूबरकुलस पेरिटोनाइटिस (Tuberculous peritonitis)।
२. सिरोसिस आफ द लिवर (Cirrhosis of the liver)।
३. हाइपोप्रोटीनीमिया (Hypoproteanaemia)।
४. हृदय रोग (Cardiac disease)।
(i) ट्राईकस्पिड डिजीज।
(ii) कंस्ट्रक्टिव पेरीकार्डाइटिस।
(iii) गम्भीर हृदय फोल्योर (Severe heart failure)।
५. हेपेटिक वेन थ्रोम्बोसिस (Budd-Chiary syndrome)।
६. मेलिग्नेन्सी (Malignancy)।
७. गुर्दे की बीमारी (Disease of kidney)।
८. प्लीहा एवं फुप्फुस रोग (Spleen & lungs disease)।
९. प्रणाशी रक्तक्षीणता (Pernicious anaemia)।
१०. ल्यूकीमिया (Leukaemia)।
११. डिम्ब-ग्रन्थि के अर्बुद (Ovarian tumour)।
१२. पर्युदर्या का हाइडेटिड रोग।
१३. क्षयजन्य या कैंसरजन्य पेरिटोनाइटिस।

कथन—○ एसाइटीज (जलोदर) की दशा अनेक कारणों से उत्पन्न हो सकती है। यह कोई स्वतंत्र रोग नहीं है, बल्कि दूसरी बीमारियों का लक्षण है। यकृत रोग की अन्तिम अवस्था में यह बीमारी हो जाती है। वास्तव में यह एक लक्षण मात्र है।

○ इसमें सामान्य एकत्रित हुआ द्रव एक पारस्राव (Transudate) होता है जो हल्के पीले रंग का होता है। इसका विशिष्ट गुरुत्व १.०१५ होता है। उसमें कुछ सैल्स भी होती है और प्रोटीन २% होती है।

○ दूसरी प्रकार का एकत्रित द्रव सीरम होता है। इसको 'सीरो-पेरिटोनियम' कहते हैं। यह सीरम पेरिटोनियम केविटी में एकत्रित होता है। इसका विशिष्ट गुरुत्व १.०१५ से अधिक होता है। प्रोटीन भी ३% से अधिक होती है। इसका रंग गहरा होता है। सैल्स की संख्या अधिक होती है।

○ तीसरे प्रकार के रोग में द्रव में रक्त मिला होता है। इसमें रक्त कणिकाएँ उपस्थित रहती हैं। रंग भी पीलापन लिये हुए होता है। इसे 'हीमोपेरिटोनियल' भी कहा जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ एक अन्य प्रकार के द्रव में काइल (Chyle) मिला रहता है।

सामान्य लक्षण (General symptoms)—कारणों के अनुसार चिह्नों में तथा रोगी की सामान्य दशा में अन्तर होता है।

१. उदर प्राचीर पर शिराओं का फूलना, पैरों में सूजन, साँस फूलना, नाभि का बाहर की ओर को फूल जाना आदि लक्षण होते हैं।

२. प्रारम्भ में पेट में पानी इकट्ठा हो जाने से पेट के सामने वाला भाग बड़ा और ऊँचा दिखलाई देता है। पेट में पानी ज्यों-ज्यों बढ़ता जाता है त्यों-त्यों वह पानी पेट के दोनों तरफ और नीचे की ओर फैलता जाता है।

३. पानी जब पेट में ऊपर-नीचे सभी जगह फैल जाता है, तब पेट चिपटा दिखलाई देने लगता है।

४. ○ उदर का फैल जाना इस रोग का प्रधान लक्षण होता है। उदर प्रायः एक समान विस्तृत होता है।

५. द्रव की अधिक मात्रा होने पर उदर ऊपर की ओर अर्थात् वक्ष से भी ऊपर (ऊँचा) उठा हुआ होता है।

६. नाभि बाहर को निकली हुई दिखलाई देती है। नाभि की चारों शिराएँ परिवर्धित दिखलाई देती हैं।

७. ○ रोगी के क्षीण अंग—बाहु, टाँगें आदि तथा चेहरा उसके विस्तृत उदर की अपेक्षा अत्यन्त क्षीणता का चित्र उपस्थित करते हैं।

८. द्रव के अधिक हो जाने पर रोगी का उदर सदैव भरा-सा प्रतीत होता है। उसके और अधिक बढ़ जाने पर श्वास लेने में कष्ट होने लगता है। रोगी का चलना-फिरना भी दूभर हो जाता है।

९. रोगी का हृदय धड़कता है।

१०. कभी-कभी प्यास की अधिकता भी होती है। अधिकांश रोगी को 'कॉन्स्टीपेशन' रहता है।

११. पेशाब की मात्रा बहुत घट जाती है। वृक्क की शिराओं पर जल का दबाव पड़ने से मूत्र में एल्ब्युमिन भी आता है।

जलोदर के कारणों के अनुसार अन्य लक्षण भी होते हैं—

(१) यकृद्वृद्धि जनित जलोदर (Ascites due to hepatic cirrhosis or portal obstruction)—इस प्रकार का जलोदर यकृद् रोग के परिणामस्वरूप यकृत् के अन्दर की पोर्टल वेन तथा पोर्टल कैपिलरीज में रक्तसंचय तथा रक्तभार के बढ़ जाने से तथा पोर्टल सिस्टम अथवा कोष्णगत आशयों की दीवारों में से जल भाग के इस कोष में रिस-रिस कर बाहर निकलने से होता है।

○ मध्यम आयु का रोगी जब दीर्घ काल तक अथवा वर्षों तक यकृत् रोग का रोगी रहता है तब यह उपद्रवस्वरूप हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशिष्ट लक्षण (Special symptoms)—१. इसमें पोर्टल हाइपर-टेन्शन के कारण प्लीहा का भी कुछ लक्षण रहता है।

२. यकृत् बड़ा और कठोर होता है।

३. जलोदर से पेट तो उभरा होता है पर शाखाएँ कृश दिखलाई देती हैं।

○ **नोट**—यह सबसे अधिक मिलने वाला जलोदर है।

(२) वृक्करोग जनित जलोदर (Ascites due to acute or sub-acute nephritis)—वृक्क रोग के कारण जब मूत्र के द्वारा बहुत सारा अल्ब्युमिन निकल जाता है और रक्त में प्रोटीन की मात्रा ५% से कम हो जाती है तब सर्वांगश्वयथु का रोग हो जाता है। इस अवस्था में पेरिटोनियम केविटी में भी जल भरने लगता है। इस प्रकार का जलोदर रोग सर्वांगश्वयथु का ही एक भाग होता है।

विशिष्ट लक्षण (Special symptoms)—१. इस अवस्था में चेहरे, पाँव आदि के शोथ के साथ या बाद में हलके जलोदर का लक्षण होता है।

२. मूत्र में एल्ब्युमिन तथा कास्ट (Casts) की उपस्थिति तथा रक्त में कोलेस्टेरॉल की वृद्धि एवं रोगी के श्वेत वर्ण तथा फूले हुए शरीर को देखकर इसका निदान हो जाता है।

(३) हृदयरोग जनित जलोदर (Ascites due to cardiac failure)—कार्डियक डाइलेटेशन (Cardiac dilatation) के रोग में जब चिरस्थायी कास (Chronic cough) तथा श्वास (Emphysema) के कारण दक्षिण हृदय में निर्बलता आ जाती है, तब शरीर की शिराओं में रक्तभार बढ़ जाता है तथा उसकी दीवारों को ऑक्सीजन कम मिलती है एवं उसमें निर्बलता आ जाती है, जिससे उनमें से जल का भाग अधिक मात्रा में बाहर निकलने लगता है। जल के साथ नमक भी अधिक मात्रा में निकल कर अवयवों में एकत्रित हो जाता है। इस प्रकार पोर्टल कैपिलरीज में भी रक्तभार के बढ़ने से जलोदर हो जाता है।

विशिष्ट लक्षण (Special symptoms)—१. इसमें प्रथम वाम हृदय निर्बल हो जाता है, जिससे श्वासकृच्छ्रता तथा खाँसी का लक्षण पहले होता है।

२. इसके कुछ समय पश्चात् दक्षिण हृदय के निर्बल हो जाने पर पैरों में शोथ होता है और उसके बाद जलोदर का लक्षण मिलता है।

३. ○ ग्रीवा की जुगलर वेन (Juglar veins) इस रोग में फूली हुई दिखलाई देती है, जो इसका विशिष्ट लक्षण है।

४. यकृत् में वृद्धि तथा स्पर्शाक्षमता का लक्षण मिलता है।

(४) उदररोग जनित जलोदर (Ascites due to peritonitis)—पेरिटोनियम में शोथ हो जाने के परिणामस्वरूप इस कला (मेम्ब्रेन) में

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से स्राव (Exudation) होकर जलोदर हो जाता है। इस प्रकार का जलोदर विशेष रूप से ५-१० वर्ष की आयु के बालकों में पेरिटोनियम में क्षय के जीवाणुओं के संक्रमण कर जाने से होता है।

विशिष्ट लक्षण (Special symptoms)—१. बालक का पेट उभरा हुआ स्थूल होता है, पर उसके हाथ-पाँव आदि अंग कृश होते हैं।

२. रोगी को शाम के समय ज्वर रहता है।

३. निम्न कोष्ठ पर स्पर्शन से गुँथे हुए आटे अथवा मांस-खण्डों जैसी प्रतीति होती है।

४. पेट से निकले जल की स्पेसिफिक ग्रेविटी १·०१८ के लगभग होती है।

(५) कैंसर जनित जलोदर (Ascites due to carcinoma)—जब जलोदर ५५ वर्ष की ऊपर वाली अवस्था में होता है तो यह अधिकांश रूप से कैंसर के कारण होता है। इसमें सबसे पहले आमाशय तथा गुदा में कैंसर प्रारम्भ होता है। वहाँ से उसके सैल लसीका वाहिनियों (Lymph vessels) के द्वारा पेरिटोनियम में प्रसरण कर जाते हैं। अथवा वहाँ से यह रोग लसीका वाहिनियों के द्वारा पोर्टल फिशर में विद्यमान लिम्फ ग्लैण्ड्स में संक्रमण कर जाता है और उन बढ़ी हुई ग्रन्थियों के दबाव के कारण पोर्टल वेन के दब जाने से पेरिटोनियम में जल भरने लग जाता है।

विशिष्ट लक्षण (Special symptoms)—१. यकृत् अत्यन्त कठोर तथा आकार में बड़ा होता है।

२. उदरगुहा में भरे जल में रक्त का मिश्रण होता है। यदि इसे निकाल दिया जाये तो भी पुनः भर जाता है।

३. जल की स्पेसिफिक ग्रेविटी १·०१५ से अधिक होती है।

४. इस अवस्था में प्रायः यकृत् प्रदेश पर एवं दाहिने कंधे पर अथवा उधर की पीठ पर दर्द होने का लक्षण मिलता है।

५. कभी-कभी कामला का लक्षण भी मिलता है।

६. रोगी में हलका ज्वर तथा स्पर्शाक्षमता के लक्षण मिलने पर वह अति कृश हो जाता है।

स्त्रियों में ओवेरियन सिस्ट से भेद—

१. सिस्ट की स्थिति में पार्श्वों पर टकोर की आवाज ऊँची (Resonant) होती है तथा सामने के प्रदेश पर टकोर मन्द होती है।

२. पेट की मोटाई सबसे अधिक नाभि के नीचे के प्रदेश में होती है।

रोग-निदान (Diagnosis)—उपरोक्त लक्षणों के आधार पर निदान में कोई कठिनाई नहीं होती है। द्रव की उपस्थिति का निश्चय करने के लिए दो विशेष परीक्षाएँ की जाती हैं। इसमें रोगी को लिटाकर परिदर्शन के पश्चात् परिस्पर्शन तथा परिताडन से द्रव मालूम किया जाता है। जो इस प्रकार है—

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, Haridwar. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. लेटे हुए रोगी के उदर के एक पार्श्व पर एक हाथ फैलाकर रखने के पश्चात् दूसरे पार्श्व पर दूसरे हाथ की एक या दो अँगुली से ताड़न किया जाता है। इससे द्रव में उत्पन्न हुई तरंग दूसरे पार्श्व में पहुँच कर वहाँ पर रखे हुए हाथ में प्रतीत होती है। इसे द्रव की तरंग (Thrill) कहते हैं।

○ उदर पर नाभि के पास परितांडन करने से ध्वनिमय शब्द होता है, क्योंकि वहाँ द्रव नहीं होता है।

२. यदि रोगी को करवट में लिटाकर दोनों पार्श्वों पर परिताडन किया जाय, तो नीचे के पार्श्व से ठोस शब्द निकलेगा और जो पार्श्व ऊपर की ओर है उससे ध्वनिमय शब्द होगा। परन्तु उदर के मध्य भाग से भी ठोस शब्द ही निकलेगा।

अन्य निदानात्मक लक्षण (Others diagnostic symptoms)—

१. ○ रोगी जिस करवट में सोता है, उसी ओर का पेट फूल जाता है।

२. ○ तरल पदार्थों का हिलना अथवा घटना-बढ़ना करवट बदलने से मालूम होता है।

भावीफल (Prognosis)—१. पेट के अधिक बढ़ जाने से रोगी को बेचैनी होती है। चलने-फिरने तथा उठने-बैठने में भी कष्ट होता है।

२. इस रोग को सर्वदा अति विषम अवस्था समझनी चाहिए। कम ही रोगी इस रोग से मुक्ति पाते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—(१) **सामान्य चिकित्सा-विधि**—

१. इसकी चिकित्सा कारणों के अनुरूप की जाती है।

२. नमक रहित आहार देना चाहिए। साथ ही जल की मात्रा भी कम कर देनी चाहिए।

३. मद्यपान का पूर्ण निषेध करें।

४. आहार-व्यवस्था में—अण्डा, मांस, मछली, फल, सब्जी आदि दी जा सकती है।

५. जल की मात्रा कम करने के लिए तीव्र विरेचक तथा मूत्रल औषधियाँ देनी चाहिए।

६. रोगी का पेट सदैव साफ रखना चाहिए। उसे कब्ज कभी न होने दें।

७. जब रोगी को उठने-बैठने या साँस लेने में कष्ट होने लगे तब पेट में नली (Trocar & canula) प्रविष्ट कराकर उदर से पानी निकाल देना चाहिए।

८. रोगी को पूर्ण विश्राम की स्थिति में रखें।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

१. **इन्जेक्शन मर्सेलिल (Inj. Mersalyl) अथवा सोलिरगान**

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—२ मिली० इण्ट्रामस्कूलर नित्य ३-४ दिनों तक। तत्पश्चात् १ दिन छोड़कर दें।

अथवा—इन्जे० नेप्टाल (Inj. Neptal)

मात्रा—२ मिली० मांसपेशीगत सप्ताह में २ बार।

साथ ही—अमोनियम क्लोराइड (Ammonium chloride) १ ग्राम

मात्रा—१ कैप्सूल में भरकर दिन में ३ बार दें।

नोट—इससे मूत्र खुल कर आता है।

प्रेडनीसोलोन (Prednisolone)

मात्रा—२०-४० मि० ग्रा० २-३ बार प्रतिदिन।

नेप्टाल के स्थान पर—डाई-एडीमिल (Di-ademil)

मात्रा—२-२ गोली नित्य ७-१२ दिन तक।

अथवा—डाई-क्लोरट्राइड (Di-chlortride) (M. S. D.)

अथवा—एसीड्रेक्स (Esidrex) (सीबा)

मात्रा—५ मि० ग्रा० प्रतिदिन।

कार्डियक एसाइटीज तथा रेसिस्टेण्ट केसिस में—

℞ फ्युरोसीमाइड (Furosemide)

व्या० नाम—लासिक्स (Lasix) ४० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में १ बार प्रातः समय। अथवा आवश्यकतानुसार २ गोली दिन में १ बार तक दी जा सकती है।

साथ ही—℞ पोटैसियम क्लोराइड (Potassium chloride) लि०

मात्रा—१-१ चम्मच दिन में १ या २ बार दें।

यदि प्रतिक्रिया (Response) सन्तोषजनक न हो तो—

℞ स्पाइरोनोलेक्टोन (Spironolactone)

व्या० नाम०—एल्डाक्टोन-ए (Aldactone-A)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

हाइड्रोक्लोरोथायाजाइड (Hydrochlorothiazide)

व्या नाम०—एसीड्रेक्स (Esidrex) २५ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में १ बार।

नोट—○ जब तक श्वयथु (Oedema) समाप्त न हो जाए, इस चिकित्सा को चलने दें।

○ रोगी की प्रत्येक अवस्था में मैगसल्फ (कैपसूल रूप में) १ ड्राम की मात्रा प्रातःकाल दें।

○ साथ ही कार्डियक एसाइटीज में उपरोक्त औषधियों के साथ-साथ 'डिलोक्सीन' २५ ग्राम दिन में २ बार देते रहें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृक्करोग जनित जलोदर में—

१. प्रोटीन तथा लवण का परित्याग।

२. जल १ पाइण्ट से अधिक नहीं।

३. रोगी को फल रस तथा कार्बोहाइड्रेटस दें।

नोट—एक्यूट नेफ्राइटिस में 'मूत्रल औषधियों' का प्रयोग न करें। सब-एक्यूट नेफ्राइटिस में केवल एसीड्रेक्स तथा लासिक्स (Lasix) का प्रयोग किया जा सकता है।

अधिक बेचैनी की स्थिति में—बेचैनी होने पर चिकित्सा के आरम्भ में मूत्र कराकर रोगी को बैठाकर नाभि तथा प्यूबिस के मध्य में नोवोकेन का सूचीवेध दे दिया जाता है। इससे स्थानिक शून्यता उत्पन्न हो जाती है। तत्पश्चात् चाकू से त्वचा को काट कर पेरिटोनियम की गुहा में ट्रोकार और कैनूला में लगी हुई ट्यूब से धीरे-धीरे (३ घण्टे में १ लीटर) जल निकाल लेते हैं। इस प्रकार का शल्य-कर्म एक या दो बार से अधिक नहीं करना चाहिए।

चेतावनी—शीघ्रता में द्रव-हरण करने से मूर्च्छा तथा लवण की न्यूनता आदि उपद्रव हो सकते हैं।

आवश्यक निर्देश—जलोदर के रोगी को प्रत्येक अवस्था में 'विटामिन-बी' की २ गोली दिन में २ बार देते रहना चाहिए।

साथ ही—लिवर एक्स्ट्रेक्ट (Liver extract)

मात्रा—२ मिली० मांसपेशीगत सप्ताह में १ बार दें।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

(१) क्षयजन्य पेरिटोनाइटिस से उत्पन्न जलोदर में—

℞ स्ट्रेप्टोपेनिसिलीन (Streptopenicillin)

मात्रा—½-१ ग्राम नित्य ३ माह तक।

(२) जलोदर में कोष्ठबद्धता—

℞ बाईकोलेट्स (Bicolets) (मार्टिन हैरिस)

मात्रा—१-२ गोली रात में सोते समय।

(३) जलोदर में यकृद् विकार की स्थिति में—

℞ लिट्रीसान (Litrisan) (रोशे)

मात्रा—१-२ गोली भोजन के बाद।

(४) पेट में गैस तथा जलोदर की स्थिति में—

℞ डिस्पेप्टाल (Dispeptal)

मात्रा—१-१ गोली दिन में ३ बार भोजनोपरान्त।

(५) पाचन-संस्थान के कारण जलोदर—

℞ बीकोजाइम 'सी' फोर्ट

 CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

जलोदर में प्रयुक्त अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. मरक्लोरान (Mercloran) (P. D.)

मात्रा—१-१ गोली दिन में ४ बार।

२. फ्रूमेक्स (Frumex) (डोल्फीन)

मात्रा—१-३ गोली दिन में १ बार या दूसरे-तीसरे दिन।

३. डायटिड (Dytide) (स्मिथ क्लिनफ्रेंच)

मात्रा—२-४ गोली नित्य कई मात्राओं में बाँट कर।

४. एसीड्रेक्स (Esidrex) (सीबा गायगी)

मात्रा—१-२ गोली दिन में २-३ बार प्रति ३-४ घण्टे पर।

५. हायथेल्टान (Hythalton) (सुहृदय गायगी)

मात्रा—प्रारम्भ में ½ गोली या १००-२०० मि० ग्रा० नित्य।

६. सिल्लेरेन (Scillaren) (सैण्डोज)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार।

इसके अतिरिक्त—

१. टेबलेट—एमिनोफायलिन, डायामोक्स, मर्कलोरन, नेवीड्रेक्स, लिव-५२, सिस्टोन, डिलोसिन, नीओनेकलेक्स।

२. पेय एवं पाउडर—कोसीलान पाउडर, कोसीलान-बी$_{१२}$, मिको-सिटोल, लिव-५२ सिरप, सिरोसीन।

३. इञ्जेक्शन—एमिनोफायलिन, डिजीटेलिन (Digitaline), नेप्टाल, मर्सेलिल एवं सिलेरिन। ⊡

पाचन-संस्थान के रोग 1/29

यकृत्-शोथ
(Hepatitis)

पर्याय (Synonyms)—यकृत्-शोथ, यकृत्-प्रदाह, जिगर का वर्म, प्रसेवी कॉमला, कटारल जॉण्डिस अथवा इपीडेमिक जॉण्डिस आदि।

परिचय (Definition)—यह एक प्रकार की यकृत् की सूजन है जो विभिन्न प्रकार के जीवाणुओं के संक्रमण से तथा विषों के प्रभाव से होती है।

○ यकृत् के रोगों में यह सर्वाधिक मिलने वाला रोग है। यकृत्शोथ में कामला (Jaundice) अवश्यम्भावी लक्षण होता है।

कारण—

(१) इन्फेक्टिव एजेण्ट्स (Infective agents)—टाइप 'ए' एवं टाइप 'बी' वायरस, यलो वायरस, सी० एम० वी०, हर्पीज सिम्प्लेक्स वाइरस,

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुबेला वाइरस, मर्ग-वर्ग एजेण्ट्स, लेप्टोस्पाइरा एक्टेरो-हीमोरेजिका, लेप्टोस्पाइरा केनीकोला, टॉक्सोप्लाज्मा गोण्डी आदि जीवाणु।

(२) **टॉक्सिक एजेण्ट्स** (Toxic agents)—

१. क्लोरप्रोमेजीन एवं अन्य फीनोथायजीन डेरीवेटिज्म।

२. एण्टी-बायोटिक्स, जैसे—इरीथ्रोमाइसिन, टेट्रासाइक्लीन।

३. एण्टी-ट्यूबरकुलस एजेण्ट्स जैसे—आई० एन० एच० (I N H) रिफैम्पिसिन।

४. हाइपोटेन्सिव, यथा—मेथिल डोपा।

५. एण्टी-डायबिटिक, यथा—क्लोरप्रोपामाइड।

६. एनाल्जेसिक, जैसे—फेनिल बूटाजोन, इण्डोमेथासिन, पैरासिटामोल।

७. एण्टी-थायराइड, जैसे—थायोयूरासिल।

(३) **आन्तरिक विष** (Internal toxins)—कई अवस्थाएँ या रोग ऐसे है जिनमें शरीर के अन्दर ही विष उत्पन्न होकर यकृत् की सेल्स में शोथ उत्पन्न कर देते हैं। जैसे—गर्भावस्था में उत्पन्न विष जीर्ण हृदयरोग (Chronic cardiac disease) में रक्त-संचार कम होना।

रोग के प्रकार (Types of disease)—यकृत्-शोथ (Hepatitis) मुख्य रूप से २ प्रकार का होता है—

(१) तीव्र संक्रामक यकृत्-शोथ (Acute infectlous hepatitis)।

(२) अमीबा जन्य यकृत्-शोथ (Amoebic hepatitis)।

तीव्र संक्रामक यकृत्-शोथ
(Acute Infectious Hepatitis)

इसे विषाणुजन्य यकृत्-शोथ (Viral hepatitis) भी कहते हैं। क्योंकि यह एक वाइरस के संक्रमण के फलस्वरूप उत्पन्न होता है। यह एक गम्भीर रोग है, जिसमें ज्वर के साथ पीलिया (Jaundice) उत्पन्न होता है।

यह वाइरस रोगी के मल में मिलता है। यह तीन प्रकार की एजेन्सीज (Agencies) के कारण होता है।

१. टाइप 'A' वाइरस (MSI, HAV)—यह इस रोग का प्रमुख वायरस है।

२. टाइप 'B' वायरस (MS_2, HBV, SH Virus)।

३. टाइप Non A & Non B वायरस।

संक्रमण (Infections)—१. चूँकि इसका वायरस मल में मिलता है। अतः जब वही मल खाद आदि के रूप में प्रयोग किया जाता है तो सब्जियों के माध्यम से स्वस्थ मनुष्य के शरीर में यह वायरस प्रवेश कर जाता है।

२. रोगी के मल में विद्यमान वायरस जल के साथ तालाब और पोखरों

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में पहुँच कर उसके जल को संक्रमित कर देता है। जब कोई स्वस्थ व्यक्ति इस जल का प्रयोग करता है, तो उसे भी यह रोग उत्पन्न हो सकता है।

○ वायरस युक्त रोगी के मल में मक्खियाँ बैठकर अन्य व्यक्तियों के भोजन तथा जल में इन वायरसों को पहुँचा देती हैं।

○ यदि किसी घनी आबादी वाले मुहल्ले में एक व्यक्ति को रोग हो जाता है तो पूरे मुहल्ले अथवा नगर में फैल जाता है। ○ कभी-कभी यह रोग जानपदिक (Epidemic) रूप ले लेता है। पिछले कुछ वर्षों में यह रोग दिल्ली, बम्बई तथा भारत के अन्य नगरों में फैल चुका है और सैकड़ों व्यक्तियों की जाने चली गई हैं।

○ यह रोग छोटे बच्चों में तथा किशोरावस्था में अधिक होता है और ४०-४५ वर्ष की आयु के पश्चात् साधारणतया लोग इससे प्रभावित नहीं होते। कभी-कभी वयस्क भी इसकी चपेट में आ जाते हैं। वयस्कों में यह अधिकतर उग्र रूप धारण कर लेता है। ○ विगत वर्षों में भारत में एपीडेमिक रूप में इसके फैलने से अधिकांश मृत्युदर वयस्कों की ही थी।

संक्रमण का अन्य रूप—टाइप-३ वायरस के द्वारा जो यकृत् शोथ हो जाता है वह सीरम हेपेटाइटिस (Serum hepatitis) कहा जाता है। यह जीवाणु रोगी के रक्त में विद्यमान रहते हैं और ऐसे रोगी से लिया गया रक्त 'ब्लड ट्रान्सफ्यूजन' के द्वारा यदि किसी अन्य व्यक्ति को दिया जाये तो यह जीवाणु उसे भी रोग-ग्रस्त बना देते हैं।

विकृति-विज्ञान (Pathology)—संक्रमण के परिणामस्वरूप यकृत् की कुछ कोशिकाओं में परिगलन (Necrosis) आरम्भ हो जाता है। इसका विशेष स्थान लोब्स के बीच वाली कोशिकाएँ होती हैं। इस प्रकार खण्डों के मध्य भाग में 'नेक्रोसिस' का क्षेत्र बन जाता है। शेष स्थान सही बना रहता है। परिणामतः रोग के ठीक होने पर नष्ट हुई कोशिकाओं का पुनर्जनन हो जाता है और यकृत् अपनी स्वाभाविक स्थित में आकर विधिवत् कार्य करने लगता है।

अग्रिम कार्य-प्रणाली—शोथ युक्त कोशिकाएँ लोब्स के भीतर की पित्त की सूक्ष्म नलिकाओं पर दबाव डालती हैं, जिससे पित्त का संवहन नहीं हो पाता है और वह ड्यूडेनम में न पहुँचकर सीधा रक्त में मिल जाता है, जिससे पीलिया रोग उत्पन्न हो जाता है।

संचय-काल (Incubation period)—३-५ सप्ताह का होता है। इसके बाद रोग का आक्रमण शनैः-शनैः प्रारम्भ होता है।

लक्षण एवं चिह्न (Symtoms & signs)—इस रोग का लक्षणात्मक चिह्न ३ चरणों में बाँटा जाता है। प्रत्येक चरण लगभग १ सप्ताह का होता है। यह अवधि कम या अधिक भी हो सकती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. प्रथम चरण—इसे पीलिया-पूर्व अवस्था (Pre-icteric stage) भी कहते हैं।

२. द्वितीय चरण—इसे पीलिया अवस्था (Icteric stage) भी कहते हैं।

३. तृतीय चरण—इसे सामान्यावस्था (Convalescent stage) भी कहते हैं।

(१) प्रथम चरण (Pre-icteric stage)—इसे प्रोड्रोमल फेज (Prodromal phase) भी कहते हैं। इस अवस्था में निम्नलिखित लक्षण एवं चिह्न मिलते हैं—

१. अरुचि (Anorexia)—यह एक प्रमुख लक्षण है। इसमें रोगी की भूख मर जाती है। यहाँ तक कि भोजन को देखते ही रोगी को उल्टी-सी होने लगती है। दिन में अनेकों बार चाय पीने वाले व्यक्ति को भी चाय के प्रति अरुचि हो जाती है। सिगरेट पीने वाले व्यक्ति को सिगरेट से सख्त नफरत हो जाती है।

नोट—इन लक्षणों से युक्त यदि कोई रोगी चिकित्सक के पास आये और उससे पूछने पर यदि यह पता चले कि पिछले १ महीने के अंदर उसके निवास स्थान पर अथवा मुहल्ले के आस-पास में किसी को पीलिया (Jaundice) हुआ है, तो इस बात की प्रबल सम्भावना होती है कि वह संक्रामक पीलिया की पकड़ में आ चुका है।

२. सम्पूर्ण शरीर में हलचल और बेचैनी की उपस्थिति।

३. व्याकुलता, उत्क्लेश और कभी-कभी वमन की उपस्थिति।

४. कुछ रोगियों में प्रवाहिका का भी लक्षण मिलता है।

५. रोगी को प्रायः हल्का शीत लगकर ज्वर आता है। ज्वर ३८°–३९° सें० (१००° से १०३° फा०) तक रहता है। ३ से ७ दिन में ज्वर समाप्त हो जाता है।

६. दक्षिण अधःपर्शुक (Right hypochondriac region) में रोगी को पीड़ा प्रतीत होती है।

७. शूल तथा पीड़ा सम्पूर्ण शरीर में परिलक्षित होती है।

८. ऊपरी श्वसन-संस्थान (Upper respiratory tract) में संक्रमण की उपस्थिति।

○ एनोरेक्सिया इसका प्रमुख लक्षण होता है।

○ मिलती एवं कै तथा एक समय अतिसार की उत्पत्ति।

९. शिरःशूल (Frontal headache)।

परीक्षा में—१. तापक्रम बढ़ा हुआ मिलता है।

२. नाड़ी ट्रेकीकार्डिया को प्रदर्शित करती है।

३. पीलिया (Jaundice) अनुपस्थित रहता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—इसमें शरीर का पीलापन जो मुख्य रूप से आँखों में देखा जाता है और जो महत्त्वपूर्ण लक्षण है, प्रारम्भ नहीं होता है।

४. इस सप्ताह में रोगी का वजन २½ किलो तक घट जाता है।

५. सरवाइकल तथा इपीट्रोक्लियर लिम्फेडीनोपेथी उपस्थित मिलती है। अर्थात् ग्रीवा की लसग्रन्थियाँ परिवर्धित मिलती हैं।

६. यकृत् स्पर्श में नहीं आता है (Liver is not palpable)। किन्तु गहराई तक स्पर्शन (Palpation) करने पर वह कठोर मिलता है। अर्थात् अधिक दबाने पर उसमें दाब-वेदना (Tenderness) अवश्य मिलती है।

७. प्लीहा (Spleen) मुलायम प्रतीत होती है। उसमें वृद्धि मिलती है तथा दाब-वेदना पायी जाती है।

निदानात्मक दृष्टि—○ उपरोक्त लक्षणों में भूख का एकदम बन्द हो जाना और सदैव जी मिचलाना रोग-निदान की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण लक्षण है।

(२) द्वितीय चरण—अर्थात् पीलिया अवस्था (Icteric stage)—इसे वेरीएबिल ड्यूरेशन (Variable duration) भी कहते हैं। यह अवस्था प्रायः संक्रमण रहित होती है, जो सामान्यतः अगले सप्ताह से प्रारम्भ हो जाती है। इसमें निम्न लक्षण मिलते हैं—

१. इस अवस्था का प्रमुख लक्षण पीलिया (Jaundice) का उत्पन्न होना है। इस लक्षण के उत्पन्न होने पर रोग का निश्चित निदान हो जाता है।

२. इस अवस्था में ज्वर प्रायः कम हो जाता है।

३. अरुचि, मितली तथा वमन आदि निरन्तर बने रहते हैं।

४. मूत्र पीला हो जाता है। इसके अतिरिक्त त्वचा तथा आँखें भी पीली दिखलाई पड़ती हैं।

५. दुर्बलता बराबर बनी रहती है।

६. किसी-किसी रोगी के शरीर में खुजली भी होती है।

परीक्षा में—१. तापक्रम नार्मल मिलता है।

२. पीलिया की उपस्थिति मिलती है।

३. नाड़ी हृत्-मन्दता (Bradycardia) को दर्शाती है।

४. यकृत् परिवर्धित मिलता है। उसमें दाब-वेदना (Tenderness) विशेषरूप से पायी जाती है।

५. इस अवस्था में ३०% रोगियों में प्लीहा भी स्पर्श-योग्य (Palpable) मिलती है।

६. परीक्षा में मल का रंग सफेद मिलता है।

नोट—○ इस सप्ताह में यह नोट करने की आवश्यकता है कि क्या रोगी को पीलिया का रोग गहरा हो जाता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ इस सप्ताह में पहली बार रोगी अथवा उसके सम्बन्धियों को उसकी आँखें पीली देखकर पीलिया का संकेत मिलता है।

○ दोनों अवस्थाओं अर्थात् 'पीलिया-पूर्व रूप' और 'पीलिया अवस्था' में लगभग ४ से ६ सप्ताह का समय लग जाता है।

(३) तृतीय चरण—(Convalescent stage)—यह चरण लगभग तीसरे सप्ताह में प्रारम्भ होता है। इस अवस्था में पीलिया के लक्षण क्रमशः कम होते जाते हैं। दुर्बलता, शक्तिहीनता, क्षुधा (Appetite) लौट आती है। मूत्र भी रंगहीन होने लगता है। यकृत् भी घट कर सामान्य अवस्था में आ जाता है। इस सप्ताह में रोगी स्वस्थ हो जाता है और वह सामान्य दिनों की तरह काम-काज में व्यस्त हो जाता है। इस सप्ताह में शरीर का पीलापन समाप्त हो जाता है।

कोर्स—इसका सम्पूर्ण कोर्स लगभग ४-६ सप्ताह में समाप्त हो जाता है।

स्मरण रखने योग्य बातें—१. लगभग ९९ प्रतिशत रोगियों में रोग का इतिहास उपरोक्त प्रकार का होता है। शेष १ प्रतिशत की मृत्यु हो जाती है। ○ उपरोक्त चित्र उस दशा में है जब रोगी का कोई उपचार न किया जाय।

२. कुछ रोगियों में रोग का आक्रमण हलका होता है। उनमें लगभग १ सप्ताह तक भूख का मारा जाना तथा जी मिचलाने के लक्षण मिलते हैं और पीलिया उत्पन्न होने से पूर्व ही रोग अपने आप समाप्त हो जाता है।

३. परन्तु इसके विपरीत कुछ रोगियों में सभी लक्षणों से पूर्ण रूप से मुक्ति नहीं मिलती है, क्योंकि यकृत् की कोशिकाओं का पुनर्जनन नहीं हो पाता है। प्रत्युत् नष्ट हुई कोशिकाओं के स्थान पर एक ऐसा ऊतक (Tissue) बन जाता है, जिसे फाइब्रस टिसू कहते हैं। यह ऊतक शनैः-शनैः विस्तृत क्षेत्र में फैल जाता है और आस-पास की सामान्य कोशिकाओं को नष्ट करता जाता है और अन्त में जीर्ण तथा गम्भीर स्थिति उत्पन्न हो जाती है, जिससे यकृत् का सिरोसिस (Cirrhosis of liver) हो जाता है। इसके उत्पन्न होने से यकृत् की क्रियाशीलता समाप्त होने लगती है और पुनः जी मिचलाना, वमन, उदर-शूल, अतिसार, कामला आदि लक्षण उत्पन्न होने लगते हैं। कुछ समय बाद रोग के अधिक बढ़ने पर रोगी की मृत्यु हो जाती है। क्योंकि इस बढ़े ऊतक के लिए अभी तक कोई औषधि उपलब्ध नहीं है, जो इस वृद्धि को रोक सकें।

यह अवस्था उन रोगियों में आती है जिनका यकृत् अत्यधिक मद्यपान करने तथा भोजन में प्रोटीन की कमी आदि कारणों से पहले से ही दुर्बल होता है।

बीमारी का क्रम—अधिकांश रोगियों में पीलिया के लक्षणों का उपशय १ सप्ताह में होने लगता है। इस प्रकार से रोगी सामान्यतः ३ सप्ताह में रोग-मुक्त हो जाता है। कभी-कभी पीलिया के शान्त होने में ३-४ सप्ताह का भी समय लग जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकार—वायरल हेपेटाइटिस के निम्न प्रकार होते हैं—

१. एक्यूट इक्टेरिक हेपेटाइटिस (Acute icteric hepatitis)—यह सर्वाधिक मिलने वाला प्रकार है। जिसका वर्णन ऊपर किया जा चुका है।

२. एक्यूट एनिक्टेरिक हेपेटाइटिस (Acute anicteric hapatitis)—इसमें पीलिया तथा उसके लक्षण कम होते हैं। यकृत् बढ़ा हुआ तथा स्पर्शासह्य (Tender) होता है।

३. फल्मिनेण्ट हेपेटाइटिस (Fulminant hepatitis)।

४. रिलैप्सिंग हेपेटाइटिस (Relapsing hepatitis)।

५. कोलेस्टेटिक हेपेटाइटिस (Cholestatic hepatitis)।

६. रेयर-टाइप हेपेटाइटिस (Rare type hepatitis)।

○ क्रॉनिक परसिस्टेण्ट हेपेटाइटिस अर्थात् निरन्तर चलने वाला चिरकारी यकृत् शोथ।

○ क्रॉनिक एक्टिव हेपेटाइटिस।

Essential of diagnosis—1. Anorexia, nausea, vomiting, malaise symptoms of upper respiratory throat infection or 'Flu'-like syndrome, aversion to smoking.

2. Fever, enlarged tender liver, jaundice.

3. Normal to low white cell count; abnormal liver tests and liver function.

4. Liver biopsy shows characteristic hepatocellular necrosis and mononuclear infiltration.

5. Frontal headache, malaise and disinclination for any worke are usually present.

6. A feeling of uneasiness or weight in the epigastrium is sometimes accompanied by actual pain.

7. Constipation is much more common than diarrhoea.

8. Jaundice occurs between 1 to 8 days from the start of the illness.

9. At the onset of jaundice the temperature usually settles to normal and the appetite simultaneosly returns.

10. At the early stage the liver is often enlarged and firm.

11. Occasionally the skin rashes of mascular, urticarial or purpuric type occur even in the pre-icteric stage.

12. The urine is concentrated and contains bile pigment and urobilin. The 'Vanden Bergh Test' gives at first a biphasic and later an indirect positive result.

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

13. Leucocytosis never occurs and a polymorph leucopenia is usual.

विस्तृत निदान (Diagnosis)—○ इसके निदान में एकमात्र चिह्न शरीर का पीलापन होता है, जो आँखों में स्पष्ट दिखलाई देता है। इसके लिए रोगी को दिन के समय धूप में खड़ा कर उसका चेहरा धूप की तरफ करके ऊपर की पलक उठाकर रोगी से नीचे को देखने को कहा जाता है। विद्युत् प्रकाश में आँख का पीलापन प्रायः नहीं दिखलाई देता।

○ यकृत् बढ़ा हुआ होता है तथा कुछ रोगियों में यकृत् को दबाने पर पीड़ा होती है।

नोट—इस प्रकार से पीलापन प्रकट हो जाने पर रोग के निदान में कोई कठिनाई नहीं होती है। परन्तु चिकित्सा की दृष्टि से वर्ण में परिवर्तन आने से पूर्व रोग को ठीक-ठीक पहिचानना आवश्यक होता है। इसके लिए निम्न परीक्षाएँ आवश्यक होती हैं—

१. मूत्र-परीक्षा (Urine test)—एल्ब्युमिन (Albumin), पित्त लवण (Bile salt) एवं पित्त वर्णक (Bile pigments) मिलते हैं। कन्वल-सेन्स में मूत्र के अन्तर्गत 'यूरोबिलिनोजन' मिलता है।

२. लिवर फंक्शन टेस्ट (Liver function test)—सीरम बिलीरूबिन (Serum bilirubin) का स्तर सामान्य से अधिक (२ मि० ग्रा०/dl) मिलता है।

३. S. G. O. T. तथा S. G. P. T. स्तर बढ़ा हुआ मिलता है।

४. L. D. H. बढ़ा हुआ रहता है।

कोलेस्टेटिक हेपेटाइटिस में—एल्कलाइन फास्फेटेज स्तर बढ़ा हुआ मिलता है।

नान-स्पेसिफिक फ्लोकूलेशन टेस्ट—पीजीटिव (+) मिलता है।

३. लिवर बायोप्सी—जैसा कि ऊपर बतलाया गया है, लिवर में पैथो-लॉजिकल परिवर्तन मिलते हैं।

४. रक्त-परीक्षा में—श्वेत कोशिकाओं की अल्पता (Leucopenia) मिलती है। लसीका कोशिकाओं की संख्या अपेक्षाकृत अधिक होती है।

५. थायमोल टर्बीडिटी (Thymol turbidity)—पोजीटिव (+) होती है।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—इसका निम्न रोगों से विभेद करना पड़ता है—

१. औषधिजन्य कामला।

२. इन्फेक्टिव मोनोन्यूक्लीओसिस।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. वैल्स डिजीज।
४. सीरम हेपेटाइटिस।

उपद्रव (Complications)—१. पुनरावर्तन (Relapse)।
२. फल्मिनेण्ट हेपेटिक नेफ्रोसिस।
३. हेपेटिक कामा (Hepatic coma)।
४. पोस्ट-नेक्रोटिक लिवर सिरोसिस।
५. पोस्ट-हेपेटाइटिस सिण्ड्रोम।
६. हीमोरेजिक पैंक्रिएटाइटिस।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—वायरस द्वारा उत्पन्न होने के कारण रोग की सटीक चिकित्सा अभी तक निश्चित नहीं हो पायी है। सामान्य स्वरूप का कष्ट होने पर प्रायः निम्नलिखित उपचार से लाभ हो जाता है—

℞ सीलिन (Celin) ५०० मि० ग्रा०
लिट्रीसान या मिओनिन १ गोली
मात्रा—१-१ गोली दिन में ३ बार १०-१५ दिन तक।

साथ ही—℞

सोडाबाईकार्ब	६०० मि० ग्रा०
सोडा साइट्रस	६०० मि० ग्रा०
पोटै० साइट्रस	६०० मि० ग्रा०
टिं० कार्ड को०	१० बूँद
इलिक्सिर 'बी'-काम्प्लेक्स	१ ड्राम
इक्स्ट्रेक्ट ग्लिसराइजा लि०	१ ड्राम
सीरप ग्लूकोज	१ ड्राम
इन्फ्यूजन जेन्सियन	१ औंस
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।

एवं ग्लूकोज २५%—५० मिली० + विटामिन-सी ५०० मि० ग्रा० दोनों मिलाकर I/V दिन में १ बार १० दिन तक दें।

नोट—इसी के साथ निओमेथिडिन १० मिली० तक मिलाया जा सकता है।

रोग के अधिक तीव्र होने पर—

℞ टेट्रासाइक्लीन (Tetracycline) १०० मि० ग्रा०

१ मात्रा प्रति १२ घण्टे के अन्तर पर मांसपेशीगत ४ दिन तक। तत्पश्चात् २५० मि० ग्रा० की १ मात्रा मुख द्वारा प्रति ४ घण्टे पर ४ दिन तक।

पीलिया की गम्भीर अवस्था में अथवा यकृत् के अपजनन की स्थिति में—

℞ ग्लूकोज + विटामिन-सी + विटामिन-के पर्याप्त मात्रा में I/V दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि रोगी का जी अधिक मिचलाता हो तो—

℞ स्टेमेटिल या सीक्विल अथवा टेबलेट एवोमिन (Tab. Avomin)

मात्रा—१ गोली आहार लेने से १ घण्टा पूर्व ।

नोट—आवश्यकता पड़ने पर वयस्कों में ४ गोली तक दिन भर में दी दी जा सकती है ।

अनिद्रा की स्थिति में—

℞ टेबलेट डायजीपाम ५ मि० ग्रा०

व्या० नाम—कम्पोज या कालमोड आदि ।

मात्रा—वयस्कों को १-२ गोली रात्रि में सोने से पूर्व ।

खुजली की स्थिति में—

℞ 'लैक्टोकैलामीन' या 'कैलाड्रिल लोशन' का स्थानीय प्रयोग करें ।

अधिक वमन की स्थिति में यदि रोगी जल भी न ले सके तो—

१०% ग्लूकोज I/V ड्रिप द्वारा दें ।

२४ घण्टे में ५०० मिली० की ४-५ बोतलें सामान्यतः पर्याप्त होती हैं । रोग की प्रत्येक अवस्था में—विटामिन 'बी'-काम्प्लेक्स तथा विटामिन-सी का प्रयोग मुखमार्ग से यथोचित मात्रा में कराना चाहिए ।

साथ ही—लिव-५२ टेबलेट २ गोली दिन में ३ बार १-२ माह तक ।

एवं पेरीएक्टिन (Periaction) ४ मि० ग्रा० दिन में ३ बार ।

विमग्रान टेबलेट (Vimgran tab.) १ गोली दिन में २ बार ।

यदि पीलिया (Jaundice) उपस्थित हो और वृद्धि पर हो तो—

℞ कोर्ट्रीकोट्रोफिन (Cotricotrophin) अथवा प्रेडनीसोलोन ।

मात्रा—२ गोली (५ मिग्रा०) दिन में ३ बार ५ दिन तक । तत्पश्चात्—

१ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक । इसके पश्चात्—

१ गोली दिन में २ बार ५ दिन तक । तत्पश्चात्—

१ गोली दिन में २ बार ५ दिन तक ।

प्री-कोमा (Pre-coma) की स्थिति में—

℞ नियोमाइसिन । पेरोमोमाइसिन (Paromomycin) का प्रयोग करें ।

बेचैनी की स्थिति में (In condition of restlessness)—

℞ पेरिल्डीहाइड ५ मिली० मांसपेशीगत इञ्जे० द्वारा ।

यदि यह अधिक गम्भीर न हो तो—

℞ ट्राईक्लोरिल २५० मि० ग्रा० दिन में ३ बार दें ।

रक्तस्राव की स्थिति में—

℞ कैपलिन ५ मि० ग्रा० नित्य मांसपेशीगत ।

गम्भीर स्वरूप की मितली तथा कै में—

℞ इञ्जेक्शन ५% ग्लूकोज २०० मिली० +

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इञ्जे० विजेक्टाल (Bijectal) २ मिली० +
इञ्जे० रिडोक्सोन (Inj. Redoxon) ५०० मि० ग्रा० +
इञ्जे० केपलिन (Inj. Keplin) १० मि० ग्रा०

साथ ही—टेबलेट सर्बेक्स-टी अथवा बोकोसूल्स १ गोली प्रतिदिन ।

जो व्यक्ति सम्पर्क में आ चुके हों, उनमें बचाव हेतु—

℞ इञ्जे० इम्युनोग्लोबुलिन (Inj. Immunoglobulin)

१०%—०.०२ मिली० (०.२५ मिली०) / प्रति किलो शरीर भार पर मांसपेशीगत ।

नोट—यह कूरेबैल-देहली-२४ १ और ३ मिली० के एम्पुल में आता है ।

५ साल के बच्चों को—२ मिली० / ५ माह तक के शिशुओं को किसी इञ्जेक्शन की आवश्यकता नहीं पड़ती ।

नोट—इसके १ इञ्जेक्शन से ४-६ माह तक की रक्षा हो सकती है ।

हेपेटाइटिस के रोगी को आवश्यक चेतावनी—

१. एक वर्ष तक मद्यपान का पूर्ण निषेध ।
२. रोगी को नार्मल आहार पर रखें ।
३. मल्टी विटामिन्स (Multi vitamins) का प्रयोग ।

निषेध—मद्यपान, हेपेटोटॉक्सिक औषधियाँ जैसे—एस्प्रिन, आइसोनियाजिड, मेथिल डोपा, पैरासिटामोल, सिटोटॉक्सिक औषधियाँ ।

नोट—कॉर्टीकोस्टेराइड्स का प्रयोग बिलकुल न करें ।

क्रॉनिक एक्टिव हेपेटाइटिस
(Chronic Active Hepatitis)

१. जब तक लक्षण गम्भीर न हों, विश्राम आवश्यक नहीं है ।
२. आहार पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है ।
३. मद्यपान तथा एस्प्रिन का निषेध ।
४. ℞ प्रेडनीसोलोन (Prednisolne)

प्रथम सप्ताह—१० मि० ग्रा० दिन में ३ बार ।
द्वितीय तथा तृतीय सप्ताह—मात्रा घटाते हुए १०-१० मि० ग्रा० नित्य दें ।
कोर्स—चिकित्सा को निरन्तर २ वर्ष तक चलाना चाहिए ।

बचाव हेतु (Prophylaxis)—

इन्फेक्शियस हेपेटाइटिस (Infectious hepatitis) के सम्पर्क में आये व्यक्तियों को—

℞ गामा ग्लोब्युलिन का मांसपेशीगत इञ्जेक्शन दें ।
मात्रा—२० किलो शरीर-भार से नीचे वाले को १ मिली० ।
२० किलो शरीर-भार से ऊपर वाले को २ मिली० ।

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—यह १०% सोल्युशन के रूप में १ और ३ मिली० के एम्पुल में आता है।

(२) आहार चिकित्सा—

१. शीघ्र पचने वाला आहार जो कार्बोहाइड्रेट्स तथा प्रोटीन में उच्च (High) हो तथा चिकनाई (Fat) में कम हो।

२. रोग की बढ़ी हुई अवस्था अर्थात् पीलिया की स्थिति में—फलरस तथा ग्लूकोज का प्रयोग करें। नित्य ८,००० कैलोरी के लगभग आहार लें।

(३) हेपेटाइटिस की सामान्य चिकित्सा—

१. रोगी को पूर्ण विश्राम देना चाहिए।

२. उबले हुए पानी में ग्लूकोज, सोडाबाईकार्ब मिलाकर पर्याप्त मात्रा में पिलाना चाहिए।

३. यकृत् प्रदेश पर सेंक करना (Fommentation) तथा पर्याप्त तरल के सेवन से मूत्र की मात्रा बढ़ाना हितकारी होता है।

औषधि-चिकित्सा के सम्बन्ध में विद्वानों के विचार—

○ विद्वानों का कथन है कि इस रोग में रोगी को किसी भी प्रकार का लिवर एक्स्ट्रेक्ट, विटामिन का मिश्रण, भूख बढ़ाने वाली औषधियाँ, एण्टीबायोटिक (Antibiotic) आदि के साथ-साथ यथासम्भव प्रेडनीसोलोन का भी सेवन नहीं कराना चाहिए। अर्थात् इस प्रकार की औषधियों का पूर्ण निषेध करना चाहिए। उन्होंने 'कैं' और 'मितली' के सम्बन्ध में स्टेमेटिल या सीक्विल तथा २५% ग्लूकोज इञ्जेक्शन देने की सिफारिश की है।

○ लोगों का यह भी कथन है कि वायरसों द्वारा क्षतिग्रस्त यकृत् को प्रकृति स्वयं ठीक कर देती है। अतः प्रकृति को सहायता पहुँचाने के लिए रोगी को उस समय तक विश्राम करना चाहिए, जब तक कि पीलिया समाप्त न हो जाये।

नोट—विश्राम शय्यारूढ़ होकर ही करना कोई आवश्यक नहीं है।

हेपेपाइटिस के निम्न लक्षणों से युक्त रोगी का जीवन संकटमय होता है—

१. जिस रोगी को कम्पनयुक्त दौरे आने लगें।

२. निद्रा का क्रम बदल जाये अर्थात् रोगी दिन में सोये और रात में जागे।

३. उसकी स्मृति समाप्त हो जाये और वह अंट-संट बकने लगे।

४. रोगी सदैव उत्तेजित रहता हो।

५. रोगी अर्धनिद्रित-सा दिखलाई देता हो। इसके बाद वह मूर्छित-सा हो जाता हो।

यह हेपेटिक कोमा (Hepatic coma) की स्थिति है। यह प्रायः भाग्यहीन रोगियों में मिलता है और प्रायः उनकी मृत्यु हो जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—यकृत् कोमा को रोकने का कोई विशिष्ट उपाय नहीं है। किसी बड़े अस्पताल में विशेषज्ञों की देख-रेख में बड़े प्रयत्नों के साथ रोगी के बचने की कुछ आशा की जा सकती है।

विशेष चेतावनी—उपर्युक्त संकट युक्त लक्षणों के उपस्थित होने पर रोगी के अभिभावकों को सचेत करके उसे किसी सम्पन्न अस्पताल में भर्ती करा देना चाहिए।

रोग-मुक्ति के पश्चात्—पीलिया (Jaundice) से युक्त होने के पश्चात् भी शारीरिक दुर्बलता की दृष्टि से डेढ़-दो माह तक रोगी पूर्ण स्वस्थ नहीं हो पाता है। रोग-निवृत्ति के पश्चात् भी पर्याप्त समय तक रोगी को संयमित जीवन बिताना चाहिए। आयरन, मल्टी-विटामिन्स तथा ग्लूकोज का पर्याप्त मात्रा में सेवन अपेक्षित है।

हेपेटाइटिस में प्रयुक्त होने वाली अन्य पेटेण्ट मेडिसिन—

टेबलेट (Tablets)—कोलेक्ट्रिना, पेण्टेरिक कम्पाउण्ड टेबलेट, मिथियोनिन, लिट्रीसान (Litrisan), निओमेथिडिन, मिक (Mic), नीओनेकलेक्स, मियोनाइन मिलीकार्टिन।

लिक्विड (Liquids)—मिथियोनिन विद कोलीन, हिपोकोलीन, थिरालीपोइड।

पेटेण्ट मिश्रित योग—

१. ℞ नीओ-मेथिडीन (नीओ फार्मा)	१ गोली
लिव-५२ (हिमालया कं०)	१ गोली
सीलिन (ग्लैक्सो) १०० मिग्रा० टेबलेट	२ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २–३ बार।	१ मात्रा।
२. ℞ मेक्राफोलीन आयरन (ग्लैक्सो)	१ गोली
'बी' क्रोफेराल (क्रुक्स)	१ गोली
सीलिन १०० मि० ग्रा०	२ गोली
ऐसी १ मात्रा प्रातः-सायं भोजन के बाद।	१ मात्रा।

लौह की विशेष कमी होने पर अनीमिया में—प्लेबेक्स (Plebex) इलिक्सिर (वाईथ) और प्लास्ट्यूल्स (Plastules) १–१ चम्मच २ गुना जल के साथ भोजनोपरान्त दें।

अथवा—फोल्वरोन-एफ (Folvron-F) १–२ कै० दिन में २–३ बार भोजन के बाद।

○ **अपनी दृष्टि में**—'संक्रामक पीलिया' एक अत्यन्त प्रचलित रोग है। चिकित्सक की जनरल प्रेक्टिस में इसके रोगी प्रायः आते रहते हैं। अतः चिकित्सक की सुविधा के लिए इसका विस्तृत वर्णन किया गया है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ **'संक्रामक पीलिया'** हेपेटाइटिस का सहवर्ती रोग है, जो हेपेटाइटिस में अवश्यम्भावी है।

सेविल्स सिस्टम ऑफ क्लिनिकल मेडिसिन के अनुसार इन्फेक्टिव हेपेटाइटिस की चिकित्सा-व्यवस्था—

१. रोगी को १ सप्ताह तक शय्या पर रखना चाहिए।

२. जब तक रोगी की भूख वापिस न आ जाये तब तक मुख्य रूप से तरल आहार (फल-रस), पर्याप्त मात्रा में ग्लूकोज या सक्रोज (Sucrose) एवं एनिमल प्रोटीन देना चाहिए। जलन पैदा करनेवाले पदार्थ, फैट्स तथा समस्त प्रकार के एल्कोहल का पूर्ण निषेध करें।

इन्सुलिन (Insulin) ५ यूनिट दिन में १ बार इञ्जेक्शन रूप में दें। ग्लूकोज सैलाइन को रेक्टल ड्रिप (Rectal drip) के रूप में दें। लिवर और आँतों के कंजेशन को दूर करने के लिए—Brisk mercurial purgative तत्पश्चात् सैलाइन सप्ताह में २ बार।

विस्फोटक (Fulminant) केसिस में जब पर्याप्त वमन हो रहा हो—

१०% डेक्स्ट्रोज + २०० मि० ग्रा० हाइड्रोकार्टीसोन मिलाकर I/V प्रति २४ घण्टे पर दें। तथा ४–६ माह तक मद्यपान का पूर्ण निषेध करें।

बचाव हेतु (Prophylaxis)—गामा-ग्लोबुलिन (Gammaglobulin) का इञ्जेक्शन दें। इससे ६ माह तक की इम्युनिटी (Immunity) प्राप्त होती है □

पाचन-संस्थान के रोग **1/30**

पित्ताशयशोथ
(Cholecystitis)

पर्याय—पित्ताशयशोथ, पित्ताशयशूल।

परिचय—किन्हीं कारणों से पित्ताशय में शोथ की उत्पत्ति होना पित्ताशय शोथ (Cholecystitis) कहलाता है।

प्रकार (Types)—यह २ प्रकार का माना गया है—

१. तीव्र पित्ताशयशोथ (Acute cholecystitis)।

२. चिरकारी पित्ताशयशोथ (Chronic cholecystitis)।

तीव्र पित्ताशयशोथ
(Acute Cholecystitis)

परिचय—पित्ताशय में तीव्र शोथ की अवस्था को तीव्र पित्ताशय शोथ (Acute cholecystitis) कहते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Acute cholecystitis may be catarrhal, suppurative (empyema of the gall-bladder) or gangrenous according to the severity of the infection.

तीव्र पित्ताशयशोथ भी २ प्रकार का होता है—

(१) नान अवरोधी पित्ताशयशोथ
(Non obstouctive cholecystitis)

रोग के कारण—१. विभिन्न प्रकार के जीवाणुओं का संक्रमण ।

२. सान्द्रित पित्त के रासायनिक क्षोभ के रूप में ।

इस प्रकार का शोथ बिना जीवाणु-संक्रमण के होता है । पित्ताशयशोथ के ५०% केस पित्त की सान्द्रता (Concentration) के कारण होता है ।

(२) अवरोधी तीव्र पित्ताशयशोथ
(Obstructive acute cholecystitis)

कारण—इसका कारण अश्मरी (Stones) हो सकता है । अश्मरी पित्त के रास्ते को बन्द कर देती है, जिससे पित्त बाहर नहीं निकल पाता है और वह गाढ़ा हो जाता है । यह सान्द्रित पित्त एक रासायनिक क्षोभ के रूप में कार्य करके पित्ताशय में जीवाणुहीन शोथ उत्पन्न करता है । शोथ में बाद को किसी जीवाणु के आक्रमण से रोग और तीव्र हो जाता है ।

विकृत-विज्ञान (Pathology)—शोथयुक्त पित्ताशय लाल-भूरे रंग का मिलता है । इसकी प्राचीरें मोटी हो जाती हैं ।

लक्षण एवं चिह्न (Symptoms & signs)—

१. यह रोग ४०–५० वर्ष की स्थूल शरीर वाली एवं बहु-प्रसवा स्त्रियों में विशेषरूप से मिलता है । जिनको पहले भी ऐसे ही मृदु आक्रमण कई बार हो चुके होते हैं ।

२. **पीड़ा** (Pain)—इसका आक्रमण अकस्मात् होता है । उदर में दाहिनी ओर यकृत् के नीचे पित्ताशय-प्रदेश में निरन्तर तीव्र पीड़ा होती है, जो पीछे पीठ में या ५०% रोगियों में स्कन्धफलकों के बीच में फैल जाती है । कुछ रोगियों में पीड़ा दाहिने स्कन्ध में भी प्रतीत होती है । कभी-कभी पीड़ा शूल के समान होती है । उदर के ऊपरी भाग में दाहिनी ओर नवें कोस्टल कार्टीलेज के समीप दबाने से पीड़ा होती है तथा इस स्थान की उदर प्राचीर कड़ी हो जाती है ।

३. **ज्वर** (Pyrexia)—तापक्रम रोग की तीव्रावस्था के अनुसार होता है । मृदु रूप में हल्का ज्वर रहता है । किन्तु तीव्रावस्था में १०१ से १०३° फा० तक हो जाता है ।

CC-0. Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. **वमन एवं मितली** (Vomiting & nausea)—रोग के मृदु स्वरूप में केवल व्याकुलता रहती है। किन्तु रोग की उग्रावस्था में जी मिचलाता है तथा वमन भी होता है।

नोट—○ इसमें वमन एक विशेष लक्षण के रूप में प्रकट होता है, जो अवरोध का सूचक होता है।

५. **नाड़ी** (Pulse)—तीव्र तथा क्षीण होती है।

६. **मलावरोध** (Constipation)—रोगी को प्रायः मलावरोध रहता है।

७. **दाब-वेदना** (Tenderness)—

(i) मृदुस्वरूप में दाब-वेदना मात्र दक्षिण अधःपर्शुक-प्रदेश में मिलती है।

(ii) उग्र शोथ की स्थिति में समस्त पित्ताशय का प्रदेश कठोर होता है।

८. **यकृत् की स्थिति**—यकृत् स्पर्श-योग्य (Palpable) होता है। विकृति के साथ में 'यकृत् शोथ' भी होता है।

९. **कामला** (Jaundice)—इसके कुछ-कुछ चिह्न मिल सकते हैं। जब पित्तवाहिनी में अवरोध होता है तो कामला विशेषरूप से परिलक्षित होता है।

१०. **उदरीय आध्मान** (Abdominal distension)—प्रायः रोगी में यह उपस्थित मिलता है। जब आध्मान अधिक होता है, तब अन्त्रावरोध के समान लक्षण मिलते हैं।

११. **एपीगैस्ट्रिक में बेचैनी** (Epigastric discomfort)—

अन्य (Others)—१. पित्ताशय-प्रदेश पर विशेषरूप से रात में तीव्र शूल होता है।

२. सीरम बिलीरूबिन २.५ मिलीग्राम प्रतिशत से ऊपर होने पर हल्की-सी कामला मिलती है। ○ पित्ताशय पर स्पर्शाक्षमता का विशेष लक्षण होता है।

३. रोगी जो उथले साँस लेता है, शिथिल-सा होकर पड़ा रहता है।

संक्षेप में—1. Local pain in the right hypochrondrium and epigastrium.

2. Pain is spasmodic or dull and continuous & radiates through the back and right shoulder tip.

3. Tenderness in the right upper abdomen; this becomes localized below the tip of the ninth costal cartilage.

4. Nausea and vomiting.

5. Jaundice.

6. Fever and leucocytosis.

Note—Symptoms may be mild, like dyspepsia or severe with vomiting.

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिह्न (Findings) एवं लेबोरेटरी परीक्षण—

1. Tenderness and rigidity in the gall-bladder region.
2. Boa's sign is positive.
3. Gall-bladder is enlarged and very much tender.
4. Jaundice—A trace of jaundice may be present.
5. Liver may be palpable due to hepatitis in some cases.
6. Leucocystosis with high polymorph count.
7. Straight x-ray—It may detect a radio-opaque calculi.
8. मूत्र में कभी-कभी पित्त लवण (Bile salts) की उपस्थिति ।
9. अन्तःशिरा पित्तवाहिनी चित्रण (Intravenous cholangiography)—इस परीक्षा में पित्तवाहिनी तो दिखलाई देती है, किन्तु पित्ताशय नहीं दिखलाई पड़ता ।

१०. सीरम ट्रान्सएमाइनेस भी बढ़े होते हैं । विशेषरूप से S. G. P. T. बढ़ा हुआ होता है ।

उपद्रव (Complications)—१. गाल-ब्लैडर का इम्पाइमा ।
२. पेरिटोनाइटिस के साथ छिद्रीकरण (Perforation) ।
३. सब फेनिक एसिड ।
४. एक्यूट पैंक्रीएटाइटिस ।
५. एसेण्डिंग कॉलैञ्जाइटिस ।

रोग का आक्रमण शान्त हो जाता है अथवा क्रॉनिक कोलीसिस्टाइटिस में बदल जाता है । यदि पूय तथा गैंग्रीन की उत्पत्ति हो जाती है तो गाल-ब्लैडर में विदार (Rupture) हो जाता है, जिससे पेरिटोनाइटिस होकर जीवन खतरे में पड़ जाता है ।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—

१. पेप्टिक अल्सर (Peptic ulcer) से इसका भेद किया जाता है—

(i) इस रोग का शूल भोजन लेने अथवा क्षारीय ओषधियाँ लेने से शान्त नहीं होता है ।

(ii) इस रोग की वेदना पीछे स्केपुला के कोण तक जाती प्रतीत होती है ।

(iii) वमन हो जाने पर भी इस रोग का शूल शान्त नहीं होता, जबकि पेप्टिक अल्सर का शूल शान्त हो जाता है ।

(iv) इस रोग का शूल स्निग्ध आहार द्रव्यों के बन्द करने से बन्द हो जाता है ।

(v) यह शूल ४५ वर्ष की आयु के बाद होता है, जब कि अल्सर का शूल छोटी आयु में ही प्रारम्भ हो जाता है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(vi) दाहिनी पसली के नीचे अन्तःश्वास के अन्त में दबाने से रोगी को तीव्र वेदना होती है।

२. पित्ताशय कैंसर से इसका भेद कर लेना चाहिए।

विशिष्ट लक्षण (Special symptoms)—इस रोग में आमाशय में कष्ट प्रतीत होता है।

पित्ताशय में पूय की उत्पत्ति (Suppuration of the gall-bladder)—कुछ रोगियों के पित्ताशय में पूय (Pus) की उत्पत्ति हो जाती है। इस समय रोगी अति गम्भीर रूप से बीमार प्रतीत होता है। पीड़ा भी उग्र स्वरूप की होती है। कँपकँपी के साथ समय-समय पर ज्वर भी तीव्र हो जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—तीव्र पित्ताशयशोथ की चिकित्सा निम्न दो प्रकार की होती है—

(क) संरक्षी चिकित्सा (Conservative treatment)।

(ख) शल्य चिकित्सा (Operative treatment)।

(क) संरक्षी चिकित्सा
(Conservative treatment)

1. Rest in bed and easily digestible diet.

2. Anti spasmodic and analgesics—Inj. Pethidine (100 mg) are commonly given.

3. I/V drip and intermittent gastric suction may be required in case of persistent vomiting with abdominal distension or if there is dehydration.

4. Antibiotics—Broad-spectrum (Ampicillin) or combination of penicillin and streptomycin is usually tried.

5. Anti-cholinergics drugs—'Propantheline' are useful.

6. Liquid paraffin or other laxatives may relieve constipation.

7. Fat diet restricted during convalescence.

विस्तृत चिकित्सा—जब तक शल्यकर्म तत्काल आवश्यक न हो तब तक रोगी की औषधि द्वारा चिकित्सा करनी चाहिए। औषधि द्वारा चिकित्सा करते समय रोगी की अवस्था पर निरन्तर ध्यान रखना चाहिए, जिससे आवश्यकता प्रतीत होने पर तत्काल शल्यकर्म की व्यवस्था की जा सके।

१. औषधि द्वारा उपसर्ग की चिकित्सा की जाती है।

२. रोगी को जलाल्पता (डिहाइड्रेशन) से बचाया जाता है।

३. रोगी के बल की रक्षा की जाती है।

४. लक्षणों की उपयुक्त चिकित्सा करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. रोगी को तत्काल फाउलर के आसन में शय्या पर रखकर पूर्ण विश्राम कराया जाता है।

६. जब तक वमन तथा मितली बन्द न हो जाये, किसी प्रकार की औषधि तथा जल एवं आहार मुख-मार्ग से नहीं देना चाहिए।

७. रोगी का तापक्रम, नाड़ी तथा श्वसन की गति प्रति २ घण्टे पर देखना चाहिए। ○ इसकी वृद्धि 'शोथ-वृद्धि' की सूचक है। इसमें कमी होना रोगी की अवस्था में सुधार होने का संकेत है।

८. मूत्र की प्रतिदिन की मात्रा लिखकर रखनी चाहिए।

९. रोगी को आहार में केवल चाय और ग्लूकोज देना चाहिए।

१०. नियमित गैस्ट्रिक एस्पिरेशन आवश्यक है।

उपसर्ग की चिकित्सा (Treatment of infection)—संक्रमण रोकने के लिए निम्न औषधियों में से किसी का व्यवहार किया जा सकता है—

℞ इञ्जे० स्ट्रेप्टोपेनिसिलीन

मात्रा—½ ग्राम प्रतिदिन मांसपेशीगत सुग्राहिता परीक्षण (Sensitivity test) के बाद।

अथवा—कैप्सूल टेट्रासाइक्लीन ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कै० प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—कैप्सूल एम्पीसिलीन (Cap. Ampicillin)

मात्रा—५०–२०० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर ४ विभाजित मात्राओं में।

अथवा—इञ्जे० एम्पीसिलीन (Inj. Ampicillin)

मात्रा—२५०–१००० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर मांसपेशीगत; रोग की उग्रता के अनुसार।

अथवा—इञ्जे० रेस्टिक्लीन (Inj. Resteclin)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० I/V ग्लूकोज ड्रिप में।

अथवा—इञ्जे० क्लोरोमाइसिटीन (Inj. Chloromycitin)

मात्रा—१ ग्राम I/V प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—इञ्जे० लेरामाइसिन (Inj. Leramycin) अथवा गैरामाइसिन (Garramycin)

मात्रा—४० मि० ग्रा० मांसपेशीगत प्रति ८ घण्टे पर।

साथ ही—इञ्जे० ग्लूकोज सैलाइन + इञ्जे० 'बी'-काम्प्लेक्स २ मिली० की मात्रा में दें।

शूल को शान्त करने के लिए—

मृदु स्वरूप की पीड़ा में—

℞ टे० बेरालगन (Tab. Beralgan)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

तीव्र स्वरूप की पीड़ा में (In severe pain)—

℞ इञ्जे० पैथिडीन (Inj. Pathidin) अथवा मेपेरीडीन (Meperidine) अथवा डीमेरोल (Demerol)

मात्रा—५०–१०० मि० ग्रा० १ इञ्जेक्शन I/M दें।

साथ ही—पित्ताशयशोथ की चिकित्सा में 'Anti-cholinergic drugs' का प्रयोग करना चाहिए।

℞ टेबलेट प्रो-बैन्थीन (Tab. Pro-banthine)

मात्रा—१ गोली दिन में २ या ३ बार।

अथवा—कैप्सूल सिरी-बैन्थाइन (Cap. Sere-banthine)

मात्रा—१ कै० दिन में २ या ३ बार।

जलाल्पता (Dehydration) से बचाने तथा रोगी का बल क्षीण न होने देने के लिए—नार्मल सैलाइन अथवा ग्लूकोज ५% के साथ I/V अथवा गुदामार्ग (Per rectum) ४०-६० बूंद प्रति मिनट की दर से देना चाहिए।

नोट—नार्मल सैलाइन पेशीमार्ग से भी दे सकते हैं।

चेतावनी—इन औषधियों के प्रयोग के समय हृदय की अवस्था पर ध्यान रखना आवश्यक है।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment.)

(१) मलावरोध को दूर करने के लिए—

℞ क्रीमाफिन (Cremaffin) का प्रयोग करें। अथवा—

मैगनेशियम सल्फेट	४ ग्राम
टिं० जिञ्जर	०.६ मिली०
पिपरमिण्ट वाटर	३० मिली०
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा प्रातः खाली पेट दें। तत्पश्चात् 'ओलिव ऑयल' ८ मिली० भोजन के मध्य में दें।

(२) मितली एवं कै (Nausea & vomiting)—

℞ ट्राईफ्लूओपेराजीन (Trifluoperazine)

व्या० नाम—एस्केजीन (Eskazine) (नि० S. K.)

मात्रा—१ गोली (१ मि० ग्रा०) आवश्यकतानुसार।

(३) यकृत् या पित्ताशय में पीड़ा होने पर—

(i) उदर के ऊर्ध्व भाग पर 'एण्टीफ्लोजिस्टीन' या एण्टीफ्लेमीन या तीसी की पुल्टिस अथवा बर्फ की थैली लगावें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही निम्नलिखित घोल तैयार कर I/V मार्ग से दिन में १ या २ बार दें—

(ii) B	थियामिन या विटामिन 'बी'$_1$	१०० मि० ग्रा०
	राइबोफ्लेबीन या विटामिन 'बी'$_2$	५० मि० ग्रा०
	निकोटिनामाइड या विटामिन 'बी'$_7$	१०० मि० ग्रा०
	सिकेविट या विटामिन 'के'	१० मि० ग्रा०
	एस्कॉर्बिक एसिड या विटामिन 'सी'	५०० मि० ग्रा०
	ग्लूकोज १२½%	२० औंस
	नार्मल सैलाइन	२० औंस

इन्हें मिलाकर घोल बना लें और I/V मार्ग से दो बार प्रतिदिन दें।

नोट—विटा० बी$_1$ बी$_2$ तथा बी$_7$ के स्थान पर सैलू-'बी' (Salu-B) का प्रयोग किया जा सकता है।

(iii) ट्रिनी-ट्रिनी टेबलेट की १ गोली जीभ के नीचे रखें।

(iv) शामक तथा पीड़ाहर औषधियाँ दें। सोडियम फीनोबार्बीटोन ६०-१८० मि० ग्रा० मांसपेशीगत (I/M) दे सकते हैं।

(४) **वमन और आध्मान के लिए**—नासामार्ग से रायल ट्यूब पास कर पिचकारी के द्वारा प्रति घण्टे अथवा २ घण्टे पर आमाशय के अंदर का पदार्थ निकाल देना चाहिए। इसे 'गैस्ट्रिक सक्सन' कहते हैं।

(५) **उपरोक्त लाक्षणिक चिकित्सा से लाभ न मिलने पर**—४ दिन की चिकित्सा के पश्चात् 'एम्पिसिलीन' ५०० मिग्रा० प्रति ६ घण्टे पर दें।

नोट—○ यदि उपरोक्त चिकित्सा करते हुए भी ज्वर आदि नाड़ी की गति में निरन्तर वृद्धि होती रहे, स्थानीय शोथ के लक्षण ज्यों के त्यों बने रहें और पित्ताशयशूल निरन्तर बना रहे; साथ ही W. B. C. में निरन्तर वृद्धि होती रहे तो औषधि चिकित्सा बन्द कर देनी चाहिए। ऐसी अवस्था में एकमात्र विकल्प शल्य-चिकित्सा ही है।

(ख) शल्य चिकित्सा
(Operative treatment)

संरक्षी चिकित्सा (Conservative treatment) के असफल होने पर जनरल प्रैक्टिशनर्स को तत्काल रोगी को ऑपरेशन के लिए किसी बड़े अस्पताल में भर्ती हेतु निर्दिष्ट कर देना चाहिए।

○ इसमें कोलीसिस्टेक्टोमी (Cholecystectomy) का ऑपरेशन किया जाता है। अन्ततः ऑपरेशन से ही रोगी की जान बचायी जा सकती है। ऑपरेशन के समय ब्लड-ट्रान्सफ्यूजन की व्यवस्था आवश्यक है। शल्यकर्म की सम्पूर्ण अवधि-पर्यन्त ४० बूंद प्रति मिनट की दर से I/V मार्ग से प्रायः ५०० मिली० रक्त देने की आवश्यकता पड़ती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ शल्य-चिकित्सा के साथ उपसर्ग के लिए पेनिसिलीन १ लाख यूनिट स्ट्रेप्टोमाइसिन १ ग्राम या 'प्रोसीलिन' का इञ्जे० तत्काल लगाना चाहिए।

○ इस समय डिहाइड्रेशन से बचाने के लिए—डेक्स्ट्रोज विद नार्मल सैलाइन ५–१०% अथवा प्लाज्मा आदि I/V मार्ग से ४० बूंद प्रति मिनट की गति से ऑपरेशन से पूर्व तथा तत्पश्चात् १-२ पाइण्ट २ बार प्रतिदिन देना चाहिए।

आवश्यक निर्देश—यदि तत्काल ऑपरेशन आवश्यक न हो, तब अपेक्षित नैदानिकीय परीक्षाओं द्वारा रोगी की वास्तविक अवस्था का पता लगाना चाहिए। साथ ही औषधि एवं आहार द्वारा रोगी की अवस्था सुधारनी चाहिए ताकि ऑपरेशन का उत्तम परिणाम मिले।

सेबिल्स सिस्टम आफ क्लिनिकल मेडिसिन के अनुसार तीव्र पित्ताशयशोथ की चिकित्सा-व्यवस्था—

१. रोगी को शय्या पर विश्राम करायें तथा दूध और हलके भोजन (Light diet) पर रखना चाहिए।

२. स्थानीय प्रयोग के लिए 'केओलिन पुल्टिस' का प्रयोग अथवा पीड़ा के लिए मार्फिया का प्रयोग करना चाहिए।

३. वमन को दूर करने के लिए विस्मथ कार्बोनेट, हाइड्रोसायनिक एसिड अथवा Effervescent mixture का प्रयोग करायें।

४. सामान्य प्रकार के रोग में (In mild cases) एण्टीसेप्टिक लाभ के लिए सैलीसिलेट आफ सोडा और हेक्सामीन को एल्कली (Alkalis) के साथ दें।

५. प्रातः खाली पेट १ ड्राम मैगनेशियम को १ कप जल के साथ दें। इसके १ घण्टे पश्चात् १ पाइण्ट गर्म जल अथवा हल्की चाय दें। साथ ही भोजन के बीच १२० मिनिम 'ओलिव आयल' का सेवन करायें।

६. अधिक गम्भीर रोगियों में पेनिसिलिन इञ्जे० अथवा स्ट्रेप्टोमाइसिन अथवा टेट्रासाइक्लीन का प्रयोग लाभकारी होता है।

७. यदि बुखार तथा कँपकँपी निरन्तर बनी रहे तो तीसरे-चौथे ऑपरेशन की व्यवस्था करनी होती है।

चिरकारी पित्ताशयशोथ
(Chronic Cholecystitis)

परिचय—चिरकारी पित्ताशयशोथ प्रायः तीव्र पित्ताशयशोथ का पश्चात् प्रभाव (After effect) होता है। कभी-कभी यह स्वतन्त्र रूप में भी उत्पन्न हो जाता है। इस अवस्था में प्रधानतः डिस्पैप्सिया तथा पित्ताशूल शूल के लक्षण मिलते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ तीव्र पित्ताशयशोथ चिरकालिक अवस्था (Chronic stage) में परिवर्तित हो सकता है। अथवा प्रारम्भ से ही यह रोग चिरकारी हो सकता है।

कारण (Etiology)—१. यह ४० वर्ष से अधिक वय एवं स्थूल शरीर वाली बहुप्रसवा स्त्रियों में अधिकतर मिलता है।

२. **अश्मरी** (Calculi)—बहुत दिनों से विद्यमान अश्मरी भी रोग का कारण होती है।

३. **संक्रमण** (Infection)—'बी' टाइफोसस तथा सालमोनेला पैराटाइफी इसके उत्पादक कारण माने जाते हैं।

विकृति (Pathology)—यह अधिक सुलभ रोग है। इस अवस्था में शोथ के चिरकाल तक रहने से श्लेष्मकला तथा मांसमय स्तर में फ्राइब्रोसिस या स्नायु तन्तु वृद्धि की प्रक्रिया हो जाती है। जिससे पित्ताशय कठोर और कुछ स्थूल हो जाता है। उसमें प्रायः पित्ताश्मरिता भी मिलती है। गाल-ब्लैडर सिकुड़ कर छोटा हो जाता है। सिस्टिक ग्लैण्ड्स बढ़ जाते हैं। कभी-कभी गाल-ब्लैडर संक्रमण से मुक्त रहता है और केवल एक अश्मरी (Stone) सिस्टिक डक्ट को बंद कर देती है।

लक्षण एवं चिह्न (Symptoms and signs)—

१. **अग्निमांद्य** (Dyspepsia)—रोगी में आध्मान तथा अजीर्ण की शिकायत रहती है। युवावस्था तथा मध्यावस्था की आयु वाले रोगियों में घी, तैल या खट्टे पदार्थ खाने के आधे घण्टे पश्चात् आमाशय के सामने (Epigastrium) में भारीपन या हल्की पीड़ा का कष्ट होता है। उदर में वायु की उपस्थिति मिलती है, जिससे पेट बराबर फूला रहता है। रोगिणी इसकी अक्सर शिकायत करती है। ○ वमन तथा डकार आने से कष्ट में कमी होती है। छाती में जलन इसका एक सामान्य लक्षण है।

२. **पीड़ा** (Colicky pain)—सन्ध्या समय जाड़ा लगकर दाहिने कन्धे में पीड़ा तथा जोर से श्वास खींचने से उदर के दाहिनी ओर आमाशय के सामने (Right hypochondrium) में तीव्र पीड़ा होती है। यह पीड़ा पीठ की ओर फैलकर स्केपुला तथा कन्धे तक जाती है। यह मितली, कै तथा बुखार से सम्बन्धित रहती है। 'मर्फी का चिह्न' पॉजिटिव (+) होता है। घुटनों को पेट की ओर मोड़ने तथा कमर का वस्त्र ढीला करने से कष्ट में कमी होती है।

नोट—पीड़ा का भोजन से कोई सम्बन्ध नहीं है। इसलिए इसका विभेद पेप्टिक अल्सर से अवश्य कर लेना चाहिए, जैसा कि एक्यूट कोलीसिस्टाइटिस में संकेत किया जा चुका है।

३. **आन्त्र**—आन्त्र की गति अनियमित रहती है। रोगी को अधिकतर कब्ज रहता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. ज्वर—प्रायः अनुपस्थित रहता है।

५. कामला (Jaundice)—पित्तवाहिनी में पथरी उपस्थित होने की अवस्था में ही रोगी में कामला मिलता है।

६. सूजन—दक्षिण अधःपर्शुक प्रदेश में सूजन मिलती है, जो स्पर्श-परीक्षा में स्पष्ट अनुभव की जा सकती है।

७. दाब-वेदना—पित्ताशय के स्थान पर दाब-वेदना मिलती है।

८. अनियमित लक्षण—अजीर्ण, खट्टी डकारें आना, गला जलना (Heart burn), डकार के समय मुख में आमाशय की ओर से जल का प्रवेश करना, जाड़ा लगना, मितली, पतले दस्त, वमन आदि लक्षण अनियमित रूप से होते रहते हैं।

अन्वेषण (Investigation)—**१. एक्स-रे परीक्षा**—सामान्य एक्स-रे द्वारा अश्मरी को देखा जा सकता है।

२. पित्ताशय चित्रण (Cholecystography)—मुख द्वारा औषधि का सेवन कराकर चित्र लेने से रोग का सही-सही निदान हो जाता है।

सामान्य ज्ञान—○ घी-तैल के सेवन से पीड़ा में वृद्धि होना निदान की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण लक्षण है।

○ 'मर्फी का चिह्न' तथा Xiphoid sign पॉजिटिव होता है।

○ रायल्स ट्यूब द्वारा ड्यूडेनम से पित्त निकाल कर देखने से पित्त गहरे काले रंग का प्रतीत होता है। साथ ही उसमें जीवाणु तथा पूय की भी उपस्थिति मिल सकती है।

चिकित्सा (Treatment)—इस रोग की एकमात्र चिकित्सा ऑपरेशन है। इसमें पित्ताशयोच्छेदन (Cholecystomy) का ऑपरेशन किया जाता है। ऑपरेशन के पश्चात् रोगी पूर्ण स्वस्थ हो जाता है।

नोट—चिरकालिक पित्ताशयशोथ की चिकित्सा में अन्ततः ऑपरेशन का सहारा लेना ही पड़ता है; विशेषकर पित्ताशय में अश्मरी (Stone) रहने पर अथवा पित्ताशय की दीवार मोटी होने पर एवं पित्ताशय के ठीक कार्य न करने पर। अतः ऑपरेशन में अधिक विलम्ब करना ठीक नहीं।

निर्देश—१. वृद्धावस्था, दुर्बलता अथवा अन्य किसी कारण से जब ऑपरेशन सम्भव न हो तब औषधि-चिकित्सा करनी चाहिए।

२. अथवा रोगी ऑपरेशन करवाने को तैयार न हो अथवा निदान में कोई शंका हो रही हो, या रोग के लक्षण सामान्य हों, तब औषधि-चिकित्सा करनी चाहिए।

औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—

१. रोगी को शय्या पर पूर्ण विश्राम करावें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. **आहार**—कार्बोहाइड्रेट्स अधिक, प्रोटीन सामान्य तथा फैट अल्प मात्रा में हो। वायु उत्पन्न करने वाली वस्तु न दें।

३. चिकित्सा के प्रारम्भ में पेप्टिक अल्सर में बतलाये गये निर्देशों के अनुसार क्रीम मिले दूध का अनेक बार सेवन; तत्पश्चात् शनैः-शनैः फल का रस, मक्खन, उबली शाक-सब्जी और उसके बाद रोटी और चावल पर लाना चाहिए।

४. साथ-साथ मल्टी-विटामिन १ गोली दिन में २ बार दें। विटामिन 'सी' का प्रयोग यथोचित मात्रा में कराना चाहिए।

५. एनाल्जेसिक पीड़ा हेतु—

(i) पेथिडीन १०० मि० ग्रा० मांसपेशीगत; २ घण्टे पश्चात् पुनः दें।

(ii) मॉर्फीन (Morphine)—१५-२० मि० ग्रा० S/C इञ्जेक्शन। आवश्यकतानुसार १ घण्टे बाद दुहरायें।

(iii) ग्लाइसिरील ट्राइनाइट्रेट (Glyceryl trinitrate) ०·५ मि० ग्रा० जीभ के नीचे प्रति ३०-६० मिनट पर।

अथवा पीड़ा-शमन के लिए निम्न योग दें—

℞ सिवाल्जिन	३० मि० ग्रा०
मेडिनाल (Medinal)	१२० मि० ग्रा०
सेरीडीन	½ गोली
ल्यूमिनल	३० मि० ग्रा०
ग्लूकोज पाउडर	१२०० मि० ग्रा०
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजनोपरान्त दें।

६. सिंकाई के लिए (For fommentation)—गरम सेंक आवश्यक है।

७. एण्टीबायोटिक (Antibiotic)—'प्रोसिलिन' (हिन्दुस्तान एण्टी-बायोटिक)।

अथवा—'स्ट्रेप्टोपेनिसिलीन' १ ग्राम I/M दिन में १ बार दें।

अथवा—रेसिस्टेण्ट केसिस में—

℞ एम्पीसिलीन (Ampicillin) ५०० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर।

८. कोष्ठबद्धता के लिए (For constipation)—

लेक्सिल (Laxil) (बंगाल केमिकल)

मात्रा—१ गोली सोने से पूर्व।

अथवा—जूलेक्स १-२ गोली रात में सोने से पूर्व।

नोट—इसके लिए क्रीमीफिन लिक्विड, क्रीमाफिन 'सी' फिनोलफथेलिन, सेलूब्रिल (Cellubril), इवेकुओल (Evacuol), केलोमल आदि में से किसी का प्रयोग करना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. अम्लता को कम करने के लिए—

℞ एण्ट्रिनिल (Antrenyl)—१ गोली दिन में ३ बार भोजन के आधा घण्टे पूर्व ।

१०. पित्त का पूर्ण अवरोध रहने पर—

℞ बिलरान (Bilron) ३०० मि० ग्रा० कैप्सूल

मात्रा—१ कै० दिन में ३ बार भोजन के बाद ।

११. अनिद्रा की स्थिति में—

सोडियम बार्बीटोन या ल्यूमिनल ३०-६० मि० ग्रा० रात में सोने के पूर्व ।

निर्देश—इसमें अफीम के योग बिल्कुल नहीं देना चाहिए । इससे लिवर में विकृति आ सकती है ।

विशेष निर्देश—दाँत, कण्ठ आदि में उपसर्ग रहने पर उपयुक्त चिकित्सा करनी चाहिए ।

व्यायाम चिकित्सा—पित्ताशय में विद्यमान पित्त की अस्थिरता (Stasis) को दूर करने के लिए मृदु व्यायाम तथा पेट सम्बन्धी आसन लाभकारी होते हैं ।

○ **निम्न स्थिति आने पर औषधि-चिकित्सा तत्काल बन्द करके ऑपरेशन की व्यवस्था**—अश्मरी शूल के दौरों के साथ कामला का लक्षण भी हो तो यह रोग औषधि-चिकित्सा से ठीक नहीं होता है । ऐसी स्थिति में 'कोलीसिस्टेक्टोमी' (Cholecystectomy) शल्यकर्म का ही सहारा लेना चाहिए । यह ऑपरेशन बहुत कम घातक होता है ⊡

पाचन-संस्थान के रोग 1/31

यकृत् का सिरोसिस
(Cirrhosis of the Liver)

पर्याय—इसे 'जीर्ण यकृद्-रोग' अथवा 'यकृत् का सिरोसिस' कहते हैं ।

परिचय—यह यकृत् का एक जीर्ण रोग है । इसमें यकृत् के अन्दर तान्तव ऊतक (Fibrous tissue) अधिक मात्रा में बनने लगते हैं और यकृत् की कोशिकाओं का स्थान लेने लगते हैं । जिसके कारण पहले तो यकृत् सामान्य से कुछ बड़ा हो जाता है, परन्तु रोग के बढ़ने पर सिकुड़ कर छोटा हो जाता है । इसके धरातल पर छोटी-छोटी गाँठें बन जाती हैं, जो यकृत् को टटोलने पर प्रतीत होती हैं ।

○ इस रोग में यकृत् के अन्तर्गत चिरकालिक विषमयता के कारण फाइब्रस धातु की वृद्धि होती है । प्रारम्भ में यह रोग बहुत धीरे-धीरे प्रगति करता है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण (Etiology)—१. मद्यपान का अधिक सेवन किन्तु पौष्टिक भोजन तथा व्यायाम का अपेक्षाकृत बहुत कम सेवन करना। दीर्घकाल तक और अधिक मात्रा में मदिरापन एवं सिरोसिस के बीच निश्चित रूप से गहरा सम्बन्ध होता है।

२. इस रोग के वास्तविक कारण का अभी तक पता नहीं चल सका है।

३. सिफिलस, मलेरिया ज्वर तथा बैक्टीरिया के उपसर्ग से इसका सम्बन्ध प्रतीत होता है।

४. आहार सम्बन्धी कारण (Nutrition causes)।

५. कॉनिक एक्टिव हेपेटाइटिस (Chronic active hepatitis)।

६. एम्युनोलॉजिकल कारण।

७. मेटाबोलिक गड़बड़ी (Metabolic disorders)।

८. कोलीस्टेसिस (Cholestasis)।

९. हेपेटिक कंजेशन (Hepatic congestion)।

१०. रेडियोपैथिक या क्रेप्टोजेनिक कारण।

लक्षण (Symptoms)—लम्बे समय तक इस रोग के लक्षण गुप्त (Dormant) रहते हैं। यह 'कम्पेंसेटिड सिरोसिस' कहलाता है। इसके लक्षणों में जब वृद्धि होती है, तब वे निम्न स्वरूप के होते हैं—

१. एनोरेक्सिया, मितली, वमन, आध्मान की उपस्थिति।

२. शनैः-शनैः पेट तथा पैरों में शोथ उत्पन्न हो जाता है।

३. शनैः-शनैः दुर्बलता, शारीरिक क्षमता तथा शरीर का भार कम हो जाता है।

४. हीमेटिमेसिस (१५–२०%) और दस्तों में खून आता है।

५. रक्तार्श (Bleeding piles) की उपस्थिति।

६. कब्ज अथवा अतिसार की उपस्थिति।

७. महिलाओं में मासिकधर्म की रुकावट।

○ प्रारम्भ में इसके कोई लक्षण नहीं मिलते। कुछ समय बाद रोगी की भूख मारी जाती है। इसके अतिरिक्त जी मिचलाना, अफारा, अग्निमान्द्य, कब्ज, कभी-कभी रक्तवमन एवं यदा-कदा रोगी को स्वयं अपना बढ़ा हुआ यकृत् बड़ी-सी गाँठ के रूप में प्रतीत होता है।

इसके विभिन्न लक्षणों में क्रमानुसार निम्न प्रकार से प्रगति होती है—

१. यह ४० से ५० वर्ष की अवस्था में स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में अधिक होता है।

२. इसका प्रारम्भ धीरे-धीरे वर्षों तक अज्ञात रूप में होता है। आरम्भ में रोगी को कोई कष्ट नहीं होता।

३. प्रारम्भ में रोगी को भूख न लगना तथा अरुचि के लक्षण होते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. कई दिनों तक भूख न लगने से शरीर के पोषण में कभी आने से रोगी का शरीर कृश तथा पाण्डुमय दीखता है।

५. ○कृशता और अशक्ति रोग के प्रारम्भिक लक्षण होते हैं। रोगी की शारीरिक शक्ति भी क्षीण हो जाती है।

६. इसके पश्चात् रोगी का पेट भारी रहने लगता है। उसके पेट में स्तम्भ तथा अफारा होता है। थोड़ा भी भोजन लेने पर पेट भारी हो जाता है।

७. छोटी आँत में शोथ की उपस्थिति रहने से मल पतला हो जाता है। अर्थात् अतिसार का लक्षण होता है अथवा मलावरोध की शिकायत रहती है।

८. पेट में अनेक बार दाहिनी ओर दर्द का भी लक्षण मिलता है।

९. शरीर का पोषण कम होने से शरीर कृश तथा त्वचा शुष्क दिखती है।

१०. यकृत् के ऊपर के शरीर की त्वचा में अनेक फैली हुई शिराओं का जाल अथवा खुली त्वचा पर फूली हुई सूक्ष्म धमनियों का जाल दिखलाई पड़ सकता है।

११. त्वचा तथा नखों पर पाण्डुता की झलक मिल सकती है। तत्पश्चात्—

१२. यकृत् तथा प्लीहा की वृद्धि हो जाती है। किन्तु यकृत् की अपेक्षा प्लीहा की वृद्धि कम होती है। यकृत् न भी बढ़ा हुआ हो तो भी उसका किनारा स्पर्श में आता है, अर्थात् कुछ कठोर प्रतीत होता है।

१३. नाभि पर तथा उसके ऊपर की शिराएँ फैली हुई दीखती हैं। नाभि के आस-पास कभी-कभी एक शिरा-गुच्छ (Caput medusae) भी बन जाता है।

१४. ईसोफेगस के निचले भाग की शिराएँ फूल कर मोटी (Varicose) हो जाती हैं। इसके फट जाने पर समय-समय पर इस रोग में रक्तवमन का लक्षण भी होता रहता है जो कि भयंकर होता है, किन्तु घातक नहीं। रक्त-वमन प्राय १०% रोगियों में मिलता है।

१५. गुदा की दीवार में विद्यमान 'इन्फीरियर हीमोराइड्स वेन' के फूल जाने से कभी-कभी इस रोग में गुदा से रक्तस्राव भी होने लगता है। ○ अतः यदि गुदा से विशेष रक्तस्राव हो तो इस रोग का संदेह करना चाहिए।

१६. इस रोग के वर्षों तक बने रहने पर भी जलोदर तथा कामला आदि भयंकर लक्षण नहीं होते हैं। परन्तु यदि यह रोग बढ़ता ही जाये तो जलोदर के लक्षण होने पर या छाती में जल भर जाने पर तथा पैरों में शोथ उत्पन्न होने पर यह रोग कष्टसाध्य अथवा असाध्य हो जाता है। रक्तस्राव तथा कामला भी असाध्यता के सूचक हैं।

१७. जलोदर के साथ-साथ गिट्टों, पैरों तथा जाँघों पर हल्के शोथ का भी लक्षण हो जाता है। जलोदर का जल स्थायी नहीं होता है; वह विलीन हो जाता है तथा नया बनता रहता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८. ○ यकृत् के सेलों के नष्ट हो जाने पर फैट का परिपचन भलीभाँति न होने से शरीर को फैट नहीं मिल पाती है, जिससे शरीर कृश हो जाता है।

○ कृशता और पाण्डुता इस रोग के प्रमुख सूचक लक्षण होते हैं।

१९. हृदय की निर्बलता तथा उसका पोषण न होने से नाड़ी तीव्र तथा कम भार वाली होती है।

२०. रोग के बढ़ने के साथ-साथ ४०% रोगियों में सायंकाल मन्द ज्वर; प्रायः ३७·५°–३८·५° सेण्टीग्रेड के लगभग रहने लगता है।

२१. मूत्र मात्रा में कम, गहरे रंग का तथा कुछ अल्ब्युमिन युक्त होता है। इसमें 'यूरोबिलिन' की मात्रा अधिक होती है।

२२. ५०% रोगियों में हल्का-सा कामला का लक्षण भी मिलता है।

२३. यकृत् के सेलों के रुग्ण हो जाने से रक्तपित्त अथवा रक्तस्राव होने की प्रवृत्ति मिलती है। प्रायः नाक से रक्त आता रहता है। मसूड़ों से भी रक्तस्राव हो सकता है।

२४. शरीर का रंग कुछ श्यामवर्ण का हो जाता है।

२५. जब यकृत् अधिक रुग्ण हो जाता है, तब वह अपना कार्य बन्द कर देता है। ऐसी स्थिति में टॉक्सीमिया होकर तन्द्रा, कम्प, मूर्च्छा आदि मृत्यु-सूचक लक्षण मिलने लगते हैं।

○ प्रारम्भ में फाइब्रोसिस होने के कारण यकृत् आकार में कुछ बड़ा हो जाता है। परन्तु जब उसके लक्षण समाप्त होने लगते हैं, तो वह आकार में संकुचित हो जाता है।

○ प्रारम्भ में कामला हलका होता है, किन्तु क्रमशः वह गहरा होता जाता है। तत्पश्चात् वमन भी होने लगता है। इसके साथ ही तन्द्रालुता, मस्तिष्क का फेल होना, बेचैनी, मांसकम्प, प्रलाप, आक्षेप, कंडराओं के प्रतिक्षेप (Reflex) में तीव्रता के लक्षण होते हैं।

निदानात्मक लक्षण एवं चिह्न (Diagnostic symptoms & signs)—

१. वय—यह लगभग ३० वर्ष की आयु के आस-पास होता है।

२. लिंग (Sex)—विशेषकर पुरुषों में।

सामान्य सर्वेक्षण (General survey)—

१ मुखाकृति (Facies)—हेपेटिक फेसीज उपस्थित रहता है।

२. अनीमिया उपस्थित रहता है और कामला प्रायः अनुपस्थित रहता है। कोलीस्टेसिस के होने पर बढ़ा हुआ मिलता है।

३. पाल्मर इरीथीमा तथा स्पाइडर एञ्जियोमा उपस्थित मिलता है।

४. प्रिंटिंग प्रकार में—ईडिमा उपस्थित मिलता है।

५. क्यूटेनियस हीमोरेज की उपस्थिति मिल सकती है।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. ३५% रोगियों में द्वितीयक संक्रमण (Secondary infection) ट्यूबरकुलस पेरिटोनाइटिस के कारण ज्वर की उपस्थिति मिल सकती है।

○ इस रोग का निदान कठिन है और प्रारम्भिक अवस्था में तो विशेषज्ञ भी इसका सही निदान नहीं कर पाते।

पोषण तन्त्र (Alimentary system)—

१. जीभ फीकी तथा शुष्क मिलती है। किन्तु विटामिन की कमी तथा जिह्वाशोथ (Glositis) के कारण लाल हो सकती है।

२. उदर फूला हुआ (Abdomen is bloated) मिलता है। उदर की शिराएँ विशेषकर एपीगैस्ट्रिक प्रदेश (Epigastric region) में फूली हुई (Prominent) मिलती हैं।

३. लिवर को प्रारम्भिक स्थिति में स्पर्श किया जा सकता है। परन्तु रोग के बढ़ने पर इसके सिकुड़ने के कारण ७०% रोगियों में एपिगैस्ट्रिक रीजन में बायाँ लोब स्पर्श किया जा सकता है।

४. **प्लीहा** (Spleen)—३५–५०% रोगियों में ६-८ सेण्टीमीटर तक स्पर्श की जाती है।

५. हृदय की 'स्पेसिफिक बीट' जलोदर के कारण सुनाई नहीं देती है।

नोट—○ निदान करते समय यदि रोगी ने रक्तवमन होने पर कोई एम्प्रिन आदि न ली हो तथा उसमें पेप्टिक अल्सर के लक्षण अनुपस्थित हों, तो उसे सिरोसिस का रोगी समझना चाहिए।

○ अथवा यदि कोई रोगी जलोदर से पीड़ित हो, उसके पेट की शिराएँ उभरी दिखलाई दें और उसको पहले रक्तवमन हो चुका हो तथा वह मद्यपी हो तो उसे सिरोसिस का रोगी समझना चाहिए।

विशेष अन्वेषण—१. **रक्त-परीक्षा** (Blood test)—मॉडरेट ल्यूकोपीनिया (Moderate leucopenia), थ्रोम्बोसाइटोपीनिया एवं अनीमिया की उपस्थिति मिलती है। HBS Ag अथवा इसके एण्टी बॉडीज रक्त में मिलते हैं।

२. **लिवर फंक्शन टेस्ट** (Liver function test)—

(i) प्लाज्मा प्रोटीन लेवल कम होता है तथा एल्ब्युमिन/ग्लोबुलिन का अनुपात भिन्न-भिन्न होता है।

(ii) फ्लोकुलेशन टेस्ट (Floculation test) प्रायः पोजिटिव मिलता है।

(iii) S. G. O. T. एवं S. G. P. T. लेवल १०० तक होता है।

(iv) सीरम बिलीरूबिन का लेवल सामान्य (Normal) होता है अथवा बढ़ा हुआ मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. **लिवर बायोप्सी** (Liver biopsy)—मल्टी-लोब्युलर फाइब्रोसिस मिलती है।

४. जलोदर द्रव (Ascitic fluid) को निकाल कर (After drainage) पोर्टल वेनोग्राफी करने पर पोर्टल सिस्टम की वेन्स फूली हुई (Dilated) मिलती हैं।

५. **मूत्र-परीक्षा** (Urine test)—यूरोबिलिनोजेन (Urobilinogen) कुछ बढ़ा हुआ होता है। बिलियरी सिरोसिस में पित्त (Bile) की उपस्थिति मिलती है।

६. बी० एस० आर० (B. S. R.) कुछ बढ़ा हुआ मिलता है।

○ इसके अतिरिक्त रोगी में अजीर्ण, अरुचि, आध्मान, शरीर-कृशता, निर्बलता, हलका पीलापन, यकृद्-वृद्धि तथा पेट और पैरों में भारीपन देखकर इस रोग का अनुमान करना चाहिए। हलका-हलका रक्तवमन होने से इस रोग का और भी निश्चय हो जाता है।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—मेटास्टेटिक कार्सीनोमा (Metastatic carcinoma) तथा कोच्स पेरिटोनाइटिस (Koch's peritonitis) से इसका भेद करना चाहिए।

○ मेटास्टेटिक कार्सीनोमा में—रोगी अधिक उम्र का होता है। कठोर लिम्फ नोड्स की उत्पत्ति, कामला की वृद्धि, प्लीहा का स्पर्श में न आना, लिवर बढ़ा हुआ, अनियमित कठोर एवं मुलायम होता है। जलोदर उपस्थित रहता है।

○ कोच्स पेरिटोनाइटिस—यह मुख्य रूप से युवा महिलाओं में मिलने वाला रोग है। तापक्रम की उपस्थिति, उदर स्पर्श में मुलायम तथा मेटिड नोड्स स्पर्शयुक्त। प्रायः प्लीहा स्पर्श में नहीं आता है। जलोदर की उपस्थिति मिलती है।

भावीफल (Prognosis)—इसका भावीफल अच्छा नहीं होता है। किन्तु यह हेपेटिक इन्सफिसियेन्सी के ऊपर निर्भर रहता है। जैसा कि आगे स्पष्ट किया जा रहा है—

१. कामला तथा जलोदर की उपस्थिति तथा सिस्टोलिक प्रेशर का नीचा होना अच्छा नहीं होता है।

२. बढ़ा हुआ लिवर साध्य होता है।

३. मद्यपान जनित यकृत् का सिरोसिस अपेक्षाकृत अच्छा होता है।

४. यदि १ माह की औषधि चिकित्सा से रोगी को लाभ नहीं मिलता है तो उसका भविष्य अच्छा नहीं होता है।

५. जब सीरम एल्ब्युमिन २·५ ग्राम से नीचे अथवा सीरम NA^+ लेवल 120 M^E १ लिटर मे नीचे होता है तब उसका आउट लुक अच्छा नहीं माना जाता

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. रोग के प्रारम्भ होते ही यदि रोगी मद्य एवं तीव्र आहारों का सेवन बन्द कर दे तो रोग शान्त हो जाता है।

७. यदि रोग के साथ में ज्वर की भी उपस्थिति मिले तो यह समझना चाहिए कि रोग भयंकर स्वरूप का है।

८. मुँह से रक्तवमन होने पर ५०% रोगियों की मृत्यु हो जाती है।

९. मूर्च्छा (Coma) की उपस्थिति प्रायः घातक होती है।

१०. यदि प्रारम्भ में ही यकृद्-वृद्धि के लक्षण मिल जायें और चिकित्सा की जाये तो रोग ठीक हो सकता है। पर जलोदर का लक्षण आरम्भ होने पर यह कष्टसाध्य हो जाता है।

११. इसमें २०% रोगी फैली हुई शिराओं से रक्तस्राव के कारण मर जाते हैं। शेष का अन्त पेरिटोनाइटिस, न्यूमोनिया अथवा ऐसी ही किसी इंन्फेक्शियस डिजीज के पैदा हो जाने अथवा स्वयं इस रोग के कारण यकृत् मूर्च्छा के उत्पन्न होने से हो जाता है।

नोट—'मूर्च्छा' और 'रक्तवमन' इसके भयंकर लक्षण हैं।

विशेष ज्ञातव्य—○ यह हमारा सौभाग्य है कि इस रोग से बहुत ही कम लोग ग्रसित होते हैं।

○ कोशिश करने पर और अत्यन्त कुशल और अनुभवी चिकित्सक के निर्देशन में चिकित्सा करने पर कुछ रोगियों का जीवन बचाया जा सकता है।

चिकित्सा (Tteatment)—

(१) आहार-चिकित्सा—○ इस बात के कुछ प्रमाण मिले हैं कि यह रोग विशेष रूप से भोजन में कुछ कमी रह जाने से होता है। इसलिए चिकित्सा का मुख्य आधार रोगी को ऐसा आहार देना है जिससे उसे 'प्रोटीन' की उच्चतम मात्रा (High protein) मिल सके। जिसका पोषकमान ३०००. कैलोरी से कम न हो। साथ ही आवश्यक विटामिन्स पूरी मात्रा में और सुपाच्य रूप में हो।

○ सिरोसिस के रोगियों को १०० ग्राम प्रोटीन प्रतिदिन के हिसाब से मिलना चाहिए। प्रोटीन-आहारों में गाय का दूध, मलाईरहित दूध या लस्सी अथवा क्रीम निकाला हुआ दूध अथवा 'केसीलान' या 'लैक्टोडेक्स' मिल्क प्रोटीन—२०-४० ग्राम जल के साथ देना सर्वोत्तम है। 'केसीलान' में नमक न होने के कारण जलोदर तथा शोथ की अवस्था में विशेष लाभकारी होते हैं।

○ रोगी को सामान्य भोजन के अतिरिक्त प्रतिदिन १ लीटर दूध पीने को देना चाहिए। इससे रोगी को ३० ग्राम के लगभग प्रोटीन मिल जाता है। यदि १ लीटर दूध में 'केसीलान' पाउडर ५० ग्राम की मात्रा में मिलाकर रोगी को दिया जाये तो उसे ८० ग्राम प्रोटीन मिल जाता है। केसीलान के

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थान पर रोगी छेने से निर्मित २-३ रसगुल्ले भी ले सकता है। शेष २० ग्राम प्रोटीन रोगी को उसके सामान्य आहार से प्राप्त हो जायेगी।

○ मांसाहारी व्यक्तियों में मांस-मछली से उपरोक्त प्रोटीन मिल जाती है।

○ रोगी को प्रतिदिन ४ औंस के लगभग ग्लूकोज तथा ६-८ औंस कोई फल का रस तथा १०-१५ यूनिट इन्सुलिन देना सर्वोत्तम है। इसके अतिरिक्त बनी हुई नरम सब्जी, फल तथा भली प्रकार सेंकी रोटी भी अल्प मात्रा में दी जा सकती है। रोगी को २५ ग्राम तक मक्खन दिया जा सकता है।

○ यदि रोग अधिक बढ़ा हो और यकृत् अधिक क्षीण हो चुका हो, तो भोजन में प्रोटीन की मात्रा कम कर देनी चाहिए।

○ हैपेटिक कोमा (Hepatic coma) की स्थिति में ग्लूकोज, फलरस, चाय, काफी तथा सब्जियों के रसों पर ही रखना चाहिए। रोगी को प्रतिदिन २-३ लीटर जल देना चाहिए। अथवा पेट में ट्यूब डालकर उसके द्वारा २०% ग्लूकोज जल को बूंद-बूंद करके २ लीटर तक देना चाहिए। आँत की स्वच्छता के लिए प्रातः सैलाइन या मिल्क ऑफ मैगनेसिया की १ मात्रा देनी चाहिए।

○ बीकोजाइम फोर्ट ६ गोली नित्य देना चाहिए। इससे बिटामिन-बी$_{१}$, बी$_{२}$, बी$_{१२}$ तथा विटामिन-सी की पूर्ति होती रहती है।

अथवा विटामिन 'बी'-कॉम्प्लेक्स समुचित मात्रा में दें। इसके लिए मैक्राबिन ब्राँड विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स (ग्लैक्सो कं०) पेय दिन में ३-४ बार देना चाहिए।

(२) **औषधि-चिकित्सा** (Medicinal treatment)—इसकी ऐसी कोई औषधि नहीं है, जो लिवर के फाइब्रोसिस को निर्मूल कर सके।

विश्राम (Rest)—जब तक रक्तस्राव, ईडिमा, जलोदर अथवा इसके उपद्रव हों, रोगी को शय्या पर १-२ मास-पर्यन्त विश्राम कराना चाहिए।

○ टेबलेट के साथ कोई अन्य साल्ट न दें।

℞ टेबलेट इवेरोल अथवा डयूमासूल (Tab. Iberol or Dumasule)

मात्रा—१ गोली दिन में १ बार जल से।

यदि जलोदर (Ascites) हो—

℞ टेबलेट एल्डाक्टोन-ए (Aldactone-A)

मात्रा—१ गोली दिन में ४ बार।

केलाइट अथवा पोटक्लोर (Keylite or Potklor)

मात्रा—२ चम्मच दिन में १ बार अथवा फलरस, नारियल का पानी अथवा सब्जियों का सूप।

टेबलेट लासिक्स (Tab. Lasix) अथवा डायूरिल (Diuril) ४० मि० ग्रा०।

मात्रा—१ गोली प्रातःकाल केवल १ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—एसीड्रेक्स (Esidrex) ५० मि० ग्रा०

१-१½ गोली दिन में १ बार। गम्भीर अवस्था में २-३ गोली दिन भर की मात्रा में।

नोट—आधी मात्रा सुबह नाश्ते के बाद और दूसरी भोजन के बाद दें।

निर्देश—यह औषधि ३-४ दिन लगातार देकर फिर सप्ताह में केवल १ से लेकर ३ दिन तक देना चाहिए।

अथवा—मर्सेलिल इञ्जे० (Mersalyl Inj.)

मात्रा—२ मिली० सप्ताह में केवल २ बार।

सायनोकोबालामिन (Cyanocoblamin)

व्या० नाम—मेक्राबिन (Mecrabin) ५०० माइक्रोग्राम

मात्रा—१ दिन छोड़कर मांसपेशीगत।

साथ ही—'मिथियोनीन' तथा 'कोलीन' मुख से दें।

टेबलेट बीप्लेक्स फोर्ट (Tab. Beplex forte)

मात्रा—१-२ गोली प्रतिदिन।

साथ ही—विटामिन-सी ५०० मि० ग्रा० + ग्लूकोज ५% I/V दें।

पोस्ट-हेपेटिक सिरोसिस में—

℞ बीटामेथासोन (Betamethasone) Celestone १ मि० ग्रा०

मात्रा—दिन में ३ बार मुख से। धीरे-धीरे इसकी मात्रा घटाते हुए ०·२५ मि० ग्रा० दिन में ३ बार दें।

अथवा—प्रेडनीसोलोन (Prednisolone)

मात्रा—१०-१५ मि० ग्रा० प्रतिदिन।

यदि रक्त अधिक निकल गया हो तो—ब्लड-ट्रान्स्फ्यूजन का प्रयोग। तथा—इञ्जे० पिट्रेसिन (Inj. Pitressin) २० यूनिट।

इसे ५% ग्लूकोज/१०० मिली० में डायलूट कर I/V ड्रिप द्वारा १० मिनट में दें।

निषेध—'इस्केमिक हार्ट डिजीज' के रोगियों में इसका प्रयोग न करें।

○ ईसोफेजियल टेम्पोनेड (Oesophageal temponade) की अवस्था में रोगी को अस्पताल भेज देना चाहिए।

कुछ लोगों के कथनानुसार—

○ ℞ 'प्रेडनीसोलोन' ३० मि० ग्रा० की मात्रा में प्रतिदिन १ माह तक देकर उसके बाद उसे २ महीने १५-२० मि० ग्रा० दैनिक मात्रा में देने से मूत्र खुल कर आता है और रोगी को आराम प्रतीत होता है।

○ कुछ का कथन है कि—इसके साथ 'टेस्टोस्टेरोन प्रोपियोनेट' १०० मि० ग्रा० की मात्रा में १ सप्ताह देने से; फिर उसे १ दिन छोड़कर २-३ सप्ताह तक देने से लाभ होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही—'पोट-क्लोर' ०·५ ग्राम की गोलियाँ दिन में ४ बार देते रहें।

यदि 'प्रोथ्रोम्बीन' की कमी से रक्तवमन हो रहा तो—

℞ विटामिन-'के' (Vitamin-'K') का प्रयोग करें।

इण्टेस्टाइनल इन्फेक्शन की स्थिति में—

℞ एम्पीसिलीन (Ampicillin) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैप्सूल दिन में ३ बार ५ दिन तक।

अथवा—नियोमाइसिन (Neomycin) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कै० दिन में ३ बार ३ दिन तक।

उपद्रवों की चिकित्सा (Treatment of complications)—

इण्टॉक्सीकेशन ऑफ ब्रेन (डिलीरियम, मूर्च्छा आदि की स्थिति में)—

१. प्रोटीन आहार बन्द कर दें।

२. नियोमाइसिन सल्फेट (Neomycin sulphate) कैप्सूल

मात्रा—१ कै० दिन में ३ बार ३ दिन तक।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

(१) **मितली और कै** (Nausea & vomiting)—'क्लोरप्रोमेजीन' का प्रयोग न करें, अन्यथा कामला की उत्पत्ति हो सकती है।

(२) **अतिसार** (Diarrhoea)—केओलिन + चाक का मिक्श्चर पर्याप्त होता है।

निषेध—अफीम युक्त औषधियाँ तथा लोमोटिल का प्रयोग न करें।

(३) **मलावरोध** (Constipation)—

℞ बिस्कोडिल (Biscodyl) ५ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली रात में सोते समय।

साथ ही—सपोजीटरी १० मि० ग्रा० की प्रयोग करें।

व्या० नाम—डल्कोलेक्स (Dulcolex)

निषेध—लिवर डिजीज में लिक्विड पैराफिन का प्रयोग न करें।

(४) **असामान्य रक्तस्राव की स्थिति में** (Abnormal bleeding tendencies)—

विटामिन 'के' (Vit. 'K') १० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

(५) **ईसोफेजियल तथा गैस्ट्रिक वेरीसिस से रक्तस्राव**—यह एक गम्भीर उपद्रव है। इसकी चिकित्सा बड़े अस्पताल में ही सम्भव है। इसके लिए रोगी के सिर को नीचा करके लिटाया जाता है। उसकी नाड़ी तथा रक्तभार का निरीक्षण किया जाता है।

○ **सर्वप्रथम घबराहट को दूर करने के लिए**—मार्फीन सल्फेट १० मिग्रा० अथवा सोडियम फीनोबार्बीटोन ९० मि० ग्रा० का इञ्जेक्शन दिया जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ **रक्तस्राव के लिए**—पहले सैलाइन देना चाहिए। तत्पश्चात् रक्त मिलने पर ब्लड-ट्रान्स्फ्यूजन।

○ **फिर भी मुख से रक्तस्राव हो रहा हो तो**—पिट्रेसिन (Pitressin) २० यूनिट को २०० मिली० नार्मल सैलाइन में मिलाकर बूंद-बूंद कर I/V दें।

विशेष—'गैस्टिक कूलिंग' से भी लाभ मिलता है।

१. आमाशय में हुए रक्तस्राव को एस्पिरेशन द्वारा निकाल देना चाहिए।

२. आन्त्र में हुए रक्तस्राव को निकालने के लिए रोगी को 'मैग्नेसियम सल्फेट मिक्श्चर' ४ ड्राम 'नेजोगैस्ट्रिक नली' द्वारा पिलाना चाहिए।

३. आन्त्र में विषोत्पत्ति रोकने के लिए—निओमाइसिन १ ग्राम ४-४ घण्टे पर स्टमक ट्यूब द्वारा देना चाहिए।

(६) **हेपेटिक इन्सेफेलाइटिस व कोमा** (Hepatic encephalitis & coma)—इसके लिए प्रोटीन युक्त आहार बन्द कर ५% ग्लूकोज मिश्रित जल में १% पोटाशियम क्लोराइड सोल्यूशन मिलाकर I/V द्वारा रायल्स ट्यूब से प्रतिदिन पेट में २ लीटर २०% ग्लूकोज सोल्यूशन डालना चाहिए।

○ आक्षेपों तथा स्तम्भ की शान्ति के लिए—फीनोबार्बीटोन के योग मुख द्वारा अथवा S/C देना चाहिए।

चेतावनी—यह चिकित्सा किसी बड़े अस्पताल में कुशल चिकित्सक की देख-रेख में ही सम्पन्न करायी जा सकती है।

आवश्यक निर्देश—१. जीर्ण यकृत् के रोगियों को उपरोक्त उच्च-प्रोटीन युक्त आहार जीवन-पर्यन्त सेवन करते रहने की सलाह देनी चाहिए।

२. सिरोसिस में वास्तविक लाभ पहुँचाने वाली औषधि अब तक निर्मित नहीं हुई है। हाँ विटामिन 'बी-काम्प्लेक्स' कुछ लाभ पहुँचा सकता है।

३. लिवर एक्स्ट्रेक्ट या लिवर टॉनिक तथा अन्य ऐसी ही औषधियाँ जिनका आजकल विशेष प्रचार किया जा रहा है, वे इस रोग में शत-प्रतिशत निष्प्रभावी हुई हैं। □

पाचन-संस्थान के रोग 1/32

हायटस हर्निया
(Hiatus Hernia)

पर्याय—इसे डायाफ्राग्मेटिक हर्निया (Diaphragmatic hernia) भी कहते हैं।

परिचय—Normally diaphragm has got several orifices through which various structures pass, hiatus hernia occurs at the point where the oesophagus pass through the diaphragm.

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसमें आमाशय का कुछ भाग उस स्थान पर जहाँ ग्रासनली (Oesophagas) डायाफ्राम में छेद करके नीचे जाती है, उस छेद से प्रवेश कर ऊपर को जाता है।

कारण (Etiology)—१. कंजेनिटॉल (Congenital)—छोटा ईसोसोफेगस।

२. इण्ट्रा-एब्डॉमिनल प्रेशर के बढ़ने से, जैसे—स्थूलता (Obesity), गर्भावस्था, जलोदर (Ascites), कायफोसिस (Kyphosis) आदि।

३. निचले ईसोफेजियल स्फिक्टर के दुर्बल होने से (वृद्धावस्था में)।

प्रकार (Types)—ईसके निम्नलिखित ३ प्रकार होते हैं—

१. स्लाईडिंग अथवा ईसोफेगो-गैस्ट्रिक ८०%।
२. रोलिंग अथवा पैरा-ईसोफेजियल १५%।
३. कम्बाइण्ड (मिश्रित टाइप) ५%।

लक्षण (Symptoms)—१. मध्य आयु के व्यक्तियों में विशेषकर महिलाओं में। स्त्री और पुरुष में इसका क्रमशः ३ : १ का अनुपात होता है।

२. लक्षण प्रायः अनुपस्थित होते हैं। विकृति आकस्मिक रूप में उत्पन्न होती है।

३. अम्लता की उत्पत्ति से प्रायः पेट के ऊपरी भाग में बेचैनी, डकार आना तथा अग्निमान्द्य जैसे लक्षण उत्पन्न होते हैं।

४. वक्ष के मध्य में स्टर्नम के पीछे जलन युक्त पीड़ा होती है।

५. कभी-कभी वमन तथा उसमें रक्त की उपस्थिति मिलती है। एञ्जाइना पेक्टोरिस की भाँति वक्ष तथा बाईं भुजा में पीड़ा होती है।

६. कभी-कभी गर्भवती स्त्रियों में भी हर्ट-बर्न के लक्षण गर्भावस्था के अन्तिम महीनों में उपस्थित होते हैं। प्रसव के पश्चात् प्रायः यह लक्षण गायब हो जाते हैं।

७. छाती में जलन की अनुभूति प्रायः गरिष्ठ भोजनोपरान्त अथवा लेटते समय होती है।

८. गर्म पेय पीने के पश्चात् अथवा अधिक पेय की उपस्थिति में जलन होती है। इसे हॉट-टी-टेस्ट (Hot-tea-test) कहते हैं।

९. ईसोफेगस कभी-कभी शोथयुक्त हो जाता है।

निदान (Diagnosis)—इस रोग की प्रमुख पहिचान यह है कि रात्रि में भोजन करने के बाद सीने में जलन होती है।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—उपरोक्त लक्षणों से कभी-कभी पेप्टिक अल्सर तथा पित्ताशयशोथ का भ्रम हो जाता है।

उपद्रव (Complications)—१. ईसोफेजियल अलसर।

२. स्ट्रिक्चर आफ ईसोफेगस।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. गैस्ट्रिक अल्सरेशन ।
४. स्ट्रेन्गुलेशन ।
५. परफोरेशन ।
६. गम्भीर स्वरूप का रक्तस्राव ।
७. एस्पिरेशन न्यूमोनिया ।

अन्वेषण (Investigation)—१. 'बेरियम-मील' एक्स-रे में ईसोफेगेस तथा आमाशय ट्रेण्डेलनबर्ग स्थिति (Trendelenburg position) मिलती है ।

२. ईसोफेगस की इण्डोस्कोपिक परीक्षा में—ईसोफेगस में अल्सर की उपस्थिति मिलती है । ईसोफेगस नम होता है । साथ ही प्रत्येक श्वास के साथ गैस्ट्रिक पदार्थ ऊपर-नीचे आते हैं । यह चिह्न स्लाइडिंग टाइप में दिखलाई देते हैं ।

चिकित्सा (Treatment)—

१. ℞ म्यूकेन (Mucaine) ।
मात्रा—१-२ चाय चम्मच दिन में ३ बार भोजन से १५ मिनट पूर्व तथा १ मात्रा रात्रि में सोते समय ।

२. रोगी को चारपाई का सिरहाना ९-१०" ऊँचा करके सोना चाहिए ।
३. शरीर का वजन तथा मोटापा घटाना चाहिए ।
४. सेडेटिव ड्रग ट्राईक्लोफोस (Triclofos) ।
व्या० नाम—ट्राईक्लोरिल (Tricloryl) ।
मात्रा—०.५ ग्राम दिन में ३ बार ।
५. बेरालगन (Beralgan) (हैक्स्ट) ।
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार ।
६. भोजन के बाद २ घण्टे तक बिल्कुल न लेटें ।
७. हलका भोजन लें । शाम के समय मद्यपान न करें ।
८. ऐस्प्रिन तथा नॉन स्टेराइडल एण्टी-इन्फ्लैमेटरी औषधियों का निषेध ।
९. कॉफी और धूम्रपान का निषेध ।
१०. दाहिनी करवट लेट कर सोयें ।
११. रेगलान (Reglon) अथवा पेरिनार्म (Perinorm) टेबलेट ।
मात्रा—१ गोली तत्काल भोजन के बाद और भोजन से पूर्व लें ।
एण्टेसिड भोजन के मध्य में एवं रात्रि के समय दो गुनी मात्रा में लें ।

शल्य-चिकित्सा (Surgical treatment)—औषधि-चिकित्सा से लाभ न मिलने पर विशेष कर 'रोलिंग हर्निया' में शल्य-चिकित्सा का सहारा लें ।

नोट—यदि रोगी अपना वजन घटा ले और मिर्च-मसाले युक्त भोजन का त्याग कर दे तो उसे और भी राहत मिल सकती है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यकृद्-वृद्धि
(Enlargement of the Liver)

पर्याय—इसे जिगर का बढ़ना (Enlargement of liver) अथवा यकृद्-वृद्धि कहते हैं।

परिचय—यकृत् के नये प्रदाह (Acute hepatitis) के पश्चात् उसके परिणामस्वरूप अथवा यकृत् में बार-बार रक्त-संचार होते रहने पर यकृत् का पुराना प्रदाह होकर यकृत् की वृद्धि हो जाती है।

कारण—(Etiology) १. अधिक मसालेदार पदार्थों का सेवन।

२. अधिक मद्यपान करने से।

३. शरीर में अधिक उष्णता के कारण।

४. अधिक आरामतलबी का जीवन व्यतीत करने पर पित्त की मात्रा बढ़ जाती है।

५. **विषैली औषधियाँ**—संखिया, नाग, स्वर्ण, फॉस्फोरस आदि का अधिक तथा दीर्घकाल तक सेवन करते रहने से।

६. हर प्रकार के संक्रमण ज्वर में यकृत् बढ़ जाता है।

७. सामान्य कॉमला एवं मूषक विषज शोथ।

८. आमाशय एवं पक्वाशय से संक्रमण का प्रसार।

९. यकृद्-विद्रधि (Liver abscess)।

१०. पित्ताश्मरी एवं शोथ के कारण।

जीर्ण यकृद्-वृद्धि के कारण—

११. जीर्ण हृदय, फुप्फुस तथा वृक्करोग।

१२. यकृद्-विद्रधि।

१३. पित्तप्रणाली का अवरोध।

१४. रक्त के रोग।

१५. मधुमेह, सन्धिवात, उपदंश आदि जीर्ण रोग।

विशेष कारण (Special causes)—१. पित्तकारक द्रव्यों के अधिक सेवन से।

२. यकृत् प्रदाह के बाद प्रायः यकृद्-वृद्धि हो जाती है।

लक्षण (Symptoms)—१. पेट के दाहिनी तरफ भारीपन लगना।

२. रुक-रुक कर तीर जैसा चुभने वाला दर्द।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. रोगी की भूख मारी जाती है।

४. अजीर्ण तथा बदहज्मी का लक्षण रहता है।

५. जिह्वा पर लेप-सा चढ़ा होता है।

६. मुँह का स्वाद कडुवा होता है।

७. आँखें पीली पड़ जाती हैं।

८. या तो मलावरोध रहता है अथवा पतले दस्त आते है।

९. रोगी को कभी-कभी बुखार रहता है।

विशेष चिह्न (Special sign)—१. ○ यदि यकृत् नीचे की ओर बढ़ता है तो पंजरे की हड्डी के नीचे हाथ से दबाने पर इसका पता लग जाता है।

२. ○ यदि यकृत् ऊपर की ओर बढ़ता है तो कन्धे की हड्डी में पीड़ा होती है। रोगी को खाँसी आती है तथा साँस लेने में कष्ट होता है।

निदान (Diagnosis)—रोगी को लिटाकर हाथ की अँगुलियों से सबसे नीचे वाली पसली के बराबर जिगर को दबाने पर कड़ा प्रतीत हो और सुई के चुभने जैसा दर्द हो तो समझना चाहिए कि रोगी का जिगर (Liver) बढ़ा हुआ है।

भावीफल (Prognosis)—○ यदि रोगी की उचित चिकित्सा न की गयी तो 'सिरोसिस आफ द लिवर', यकृत् विद्रधि तथा कॉमला आदि रोग की सम्भावना रहती है।

चिकित्सा (Treatment)—(१) **सामान्य चिकित्सा**—

१. रोग के मूल कारण को दूर करना ही इसकी उचित चिकित्सा है।

२. आहार-विहार तथा स्वास्थ्य के नियमों का कड़ाई से पालन करना चाहिए।

३. रोगी को कोष्ठबद्धता से बचायें। इसके लिए मृदु विरेचन दें।

४. रोगी को दीपन, पाचन, रोचक तथा विशिष्ट यकृद्-विकारनाशक औषधियों की उचित व्यवस्था करनी चाहिए।

५. रोगी को कच्चे पपीते का शाक तथा पका पपीता खाने को दें।

६. रोगी को विश्राम दें।

७. यकृत् पर गरम सेंक करना चाहिए।

८. यदि रोगी को बुखार हो तो—बार्ली, साबूदाना तथा अरारोट आदि का सेवन करायें।

○ रोगी को दूध अधिक मात्रा में दें। शाक-सब्जी आवश्यक मात्रा में।

औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ मिक कैपसूल (Mic cap.) (एलेम्बिक)

मात्रा—१-२ कैपसूल दिन में २ या ३ बार।

अथवा—लिट्रीसान टेबलेड (Litrisan tab.)

मात्रा—३ गोली दिन में ३ बार भोजन के बाद।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—लिब्यूल्स विद फोलिक एसिड बी$_{१२}$
मात्रा—१ कै० दिन में २ या ३ बार।
अथवा—लिव-५२ टेबलेट।
मात्रा—२-३ गोली दिन से ३ बार।
अथवा—नियो-मेथिडिन (Neo-methidine)
तथा—विटामिन-सी १०० मि० ग्रा० की १ गोली।
मात्रा—दोनों की १-१ गोली मिलाकर दिन में ३ बार।
साथ ही—लिवोजिन (Livogin)
मात्रा—१-२ ड्राम दिन के ३ बार भोजनोपरान्त।
अथवा—लिवो बी-कॉम्प्लेक्स विद बी$_{१२}$
मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३ बार भोजन के बाद।
अथवा—लिवरबिन फोर्ट (Liverbin forte)
मात्रा—२-३ चम्मच दिन में ३ बार भोजन के बाद।
अथवा—सिरप मिथियोनिन विद कोलीन
मात्रा—१-३ ड्राम दिन में ३ बार भोजन के बाद।
अथवा—कोलिबिल-एस (Colibil-S)
मात्रा—१-२ चम्मच दिन में २-३ बार।
साथ ही—लिवर एक्स्ट्रेक्ट विद विटामिन 'बी'
मात्रा—२-३ मिली० मांसपेशीगत नित्य अथवा प्रति तीसरे दिन।
अथवा—इञ्जे० मर्सेलिल (Inj. Merselyl) (बी० आई० कं०)
मात्रा—१-२ मिली० नित्य अथवा प्रति तीसरे दिन मांसपेशी में।
अथवा—इञ्जे० मेक्राबिन (Inj. Mecrabin) (ग्लैक्सो)
मात्रा—१ मिली० नित्य मांसीपेशीगत।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

१. रक्तल्पता की स्थिति में—

℞ टेबलेट फोलिक एसिड ५ मि० ग्रा०।

मात्रा—१-२ गोली दिन में १ बार १० दिनों तक। तत्पश्चात् १-१ गोली प्रतिदिन।

२. यकृत् के स्थान पर पीड़ा—

℞ ग्लिसरीन बेलाडोना अथवा लिण्ट ए० बी० सी० लगायें।

मिश्रित चिकित्सा (Mixed therapy)—

अत्यधिक पीड़ा की स्थिति में—

℞ टेबलेट सिबाल्जिन	१ गोली
टेबलेट टासिण्टिन	१ गोली
ग्लूकोज	६०० मि० ग्रा०
	१ मात्रा।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी १ मात्रा १-१ घण्टे पर जल के साथ।
इसके साथ ही—टेबलेट कोलेक्ट्रिना
मात्रा—१-२ गोली दिन में २-३ बार।
अथवा—टेबलेट टेट्रासाइक्लीन २५० मि० ग्रा०
मात्रा—१ गोली दिन में ४ बार। □

पाचन-संस्थान के रोग 1/34

व्रणीय बृहदन्त्रशोथ
(Ulcerative Colitis)

पर्याय—व्रणीय बृहदंत्रशोथ, बड़ी आँत की सूजन।

परिचय—Ulcerative colitis is a chronic effection of the colon characterized by suppurative ulceration of mucous membrane.

इस रोग में बृहदन्त्र की श्लैष्मिककला में शोथ होकर बृहदन्त्रशोथ तथा व्रण (Ulcers) का रोग हो जाता है। जिसके कारण रक्त और आँव से मिश्रित अनेक पतले दस्त आते हैं।

अल्सरेटिव कोलाइटिस : एक अन्य परिभाषा के अनुसार—

Ulcerative colitis is a chronic inflammatory disease of the colon of unknown cause characterized by bloody diarrhoea, a tendeney to remission and exacerbation, and involvement maily of the left colon. It is primarily a disease of adolescents and young adults but may have its onset in any age group.

कारण (Etiology)—१. इसके उत्पादक कारण का अभी तक कोई निश्चित आधार नहीं प्राप्त हो सका है।

२. यह बीमारी स्त्री तथा पुरुषों में समान रूप से किसी भी उम्र में ही सकती है।

३. कुछ लोग इस रोग का कारण पैरासिम्पैथेटिक नाड़ीमण्डल को मानते हैं।

४. यह भी समझा जाता है कि चिन्ता, क्रोध, शोक आदि मानस विकारों में शीघ्र अभिभूत हो जाने से यह रोग हो जाता है। 'हाइपोथैलमस' के विक्षोभ या मानसिक विक्षोभनशीलता को इस रोग का प्रधान कारण कहा जाता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

५. कुछ लोग इस रोग का कारण स्वरोगक्षमता (Auto-immunity) बतलाते हैं।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. कुछ लोग इसे विभिन्न एण्टीजेन्स जैसे—दूध, प्रोटीन या पॉलीसैकेराइड्स' आदि का री-एक्शन मानते हैं। परन्तु सभी रोगियों में इस रोग का कारण भोजन सम्बन्धी कोई एलर्जी ही हो, ऐसा निश्चित नहीं है।

७. जेनेटिक फैक्टर (Genetic factor)।

८. कुछ केसिस में कार्सीनोमा एवं रक्त में इम्ब्रियोनिक एण्टीजन मिलता है जो रोग का कारण हो सकता है।

पैथोलोजी (Pathology)—○ पहले मलाशय तत्पश्चात् पेल्विक कोलन की म्यूकस तथा सब-म्यूकस मेम्ब्रेन में एक्जिमा के समान लालिमा युक्त शोथ हो जाता है और श्लेष्मकला कुछ मोटी हो जाती है। इस शोथ-युक्त प्रदेश में मल का स्पर्श होने से रक्तस्राव होने लगता है। यहाँ से यह शोथ क्रमशः बड़ी आँत की श्लेष्मकला में ऊपर की ओर बढ़ जाता है।

रोग के पुराने होने पर इस शोथ युक्त प्रदेश की झिल्ली स्थान-स्थान पर मृत होकर झड़ जाती है, जिससे बृहदन्त्र में छोटे-छोटे उथले व्रण हो जाते हैं। व्रणों के बीच की श्लेष्मकला शोथ युक्त हो जाती है।

○ रोग के और अधिक पुराना होने पर श्लेष्मकला के नीचे का अवयव (Submucous tissue) कुछ मोटा और कठोर होने लगता है, जिससे आँत के बीच का भाग कुछ तंग हो जाता है। इस प्रकार से आँत का आकार बदल जाता है। शोथ के बाद आँत क्षीण होने लगती है और उसकी लचक जाती रहती है। वह मल का शोषण नहीं कर पाती है और विक्षुब्ध होने के कारण मल को शीघ्रातिशीघ्र आगे फेंकने लगती है, जिससे 'अतिसार' का रोग हो जाता है।

लक्षण (Symptoms)—१. इसका आक्रमण तीव्र तथा धीरे-धीरे दोनों प्रकार से होता है।

२. यह विकृति विशेषरूप से स्त्रियों में मिलती है और इसका पारिवारिक इतिहास भी मिलता है।

३. २५-३० वर्ष की आयु के स्त्री-पुरुष जो बैठ कर कार्य करते हैं, उनमें यह पाया जाने वाला पुराना रोग है।

४. यह शनैः-शनैः अज्ञात रूप में प्रारम्भ होता है। पहले बिना अतिसार के ही मल में रक्त तथा पूय आने लगता है। यह अवस्था महीनों तक रह सकती है। इसके बाद अतिसार का लक्षण प्रारम्भ होता है। अतिसार महीनों एवं वर्षों तक रहता है। ○यह कभी कम हो जाता है तो कभी बढ़ जाता है।

५. ○ अतिसार (Diarrhoea) इस रोग का प्रधान लक्षण है, जो अर्ध द्रव (Semi-liquid) होता है। यह मात्रा में अधिक होता है। साथ ही दिन में इसके २-३ से ५-१० तक वेग आते हैं। इस रोग में दस्त का रंग

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीलापन लिये होता है। आँव और रक्त पृथक्-पृथक् न आकर मल के साथ आते हैं। साथ ही बहुत दिनों तक जारी रहते हैं।

६. कभी-कभी दस्त के साथ मिला हुआ रक्त अधिक मात्रा में आता है।

७. ऐनोरेक्सिया, रक्तातिसार, दुर्बलता तथा शक्तिहीनता के लक्षण उपस्थित मिलते हैं। ○ ये रोगी में पाण्डुता एवं आइरन की कमी से होते हैं।

८. गम्भीर स्वरूप में रोगी अधिक बीमार प्रतीत होता है। रोगी का भार धीरे-धीरे घटता जाता है।

९. उदर-पीड़ा तथा आध्मान (Distension) प्रायः मिलता है।

१०. अधिक दस्तों के कारण निर्जलीभवन (Dehydration) उत्पन्न हो जाता है, जिससे इलेक्ट्रोलाइट्स का सन्तुलन बिगड़ जाता है।

११. इलियक फोसा पर दबाने से स्पर्शाक्षमता का लक्षण मिलता है।

१२. ○ रोगी का पेट उसे अफारा रहते हुए भी पिचका-सा रहता है।

१३. इस रोग में वसा के अधिक संचय से यकृत् कुछ बढ़ जाता है तथा उसमें कुछ दर्द भी हो सकता है।

Essentials of diagnosis—Bloody diarrhoea with lower abdominal cramps.

2. Mild abnormal tenderness, weight-loss, fever.

3. Anaemia, no stool pathogens.

4. The stool are dark, offensive and contain mucous and blood.

5. Pyrexia is present (101°–102°)

6. Specific x-ray and sigmoidoscopic abnormalities.

विशेष अन्वेषण (Special investigation)—

१. स्टूल कल्चर (Stool culture)—इसमें किसी जीवाणु की उपस्थिति नहीं मिलती है। परन्तु R. B. C. असंख्य, म्यूकस तथा कुछ पूय सैल्स उपस्थित मिलते हैं।

२. ल्यूकोसिटोसिस तथा B. S. R. बढ़ा हुआ मिलता है एवं प्रोटीन कॉम्प्लेक्स कम होता है।

३. सीरम इलेक्ट्रोलाइट्स लेवल कम होता है।

४. पुराने रोग में बेरियम का एनीमा देने पर एक्स-रे द्वारा देखने पर बड़ी आँत अधिक सक्रिय दीखती है। श्लेष्मकला तथा मस्क्यूलेरिस म्यूकोजा के मृत हो जाने के कारण आँत में पाये जाने वाले हास्ट्रा (Haustra) दिखलाई नहीं देते।

○ आँत पाइप की तरह तथा कुछ अधिक संकुचित दिखलाई पड़ती है। उसमें व्रणों के अधिकाधिक गड्ढे दिखलाई पड़ते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपद्रव (Complications)—(१) स्थानीय (Local)—

१. एनल फिस्चुला (Fistula in ano) ।
२. पेरीएनल फिस्चुला (Perianal fistula) ।
३. रेक्टल प्रोलैप्स (Rectal prolaps) ।
४. रक्तस्राव (Haemorrhage) ।
५. कोलन का छिद्रीकरण (Perforation of colon) ।
६. कोलन का विस्तार (Dilatation of colon) ।
७. पॉलिप तथा कार्सीनोमा (१०–१५%) की उत्पत्ति ।

(२) सिस्टेमिक उपद्रव (Systemic complication)—

१. सोरियेसिस (Soriasis) ।
२. पायोडर्मा गैंग्रीनोसम ।
३. स्क्लेरोरिस ऑफ सेरिब्रो-इलियक ज्वाइण्ट ।
४. इपीस्केलाइटिस ।
५. आइराइटिस ।
६. यूवे आइटिस ।
७. कंजंक्टिवाइटिस ।
८. फैटी लिवर ।
९. कॉलिजिओ-कार्सीनोमा ।
१०. थ्रोम्बोफ्लेबाइटिस ।
११. न्यूट्रीशनल डिफीसियेन्सी ।

भावीफल (Prognosis)—१. इस रोग से ग्रसित कोई भी रोगी ठीक नहीं होता है । अधिकतर चिर रोगी ही होते हैं । इस रोग को अधिक भयंकर नहीं समझना चाहिए ।

२. उपद्रव होने पर यह रोग असाध्य हो जाता है । अन्यथा यह याप्य है ।

३. यह रोग प्रबल होकर पुनः-पुनः अच्छा हो जाता है ।

४. यदि प्रथम वर्ष में रोगी की अवस्था सुधर जाती है, तो यह रोग वर्षों तक भी घातक नहीं होता है ।

चिकित्सा (Treatment)—

सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी को शय्या पर पूर्ण विश्राम दें ।
२. आहार पूर्णतया पौष्टिक तथा विटामिन से भरपूर हो ।
३. डेयरी प्रोडक्ट्स का निषेध ।
४. 'सेडेटिव' तथा 'ट्रैंक्विलाइजर' देना चाहिए ।
५. अनीमिया तथा रक्तस्राव की उपस्थिति में ब्लड-ट्रान्सफ्यूजन का प्रयोग ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. रोग के ठीक-ठीक कारणों का पता न होने से इसकी कोई प्रामाणिक चिकित्सा नहीं है।

७. किसी-किसी में यह रोग दूध से बढ़ता है। फिर भी यदि अनुकूल हो तो दूध तथा मट्ठा इस रोग के लिए सर्वोत्तम आहार है। १ दिन में ३ लिटर तक दूध दिया जा सकता है।

○ केसीलान (Casilan) १ बड़ा चम्मच दूध के साथ दिन में ३ बार दे सकते हैं। 'प्रोटीनेक्स' भी दूध में दिया जा सकता है।

८. अधिक अतिसारों के कारण शरीर में जल की मात्रा कम हो जाती है। इसलिए जल अधिक देना चाहिए। यदि रोगी को दूध अनुकूल न पड़े तो बिलकुल नहीं देना चाहिए।

९. रोग की तीव्रावस्था में फल का रस, ग्लूकोज तथा सांबूदाना ही देना चाहिए।

१०. यदि एलर्जी का सन्देह हो तो दूध, अन्न आदि में से एक-एक का परित्याग करके देखना चाहिए।

११. यदि रोगी को भोजन में विटामिन 'ए० बी० सी०' पूरी मात्रा में नहीं मिल पा रहे हों तो बी-प्लेक्स (Beplex) २ कैप्सूल नित्य तथा यीस्ट आदि कृत्रिम विटामिन्स युक्त औषधियाँ दें।

१२. व्रणों के शीघ्र रोहण के लिए—विटामिन-बी$_{१२}$ या क्रूड लिवर के साथ-साथ विटामिन-सी का प्रयोग करना चाहिए।

१३. अधिक रक्तस्राव की स्थिति में विटामिन 'के' का उपयोग उत्तम होता है।

नोट—कुछ लोगों का कथन है कि यदि रोगी को ५-६ किलो सेव का गूदा प्रतिदिन दिया जाये तो रोग शीघ्र शान्त हो जाता है।

१४. अवस्था में सुधार आने पर भोजन की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए।

१५. विटामिन्स के अतिरिक्त रोगी को भोजन के द्वारा या औषधि द्वारा १५-२० मि० ग्रा० आयरन + ५०० मि० ग्रा० कैल्शियम भी प्रतिदिन दें।

१६. यदि रोगी को मन्दाग्नि का रोग हो तो भोजन के साथ एसिड हाइड्रोक्लोरिक डिल १५-३० बूंद, आधा ग्लास जल में मिलाकर प्रत्येक भोजन के साथ दें।

औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ सल्फासालाजीन (Sulphasalazine)

व्या० नाम—सालाजोपायरिन (Salazopyrine)

मात्रा—१ ग्राम दिन में ४ बार।

नोट—यह शोथ को शीघ्र समाप्त कर देती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—सालाजोपायरिन ०·५ ग्राम की गोली आरम्भ में ८ से १२ गोलियाँ ३ सप्ताह तक दें। तत्पश्चात् कुछ लाभ मिलने पर दिन में ६ गोली कर दें।

हाइड्रो-कार्टीसोन (Hydrocartisone)

मात्रा—३०० मि० ग्रा० I/V प्रतिदिन।

अथवा—प्रेडनीसोलोन (Prednisolone)

मात्रा—६० मि० ग्रा० प्रतिदिन विभाजित मात्रा में प्रति ६ से ८ घण्टे पर।

स्टेराइड्स का प्रयोग स्थानीय रूप में एनिमा द्वारा भी किया जा सकता है। मुख्य रूप से १०० मि० ग्रा० हाइड्रोकार्टीसोन हेमीसक्सीनेट को १०० मिली० सैलाइन में मिलाकर दिन में १ या २ बार १० से १५ दिनों तक दिया जा सकता है।

नोट—यदि दीर्घकाल तक 'स्टेराइड्स' की आवश्यकता पड़े तो इसके स्थान पर 'सालाजोपायरिन' अधिक उपयुक्त रहता है।

डाई-सोडियम क्रोमोग्लाइकेट (Di-sodium chromoglycate)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार मुख-मार्ग से।

साथ ही—२०० मि० ग्रा० एनीमा द्वारा।

दस्तों के शमन के लिए—कोडीन फॉस्फेट ३०-६० मि० ग्रा० अथवा 'विस्मथ केओलिन' मिक्श्चर दें।

वमन निरोध हेतु—ट्राईफ्लूओपेराजीन (एस्केजीन)

मात्रा—१-२ मि० ग्रा० मांसपेशीगत सूचीवेध द्वारा दें।

पेट-दर्द के लिए—बेरालगन (Beralgan)

मात्रा—२-५ मिली० मांसपेशीगत इञ्जेक्शन रूप में।

अनीमिया की स्थिति में—फैरस सल्फेट ३०० मि० ग्रा० दिन में २ बार।

अथवा—इम्फेरोन (Imferon) १०० मि० ग्रा० मांसपेशीगत १ दिन छोड़कर।

अथवा—१ ग्राम I/V इन्फ्यूजन के रूप में (५% ग्लूकोज के १ लीटर में) मिलाकर प्रति ६ घण्टे पर।

यदि रक्त अधिक निकल गया हो तो—ब्लड-ट्रान्सफ्यूजन दें।

नाड़ियों के विक्षोभ को शान्त करने के लिए—

℞ फीनोबार्बीटोन (Phenobarbitone)

मात्रा—१५ मि० ग्रा० दिन में ३ बार भोजन से पूर्व दें।

अथवा—एट्रोपीन सल्फेट

मात्रा—१५ मि० ग्रा० रात में १ बार त्वचा द्वारा।

अथवा—बेलाडीनल (Belladinal) (नि० सैण्डोज)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१५ मि० ग्रा० दिन में २ बार भोजन से पूर्व तथा रात में सोते समय।

अथवा—एण्ट्रीनिल (Antrenyl)

मात्रा—५ मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

अथवा—'प्रोबेन्थीन' (Probanthine)

मात्रा—१५ मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

नोट—इससे नाड़ियों का विक्षोभ शान्त होकर अतिसार बन्द हो जाता है।

रोग की तीव्रावस्था में—ACTH gel को ६० यूनिट मात्रा में I/M दिन में २ बार देने से लाभ मिलता है।

अथवा—५०० मिली० ग्लूकोज सैलाइन में २०-४० मिली० I/V दें।

अधिक अतिसार से शरीर में पोटेशियम की कमी हो जाती है, अतः पोटैशियम क्लोर० १ ग्राम दिन में ३ बार। अथवा पोटै० क्लोर० (Pot. chlor.) को पिलाते रहें।

एम्पीसिलीन, जेण्टामाइसिन, क्लोरम्फेनिकाल। जेण्टामाइसिन को अकेले अथवा विभिन्न मिश्रणों के साथ दिया जा सकता है।

नोट—यदि उपरोक्त औषधि-चिकित्सा तथा कॉर्टीसोन एनीमा से भी रोग ठीक न हो तो—

○ कोलेक्टोमी (Colectomy) का ऑपरेशन आवश्यक हो जाता है।

○ निरन्तर रक्तस्राव (Profuse haemorrhage), पेरीएनल एवं रेक्टम के रोगों में तथा कार्सीनोमा आदि में शल्य-चिकित्सा का ही निर्देशन करना चाहिए।

कोलाइटिस में सेवन करने योग्य पेटेण्ट मेडिसिन्स—

१. एण्टेरोमाइसिटीन सल्फा (डेज मेडिकल) २-२ गोली दिन में ४ बार।

२. एमीबिण्डॉन (इण्डोन) २-२ गोली दिन में ३ बार १४ दिन तक।

३. डेरीकोन (Daricon) (फाइजर कं०) १-१ गोली दिन में ४ बार।

४. स्टेलाबिड (Stelabid) (स्थिम क्लिन) १ गोली दिन में २ बार।

५. होस्टाकोर्टीन एच० (हैक्स्ट) १-२ गोली प्रति ४ घण्टे पर।

६. स्ट्रीसेटाल (Strycetal) (साराभाई) २-४ गोली दिन में ३-४ बार।

७. एण्टेरो बायोफार्म (सीबा कं०) २-२ गोली दिन में ५-६ बार।

८. डाई-आयोडो हाइड्रोक्सीक्वीनोलीन—२-२ गोली दिन में ३ बार १० से १५ दिन तक।

९. बार्डेज (Bardase) (P. D. Co.)—१ गोली दिन में ३ बार। इसका लिक्विड भी आता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१ चम्मच दिन में ३ बार।

निषेध—ग्लाइकोमा के रोगी में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

१०. गैस्टाबिड-१ (Gastabid-1) (टोरेण्ट) १ गोली दिन में २ बार। गैस्टाविड-२ (Gastabid-2) भी आता है।

११. प्रोबेन्थीन (सेरले कं०) १ गोली दिन में २-३ बार।

१२. सेरी-बेन्थीन (सेरी कं०) १ कै० दिन में २-३ बार।

१३. डिसेन्क्लोर (Dysenclor) (S. G. Pharma) २ गोली दिन में ३ बार।

अन्य व्यवस्थानुसार कोलाइटिस की चिकित्सा—

1. High caloric diet.

2 Correction of anaemia with iron and vitamins.

3. Control of diarrhoea with anticholinergics like lomotil, codeine preperations.

Drugs—

(i) Salazopyrin—4–6 gm daily for 8 to 10 days.

(ii) Three forms are used :

(a) Predsol enema.

(b) Cortisone by mouth (300 mg. of hydrocortisone daily)

(c) ACTH—40 units daily. □

पाचन-संस्थान के रोग 1/35

मुखगुहा का कैंसर

(Cancer of the Buccal Cavity)

इसके अन्तर्गत निम्न अंगों के कैंसर का समावेश होता है—

१. निचले ओष्ठ का कैंसर।

२. ऊपरी ओष्ठ का कैंसर।

३. जीभ का कैंसर।

बक्कल म्यूकोसा का कैंसर—

१. गाल का कैंसर।

२. मसूड़ों का कैंसर।

३. निचले जबड़े का कैंसर।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निचले ओष्ठ का कैंसर
(Cancer of the Lower Lip)

परिचय—इस प्रकार का कैंसर निचले ओष्ठ की म्यूकस मेम्ब्रेन को आक्रान्त करता है। मुख के कैंसरों में यह सबसे अधिक मिलने वाला कैंसर है। इससे २५-३०% व्यक्ति आक्रान्त होते हैं।

आयु तथा लिंग—४० वर्ष से अधिक अवस्था वाले व्यक्तियों में। स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में अधिक।

रोग के कारण (Causes of disease)—१. आहार में पौष्टिक तत्त्वों की कमी।

२. जो व्यक्ति अधिक समय तक ओठों के बीच पाइप दबाये रखे होते हैं, उनमें यह कैंसर अधिक होता है। इसका कारण यह है कि ओठों में एक ही स्थान पर वर्षों तक पाइप को दबाये रखने के कारण उसकी गर्मी से उत्पन्न स्थानिक क्षोभ की अवस्था उत्पन्न हो जाती है।

३. पुरुषों में निचले ओठ के कैंसर के प्रकोप का प्रधान कारण तम्बाकू, जर्दा, पाइप तथा धूम्रपान का अधिक प्रयोग है।

लक्षण (Symptoms)—१. सर्वप्रथम रोगी के निचले होष्ठ में जले छाले के समान दाग दिखलाई देता है, जो आगे चल कर अलसर का रूप ले लेता है।

२. किसी-किसी रोगी के प्रभावित स्थान पर एक मोटी पपड़ी-सी बन जाती है, जो आगे चल कर व्रण का रूप धारण कर लेती है और उससे रक्त-स्राव भी होने लगता है।

३. व्रण इसी रूप में अधिक समय तक चलता रहता है।

निदान (Diagnosis)—१. उपरोक्त लक्षणों के आधार पर इस कैंसर का सुगमता से निदान हो जाता है।

२. जीवऊति परीक्षा (Biopsy) से रोग-निदान में विशेष सहायता मिलती है।

चिकित्सा (Treatment)—१. शल्यचिकित्सा (Surgical treatment)।

२. क्यूरी चिकित्सा (Curie therapy)।

३. एक्स-रे चिकित्सा (X-ray treatment)।

○ इसमें जब कैंसर आकार मे छोटा होता है, तब आक्रान्त भाग को काट कर निकाल दिया जाता है।

○ जब उक्त कैंसर का व्यापक प्रसार हो जाता है तब १ से ६ सप्ताह तक की एक्स-रे चिकित्सा चलाकर कैंसर पर नियंत्रण किया जाता है।

○ तत्पश्चात्—प्लास्टिक चिकित्सा (Plastic surgery) द्वारा रुग्ण भाग को सामान्य रूप दे दिया जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊपरी ओष्ठ का कैंसर
(Cancer of the Upper Lip)

परिचय—यह कैंसर निचले ओष्ठ के कैंसर के मुकाबले कम मिलता है। ऐसा कैंसर पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में अधिक होता है।

कारण (Etiology)—स्त्रियों में अधिक लिपिस्टिक का प्रयोग करने से ऊपरी ओष्ठ के कैंसर की सम्भावना होती है।

लक्षण (Symptoms)—स्त्री के ऊपरी ओष्ठ में एकाएक छाले के रूप में शोथ उत्पन्न हो जाता है, जिसमें आगे चल कर घाव बन जाता है।

निदान (Diagnosis)—इसका वास्तविक निदान जीव-ऊति परीक्षा (Biopsy) द्वारा होता है।

चिकित्सा (Treatment)—विकिरण (Radiation) चिकित्सा।

जिह्वा का कैंसर
(Cancer of the Tongue)

परिचय—यह कैंसर ४० से ६० वर्ष की आयु में अधिक होता है। हमारे देश में जीभ का कैंसर सर्वाधिक रूप में होता है।

कारण (Etiology)—१. मुख की स्वच्छता की कमी इसका सबसे बड़ा सहायक कारण है।

२. दाँतों में कीड़ा लगने से।

३. सुर्ती, तम्बाकू, खैनी, सुँघनी, सिगरेट, पाइप आदि के अधिक सेवन से।

४. तम्बाकू के साथ मद्यपान का अधिक सेवन।

५. जीभ के कैंसर की उत्पत्ति में पान का अधिक सेवन भी सहायक कारण है। जिसमें चूना, कत्था तथा सुपारी अथवा तीनों का मिश्रण विशेष प्रभावी होता है।

६. जिह्वा की श्वेतशल्कता (Leukoplakia) कैंसर की उत्पत्ति में पूर्व सहायक का कार्य करती है।

विकृति-विज्ञान (Pathology)—इस कैंसर में जीभ पर स्थानिय व्रणोत्पत्ति होती है। कभी-कभी विक्षेप के कारण मुखगुहा की रक्तवाहिनियाँ भी कैंसर से आक्रान्त हो जाती हैं।

लक्षण—१. सर्वप्रथम रोगी को कैंसर से प्रभावित विक्षिप्त स्थान पर कुछ पीड़ा होती है।

नोट—इस लक्षण के होने पर रोगी में मुख की गंदगी तथा दाँत में कीड़े लगने का भ्रम हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. जैसे-जैसे कैंसर बढ़ता जाता है, उसके व्रण की उत्पत्ति तथा द्वितीयक संक्रमण (Secondary infection) हो जाता है।

३. लार अधिक आती है और उसे निगलने में कष्ट होता है। कभी-कभी अधिक लार आने पर उसमें कुछ रक्त भी मिला होता है।

४. स्थानिक तीव्र वेदना—यह वेदना कभी-कभी सम्पूर्ण चेहरे तक फैल जाती है।

५. जिह्वा के प्रभावित स्थान पर कुछ-न-कुछ शोथ हो जाता है। यह आगे चलकर उभार के रूप में प्रकट होता है। जिह्वा से कुछ-न-कुछ लार आती रहती है।

अन्य लक्षणों में—१. जिह्वापाक (Glossitis) एवं मुखपाक (Stomatitis) इसके प्रमुख लक्षण हैं।

२. इसमें जिह्वा की गतिशीलता प्रायः समाप्त हो जाती हैं।

उपद्रव (Complications)—१. अत्यधिक रक्तस्राव।

२. चूषण न्यूमोनिया (Aspiration pneumonia)।

निदान (Diagnosis)—१. उपरोक्त लक्षणों के आधार पर स्पष्ट निदान हो जाता है।

२. जीवऊति (Biospy) परीक्षा से भी निदान में सहायता मिलती है।

नोट—इस परीक्षा में किसी चाकू के फल पर जिह्वा के विक्षति भाग के निदर्श को रख कर परीक्षा की जाती है।

चिकित्सा (Treatment)—१. शल्य-चिकित्सा (Operation)—इसमें प्रभावित भाग को काट कर निकाल दिया जाता है।

२. विकिरण-चिकित्सा (Radio therapy)—इस चिकित्सा से कैंसर की रोकथाम, द्वितीयक उपसर्ग तथा शोथ में काफी कमी आती है।

नोट—कैंसर की बढ़ी हुई अवस्था में—उच्च एक्स-रे वोल्टेज तथा कोबाल्ट चिकित्सा लाभकर होती है।

३. इण्टरस्टीशियल क्यूरी थेरापी (Interstitial curie therapy)—इस विधि में रुग्ण स्थान में रेडियम सुइयों का प्रवेश कराया जाता है।

नोट—बाह्य चिकित्सा के साथ-साथ इण्टरस्टीशियल क्यूरी थेरापी उपयुक्त होती है।

भावीफल (Prognosis)—१. रोगी की प्रारम्भिक अवस्था में उचित चिकित्सा से रोग ठीक हो जाता है।

२. जब कैंसर का काफी प्रसार हो जाता है तब रोग असाध्य हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गाल का कैंसर
(Cancer of the Buccal Mucosa)

परिचय—इस प्रकार का कैंसर गाल की आन्तरिक श्लेष्मकला द्वारा मसूड़ों के किनारे से प्रारम्भ होता है। यह कैंसर प्रधान रूप से जीर्ण विक्षोभ (Chronic irritation) के कारण होता है। यह स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में अधिक होता है। ६० वर्ष से अधिक आयु के लोगों में इसके होने की अधिक सम्भावना रहती है।

कारण (Etiology)—१. खाने वाली तम्बाकू इसका सहायक कारण है। ○ यह कैंसर दक्षिण भारत व गुजरात के निवासियों में अधिक होता है।

१. यह कैंसर उन व्यक्तियों में अधिक होता है जिन्हें सूखी सुपारी, कत्था, चूना, पिपरमेण्ट आदि मिलाकर खाने की आदत अधिक होती है।

लक्षण (Symptoms)–१. इस कैंसर की उत्पत्ति शनैः-शनैः होती है।

२. रोग के प्रारम्भ में रोगी को अपने गाल के अंदर की तरफ वेदना-रहित व्रण प्रतीत होता है, जो कभी-कमी दाँत के मसूड़े से भी उत्पन्न हो जाता है।

३. व्रण के चारों तरफ सफेद परत होती है; इससे कभी-कभी रक्तस्राव भी होता है।

४. रोग की उग्रावस्था में व्रण में शूल होता है तथा ग्रीवा की लसग्रन्थियाँ शोथयुक्त हो जाती हैं।

५. रोगी भोजन चबाने में कष्ट का अनुभव करता है।

६. रोग की बढ़ी हुई अवस्था में उक्त व्रण मुख की सम्पूर्ण म्यूकस मेम्ब्रेन को आच्छादित कर लेता है और वहाँ तन्तु शोथयुक्त हो जाते हैं।

७. जब कैंसर अन्दर की ओर बढ़ता है तो अधोहनु अस्थि (Mandible bone) तक आक्रान्त हो जाती है; ऐसी अवस्था में रोगी को अत्यधिक शूल होता है।

८. ○अन्त में यह कैंसर का व्रण बाहर से दिखलाई देने लगता है।

९. अन्तिम अवस्था में सेकेण्डरी इन्फेक्शन की अधिक सम्भावना रहती है। रोगी का सामान्य स्वास्थ्य गिर जाता है।

नोट—ऐसी अवस्था में रोगी आहार को चबाने में बिलकुल असमर्थ हो जाता है और यह क्रिया बिलकुल अवरुद्ध हो जाती है।

निदान (Diagnosis)—१. रोग का निदान प्रायः रोगी के पूर्व इतिहास से हो जाता है।

२. बायोप्सी परीक्षा निदान में अत्यन्त सहायक होती है।

आशुफल (Prognosis)—१. प्रारम्भिक अवस्था में यह साध्य है।

२. व्यापक प्रसार होने पर असाध्य हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा (Treatment)—प्रारम्भिक अवस्था में—

१. शल्य-चिकित्सा तथा विकिरण चिकित्सा से लाभ मिलता है।

२. रेडियम चिकित्सा भी लाभकारी होती है।

मसूड़ों तथा तालु का भाग आक्रान्त होने पर—कोबाल्ट टेलिथेरापी (Cobalt teletherapy) से लाभ मिलता है।

नोट—आक्रान्त भाग को काट कर निकाल दिया जाता है।

मसूड़ों का कैंसर
(Cancer of the Gum)

परिचय—यह कैंसर वृद्धावस्था में अधिक होता है और ४० वर्ष की कम अवस्था वालों में बहुत कम। निचले मसूड़ों का कैंसर ऊपरी मसूड़ों की तुलना में अधिक होता है।

कारण (Etiology)—१. दाँतों में कीड़े लगना।

२. सिफिलिस का रोग।

३. तम्बाकू का चूसने के रूप में अधिक सेवन। सुंघनी का अधिक प्रयोग।

४. कृतिम दाँतों का मसूड़ों में ठीक से फिट न होना, जिसके कारण व्रण का उत्पन्न होना।

लक्षण (Symptoms)—१. रोग के प्रारम्भ में भोजन चबाते समय मसूड़ों से रक्त आने लगता है। साथ ही कृतिम दाँतों को फिट करने में असुविधा होती है।

२. ○ विशेष रूप से पीछे के दाँतों के मसूड़ों में तथा दाँतों के चारों तरफ व्रण दिखलाई देता है।

३. ओटेल्जिया, तीव्रशूल आदि लक्षण भी मिलते हैं।

४. देखने पर रुग्ण मसूड़े रबर के समान फूले दिखलाई देते हैं।

५. कैंसर के प्रसार होने पर सरवाइकल लिम्फैटिक ग्लैण्ड्स शोथयुक्त हो जाते हैं।

६. ○ अन्त में अत्यधिक 'रक्तस्राव' तथा ब्रान्को-न्यूमोनिया के परिणाम स्वरूप रोगी की मृत्यु हो जाती है।

निदान (Diagnosis)—मसूड़ों की परीक्षा, पूर्व का इतिहास, दाँतों में कीड़ा लगना, सिफिलिस, मसूड़ों की हाथ से परीक्षा तथा बायोप्सी से निदान हो जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—

१. विकिरण चिकित्सा (Radio therapy)—रोग की प्रारम्भिक अवस्था में बाह्य विकिरण-चिकित्सा (External x-ray treatment) से लाभ मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—जब तक कैंसर का आकार ३ सेण्टीमीटर से अधिक नहीं होता है।

२. क्यूरी चिकित्सा (Curie therapy)—इस चिकित्सा में Surface curie therapy से अच्छा लाभ मिलता है।

३. शल्य-चिकित्सा (Surgical treatment)।

भावीफल (Prognosis)—समय रहते चिकित्सा करने पर लाभ की आशा की जाती है।

आहार-चिकित्सा—मूँग या मसूर की दाल, छोला, अरहर की दाल, शुद्ध मक्खन, चीनी आदि का प्रयोग।

निषेध—सभी प्रकार के खट्टे फल, शीतल जल, टहनियों की दातून करना तथा सुपारी चूसना।

कठोर तालु का कैंसर

(Cancer of the Hard Palate)

परिचय—यह मन्द गति से प्रसारित होने वाला कैंसर है। इसके बनने में कभी-कभी २० वर्षों से भी अधिक का समय लग जाता है।

कारण (Etiology)—१. अधिक धूम्रपान के विक्षोभ से उत्पन्न होता है; विशेष रूप से निम्न स्तर की सिगरेट का सेवन करने से।

२. कुछ व्यक्ति सिगरेट तथा बीड़ी के अग्रभाग को मुख के अन्दर रखकर धूम्रपान करते हैं, उनमें इस कैंसर की अधिक सम्भावना रहती है।

लक्षण (Symptoms)—**१. मन्द प्रकार के कैंसर में**—प्रारम्भ में कोई निश्चित लक्षण नहीं मिलता है।

उग्रावस्था में—बोलने तथा निगलने में अत्यधिक कष्ट होता है।

२. दुर्दम्य प्रकार (Malignant type)—स्थानिक शूल तथा रक्तस्राव (नासागत) के लक्षण मिलते हैं।

O इस कैंसर की विशेष बात यह है कि कठोर तालु की श्लैष्मिककला में व्रण (Ulcer) उत्पन्न हो जाता है।

निदान (Diagnosis)—१. निदान उपरोक्त लक्षणों तथा बायोप्सी के द्वारा सम्भव होता है।

२. एक्स-रे परीक्षा में कठोर तालु में छिद्र (Perforation) दिखलाई देता है।

चिकित्सा (Treatment)—**१. शल्य-चिकित्सा** (Surgical treat.)—इसमें अर्बुद को ऑपरेशन के द्वारा निकाल दिया जाता है।

२. विकिरण-चिकित्सा (Radio therady)—बाह्य विकिरण-चिकित्सा तथा रेडियम-चिकित्सा से विशेष लाभ मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निचले जबड़े का कैंसर
(Cancer of the Lower Jaw)

परिचय—इस प्रकार का कैंसर युवा व्यक्तियों में अधिक मिलता है। कभी-कभी वृद्धों में भी इसकी उपस्थिति मिलती है।

लक्षण (Symptoms)—निचले जबड़े में विरूपता तथा स्थानिक शोथ उत्पन्न हो जाता है।

निदान (Diagnosis)—एक्स-रे परीक्षा से निदान सम्भव होता है।

चिकित्सा (Treatment)—विकिरण चिकित्सा विशेष लाभकारी होती है। इस चिकित्सा को धीरे-धीरे कई माह तक चलाया जाता है।

○ अस्थि सार्कोमा में शल्य-चिकित्सा लाभकारी होती है। □

पाचन-संस्थान के रोग 1/36

आमाशय का कैंसर
(Cancer of the Stomach)

पर्याय—कार्सिनोमा वेण्ट्रिकुलि (Carcinoma ventriculli), गैस्ट्रिक कैंसर।

परिचय—आमाशय का कैंसर विशेषरूप से पुरुषों में ४० वर्ष की उम्र के बाद होता है। यह ब्लड-ग्रुप 'A' सब्जेक्ट्स में अधिक पाया जाता है। मृत्यु के समस्त कारणों में आमाशय कैंसर प्रमुख है। विश्व के लगभग १०% व्यक्ति आमाशय के कैंसर से मृत्यु को प्राप्त होते हैं।

○ आमाशय का कैंसर कैंसर विभाग का शल्य-सम्बन्धी रोग है। अतएव यहाँ इसका संक्षिप्त वर्णन किया जा रहा है, जिससे रोग के निदान में त्रुटि न हो। यह रोग बहुत धीरे-धीरे अज्ञात रूप में उत्पन्न होता है।

आयाशय-कैंसर का स्थान (Site of stomach cancer)—१. आमाशय का कैंसर सबसे अधिक 'पायलोरस' में अथवा हृदय भाग (Cardiac area) में होता है।

२. कभी-कभी आमाशय काय (Fundus of the stomach) में कैंसर की उत्पत्ति होती है।

विकृति (Pathology)—आमाशय का कैंसर पायलोरस में अवरोध तथा संकीर्णता के लक्षण उत्पन्न करता है। उसके पश्चात् यह आमाशय काय में होता है, जहाँ वह एक पिण्ड के समान प्रतीत होने लगता है। इसमें भी कम ही सही किन्तु एक असामान्य अवस्था वह होती है, जहाँ कैंसर कोशिकाएँ आमाशय की भित्तियों में इन्फिल्ट्रेशन (Infiltration) करती चली

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाती हैं। यह पेशियों का नाश करके स्वयं उसमें विस्तृत हो जाती हैं। ऐसी आमाशय भित्तियों में कोई गति नहीं होती है। ○ वह चमड़े की थैली के समान हो जाता है और इस कारण इसको चमड़े का थैला (Leather bottle stomach) कहा जाता है। इस प्रकार का कैंसर असाधारण है।

○ आमाशय का कार्सीनोमा म्यूकस सेक्रीएटिंग सैल्स (Mucous secreating cells) से उत्पन्न होता है।

कैंसर के कारण—1. Elderly male (Common)

2. Pernicious anaemia.

3. Patients with blood group 'A'

4. Chronic peptic ulcer.

अन्य सम्भावित कारण—अभी तक इसके सही-सही कारणों का पता नहीं चल सका है। सामान्यतया इसमें निम्न सहायक कारण हो सकते हैं—

१. आमाशय का जीर्ण क्षोभ (Chronic irritation of stomach)—जो मुख्य रूप से अत्यधिक मद्य का सेवन एवं तीक्ष्ण तथा गर्म पदार्थों का अत्यधिक सेवन करते हैं।

२. भोजन में अनियमितता (Irregularity in food)—भोजन में अनियमितता रहने पर कैंसर की अत्यधिक सम्भावना रहती है। इसलिए सभ्य समाज के व्यक्तियों में आमाशय का कैंसर निम्न वर्ग के व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक होता है।

३. आमाशयिक पॉलिपी, परनीसियस अनीमिया, Alchorrhydria आदि रोगों से पीड़ित व्यक्तियों में इस रोग की अधिक सम्भावना रहती है।

४. ○ कुछ वैज्ञानिकों का मत है कि जीर्ण आमाशयशोथ (Chronic gastritis) तथा क्रॉनिक गैस्ट्रिक अल्सर आमाशय-कैंसर के मूल कारण हैं। पर यह कारण अब भी विवादास्पद बने हुए हैं।

नोट—○ आमाशय का कैंसर अधिकतर शराब पीने वाले, तम्बाकू का सेवन करने वाले तथा अधिक चिन्ता करने वाले और मिर्च-मसाले युक्त पदार्थों का अधिक सेवन करने वाले लोगों में मिलता है।

○ आमाशय का कैंसर अधिकतर ब्रिटेन, चेकोस्लोवाकिया, हालैण्ड, यू० एस० ए० आदि देशों के निवासियों में प्रायः देखा गया है।

आमाशय कार्सीनोमा का वर्गीकरण—१. सुपरफिसियल स्प्रीडिंग कार्सीनोमा।

२. पूर्ण जीर्ण व्रणोत्पत्ति से उत्पन्न आमाशियक कार्सीनोमा।

३. अल्सरेटिव कार्सीनोमा।

४. लिनिटिस प्लास्टिका।

५. व्यापक कार्सीनोमा।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—इनमें से अधिकांश कार्सीनोमा बिना किसी विशिष्ट लक्षण के होते हैं।

विशेष प्रकार—यदि प्रत्यक्ष देखा जाय तो यह निम्न रूप में देखने को मिलता है—

१. छत्रक (Mushroom) की तरह एक बड़ा और गोभी के फूल के समान कोमल पिण्ड आमाशय में रहता है।

२. कभी-कभी उसका उपरोक्त स्वरूप न दिखलाई पड़कर अंदर से उठा हुआ दीखता है और उसमें से रक्तस्राव होने लगता है। इसके किनारे उठे हुए तथा गोल होते हैं।

३. ○ तीसरे प्रकार का कैंसर ऐसा होता है जिसमें आमाशय की दीवारें आमने-सामने से मिलकर चमड़े की बोतल के सदृश एक तंग रास्ता बना देती हैं। इस अवस्था में सम्पूर्ण आमाशय रोगग्रस्त हो जाता है। उसकी दीवारें बहुत स्थूल हो जाती हैं। स्वाभाविक रूप से जो आमाशय एक फुट लम्बा होता है, वही अब ४-५ इंच लम्बा रह जाता है और स्वस्थावस्था में जिसमें लगभग ११०० ग्राम पदार्थ समा जाता है, वहाँ इस रोग के कारण इसमें १२० ग्राम पदार्थ रखने का भी स्थान नहीं मिलता।

रोग का प्रसार—○ यह रोग आस-पास में फैल जाता है तथा पूरे आमाशय को भर लेता है। इसके अतिरिक्त लसीकावाहिनी द्वारा आसपास की लसीकाग्रन्थियों (Lymph glands) में फैल जाता है।

○ रक्त द्वारा यह आमाशय से यकृत्, फेफड़ों, मस्तिष्क, गुर्दे तथा अस्थियों में प्रसार करता है।

लक्षण (Symptoms)—आमाशयिक कैंसर के प्रारम्भिक लक्षण काफी मन्द गति से प्रारम्भ होते हैं। ५०% कैंसर किसी भी प्रकार के लक्षणों की उत्पत्ति के पूर्व आमाशय से बहुत आगे तक बढ़ जाते हैं। साथ ही इसका सही निदान होने तक लगभग १२ से १८ माह का समय व्यतीत हो चुका होता है।

प्रारम्भिक लक्षण—

१. **उदर-पीड़ा** (Abdominal pain)—आमाशय के कैंसर में सबसे पहला लक्षण पेट में दर्द होता है। यह दर्द उस समय प्रारम्भ होता है, जबकि मांसपेशियों की नाड़ियाँ रोग से प्रभावित हो जाती हैं। जब पिण्ड के आकार का कैंसर होता है, तब पेट में दर्द नहीं होता।

२. **मन्दाग्नि** (Dyspepsia)—रोगी की भूख नष्ट होने लगती है। थोड़ा ही भोजन विशेषकर ठोस आहार लेने से ही पेट भर जाता है।

३. **अरुचि** (Anorexia)—कभी-कभी भोजन के लिए रोगी में भारी अरुचि का लक्षण हो जाता है।

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. **भोजन के बाद के लक्षण**—इस रोग में आमाशयशोथ के कारण अथवा मांस की शक्ति के क्षीण हो जाने से भोजन करते ही पेट में भारीपन या बेचैनी बढ़ जाती है और डकारें आती हैं। ○ भोजन के पश्चात् मितली तथा वमन के लक्षण मिलते हैं।

५. **शरीर-भार** (Body weight) रोगी के शरीर के भार में काफी कमी हो जाती है।

६. **रक्तवमन**—पहली बार रक्तवमन भी रोग का प्रारम्भिक लक्षण हो सकता है।

७. **रक्तक्षीणता**—रक्त में कमी जिसका अन्य कोई कारण न हो, भी इसका परिणाम हो सकता है।

८. **अजीर्ण** (Indigestion)—यह पाचन-क्रिया के बदलाव के कारण होता है। खून की उल्टी होती है तथा रोगी प्रतिदिन क्षीण या कमजोर होता जाता है।

९. यह रोग यकृत् तक को प्रभावित कर देता है तथा पीलिया (पाण्डु रोग) तथा यकृत् का बढ़ाव देखा जाता है।

नोट—उक्त अवस्थाओं में रोगी की जाँच आवश्यक है।

संदेहात्मक लक्षण—१. ५५ से ६५ वर्ष की आयु के किसी व्यक्ति को जिसे अद्यावधि अजीर्ण सम्बन्धी कोई कष्ट न हुआ हो, जब २-४ मास से अजीर्ण और अरुचि का कष्ट रहने लगे और जो औषधि-सेवन से भी ठीक न हो तो कैंसर का संदेह करना चाहिए।

२. जब भोजन कर लेने से पेट में दर्द होने लगे और भोजन न करने से ही ठीक हो जाय, तो इस रोग का संदेह करना चाहिए।

३. कामला और जलोदर होने पर भी इस रोग के प्रति संदेह करना चाहिए।

४. रोगियों में आमाशयिक कष्ट का पुराना इतिहास मिलने पर आमाशय कैंसर का सन्देह करना चाहिए।

५. अधिक आयु के व्यक्ति में जो अग्निमांद्य से ३ सप्ताह से ग्रसित हो और चिकित्सा होने पर भी उसकी दशा में उन्नति न हो अथवा अग्निमांद्य (Dyspepsia) के बार-बार आक्रमण होते हों तो उनमें आमाशय-कैंसर का सन्देह करना चाहिए।

नोट—यदि उपरोक्त सन्देहात्मक लक्षणों पर दृष्टि रखी जाये तो कम से कम २०% तक रोगी इस रोग से प्रभावित होने से बच सकते हैं। किन्तु होता यह है कि—प्रायः रोगी जब तक चिकित्सक के पास परामर्श के लिए आता है, तब तक उसके आमाशय में कैंसर-पिण्ड इतना बड़ा हो चुका होता है कि वह उदर के परिस्पर्शन से प्रतीत हो सकता है। उसको कुछ

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मास अथवा १ या २ वर्ष से अग्निमांद्य के लक्षण रहे होते हैं। जी मिचलाना, वमन, बेचैनी अथवा पीड़ा भी होती रही है तो सम्भव है कभी वमन में रक्त-रंजित द्रव निकला हो। उसको अरुचि, भूख की कमी, शरीर-भार का अतिशय ह्रास आदि प्रारम्भ से ही हो रहे हैं। अब क्षीणता इतनी बढ़ चुकी होती है कि रोगी को विशेष दुर्बलता प्रतीत होने लगती है।

अन्ततः रोगी का यह दुर्भाग्य होता है कि—उपरोक्त लक्षणों पर रोगी तथा चिकित्सक कम ही ध्यान देते हैं और रोग को टाल देते हैं तथा ऐसे रोगियों को प्रायः विक्षिप्त (Neurotic) समझकर क्षुधानाश एवं अनीमिया की लाक्षणिक चिकित्सा करने में रोगी का जीवन व अपना समय नष्ट करते हैं।

निम्न स्थिति में चिकित्सक तथा रोगी का ध्यान आमाशय-कैंसर की ओर जाता है—जब रोगी जठर अवरोध (Pyloric obstruction) तथा शरीर भार में अत्यधिक कमी अनुभव करता है, तब चिकित्सकों तथा अन्य लोगों का ध्यान इस ओर जाता है।

व्यापक लक्षण—१. रोग बढ़ने पर अर्बुद-पिण्ड बन जाने के पश्चात् उदर में निरन्तर पीड़ा और रक्त मिश्रित वमन आना मुख्य लक्षण होता है। पीड़ा का आहार से कोई सम्बन्ध नहीं होता। उससे पीड़ा न घटती है और न ही बढ़ती है, अपितु एक समान रहती है।

२. **वमन**—वमन का रंग ईंट के समान लाल रंग का होता है। जिसकी समता 'कॉफी पेय' (Coffec ground vomits) से होती है।

३. रोगी की क्षीणता (Cachexia) निरन्तर बढ़ती ही जाती है। रोगी अत्यन्त कृश हो जाता है। उसका वजन ५-६ किलो तक कम हो जाता है।

४. त्वचा के नीचे की चर्बी सूखती जाती है, साथ ही त्वचा शुष्क हो जाती है।

५. रोगी के कार्य करने की शक्ति शनैः-शनैः समाप्त होती जाती है। उसे शीघ्र ही थकावट आ जाती है। रोगी में पाण्डुता (Jaundice) क्रमशः बढ़ती जाती है।

६. रक्त निकलते रहने के कारण लौह की कमी हो जाती है। रोगी का बल शीघ्र ही घट जाता है।

७. **जब रोग का प्रसरण यकृत् में हो जाता है** तब रोगी को मन्द ज्वर रहने लगता है। पित्तवाहिनियों में इसके अवरोध के कारण कामला (Jaundice) का लक्षण उत्पन्न हो जाता है।

○ पोर्टल शिराओं में अवरोध होने अथवा पेरिटोनियम में इसका आक्रमण होने से उसमें शोथ हो जाता है तथा जलोदर उत्पन्न हो जाता है।

नोट—○ इस प्रकार से कामला (Jaundice) तथा जलोदर (Ascites) इस रोग के सूचक लक्षण होते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. **उदर-पीड़ा**—उपरोक्त लक्षणों के पश्चात् अथवा किसी-किसी रोगी में प्रारम्भ से ही आमाशय-प्रदेश पर मन्द-मन्द दर्द रहने लगता है। यह दर्द बराबर बना रहता है। कभी-कभी भोजन के बाद कुछ बढ़ जाता है।

९. **मल में रक्त की उपस्थिति**—जब आमाशय-कैंसर व्रण युक्त हो जाता है तब मल में भी अव्यक्त रक्त मिलता है।

१०. यह एक घातक रोग है। रोग का पता लग जाने के पश्चात् १ से १½ वर्ष तक प्रायः बढ़ती हुई अशक्ति एवं निर्बलता के कारण रोगी की मृत्यु हो जाती हैं।

वमन के सम्बन्ध में कुछ आवश्यक विचार—

○ वमन इस रोग का एक प्रधान लक्षण है। वमन में आमाशय के अन्तर्गत रुका हुआ अन्नद्रव बाहर निकल जाता है। पहले पेट में दर्द होता है, तत्पश्चात् अरुचि होकर वमन हो जाता है। इससे कुछ देर के लिए रोगी को शान्ति मिल जाती है।

○ यदि वमन में रक्त का कुछ अंश होता है तब वह काले रंग का होता है। वैसे अव्यक्त रूप में उसमें रक्त रहता ही है।

नोट—कभी-कभी इस रोग में वमन-प्रधान लक्षण होते हैं। ○ पूर्व में वमन सायंकाल होता है और बाद में जब आमाशय अधिक शिथिल होकर फैल जाता है, तब वमन मात्रा में अधिक तथा दिन में कई बार होता है। कई घण्टों पूर्व ग्रहण किया भोजन द्रव्य भी उसमें निकलता है। वमन में दुर्गन्ध भी आती हैं।

कैंसर के स्थान के अनुसार उसके प्रारम्भिक लक्षण—

१ **आमाशय फण्डस का कार्सिनोमा**—इसके अन्तर्गत भोजन मार्ग में अवरोध उत्पन्न हो जाता है। ऐसे कैंसर में ऊपर से कोई अवकाश (Space) नहीं होता है।

२. जब आमाशय-कैंसर 'आमाशय काय' में होता है, तब कैंसर की प्रतीति वमन तथा रक्तवमन से हो जाती है।

३. जब कैंसर पायलोरस के समीप होता है तब इसके लक्षण जीर्ण व्रण के समान होते हैं। ऐसे कैंसर में ऊपर से उभार प्रतीत नहीं होता।

Clinical features—Insidious type—

An elderly male patient (commen sufferer) starts to get —

(a) Indigestion.

(b) Loss of appetite.

(c) Vague discomfort or pain in the epigastrium, especially after meals.

(d) Feeling of weakness.

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Ulcer-Cancer type (Rare) :

(a) Long history of peptic ulcer symptoms.

(b) Pain loses its periodicity and becomes constant.

(c) Pain is not reliveal by vomiting.

(d) Loss of weight becomes rapid.

(e) Anorexia.

(f) Later haematemesis, which may be coffee ground and melaena.

Obstructive type :

Growth at the cardiac end—there may be :

(a) Vomiting or regurgitation of food as soon as it is taken.

(b) Marked loss of weight.

Growth at the pyloric end–Clinical feature resemble pyloric stenosis :

(a) Dull aching pain.

(b) Constant vomiting, which does not relieve pain.

(c) Anorexia and loss of weight.

(d) Haematemesis and malaena, there may be coffee ground vomiting.

निदान (Diagnosis)—आमाशय कैंसर का प्रारम्भिक निदान उपरोक्त लक्षणों से तथा जिन्हें नियमित रूप से आमाशयिक कष्ट होता है, उनकी एक्स-रे परीक्षा करने से सुगमता से हो जाता है।

○ इसके अतिरिक्त गैस्ट्रोस्कोपी (Gastroscopy) तथा एक्सफोलिएटिव सिस्टोलॉजी द्वारा निदान आसानी से हो जाता है।

रोगी-परीक्षण (Clinical examination)—उदर की परीक्षा करने पर एपिगैस्ट्रिक भाग में स्पर्शासह्यता (Tenderness) तथा दृढ़ता (Rigidity) मिलती है।

एक्स-रे परीक्षा—आमाशय-कैंसर में एक्स-रे का विशेष महत्त्व है। इस परीक्षा में प्रारम्भिक अवस्था में आमाशय की श्लैष्मिककला के पैटर्न में परिवर्तन मिलता है। अथवा उसमें फिलिंग डिफेक्ट उत्पन्न हो जाता है।

○ इसके अतिरिक्त बेरियम पिलाने पर उसके बहाव में विभाजन आ जाता है।

नोट—जब सामान्य एक्स-रे में कैंसर दिखलाई दे तो इसका तात्पर्य यह है कि कैंसर बहुत बढ़ा हुआ है। यह एक सर्वोत्तम निदानात्मक लक्षण है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गैस्ट्रोस्कोपी परीक्षा—इस परीक्षा में कोशिकाओं को निकाल कर जीव-ऊति परीक्षा करने पर कैंसर का निदान सुगम हो जाता है।

एक्स-फोलिएटिव सिस्टोलॉजी—इस परीक्षा के अन्तर्गत गैस्ट्रिक वाशिंग में मेलिग्नेण्ट सेल्स मिलते हैं।

रक्त-परीक्षा (Blood examination)—E. S. R. बढ़ा हुआ मिलता है। रक्त में रक्ताल्पता के चिह्न मिलते हैं।

मल-परीक्षा (Stool test)—मल-परीक्षा में गुप्त रक्त (Occult blood) मिलता है।

आमाशयरस-परीक्षा—○ इस परीक्षा में रक्त, श्लेष्मा, पूय सेल्स तथा मेलिग्नेण्ट सेल्स मिलते हैं। ये सभी आमाशय कैंसर के द्योतक हैं। इस परीक्षा में अम्ल की कमी पायी जाती है। ○ प्रारम्भिक अवस्था में इस परीक्षा से निदान में बहुत सहायता मिलती है।

Clinical features—

(a) Gastric analysis—

(i) Total or free acid is diminished or absent. Achlorhydria is not histamine fast.

(ii) Presence of blood in all the samples.

(iii) Cancer cells may be present.

(b) Occult blood in stool—Constant.

(c) Barium meal of stomach—

(i) Irregular filling defect.

(ii) Hypo-motility.

(iii) Delayed emptying (if pyloric obstruction is present.)

परीक्षात्मक निर्देश—○ रोग का निदान सबसे पहले लक्षण एवं परीक्षण से प्रतीत हो जाता है। परीक्षा के समय उदर में बाईं तरफ एक गाँठ-सी प्रतीत होती है। साथ ही पेट हर समय भरा-भरा सा मालूम होता है।

○ बेरियम देकर आमाशय का एक्स-रे करा लेना चाहिए। जितना स्थान रोग द्वारा ग्रसित होगा, उस स्थान में बेरियम दिखलाई नहीं देगा।

○ जब 'सुप्रा-क्लेवीकुलर फोसा' में लिम्फ-ग्लैण्ड्स बढ़ जाती हैं तो उसकी बायोप्सी से भी रोग-निदान हो जाता है।

सदैव ध्यान देने योग्य—यदि बड़ी आयु में किसी को पहली बार अजीर्ण का रोग हो जाय, जिससे रोगी की भूख मिट जाये; पेट में लगातार दर्द होता रहे और जो औषधि-चिकित्सा से भी ठीक न हो, तो इस रोग की आशंका करनी चाहिए, तथा शीघ्र ही पेट को खोलकर उसकी परीक्षा करनी चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साध्यासाध्यता (Prognosis)—१. यह एक असाध्य रोग है। शस्त्र-चिकित्सा के पश्चात् रोगी कुछ वर्षों तक सुखपूर्वक जीवन व्यतीत कर सकता है।

२. इससे ग्रसित रोगी अधिक समय तक जीवित नहीं रहता है। शस्त्र चिकित्सा द्वारा केवल २०% रोगी अच्छे होते हैं। ऑपरेशन जितना शीघ्र होता है, रोग उतना ही साध्य माना जाता है। ३ माह के अंदर ऑपरेशन सर्वोत्तम रहता है।

३. स्त्रियों में यह प्रायः साध्य होता है।

विभेदक निदान (Differential diognosis)—गैस्ट्रिक अलसर, गैस्ट्राइटिस (क्रॉनिक), इरीटेबल कोलन सिण्ड्रोम अथवा Functional gastro-intestinal disturbances से इसका भेद अवश्य कर लेना चाहिए।

चिकित्सा (Treatment)—इस रोग की चिकित्सा में १. आंशिक आमाशयोच्छेदन (Partial gastrectomy) अथवा २. सम्पूर्ण आमाशयोच्छेदन (Total gastrectomy) किया जाता है।

१. आंशिक आमाशयोच्छेदन में—आमाशय की लघु वक्रता एवं ड्यूडेनल के कुछ भाग का उच्छेदन (Resection) किया जाता है।

२. सम्पूर्ण आमाशयोच्छेदन में—आमाशय के साथ-साथ आस-पास के अन्य उदरगत अवयवों का भी उच्छेदन कर दिया जाता है।

नोट—१. इस विधि का तभी प्रयोग किया जाता है जब आंशिक उच्छेदन से लाभ नहीं मिलता है।

२. जब सम्पूर्ण आमाशय कैंसर से ग्रसित हो जाता है।

विशेष कार्य—○ शल्य-कर्म से पूर्व रोगी के शरीर में जल तथा लवणों की पर्याप्त मात्र पहुँचा कर उसकी शारीरिक स्थिति में सुधार किया जाता है।

○ ऑपरेशन के समय ब्लड-ट्रान्सफ्यूजन आवश्यक होता है। रक्त-क्षीणता को दूर करने के लिए ऑपरेशन से पूर्व भी ब्लड-ट्रान्सफ्यूजन दिया जाना उचित है।

प्रशामक चिकित्सा (Palliative treatment)—○ इस चिकित्सा के अन्तर्गत गैस्ट्रोस्टोमी तथा जेजुनोस्टोमी करते हैं।

○ इस विधि का प्रयोग तभी किया जाता है, जब शल्य-चिकित्सा सम्भव नहीं होती है।

○ जब अवरोध जन्य कैंसर होता है।

विकिरण-चिकित्सा (Radio therapy)—जब उपरोक्त चिकित्सा से लाभ नहीं मिलता है, तब इस चिकित्सा का सहारा लिया जाता है।

○ इस चिकित्सा के अन्तर्गत सुपर वोल्टेज एक्स-रे तथा कोबाल्ट ६० द्वारा दूरस्थ चिकित्सा से लाभ मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—**शल्य-चिकित्सा** के पश्चात् सहायक चिकित्सा के रूप में पौष्टिक आहार तथा पोली-विटामिन्स का प्रयोग किया जाता है।

औषधि-चिकित्सा (Medicinal treat.)—१. पोलीएटिव मेडिकल ट्रीटमेण्ट का उपयोग आमाशय कैंसर की बढ़ी हुई अवस्था में किया जाता है।

२. इस चिकित्सा के अन्तर्गत आमाशय-धावन (गैस्ट्रिक लावेज) के साथ-साथ उच्च प्रोटीन एवं उच्च पोली विटामिन्स का प्रयोग विशेष लाभकर होता है।

३. रोगी को बीच-बीच में रायल्स ट्यूब से तरल आहार का सेवन कराया जाता है।

४. अनीमिया की अवस्था में 'आयरन के योगों' का प्रयोग करते हैं।

५. पीड़ा-निवारण के लिए शूल-निवारक औषधियों का प्रयोग करते हैं।

जब तक शल्य-कर्म न हो तब तक—१. रोगी को 'प्रेडीजेस्टिड दूध' का सेवन कराना चाहिए। इसके लिए ५ औंस गर्म किये जल में पेप्टोनाइजिंग (पेन्क्रिएटिन) २ गोली मिलाकर उसे १ पाइण्ट दूध में मिलाकर हलकी गर्मी में १०–१५ मिनट रखकर और उसके बाद दूध को उबाल कर देना चाहिए।

२. ग्लूकोज २५% तथा विटामिन-सी २०० मि० ग्रा० को ५० मिली० की मात्रा में I/V दें। इससे रोगी की शक्ति बनी रहती है।

३. यदि रोगी को आमाशय में द्रव संचित होने के कारण वमन होता हो तो स्टमक टयूब द्वारा क्षारीय जल (१ पाइण्ट जल + ६० ग्रेन सोडाबाइकार्ब) से पेट को प्रतिदिन धोना चाहिए।

४. पीड़ा के लिए—एस्प्रिन ६० मि० ग्रा० दिन में ३ बार दें।

अथवा—माफीर्न हाइड्रेट १० मि० ग्रा०।
कोकेन हाइड्रेट १५ मि० ग्रा०।
मधु १ ड्राम।
ब्राण्डी १ ड्राम।
जल १ औंस।

ऐसी १ मात्रा दिन में १ या २ बार आवश्यकतानुसार दें।

अथवा—पैथीडीन हाइड्रोक्लोराइड।

मात्रा—१०० मि० ग्रा० दिन में २–३ बार I/M।

अथवा—क्लोरप्रोमेजीन (Chlorpromazine)
लार्गेक्टिल (Largactil) २५ मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

आमाशय कैंसर की नवीनतम चिकित्सा (Recent treatment of gastric cancer)—

१. **मिटोमाइसिन–सी** (Mitomycin–C)

मात्रा—६ मि० ग्रा० I/V १-३-५-७-९ तथा ११वें दिन।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. ५-फ्लूरो-यूरेसिल (5-Fluro-uracil) (रोशे कं०)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० I/V २-४-६-८ तथा १०वें दिन।

३. सायक्लोफॉस्फेमाइड (Cyclophosphamide)

मात्रा—१५० मि० ग्रा० प्रतिदिन मुख द्वारा १ से १७ दिन पर।

४. पी०-३२ (P–32)

मात्रा—२ एम० सी० आई० (2 M. C. I.) प्रतिदिन मुख द्वारा पहले और १६वें दिन।

नोट—१. ○ उपरोक्त चक्र को ६ठे सप्ताह में ६ चक्रों तक दुहराया जाता है।

२. ○ यथासम्भव शल्य-चिकित्सा द्वारा अन्वेषण करके तदुपरान्त उपरोक्त चिकित्सा-क्रम को चलाया जाता है।

आहार-चिकित्सा—रोगी को दूध, चावल, मैदे की पूड़ी, शुद्ध मक्खन, मीठे फलों का रस, गन्ने का रस आदि दिया जा सकता है।

आमाशय-कैंसर में प्रयुक्त अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. मेथोट्रेक्सेट (Methotrexate) सायनामाइड।

मात्रा—२.५ मि० ग्रा० दिन में २ बार। तीव्र अवस्था में इसका १ वीयल मांसपेशीगत लगायें।

२. साइक्लोमा (Cycloma) (नि० कैडिला)

मात्रा—५ मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३–४ बार।

निषेध—गर्भावस्था, मूत्राशय में रक्तस्राव; ल्यूकोपीनिया, थ्रोम्बोसाइटोपेनिया आदि में इसका प्रयोग न करें।

३. फ्युराटॉर (Furator) (बायोकेम)

मात्रा—२०० मि० ग्रा० के ४–६ कैप्सूल प्रतिदिन २ से ४ मात्राओं में बाँट कर।

निषेध—गर्भावस्था तथा अस्थि-मज्जा के अवसाद में न दें।

४. माइलेरन (Myleran) (बी० डब्लु०)।

मात्रा—आवश्यकतानुसार ०·५ मि० ग्रा० या २ मि० ग्रा० की १–२ गोली दिन में १ या २ बार दें।

५. एड्रियामाइसिन (Adriamycin) (वाल्टर बुशनेल)

मात्रा—आवश्यकतानुसार १ से ४ मि० ग्रा०। प्रति किलो शरीर-भार पर धीरे-धीरे शिरा (I/V) द्वारा प्रति ३ सप्ताह में केवल १ बार लगायें।

निषेध—अस्थि-मज्जा अवसाद एवं मुखगुहा के अंदर के व्रण (Buccal ulceration) में प्रयोग न करें।

६. मस्टीन हाइड्रोक्लोराइड (Mustine Hcl.) (बुरूस)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—०·१ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर-भार पर प्रतिदिन ५०० मि० ली० नार्मल सैलाइन में मिलाकर I/V ड्रिप के रूप में।

नोट—३–४ दिन तक ऐसा करना पर्याप्त होता है।

ध्यान रहे—इस औषधि की १ मात्रा किसी भी अवस्था में शरीर-भार के अनुसार ८ मि० ग्रा० से अधिक न हो।

७. अल्केरन (Alkeran) (बी० डब्लु०)

मात्रा—१–२ गोली दिन में १ या २ बार। तीव्रावस्था में इसके १ वीयल की मात्रा मांस में लगायें।

८. रुब्रामिन (Rubramin) (साराभाई)

मात्रा—१/२ मिली० डीप इण्ट्रामस्कुलर।

९. फाइव-फ्लूरो (Five-fluro) (विडल शायर)

मात्रा–१२ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर-भार पर नित्य ४ दिन तक I/V

नोट—प्रतिदिन की मात्रा ८०० मि० ग्रा० से अधिक न हो।

१०. मिटोमाइसिन-सी क्योवा (Mitomycin-C Kyowa) (बायोकेम)

मात्रा—६–१० मि० ग्रा० I/V सप्ताह में २ बार अथवा ०·०५ मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर-भार पर ५ दिन तक।

निर्देश—○ आमाशय-कैंसर की प्रमुख चिकित्सा 'ऑपरेशन' है। प्रारम्भिक अवस्था में अर्थात् जब तक इसका प्रसार अन्य स्थानों में न हुआ हो तो ऑपरेशन करके इसको सदा के लिए बाहर कर दिया जाता है। जिससे रोगी बिलकुल नीरोग हो जाता है।

○ इसके विपरीत जब इसका प्रसार या फैलाव अन्य स्थानों में हो जाता है, तब इसकी चिकित्सा सिर्फ औषधियों द्वारा ही करते हैं।

सावधानी और बचने के उपाय—जिन कारणों से आमाशय का कैंसर होता है, उन कारणों का परित्याग करें। जैसे—तम्बाकू तथा मदिरा का सेवन, अत्यधिक मिर्च-मसालों का प्रयोग तथा अत्यधिक चिन्ता।

○ प्रारम्भिक अवस्था में पता लग जाने पर यह चिकित्सा से ठीक किया जा सकता है। ⊡

पाचन-संस्थान के रोग 1/37

यकृत् का कैंसर
(Cancer of the Liver)

परिचय—यकृत् के सामान्य तथा घातक दोनों प्रकार के अर्बुद हो सकते हैं। सामान्य अर्बुद में 'एडीनोमा' अधिक होता है तथा घातक अर्बुद में कैंसर तथा सार्कोमा दोनों हो सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ यकृत् का कैंसर सामान्य रूप से स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में अधिक मिलता है। यह प्रायः ३० वर्ष अथवा उससे अधिक उम्र की अवस्था में अधिक होता है।

अनुकूल वातावरण—यकृत् का प्राथमिक कैंसर बहुत ही कम मिलता है। यह प्रायः दूसरे अंगों यथा—वक्ष, आमाशय, आँत, फेफड़ा, वृक्क तथा गर्भाशय आदि के कैंसर के प्रसार से प्रभावित होता है।

○ यदि कोई रोगी यकृत् के कैंसर से प्रभावित होता है तो उपर्युक्त अंगों का परीक्षण करने में कभी न चूकें, क्योंकि यकृत् का प्राथमिक कैंसर बहुत ही कम मिलता है।

कारण (Etiology)—१. यकृत् कैंसर का प्रत्यक्ष सम्बन्ध 'यकृत् के सिरोसिस' से होता है। प्रायः पहले यकृत् में सिरोसिस होता है। तत्पश्चात् उसमें अर्बुद की उत्पत्ति हो जाती है।

२. कभी-कभी इसके औत्पत्तिक कारणों में यकृत्शोथ (Hepatitis) माना जाता है।

३. लगभग १५% यकृत् कैंसर का कारण 'क्लोनसिस साइनेन्सिस' प्रकार का कैंसर होता है, जो पित्तवाहिनी से प्रारम्भ होता है।

४. सिरोसिस के साथ रक्तवर्णकता (Haemochromatosis) का सम्बन्ध यकृत् के कैंसर की उत्पत्ति में सहायक होता है।

५. अधिक मदिरा का सेवन भी इसका एक सहायक कारण है।

प्रकार (Types)—१. यकृत् कोशिकीय (Hepatic cellular)।

२. कोलेजन कोशिकीय (Collegen cellular)।

लक्षण (Symptoms)—१. यकृत् कैंसर से ग्रसित रोगियों में दो-तिहाई रोगी पाचन-संस्थान के विकारों से प्रभावित होते हैं। इसमें मितली, वमन तथा आध्मान आदि प्रधान लक्षण हैं।

२. कभी-कभी रोगी में मलावरोध के भी लक्षण मिलते हैं।

३. **पीड़ा** (Pain)—रोगी के पेट में मन्द स्वरूप का दर्द होता रहता है। यह दर्द दक्षिण अधःपर्शुक प्रदेश (Right hypochondrium region) में सीमित रहता है।

○ रोग के बढ़ने के साथ ही शूल बढ़ता जाता है। इस शूल का पाचन से कोई सम्बन्ध नहीं रहता है।

४. **कामला** (Jaundic)—कामला प्रायः कम मिलता है।

५. रक्तन्यूनता तथा दुर्बलता (Asthenia) रोग के बढ़ने के साथ-साथ बढ़ते जाते हैं।

६. शरीर के भार में निरन्तर कमी; परन्तु जलोदर तथा शरीर-शोथ होने के कारण स्पष्ट नहीं होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. श्वास कष्ट—यह लक्षण विलम्ब से प्रतीत होता है।

८. उग्रावस्था में रक्तवमन।

○ प्राथमिक तथा प्रसार से प्रभावित यकृत् कैंसर का प्रारम्भिक लक्षण है—दाहिनी तरफ यकृत् के स्थान पर एक गाँठ का महसूस होना। इसके अतिरिक्त पीलिया तथा जलोदर—ये दो लक्षण तो सामान्यतः देखे ही जाते हैं। कुछ केसिस में ज्वर भी बना रहता है।

परीक्षा (Examination)—१. परीक्षा करने पर यकृत् का दक्षिण भाग (Right lobe) अत्यधिक बढ़ा हुआ मिलता है; जो क्रमशः प्रति सप्ताह बढ़ता ही जाता है।

२. रोगी की वक्ष की शिराएँ प्रसारित दिखलाई देती हैं।

३. रोगी के पैरों पर सूजन मिलती है।

नोट—यकृत्-कैंसर में छाती की शिराओं का प्रसारित होना इस बात का सूचक है कि रोगी का यकृत् पूर्णतया रोग से आक्रान्त हो चुका है।

○ लगभग एक-तिहाई रोगियों में उपरोक्त प्रकार से परीक्षा करने पर यकृत्-कैंसर का निदान हो जाता है।

○ कुछ रोगियों में इसके साथ-साथ ज्वर भी रहता है। ऐसी अवस्था में यकृद्-विद्रधि की शंका हो जाती है।

○ किसी-किसी रोगी में 'हाइपोग्लाइसीमिया' की अवस्था उत्पन्न हो जाती है, जिससे आक्षेप (Convulsion) तक होने लगते हैं।

○ लगभग एक-दहाई रोगियों में 'पोलीसिस्थेमिया' भी हो जाती है।

नोट—किसी-किसी रोगी में गुप्त कार्सीनोमा भी मिलता है।

निदान (Diagnosis)—यकृत्-कैंसर का निदान उपरोक्त लक्षणों के आधार पर हो जाता है। जिसमें यकृत् की वेदना-वृद्धि, सिरोसिस, जलोदर, शोथ, भार में निरन्तर कमी, रक्त-प्रवाह में परिवर्तन तथा रक्तवमन आदि प्रधान हैं।

○ जलोदर के तरल की परीक्षा में रक्तरंजित तरल पदार्थ दिखलाई देता है।

एक्स-रे परीक्षा—इस परीक्षा में यकृत् की विरूपता (Liver deformity) का बोध होता है। साथ ही डायाफ्राम के आक्रान्त होने का पता लगता है।

किसी-किसी रोगी के वक्ष में रक्तवाहिका का स्पष्ट अंकन (Vascular marking in the chest) दिखलाई पड़ता है। परन्तु हृदय अपनी स्वाभाविक स्थिति में रहता है।

वैधानकीय परीक्षा (Pathological examination)—इसके अन्तर्गत यकृत् की परीक्षा (Liver function test) की जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवोति परीक्षा (Biopsy examination)—इसके अन्तर्गत उदर की बाह्य सतह से गाँठ स्थिर करके सुई से यकृत् के पदार्थ को निकाल कर (Needle biopsy) उसकी विधिवत् परीक्षा करने से इस रोग का स्पष्ट निदान हो जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—रोग असाध्य है। केवल रोगी के कष्ट को दूर करने के लिए लक्षणानुसार चिकित्सा की जाती है।

पीड़ा दूर करने के लिए—एस्प्रिन, फिनासिटीन, कोडीन अथवा पेथीडीन का प्रयोग किया जाता है।

शल्य-चिकित्सा—इसका उपयुक्त उपचार 'शल्य-उच्छेदन' (Surgical excision) होता है।

नोट—यह चिकित्सा तभी सम्भव होती है जब कैंसर यकृत् के किसी एक भाग में स्थिर रहता है।

○ इस चिकित्सा से रोगी महीनों जीवित रहता है।

भावीफल (Prognosis)—१. वैसे यह असाध्य है, किन्तु उचित समय पर निदान तथा उचित चिकित्सा से कष्टसाध्य माना जाता है।

२. प्रसार प्रभावित कैंसर का कोई उपचार नहीं है। लक्षणों के माध्यम से उसका उपचार करने में सिर्फ दवाओं का उपयोग किया जाता है।

३. आजकल प्राथमिक कैंसर का इलाज ऑपरेशन द्वारा किया जा रहा है; कुछ में सफलता मिलती है और कुछ में नहीं भी।

यकृत् कैंसर की नवीनतम औषधि—

१. मिटोमाइसीन-सी (Mitomycin-C)

मात्रा—६ मि० ग्रा० I/V १-३-५-७-९ तथा ११वें दिन।

२. ५-फ्लोरो-यूरासिल (5-F.U.) (रोशे कं०)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० I/V २-४-६-८ तथा १०वें दिन।

३. साइक्लोफॉस्फेमाइड (Cyclophosphamide)

मात्रा—१५० मि० ग्रा० प्रतिदिन मुख द्वारा १ से १५ दिनों तक।

४. पी०–३२ (P–32)

मात्रा—२ एम० सी० आई० (2 M. C. I.) मुख द्वारा १ से १६ दिनों तक।

५. प्रेडनीसोलोन (Prednisolone)

मात्रा—४० मि० ग्रा० नित्य मुख द्वारा १ से १५ दिनों तक। तत्पश्चात् इसकी मात्रा को कम करते जाना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—उपरोक्त चिकित्सा-क्रम प्रति ६ माह पर दुहराया जाता है, तथा इस क्रम को कुल ६ क्रमों तक जारी रखा जाता है।

○ प्रेडनीसोलोन को एक चक्र छोड़ कर (On alternate cycle) अपनाया जाता है। □

पाचन-संस्थान के रोग **1/38**

उदरगत यक्ष्मा/क्षयोदर
(Abdominal Tuberculosis)

परिचय—उदरावरण (Peritonium) में क्षय (T. B.) के जीवाणुओं के संक्रमण कर जाने को उदरगत यक्ष्मा कहते हैं। यह छोटे बच्चों तथा नवयुवकों (प्रायः ३ से २० वर्ष की वय) में पाया जाता है।

संक्रमण (Infection)—इसमें फुप्फुस या प्लूरा (Pleura) से क्षय के जीवाणु लिम्फेटिक के द्वारा मेसेण्ट्रिक ग्लैण्ड्स में पहुँचता है और उसमें से पेरिटोनियम में प्रसरण कर जाता है। अथवा दूध आदि के द्वारा आँतों में पहुँच जाता है। नवयुवतियों में यह फेलोपियन ट्यूब से भी पहुँच सकता है।

रोग के प्रकार—१. आर्द्र या जलयुक्त क्षयोदर (Moist or ascitic tuberculosis)।

२. शुष्क क्षयोदर (Dry or non exudative tubercular peritonitis)

आर्द्र या जलयुक्त क्षयोदर
(Moist or Ascitic Tuberculosis)

यह दो प्रकार का होता है—१. तीव्र जलयुक्त क्षयोदर तथा २. चिरस्थायी जलयुक्त क्षयोदर।

(१) तीव्र जलयुक्त क्षयोदर
(Acute ascitic peritonitis)

इसमें सम्पूर्ण पेरिटोनियम में अकस्मात् क्षयांकुर उत्पन्न हो जाते हैं।

लक्षण (Symptoms)—१. उदरावरण कोष में पतला द्रव भर जाने तथा पेरिटोनियम के सूज जाने से कोष्ठ उभर आता है।

२. पैरों में शोथ।

३. ज्वर की अधिकता तथा निरन्तर बने रहना।

४. श्वास-प्रश्वास की उत्पत्ति।

५. मल-बन्ध (Constipation), भूख की कमी, पेट में दर्द तथा अफारा आदि रहता है।

नोट—इन लक्षणों के होने पर टाइफाइड का सन्देह हो जाता है। किन्तु प्रातः एवं सायं के तापक्रम में अधिक भिन्नता मिलती है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परीक्षा (Examination)—रक्त-परीक्षा में ल्यूकोपेनिया (Leucopenia) तथा अपेक्षाकृत लिम्फोसाइटोसिस होता है।

भावीफल (Prognosis)—यह रोग प्रायः असाध्य होता है।

(२) चिरस्थायी जलयुक्त क्षयोदर
(Chronic Ascitic Peritonitis)

यह अधिक सुलभ होता है। इसमें उत्पन्न हुए क्षयांकुर आकार में अधिक बड़े होते हैं। इसमें फाइब्रोसिस की वृद्धि अधिक होती है।

○ इसमें पेरिटोनियम मोटा हो जाता है। मेसेण्ट्री संकुचित होकर छोटी हो जाती हैं।

लक्षण (Symptoms)—१. विष-संचार के लक्षण कम होते हैं।

२. सायंकाल ज्वर, पाण्डुता, कृशता, मलबन्ध, अरुचि आदि लक्षणों के साथ कभी-कभी उदरशूल भी मिलता है।

३. धीरे-धीरे बालक का पेट उभरता जाता है, किन्तु शाखाएँ तथा चेहरा आदि कुम्हलाते चले जाते हैं।

४. जलोदर के कारण पेट की शिराएँ स्पष्ट दीखती हैं।

५. पेट के दोनों पार्श्वों पर नीचे की तरफ जल के कारण विशेष उभार होता है। साथ ही वहाँ की टकोर भी मन्द होती है।

६. धीरे-धीरे जल विलीन होता जाता है और फिर यह शुष्क क्षयोदर का रूप ले लेता है।

परीक्षा (Examination)—जल को निकाल कर परीक्षा करने पर उसका अपेक्षित भार १·०१८ होता है। एल्ब्यूमिन ४% होता है।

शुष्क क्षयोदर
(Dry or Non Exudative Tubercular Peritonitis)

यह उपर्युक्त क्षयोदर की अपेक्षा अधिक मिलता है। जल युक्त क्षयोदर शुष्क क्षयोदर में बदल जाता है। इसे थैलियों वाला क्षयोदर भी कहते हैं।

○ इसमें आँतें परस्पर जुड़ जाती हैं तथा आँतों के बीच-बीच में द्रव की थैलियाँ (Cyst of effusion) बन जाती हैं। कभी-कभी पनीर जैसे पदार्थ के स्वरूप की थैलियाँ भी बन जाती हैं।

इसे 'Loculated type of tuberculous peritonitis' भी कहते हैं। यह थैलियाँ स्पर्श में गुँथे हुए आटे अथवा मांस-खण्डों जैसी प्रतीत होती हैं।

लक्षण (Symptoms)—१. यह धीरे-धीरे उत्पन्न होता है।

२. रोगी बालक में सायंकालिक ज्वर, कृशता, आध्मान, भूख की कमी, मलबन्ध तथा उदरशूल के लक्षण विशेषरूप से मिलते हैं।

३. मेसेण्ट्रिक ग्रन्थियों के शोथ मुक्त होने पर शरीर की चर्बी सूखती जाती है और मल में स्नेह की अधिकता से बड़ी मात्रा में दुर्गन्धित अतिसार आते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निदान (Diagnosis)—बच्चे में जलोदर की उपस्थिति एवं खाँसी के लक्षण मिलते हैं। उदरकोष के जल की स्पेसिफिक ग्रेविटी १·०१५ अथवा इससे अधिक होती है। उसमें लिम्फोसाइट्स की अधिकता, ज्वर, उदरशूल आदि लक्षण निदान में सहायक होते हैं।

भावीफल (Prognosis)—१. आर्द्र क्षयोदर एक साध्य रोग है। इसके विपरीत शुष्क क्षयोदर कष्टसाध्य तथा दीर्घकालिक रोग है।

२. ज्वर का निरन्तर बने रहना, बालक की अवस्था कम होना, कृशता की अधिकता, फुप्फुस रोगगत क्षय, पेरिटोनियम में पूयभाव आदि से युक्त बालक का रोग प्रायः असाध्य होता है।

चिकित्सा (Treatment)—१. रोगी को खुली हवा में रखें।

२. पौष्टिक भोजन तथा विटामिन 'ए' 'डी' एवं 'सी' का प्रयोग करते हुए रोगी को ३ मास तक 'विश्राम चिकित्सा' में रखना चाहिए। साथ ही 'केमोथेरापी' प्रारम्भ कर देनी चाहिए—

℞ आइसोनियाजिड (Isoniazid)
१५०–२०० मि० ग्रा० प्रति दिन
साथ ही–स्ट्रेप्टोमाइसिन प्रतिदिन मांसपेशीगत
} ३ माह तक।

३ माह के पश्चात्—

℞ आइसोनियाजिड तथा PAS १२ ग्राम की दैनिक मात्रा ३ माह तक।

नोट—चिकित्सा १ वर्ष तक चलानी चाहिए। वैसे ६ माह की चिकित्सा से ही रोगी को पर्याप्त लाभ मिल जाता है।

यदि पेरिटोनियम में द्रव अधिक हो तो—आँतें कोष्ठ की दीवार से जुड़ी हुई न हों तो पैरासिन्थेसिस द्वारा जल निकालने से लाभ होता है।

शुष्क क्षयोदर में—१. विश्राम-चिकित्सा एवं केमोथेरापी का प्रयोग।

२. मलबन्ध (Constipation) के लिए–लिक्विड पैराफिन का प्रयोग। अथवा ग्लिसरीन का एनीमा।

नोट—इसमें विरेचक औषधि (Purgative) कभी नहीं देनी चाहिए।

यदि उरःक्षय न हो तो इस रोग में—अल्ट्रावायोलेट एक्स-रे से पर्याप्त लाभ मिलता है। इससे स्राव (Exudate) विलीन हो जाता है।

अन्य चिकित्सकों के अनुसार उदरावरण क्षय (Tubercular peritonitis) की चिकित्सा—जब तक ज्वर रहे रोगी को ताजी खुली हवा में बिस्तर पर लिटा कर रखें। तत्पश्चात्—

१. मछली का तेल ५ मिली० भोजन के बाद दिन में २ बार पिलायें।

यदि पानी भर जाने के कारण पेट तना हुआ हो तो ट्रोकार केनुला से छेद कर पानी निकालना आवश्यक है। रोगी को द्रोपहर से २–३ घण्टे पहले १५ मिनट तक पेट को सूर्य के प्रकाश के सामने नंगा रखना लाभप्रद होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्वर की तीव्रता में ऐसा नहीं करना चाहिए। निम्न कैल्शियम थेरापी भी लाभकारी है—

कैल्शियम लैक्टेट या ग्लूकोनेट १२०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार खिलाना विशेषरूप में दस्त आने पर लाभकारी होता है। कई बार कैल्शियम ग्लूकोनेट का १०% सोल्यूशन ५ से १० मिली० का प्रतिदिन इण्ट्रावीनस इञ्जेक्शन लगाना बहुत लाभप्रद होता है। यदि इस चिकित्सा से भी बच्चे के दस्त बन्द न हों तो आयु के अनुसार टिं० ओपियम १ बूँद प्रति वर्ष की आयु की दर से दे सकते हैं। यदि पेट में दर्द का कष्ट हो तो पेट पर गर्म पानी की बोतल का सेंक करें। यदि रक्त की कमी हो तो लिवर एक्ट्रेक्ट का मांस में कुछ दिन इञ्जेक्शन लगायें।

२. नेविटॉल माल्ट कम्पाउण्ड (Navitol malt compound) (साराभाई)

यह रोग उत्तम लाभकारी है तथा बच्चों को हृष्ट-पुष्ट बनाता है। क्षय के कीटाणुओं का संहार करने के लिए 'निड्राजिड' (Nydrazid) (साराभाई) १०० मि० ग्रा० की १ गोली प्रातः-सायं खिलायें। कैल्शियम सैण्डोज ५–१० मि० ली० I/V प्रतिदिन या सप्ताह में २–३ बार लगायें।

३. **भोजन**—शीघ्र पचने वाला पौष्टिक भोजन जैसे—अण्डा, मछली, चूजा, मुर्गा, मांस, उबला हुआ दूध, क्रीम और मक्खन आदि। यदि दस्त आते हों तो मक्खन-घी-तेल वाले पदार्थ न दें।

पाचन-संस्थान के रोग 1/39

पित्ताशय का कैंसर
(Cancer of the Gall-bladder)

परिचय—पित्ताशय में दीर्घकाल तक पथरी के पड़े रहने के कारण पित्ताशय का कैंसर हो जाता है। यह पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में अधिक देखा गया है। यह कैंसर ४० वर्ष से पूर्व की अवस्था में कम ही होता है। इस प्रकार के कैंसर में दो-तिहाई व्यक्ति प्रायः ५० से ७० वर्ष के बीच की आयु में रोग-ग्रस्त होते हैं।

○ लगभग १% रोगियों में पित्ताशय कैंसर का पता तब चलता है, जब कि पित्ताशयशोथ के रोगियों में ऑपरेशन के लिए पेट खोला जाता है।

कारण (Etiology)—१. पित्ताश्मरी (Gall stone) के कारण इस कैंसर की अधिक सम्भावना रहती है।

२. पित्ताशय के प्रारम्भिक शोथ के परिणामस्वरूप।

⊙ पित्ताश्मरी तथा कोई बाह्य पदार्थ (Foreign bodies) पित्ताशय के कैंसर की उत्पत्ति में विशेष सहायक कारण होते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्षण (Symptoms)—१. इसके लक्षण अत्यन्त मन्दगति से प्रारम्भ होते हैं, जिससे निदान में विलम्ब तथा अनावश्यक परेशानी उत्पन्न हो जाती है।

२. रोगी पित्ताशय के स्थान पर शूल का अनुभव करता है।

३. मितली और वमन की उपस्थिति मिलती है।

४. कामला (Jaundice) की उपस्थिति मिलती भी है और नहीं भी।

५. स्पर्श में यकृत् तथा अर्बुद की प्रतीति।

६. कभी-कभी थोड़ी देर का शूल, वमन, एपीगैस्ट्रियम भाग में कष्ट, अतिसार, दुर्बलता, शरीर-भार में कमी, भूख की कमी आदि लक्षण होते हैं।

७. पित्ताशय-कैंसर का शूल उदर के बाईं ओर ऊपरी तथा निचले भाग में प्रसारित होता रहता है। जैसे-जैसे अर्बुद बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे शूल का वेग जल्दी-जल्दी और स्थायी प्रकार का होता जाता है।

८. लगभग ७०% रोगियों में शूल के साथ कामला की उपस्थिति मिलती है।

९. कभी-कभी जलोदर की उपस्थिति भी मिलती है।

Clinical feature—1. Petients are commonly subjects of chronic cholecystitis. However, diagnosis is difficult but should be suspected when there is 'Loss of weight', 'Pain is continuous' or there is persisitent and progressive jaundice.

2. Pain—Epigastric or right hypochondriac and constant dull aching in nature.

3. Vomiting—It fails to relieve the pain.

4. Anorexia, weakness and loss of weight.

5. Jaundice.

○ Gall bladder is usually palpable and continuous with an enlarged equally hard nodular liver in some cases.

○ इसके लक्षण आमाशय-कैंसर तथा लिवर-कैंसर से मिलते-जुलते हैं। दाहिनी तरफ पेट में दर्द होना तथा कभी-कभी असहयनीय दर्द का होना प्रमुख लक्षण है।

○ पीलिया (Jaundice), ज्वर, अजीर्ण तथा पेट में दाहिनी तरफ एक गाँठ का प्रतीत होना भी इसका लक्षण है।

उपद्रव (Complications)—रोग बढ़ने के साथ-साथ निम्न उपद्रव भी होने लगते हैं—

१. पित्तवाहिनीशोथ (Cholengitis)।

२. अत्यधिक ज्वर (High pyrexia)।

रोग की अन्तिम अवस्था—

१. यकृद्-विद्रधि।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. पित्ताशय में छेदन (Perforation of gall bladder)।

३. टर्मिनल पेरिटोनाइटिस।

निदान (Diagnosis)—१. इसका निदान उपरोक्त लक्षणों के आधार पर किया जाता है। ४० वर्ष से नीचे वाली अवस्था में विशेषकर स्त्रियों में जो पित्ताश्मरी (Gall stone) से ग्रसित होती हैं, उनकी परीक्षा विशेष सावधानीपूर्वक करनी चाहिए।

२. जब कैंसर बढ़ जाता है तब पित्ताशय कठोरता से प्रतीत होता है।

३. प्रारम्भ में कामला के लक्षण कम मिलते हैं।

एक्स-रे परीक्षा—१. इस परीक्षा में सामान्य एक्स-रे चित्र में यकृत् के किनारे तथा कोलन में उभार मिलता है।

२. कैंसर के मध्य के भाग में वायु की छाया मिलती है।

बेरियम एक्स-रे परीक्षा में—आमाशय तथा ग्रहणी (Stomach and duodenum) में स्पष्ट रूप से विरूपता (Deformity) दिखलाई देती है।

○ In patients with chronic cholecystitis, peritoneoscopy may reveal evidence of carcinoma.

विभेदक निदान (Differential diagnosis) १.—पित्ताशयशोथ (Cholecystitis) तथा पित्ताश्मरिता (Cholelithiasis) से इसका भेद करना चाहिए।

२. उपद्रवों, विशेषकर पित्तवाहिनीशोथ तथा पेरिटोनियम के शोथ से इसका भेद आवश्यक होता है।

रोग की आशंका—यदि किसी रोगी में पित्ताश्मरिता (Cholelithiasis) के लक्षण विद्यमान हों, अथवा पित्ताश्मरी के प्रदेश में एक दृढ़ उभार उपस्थित हो तब पित्ताशय-कैंसर की आशंका करनी चाहिए।

चिकित्सा (Treatment)—इसकी एक मात्र चिकित्सा ऑपरेशन द्वारा इसको यथासम्भव शीघ्र निकाल देना ही है।

जिस समय पित्ताश्मरी के लिए ऑपरेशन किया जाय, उसी समय अश्मरी के पित्ताशय को भी निकाल देना श्रेयस्कर होता है। इससे भविष्य में पित्ताशय कैंसर की सम्भावना नहीं रहती।

रेडिएशन—किसी-किसी रोगी में ऑपरेशन के बाद यह चिकित्सा विशेष लाभकारी होती है।

○ इसके लिए कोबाल्ट-६० के किरणन (Irradiation) से विशेष लाभ मिलता है।

नोट—इस चिकित्सा क्रम से रोगी ५ वर्ष तक स्वस्थ रहते देखा गया है।

पित्ताशय कैंसर की नवीनतम चिकित्सा (Recent treatment of gall bladder cancer)—यह चिकित्सा यकृत् कैंसर के समाने होती है। ▣

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बृहदन्त्र एवं मलाशय का कैंसर
(Cancer of the Colon & Rectum)

परिचय—शरीर में आमाशय-कैंसर के पश्चात् इस कैंसर का क्रम आता है। यह ४० वर्ष की आयु के पश्चात् स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में अधिक होता है।

कारण (Etiology)—अब तक कोई स्पष्ट कारण मालूम नहीं हो सका है। 'अल्सरेटिव कोलाइटिस' के पश्चात् यह अर्बुद प्रायः उत्पन्न हो जाता है।

प्रकार (Types)—१. **प्रोलिफेरेटिव अथवा फंगेटिंग प्रकार** (Proliferative or fungating type)—इसमें अर्बुद-पिण्ड की वृद्धि अधिक होती है, जिससे पिण्ड का आकार बढ़ता ही चला जाता है। इसमें कोशिकाओं की संख्या में अति वृद्धि होती है।

२. **स्क्लेरोसिंग टाइप** (Sclerosing type)—इसमें अर्बुद की कोशिकाएँ आन्त्र-भित्ति के स्तरों में फैलती जाती हैं और आन्त्र का वह भाग एक कागज के गोल टुकड़े या छल्ले के समान हो जाता है। इसमें फाइब्रोसिस टिशू अधिक होता है।

○ इस प्रकार के कैंसर में आन्त्र का प्रभावित भाग एक मोटे कागज या मोटे कपड़े की नलिका के समान हो जाता है।

○ दोनों प्रकार के अर्बुदों का प्रसार प्रायः धीमी गति से होता है।

○ इसका प्रसार एवं फैलाव पहले आस-पास के प्रदेशों में होता है, फिर धीरे-धीरे पेट के अन्दर छोटे-छोटे बीजों द्वारा होता है और पेट में पानी पैदा कर देता है।

लक्षण एवं चिह्न (Symptoms of signs)—१. शरीर अस्वस्थ, शरीर-भार में कमी, विषमयता (Toxaemia), हलका ज्वर तथा रक्तक्षीणता उत्पन्न हो जाते हैं।

२. एक विशेष प्रकार में रोगी की मलत्याग की क्रिया बदल जाती है। जहाँ पहले उसको केवल कब्ज रहता था वहीं अब कभी कब्ज होता है तो कभी पतले दस्त आते हैं। शनैः-शनैः कब्ज की शिकायत बढ़ती ही जाती है।

३. **पीड़ा** (Pain)—पेट में पीड़ा के आक्रमण समय-समय पर होते रहते हैं। यह पीड़ा अर्बुद के स्थान से कुछ दूर हो सकती है।

४. व्रण बन जाने पर मल में रक्त तथा पूय की उपस्थिति मिलती है।

५. ○ मलाशय के अर्बुद में एक विशिष्ट लक्षण 'रक्तस्राव' का होता है।

६. अर्श (Piles) की उत्पत्ति हो सकती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ पहले इसमें कब्जियत तथा दस्त के लक्षण उत्पन्न होते है, जैसा कि प्रायः कोलाइटिस में मिलते हैं। रोग के कारण प्रारम्भ में कोई लक्षण नहीं मिलते; कभी-कभी कब्जियत तथा पेट में दर्द के लक्षण होते हैं। यह दर्द कभी-कभी इतना अधिक हो जाता है कि बर्दाश्त करना कठिन हो जाता है। इसके अतिरिक्त मल फीते के समान चिपटा होता है। कभी रक्तमिश्रित मल का आना और कभी मलत्याग के पश्चात् रक्त का आना—इस प्रकार के लक्षण मिलते हैं। यह रोग यकृत् में भी पहुँच जाता है।

नोट—वृद्धावस्था में अर्श की उपस्थिति कैंसर का संदेह उत्पन्न कर सकती है। ऐसी अवस्था में रोगी की गुदा-परीक्षा अवश्य करनी चाहिए।

○ यदि उदर-परीक्षा से कहीं पर रुका हुआ मल-पिण्ड प्रतीत होता है तो उसके नीचे आन्त्रभाग में कैंसर की सम्भावना की जा सकती है।

○ उसके ऊपर के आन्त्रभाग में गैस के इकट्ठा होने के कारण वह विस्तृत अथवा फूला प्रतीत होगा।

निदान (Diagnosis)—४० वर्ष की आयु के पश्चात् यदि रोगी के मलत्याग के क्रम में विकार उत्पन्न हो जाये और उसको कब्ज, भूख की कमी, उदर में जब-तब पीड़ा, पेट फूलना, दस्तों का अनियमित प्रकार से आना आदि लक्षण मिले तो कैंसर की शंका करके रोगी की सम्पूर्ण परीक्षा करनी चाहिए।

परीक्षाएँ (Examinations)—१. उदर-परीक्षा सावधानीपूर्वक करें।

२. मल में गुप्त रक्त (Occult blood) की परीक्षा अवश्य करनी चाहिए।

३. **गुदा-दर्शक यन्त्र-परीक्षा**—यदि परीक्षा में अर्बुद-पिण्ड दिखलाई दे तो उसका एक टुकड़ा काटकर उसकी ऊतक परीक्षा (Biopsy) करनी चाहिए।

○ यदि इस परीक्षा की रिपोर्ट कैंसर के विपरीत हो, किन्तु अन्य लक्षण तथा शारीरिक परीक्षा-फल कैंसर सदृश हों तो इसे कैंसर ही समझना चाहिए।

एक्स-रे परीक्षा—यह परीक्षा २ प्रकार से की जाती है—

१. बेरियम सल्फेट खिलाकर पाचकतंत्र का चित्रण लिया जाता है।

२. बेरियम एनीमा देकर।

नोट—कभी-कभी रोग पहिचानने में कई माह तक लग जाते हैं।

○ बेरियम एनीमा देकर रोगी की एक्स-रे परीक्षा की जाती है, जिससे उसमें साफ पता चल जाता है कि रोगी की बड़ी आँत के किस भाग में कैंसर है। यदि नहीं है तो किन कारणों से ये लक्षण प्रतीत हुए हैं।

○ कभी-कभी रोगी रक्तस्राव को बवासीर या भगन्दर समझ कर टाल देते हैं और उल्टी-सीधी चिकित्सा कराते हैं और सामान्य चिकित्सक भी कैंसर की अज्ञानता के कारण इस रोग को नहीं समझ पाते। ऐसी अवस्था में किसी 'कैंसर चिकित्सालय' या 'कैन्सर डिटेक्शन क्लिनिक' की सहायता लेनी चाहिए। क्योंकि यही लक्षण मलाशय के कैंसर तथा गुदा के कैंसर में भी होते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सक उस रास्ते से बायोप्सी परीक्षा करते हैं। बड़ी आँत के अन्य भागों के लिए पेट का ऑपरेशन करके भी देख लिया जाता है और साथ ही उसका उपचार भी कर दिया जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—आक्रान्त भाग को सम्पूर्णतया उच्छेदित कर देना ही इस रोग की चिकित्सा है।

○ यह एक अत्यन्त विस्तृत तथा बृहद् ऑपरेशन है। फिर भी ऑपरेशन के आधुनिक उपायों तथा ब्लड-ट्रांसफ्यूजन एवं अनीस्थीसिया के उपायों से ६०% रोगियों का सफलतापूर्वक ऑपरेशन किया जा सकता है।

○ इस चिकित्सा में लगभग आधे रोगी ५ वर्ष तक जीवित पाये गये हैं।

विशेष—इसमें कैंसर की गाँठ के कारण मल-विसर्जन में अवरोध उत्पन्न हो जाता है। इसलिए सबसे पहले मल का रास्ता पेट में ऑपरेशन द्वारा बनाया जाता है। यदि रोग अधिक नहीं बढ़ा होता है तो ऑपरेशन द्वारा उतने भाग को काट कर निकाल दिया जाता है तथा मल का रास्ता पेट में बना दिया जाता है। यदि रोग अधिक बढ़ा होता है तो ओषधियों द्वारा उसकी चिकित्सा की जाती है।

○ गुदा अथवा मलाशय के कैंसर में मल के अवरोध को दूर करके पेट में रास्ता बना दिया जाता है और उसके पश्चात् प्रविकिरण द्वारा उसका उपचार किया जाता है।

बृहदन्त्र के कैंसर की नवीनतम चिकित्सा (Recent treatment of the cancer of colon & rectum)—

१. शल्यकर्म से पूर्व की अवस्था में—

५ एफ० यू० (5 Fluro-uracil) २५०० मि० ग्रा०

मात्रा—प्रतिदिन I/V द्वारा १ से ५ दिन तक।

२. शल्य-कर्म के पश्चात्—

५ एफ० यू० (5 Fluro-uracil) (रोशे कं०)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० प्रतिदिन I/V द्वारा १ से ५ दिन तक।

नोट—उपरोक्त औषधि को प्रति माह दुहराते हुए ६ माह तक प्रयोग करना चाहिए।

रेडियो थेरापी (Radio therapy)—शल्यकर्म के पश्चात् विकिरण चिकित्सा का भी प्रयोग किया जा सकता है। इसके लिए ४००० R को ४ सप्ताह तक रोगी को दिया जाता है।

सावधानी और बचने के उपाय—कोलाइटिस के लक्षण मिलते ही सबसे पहले इसकी चिकित्सा करनी चाहिए। यदि इससे लाभ न मिले तो परीक्षण-दर-परीक्षण जाँच करनी चाहिए तथा अन्य स्थानों के परीक्षण के साथ-साथ यह परीक्षण भी प्रति ३ माह बाद अपने चिकित्सक अथवा कैंसर चिकित्सालय में करा लेना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उदररोगों की पेटेण्ट मिश्रित औषधि-चिकित्सा

(Combination Therapy of Patent Medicines for Abdominal Disorders)

अरुचि एवं भूख न लगना

(Anorexia and Loss of Appetite)

१. ℞	बेरिन (विटा० बी$_1$)	½ गोली
	बी-कॉम्प्लेक्स (A. F. D.)	१ गोली
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार गाय के दूध में ।

२. ℞	मेटाटोन (P. D.)	१० मिली०
	निओगैडीन एलिक्जिर (रेप्टॉकोस)	१५ मिली०
	कैडिमाल्ट (कैडिला)	१० मिली०
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार भोजन से पूर्व ।

नोट—इससे अरुचि दूर होकर भूख लगती है ।

३. ℞	नर्विटोन एलिक्जिर (एलेम्बिक)	१० मिली०
	न्यूट्रिफिल लिक्विड (वार्नर)	१० मिली०
	पैबाप्लैक्स लिक्विड (पाश्चर)	५ मिली०
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजनोपरान्त ।

४. ℞	टोनोफॉस लिक्विड (रैलीज)	१० मिली०
	टोनियाजोल सीरप (बोहरिंगर नॉल)	५ मिली०
	विनोफिट सीरप (वॉकहर्डट)	१० मिली०
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ या ३ बार भोजन के बाद ।

५. ℞	पेरीएक्टिन (एम० एस० डी०)	२ गोली
	जेरोविऑन (मर्क)	१ गोली
	मायडेक (पार्क डेविस)	१ कैप्सूल
	ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार ।	१ मात्रा

नोट—इससे रोगी की अरुचि दूर होकर खुलकर भूख लगती है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. ℞ विटाहैक्स्ट सीरप (हैक्स्ट) १० मिली०
रैनवेक्सी टॉनिक (रैनवेक्सी) १० मिली०
आर्हेप्टाल लिक्विड (मर्क) ५ मिली०
१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजन के बाद । बच्चों को—¼–½ मात्रा ।

विशेष—१. अरुचि दूर होकर यकृत् की क्रिया में पर्याप्त सुधार होकर भूख खुलकर लगती है ।

२. शरीर हृष्ट-पुष्ट तथा बलवान् बनता है । बीमारी के बाद की दुर्बलता में परम लाभकारी ।

७. ℞ सेण्टीविनी लिक्विड (सैण्डोज) १० मिली०
पेरिटॉल सीरप (थेमिस) ५ मिली०
सिक्सैप सीरप (ग्रिफान) १० मिली०
१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजन से पूर्व ।

विशेष—इससे भूख लगती है । साथ ही शरीर में रक्त एवं शक्ति की वृद्धि होती है ।

८. ℞ फॉस्फोमिन एलिक्जिर (साराभाई) १० मिली०
पेरिएक्टिन सीरप (एम० एस० डी०) १० मिली०
परनेक्सिन एलिक्जिर (जर्मन रेमेडीज) ५ मिली०
१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार । बच्चों को ¼–½ मात्रा ।

अजीर्ण
(Indigestion)

१. ℞ वीटाजाइम (ईवान्स) १ गोली
डिस्पेप्टाल (बोहरिंगर नाल) १ गोली
१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजनोपरान्त ।

विशेष—इससे भोजन का पाचन सही होता है । पेट का भारीपन तथा गैस बनना रुकता है ।

२. ℞ यूनीइञ्जाइम (यूनिकेम) १ गोली
कॉम्प्लेक्स-बी फोर्ट १ गोली
१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजन के तत्काल बाद जल से ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष—अजीर्ण, भोजन का न पचना, पेट की गुड़गुड़ाहट तथा वायु के विकारों में लाभकारी।

३. ℞	यूनीइन्जाइम सीरप (यूनिकेम)	२ चाय चम्मच
	फॉस्फोमिन (साराभाई)	१ चाय चम्मच
	डीजीप्लेक्स लिक्विड (रेलिस)	१ चाय चम्मच
		१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजनोपरान्त।
बच्चों को—½ मात्रा प्रातः-सायं।

विशेष उपयोग—अजीर्ण, भूख न लगना, पेट में गुड़गुड़ाहट तथा अफारा में लाभकारी।

४. ℞	एलूजेल (यूनिकेम)	१ गोली
	एसिडोल पेप्सिन (बायर)	१ गोली
	न्यूरो-ट्रॉसेण्टिन (सीबा-गाइगी)	२ गोली
		१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजनोपरान्त जल से।
विशेष उपयोग—जीर्ण अतिसार तथा उदर-शूल में लाभकारी।

५. ℞	विलामाइड (एथनोर)	१ गोली
	कोम्बीजाइम (निओ-फार्मा)	१ गोली
	सोडा मिण्ट (बूट्स)	२ गोली
		१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजनोपरान्त गर्म जल से।

६. ℞	डिस्पेप्टाल (नोल)	१ गोली
	बीकाडेक्स (ड्यूमेक्स)	१ गोली
		१ मात्रा की पुड़िया

साथ ही—

टाका डायस्टेज लिक्विड (P. D.)	१ चम्मच
बी० जी० फॉस एलिक्सिर	१ चम्मच
जल	½ ग्लास
	१ मात्रा।

नोट—पुड़िया वाली दवा जबान पर रख कर ऊपर से मिक्श्चर वाली औषधि पीयें।

विशेष उपयोग—अजीर्ण, अफारा, पेट का भारीपन, गैस का बनना तथा अपचन आदि में लाभकारी।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. ℞	यूनीइञ्जाइम	१ गोली
	सोडा मिण्ट	२ गोली
	सीलिन–५०० मि० ग्रा०	½ गोली
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार भोजनोपरान्त ।

विशेष उपयोग—यह नये अजीर्ण में विशेष लाभकारी है ।

८. ℞	टाकाजाइम पाउडर (पार्क डेविस)	१ चम्मच
	बी० जी० फॉस एलिक्जिर (M. S. D.)	२ चम्मच
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार भोजनोपरान्त ।

विशेष उपयोग—अजीर्ण, अपचन, पेट की गैस, गुड़गुड़ाहट, अफारा एवं दुर्बलता में लाभकारी ।

९ ℞	यूनीइञ्जाइम	१ गोली
	इक्वीब्रोम	१ गोली
	न्यू इस्टेविट (मर्क)	१ गोली
		१ मात्रा ।

साथ ही—

बी० जी० फॉस एलिक्सिर	२ चम्मच
जल	४ चम्मच
	१ मात्रा ।

नोट—उपरोक्त गोली लेकर ऊपर से साथ वाली दवा पियें । ऐसी १-१ मात्रा दिन में ३ बार ।

अम्लपित्त-जठरअत्यम्लता-छाती की जलन
(Acidity, Hyperacidity, Heart-burn)

१. ℞	एल्यूड्रॉक्स एम० एच० (वाइथ)	१ गोली
	एक्वीब्रोम (ला मेडिका)	१ गोली
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार ताजे जल से ।

२. ℞	एलूसिनॉल (फ्रेन्को-इण्डियन)	१ गोली
	न्यूट्रोलॉम (निकोलस)	१ गोली
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल से ।

विशेष उपयोग—आमाशय और आँतों की अम्लता, पेट तथा छाती की जलन, खट्टी डकारें, पेट में संड़ास तथा गैस होने में उपयोगी ।

CC-0. Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. ℞	एल्यूड्रॉक्स M-H. (वाइथ)	१ गोली
	टाकाजाइम (P. D)	½ ड्राम
	विस्माग पाउडर (ज्याँफरी मेनर्स)	½ ड्राम
	इक्वीन्नोम (ला मेडिका)	१ गोली
		१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार २½ औंस जल के साथ दें।

४. ℞	डायजीन जैल लिक्विड (बूट्स)	१ चम्मच
	जेलूसिल लिक्विड (वार्नर)	१ चम्मच
	ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार।	१ मात्रा।
५. ℞	डायजीन लिक्विड (बूट्स)	१ चम्मच
	लेनोपाल लिक्विड (अतुल ड्रग हाउस)	१ चम्मच
	ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार।	१ मात्रा।
६. ℞	टाकाजाइम (पार्के डेविस)	१ चम्मच
	न्यूट्रैडोना (निकोलस)	½ चम्मच
	ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार दें।	१ मात्रा।

विशेष उपयोग—अजीर्ण, अफारा, अतिसार, मलावरोध, आमाशय तथा आँतों की जलन तथा घाव में उपयोगी। इससे पेट की वायु निकलती है तथा पाचन-शक्ति बढ़ती है।

अतिसार
(Diarrhoea)

१. ℞	बैसिप्लोन (खण्डेलवाल)	१ कैप्सूल
	इण्टेरोबायोफार्म (सीबा-गाइगी)	१ गोली
	फ्युरॉक्सोन (स्केलैब)	१ गोली
	सीलिन (ग्लैक्सो) ५०० मि० ग्रा० की	½ गोली
		१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा प्रति ६ घण्टे पर। बच्चों एवं वयस्कों में उनकी आयु के अनुसार।

विशेष उपयोग—यह बेसिलरी डिसेण्ट्री में परम लाभकारी है।

२. ℞	क्लोरोस्ट्रेप (P. D)	१ कैप्सूल
	क्लोरैम्बीन (A. F. D.)	१ गोली
	डिस्फर प्लस (Evans)	१ गोली
		१ मात्रा।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार जल से। बच्चों को आयु के अनुसार $\frac{1}{4}$-$\frac{1}{2}$ मात्रा।

विशेष उपयोग—सभी प्रकार के दस्तों में लाभकारी।

३. ℞ एल्यूड्रॉक्स (वाइथ)	१ गोली
सल्फाग्वानेडीन (M. B.)	२ गोली
कोमाइसीन (ग्लैक्सो)	१ गोली
बी-कॉम्प्लेक्स	१ गोली
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २–३ बार जल से।

४. ℞ थैलाजोल	१ गोली
फ्यूरामाइडं	१ गोली
डायडोक्वीन	१ गोली
मेक्राबिन	१ गोली
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३–४ बार ताजे जल से।

५. ℞ फ्यूरामाइड कम्पाउण्ड (बूट्स)	१ गोली
इण्टेस्टोपान-इन (सैण्डोज)	२ गोली
कैल्टिन विद नीओमाइसिन सस्पेन्शन (अब्बोट)	२ चम्मच
	१ मात्रा।

नोट—गोली पीस कर सस्पेन्शन में मिला लें।

ऐसी १ मात्रा दिन में ५–६ बार नित्य। बालक—वयस्कों की $\frac{1}{2}$ मात्रा।

विशेष—सभी प्रकार के दस्तों में उपयोगी।

६. ℞ एल्यूड्रॉक्स (वाइथ)	१ गोली
सल्फाग्वानेडीन (I. C. I.)	२ गोली
कोमाइसिन (स्ट्रेप्टोमाइसिन)	१ गोली
बी-कॉम्प्लेक्स (ग्लैक्सो)	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल से। बालकों में $\frac{1}{2}$ मात्रा दिन में २–३ बार।

विशेष उपयोग—समस्त प्रकार के दस्तों में लाभकारी।

७. ℞ स्ट्रेप्टो-मैग्मा सस्पेन्शन (वाइथ)	१ चम्मच
क्लोरोमाइसिटिन पाल्मीटेट (P. D.)	१ चाय चम्मच
एल्यूड्रॉक्स-लिक्विड (वाइथ)	१ चाय चम्मच
	१ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार जल से। बालक—$\frac{1}{2}$ मात्रा।

विशेष—कीटाणुजन्य पेचिस (बेसिलरी डिसेण्ट्री) में लाभकारी।

८. ℞	फ्यूरॉक्सान (स्केलैब)	२ चम्मच
	पेसुलिन (कैडिला)	२ चम्मच
		१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २–३ बार। बच्चों को $\frac{1}{3}$ या $\frac{1}{2}$ मात्रा।

९. ℞	एमीक्लीन प्लस (ग्रिफान)	१ गोली
	एल्डाएमाइसिन (अल्केम)	१ गोली
	डिपेण्डाल (स्केलैब)	१ गोली
		१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रति ६ घण्टे पर जल से। बच्चों को आयु के अनुसार फलों के रस या माँ के दूध में।

विशेष—समस्त प्रकार के अतिसार में लाभकारी।

१०. ℞	स्ट्रेप्टो-पेरॉक्सीन ग्रेन्यूल्स (बी० नाल)	१ चम्मच
	एल्यूड्राक्स लिक्विड (वाइथ)	१ चम्मच
	पेसुलिन (कैडिला)	१ चम्मच
		१ मात्रा।

नोट—स्ट्रेप्टो-पेरॉक्सीन को थोड़े जल में घोल कर शेष दवाएँ मिलायें।

ऐसी १ मात्रा प्रति ४–६ घण्टे पर। बच्चों को $\frac{1}{3}$ मात्रा।

११. ℞	सल्फाग्वानेडीन	१ गोली
	सल्फाडायजीन	१ गोली
	फोलिक एसिड	२ गोली
	सोडा बाइकार्ब	६ मि० ग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३–४ बार।		१ मात्रा।

१२. ℞	सल्फाग्वानेडीन	२ गोली
	सेप्ट्रान या विक्ट्रिम	१ गोली
	डिपेण्डाल एम०	१ गोली
	क्लोरोस्ट्रेप कै० (P. D.)	१ कै०
		१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर दिन में ३–४ बार।

विशेष उपयोग—यह अपना स्वयं का अनुभव-सिद्ध प्रयोग है। हर प्रकार के अतिसार तथा डिसेण्ट्री में लाभकारी है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३. ℞	क्लोरोस्ट्रेप (P. D.)	१ कैप्सूल
	कैपलिन	१ गोली
		१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ४ बार जल से।

विशेष उपयोग—दस्तों में खून आने पर।

१४. ℞	सल्फाडायजीन	१ गोली
	फोलिक एसिड	१ गोली
	सोडा बाईकार्ब	१ ग्राम
ऐसी १ मात्रा दिन में ४ बार जल से।		१ मात्रा।

१५. ℞	इण्टेस्टोपान फोर्ट	१ कै०
	क्लोरोस्ट्रेप (P. D.)	१ कै०
	वेसीप्लान (खण्डेलवाल)	१ कै०
ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर।		१ मात्रा।

अग्निमांद्य एवं भूख की कमी
(Dyspepsia & Loss of Appetite)

१. ℞	यूनीइन्जाइम (यूनिकेम)	१ गोली
	बी-प्लेक्स फोर्ट (A. F. D.)	½ गोली
	सोडा मिण्ट (बूट्स)	२ गोली
	सीलिन (ग्लैक्सो) ५०० मि० ग्रा० की	½ गोली
		१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २–३ बार भोजनोपरान्त।

२. ℞	विटाजाइम (ई० आई०)	१ चाय चम्मच
	डिस्पेप्टेज (पाश्चर)	१ चाय चम्मच
	बीकोसूल्स सीरप (फाइजर)	२ चाय चम्मच
		१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में दो बार बराबर जल के साथ भोजनोपरान्त।

३. ℞	पञ्जीनॉर्म (जर्मन रेमेडीज)	२ गोली
	कोम्बीजाइम (नीओ फार्मा)	२ गोली
	बिवीनाल फोर्ट विद विटामिन-सी	१ कैप्सूल
		१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में १ बार भोजन से पूर्व या बाद में।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. ℞ बीकोजाइम फोर्ट	२ गोली
मेरीजाइम (मरकरी)	२ गोली
बिलामाइड (एथनॉर)	२ गोली
	१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा भोजन के साथ या बाद में ।

आध्मान/अफारा/पेट का फूलना
(Flatulence)

१. ℞ प्रोस्टिग्मिन (रोशे) १ मि० ली०] दोनों को सिरिञ्ज
बी-प्लेक्स (ए० एफ० डी०) १ मि० ली०] में लेकर ।

ऐसी १ मात्रा का सूचीवेध गहरे मांसपेशी में ।

○ **नोट**—आध्मान के अतिशयय कष्ट में विशेष लाभकारी ।

इसके नाद निम्न योग दें—

℞ प्रोस्टिग्मिन	१ गोली
बी-प्लेक्स	१ गोली
	१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल से ।

२. ℞ एसीडीन (ईस्ट इंडिया)	२ गोली
फेस्टाल ड्रेगी (हॉचेस्ट)	१ ड्रेगी
साइलोक्सीजीन जैल (सियरले)	१ गोली
	१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार भोजनोपरान्त अथवा आवश्यकतानुसार ।

३. ℞ यूनिइञ्जाइम (यूनिकेम)	१ गोली
सोडामिण्ट (बूट्स)	२ गोली
सीलिन (ग्लैक्सो) ५०० मि० ग्रा०	½ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर जल से ।

विशेष—इससे पाचन-शक्ति बढ़ कर अफ़ारा की क्रिया नष्ट होती है ।

४. ℞ इन्जार (वाल्टर बुशनैल)	२ गोली
बीकोजाइम फोर्ट (फ्रेन्को-इण्डिया)	२ गोली
एरोविट (रोशे)	२ गोली
	१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में ४ बार गर्म जल से ।

५. ℞ नार्मोजाइम (यूनिल्वाइड्स)	१ गोली
बीकोसूल्स (फाइजर)	१ कै०
बिवीनॉल फोर्ट विद विटामिन-सी	१ कै०
	१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मलावरोध/कब्ज
(Constipation)

१. ℞ ग्लैक्सेना (ग्लैक्सो)	१ गोली
डेसीकोल कैप्सील्स	२ कै०
लैक्सील (बंगाल केमिकल)	२ गोली
	१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा रात्रि में सोते समय गर्म जल से ।

२. ℞ डल्कोलेक्स (जर्मन रेमेडीज)	१ गोली
बी-प्लेक्स (ए० एफ० डी०)	१ गोली
	१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा रात्रि में सोते समय गर्म जल से ।

३. ℞ बाइकोलेट्स (मॉर्टिन एण्ड हेरिस)	२ गोली
सीलिन (ग्लैक्सो) १०० मि० ग्रा०	१ गोली
	१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा रात में सोते समय गर्म जल से ।

४. ℞ कनॉर्मल (जर्मन रेमेडीज)	१ बड़ा चम्मच
लैक्सिल (बी० सी०)	२ गोली
बेबिडॉक्स (अब्बोट)	१ गोली
	१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा रात में सोते समय गर्म जल से ।

५. ℞ एवैकुऑल ग्रेन्यूल्स (ग्रिफॉन)	१ छोटा चम्मच
ग्लैक्सेना (ग्लैक्सो)	२ गोली
बीकोसूल्स (फाइजर)	१ कैप्सूल
	१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा रात में सोते समय गर्म जल से ।

विशेष उपयोग—यह नये एवं पुराने सभी कब्ज में विशेष लाभकारी है ।

उदरशूल एवं आन्त्रशूल
(Abdominal Pain & Intestinal Colic)

१. ℞ स्पाज्मो-सीबार्लिजन	१ गोली
इण्टेस्टोपान	२ गोली
	१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर ।

विशेष—खाने-पीने की गड़बड़ी से उत्पन्न उदरशूल में लाभकारी ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. ℞	एक्वाजेसिक (जॉन वाइथ)	१ गोली
	कैलपोल (B. W.)	२ गोली
	स्पाज्मो-प्रोक्सीवॉन (वॉकहर्डट)	१ गोली
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा गर्म जल से दर्द के समय आवश्यकतानुसार ।

३. ℞	सुधिनॉल-एन कम्पाउण्ड (रैनवेक्सी)	१ गोली
	लार्जेक्टिल (एम० बी०) २५ मि० ग्रा०	१ गोली
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दर्द के समय जल से ।

विशेष उपयोग—सभी प्रकार के दर्द में तत्काल लाभ पहुँचाने वाली ।

४. ℞	बेरालगन (हैक्स्ट)	१ गोली
	स्पाज्मिण्डोन (इण्डो फार्मा)	½ गोली
	बुस्कोपान (जर्मन रेमेडीज)	½ गोली
	इक्वीब्रोम (ला मेडिका)	१ गोली
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दर्द के समय गर्म जल से ।

नोट—यह योग उदरशूल, वृक्कशूल, मूत्राशयशूल, पित्ताशयशूल, गर्भाशय-शूल आदि समस्त प्रकार के शूलों में तत्काल प्रभावकारी है ।

५. ℞	बेरालगन (हैक्स्ट)	१ गोली
	बुस्कोपान (जर्मन रेमेडीज)	१ गोली
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा गर्म जल से दर्द के समय ।

विशेष—यह पेटेण्ट योग उदरशूल, कोमल मांसपेशियों की ऐंठन, तीव्र पीड़ा तथा मरोड़ में तत्काल लाभकारी है ।

६. ℞	स्पाज्मिण्डोन (इण्डो फार्मा)	१ गोली
	एक्वीब्रोम (ला मेडिका)	१ गोली
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा गर्म जल से दर्द के समय ।

नोट—समस्त प्रकार के उदरगत शूलों तथा मरोड़ में लाभकारी ।

मितली और कै

(Nausea & Vomiting)

१. ℞	प्रोस्टिग्मिन	१ गोली
	एवोमिन	१ गोली
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा प्रति ३-३ घण्टे पर जल से ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. ℞ विस्टारिल (फाइजर) २ गोली
पायरीमेसीत (ईस्ट) २ गोली
सीक्विल (साराभाई) १० मि० ग्रा० १ गोली
१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा प्रति ३ घण्टे पर जल से ।

३. ℞ एस्केजीन (स्केलैब) १ गोली
सीलिन (ग्लैक्सो) १०० मि० ग्रा० १ गोली
१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर । समस्त प्रकार के वमन तथा मितली में लाभकारी ।

४. ℞ मारजीन (बरोज वेलकम) १ गोली
बी-कॉम्प्लेक्स (ग्लैक्सो) १ गोली
१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा आवश्यकतानुसार जल से ।

५. ℞ लार्जेक्टिल (M. B.) १० मि० ग्रा० १ गोली
सीलिन १०० मि० ग्रा० १ गोली
१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा प्रति ३-४ घण्टे पर जल से आवश्यकतानुसार ।

यकृद्-वृद्धि/जिगर का बढ़ना
(Inlargement of Liver)

१. ℞ निओ-मेथीडीन (निओ-फार्मा) १ गोली
लिव-५२ (हिमालया कं०) १ गोली
सीलिन (गैक्सो) १०० मि० ग्रा० की २ गोली
ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर जल से । १ मात्रा ।

२. ℞ निओ-मेथीडिन (निओ फार्मा) १ गोली
अथवा—न्यो-कोलीन (सिपला) १ गोली
रेडॉक्सॉन फोर्ट (रोशे) १ गोली
१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रातः-सायं जल से ।

विशेष उपयोग—यकृत् का बढ़ना, यकृत्शोथ, कामला, यकृत् का सिकुड़ना तथा यकृत् के समस्त दोषों में लाभकारी ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. ℞	मेक्राफोलीन आयरन (ग्लैक्सो)	१ गोली
	बी क्रोफेराल (क्रुक्स)	१ गोली
	सीलिन (ग्लैक्सो) १०० मि० ग्रा० की	२ गोली
	ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजनोपरान्त ।	१ मात्रा

रक्ताल्पता एवं कामला
(Anaemia & Jaundice)

१. ℞ इञ्जे० मेक्राफोलीन (ग्लैक्सो)
१ मिली० I/M नित्य या तीसरे दिन ।
साथ ही—डेल्फीकोल (Delphical) (लीडर्ले)
२-२ चम्मच दिन में ३ बार खाने के बाद ।

२. ℞	लिब्यूल्स (एलेम्बिक)	१ कैप्सूल
	डेल्टा इफकोर्लिन (ग्लैक्सो)	१ गोली
	सीलिन (ग्लैक्सो) १०० मि० ग्रा० की	२ गोली
	निओ-मेथीडीन (निओ फार्मा)	१ गोली
	ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार ।	१ मात्रा

साथ ही—

℞	लिवर एक्स्ट्रेक्ट विद बी$_{१२}$	१ मि०ली०
	रेडिसोल एच० (मर्क) १००० माइक्रोग्राम का	१ मिली०
	बिनर्वा	१ मिली०
		१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा I/M नितम्ब में प्रति तीसरे दिन १ से १० इञ्जे० तक ।

विशेष—अनीमिया, कामला तथा यकृद् वृद्धि में लाभकारी ।

३. ℞	सोल्यूजाइम	१ एम्पुल
	सिकाविट	१० मि० ग्रा०
	रेडॉक्सॉन	५०० मि० ग्रा०
	ग्लूकोज २५%	५० मिली०
		१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा इण्ट्रावीनस इञ्जेक्शन के रूप में ।
साथ ही—मैगसल्फ ४ ड्राम मुख से (कब्ज के लिए) ।

४. ℞	न्यो-कोलीन (सिप्ला)	१ गोली
	बीकोनेक्स (फाइजर)	१ गोली
	मेक्राफोलीन आयरन	१ गोली
	ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार जल से ।	१ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. ℞ डेल्टाकोर्टिल (फाइजर)	१ गोली
सीलिन १०० मि० ग्रा०	२ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार जल से ।	१ मात्रा

६. ℞ लिस्ट्रिसिन (रोशे)	२ गोली
सार्बिसिन (E. I.)	१ गोली
डेकाड्रान (M. S. D.)	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार जल से भोजन के बाद ।

७. ℞ मैक्राबिन (ग्लैक्सो) ५०० माइक्रोग्राम	१ मिली०
कैपलिन (ग्लैक्सो)	१ मिली०
कैल्शियम सैण्डोज विद विटामिन-सी	५ मिली०
ऐसी १ मात्रा I/V धीरे-धीरे लगायें ।	१ मात्रा

नोट—तीव्र पीलिया (Acute Jaundice) में परम लाभकारी ।

८. ℞ मेक्राफोलीन आयरन (ग्लैक्सो)	१ गोली
बीकोफेराल (डूफर)	१ गोली
सीलिन १०० मि० ग्रा० (ग्लैक्सो)	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजन के १५-२० मिनट बाद जल से ।

विशेष उपयोग—(i) यकृत् के दोषों से उत्पन्न रक्ताल्पता (अनीमिया) में लाभकारी । इससे रक्त में 'हीमोग्लोबिन' की मात्रा बढ़ती है ।

(ii) शरीर का शोथ दूर होकर चेहरे का रंग प्राकृतिक हो जाता है ।

(iii) शरीर में शक्ति का संचार होता है ।

९. ℞ रैनफेरॉन-१२ (रैनवैक्सी)	५ मिली०
मैनाडॉल (ज्याँफरी मैनर्स) लिक्विड	१५ मिली०
पोलीवियॉन सीरप (मर्क)	१० मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजनोपरान्त ।	१ मात्रा

नोट—यह अनीमिया में विशेष लाभकारी योग है ।

१०. ℞ न्यो-फैरम लिक्विड (डूफर)	१ चम्मच
डेप्लेक्स (डेज)	१ चम्मच
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजनोपरान्त ।	१ मात्रा

विशेष—१. शारीरिक दुर्बलता दूर कर अनीमिया में गुणकारी ।

२. यकृत् तथा आमाशय को शक्ति देता है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. पर्याप्त शुद्ध रक्त का निर्माण करता है।

११. ℞	एनीमीड्रॉक्स (मर्क)	१ कैप्सूल
	बी-प्लेक्स फोर्ट (A. F. D.)	१ गोली
		१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल से भोजनोपरान्त।

विशेष उपयोग—१. अतिसार से उत्पन्न रक्ताल्पता में लाभकारी।
२. आमाशय तथा आँतों को शक्ति देता है।

१२. ℞	लिवर एक्स्ट्रैक्ट बी$_{१२}$ (रैलीज)	१ मिली०
	ट्राई रेडीसोल एच १००० माइक्रोग्राम (M. S. D.)	१ मिली०
	विनर्वा	१ मिली०
		१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा I/M इञ्जे प्रति तीसरे दिन गहरे चूतड़ की मांसपेशी में।

कोर्स—५-१० इञ्जेक्शन तक पर्याप्त होते हैं।

विशेष—१. इससे शरीर में नवीन रक्त की पर्याप्त वृद्धि होती है।
२. शारीरिक दुर्बलता का नाश होता है।

अर्श/बवासीर
(Piles)

१. ℞	डैफलॉन (वाल्टर बुशनैल)	१ कैप्सूल
	क्रोसिन (डूफर)	२ गोली
	सीलिन ५०० मि० ग्रा०	½ गोली
	कैपलिन (ग्लैक्सो)	१ गोली
	ऐसी एक मात्रा दिन में ५-६ बार।	१ मात्रा
	साथ ही—पाइलेक्स मलहम (हिमालया)	१ भाग
	प्रेक्टोसेडिल मलहम (राउसेल)	२ भाग

दोनों को मिलाकर दिन में २-३ बार गुदामार्ग में लगायें।

२. ℞	सेप्ट्रान (B. W.)	१ गोली
	ऑक्सेलिजन (कैडिला)	२ गोली
	सुग्रेनिल (सुहृद गाइगी)	१ गोली
	ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार।	१ मात्रा

नोट—इससे मस्सों का दर्द, टपकन, सूजन, प्रदाह आदि में लाभ मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही—न्यूपरकेनाल मलहम (सिबा गाइगी) १ भाग
मेडिथेन मलहम (ज्योफरी मैनर्स) १ भाग

दोनों को मिलाकर गुदा में दिन में २-३ बार लगायें।

३. ℞ बुस्कोपान कम्पोजीटम (जर्मन रेमेडीज) १ गोली
बार्डेज (P. D.) १ गोली
स्ट्रिप्टोविआॅन (मर्क) २ गोली
बेनस्मीन (मार्टिन हैरिस) २ गोली

१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार चावल के धोवन या गाय के कच्चे दूध से।

साथ ही—हेडेन्सा मलहम (एच० जी० जर्मनी) १ भाग
न्यूजीन मलहम (U. S. A.) ½ भाग

दोनों को मिलाकर गुदा में दिन में ३ बार लगायें।

एवं 'क्रीमाफिन' (नि० बूट्स) १० मि० ली० प्रातः-सायं पिलायें।

नोट—इससे बवासीर का दर्द, सूजन, प्रदाह, कब्ज आदि में विशेष लाभ मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वितीय खण्ड

*

श्वसन-संस्थान के रोग

(Diseases of Respiratory System)

 CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिश्याय/साधान्य सर्दी
(Coryza/Common Cold)

पर्याय—प्रतिश्याय, नजला, सर्दी लगना, एक्यूट नेजल कटार, नेजो-फेरेञ्जियल कटार, वाइरल राइनो फेरिञ्जाइटिस, नासापाक आदि नामों से जाना जाता है।

रोग-परिचय—यह एक तीव्र व्याधि है, जिसमें नाक की श्लेष्मकला (Mucous membrane) में शोथ (Inflammation) हो जाता है। कभी-कभी इसका 'वायरस' फेरिंग्स तथा लैरिंग्स को भी प्रभावित कर देता है। अर्थात् जिस रोग में नासिका की श्लेष्मकला में और कुछ-कुछ गले में भी शोथ होकर नाक बहने लगे, छीकें आने लगे, ज्वर आदि शरीरव्यापी लक्षण विशेष न मिलें, तो उसे प्रतिश्याय कहते हैं।

रोग का कारण (Etiology)—१. यह एक अत्यन्त तीव्र प्रसारित होने वाला सांसर्गिक रोग (Contagious disease) है, जो विशेषकर मौसम के बदलने पर फैला करता है।

२. इस रोग का वास्तविक कारण अभी तक असंदिग्ध रूप में निर्णीत नहीं है। यह तीव्र स्वरूप का औपसर्गिक रोग है, अतः इसकी उत्पत्ति विषाणु के द्वारा मानी जाती है। यह 'एडिनो' नामक अत्यन्त सूक्ष्म विषाणु (Virus) के द्वारा उत्पन्न होता है।

३. रोगी के नासास्राव में माइक्रोकोकस कटारिलिस हीमोलीटिक माला गोलाणु, फुप्फुस गोलाणु, श्लेष्मक दण्डाणु आदि की उपस्थिति प्रायः देखने को मिलती है। किन्तु इनकी अनुपस्थिति में भी रोग होते देखा गया है।

४. रोगी में यदि रोगक्षमता का अभाव होता है तो प्रतिश्याय के संक्रमण के पश्चात् न्यूमोकोकस, स्ट्रेप्टोकोकस, स्टेफिलोकोकस एवं इन्फ्लूएञ्जा बेसिलस आदि जीवाणु अति शीघ्र संक्रमण उत्पन्न करके विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न करने में समर्थ होते हैं।

○ इस प्रकार मुख्य रूप से प्रसार की दृष्टि से जुकाम विषाणुजन्य (Viral) एवं परिणाम की दृष्टि से जीवाणुजन्य (Bacterial) होता है।

सहायक कारण—

१. **आयु**—(i) बालकों में (प्रायः ५ वर्ष तक) इसका प्रकोप अधिक होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ii) युवकों, प्रौढ़ों एवं वृद्धों में क्रमशः इसका आक्रमण कम होता जाता है।

२. **ऋतु**—(i) हेमन्त और वसन्तु ऋतु में (ऋतु-परिवर्तन के समय) अधिक होता है।

(ii) शीतकाल में ठंड के कारण व्यक्ति एक-दूसरे के निकट अधिक रहते हैं। मकान की खिड़की और दरवाजा बन्द करके रहने तथा सोने से कमरे में हवा के आवागमन न होने के कारण वातावरण में संक्रमण के प्रसार से भी जुकाम हो जाता है।

३. **प्रत्यूर्जता**—'एलर्जी' रोगों से पीड़ित व्यक्तियों में इसका प्रकोप अधिक होता है।

४. **वातावरण**—भारतीय तीर्थस्थानों एवं मेलों में भारी भीड़, अशुद्ध संवातन (Bad ventilation), धूलि, धुआँ युक्त वातावरण के कारण।

५. **मौसम-परिवर्तन**—शीत और उष्ण का आकस्मिक परिवर्तन भी प्रतिश्याय की उत्पत्ति में मुख्य कारण माना जाता है। शीतकाल में यह रोग अधिकांश व्यक्तियों को होता है।

६. **रोगों की भूमिका**—डिफ्थीरिया, कर्णमूलशोथ (Mastoiditis), खसरा आदि व्याधियों से ग्रसित होने पर तथा टॉन्सिल्स शोथ, नासार्श, नासा-कोटर शोथ, आमवात, यक्ष्मा, मधुमेह आदि रोगों से पीड़ित होने पर भी प्रतिश्याय का आक्रमण अधिक होता है।

७. **वंशज प्रभृति**—अनेक बार वंशज प्रभृति प्रतिश्याय की उत्पत्ति भी देखी जाती है।

८. **सामान्य कारण**—

(i) अनियमित समय में भोजन अथवा अल्प भोजन।
(ii) अत्यधिक परिश्रम।
(iii) शीत वायु के प्रवाह में सोना।
(iv) अधिक समय तक पानी में भींगना।
(v) मद्यपान तथा तम्बाकू आदि के अधिक प्रयोग के कारण।
(vi) शरीर को दुर्बल करने वाले कारण।
(vii) सिर में शीत लगना।
(viii) आक्लेद प्रभृति कारणों से।
(ix) अधिक चिन्ता में डूबे रहने से।

प्रसार—प्रतिश्याय से ग्रसित रोगी जब उच्च स्वर में बोलता, खाँसता या छींकता है तो उनके थूक के छीटों से सूक्ष्म कण निकलते हैं, जो रोगाणुयुक्त होते हैं। अतः समीप के बैठे विशेषकर सम्मुख के वातावरण में रहने वाले व्यक्तियों के श्वसन-संस्थान में ये रोगाणु प्रवेश कर उपसर्ग उत्पन्न कर देते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संचयकाल (Incubation period)—२४ से ७२ घण्टे।

पूर्व रूप—प्रतिश्याय रोग के प्रकट होने के पूर्व मस्तिष्क में भारीपन, छींके आना, शारीरिक दर्द, रोमांच प्रभृति विविध उपद्रव लक्षित होते हैं।

रोग-लक्षण (Symptoms)—१. रोग का आक्रमण एकाएक होता है।

२. प्रारम्भ में सामान्यतः नासा और नासा-ग्रसनिका में खुश्की तथा सुरसुराहट प्रतीत होती है।

३. रोगी का गला शुष्क तथा कुछ दुखता-सा प्रतीत होता है। नाक में खुजली-सी होती है।

४. शरीर में सर्दी तथा भारीपन प्रतीत होने लगता है।

५. आलस्य और क्लान्ति का अनुभव होता है। प्रायः शीत लगकर सर्वांगिक विकार के लक्षण प्रकाशित होते हैं। इसके बाद थकावट, सम्पूर्ण शरीर में पीड़ा और कुछ ज्वर की अनुभूति होती है।

६. रोगी की नाक बन्द हो जाती है और कुछ समय पश्चात् छींकें आनी प्रारम्भ हो जाती हैं। आँखें लाल दिखलाई देती हैं। सूँघने तथा स्वाद की शक्ति में ह्रास प्रतीत होने लगता है।

७. कुछ समय पश्चात् नाक में जकड़ाहट या अवरोध का अनुभव एवं बाद में छींकें आकर नासा एवं श्लेष्मपूयी (Mucopurulent) रूप ग्रहण कर लेता है। अन्त में नासा से अधिक स्राव होने लगता है। इसके साथ-साथ प्रायः गले में काँटे गड़ना; खाँसी, झागदार कफ और नाक बन्द होने के लक्षण हो जाते हैं।

८. प्रतिश्याय की विकृति नासा से प्रारम्भ होकर स्वरयंत्र तक फैल जाती है। नाक की श्लैष्मिककला में शोथ शीघ्र ही नासाविवरों, कान, ग्रसनी, स्वर-यन्त्र, ट्रेकिया और श्वास-नलिकाओं को प्रभावित कर देता है।

९. टॉन्सिल शोथ, खाँसी, ज्वर आदि लक्षण भी प्रतिश्याय में मिलते हैं।

१०. ७५% रोगियों में शिरःशूल रहता है। बालकों में टॉन्सिल सूज जाते हैं।

११. नाक से आने वाला बलगम गाढ़ा होने लगता है। कई बार नाक बन्द हो जाती है; विशेषरूप से रात्रि के समय यह लक्षण मिलता है। इससे रोनी को बेचैनी अनुभव होने लगती है और उसे मुँह से साँस लेना पड़ता है।

१२. ○प्रायः ५-७ दिन के अन्दर रोग का उपशम होने लगता है। अधिक से अधिक १५ दिन में बिल्कुल ठीक हो जाता है।

१३. रोग का बार-बार आक्रमण होने से शरीर की प्रतिकारक शक्ति अत्यन्त दुर्बल हो जाती है और रोगी में कास, श्वसनी-फुप्फुसपाक, यक्ष्मा तथा श्वास आदि गंभीर व्याधियों की आशंका रहती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निदान (Diagnosis)—१. नासा में जलन, गले में सरसराहट, सिर-दर्द, मध्यम स्वरूप का ज्वर, सर्वांग वेदना, अवसाद, नेत्र एवं नाक से स्राव, खाँसी तथा नासा एवं स्वरयंत्र-शोथ के स्थानीय लक्षण मुख्य रूप से निदान में सहायक होते हैं।

२. अन्य परीक्षाओं की इसमें कोई उपयोगिता नहीं है।

३. विशिष्ट व्याधियों के लक्षणों की अनुपस्थिति इस रोग के निदान में सहायक होती है।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—१. इसका सापेक्ष निदान नासा तथा गले की विशिष्ट व्याधियों से किया जाता है।

२. इन्फ्लूएञ्जा, रोमान्तिका तथा तृणगंधक ज्वर के प्रारम्भिक लक्षणों से इसका पृथक्करण किया जाता है।

३. रोमान्तिका, इन्फ्लूएञ्जा एवं हैजा की प्रथमावस्था के साथ इसका भ्रम हो सकता है। किन्तु रोग के कारण एवं लक्षण पर दृष्टिपात करने से प्रतिश्याय का निर्णय हो जाता है।

भावीफल (Prognosis)—१. प्रतिश्याय स्वयं ठीक होने वाला अति कष्टदायक रोग माना जाता है। यह स्वयं तो मारक नहीं है; किन्तु इससे बार-बार पीड़ित होने पर शरीर गम्भीर औपसर्गिक रोगों के लिए अनुकूल क्षेत्र बन जाता है। जिससे नासा, गला, श्वसन-संस्थान के अनेक रोग आसानी से हो जाते हैं।

२. बार-बार होने की प्रवृत्ति से यह जीर्ण रोग (Chronic common cold) में परिणित हो जाता है। साथ ही उसमें पूर्वोक्त उपसर्ग हो जाते हैं। उपद्रव होने पर प्रतिश्याय पुनः प्रकट हो जाता है। रोग-क्षमता अल्प, जो थोड़े ही समय में समाप्त हो जाती है, फलस्वरूप उसका आक्रमण किसी भी समय हो सकता है।

३. यह यक्ष्मा के समान शरीर के अंदर गुप्तरोगों की उत्पत्ति कर जीवन लीला का अन्त कर देता है।

४. वाहिनी-प्रेरक नाशाशोथ (Vasomotor rhinitis) में बराबर प्रतिश्याय होता रहता है।

उपद्रव (Complications)—मेक्सिलरी अथवा फ्रण्टल सायनूसायटिस, Eustachian catarrh, मध्यकर्ण शोथ (Otitis media), श्वासप्रणालशोथ (Tracheitis), ब्रांकाइटिस, ब्रांको-न्यूमोनिया, टॉसिलाइटिस, लैरिञ्जाइटिस, स्वरभंग, शुष्क कास, पीनसरोग, नेत्राभिष्यन्द आदि प्रधान उपद्रव हो सकते हैं।

O यदि 'इयूस्टेशियन ट्यूब' में शोथ हो जाय तो 'बाधिर्य' का लक्षण तथा मध्यकर्ण में शोथ हो जाय तो 'कर्णशूल' होने लगता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा (Treatment)—

सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. विश्राम-चिकित्सा—यह इस रोग की उत्तम चिकित्सा है। सामान्यतया २ दिन के लिए इसमें पूर्ण विश्राम आवश्यक है।

२. विश्राम काल में गर्म जल पीना, शरीर पोंछना, गर्म वस्त्रों का ओढ़ना, उष्ण, लघु, रूक्ष, सुपाच्य आहार का सेवन लाभकारी होता है। तुलसी के पत्ते की चाय उत्तम रहती है।

३. गर्म जल में नीबू, शहद एवं २-४ ड्राम ब्रॉण्डी मिलाकर पीने से आराम मिलता है। ○ रोगी को गर्म जल अधिक पिलाना चाहिए।

४. मलावरोध की प्रवृत्ति के लिए 'मिल्क ऑफ मैगनेशिया' अथवा कोई अन्य मृदु विरेचक दें।

५. नाक को कोमल रुई से पोछें।

६. जुकाम के लक्षण प्रतीत होते ही कपड़े को गर्म पानी में डुबोकर थोड़ा निचोड़ लें और माथे तथा नाक पर २-३ बार रखें, इससे जुकाम खुल जाता है और नाक का तरल बहने लग जाता है।

७. जिन लोगों को बार-बार जुकाम हो जाता हो, उनको एण्टी-कटारल वैक्सीन (Anti-cattarrhal vaccine) के सूचीवेध १०-१० दिनों के अंतर पर ३ बार लगवा लेना चाहिए।

८. गले में तकलीफ हो तो नमक मिला पानी उबाल कर उसके गरारे करना चाहिए। अथवा लिस्टेरीन या 'ग्लाइकोथाइमोलिन' आदि के घोल से कुल्ला कराया जा सकता है।

९. नाक बहने पर डेक्सेड्रीन इनहॉवर सूँघना लाभकारी होता है।

१०. प्रतिश्याय-निवारक कोई औषधि नहीं है। रोगी के कष्ट को कम करने के लिए—वेदनाशामक (Analgesic) तथा 'एण्टीहिस्टेमिनिक ड्रग्स' का उपयोग स्वल्प मात्रा में किया जा सकता है। आधुनिक मत में तो नासा बिन्दुओं (Nasal drops) का भी, जिनमें एण्टीबायोटिक का प्रयोग किया गया हो, निषेध है।

○ 'एण्टीबायोटिक्स' का प्रयोग जुकाम में पूर्णतया निरर्थक होता है। विशेषकर पेनिसिलीन का प्रयोग तो बिलकुल नहीं करना चाहिए। इसके प्रयोग से रोगी की मृत्यु सम्भाव्य है।

११. प्रतिश्याय में उपवास अत्यन्त उत्तम है। इसमें प्रारम्भ में औषधि न देना अच्छा रहता है। इससे शरीर का संचित 'विजातीय द्रव' नाक के द्वारा बह कर बाहर निकल जाता है।

१२. इस रोग में सम्भोग की प्रबल इच्छा होती है। इससे रोगी को बचना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३. रोग के कई दिन तक रहने पर विटामिन 'सी' लाभकारी होता है।

१४. अन्य उपद्रवों की चिकित्सा समयानुसार करनी चाहिए।

१५. रोगी को ज्वरांश की प्रतीति होने पर घर से बाहर न निकलने दें।

१६. प्रारम्भ में नाक की स्थानिक चिकित्सा न करें। आगे चलकर आवश्यकता पड़ने पर समलवण जल+१% एफेड्रीन सल्फेट डाला हुआ समबल लवण जल नासा धोने के काम में लायें।

१७. प्रचुर मात्रा में नासास्राव होने पर अल्प मात्रा में 'एट्रोपीन' का प्रयोग करने से आश्चर्यजनक लाभ मिलता है।

१८. नासा के बन्द होने पर वाहिनी-संकोचक औषधियों का प्रयोग करना चाहिए। इसके लिए 'लाइकर अमोनिया फोर्टे' की श्वास लेना (सूँघना) उपयोगी रहता है। इससे नासास्राव बढ़ जाता है और शिरःशूल कम हो जाता है।

१९. जिन्हें बार-बार जुकाम की प्रवृत्ति होती है, उन्हें वैक्सीन की व्यवस्था करानी चाहिए।

२०. रोग के अन्त में दुर्बलता होने पर रोग के पुनराक्रमण के निवारणार्थ रोगी के बल-विधान के लिए बलकारक औषधि (Tonics) विशेषकर आयरन टॉनिक की व्यवस्था करनी चाहिए।

२१. उपद्रवस्वरूप नासार्श, टॉंसिलाइटिस, कण्ठशालूक आदि की स्थिति में शस्त्र-चिकित्सा की आवश्यकता पड़ सकती है। इसके लिए ई० एन० टी० (E. N T.) चिकित्सक का आश्रय लेना चाहिए।

२२. यदि प्रतिश्याय बार-बार हो, तो राजयक्ष्मा (T. B.) के ऊपर दृष्टिपात करते हुए रोगी का परीक्षण करें।

२३. रोग के उत्तरकाल में पीला, हरा, गाढ़ा एवं बदबूदार कफ निकलने तथा नासा से गाढ़ा पूययुक्त स्राव होने पर 'सल्फा ड्रग्स' तथा 'एण्टीबायोटिक' औषधियों का प्रयोग किया जा सकता है।

२४. गला जकड़ा हुआ तथा ध्वनि-अवरुद्ध होने पर चूसने वाली औषधियाँ (विक्स टेबलेट, स्ट्रेप्सिल्स आदि) देनी चाहिए।

२५. प्रतिश्याय में कास की संशामक चिकित्सा नहीं करनी चाहिए। कफ के गाढ़ा होने पर 'एक्सपेक्टोरेण्ट' का प्रयोग किया जा सकता है।

औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—यह एक वायरसजन्य रोग है। इसलिए इसकी कोई सटीक चिकित्सा नहीं है। किन्तु रोग का प्रारम्भ होते ही स्थानीय प्रभावकारी औषधियों का प्रयोग करने से रोग शीघ्र शान्त हो सकता है। इसकी समस्त चिकित्सा लाक्षणिक होती है। साथ ही सल्फा ड्रग्स आदि का प्रयोग रोगी में अन्य उपद्रवों से बचाने के लिए किया जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थानीय चिकित्सा (Local treatment)—

१. यूकेलिप्टस आयल, तारपीन तेल और टिं० बेञ्जोइन को १-१ चम्मच उबलते पानी में डालकर भाप को सूँघें। यह भाप दिन में ३-४ बार तक ली जा सकती है।

नोट—अकेले 'टिं० बेञ्जोइन' को गर्म पानी में डालकर सूँघा जा सकता है। यूकेलिप्टस आयल को रूमाल पर डालकर सूँघना लाभकारी होता है।

○ आजकल 'विक्स इन्हेलर' का प्रयोग सूँघने के रूप में अधिक लोकप्रिय हो रहा है।

○ 'विक्स वेपोरब' को गर्म पानी में डालकर उसकी वाष्प ली जा सकती है।

विशेष—बर्तन के ऊपर तौलिया लपेट कर फनल-सी बनाकर उसकी वाष्प ली जा सकती है।

अथवा—कैप्सूल कार्वोल (Cap. Karvol)

५०० मिली० उबलते पानी में १ कै० तोड़कर डालें। तौलिया मुँह पर ढँककर औषधि युक्त वाष्प का अभिश्वसन लें। औषधि को रूमाल पर डालकर भी सूँघा जा सकता है। दिन में २ बार इन कैप्सूलों का अभिश्वसन लेने से प्रतिश्याय में पर्याप्त लाभ मिलता है।

२. इफेड्रीन सल्फेट का १% घोल नमक के पानी में बनाकर उससे नासा एवं गले को धोना चाहिए। नार्मल सैलाइन या ५–२०% ग्लूकोज जल से कुल्ले करना चाहिए।

३. एण्टीस्टीन-पायरी बेञ्जामिन नेवूलाइजर

मात्रा—३-४ बूंद नाक में दिन में ३-४ बार डालें।

डिस्ट्रान नासा बिन्दु (Distran nasal drop)

अथवा—बेटनीसोल-एन नासा बिन्दु (Betnisol-N nasal drop)

मात्रा—३-४ बूंद प्रत्येक नथुने में दिन में ३-४ बार डालें।

नोट—इससे नाक खुल जाती है।

अथवा—एण्ड्रीन (Endrine) (जान वाईथ)

मात्रा—२-३ बूंद प्रत्येक नथुने में सिर को पीछे की ओर झुका कर टपकायें।

अथवा—एफेड्रीन हाइड्रक्लोर (Ephedrine Hcl.)

मात्रा—३०० मि० ग्रा० + ग्लूकोज २० मिनिम + नार्मल सैलाइन ३० मिली०। इस औषधि को आटोमाइजर से नाक में छिड़कने से नाक की भीतरी झिल्ली की सूजन दूर हो जाती है।

साथ ही—'विक्स वेपोरब' को सोने से पहले गर्दन और छाती पर मलें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आन्तरिक चिकित्सा (Internal treatment)—

○ सामान्य एनाल्जेसिक औषधियाँ तथा विटामिन-'सी' विशेष लाभकारी होती हैं। बैक्टीरियल संक्रमण की उपस्थिति में—एण्टीबायोटिक औषधियाँ दी जाती हैं।

रोग के प्रारम्भ में जब तक नासिका से स्राव न बहने लगे, तब तक निम्न व्यवस्था करनी चाहिए—१. यदि रोगी ने दोपहर के समय हलका भोजन लिया है तो सायंकाल भोजन नहीं देना चाहिए।

२. सोने के ४ घण्टे पूर्व—एसिटेट ४ ग्रेन + सल्फेट आफ मार्फिन थोड़ी मात्रा में दें।

३. सोने से पूर्व—अल्प मात्रा में ह्विस्की तथा जल के साथ दूसरी बार $\frac{1}{8}$ ग्रेन मार्फिया का प्रयोग करें। गर्म जल से स्नान करें तथा गर्म जल पियें।

४. अन्त में सोते समय—डोवर्स पाउडर लें अथवा उष्ण जल + ह्विस्की + नीबू रस + चीनी इन सबको मिलाकर लें।

५. यदि रोगी को ज्वर की प्रतीति हो रही हो तो—फिनायमान क्वनीन का मिश्रण ५-८ ग्रेन अथवा क्वनीन हाइड्रोब्रोमाइड दें।

फेनायमान क्वनीन का मिश्रण योग इस प्रकार है—

(i)	क्वनीन बाई हाइड्रोक्लोर	३ ग्रेन
	साइट्रिक एसिड	१० ग्रेन
	जल	४ ड्राम
		१ मात्रा
(ii)	सोडा बाईकार्ब	१० ग्रेन
	पोटास बाईकार्ब	१० ग्रेन
	सोडा सल्फ	३० ग्रेन
	जल	४ ड्राम
		१ मात्रा

उक्त दोनों मिश्रणों की १-१ मात्रा मिलाकर फेन उठने के साथ ही पियें।

६. प्रातःकाल रोगी को 'ब्लूपिल' देने के पश्चात् 'लवण विरेचन' दें।

७. रोग की प्रारम्भिक अवस्था में—'स्प्रिट कैम्फर' शर्करा के साथ आधे-आधे घण्टे के अन्तर पर देने से पर्याप्त लाभ मिलता है।

८. यदि नासास्राव प्रारम्भ होकर कई दिनों तक जारी रहे तब अल्प मात्रा में 'एट्रोपीन' का प्रयोग करना चाहिए। तत्पश्चात्—

(i) 'एस्डिन' ३०० मि० ग्रा० की २ गोली प्रति ६ घण्टे पर दें।

नोट—जिन्हें एस्डिन माफिक न पड़ रही हो उन्हें 'क्रोसिन' दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ii) ℞ टेबलेट एस्प्रिन १ गोली
टेबलेट क्लोरफेनिरामीन १ गोली
टेबलेट सल्फाडायमिडीन १ गोली

ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर दें। १ मात्रा

अथवा—℞ टेबलेट विकोरिल १ गोली
टेबलेट सल्फाडायजीन १ गोली
टेबलेट विटामिन-सी (१०० मिग्रा०) १ गोली

ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर दें। १ मात्रा

अथवा—टे० डिस्प्रिन (Tab. Disprin)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।
तथा— पल्व कोडीन १६·२ मि० ग्रा०
पल्व पेपावरीन १६·२ मि० ग्रा०

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार। १ मात्रा

(iii) टेबलेट 'रिडोक्सॉन' या चिउसी (Chewcee) ५०० मि० ग्रा०
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।
तथा—डोवर्स पाउडर ५ ग्रेन दिन में ३ बार।

अथवा—℞ इरगापायरीन १ गोली
एसीटिल सैलीसिलास ४ ग्रेन
फेनासिटिन २ ग्रेन
कोडीन फॉस ½ ग्रेन

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार गर्म जल से। १ मात्रा

नोट—इससे तीव्र शिरःशूल, असह्य सर्वांग वेदना एवं बेचैनी में लाभ मिलता है।

नाक बन्द होने पर—स्थानीय चिकित्सा में बतलाये गये 'नेजल ड्राप' के साथ-साथ 'सीरप ट्रायोमिनिक' १-२ चम्मच दिन में ४ बार दें।

आवश्यक निर्देश—इस सीरप में एण्टी-हिस्टामिनिक औषधियाँ हैं। ऐसी स्थिति में अन्य एण्टी-हिस्टामिनिक औषधियों का प्रयोग साथ में अपेक्षित नहीं है।

खाँसी के लिए—

℞ सीरप चैस्टोन (Syrup Cheston)
अथवा—फैन्सीडिल लिक्टस (Syrup Phensedyl linctus)
मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३-४ बार।

नोट—इसके साथ भी एण्टी-हिस्टामिनिक औषधि योग न दें। पीड़ा तथा ज्वरहर औषधियाँ तथा सल्फा ड्रग्स प्रयोग में लाये जा सकते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खाँसी के अन्य योगों में—हार्पोकाल सीरप, हाईकोफ, कोरेक्स (बच्चों के लिए), वसाका नाल सीरप, कोडीलेक्स—इनमें से किसी का उपयोग किया जा सकता है।

निर्देश—कफशामक औषधियों का प्रयोग प्रारम्भ में नहीं करना चाहिए।

बार-बार होने वाले जुकाम में—

℞ कैल्सी-ऑस्टेलिन इन्जेक्शन (ग्लैक्सो)

मात्रा—१ मिली० प्रति तीसरे दिन I/M या S/C दें।

अथवा—एरोविट इन्जेक्शन (Arovit Inj.) (रोशे कं०)

मात्रा—१ मिली० I/M सप्ताह में १ बार।

जुकाम की प्रारम्भिक अवस्था में—

℞ एस० यू० पी०-३९ (S. U. P.-39) (बी० डी० एच०)

मात्रा—१ मिली० I/M इन्जेक्शन के रूप में।

प्रतिश्याय की प्रत्येक अवस्था में—

℞ इन्जे० पल्मोट्रान (Inj. Pulmotran) (सिपला कं०)

मात्रा—१-२ मिली० मांसपेशीगत प्रतिदिन या एक दिन छोड़कर १० इन्जेक्शन तक दें।

बिगड़े जुकाम तथा ज्वर में—

℞ क्लोर एण्टामोन कम्पाउण्ड टेबलेट (नियो फार्मा)

मात्रा—१-१ गोली दिन में ३ बार भोजनोपरान्त।

कैल्शियम तथा विटामिन की कमी से बार-बार होने वाला जुकाम—

℞ कैल० डी० सी० (Cal. D. C.) (वाण्डर कं०)

मात्रा—२-२ गोली दिन में २ या ३ बार भोजनोपरान्त।

अथवा—एण्टी-कटारल वैक्सीन—१०-१५ दिन के अन्तर पर इसका ३ इन्जेक्शन लगायें।

एलर्जी जन्य प्रतिश्याय में—

℞ सोवेण्टोल (Soventol) (नोल कम्पनी)

मात्रा—१-१ गोली या सीरप १-२ चम्मच दिन में २ बार दें।

अथवा—वेनाड्रिल या एण्टीस्टीन—१-१ गोली दिन में ३ बार।

○ आजकल प्रतिश्याय की चिकित्सा में पीड़ाहर, ज्वरहर एवं एण्टी-हिस्टामिनिक औषधियों को विशेष महत्त्व दिया जा रहा है। इनका प्रयोग विशेष रूप से करना चाहिए।

○ यह भी देखने में आता है कि जुकाम के साथ-साथ द्वितीय संक्रमण के रूप में प्रायः कुछ अन्य जीवाणुओं का भी संक्रमण हो जाता है। यदि उपरोक्त औषधियों के साथ में 'सल्फा ड्रग्स' अथवा अन्य 'एण्टीबायोटिक' का प्रयोग किया जाय तो रोगी में श्वसनीशोथ एवं श्वसनी-फुप्फुसपाक आदि

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपद्रवों की सम्भावना नहीं होती और रोगी को जुकाम से शीघ्र आराम मिल जाता है।

विशेष—जुकाम में एण्टीबायोटिक का प्रयोग प्रारम्भ में कदापि नहीं करना चाहिए।

○ कई बार रोग के प्रारम्भ में विश्राम न करने, चाय का सेवन तथा प्रतिश्याय को सुखाने वाले द्रव्यों का प्रयोग करने से कुछ समय के लिए शान्ति तो मिल जाती है, पर बाद में यह व्याधि जीर्ण रूप में अधिक समय तक कष्ट देती रहती है। ऐसी स्थिति में गुनगुने पानी में नीबू मिलाकर दिन में २-३ बार पिलाना चाहिए। ताजा मट्ठा भी उपरोगी रहता है। इससे दोषों का संशोधन हो जाता है। नमक के घोल में नासागुहा को २-३ बार नियमित रूप से साफ करते रहना चाहिए।

जुकाम की पेटेण्ट मिश्रित चिकित्सा—

१. ℞ सल्फाट्रायड (एम० बी०)	१ गोली
डिस्ट्रान (ज्याँफरी मेनर्स)	½ गोली
सीलिन (ग्लैक्सो) ५०० मि० ग्रा०	½ गोली
हिस्टाण्टिन (वरोज वैल्कम)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार।	१ मात्रा।

साथ ही—इण्ड्रीन (Endrine) (नि० वाईथ)

मात्रा—२-३ बूंद सिर को पीछे झुकाकर नाक में टपकायें।

२. ℞ कोसाविल (हैक्ट्स)	१ गोली
क्रोसिन	१ गोली
सीलिन	१ गोली
ऐसी १ मात्रा प्रति ६-६ घण्टे पर।	१ मात्रा

नोट—सर्दी तथा नाक बहने में विशेष लाभकारी।

३. ℞ मैलिडेन्स (निकोलस)	१ गोली
रेडॉक्सॉन (रोशे कं०) ५०० मि० ग्रा०	½ गोली
हिस्ट्राप्रेड (प्रेडनीसोलोन + क्लोरफेनी-रैमीन मैलिएट)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार गुनगुने जल से।	१ मात्रा।

नोट—तीव्र जुकाम, नाक का बहना, छीकों की अधिकता, खाँसी आदि में तत्काल लाभकारी।

४. ℞ डेटिगॉन लिक्टस (बायर)	५ मिली०
कैंडिस्टीन एक्स्पेक्टोरेण्ट (कैंडिला)	१० मिली०
कॉस्कोपिन सीरप (बायो-एवान्स)	५ मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।	१ मात्रा।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. ℞ रेफागॉन (Refagan)	१ गोली
सीलिन ५०० मि० ग्रा०	½ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।	१ मात्रा।

साथ ही—क्लिस्टीन डी० एम० आर० (इथनोर)
मात्रा—१-२ चम्मच सीरप दिन में ३-४ बार पिलायें।

६. ℞ कैपरामिन (एलेनबरीज)	१ गोली
सीलिन (ग्लैक्सो) १०० मि० ग्रा०	२ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार गर्म जल से।	१ मात्रा।
७. ℞ डिस्ट्रान (ज्याँफरी मेनर्स)	१ गोली
सल्फा ट्राइड (एम० बी०)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा प्रातः-सायं गर्म जल से।	१ मात्रा।

नोट—नजला-जुकाम, नाक का बहना, नाक का बन्द होना, आँसू बहना, शिरःशूल, शारीरिक पीड़ा तथा खाँसी में परम लाभकारी।

जुकाम में प्रयुक्त अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. कोसाविल (Cosavil) (हैक्स्ट)—१-१ गोली दिन में २ बार।

२. ए० पी० सी० (A. P. C.)—१-२ गोली दिन में ३-४ बार।

३. कैपरामीन (Capramine) (ग्लैक्सो)—१-३ गोली दिन में ३ बार।

४. ○ बोड्रील (Bodryl) (पी० डी०)—वयस्क तथा १४ वर्ष से ऊपर के बच्चों में—१ गोली प्रति ६ घण्टे पर।

५. सोवेण्टोल (Soventol) (नॉल ज़र्मनी)—जुकाम के प्रारम्भ में।
अथवा—इसी का एक्स्पेक्टोरेण्ट भी आता है—
मात्रा—½ से १-२ छोटे चम्मच दिन में ४ बार।

६. ओम्नामाइसीन इन्जे० (Omnamycin Inj.)—१ वायल को १½ से २ मिली० डिस्टिल्ड वाटर में घोलकर I/M, आवश्यकता पड़ने पर।

७. कैल्शियम सैण्डोज विद विटामिन 'सी'—५-१० मिली० I/V धीरे-धीरे।

८. पेक्टोमोल लिंक्टस (Pectomol linctus) (एलेनवरीज)—५-१० मिली० दिन में ३ बार।

नोट—जुकाम, नाक बहना तथा छींकों में लाभकारी।

९. ऑस्टो-कैल्शियम (ग्लेक्सो)—२-२ गोली दिन में २-३ बार।

ऑस्टो-कैल्शियम बी$_{12}$ सीरप—बच्चों को २·५ से ५ मिली०। बड़े बच्चों को ५-१० मिली० दिन में २-३ बार।

नोट—बार-बार होने वाले जुकाम में लाभकारी।

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. एण्टी-कटारल वैक्सीन (Anti-cattarhal vaccine)—१० दिनों के अन्तर पर ३ बार लगायें।

अथवा—कोल्ड वैक्सीन (Cold vaccine) (ग्लैक्सो)—½–१ मिली० S/C दें।

साथ ही—ऑस्टो कैल्शियम (Osto calcium)—२–२ गोली दिन में ३ बार दें।

११. एक्टीफेड (Actifed) (वदोज वेल्कम)—१–२ गोली दिन में २ बार।

मात्रा—बालक—१२ वर्ष से ऊपर—१ गोली दिन में २ बार।

१२ वर्ष से नीचे—½ गोली दिन में २ बार।

१२. अल्फाट्रिप (Alfatrip) (मायो कं०)—½–१ गोली भोजन से आधा घण्टे पूर्व।

१३. एण्टामीन एक्स्पेक्टोरेण्ट (Antamine Exp.) (Chemage)

वयस्क—५–१० मिली० दिन में ३–४ बार।

बालक ६–१२ वर्ष—२·५–५ मिली० दिन में ३-४ बार।

१४. चाइमोरल (Chymoral) (वाल्टर बुशनैल) २ गोली दिन में ३ बार भोजन से आधा घण्टे पूर्व।

विशेष—यह 'सायनूसायटिस' में लाभकारी है।

१५. क्लिस्टिन डी० एम० आर० (Clistin D. M. R.) (इथनोर)–५ मिली० दिन में ३–४ बार।

बालक—२·५ से ५ मिली० दिन में ३–४ बार।

नोट—जुकाम से सम्बन्धित खाँसी में लाभकारी।

१६. कोराजेसिक (Coragesic) (नोल)—१ गोली दिन में ३–४ बार।

१७. कोण्टेक-सी-सी (Contac-CC) (स्केलैब)—१ कै० आवश्यकतानुसार।

१८. कोरीसिडिन-एफ (Coricidin-F) (Fulford)।

वयस्क—१ कै० दिन में ३–४ बार।

बालक—१२ वर्ष से ऊपर—१ कै० दिन में २–३ बार।

१९. इस्कोल्ड लिक्विड (Eskold liquid) (Eskayef)।

वयस्क तथा बालक १२ वर्ष से ऊपर—१० मिली० प्रति घण्टे पर।

बालक ६ वर्ष से ऊपर—५ मिली० प्रति ६ घण्टे पर।

बालक १–६ वर्ष तक—२·५-५ मिली० प्रति ६ घण्टे पर।

नोट—यह प्रतिश्याय (Comman cold) में लाक्षणिक आराम देता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२०. ○ लूपीहिस्ट (Lupihist) (लूपिन लैबोरेटरी)।

वयस्क—५ मिली० दिन में ३-४ बार।

बालक–१·२—२·५ मिली दिन में ३-४ बार।

२१. म्यूकोसोल (Mucosol) (ईस्ट्रा-आइडियल) ५-१० मिली० प्रति २-३ घण्टे पर।

बालक–२·५ मिली० दिन में ४ बार।

२२. ○ टुक्सीन (Tuxyne) (ग्राइफोन)—१ गोली प्रति ४–६ घण्टे पर।

२३. ○ विकोरिल (Vikoryl) (एलेम्बिक)—१–२ गोली दिन में ३–४ बार।

विकोरिल का सीरप भी आता है—

मात्रा—२·५ से १० मिली० दिन में ३–४ बार आयु के अनुसार।

पुनरावर्तन निरोध—

१. बार-बार होने वाले प्रतिश्याय के रोगी की शारीरिक शक्ति की वृद्धि के लिए कैल्शियम ग्लूकोनेट का I/V प्रयोग तथा विटामिन 'ए', 'डी' तथा 'सी' का पर्याप्त मात्रा में उपयोग।

२. आत्म जनित वैक्सीन से कुछ रोगियों में विशेष लाभ मिलता है। अभाव में मिक्स्ड कैटारल वैक्सीन को क्रमबद्ध मात्रा में देना चाहिए।

क्रॉनिक कोराइज
(Chronic Coryza)

पर्याय—पुराना बिगड़ा जुकाम, जीर्ण प्रतिश्याय, पुरानी नाक की सोजिस, क्रॉनिक राइनाइटिस।

परिचय—जब जुकाम दीर्घकाल तक बना रहता है, तब वह जीर्ण रूप धारण कर लेता है। इसमें नासा की श्लेष्मकला (Mucous membrane) मोटी तथा सूक्ष्म संवेदनशील हो जाती है।

लक्षण (Symptoms)—१. इसमें सबसे पहले नाक से नये जुकाम की तरह नासास्राव होता है। बीच-बीच में नाक बन्द हो जाती है। बाद में नाक के अन्दर का भाग फूल जाता है। नासारन्ध्र में भार तथा स्फीति मालूम पड़ती है।

२. नाक से अधिक मात्रा में गाढ़ा श्लेष्मा (दूषित नासामल) या श्लेष्मा युक्त पूय निकलता है।

३. सामने कपाल में दर्द तथा भारीपन रहता है।

४. दुर्बलता एवं थकावट होती है तथा खाँसी में सड़ा एवं बदबूदार श्लेष्मा निकलता है। श्लेष्मा में पीप एवं रक्त मिला रहता है। नाक की हड्डी में घाव होकर उससे बदबू आने लगती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. रोगी की भूख मारी जाती है और वह दुर्बल हो जाता है।

६. अन्त में रोगी की सूँघने की शक्ति तथा श्रवण-शक्ति दोनों विकृत हो जाते हैं।

७. नासागह्वर के पश्चाद्रन्ध्र से गाढ़ा श्लेष्मा फेरिंग्स में चला जाता है, जिससे रोगी को खाँसी आने लगती है। खाँसी से रोगी की प्रातःकाल की निद्रा भंग हो जाती है।

८. नासामार्ग के बन्द हो जाने से नासिका से श्वास-प्रश्वास लेने में कठिनाई मालूम होती है।

९. बालकों में 'इयूस्टेशियन ट्यूब' के द्वारा शोथ कान में संक्रमण कर जाता है, जिससे कर्णशोथ (Otitis media) का रोग हो जाता है।

कारण (Causes)—१. पूर्व में वर्णित 'एक्यूट कोराइजा' का ही वायरस होता है।

२. बार-बार एक्यूट कोराइजा के आक्रमण से यह रोग उत्पन्न होता है।

३. उपदंश तथा कण्ठमाला इसके उद्दीपक कारण हैं।

भावीफल—(Prognosis)—यह कष्टसाध्य रोग है। स्वस्थ होने के लिए इसकी दीर्घकाल तक चिकित्सा आवश्यक होती है। किन्तु अधिकांश रोगी दीर्घकाल तक चिकित्सा नहीं करवाते हैं। अतः वे आरोग्य-लाभ से वंचित होकर चिरकाल तक कष्ट भोगते रहते हैं।

उपद्रव (Complication)—नासास्राव की रूक्षता के कारण तीव्र शिरःशूल, आधा शिर का दर्द आदि कष्टदायक उपद्रव हो जाते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—

सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी में यदि किसी प्रकार की रोग-प्रवृत्ति विद्यमान हो तो उसकी चिकित्सा करें।

२. रोगी को स्वस्थ रखने का यथासम्भव प्रयत्न करना चाहिए।

३. स्वाभाविक पुष्टिकारक पाचक और लघु पाचक औषधियाँ दें।

४. नासाकोटर को सदैव परिष्कृत रखना आवश्यक है।

५. तत्पश्चात् सुँघाने वाली पूर्वोक्त औषधियों का प्रयोग करना चाहिए।

स्थानीय चिकित्सा (Local treatment)—

१. नासा की श्लेष्मकला के मोटी होने तथा सूक्ष्म संवेदनशीलता में—सिलवर नाइट्रेट ५%, प्रोटार्गल १०% या कोलार्गल १०% के घोल का प्रयोग करें।

२. शोथ को हटाने के लिए—'मेन्थोल' या 'यूकेलिप्टस आयल' से युक्त गर्म वाष्प का नासिका में सेंक करना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. नासा मार्ग को 'नार्मल सैलाइन' से अथवा उसमें सोडाबाईकार्ब + क्लोरेटोन ½ प्रतिशत + ग्लिसरीन १०% मात्रा में मिलाकर उससे धोना चाहिए।

४. बोरिक एसिड २० ग्रेन + जल १ औंस मिलाकर नाक को भलीभाँति धोकर 'स्टिलवीस्ट्रोल' मलहम लगाना चाहिए।

अथवा—अरगोटोन (विडल शायर) २-४ बूंद नाक में २–३ बार डालें।

५. मेन्थोल, यूकेलिप्टस आयल, क्लोरेटोन—प्रत्येक ½ प्रतिशत मात्रा में लिक्विड पैराफिन में मिलाकर नासिका में इसका आश्च्योतन लेना चाहिए।

नोट—इससे 'सायनूसायटिस' भी ठीक हो जाता है।

६. **पूय की अधिकता में**—बोरेक्स १५ ग्राम + सोडियम क्लोराइड ६० ग्राम + सोडाबाईकार्ब १५ ग्राम—इन्हें मिलाकर इसकी ४ ग्राम की मात्रा को १ पाइण्ट गुनगुने गर्म जल में मिलाकर नाक को धोना चाहिए। अभाव में पोटाश परमैंगनेट के घोल से भी धोया जा सकता है। धोने के पश्चात् नाक में 'लिक्विड पैराफिन' की १ या २ बूंद डाल देनी चाहिए।

७. **श्वास में बदबू आने पर**—'अल्का थायमोल लोशन' १ चम्मच को ३० मिली० जल में मिलाकर कुल्ले कराना चाहिए।

औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—नाक में कोई विक्षोभक कारण हो, एडीनॉयड अथवा टॉन्सिलाइटिस हो तो उसकी चिकित्सा करें।

१. ℞ विटामिन 'ए' कैप्सूल।

मात्रा—½ से २ लाख यूनिट ६–१० सप्ताह तक।

अथवा—एरोविट ड्रॉप्स (रोशे)

मात्रा—१ मिली० दूध में मिलाकर दिन में २ बार।

२. ℞ कैल्शियम विद विटामिन 'सी' एण्ड 'डी'

मात्रा—१-१ गोली दिन में ३ या ४ बार ५ सप्ताह तक।

३. ℞

सल्फाडायाजीन	१ गोली
सीबाजोल	१ गोली
सोडाबाईकार्ब	२०० मि० ग्रा०
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा १ गिलास जल से दिन में ३ बार भोजनोपरान्त दें।

साथ ही—मल्टी-विटामिन का भरपूर मात्रा में प्रयोग करायें :

द्वितीयक संक्रमण की सम्भावना हो तो—

℞ सेप्ट्रान या बैक्ट्रिम (Septran or Bectrin)

मात्रा—२–२ गोली दिन में २ बार १ सप्ताह तक।

नोट—इस रोग में एक्यूट कोराइजा में पूर्व वर्णित चिकित्सा लाभकारी होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपद्रव की चिकित्सा—

तीव्र शिरःशूल तथा अर्धावभेदक आदि उपद्रव के होने पर—अमोनिया सुँघायें तथा नमक के घोल से नासागुहा को २–३ बार नियमित रूप से साफ करें।

प्रतिश्याय नाशक विविध योग—

१. ℞ स्पाज्मो-प्रॉक्सीवान (वकहर्डट)	१ कैप्सूल
सिबाल्जिन-क्वीनीन (हैक्स्ट)	१ ड्रेगी
विटामिन-सी २०० मि० ग्रा०	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार ताजे जल से।	१ मात्रा।
२. ℞ एविल एक्स्पेक्टोरेण्ट सीरप (हैक्स्ट)	७·५ मि० ली०
विस्टाकाफ सीरप (मर्करी)	५ मि० ली०
क्रोसिन सीरप (डूफार)	१० मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में २–३ बार।	१ मात्रा।
३. ℞ कोसाविल (Cosavil)	१ मिली०
कॉस्कोपिन (Coscopin)	१० मिली०
	१ मात्रा।

टिकिया को पीसकर सीरप में मिला लें। ऐसी १ मात्रा प्रति २–३ घण्टे पर दें।

नोट—नजला एवं सर्दी-जुकाम में लाभकारी है। इससे बन्द नाक खुल जाती है।

४. ℞ कोसाविल (Cosavil)	१ गोली
मेटासिन (Metacin)	१ गोली
सीलिन (Celin) ५०० मि० ग्रा०	½ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २–३ बार जल से।	१ मात्रा।
५. ℞ क्लोरफेनीरैमीन मैलिएट	२ मि० ग्रा०
पैरासिटामोल पाउडर	५०० मि०ग्रा०
सीलिन (Celin) ५०० मिग्रा० की	½ गोली
कैफीन साइट्रस	५० मि० ग्रा०
सीरप वसाका (एलेम्बिक)	१० मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में २–३ बार।	१ मात्रा। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खाँसी/कास
(Cough)

परिचय—श्वसन-संस्थान (Respiratory system) सम्बन्धी रोगों में सर्वप्रथम लक्षण खाँसी के रूप में मिलता है। यह कोई स्वतन्त्र रोग नहीं है, अपितु यह दूसरे रोगों का लक्षण मात्र है। इसका समावेश 'ब्रॉकाइटिस' के अन्तर्गत किया जाता है।

○ खाँसी श्वसन-संस्थान के रोगों, रक्ताधिक्य, हृदयपात और मध्यावकाश (Mediastenum) के अर्बुदों का एक लक्षण होती है।

कारण (Etiology)—१. श्वासनलिकाओं में क्षोभ (Irritation) उत्पन्न करने वाले पदार्थों के पहुँचने, क्षयरोग, कण्ठरोग, स्वरयन्त्रशोथ, न्यूमोनिया, ब्रॉन्को-न्यूमोनिया, ब्रॉन्काइटिस, दमा, हिस्टीरिया, कंठ में बाल आदि किसी वस्तु का चिपक जाना, खाते समय भोजन का कुछ अंश स्वरयंत्र में प्रविष्ट हो जाना आदि कारणों से उत्पन्न होती है।

२. सर्दी, काली खाँसी, प्लूरिसी एवं जिगर की खराबी आदि रोगों में भी खाँसी उत्पन्न होती है।

३. खाँसी प्रायः गले और फेफड़ों के विकारों से उत्पन्न होती है।

लक्षण (Symptoms)—खाँसी सामान्य रूप से ३ प्रकार की होती है—

१. सूखी खाँसी (Dry cough)।

२. तर खाँसी (Moist cough)।

३. दौरे के रूप में उठने वाली खाँसी।

(१) सूखी खाँसी (Dry cough)—लापरवाही एवं गर्म वस्तुओं के अत्यधिक प्रयोग से फेफड़े में कफ उत्पन्न होकर सूख जाता है। फेफड़े के दोनों स्तर कहीं-कहीं पर चिपक जाते हैं; सिर भारी हो जाता है तथा उसमें दर्द रहता है। इस प्रकार की खाँसी में ठाँय-ठाँय जैसी कर्कश ध्वनि होती है और सिर में टपकने जैसा दर्द होता है।

○ इसमें बलगम नहीं आता है। यदि आता भी है तो बहुत अधिक खाँसने पर थोड़ा-सा बलगम निकलता है।

○ इस प्रकार की खाँसी न्यूमोनिया (Pneumonia), दमा, यक्ष्मा, ब्रॉन्काइटिस तथा प्लूरिसी की प्रारम्भिक अवस्था में होती है। इसमें रोगी की छाती जकड़ी हुई प्रतीत होती है। खाँसी बार-बार उठती है। इसमें रोगी को बहुत कष्ट होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) **तर खाँसी** (Moist cough)—इसमें बलगम आसानी से और अधिक मात्रा में निकलता है। सामान्यतः १–२ दिन सूखी खाँसी रहने के बाद श्वसन-संस्थान का श्लेष्मीय आवरण उत्तेजित हो जाता है, जिसके फल-स्वरूप श्लेष्मा निकलना प्रारम्भ हो जाता है।

○ ऐसी खाँसी ब्रॉन्काइटिस तथा तपेदिक का पूर्वाभास कराती है।

(३) **दौरे के रूप में उठने वाली खाँसी**—इसका आक्रमण प्रायः रात के समय होता है। बच्चा सोते-सोते जात जाता है और बुरी तरह से खाँसने लगता है। खाँसने-खाँसते उसका चेहरा लाल हो जाता है और सम्पूर्ण शरीर की मांसपेशियाँ तन जाती हैं। ऐसी खाँसी २४ घण्टे में २० से ४० बार तक वेगपूर्वक आती है। इसमें हलका बुखार भी रहता है।

○ ऐसी खाँसी प्रायः बच्चों में कालीखाँसी (हूपिंग कफ) में मिलती है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) **सामान्य चिकित्सा** (General treatment)—

१. सर्वप्रथम रोग के मूल कारण को दूर करें।

२. रोगी को लक्जेक्टिव तथा स्वेद लाने वाली औषधियाँ दें।

३. रोगी को पूर्ण विश्राम देकर गर्म जल पीने को दें।

४. रोगी को गर्म जगह में रखकर उसे यथासम्भव ठंड से बचायें।

५. खाँसी से बचाव के लिए शाम से पूर्व औषधि अवश्य दें।

६. यदि बिना किसी स्पष्ट कारण के सूखी खाँसी उठ रही है और रोगी धूम्रपान का व्यसनी है, तो इस बात की सम्भावना है कि उसे 'स्मोकर्स कफ' (Smoker's cough) है। ऐसी दशा में रोगी को धूम्रपान छोड़ने की सलाह देनी चाहिए। इससे प्रायः २–३ दिन में खाँसी स्वयं ही ठीक हो जाती है।

७. यदि खाँसी के मूल कारण को दूर करने पर भी वह ठीक न हो रही हो, और रोगी को अत्यधिक कष्ट दे रही हो तब उसकी लाक्षणिक चिकित्सा करनी चाहिए।

(२) **स्थानिक चिकित्सा** (Local treatment)—

टिं० बेञ्जोइन कम्पाउण्ड (Tr. Benzoin co.) गर्म पानी में डालकर उसकी बाष्प सूँघनी चाहिए।

(३) **औषधि चिकित्सा** (Medicinal treatment)—

(क) **सूखी खाँसी** (For dry cough)—

१. ℞ टे० कोडीन सल्फेट ३० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—लिक्टस कोडीन को०

मात्रा—½–१ चम्मच दिन में ३ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. ℞ पोटैशियम ब्रोमाइड	२०० मि० ग्रा०
टिं० बेलाडोना	२.५ मिली०
टिं० लोबेलिया ईथीरियल	१.७ मिली०
टिं० कैम्फर को०	०.५ मिली०
सीरप टोलू	०.५ मिली०
पानी	आवश्यकतानुसार।
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।	१ मात्रा।

३. विटामिन-सी (सीलिन-ग्लैक्सो) ५०० मि० ग्रा०
मात्रा—१-२ गोली दिन में १ या २ बार रोग शान्त होने तक।
४. इथनाइन सीरप (Ethnine syrup) (ग्लैक्सो कं०)
मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३ बार।

सूखी खाँसी में प्रयुक्त अन्य औषधियाँ—

टेबलेट—हाई-कफ (हिन्द कं०), एड्रीड्रीन, डायोनीडीन (इण्डोन कं०), सुक्रेट्स, सेवलोन टेबलेट; फिन्सेडायल।

सीरप—ग्लाइकोडीन टर्प वसाका, एनारियल-एक्स्पेक्टोरेण्ट, कोसीलान, कोसोम (सूखी एवं कष्टदायक खाँसी में), टोसेक्स, प्रियाटोन कफ सीरप, पेक्टोमोल, फेड्रोस (Phedros), फैन्सिडिल लिक्टस, कार्डियाजोल, डाइ-कोटेड ड्राप्स, डैटीगॉन ड्राप्स, डैटीगॉन लिक्टस आदि।

सूचीवेध—कोलोमल कैल्शियम विद विटामिन 'डी', पल्मोट्रान (सिप्ला) कैल्शियम ग्लूकोनेट।

(ख) तर खाँसी (Productive cough)—

१. ℞ डाइलोमिन एक्स्पेक्टोरेण्ट
मात्रा—वयस्क—१-२ चम्मच दिन में ३-४ बार।
बालक—आयु के अनुसार।

२. ℞ एमन कार्ब	४० मि० ग्रा०
सोडियम बाईकार्बोनेड	८० मि० ग्रा०
टिं० इपेकाकुआन्हा	१.७ मिली०
सीरप टोलू	०.७ मिली०
पानी	आवश्यकतानुसार।
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।	१ मात्रा।

अथवा—विटामिन-सी ५०० मि० ग्रा०
मात्रा—१ टेबलेट दिन में १ या २ बार।
३. 'सेप्ट्रान लिक्विड' या 'एम्पीसिलीन' उचित मात्रा में।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तर खाँसी में प्रयुक्त अन्य औषधियाँ—

टेबलेट—टेड्राल, हाई कॉफ, विटामिन 'सी', विक्स टेबलेट, रफेडेक्स; प्यूमीलेट आदि।

सीरप—कॉस्किन लिक्टस, कोरेक्स कफ सीरप, फैन्सीडिल कफ सीरप, कोडीलेक्स, ग्लाइकोडीन टर्प वसाका, चेस्टोन, जिप कफ सीरप, जेफ्रोल कफ सीरप, विक्स कफ मिक्श्चर, सीरोलिन सीरप, हाइपोकाल सीरप, कोसाविन, बेनाड्रिल, इथनीन सीरप, टोसेक्स कफ सीरफ, डिटीगोन, रिकोल्विन आदि।

(ग) दौरे के रूप में उठने वाली खाँसी—

१. ℞ कैपायना कम्पाउण्ड (हिमालया कं०)

मात्रा—½-२ चम्मच दिन में ३-४ बार।

२. ℞ इथनीन सीरप (ग्लैक्सो कं०)

मात्रा—½-२ चम्मच दिन में ३-४ बार।

नोट—○ सोने से पूर्व इसकी १ मात्रा अवश्य दें।

३. ℞ एम्पीसिलीन (Ampicillin)

मात्रा—५० मिग्रा०/प्रतिकिलो शरीर-भार पर नित्य ३ विभाजित मात्रा में।

जीर्ण कास (Chronic cough)—जब खाँसी दीर्घकाल तक चलती है तब इसकी चिकित्सा निम्न प्रकार में करना चाहिए—

जीर्ण शुष्क कास की चिकित्सा—

℞ फेन्सीडिल (Phensedyl)

मात्रा—½ चम्मच दिन में ३ बार।

अथवा—कॉस्कोपिन लिक्टस (Coscopin linctus)

मात्रा—१०-२० बूँद दिन में ३ बार।

जीर्ण तर कास की चिकित्सा—

℞ डाइलोसिन अथवा बेनाड्रिल अथवा जीट एक्स्पेक्टोरेण्ट

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३ बार।

सेप्ट्रान लिक्विड (Septran liquid)

मात्रा—६ सप्ताह से ६ माह—½ चम्मच दिन में १ बार।

६ माह से ६ वर्ष की आयु—१ चम्मच दिन में २ बार।

७ वर्ष से १२ वर्ष—२ चम्मच।

अथवा—एम्पीसिलीन (Ampicillin)

मात्रा—५० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर दिन में ३ बार।

इओसिनोफीलिया युक्त कास में—

℞ हेड्राजान या बेनोसाइड

मात्रा—६ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर ३ मात्राओं में विभाजित कर १ माह तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

१. सर्दी से होने वाली खाँसी में—

℞ एपीडीन (Apidin) (आई० डी० पी० एल०)

मात्रा—१-१ गोली दिन में ३ बार।

२. खाँसी व पीड़ा में—

℞ कोडीन सल्फेट (Codine sulphate)

मात्रा—१-१ गोली दिन में ३ बार।

३. सूखी खाँसी में—

℞ कॉस्को टेब्स (Cosco tabs) (विन्स)

मात्रा—१-१ गोली प्रति दिन २-३ घण्टे पर।

अथवा—फ्रेनोल (Franol) (डेज मेडिकल)

मात्रा—१-१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—फैरील कफ सीरप (Pharyl cough syrup)

मात्रा—२-२ बड़ा चम्मच दिन में ४ बार।

४. एलर्जी से उत्पन्न कास मे—

℞ डायलोसीन (Dilosyn) (बी० डी० एच०)

मात्रा—१ गोली प्रातः-सायं तथा रात को सोने से पूर्व।

५. बहुत ही तेज खाँसी में—

℞ फाइसेप्टॉन (Physeptone) (वैल्कम)

मात्रा—१-१ गोली दिन में ३-४ बार।

६. रात की कष्टदायक खाँसी में—

℞ मिथियाडोन लिक्टस

मात्रा—५ मिली० रात में सोते समय।

७. ज्वरयुक्त कास में—

℞ ओरीसूल (Orisul)

मात्रा—½-१ ग्राम दिन में २-३ बार।

८. खाँसते समय गले में दर्द होने पर—

℞ स्ट्रेप्सिल्स टेबलेट

मात्रा—१-१ गोली दिन में कई बार चूसें।

साथ ही—गले में मेण्डल पेण्ट्स लगायें।

९. तीव्र जुकाम से उत्पन्न कास में—

℞ इण्ड्रीन (नेजल ड्राप्स) (वाईथ कं०)

मात्रा—३-४ बूंद प्रत्येक नथुने में दिन में ३-४ बार डालें।

१०. टॉन्सिल्स के बढ़ जाने से उत्पन्न कास में—

℞ इथनीन सीरप (Ethnine syrup)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—½-२ चम्मच रोगानुसार दिन में ३-४ बार।

११. सूखी और एलर्जिक कास में—

℞ एनारियल एक्स्पेक्टोरेण्ट

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ४-५ बार।

अथवा—जीट एक्स्पेक्टोरेण्ट

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३ बार।

नोट—इससे जमा बलगम निकल कर रोगी को आराम मिलता है।

अथवा—डिलोसिन एक्स्पेक्टोरेण्ट

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३ या ४ बार। साथ ही १ मात्रा सोने से पूर्व दें।

१२. राजयक्ष्मा तथा कुक्कुरकास में—

℞ वास्कोडिन (Vaskodin)

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३ या ४ बार।

अथवा—सिरोलीन (Sirolin)

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३ या ४ बार तथा १ मात्रा सोने से पूर्व दें।

१३. श्वास उभाड़ने वाली खाँसी—

℞ स्वाक्स (Swax) टेबलेट

मात्रा—१-३ गोली दिन में ३-४ बार।

१४. ब्रॉन्काइटिस तथा टॉन्सिलशोथ से उत्पन्न कास में—

℞ कोफकर-ए सीरप (Cofcur-A syrup) (यूनीकेम)

मात्रा—१-१ चम्मच दिन में ३ बार तथा १ मात्रा सोने से पूर्व।

साथ ही—'लिनीमेण्ट टरपेण्टाइन' की छाती पर मालिश करें।

खाँसी में प्रयुक्त पेटेण्ट मिश्रित योग—

१. ℞	चेस्टोन सिरप (सिप्ला)	½ चम्मच
	सोवेण्टोल एक्सपेक्टोरेण्ट (नोल)	१ चम्मच
	जेफ्रोल कफ सिरप (एम० बी०)	१ चम्मच
	ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार।	१ मात्रा।
२. ℞	अमोनियम कार्बोनेट	०.३ ग्राम
	सीरप वसाका	२ मिली०
	क्लोरोफॉर्म वाटर	३० मिली०
	ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।	१ मात्रा।

विशेष—इससे रोगी के साँस लेते समय सायं-सायं की आवाज आते समय कफ पतला होकर बाहर निकल जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. ℞ टेबलेट सल्फाडायाजीन	१ गोली
टेबलेट सीबाजोल	१ गोली
टेबलेट सल्फामेराजीन	१ गोली
टेबलेट कोरामीन इफेड्रीन	१ गोली
	१ मात्रा

इसे पीसकर ४ पुड़िया बना लें। १-१ पुड़िया प्रति ४ घण्टे पर।
साथ ही—क्राइसीवाल (Crisival) सीरप
मात्रा—२ छोटा चम्मच उपर्युक्त पुड़िया के साथ मिलाकर दें।

४. ℞ बेनाड्रिल एक्स्पेक्टोरेण्ट	५ मिली०
ब्रॉन्को सीरप (विडल शायर)	५ मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।	१ मात्रा

विशेष—इससे कफ ढीला होकर बाहर निकलता है। सूखी खाँसी तथा सिर की टपकन में विशेष आराम मिलता है।

५. ℞ बेनाड्रिल एक्सपेक्टोरेण्ट (पार्क डेविस)	१ चम्मच
पेक्टामोल लिंक्टस (एलेनबरीज)	१ चम्मच
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार चटायें।	१ मात्रा

विशेष—समस्त प्रकार की खाँसी में उपयोगी।

६. ℞ एविल एक्स्पेक्टोरेण्ट (हैक्स्ट)	५ मिली०
कोसोम सीरप (मर्क)	५ मिली०
ग्रिलिंक्टस (ग्रिफॉन)	५ मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।	१ मात्रा
७. ℞ कोरेक्स कफ सीरप (फाइजर)	५ मिली०
एमोक्सीसिलीन सीरप (विडल शायर)	५०० मि० ग्रा०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रति ६ घण्टे पर दिन में ३-४ बार।

८. ℞ डाइलोसीन एक्स्पेक्टोरेण्ट (एलेनबरीज)	५ मिली०
डिस्ट्रान एक्स्पेक्टोरेण्ट (ज्यॉफरी मैनर्स)	५ मिली०
ब्राडीसिलीन सीरप (अल्केम)	५ मिली०
ऐसी १ मात्रा प्रति ६ घण्टे पर दें।	१ मात्रा

विशेष उपयोग—यह सूखे हुए कफ को पिघलाकर बाहर निकालती है। तीव्र खाँसी में सर्वाधिक लाभकारी है। इससे सिर का भारीपन दूर होता है।

९. ℞ टेबलेट इफेड्रीन	१ गोली
टेबलेट पिरीटान	१ गोली
टेबलेट नियोसिनेफरीन	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २ या ३ बार जल से।	१ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष—कोराइजा, न्यूमोनिया, ब्रॉन्काइटिस, इन्फ्लूएञ्जा आदि से प्रभावित रोगी की खाँसी में उपयोगी।

१०. ℞	चेस्टोन सीरप (सिप्ला)	१ चम्मच
	डेटीगॉन लिक्टस (बायर)	१५ बूंद
	ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार चटायें।	१ मात्रा

विशेष—यह सभी प्रकार की खाँसी की प्रभावशाली तथा रामबाण औषधि है।

११. ℞	न्योगाडीन एलिक्जिर	१ चम्मच
	वाटरबरीज कम्पाउण्ड	१ चम्मच
	ओमिलकल (फ्रेंको इण्डियन)	१ चम्मच
	ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार दें।	१ मात्रा

विशेष—नजला-जुकाम, खाँसी, पुरानी खाँसी, टी० बी० की खाँसी, फेफड़ों के दुर्बल होने से उत्पन्न खाँसी तथा बलगम की खाँसी में विशेष उपयोगी।

१२. ℞	सोवेण्टाल एक्स्पेक्टोरेण्ट (नॉल)	१ चम्मच
	जेफ्राल कफ सीरप (एम० बी०)	५ मिली०
	ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार चटायें।	१ मात्रा

विशेष—समस्त प्रकार की खाँसी उपयोगी।

१३. ℞	कोरेक्स कफ सीरप (फाइजर)	५ मिली०
	टोसेक्स इम्प्रूव्ड सीरप (साराभाई)	५ मिली०
	ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार चटायें।	१ मात्रा

विशेष—समस्त प्रकार की सूखी खाँसी तथा ऐंठन वाली खाँसी में विशेष उपयोगी।

खाँसी नाशक रिसेण्ट पेटेण्ट मेडिसिन—

१. एक्टीलेक्स (Actilex) (वरोज वैल्कम)

मात्रा—वयस्क—५ मिली० दिन में ३ बार।

बालक—१० वर्ष से ऊपर—२·५ मिली० दिन में ३ बार।

बालक ५ से १० वर्ष—२·५ मिली० दिन में २।

बालक २ से ४ वर्ष—१·२५ मिली० दिन में २ बार।

२. एण्टामीन एक्स्पेक्टोरेण्ट (Antamine expectorent) (Chemage)

मात्रा—वयस्क—५-१० मिली० दिन में ३-४ बार।

बालक—६ सें १२ वर्ष २·५–५ मिली० दिन में ३-४ बार।

विशेष—संवेदनशील खाँसी (Irritable cough) में लाभकारी।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. एविल एक्सपेक्टोरेण्ट (Avil expectorent) (हैक्स्ट)

मात्रा—वयस्क—½–२ चम्मच दिन में २-३ बार।

बालक—½–१ चम्मच दिन में २-३ बार।

४. बेनाड्रिल एक्सपेक्टोरेण्ट (Benadryl expectorent) (P. D.)

मात्रा—वयस्क—५–१० मिली० प्रति २-३ घण्टे पर।

बालक—२·५-५ मिली० प्रति ३ घण्टे पर।

५. केडीस्टिन एक्सपेक्टोरेण्ट (Cadistin expectorent) (केडिला)

मात्रा—वयस्क—१० मिली० दिन में ३-४ बार।

बालक—१·२५–२·५ मिली० आयु के अनुसार।

विशेष—यह बलगमी खाँसी (Productive cough) तथा दमा की खाँसी (Asthmatic cough) में विशेष उपयोगी है।

६. कार्डियाजोल-डिकोडिड (Cardiagol-Dicodid) (बोहरिंगरनॉल)

मात्रा—वयस्क—१०-२० ड्राप्स। शिशु—४ से १२ माह—१-३ ड्राप।

छोटे बालक—२-५ ड्राप। अन्य बालक—उम्र के अनुसार। प्रत्येक को दिन में २ या ३ बार।

विशेष—शुष्क जलन युक्त कास (Dry irritative cough) तथा आकर्षी खाँसी (Spasmodic cough) में विशेष लाभकारी।

७. चेस्टोन (Cheston) (सिप्ला)

मात्रा—वयस्क—५-१० मिली०। बालक—२·५–५ मिली०।

विशेष उपयोग—सूखी खाँसी (Dry unproductive congh), एलर्जिक कफ तथा अन्य रोगों से उत्पन्न खाँसी में लाभकारी।

८. क्लिस्टिन डी-एम-आर (Clistin D-M-R) (इथनोर)

मात्रा—वयस्क—५ मिली० दिन में ३-४ बार।

बालक—२·५–५ मिली० दिन में ३-४ बार।

विशेष—खाँसी की लाक्षणिक चिकित्सा तथा जुकाम से सम्बन्धित खाँसी में लाभकारी।

९. कोरेक्स (Corex) (फाइजर)

मात्रा—५ मिली० आवश्यकतानुसार। बालक—२·५ मिली०।

बालक—६ वर्ष के अंदर—१·२५ मिली०।

विशेष—संक्रमण (Infection) तथा एलर्जिक रेस्पिरेटरी व्याधियों में लाक्षणिक (खाँसी की) चिकित्सा में लाभकारी।

१०. डेसलिन (Daslin) (Searle)

मात्रा—५-१० मिली० प्रति ४ घण्टे पर।

बालक—२.५ से ५ मिली० प्रति ४ घण्टे पर।

विशेष—श्वसन-संस्थान की विकृतियों से उत्पन्न कास में लाभकारी।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. डीयाकॉस (Deacos) (IDPL)
मात्रा—५ मिली० दिन में ३-४ बार।
विशेष—समस्त प्रकार की खाँसी में।
१२. डीयाकॉस-एन (Deacos-N) (IDPL)
मात्रा—५-१० मिली० दिन में ३-४ बार।
१३. डिकोफ (Decoff) (रैनवेक्सी)
मात्रा—१० मिली० प्रति ४-६ घण्टे पर।
बालक—६-१२ वर्ष—५ मिली०।
२-६ वर्ष के बालकों को २.५ मिली० प्रति ४-६ घण्टे पर।
विशेष—खाँसी की लाक्षणिक चिकित्सा में लाभकारी।
१४. डिलोसिन एक्स्पेक्टोरेण्ट (Dilosyn expectorent) (एलेनबरीज)
मात्रा—५-१० मिली० दिन में ३-४ बार।
विशेष—जुकाम से सम्बन्धित खाँसी तथा एलर्जिक कफ में उपयोगी।
१५. ड्रिस्टॉन एक्स्पेक्टोरेण्ट (Dristan expectorent) (ज्यॉ० मेनर्स)
बालक—५ वर्ष से नीचे—२·५ मिली० दिन में ३-४ बार।
५ से १० वर्ष—२·५–५ मिली० दिन में ३ बार।
१० वर्ष से ऊपर—५–१० मिली० दिन में ३-४ बार।
डिस्ट्रॉन एक्स्पेक्टोरेण्ट की गोली भी आती है—
मात्रा—१-२ गोली प्रति ३-४ घण्टे पर भोजन के बाद।
विशेष—सूखी तथा तर खाँसी (Unproductive & Productive cough) में उपयोगी।
१६. इबेकॉफ (Ebecof) (Ebers)
मात्रा—१० मिली० दिन में ३ बार।
बालक ६-१२ वर्ष—५ मिली० दिन में ३ बार।
विशेष—नासाकोटर शोथ (Sinusitis) की खाँसी में उपयोगी।
१७. एक्सीप्लोन (Exiplon) (खण्डेलवाल)
मात्रा—५-१० मिली० आवश्यकतानुसार।
बालक—६ वर्ष से ऊपर ½ मात्रा।
नोट—खाँसी तथा रेस्पिरेटरी इन्फेक्शन से सम्बन्धित जुकाम में लाभकारी।
१८. एक्स्पो-२ एक्स्पेक्टोरेण्ट (Expo-2 Expectorent) (डॉप्सन)
मात्रा—५-१० मिली० दिन में ३ बार।
बालक—२·५–५ मिली० दिन में ३ बार।
विशेष उपयोग—सूखी खाँसी (Dry unproductive cough), आकर्षी खाँसी (Spasmodic cough), क्षय की संवेदनशील खाँसी (Irritative cough) तथा फ्लू की खाँसी में परम उपयोगी।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९. ग्राईलिंक्टस (Grilinctus) (फ्रेन्को-इण्डियन)

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३-४ बार। बालक—½ मात्रा।

विशेष—विभिन्न कारणों से उत्पन्न खाँसी की लाक्षणिक चिकित्सा में लाभकारी।

२०. हिस्टालिन कफ सीरप (Hystalin couph syrup) (F D C)

मात्रा—१० मिली० दिन में ३-४ बार।

विशेष—सूखी तथा तर खाँसी (Unproductive and productive cough) में लाभकारी।

२१. लूपीहिस्ट (Lupihist) (लूपिन लैब)

मात्रा—वयस्क—५ मिली० दिन में ३-४ बार।

बालक—१·२५-२·५ मिली० दिन में ४ बार।

विशेष—समस्त प्रकार की खाँसी में उपयोगी।

२२. मिट्स लिंक्टस कोडीन कं० (Mit's linctus codeine Co.) (ईस्ट्रा आइडियल)

मात्रा—२.५-५ मिली० दिन में २ बार।

विशेष—सूखी खाँसी (Unproductive couph) में लाभकारी है।

२३. नॉस्कोपेक्स (Noscopex) (निकोलस)

मात्रा—५ मिली० दिन में ३ बार।

बालक—१·२५-२·५ मिली० दिन में ३ बार।

विशेष—समस्त प्रकार की खाँसी को नियन्त्रित करती है।

२४. फेन्सेडिल (Phensedyl) (M. B.)

मात्रा—वयस्क—५-१० मिली० दिन में ३ बार।

बालक—२·५-५ मिली० दिन में ३ बार।

विशेष—खाँसी की लाक्षणिक चिकित्सा तथा सर्दी (Cold) में उपयोगी।

२५. पिरीटोन एक्स्पेक्टोरेण्ट (Piritone Expectorent) (ग्लैक्सो)

मात्रा—५-१० मिली० दिन में ३-४ बार आयु के अनुसार।

विशेष—श्वसन-संस्थान की एलर्जीजन्य तर खाँसी (बलगमी कफ) में लाभकारी।

२६. सेल्वीगोन (Selvigon) (जर्मन रेमेडीज)

मात्रा—१-२ ड्रेगी दिन में ३ बार।

इसका ड्राप्स भी आता है—

मात्रा—१५ से २५ बूंद दिन में ३ बार। बालक—८-१० बूंद।

विशेष—समस्त प्रकार की खाँसी में उपयोगी।

२७. टिक्सीलिक्स चिल्ड्रन्स कफ लिंक्टस (एम० वी० कं०)

मात्रा—२·५-१० मिली० दिन में ३ बार।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Delhi Collection. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२८. टोसेक्स इम्प्रूव्ड (Tossex improved) (साराभाई)

मात्रा—५ मिली० दिन में ३ बार।

विशेष—सूखी तथा तर खाँसी (Unproductive and productive cough) में लाभकारी। □

श्वसन-संस्थान के रोग 2/3

श्वसनीशोथ
(Bronchitis)

पर्याय—श्वसनीशोथ, वायु-प्रणालीशोथ, हवा की नलियों की सूजन तथा Inflammation of the brondial tubes.

रोग-परिचय—श्वसनिकाओं की श्लैष्मिककला में शोथ की अवस्था को श्वसनीशोथ (Bronchitis) कहते हैं। यह रोग विशेष रूप से बच्चों तथा वृद्धों में मिलता है।

प्रकार (Types)—यह रोग २ प्रकार का होता है—

१. तीव्र श्वसनीशोथ (Acute bronchitis)।

२. जीर्ण श्वसनीशोथ (Chronic bronchitis)।

तीव्र श्वसनीशोथ
(Acute Bronchitis)

परिभाषा (Definition)—It is an inflammation of the bronchial tubes certainly the most common acute disease of the lungs. It is much more common in child-hood and after middle age, and attacks are much more likely to occur in the winter and spring month of the year.

—*Savill's System of Clinical Medicine.*

○ श्वासनलिका की श्लैष्मिककला की नवीन दाहयुक्त सूजन को एक्यूट ब्रॉन्काइटिस कहते हैं। इसमें फेफड़ों की वायु-नलिकाओं (Bonchii) में शोथ हो जाता है। इस रोग में सिर-दर्द, आलस्य, छाती में दर्द, ज्वर का बढ़ना, स्वर का कर्कश होना, छाती में गर्मी की प्रतीति, गले में घरघराहट, मूत्र में कमी, साँय-साँय की आवाज आदि लक्षण मिलते हैं।

○ सर्दी के मौसम में तथा सर्दी लग जाने से रोग के बार-बार होने पर फेफड़े स्थायी रूप में कमजोर हो जाते हैं।

कारण (Etiology)—१. वाइरस अथवा जीवाणुओं द्वारा उत्पन्न बाह्य संक्रमण।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. नासा-विवरों (Nasal sinusis) आदि में पूर्व विद्यमान संक्रमण का नीचे उतर कर श्वास-नलिकाओं में शोथ उत्पन्न करना।

३. खसरा, इन्फ्लूएञ्जा, कोराइजा, टाइफाइड, कालाजार आदि के समान इन रोगों के उत्पादक बाइरस ट्रेकिया और श्वासनलिकाओं में पहुँच कर एक्यूट ब्रॉन्काइटिस उत्पन्न कर देते हैं।

४. सामान्यतः ठंड लगने, गीले कपड़े पहिनने, बरसाती जल में भींगने तथा ओस में रहने आदि से यह रोग हो जाता है।

रोग-लक्षण (Symptoms)—१. रोग के प्रारम्भ में सिर में दर्द, आलस्य, तत्पश्चात् हलका बुखार, वक्ष में गर्मी प्रतीत होना, स्वर-भंग, श्वास-कष्ट आदि लक्षण होते हैं।

२. सूखी तीव्र खाँसी प्रारम्भ होती है। उरोस्थि के पीछे ट्रेकिया में शोथ के कारण दुखने जैसी प्रतीति होती है।

नोट—श्वासप्रणालशोथ (Tracheitis) प्रायः साथ में मिलता है।

३. प्रारम्भ में खाँसी सूखी होती है, जो बार-बार गले को छीलती हुई-सी उठती है। कुछ समय बाद कम मात्रा में श्लेष्माभ (Mucoid) और चिपचिपा कफ निकलना प्रारम्भ हो जाता है। कुछ और समय व्यतीत होने पर यह कफ श्लेष्मपूयी (Mucopurulent) का रूप धारण कर लेता है।
○ कभी-कभी कफ में अल्प मात्रा में रक्त भी मिलता है।

४. गले में ह्वीजिंग (Wheezing) अर्थात् सैं-सैं तथा रोन्काई (सूखे शब्द) होते रहते हैं।

५. रोगी के वक्ष में एक प्रकार का खिचाव-सा प्रतीत होता है।

६. कष्टश्वास और श्वसन-क्रिया के कारण घर्र-घर्र की ध्वनि निकलती है।

७. रोगी को थोड़ा हलका ज्वर भी रहता है।

८. जीभ मैली तथा पेशाब मात्रा में कम आती है।

○ संक्रमण जैसे-जैसे और नीचे की ओर पहुँचता है तो—

१. रोगी का तापक्रम १००–१०२° फा० (३८–३९° सें०) तक पहुँच जाता है।

२. कष्टश्वास में और वृद्धि प्रतीत होने लगती है।

३. ठंडा लसदार पसीना, दोनों गाल नीले या पीले, सूखी और रूखी जीभ, पेशाब मात्रा में कम और हाथ-पैर ठंडे हो जाते हैं।

४. दोनों ओर रॉन्काई एवं क्रेपीटेशन मिलते हैं।

५. 'ल्यूकोसाइटोसिस' और 'पॉलीमार्फस' की वृद्धि मिलती है।

६. ४-५ दिनों में रोग घट जाता है अथवा पुनः बढ़ जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निदान—(Diagnosis)—१. रक्त में श्वेतकोशिकाओं (Leucocytes) विशेषकर बहुरूपी केन्द्रकों (Polymorphous) की वृद्धि निदान में पर्याप्त सहायक होती है।

२. छाती पर स्टेथिस्कोप लगाने पर पहले सूखे कफ की साँय-साँय ध्वनि सुनाई देती है। श्लेष्मा के ढीले हो जाने पर यही ध्वनि घरघराहट के रूप में बदल जाती है।

३. स्पूटम कल्चर (Sputum culture) करने पर कई प्रकार के जीवाणु (अल्फा, वीटा, हीमोलिटिक स्ट्रेप्टोकोकाई, न्यूमोकोकाई, इन्फ्लू-एञ्जाई आदि) मिलते हैं।

○ उपरोक्त लक्षणों से भी इसे आसानी से पहचाना जा सकता है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—अधिकांश रोगियों में ५-६ दिन के पश्चात् पर्याप्त सुधार होने लगता है। प्रायः साधारण ब्रॉन्काइटिस १ सप्ताह में ठीक हो जाता है।

२. यदि उचित चिकित्सा-व्यवस्था न की गई तो संक्रमण फेफड़ों को आक्रान्त करके ब्रॉन्को-न्यूमोनिया उत्पन्न कर देता है।

३. ○ रोग का पूर्वानुमान बच्चों तथा वृद्धों में खराब मिलता है।

४. यदि रोग के साथ मस्तिष्क तथा हृदय पर भी रोग का दौरा हो जाय तो स्थिति ठीक नहीं समझनी चाहिए।

५. युवा पुरुषों में एम्फाइसीमा के कारण एक्यूट ब्रॉन्काइटिस अधिक कष्टप्रद होकर मौत को आमन्त्रण देती है।

नोट—आजकल एण्टीबायोटिक औषधियों के आविष्कार के बाद इस रोग से होनेवाली मृत्युदर में कमी हो गई है। केवल चिकित्सा के अभाव में ही यह घातक होती है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी को यदि ज्वर हो तो पूर्ण विश्राम आवश्यक है।

२. रोग के मूल कारण को दूर करें।

३. संक्रमण नष्ट करने के लिए एण्टीबायोटिक औषधियों का प्रयोग करें।

४. रोगी की शीत से यथासम्भव रक्षा करें।

५. धूम्रपान का पूर्णतया निषेध करें।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

१. 'विक्स वेपोरब' सुँघायें। अथवा—एलड्रीन १:२०० नेबूलाइजेशन नाक से सुँघायें। अथवा—४ मिली० टिं० बेञ्जोइन को ५०० मिली० उबलते पानी में डालकर उसकी वाष्प सुँघाएँ।

साथ ही—२. एम्पीसिलीन (Ampicillin) २५० मि० ग्रा०

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—एमोक्सीसिलिन या लिनकोमाइसिन २५०–५०० मि० ग्रा०
मात्रा—१ कैप्सूल प्रति ६ घण्टे पर दिन में ४ बार ५ से १० दिनों तक।
अथवा—टेबलेट सेप्ट्रान या बैक्ट्रिम
मात्रा—२-२ गोली प्रातः-सायं १२ घण्टे के अन्तर पर ५ दिनों तक।
नोट—बालकों में सेप्ट्रान सीरप का प्रयोग करें।
अथवा—इरीथ्रोमाइसिन (Erythromycin) ५०० मि० ग्रा०
मात्रा—१ मात्रा प्रति ६ घण्टे पर ५-७ दिन तक।
अथवा—कैप्सूल टेट्रासाइक्लीन २५० मिग्रा० अथवा—रेस्टिक्लीन कै०
मात्रा—१ कैप्सूल प्रति ६ घण्टे पर।
अथवा—पेनिसिलीन टेबलेट ४ लाख यूनिट
मात्रा—१ गोली दिन में ४ बार।
इञ्जे० प्रोकेन पेनिसिलीन ६ लाख यूनिट
मात्रा—१ इञ्जे० दिन में २ बार मांसपेशीगत।
नोट—'टेट्रासाइक्लीन' को भी इञ्जेक्शन रूप में दिया जा सकता है।
तीव्र कास (Acut bronchitis) के शमन के लिए—
कोडीन फॉस्फेट—१५-५० मि० ग्रा० दिन में ३-४ बार दें।
सूखी खांसी के लिए निम्न योगों में से किसी का प्रयोग करें—
℞ प्रोटूसा कफ सीरप (Protussa cough syrup)
मात्रा—वयस्क—३ चम्मच प्रति ६ घण्टे पर १ मात्रा।
शिशुओं में—½ चम्मच प्रति ६ घण्टे पर १ मात्रा।
२ से ५ वर्ष—१ चम्मच प्रति ६ घण्टे पर १ मात्रा।
५ से १२ वर्ष—२ चम्मच प्रति ६ घण्टे पर १ मात्रा।
अथवा—'फैन्सीडिल कफ लिक्टस'/'डेटीगॉन कफ लिक्टस/'टुसीगॉन'
मात्रा—वयस्कों में—१-२ चम्मच दिन में ३ बार।
अथवा—कोरेक्स कफ सीरप (Corex cough syrup)
मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३-४ बार।
अथवा—℞ सीरप कोडीन ३० मिली०
सीरप टोलू ३० मिली०
सीरप प्रूनी १५ मिली०
१ चम्मच दिन में ३ बार। १ मात्रा
खांसी के तर होने पर (In productive cough)—
℞ बेनाड्रिल एक्स्पेक्टोरेण्ट
मात्रा—१ चम्मच दिन में ३-४ बार।
अथवा—ब्रामलेक्सिन एक्सपेक्टोरेण्ट या एड्रिल एक्स्पेक्टोरेण्ट।
मात्रा—१ चम्मच दिन में ३-४ बार।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूखी तथा तर दोनों प्रकार की मिली-जुली खाँसी में—

℞ चेस्टोन कफ सीरप २ चम्मच
डेटीगॉन कफ सीरप २ चम्मच

ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार। १ मात्रा

ह्वीजिंग (Wheezing—साँय-साँय की आवाज) में—

℞ टेबलेट सालबूटामोल २ मि० ग्रा०

अथवा—ब्रॉन्को टैब अथवा टेबलेट एस्थेलिन।

मात्रा—१ गोली दिन में ३-४ बार।

बालकों में—एस्थेलिन सीरप (Asthalin syrup)

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३ बार।

अथवा—बालकों को कॉलीफाइलिन फोर्ट सीरप दें।

मात्रा—१ चम्मच दिन में ३ बार।

अथवा—वयस्कों में टर्ब्युटेलिन (Terbutalin) २·५ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

नोट—कॉस्किन लिक्टस, फैन्सीडिल, कोरेक्स सीरप, इफिड्रेक्स एवं कै० कॉस्कोपिन प्लस लिक्टस, प्रक्सीन टे०—इनमें से किसी का व्यवहार किया जा सकता है।

यदि साथ में ज्वर भी हो तो—

℞ टेबलेट पैरासिटामोल (क्रोसिन, मेटासिन, कॉल्पोल आदि)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

नोट—बालकों में 'पैरासिटामोल सीरप' प्रयोग में लाना चाहिए।

अथवा—वयस्कों में 'एस्प्रिन' दें।

अथवा—प्रोकेन पेनिसिलीन ५ लाख यूनिट मांसपेशीगत २-३ इन्जे० दें।

अथवा—'प्रोसिलिन' (हिन्दुस्तान एण्टीबायोटिक) मांसपेशीगत दें।

श्वासकष्ट होने पर—

℞ एण्टी-हिस्टामिनिक ड्रग्स (एविल, हिस्टाण्टिन आदि)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

एक्यूट ब्रॉन्काइटिस में प्रयुक्त अन्य औषधियाँ—

टेबलेट—इल्कोसिन, इफिड्रेक्स, पूमीलेट, मॉरेक्स, एफरान ड्रेगी।

कैपसूल—ऑरियोमाइसिन, एक्रोमाइसिन, क्लोरोमाइसिटीन, टैरामाइसिन, सिन्थोमाइसिटीन, एलवर्सिलिन, लीडरमाइसीन कै०।

सीरप—कोसोम सीरप, चेस्टोन, डेटीगॉन लिक्टस, रिसायल, वेलीड्रिन, सिरोलिन कफ सीरप, रिकोल्विन, प्रियाटोन कफ सीरप, पल्मोकोड, टस्सेनोल, कोडीमोल, बेनाड्रिल एक्स्पेक्टोरेण्ट, कोरेक्स कफ सीरप।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्जेक्शन—ओम्नासिलिन, टैरामाइसिन, पल्मोट्रान, प्रोकेन पेनिसिलीन, पोलीडीन, स्ट्रेप्टोमाइसिन, केमीसिटीन, प्रोसिलिन।

एक्यूट ब्रॉन्काइटिस की मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१. ℞ टेबलेट पिरीटान	१ गोली
टेबलेट विटामिन-सी	५०० मि० ग्रा०
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।

अथवा—पहले एक्रोमाइसिन या टैरामाइसिन कै० दें।

अथवा—एम्पीसिलीन या एमोक्सीसिलीन दें। तत्पश्चात्—

विटामिन-सी (सीलिन)	५०० मि० ग्रा० १ गोली
मेटासिन	½ गोली
पिरीटान	१ गोली
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार ३ दिन तक।

२. ℞ फेन्सिडिल लिक्टस (M. B.)	१५ मिली०
रैलसिडीन (रैलीज कं०)	२ गोली
	१ मात्रा।

गोली पीसकर लिक्टस में मिला लें। ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार। बच्चो को ½–⅓ मात्रा।

विशेष—नये ब्रॉन्काइटिस में विशेष लाभकारी।

३. ℞ सल्फा डायाजीन	१ गोली
सोडा बाईकार्ब	३०० मि० ग्रा०
निकोटिनिक एसिड	१० मि० ग्रा०
ग्लूकोज या डैक्स्ट्रोज़	६०० मि० ग्रा०
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर गर्म जल से प्रतिदिन ६ बार।

४. कोराइजा, न्युमोनिया, दमा जनित ब्रॉन्काइटिस में—

℞ पिराटान	१ गोली
इफ़ेड्रीन	१ गोली
न्यू-सीनेफ्रीन (विन्थोप)	१ गोली
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३–४ बार।

नोट—इससे खाँसी में आशातीत लाभ मिलता है।

५. द्वितीय संक्रमण की स्थिति में जब तापक्रम ३८·४° सें० ३ दिनों के बाद भी चल रहा हो एवं म्यूकोपुरुलेण्ट स्पूटम आ रहा हो तो—

(i) ℞ सेप्ट्रान या बैक्ट्रिम (Septran or Bectrim)

मात्रा—१ गोली दिन में ४ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ii) ℞ एम्पीसिलीन (Ampicillin) २५० मि० ग्रा० कैप्सूल
मात्रा—१ कै० दिन में ४ बार ७ दिनों तक।

नोट—एल्वासिलिन, एम्पीलिन, डेपीसिलिन, पेनबीरीटिन, रोसीलिन (रैनवैक्सी)—यह सभी एम्पीसिलीन हैं।

(iii) ℞ अमोनियम क्लोराइड	१२० मि० ग्रा०
सोडियम साइट्रेट	१२० मि० ग्रा०
सीरप टेट्रासाइक्लीन	८ मिली०
वसाका सीरप	४ मिली०
एनीसी वाटर	३० मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में ४ बार।	१ मात्रा।

टेट्रासाइक्लीन २५० मि० ग्रा० कै० प्रति ६ घण्टे पर ७ दिन तक।

नोट—उपरोक्त नं० ३ (iii) के योग के स्थान पर निम्न योग भी दिया जा सकता है—

℞ टरपिन हाइड्रेट इलिक्जिर	५ मिली०
सीरप कोडीन	१ चम्मच
सीरप टोलू	१ चम्मच
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार दें।	१ मात्रा।

साथ ही छाती पर लिनीमेण्ट टेरीबिन्थ या लि० कैम्फर की मालिश।

निर्देशात्मक चिकित्सा—

रोगी को प्रतिदिन प्रातः—१-२ ड्राम मैगसल्फ का विरेचन दें।

रात में निद्रा के लिए—फीनोबार्बीटोन ३० मि० ग्रा० दें।

भोजन-व्यवस्था—हल्की गर्म चाय, गर्म जल में किसी फल का रस तथा ग्लूकोज मिलाकर दें। अथवा—किसी सब्जी का जूस दें।

आवश्यक निर्देश—जिन्हें बार-बार खाँसी आती हो, उन्हें 'सल्फाडायमिडीन' २ गोली एक बार नित्य लेते रहना चाहिए।

एक्यूट ब्रॉन्काइटिस की अन्य पेटेण्ट चिकित्सा—

१. ℞ फेन्सेडिल कफ लिक्टस (Phensedyl couph linctus.) (M. B.)

मात्रा—२ चम्मच दिन में ३ बार।
साथ ही—बिस्ट्रेपेन (Bistrepen) (एलेम्बिक या डी० सी० या साराभाई)।

मात्रा—½ ग्राम दिन में १-२ बार I/M दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. अथवा—जेफ्रोल (Zephrol) कफ सीरप (एम० बी०)
मात्रा—वयस्क १-२ चम्मच दिन में २-३ बार।
बालक—½ चम्मच दिन में २-३ बार।

३. ग्लाइकोडीन टर्प वसाका (Glycodin terp vasaka) (एलेम्बिक)
मात्रा—वयस्क—१ चम्मच दिन में २-३ बार।
बालक—½ चम्मच दिन में २-३ बार।

४. एविल एक्स्पेक्टोरेण्ट (Avil expectorent)
मात्रा—½–१ चम्मच दिन में ३ बार।

५. एमपी-सिलीन (मरकरी)
मात्रा—१ कै० दिन में ३ बार ५ दिनों तक।

६. सीरप कैल्सीड्रीन (Syrup Calcidrin) (एब्बोट)
मात्रा—बालक—¼–½ चम्मच प्रति ४ घण्टे पर।
विशेष—यह बलगम को सुगमता से बाहर निकालती है।

७. सिरोलीन कफ सीरप (Siroline cough syrup) (रोले कं०)
मात्रा—वयस्क—१ चम्मच दिन में ४ बार।
बालक—¼–½ चम्मच दिन में ४ बार।

८. बेनाड्रिल एक्स्पेक्टोरेण्ट (Benadryl expectorent) (पी० डी०)
मात्रा—२ चम्मच प्रति ४ घण्टे पर। साधारण रोग में ६ घण्टे बाद।

९. टिक्सीलिक्स कफ लिक्टस (Tixylix couph linctus)
मात्रा—बच्चों में—२·५–५ मिली० दिन में २-३ बार।

१०. डेटिगॉन कफ लिक्टस (Detigon couph linctus) (बायर कं०)
मात्रा—वयस्क १-२ चम्मच दिन में ३-४ बार।
बालक—¼-½ चम्मच दिन में ३-४ बार।

११. सालमोडिल (Salmodil) (F. D. C.)
मात्रा—१ गोली दिन में ३-४ बार।

१२. साल्माप्लोन (Salmaplon) (खण्डेलवाल)
मात्रा—१-२ गोली आवश्यकतानुसार।
विशेष—यह एलर्जिक ब्रॉन्काइटिस में लाभकारी है।

○ छाती में दर्द होने पर 'लिनीमेण्ट कैम्फर' की मालिश करें और केयोलीन (Kaoline) की गरम-गरम पुल्टिस बाँधें या गर्म पानी की बोतल से सेंक करें।

निषेध—मैन्थोल, कैम्फर, यूकेलिप्टस आदि की भाप गले में पहुँचने से खसरा होकर बार-बार खाँसी आने लग जाती है। इसलिए इन औषधियों का प्रयोग न करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रॉनिक ब्रॉन्काइटिस
(Chroric Bronchitis)

परिचय—एक्यूट ब्रॉन्काइटिस (Acute bronchitis) जब अधिक दिनों तक कष्ट देती रहती है तो यह क्रॉनिक (चिरस्थायी) में बदल जाती है। इसमें ऊर्ध्वश्वास-पथ (Upper respiratory tract) में संक्रमण बना रहता है। इसे कुछ विद्वान् 'क्रॉनिक ऑब्स्ट्रक्टिव ब्रॉन्को-पलमोनरी डिजीज' कहते हैं।

○ मध्य आयु अथवा वृद्धावस्था में पाया जाने वाला ऐसा ब्रॉन्काइटिस जो कुछ अन्तराल पर विशेषकर ऋतु-परिवर्तन के समय श्लेष्मायुक्त कास (Productive cough) के रूप में प्रकट होता है, उसे क्रॉनिक ब्रॉन्काइटिस कहते हैं।

प्रकार (Types)—यह २ प्रकार की होती है—

१. क्रॉनिक एलर्जिक ब्रॉन्काइटिस (Chronic alergic bronchitis)

नोट—इसे 'एलर्जिक अस्थमेटिक ब्रॉन्काइटिस' भी कहते हैं।

२. क्रॉनिक इन्फेक्टिव ब्रॉन्काइटिस (Chronic infective bronchitis)

क्रॉनिक एलर्जिक ब्रॉन्काइटिस
(Chronic Allergic Bronchitis)

परिचय—इस प्रकार का ब्रॉन्काइटिस ब्रॉन्कियल अस्थमा से बहुत मिलता जुलता है। इसलिए इसको 'एलर्जिक अस्थमेटिक ब्रॉन्काइटिस' भी कहते हैं।

रोग के कारण—१. धूम्रपान (Smoking)।

२. एटमॉस्फेरिक पोलूशन (Atmospheric pollution)।

३. संक्रमण (Infection)।

४. व्यवसाय (Occupation)—कोयला खान एवं औद्योगिक क्षेत्र की धूल तथा धुआँ जो ब्रॉन्कियल ट्री को उत्तेजित करते हैं।

५. पारिवारिक तथा जेनेटिक कमियाँ (Familial and genetic abnormalities) आदि।

लक्षण (Symptoms)—१. **खाँसी** (Cough)—इससे खाँसी श्लेष्मायुक्त (Productive cough) होती है। कफ चिपचिपा तथा सफेद रंग का होता है। बलगम निकालने के लिए रोगी को बहुत खाँसना पड़ता है, और कई बार देर तक खाँसते रहने से रोगी की साँस फूलने लगती है। बहुत खाँसने पर भी थोड़ा सा कफ निकलता है। कफ सफेद, चिपचिपा एवं झागदार तथा जेली की तरह रेशेदार (Stringlly) होता है। थूकने पर जमीन पर गिरते हुए कफ और मुख के बीच एक तार जैसा लसदार रेशा दिखलाई पड़ता है, जो उसकी चिपचिपाहट को प्रमाणित करता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. **ज्वर** (Fever)—ज्वर प्रायः अनुपस्थित रहता है।

३. **श्वासकष्ट**—रोग के प्रारम्भ में रोगी को कार्य करते समय श्वास कष्ट होता है। किन्तु रोग के बढ़ने पर रोगी को बैठे-बैठे ही साँस लेने में तकलीफ होने लगती है।

४. **ह्वीजिंग** (Wheezing)—श्वासनलिकाओं में कफ एकत्रित होने के कारण घर्र-घर्र जैसी आवाज सुनाई देती है।

५. **एलर्जिक लक्षण**—रोगी के नाक से पतला पानी निकलता है। बहुत छींकें आना, आँखों का लाल हो जाना तथा नेत्रों में खुजली एवं अश्रुस्राव होता है।

६. **वक्ष**—इस रोग में कुछ समय पश्चात् निःश्वसन की क्रिया दीर्घकालिक प्रतीत होती है। बीच-बीच में रॉन्काई मिलते हैं; कहीं-कहीं राल्स भी सुनाई पड़ते हैं। अन्त में कुछ वर्षों के पश्चात् रोगी में इम्फीसीमा (Emphysema) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

७. **रक्तनिष्ठीवन**—(Heamoptysis)—बहुत अधिक खाँसने से कभी-कभी सूक्ष्म रक्तवाहिका के फटने से कफ के साथ थोड़ा-बहुत खून भी आता है।

निदान (Diagnosis)—१. **रक्त-गणना**—यह प्रायः सामान्य मिलती है। कभी-कभी 'इओसिनोफिल' की वृद्धि मिलती है, परन्तु २०% से कम ही रहती है। कल्चर करने पर स्पूटम (Sputum) में कोई जीवाणु नहीं मिलते। केवल 'हीमोफाइलस इन्फ्लूएन्जा' तथा न्यूमोकोकस ही मिलते हैं। अधिक खोज करने पर कभी-कभी रेस्पिरेटरी सिंसिटियल वाइरस (Respiratory syncytial virus) भी मिलते हैं।

२. **एक्स-रे**—प्रायः वक्ष का एक्स-रे सामान्य मिलता है। एम्फीसीमा के चिह्न केवल अन्तिम चरणों में दिखलाई पड़ते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) **सामान्य चिकित्सा**—(General treatment)—

१. रोगी को धूल-धुआँ आदि से बचाना चाहिए। जलवायु-परिवर्तन से भी लाभ मिलता है।

२. क्षोभ (Irritation) करने वाले स्रोतों को रोकना चाहिए।

३. खुली हवा में व्यायाम करने तथा प्राणायाम से भी लाभ मिलता है।

४. प्रातःकाल सोकर उठने पर पर्याप्त मात्रा में गरम जल का सेवन करें।

५. सुबह के समय गरम-गरम चाय कफ निकालने में सहायक होती है।

६. श्वासनलिकाओं की जीवाणु-प्रतिरोधक शक्ति को बढ़ाने के लिए घृत, दूध, कॉड लिवर आयल, विटासिन ए० तथा डी०, कैल्शियम एवं विटामिन 'बी' आदि पर्याप्त मात्रा में दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. यदि रोगी का शरीर भारी हो तो भोजन की मात्रा कम करके केवल सब्जियों तथा फलों के रसों पर ही रखना चाहिए।

८. श्वासनलिकाओं में संचित हुए कफ को निकालने के लिए नींबू या किसी फल के रस में मिश्रित गरम जल या गर्म चाय + ग्लूकोज मिलाकर दिन में २ बार पिलायें।

(२) औषधि-चिकित्सा—(Medicinal treatment)—

○ दिन के समय किसी एण्टी-हिस्टामिनिक औषधि युक्त एक्स्पेक्टोरेण्ट सीरप का प्रयोग करना चाहिए। इस दृष्टि से निम्नलिखित में से कोई एक सीरप दिया जा सकता है—

℞ सीरप डायलोसिन (Syrup Dilosyn)

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३ बार।

अथवा—सीरप कैडिस्टिन (Syrup Cadistin)

मात्रा—२ चम्मच दिन में ३ बार।

अथवा—ग्लाइकोडीन टर्प वसाका, फेन्सिडिल, कोसोम, जीट, बेनाड्रिल एक्सपेक्टोरेण्ट, कोरेक्स आदि में किसी का भी प्रयोग किया जा सकता है।

श्वासकष्ट की स्थिति में—एक्स्पेक्टोरेण्ट + एण्टी-हिस्टामिनिक मिश्रित औषधि दी जाती है। इस दृष्टि से निम्नलिखित सीरप उपयोगी हैं—

℞ एज्मोटोन (Asmotone)

मात्रा—५–१० मिली० दिन में ३ बार।

अथवा—एस्थालेक (Asthalec)

मात्रा—१ चम्मच दिन में ३ बार।

अथवा—इलिक्जिर कैडीफायलेट (Elixir Cadiphylate)

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३-४ बार।

अथवा—कासाबिन (Kasabin) (बंगाल केमिकल)

मात्रा—१–२ चम्मच दिन में ३ बार।

नोट—स्टैण्डर्ड कंपनी की 'एमीड्रीन' की १ से २ गोली दिन में २-३ बार देने से विशेष लाभ मिलता है।

उपरोक्त चिकित्सा के असफल होने पर—

१. स्टेराइड्स की बड़ी मात्रा देनी चाहिए।

२. रोग की पुनरावृत्ति रोकने के लिए 'इन्जे० हिस्टाब्लॉक' का उपयोग करना चाहिए।

क्रॉनिक इन्फेक्टिव ब्रॉन्काइटिस
(Chronic Infective Bronchitis)

परिचय—क्रॉनिक ब्रॉन्काइटिस में संक्रमण के उपस्थित होने पर उसे क्रॉनिक इन्फेक्टिव ब्रॉन्काइटिस कहते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण (Etiology)—शरीर में रोगप्रतिरोधक शक्ति की कमी होने पर एक्यूट ब्रॉन्काइटिस की चिकित्सा न करने पर उसके बार-बार आक्रमण होते रहते हैं और संक्रमण जो पहले से ही ऊर्ध्व श्वसनमार्ग में उपस्थित रहता है, जीवाणु ब्रॉन्कियल ट्री पर आक्रमण कर देते हैं, परिणामस्वरूप क्रॉनिक इन्फेक्टिव ब्रॉन्काइटिस हो जाता है।

लक्षण (Symptoms)—१. **खाँसी** (Cough)—रोगी को खाँसी निरन्तर आती रहती है तथा मौसम के बदलने पर और भी अधिक उग्र हो जाती है।

२. **श्वासकष्ट**—ब्रॉन्कियल ट्री में श्लेष्मा के एकत्रित होने के कारण रोगी को श्वास लेने में कष्ट होता है।

३. **टेम्परेचर**—प्रायः बुखार नहीं रहता है। कभी-कभी रोग के बढ़ने के साथ ज्वर भी बढ़ जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा—

१. धूम्रपान का पूर्ण निषेध।

२. दिन में कई बार टिं० बेन्जोइन का वाष्प सुँघाएँ। इससे कफ पतला होकर निकल जाता है।

(२) औषधि चिकित्सा—

℞ लोफकर (Cofcur)

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३-४ बार।

अथवा—जिप कफ सीरप (Zip cough syrup) या ग्लाइकोडीन टर्प वसाका।

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३-४ बार।

अथवा—℞

पोटाश बाइकार्ब	१५ ग्रेन।
एमन कार्ब	५ ग्रेन
स्प्रिट अमोनिया	२० बूंद
पानी	३० मिली
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार गर्म जल से।

विशेष—इससे कफ आसानी से निकल जाता है। यदि बलगम में कुछ दुर्गन्ध हो तो 'यूकेलिप्टस आयल' की गर्म भाप दें।

श्वासनलिकाओं में विद्यमान जीवाणुओं को नष्ट करने के लिए—

℞ सेप्ट्रान या बैक्ट्रिम (Septran or Bactrim)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ७ दिन तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एम्पीसिलीन २५० मि० ग्रा०
मात्रा—१ कै० दिन में ४ बार ७ दिन तक।
नोट—बच्चों में एम्पीसिलीन सीरप का प्रयोग करें।
अथवा—इरीथ्रोमाइसीन (Erythromycin) २५० मि० ग्रा०
मात्रा—१ कै० दिन में ४ बार ५–७ दिन तक।
अथवा—टेट्रासाइक्लीन (Tetracycline) २५० मि० ग्रा०
मात्रा—१ कै० दिन में ४ बार ७ दिन तक।
अथवा—क्लोरम्फेनिकोल (Chloramphenicol) २५० मि० ग्रा०
मात्रा—१ कै० दिन में ४ बार ७ दिन तक।

इञ्जेक्शन चिकित्सा—क्रिस्टेलाइन पेनिसिलीन १० लाख यूनिट दिन में २ बार अथवा पेनिसिलीन + स्ट्रेप्टोमाइसिन १ ग्राम का मिश्रित सूचीवेध अथवा डी० सी० फोर्ट मांसपेशीगत दिन में १ बार ७ दिनों तक दें।

नोट—○ उपर्युक्त चिकित्सा के साथ 'बीप्लेक्स कै०' दिन में ३ बार दें। जब श्लेष्मा द्रवमय हो जाय तब बन्द कर दें।

○ पुराने रोगी को इनके २–३ कोर्स हर शीतकाल में चलाना चाहिए। थूक में जब पूय आने लगे तो इन्हें तुरन्त लेना प्रारम्भ कर देना चाहिए।

℞ डॉक्सीसाइक्लीन (Doxycline) १०० मि० ग्रा०
मात्रा—१ कै० नित्य प्रथम से ५ वें दिन, प्रति माह।

यदि श्लेष्मा पूययुक्त और पीले रंग का हो तो—

℞ एम्पीसिलीन अथवा एमोक्सीसिलीन ५०० मि० ग्रा०
अथवा—टेट्रासाइक्लीन ५०० मि० ग्रा०
मात्रा—१ कै० दिन में ४ बार ३ दिन तक।
अथवा—कोट्रीमेक्साजोल (Cotrimexazole)
अथवा—सुप्रीस्टोल (Supristol)
मात्रा—तत्काल २ गोली, तत्पश्चात् १ दिन में २ बार जब तक श्लेष्मा तरल न हो जाय। यदि इससे भी कोई लाभ न मिले तो—

℞ लिनकोमाइसिटिन (Lincomycetin) २५०–५०० मि०ग्रा०
मात्रा—१ कै० प्रति ८ घण्टे पर।

यदि फिर भी रेसिस्टेन्ट हो तो—

℞ इञ्जे० जेण्टामाइसिन (Inj. Gentamycin) ८० मि० ग्रा०
मात्रा—१ इञ्जे० प्रति ८ घण्टे पर I/M

ब्रान्को-स्पाज्म के लिए—

℞ इञ्जे० एमीनोफायलिन ५०० मि० ग्रा०
मात्रा—१ इञ्जे० I/V धीरे-धीरे।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—सालबुटामोल टेबलेट दिन में २ बार।

अथवा—टे० डेरीफाइलीन प्रति रिटार्ड (Deriphyline Retard)

परसिस्टेण्ट स्पाज्म के लिए—

℞ प्रेडनीसोलोन (Prednisolone)

मात्रा—४० मि० ग्रा० नित्य ७ दिन तक। तत्पश्चात् १० मि० ग्रा० नित्य।

आवश्यक निर्देश—१. यदि उपरोक्त एण्टीबायोटिक औषधियों से संतोष जनक लाभ न मिल रहा हो तो एण्टीबायोटिक, एक्सपेक्टोरेण्ट आदि योगों के साथ स्टेरॉइड्स का प्रयोग करना चाहिए।

२. कफ का संवर्धन एवं सुग्राहिता परीक्षण (Culture and sensitivity test) करवाने के पश्चात् उपयुक्त एण्टीबायोटिक को प्रयोग में लाना चाहिए।

३. ज्वर और पीड़ा की स्थिति में 'पैरासिटामोल' का प्रयोग करें।

४. जब दीर्घकाल तक चिकित्सा की आवश्यकता पड़े तब टेट्रासाइक्लीन और एम्पीसिलीन केवल २५० मि० ग्रा० की मात्रा में दिन में ४ बार दें।

○ ट्राईमेथोप्रिम सल्फा मिश्रण बनाकर देना प्रभावकारी है।

मिश्रित औषधि चिकित्सा—

℞ इफेड्रीन हाइड्रोक्लोराइड	१६ मि० ग्रा०
फीनोबार्बीटोन	१६ मि० ग्रा०
पापावेरीन हाइड्रोक्लोराइड	८ मि० ग्रा०
प्रेडनीसोलोन पाउडर	२·५ मि० ग्रा०
थियोफाइलीन पाउडर	१०० मि० ग्रा०
सीरप वसाका	१० मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार दें।	१ मात्रा।

बालक—$\frac{1}{4}$–$\frac{1}{3}$ मात्रा दिन में ३ बार।

नोट—इससे खाँसी दूर होकर रोगी को नींद आती है।

क्रॉनिक ब्रॉन्काइटिस में प्रयुक्त अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. एस्थालिन (Asthalin) (सिपला)। १-२ गोली दिन में ३-४ बार।

एस्थालिन एस० ए० (Asthalin S. A.)। १-२ गोली प्रातः, सायं एवं रात में।

एस्थालिन सीरप (Asthalin syrup)। ५-१० मिली० दिन में ३ बार।

नोट—सूंघने के लिए 'Asthalin inhaler भी आता है।

२. ब्रॉन्को-प्लस सीरप (Bronko-plus syrup) (बिडल शायर)

मात्रा—५ मिली० दिन में ३-४ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. हिफाइलिन (Hiphyllin) (लाइका)
मात्रा—वयस्क—२ मिली० I/M या A/V धीमी गति से।
बालक—२५-१०० मि० ग्रा०।
४. सालमोडिल (Salmodil) (F. D. C.)
मात्रा—१ गोली दिन में ३-४ बार।
इसका सीरप भी आता है—
मात्रा—१·५–५ मिली० दिन में ३-४ बार।
५. रेस्पीनेक्स कफ लिक्टस (Respinex cough linctus) (एलेम्बिक)
मात्रा—१० मिली० (२ चम्मच) प्रति ६ घण्टे पर।
साथ ही—एम्बिस्ट्रीन (साराभाई)
मात्रा—१ ग्राम I/M इन्जेक्शन के रूप में।
६. टरबूटालीन-एस्ट्रा (Terbutaline Astra) (Astra-I D L)
मात्रा—१-२ गोली प्रति ८ घण्टे पर।
नोट—इसका इञ्जे० और सीरप भी आता है।

७. टरबूटालीन (सिपला)—१-२ गोली प्रति ८ घण्टे पर। ७ साल से कम के बालकों को न दे।

८. टरगिल (Tergil) (M. M. Lab.)
मात्रा—२ गोली दिन में २-३ बार। इसका एक्स्पेक्टोरेण्ट भी आता है।
९. थियोसाल (Theosal) (मायो)—१ गोली दिन में ३ बार।
इसका सीरप भी आता है। मात्रा—५ मिली० दिन में ३ बार।
१०. टरबूसिन एक्स्पेक्टोरेण्ट (Terbucin expectorent) (वैलेसी)
मात्रा—बालक—२·५-१० मिली० दिन में ३-४ बार।
वयस्क—१०-१५ मिली ३-४ बार।

विशेष चिकित्सा—

१. यदि वायुनलिकाओं में संक्रमण हो तो—

℞ मैड्रीबोन (Madribon) (रोशे) २ गोली पहले दिन। तत्पश्चात् १ गोली प्रति दिन। आवश्यकता पड़ने पर १ सप्ताह का अंतर देकर पुनः खिलावें।

अथवा—पेण्टिड २ लाख यूनिट की १ गोली दिन में ३ बार चूसने को दें।

२. सांस लेने की कठिनाई में—

℞ एफेड्रीन हाइड्रोक्लोराइड	१५ मि० ग्रा०
एमीनोफाइलिन	१८० मि० ग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार दें।	१ मात्रा।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. पुराने संक्रमण में—

℞ सल्फाडायाजीन	१ गोली
ओरिसूल	१ गोली
सल्फामेराजीन	१ गोली
कोरामीन एफेड्रीन	१ गोली
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर पानी से।

नोट—इससे सुगमता से कफ निकल जाता है।

अथवा—℞ रॉशिलीन (रैनबैक्सी) २५० मिग्रा०	१ कैप्सूल
डेक्सोना (कैडिला)	१ गोली
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार। बच्चों को $\frac{१}{६}$ मात्रा मधु या फलों के रस में।

अथवा—℞ टैरामाइसिन एस० एफ० (फाइजर)	१ कैप्सूल
डेकाड्रोन (एम० एस० डी०)	१ गोली
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार दें। बालकों को आयु के अनुसार औषधि पीस कर कई मात्राओं में विभक्त कर मधु या शर्बत में दें। ⊡

श्वसन-संस्थान के रोग 2/4

फुप्फुसशोथ
(Pneumonia)

पर्याय—न्यूमोकोकल न्यूमोनिया, एक्यूट लोबर न्यूमोनिया, न्यूमोन लंग्स (Pneumon lungs), श्वसनक ज्वर, फुफ्फुसपाक, फुफ्फुसप्रदाह, कर्कोटक सन्निपात, रक्तष्ठीवी सन्निपात आदि।

परिचय—फुप्फुसों में शोथ की उत्पत्ति को 'न्यूमोनिया' कहते हैं। यह एक विशेष प्रकार का ज्वर है, जिसमें फेफड़े शोथयुक्त हो जाते हैं और छाती में दर्द होता है। कष्टदायक खाँसी के साथ मोर्चा (Rust) के रंग का गाढ़ा चिपचिपा झाग युक्त बलगम आता है। साँस कठिनाई से आती है एवं साँस जल्दी-जल्दी चलती है। साँस लेते समय नाक के नथुने धौंकनी की भाँति फूलते हैं। बार-बार प्यास लगती है। ज्वर १०४° फा० तक चढ़ जाता है। जिस ओर का फेफड़ा सूजा होता है उस ओर का गाल अधिक गुलाबी हो जाता है।

○ **It is an inflammation of the pulmonary tissue proper, or parenchymatous inflammation—occurs in two forms. The first**

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

and more acute is, from its area of distribution, termed 'Lobar pneumonia.'

The second, termed 'Broncho-pneumonia' is a much less clearly defined entity. Broncho-pneumonia is due to a number of different pathological process, with a corresponding variation in the symptoms and signs.

—*Savill's System of Clinical Medicine.*

फुप्फुसशोथ 'डिप्लोकोकाई' के उपसर्ग से होने वाला तीव्र स्वरूप का ज्वर है, जिसमें पार्श्वशूल, कास आदि लक्षणों के साथ फेफड़े के एक या अनेक खण्डों में ठोसपन आ जाता है। यह रोग प्रायः वयस्कों में मिलता है।

○ शिशुओं और बालकों में जो न्यूमोनिया होता है उसे 'ब्रॉन्को-न्यूमोनिया' कहते हैं। इसका वर्णन पृथक् से अग्रिम अध्याय (२/५) में किया गया है।

○ इस रोग में शोथ केवल फेफड़े के खण्डों (Lobes) तक ही सीमित रहता है। इसलिए वयस्कों में प्रायः मिलने वाले न्यूमोनिया को 'खण्डीय न्यूमोनिया' (Lober pneumonia) कहना अधिक उचित प्रतीत होता है।

कारण (Etiology)—

१. मुख्य उत्पादक कारण—अधिकांश में इस रोग की उत्पत्ति 'डिप्लोकोकाई' एवं 'न्यूमोनी' (न्यूमोकोकस) के ह्रास से होती है। कभी-कभी 'स्टेफिलोकोकाई', क्लैब्सियेला न्यूमोनी, टचुबरकुलोसिस बैक्टीरिया आदि कुछ प्रकार के स्ट्रेप्टोकोकाई तथा कुछ प्रकार के वायरस भी न्यूमोनिया उत्पन्न करते हैं।

२. सहायक कारण—१. यह स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में अधिक होता है तथा १५ से ४० वर्ष की अवस्था में इसका प्रकोप अधिक होता है।

३. वातावरण में सर्दी-गर्मी के परिवर्तन से इसका आक्रमण अधिक होता है।

४. शीतकाल के प्रारम्भ में तथा बाद में इससे अधिकांश व्यक्ति पीड़ित होते हैं।

५. जीर्ण कोराइजा, जीर्ण वृक्कशोथ, कालाजार, रक्तक्षय आदि से ग्रसित व्यक्तियों में न्यूमोनिया अधिक होता है।

६. हीन भोजन, अत्यधिक शारीरिक परिश्रम, धातुक्षय, पानी में भीगने तथा वक्ष पर चोट लगने आदि कारणों से।

७. ऑपरेशन के समय मूर्च्छित अवस्था में मुख से संचित स्राव आदि का निःश्वास के साथ फुप्फुस में प्रचूषण हो जाने के कारण।

८. सहसा शीत लग जाने से भी लोग इससे प्रभावित हो जाते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. बन्द कमरे में रहने वाले ऐसे व्यक्तियों में जिनकी शारीरिक प्रतिरोधक शक्ति अवस्था के कारण अथवा दीर्घकालिक रोग के कारण कम हो गई है तथा जुकाम और फ्लू के वायरस के कारण जिनके श्वासमार्ग को क्षति पहुँच गई है, उनके फेफड़ों में शीत लगकर न्यूमोनिया हो जाता है।

संक्रमण (Infection)—रोगी या रोग-निवृत्त पुरुष के खाँसने, छींकने, थूकने से उसके सूक्ष्म कण स्वस्थ व्यक्ति के शरीर में पहुँचकर रोग पैदा कर देते हैं।

वर्गीकरण (Classification)—लोबर न्यूमोनिया निम्न ४ प्रकार का होता है—

१. बैक्टेरियल न्यूमोनिया (Bacterial pneumonia)—यह विभिन्न प्रकार के जीवाणुओं से उत्पन्न होता है। इसमें स्ट्रेप्टोकोकस ऑरियस, न्यूमोकोकस, स्ट्रेप्टोकोकस पायोजिनीज, क्लैब्सीला निमोनी आदि प्रमुख हैं।

२. रिकेट्सियल न्यूमोनिया (Rickettsial pneumonia)—इस प्रकार के न्यूमोनिया को 'रिकेटसिया ग्रुप' के कुछ जीवाणु उत्पन्न करते हैं।

३. वाइरल न्यूमोनिया (Viral pneumonia)—यह एक विशेष प्रकार के वाइरस से उत्पन्न होता है।

४. चूषण न्यूमोनिया (Aspiration pneumonia)—○ इस प्रकार का न्यूमोनिया श्वसन-मार्ग में पूर्व से ही उपस्थित स्राव के फेफड़ों के अन्दर पहुँचने से उत्पन्न होता है। स्रावों के साथ विभिन्न जीवाणु भी फेफड़े में प्रवेश कर जाते हैं और वहाँ पर शोथ उत्पन्न कर देते हैं।

○ कभी-कभी दाँत, टॉन्सिल्स (Tonsils) और गले आदि का ऑपरेशन होने पर इन स्थानों पर उपस्थित संक्रमित पूय-सा रक्त आदि के श्वासनलिका में पहुँच जाने पर भी इस प्रकार का न्यूमोनिया हो जाता है।

○ बेहोशी की अवस्था या वृद्धावस्था में जब रोगी ऊर्ध्वश्वासमार्ग में एकत्रित संक्रमित श्लेष्मा को बाहर नहीं निकाल पाता है, परिणामस्वरूप फुप्फुस में शोथ उत्पन्न हो जाता है। जिससे चूषण न्यूमोनिया हो जाता है।

○ वास्तव में चूषण न्यूमोनिया एक प्रकार का जीवाणुजन्य (वैक्टेरियल) न्यूमोनिया ही होता है। इसमें और वैक्टेरियल न्यूमोनिया में अंतर केवल इतना ही होता है कि चूषण न्यूमोनिया में जीवाणु मुँह, ग्रसनी, स्वरयंत्र, नासाविवरों तथा अन्य विवरों में पहले से ही शोथ अथवा पूय उत्पन्न किये होता है और शोथ के कारण जो श्लेष्मा बनता है, वही नीचे फुप्फुसों में खिसक कर उसके टिसूज में शोथ उत्पन्न कर देता है। जबकि अन्य न्यूमोनिया में जीवाणु वायु द्वारा स्वस्थ व्यक्ति के फेफड़ों में पहुँच कर विकृति उत्पन्न कर देता है।

इन्क्यूबेशन पीरियड (Incubation period)—१-२ वर्ष का ही होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—इनमें 'लोबर न्यूमोनिया' विशेष महत्त्व रखता है, जिनका लक्षणों एवं चिह्नों के अनुसार वर्णन किया जा रहा है। वैसे अन्य उपरोक्त न्यूमोनिया के लक्षण लगभग समान ही होते हैं।

लक्षण एवं चिह्न (Symptoms & signs)—

१. **तापक्रम** (Temperature)—१०३-१०५° फा० (३८·९–४०·५° सें०) तक। बुखार ८०% रोगियों में सर्दी तथा कँपकँपी के साथ आता है। इस प्रकार बुखार तीव्र बना रहता है। इसके साथ ही सर्वांग शैथिल्य के लक्षण भी अधिक मिलते हैं।

२. **श्वास-प्रश्वास**—रोगी में कुछ-कुछ श्वासकृच्छ्रता के लक्षण मिलते हैं। श्वास-प्रश्वास की कठिनता के कारण रोगी के नथुने हिलते-से प्रतीत होते हैं। ○ यह सभी लक्षण विषसंचार (न्यूमोकोकस टॉक्सीमिया) तथा कभी-कभी श्वासकाठिन्य के कारण होते हैं।

३. **पार्श्वशूल** (Chest pain)—लगभग ७०% रोगियों में प्रारम्भ से ही एक पार्श्व में विशेषकर दाहिनी ओर चुभने जैसा दर्द होता है। यह दर्द श्वास लेते समय तथा खाँसते समय अधिक होता है। यदि दर्द प्लूरा में 'न्यूमोकोकाई' के पहुँच जाने तथा उसके कारण शोथ के उत्पन्न हो जाने से होता है, तब रोगी इस शोथ युक्त प्लूरा के बल लेटता है, क्योंकि ऐसा करने से उसे दर्द में कमी महसूस करता है।

४. **कास/खाँसी**—रोगी को हलकी शुष्क खाँसी आती है। चूंकि खाँसने पर छाती में दर्द होता है, इसलिए वह खाँसी को कुछ दबाकर खाँसता है। यह खाँसी श्वासनलिओं के खुश्क एवं विक्षुब्ध होने से उत्पन्न होती है।

५. **श्लेष्मा** (Sputum)—७५% रोगियों में एक या दो दिन बाद गुलाबीपन लिए झागदार बलगम निकलने लगता है। इसमें रक्तकण, एपीथैलियम के सेल तथा न्यूमोकोकाई होते हैं। जैसे-जैसे इस बलगम की मात्रा बढ़ती है, छाती का दर्द कम होता जाता है। इस रोग में निकलने वाला बलगम चमकीला होता है।

६. **प्रलाप**—नाड़ी के निर्बल होने पर रोगी कुछ-कुछ प्रलाप भी करने लगता है।

७. **विष-संचार के कारण**—निर्बलता, सिरदर्द, सम्पूर्ण शरीर में पीड़ा, भूख की कमी, कन्फ्यूजन आदि लक्षण होते हैं।

○ कुछ रोगियों में १०-१५ दिन सर्दी-जुकाम रहने के बाद न्यूमोनिया का आक्रमण हो जाता है, जबकि अन्य रोगियों में अचानक आक्रमण होता है।

चिह्न (Signs)—**सामान्य निरीक्षण** (General survey)—

१. रोगी प्रायः टॉक्सिक होता है। चेहरा तमतमाया हुआ, नथुने हिलते हुए तथा केन्द्रीय श्यावता (Central cyanosis) के लक्षण उपस्थित मिलते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. तीव्रगत नाड़ी (Rapid pulse), तीव्र श्वास तथा नाड़ी और श्वास का अनुपात २ : १ का होता है, जो इस रोग का प्रमुख लक्षण है।

३. होठों पर छोटे-छोटे दानें (हर्पीज लेनियेसिस) उपस्थित मिलते हैं।

४. रक्तचाप गिरा हुआ (Hypotension), कभी-कभी पाण्डु (Jaundice), उच्च तापक्रम (High temperature), त्वचा गर्म तथा गर्दन अकड़ी हुई मिलती है।

निदानात्मक परीक्षा (Diagnostic test)—१. परीक्षा करने पर रोगी के शरीर में शिथिलता, श्वास-प्रश्वास की तीव्रता तथा चेहरे पर चिन्ता दीखती है।

२. नाड़ी की गति ११० से १२० बार प्रति मिनट दीर्घ तथा कम दबाव की होती है। श्वास की गति ३० से ४० बार प्रति मिनट होती है। इन दोनों का अनुपात २ : १ और कभी-कभी ३ : १ का भी मिलता है।

३. श्वास-मांसपेशियाँ अधिक चेष्टाशील दिखलाई देती हैं। श्वास की यह तीव्रता फेफड़े के एक खण्ड के ठोस हो जाने के कारण विष-संचार से होती है।

४. रोगी रुग्ण फेफड़े के बल लेटता है अथवा पीठ के भार पर लेटता है।

५. रोगी की जिह्वा मैली, खुश्क तथा श्वेत मिलती है।

६. उसकी त्वचा गर्म, खुश्क तथा होंठों पर नीलिमा होती है।

७. वायु-प्रकोष्ठों में चिपचिपे द्रव के उत्पन्न हो जाने पर श्रवणयंत्र द्वारा सुनने से अन्तःश्वास के अन्त में बालों के रगड़ने की आवाज (Fine rales) या क्रेपीटेशन सुनाई पड़ती है। फेफड़े के ठोस हो जाने पर श्वास-प्रश्वास की आवाज ट्यूबलर या ब्रॉन्क्रियल हो जाती है और टकोर मन्द होती है।

८. रोगग्रस्त फेफड़ा श्वास के साथ कम फैलता है। वाचक कम्पन बढ़ा हुआ मिलता है।

९. रोग के अच्छा होने पर श्रवण-यंत्र (स्टेथिस्कोप) से सुनने पर नालियों में पतले स्राव के कारण बुलबुलों के फटने की-सी आवाज (कोर्स क्रेपीटेशन) अन्तः तथा बहिः दोनों श्वासों के साथ सुनाई पड़ती है।

१०. रक्त-परीक्षा (Blood test)—श्वेतकणों की संख्या १५-३० हजार तक बढ़ी हुई मिलती है। रक्त का कल्चर सदैव पोजीटिव (+) मिलता है।

११. रक्तभार (B. P.)—घटा हुआ मिलता है।

१२. थूक-परीक्षा (Sputum test)—डिप्लोकोकाई तथा पूय कोआओं की अधिकता मिलती है। क्लोराइड की मात्रा भी अधिक होती है।

१३. मूत्र-परीक्षा (Urine test)—मूत्र की मात्रा अल्प, उसमें शुक्ल की उपस्थिति और क्लोराइड की मात्रा स्वस्थावस्था से कम होती है। मूत्र की आपेक्षिक गुरुता तथा अम्लीयता अधिक होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—थूक-बलगम की परीक्षा कल्चर के करने से होती है। यह परीक्षा इस रोग में विशेष महत्त्व रखती है, ताकि जिस जाति का जीवाणु हो, उसपर अधिक से अधिक प्रभावशाली एण्टीबायोटिक औषधि दी जा सके।

१४. एक्स-रे परीक्षा—विकृत पार्श्व की घनता की परीक्षा रोग की प्रारम्भिक अवस्था में इसके द्वारा आसानी से हो जाती है। ○ इसमें प्रभावित भाग पर ओपेसिटी (Opacity) मिलती है।

रोग की अवधि—टेम्परेचर की चिकित्सा करने पर ७–१० दिनों में क्रिसिस (Crisis) द्वारा गिर जाता है।

भावीफल (Prognosis)—○ न्यूमोकोकल न्यूमोनिया में ५%, स्टेफिलोकोकल एवं क्लेब्सीला न्यूमोनिया में २५ से ४०% तक की मृत्युदर होती है।

○ अधिक आयु, जॉण्डिस, हृदयनिपात (Cardiac failure), एन्यूरिया आदि का पूर्वानुमान दयनीय होता है।

नोट—यदि रोगी की चिकित्सा तुरन्त नहीं की गई तो अनेक प्रकार के उपद्रव पैदा हो जाते हैं। जिनका अन्त रोगी की मृत्यु के साथ ही होता है।

उपद्रव (Complications)—

(क) **सामान्य**—१. हाइपरपाइरेक्सिया, २. सेप्टीसीमिया, ३. डिलेज रेसोलूशन तथा ४. निम्न विटेलिटी आदि।

(ख) **पल्मोनरी**—१. लंग्स एब्सिस, २. पूययुक्त न्यूमोनाइटिस, ३. प्लूरल इफ्यूजन (४–८%), ४. इम्पाइमा (०·५% से २%), ५. श्वसननिपात (Respiratory failure), ६. केपिंग या डबल न्यूमोनिया तथा ७. फेफड़े का गैंग्रीन।

(ग) **कार्डियो-वेस्कुलर** (Cordio-vascular)—१. हाइपोटेन्शन (न्यून रक्तचाप), २. गहरी शिराओं का थ्रोम्बोसिस, ३. पेरीफेरल सरक्यूलेटरी फेल्योर, ४. पायोपेरी-कार्डाइटिस, ५. कंजेस्टिव कार्डियक फेल्योर तथा ६. एक्यूट इण्डोकार्डाइटिस।

(घ) **आन्त्र सम्बन्धी** (Alimentary)—१. ऑब्स्ट्रक्टिव जॉण्डिस, २. पेरिटोनाइटिस, ३. आमाशय की तीव्र वृद्धि (Acute dilatation of stomach), ४. एब्डॉमिनल डिस्टेन्शन तथा ५. पैरालिटिक इलियस।

(ङ) **न्यूरोलॉजिकल**—१. मेनिञ्जाइटिस तथा २. मेनिञ्जिज्म।

(च) **मूत्र सम्बन्धी** (Renal)—ओलीगूरिया (एनूरिया के समय)।

(छ) **आकुलर** (Ocular)—न्यूमोकोकल कञ्जक्टिवाइटिस।

(ज) **कान सम्बन्धी**—तीव्र पूययुक्त मध्यकर्ण शोथ (Acute suppurative otitis media)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(झ) **अस्थि-जोड़ सम्बन्धी**—ऑस्टियोमलेसिया, पूययुक्त आर्थ्राइटिस।

विशिष्ट उपद्रव—टॉक्सीमिया (रक्तविष-संचार) का प्रभाव हृदय पर पड़ कर 'हार्ट-फेल्योर' से रोगी की मृत्यु हो जाती है।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—इस रोग का निम्न रोगों से विभेद करना चाहिए—

१. प्लूरल इफ्यूजन (Pleural effusion)।
२. फुप्फुसनिपात (Lungs collapse)।
३. पल्मोनरी इम्बोलिज्म (Pulmonary embolism)।
४. पल्मोनरी ट्युबरकुलोसिस (Pulmonary tuberculosis)।
५. ब्रॉन्को-न्यूमोनिया (Broncho-pneumonia)।

○ इसमें ब्रॉन्को-न्यूमोनिया विशेष महत्त्व रखता है, जिसका अन्तर नीचे दिया जा रहा है—

लोबर न्यूमोनिया (Lobar pneumcnia)	ब्रान्को-न्यूमोनिया (Broncho-pneumonia)
१. जीवाणु—मुख्यरूप से डिप्लोकोकस, न्यूमोनाई द्वारा होता है।	१. मुख्य रूप से स्ट्रेप्टो-हीमोलिटिकस से।
२. वयस्कों में अधिक होता है।	२. शिशु, बालकों तथा वृद्धों में अधिक होता है।
३. प्रायः शीतऋतु के पश्चात् होता है।	३. यह खाँसी के उपद्रव स्वरूप होता है।
४. विकृति दाहिने खण्ड में स्थिति होती है।	४. दोनों फेफड़े प्रभावित होते हैं।
५. इसका आरम्भ तीव्र होता है।	५. इसका आरम्भ अपेक्षाकृत् धीरे-धीरे होता है।
६. विषमयता कम रहती है।	६. विषमयता अधिक रहती है।
७. होठों पर छोटे-छोटे दाने निकलते हैं।	७. दाने प्रायः अनुपस्थित रहते हैं।
८. टेम्परेचर उच्चतम तथा बराबर रहने वाला।	८. रेमीटेण्ट टाइप का रहता है।
९. नाड़ी तथा श्वसन में पर्याप्त अनुपात (२ : १) मिलता है।	९. प्रायः दोनों में अनुपात नहीं मिलता है।
१०. कोर्स ७-१० दिनों का होता है।	१०. कोर्स अधिक दिन का होता है।
११. उपद्रव प्रायः अनुपस्थित होते हैं।	११. उपद्रव प्रायः कामन होते हैं।
१२. पूर्वानुमान (Prognosis) प्रायः अच्छा होता है।	१२. इसमें अच्छा नहीं होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३. बलगम (श्लेष्मा) गुलाबी रंग का झागदार आता है, जो प्रायः चमकीला होता है।	१३. बलगम पतला आता है। यह चमकीला तथा चिपचिपा नहीं होता है।
१४. तापक्रम-बुखार सहसा प्रारम्भ होकर बराबर बना रहता है। यह ७-१० दिन तक रहता है।	१४. इसमें तापक्रम न्यूनाधिक होता है। सहसा आरम्भ न होकर अज्ञातरूप में होता है। एक हफ्ते से अधिक समय तक रहता है।
१५. इसमें खाँसी अधिक स्पष्ट नहीं रहती हैं।	१५. इसमें खाँसी का लक्षण अधिक स्पष्ट रहता है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. पूर्ण विश्राम तथा हवा का उचित प्रबन्ध हो, किन्तु यह ध्यान रहे कि रोगी को शीत न लगने पाये।

२. प्रथम इस रोग में प्राणवर्धक (Suppurative) चिकित्सा करनी चाहिए। रोगी को एक गर्म कमरे में जिसका तापक्रम ६५° फा० के लगभग हो, आराम से लिटाकर रखना चाहिए।

३. रोगी को पर्याप्त मात्रा में द्रव आहार दें।

४. रोगी को दूध, चाय और फलरस का आहार देना चाहिए। १ पाइण्ट गर्म जल में १२० ग्राम डेक्स्ट्रोज + १ सन्तरे का रस मिलाकर दें। २४ घण्टे में कम से कम द्रव आहार देना चाहिए।

५. रोगी को जल पर्याप्त मात्रा में दें।

६. रोगी को रात में नींद न आये और प्रलाप बना रहे तो प्राणशक्ति कम हो जाती है। इसलिए सोने से पूर्व उसे गर्म जल का प्याला जिसमें नीबू का रस तथा ग्लूकोज मिला हो, पिला देना चाहिए। यदि इससे भी नींद न आये तो ३-४ ड्राम ब्राण्डी मिलाकर दें।

७. ○ न्यूमोनिया एक बहुत गम्भीर रोग है। अतः ऐसा निश्चित होते ही इसकी तत्काल चिकित्सा प्रारम्भ कर देनी चाहिए, ताकि रोगी के जीवन की रक्षा हो सके।

○ लेबोरेटरी की रिपोर्ट आने में २-३ दिन लग सकते हैं, तब तक अनुभव के आधार पर चिकित्सा प्रारम्भ कर देनी चाहिए। रिपोर्ट आने पर रोग के लिए उत्तरदायी जीवाणु पर विशिष्ट प्रभाव रखने वाली औषधि दी जा सकती है।

८. ज्वर के आक्रमण के समय रोगी को पर्याप्त जाड़ा लगता है। ऐसी स्थिति में गर्म पानी की बोतलें पार्श्व एवं पैर आदि के आस-पास रखने से

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा शय्या के निकट धूम रहित अँगीठी रखने से रोगी को पर्याप्त शान्ति मिलती है।

९. रोग की तीव्रावस्था में विशेषकर हृदय के दुर्बल हो जाने पर रोगी को मलत्याग में कष्ट होता है। उठने-बैठने के कारण हृदय-निपात की सम्भावना रहती है। अतः ज्वर के आक्रमण के २-३ दिन बाद सामान्यतः रेचन औषधि (Purgative drug) का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

(२) स्थानीय चिकित्सा (Local treatment)—

१. पार्श्वशूल, श्वासकृच्छ्र, बेचैनी आदि से रोगी को बहुत कष्ट होता है। अतः इन लक्षणों की शान्ति के लिए पैर के तलवों में घी की मालिश या निद्राकर औषधियों का प्रयोग करना चाहिए। पार्श्वशूल की शान्ति के लिए तीसी की पुल्टिस अथवा एण्टीफ्लोजिस्टीन की पुल्टिस दिन में ३ बार लगाना चाहिए। विकृत पार्श्व को नमक की पोटली से भी सेंका जा सकता है।

२. छाती पर सफेद तेल या लिनीमेण्ट टरपेण्टाइन की मालिश करके ढँक कर रखना चाहिए।

३. श्यावता (Cyanosis) के निराकरण हेतु नेजल कैथेटर अथवा मास्क से ऑक्सीजन दें।

४. ज्वर बहुत बढ़ जाने पर शिर के ऊपर बर्फ की थैली रखें।

५. बच्चों की छाती, पीठ और गले में 'विक्स वेपोरब मलहम' लगाते रहें।

(३) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

○ इसकी विशिष्ट औषधि 'पेनिसिलीन' है।

१. ℞ बेन्जिल पेनिसिलीन (क्रिस्टापेन) ५-१० लाख यूनिट

मात्रा—मांसपेशीगत प्रति ६ घण्टे पर २४ घंटे तक। तत्पश्चात्—

५ लाख यूनिट मांसपेशीगत प्रति ८ घण्टे पर अगले ४ दिन तक।

तत्पश्चात्—५ लाख यूनिट मांसपेशीगत प्रति १२ घण्टे पर ३ दिनों तक।

अथवा—सूचीवेध के कष्ट से बचने के लिए—

℞ पेनिसिलीन फेनोक्सीमेथिल (क्रिस्टापेन वी) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१-२ गोली प्रति ६ घण्टे पर भोजन से ½ घण्टे पूर्व।

अथवा—एम्पीसिलीन (Ampicillin) ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कै० प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—एमोक्सीसिलिन (Amoxycillin) ५०० मि० ग्रा० प्रति ८ घण्टे पर।

यदि रोगी पेनिसिलिन के प्रति सुग्राहित (Sensitive) हो तो—

℞ सेफैलेक्सिन (Cephalexin)

अथवा—स्पोरिडेक्स (Sporidex) ५०० मि० ग्रा०।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१ कै० प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—सेफेलोरीडीन इञ्जे० (Cephaloridine Inj.)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० मांसपेशीगत प्रति ६ घण्टे पर।

निर्देश—यदि रोगी श्यावता (Cyanosis), जलाल्पता (Dehydration), निपात (Shock), जड़िमा (Stupore) एवं/अथवा ऑलीगूरिया से गम्भीर रूप से पीड़ित हो तो उसे हॉस्पिटल में भर्ती करा देना चाहिए।

स्टेफिलोकोकल न्यूमोनिया में—

℞ क्लोक्सासिलिन (Cloxacillin) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कै० प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—इञ्जे० क्लीक्सासिलिन २५० मि० ग्रा०

मात्रा—२५० मि० ग्रा० I/M प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—लिनकोमाइसेटिन (Lincomycetin) ५०० मि० ग्रा० कैप्सूल।

मात्रा—१ कै० प्रति ८ घण्टे पर भोजन से २ घण्टे पूर्व।

अथवा—फ्लूक्लोक्सासिलिन (Flucloxacillin) २५० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर।

क्लेब्सीलाजन्य न्यूमोनिया में (Klebsiella pneumonia)—

℞ क्लोरम्फेनिकॉल (Chloramphenicol)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—जेण्टामाइसिन १-५ मि० ग्रा० प्रति ८ घण्टे पर।

'सेफेलोस्पोरिन' १-२ ग्राम I/V प्रति ४ से ६ घण्टे पर।

स्युडोमोनास जन्य न्यूमोनिया (Pseudomonas pneumonia)—

℞ इञ्जे० जेण्टामाइसिन (Inj. Gentamycin)

मात्रा—८० मि० ग्रा० प्रति ८ घण्टे पर।

इञ्जे० कार्बेनिसिलिन (Inj. Carbanicillin) १ ग्राम वीयल

मात्रा—३० ग्राम तक I/V अथवा I/M इञ्जे० २४ घण्टे में।

अथवा—टिकारसिलिन (Ticarcillin)

मात्रा—१५-२० ग्राम। नित्य मांसपेशीगत १० दिनों तक।

इन्फ्लूएञ्जा इपीडेमिक—

℞ इञ्जे० बेञ्जिल पेनिसिलीन (Inj. Benzyle penicillin)

मात्रा—१० लाख यूनिट प्रति ४ घण्टे पर।

क्लोरम्फेनिकॉल (Chloramphenicol)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० प्रति ४ घण्टे पर।

चूषण न्यूमोनिया (Aspiration pneumonia)—

℞ इञ्जे० बेञ्जिल पेनिसिलिन

मात्रा—५ लाख यूनिट I/M प्रति ६ घण्टे पर।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इञ्जे० यूनीमीजोल (Inj. Unimezol) I/V ड्रिप द्वारा
मात्रा—५४० मिली० (२ मि० ग्रा०/मिली०)
अथवा—इञ्जे० मेट्रोजिल (Inj. Metrozyl)
मात्रा—१०० मिली० (५०० मि० ग्रा०) २० मिनट में इन्फ्यूजन के रूप में।

लाक्षिणक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—उपर्युक्त चिकित्सा के साथ-साथ रोग की लाक्षणिक चिकित्सा भी करनी पड़ती है—

१. कास (Cough)—'कोडीन फॉस्फेट' १५-३० मि० ग्रा० तथा 'लिक्टस फोल्कोडिन' २-४ मिली० मुख से दें।

अथवा—पिरिटॉन एक्स्पेक्टोरेण्ट (Piriton expectorant) (ग्लैक्सो) आधा-आधा चम्मच दें।

२. छाती में दर्द होने पर—

℞ एस्प्रिन	६०० मि० ग्रा०
फेनिसिटीन	१८० मि० ग्रा०
कोडीन फॉस्फेट	१० मि० ग्रा०
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार दें।
साथ ही—डोलोपार (Dolopar) (माइक्रो लैब्स)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार दें।
बच्चों के लिए इसका शर्बत आता है—
मात्रा—२·५ से ५ मिली०। वयस्कों को—१० मिली० दिन में ३ बार।
निषेध—वृक्क तथा यकृत् विकार में बहुत सतर्कता के साथ प्रयोग करें।
छाती और पीठ पर लिनीमेण्ट टर्पेण्टाइन की मालिश करें। अथवा 'विक्स वेपोरब' की माालिश करें।

३. प्रलाप में (Delious patient)—
पेरिल्डिहाइड ६-८ मिली० I/M अथवा फीनोथायलीन योग दें।

४. रक्तचाप का गिरना (Hypotension) **अथवा पेरिफेरल सरक्यूलेटरी फेल्योर में—**
ग्लूकोज सैलाइन, सरक्युलेटरी स्टीम्युलेण्ट तथा हाइड्रोकार्टीसोन देना प्रारम्भ कर देना चाहिए।

५. प्लूरा के दर्द हेतु (Pleural pain)—कोडीन फॉस्फेट १५-३० मि० ग्रा० मुख द्वारा अथवा गम्भीर अवस्था में 'पेथिडीन हाइड्रोक्लोराइड' १०० मि० ग्रा० I/M दें।

○ यदि उपरोक्त चिकित्सा प्रारम्भ करने के ४८ घण्टे पश्चात् तक रोग-शमन के कोई लक्षण दृष्टिगत न हों और ज्वर बराबर बना रहे तो चिकित्सक

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को पुनः रोगी की परीक्षा करनी चाहिए। न्यूमोकोकस जन्य न्यूमोनिया के स्थान पर फेफड़े के अन्य रोग की भी सम्भावना हो सकती है अथवा सम्भव है यह रोगोत्पादक बैक्टीरिया पेनिसिलीन से प्रभावित होने वाला रोग न हो।

○ स्राव युक्त प्लूरिसी, इम्पाइमा, फुप्फुस-विद्रधि, यक्ष्मा (T. B.), मेनिञ्जाइटिस अथवा इण्डोकॉर्डाईटिस आदि की सम्भावना हो सकती है।

○ रोगी के बलगम की रिपोर्ट से भी इसके निर्णय में सहायता मिलती है।

○ यदि रिपोर्ट में रोगोत्पादक जीवाणु का स्पष्ट उल्लेख हो तो आगे दी गई तालिका के अनुसार उस जीवाणु पर प्रभावशाली औषधि देना प्रारम्भ कर देना चाहिए—

जीवाणु	पेनिसिलिन (Penicillin)	स्ट्रेप्टोमाइसिन (Streptomycin)	टेरामाइसिन (Terramycin)	एम्पीसिलीन (Ampicillin)	एरिथ्रोमाइसिन (Erethromycin)	को-ट्रीमेथेक्साजोल (Co-trimothexazole)
न्यूमोकोकाई	+ + +	०	+ —	+	+	+
स्टैफिलोकोकाई	+ —	०	०	+	+	+
एच० इन्फ्लूएञ्जी	+ —	०	+ +	+ +	+	+ +
के० न्यूमोनी	०	+ —	+	+	+ —	+
माइक्रोप्लाज्मा न्यूमोनी	०	+	+ +	०	+ +	०

संकेत — + + + अत्यन्त प्रभावशाली।
+ + अच्छी प्रभावशाली।
+ प्रभावशाली।
+ — प्रभाव निश्चित नहीं।
० व्यर्थ।

आहार (Diet)—प्रारम्भ से ही तरल आहार दें। तापक्रम कम होते ही उच्च प्रोटीन एवं उच्च कैलोरी वाला आहार तथा प्रचुर मात्रा में द्रव एवं इलेक्ट्रोलाइट्स दें।

रिकेट्सिया और वाइरस जन्य न्यूमोनिया—चूंकि यह एक वाइरस जन्य न्यूमोनिया है। अतः इसमें अब तक कोई प्रभावशाली औषधि आविष्कृत नहीं हुई है। सल्फा ड्रग्स तथा अन्य एण्टीबायोटिक औषधियों का प्रयोग इस प्रकार के न्यूमोनिया में व्यर्थ है। इसकी चिकित्सा लाक्षणिक ही की जाती है। ५-१०

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिन के अन्दर ज्वर स्वयं उतरने लगता है और रोगी को १-२ दिन में कष्ट से मुक्ति मिल जाती है।

○ यदि ज्वर उतरने में अधिक समय लगता दिखलाई पड़े तो टेट्रासाइक्लीन या क्लोरम्फेनिकाल आदि का प्रयोग करना चाहिए। अथवा ओरियोमाइसिन कैप्सूल २५० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर दें।

न्यूमोनिया की विशिष्ट अनुभव-सिद्ध चिकित्सा—

१. बैक्ट्रिम (Bactrim) (रोशे) अथवा सेप्ट्रान (Septran)

मात्रा—१ गोली प्रति १२ घण्टे पर दें।

बच्चों को—½–१ गोली आयु के अनुसार दिन में २ बार मधु या शर्बत में मिलाकर दें।

विशेष—यह औषधि न्यूमोनिया में जादू के समान कार्य करती है। एक गोली खिलाते ही रोग कम होने लगता है।

○ यह सभी प्रकार के न्यूमोनिया को कण्ट्रोल में करती है।

२. केम्पीसिलीन (Campicillin) (कैडिला)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० का १ कै० प्रति ८ घण्टे पर अथवा आवश्यकतानुसार अधिक बार देते हैं। बच्चों को सीरप (घुला हुआ) आयु के अनुसार १२५ से २५० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर पिलायें।

○ रोग की तीव्रावस्था में वयस्कों को इञ्जेक्शन २५० से ५०० मि० ग्रा० प्रति ४ से ६ घण्टे पर मांस में। बच्चों को २० से ५० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर के भार के अनुपात से प्रतिदिन कई मात्राओं में विभक्त कर नितम्ब की गहरी मांसपेशी में दें।

○ **नोट**—यह एम्पीसिलीन है। इसके अन्य योग—एम-पी-सिलीन (मरकरी कं०), न्यूसिलीन (मेडिनेक्स), एम्पीपेन (जॉन वाइथ), वैसिपेन (एलेम्बिक), ब्रॉडिसिलीन (अल्केम), रॉशिलीन (रैनबेक्सी), मार्टिसिलीन (मार्टल हैमर), रेयम्पीलिन-६ (बंगाल केमिकल), एम्पीलिन (लायका), आइफिसिलीन (यूनिक कं०), मैग्नासिलीन (एरिस्टो कं०) आदि में से किसी का उपयोग सफलतापूर्वक किया जा सकता है।

३. एक्रोमाइसिन (Achromycin) (सायनेमिड कं०)

मात्रा—१-२ कै० प्रति ४ घण्टे पर। साथ ही विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स सीरप (T. C. F.) १-२ चम्मच दिन में २ बार पिलायें।

४. इञ्जे० डी० सी० (Inj. D. C.) ½-१ ग्राम की मात्रा में I/M प्रति १२ घण्टे पर।

५. पेनिसिलीन-जी सोडियम (Penicillin-G sodium)

मात्रा—२ लाख यूनिट प्रति ४ घण्टे पर I/M इञ्जेक्शन के रूप में।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. टेरामाइसीन एस० एफ० कैप्सूल (Terramycin S. F. cap.)

मात्रा—१-२ कै० प्रति ४ घण्टे पर।

७. फॉर्टीफाइड पेनिसिलीन (Fortified penicillin)

मात्रा—४ लाख यूनिट २ मि० ली० डिस्टिल्ड वाटर में घोलकर प्रथम दिन २ बार I/M इञ्जेक्शन। तत्पश्चात् २४ घण्टे में एक इञ्जेक्शन लगाते रहें।

साथ ही—टेट्रासाइक्लिन हाइड्रोक्लोराइड जैसे—रेस्टेक्लिन (Resteclin) (साराभाई)

मात्रा—२५० मि० ग्रा० का १ कैप्सूल सोडावाईकार्ब मिले जल से प्रति ६-६ घंटे पर।

८. टेरामाइसिन सीरप (फाइजर)

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३-४ बार पिलायें। बच्चों तथा शिशुओं के लिए इसका पीडियाट्रिक ड्राप आता है। मात्रा—५-१० बूंद प्रति ४ घण्टे पर।

९. अत्यधिक बेचैनी होने पर—'लॉर्जेक्टिल' की १ गोली खिलायें।

१०. जिन बच्चों को बार-बार न्यूमोनिया हो जाता है, उनको शार्क लिवर आयल (Shork liver oil) उचित मात्रा में देते रहें। साथ ही इस तेल की मालिश कराने से फेफड़े शक्तिशाली हो जाते हैं।

११. सेफेसिलिन (Cephacillin) (विडल शायर)

मात्रा—वयस्क—२५० मि० ग्रा० की १ गोली प्रति ६ घण्टे पर।

नोट—यह D. Pneumonic में विशेष लाभकारी है।

१२. सिब्रोलिन-२५० (Cibrolin-250) (HAL)

मात्रा—२५०-५०० मि० ग्रा० का १ कै० प्रति ६ घण्टे पर नित्य।

१३. लिनकोसिन (Lincocin) (बैलेसी)

मात्रा—वयस्क—५०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार। गम्भीर अवस्था में ५०० मि० ग्रा० का १ कै० दिन में ४ बार अथवा ६०० मि० ग्रा० I/M इञ्जे० दिन में १ या २ बार।

बालक—३० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर-भार पर विभाजित मात्रा में मुख द्वारा। गम्भीर अवस्था में दोगुनी मात्रा में दें।

१४. बेक्ट्रिम आई/वी० (Bectrim I/V) (रोशे)

मात्रा—२ एम्पुल दिन में २ बार, अधिक से अधिक ५ दिन तक।

सर्वोत्तम मात्रा—३ एम्पुल दिन में २ बार ३ दिन तक।

नोट—१ एम्पुल को १२५ मिली० इन्फ्यूजन सोल्यूशन (ग्लूकोज ५% या १०%) में तत्काल घोलकर।

न्यूमोनिया की मिश्रित औषधि चिकित्सा (Combined therapy in pneumonia)—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. ℞	टेट्रासाइक्लीन २५० मि० ग्रा०	१ कैप्सूल
	डेल्टाकार्ट्रिल (फाइजर)	१ गोली
		१ मात्रा

ऐसी एक मात्रा प्रति ३-४ घण्टे पर। बालकों को ½ मात्रा प्रति ३-४ घण्टे पर। साथ ही छाती, कंठ, सिर तथा नाक में 'विक्स वेपोरब' लगायें।

२. ℞	रेस्टेक्लिन ५०० मि० ग्रा०	१ कै०
	होस्टाकार्टिन 'एच'	१ गोली
	ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर दें।	१ मात्रा

साथ ही—गले, छाती तथा पीठ पर विक्स वेपोरब लगायें।

३. ℞	एम० बी० ६९३	४ गोली
	सोडाबाईकार्ब	१२०० मि० ग्रा०
	पानी	आवश्यकतानुसार
		१ मात्रा

इसे घोल कर पिलायें। तत्पश्चात् प्रति ४ घण्टे पर २ गोली देते रहें।

४. ℞	सल्फाडायाजीन	१ गोली
	एल्कोसिन	१ गोली
	सूबामाइसिन २५० मि० ग्रा० (डेज)	१ कै०
	विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स	२ गोली
	ऐसी १ मात्रा प्रति २-३ घंटे पर।	२ मात्रा

५. ℞	टेरामाइसिन एस० एफ०	१ कै०
	वाइसोलान	१ गोली
	ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर दें।	१ मात्रा
अथवा— ℞	टेरामाइसिन कैप्सूल	१ कै०
	सीलिन टे० ५० मि० ग्रा०	१ गोली
	वाइसोलान	१ गोली
	ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर।	१ मात्रा

६. ℞	सल्फाडायाजीन (M. B.)	२ गोली
	ओरिसूल (सिबा गाइगी)	२ गोली
	सोडाबाईकार्ब	१२०० मि० ग्रा०
		१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा तत्काल जल में घोलकर पिलायें। इसके ६ घण्टे बाद सल्फाडायाजीन प्रति ६ घण्टे पर २-२ गोली खिलाते रहें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

निषेध—वृक्क-पीड़ित रोगियों में इसका व्यवहार न करें।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बच्चों के न्यूमोनिया में—

१. ℞ टेरामाइसिन पीडियाट्रिक ड्राप्स (फाइजर)	५ से १० बूंद
सीकन ड्राप्स (अब्बोट)	५ से १० बूँद
वाइसोलान (वाईथ)	½-½ गोली
ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर।	१ मात्रा
२. ℞ रेस्टेक्लिन (साराभाई) २५० मि० ग्रा०	१ कैप्सूल
डेल्टाकॉर्ट्रिल (फाइजर)	१ गोली
	१ मात्रा।

नोट—कैपसूल की औषधि निकाल कर तथा गोली पीस कर दोनों को मिलाकर ४ मात्राएँ बना लें। ऐसी १ मात्रा प्रति ६ घण्टे पर मधु के साथ मिलाकर दें।

साथ ही—'डाइक्रिस्टासीन पीडियाट्रिक' (साराभाई) का इञ्जे० प्रति दिन मांस में लगायें।

एवं—'विक्स वेपोरब' छाती, गला तथा पीठ पर मलें। इसे नथुने से भी सुँघायें।

नोट—पसली चलना, तेजी से साँस लेना तथा तीव्र ज्वर में लाभकारी।

३. ℞ टेरामाइसिन (फाइजर)	१ कै०
सल्फाडायाजीन (एम० बी)	१ गोली
सीलिन (ग्लैक्सो) ५०० मि० ग्रा०	½ गोली
सीरप सिम्पल	५ मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में २ या ३ बार दें।	१ मात्रा।

वयस्कों के न्यूमोनिया में एक उत्तम अनुभव-सिद्ध प्रयोग—

℞ एम्पीसिलीन (रॉसिलिन-रेनबैक्सी)	२५० मि० ग्रा० १ कैप्सूल
एमोक्सीसिलिन पाउडर	१२५ मि० ग्रा०
सीरप ऑरेन्ज	१० मिली०
ऐसी १ मात्रा प्रति ६ घण्टे पर।	१ मात्रा

न्यूमोनिया में प्रयुक्त अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

टेबलेट—पेण्टिड, सीवाजोल, एल्कोसिन, सल्फाडायजिन, सल्फामेथाजीन (I. C. I.) आदि।

कैप्सूल्स—पेनिब्रिटिन, सूबामाइसीन कै०, एक्रोमाइसिन, ओरियोमाइसिन, क्लोरोमाइसिटीन, टेरामाइसिन कै०, टेरामाइसिन एस-एफ कै०, लीडरमाइसिन कै०, एम्पीसिलिन कै०, एमोक्सीसिलिन कै० आदि।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीरप—सूबामाइसिन सीरप या ड्राप, टेरामाइसिन सीरप, एम्पीसिलीन ड्राई सीरप (बच्चों के लिए), कार्डियामिड, कोरेसोल, चेस्टोन (खाँसी के लिए), पल्मोकोड, सेप्ट्रान या बैक्ट्रिम लिक्विड ।

छाती पर लगने वाले प्लास्टर—एण्टीफ्लेमीन, थर्मोकम्प्रस, पोलास्टा, बी० आई० फ्लोजिस्टीन, हाइफ्लोजिस्टीन ।

लिनीमेण्ट एवं मलहम—टर्पेण्टाइन लिनीमेण्ट, विक्स वेपोरेब ।

इञ्जेक्शन—एस० यू० पी० ३६, टेरामाइसिन, ओम्नामाइसिन, ओम्नेसिलिन, ओरियोमाइसिन, कोरामीन या कार्डियाजोल (हृदय एवं श्वास की दुर्बलता में) ।

○ ग्लूकोज १२½–२५% का घोल (विषाक्तता की स्थिति में), पल्मोट्रान, पोलीडीन, प्रोकेन पेनिसिलिन, बैक्ट्रिम आई० वी०, कार्डियामिड आदि ।

सेविल्स सिस्टम ऑफ क्लिनिकल मेडिसिन के अनुसार लोबर न्यूमोनिया की चिकित्सा—

℞ शय्या पर विश्राम (Bed rest)

बेञ्जाइल पेनिसिलीन (Benzyle penicillin)

५,००,००० यूनिट ८-१२ घण्टे पर I/M

अथवा—प्रोकेन बेञ्जाइल पेनिसिलीन-जी (Procain benzyle pencillin G.)

६,००,००० यूनिट प्रतिदिन + सोल्युबल पेनिसिलीन

२,५०,००० यूनिट प्रथम मात्रा के साथ ३ दिन तक ।

℞ सल्फामेजाथीन (Sulphamezathine)

तत्काल ४ ग्राम तत्पश्चात् १ ग्राम प्रति ४ घण्टे पर तापक्रम सामान्य होने तक । इसके बाद १ ग्राम प्रति ८ घण्टे पर अगले ४-५ दिन तक ।

○ **जब रोगी अधिक बीमार हो तब**—

पेनिसिलीन के साथ सल्फाडायमिडीन दें अथवा टेट्रासाइक्लीन मिला कर दें ।

सामान्य चिकित्सा (General treatment)—1. Bed rest, 2. Good nursing, 3. Relief from pain & adequate sleep. 4. Fresh air at a temperature of 62-65° F., 5. Diet should be light with fruits, drinks & milk.

1. Relief from Pain—Inj. Omnopon gr $\frac{1}{3}$.

2. If cough troublesome in the early stages—Codeine linctus.

3. When cyanosis is present—Oxygen inhalation at the rate of 5-7 litre per minute.

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

4. Peripheral circulrtory collopse—Large doses of antibiotics, oxygen, plenty of fluids with sugar by mouth.

इसके साथ ही इन्जे० मेफीन (Inj. Mephine) अथवा एरामीन को इण्ट्रावीनस ड्रिप में मिलाकर अथवा इण्ट्रामस्कुलर। अथवा—इन्जे० निकेथामाइड ५ मिली०।

५. ओरीकुलर फिब्रीलेशन में—इण्ट्रावीनस डिजॉक्सिन देने के पश्चात् डिजीटेलिस का कोई उपयुक्त योग मुख से दिया जाता है। □

श्वसन-संस्थान के रोग 2/5

श्वसनी-फुप्फुसशोथ
(Broncho-pneumonia)

पर्याय—श्वसनी-फुप्फुसशोथ, कटारल न्यूमोनिया (Catarrhal pneumonia), लोबुलर न्यूमोनिया (Lobular pneumonia), कासजनित फुप्फुस ज्वर, श्वासप्रणालिका प्रदाह, प्रणालीय श्वसनक ज्वर।

परिचय—Broncho-pneumonia is an acute parenchymatous inflammation of the lungs, but it runs a very different course to that of acute lobar pneumonia. The inflammatory process does not involve the whole of one or more lobes but occurs in patches with intervening normal or emphysematous areas.

—*Savill's System of Clinical Medicine.*

○ एक विशेष प्रकार का न्यूमोनिया, जिसमें दोनों फेफड़ों में शोथ के साथ-साथ श्वासनलिकाओं (Bronchioles) में भी शोथ की अवस्था मिलती है, जो श्वसनी-फुप्फुसशोथ (Broncho-pneumonia) कहलाता है। यह उपद्रवस्वरूप होता है। यह रोग अधिकतर बालकों एवं वृद्धों में होता है। बालकों में इसे साधारण बोलचाल में 'पसली चलना' कहते हैं। सामान्यतया यह 'ब्रॉन्काइटिस' से ही होता है, इसीलिए इसे 'ब्रान्को-न्यूमोनिया' कहते हैं। इसमें फुप्फुस में प्रदाह होता है। रोग के आक्रमण होते ही खाँसी, बेचैनी, अत्यधिक श्वासकष्ट, ज्वर, छटपटाहट, प्यास की अधिकता, सुस्ती, पसली चलना, तेज दर्द के साथ सूखी खाँसी तथा साथ-साथ रोगी को साँस लेने में भी परेशानी होती है। इसमें ज्वर प्रायः १००–१०२° फा० तक होता है।

कारण (Etiology)—१. ○ रोग सामान्यतया 'न्यूमोकोकाई' एवं 'एच-इन्फ्लूएन्जी' नामक जीवाणुओं से उत्पन्न होता है। इसके अतिरिक्त

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्लैब्सियला न्यूमोनी, स्टेफिलोकोकस तथा अन्य जीवाणु भी उत्तरदायी होते हैं।

२. रोमान्तिका, काली साँसी, डिफ्थीरिया, वातश्लेष्मक ज्वर आदि विष-संसर्गी रोगों के अन्त में यह उपद्रवस्वरूप होता है।

३. कास रोग के अन्त में, राजयक्ष्मा (T. B.) में और तेज वायु के श्वासमार्ग में चले जाने पर इस रोग की उत्पत्ति होती है।

४. माता के अपथ्य सेवन से यह बच्चों में भी हो जाता है।

५. वयस्कों में यह रोग प्रायः तीव्र श्वसनीशोथ अथवा इन्फ्लुएञ्जा के बाद देखने को मिलता है, जब कि रोगी की प्रतिरोधक शक्ति क्षीण हो जाती है।

लक्षण (Symptoms)—१. **ज्वर** (Fever)—रोगी को शीत लगकर ज्वर आता है, फिर कुछ दिनों में ज्वर का वेग १०२–१०३° फा० तक बढ़ जाता है। ○ इसमें ज्वर धीरे-धीरे उतरता है, बीच-बीच में कुछ बढ़ भी जाता है।

२. **खाँसी** (Cough)—रोग का आक्रमण अकस्मात् होता है। श्वास नलिकाओं में शोथ के कारण खाँसी इसका एक प्रमुख लक्षण होता है। खाँसी अधिकतर सूखी एवं पीड़ाकर होती है।

३. **श्वास कष्ट**—यह लक्षण प्रत्येक रोगी में मिलता है।

४. **श्यावता** (Cyanosis)—संक्रमण की तीव्रता के अनुसार रोग के प्रारम्भ में ही श्यावता तथा पाण्डुता के लक्षण मिलते हैं।

५. **आन्त्र सम्बन्धी लक्षण**—शिशुओं के प्रभावित होने पर इस रोग के आरम्भिक काल में ही वमन और प्रवाहिका के लक्षण मिलने प्रारम्भ हो जाते हैं।

६. **नर्वस सम्बन्धी लक्षण**—रोग की उग्रता के अनुसार रोगी में बेचैनी मिलती है। शिशुओं में विशेषकर आक्षेप उत्पन्न होते हैं।

○ वयस्कों में तथा वृद्धों में भावहीनता और कभी-कभी संन्यास देखने को मिलता है।

७. **दुर्बलता**—रोगी थका हुआ और बहुत दुर्बल दिखलाई देता है। बालक रोगी की सोते समय आधी आँखें खुली रहती हैं।

८. **श्वास सम्बन्धी लक्षण**—श्वास की गति बढ़ जाती है। समस्त वक्ष में 'रॉनकाई' तथा क्रेपीटेशन मिलते हैं।

९. **वक्ष-पीड़ा**—फुप्फुसावरण शोथ की अवस्था में रोगी प्रत्येक श्वास के साथ वक्ष में पीड़ा का अनुभव करता है।

विशिष्ट लक्षण—१. सामान्यतः इस रोग में तापक्रम की वृद्धि रोग की गम्भीर स्थिति के अनुपात में होती है। जिन रोगियों का तापक्रम बढ़कर १०५° फा० तक हो जाये उनमें मृत्यु की सम्भावना रहती है। वयस्कों में नाड़ी

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की गति १५० प्रति मिनट तक हो जाती है। बच्चों में तो इससे भी अधिक होती है, जिसे गिन पाना भी कठिन होता है। श्वास की गति ४०–८० तक हो जाती है।

२. कभी-कभी रोगी में बेचैनी, प्रलाप तथा अनिद्रा आदि लक्षण विद्यमान रहते हैं।

३. रोगी का चेहरा प्रायः तमतमाया रहता है।

४. प्रायः दस्त तथा उल्टियाँ होती हैं।

५. वयस्कों में श्लेष्मा ईंट के रंग का गाढ़ा-चिपचिपा होता है। बच्चों में श्लेष्मा बहुत कम होता है, जिसे छोटे बच्चे निगल जाते हैं।

६. दूसरे और पाँचवें दिन के मध्य फेफड़ों के अन्दर स्रावों के घनीभूत होने से प्लूरिसी के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। ऐसी अवस्था में सीने को अँगुली से बजाने पर ठोसपन की आवाज आती है। स्टेथिस्कोप से सुनने पर करकराहट की आवाज सुनाई देती है।

७. रोगी की शक्ति क्षीण हो जाती है। यदि रोगी के बल का अधिक ह्रास हो जाय, तो कास-श्वास बढ़ जाते हैं और शल्यज फुप्फुसप्रदाह होकर रोगी की मृत्यु हो जाती है।

○ यह अत्यन्त कष्टकारक संक्रामक रोग है। इसमें मृत्यु प्रायः कम ही होती है।

○ श्वासकष्ट एवं शोथ से युक्त बच्चों में उत्फुल्लिका होती है, जिसके कारण बच्चों के वक्ष एवं कटिप्रदेश आध्मान तथा वायु से फूले प्रतीत होते हैं।

निदान (Diagnosis)—१. रक्त परीक्षा (Blood test)—

(i) श्वेत कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि मिलती है।

(ii) पॉलीमार्फस (Polymorphus) विशेष बढ़े हुए मिलते हैं।

(iii) ई० एस० आर० (E. S. R.) बढ़ा हुआ मिलता है।

२. कफ-परीक्षा (Sputum test)—इसमें रोग-उत्पादक जीवाणु की प्राप्ति होती है।

३. वक्ष का एक्स-रे (Chest x-ray)—दोनों फेफड़ों में अपारदर्शिता के क्षेत्र स्थान-स्थान पर मिलते हैं।

अन्य निदानात्मक लक्षण—

१. ○ श्वासकाठिन्य, पूयता तथा बलगम इस रोग के प्रधान लक्षण हैं। ये सभी लक्षण निदान में विशेष सहायक होते हैं।

२. रोगी की परीक्षा करने पर उसकी जिह्वा शुष्क मिलती है। नथुने फड़कते दिखलाई देते हैं। श्वास-गति तीव्र तथा प्यास की अधिकता होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. श्वास-प्रश्वास ध्वनि ब्रॉन्कियल अथवा टयुबलर (Tubular) किस्म की सुनाई पड़ती है। दोनों ओर रॉन्काई तथा फुप्फुस तलों पर राल्स भी सुनाई पड़ते हैं।

४. श्रवण में हृदयगति तीव्र प्रतीत होती है।

५. मूत्र मात्रा में कम तथा गहरे रंग का आता है।

उपद्रव (Complications)—उचित चिकित्सा के अभाव में निम्न लिखित उपद्रव होना सम्भव है—

१. प्लूरल इफ्यूजन (Pleural effusion)।

२. अन्तःपूयता (Empyema)।

३. श्वसनी-विस्फार (Bronchiectasis)।

४. पेरीफेरल सरक्यूलेटरी फेल्योर (Peripheral circulatory failure)।

भावीफल (Prognosis)—१. छोटी आयु के बालक तथा अधिक उम्र के वृद्धों में नाड़ी की गति १३० मिलने पर चेहरे पर नीलापन, रक्त-भार में कमी तथा बेचैनी आदि होने पर हृदयगति के अवरुद्ध होने की आशंका की जानी चाहिए।

२. वृद्ध रोगी को चिरकास, इम्फाइसीमा या नेफ्राइटिस का रोग होने पर यह रोग कष्टसाध्य होता है।

३. यदि यह रोग बालक में ३ सप्ताह से अधिक रहे तो 'उरःक्षय' रोग का सन्देह करना चाहिए।

४. रोगी के ठीक होने पर फेफड़े नार्मल हो जाते हैं। ठीक से चिकित्सा न होने से रोग का निशान फेफड़ों में रह जाता है जो अन्त में ब्रॉंकिएक्टेसिस (Bronchiectasis) का रूप ले लेता है।

चिकित्सा (Treatment)—इसकी चिकित्सा ३ भागों में विभक्त कर की जाती है—

१. सार्वदैहिक चिकित्सा।

२. लाक्षणिक चिकित्सा।

३. विशिष्ट चिकित्सा।

(१) सार्वदैहिक चिकित्सा—

१. रोगी को स्वच्छ हवादार कमरे में रखना चाहिए। जिसका तापक्रम सर्वदा ६५° फा० दिन-रात रहता हो।

२. रोगी को जल, ग्लूकोज तथा हल्का पौष्टिक आहार प्रचुर मात्रा में दें।

३. रोगी को दिन में कई बार पानी पिलायें।

४. जब तक रोगी का बुखार उतर कर सामान्य न हो जाय, तब तक उसे विश्राम कराना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) लाक्षणिक चिकित्सा—यद्यपि विशिष्ट औषधियों से चिकित्सा करने पर सभीलक्षण शान्त हो जाते हैं, परन्तु उनमें कुछ समय लग जाता है। इसलिए साथ में निम्न लाक्षणिक चिकित्सा भी करनी चाहिए—

१. पीड़ा और ज्वर—इसके लिए पैरासिटामोल तथा एस्प्रिन का प्रयोग करना चाहिए। पीड़ा अधिक होने पर पैथीडीन हा० ५० मि० ग्रा० की १-२ गोली अथवा बालकों के लिए इसी मात्रा में I/M इञ्जेक्शन दें।

℞ सीरप अल्ट्राजिन (Syrup Ultragin)

मात्रा—बालक—१-२ चम्मच दिन में ३-४ बार।

शिशु—½ चम्मच दिन में ३-४ बार।

२. खाँसी और कष्टश्वास—

℞ सीरप फॉल्कोडीन (Syrup Pholcodine)

मात्रा—५ मिली० दिन में ३ बार।

अथवा—सीरप कोरेक्स (Syrup Corex) अथवा जेफोल कफ सीरप।

मात्रा—वयस्क—१ चम्मच दिन में ४ बार।

बालक—½ चम्मच दिन में ४ बार।

६ वर्ष से कम—¼ चम्मच दिन में ४ बार।

अथवा—फैन्सीडिल लिक्टस (Phensedyl linctus)

मात्रा—वयस्कों में—१-२ चम्मच दिन में ३ बार।

२ से ५ वर्ष के बालकों में—½ चम्मच दिन में ३ बार।

५-१० वर्ष के बालकों में—½-१ चम्मच दिन में ३ बार।

शुष्क कास में—

℞ सीरप टेट्रासाइक्लीन ४ मिली०।

सीरप कोडीन फॉस्फेट	
(अथवा—सीरप फॉल्कोडीन)	४ मिली०
सोडियम साइट्रेट	१२० मि० ग्रा०
सीरप वसाका	४ मिली०
ग्लिसरीन	१ मिली०
क्लोरोफार्म वाटर	३० मिली०
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।

वृद्धों को—इफेड्रीन ६० मि० ग्रा० प्रातः-सायं दें।

३. काली खाँसी (Whooping cough)—यदि बीमारी अधिक खतरनाक (Serious) न हो तो—

(i) एम्पीसिलीन + क्लोक्सासिलिन दें।

(ii) इञ्जेक्शन डी० सी० १ ग्राम I/M नित्य ५–१० दिन तक।

○ साथ में फुस्फुसशोथ का रोग हो तो—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

℞ क्लोरम्फेनिकाल पल्मीटेट १२५ मि० ग्रा०

मात्रा—½-½ चम्मच दिन में ४ बार।

नोट—कुछ व्यक्तियों में खाँसी अधिक दिनों तक रहती है। अतः इन इन औषधियों का प्रयोग १½ मास तक जारी रखना चाहिए, जब तक कि खाँसी बिलकुल ठीक न हो जाय।

४. **वक्ष-पीड़ा** (Thorexic pain)—

℞ पैरासिटामोल १-१ गोली या ऐस्प्रो २-२ गोली दिन में २-३ बार दें।

अथवा—℞ एस्प्रिन १८० मि० ग्रा०

फेनेसिटीन १२० मि० ग्रा०

कोडीन फॉस्फेट १० मि० ग्रा०

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार दें। १ मात्रा

○ यदि पीड़ा असहनीय हो तो—'पैथीडीन हाइड्रोक्लोराइड' ५० मि० ग्रा० टेबलेट १-२ गोली दिन में १ से २ बार दें। अथवा इसका इण्ट्रा-मस्कुलर इञ्जेक्शन दें।

५. **अनिद्रा**—सीरप ट्राइक्लोरिल (Syrup Tricloryl)

मात्रा—वयस्क—२ चम्मच रात में सोने से पूर्व।

बच्चों में—½-१ चम्मच रात में सोने से पूर्व।

६. **निपात** (Collapse)—कोरामीन २ मिली० S/C दें।

अथवा—इञ्जे० रैस्टीमुलेन (Inj. Restimulen)

मात्रा—१ एम्पुल आवश्यकतानुसार मांसपेशीगत दें।

अथवा—रैस्टीमुलैन पर्ल।

मात्रा—१-२ पर्ल दिन में ३ बार।

अथवा—रैस्टीमुलेन ड्राप (Restimulen drop)

मात्रा—वयस्क–४० बूँद दिन में ४-५ बार।

शिशु और बालक—२-१० बूँद दिन में ४-५ बार।

अथवा—बेटनीसोल या डेकाड्रान

मात्रा—१-२ गोली दिन में २-३ बार।

अथवा—हाइड्रोकार्टीसोन सोडियम सेमीसक्सीनेट

मात्रा—१०० मि० ग्रा० २ मिली० डिस्टिल्ड वाटर में घोल कर I/M. दें।

७. **निर्जलीभवन** (Dehydration)—रोगी को प्रचुर मात्रा में तरल पदार्थ दें। अधिक उग्र स्वरूप का होने पर ५% ग्लूकोज सैलाइन ड्रिप दें।

८. **हृदय की दुर्बलता में**—शिशु को 'कोरामीन' ½ मिली० त्वचा में ४-४ घण्टे पर दें। अथवा ५ किलो भार पर 'डिजॉक्सिन' ·१२५ मिली० इञ्जे० द्वारा दिन में २ बार दें। तत्पश्चात् ·२५ मिली० नित्य दें।

CC-0. JMP Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. श्वासनली-स्तम्भ (Spasm) तथा इम्फाइसीमा में—
कोलीडिल (Choledyl) (ग्लैक्सो)
मात्रा—५० मिली० दिन में ४ बार।

१०. वमन एवं प्रवाहिका में—वमन के लिए 'एवोमिन' दें। प्रवाहिका के लिए उचित प्रवाहिका-निरोधी (Anti-diarrhoeal) औषधि का प्रयोग करें।

११. अनिद्रा तथा बेचैनी—निद्रा लाने के लिए डायजीपाम (कम्पोज) ५ मि० ग्रा० की १ गोली रात सोने से पूर्व दें। अथवा इसका मांसपेशीगत इञ्जेक्शन लगायें।

○ वृद्ध रोगियों को ब्रॉण्डी ३० मिली० पानी में मिलाकर देने से बेचैनी दूर हो जाती है।

○ बच्चों को 'ट्राईक्लोरिल' ५ मिली० सोते समय दें।

१२. प्रलाप (Delirium)—
(i) यदि तापक्रम की अधिकता से हो तो ताज़े पानी का स्पंज करें।
(ii) यदि ऑक्सीजन की कमी से हो तो ऑक्सीजन का प्रबन्ध करें।
(iii) तीव्र प्रलाप की स्थिति में ५-१० मि० ग्रा० 'डायजीपाम' I/V अथवा 'पैराल्डिहाइड' ४–८ मिली० मांसपेशीगत दें।

१३. श्यावता (Cyanosis) या रंग का नीला पड़ना—इसमें ऑक्सीजन सुँघायें।

नोट—इससे मृत्यु को टाला जा सकता है।

१४. पेट में अफारा की स्थिति में—प्रोस्टिग्मीन ½ मि० ग्रा० मात्रा में त्वचा द्वारा दें। वस्ति का प्रयोग किया जा सकता है। बच्चों में ग्लिसरीन सपोजिटरी का प्रयोग करें।

(३) रोग की विशिष्ट चिकित्सा—

१. यदि रोगी गम्भीर (Serious) न हो तो निम्न चिकित्सा करनी चाहिए—

(i) ℞ इञ्जे० डाइक्रिस्टासीन-एस
मात्रा—½ ग्राम वायल I/M। बालकों में आयु के अनुसार दें।
अथवा—प्रोसिलिन इञ्जे० (हिन्दुस्तान एण्टीबायोटिक)।
मात्रा—½ ग्राम मात्रा में २ मिली० डिस्टिल्ड वाटर में घोल कर I/M दें।
अथवा—टेट्रासाइक्लीन हाइड्रोक्लोराइड ०·२५ ग्राम
मात्रा—१ कै० प्रति ६ घण्टे पर आरोग्य-लाभ होने तक।
नोट—जो रोगी कै० न निगल सके, उन्हें टेट्रासाइक्लीन सीरप दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ii) ℞ एम्पीसिलीन ०·२५ मि० ग्रा०

मात्रा—२ कै० प्रति ६ घण्टे पर २ दिन तक। तत्पश्चात् १ कै० प्रति ६ घण्टे पर।

नोट—एलवर्सिलिन (रैनबैक्सी) तथा केम्पेसिलिन (कैडिला) आदि एम्पीसीलिन के नाम से बाजारों में मिलते हैं।

अथवा—इञ्जे० एम्पीसिलीन (Inj. Ampicillin)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० I/M दिन में २ बार। बच्चों में आयु के अनुसार।

नोट—'एम्पीसिलीन ड्राई सीरप' के रूप में उपलब्ध है। बच्चों में ड्राई सीरप का ही उपयोग करें।

(iii) ℞ सेप्ट्रान या बैक्ट्रिम या सुनेट्रल (Sunetral)

मात्रा—२ गोली दिन में २ बार। बच्चों में गोली को पीस कर सीरप में दें। बच्चों की गोली (Septran for children) अलग से आती है। बच्चों के लिए इसका सीरप भी आता है।

वयस्कों तथा वृद्धों के लिए सेप्ट्रान डी० एस० (Septran D. S.) भी आता है।

२. यदि रोगी अधिक गम्भीर हो तो—निम्न औषधि योग सम्मिलित रूप में प्रयोग करें—

(i) ℞ टेट्रासाइक्लीन + एम्पीसिलीन

(ii) ℞ टेट्रासाइक्लीन + क्लोक्सासिलीन

क्लोक्सासिलिन २५० मि० ग्रा०

मात्रा—२ कै० प्रति ६ घण्टे पर २ दिन तक। तत्पश्चात् १ कै० प्रति ६ घण्टे पर।

ट्रेड मार्क – क्लोक्स—Klox (लाइका)

३. इन्फ्लुएञ्जा युक्त ब्रॉन्को-न्यूमोनिया—

℞ क्लोक्सासिलीन + एम्पीसिलीन

अथवा—क्लोक्सासिलीन + बैक्ट्रिम या सेप्ट्रान

आवश्यक निर्देश—१. यदि रोगी पेनिसिलीन के प्रति सुग्राही हो तो—इञ्जे० डाइक्रिस्टासीन-एस नहीं देना चाहिए। इसके स्थान पर कोई अन्य विस्तृत क्षेत्र वाली एण्टीबायोटिक औषधि जैसे—'एरिथ्रोमाइसिन' २५० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर दें।

२. यदि रोगी में कोई संतोषजनक सुधार प्रतीत न हो रहा हो तो बलगम-कफ का 'संवर्धन एवं सुग्राहिता परीक्षण' करवाने के पश्चात् जीवाणुओं पर घातक प्रभाव रखने वाली एण्टीबायोटिक औषधि का प्रयोग करना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. समस्त एण्टीबायोटिक का सेवन कम से कम एक सप्ताह तक करना चाहिए।

ब्रान्को-न्यूमोनिया की मिश्रित औषधि चिकित्सा—

(i) ℞	सीबाजोल	½ गोली
	सोडाबाइकार्ब	१२० मि० ग्रा०
	ग्लूकोज पाउडर	२० मि० ग्रा०
		१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा प्रति ६ घण्टे पर।

नोट—यह ६-१२ माह के बच्चे की खुराक है।

(ii) ℞	सल्फाडायाजीन	१ गोली
	सल्फाथायाजोल	१ गोली
	सोडाबाइकार्ब	९६० मिग्रा०
		१ पुड़िया।

ऐसी १ पुड़िया १ गिलास जल के साथ प्रति ४ घण्टे पर।

नोट—रोग के प्रारम्भ में यह योग पर्याप्त लाभकारी है।

(iii) ℞	टेरामाइसिन सस्पेन्शन	१० मिली०
	वायसोलान (जान वाइथ)	१ गोली
	सीलिन ५०० मि० ग्रा० (ग्लैक्सो)	½ गोली
		१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर। बच्चों को ¼-⅓ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर।

(iv) ℞	टेट्रासाइक्लीन हाइड्रोक्लोराइड	२५० मिग्रा० कैपसूल
	सीलिन (ग्लैक्सो)	१०० मिग्रा० गोली
	होस्टाकार्टिन 'एच' (हैक्स्ट)	५ मिग्रा० गोली
	सिम्पल सीरप	५ मिली०
		१ मात्रा।

गोलियों को पीस कर सीरप में मिला लें। ऐसी १ मात्रा दिन में ४ बार दें।

(v) ℞	सल्फाडायाजीन	१ गोली
	सीबाजोल	१ गोली
	सूबामाइसिन	२५० मि० ग्रा० १ कै०
	विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स फोर्ट	२ गोली
		१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर। ○ रोग की तीव्रावस्था में प्रति १-१ घण्टे पर दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(vi) ℞	सल्फाडायाजीन	१ गोली
	एल्कोसिन	१ गोली
	सोडाबाइकार्ब	३०० मि० ग्रा०
	केपेलिन	½ गोली
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा प्रति ३ घण्टे पर जल के साथ ।

अथवा— ℞	सल्फाडायाजीन	१ गोली
	एल्कोसिन	१ गोली
	सोडाबाइकार्ब	३०० मि० ग्रा०
	केपेलिन	½ गोली
	सीलिन १०० मि० ग्रा०	१ गोली
	बेरिन ५० मि० ग्रा०	१ गोली
		मिलाकर १ पुड़िया बना लें ।

ऐसी १ पुड़िया प्रति ३ घण्टे पर जल के साथ दें ।

(vii) ℞	एरिथ्रोमाइसिन एथिल एक्सीनेट	१०० मिग्रा० १ गोली
	सीरप ऑरेंशियाई	५ मिली०
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर ।

विशेष—कफ-निस्सारक तथा ज्वर में उपयोगी ।

(viii) ℞ सबसे पहले—

कैस्टर आयल (Castor Oil) ३० मिली० गर्म दूध में मिलाकर दें ।

बच्चों को—१०–१५ मिली० गर्म दूध में ।

दस्त आने के बाद—

लाइकर अमोनिया एसीटेट	८ मिली०
स्प्रिट ईथर नाइट्रोसी	२ मिली०
स्प्रिट क्लोरोफार्म	१·३ मिली०
एक्वा कुल	३० मिली०
	१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर । बच्चों को ¼–½ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर ।

(ix) **अधिक दुर्बलता की स्थिति में—**

℞	कैल्शियम लैक्टेट	६०० मि० ग्रा०
	विटामिन १०० मि० ग्रा०	१ गोली

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन 'बी' कॉम्प्लेक्स	१ गोली
बिटामिन बी$_{१२}$ १० मि० ग्रा०	१ गोली
विटामिन 'बी'	१ गोली
विटामिन 'के'	१ गोली

मिलाकर १ पुड़िया बना लें।

ऐसी १ पुड़िया दिन में ६–६ घण्टे पर।

ब्रॉन्को-न्यूमोनिया में प्रयुक्त अन्य औषधियाँ—

सूबामाइसिन कै०, एक्रोमाइसिन, सिन्थोमाइसिटीन पल्मीटेट, कैफडायन, रिसायल सीरप, रिस्पिनायल, सल्फेनिन, टेरामाइसिन, ओरियोमाइसिन, कासाविन, एम्पीसिलीन, क्लोक्सासिलिन, सेप्ट्रान आदि। ⊡

श्वसन-संस्थान के रोग 2/6

श्वसनीविस्फार
(Bronchiectasis)

पर्याय—वायुप्रणाली-विस्तृति, श्वासनली-शैथिल्य, जीर्ण पूय कास।

परिभाषा (Definition)—यह एक ऐसी अवस्था है, जिसमें श्वास नलीं (Bronchi) की स्थायी विस्तृति (Dilatation) हो जाती है।

○ Bronchiectasis is a dilatation of small and medium sized bronchi resulting from destruction of bronchial elastic and muscular elements. It my be caused by pulmonary infections.

रोग के कारण (Etiology)—इस रोग को उत्पन्न करने के लिए ३ बातों का होना आवश्यक होता है—

१. **वायुप्रणाली की दीवार का कमजोर होना**—इलास्टिक टिशू में लचक नष्ट हो जाती है, जिसके कारण वायुप्रणाली फैल कर पुनः अपनी स्थिति में नहीं आती।

२. कई व्यक्तियों में जन्म से ही वायुप्रणालियों में इलास्टिक टिशू दुर्बल होते हैं। इन व्यक्तियों में इसके होने की अधिक सम्भावना होती है।

३. **वायुप्रणालियों पर लगातार दबाव पड़ना**—जैसे पुरानी खाँसी (तीव्र स्वरूप की) एवं श्वास रोगों में।

विकृति—फेफड़े के जिस भाग में वायुप्रणालियों (ब्रॉङ्काई) की विस्तृति होती है, वह भाग संकुचित (वायु रहित) हो जाता है

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संक्षेप में इसके कारणों को ३ भागों में विभक्त किया जाता है—

(क) सहज कारण—

१. फेफड़े के किसी भाग का संकुचित होना।

२. फेफड़ें में जन्म से सिस्ट का होना।

३. फेफड़ों में इलास्टिक टिशू का अभाव या निर्बल अथवा कम होना।

(ख) जन्मोत्तर कारण—

१. वायु-प्रणालियों में रुकावट, किसी वस्तु का अटक जाना या मार्ग का संकुचित होना।

२. जीर्ण शोथ के कारण वायुप्रणाली का दब जाना अथवा निकट स्थित अर्बुद आदि के दबाव के कारण।

३. लम्बे समय तक जोर से साँस लेने से वायु-प्रणालियों की दीवार कमजोर हो जाती हैं, जैसा कि यक्ष्मा तथा श्वास रोग में होता है।

(ग) रोगों के उपद्रवस्वरूप रोग की उत्पत्ति—

१. यह रोग बाल्यावस्था में हुए खसरे (मिजिल्स), काली खाँसी (हूपिंग कफ) के पश्चात् उपद्रवस्वरूप होता है। अथवा—

२. ब्रॉन्को-न्यूमोनिया के हो जाने पर उसके पूरी तरह से ठीक न होने एवं क्रॉनिक रूप में रह जाने से यह रोग प्रारम्भ होता है। परन्तु बाद में ३०-४० वर्ष की आयु में प्रकट हो जाता है।

३. श्वास-नलिकाओं का चिरस्थायी जीवाणु-संक्रमण इस रोग का प्रधान कारण माना जाता है।

४. शुष्क यक्ष्मा के होने पर भी श्वास-नलियाँ चौड़ी हो जाती हैं और उनमें से समय-समय पर पूय के समान बलगम बड़ी मात्रा में निकलता है।

५. चिरस्थायी खाँसी तथा संक्रमण के कारण श्वास-नलिकाओं की प्राचीर कमजोर हो जाती हैं। इन दोनों कारणों के विद्यमान होने से अथवा इनका पुनराक्रमण होते रहने पर श्वासनलिका की विकृति धीरे-धीरे बढ़ती जाती है। इस वृद्धि के कारण एक प्रकार की केविटी बन जाती है।

लक्षण (Symptoms)—१. **श्लेष्मायुक्त खाँसी** (Cough with expectoration)—यह इस रोग का प्रमुख लक्षण है। बहुत वर्षों तक खाँसी के अतिरिक्त अन्य कोई लक्षण प्रकट नहीं होता है। बाद में किसी एक करवट में लेटने के पश्चात् उठने पर अथवा पार्श्व बदलने पर अथवा हल्की नींद में हो तो खाँसी आरम्भ हो जाती है और बहुत-सा श्लेष्मा निकलने लगता है। प्रातः उठने पर खाँसी के प्रायः ऐसे वेग आते हैं। श्लेष्मा कोपियस रूप में एवं सपूय (Purulent) होता है।

नोट—शुष्क ब्रॉन्किएक्टेसिस में ऐसा लक्षण अनुपस्थित रहता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खाँसी के साथ समय-समय पर अधिक मात्रा में दुर्गन्धित कफ निकलता है। रोगी के आसन-परिवर्तन से या सिर नीचा करने से खाँसी का दौरा कम होता है।

२. **रक्तवमन** (Haemoptysis)—कभी-कभी खाँसी के साथ खून भी आता है। इसमें बलगम के साथ थोड़ी मात्रा में रक्त आता है।

शुष्क (In dry type) ब्रॉन्किएक्टेसिस में यह केवल अकेला लक्षण होता है।

३. **पार्श्वशूल** (Thorexic pain)—यह लक्षण बार-बार उत्पन्न होता है, जो ड्राई प्लूरिसी अथवा न्यूमोनिया में होता है।

४. **फेब्राइल एपिसोड्स** (Febrile episodes)—यह समय-समय पर ब्रॉन्किएक्टेटिक केविटी के द्वितीयक संक्रमण (सेकेण्ड्री इन्फेक्शन) द्वारा होता है। कुछ दिन या सप्ताह के बाद शीत एवं कँपकँपी (Chill and rigor) के साथ ज्वर आता है। यह ज्वर पसीने के साथ उतर जाता है। ऐसी स्थिति में मलेरिया रोग का सन्देह होता है। यदि ऐसे ज्वर का वेग तीव्र और बार-बार होने लगे तो समझना चाहिए कि रोग ने कुछ उग्र रूप धारण कर लिया है। ऐसी स्थिति में चिकित्सा के अभाव में (बलगम को न निकालने तथा संक्रमण को भलीभाँति न रोकने से) सेप्टिक ब्रॉन्को-न्यूमोनिया हो जाता है। अथवा दक्षिण हृदय पर उसके ऊपर भार पड़ने से (Cor pulmonale) हर्ट-फेल होने की आशंका रहती है।

५. **क्रॉनिक साइनूसाइटिस** (Chronic sinusitis)—यह ७०% रोगियों में उपस्थित रहता है।

६. **ब्रीदलेसनेस** (Breathlessness)—प्रायः यह न्यूमोनिया के द्वारा होता है अथवा क्रॉनिक ब्रॉन्काइटिस के द्वारा होता है।

७. **सामान्य लक्षण** (General symptoms)—मैलाइस (Malaise) तथा भार में कमी आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। रोगी की अँगुलियाँ मुद्गरवत् (Clubbed) हो जाती हैं।

विशेष परीक्षात्मक निदान (Special diagnosis)—

१. **रक्त-परीक्षा** (Blood test)—द्वितीयक संक्रमण की स्थिति में श्वेत-कणों की वृद्धि (ल्यूकोसाइटोसिस विद इंक्रिज्ड पोलीमार्फस) मिलती है।

२. **बलगम** (Sputum) **परीक्षा**—इस परीक्षा में बलगम के अन्तर्गत हीमोफाइलस इन्फ्लुएञ्जाई, ई० कोलाई (कभी-कभी), प्राटियस एवं स्युडोमोनास दिखलाई देते हैं। स्टेफिलो-ऑरियस सिस्टिक फाइब्रोसिस में मिलते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ जिस समय बलगम को एक कोनिकल फ्लास्क में एकत्रित किया जाता है तो बलगम में निम्न तीन परतें प्रतीत होती है। जैसा कि फुप्फुस विद्रधि (Lungs abscess) में होता है—

(i) **ऊपर का स्तर**—यह भूरे रंग का तथा झाग मिश्रित होता है।

(ii) **बीच का स्तर**—यह पतला तथा पूयमिश्रित होता है।

(iii) **नीचे का स्तर**—यह हलका काला तथा गाढ़ा होता है। इस स्तर में पूय तथा स्फटिक (क्रिस्टल्स) होते हैं।

नोट—इसमें इलास्टिक टिशू अनुपस्थित रहता है और केवल पूय सेल्स मिलते हैं।

३. रेडियोलॉजिकल परीक्षा (Rediological examination)—छाती का एक्स-रे प्रायः नार्मल रहता है। कभी-कभी प्लूरा के आधार पर मोटाई (Thickening) दीखती है और फेफड़े के Besal portion पर चिड़िया का घोसला जैसा दिखलाई देता है।

४. ब्रॉन्कोस्कोपी (Bronchoscopy)—बच्चों में ब्रॉन्कोस्कोपी द्वारा बाह्य वस्तु (Foreign bodies) का पता लगा लेना चाहिए।

५. श्रवणयंत्र द्वारा परीक्षा करने पर—१. श्वास-प्रणालियों पर सुनाई पड़ने वाली आवाज तथा मुँह पर बोला हुआ शब्द ऊँचा तथा अधिक स्पष्ट सुनाई देता है। २. बुलबुलों के फटने की आवाज रोगग्रस्त फेफड़े के एक सीमित प्रदेश पर सुनाई पड़ती है। ३. श्लेष्मा स्राव होने पर रॉन्काई शब्द सुनाई पड़ सकता है।

○ फुप्फुस के आधार पर सद्रव (Wet) या शुष्क (Dry) आगन्तुक ध्वनियाँ मिल सकती हैं।

Essential of diagnosis—

1. Chronic cough with expectoration of large amount of purulent sputum; Hemoptysis.

2. Ralls and rhonchi over lober lobes.

3. X-ray of chest reveals little; branchograms show charateristic dilatations.

4. Clubbing of fingures, haemoptysis.

5. Signs of general toxaemia e. g. anaemia, anorexia, weight loss etc.

अन्य सामान्य निदानामक लक्षण एवं चिह्न—

सामान्य निरीक्षण (General survey)—

१. अँगुलियों के सिरे मोटे (Clubbing fingures) दिखलाई पड़ते हैं। यह लक्षण ५०% रोगियों में मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. पल्मोनरी ऑस्टियो-आर्थोपेथी बढ़ी हुई मिलती है।

३. **छाती** (Chest)—किसी एक ओर के फेफड़े के निम्न भाग के संकुचित हो जाने से उधर की छाती की दीवार कुछ दबी हुई तथा श्वास-प्रश्वास के साथ कुछ कम हिलती दिखलाई देती है।

४. निदान की दृष्टि से रोग के निम्न प्रधान लक्षणों का मिलना महत्त्व-पूर्ण प्रमाण है।

(i) आसन-परिवर्तन से खाँसी की वृद्धि।

(ii) विशेषकर प्रातःकाल अधिक मात्रा में दुर्गन्धित कफ का निकलना।

(iii) फेफड़ों में फाइब्रोसिस तथा केविटी के चिह्नों का मिलना।

(iv) बलगम का तीन परतों वाला होना।

नोट—यह लक्षण रोग-निदान की दृष्टि से विशेष महत्त्वपूर्ण है।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—इस रोग का निम्न रोगों से पृथक्करण करना चाहिए—

१. फुप्फुस-विद्रधि (Lungs abscess)।

२. क्रॉनिक ब्रॉन्काइटिस (Chronic bronchitis)।

३. पल्मोनरी टचुबरकुलोसिस (Pulmonary tuberculosis)।

उपद्रव (Complications)—१. बार-बार प्लूरिसी का होना (Recurrent pleurisy)।

२. न्यूमोनिया का आक्रमण होते रहना (Recurrent pneumonia)।

३. बार-बार खाँसी के साथ रक्त आना (Recurrent haemoptysis)।

४. इम्पाइमा (Empyema)।

५. फुप्फुस-विद्रधि (Lungs abscess)।

६. सेरिब्रल एब्सिस (Cerebral abscess)।

७. प्लूरल इफ्यूजन (Pleural effusion)।

८. एक्यूट बेनाइन पेरिकार्डाइटिस (Acute benign pericarditis)।

सामान्य प्रबन्ध एवं चिकित्सा—

१. रोग से बचने के लिए फेफड़ों के संक्रमण तथा खाँसी की तत्परता के साथ चिकित्सा करनी चाहिए। क्योंकि यह रोग ब्रॉन्को-न्यूमोनिया के उपद्रव स्वरूप होता है। अतः जब किसी बालक को यह रोग हो तो उसकी चिकित्सा में लापरवाही नहीं होनी चाहिए।

२. श्वसन-संस्थान के अन्य रोगों से बचने के लिए अन्य उपायों का सहयोग लेना चाहिए।

३. रोगी की चिकित्सा के साथ-साथ नासिका एवं गले आदि में शोथ का प्रतिकार करते रहना चाहिए। उसके होने पर उसकी तत्काल चिकित्सा करनी चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. शुष्क और गर्म वातावरण में निवास तथा धुएँ और धूल से यथा-सम्भव बचाव रखना।

५. जब-जब रोग थोड़ा बढ़े तो लेट जाना चाहिए। साथ ही चारपाई के पायताने को ½ से १ फुट ऊँचा रखना चाहिए।

६. पौष्टिक आहार तथा शुद्ध वायु से शरीर का पोषण बढ़ाना चाहिए।

७. रोगी के स्वास्थ्य की वृद्धि, उपसर्ग की विशिष्ट चिकित्सा तथा केविटी को स्रावरहित रखने का यत्न करना चाहिए।

८. ○ पेनिसिलीन तथा सल्फा ड्रग्स द्वारा इन्फेशन की चिकित्सा करें।

९. भोजन में प्रोटीन की अधिकता होनी चाहिए।

१०. शय्या पर प्रतिदिन भोजनोपरान्त २ बार रोगी का सिर नीचा करके लिटाने से केविटी में संचित हुआ स्राव निकल जाता है।

११. पेनिसिलीन, क्रियोजोट, टिं० बेञ्जोइन कं० आदि का श्वसन-मार्ग में प्रवेश करने से उपसर्ग से प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित होता है।

१२. धूम्रपान, सिगरेट आदि का पूर्णतया निषेध करें।

१३. ब्रॉन्कोस्कोप के द्वारा स्राव निकालने से श्वसनिका की स्थिति का भी ज्ञात हो जाता है।

१४. कृत्रिम वातोरस (Artificial pneumothorax) तथा ऑपरेशन भी किया जा सकता है।

१५. गर्म पेय देने से बलगम निकलने में आसानी होती है।

१६. श्वास मार्ग में यंत्र द्वारा इञ्जाइम देने से स्राव तरल होता है तथा उसके निकलने में आसानी होती है।

१७. दमा आदि होने पर उसकी उपयुक्त चिकित्सा करनी चाहिए।

चिकित्सा (Treatment)—General measures and medical treatment—

१. वातावरण परिवर्तन (Environmental changes)।

२. ब्रॉन्कियल सेक्रेशन को नियन्त्रिन करना (Control of bronchial secretion (Improved postural drainage)।

३. संक्रमण-निवारण (Control of respiratary infection)।

४. शल्य-चिकित्सा (Surgical treatment)।

(१) वातावरण परिवर्तन (Environmental changes)—रोगी को समस्त पल्मोनरी इरीटेण्ट (Pulmonary irritant) से बचाना चाहिए। यथा—धूम्रपान, धुआँ एवं धूल आदि से बचाव किया जाय।

(२) ब्रॉन्कियल सेक्रेशन को कण्ट्रोल करना (Control of bronchial secretions)—एकत्रित स्राव को निकालने के लिए निम्न व्यवस्था करनी चाहिए—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. सुबह उठते ही रोगी को १ गिलास गर्म जल पिलायें। इससे बलगम पतला हो जाता है।

२. स्थितिज निकास (Postural drainage) के अन्तर्गत—

(i) **शय्या कफ-प्रवाहरण**—चारपाई पर एक करवट लेटकर दोनों हाथों को नीचे फर्श पर रखें। तकिये पर लिटाकर सिर को नीचा करके रोगग्रस्त फेफड़े के निम्न खण्ड को अपेक्षाकृत ऊँचा करके अन्दर एकत्रित बलगम को नीचे रखे बर्तन में निकाल देना चाहिए। ऐसा १५-३० मिनट तक करना चाहिए। इस क्रिया से पूरा बलगम बाहर निकल जाता है। इस प्रकार प्रातः एवं सायं दिन में दो बार बलगम को नित्य प्रति साफ करना चाहिए।

○ क्षारीय मिश्रण की एक मात्रा लेकर ऊपर से गरम जल १ कप पीने से बलगम पतला होकर आसानी से निकल जाता है।

नोट—पाश्चरल ड्रेनेज से कास तथा विष-संचार में कमी आती है।

(ii) बाष्प इन्हेलेशन (Steam inhalation)—इन्हेलेशन कफ निकालने में सहायता करता है। निम्न इन्हेलेशन इस कार्य के लिए अधिक उपयुक्त रहता है—

℞ मेन्थोल	६० मि० ग्रा०
आयल क्रियोजोट	३ मिनिम (बूँद)
टिं० बेन्जोइन कं०	३० मिली० (१ औंस)

इसे १ लिटर गर्म जल में मिलाकर सुँघायें।

(३) **संक्रमण-निवारण** (Control of respiratory infection)—

℞ क्रिस्टेलाइन पेनिसिलित-जी ५ लाख यूनिट

मात्रा—१ इन्जेक्शन I/M १२-१२ घण्टे पर दिन में २ बार। कुल ७ दिन तक।

अथवा—℞ प्रोकेन पेनिसिलीन ६ लाख यूनिट

मात्रा—मांसपेशीगत दिन में १ बार ७ दिन तक।

अथवा—℞ पेनिसिलीन ७ लाख यूनिट

मात्रा—मांसपेशीगत नित्य अथवा मुख द्वारा ३ से ४ बार प्रतिदिन १० से १४ दिनों तक।

नोट—यदि ज्वर अधिक न हो तो भी १½-२ मास के अन्तर पर यदि १ सप्ताह तक उपर्युक्त विधि से इस औषधि को लिया जाय तो रोग दबा रहता है।

यदि उपरोक्त औषधि से लाभ न मिले तो—

℞ स्ट्रेप्टोमाइसीन (Streptomycin)

मात्रा—१-२ ग्राम दिन में २ बार मांसपेशीगत ७ दिन तक।

नोट—इससे गाढ़ा बलगम पतला हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो पेनिसिलीन के प्रति सुग्राहित (Sensitive) हों, उन्हें निम्न औषधि की व्यवस्था करें—

℞ टेट्रासाइक्लीन (एक्रोमाइसिन या टेरामाइसिन) २५०–५०० मिग्रा०

मात्रा—१–१ कैप्सूल दिन में दो बार प्रति ८ घण्टे पर ।

अथवा—इरीथ्रोमाइसिन (इलोटाइसिन) ०.५ ग्राम टेबलेट

मात्रा—१ गोली प्रति ६ घण्टे पर मुख द्वारा ।

अथवा—एम्पीसिलीन ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१–१ कै० प्रति ६ घण्टे पर दिन में चार बार ५ दिन तक ।

अथवा—एमोक्सीसिलीन (Amoxycillin)

मात्रा—१ कैप्सूल दिन में ४ बार ५ दिन तक ।

अथवा—कोट्रीमेक्साजोल (सेप्ट्रान या बैक्ट्रिम) टेबलेट

मात्रा—१–१ गोली दिन में २ बार ।

अथवा—डबल स्ट्रेन्थ टेबलेट (सेप्ट्रान–DS)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ५ दिन तक ।

नोट—○ इन्हें तव तक देते रहें, जब तक बलगम (Sputum) पतला न हो जाय ।

○ यदि एक्यूट संक्रमण शान्त न हों और पुनः बढ़ने लगे तब बलगम का कल्चर (लेबोरेटरी टेस्ट) कराकर जीवाणुओं पर एण्टीबायोटिक का चयन कर प्रयोग करें ।

यदि इन्फेक्शन वर्ष में ४ बार से अधिक उत्पन्न हो तो—

℞ डॉक्सीसाइक्लीन (Doxycycline)

मात्रा—१०० मि० ग्राम प्रतिदिन ।

अथवा—टेट्रासाइक्लीन २५० मि० ग्रा० दिन में २ बार ।

अधिक दुर्गन्धयुक्त बलगम वाले रोगियों में—

℞ एम्पीसिलीन अथवा टेट्रासाइक्लीन की उच्चतम मात्रा दें ।

अथवा—फोर्टीफाइड पेनिसिलीन ४,००,००० यूनिट + स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट ०·५ ग्राम २ मिली० डिस्टिल्ड वाटर में घोल कर मांसपेशीगत इञ्जेक्शन दिन में १ बार ७ दिनों तक ।

साथ ही निम्न योग मुख द्वारा सेवन करायें—

℞ पोटाश आयोडाइड	३०० मि० ग्रा०
कियोजोट	२ मिनिम
इक्स्ट्रेक्ट ग्लिसराइजा लि०	२० मिनिम
सीरप टोलू	३० मिनिम
एक्वा एनीसी	½ औंस
दिन में ३ बार जल में मिलाकर दें ।	१ मात्रा ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि बलगम परीक्षा में स्पाइरोकीट तथा फ्यूजीफार्म बैसिलाई मिलें तो—

℞ एसीटीलार्सन (Acitilarsan)

मात्रा—१–३ मिली० मांसपेशीगत ।

अथवा—सल्फार्सिनोल १-३ मिली० मांसपेशीगत दें ।

नोट—इन्हें ५–७ दिन के पूर्व पुनः नहीं देना चाहिए । इससे कफ की गन्ध भी समाप्त हो जाती है ।

यदि दमा के समान फेफड़े में ह्वीजिंग (सीटी) की आवाज मिले तो—

℞ एड्रीनलीन १:१००० की ½-१ मिली० S/C

अथवा—इफेड्रीन (Ephedrine) १५ मि० ग्रा० दें ।

साथ ही—मुख द्वारा 'नियोइपीनीन' ५-१० मि० ग्रा० जीभ के नीचे रख कर चूसना चाहिए ।

अन्य आवश्यक निर्देश—क्रॉनिक ब्रॉन्काइटिस, ब्रॉन्कोस्पाज्म, सायनूसाइटिस तथा 'रेस्पिरेटरी फेल्योर' की उचित चिकित्सा करनी चाहिए ।

(४) शल्य-चिकित्सा (Surgical treatment)—यदि विकृति फेफड़े के किसी एक भाग में स्थित हो तो 'लोबेक्टोमी' अथवा 'न्यूमोनेक्टोमी' करनी चाहिए ।

○ Surgical treatement is the only method of eradicating the disease. When the condition of the patient allwos, labectomy or pneumonectomy are the operation of choicc, but they are not performed until the patient has had a few weeks of treatment to build up the general health first.

—*Savill's System of Clinical Medicnie*

सामान्य चिकित्सा—१. पौष्टिक आहार एवं मल्टी-विटामिन्स की उचित व्यवस्था करें ।

२. अनीमिया की उचित चिकित्सा करें ।

३. ऊर्ध्व श्वसन-संस्थान (Upper respiratory tract) में उपस्थित 'सेप्टिक फोसाई' (Septic foci) की चिकित्सा करें । □

श्वसन-संस्थान के रोग **2/7**

श्वसनिका दमा/श्वास
(Bronchial Asthma)

पर्याय—दमा, श्वास रोग, तमक श्वास, साँस की बीमारी ।

परिचय—ऐसा रोग जिसमें रोगी को खाँसी, कष्टश्वास (Dyspnoea) आदि के कभी-कभी दौरे या प्रवेग उत्पन्न होते रहते हैं, श्वसनिका दमा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(Bronchial asthma) कहलाता है। ○ वैसे दमा कई प्रकार का होता है, किन्तु मुख्य रूप से ब्रॉन्कियल दमा का स्थान महत्त्वपूर्ण है।

कारण (Etiology)—१. नाड़ी-मण्डल या मस्तिष्क सम्बन्धी सहज निर्बलता इस रोग का प्रधान कारण है। नाड़ी-मण्डल की सहज अक्षमता के कारण ही यह रोग बालपन अथवा प्रारम्भिक युवावस्था में ही प्रकट हो जाता है। इसलिए किसी भी निर्बलता जनक कारण से इसका दौरा शुरू हो सकता है। ऐसे व्यक्तियों में यदि बारम्बार जुकाम होता रहे अथवा राइनाइटिस, सायनूसाइटिस आदि कोई रोग हो, अथवा एडीनॉयडस (Adenoids) या टॉन्सीलाइटिस आदि क्रॉनिक रूप में बने रहें तो इसके कारण श्वासनलिकाओं—ब्रॉन्कोकंस्ट्रिक्टर केन्द्र की विक्षोभन-शीलता के कारण श्वासरोग प्रकट हो जाता है।

२. आँत में अजीर्ण जनित विक्षोभ से अथवा कृमियों के होने से।

३. रक्त के द्वारा श्वास-नलिकाओं में प्रविष्ट विक्षोभक द्रव्यों से।

४. कभी-कभी एसीटिल कोलीन तथा हिस्टामीन का सूचीवेध देने से।

५. **एलर्जी**—रोगी को यदि किसी वस्तु के प्रति एलर्जी होती है, तो उस वस्तु के उसके सम्पर्क में आते ही उसमें दमे के समस्त लक्षण उत्पन्न होने लगते हैं।

○ श्वास-रोगियों में प्रोटीन की अक्षमता बहुत अधिक होती है। इस लिए वे 'एण्टीटॉक्सिन सीरम' को सहन नहीं कर पाते हैं। एस्प्रिन (Asprin) आदि किसी औषधि से अथवा शरीर में किसी विद्यमान जीवाणु (विशेषकर ग्राम निगेटिव—Gram-nigetive) से उत्पन्न द्रव के रक्त द्वारा श्वास-नलिकाओं में जाने से यह रोग उत्पन्न हो जाता है।

६. श्वास-नलिकाओं में जीवाणुजनित शोथ के कारण।

○ 'श्वासनली-शोथ' (ब्रॉन्काइटिस) या 'श्वसनी-फुफ्फुसशोथ' (ब्रॉन्को-न्यूमोनिया) के समय दमे के सभी लक्षण जैसे—श्वासकष्ट, घर्र-घर्र अथवा साँय-साँय की आवाज उत्पन्न होती हैं।

○ बालकों और युवकों में इसका वेग कभी-कभी होता है। बीच-बीच में वे ठीक रहते हैं। कुछ बड़ी आयु में यह क्रॉनिक रूप में रहता है।

○ प्रकृति से भावुक, संवेदनशील और बुद्धिमान व्यक्ति ही इससे अधिक प्रभावित होते हैं। विशेष रूप से इसका प्रथम आक्रमण १०-१२ वर्ष की आयु में प्रारम्भ होता है। स्त्रियों में यह रोग बहुत ही कम होता है।

७. पेट में गैस बनने या कब्ज रहने से भी दमे का दौरा पड़ सकता है।

८. जिन लोगों को माँ का प्यार नहीं मिलता है, उन्हे भी यह रोग हो सकता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. कतिपय खाद्य पदार्थों के अनुकूल न पड़ने पर भी ये रोग की उत्पत्ति में सहायक होते हैं।

१०. दमा उन लोगों में अधिक होता है, जिन्हें बचपन से ही फल, हरे शाक और पौष्टिक भोजन यथेष्ट मात्रा में नहीं मिलते।

११. कम उम्र में ही बीड़ी, सिगरेट की लत लग जाने से फेफड़े कमजोर हो जाते हैं और आगे चल कर उन्हें यह रोग हो जाता है।

१२. कुछ व्यक्तियों के शरीर का गठन ही ऐसा होता है जिसके कारण उनको दमा का रोग हो जाता है।

१३. ○ कुछ परिवारों में यह रोग पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलता ही रहता है।

○ एस्प्रिन तथा 'नॉन स्टेराइडल एण्टी-इन्फ्लेमेटरी एजेन्ट्स'—ये कुछ रोगियों में गम्भीर स्वरूप का दमा उत्पन्न करते हैं।

प्रवेग का प्रारम्भ—किसी प्रत्यूर्जता जनक (Allergen) पदार्थ के सम्पर्क में आने पर श्वासनलिकाओं के संक्रमण एवं मानसिक कारणों से इस रोग का प्रवेग शुरू हो जाता है। ○ इस प्रकार से 'एलर्जी', 'इन्फेक्शन' तथा 'मानसिक'—ये इसके ३ कारण माने जाते हैं।

लक्षण एवं चिह्न (Symptoms and signs)—दमे के लक्षण एवं चिह्नों को सुविधा के लिए निम्न ३ भागों में बाँटा जा सकता है—

१. पूर्व सूचक लक्षण।

२. आक्रमण के समय मिलने वाले लक्षण।

३. आक्रमण समाप्ति काल के लक्षण।

(१) **पूर्व सूचक लक्षण**—दमे के आक्रमण से पूर्व रोगी कुछ ऐसे लक्षण अनुभव करता है, जिससे उसको इसके आक्रमण का पूर्वानुमान हो जाता है। इस प्रकार के लक्षणों का सामूहिक नाम **'दमा पूर्वाभास'** (Asthmatic aura) है।

○ छींकों का आना, नाक से पानी के समान पतले स्राव का निकलना, आध्मान, नाक में खुजली-सी होना, कभी-कभी मानसिक विक्षोभनशीलता, बेचैनी और चिड़चिड़ापन आदि दमे के पूर्व सूचक लक्षण होते है, जिनको देखकर रोगी को आने वाले संकट का पूर्वानुमान हो जाता है। किन्तु किन्हीं-किन्हीं रोगियों में उपरोक्त लक्षण नहीं भी मिलते।

(२) **आक्रमण के समय मिलने वाले लक्षण**—

१. दमे का दौरा प्रायः रात्रि में प्रारम्भ होता है, परन्तु कभी-कभी दिन में भी पड़ जाता है।

२. पूर्व सूचक लक्षणों के समय और कभी-कभी उसके पश्चात् रोगी में कष्टश्वास (Dyspnoea) की उत्पत्ति हो जाती है। सम्पूर्ण वक्ष में रोगी को एक खिचाव-सा प्रतीत होता है। यदि रोगी लेटा हुआ है तो कष्टश्वास

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के कारण उसको एकाएक बैठना पड़ता है। उसका दम घुटता-सा प्रतीत होता है। रोगी को पलंग पर आगे झुककर बैठने से कुछ आराम प्रतीत होता है। वह खिड़कियाँ खोल कर दोनों हाथ इस आशय से उठा लेता है ताकि अधिक से अधिक हवा उसके सीने में आ जाये। उसे साँस लेने या छोड़ने में कष्ट होता है। वह साँस जल्दी लेता है, परन्तु श्वास निकालने में अधिक समय लगता है। अनेक प्रयास करने पर भी रोगी की घुटन दूर नहीं होती है।

३. देखने में रोगी की शिराएँ (जुगुलर वेन) फूली हुई दीखती हैं।

४. ऑक्सीजन कम मिलने से उसका चेहरा कुछ फीका-सा प्रतीत होता है।

५. बलपूर्वक श्वास लेने से अन्तः तथा बहिःश्वास दोनों के साथ साँय-साँय की ध्वनि (Wheezing noise) दूर बैठे व्यक्ति को भी सुनाई पड़ती है।

६. रोगी बहुत बेचैन हो उठता है। वह घबराया हुआ-सा होता है। उसका सारा शरीर पसीने से भीग जाता है, हाथ-पैर ठंडे हो जाते हैं और उसकी त्वचा पर श्यावता उत्पन्न हो जाती है।

७. स्टेथिस्कोप से परीक्षा करने पर रॉन्काई (Ronchi) शब्द स्पष्ट सुनाई देते हैं। कुछ क्रेपीटेशन भी मिलते हैं। प्रश्वसन क्रिया (Inspiration) निःश्वसन क्रिया (Expiration) से अपेक्षाकृत कम सामान्य होती है। नाड़ी की गति तीव्र तथा सिस्टोलिक प्रेशर बढ़ा हुआ मिलता है।

(३) आक्रमण समाप्ति काल के लक्षण—

१. श्वासरोग का वेग ½ से २ घण्टे तक रहकर स्वतः शान्त हो जाता है।

२. यह रोग श्वासकृच्छ्रता के साथ प्रारम्भ होता है और खाँसी के साथ-साथ समाप्त हो जाता है।

३. वेग के आरम्भ होने के कुछ समय पश्चात् खाँसी आरम्भ होती है। जिसमें पहले थोड़ा तथा कुछ पतला श्लेष्मा (बलगम) निकलता है। खाँसी उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है और बलगम भी अधिक तथा गाढ़ा होता जाता है। खाँसी द्वारा श्वास-नलिकाओं में संचित हुए बलगम के निकल जाने के साथ श्वास का वेग शनैः शनैः कम होकर शान्त हो जाता है और कुछ समय बाद रोगी फिर से सामान्य हो जाता है। यह बलगम बहुत चिपचिपा होता है।

४. रोगी को प्रायः रात्रि में पर्याप्त मात्रा में पीले रंग का मूत्र आता है और उसके बाद वह सुबह तक चैन से सोता है।

दमे का दौरा—

१. दमे का दौरा कुछ मिनटों से लेकर कुछ घण्टों तक जारी रह सकता है। यह दौरा कुछ हफ्तों के लेकर महीनों तक प्रत्येक रात्रि में एक ही समय पर प्रारम्भ होता है। उसके बाद कुछ हफ्तों अथवा महीनों तक बिलकुल शान्त हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. ○ दमे का दौरा बार-बार पड़ते रहने से रोगी को 'इम्फीसीमा' का रोग हो जाता है। इस रोग में फेफड़ों के अन्दर हवा की थैलियाँ फैल कर बड़ी हो जाती हैं, जिससे हर समय रोगी का श्वास फूलता रहता है।

३. ○ कुछ रोगियों में दमे का दौरा निरन्तर बना रहता है, जिससे रोगी की श्वसन मांसपेशियाँ शनैः शनैः थक कर बिलकुल कार्यहीन एवं अक्षम हो जाती हैं और श्वसन-पात (Respiratory failure) के कारण रोगी की मृत्यु हो जाती है।

४. स्टेटस अस्थमेटिकस (Status asthmaticus)—निरन्तर दमे की स्थिति बने रहने की अवस्था को सतत दमा (Status asthmaticus) कहते हैं। इसमें श्वासकृच्छ्रता बराबर बनी रहती है। श्वास-नलिकाओं में संचित कफस्राव को खाँस कर निकालने की क्षमता के अभाव में यह अवस्था उत्पन्न होती है। इस अवस्था में श्वासनलिकाओं में कफ रुका रहता है।

○ यह एक गम्भीर स्थिति है। उचित चिकित्सा के अभाव में रोगी के प्राण संकट में पड़ जाते हैं।

रोग-निदान (Diagnosis)—रोगी में निम्न बातों के मिलने पर रोग का निदान आसानी से हो जाता है—

१. रोगी के परिवार में दमे का पूर्व इतिहास का मिलना।

२. रोगी में एलर्जिक रोगों का पूर्व इतिहास का मिलना।

३. रोग का प्रारम्भ कम आयु में होना।

४. दमे के २ आक्रमणों के मध्य श्वसन सम्बन्धी कोई विकृति न मिलना।

५. आक्रमण काल के पश्चात् खाँसी की उत्पत्ति तथा कुछ चिपचिपे श्लेष्मा का आना।

६. एड्रीनलीन तथा श्वसनी-विस्फारक (ब्रॉन्को डाइलेटर्स) का सूचीवेध देने से रोगी को तत्काल राहत का मिलना।

○ निम्न लेबोरेटरी परीक्षण से रोग का निदान हो जाता है—

लेबोरेटरी परीक्षण—

१. रक्त-परीक्षण—इओसिनोफिल्स ५ या १०% मिलते हैं।

२. कफ-परीक्षण—इसमें प्लग्स तथा स्पाइरल्स की उपस्थिति मिलती है।

३. श्रवण-यंत्र-परीक्षण—स्टेथिस्कोप से परीक्षा करने पर अन्तःश्वास तथा बहिःश्वास के साथ सीटियों की ऊँची आवाज सुनाई देती है।

○ बहिःश्वास अन्तःश्वास की अपेक्षा दीर्घतर सुनाई पड़ती है।

○ 'वोकल रिसोनेन्स' घटी हुई सुनाई पड़ती है।

○ फेफड़ों में हवा के अधिक मात्रा में भरे होने के कारण छाती पर टकोर की आवाज ऊँची होती है।

४. नाड़ी-परीक्षा—नाड़ी अल्प तथा गति में तीव्र होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. **ब्लड-प्रेशर**—प्रायः कम मिलता है।

६. **एक्स-रे परीक्षा** (X-ray examination)—रोगी का एक्स-रे कराने पर उसमें श्वसनिकाएँ अधिक स्पष्ट दिखलायी देती है।

Essentials of diagnosis—1. Reccurent acute attacks of dyspnoea, cough and mucoid sputum and wheezing.

2. Expiratory ronchi all over chest.

3. Symptoms promptly reversible with bronchodilators.

4. X-ray chest—normal in early cases. Emphysematous changes with pneumothorax in late cases.

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—ब्रॉन्कियल अस्थमा में तथा निम्नलिखित रोगों में विभेदक निदान करना अति आवश्यक होता है, क्योंकि निम्न रोगों में कष्टश्वास प्रमुख लक्षण के रूप में मिलता है—

१. इओसिनोफीलिया (Tropical eosinophilia)।

२. हृदयजन्य दमा (Cardiac asthma)।

३. यूरीमी दमा (Uraemic asthma)।

४. फुप्फुसीय यक्ष्मा (Lungs tuberculosis)।

५. तीव्र तथा चिरकारी श्वसनीशोथ (Acute and chronic bronchitis)।

ब्रॉन्कियल अस्थमा तथा इओसिनोफीलिया में विभेदक निदान—

ब्रॉन्कियल अस्थमा (Bronchial asthma)	इओसिनोफीलिया (Eosinophilia)
१. **आयु**—प्रथम दौरा ३ वर्ष से कम आयु में। वैसे किसी भी आयु में सम्भव।	१. यह किसी भी आयु में सम्भव है।
२. **लिंग**—यह पुरुषों में अधिक होता है।	२. इसमें स्त्री-पुरुष दोनों समान रूप से प्रभावित होते हैं।
३. **व्याधि का समय**—दीर्घ समय तक रहता है।	३. कम समय तक रहता है।
४. **तापक्रम**—सामान्य रहता है।	४. रोग के आरम्भ में थोड़ा-बहुत ज्वर रहता है, पर बाद में सामान्य हो जाता है।
५. **खाँसी**—पहले कष्टश्वास के लक्षण उत्पन्न होते हैं। दौरा समाप्त होने पर खाँसी प्रारम्भ होती है।	५. इसमें खाँसी कष्टश्वास से पूर्व और बाद दोनों समय रहती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. **कष्टश्वास**—इसमें साँस बाहर निकालते समय कष्टश्वास होता है।	६. ऐसा कोई लक्षण नहीं होता है।
७. **भार में कमी**—भार में कोई कमी नहीं आती है।	७. अरुचि होने के कारण भार में पर्याप्त कमी आ जाती है।
८. **रक्त**—इसमें रक्त की श्वेत कोशिकाएँ प्रायः सामान्य रहती हैं।	८. इसमें श्वेत कोशिकाओं की बहुलता मिलती है। ये १०,००० से ४०,००० प्रति क्यू० मिली० तक पहुँच सकती है।
९. **कफ**—इसमें प्लग्स तथा स्पाइरल्स की उपस्थिति मिलती है।	९. प्रायः अनुपस्थित मिलती है।
१०. **एक्स-रे**—इसमें कभी-कभी श्वसनिकाओं के चिह्न स्पष्ट दीखते है।	१०. इसमें प्रायः धब्बे-से दिखलाई देते हैं।
११. **चिकित्सा**—इसमें चिकित्सा से कोई स्थायी लाभ की आशा नहीं की जाती।	११. इसका स्थायी लाभ डाइएथिल कार्बामिजीन साइट्रेट (हेट्राजान) आदि से सम्भव है।

श्वसनिका दमा तथा हृदयजन्य दमा में विभेदक निदान

श्वसनिका दमा (Bronchial asthma)	हृदयजन्य दमा (Cardiac asthma)
१. **आयु**—यह प्रायः ३ वर्ष से कम की आयु में प्रारम्भ होता है।	१. यह मध्य आयु अर्थात् ५०-६० वर्ष की आयु में अधिकतर मिलता है।
२. **समय**—कई रातों में दौरे के रूप में चल सकता हैं।	२. यह पहली रात में होता है।
३. **लिंग**—स्त्री-पुरुष दोनों में समान रूप से मिलता है।	३. यह केवल पुरुषों में मिलता है।
४. **श्वासकष्ट**—इसमें निःश्वास के के समय रोगी को कष्टश्वास होता है।	४. इसमें ऐसा लक्षण पुसवन के समय होता है।
५. **खाँसी**—इसमें खाँसी दौरे के बाद आती है।	५. इसमें खाँसी प्रारम्भ से ही उपस्थित रहती है।
६. **एलर्जी का इतिहास**—इसमें परिवारिक अथवा व्यक्तिगत एलर्जी का इतिहास मिलता है।	६. प्रायः एलर्जी का इतिहास नहीं मिलता।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. **आक्रमण का समय**—अधिकतर प्रातःकाल के समय।	७. अधिकतर अर्ध रात्रि के समय।
८. **रक्तभार**—इसमें सिस्टोलिक प्रेशर प्रायः कम ही मिलता है।	८. रक्तभार बढ़ा हुआ मिलता है।
९. **छाती**—छाती में हवा भरी होने से वह फूली हुई दीखती है।	९. छाती में हवा के न भरा होने से वह दबी हुई मिलती है।
१०. **नाड़ी**—इसमें नाड़ी भरी हुई दीर्घ-कालिक (Bounding) होती है।	१०. नाड़ी हल्की तथा वेग वाली होती है।
११. **श्रवण-यन्त्र परीक्षा**—रॉन्काई सुनाई पड़ते हैं।	११. इसमें क्रेपीटेशन की अधिकता मिलती है।
१२. इसमें बहिःश्वास अन्तःश्वास की अपेक्षा दीर्घ होता है।	१२. बहिःश्वास अन्तःश्वास की अपेक्षा दीर्घ नहीं होता है।
१३. **ई० सी० जी०**—इसमें सामान्य रहता है।	१३. इसमें अवसामान्यता मिलती है।

नोट—ब्रॉन्कियल अस्थमा और यूरीमी दमा व श्वसनीशोथ में विभेदक निदान अत्यन्त सरल है। वक्ष का एक्स-रे ई० एस० आर०, कफ-परीक्षण, ज्वर, पूर्व इतिहास, वृक्कों के विकृति होने के पूर्व इतिहास आदि से रोग का निदान हो जाता है।

उपद्रव (Complications)—इसमें मुख्य उपद्रव निम्न प्रकार है—

१. स्टेटस अस्थमेटिकस।
२. द्वितीयक संक्रमण—ब्रॉन्काइटिस, टी० बी०।
३. फुस्फुस का इम्फाइसीमा।
४. राइट हार्ट-फेल्योर।
५. ब्रॉन्कियेक्टेसिस (Bronchiectasis)।

भावीफल (Prognosis)—१. २० वर्ष की आयु से पूर्व बाल्यावस्था तक का दमा स्वयमेव ठीक हो जाता है और २५ वर्ष की आयु के बाद का रोग ठीक नहीं होता है।

२. रोग के वास्तविक कारण को दूर कर ठीक किया जा सकता है।

३. जब रोग चिरस्थायी हो जाता है तो जीवन-पर्यन्त बना रहता है।

४. दक्षिण हृदय में अधिक रक्त रुका रहने से उस पर अधिक कार्य-भार पड़ता है, जिसके कारण उसमें पहले अतिवृद्धि (Hypertrophy) हो जाती है और आयु के बढ़ने के साथ-साथ अथवा शारीरिक शक्ति क्षीण होने पर उसमें शिथिलता (Dilatation) अथवा फेल्योर का उपद्रव होकर रोगी की मृत्यु हो जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा (Treatmant)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)

१. केवल दवाओं के बल पर दमा को दूर करने की आशा रखना व्यर्थ है। दमे का पहला दौरा प्रारम्भ होते ही भविष्य के लिए सचेत हो जाना चाहिए।

२. रोगी के स्वास्थ्य को सुधारने के लिए भरसक प्रयत्न करना चाहिए।

३. धूम्रपान का पूर्ण निषेध आवश्यक है।

४. सामान्य शारीरिक तथा नाड़ी सम्बन्धी दुर्बलता को दूर करने के लिए रोगी को खुली हवा में प्रातः-सायं मृदु व्यायाम, मालिश तथा भ्रमण करायें।

५. रोगी की मानसिक चिन्ता को दूर करने का यथाशक्ति प्रयास करना चाहिए।

६. रोगी को सदैव धुएँ-धूल आदि से बचाना चाहिए। धूप में जाने, गर्म जल से स्नान करने तथा व्यायाम के बाद शीतवायु, शीत जलपान आदि से बचाना चाहिए।

७. नासिका को क्षोभों से बचाने के लिए नाक को दिन में १ बार नार्मल सेलाइन से धोते रहना चाहिए।

८. आँतों में अजीर्ण, मलावरोध, अमीबिक प्रवाहिका के कारण विक्षोभ रहता हो तो पाचक तथा लघु संत्रक औषधियों का प्रयोग करना चाहिए।

९. रोगी के फेफड़ों में अधिक हवा भरी रहने से 'इम्फाइसीमा' रहता है। अतः इसे दूर करने के लिए खुली हवा में प्रातः-सायं २ बार १५ मिनट तक व्यायाम करना चाहिए।

१०. रोगी को प्रतिदिन हरी पत्ती वाले शाक काफी मात्रा में खिलाना चाहिए। टमाटर और गाजर आदि का सलाद बनाकर प्रतिदिन खिलाना चाहिए।

११. प्रतिदिन मल्टी-विटामिन्स लेते रहना चाहिए।

१२. प्रतिदिन ऐसे व्यायाम करें, जिससे फेफड़े अधिक स्वस्थ रहें।

१३. खुली हवा में अधिक समय तक रहें। रात्रि के समय खिड़की खोल कर शयन करें।

१४. घृत, मक्खन, बादाम, फल, सब्जी तथा विटामिन 'ए' और 'डी' (एडेक्सोलीन कै० या लिक्विड) पर्याप्त मात्रा में सेवन कराना चाहिए। प्रतिदिन १५-३० ग्राम ग्लूकोज या मधु तथा कैल्शियम (गोली, शर्बत, इञ्जेक्शन आदि) देना चाहिए।

१५. मानसिक विक्षोभ को दूर करने के लिए—फीनोबार्बीटोन १५ मिग्रा० की मात्रा में दिन में २ बार दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

○ श्वासरोग को दूर करने वाली औषधि अभी तक ज्ञात नहीं हो सकी हैं। इसकी केवल शामक चिकित्सा है, जिसका प्रभाव थोड़े समय के लिए रहता है। अतएव आगे इसी का वर्णन किया जा रहा है।

○ इसकी चिकित्सा २ भागों में विभक्त कर की जाती है—

१. आक्रमण के समय की चिकित्सा।

२. दो आक्रमणों के मध्य की चिकित्सा।

(१) आक्रमण के समय की चिकित्सा—

१. मृदु प्रकार के आक्रमण में—

℞ टेबलेट आइसोप्रिनालिन सल्फेट २० मि० ग्रा०

व्या० नाम—टेब० नियो-एपीनाइन

मात्रा—१०–३० मि० ग्रा० दिन में ३ बार जिह्वा के नीचे रखकर चूसना।

अथवा—टेबलेट इफेड्रीन (Tab. Ephedrin) ३० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—टेड्राल (Tedral)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—एस्थालिन (Asthalin) ४ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में २ या ३ बार प्रति ४ घण्टे पर।

२. गम्भीर स्वरूप के आक्रमण में—

℞ इञ्जे० एड्रीनलीन (१ : १०००) ०.२–०.५ मिली० S/C प्रति २ घण्टे पर।

निषेध—इसे 'हाइपरटेन्शन' तथा 'कोरोनरी आर्टीरियल' रोगों में नहीं देना चाहिए। ऐसे रोगियों में—

℞ इञ्जे० एमीनोफाइलिन ०.२४ ग्राम (१० मिली० सोल्युशन) I/V धीरे-धीरे दें। अथवा १ एम्पुल को १० मिली० डिस्टिल्ड वाटर में घोल कर गुदा मार्ग से दें।

इञ्जे० वेटनीसोल अथवा इञ्जे० डेकाड्रान

मात्रा—८ मि० ग्रा० I/V ३ घण्टे पर आवश्यकतानुसार दें।

नोट—एमीनोफाइलिन १० मिली० के एम्पुलों में आती है। प्रयोग में लाने से पूर्व ५% ग्लूकोज को २० मिली० सोल्युशन में इस एम्पुल की सम्पूर्ण औषधि मिलाकर धीरे-धीरे शिरा में प्रवेश करें।

अथवा—℞ इञ्जे० डेरीफाइलिन (Inj. Deriphyllin)

मात्रा—१ एम्पुल I/M दिन में २–३ बार।

नोट—इसे I/V मार्ग से भी दे सकते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—इन्जे० एल्यूपैण्ट (Inj Alupent)
मात्रा—१ मिली० मांसपेशीगत ।
अथवा—अस्थेलिन इन्हेलर (२०० मात्राओं की १ पैकिंग) ।
मात्रा—१–२ इन्हेलेशन दिन में ३–४ बार ।
नोट—उपकरण को प्रयोग में लाने की विधि पैकिंग के साथ उपलब्ध होती है ।

साथ ही **मानसिक विक्षोभ को दूर करने के लिए**—
℞ डायजीपाम ५ मि० ग्रा० अथवा फीनोबार्बीटोन ३० माइक्रोग्राम पेरेण्टरली दें ।

दौरा शान्त होने के पश्चात् की चिकित्सा—
℞ टेड्राल एस-ए० अथवा एस्थालिन एस-ए०
मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ।
अथवा—डेबलेट सालबूटामोल ४ मि० ग्रा०
मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ।
अथवा—टेबलेट टरबूटालिन २·५–५ मि० ग्रा०
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार ।
अथवा—टेबलेट सालबूटामोल-थियोफाइलिन
साथ ही—फेन्सेडिल लिक्टस (Phensidyl linctus)
मात्रा—१ चम्मच रात्रि में सोते समय ।

चिरस्थायी दमा (Chronic asthma) में—
℞ टेबलेट फ्रानोल या टेड्राल
मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ।
अथवा—मारेक्स (Marex)
मात्रा—१ गोली दिन में २ या ३ बार ।
अथवा—टेबलेट 'एल्यूपेण्ट' या 'सालबूटामोल' या 'टरबूटालिन'
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार ।
अथवा—टेबलेट प्रेडनीसोलोन ५ मि० ग्रा०
मात्रा—१ गोली दिन में २ या ४ बार, सप्ताह में ३ बार ।
अथवा—कोर्टीकोस्टेराइड इन्हेलेशन
वीक्लोमेथाजोन (वीक्लेट-सिपला) इन्हेलर दिन में २-४ बार ।

नोट—जीर्ण श्वासरोग में रोगी की पुरानी खाँसी दूर करने के लिए—
℞ टेट्रासाइक्लीन २५० मि० ग्रा०
मात्रा—१ कै० दिन में ३ बार ७ दिन तक ।

सतत दमा (Status asthmaticus)—रोगी में हर समय दमे की अवस्था बनी रहने की स्थिति को सतत दमा या स्टेटस अस्थमेटिकस कहते हैं ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. एड्रीनलीन एवं एमीनोफाइलीन पहले की तरह दें।

२. यदि 'एड्रीनलील' अथवा 'एमीनोफाइलीन' से सन्तोषजनक लाभ न मिले तो—स्टेराइड्स का प्रयोग प्रारम्भ कर देना चाहिए।

℞ डेक्सामेथासोन अथवा वीटामेथासोन का प्रयोग करें।

इञ्जे० एमीनोफाइलीन ५०० मि० ग्रा० शिरामार्ग से तथा—

इञ्जे० इफकोर्लिन २०० मि० ग्रा० शिरा मार्ग से।

तथा—आक्सीजन सुघायें।

अथवा—प्रेडनीसोलोन (Prednisolone) ५ मि० ग्रा०

मात्रा—१२-१६ गोली २४ घण्टे में विभाजित मात्रा में दें।

अथवा—इञ्जे० वीटामेथासोन (वीटाकोर्टिल, इञ्जे० मिलीकार्टन अथवा इञ्जे० बेटनीसोल)

मात्रा—१-२ मिली० I/M दिन से ३-४ बार।

अथवा—इञ्जे० डेक्सामेथासोन (इञ्जे० डेक्साड्रान तथा मिलीकार्टन)

मात्रा—½–१ मिली० प्रति ६ घण्टे पर।

निर्देश—○ स्टेराइड्स का प्रयोग उन्हीं रोगियों में करना चाहिए, जिनमें औषधियाँ लाभकारी न हो रही हों। इनका प्रयोग धीरे-धीरे बन्द करना चाहिए।

यदि उपरोक्त चिकित्सा से कोई संतोषजनक लाभ न मिल रहा हो तो निम्न व्यवस्था अपनानी चाहिए—

℞ एमीनोफाइलिन के ४ एम्पुलों (१ ग्राम) को ५% ग्लूकोज की ५०० मिली० की बोतल में मिला लें। यह एक ड्रिप की मात्रा है। आवश्यकतानुसार ऐसा ड्रिप प्रति ६ घण्टे पर देते रहें, जब तक रोगी सतत स्वरूप के दमे से छुटकारा न पा जाये।

सतत दमे में संक्रमण की सम्भावना रहती है, अतः उपर्युक्त चिकित्सा के साथ-साथ—

℞ एम्पीसिलीन या एनोक्सीसिलीन या लिनकोसिलीन

मात्रा—५०० मि० ग्रा०, प्रति ६ घण्टे पर।

टेबलेट डायजीपाम २ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

नोट—दमे का दौरा यद्यपि मृदु स्वरूप का हो अथवा उग्र स्वरूप का हो, इसमें कफोत्सारक (Expectorents) का प्रयोग अवश्य करना चाहिए। इसके लिए 'फेंसिडिल लिक्टस' अथवा 'कोरेक्स कफ सीरप' अधिक उपयुक्त रहता है।

(२) दो आक्रमणों के बीच की चिकित्सा—

१. ℞ इफेड्रीन ३०–६० मि० ग्रा० नित्य।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—एमीनोफाइलीन १००–३०० मि०ग्रा० नित्य।
अथवा—टरबूटालीन २·५–५ मि० ग्रा० प्रतिदिन।
अथवा—सालबूटामोल २–४ मि० ग्रा० नित्य।
अथवा—ओरसीप्रेनालीन १०–२० मि० ग्रा० नित्य दें।
२. ℞ सोडियम क्रोमोग्लाइकेट इनहेलेशन
मात्रा—२० मि० ग्रा० दिन में ४-५ बार, विशेष इनहेलर द्वारा।
३. ℞ प्रेडनीसोलोन ५-१० मि० ग्रा० दिन में १ बार।

अथवा—℞ एमीनोफाइलीन	१०० मि० ग्रा०
फेनरगान पाउडर	१० मि० ग्रा०
प्रेडनीसोलोन	५ मि० ग्रा०
ऐसी एक मात्रा दिन में १ या २ बार।	१ मात्रा।

अथवा निम्न चिकित्साक्रम के अनुसार २ आक्रमणों के बीच की चिकित्सा करनी चाहिए—

℞ इञ्जे० गामाअलर्जन (Inj. Gamalergen)

मात्रा—वयस्कों में—१ वायल की औषधि को २ मिली० डिस्टिल्ड वाटर में घोलकर अधत्वक् मार्ग से दें। पुनः दूसरा और तीसरा इञ्जे० ७ दिन पर दें। यह कुल ३ इञ्जे० का कोर्स है।

अथवा—इञ्जे० हिस्टाब्लॉक (Inj. Histablock)

पैकिंग—२ मिली० का घोल वायल रूप में आता है।

मात्रा—पैकिंग के साथ उपलब्ध लिटरेचर को पढ़कर मात्रानुसार लगायें।

दो आक्रमणों के बीच की चिकित्सा में दीर्घकालीक औषधियों का महत्त्वपूर्ण योगदान—

१. ℞ सोडियम क्रोमोग्लाइकेट (Sodium cromoglycate)
व्या० नाम—१. इफीरॉल कार्ट्रिज (Ifiral cartridge)
२. कैपसूल नैफाक्रोमाल (Cap. Nephacromal)

प्रयोग-विधि—१ कै० की औषधि को ४ बार इन्हेलेशन के रूप में प्रयुक्त करें। इस प्रकार ४ कै० प्रतिदिन विभाजित मात्राओं में दें।

नोट—जिन रोगियों में बार-बार दमे का दौरा पड़ता है, उन्हें यह विशेष रूप से लाभदायक है। ○ आक्रमण के दिनों में रोकथाम के लिए इसका प्रयोग होता है। इसमें ७०-८०% रोगियों को लाभ हो जाता है।

२. ℞ सालबूटामोल सल्फ इनहेलर (व्या० नाम–अस्थैलिन इनहेलर)
मात्रा— १ से २ इनहेलेशन दिन में ३ बार।
३. ℞ टरबूटालिन सल्फ सीरप अथवा टेबलेट
सीरप की मात्रा वयस्क—१०-१५ मिली० प्रति ८ घण्टे पर।
बालकों में—आयु के अनुसार प्रति ८ घण्टे पर।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टेबलेट की मात्रा वयस्क—५ मि० ग्रा० १ गोली प्रतिदिन।

बालकों में—आयु के अनुसार।

नोट—७ वर्ष से कम आयु वाले बालकों में सीरप का प्रयोग करें।

अथवा—वेण्टोलिन (एच.) सीरप एवं इनहेलर का प्रयोग करें।

४. ℞ प्रेडनीसोलोन ५ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में १ बार। यदि प्रतिनिर्दिष्ट न हो तो लम्बे समय तक दे सकते हैं।

नोट—○ उपर्युक्त औषधियों को दीर्घकाल तक सेवन कराकर दमे के दौरे को रोका जा सकता है, पर दौरे के समय इनसे कोई लाभ नहीं मिलता है। ऐसे समय दौरे (आक्रमण) के समान बतलाई गई औषधियों का ही प्रयोग करना चाहिए।

○ दीर्घकालिक प्रयोग में आने वाली उपरोक्त औषधियाँ ऐसी हैं जिसका शरीर पर कोई हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ता है। साथ ही—

५. श्वसन व्यायाम (Breathing exercise) लाभकर होता है।

६. संक्रमण तथा एलर्जिन्स एवं अन्य विक्षोभक पदार्थों को दूर रखें।

ऐसे रोगी जिन्हें नित्य अथवा दूसरे-तीसरे दिन दमे का दौरा आता है—

○ ऐसे रोगियों में 'प्रेडनीसोलोन' जीवनदान सिद्ध करने वाला होता है।

मात्रा—६० मि० ग्रा० प्रतिदिन आरम्भ करके धीरे-धीरे घटाते हुए प्रतिदिन ५ मि० ग्रा० (१ टेबलेट) पर अथवा अधिक से अधिक १½ टेबलेट पर ले आना चाहिए।

नोट—यह मात्रा १ वर्ष अथवा आजीवन प्रयोग की जा सकती है। एक-दो वर्ष तक सेवन कराने के पश्चात् कुछ दिनों तक दवा का सेवन बन्द कर आगे के लिए यह देखना चाहिए कि इस मध्य में यदि दमे का आक्रमण शान्त हो जाता है तो दवा का सेवन बन्द करा दें और यदि दौरा पुनः पड़ने लगे तो औषधि का सेवन प्रारम्भ करा दें।

चेतावनी—१. जिस समय ब्रॉन्कियल अस्थमा हाई ब्लडप्रेशर तथा एस्थेमिक हृदयरोग से उपद्रव युक्त हो तब एड्रीनलीन तथा एफेड्रीन का प्रयोग न करें।

२. ○ यदि एण्टी-हिस्टामिनिक औषधियाँ अस्थमा में अपना शुष्क प्रभाव दिखला रही हों तो इनका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

३. ऑक्सीजन का ब्रॉन्कियल म्यूकोजा पर सदैव शुष्क प्रभाव पड़ता है। इससे लाभ की अपेक्षा हानि अधिक होती है।

४. शामक औषधियों, यथा—मार्फीन, बार्बीट्यूरेट्स तथा ट्रैन्क्विलाइजर (Tranquillizers) का प्रयोग ब्रॉन्कियल अस्थमा में नहीं करना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनके प्रयोग से श्वसन केन्द्र (Respiratory centre) अपना कार्य बन्द कर सकता है। यदि नींद लाने वाली (Hypnotic) औषधियों की आवश्यकता हो तो **'ट्रिक्लोरिल सीरप'** अथवा **'डायजीपाम'** का प्रयोग करें।

○ मार्फीन अथवा अफीम के अन्य योगों का प्रयोग करने से मस्तिष्क के कफ सेण्टर का दमन हो जाने से रोगी की मृत्यु हो सकती है।

आवश्यक निर्देश—१. दमे के कारणों की खोज कर चिकित्सा करनी चाहिए।

२. ○ कुछ रोगियों के श्वासमार्ग में जीवाणुओं का संक्रमण हो जाता है, जिसके कारण उन्हें ज्वर रहने लगता है तथा पीले रंग का बलगम आता है। इन रोगियों को एण्टीबायोटिक औषधियों, यथा—एम्पीसिलीन, इरीथ्रोमाइसिन, टेट्रासाइक्लीन, क्लोक्सासिलीन आदि में से कोई एक जैसा कि ब्रॉन्काइटिस में बतलाया गया है; प्रयोग कराना चाहिए।

○ ज्वर जब समाप्त हो जाये और कफ का रंग साफ दीखने लगे तब दमे की चिकित्सा करनी चाहिए।

३. दमे के रोगियों में **'इओसिनोफीलिया'** की सम्भावना को ध्यान में रखते हुए रक्त की परीक्षा करवा लेना चाहिए। तत्पश्चात् उसकी चिकित्सा करनी चाहिए।

श्वासरोग की चिकित्सा : एक दृष्टि में

१. दौरे के समय की चिकित्सा।
२. दो आक्रमणों के बीच की चिकित्सा।

(१) दौरे के समय की चिकित्सा (Treatment during attack)—

(क) इञ्जेक्शन (Injection) चिकित्सा।
(ख) इनहेलेशन (Inhalation) चिकित्सा।
(ग) स्प्रे (Spray) चिकित्सा।
(घ) मुख मार्ग से (Orally) चिकित्सा।

(क) इञ्जेक्शन चिकित्सा—

१. एड्रीनलीन १ : १००० मिली०।
२. एड्रीनलीन + इफेड्रीन १ मिली० मांसपेशीगत।
३. एड्रीनलीन + इं० पिट्यूट्रीन १ मिली० मांसपेशीगत।
४. एमीनोफाइलीन १० मिली० मांसपेशीगत।
५. डेरीफाइलीन २ मिली० मांसपेशीगत।

अथवा—○ कार्डोफाइलिन २ मिली० मांसपेशीगत।

६. बेटनीसोल १ मिली० दिन में २ बार।
७. डेक्सामेथासोन (डेकॉड्रान) १ मिली० I/M या I/V।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ख) इनहेलेशन चिकित्सा—

१. स्ट्रामोनियम इनहेलेशन ।

२. ब्रोवोन अथवा एस्थेलिन इन्हेलेण्ट ।

(ग) स्प्रे-चिकित्सा—

१. कोकेन स्प्रे ।

२. ऑक्सीजन युक्त एड्रीनलीन का स्प्रे ।

(घ) मुख मार्ग से (Orally)—

टेबलेट—१. एस्थेलिन, २. टेड्राल एस-ए, ३. कोर्टास्मिल, ४. प्रेडनीसोलोन, ५. एमीनोफाइलिन, ६. डेरीफाइलिन, ७. एज़मापोक्स . डिपोट, ८. सेडोनल, ९. ○वेटनेलान, १०. डेकाड्रान ।

कैप्सूल—१. ब्रेनाड्रिल, २. मॉरेक्स कै० ।

(२) दो आक्रमणों के बीच की चिकित्सा—

(क) इञ्जेक्शन चिकित्सा—

१. इञ्जे० हिस्टाब्लाक १ वायल २ मिली० डिस्टिल्ड वाटर में S/C दें ।

२. इञ्जे० गामा अलर्जन ।

(ख) इनहेलेशन चिकित्सा—

१. एस्थेलिन इनहेलर—१-२ इनहेलेशन दिन में ३ बार ।

२. इफीराल इन्हेलेशन—१-२ इन्हेलेशन दिन में ३ बार ।

(ग) स्प्रे चिकित्सा—

१. कोकेन स्प्रे (Cocain spray)

२. एट्रोपीन इनहेलर पम्प द्वारा ।

(घ) मुख-मार्ग द्वारा—

१. वेण्टोलिन-एच सीरप ।

२. टरबूटालिन सल्फ सीरप या टेबलेट ।

(ङ) आउटो होमोथिरैपी—

रोगी का १० मिली० रक्त निकाल कर I/M प्रति सप्ताह ।

अस्थमा की मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१. ℞	इफेड्रीन हाइड्रोक्लोराइड ½ ग्रेन की	१ गोली
	एमीनोफाइलीन	½ गोली
	कोरामीन इफेड्रीन	½ गोली
	टिकार्डा	½ गोली
	ग्लूकोज पाउडर	१२०० मि० ग्रा०

१ मात्रा की १ पुड़िया बनालें ।

ऐसी १-१ पुड़िया ३-३ घण्टे पर दौरे के समय ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. ℞	एमीनोफाइलिन	१ गोली
	प्रेडनीसोलोन	२५ मि० ग्रा०
	इफेड्रीन	३० मि० ग्रा०
	विटामिन-सी (१०० मि० ग्रा०)	१ गोली
	ईस्ट	१ गोली
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार जल के साथ दें ।

३. ℞	टेडराल एस० ए० (वार्नर)	१ गोली
	रेडॉक्सान फोर्ट (रोशे)	१ गोली
		१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल के साथ ।

विशेष—यह बलगमी दमा में विशेष लाभकारी है । इससे बलगम आसानी से निगल जाता है ।

४. ℞	आज्मापॉक्स डिपॉट (निकोलस)	१ गोली
	एलुपेण्ट (जर्मन रेमेडीज)	१ गोली
	सीलिन (ग्लैक्सो) ५०० मि० ग्रा०	½ गोली
	ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल से ।	१ मात्रा ।

विशेष—○ साँस के कठिनाई से आने में लाभकारी ।

५. ℞	टेड्राल लिक्विड (वार्नर)	१० मिली०
	सालबेटाल सीरप (एफ० डी० सी०)	१० मिली०
	ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार भोजन के बाद ।	१ मात्रा ।

विशेष—श्वासकष्ट में विशेष लाभकारी ।

६. ℞	आज्माटोन लिक्विड (ईस्ट इण्डिया)	५ मिली०
	ब्रॉन्कोपेट इलिक्जिर (IDPL)	५ मिली०
	ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार ।	१ मात्रा ।

७. ℞	एटारेक्स (यूनिकेम) १० मि० ग्रा०	१ गोली
	एमीनोफाइलिन (वरोज वेल्कम)	१ गोली
	फेनर्गन (एम० बी०)	१ गोली
	सीलिन फोर्ट (ग्लैक्सो)	१ गोली
	एफेड्रीन हाइड्रोक्लोराइड (M. B.) ३० मिग्रा०	१ गोली
	सबको पीसकर १ पुड़िया बना लें	

ऐसी १ पुड़िया दिन में २ बार जल से ।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष—बलगमी दमा, एलर्जिक दमा तथा समस्त प्रकार के श्वासरोगों में उपयोगी।

८. ℞ एमीनोफाइलिन	१ गोली
डिविस्टीन	½ गोली
इफेड्रीन	३० मि० ग्रा०
ईस्ट	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार जल के साथ।	१ मात्रा।

विशेष—दुष्ट प्रतिश्याय जन्य दमा में लाभकारी।

९. ℞ एमीनोफाइलिन	१ गोली
डिजॉक्सिन	½ गोली
विटामिन-सी १०० मि० ग्रा०	१ गोली
ईस्ट	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार जल से दें।	१ मात्रा

१०. ℞ इफेड्रीन हाइड्रोक्लोराइड (M. B.)	३० मिग्रा० १ गोली
एमीनोफाइलिन (वरोज वेलकम)	१ गोली
गार्डिनल (एम० बी०)	१ गोली
होस्टाकार्टिन एच. (हैक्स्ट)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल से।	१ मात्रा

विशेष—कठिनाई से श्वास आने में लाभकारी। इससे बलगम पतला होकर आसानी से निकल जाता है।

११. ℞ मॉरेक्स (फाइजर)	१ कैपसूल
सेडोनल (ईस्ट इण्डिया)	१ गोली
फ्रेनॉल (डेज)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार जल से।	१ मात्रा

विशेष—ब्रॉन्कियल दमा में विशेष लाभकारी।

१२. ℞ इफेड्रीन हाइड्रोक्लोराइड	३० मि०ग्रा०
पापावरीन हाइड्रोक्लोराइड	१२० मि०ग्रा०
क्लोर प्रोमेजीन	१५ मि०ग्रा०
ग्लूकोज	३०० मि०ग्रा०
	सबको मिलाकर कै० में भर लें।

मात्रा—१ कै० दिन में २-४ बार जल से।

विशेष—तेज दौरे के समय देने से साँस के फूलने तथा खाँसी में लाभ मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३. B इफेड्रीन हाइड्रोक्लोराइड ३० मि०ग्रा० की	½ गोली
एमीनोफाइलिन	½ गोली
गार्डीनल २० मि०ग्रा० की	½ गोली
होस्टाकार्टिन एच०	½ गोली
सीलिन ५०० मि०ग्रा० की	½ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार जल से।	१ मात्रा

साथ ही—'एज्मापॉक्स डिपॉट' (Asmopox depot)

मात्रा—१ गोली प्रातः एवं रात्रि में सोते समय लघु भोजन के बाद।

ब्रॉन्कियल दमा में प्रयुक्त अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. एस्मेक (Asmac) (नि० वाण्डर)

मात्रा—गम्भीर अवस्था में श्वासकष्ट होने पर—१-२ गोली प्रति १-२ घण्टे पर, दिन भर में अधिक से अधिक ८। सामान्य स्थिति में ½–१ गोली।

२. एज्मापेक्स डिपॉट (Asmapax depot) (निकोलस)

मात्रा—१ गोली प्रातः-सायं भोजन के बाद। बालक–आयु के अनुसार।

३. एज्माप्लॉन (Asmaplon) (खण्डेलवाल)

मात्रा—तीव्र आक्रमण में—२-२ गोली दिन में ३ बार। तत्पश्चात् १ गोली दिन में ३ बार।

४. एज्माप्लॉन विद प्रेडनीसोलोन (Asmaplon with prednisolone) (खण्डेलवाल)

मात्रा—तीव्र आक्रमण में—२ गोली दिन में ३ बार। मेण्टेनेन्स डोज १ गोली दिन में ३ बार।

५. एस्पुल (Aspul) (ब्लू क्रॉस)

मात्रा—१ गोली दिन में ३-४ बार। इसका सीरप भी आता है—बच्चों के लिए ५-१० मिली० दिन में ३ बार आयु तथा शरीर-भार के अनुसार।

६. एस्थालिन (Asthalin) (सिपला)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार।

एस्थालिन एस० ए० भी आता है—

मात्रा–१ गोली प्रातः और रात के समय।

○ एस्थालिन सीरप (Asthalin syrup) (सिपला)

मात्रा—५-१० मिली० दिन में ३ बार।

○ एस्थालिन इनहेलर (Asthalin inhaler) (सिपला)

मात्रा—१-२ इनहेलेशन दिन में ३-४ बार। अधिक से अधिक २४ घण्टे में ८ इनहेलेशन।

७. बेक्लेट इनहेलर (Beclate inhaler) (सिपला)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—वयस्क—२ इनहेलेशन दिन में ३-४ बार। आवश्यकतानुसार २० इनहेलेशन तक। बालक–१-२ इनहेलेशन दिन में ३-४ बार।

Note—Patients who require chronic treatment of asthma with corticosteroids.

८. बेटाफिल (Betaphil) (नोल)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

विशेष उपयोग—अस्थमा + इओसिनोफीलिया में लाभकारी।

९. ब्रॉन्कोफिल (Bronchophyl) (CFL Pharma)

मात्रा—२-३ चम्मच दिन में ३ बार भोजन से पूर्व।

१०. ब्रॉन्कोफिल प्लस (Bronchophyl plus) (CFL Pharma)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार।

११. ब्रॉन्को प्लस (Broko plus) (विडल शायर)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार।

इसका सीरप भी आता है—मात्रा—२ मिली० दिन में ३-४ बार।

१२. ब्रॉण्टिल (Brontyl) (मैक)

मात्रा—१-२ एम्पुल I/V अथवा I/M अथवा S/C दें।

विशेष—यह ब्रॉन्कियल अस्थमा तथा सतत अस्थमा (Status asthmaticus) में विशेष लाभकारी है।

१३. ब्रोस्मिन फोर्ट (Brosmin forte) (सिन्थिको)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

नोट – क्रॉनिक ब्रॉन्काइटिस तथा ब्रॉन्कियल अस्थमा में—

○ ब्रोस्मिन सीरप—१ चम्मच दिन में ३ बार।

○ ब्रोस्मिन फोर्ट सीरप—१ चम्मच दिन में ३ बार।

१४. ब्रोवोन इनहेलेण्ट (Brovon inhalent) (विडल शायर)

मात्रा—१० बूंद केवल १ बार में इन्हेलेटर में डाल कर सूँघें।

१५. केडीफाइलेट (Cadiphylate) (केडिला)

मात्रा—१-२ गोली दिन में २-३ बार।

○ केडीफाइलेट इञ्जे०—१ एम्पुल I/M आवश्यकतानुसार। ३ मिली० वाटर मिलाकर I/V भी दिया जा सकता है।

○ केडीफाइलेट इलिक्जिर (Cadiphylate elixir) (केडिला)

मात्रा—वयस्क—५-१० मिली० दिन में ३ बार।

बालक—६ वर्ष से ऊपर—२·५–५ मिली० दिन में ३ बार।

विशेष उपयोग—ब्रॉन्कियल अस्थमा, कार्डियक अस्थमा तथा श्वासकष्ट में लाभकारी।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१६. कौलीफाइलीन फोर्ट (Choliphylline forte) (लूपिन)

मात्रा—बालक—५० से १०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार। इसका कै० भी आता है।

१७. कोर्ट अस्थमा-इण्डोन (Cort asthma-indon) (इण्डो फार्मा)

मात्रा—वयस्क—१-२ गोली दिन २ में बार।

बालक—½–१ गोली दिन में २ बार।

विशेष—ब्रॉन्कियल अस्थमा की प्रत्येक अवस्था में लाभकारी।

१८. इं० क्रोसील (Inj. Crosyl or croysal) (विडल शायर)

मात्रा—५००· माइक्रोग्राम I/M प्रति ४ घण्टे पर। इसे S/C भी दे सकते हैं।

अथवा—२५० माइक्रोग्राम I/V प्रति ४ घण्टे पर।

विशेष—सतत अस्थमा (Status asthmaticus) में लाभकारी।

१९. कूरास्मिन (Curasmin) (मैक)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

विशेष—तीव्र तथा रिकरेण्ट अस्थमा एवं स्टेटस अस्थमा में विशेष लाभकारी है।

२०. डेरीफाइलिन (Deriphyllin) (जर्मन रेमिडीज)

मात्रा—१-२ एम्पुल I/V दिन में २-३ बार।

○ डेरीफाइलिन टेबलेट—१-३ गोली दिन में ३ बार जल के साथ भोजनोपरान्त।

२१. डेरीफाइलिन रिटार्ड (Deriphyllin retard) (जर्मन रेमिडीज)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार। गम्भीर अवस्था में ३ गोली दिन में ३ बार।

विशेष—ब्रॉन्कियल अस्थमा एवं सतत अस्थमा में लाभकारी।

२२. डेरीफाइलिन सीरप (Deriphyllin syrup) (जर्मन रेमिडीज)

विशेष—सभी प्रकार के दमा रोग में।

२३. इटोफाइलेट (Etophylate) (मॉर्टिन-हैरिस)

मात्रा—१०-२० मिली० दिन में ३-४ बार।

विशेष—सतत दमा (Status asthmeticus) में लाभकारी।

२४. फ्रेनोल (Franol) (डेज)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार। गम्भीर अवस्था में २ गोली दिन में ३ बार।

२५. हिफाइलिन (Hiphyllin) (लाइका)

मात्रा—वयस्क—२ मिली० I/M अथवा शिरा मार्ग में धीरे-धीरे।

विशेष—ब्रॉन्कियल अस्थमा तथा स्टेटस अस्थमेटिकस में लाभकारी।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२६. मारेक्स कै० (Marax cap.) (फाइजर कं०)
मात्रा—वयस्क—१ कै० दिन में २-४ बार।
बालक—½ कै० दिन में २-४ बार।

२७. मिनाफाइलिन इञ्जे० (Minaphyllin Inj.) (एफ० डी० सी०)
मात्रा—१-२ मिली० दिन में २-३ बार I/V अथवा I/M रूप में।
मिनाफाइलिन टेबलेट भी आती है—
मात्रा—१-२ गोली आवश्यकतानुसार।

२८. नियो-इपीनीन (Neo-epinine) (वरोज वेल्कम)
मात्रा—१०-३० मि० ग्रा० दिन में ३ बार जीभ के नीचे।

२९. परफाइलोन (Perphyllon) (जर्मन रेमिडीज)
मात्रा—२ मिली० I/M अथवा I/V (अधिकतम ६ मिली०) नित्य।
○ परफाइलोन टे० (Perphyllon tab.)—१ गोली दिन में कई बार भोजनोपरान्त।

विशेष—ब्रॉन्कियल अस्थमा तथा सतत दमा में लाभकारी।

३०. सालबीटोल (Salbetol) (F D C)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार। इसका सीरप भी आता है।

३१. सालबीटोल-हेट (Salbetol Het) (F D C)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार।
विशेष—समस्त प्रकार के दमा, इओसिनोफीलिया तथा ब्रॉन्काइटिस में।

३२. साल्माप्लोन (Salmaplon) (खण्डेलवाल)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार।

३३. सेडोनल (Sedonal) ईस्ट इंडिया—साथ के लिटरेचर के अनुसार।

३४. टेडराल, टेडराल एस. ए., टेडराल-ई, टेडराल-सी, टेडराल लि० (नि० वार्नर)

३५. टरबूटालीन एस्ट्रा (Terbutaline-astra) (एस्ट्रा-आइडियल)
मात्रा—२·५–५ मि० ग्रा० प्रति ८ घण्टे पर।
नोट—७ वर्ष से कम उम्र के बालकों में इसका प्रयोग न करें।
○ टरबूटालीन इञ्जे० (Terbutaline Inj.)—०·२५–०·५ मि०ग्रा० S/C दिन में ४ बार तक।
अथवा—१५–२५ मि० ग्रा० इण्ट्रावीनस इञ्जे०।
○ टरबूटालिन सीरप (Terbutalin syrup)—१०–१५ मिली० प्रति ८ घण्टे पर।

नोट—इस औषधि को टरबूटालिन के नाम से वैलेसी एवं सिपला कंपनियाँ भी बनाती हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३६. टरगिल (Tergil) (एम० एम० लैब्स)—२ गोली दिन में २-३ बार।

○ टरगिल एक्सपेक्टोरेण्ट (Tergil expectorent)

मात्रा—७–१५ वर्ष—५–१० मिली० दिन में ३ बार।

३–६ वर्ष—२·५–५ मिली० दिन में ३ बार।

३७. थियोमैक (Theomac) (मैक लेबोरेटरी)

मात्रा—१–२ गोली दिन में ३ बार।

३८. थियोसाल (Theosal) (मायो)—१ गोली दिन में ३ बार।

○ थियोसाल सीरप (Theosal syrup)—५ मिली० दिन में ३ बार।

३९. वेण्ट (Vent) (कोप्रान)—१-२ गोली दिन में ३ बार।

○ वेण्ट फोर्ट (Vent forte)—१ गोली दिन में ३ बार।

○ वेण्ट लिक्विड (Vent liquid)—५ मिली० दिन में ३ बार।

○ वेण्ट पी० डी० (Vent P. D.)—५ मिली० दिन में ३ बार।

एक्सपेक्टोरेण्ट्स—खाँसी के लिए निम्न पेटेण्ट कफ-निःसारण में लाभकारी होते हैं—एस्थालिन एक्सपेक्टोरेण्ट (सिपला), एविल एक्सपेक्टोरेण्ट (हैक्स्ट) ब्रिकारेक्स एक्सपेक्टोरेण्ट (एस्ट्रा-आइडियल), ब्रॉन्कोटस (विडल सायर), केडिस्टिन एक्सपेक्टोरेण्ट (केडिला), सोवेण्टोल एक्सपेक्टोरेण्ट (बोहरिंगर नोल), टरबूसिन एक्सपेक्टोरेण्ट (वैलेसी), विण्ट्री (Wintry) (ग्रूफिक)।

कार्डियक अस्थमा
(Cardiac Asthma)

परिचय—इसे हृद् जन्य श्वासरोग (Cardiac asthma) के नाम से भी जाना जाता है। इसे 'एक्यूट लेफ्ट हार्ट-फेल्योर' (Acute left heart-failure) भी कहते हैं।

कारण—इसके वही कारण हैं जो ब्रॉन्कियल अस्थमा के होते हैं।

लक्षण (Symptoms)—१. ब्रॉन्कियल अस्थमा के समान ही इसका दौरा रात्रि के समय प्रारम्भ होता है। परन्तु यह रोग पहली रात्रि में होता है।

○ इसके उत्पन्न होने पर दमा का आक्रमण अकस्मात् दो बजे रात्रि को होता है।

२. सामान्य रूप से कार्डियक अस्थमा का दौरा ४५ और ५० वर्ष की आयु के पश्चात् ही होता है।

३. श्वास अत्यन्त कष्ट से आता है। इसमें श्वासकृच्छ्रता तथा खाँसी प्रारम्भ से ही साथ-साथ रहती है। श्वास का वेग अत्यन्त तीव्र होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. दौरे के समय रोगी खुली खिड़की के समीप बैठ कर साँस लेने लगता है।

५. खाँसते-खाँसते थोड़ा-सा पतला बलगम निकलता है।

६. रोगी की नाड़ी भरी हुई तथा दीर्घगामी होती है।

७. छाती में हवा भरी होने के कारण फूली हुई दीखती है।

८. रोगी का रक्तभार बढ़ जाता है।

९. बहिःश्वास अन्तःश्वास की अपेक्षा अल्पावधि का होता है।

१०. फुफ्फुसीय धमनी शोथयुक्त प्रतीत होती है।

११. मुखमण्डल और हाथ-पैर सूजे हुए होते हैं।

१२. हाथों-पैरों पर ठंडा पसीना चलता है। साथ ही हृदय के शीर्षकोण का स्पन्दन मन्द तथा भारी प्रतीत होता है।

१३. स्टेथिस्कोप से परीक्षा करने पर क्रेपीटेशन की ध्वनि सुनाई पड़ती है।

○ इस प्रकार श्वासरोग पुरुषों में अधिक मिलता है।

चिकित्सा (Treatment)—१. रोगी को चारपाई पर 'Proping up position' में रखना चाहिए।

२. ऑक्सीजन सुँघाएँ।

३. ℞ डेरीफाइलीन (Deriphylline) (१०० मि० ग्रा०)

मात्रा—२ मिली० I/V धीरे-धीरे। इससे तत्काल लाभ मिलता है।

नोट—डेरीफाइलीन का इञ्जेक्शन मांसपेशीगत भी दिया जा सकता है।

४. ℞ फ्रूसीमाइड (Frusemide) २० मि० ग्रा०

मात्रा—२ मिली० का इञ्जेक्शन मांसपेशीगत।

नोट—आवश्यकता पड़ने पर धीरे-धीरे इण्ट्रावीनस भी दे सकते हैं।

शिशुओं में—१ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर।

श्वास का दौरा समाप्त होने के पश्चात्—

℞ ट्राईक्लोरिल सीरप (Tricloryl syrup)

मात्रा—१ चम्मच दिन में ३ बार।

शिशुओं में—५ मिली०/प्रतिकिलो शरीर भार पर, प्रतिदिन विभाजित मात्रा में।

○ एक्यूट कार्डियक अस्थमा के आक्रमण के पश्चात् रोगी की पूर्ण चिकित्सा हेतु 'डिजीटेलिस' (लेनोक्सिन) तथा 'डायोरेटिक्स' (फ्रूसीमाइड) का सेवन कराना चाहिए।

नोट—१. आक्रमण के पश्चात् रोगी को कम से कम ४ सप्ताह तक पूर्ण विश्राम की स्थिति में रखना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. रोगी के आहार में सोडियम क्लोराइड (नमक) की मात्रा कम से कम होनी चाहिए।

३. एमीनोफाइलीन का उपयोग समय-समय पर उत्तम रहता है।

मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१. ℞ एमीनोफाइलिन	१ गोली
लेनोक्सिन	½ गोली
ईस्ट	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३–४ बार।	१ मात्रा।
२. ℞ एमीनोफाइलिन	३० मि० ग्रा०
फीनोबार्बीटोन	१० मि० ग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में २–३ बार जल से।	१ मात्रा।
३. ℞ परफायलॉन (जर्मन रेमिडीज)	१ गोली
आस्मोलिन लिक्विड (G. D.)	१० मिली०
	१ मात्रा।

गोली पीसकर तरल में मिला लें। ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार जल से।

क्रानिक स्थिति में (In chronic condition)—

१. सामान्य चिकित्सा—शय्या पर पूर्ण विश्राम।

२. संक्रमण की चिकित्सा—

℞ एम्पीसिलीन २५० मि० ग्रा० कैप्सूल

मात्रा—१ कै० दिन में ३ बार ५ दिन तक।

एलर्जिक अस्थमा
(Allergic Asthma)

परिचय—यह एलर्जीजन्य दमा है। किसी विशेष प्रकार की वस्तु के सूँघने या खा लेने से अथवा किसी विशेष औषधि का इन्जेक्शन देने से किसी-किसी व्यक्ति में एक विशेष प्रकार की प्रतिक्रिया उत्पन्न हो जाती है।

लक्षण—प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप—

१. रोगी साँस कठिनाई से ले पाता है।

२. दम फूलता है।

३. रोगी बेचैन हो जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—

१. ℞ हिस्टाप्रेड (जॉन वाइथ).	२ गोली
इन्सीडाल (बायर कं०)	२ गोली
पेरिएक्टिन (M. S. D.)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३-५ बार आक्रमण के समय।	१ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. ℞ केनाकोर्ट (Kenacort) (साराभाई)

मात्रा—८–३२ मि० ग्रा० नित्य एक ही मात्रा में अथवा कई मात्राओं में विभाजित कर दें।

तीव्र अवस्था में—१ मिली० S/C या I/M दें।

३. ℞ पेरीडेका (Perideca) (एम० एस० डी०)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार। बच्चों को इसका सस्पेन्शन दें।

४. ℞ क्लोरफेनिरामिन मेलिएट पाउडर ४ मि० ग्रा०
बीटामेथासोन पाउडर ०.५ मि० ग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार जल से दें। १ मात्रा।

५. ℞ क्लोरफेनिरामिन मेलिएट पाउडर ८ मि० ग्रा०
सीलिन (ग्लैक्सो) १०० मि० ग्रा०
कैल्शियम ग्लूकोनेट पाउडर १ ग्राम
कैफीन साइट्रस ३० मि० ग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में १ या २ बार जल से। १ मात्रा।

६. ℞ इफीराल (Ifiral) (यूनीक)

मात्रा—१ कै० प्रति ६ घण्टे पर दिन में ४ बार।

अस्थमा की लाक्षणिक चिकित्सा—

१. **एलर्जिक दमा**—डेकाड्रान–१ गोली दिन में २ बार।

२. **जुकाम से उत्पन्न दमा**—सीलिन–१ गोली नित्य १ माह तक।

३. **स्नायु विकारों से उत्पन्न दमा**—लिवरियन १० मिग्रा० की १ गोली दिन में १ या २ बार।

४. **कष्टदायक खाँसी युक्त दमा**—जेफ्रल कफ सीरप–१ चम्मच दिन में ३ बार।

५. **हृदयविकार जन्य दमा—**

℞ टेडराल	१ गोली
लिबरियम	१ गोली

ऐसी १ मात्रा दिन में १ या २ बार।

६. **ब्रॉन्कियल दमा**—एलर्जिन टेबलेट—१-३ गोली नित्य दें।

७. **ब्रॉन्काइटिस तथा कालीखाँसी युक्त दमा**—इफेड्रिक्स (Ephedrix) टे० मात्रा—२-४ गोली दिन में ३-४ बार।

८. **कफ रुक जाने से साँस लेने में कठिनाई होने पर—**

इफेड्रीन हाइड्रोक्लोराइड ०·२५–०·५ मि० ग्रा० का इञ्जे० S/C दें। अथवा इसकी टेबलेट दिन में १ या २ बार दें।

९. **हृदय-शूल जनित दमा—℞** न्यूसीडिल (Neusidil)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार। १ गोली रात में सोने से पूर्व।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. तीव्र प्रकार के दमे में श्वास का कठिनाई से आना—

℞ बेटनीसोल टेबलेट—पहले दिन—६ गोली
दूसरे दिन—५ गोली
तीसरे दिन—४ गोली
चौथे दिन—३ गोली
पाँचवे दिन—२ गोली
छठवें दिन—१ गोली

नोट—इसका ६ दिन का एक कोर्स पूरा होता है।

११. रात के दौरे को रोकने के लिए—

℞ फ्रेनोल (Franol) (डेज कं०)
मात्रा—१-१ गोली रात में सोते समय।
अथवा—कैल्सीब्रोनेट (Calcibronate) टेबलेट।
मात्रा—१ गोली रात्रि में सोते समय।

१२. तेज स्वरूप के दौरे में—

℞ एज्मिण्डोन	१-२ गोली
डाइलेट्रेन	१-२ गोली
नियोइपीनीन	१ गोली (जीभ के नीचे)

नोट—इनमें से किसी एक का प्रयोग करने से दमे का दौरा शान्त हो जाता है।

सेविल्स सिस्टम आफ क्लिनिकल मेडिसिन के अनुसार दमा रोग की चिकित्सा—

१. आक्रमण के समय की चिकित्सा (During the attack)—

℞ टेबलेट इफेड्रीन हाइड्रोक्लोराइड ३० मि० ग्रा० टेबलेट, आइसोप्रेनालीन सल्फ (Isoprenaline sulph) १०-२० मि० ग्रा० जीभ के नीचे रख कर धीरे-धीरे चूसें।

इन्जे० एड्रीनलीन (Inj. Adrenaline) m 3-8 S|C.
एड्रीनलीन तथा एट्रोपीन कं० का इनहेलेशन। अथवा—
आइसोप्रेनालीन सल्फ कं० किसी उपयुक्त इनहेलर के द्वारा।

चिकित्सा के असफल होने पर—

℞ Kedamycin or Pitrenalin ०.५–१ मिली०
Pethidine hydrochloride ५०–१०० मिग्रा०
दोनों को मिलाकर इण्ट्रावीनस इन्जेक्शन दें।

२. गम्भीर स्वरूप का आक्रमण, सतत दमा (Status asthmaticus)–

इन्ट्रावीनस एमीनोफाइलीन (Cardiophyllin)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—०·२५-०·५ ग्राम औषधि १० मिली० डिस्टिल्ड वाटर में ३ से ५ मिनट तक की अवधि में दें।

Aminophylline (०·५ ग्राम) की सपोंजिटरी का गुदा में देना भी लाभकारी है।

नोट—यदि इण्ट्रावीनस द्वारा Amenophyllin सफल न हो तो—

Pethidine hydrochloride १०० मिग्रा० का इण्ट्रावीनस प्रयोग करें।

रोग की पुनरावृत्ति के निवारण हेतु—

Inj. Adrenaline muconate (०·५–१ मिली०)

दुःसाध्य अवस्था में (In obstinate cases)—

हाइड्रोकार्टीसोन एसीटेट १००-२०० मिग्रा० का २० मिली० नार्मल सेलाइन में, इण्ट्रावीनस द्वारा शनैः शनैः।

कॉर्टिकोट्राफिन B. P. (A C T H) १२·५–२५ मिग्रा० I/M प्रति ६ घंटे पर।

अथवा—कॉर्टिसोन एसिटेट मुख से अथवा I/M २५–३७·५ मिग्रा० प्रति ६ घण्टे पर २४ घण्टे तक।

तत्पश्चात्—२५ मिग्रा० दिन में ३ बार १ सप्ताह तक।

टे० प्रेडनीसोलोन ५ मिग्रा० दिन में ३ बार १ सप्ताह तक।

गम्भीर स्वरूप के आक्रमण के समय रोगी को हॉस्पिटल या नर्सिंग होम में दाखिल करा देना चाहिए।

ऑक्सीजन सुंघाना लाभकर हो सकता है।

गम्भीर स्वरूप के ब्रॉन्काइटिस के संक्रमण में—

पेनिसिलीन + स्ट्रेप्टोमाइसिन अथवा टेट्रासाइक्लीन।

कभी-कभी ब्रॉन्कोस्कोपी के द्वारा एस्पिरेशन लाभकारी होता है।

Expectorent mixtures contaning Potassium Iodide + Lobela. □

श्वसन-संस्थान के रोग 2/8

फुप्फुसावरणशोथ
(Pleurisy)

पर्याय—फुप्फुसावरण शोथ, फुप्फुसावरण प्रदाह, वक्षावरक झिल्ली प्रदाह, पसली का दर्द।

परिभाषा (Definition)—प्लूरा की दो परतों (Layer) की सूजन को प्लूरिसी या फुप्फुसावरणशोथ कहते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ प्रत्येक फ़ेफड़ा दो पतले पर्दों (म्यूकस मेम्ब्रेन) से ढँका होता है। इन पर्दों को प्लूरा कहते हैं। जब इन पर्दों में शोथ हो जाता है तो इसको प्लूरिसी कहा जाता है।

○ यह रोग जीवाणुओं के संक्रमण से होता है। इस पर्दे में शोथ आजाने पर दोनों पर्दों के बीच तरल एकत्रित हो जाता है। रोगी को साँस लेने पर छाती में सख्त दर्द होता है। इसके अतिरिक्त बुखार, कम्प, सूखी खाँसी, साँस लेने में कठिनाई आदि लक्षण हो जाते हैं।

रोग के कारण (Etiology)—

१. द्वितीयक विभिन्न फुप्फुसगत रोग—यथा—ट्युबरकुलोसिस, न्यूमोनिया, फुप्फुस-विद्रधि, ब्रॉन्काइटिस, पल्मोनरी इन्फार्क्शन, ब्रॉन्कोजेनिक कार्सीनोमा आदि।

२. वक्ष की दीवार में बाहरी आघात।

३. द्वितीयक सब-डायाफ्राग्मेटिक शोथ, यथा—सब डायाफ्राग्मेटिक विद्रधि, यकृत् विद्रधि आदि।

४. विकारी जीवाणुओं के उपसर्ग से—जिसमें मुख्यतया यक्ष्मा (T. B.) दण्डाणु का सम्पर्क होता है। उत्तरकालीन अनुभवों के आधार पर ६०-७०% तक इस रोग के रोगी यक्ष्मा से पीड़ित होते पाये गये हैं।

○ यक्ष्मा दण्डाणु के अतिरिक्त फुप्फुस गोलाणु, माला गोलाणु, डिफ्थीरिया जीवाणु, श्लेष्मक दण्डाणु आदि के द्वारा भी इसकी उत्पत्ति होती है।

५. अन्य सिस्टेमिक रोग—रियूमेटिक फीवर, यूरीमिया, रियूमेटाइड आर्थ्राइटिस, कोलेजन डिजीज आदि।

अन्य सहायक कारण—अधिकांश अवस्थाओं में शुष्क प्लूरिसी की उत्पत्ति तेज ठंडी हवा में अधिक समय तक रहने या भीगे कपड़े अधिक समय तक पहनने से होता है। परन्तु वास्तव में प्लूरिसी उन्हीं लोगों में होती है जिनके फेफड़ों पर न्यूमोनिया के जीवाणुओं का संक्रमण हो चुका होता है। अथवा जिनमें फुप्फुसों का क्षय प्रारम्भिक अवस्था में होता है।

प्रकार (Types)—१. तीव्र शुष्क प्लूरिसी (Dry pleurisy) अथवा फाइब्रीनस प्लूरिसी।

२. द्रवयुक्त प्लूरिसी (Pleurisy with effusion)।

तीव्र शुष्क फुप्फुसावरणशोथ
(Acute Dry Pleurisy)

परिचय—Acute dry pleurisy is an inflammation of the pleura without effusion. In this disease there is a fibrinous exudation

CC-0. Public Domain. Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

on the visceral and parietal layers of the pleura, and a tendency to the formation of adhesions and to the effusion of fluid.

—*Savills System of Clinical Medicine*

○ जब दोनों परतों के बीच एक चिपचिपा फाइब्रिन युक्त स्राव एकत्रित होता है, तब इसे 'शुष्क प्लूरिसी' कहते हैं।

रोग-लक्षण (Symptoms)—

१. **तापक्रम** (Temperature)—रोगी का तापक्रम प्रायः बढ़ा हुआ मिलता है। परन्तु कभी-कभी १००-१०१° फा० तक पहुँच जाता है। पूयोत्पादक जीवाणुओं का संक्रमण होने पर ज्वर १०३ से १०५° फा० तक होता है। ज्वर के साथ अरुचि, भूख की कमी, जीभ की मलिनता आदि लक्षण भी मिलते हैं।

२. **पार्श्वशूल** (Chest pain)—इसके प्रमुख लक्षणों में छाती में पीड़ा (Chest pain) होती है। इसमें प्रायः एक तरफ का भाग प्रभावित होता है।

○ रोगी के विकृत पार्श्व में सूचीवेध के समान तीव्र पीड़ा होती है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे कोई सीने में छुरा मार रहा है। यह पीड़ा स्तन की घुंडियों के पास होती है। दर्द के कारण रोगी साँस नहीं ले पाता है। गर्दन, कंधा, कक्षा एवं पीठ आदि में सम्बन्धित वेदना विकृत पार्श्व में होती है।

○ डायाफ्राग्मेटिक पीड़ा मुख्य रूप से पीठ में होती है। छींकनें, खाँसने, पूर्ण निःश्वास लेने, जम्भाई आने, कुन्थन करने आदि चेष्टाओं में पार्श्वशूल अत्यधिक बढ़ जाता है। कभी-कभी हलकी हिचकी भी आती है। रोगी प्रायः उत्तान या स्वस्थ पार्श्व के बल लेटता है। रोगी के उठने-बैठने, करवटें लेने या बोलने के समय श्वास अवरुद्ध होता-सा प्रतीत होता है। रोगी की आकृति से वेदना व्यक्त होती है। श्वास लेते समय विकृत पार्श्व में गति कम परिलक्षित होती है।

३. **कास** (Cough)—रोगी को प्रत्यावर्तित रूप की खाँसी आती है। खाँसी शुष्क तथा अवरुद्ध-सी तीव्र वेदनायुक्त तथा कफ-श्लेष्मा रहित होती है। खाँसते समय रोगी विकृत पार्श्व को दबाता एवं भींचता है। अन्त में द्रव की अधिकता होने पर तीव्र श्वासकृच्छ्रता उत्पन्न हो जाती है।

४. **आक्रमण**—रोग का आक्रमण आकस्मिक रूप में, अधिकांश में रात्रि के उत्तरकाल में तथा वृद्धों एवं बालकों में कभी-कभी क्रमिक रूप में होता है।

द्रव युक्त फुप्फुसावरणशोथ
(Pleurisy with Effusion)

प्लूरा की परतों के बीच में पतला द्रव इतनी अधिक मात्रा में एकत्रित हो जाता है कि फेफड़ा वक्ष की दीवार और डायाफ्राम से कुछ दूर हट जाता है, जिसे आर्द्र प्लूरिसी (Pleurisy with effusion) कहते हैं।

CC-0. Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ शुष्क प्लूरिसी के शोथ में द्रव की अधिकता होने पर यह स्थिति उत्पन्न होती है।

○ किसी-किसी रोगी में प्रारम्भ से ही द्रव की अधिकता होने पर शुष्कावस्था उत्पन्न ही नहीं होती।

लक्षण (Symptoms)—१. पार्श्व शूल (Chest pain) प्रायः कम या नहीं के बराबर होता है।

२. रोगी विकृत पार्श्व पर ही लेटता है।

३. द्रव के दबाव के कारण फेफड़ों के पिचक जाने से साँस लेने में कष्ट होने लगता है।

४. विकृत फेफड़े में वायु कम मात्रा प्रविष्ट होती है, जिससे वह सामान्यावस्था से कम फैलता अथवा सिकुड़ता है।

५. ज्वर प्रायः बना रहता है।

६. अरुचि, दुर्बलता एवं कृशता के लक्षण मिलते हैं।

७. जब द्रव की मात्रा कम होती है, तब ८-१० दिनों में ज्वर कम होकर दो से चार सप्ताह के अंदर यह द्रव शरीर द्वारा स्वयं सोख लिया जाता है। अधिक मात्रा में होने पर शरीर द्वारा इसका अवशोषण होने में अधिक समय लग जाता है।

सामान्य निरीक्षण—रोगी का सामान्य निरीक्षण करने पर उसमें तापक्रम बढ़ा हुआ, नाड़ी ट्रेकीकार्डिया प्रदर्शित करती हुई, तीव्र गति से श्वसन-क्रिया (Respiration), श्यावता मय (With cyanosis) तथा विकृत पार्श्व में लेटा हुआ मिलता है।

वातोरस
(Empyema)

परिचय—जब आर्द्र प्लूरिसी (Pleurisy with effusion) के द्रव में पूय की उत्पत्ति हो जाती है तब इसे इम्पाइमा कहते हैं। यह सद्रव (द्रव युक्त) फुप्फुसावरणशोथ के समान होता है। इसमें रोगी अधिक बेचैन रहता है।

कारण (Causes)—इसके मुख्यतया २ कारण होते हैं—

१. फुप्फुसगोलाणु तथा मालागोलाणु इसके प्रमुख कारण हैं।

२. सेकेण्ड्री इन्फेक्शन।

लक्षण (Symptoms)—१. विषमयता (Toxaemia) एवं बेचैनी आदि लक्षणों की अधिकता।

२. ज्वर प्रलेपक स्वरूप का।

३. श्वासकृच्छ्रता, पार्श्वशूल तथा विकृत पार्श्व की वृद्धि।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. हृदय, प्लीहा-यकृत् आदि का विस्थापन 'द्रव युक्त प्लूरिसी' से अपेक्षाकृत कम।

रोग-निदान (Diagnosis)—

(१) शुष्क प्लूरिसी (Dry pleurisy) का निदान—

१. ○ तीव्र सूचीवेधनवत् पार्श्वशूल, अवरुद्ध शुष्क कास, मन्द ज्वर, आकृति में वेदना—आदि लक्षणों के द्वारा निदान आसानी से हो जाता है।

२. **श्रवण यंत्र द्वारा परीक्षा**—विकृत पार्श्व की गतिहीनता, वाचिक लहरी एवं ध्वनि की मन्दता, उत्तान स्वरूप की संघर्ष ध्वनि जो निःश्वास के अन्त तथा प्रश्वास के आरम्भ में अत्यधिक स्पष्ट होती है तथा श्रवण-यंत्र को कुछ दबा कर सुनने से अव्यक्त हो जाती है।

३. **एक्स-रे परीक्षण**—राजयक्ष्मा की पुष्टि तथा विकृत अंग की स्पष्टता आदि से रोग का निर्णय हो जाता है।

(२) द्रव युक्त प्लूरिसी का निदान—

१. ○ पार्श्वशूल की उत्तरोत्तर कमी, श्वासकष्ट, विकृत पार्श्व के बल लेटना, निःश्वास के समय विकृत पार्श्व की गतिहीनता आदि से इसका निदान हो जाता है।

२. **श्रवण-यंत्र-परीक्षा**—वाचिक लहरी एवं ध्वनि का अभाव एवं मन्द ठोस ध्वनि का मिलना।

३. **एक्स-रे परीक्षा**—द्रव की उपस्थिति के चिह्न मिलते हैं। अन्त में सन्देह होने पर सूचीवेध के द्वारा द्रव का प्रचूषण एवं उसकी परीक्षा करके द्रव प्लूरिसी का निदान हो जाता है।

(३) इम्पाइमा का निदान—उपरोक्त पूयोरस के लक्षणों से निदान हो जाता है।

१. **रक्त-परीक्षा**—रक्त में श्वेत कणाणुओं की संख्या १५-२० हजार से अधिक मिलती है। सापेक्ष संख्या में 'पॉलीमार्फ' की वृद्धि होती है।

२. **सूचीवेध-परीक्षा**—अन्त में सूचीवेध करके पूय का प्रचूषण करके सन्देह की निवृत्ति हो जाती है।

उपद्रव (Complications)—राजयक्ष्मा तथा लंग्स फाइब्राइड (Lungs fibroid)।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—

१. **ड्राई प्लूरिसी का**—Thickened pleura, पार्श्व वेदना, थोरेसिक न्यूरेल्जिया, फुप्फुसपाक आदि से।

२. **द्रव युक्त प्लूरिसी का विभेदक निदान**—(i) फुप्फुसपाक (न्यूमोनिया), (ii) वातोरस (Empyema), (iii) फुप्फुस-निपात (Lungs collapse)। (iv) अर्बुद, हाइड्रोथोरेक्स आदि से।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. इम्पाइमा का विभेदक निदान—उपर्युक्त पूयोरस के लक्षणों का सब-डायाफ्राग्मेटिक एब्सिस, फुप्फुस-विद्रधि तथा घातक अर्बुद से विभेद करना चाहिए।

भावीफल (Prognosis)—प्लूरिसी में अधिकांश रोगी 'हार्टफेल' होने के कारण मृत्यु को प्राप्त होते हैं। वैसे ७०–८०% रोगी ठीक हो जाते हैं। उचित चिकित्सा न करने से ६ माह से ३ वर्ष के अन्दर टी० बी० हो जाती है।

(१) सामान्य चिकित्सा—

१. रोगी को पूर्ण विश्राम दिया जाय।

२. मुख्य रोग की चिकित्सा अवश्य की जाय।

३. पेट को साफ रखना आवश्यक है। इसके लिए मृदु विरेचक औषधियों का प्रयोग आवश्यक होता है।

४. रोगी को शीत से बचाकर लघु पौष्टिक आहार पर रखना चाहिए।

५. रोगी का सही निदान न होने तक 'यक्ष्मामूलक' निदान तथा चिकित्सा की व्यवस्था करनी चाहिए।

६. द्रव की अधिकता में प्रचूषण यंत्र के द्वारा द्रव का उचित मात्रा में प्रचूषण आवश्यक होता है।

७. भोजन में अम्ल तथा भारी पदार्थों का आहार।

८. ज्वर का शमन करने के लिए मूत्रल, विरेचक एवं स्वेदकारक योगों का व्यवहार करना चाहिए।

९. ड्राई प्लूरिसी में रेस्पिरेशन को नियमित कर वेदना को शान्त करने के लिए स्टिकिंग प्लास्टर लगाना चाहिए।

१० यह एक लाक्षणिक व्याधि है। इसमें उत्पादक या अनुगामी व्याधि के अनुरूप व्यवस्था करनी चाहिए।

११. इस रोग में पर्याप्त समय तक चिकित्सा, विश्राम तथा पथ्य-पालन से पर्याप्त लाभ होता है।

नोट—प्लूरिसी से पीड़ित रोगी बाद में टी० बी० से आक्रान्त हो जाता है। यदि शोथ की अवस्था में पर्याप्त समय तक अपेक्षित चिकित्सा-व्यवस्था की जाय तो भविष्य में इस गम्भीर उपद्रव से सुरक्षा हो जाती है।

आवश्यक स्थानीय चिकित्सा—पार्श्व (Chest) की गरम सिंकाई करने से पर्याप्त लाभ मिलता है। इसके लिए नमक या बालू की पोटली तवे पर गरम कर उससे ४-४ घण्टे पर सेंक करना चाहिए।

अथवा—तीसी की पुल्टिस या एण्टी-फ्लोजिस्टीन (Anti-flogistine) का प्रयोग करना चाहिए।

अथवा—विण्टोजिन की मालिश करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—पसलियों की गति को रोक देने से रोग पर काफी नियन्त्रण पा लिया जाता है। इसके लिए दो फुट लम्बा और तीन इंच चौड़ा चिपकने वाला प्लास्टर (एड्हेसिव प्लास्टर) स्वस्थ फेफड़े की ओर चिपकाने के पूर्व रोगी को गहरी साँस लेने का निर्देश कर फेफड़े की तमाम वायु को निकलवा देना चाहिए। वायु के निकल जाने के बाद छाती सिकुड़ जाती है। तब एड्हेसिव प्लास्टर को छाती के समीप लाकर रोगग्रस्त भाग (पार्श्व) पर चिपकाते हुए उसे स्वस्थ दिशा की छाती की ओर बढ़ाकर ले जायें। इसी प्रकार पुनः पट्टी की अगली तह पहली पट्टी के साथ निचली ओर इसी प्रकार चिपकाते चले जायें जिससे कि पट्टी ½ इंच तक ढँकती चली जाय। इससे पसलियों की गति कम हो जाती है।

निषेध—न्यूमोनिया की स्थिति में इसका प्रयोग न करें।

अथवा—पर्याप्त गर्म पानी में फलालैन के कपड़े को भिगो-निचोड़कर उस पर तारपीन की कुछ बूंदें छिड़क कर दर्द के स्थान पर टकोर करें।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

(i) शुष्क प्लूरिसी की चिकित्सा (Treatment of dry pleurisy)— मुख्यतया इसकी लाक्षणिक चिकित्सा की जाती है—

एनाल्जेसिक जैसे – एस्प्रिन, कैल्शियम अथवा इसी प्रकार की औषधियों से कुछ समय के लिए चिकित्सा करनी चाहिए।

℞ कोडोपाइरिन (ग्लैक्सो)

मात्रा—१-२ गोली दिन में २-३ बार, जल से।

तीव्र स्वरूप का छाती में दर्द होने पर—

℞ पैथिडीन हाड्रोक्लोराइड १०० मिग्रा० (२ मिली० में) मांसपेशीगत

अथवा— ℞ फेनर्गान (Phenergan) १० मि० ग्रा०
कोडीन फॉस्फेट २० मि० ग्रा०
फेनासिटीन १२० मि० ग्रा०
एस्प्रिन १२० मि० ग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में २ या ३ बार १ मात्रा।

साथ ही—पेनिसिलीन + स्ट्रेप्टोमाइसीन का संयुक्त सूचीवेध १०-१५ दिन तक १ इञ्जेक्शन नित्य लगायें।

अथवा—फोर्टीफाइड पेनिसिलीन ४००,००० यूनिट + स्ट्रेप्टोमाइसिन ०·५ ग्राम घोल कर मांसपेशीगत दें।

अथवा—फेनर्गान (Phenergan) १ गोली
कोडीन फॉस्फेट २० मि० ग्रा०
एस्प्रिन १८० मि० ग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार। १ मात्रा।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—इञ्जे० नोवाल्जिन ३ मिली० I/M दें।

अथवा—℞ इञ्जे० पैथिडीन हाइड्रोक्लोराइड ७५ मि०ग्रा० I/M दें।

साथ ही—प्रेडनीसोलोन	५ मि०ग्रा०
विटामिन-सी	२०० मि०ग्रा०
इरगापायरिन	१ गोली
थायमिन	२५ मि० ग्रा०
कैल्शियम ग्लूकोनेट	३०० मि०ग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।	१ मात्रा

अथवा—℞ पेनिसिलीन-जी	१ गोली
सोडाबाईकार्ब	६०० मि०ग्रा०
विटामिन-सी	५०० मि०ग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार जल से।	१ मात्रा

संक्रमण के निराकरण हेतु—

℞ लेडरमाइसिन (Ledermycin) (सायनेमिड)

मात्रा—१ कै० दिन में ३-४ बार।

अथवा—ओम्नामाइसिन (Omnamycin) (हैक्स्ट)

मात्रा—१ वायल का सूचीवेध मांसपेशीगत, दिन में १ बार।

शुष्क कास के लिए—

℞ 'ग्लाइकोडीन टर्प बसाका' अथवा सीरप कोडीन फॉस

मात्रा—१-१ चम्मच दिन में ३ बार।

साथ ही—℞ सल्फाडायजीन	१ गोली
सीवाजोल	१ गोली
एक्रोमाइसिन कै०	१ कै०
विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स	२ गोली
	पीसकर २ पुड़िया बना लें।

ऐसी १ पुड़िया दिन में २ बार प्रातः-सायं जल से।

(ii) द्रवयुक्त प्लूरिसी की चिकित्सा (Treatment of pleurisy with effusion)—

१. ℞ ओम्नामाइसीन (Omnamycin) (हैक्स्ट)

मात्रा—१ वायल का इञ्जेक्शन मांस में दिन में एक बार।

प्लूरा से द्रव के शोषण के लिए—

℞ लैसिक्स (Lasix) (हेक्स्ट)

मात्रा—१-२ मिली० I/M प्रति १२ घण्टे पर।

यदि साथ में दर्द हो तो—नोवाल्जिन १-२ गोली दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. ℞ सल्फाडायाजीन	१ गोली
सल्फामेथाजीन	१ गोली
पेलोलिन	१ गोली
विटामिन-सी १०० मि०ग्रा०	१ गोली
विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स फोर्ट	१ गोली
ऐसी १ मात्रा २४ घण्टे में ६ बार जल से दें।	१ मात्रा।

३. सैलीसिलेट अथवा एस्प्रिन उचित मात्रा में दें।

४. चुने हुए रोगियों में दो रास्ते वाला कैनुला प्रविष्ट कर द्रव का चूषण कर लेना चाहिए।

○ इसके लिए छठी तथा सातवीं पसली के बीच पोली सुई प्रवेश कर ट्रोकार तथा कैनुला से २५० मि० ली० तक तरल निकाल लिया जाता है।

५. एण्टीट्यूबरकुलस कैमोथेरापी १ वर्ष अथवा १ वर्ष से अधिक समय के लिए प्रारम्भ कर देना चाहिए।

६. प्रेडनीसोलोन ५ मि० ग्रा० अथवा बेटनीसोल ०·५ मि० ग्रा० टेबलेट मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार २ सप्ताह तक।

नोट—उक्त क्रमाङ्क १ से लेकर ६ तक की चिकित्सा एक साथ चलायी जाती है।

(iii) इम्पाइमा की चिकित्सा (Treatment of empyema)—

℞ पेनिसिलीन ५ लाख यूनिट I/M प्रति ४–६ घण्टे पर।
अथवा—'क्लोरम्फेनिकाल' को बड़ी मात्रा में दें।

○ द्रव को निकाल कर 'कल्चर सेन्सिविटी' के लिए लेबोरेटरी में भेज देना चाहिए। रिपोर्ट आने पर उचित एण्टीबायोटिक की व्यवस्था करें।

यदि रोग मेलिग्नेण्ट हो तो—

एस्पिरेशन द्वारा द्रव का चूषण करने के बाद—

इञ्जे० मुस्तीन हा० (Inj. Mustine hydrochloride) २० मिग्रा०

अथवा—इञ्जे० थायोटीपा (लीडर्ले) १ मि० ग्रा०/किलो, प्लूरल केविटी के अन्तर्गत दें।

नोट—○ रोगमुक्ति के पश्चात् पर्याप्त समय तक शय्या पर पूर्ण विश्राम आवश्यक है।

○ पूये के द्वारा शारीरिक धातुओं का अत्यधिक क्षय होता है, अतः प्रोटीनेक्स, विटामिन्स के योग, आयरन तथा कैल्शियम का पर्याप्त मात्रा में प्रयोग कराना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेटेण्ट मिश्रित चिकित्सा (Combined therapy)—

१. फुप्फुसावरणशोथ एवं पसली के दर्द में—

℞ सल्फाडायाजीन	१ गोली
सीबाजोल	१ गोली
लीडरमाइसीन कै०	१ कै०
विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स	२ गोली
विटामिन 'सी' १०० मि० ग्रा०	१ गोली
	पीसकर २ पुड़िया बना लें।

ऐसी १ पुड़िया प्रातः-सायं जल से दें।

२. द्रव युक्त प्लूरिसी में—

℞ विटामिन बी-कॉम्पलेक्स	१ गोली
विटामिन-सी	१ गोली
विटामिन-पी	½ गोली
विटामिन-के	½ गोली
कैल्शियम लैक्टेट	६०० मि० ग्रा०
ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर जल से।	१ मात्रा।

३. तीव्र सूखी प्लूरिसी में—

℞ पेण्टिड ४ लाख यूनिट	१ गोली
सल्फाडायाजीन	१ गोली
विटामिन-सी ५० मि० ग्रा०	१ गोली
ग्लूकोज़	६०० मि० ग्रा०
सोडाबाईकार्ब	६०० मि० ग्रा०
	पीसकर १ पुड़िया बना लें।

ऐसी १ पुड़िया गर्म जल के साथ दिन में ३–४ बार दें।

प्लूरिसी में प्रयुक्त अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

टेबलेट एवं पेय—ओरियोमाइसिन, सल्फाडायाजीन, नोवाल्जिन, वेटीगोन लिक्टस (Vetigon linctus), पी० ए० एस०।

इञ्जेक्शन—डिजीटेलिस, स्ट्रिक्नीन (कैल्को फार्मा), नोवाल्जिन (पीड़ा के लिए), पेथिडीन हाइड्रोक्लोराइड, प्रोकेन पेनिसिलीन, पेनिसिलीन-जी, क्रिस्टेलिन, मर्सेलिल, मॉर्फीन सल्फ आदि।

पार्श्व पर स्थानीय प्रयोग के लिए—आयोडीन ग्रीन लेविल, बी० आई० फ्लोजिस्टीन, जोडोल विद मिथाइल सैलिसिलेट, केओलिन पुल्टिस। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उष्णकटिबन्धीय इओसिनोफीलिया
(Tropical Eosinophilia)

पर्याय—उष्णकटिबन्धीय इओसिनोफीलिया, इओसिनोफिलिक लंग (Eosinophilic lung), पल्मोनरी ट्रॉपिकल इओसिनोफीलिया, विन्गार्टन्स सिण्ड्रोम (Weingarten's syndrome), उष्णकटिबन्धीय उषसिप्रियता, युवा-सुलभ जीर्ण कास ।

○ आजकल इस रोग को 'पल्मोनरी इओसिनोफीलिया' के नाम से जाना जाता है ।

परिभाषा—यह रोग खाँसी, पेरॉक्सीमल श्वासकष्ट, ब्रॉन्कोस्पाज्म दमा जैसे आक्रमण (Asthmatic attacks), रक्त में इओसिनोफिल की गणना (काउण्ट) में उच्चतम उपस्थिति आदि लक्षणों के साथ हमारे देश में उत्पन्न होता है । लक्षणों की दृष्टि से इसके लक्षण 'दमा' और 'यक्ष्मा' के समान होते हैं । जब इनकी सम्बद्ध संख्या ७% से अधिक और वास्तविक संख्या ४०० से अधिक होती है, तब उस व्याधि को 'उषसिप्रियता' के नाम से जाना जाता है ।

○ इस रोग में रोगी को ज्वर, सूखी खाँसी का बार-बार उठना, शरीर में दर्द, बेचैनी, बार-बार छींकों का आना तथा श्वास का फूलना आदि लक्षण होते हैं ।

○ रोग का कारण और विकृति-विज्ञान के अनिश्चित-सा होने तथा श्वसनिकागत लक्षणों की प्रधानता के कारण इसका वर्णन श्वसनिका के रोगों के साथ किया जाता है ।

रोग का कारण (Etiology)—इस रोग का सही कारण और विकृति विज्ञान (Exact etiology and pathogenesis) ठीक-ठीक नहीं ज्ञात हो सका है । परन्तु यकृत्, फुप्फुस तथा लिम्फ नोड्स की बायोप्सी अध्ययन से इसमें 'ब्रुगिया पहान्गी' (Brugia pahangi) और ब्रूगिया मालायी' (Brugia malayi) की माइक्रोफाइलेरियल का संचय मिलता है । वास्तव में इस रोग का कारण माइक्रोफाइलेरिया का रक्त में संक्रमण कर जाना है । इसे रोगी के यकृत्, फेफड़े तथा लसिला ग्रन्थियों में देखा जाता है । इस कृमि के लार्वा के कारण ही फेफड़ों में विकृति होकर रोग की उत्पत्ति होती है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

○ एलबर्ट एच० ओवेन्स ने 'दी प्रिन्सिपल एण्ड प्रेक्टिस आफ मेडिसिन'

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नामक पुस्तक में अपने विशिष्ट लेख 'डिस्-आर्डर्स ऑफ ह्वाइट सैल्स' (Disorders of white cells) के अन्तर्गत निम्न कारण दर्शाये हैं—

एर्लजिक स्टेटस (Allergie status)—

हे फीवर (Hay fever)।
दमा/अस्थमा (Asthma)।
एक्सफोलिएटिव डर्मेटाइटिस।
एरीथीमा मल्टीफार्म।
ड्रग-रीएक्शन (Drug reaction)।

पैरासिटिक डिजीज (Parasitic disease)—

इण्टेस्टाइनल वर्म्स (हुक वर्म, राउण्ड वर्म)।
टिशू कार्मस (टॉक्सीकेरा, ट्रिकीना)।
स्ट्रॉञ्जीलोआइड्स, इकीनोकोकस।

स्किन डिस्-आर्डर्स (Skin disorders)—

पेम्फीगस (Pemphigus)।
डर्मेटाइटिस हर्पेटीफार्मिस।

नियोप्लाज्म्स (Neoplasms)—

माइलो-प्रोलीफेरेटिव डिस्-आर्डर्स।
हॉजकिन्स डिजीज।

अन्य रोग (Other diseases)—

स्कार्लेट फीवर (Scarlet fever)।
पोली-आर्टेराइटिस (Poly-arteritis)।
इओसिनोफिलिक ग्रेनूलोमा (Eosinophilic granuloma)।

○ प्रत्येक चिकित्सक के लिए यह आवश्यक है कि पुरानी खाँसी तथा दमे के नये रोगियों में इस बात की जाँच कर ले कि उन्हें इओसिनोफीलिया तो नहीं है। शरीर में परजीवी की उपस्थिति होने पर तथा पुराने जुकाम, ब्रॉन्काइटिस तथा अन्य एर्लजिक कारणों से रक्त में इओसिनोफिल्स (इओसिनरागी; एक प्रकार की श्वेत रक्तकणिकाएँ) की संख्या बढ़ जाती है। सामान्यतया इनकी संख्या ०·५ से ४% तक होती है, परन्तु जब यह बढ़कर २०% से अधिक हो जाये तो रोगी को इओसिनोफीलिया से ग्रसित समझना चाहिए।

○ उपर्युक्त कारणों से विदित होता है कि इओसिनोफीलिया एक कामन रोग है, जिसमें ट्रॉपिकल इओसिनोफीलिया कारण माना गया है जो हमारे देश में होता है।

○ डा० भास्कर गोविन्द घाणेकर ने अपनी पुस्तक 'रक्त के रोग' में रोगानुसार इओसिनोफिल्स की वृद्धि की गणना इस प्रकार की है—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. **कृमि** (Woms)—हुकवर्म १५% तक, टेपवर्म ३०–६०% तक, पेशीगत टेपवर्म २०–२५% तक। केचुआ, सूत्र कृमि, स्नायुक कृमि आदि कम तथा अनिश्चित।

२. **अर्नूजिक रोग**—श्वास (आवेग के समय ३५% तक), हे फीवर में १०% तक, शीतपित्त में ८४% तक, छाजन और खुजली में ५–१५% तक।

३. **टचुबरकुलिन**—१. वैक्सीन तथा विजातीय प्रोटीन्स की सुई के पश्चात्—२. पेनिसिलीन तथा अन्य एण्टीबायोटिक्स औषधियों की सुई से भी इओसिनोफीलिया उत्पन्न होती है।

४. **औपसर्गिक रोग**—इन रोगों के रुग्णकाल में इओसिनोफिल रक्त से अदृश्य हो जाते हैं। रोगनिवृत्ति-काल में इनकी संख्या-वृद्धि ५–१५% तक होती है।

५. **रक्त के रोग**—हॉजकिन्स के रोग में कभी-कभी ६०% तक की वृद्धि मिलती है। रुधिरमयता, श्वेतमयता तथा मज्जाजनित रोगों में यह बढ़ी हुई मिलती है।

६. **फुप्फुस रोग**—इसमें ट्रॉपिकल उषसिप्रियता या उषसिप्रिय फुप्फुस तथा लॉफलेर संलक्षण (Loeffler's syndrome) महत्त्व के रोग हैं। लॉफेलर का रोग तथा ट्रॉपिकल इओसिनोफीलिया एक ही विकृति के विभेद माने जाते हैं। ट्रॉपिकल इओसिनोफीलिया भारत में पाया जाता है।

७. **त्वचा जनित रोग**—खुजली, छाजन आदि त्वचा के रोग तथा औपसर्गिक रोगों में इओसिनोफीलिया होती है और विकृति त्वचा के स्तर पर निर्भर करती है।

८. **कौटुम्बिक इओसिनोफीलिया** (Femilial eosinophilia)—यह बहुत कम मिलने वाला रोग है, जो कुछ-एक परिवारों में ही पाया जाता है। इसमें यह १५-६०% तक बढ़े हुए मिलते हैं; इससे स्वास्थ्य पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

९. **अस्थि-मज्जा के रोग एवं अर्बुद**—अस्थि-वक्रता, अस्थिशोथ, जीर्ण अस्थि-मज्जाशोथ, मांसार्बुद, आमाशय और गर्भाशयग्रीवा के रोग।

१०. **भौतिक कारण**—एक्स-रे प्रयोग के २-३ सप्ताह पश्चात् इनका प्रमाण बढ़ कर २०% तक हो जाता है।

११. **प्लीहोच्छेदन**—प्लीहा का उच्छेदन करके १ माह पश्चात् इनकी मात्रा बढ़ कर १५% तक हो जाती है।

○ अधिकांश चिकित्सक इसे एर्लजिक दमा (Allergic asthma) समझ कर विभिन्न प्रकार की औषधियाँ देते रहते हैं, परन्तु किसी से लाभ नहीं मिलता है, क्योंकि रोग का वास्तविक कारण यह है कि फेफड़ों में

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपस्थित माइक्रोफाइलेरियल जीवाणुओं से युद्ध करने के लिए इओसिनोफिल्स की संख्या बहुत बढ़ जाती है।

सम्प्राप्ति—त्वचा तथा श्वसन और पाचन-संस्थान के अधिच्छद के नीचे इओसिनोफिल्स एकत्रित रहते हैं। बाह्य प्रोटीन से रक्षा करना तथा क्षतिपूर्ति करना इनका प्रमुख कार्य होता है। इसलिए यह उपर्युक्त अवस्थाओं में बढ़ते हैं।

लक्षण—इसके प्रमुख लक्षण निम्न प्रकार हैं—

१. अनियमित मन्द ज्वर।
२. दुर्बलता (Weakness)।
३. खाँसी (Cough)।
४. अकस्मात् साँस का फूलना या श्वासकृच्छ्रता।
५. रक्ताल्पता तथा अजीर्ण (Anaemia and indigestion)।

(१) **खाँसी** (Cough)—१. यह रोग अधिकांशतः २०-३० वर्ष की आयु के व्यक्तियों में खाँसी के दौरों के रूप में होता है। कभी-कभी यह बालकों में भी हो जाता है।

२. खाँसी के दौरे विशेष रूप से रात को अथवा उसके पिछले प्रहर में उठते हैं।

३. खाँसी के दौरे श्वासकृच्छ्रता से युक्त होते हैं। जिससे श्वासरोग का भ्रम हो जाता है। परन्तु श्वासरोग में श्वास को बाहर फेंकने के समय जो कृच्छ्रता होती है, वैसी इस रोग में नहीं होती।

४. इस रोग में खाँसी शुरू से अन्त तक एक जैसी रहती है। खाँसी के साथ कभी-कभी सीटी जैसी आवाज (Wheezing) निकलती है। बहिःश्वास लम्बा होता है।

५. खाँसी का लक्षण कई महीनों तथा वर्षों तक रहता है। कभी मन्द हो जाता है तो कभी प्रकट हो जाता है। कभी-कभी खाँसी के रक्त निकलता है।

(२) **ज्वर** (Fever)—सामान्य ज्वर विशेषकर शाम के समय रहता है, जो ९९ से १००° फा० तक होता है।

(३) **शारीरिक कृशता**—अन्न की अरुचि, भूख की कमी तथा वमन आदि के कारण शरीर में कृशता के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। रोगी को अशक्ति प्रतीत होती है।

(४) **बलगम** (Sputum)—इस रोग का यह प्रमुख लक्षण है। बहुत खाँसने के पश्चात् चपकीला-सा बहुत थोड़ी मात्रा में कफ निकलता है।

(५) **साँस सम्बन्धी लक्षण**—१. यह रोग अत्यन्त चिरकारी प्रकार का होता है और दमा के समान अकस्मात् श्वास फूलने का आक्रमण होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. दौरे के समय फेफड़ों में शुष्क रब या रॉन्काई की प्रधानता रहती है। अन्य समय वक्ष के दोनों पार्श्वों में अस्थायी शुष्क तथा सद्रव दोनों प्रकार के राल्स मिलते हैं।

३. साँस बाहर निकालने का समय बढ़ जाता है तथा इस समय की ध्वनि खर होती है।

(६) **अन्य लक्षण**—कभी-कभी पार्श्व पीड़ा (Chest pain) अथवा वक्ष के चारों तरफ कठोरता मिलती है। भार की कमी, रात्रि स्वेद, एनोरेक्सिया आदि लक्षण सदैव उपस्थित मिलते है।

रोग की अवस्थाएँ—इसकी निम्न ३ लाक्षणिक अवस्थाएँ मिलती हैं—

१. **प्रारम्भिक अथवा बढ़ी हुई अवस्था**—इस अवस्था में सामान्यतः कोई चिह्न नहीं मिलते। खाँसी तथा श्वासकृच्छ्रता प्रायः अनुपस्थित रहती है।

२. **खाँसी की अवस्था** (Stage of bronchitis)—इस अवस्था में खाँसी एक प्रमुख लक्षण है। रोगी सर्वप्रथम इस लक्षण से प्रभावित होता है।

३. **अस्थमेटिक अवस्था** (Asthmetic stage)—रोगी मुख्य रूप से साँय-साँय के साथ कष्टश्वास लेता है। श्वास बढ़ा हुआ मिलता है और सीटी की ध्वनि मिलती है। बहुत खाँसने पर थोड़ा-सा चपकीला कफ निकलता है।

○ रोगी का दमे के समान श्वास फूलता है।

निदान (Diagnosis)—उपरोक्त लक्षणों के आधार पर रोग-निदान में पर्याप्त सहायता मिलती है।

अन्वेषण (Investigation)–१. **एक्सरे-परीक्षा**–दोनों फेफड़ों में व्यापक रूप से रुई के समान श्वेत बिन्दु (Mottling) मिलते हैं। अर्थात् श्वास-नलियों की छाया का लक्षण स्पष्ट होता है। साथ ही न्यूमोनाइटिस जैसा चित्र मिलता है। छाया फुप्फुस के शिखर (Apex of lung) में नहीं होती है जैसी कि क्षयरोग में होती है। फुप्फुस में स्थानीय विकृति के लक्षण नहीं मिलते।

२. **फुप्फुस बायोप्सी**—हिस्टियोसाइटिस, इओसिनोफिल तथा लिम्फो-साइट्स का संचय मिलता है।

३. **हृदय-गति तथा नाड़ी-परीक्षा**—क्षयरोग के समान इसमें तीव्रता नहीं होती है।

४. **रक्त-परीक्षा** (Blood test)—श्वेतकणों की अतिवृद्धि (ल्यूको-साइटोसिस) मिलती है। रक्त के प्रति क्यूबिक मिलीमीटर में श्वेतकणों की संख्या १०, २० और ३० हजार या इससे भी अधिक होती है। इनमें से $\frac{1}{4}$ या $\frac{1}{3}$ या इससे भी अधिक इओसिनोफिल होते हैं। अन्य श्वेतकण लगभग सामान्य होते हैं, फिर भी न्यूट्रोफिल की अपेक्षा लिम्फोसाइट्स कुछ अधिक होते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ यदि प्रति क्यूबिक मिलीमीटर रक्त में इओसिनोफिल २००० से अधिक हों अथवा २०, ३०, ४० या इससे अधिक प्रतिशत हों तो इसी रोग का सन्देह करना चाहिए।

○ इस रोग में रक्तकणों का सेडीमेण्टेशन रेट भी बढ़ा हुआ होता है। अर्थात् २०, ३० या ४० मिलीमीटर प्रति घण्टा होता है।

नोट—निदान की दृष्टि से रक्त-परीक्षा इस रोग में विशेष महत्त्वपूर्ण होती है।

५. फुप्फुस-परीक्षा—इस परीक्षा में ब्रॉन्को-न्यूमोनिया जैसे लक्षण मिलते हैं। उसके निम्न भागों पर 'राल्स' या क्रेपीटेशन सुनाई देते हैं। प्रायः बहिः श्वास लम्बा सुनाई देता है।

○ फुप्फुस-शिखर की परीक्षा करने पर उसमें ठोसपन नहीं मिलता।

○ दौरे के समय फुप्फुसों में रॉन्काई की प्रधानता रहती है। अन्त में वक्ष के दोनों पार्श्वों में अस्थायी शुष्क एवं सद्रव दोनों प्रकार के राल्स मिलते हैं।

○ प्लूरिसी के समान वक्ष में कागज रगड़ने के समान ध्वनि मिल सकती है।

६. कफ-परीक्षा (Sputum test)—स्राव में ७० % से अधिक इओसिनोफिल्स मिलते हैं।

७. कम्प्लीमेण्ट फिक्सेसन टेस्ट—प्रायः पॉजीटिव (+) मिलता है।

नोट—कभी-कभी ग्रीवा की लसग्रन्थियों में वृद्धि मिलती है।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—इओसिनोफीलिया का निम्न रोगों से भेद करना चाहिए—

१. सिम्पल इओसिनोफीलिया।

२. सिम्पल पल्मोनरी इओसिनोफीलिया (लॉफेलर्स सिण्ड्रोम)।

३. ब्रॉन्कियल अस्थमा सह इओसिनोफीलिया।

○ ब्रॉन्कियल अस्थमा में दीर्घकालिक इतिहास मिलता है। एक्स-रे चित्रण में टिपिकल मिलीयरी मॉटलिंग्स नहीं मिलते।

चिकित्सा (Treatment)—इस रोग की चिकित्सा में संखिया के योग, अनूर्जता-निरोधी औषधियाँ तथा श्वासकृच्छ्रता (Dyspnoea) के उद्वेग के समान ब्रॉन्को-डायलेटर्स औषधियों का प्रयोग करना चाहिए—

१. ℞ डाइ इथाइल-कार्बामाजीन (Di-ethyl-carbamazine) ५० मिग्रा०

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार ७ दिन तक।

अथवा—५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर नित्य।

ट्रेड नाम—वेनोसाइड (बी० डब्लू०), फिलारबोन (Filarbon) (रेनवैक्सी), हेट्राजान (लीडर्ले कं०)।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. यदि रोगी उक्त औषधि को सहन न कर सके तो—

℞ इञ्जे० डाइ-इथाइलमीन एसीटारसोल ३ मिली०

मात्रा—प्रथम दिन १ मिली०; दूसरे दिन २ मिली०; तीसरे दिन ३ मिली०; ३ दिन के अन्तर से, मांसपेशीगत लगायें।

ट्रेड नाम—एसीटीलारसन (Acetilarsan) (एम० बी०)

नोट—यदि पहला इञ्जेक्शन देने पर प्रतिक्रिया (Reaction) उत्पन्न हो तो इसके लिए 'एण्टीहिस्टामिनिक' दें।

℞ डाइ-इथाइल कार्बामाजीन	५० मि० ग्रा०
क्लोरफेनिरामीन	५ मि० ग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार।	१ मात्रा

नोट—दीर्घकालिक रोग में तथा पल्मोनरी ईडिमा में कार्टीकोस्टेरॉइड्स एण्टीइन्फ्लेमेटरी तथा एण्टी-एर्लजिक प्रभाव दिखलाती हैं।

क्रॉनिक रोग में (In chronic cases)—

℞ डाइ-इथाइल-कार्बामाजीन	५० मि० ग्रा०
प्रेडनीसोलोन (Prednisolone)	५ मि० ग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार।	१ मात्रा

आवश्यक निर्देश—

१. संखिया के योग एक ही समय में मुखमार्ग तथा इञ्जेक्शन द्वारा एक साथ नहीं देना चाहिए।

○ ८-१० दिनों तक संखिया के योग मुख द्वारा देने के पश्चात् एक सप्ताह तक औषधि बन्द रखनी चाहिए। तत्पश्चात् पुनः प्रयोग की जा सकती है।

○ संखिया का प्रयोग करते समय मूत्र में एल्बुमिन तथा कास्ट नहीं होने चाहिए।

नोट—यदि साथ में ब्रॉन्कोस्पाज्म भी उपस्थित हो तो उसकी चिकित्सा करें।

℞ बेनाड्रिल एक्सपेक्टोरेण्ट, जेफ्रोल, कफ सीरप, ग्लाइकोडीन टर्प वसाका, कोरेक्स, फेन्सिड्रिल आदि में से किसी का उपयोग करना चाहिए।

○ दमा के समान प्रावेगिक श्वासकृच्छ्र का आवेग होने पर एड्रीनलीन, इफेड्रीन आदि का प्रयोग करना चाहिए। इसके लिए—

℞ बेनाड्रिल टेबलेट या एण्टीस्टीन टेबलेट

मात्रा—१ गोली दिन में २ या ३ बार।

साथ ही—रिकोल्विन विद आर्सेनिक

मात्रा—१ चम्मच दिन में ३ बार।

नोट—○ खाँसी तथा गले घुलने की चिकित्सा दमा के समान करें।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

℞ 'इओसिनोफीलिया' की प्रत्येक अवस्था में मल्टी-विटामिन का भरपूर मात्रा में प्रयोग आवश्यक है।

इओसिनोफीलिया में प्रयुक्त पेटेण्ट मिश्रित योग—

१. ℞ बेनोसाइड फोर्ट (वरोज वेलकम) १०० मिग्रा० १ गोली
पिरीटॉन एस्स्पेक्टोरेण्ट (ग्लैक्सो) ४ मिली०
सीलिन (ग्लैक्सो) ५०० मि० ग्रा० ½ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार जल से दें। १ मात्रा।

विशेष ज्ञातव्य—साँस फूलना, साँस से सायँ-सायँ की आवाज एवं दमा के समान स्थिति उत्पन्न होना आदि कष्ट दूर होते हैं।

२. ℞ हेट्राजान या यूनीकार्बाजान २ गोली
फेनर्गान (एम० बी०) १ गोली
ऐसी १ मात्रा प्रातः-सायं जल से। १ मात्रा।

इओसिनोफीलिया में प्रयुक्त अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. बेनोसाइड (Banoside) (वरोज वेल्कम)

मात्रा—६ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर ३ विभाजित मात्राओं में १ माह तक।

○ पुनराक्रमण को रोकने हेतु ऐसे २ कोर्स ३ माह के अन्तराल पर देने चाहिए।

नोट—बेनोसाइड फोर्ट टेबलेट (Banocide forte tablet) तथा बेनोसाइड सीरप भी आता है। बेनोसाइड पीडियेट्रिक सीरप (Banocide paediatric syrup) बच्चों के लिए अलग से आता है।

२. कार्बामिल सीरप (Carbamyl syrup) (कोप्रान)

मात्रा—८-१२ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर १५ दिन तक।

○ कार्बामिल फोर्ट टेबलेट (Carbamyl frote tab.) भी आती है।

३. हेट्राजान (Hctrazan) (लीडर्ले कं)

इसका सीरप भी आता है। मात्रा—विवरण पत्र के अनुसार।

४. यूनीकार्बाजान फोर्ट २५० (Unicarbazan forte-250) (यूनिकेम)

मात्रा—२ गोली नित्य ४-४ दिनों के अन्तराल पर/पूर्ण मात्रा ८ गोली।

यूनीकार्बाजान फोर्ट इञ्जे० भी आता है—

मात्रा—१ मिली० प्रथम दिन। तत्पश्चात् २ मिली० के २ अतिरिक्त इञ्जेक्शन ४-४ दिनों के अन्तराल पर एक-एक कर दें। अथवा—१ मिली० का १ इञ्जेक्शन लगातार ५ दिनों तक।

५. यूनीकार्बाजान (Unicarbazan) (यूनिकेम)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार १०-१५ दिनों तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. इञ्जे० एसीटीलार्सन (Inj. Acitilarsan) (एम० बी०)
मात्रा—३ मिली० मांसपेशीगत; एक दिन के अंतर से ६-९ इन्जेक्शन ।
७. इञ्जे० थायोकैल्शियम (Inj. Thaocalcium)
मात्रा—१० मिली० इण्ट्रावीनस २ या ३ बार प्रति सप्ताह ।
○ डी० ई० सी०, डी० सी० सी०, फाइलाजीन, नियो आर्सफिनामिन या नोवार्स नोविलयन आदि ।

पथ्य-व्यवस्था—इसमें भोजन की व्यवस्था दमा रोग के समान की जाती है । विटामिन 'ए' 'डी' और शार्कलिवर आयल अथवा 'शार्कोफेराल' आदि द्वारा रोगी के स्वास्थ्य का संवर्धन करना चाहिए । □

श्वसन-संस्थान के रोग 2/10

वातस्फीति
(Emphysema)

पर्याय—वायुप्रकोष्ठ-विस्तृति (Emphysema of the lungs), पल्मोनरी एम्फीसीमा, वातोत्फुल्लता, ऊर्ध्वश्वास, श्वासकोष्ठक-शैथिल्य, श्वास-काठिन्य, लंग एल्वियोलेरिक्टेसिस ।

परिचय—यह एक ऐसा रोग है, जिसमें फुप्फुस की वायुकोषाएँ (एल्वियोलाई) अधिक फूल जाती हैं । उनकी दीवार पतली, इनइलास्टिक तथा फट जाती है । फुप्फुस के लचीलापन (इलास्टिसिटी) में कमी आ जाती है । वायुकोषों की दीवार में विकृति होने के कारण फुप्फुस के रक्तप्रवाह में कमी आ जाती है । यह रोग अत्यन्त दीर्घकालिक तथा ज्वर रहित होता है । यह एक असाध्य रोग है ।

कारण (Causes)—१. उम्र (Age)—४० वर्ष से ऊपर की आयु में विशेष रूप से होता है ।
२. लिंग (Sex)—पुरुष इससे अधिक प्रभावित होते हैं ।
३. ○ क्रॉनिक ब्रॉन्काइटिस तथा क्रॉनिक अस्थमा (ब्रॉन्कियल) इसका प्रमुख प्रवर्तनपूर्व (Predisposing) कारण है ।
४. सिलीकोसिस (Silicosis) जैसी पल्मोनरी डिजीज के कारण ।
○ रोग के प्रमुख कारणों में ब्रॉन्काइटिस अथवा अस्थमा के अधिक समय तक रहने पर बार-बार खाँसने के कारण पड़ने वाले दबाव से फुप्फुसों के वायुकोष फैल कर बड़े हो जाते हैं । जिसके कारण इनकी दीवारें पतली पड़ जाती हैं और इनमें आने वाली छोटी रक्त केशिकाएँ (Capillaries) टूट-फूट कर समाप्त हो जाती हैं, जिसके कारण फेफड़ों को समुचित मात्रा में

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऑक्सीजन नहीं मिल पाती। रोगी को श्वासकष्ट होने लगता है। जरा-सा चलने या शारीरिक परिश्रम करने पर साँस फूलने लगती है।

○ फुप्फुसों के अधिक कमजोर होने के कारण श्वसन-संस्थान में जल्दी-जल्दी जीवाणुओं का संक्रमण हो जाता है, जिससे बार-बार ब्रॉन्काइटिस होकर फुप्फुसों में बलगम का अधिक निर्माण होने लगता है।

एम्फीसीमा के भेद (Types of emphysema)—

१. कंजेनीटल एम्फीसीमा (Congenital emphysema)।

२. यूनीलेटरल एम्फीसीमा (Unilateral emphysema)।

३. सेनाइल एम्फीसीमा (Senile emphysema)।

४. कम्पेन्सेटरी एम्फीसीमा (Compensatory emphysema)।

५. जनरेलाइज्ड बाइलेटरल हाइपरट्रॉफिक एम्फीसीमा।

नोट—सामान्य रूप से व्यवहार में यही एम्फीसीमा मिलता है।

रोग लक्षण (Symptoms)—

१. प्रधान लक्षण—साँस फूलना तथा नख एवं नेत्र में नीलापन होना।

२. प्रारम्भ—अनेक बार ब्रॉन्काइटिस होने के पश्चात् इस रोग का प्रारम्भ शनैः शनैः होता है।

३. ब्रॉन्काइटिस के लक्षण—इसमें प्रायः ब्रॉन्काइटिस के लक्षण मिलते हैं।

४. वक्ष (Chest)—वक्ष निरन्तर फूला रहता है और बेलनाकार (Barrel shaped) हो जाता है।

५. खाँसी तथा श्वास के लक्षण—शीतकाल में वातावरण में थोड़ी नमी बढ़ जाने पर श्वासनलियों में इन्फेक्शन होकर खाँसी उठने लगती है, जिसके बीच में श्वासरोग का दौरा भी हो जाता है। श्वासनलिकाओं में शोथ होने के कारण उससे पतला या गाढ़ा बलगम गिरता है।

○ अथवा श्रम करने पर सबसे पहले श्वास चढ़ने का लक्षण होता है और खाँसी प्रारम्भ हो जाती है। अन्त में बैठे-बैठे भी श्वास चढ़ने लगता है, साथ ही रात में खाँसी आते ही वह सोते से जाग जाता है और उठ कर बैठ जाता है। खाँसी आने पर बलगम के निकल जाने से ऊर्ध्वश्वास का वेग घट जाता है।

नोट— ○ श्रम करने पर श्वास चढ़ जाने तथा फिर खाँसी उठकर बलगम निकल जाने का लक्षण इस रोग का सूचक होता है।

६. श्यावता (Cyanosis)—यह भी इसका प्रधान लक्षण है। रोगी के चेहरे, होठों तथा नखों पर श्यावता के लक्षण होते हैं। ये नीले पड़ जाते हैं।

७. खाँसी तथा कफ गिरने के लक्षण श्वासनलिकाओं में जीवाणु-संक्रमण के परिणामस्वरूप होते हैं। श्वासनलिकाओं में शोथ होने पर रोग का वेग तीव्र हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. **हाइपोक्सिया तथा हाइपरकेपनिया के लक्षण**—पहले इस रोग में श्वास तथा खाँसी के वेग वर्षों तक होते रहते हैं। अन्त में इसमें ऑक्सीजन की कमी (हाइपोक्सिया) तथा कार्बन-डाइ-ऑक्साइड की वृद्धि (हाइपरकेप्निया) के सूचक लक्षण हो जाते है।

९. इस रोग में रोगी की श्रम करने की शक्ति उत्तरोत्तर घटती ही जाती है और जरा भी श्रम पड़ने पर उसका श्वास चढ़ने लगता है।

नोट—इस रोग की अन्तिम अवस्था में हृदय का दक्षिण भाग विस्फारित होकर फैल जाता है।

शारीरिक लक्षण तथा चिह्न—१ फुप्फुसों के फूल जाने से रोगी की छाती कुप्पे की तरह (Barrel shaped) हो जाती है।

२. रीढ़ की हड्डी का ऊपर वाला भाग पीछे की तरफ कुछ गोलाई लिये हुए दीखता है।

३. पसलियाँ कुछ-कुछ बढ़ी हुई दिशा (हॉरिजण्टल) ले लेती है। इनके बीच के अन्तर कुछ चौड़े हो जाते हैं।

४. छाती का स्पर्श करने से पता चलता है कि अन्तःश्वास के समय छाती विशेष फूलती नहीं है और श्वास बाहर फेंकते समय विशेष सिकुड़ती भी नहीं है।

५. रोगी की ग्रीवा लम्बाई में दीखती है। इस पर स्टर्नोमिस्टायड मांसपेशियाँ तथा जुगलर वेन (Jugular vein) अधिक स्पष्ट दिखलाई देती हैं।

६. पसलियों के नीचे का बीच का कोण (सब-कोस्टल एंगिल) कुछ चौड़ा दीखता है।

७. फुप्फुसों के फूल कर हृदय को ढँक लेने से हृदय का स्पन्दन न तो दिखलाई देता है और न ही स्पर्शन से अनुभव होता है।

८. छाती में होने वाला वाचिक कम्पन स्पर्शन करने से कम प्रतीत होता है। छाती पर टकोर की आवाज तेज होती है।

९. इस रोग के कारण यकृत् कुछ नीचे खिसक जाता है जिससे वह पसलियों के नीचे अनुभव होने लगता है।

श्रवण-यन्त्र परीक्षा—१. फुप्फुसों में श्वास-प्रश्वास से उत्पन्न होने वाली ध्वनि (वेस्कुलर मरमर) धीमी सुनाई पड़ती है।

२. बहिःश्वास की आवाज कुछ लम्बी एवं स्पष्ट सुनाई पड़ती है। साथ ही बहिःश्वास के साथ सीटियाँ (Rhonchi) सुनाई पड़ती हैं।

३. गीली खाँसी होने पर तथा श्वासनलिकाओं में कुछ शिथिलता (Bronchiectasis) होने पर निचने भागों पर बुलबुलों की आवाज (Moistrales) सुनाई पड़ती हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कफ-परीक्षण—कफ झागदार, चिपचिपा तथा पूययुक्त होता है। रोगी के लिए फूंक मार कर आग को बुझाना प्रायः कठिन होता है।

एक्स-रे परीक्षण—१. फुप्फुस साफ तथा पसलियाँ पड़ी हुई दिशा में दिखलाई देती हैं। साथ ही उनके बीच के अन्तर बड़े तथा महाश्वास पेशी नीचे को झुकी हुई चिपटी दिखलाई पड़ती है।

२. हिला (Hila) पर धमनियों की छाया अधिक स्पष्ट दीखती है। दक्षिण हृदय आकार में बड़ा दीखता है।

स्पाइरोग्राम परीक्षा—फोर्स्ड वाइटल केपेसिटी वाइटस केपेसिटी की अपेक्षा काफी घटी होती है।

नोट—यदि इस रोग में ज्वर हो तो उपद्रव समझना चाहिए।

○ फुप्फुस का सीमा से अधिक नीचे बढ़ना इसका विशेष लक्षण होता है।

○ श्वासरोग की अनुपस्थिति में निःश्वास का दीर्घ होना इसी रोग का परिचायक है।

○ सन्देह होने पर एक्स-रे परीक्षा कर सकते हैं।

उपद्रव (Complication)—इस रोग में निम्न उपद्रव हो सकते हैं—

१. दक्षिण हर्ट फेल्योर (क्रॉनिक कोर-पल्मोनेल)।

२. वेण्टीलेटरी फेल्योर या एक्यूट रेस्पिरेटरी फेल्योर या कार्बन-डाइ-ऑक्साइड नॉर्कोसिस।

३. न्यूमोथोरेक्स।

४. द्वितीयक संक्रमण विशेषकर यक्ष्मा।

५. बार-बार होने वाला ब्रॉन्कोस्पाज्म।

६. सामान्य ईडीमा।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. यह रोग वर्षों तक बना रहता है।

२. यदि खाँसी तथा श्वास को नियन्त्रित रखा जाय तो रोगी चिरकाल तक जीवित रहता है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. यह चिरस्थायी कास तथा कुछ-कुछ श्वास के उपद्रवस्वरूप होता है। इसलिए इसकी चिकित्सा तत्परता के साथ करनी चाहिए।

२. रोगी को धुएँ एवं धूल आदि से बचाना चाहिए।

३. खुली हवा में भ्रमण तथा श्वास-सम्बन्धी व्यायाम एवं प्राणायाम करना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोगी को पीने के लिए गर्म जल दें तथा फलों का रस, गर्म दूध तथा विटामिन्स का भरपूर मात्रा में प्रयोग करायें।

५. यदि रोगी का शरीर भारी हो तो भोजन में कैलोरी की मात्रा कम देनी चाहिए। शाम का भोजन ४-५ बजे तक कर लेना चाहिए।

(२) औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—रोग के कारण की उपयुक्त चिकित्सा करनी चाहिए।

जीवाणु संक्रमण चिकित्सा—

℞ इन्जे० पेनिसिलीन + स्ट्रेप्टोमाइसीन I/M १ सप्ताह तक।

अथवा—टेट्रासाइक्लीन (Tetracycline) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—ऐसी १ मात्रा दिन में ४ बार ७ दिन तक।

अथवा—कोट्री-मेक्साजोल (Cotri-mexazole)

मात्रा—१ गोली दिन में ४ बार ४ दिन तक। तत्पश्चात् ७ दिन बाद पुनः दोहरायें।

ब्या० नाम—सेप्ट्रान (वी० डब्लू कं०), बेक्ट्रिम (रोशे कं०)

साथ ही—℞ स्ट्रेप्टोमाइसिन ०·२५ ग्राम को १-२ मिली० डिस्टिल्ड वाटर में मिलाकर इसके छींटे श्वास द्वारा श्वासनलिकाओं में दें।

एवं—℞ डाई क्लोर फेनामाइड (डारानाइड Daranide)

मात्रा—२५-५० मिली० दिन में ४ बार दें।

नोट—यह एक प्रभावशाली श्वासनलिका-प्रसारक औषधि है।

लाक्षणिक चिकित्सा—

१. यदि श्वास का वेग हो तो—

℞ इफेड्रीन ३० मि० ग्रा० दिन में ३ बार मुख द्वारा।

अथवा—एमीनोफाइलिन ०·२५ ग्राम I/V दिन में एक बार।

अथवा—कोलीडिल अथवा कोलेनेट या कोलेनेट कं० २०० मिग्रा० टे०

मात्रा—१ गोली रात में सोते समय।

अथवा—इसूप्रेल (Isuprel) १०० : १ को १-५ मिली० के छींटे नेवूलाइजर के द्वारा श्वास से दें।

२. मस्तिष्क उत्तेजित होने पर—

℞ एमीनोफाइलिन अथवा कोलेनेट या कोलेनेट कं० का प्रयोग करना चाहिए। इसे रात्रि के समय न देकर केवल प्रातः एवं दोपहर के समय दें।

३. श्वासनलियों में संचित कफ को निकालने के लिए—

℞ सीरप कोडीन फॉस्फेट (Syrup codeine phosphate)

मात्रा—१ ड्राम रात में सोते समय।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा— ℞ अमोनियम कार्बोनेट		०.३ ग्राम
स्प्रिट अमोनिया एरोमेट		०·६ मिली०
पोटैशियम आयोडाइड		०·३ ग्राम०
सीरप वसाका		४ मिली०
पिपरमेण्ट वाटर		३० मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार भोजनोपरान्त ।		१ मात्रा ।

४. ब्रान्कोस्पाज्म एवं श्वासकृच्छ्रता में—

℞ इफेड्रीन सल्फेट	३० मि० ग्रा०
एमीनोफाइलीन	१२० मि० ग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल से ।	१ मात्रा

अथवा—एम्सेक (Amsec) (नि० लिली) का सेवन करें ।
साथ ही—आइसोप्रानालीन सल्फेट २० मि० ग्रा० टेबलेट
व्या० नाम—नियो-इपीनीन (Neo-epinine) (बी० डब्लू)
मात्रा—१ गोली जीभ के नीचे रखें ।

५ चिरकालीन एम्फीसीमा में ब्रॉन्कोस्पाज्म के तीव्र आक्रमण में—

℞ कोर्टीकोस्टेराइड्स (Corticostaroids) लाभकर होते हैं । अतः प्रेडनीसोलोन ५ मि० ग्रा० अथवा वीटामेथासोन (वेटनीसोल) सोलूविल—०·५ मि० ग्रा० टेबलेट दिन में ३ बार २ सप्ताह तक ।

नोट—इसका सावधानी के साथ प्रयोग करें ।

६. श्वसन के फेल होने पर (Respiratory distress)—

इमरजेन्सी की स्थिति में—

℞ निकेथामाइड (कोरामीन) सोलूशन—२ मिली० जीभ के अंदर रखें ।

अथवा—कोरामीन (Coramine)—५-१० सी. सी. I/V प्रति ३-४ घण्टे पर । साथ ही अन्य उपाय ।

अथवा—माइकोरान (Micoran)—१-२ मिली० I/M अथवा I/V ½ घण्टे के अन्तर पर । साथ ही तीव्रता कम होने पर पुनः इन औषधियों को मुख से दें ।

नोट—इस रोग में बीच-बीच में 'ऑक्सीजन' चिकित्सा से लाभ मिलता है ।

७. कंजेस्टिव कार्डियक फेल्योर—

१. डायोरेटिक यथा—लैसिक्स २५-५० मि० ग्रा० प्रतिदिन दें ।

२. भोजन में नमक बिलकुल न दें ।

३. हृदय को बल देने के लिए उचित मात्रा में डिजीटेलिस (डिजॉक्सिन अथवा लेनोक्सिन टेबलेट) का प्रयोग करें ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्य उपाय—

१. पेट पर कस कर इम्फीसीमा पेटी (Emphysema belt) बाँधनी चाहिए। अथवा कस कर कपड़ा बाँधें।

२. पेट की मांसपेशियों को बलवान् बनाने के लिए मालिश करें।

३. यदि शरीर मोटा हो तो उसे कम करें, जिससे ऑक्सीजन के खर्च में कमी हो।

४. ऑक्सीजन का २०-३० मिनट तक दिन में ३ बार प्रयोग करने से श्वासकृच्छ्र तथा एसीडोसिस से उत्पन्न उपद्रवों में लाभ मिलता है।

५. एक बार एम्फीसीमा हो जाने पर किसी भी चिकित्सा से विस्तृत हुए वायुकोषों को सामान्य रूप में नहीं लाया जा सकता, परन्तु रोगी को अपने श्वसन-संस्थान को सक्षम बनाने वाले व्यायाम करने चाहिए। प्राणायाम द्वारा बलपूर्वक वायु को बाहर निकालें।

६. अधिक सर्दी तथा कोहरे में बाहर नहीं निकलना चाहिए। अधिक परिश्रम, अधिक बोलना-चालना तथा चलना-फिरना बन्द कर दें। धूम्रपान पर पूर्ण निषेध करें।

निर्देश—यदि एम्फीसीमा अधिक बढ़ जाने के कारण रोगी को श्वासकष्ट होने लगे तो उसे घर पर ही प्रयोग करने के लिए ऑक्सीजन लेने का यूनिट रखने का परामर्श देना चाहिए। इस यूनिट द्वारा रोगी को दिन में ३-४ बार ऑक्सीजन हलके प्रेशर पर धीरे-धीरे सुंघाना चाहिए।

○ घरेलू यूनिट के ऑक्सीजन के मास्क को रोगी की नाक पर इस प्रकार लगाया जा सकता है, जिससे कि उसकी आँखें खुली रहें। इस प्रकार वह लोगों से बातचीत कर सकता है और कुर्सी पर बैठ कर पुस्तक आदि भी पढ़ सकता है।

एम्फीसीमा में प्रयुक्त पेटेण्ट औषधियाँ—

१. रेस्टीमुलेन इञ्जे० (Restimulen Inj.) (एस० जी० फार्मा)—I/M, I/V. या S/C.

२. एज्माप्लोन Asamaplon) (खण्डेलवाल)—२ गोली दिन में ३ बार।

३. एज्माप्लोन विद प्रेडनीसोलीन (खण्डेलवाल)—१-२ गोली दिन में ३ बार।

४. एस्पुल (Aspul) (ब्लू क्रॉस)—१ गोली दिन में ३-४ बार।

५. ब्रॉन्कोफिल (Broncophyl) (CFL Pharma) २-३ चम्मच दिन में ३ बार भोजनोपरान्त।

६. ब्रान्कोफिल प्लस (Broncophyl Plus)—१-२ गोली दिन में ३-४ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. ब्रॉन्को प्लस सीरप (विडल सायर)—५ मिली० दिन में ३–४ बार।

८. केडीफाइलेट (Cadiphylate) (केडिला)—१–२ गोली दिन में ३–४ बार।

९. केडीफाइलेट इञ्जे० (Cadiphylate Inj.)—१ एम्पुल I/M अथवा I/V.

१०. केडीफाइलेट इलिक्जिर (केडिला)—५–१० मिली० दिन में ३–४ बार।

११. डेरीफाइलीन रिटार्ड (Deriphyllin retard) (जर्मन रेमिडीज) १ गोली दिन में ३ बार।

१२. मिनाफाइलिन इञ्जे० (Minaphyllin Inj.) (F. D. C)—१–२ एम्पुल दिन में २ बार I/M या I/V.

१३. परफाइलोन (Perphyllon) (जर्मन रेमिडीज)—२ मिली I/V अथवा I/M.

१४. सलास्मा (Salasma) (Ebers)—१–२ गोली दिन में ३–५ बार।

१५. सालबीटोल (Salbetol) (F. D. C.)—२–४ मि० ग्रा० दिन में ३–४ बार।

१६. सालमाप्लोन (Salmaplon) (खण्डेलवाल)—१–२ गोली दिन में ३–४ बार।

१७. टरबूटालीन एस्ट्रा (एस्ट्रा आइडियल)—१–२ गोली प्रति ८ घण्टे पर।

१८. टरबूटालीन (Tarbutaline) (वैलेसी या सिपला)—१–२ गोली दिन में ३–४ बार।

१९. टरगिल (Tergil) (M.M. Labs)—२ गोली दिन में ३ बार।

२०. थियो-एस्थालिन (Theo-asthalin) (सिप्ला)—१ गोली दिन में ३ बार।

२१. थियोलॉग–२०० (Theolog–200) (Sol)—१ कै० प्रति १२ घण्टे पर।

२२. थियोमैक (Theomac) (मैक)—१–२ गोली दिन में ३ बार।

अन्य—ब्रिकारैक्स एक्स्पेक्टोरेण्ट, ब्रॉन्कोटस आदि। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्तःपूयता
(Empyema)

परिभाषा—Any purulent collection of fluid in pleural cavity is known as empyema.

○ प्लूरल केविटी में पूय के एकत्रित होने को एम्पाइमा कहते हैं।

कारण (Etiology)—It is always secondary and usually due to rupture or extension of infective process in lung, but may follow infections elsewhere.

१. फेफड़ा (Lung)।

(i) न्यूमोनिया (Pneumonia)

(ii) फुप्फुस-विद्रधि (Lung abscess)।

(iii) ब्रान्किएक्टेसिस (Bronchiectasis)।

(iv) कार्सीनोमा (Carcinoma)—विशेषकर वृद्धावस्था में।

(v) ट्युबरकुलोसिस (Tuberculosis)।

(vi) ऑपरेशन के पश्चात् फेफड़े की अवस्था (Post-operative lung condition)।

२. सब-फ्रेनिक एब्सिस (Sub-franic abscess)।

३. पसलियों का संक्रमण (Rib infection)।

४. ईसोफेगस कार्सीनोमा (Oesophagus carcinoma)।

५. सेप्टीसीमिया (Septicaemia)।

६. बाहरी आघात (Traumatic)—हीमोथोरेक्स का इन्फेक्शन।

७. सामान्य जीवाणु जो एम्पाइमा के लिए उत्तरदायी होते हैं; वे हैं—

○ स्टेफिलोकोकस ओरियस, कोलीफार्म ऑर्गेनिज्म, सीडोमोनास, क्लेबसीला न्यूमोनाई, एनारोबिक ऑर्गेनिज्म।

रोग के प्रकार (Types)—

१. एक्यूट एम्पाइमा (Acute empyema)।

२. क्रॉनिक एम्पाइमा (Chronic empyema)।

एक्यूट एम्पाइमा
(Acute Empyema)

○ प्रारम्भिक अवस्था में वक्षशूल (Pleuritic chest pain), श्वास-कृच्छ्रता, खाँसी एवं बलगम।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ इसके सामान्य लक्षण प्लूरल इफ्यूजन के समान होते हैं, परन्तु इसमें कुछ विशेष चिह्न भी देखने को मिलते हैं, जैसे—टॉक्सीमिया, पाइरेक्सिया, ट्रेकीकार्डिया, हेक्टिक टाइप फीवर, मेलाइस, अरुचि (Anorexia), पसीना, तथा भार में कमी आदि लक्षण।

○ रोग प्रारम्भ होने के २-३ सप्ताह बाद अँगुलियों के अग्र भाग मोटे हो जाते हैं। विशेष रूप से बच्चों में यह लक्षण बड़ी तेजी के साथ बढ़ता हुआ मिलता है।

अन्वेषण (Investigation)—

१. **रक्त-परीक्षण**—ल्यूकोसाइटोसिस का चिह्न मिलता है।

२. **एक्स-रे परीक्षा**—प्लूरल इफ्यूजन के सभी चिह्न मिलते हैं, पर इसमें ओपेसिटी (Opacity) अधिक दीखती है।

३. **ल्यूकोसाइट काउण्ट**—१५०००-२०००० प्रति क्यूबिक मिमी०।

४. प्लूरल फ्लूइड का माइक्रोस्कोपिक परीक्षण, कल्चर तथा सेन्सिटीविटी टेस्ट करने पर पूय (Pus) तथा जीवाणु मिलते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—

(1) Principle of treatment—

1. Removal of pus.
2. Restoration of lung expension.
3. Restoration of chest function to normal.

(२) औषधि चिकित्सा—

१. ℞ पेनिसिलीन ५ लाख यूनिट प्रति ४-६ घण्टे पर मांसपेशीगत दें।

२. क्लोरम्फेनिकाल अथवा अन्य एण्टीबायोटिक की पर्याप्त मात्रा दें।

३. प्लूरा के रिक्त स्थान से उपस्थित पूय को निकाल देना चाहिए। तत्पश्चात्—

℞ बेन्जाइल पेनिसिलीन ५००,००० यूनिट
स्टेराइल वाटर ५-१० मिली०

दोनों को प्लूरा के रिक्त स्थान में प्रवेश कर देना चाहिए।

व्या० नाम—क्रिस्टापेन (ग्लैक्सो)।

○ संक्रमण को रोकने के लिए विशिष्ट एण्टीबायोटिक औषधियों का प्रयोग करें।

○ प्लूरल स्पेस से पूय का निष्कासन करें।

○ एस्पिरेशन (Aspiration)—यदि कफ पतला हो तो सिरिञ्ज द्वारा प्रति दूसरे-तीसरे दिन निकाल लें।

○ जनरल टॉक्सीसिटी के लक्षण समाप्त होते ही श्वास व्यायाम (Breathing exercise) करायें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—यदि पूय गाढ़ा हो तो इन्जे० स्ट्रेप्टोकाइनेज २००,००० यूनिट प्लूरल केविटी में प्रवेश कर कुछ घण्टे छोड़कर तत्पश्चात् पुनः आचूषण (Aspiration) करें।

क्रॉनिक एम्पाइमा
(Chronic Empyema)

परिचय—३ माह तक चलने वाला एम्पाइमा क्रॉनिक एम्पाइमा कहलाता है।

कारण (Etiology)—१. इनइफेक्टिव ड्रेनिज अथवा एक्यूट एम्पाइमा का सही निदान न होने पर।

२. क्रॉनिक इन्फेक्शन (Chronic infection)—टचुबरकुलोसिस, फुप्फुस-विद्रधि, ब्रॉन्किएक्टेसिस (Bronchiectasis), एक्टीनोमाइकोसिस आदि।

३. एक्यूट एम्पाइमा की उचित चिकित्सा न करने से।

४. ब्रॉन्को-प्लूरल फिस्चुला।

५. बाह्य वस्तु (Foreign bodies)—प्लूरल केविटी के अन्तर्गत ड्रेनिज़ टचूब आदि के रह जाने से।

लक्षण एवं चिह्न—१. निरन्तर बार-बार होने वाला पार्श्वशूल (Chest pain) तथा बुखार।

२. भार की कमी तथा अनीमिया।

३. अँगुलियों के अग्र भाग का मोटा होना।

४. फाइब्रोसिस के कारण छाती की दीवार (Chest wall) में अंतर पड़ जाना (Deformity)।

५. क्रॉनिक साइनस ट्रैक्ट (त्वचा तथा फेफड़े की) में वृद्धि।

६. ब्रॉन्को-प्लूरल फिस्चुला की उपस्थिति में रोगी के खाँसते समय की हवा सुनी जा सकती है।

निदान (Diagnosis)—१. एक्स-रे परीक्षा—प्लूरा पर गहरी ओपेसिटी दीखती है।

२ मिथलीन ब्लू टेस्ट—इससे ब्रॉन्को-प्लूरल फिस्चुला का पता लगता है।

चिकित्सा (Treatment)—१. इण्टरकोस्टल ड्रेनिज तथा उचित एण्टीबायोटिक का प्रयोग। अथवा रिब-रिसेक्शन (Rib-resection) एवं खुला ड्रेनिज (Open drainage)।

२. इसके असफल होने पर एम्फाइसीमा सैक (Emphysema sac) का चीरा लगाकर थोरेक्टोमी करनी चाहिए।

इम्पाइमा नाशक अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. ट्रिसूल (Trisule)—२ गोली दिन में २ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. ओम्नासिलीन—१ वायल २ सी० सी० डिस्टिल्ड वाटर में घोलकर I/M।

३. प्रॉक्सीमर (Proxymer)—२ गोली दिन में ३ बार।

४. ओरियोमाइसिन—१-२ कै० दिन में २ बार।

५. टैरामाइसिन—१-२ कै० + सल्फाडायाजीन १-२ गोली दिन में २ बार। □

श्वसन-संस्थान के रोग 2/12

फुप्फुस-तन्तुमयता
(Pulmonary Fibrosis)

पर्याय—फुप्फुस में सौत्रिक धातु का उत्कर्ष, जीर्ण फुप्फुस जरा कास अथवा जरा श्वास (Chronic enterstitial fibrosis of the lungs)।

परिचय—इस विकृति में फेफड़ों में सौत्रिक धातु (Fibrous tissue) की प्रधानता हो जाती है। इससे प्रभावित फेफड़ा सिकुड़ कर छोटा हो जाता है और छाती की दीवार (Chest wall) अन्दर की ओर खिच जाती है। छाती के बीच के अवयव तथा हृदय विकृत पार्श्व की ओर खिसक जाते हैं। सौत्रिक धातु का संचय थोड़े से स्थान पर अथवा व्यापक रूप में सीमित रहता है।

कारण (Etiology)—१. यक्ष्मा, ब्रॉन्कोन्यूमोनिया, न्यूमोकोनियोसिस, प्लूरिसी फिरंग आदि के कारण।

२. ३०-४० वर्ष की आयु के पश्चात्।

अन्य कारण—

१. वाम हृदय (Left ventricle) के निर्बल हो जाने पर।

२. ऑटो-इम्यूनिटी (Auto-immunity)।

३. बालकों में कभी-कभी मीजिल्स तथा हूपिंग कफ के परिणामस्वरूप।

४. बालकों में उनके बाल्यावस्था में ही फेफड़े के एक खण्ड में फाइब्रोसिस हो जाता है। जिसके अन्दर विद्यमान श्वासनलियों में शोथ के होने से खाँसी का लक्षण वर्षों तक बना रहता है। तत्पश्चात् इस कठोर फेफड़ों में श्वास-नली-शैथिल्य (ब्रॉन्किएक्टेसिस) का भी उपद्रव हो जाता है।

५. स्थानिक क्षयरोग, फुप्फुस-विद्रधि (Abscess of the lung), फेफड़े का कैंसर, क्रॉनिक प्लूरिसी आदि रोगों से भी इसकी उत्पत्ति होती है।

रोग के प्रकार (Types of disease)—

१. रिप्लेसमेण्ट फाइब्रोसिस—

(i) स्थानीय (Localized)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. CC-0. In Public Domain. eGangotri

(ii) व्यापक (Diffuse) ।

२. फोकल फाइब्रोसिस ।

३. इण्टरस्टीशियल फाइब्रोसिस ।

सामान्य रोग लक्षण—१. खाँसी तथा श्वास फूलने के प्रधान लक्षणों का मिलना ।

२. खाँसी के साथ कफ तथा रक्त की उपस्थिति ।

३. अधिक दुर्बलता तथा शक्तिहीनता का होना ।

४. ज्वर प्रायः नहीं रहता है, किन्तु उपसर्ग की उपस्थिति में ज्वर मिल सकता है ।

५. विकृत पार्श्व की गति कम हो जाती है । साथ ही छाती का फूलना कम हो जाता है ।

६. वक्ष के दोनों पार्श्वों के माप में अन्तर आ जाता है ।

७. भार में कमी मिलती है ।

८. ○ प्रधान रोग के लक्षण अवश्य मिलते हैं ।

९. श्वास-गति की तीव्रता अथवा उथले-उथले तीव्र श्वास के लक्षण ।

१०. पहले तो श्रम करने पर रोगी में श्वासकृच्छ्रता उत्पन्न होती है, किन्तु रोग के बढ़ने पर रोगी का बैठे-बैठे ही श्वास चढ़ने लगता है ।

११. खाँसी होने पर श्वासकृच्छ्रता और बढ़ जाती है ।

१२. रोग की अन्तिम अवस्था अथवा दीर्घकालिक अवस्था (Late stage) में राइट हार्ट-फेल्योर के लक्षण उत्पन्न होते हैं ।

निदान (Diagnosis)—सामान्य निरीक्षण (General survey)—

१. सेण्ट्रल साइनोसिस की उपस्थिति मिलती है । अर्थात् ऑक्सीजन की कमी से चेहरे पर नीलापन जा जाता है ।

२. अँगुलियों के अग्र भाग ८०% केसिस में मोटे (Finger clubing) मिलते हैं ।

३. अन्य चिह्न प्रधान रोग के मिलते हैं ।

○ छाती के चिह्न (Signs of chest)—

१. फेफड़े के प्रभावित भाग पर छाती दबी हुई दिखलाई पड़ती है । रोग के बढ़ने पर छाती एक ओर अथवा दोनों ओर दबी हुई प्रतीत होती है ।

२. ऊपर का कंधा गिर जाता है ।

३. श्वास-प्रश्वास के साथ उधर की छाती स्वस्थ छाती की अपेक्षा कम हिलती है ।

४. रोगी देखने में अत्यन्त कृश होता है ।

○ इन्स्पेक्शन (Inspection)—

१. चेस्ट फ्लेटनिंग उपस्थित मिलती है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. छाती की गति कम मिलती है।

३. पसलियों का समुच्चित होना (Ribs aggregated)।

○ **परिस्पर्शन** (Palpation)—

१. नाड़ी की गति तीव्र होती है।

२. पल्मोनरी एरिया पर हृदय का द्वितीय शब्द ऊँचा सुनाई पड़ता है।

छाती पर टकोर ध्वनि—स्वस्थ छाती की अपेक्षा मन्द होती है।

○ **श्रवण परीक्षा**—१. ऊपर की श्वासनलियों पर श्वास-प्रश्वास ध्वनि ऊँची तथा ट्यूबलर सुनाई पड़ती हैं।

२. नीचे बुलबुलों जैसी ध्वनि मिल सकती है।

३. रोगग्रस्त फेफड़े पर श्वास-प्रश्वास की ध्वनि निर्बल सुनाई पड़ती है।

४. चिरकारी कास के कारण दोनों ओर सीटियों जैसी आवाज सुनाई देती है।

५. मुख में बोला हुआ शब्द भी रोगग्रस्त फेफड़े पर सुनाई नहीं पड़ता।

६. अधिकतर आर्द्र ध्वनि (Moist sound) एवं कभी-कभी शुष्क ध्वनि (Dry sound) उपस्थित मिलती है।

○ **एक्स-रे परीक्षा**—१. दोनों फेफड़ों में व्यापक बदलियाँ (Clouding) छायी हुई दिखलाई देती हैं।

२. बदलियाँ चकत्तीदार (Patchy) तथा ग्रन्थिल (Nodular) होती हैं।

○ **अन्य सम्भावित निदान**—१. यदि छाती अन्दर को दबी हुई तथा हृदय एक ओर को खिसका हुआ हो, तो पल्मोनरी फाइब्रोसिस का सन्देह करना चाहिए।

२. ३०-४० वर्ष की आयु में जब 'श्वासकृच्छ्रता' के लक्षण क्रमशः बढ़ते हुए हों तथा पूर्व में पुरानी खाँसी या श्वासरोग का इतिहास मिले तो पल्मोनरी फाइब्रोसिस का सन्देह करना चाहिए।

नोट—○ इस रोग में श्वासकाठिन्य जितना अधिक होगा, फेफड़े में उतना ही अधिक फाइब्रोसिस समझना चाहिए।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—

१. एक्स-रे परीक्षा में इसका ज्ञान सुगमता से हो जाता है।

२. प्लूरिसी जनित फाइब्रोसिस में एक्स-रे छाया फेफड़े के शिखर पर मिलती है।

३. अन्य रोगों के कारण छाया फेफड़े के निम्न भाग में दिखायी देती है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—○ कुछ-एक वर्षों तक रोग के रहने के बाद अन्त में रक्त को ऑक्सीजन कम मिलने से या ब्रॉन्को-न्यूमोनिया का आक्रमण हो जाने से अथवा दक्षिण हृदय (Right ventricle) के सामने

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रुकावट के बढ़ जाने अथवा उसके आकार में बड़े हो जाने (Dilatation) से अन्त में हृदयगति के अवरुद्ध होने से रोगी की मृत्यु हो जाती है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. इसकी कोई भी रोगनिवारक चिकित्सा नहीं है।

२. रोगी को प्रारम्भ से ही धूल तथा धुएँ से बचाना चाहिए।

३. खाँसी तथा न्यूमोनिया आदि के होने पर श्वास-व्यायाम यथा—प्राणायाम नियमित रूप से करने पर फारब्रोसिस को रोका जा सकता है।

४. शीत ऋतु में ज्वर तथा खाँसी का संक्रमण होने पर उचित एण्टी-बायोटिक औषधि का प्रयोग करना चाहिए।

नोट—इन औषधियों के देने पर फाइब्रोसिस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

५. फेफड़े तथा हृदय की कार्यक्षमता के अनुसार ही रोगी को श्रम करना चाहिए।

६. प्लूरिसी जनित रोग होने पर तदनुसार चिकित्सा करनी चाहिए।

(२) औषधि चिकित्सा—

(i) ℞ कोर्टीकोस्टेराइड्स (Corticosteroids)

प्रेडनीसोलोन ४०-६० मि० ग्रा० प्रतिदिन १-२ माह तक।

तत्पश्चात्—मेण्टीनेन्स डोज कुछ माह तक।

(ii) ज्वर तथा खाँसी की उपस्थिति में—

℞ टेट्रासाइक्लीन (Tetracycline) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कै० दिन में ४ बार अथवा इञ्जे० २ मिली० दिन में १ बार ७ दिन तक।

अथवा—एम्सीसिलीन (Ampicillin) ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैप्सूल दिन में २ बार।

अथवा—सेप्ट्रान या बैक्ट्रिम (Septran or Bactrim)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—ओरीप्रिम डी० एस० अथवा सेप्ट्रान डी० एस०

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

अन्तिम अवस्था में—

१. फेफड़े की असमर्थता दूर करने के लिए ऑक्सीजन का प्रयोग करें।

२. मूत्रल औषधि का प्रयोग करें।

३. भोजन में नमक की मात्रा कम करें।

आवश्यक निर्देश—इस रोग में प्रधान रोग की चिकित्सा अवश्य की जानी चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फुप्फुस-विद्रधि
(Lung Abscess)

पर्याय—फुप्फुस-विद्रधि, सुप्युरेटिव न्यूमोनिया (Suppurative pneumonia)।

परिभाषा—Lungs abscess is an inflammatory lesion in the lung associated with necrosis of lung tissue.

अन्य परिभाषा के अनुसार—A localised area of lung infection with tissue necrosis is called lung abscess.

कारण (Causes)—**१. विशिष्ट संक्रमण द्वारा**—स्टेफिलोकोकस, एक्टीनोमाइकोसिस, एण्टामीबा हिस्टोलिटिका एवं अन्य बेसिलस इसके लिए उत्तरदायी हैं।

२. ब्रॉन्कियल अवरोध (Bronchial obstruction)—कार्सीनोमा, ब्रॉन्कस बेनाइन ट्यूमर, ब्रॉन्को स्टेनोसिस, श्वसनिका (Broncheole) के अन्तर्गत बाह्य पदार्थ (Foreign bodies) का प्रवेश।

३. वेस्कुलर इम्बोलिज्म।

४. सुप्युरेटिव एस्पिरेशन न्यूमोनिया।

५. एम्पाइमा अथवा यकृत् विद्रधि का फेफड़े में फट जाना।

६. कञ्जेनिटाल पल्मोनरी सिस्ट।

७. छाती के विसंक्रमित घाव (Infected chest wound)

लक्षण (Symptoms)—○ कभी-कभी अकस्मात् विशेष रूप से एस्पिरेशन, ब्रॉन्कियल अवरोध अथवा न्यूमोनिया के रोगी को १०-१५ दिन के पश्चात् हलका बुखार, कास, बलगम, पार्श्वशल तथा गिरा हुआ स्वास्थ्य आदि लक्षण मिलते हैं।

जब इसका प्रारम्भ तीव्र स्वरूप का होता है, तब—

१. अकस्मात् तीव्र बुखार (१०३–१०५° फा०) जो शीत-जाड़ा और कँपकँपी के साथ आता है और पसीने के साथ उतर जाता है।

२ तीव्र स्वरूप की खाँसी के साथ दुर्गन्धित बलगम पर्याप्त मात्रा में आता है, जिसमें कभी-कभी रक्त भी मिला होता है।

३. प्लूरिसी के कारण पार्श्वशूल होता है।

४. रोगी में धीरे-धीरे दुर्बलता आने लगती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिह्न (Signs)—यह विद्रधि के आकार तथा स्थिति (Situation) के अनुसार मिलते हैं।

सामान्य निरीक्षण (General survey) में—

१. रोगी विषाक्त प्रतीत होता है।

२. तीव्र बुखार मिलता है।

३. १-२ सप्ताह पश्चात् अँगुलियों के सिरे मोटे (Clubbing fingers) दीखते हैं।

४. भार में कमी तथा अनीमिया के लक्षण मिलते हैं।

५. ८ से १२ सप्ताह के पश्चात् ऑस्टियो-आर्थोपेथी की उपस्थिति मिलती है।

छाती की परीक्षा—

१. **पल्पिटेशन** (Palpitation)—वोकल फ्रेमिटस (Vocal fremitus) बढ़ी हुई मिलती है।

२. 'ट्रेकिया' तथा 'एपेक्स बीट' सामान्य मिलती है।

३. **आस्कल्टेशन** (Auscultation)—श्वसन ध्वनि (Breath sound) ट्यूबलर रूप में सुनाई पड़ती है।

४. वोकल रिसोनेन्स (Vocal resonance) बढ़ी हुई मिलती है।

अन्वेषण (Investigation)—

१. **रक्त-परीक्षा** (Blood test)—ल्यूकोसाइट काउण्ट २०,०००—३०,००० सैल्स प्रति क्यूबिक मिमी०।

२. **बलगम परीक्षा** (Sputum test)—पूय सैल, जीवाणु तथा नेक्रोटिक फुप्फुस कोशा (Necrotic lung tissue) मिलते हैं।

एक्स-रे परीक्षा—इसमें केविटी (Fluid level) दिखलाई देती है। यह रोग की बढ़ी हुई अवस्था में मिलती है।

○ प्रारम्भिक अवस्था में कन्सोलिडेशन के कारण होमोजीनस ओपेसिटी एक्स-रे चित्रण में देखी जा सकती है।

○ एक्स-रे निरीक्षण में—

(a) P. A. & Lateral—for exact localization.

(b) Exact location is important with regard to site of costal drainage.

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—इस रोग का विभेद (पृथक्करण) निम्न रोगों से करना आवश्यक होता है—१. पल्मोनरी ट्युबरकुलोसिस, २. ब्रान्कोजेनिक कार्सीनोमा, ३. एक्यूट एम्पाइमा, ४. हाइडेटिड सिस्ट, ५. ब्रॉन्किएक्टेसिस, ६. क्रॉनिक ब्रॉन्काइटिस, ७. कार्सीनोमेटस केविटी, ८. कन्जेनिटाल एसेसरी सिस्ट्स ऑफ लंग्स।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपद्रव (Complications)—१. क्रॉनिक सुप्युरेटिव न्यूमोनाइटिस, २. एम्पाइमा, ३. मेटास्टेटिक एब्सिस, ४. एमिलायडोसिस, ५. हीमोटाइसिस, ६. दक्षिण हार्ट फेल्योर (कोर पल्मोनेल), ७. न्यूमोथोरेक्स, ८. द्वितीयक संक्रमण—विशेषकर टी० बी०, ९. नियमित तीव्र कास, १०. समस्त शरीर में शोथ के लक्षण, ११. सेरिब्रल एब्सिस, १२. पोलीसिस्थेमिया, १३. प्लूरल केविटी में फटना।

चिकित्सा (Treatment)—

१. शय्या पर पूर्ण विश्राम।

२. श्वास सम्बन्धी व्यायाम यथा—प्राणायाम।

३. उच्च कैलोरी वाला उच्च प्रोटीनयुक्त आहार तथा विटामिन्स का प्रयोग।

४. द्वितीयक संक्रमण को रोकने के लिए एण्टीबायोटिक का प्रयोग (सेन्सिटीविटी टेस्ट के उपरान्त) करना चाहिए। इसके लिए—

℞ बेन्जाइल पेनिसिलीन १,२०,००० यूनिट।

व्या० नाम—पेनीड्यूर L. A. 12 (वीथ कं)

२ मिली० डिस्टिल्ड वाटर में घोल कर मांसपेशीगत १० दिन के अन्तर पर ५ इन्जेक्शन दें।

अथवा—बेन्जोइल पेनिसिलीन १-२ मेगा यूनिट्स प्रति ८ घण्टे पर ४-६ सप्ताह तक I/M।

इसके पश्चात् आवश्यकता पड़ने पर—

℞ फीनोक्सीमिथाइल पेनिसिलीन २५० मि० ग्रा०

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार मुख मार्ग से।

अथवा—इन्जे० क्रिस्टेलिन पेनिसिलीन ६ लाख यूनिट मांसपेशीगत प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—इरीथ्रोमाइसि (Erythromycin)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर २ सप्ताह तक।

नोट—यदि चिकित्सा से लाभ मिल रहा हो तो इसे १-२ माह तक दें।

साथ ही—स्ट्रेप्टोमाइसिन १ ग्राम प्रतिदिन मांसपेशीगत।

निर्देश—यदि जीवाणु पेनिसिलीन के प्रति रसिस्टेण्ट हों तो—

℞ क्लोक्सासिलीन (Cloxacillin) २५० मिग्रा० मांसपेशीगत प्रति ३ घण्टे पर।

यदि अमीबिक प्लीउसे, पल्मोनरी संक्रमण भी उपस्थित हों तो—

℞ इमेटीन अथवा मेट्रोनिडाजोल का प्रयोग करें।

आवश्यक निर्देश—१. पेनिसिलीन, स्ट्रेप्टोमाइसिन तथा सल्फा ड्रग्स साथ-साथ दी जाती हैं।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. इसके साथ ओरियोमाइसिन, क्लोरोमाइसिटीन, टेरामाइसिन तथा एक्रोमाइसिन नहीं देना चाहिए।

३. ज्वर नार्मल हो जाने तथा लक्षणों के शमन हो जाने के १ सप्ताह के बाद इन औषधियों को शनैः-शनैः बन्द कर देना चाहिए।

४. बलगम की परीक्षा करने पर स्पोरोकीट की उपस्थिति मिलने पर संखिया के योग I/V द्वारा देने से लाभ मिलता है।

अन्य चिकित्सा—इसमें खाँसी को कम करने का प्रयास करें। कफ को उत्तेजित करने वाली औषधियाँ दें। अथवा निम्न योग दे सकते हैं—

℞ एमन कार्ब	२४० मिग्रा०
टिं० सिल्का	१० बूंद
सीरप टोलू	६० बूंद
एक्स्ट्रेक्ट ग्लिसराइला लि०	२० बूंद
जल (Aqua)	१ औंस

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार। १ मात्रा

साथ ही—१. शय्या पर रोगी का सिर नीचा करके लिटाने से केविटी का स्राव बाहर निकल जाता है। इस क्रिया को निरन्तर अथवा दिन में २ या ३ बार करते रहना चाहिए।

इसे **पाश्चरल ड्रेनिज** (Postural drainage) कहते हैं।

२. जल में टे० बेन्जोइन डाल कर उसकी बाष्प सुँघायें।

३. रोगी में मधुमेह तो नहीं हैं ? इसका पता कर उसकी चिकित्सा करें।

४. रोग की दीर्घकालिक अवस्था में ऑपरेशन द्वारा पूय को निकाला जा सकता है।

५. रोग-निवृत्ति के पश्चात् प्राणायाम करते रहना चाहिए।

शल्य-चिकित्सा—यदि २ सप्ताह के पश्चात् रोगी को रोग से निवृत्ति न मिले अथवा केविटी का व्यास ६ सेण्टीमीटर अथवा केविटी की दीवार बहुत मोटी हो तो शल्य-चिकित्सा का अवलम्बन करना चाहिए।

○ २०% केसिस में 'Lung rescection' आवश्यक होता है।

इस रोग की चिकित्सा में—

आजकल एण्टीबायोटिक की संयुक्त थिरापी के अन्तर्गत मुखद्वारा मेट्रोनिडाजोल अथवा इण्ट्रावीनस ड्रिप के प्रयोग से इसकी प्रभावकारी शक्ति में वृद्धि होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीव्र श्वासप्रणाल-श्वसनीशोथ
(Acute Tracheo-bronchitis)

कारण (Causes)—यह विकृति 'पायोजेनिक ऑर्गेनिज्म' के द्वारा होती है। विशेषकर स्ट्रप्टोकोकस, न्यूमोनाई एच, इन्फ्लूएञ्जाई, स्टेफिलोपायोजेनिस।

प्रवर्तनपूर्व अवस्थाएँ (Paedisponsing stages)—कोराइजा, फ्लू, मिजिल्स, हूपिंग कफ, सर्दी-जुकाम, नमीयुक्त तथा अन्धेरे स्थान में निवास, धूलयुक्त वातावरण एवं दीर्घकाल तक मुँह से श्वास लेने आदि कारणों से।

लक्षण (Symptoms)—१. रोगी को सूखी कष्टदायक खाँसी आती है।

२. छाती में कष्ट तथा शूल।

३. श्वासकष्ट तथा श्वास में सीटी की आवाज।

४. वलगम प्रारम्भ में स्केण्टी म्यूकोइड, अन्त में म्यूकोपुरुलेण्ट तथा कोपियस होता है।

५. हल्का बुखार रहता है।

निदानात्मक परीक्षा (Diagnostic test)—

१. श्रवण-यन्त्र परीक्षा—वाइलेटरल रॉन्काई सुनाई देती हैं। कभी-कभी क्रेपीटेशन की ध्वनि भी सुनाई देती है।

२. रक्त-परीक्षा (Blood test)—पॉलीमार्फोन्यूक्लियर ल्यूकोसाइटोसिस की उपस्थिति।

चिकित्सा (Treatment)—१. शय्या पर विश्राम।

२. टिं० वेञ्जोइन + मेन्थोल—वाष्प इन्हेलेशन।

३. ℞ एम्पीसिलीन (Roscillin)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० दिन में ४ बार।

नोट—एक्यूट लक्षण समाप्त होने पर आधी मात्रा में दें।

४. सेडेटिव लिक्टस—

℞ जेफ्रोल सीरप (Jephrol syrup)

मात्रा—५ मिली० दिन में तीन बार।

५. साथ ही छाती पर सिंकाई करें। ▣

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फुप्फुस-धूलिमयता
(Pneumoconiosis)

पर्याय—ऑकुपेशनल डस्ट डिजीज़ (Occupational dust disease), इण्डस्ट्रियल पल्मोनरी डिजीज़ (Industrial pulmonary disease)।

परिचय—यह रोग फेफड़े के फाइब्रोसिस का एक प्रकार है, जो कुछ प्रकार की धूल या कण के श्वासमार्ग में चले जाने से उत्पन्न होता है।

प्रकार (Types)—**१. सिलीकोसिस** (Silicosis)—सिलका कणों के सूँघने अर्थात् इन कणों के श्वासमार्ग में चले जाने से इस प्रकार की विकृति उत्पन्न होती है। यह कोल माइन्स (कोयला की खान), ग्रेनाइट एवं रेतीले पत्थरों के कारखानों में काम करने वाले व्यक्तियों को होता है। लगभग २ से २० वर्ष के भीतर इसका प्रभाव दिखलाई पड़ता है।

२. एस्बेस्टोसिस (Asbestosis)—यह एस्बेस्टस कणों के श्वासमार्ग में चले जाने से हो जाता है। इसमें हाइड्रेटिड कैल्शियम, मैगनेशियम, सिलीकेट, क्राइसोलाइट, ट्राइडीमाइट आदि मिले होते हैं। यह फेफड़े के निचले भाग में अन्तर्गस्त (Involve) होते हैं। लगभग २ से ८ वर्ष में इसके लक्षण दीखने लगते हैं।

३. सिडेरोसिस (Siderosis)—यह आयरन ऑक्साइड, मेटेलिक आयरन आदि के कणों के श्वासमार्ग में चले जाने से होता है। इस प्रकार की विकृति आइरन फाउण्ड्री, इलेक्ट्रिक ए० आर० सी० वेल्डर्स में मिलती है। यह फेफड़े में लाल और काला रंग (Red and black colouration) पैदा करते हैं। 'रेड टाइप' का फाइब्रोसिस से सम्बन्ध होता है, जब कि 'ब्लैक टाइप' का सिलकोसिस से सम्बन्ध होता है।

४. बाइसिनोसिस (Byssinosis)—यह रूई (Cotton) के कणों के श्वासमार्ग में चले जाने से होता है। यह एलर्जिक विकृति में होता है।

५. कोलमाइनर्स न्यूमोकोनीओसिस (एन्थ्राकोसिस)—यह कोल डस्ट के द्वारा होता है, जिसमें कुछ सिलका मिला होता है।

लक्षण एवं चिह्न (Symptoms & signs)—

१. श्वसनाभाव (Breathlessness)।

२. खासी और बलगम (Cough and sputum)।

○ कोल-माइनर्स की न्यूमोकोनिओसिस में बलगम 'काला' आता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. एम्फीसीमा के लक्षण इसके सम्पूर्ण चिह्नों के साथ विकसित होता है।

४. धीरे-धीरे क्रॉनिक कोर पल्मोनेल के लक्षण प्रत्येक रोगी में विकसित होते हैं। साथ में यकृत् की वृद्धि, ईडिमा तथा जुगलर वेन उभरी हुई (Prominent jugular vein) प्रतीत होती है।

५. यदि रोग के साथ में यक्ष्मा भी उपद्रवस्वरूप उपस्थित होता है, तब रोगी में वमन की इच्छा (Emaciation), प्रातःकालीन तापक्रम का बढ़ना, मुँह से खून आना (Haemoptysis) और साथ में बलगम आना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं।

अन्वेषण (Investigation)—**१. बलगम की परीक्षा**—बलगम की परीक्षा करने पर 'कोल डस्ट' या एस्बेस्टस के पदार्थ मिलते हैं। यदि रोग में यक्ष्मा का भी उपद्रव हो तो इसमें A. F. B. की उपस्थिति अवश्य मिलती है।

२. एक्स-रे परीक्षा—इसमें छाती का एक्स-रे विशेष महत्त्व रखता है। प्रारम्भिक परिवर्तन फुप्फुस के सम्पूर्ण क्षेत्र में नोडुलेरिटी हिलार लिम्फैडीनोपैथी एवं पेरीफेरल एग सैल, कैल्सीफिकेशन (हिलार नोड्स की) सहित दीखती है। यह छाया धीरे-धीरे बढ़ जाती है और मिलियरी टचुबरकुलोसिस से मिलती-जुलती है।

○ फाइब्रोसिस उपस्थित मिलती है।

○ यदि उपद्रवस्वरूप यक्ष्मा मिलता है, तब केवीटेशन (Cavitation) दिखलाई देते हैं। यह चित्र सेलीकोसिस में मिलता है।

○ **एस्बेस्टोसिस में**—फुप्फुस के निचले भाग में रेटीकुलेशन मोटी तथा कैल्सीफिकेशन मिलती है।

○ **एन्थ्राकोसिस में**—रेटीकुलेशन तथा स्वच्छ नोडुल्स देखी जा सकती है।

मेडीकोलीगल केसिस में—उचित निदान के लिए फुप्फुस की बायोप्सी परीक्षा की आवश्यकता पड़ती है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—बहुत से केसिस में विशेषकर सिलीकोसिस एवं एस्बेस्टोसिस में हृदय-श्वसनगत फेल्योर (Cardio-respiratory failure), पल्मोनरी टचुबरकुलोसिस आदि उपद्रव हो जाते हैं।

बचाव (Prophylaxis)—१. पर्याप्त शुद्ध वायु का प्रबन्ध।

२. फैक्टरी तथा इण्डस्ट्री में काम करने वाले श्रमिकों को मास्क (Mask) का प्रयोग करना चाहिए।

चिकित्सा (Treatment)—१. इसकी कोई रोगनिवारक चिकित्सा (Curative treatment) नहीं है।

२. व्यवसाय को बदल देना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. यदि कार्डियो-रेस्पिरेटरी फेल्योर अथवा पल्मोनरी टचुबरकुलोसिस के लक्षण हों तो इनकी चिकित्सा करनी चाहिए।

नोट—इस रोग की लाक्षणिक चिकित्सा ही की जाती है।

४. गैस तथा धुएँ से बचने के लिए विश्राम तथा गरम रखने की पूर्ण व्यवस्था हो।

५. यदि संक्रमण के चिह्न हों तो एण्टीबायोटिक औषधियों की व्यवस्था करें।

६. कोस्टीकोस्टेराइड का इण्ट्रीवीनस प्रयोग कुछ दिनों करें। तत्पश्चात् 'प्रेडनीसोलोन' मुख द्वारा दें, साथ ही मार्फीन की छोटी मात्रा दें।

७. कुछ रोगियों में रक्त कन्सण्ट्रेशन को ठीक करने की आवश्यकता पड़ती है। ⊡

श्वसन-संस्थान के रोग 2/16

फुप्फुसपात
(Atelectasis)

पर्याय—फेफड़े का पिचक जाना (Lung collapse), फुप्फुस अविस्तृति, फुप्फुस-निपात।

परिभाषा—Atelectasis means a loss of volume in one or more sigments or lobes of the lung.

This is a condition of reduction of the volume of lung due to absorption of air from the alveoli or from expulsion of alveoler air.

प्रकार (Types)—१. कंजेनिटल कोलैप्स।

२. एक्वायर्ड कोलैप्स।

कारण (Etiology)—१. हूपिंग कफ, एक्यूट ब्रॉन्काइटिस, ब्रॉन्कियल अस्थमा, शल्य-चिकित्सा के पश्चात् कोमा।

२. **बाह्य पदार्थ (Foreign bodies)**—जैसे मरे हुए सेल्स, दाँत का कोई हिस्सा, रक्त का थक्का अथवा अन्य बाह्य पदार्थ आदि।

३. **नियोप्लाज्म (Neoplasm)**—ब्रॉन्को-जेनिक कार्सीनोमा, ब्रॉन्कियल एडीनोमा।

४. बढ़ी हुई हिलार लिम्फ नोड्स का बाहर से दबाव।

५ **कार्डियो-वैस्कुलर रोग**—जैसे—एऑर्टिक एन्यूरिज्म, पेरीकार्डियल इफ्यूजन

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. कञ्जेनिटल कोलैप्स।

लक्षण एवं चिह्न (Symptoms & signs)—इसके लक्षण अस्थिर (Variable) होते हैं।

१. अकस्मात् जब एक बड़ी ब्रॉन्कस अवरोध युक्त हो जाती है, तब रोगी में श्वासकष्ट (Dyspnoea), छाती की ओर वायुरोधात्मक शूल (Dragging pain on the side of chest), कभी-कभी हृदय की धड़कन आदि लक्षण मिलते हैं।

२. **जब कोलैप्स हुए फेफड़े में संक्रमण वृद्धि कर जाता है, तब रोगी में**—बुखार, खाँसी, बलगम आदि के लक्षण होते हैं।

३. **जब छोटी ब्रॉन्कस अवरोधमय होती है तब**—कोई लक्षण प्रकट नहीं होते।

४. कभी-कभी रोगी में रेस्पिरेटरी फेल्योर के लक्षण हो जाते हैं।

प्रकार (Types)—१. **एक्यूट (Acute)**—इसमें श्वासकष्ट, ट्रेकीकार्डिया, श्यावता (Cyanosis), पार्श्वशूल (चेस्ट पेन), बुखार आदि के लक्षण होते हैं।

२. **क्रॉनिक केसिस में**—कोई लक्षण नहीं मिलते हैं। इसका निदान केवल एक्स-रे द्वारा ही सम्भव है।

चिह्न (Signs)—१. **सामान्य निरीक्षण (General survey)**—चेहरे पर नीलापन (Central cyanosis) के लक्षण मिलते हैं।

○ यदि द्वितीयक संक्रमण वृद्धि कर जाता है तब बुखार, टॉक्सीमिया, तीव्र श्वास (Harried respiration) के चिह्न उपस्थित होते हैं।

२. **छाती के चिह्न**—निरीक्षण (Inspection) में छाती का चिपटापन, छाती की गति का अवरोध तथा प्रभावित दिशा में एपेक्स बीट का स्थित होना।

स्पर्श-परीक्षा—१. ट्रेकिया तथा एपीकल एम्पल्स विकृति की दिशा में उपस्थित मिलते हैं।

२. वोकल फ्रेमिटस ब्रॉन्कस की पोटेन्सी के अनुसार बदलती है।

अभिताड़न-परीक्षा (Percussion)—मन्द (Dull) मिलती है।

ऑस्कल्टेशन—जब ब्रॉन्कस उन्मुक्त होती है तो श्वसन ध्वनि ट्युबलर मिलती है। ब्रॉन्कस रिसोनेन्स बढ़ी हुई होती है।

○ जब ब्रॉन्कस में रुकावट होती है, तब श्वसन ध्वनि नहीं मिलती।

अन्वेषण—१. **छाती का एक्स-रे (P. A.)**—लोबुलर अथवा सेमेण्टल ठोस मिलता है।

२. **कफ-परीक्षा**—टी० बी० की आशंका होने पर कफ की परीक्षा की जानी चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. ब्रॉन्कोस्कोपी—रुकावट का कारण निश्चित् करने के लिए ब्रान्कोस्कोपी परीक्षा आवश्यक होती है।

चिकित्सा (Treatment)—इसकी चिकित्सा कोलैप्स के कारणों पर निर्भर करती है।

℞ १. ऑक्सीजन इन्हेलेशन (Oxygen inhalation)
ऑक्सीजन ९५% + CO_2 ५% का मिश्रण प्रति २-३ घण्टे पर आधे घण्टे तक।

२. मॉर्फीन तथा पेथिडीन का कम मात्रा में प्रयोग—मार्फीन १० मि० ग्रा० अथवा पेथिडीन ५० मि० ग्रा० की मात्रा में।

नोट—श्यावता की स्थिति में ऑक्सीजन इन्हेलेशन आवश्यक है।

३. रुकावट का निराकरण—

(i) ब्रॉन्कोस्कोपिक द्वारा बाह्य पदार्थ का हटाना।

(ii) स्राव को दूर करने के लिए 'ब्रॉन्को-डायलेटर्स', यथा—इफेड्रीन ३० मि० ग्रा० मुख द्वारा प्रति ४ घण्टे पर।

अथवा—पोश्चुरल ड्रेनिज का प्रयोग।

(iii) ट्रेकियल सक्सन के द्वारा अवरोध को हटाना।

४. प्रभावित फेफड़े में संक्रमण को हटाना—

℞ बेन्जिल पेनिसिलीन (क्रिस्टापेन)
मात्रा—०·५ मेगा यूनिट प्रति ६-८ घण्टे पर I/M
अथवा—एम्पीसिलीन (Ampicillin)
मात्रा—२५०-५०० मि० ग्रा० दिन में ४ बार।

नोट—टेट्रासाइक्लीन, इरिथ्रोमाइसीन अथवा पेनिसिलीन + स्ट्रेप्टोमाइसीन को मिलाकर सूचीवेध द्वारा दे सकते हैं।

साथ ही—कोरामीन ३–५ मिली० I/V से।

नोट—खाँसी रोकने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए, बल्कि उत्तेजित करने के लिए उपयुक्त मात्रा में 'कोरामीन' अथवा निम्न योग देना चाहिए—

℞ एमन कार्ब	२४० मिग्रा०
टि० सिल्ला	१० बूंद
सीरप टोलू	६० बूंद
एक्स्ट्रेक्ट ग्लिसराइजा	१० बूंद
जल	१ औंस।
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।	१ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्वासनलिकाओं का उद्वेष्टन (Bronchiospasm) रहने पर—

℞ इफेड्रीन ३०–४५ मि० ग्रा० दिन में ३ बार ।

नोट—१. प्राणायाम का अभ्यास नियमित रूप से करें ।

२. रोगी का पार्श्व बदलते रहना चाहिए ।

बचाव (Prophylaxis)—१. धूम्रपान का पूर्ण निषेध ।

२. कसी हुई बैण्डेज का पूर्ण बहिष्कार । □

श्वसन-संस्थान के रोग 2/17

स्वतःस्फूर्त वातवक्ष
(Spontaneous Pneumothorax)

परिचय—प्लूरा के बीच के खाली स्थान में वायु के एकत्र होने को 'स्पॉनटेनियस न्यूमोथोरेक्स' कहते हैं ।

कारण (Etiology)—इसके २ प्रमुख कारण हैं—

१. सब-प्लूरल एम्फीसिमेटस बुल्ला का फटना अथवा प्लूरो-पल्मोनरी का जुड़ना ।

२. सब-प्लूरल ट्युबरकुलस फोकस का फटना ।

अन्य सामान्य कारण—१. बाह्य-अन्तःप्रवेशी ।

२. ईसोफेजियल कार्सीनोमा का फटना अथवा ब्रॉन्कोजेनिक कार्सीनोमा । अथवा प्लूरा के खाली स्थान में सिस्ट की उपस्थिति ।

३. स्टेफिलोकोकस जन्य विद्रधि का (फुप्फुसीय) फटना ।

४. प्लूरा के रिक्त स्थान में गैस उत्पन्न करने वाले जीवाणुओं की वृद्धि ।

५. कृत्रिम वातवक्ष (Artificial pneumothorax) ।

○ **केटामेनियल न्यूमोथोरेक्स**—यह महिलाओं में ३०–४० वर्ष की आयु में मासिकधर्म में समय उत्पन्न होता है ।

प्रकार (Types)—१. क्लोज्ड टाइप, २. ओपेन टाइप, ३. वल्वुलर टाइप—इसे टेन्शन न्यूमोथोरेक्स भी कहते हैं ।

लक्षण (Symptoms)—१. वक्ष में अकस्मात् तीव्र पीड़ा होती है ।

२. अत्यन्त जोर से श्वास फूलना अथवा तीव्र श्वासकृच्छ्रता (Acute dyspnoea) ।

३. नख तथा नेत्र का नीला होना अथवा श्यावता (Cyanosis) के लक्षण ।

४. शॉक तथा कोलैप्स के लक्षण ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. रोग का आरम्भ अकस्मात् होने के कारण रोगी को अत्यधिक कष्ट होता है।

६. विकृत पार्श्व में तीव्र पीड़ा का होना।

७. निपात के कारण हाथ-पैर ठंडे हो जाते हैं, पसीना आता है और नाड़ी दुर्बल हो जाती है।

८. तीव्र न्यूमोथोरेक्स जब फेफड़े के रोग के कारण विकृत पार्श्व में होता है तब लक्षण तीव्र नहीं होते। परन्तु जब वह स्वस्थ पार्श्व में होता है तब लक्षण अत्यन्त तीव्र होते हैं।

निदानात्मक परीक्षा (Diagnostic examination)—

सामान्य निरीक्षण (General survey)—१. वक्ष के विकृत पार्श्व का आयतन (Volume) बढ़ जाता है तथा उसकी गति कम हो जाती है।

२. रोगी को पसीना आता है।

३. श्वसन की गति तीव्र होती है।

४. श्यावता की उपस्थिति मिलती है।

५. नाड़ी कमजोर तथा तेज मिलती है।

६. ब्लडप्रेशर कम होता है।

७. रोगी का तापक्रम सब-नार्मल होता है।

८. पसलियों के बीच का स्थान बाहर की ओर को फूला मिलता है।

९. हृदय का अग्रभाग (Apex) स्वस्थ पार्श्व की ओर खिसक जाता है।

१०. गले की शिरा (Jugular vein) उभरी हुई (Prominent) मिलती है।

११. टेन्शन न्यूमोथोरेक्स में शॉक तथा कोलैप्स के लक्षण बढ़े हुए मिलते हैं।

विशेष अन्वेषण (Special investigation)—

O छाती का एक्स-रे तथा स्क्रीनिंग में पिचके हुए फुप्फुस (Sharp collapsed lung) तथा प्लूरा के रिक्त स्थान में वायु दीखती है।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—इसका निम्न रोगों से विभेद करना चाहिए—

१. मायोकार्डियल इन्फार्क्शन।

२. पल्मोनरी इम्बोलिज्म।

३. मैसिव कोलैप्स।

४. तीव्र प्रकार की शुष्क प्लूरिसी।

चिकित्सा (Treatment)—१. रोगी को शय्या पर पूर्ण विश्राम दें।

२. ऑक्सीजन सुंघाएँ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. फुप्फुस का विसम्पीडन (Decompression) करें। यह निम्न प्रकार से किया जाता है—

(अ) **वाटर-शील मेथड**—यह सबसे उत्तम विधि है। 'स्थानीय संज्ञाहरण' तथा सभी 'एण्टीसेप्टिक' सावधानियाँ बरतते हुए एक निडिल प्लूरल कोश (Pleural sac) में प्रवेश की जाती है। नीडिल के दूसरे शिरे पर एक रबर ट्यूब लगा कर उसे एक एण्टीसेप्टिक लोशन के पात्र में जल के नीचे डुबा कर रखा जाता है।

नोट—इससे वायु निकल जाती है और श्वासकष्ट में आराम हो जाता है।

(ब) रिवर्स्ड ए० पी० मेथड।

(स) हाइपोडर्मिक नीडिल का सीधा प्रवेश और सिरिञ्ज के द्वारा खींचना।

○ इस विधि का प्रयोग 'इमरजेन्सी' की स्थिति में किया जाता है।

४. **सेडेटिव** (Sadative)—डायजीपाम अथवा फीनोबार्बीटोन इञ्जेक्शन रूप में दें।

५. **एण्टीबायोटिक्स**—सेकेण्ड्री इन्फेक्शन को रोकने के लिए पेनिसिलीन अथवा टेरामाइसिन, इरीथ्रोमाइसिन अथवा एम्पीसिलीन का प्रयोग करें।

साथ ही—○ यदि रोग का कारण टी० बी० हो तो एण्टीट्युबरकुलस औषधियाँ देनी चाहिए।

६. **ओपिन न्यूमोथोरेक्स के केस में**—

(i) रोगी को शय्या पर प्रूव्ड-अप पोजिशन में रखें।

(ii) श्वासकष्ट होने पर ऑक्सीजन दें।

(iii) इञ्जे० पेथिडीन १०० मि० ग्रा० अथवा इञ्जे० मार्फीन १५ मि० ग्रा० दें।

(iv) शल्य-चिकित्सा आवश्यक होती है।

७. **टेन्शन युक्त न्यूमोथोरेक्स में**—'वाटर-शील मेथड' का प्रयोग बराबर करें। केथेटर को प्लूरल सेक (Pleural sac) में ट्रोकार द्वारा अथवा चीरा लगाकर (Incision) प्रवेश करना चाहिए।

८. **शॉक तथा कोलैप्स की स्थिति में**—लक्षणों के अनुसार चिकित्सा करें।

९. **पुनरावर्तक न्यूमोथोरेक्स में** (For recurrent pneumothorax)—यह १५–२०% केसिस में होता है। इसमें शल्य-चिकित्सा आवश्यक होती है।

१०. **कष्टप्रद खाँसी के लिए**—

℞ कोडीन फॉस १५–३० मि० ग्रा० दिन में ३–४ बार।

११. **वक्ष में पीड़ा की स्थिति में**—इसमें 'ड्राई प्लूरिसी' के समान चिकित्सा करनी चाहिए। वक्ष पर पुराना घी गरम कर तथा नमक मिलाकर मालिश

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर सकते हैं। विकृत पार्श्व पर चिपकने वाली पट्टी अथवा 'एथिल क्लोराइड' का १ मिनट तक छिड़काव करने से पीड़ा शान्त हो जाती है।

साथ ही—डोरीडेन, नोवाल्जिन आदि पीड़ाहर औषधियाँ दें।

चिरकालीन न्यूमोथोरेक्स में—इसका प्रारम्भ शनैः शनैः होता है, साथ ही रोग के लक्षण भी साधारण होते हैं।

निर्देश—तीव्र न्यूमोथोरेक्स एक गम्भीर अवस्था है। अतः इसकी तत्काल चिकित्सा करनी चाहिए। इस अवस्था में प्लूरल सेक का प्रेशर निरन्तर बढ़ते रहने से वक्ष में अकस्मात् तीव्र पीड़ा, श्वास लेने में कष्ट, चेहरे का नीलापन आदि निपात (Collapse) के लक्षण होते हैं। ⊡

श्वसन-संस्थान के रोग 2/18

परिफुप्फुस निःसरण
(Pleural Effusion)

परिचय—यह एक ऐसी अवस्था है, जिसमें प्लूरल सेक के पार्श्व में निर्यासिन द्रव (Exudative fluid) एकत्रित हो जाता है। इस अवस्था को 'प्लूरिसी विद इफ्यूजन' कहते हैं।

○ जब प्लूरा के रिक्त स्थान में पूय एकत्रित होता है, तब वह अवस्था 'एम्पाइमा' (Empyema) कहलाती है।

○ जब प्लूरा के रिक्त स्थान (विशेषकर बाइलेटरल) में पारस्राव (Transudate) एकत्रित होता है, तो वह अवस्था 'हाइड्रोथोरेक्स' कहलाती है। जब रक्त एकत्रित होता है तब 'हीमोथोरेक्स' अवस्था कहलाती है। तथा काइल के एकत्रित होने को 'काइलोथोरेक्स' कहते हैं।

रोग के कारण—१. फुप्फुस तथा प्लूरा का यक्ष्मा रोग।
२. लोबर न्यूमोनिया।
३. फुप्फुस विद्रधि।
४. ब्रॉन्कोजेनिक कार्सीनोमा।
५. फुप्फुस का इन्फार्क्शन।
६. बाहरी आघात (Trauma)।
७. बाइल इन्फेक्शन।
८. हाइड्रोथोरेक्स के सभी कारण।
९. मैलिग्नेन्सी।

लक्षण (Symptoms)—१. रोगी में शुष्क प्लूरिसी का इतिहास मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. प्रभावित वक्ष श्वास के समय भारी प्रतीत होता है।

३. ज्वर बराबर बना रहता है।

४. अरुचि, दुर्बलता, शारीरिक शक्ति का ह्रास आदि लक्षण मिलते हैं।

५. श्वासकष्ट द्रव की तेजी पर निर्भर करता है, मात्रा पर नहीं।

६. रोग की बढ़ी हुई अवस्था में श्यावता (चेहरे का नीलापन) के लक्षण मिलते हैं।

○ कभी-कभी रोग का प्रारम्भ अति उग्र होता है, जिससे रोगी पूर्व का इतिहास बतलाने में असमर्थ होता है।

चिह्न (Sing)—१. रोगी बीमार प्रतीत होता है।

२. नाड़ी ट्रेकीकार्डिया प्रदर्शित करती है।

३. तापक्रम बढ़ा हुआ होता है।

४. श्वसन-क्रिया बढ़ी हुई मिलती है।

५. श्यावता (Cyanosis) उपस्थित मिलती है।

६. रोगी प्रभावित दिशा में लेटता है।

वक्ष के चिह्न (Chest signs)—१. वक्ष भरा हुआ प्रतीत होता है।

२. प्रभावित दिशा (Affected side) के वक्ष में हरकत नहीं होती है।

स्पर्श-परीक्षा (Palpitation)—१. वोकल फ्रेमिटस प्रभावित भाग के निचले हिस्से पर गायब रहता है तथा ऊपरी भाग पर बढ़ा हुआ मिलता है।

२. ट्रेक्रिया तथा एपेक्स बीट विरुद्ध दिशा में स्थित होती है।

अभिताड़न परीक्षा (Percussion)—१. स्टोनी-डलनैस इफ्यूजन के ऊपर मिलती है।

२. ऊपरी भाग पर कभी-कभी 'हाइपर रिसोनेण्ट' मिलती है।

परिश्रवण-परीक्षा (Auscultation)—१. श्वसन ध्वनि अनुपस्थित मिलती है अथवा अस्पष्ट प्रतीत होती है।

२. एडवेण्टीशियल (Adventitial) ध्वनि नहीं मिलती है।

३. वोकल रिसोनेन्स बढ़ी हुई अथवा घटी हुई मिलती है।

विशेष अन्वेषण (Special investigation)—१. ई० एस० आर० (E. S. R.) बढ़ा हुआ मिलता है। जब कि रोग का कारण टी० बी० तथा मेलिग्नेन्सी होता है।

२. प्लूरा के द्रव (Pleural fluid) को निकाल कर देखने से इसमें निर्यासित द्रव के सभी गुण मिलते हैं। इसका रंग पीला होता है तथा यह शीघ्र जम जाता है। इसके सेल्स लिम्फोसाइट्स जैसे होते हैं।

३. ए० एफ० बी० की उपस्थिति मिल सकती है।

छाती का एक्स-रे—१. डेन्स होमोजीनस ओपेसिटी निचले भाग पर (P. A. View) दिखलाई देती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. ट्रेकिया तथा हृदय विरुद्ध दिशा में दीखता है।

प्लूरल बायोप्सी—यदि सही कारण ज्ञात न हो सके तब 'प्लूरल बायोप्सी' करनी चाहिए।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—इसका निम्न रोगों से विभेद करना चाहिए—१. प्लूरा का मोटा होना (Thickened pleura), २. लोबर कन्सोलीडेशन, ३. एम्पाइमा, ४. मेलिग्नेण्ट तथा ५. नियोप्लाज्म।

चिकित्सा (Treatment)—१. शय्या पर पूर्ण विश्राम।

२. प्रमुख रोग की चिकित्सा करें।

३. पीड़ा कम करने का प्रयत्न करें। इसके लिए सैलीसिलेट तथा एस्प्रिन दें।

नोट—दर्द को दूर करने के लिए 'प्लूरिसी' में कथित उपचार करना चाहिए।

४. चुने हुए रोगियों में द्वि-मार्गीय केनुला द्वारा प्लूरा के द्रव को निकालना।

५. 'एण्टी ट्युबरकुलस केमोथेरापी' १ वर्ष अथवा इससे अधिक समय तक जारी रखना।

६. मेलिग्नेण्ट इफ्यूजन में सिस्टोटॉक्सिक एजेण्ट प्लूरा के अन्तर्गत देना।

℞ इञ्जे० मस्टीन हाइड्रोक्लोराइड २० मि० ग्रा०

अथवा—इञ्जे० थियोटेपा (लीडर्ले) १ मि० ग्रा०/किलो

साथ ही—प्लूरल केविटी में।

आवश्यक निर्देश—१. जब तक द्रव शोषित न हो जाय, तब तक रोगी को विश्राम दें।

२. नर्सिंग डाइट—पौष्टिक आहार तथा विटामिन्स का प्रयोग करायें। ⊡

श्वसन-संस्थान के रोग **2/19**

फुप्फुसी धनास्र-अन्तःशल्यता
(Pulmonary Thrombo-embolism)

परिचय—It is a condition of obstruction of the main pulmonary artery or any of its branches by a blood clot originating from the systemic veins or from the right side of the heart leading to cardiac and circulatory disturbances.

○ यह एक ऐसी अवस्था है जिसमें प्रमुख फुप्फुसी धमनी अथवा उसकी अन्य शाखाओं में रक्त के थक्के के रुक जाने से उत्पन्न होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण (Etiology)—१. पैर की गहरी शिराओं में थ्रोम्बोसिस होने के कारण ७५% रोगी इस रोग से प्रभावित होते हैं, जो इसका प्रमुख कारण है।

२. जब रोगी गर्भावस्था, पेल्विक ऑपरेशन, गर्भनिरोध गोलियों के मुख-मार्ग से सेवन करने के पश्चात् अथवा बहुत लम्बे समय तक आर्थोपेडिक (हड्डी सम्बन्धी) तथा शल्य-चिकित्सा में शय्या पर पड़ा विश्राम करता रहता है, इस रोग से प्रभावित हो जाता है।

३. मध्य आयु के रोगी इससे प्रभावित होते हैं।

लक्षण (Symptoms)—१. आक्रमण अकस्मात् होता है।

२. इस रोग में मूर्च्छा (Syncope), प्रासंगिक मूर्च्छा (Faintness), व्याकुलता (Restlessness) आदि उपस्थित रहते हैं।

३. गम्भीर स्वरूप का सब-स्टर्नम पेन।

४. ब्रीदलेसनेस तथा रोगी में रुका हुआ दस्त आता है।

५. शॉक तथा कोलैप्स के लक्षण उपस्थित मिलते हैं।

६. रोगी की अकस्मात् मृत्यु हो जाती है अथवा वह रोग-मुक्त भी हो जाता है।

७. इस प्रकार के आक्रमण के समय (क्रमांक ३ और ५) रोगी का रक्तचाप तेजी से गिर जाता है। नाड़ी का आयतन (Volume) कम हो जाता है तथा उसकी गति बढ़ जाती है।

छोटे प्रकार के पल्मोनरी इम्बोलिज्म में—

१. लक्षण बढ़ कर बिल्कुल घट जाते हैं। अथवा कोई लक्षण ही नहीं मिलता।

२. पल्मोनरी इन्फ्राक्शन प्रमुख रूप से मिलता है।

३. छाती में हल्की-सी पीड़ा होती है।

४. खाँसी, हीमोटाइसिस (३५%), ट्रेकीकार्डिया, सिनकोप तथा इम्बोलिज्म के १२-३६ घण्टे पश्चात् बुखार (जो घटता-बढ़ता) रहता है।

५. सर्जिकल ऑपरेशन अथवा बच्चा पैदा होने के १० दिन पश्चात् अथवा जब रोगिणी काफी दिन आराम करने के पश्चात् चारपाई से उठती है, तब इम्बोलिज्म मुख्य रूप से विकसित होता है।

६. छाती कुछ नम ध्वनि तथा प्लूरल फ्रिक्शन प्रदर्शित करती है।

७. बार-बार उत्पन्न होने वाला छोटा पल्मोनरी इम्बोलिज्म पल्मोनरी हाइपरटेन्शन तथा क्रमशः राइट वेण्ट्रीकल फेल्योर के लक्षण पैदा करता है।

निदान—ⓞ रोगी में थ्रोम्बोफ्लेबाइटिस का इतिहास प्रमुख रूप से मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभेदक निदान—इसका निम्न रोगों से भेद करना चाहिए—

१. एक्यूट ड्राई प्लूरिसी।

२. लोबर न्यूमोनिया।

३. स्पॉण्टेनियस न्यूमोथोरेक्स, एक्यूट ड्राई पेरीकार्डाइटिस, मायो कार्डियल इन्फार्क्शन तथा हीमोटाइसिस के सम्पूर्ण कारणों से इसका भेद करना चाहिए।

चिकित्सा (Treatment)—१. ऑक्सीजन (१००%) सुँघायें।

२. हेपेरिन (Heparin) १०,००० यूनिट्स I/V तत्काल दें। तत्पश्चात् ५,००० यूनिट्स I/V प्रति ४-६ घण्टे पर ७-१० दिन तक।

३. **द्वितीयक संक्रमण की स्थिति में**—एण्टीबायोटिक का प्रयोग करें।

४. **शॉक को कण्ट्रोल में करने के लिए**—५% डेक्स्ट्रोज नार्मल सैलाइन में नॉर एड्रीनलीन ४ मि० ग्रा०। प्रति लीटर I/V ड्रिप द्वारा दें।

५. **श्वासकष्ट तथा हार्ट-फेल्योर को कण्ट्रोल में करने के लिए**—एमीनोफाइलीन एवं डिजीटेलिस का प्रयोग।

६. **मैसिव इम्बोलिज्म के केस में**—'पल्मोनरी इम्बोलेक्टोमी' 'हार्ट बाइपास सर्जरी' से की जाती है। □

श्वसन-संस्थान के रोग 2/20

श्वसनिका कार्सिनोमा
(Bronchiolar Carcinoma)

पर्याय—एल्वियोलर सेल कार्सिनोमा, पल्मोनरी एडीनोमेटोसिस।

परिचय—यह बहुत ही कम (३ से ५%) रोगियों में होता है। इस प्रकार का कैंसर बहुत धीरे-धीरे बढ़ता है। यह एल्वियोलर तथा ब्रॉन्कियोलर लाइनिंग सेल से उत्पन्न होता है।

उम्र (Age)—५०–६० वर्ष।

लिंग (Sex)—यह स्त्री-पुरुष दोनों में समान रूप से होता है।

लक्षण (Symptoms)—१. पार्श्वशूल (Chest pain)।

२. खाँसी (Cough) जलीय अथवा गाढ़ा (पीला) बलगम के साथ आती है। कभी-कभी इसमें रक्त के छींटे भी मिलते हैं।

३. बुखार, भार में कमी, श्वास फूलना आदि लक्षणों की उपस्थिति।

४. अँगुलियों के सिरे मोटे हो जाते हैं।

५. श्यावता (Cyanosis) होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निदान (Diagnosis)—अभिताड़न परीक्षा में मन्दता (Dullness) मिलती है।

अन्वेषण—बलगम-परीक्षा (Sputum test)—इसकी परीक्षा करने पर 'ट्यूमर सेल्स' मिलते हैं।

एक्स-रे परीक्षा—एक्स-रे में बाइलेटरल मल्टीपुल नोडचुलर छाये हुए दिखलाई देते हैं, अथवा कन्सोलीडेशन के मल्टीसेण्ट्रिक भाग दिखलाई पड़ते हैं। किन्तु २५% रोगियों में एकल पर्विकर (Solitary nodule) की उपस्थिति मिलती है।

○ नोडचुल्स में कैल्सीफिकेशन देखा जा सकता है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—अच्छा नहीं होता।

चिकित्सा (Treatment)—१. इसकी शल्य-चिकित्सा ही सम्भव है।

२. कोशिका विषी (Cytotoxic) औषधियाँ अल्प मात्रा में दें। साथ ही रेडियोथेरापी (Rediotherapy) करें।

सावधानियाँ—४० वर्ष से अधिक आयु के व्यक्तियों में जो धूम्रपान के अभ्यस्त हैं, उन्हें वर्ष में कम से कम एक बार छाती का एक्स-रे अवश्य करवा लेना चाहिए। □

श्वसन-संस्थान के रोग 2/21

श्वसनीजन्य कार्सिनोमा

(Bronchogenic Carcinoma)

फेफड़े का कैंसर

(Lung's Cancer)

पर्याय—फुप्फुस कैंसर, फुप्फुस त्रियोदोषार्बुद, ब्रान्कियल कार्सिनोमा प्राइमरी कार्सिनोमा ऑफ द लंग।

परिचय—यह कैंसर एक व्यावसायिक रोग है। यह पश्चिमी देशों में सर्वाधिक रूप में होता है। इस प्रकार का कैंसर ६०% दाहिने फेफड़े में होता है। इस कैंसर से ब्रॉन्कस (श्वसनी) में व्रण की उत्पत्ति हो जाती है, जिसके परिणामस्वरूप फेफड़े के अधिकांश भाग में व्रण (Ulcer) उत्पन्न हो जाता है। ज़ैसे-जैसे कल-कारखाने बढ़ते जा रहे हैं, यह रोग भी बढ़ता जा रहा है।

रोग के कारण—१. फेफड़े का कैंसर पश्चिमी देशों में अधिक होता है। यह धूम्रपान करने वाले व्यक्तियों में अन्य लोगों की अपेक्षा अधिक होता है। जो व्यक्ति दिन भर में १५-२० सिगरेट से अधिक पीते हैं उनमें इस कैंसर की अधिक सम्भावना रहती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ जो व्यक्ति पाइप, हुक्का तथा सिगार आदि का अधिक सेवन करते हैं, उनमें सिगरेट पीने वालों की अपेक्षा फेफड़े का कैंसर कम होता है।

○ आजकल भारत में और अन्यत्र तम्बाकू का प्रचलन अधिक बढ़ गया है। बीड़ी, सिगरेट, सिगार, हुक्का, चिलम, सुर्ती तथा पान आदि के रूप में यह खाया-पीया जाता है। इनका मल फेफड़े के अंदर एकत्रित होता रहता है। इसमें विक्षोभक पदार्थ (Irritant substances) भी होते हैं, जिसके कारण यह व्याधि पहले की अपेक्षा आज अधिक होने लगी है। ४० वर्ष की आयु के बाद अधिक सिगरेट पीने से इसकी अधिक सम्भावना रहती है।

○ फेफड़े में एस्बेस्टस पदार्थ या सिलिका पदार्थ के एकत्रित हो जाने से भी फेफड़े का कैंसर हो जाता है।

२. बड़े-बड़े शहरों में जहाँ गाड़ियाँ, डीजल आयल एवं कारखानों आदि का धुआँ अधिक होता है, फेफड़े के कैंसर के रोगी अधिक देखने को मिलते हैं।

○ यह दूषित वातावरण तथा फैक्टरी आदि की परिधि में रहने वालों में अधिक पाया जाता है। रेडियो-एक्टिव ओरेस (Radio active ores) जैसे—निकिल, कोबाल्ट, आर्सेनिक, यूरेनियम आदि से; एस्बेस्टस इण्डस्ट्री, क्रोमेट इण्डस्ट्री, कोल डिस्टीलेशन गैस इण्डस्ट्री आदि में काम करने वाले श्रमिकों में यह कैंसर अधिक होता है। मस्टर्ड गैस भी इस कैंसर को उत्पन्न करने में प्रमुख भूमिका निभाती है।

○ इन धुओं में कोई कैंसर जनक 'हाइड्रोकार्बन' इस रोग का कारण प्रतीत होता है।

३. **सहायक कारण**—क्रॉनिक ब्रॉन्काइटिस, ब्रॉन्किएक्टेसिस, इन्फ्लूएञ्जा, सिस्टिक डिजीज ऑफ लंग्स आदि उपसर्ग इसके सहायक कारण हैं।

४. रेडिएशन (Radiation)।

५. यह रोग शहर में रहने वाले लोगों में अधिक देखा गया है।

६. यह रोग स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों को १ : ३ के अनुपात में होता है।

अन्य विचार—खान में काम करने वाले श्रमिकों (Workers) में भी यह रोग देखने को मिलता है, क्योंकि इन व्यक्तियों को धातु-मिश्रित धूल के कणों में श्वास लेनी पड़ती है। इस कारण उनके फेफड़ों में कैंसर पैदा होने की आशंका रहती है।

नोट—किस कारण से यह रोग होता है, इसके बारे में लोगों के भिन्न-भिन्न विचार हैं। इस रोग के निदान में भी भिन्न-भिन्न मान्यताएँ मिलती हैं। अतः किसी पर पूर्णतया विश्वास नहीं किया जा सकता।

प्रकार (Types)—१. स्क्वैमस सैल कार्सीनोमा (Squamous cell carcinoma)–५६%।

२. एडीनोकार्सीनोमा (Adenocarcinoma)–४%।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. अनडिफरेंशिएटिड कार्सीनोमा (Undifferentiated carcinoma) –४०%।

○ सामान्यरूप से फेफड़ों में कैंसर दो प्रकार का हो सकता है—एक प्राथमिक (Primary) और दूसरा उत्तरजात (Secondary)।

○ प्राथमिक कैंसर शरीर के किसी अन्य स्थान पर होता है और उसकी शाखाएँ या कोश फेफड़े में आ जाते हैं, परिणामस्वरूप ये फेफड़े के कई भागों को नष्ट कर देती हैं।

○ प्राथमिक कैंसर पहले फेफड़ों के एक ही स्थान को नष्ट करता है, परन्तु जब इसकी अन्य शाखाएँ भी निकलने लगती हैं, तो उत्तरजात की भाँति फेफड़े के कई स्थानों को पूर्णतया नष्ट कर देती हैं।

लक्षण (Symptoms)—

१. खाँसी (Cough)—○ खाँसी इस रोग का प्रथम लक्षण है। यह सूखी अथवा बलगम के साथ भी हो सकती है। इसकी कोई निर्धारित अवधि नहीं है कि खाँसी कब तक बनी रहेगी। सम्भव है यह दिन में अधिक न आये और सोते में अचानक बढ़ जाये। यह लक्षण लगभग सभी रोगियों में देखा गया है।

○ रोग के प्रकार के अनुपात में बलगम बढ़ता है। बलगम में कभी-कभी रक्त भी मिला होता है।

नोट—यदि किसी रोगी को ४५ वर्ष की अवस्था के बाद स्थायी रूप से खाँसी आती रहे और वह चिकित्सा से भी ठीक न हो तो इस प्रकार के कैंसर का संदेह करना चाहिए।

○ श्वासनली में उत्पन्न ट्यूमर में विक्षोभ होने से सर्वप्रथम खाँसी का लक्षण होता है जो पहले खुश्क होती है। रोगी यह समझता है कि उसे खाँसी सिगरेट के कारण है। किन्तु बाद में इसके श्वासमार्ग में कुछ दूर फैल जाने से कफ का स्राव होने लगता है।

२. वेदना (Chest pain)—○ सीने में दर्द होना इसका दूसरा लक्षण है। यह दर्द या तो जिस ओर रोग हुआ है उधर होता है अथवा पूरे सीने में बना रहता है।

○ कभी-कभी विकृत पार्श्व की ओर रोगी सीटी जैसी आवाज (Wheezing) का अनुभव करता है।

○ विकृत पार्श्व में रोगी को वेदना तथा भारीपन अनुभव होने लगता है। वेदना कन्स्ट्रिक्टिव प्रकार की होती है। यह तब प्रकट होती है जब ब्रॉन्कस पूर्ण रूप से अवरुद्ध हो जाती है। साथ ही फेफड़े का कुछ भाग 'एटीलेक्टेसिस' की स्थिति में पहुँच जाता है। यह कैंसरजन्य वेदना प्रायः ४०–४५ वर्ष की अवस्था के बाद होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—राजयक्ष्मा (T. B.) में पार्श्ववेदना ४० वर्ष से कम आयु की अवस्था में होती है।

३. कुछ सप्ताह के बाद के लक्षण—रोगी को कुछ सप्ताह अथवा माह के पश्चात् हलका ज्वर तथा अवरोधक फुप्फुसशोथ (ऑब्स्ट्रक्टिव न्यूमोनिया) के दौरे पड़ने लगते हैं।

४. श्वासकष्ट (Dyspnoea)—श्वसनी (Broncus) के अवरुद्ध होने पर रोगी में श्वासकष्ट के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

५. ज्वर (Fever)—जब रोगी अत्यधिक दुर्बल तथा सदैव रुग्ण रहता है, उस समय उपसर्ग के आक्रमण से ज्वर की उत्पत्ति हो जाती है।

६. बलगम सह ज्वर—इस अवस्था में रोगी को ज्वर के साथ-साथ बदबूदार एवं पूय-मिश्रित बलगम आने लगता है, जो निरन्तर स्रवित होता रहता है।

नोट—इस अवस्था में लोग फुप्फुस-विद्रधि (Lung abscess) समझ कर उसकी चिकित्सा नहीं करते हैं अथवा एण्टीबायोटिक औषधि देकर उसे दबा देते हैं।

७. शरीर-भार में कमी—यह फुप्फुसगत कैंसर का एक प्रमुख लक्षण है।

८. हीमोटाइसिस—रोगी को निरन्तर बलगम और खाँसी के साथ रक्त के कुछ छींटे दिखलाई देते हैं। इस प्रकार के कैंसरजनित बलगम में रक्त का आना प्रायः ४० वर्ष की अवस्था के बाद होता है।

नोट—राजयक्ष्मा के बलगम में रक्त प्रायः ४० वर्ष से पूर्व की अवस्था में आता है।

रोग की भयंकरता के अनुसार निम्न लक्षण देखने को मिल सकते हैं—

१. श्वास फूलना।
२. रक्त-मिश्रित बलगम का निकलना।
३. बलगम निगलने में तकलीफ होना।
४. आवाज में भारीपन होना।

उपद्रव (Complications)—फेफड़े के कैंसर में निम्न उपद्रव हो जाते हैं—

१. रक्तवाहिनीगत विकार (Vascular disorders)।
२. रक्त-सम्बन्धी विकार।
३. अस्थिगत विकार।
४. मेटाबोलिक विकार।
५. तन्त्रिका-मांसपेशीगत विकार।

अन्तिम अवस्था में—

१. अत्यधिक कष्टदायक खाँसी का उपद्रव।
२. हीमोटाइसिस।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. श्वासकष्ट ।

४. अत्यधिक वेदना ।

५. शरीर-भार में कमी होना ।

६. अत्यधिक बलगम का निरन्तर स्रवित्र होना ।

७. हृदय एवं फुप्फुस के अन्य विकार आदि घातक लक्षण ।

निदानात्मक परीक्षण (Diagnostic examination)—रोग के लक्षण घटते-बढ़ते रहते हैं और ट्यूमर के आकार पर सदैव निर्भर करते हैं ।

छाती के चिह्न (Chest findings)—

१. प्रारम्भिक अवस्था में कोई चिह्न नहीं मिलते ।

२. जब ट्यूमर (Tumour) ब्रॉन्कियल ल्यूमिन को अवरुद्ध कर देता है, तब दीर्घ श्वास तथा ह्वीजिंग रॉन्काई (Wheezing rhonchi) उपस्थित मिलते हैं ।

३. जब ट्यूमर ब्रॉन्कियल लूमिन को पूर्णरूप से अवरुद्ध कर लेता है, तब एटीलेक्टेसिस (Atelectasis) के चिह्न मिलते हैं । तत्पश्चात्—

○ न्यूमोनाइटिस, ब्रॉन्किएक्टेसिस एवं फुप्फुस-विद्रधि के चिह्न क्रमशः सम्मिलित होते हैं ।

४. जब ट्यूमर प्लूरा को इन्वाल्व कर लेता है तब प्लूरिसी, प्लूरल इफ्यूजन, हाइड्रोन्यूमोथोरेक्स अथवा केवल एम्पाइमा विकसित कर जाता है ।

५. जब ट्यूमर पसलियों को इन्वाल्व कर लेता है, तब स्थानीय कोमल स्पॉट अथवा नोडचुल की उत्पत्ति देखी जा सकती है ।

विशेष अन्वेषण (Special investigation)—**१. चेस्ट एक्स-रे**—कई प्लेटों का तुलनात्मक अध्ययन करने से रोग का निदान हो जाता है ।

○ प्रारम्भिक अवस्था में स्थानीय एम्फीसीमा के चिह्न दीखते हैं ।

○ सेग्मेण्ट, खण्ड (Lobes) अथवा सम्पूर्ण फेफड़े का एटीलेक्टेसिस ।

○ एक्स-रे प्लेट में गहरी अनियमित हिलार धुन्ध (Dense irregular hilar opacity) दीखती है ।

अन्य चिह्न—मेडीएस्टिनम का विस्तृत होना, प्लूरल इफ्यूजन, रिब्ज का डिस्ट्रक्शन, हेमीडायाफ्राम का पैरालाइज्ड होना आदि लक्षण मिलते हैं ।

२. ब्रॉन्कोस्कोपी—यह ४० से ६०% केसिस में धनात्मक (पॉजीटिव) मिलती है । वोकल कार्ड की गति तथा मुख्य केरिना (Carina) की आकृति नोट की जा सकती है ।

३. बलगम परीक्षा—(Sputum test)—८५% केसिस में बलगम में मेलिग्नेण्ट सेल्स की उपस्थिति मिलती है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

४. बायोप्सी—यह परीक्षा निदान में विशेष सहायक होती है ।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. **प्लूरल एस्पिरेशन एवं बायोप्सी**—इससे निदान में ६०% सहायता मिलती है।

६. **मेडीएस्टिनोस्कोपी**—इसकी आवश्यकता तब पड़ती है, जब बलगम परीक्षा तथा ब्रॉन्कोस्कोपी नार्मल रहते हैं।

७ **निदानात्मक थोरेकोटोमी**—इसकी आवश्यकता तब पड़ती है, जब ब्रॉन्कोस्कोपी, बलगम तथा लिम्फ नोड्स बायोप्सी निगेटिव होती है।

नोट—१. एक्स-रे के द्वारा फुप्फुसमूल (हाइलम) से सम्बन्धित—

(i) यदि कोई स्पष्ट किनारों वाली छाया मिले;

(ii) ऊपर की तीन पसलियों में क्षत पहुँचने के चिह्न हों;

(iii) फुप्फुसों में कोई संकोच या निश्चेष्टता (एम्फीसीमा या एटीलेक्टेसिस) का चिह्न मिले तो—इन सभी अवस्थाओं में फेफड़े के कैंसर का सन्देह करना चाहिए।

२. सरवाइकल (Cervicle) के ऊपर के फैट के ढेर की वायोप्सी करने से वहाँ के लिम्फ ग्लैण्ड्स में कैंसर के सैल मिलते हैं।

इसके अतिरिक्त फुप्फुसगत कैंसर के निदान में निम्न लक्षण विशेष सहायक होते हैं—

१. रोगी की अवस्था।

२. रोग का काल।

३. स्थायी रूप से खाँसी के साथ भूख की कमी, शरीर-भार में निरन्तर कमी, ४० वर्ष के पश्चात् रक्तष्ठीवन (Haemoptysis), ४० वर्ष की अवस्था के बाद पार्श्व वेदना, वृद्ध व्यक्ति में अत्यन्त रक्तष्ठीवन आदि फुप्फुसगत कैंसर का द्योतक होता है।

रोग का सन्देह निम्न अवस्थाओं में करना चाहिए—

१. यदि बड़ी आयु के प्रारम्भिक भाग में खाँसी और साँस के लक्षण होने लगें और हृदय रोग तथा वृक्क रोग आदि न हों तो फेफड़ों में कैंसर का सन्देह करना चाहिए।

२. यदि मध्य आयु के व्यक्ति में प्लूरिसी हो तो इस रोग का सन्देह करना चाहिए।

३. खाँसी, रक्त-मिश्रित बलगम, भार में कमी, अँगुलियों के अग्र भाग का मोटा होना तथा अन्त में अरुचि को देखकर इस रोग का सन्देह करना चाहिए।

४. हँसली की हड्डी (क्लेविकल) के ऊपर तथा यकृत् में ग्रन्थियाँ (Nodes) बन जाती हैं। इनसे भी इस रोग का सन्देह हो जाता है।

५. यदि ४५ वर्ष से ऊपर के व्यक्ति को निरन्तर ३-४ सप्ताह तक खाँसी रहे और ऐसा व्यक्ति यदि लगभग २० वर्षों से दिन भर में १५-२० सिगरेट

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीता रहा हो, और उसे दिन भर शुष्क खाँसी रहा करती हो तो भी इस रोग का सन्देह करना चाहिए।

६. यह रोग एक बार होकर बढ़ता ही जाता है तथा लक्षणों के प्रकट होने के १–१½ वर्ष के अन्दर-अन्दर घातक हो जाता है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—○ यह एक असाध्य रोग है। क्योंकि रोगी चिकित्सक के पास चिकित्सा के लिए ऐसी अवस्था में आता है, जब रोग काफी बढ़ा हुआ होता है।

○ दाहिने फेफड़े की अपेक्षा बायें फेफड़े का कैंसर अधिक साध्य होता है, क्योंकि बायें फेफड़े में विक्षेप (मेटास्टेसिस) बहुत कम होते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—फुप्फुस कैंसर की चिकित्सा निम्न क्रम में की जाती है—

१. शल्य-चिकित्सा (Surgical treatment)।

२. रसायन-चिकित्सा (Chemo therapy)।

३. विकिरण-चिकित्सा (Radio therapy)।

(१) शल्य-चिकित्सा (Surgical treatment)—

○ यदि कैंसर बहुत ही छोटा है तो गाँठ को ऑपरेशन द्वारा पूर्ण रूप से निकाल देना चाहिए। इसके निकाल देने के पश्चात् भी यदि सर्जन को यह आशंका रह जाती है कि इसमें अभी कुछ कैंसर-कोष रह गये हैं तो उसे तुरन्त ही विकिरण चिकित्सा हेतु भेज देना चाहिए।

○ फुप्फुस कैंसर के ⅓ रोगियों की चिकित्सा शल्य-चिकित्सा द्वारा ही की जाती है। इस चिकित्सा में तभी सफलता मिलती है, जब रोगी चिकित्सा के लिए रोग की प्रारम्भिक अवस्था में आता है। इस चिकित्सा में ५ से २०% रोगियों की मृत्यु हो जाती है।

१. शल्य-चिकित्सा के अन्तर्गत वक्ष का छेदन (Thoracotomy) आवश्यक है। इस चिकित्सा से एक-तिहाई रोगी ५ वर्ष तक जीवित रहते हैं।

२. एक अन्य शल्य-चिकित्सा के अन्तर्गत खण्डोच्छेदन (लोबेक्टोमी) करने के पश्चात् विकिरण चिकित्सा की जाती है। इससे अधिक सफलता की की आशा की जाती है।

३. अब तो शल्य-चिकित्सा के अन्तर्गत फुप्फुस का छेदन (Pneumonectomy) भी सम्भव हो गया है, जिसमें कुछ अधिक सफलता मिलती है; किन्तु यह अत्यन्त निपुण तथा स्पेशलिस्ट सर्जन द्वारा ही सम्भव है।

(२) रसायन-चिकित्सा (Chemo therapy)—

१. इस चिकित्सा का उपयोग उपर्युक्त शल्य-चिकित्सा की सह चिकित्सा के रूप में किया जाता है। इस चिकित्सा के अन्तर्गत 'नाइट्रोजन मस्टर्ड' का एल्कीलेटिंग तत्त्व (Alkylating agent) के रूप में उपयोग होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा साइक्लो-फॉस्फेमाइड (Cyclo-phosphamide) का उपयोग किया जाता है।

२. फुप्फुस कैंसर के कारण सुपीरियर वेना केवा (Superior vena cava) के अवरोध की अवस्था में नाइट्रोजन मस्टर्ड का इण्ट्रावीनस प्रयोग किया जाता है।

३. फुप्फुस कैंसर के कारण उत्पन्न फुप्फुसावरण स्राव (Pleural iffusion) में प्लूरल केविटी में नाइट्रोजन मस्टर्ड का सूचीवेध अधिक आसान तथा लाभकारी माना गया है।

नोट—चूंकि नाइट्रोजन मस्टर्ड का प्रभाव धीरे-धीरे होता है, अतः इसके साथ विकिरण-चिकित्सा भी की जाती है, जो विशेष लाभदायक है।

रसायन-चिकित्सा तभी सम्भव होती है, जब कि—

१. ऑपरेशन सफल न हुआ हो।

२. विकिरण-चिकित्सा सफल न हुई हो।

३. रोगी ऑपरेशन तथा विकिरण-चिकित्सा दोनों के योग्य न हो।

४. रोगी का रोग पर्याप्त आगे बढ़ चुका हो।

(३) विकिरण-चिकित्सा (Radio therapy)—

१. इस चिकित्सा में रोगी की खाँसी तथा पार्श्वशूल (Chest pain) में कमी आती है। साथ ही उसके सामान्य स्वास्थ्य में परिवर्तन हो जाता है।

२. इसके अन्तर्गत २५० किलोवाट की मात्रा में किरणन (Irradiation) से उत्तम लाभ मिलता है।

○ इस चिकित्सा से रोगी दीर्घकाल तक जीवित रहता है।

३. आजकल विकिरण-चिकित्सा के अन्तर्गत अधिक वोल्टेज के एक्स-रेज़ (X-rays) तथा टेली कोबाल्ट के प्रयोग से इस प्रकार के कैंसर में स्पष्ट रूप से प्रभाव पड़ता है।

नोट—इसका उपयोग उसी अवस्था में किया जाता है, जहाँ शल्य-चिकित्सा सम्भव नहीं होती है।

आवश्यक निर्देश—

○ जब फेफड़े का कैंसर काफी बढ़ी हुई अवस्था में होता है, तब रोगी को 'विकिरण-चिकित्सा' की पूर्ण मात्रा देना सम्भव नहीं होता है। ऐसी अवस्था में 'सुपर वोल्टेज' एक्स-रे तथा कोबाल्ट–६० का प्रयोग किया जाता है। इस चिकित्सा-क्रम में २५००–३००० रेड्स (Rads) की मात्रा १०–१५ दिनों में दी जाती है।

○ जब रोगी कुछ स्वस्थ रहता है तब ५०००–६००० रेड्स की मात्रा ४ से ६ सप्ताह की अवधि में दी जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ रक्तष्ठीवन (Haemoptysis), खाँसी तथा वेदना की अवस्था में रोगी की तत्काल विकिरण-चिकित्सा करनी चाहिए।

फुप्फुस कैंसर में प्रयुक्त अन्य चिकित्सा-प्रणाली—

○ कुछ वैज्ञानिक आजकल बेटट्रान चिकित्सा (Betetron therapy) को विशेष महत्त्व प्रदान कर रहे हैं।

सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. ट्रैंक्वीलाइजर (Tranquillisers)।

२. प्रशामक (Sadatives)।

३. एनाल्जेसिक (Analgesics)।

४. पोली-विटामिन्स (Poly-vitamins)।

५. पौष्टिक आहार (Nourishing food) आदि की व्यवस्था।

सावधानी तथा बचने के उपाय—

१. जिन कारणों से फेफड़े का कैंसर होता है, उनमे बचना चाहिए।

२. दूषित वातावरण में निवास नहीं करना चाहिए।

३. फैक्टरी आदि जगहों में मुँह पर कपड़ा अथवा मास्क बाँध कर कार्य करना चाहिए।

४. सिगरेट, बीड़ी, हुक्का आदि तम्बाकू से बने पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए।

५. खाँसी तथा ज्वर के आते ही उसकी तत्काल चिकित्सा करनी चाहिए। यदि १५ दिन से अधिक हो जाने पर भी चिकित्सा से लाभ न हो तो सीने का एक्स-रे अवश्य करा लेना चाहिए और उसी के आधार पर आगे की जाँच तथा परीक्षण कराना चाहिए।

६. बलगम की जाँच तपेदिक के जीवाणु तथा कैंसर-कोश की जानकारी के लिए करा लेना चाहिए। □

श्वसन-संस्थान के रोग

2/22

वक्ष का दर्द

(Thoraxic Pain)

परिचय—इस रोग में वक्ष के अन्दर दर्द होता है। कभी-कभी यह दर्द बहुत तेज हो जाता है। इसमें कमजोरी और श्वासकष्ट हो जाते हैं।

कारण (Causes)—१. फेफड़ों में कफ के जम कर सूख जाने से।

२. दोनों हाथ से कठोर मेहनत करने से।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. स्त्री के स्तनों में दूध जम कर छाती के शिरा-धमनियों एवं स्नायुओं में अधिक तनाव पैदा होने से।

चिकित्सा (Treatment)—

१. ℞ टेबलेट एनाल्जिन ५०० मि० ग्रा०	१ गोली
पैरासिटामोल २५० मि० ग्रा०	½ गोली
विटामिन-सी (सिलीन) ५०० मि० ग्रा०	½ गोली
ग्लाइकोडीन टर्प वसाका	१० मिली०
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा प्रति ४-६ घण्टे पर दें।

नोट—इससे सूखा कफ घुलकर निकल जाता है और दर्द में लाभ मिलता है।

२. ℞ टेबलेट कोडीन कम्पाउण्ड

व्या० नाम—कोडोपाइरिन (ग्लैक्सो) २ गोली

मात्रा—दिन में २ या ३ बार दें।

अथवा—कोडोपाइरिन (Codopyrin) (ग्लैक्सो)	१ गोली
नोवाल्जिन (Novalgin) (हैक्स्ट)	१ गोली

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार अथवा दर्द के समय दें। १ मात्रा।

साथ ही—छाती पर लिनिमेण्ट टरपेण्टाइन की मालिश करें

श्वसन-संस्थान के रोग 2/23

वायुविवरशोथ
(Sinusitis)

परिचय—इसे नासागुहा शोथ भी कहते हैं। इसमें नाक की भीतरी झिल्ली में अत्यधिक शोथ उत्पन्न हो जाता है तथा नाक से श्लेष्मा तथा कफ का स्राव होता है।

कारण—इन्फेक्शन इसका प्रमुख कारण है।

प्रकार—१. एक्यूट सायनूसायटिस (Acute sinusitis)।

२. क्रॉनिक सायनूसायटिस (Chronic sinusitis)।

(१) एक्यूट सायनूसायटिस—

१. ○ इसके लक्षण एक्यूट राइनाइटिस से मिलते-जुलते हैं, किन्तु यह उससे अधिक गम्भीर है।

2. Headache & facial pain.

3. Tenderness & swelling with nasal obstruction.

4. Sometimes causing sore throat & cough.

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

5. The headache typically is worse during the day & subsides in the evening.

6. Acute maxillary sinusitis may cause pain in the teeth & a feeling of 'long teeth.'

7. Acute ethmoiditis causes headache between & behind the eye and eye motion increases the pain.

(२) क्रॉनिक सायनूसायटिस (Chronic sinusitis)—

○ रोग पुराना होने पर एक ही नासा कोटर से श्लेष्मा आता है। श्लेष्मा प्रायः पूययुक्त एवं दुर्गन्धित रहता है।

○ Chronic sinus infection produce no symptoms or only a mild postnasal discharge and a musty odour or non-productive cough.

○ Nasal obstruction & profuse purulent nasal and post nasal discharge may occur.

चिकित्सा—१. शय्या पर विश्राम।

२. सेडेटिव, एनाल्जेसिक, हलका भोजन तथा तरल की उचित व्यवस्था।

३. ℞ सुडाफेड सीरप (Sudafed syrup) (बी० डब्लू०)

मात्रा—वयस्क तथा ६ वर्ष से ऊपर के बच्चों को—१० मिली० दिन में ३-४ बार।

४ मास से ६ वर्ष तक के बच्चों कों—५ मिली० दिन में ३-४ बार।

४ मास तक के शिशुओं को—२.५ मिली० दिन में ३-४ बार।

नोट—इसकी गोली भी आती है—

मात्रा—वयस्कों तथा ६ वर्ष से ऊपर के बच्चों को १ गोली दिन में ३-४ बार दें।

अथवा—ट्रिओमिनिक सीरप (Triominic syrup) (वाण्डर)

मात्रा—५-१० मिली० प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—चाइमोरल (Chymoral) (वाल्टर वुशनेल)

मात्रा—२ गोली प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—टुक्सीन (Tuxyne) (ग्रिफ़ान लेबोरेटरी)

मात्रा—१ गोली प्रति ४-६ घण्टे पर।

नोट—इससे नासाकोटर का शोथ दूर हो जाता है।

अथवा—एक्टिफेड (Actifed) (बी० डब्लू०)

मात्रा—१ गोली दिन में २-३ बार।

स्थानीय चिकित्सा—

℞ प्रिवीन सोल्यूशन (Privine) (सीबा गायगी)

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस सोल्युशन को ड्रापर से नाक में टपकायें।

अथवा—℞ बेटनीसोल-एन नेजल ड्राप्स (ग्लैक्सो)

मात्रा—वयस्क २-३ बूंद, बालकों को १-२ बूंद प्रत्येक नाक के छिद्र में दिन में २-३ बार टपकायें।

अथवा—फेनॉक्स नेजल ड्राप्स (बूट्स)

मात्रा—४-५ बूंद प्रत्येक नाक के छिद्र में प्रति ४ घण्टे पर टपकायें।

अथवा—एफकार्लिन नेजल ड्राप्स (एलन बरीज)

मात्रा—२-३ बूंद दिन में २-३ बार प्रत्येक नाक के छेद में डालें।

इन्फेक्शन की चिकित्सा हेतु—

℞ एम्पीसिलीन (Ampicillin) ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कै० दिन में ३ बार ७-१० दिन तक।

अथवा—एरीथ्रोमाइसिन (Erythromycin) ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कै० दिन में २ बार १० दिन तक।

नोट—कल्चर तथा सेन्सिटिविटी टेस्ट के पश्चात् अन्य उपयुक्त एण्टी-बायोटिक का व्यवहार किया जा सकता है।

मिश्रित चिकित्सा (Combined therapy)—

१. ℞ सायनामॉक्स (साराभाई) २५० मि० ग्रा० का	१ कै०
सीलिन (ग्लैक्सो) ५०० मि० ग्रा० की	½ गोली
सेप्ट्रान (बी० ड़ब्लू०)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा प्रति ८ घण्टे पर दें।	१ मात्रा।
अथवा— ℞ टेट्रासाइक्लीन हाइड्रोक्लोराइड	२५० मि० ग्रा०
एस्कार्बिक (Ascarbic acid) पाउडर	२५० मि० ग्रा०
प्रेडनीसोलोन पाउडर	२५० मि० ग्रा०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रति ४ से ६ घण्टे पर मधु के साथ दें। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तृतीय खण्ड

*

हृद्वाहिका-संस्थान के रोग

(Diseases of Cardio-vascular System)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोर पल्मोनेल
(Cor Pulmonale)

पर्याय—पल्मोनरी हार्ट डिजीज, एम्फीसीमा हार्ट डिजीज, फुप्फुसरोग जनित हृदय-नैर्बल्य ।

परिभाषा—Cor pulmonale refers to the right ventricular hypertrophy and eventual failure resulting from pulmonary parenchymal or vascular disease.

○ यह दक्षिण हृदयरोग की एक अवस्था है, जो हाइपरट्रॉफी अथवा फेल्योर के परिणामस्वरूप पल्मोनरी पैरेन्काइमा अथवा वेस्कुलर डिजीज के द्वारा होती है ।

कारण (Etiology)—१. क्रॉनिक ब्रॉन्काइटिस तथा एम्फीसीमा—यह इस रोग का प्रमुख कारण है ।

२. चिरकारी दमा रोग (Chronic asthma) ।

३. विभिन्न कारणों से टाँगों का फाइब्रोसिस जैसे—टी० बी०, ब्रॉन्किएक्टेसिस आदि ।

४. फुप्फुस के सिस्टिक रोग ।

प्रकार (Types)—

१. एक्यूट कोर पल्मोनेल (Acute cor pulmonale) ।

२. क्रॉनिक कोर पल्मोनेल (Chronic cor pulmonale) ।

क्रॉनिक कोर पल्मोनेल
(Chronic Cor Pulmonale)

○ इसे जीर्ण फुप्फुसरोग जनित हृदय-नैर्बल्य (Chronic pulmonary heart disease) अथवा एम्फीसीमा हार्ट डिजीज नाम से भी जाना जाता है ।

१. पल्मोनरी एम्फीसीमा के एक-तिहाई से अधिक रोगियों में दक्षिण हृदय-नैर्बल्य का उपद्रव हो जाता है ।

२. जीर्ण कास (Chronic bronchitis) अथवा श्वासनली-शैथिल्य (Bronchiectasis) में भी यह उपद्रवस्वरूप होता है ।

३. जीर्ण श्वासरोग में भी उपद्रवस्वरूप इसकी उत्पत्ति होती है ।

४. फाइब्रायड लंग का रोग होने पर भी यह उपद्रवस्वरूप हो जाता है ।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ Chronic cor pulmonale is most commonly caused by chronic obstructive emphysema.

लक्षण (Symptoms)—१. **खाँसी एवं बलगम**—पहले संक्रमणजनित फुप्फुस रोग के कारण शीतकाल में ही ज्वर के साथ खाँसी का कष्ट रहता है, फिर वर्ष भर खाँसी तथा बलगम गिरने के लक्षण रहते हैं।

२. **श्यावता (Cyanosis)**—रक्त में ऑक्सीजन की मात्रा कम तथा कार्बन-डाइ-ऑक्साइड की मात्रा बढ़ने से दक्षिण हृदय निर्बल हो जाता है, जिससे श्रम करने अथवा थोड़ी भी थकावट आने पर मुख पर श्यावता के लक्षण मिलने लगते हैं। अर्थात् शरीर के अवयवों को कम रक्त मिलने से थोड़े से श्रम से ही थकावट और अशक्ति अनुभव होने लगती है।

३. **शोथ**—वृक्कों को रक्त कम मिलने से शोथ का लक्षण पैदा हो जाता है।

४. **मस्तिष्क सम्बन्धी विकार**—सिर की शिराओं में रक्त रुकने से सिर-दर्द, मस्तिष्क की विचारशक्ति, नींद आने की शक्ति आदि में कमी हो जाती है। जिससे रोगी में बेचैनी, अनिद्रा तथा मस्तिष्क सम्बन्धी दुर्बलता आ जाती है।

५. **श्वासकृच्छ्रता**—फेफड़े की शिराओं में रक्त रुकने से खाँसी तथा श्वास-कृच्छ्रता उत्पन्न हो जाती है।

६. **पाचन सम्बन्धी विकार**—यकृत् तथा कोष्ठ की शिराओं में रक्त रुकने से भूख की कमी, अरुचि, भोजन के बाद पेट में भारीपन आदि लक्षण हो जाते हैं।

७. **रेस्पिरेटरी एसिडोसिस**—रक्त में कार्बन-डाइ-ऑक्साइड की वृद्धि से तन्द्रालुता और कुछ-कुछ मूर्च्छा के उपद्रव हो जाते हैं।

८. **अन्य लक्षण**—खाँसी, बलग़म, अनिद्रा, साँस लेने में ह्वीजिंग (सीटी) की आवाज, ओलीगूरिया, निचली टाँगों में शोथ, इन्सोम्निया आदि लक्षण मिलते हैं।

निदानात्मक परीक्षा (Diagnostic test)—१. परीक्षा करने पर 'जुगलर वेन' में धमन, यकृद्-वृद्धि तथा उस पर स्पर्शाक्षमता, पैरों पर शोथ, हृदय एवं नाड़ी में निर्बलता तथा नाड़ी में तीव्रता मिलती है।

२. ग्रीवा की शिराएँ भरी हुई दीखती हैं।

३. आमाशय-प्रदेश पर हृदय का धमन स्पष्ट दीखता है।

४. हृदय आकार में बड़ा होने से नाड़ी भरी हुई प्रतीत होती है। हृदय दक्षिण की ओर बढ़ा हुआ होता है।

श्रवण-परीक्षा—श्रवण-यन्त्र से परीक्षा करने पर फुप्फुस पर सुनने से श्वास-प्रश्वास के साथ सीटियों की आवाज सुनाई देती है।

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

℞ हृदय का शब्द पल्मोनरी क्षेत्र पर ऊँचा सुनाई देता है।

○ लीवर सामान्य बढ़ा हुआ, मुलायम एवं लचीला मिलता है।

एक्स-रे परीक्षा—एक्स-रे द्वारा छाती की परीक्षा करने पर एम्फीसीमा के सभी चिह्न मिलते हैं। ○ बढ़ा हुआ हृदय बढ़ी हुई पल्मोनरी धमनी के साथ दीखता है। ई० सी० जी० (E. C. G.) लम्बा दीखता है।

○ सम्पूर्ण लेबोरेटरी परीक्षा एम्फीसीमा जैसी मिलती है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. इस रोग में स्वल्प श्रम से जैसे-जैसे श्वास चढ़ने लगता है, वैसे-वैसे यह रोग भयंकर होता जाता है।

२. जब शिराओं में रक्त-संचय की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है, तब शोथ के लक्षण हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में रोगी १–२ वर्ष तक ही जीवित रहता है।

Essentials of diagnosis—1. Symptoms and signs of chronic bronchitis and pulmonary emphysema.

2. No significant murmures or hypertension.

3. Electrocardiography, tall, peacked 'P' wayes; right asix deviation and right ventricular hypertrophy.

4. Chest x-ray : enlarged right ventricle and pulmonary arteries.

चिकित्सा (Treatment)—

(१) **सामान्य चिकित्सा**—१. रोगी को शय्या पर पूर्ण विश्राम दें। रोगी को स्टूपिंग फारवर्ड पोजीशन में रखना चाहिए।

२. भोजन में नकम बिलकुल न दें।

३. रोगी को ऑक्सीजन स्वल्प मात्रा में (१५-२० मिनट तक) देने से लाभ मिलता है।

४. रोगी को निद्रा लाने वाली औषधियाँ न दें।

(२) **औषधि चिकित्सा**—

१. संक्रमण को रोकने के लिए—

℞ इञ्जे० पेनिसिलीन (Inj. Penicillin or Tetracycline)

मात्रा—५-१० लाख यूनिट I/M नित्य निरन्तर कुछ काल तक।

अथवा—टेट्रासाइक्लीन (Tetracycline) २५०–५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कै० दिन में ४ बार निरन्तर कुछ काल तक।

नोट— ○ इसका सूचीवेध भी रोग की तीव्रता के अनुसार दिया जा सकता है।

○ यह औषधियाँ एम्फीसीमा में बतलाई गई औषधियों के साथ-साथ दी जाती हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही—℞ नियो-इपीनीन (Neo-epinine) ५-१० मि० ग्रा०
मात्रा—१ मात्रा दिन में ३ बार जीभ के नीचे।

२. इफेड्रीन ३० मि० ग्रा० अकेले अथवा फीनोबार्बिटोन १४ मि० ग्रा० के साथ दिन में दो बार दें।

३. हृदय की निर्बलता एवं श्वासनलिकाओं के संकोच को दूर करने के लिए—

℞ एमीनोफाइलिन (Aminophyllin)
मात्रा—१००–५०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।
अथवा—कोलीन थियोफाइलिनेट (कोलीडिल Choledyle)
मात्रा—२०० मि० ग्रा० दिन में ३-४ बार पर्याप्त समय तक।
अथवा—थियोफाइलिन मांसपेशीगत अथवा एमीनोफाइलीन (०.२४ ग्रा०) I/V प्रति ८ घण्टे पर।

४. श्वासनलिकाओं के शोथ में—

℞ प्रेडनीसोलोन ०·५ मि० ग्रा० दिन में ३-४ बार १५ दिन तक।
तत्पश्चात् मात्रा को क्रमशः धीरे-धीरे घटाते जायें।

५. शोथ के लिए—℞ लासिक्स (Lasix) २५-५० मि० ग्रा०।

६. यदि सेडेटिव की आवश्यकता पड़े तो—पैराल्डिहाइड ६-८ मिली० I/M अथवा डायजीपाम (Diazepam) ५-१० मि० ग्रा० दें।

७. रेस्पिरेटरी स्टीम्युलेण्ट के लिए—कोनासिन (निकेथामाइड) अथवा माइकोरेन (Micoren) (इथिल बूटामाइड) २ मिली० I/V प्रति ४ घण्टे पर अथवा डायजीपाम १५-३० मि० ग्रा० I/V २-३ घण्टे पर।

नोट—'रेस्पिरेटरी स्टीम्युलेण्ट' का प्रयोग 'एक्यूट रेस्पिरेटरी फेल्योर' की सम्भावना में किया जाता है।

चेतावनी—○ हार्ट-फेल्योर की सम्भावना में 'डायोरेटिक्स' (लासिक्स) तथा डिजीटेलिस का तत्काल प्रयोग करें।

○ ऑक्सीजन का उपयोग वी० एल० वी० मास्क द्वारा कदापि न करें। इसके लिए केथेटर मेथड उपयुक्त रहता है।

निर्देश—लम्बे समय से चले आ रहे रोगी में उसके श्वसन मार्ग में अत्यधिक स्राव की मात्रा उपस्थित रहती है। अतः इसमें ट्रेकिओस्टोमी (Tracheostomy) तथा कृत्रिम रेस्पिरेटरी की आवश्यकता पड़ती है। ⊡

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हृदय की धड़कन
(Palpitation)

पर्याय—दिल का धड़कना, धड़कन या हृत्कम्प, कलेजे का धड़कना।

परिचय—इसमें रोगी का दिल स्वाभाविक से अत्यधिक धड़कने लगता है। रोगी को जब अपने हृत्-स्पन्द (Heart beat) का स्वयं अनुभव होने लगता है, तब उसको पल्पिटेशन कहते हैं।

○ हृदय हर समय धड़कता रहता है, परन्तु रोगी को इसका ज्ञान तक नहीं होता है। जब रोगी को इसका ज्ञान होने लगे तभी इसको पल्पिटेशन कहते हैं।

○ इन रोगियों का वातनाड़ी-संस्थान (Nervous system) अत्यन्त सूक्ष्मवेदी होता है, हृत्स्पन्द की शक्ति या गति बढ़ जाती है अथवा अनियमित हो जाती है।

कारण (Etiology)—दिल धड़कने की शिकायत लेकर चिकित्सक के पास बहुत से रोगी आते हैं। इस लक्षण के यद्यपि बहुत से कारण हो सकते हैं, पर जनरल प्रेक्टिस में निम्न कारणों को प्रधानता देनी चाहिए—

१. अरक्तता या खून की कमी (Anaemia)।
२. अजीर्ण (Indigestion)।
३. चिन्ता विक्षिप्ति (Anxiety neurosis)।
४. चाय-कॉफी, शराब, सिगरेट आदि का अधिक मात्रा में सेवन।
५. अति रक्तदाब (High blood pressure)।
६. हृदय का फेल जाना (Hypertrophy of the heart)।
७. स्नायविक दुर्बलता (Nervous weakness), मानसिक अस्थिरता।
८. बहुत अधिक मानसिक चिन्ता।
९. अत्यधिक शारीरिक परिश्रम या अधिक व्यायाम।
१०. ○ पेट में गैस का बनना।
११. भय, शोक एवं सदमा।
१२. स्त्रियों में मासिकधर्म की गड़बड़ी।
१३. ○ अत्यधिक स्त्री-प्रसंग।
१४. तेज अम्ल रोग।
१५. टी० बी० की प्रारम्भिक अवस्था।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१६. अत्यधिक धूम्रपान एवं उत्तेजना।

नोट—जनरल प्रैक्टिस में ये कारण रोग के निराकरण में विशेष महत्त्व रखते हैं।

अन्य कारण—

(१) **कार्डियक डिजीज** (Cardiac disease)—१. एक्ट्रा सिस्टोल्स, २. पेरॉक्सीस्मल टेकीकार्डिया (Paroxysmal tachycardia), ३. एट्रियल फिब्रीलेशन, ४. हार्ट-ब्लॉक (Heart block), ५. हाइपरटेंशन (Hypertension), ६. एऑर्टिक रेगर्जीटेशन (Aortic regurgitation)।

(२) **नॉन-कार्डियक डिजीज** (Non-cardiac disease)—१. एफर्ट सिण्ड्रोम (Effort syndrome), २. अफारा (Flatulence), ३. अजीर्ण (Indigestion), ४. अनीमिया (Anaemia), ५. पल्मोनरी ट्युबरकुलोसिस, ६. थायरोटॉक्सीकोसिस, ७. प्लूरल इफ्यूजन, ८. न्यूमोथोरेक्स, ९. टिम्पेनाइटिस, १०. जलोदर (Ascites), ११. गर्भावस्था (Pregnancy)।

(३) **नॉन-आर्गेनिक डिजीज** (Non-organic disease)—

१. अत्यधिक चाय, कॉफी, तम्बाकू (Smoking) तथा मद्य का सेवन।

२. न्यूरोसिस (Neurosis), क्रियात्मक हृद् अतालता (Functional cardiac arrhythmias), अत्यधिक दुर्बल करने वाले रोग (Debiliatating disease) आदि।

३. यह रोग अधिकतर मृदु प्रकृति के मनुष्यों में और विशेषकर स्त्रियों में होता है, जिन्हें हिस्टीरिया, रजोविकार अथवा श्वेतप्रदर आदि रोग होते हैं।

४. लड़ाई-दंगे में या किसी को अपने सामने दुर्घटना में ग्रस्त या मरता देख कर अथवा अपने प्राणों के भय से भी धड़कन का रोग हो जाता है जो चिरकाल तक बना रहता है।

○ हृदय-धड़कन हृदय की रचनात्मक (Organic) विकृति में उतनी स्वाभाविक नहीं होती है, जितनी कि 'थायराइड ग्रन्थि' के स्राव के बढ़ जाने (Hyperthyroidism) या चिन्ता में होती है।

लक्षण (Symptoms)—१. इसमें रोगी का दिल सामान्य से अधिक धड़कता है।

२. हृदय के कार्य के व्यतिक्रम से होने वाली धड़कन पुरुषों को अधिक होकर धीरे-धीरे प्रकट होती है, साथ ही हमेशा बनी रहती है, किन्तु कभी-कभी अधिक भी हो जाती है।

३. धड़कन के साथ बायें कन्धे में दर्द होता है।

४. होष्ठ और कनपटियाँ कुछ-कुछ नीली पड़ जाती हैं।

५. हृदय के शब्द में कुछ अन्तर मिलता है ओर परिश्रम करने तथा चलने-फिरने से भी हृदय-स्पन्दन (धड़कन) बढ़ जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. हृदय धड़कने से रोगी को कष्ट होता है।

७. जिन्हें यह रोग एक बार हो जाता है, उन्हें बार-बार होने का भय रहता है।

८. जब धड़कन अधिक होती है, तब हृदय-प्रदेश में कुछ-कुछ पीड़ा, शिरो भ्रम, कर्णनाद तथा अतिस्वेद होता है।

९. रोगी की नाक लाल हो जाती है और हृदय में बेचैनी प्रतीत होती है।

१०. रोगी हृदय की धड़कन को साफ-साफ सुन सकता है।

११. यह रोग कुछ सेकेण्डों से लेकर २-३ घण्टों तक रह सकता है।

○ स्वस्थ अवस्था में हृदय शान्त और नियमित रूप से धड़कता है और मनुष्य को उसकी धड़कन सुनाई नहीं देती है। परन्तु इस रोग में हृदय की गति इतनी अधिक और तेज हो जाती है कि रोगी को अपने हृदय की धड़कन (आवाज) अनुभव होती है।

○ वास्तव में इस रोग का हृदय की खराबी से कोई सम्बन्ध नहीं है।

○ ऐसे रोगी के थोड़ी दूर चलने, सीढ़ियों पर चढ़ने, थोड़ा भी परिश्रम करने से हृदय अधिक धड़कने लगता है। इसकी गति १२० बार प्रति मिनट तक हो सकती है।

निदान (Diagnosis)—○ उपरोक्त लक्षणों के आधार पर निदान में कोई कठिनाई नहीं होती है।

○ हृदय का जोर-जोर से और जल्दी-जल्दी धड़कना ही इस रोग की प्रमुख पहचान है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—जिन्हें यह रोग होता है, उन्हें इसके होने की बार-बार सम्भावना बनी रहती है। साथ ही यह विकृति जीवन भर बनी रहती है।

उपद्रव (Complications)—१. हृदय-स्थान पर कुछ पीड़ा।

२. सिर चकराना।

३. कान में शब्द होना।

४. अधिक पसीना आना।

५. हृदय में बेचैनी।

चिकित्सा (Treatment)—**सामान्य चिकित्सा एवं निर्देश**—

१. इसकी वास्तविक चिकित्सा कारण को दूर करना ही है।

२. खान-पान, रहन-सहन आदि परिमित एवं नियमित होना चाहिए।

३. मनस्ताप को दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए।

४. वात-संस्थान (Nervous system) को शक्तिशाली बनाने के लिए 'नरव्राइन टॉनिक' औषधियाँ देनी चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. यदि धड़कन किसी हृदय रोग के कारण है तो उसकी समुचित चिकित्सा करनी चाहिए।

६. चाय, काफी, मद्यपान आदि के अधिक सेवन से भी दिल की धड़कन बढ़ना सम्भव है। यदि रोगी में इनके अत्यधिक सेवन का इतिहास मिलता है तो उसे इनका सामान्य मात्रा में सेवन कराने का परामर्श देना चाहिए।

७. रोगी को हृद्य औषधियाँ (Cardiac tonics) देनी चाहिए।

८. पेट में गैस न बनने दें।

९. कोष्ठबद्धता की ओर विशेष ध्यान रखें। इसकी सम्भावना देखते ही समय-समय पर मृदु विरेचन देते रहें।

१०. इस रोग में दीपक, पाचक, रोचक, मृदु विरेचक, अफारा नाशक तथा हृदय को शक्ति देने वाली औषधियाँ देनी चाहिए।

औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—चिकित्सा कारणों के अनुरूप की जाती है।

(१) ○ हमारे देश में अनीमिया के रोगी अधिक मिलते हैं, विशेषकर स्त्रियाँ लौह-अल्पताजन्य अनीमिया से अधिक पीड़ित होती हैं। नैदानिक परीक्षणों के आधार पर यदि अरक्तता (Anaemia) मिलती है तो उसको दूर करने के लिए—लौह, विटामिन्स, विटामिन बी$_{१२}$ तथा फोलिक एसिड का सेवन कराना चाहिए। अरक्तता दूर होते ही दिल की धड़कन बन्द हो जाती है। इसके लिए—

℞ सीरप डैक्सॉरेञ्ज (Syrup Dexorange)

मात्रा—वयस्कों में—१-२ बड़ा चम्मच दिन में २ बार भोजनोपरान्त।

२-५ वर्ष के बालक—१ चाय चम्मच दिन में २ बार भोजनोपरान्त।

५-१२ वर्ष की आयु—२ चाय चम्मच दिन में २ बार भोजनोपरान्त।

अथवा—कैपसूल फैरो-रैडोक्सोन (Cap. Ferro-redoxon)

मात्रा—१ कै० नित्य भोजन के बाद।

अथवा—एलिक्जिर रुब्राटोन (Elixir Rubratone)

मात्रा—२ चम्मच दिन में २ या ३ बार।

अथवा—इञ्जे० इम्फेरोन (Inj. Imferon)

मात्रा—आयु के अनुसार १-२ मिली० I/M कूल्हे की अधिक गहराई में।

अथवा—कॉम्प्लेक्स-बी फोर्ट (Complex-B forte)

मात्रा—१-२ गोली दिन में २-३ बार।

टेबलेट-कैल्सीब्रोनेट (Tab. Calcibronate)

मात्रा—१-१ गोली दिन में २-३ बार जल में डालकर।

अथवा—इञ्जे० विटामिन बी$_{१}$ १०० मि० ग्रा० I/M नित्य।

नोट—यह पुराने रोग में लाभकारी है।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) ○ दिल धड़कने का दूसरा कारण अजीर्ण (Indigestion) है। जिसके परिणामस्वरूप उदर में इतनी अधिक वायु बनती है कि वह डायाफ्राम को ऊपर की ओर धकेलती है, जिससे हृदय को कार्य करने का स्थान कम रह जाता है। फलस्वरूप परिसंचरण तंत्र में रक्त की आवश्यक मात्रा को पहुँचाने के लिए उसकी गति तीव्र हो जाती है और रोगी को दिल का धड़कना प्रतीत होने लगता है।

○ यदि दिल धड़कने का कारण अजीर्ण हो तो उसे दूर करने वाली औषधियाँ देनी चाहिए। विशेषकर ऐसी औषधियाँ अधिक प्रयोग में लायी जायें जो उदर में वायु के निर्माण को कम करती हों। इसके लिए—

℞ टेबलेट लोसोडिन (Tab. Losodin) (ब्रॉउन एण्ड वर्क)
मात्रा—१-२ गोली भोजन के बीच और रात में सोते समय।
अथवा—आवश्यकतानुसार। २४ घण्टे में २० गोली से अधिक न दें।
○ नोट—यह एक नवीनतम आविष्कृत औषधि है।
अथवा—टेबलेट बिलामाइड (Tab. Bilamide) (इथिनोर)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार भोजनोपरान्त।
अथवा—इनजार (Enzar) (वाल्टर बुशनैल)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार भोजन के मध्य में या भोजनोपरान्त।
अथवा—टेबलेट लूपीजाइम (Tab. Lupizyme) (लूपिन)
मात्रा—२ गोली दिन में २ बार भोजन के बाद।
अथवा—पेप्सीनोजाइम (Pepsinozyme) (स्टेडमेड)
मात्रा—१-२ गोली दिन में २ बार भोजन के मध्य या भोजन के बाद।
बालक—आयु के अनुसार।
अथवा—डॉप्सिड सस्पेन्शन (Dopcid susp.)
मात्रा—१५ मिली० दिन में ३ बार भोजन के बाद।

नोट—अन्य औषधियों के लिए इसी पुस्तक में 'पाचन-संस्थान के रोग' के अन्तर्गत 'फ्लेट्युलेन्स' (Flatulence) में देखें।

(३) ○ दिल धड़कने का तीसरा विशेष कारण चिन्ता तथा मानसिक तनाव समझा जाता है। रोगी के इतिवृत्त से यदि इस कारण की सम्भावना प्रतीत हो तो शामक औषधियों का प्रयोग करना चाहिए। इसके लिए—

℞ टेबलेट डायजीपाम (Tab. Daizipam)
अथवा—टे० फीनोबार्बीटोन (Phenobarbitone)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।
अथवा—फीनोबार्बीटोन ३० मि० ग्रा० टेबलेट
मात्रा—१ गोली दिन में २ या ३ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—℞ लिब्रियम (रोशे) १० मि० ग्रा० १ गोली
विनर्वा ५० मि० ग्रा० १ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार जल से दें। १ मात्रा।

अथवा—प्रोपेनोकोल (Propanolol) २० मि० ग्रा०
व्या० नाम—इण्डेराल (Inderal) (आई० सी० आई० कं०)
मात्रा—½ गोली दिल धड़कने के समय दें।
नोट—इस औषधि से दिल की धड़कन में अच्छे परिणाम देखने में आते हैं।
निर्देश—रोगी को आश्वासन देना तथा उसकी चिन्ता का मूलभूत कारण दूर करना भी आवश्यक है।

(४) प्रमुख कारणों में दिल धड़कने का एक अन्य कारण अति रक्तदाब (Hypertension) भी है। यदि रोगी का रक्तदाब बढ़ा हुआ हो तो निम्न चिकित्सा करनी चाहिए। रक्तदाब सामान्य होने पर दिल धड़कने की शिकायत अपने आप दूर हो जाती है।

150/90 M. M. Hg से अधिक रक्तदाब निरन्तर मिलना अति रक्तदाब (हाइपरटेन्सन) कहलाता है। इसके लिए—

℞ टेबलेट एसीटेन (Tab. Aceten) २५० मि० ग्रा० (बोखार्ड)
मात्रा—१ गोली दिन में २-३ बार।
नोट—यह एक नवीनतम आविष्कृत औषधि है।
विशेष—यह सभी स्तर के उच्च रक्तदाब में लाभ पहुँचाती है।
अथवा—℞ टे० एञ्जियोप्रिल (Tab. Angiopril) २५ मिग्रा० (टोरेण्ट)
मात्रा—१२·५ से ५० मि० ग्रा० दिन में २-३ बार।
इनीसियल डोज—६.२५ मि० ग्रा०।

नोट—यह भी एक नवीनतम औषधि है। यह कार्डियक फेल्योर में भी लाभकारी है।
अथवा—एटेन टेबलेट (Aten tablet) (कोप्रान)
मात्रा—५०-१०० मि० ग्रा० नित्य १ मात्रा।
नोट—यह ५० और १०० मि० ग्रा० टेबलेट के रूप में आती है।
विशेष—यह एञ्जाइना पेक्टोरिस में भी लाभकारी है।
अथवा—टेबलेट बीटाकार्ड (Tab. Betacard) (टोरेण्ट)
मात्रा—५० मि० ग्रा० दिन में केवल एक बार।
अथवा—कैल्सीगार्ड (Calcigard) (टोरेण्ट)
मात्रा—१-२ कै० प्रति ६-८ घण्टे पर।
नोट—अधिक लाभ के लिए इसे जीभ के नीचे रखें। यह ५ और १० मि० ग्रा० के कैप्सूल में आती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेषता—यह सभी प्रकार के उच्च रक्तदाब, कंजेस्टिव कार्डियल फेल्योर तथा 'हाइपरटेन्सिव इमर्जेन्सी' में लाभकारी है।

लाक्षणिक चिकित्सा (Syptomatic treatment)—

(१) रोग के आक्रमण काल में—तत्काल 'कोरामीन ड्राप' १५-२० बूंद जल में मिलाकर दें। साथ ही—

℞ स्प्रिट अमोनिया एरोमेट १ ड्राम
जल-कुल ३० मिली० (१ औंस)

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार। १ मात्रा।

अथवा—कोरामीन इन्जे० (Coramine Inj.)

मात्रा—२ मिली० मांसपेशीगत नित्य दें।

अथवा—℞ लैनोक्सिन (Lanoxin) (वरोज वेल्कम)

मात्रा—२ मिली० को १० मिली० नार्मल सैलाइन में मिलाकर I/V धीरे-धीरे दें।

नोट—इसकी गोली भी आती है—

मात्रा—प्रारम्भ में ०·७५ मि० ग्रा०, बाद में ०·२५ मि० ग्रा० दें।

अथवा—डेक्स्ट्रोज (Dextrose) २५%

मात्रा—५० मिली० I/V धीरे-धीरे प्रति १२ घण्टे पर पूर्ण लाभ होने तक।

(२) हृदय की अधिक धड़कन में—

℞ डेरीफायलिन डिजॉक्सीन (Deriphyllin Digoxin) (जर्मन रेमेडीज)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार प्रथम दिन से ५वें दिन तक।

तत्पश्चात्—१ गोली दिन में २ बार।

अथवा—℞ बेलार्गल टेबलेट १ अथवा बेलार्गल रिटार्ड १ गोली दें।

साथ ही—कैल्शीब्रोनेट टेबलेट या सीरप जल के साथ दें।

(३) पेट में गैस बनने के कारण दिल की धड़कन में—

℞ स्प्रिट अमोनिया एरोमेट १५-२० बूंद जल में मिलाकर दें। आवश्यकता पड़ने पर दूसरी मात्रा भी दें।

साथ ही—मेप्रोबामेट १८० मि० ग्रा० + फीनोबार्बीटोन १५ मि० ग्रा०।

मात्रा—ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार दें।

अथवा—प्रिस्कोफेन (Priscophen) (सीबा गाइगी) की १ गोली दिन में ३-४ बार दें।

अथवा—कोई अन्य गैसनाशक औषधि। इसके लिए फ्लेटघुलेन्स (अफारा) में प्रयुक्त औषधियों का व्यवहार करें।

(४) यदि अधिक वीर्यनाश के कारण रोग हो तो—

℞ फेरीलेक्स २ चम्मच दिन में ३ बार दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि इससे लाभ न हो तो—

℞ स्पीमेन फोर्ट (Speman forte)	२ गोली
फ्लेजिल (Flagyl)	१ गोली
	१ मात्रा ।

ऐसी १ मात्रा खिलाकर ऊपर से 'विटाहैक्स्ट' १-२ चम्मच जल में मिलाकर दिन में २ बार भोजनोपरान्त दें ।

(५) नाड़ी-संस्थान तथा दिल की दुर्बलता के परिणामस्वरूप—

℞ बेलरगल (Bellergal) (सैण्डोज)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार ।

साथ ही—कोरामीन (Coramine) २ मिली० I/M or I/V नित्य दें ।

(६) दिल की धड़कन की प्रत्येक अवस्था में उपयोगी पेटेण्ट औषधि—

℞ (i) नैटकार्डिन (Netcardine) (ग्रीफोन) १०० मिग्रा० टे०

मात्रा—बालकों में—२५–१०० मि० ग्रा० नित्य

वयस्कों में—१००–३०० मि० ग्रा० नित्य

निषेध—हर्ट-ब्लॉक की अवस्था में इसका प्रयोग न करें ।

(ii) ℞ सीडो-कोरोडिल (Sedo-corodil) (वाण्डर)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार भोजन के बाद ।

नोट—यह मानसिक तनाव, चिन्ता (नर्वस पल्पिटेशन) में उपयोगी है ।

(iii) ℞ कार्डिऑक्सीन (Cardioxin) (सैण्डोज)

मात्रा—०·२५ से ० ७५ मि० ग्रा० प्रतिदिन ।

(iv) ℞ वेलीडोल (Validol) (जीमर)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार ।

(v) ℞ पर्सेण्टिन (Persantin) (जर्मन रेमेडीज)

मात्रा—२ गोली दिन में २ बार भोजन से पूर्व ।

(vi) ℞ कोरहारमोन (Corhormon) (सिपला)

मात्रा—१-२ मिली० मांसपेशीगत प्रतिदिन ।

नोट—इसके कुल १०-१२ इञ्जेक्शन पर्याप्त होते हैं ।

(vii) ℞ एनाकार्डोन (Anacardone) (एलेन बरीज)

मात्रा—२५% घोल का २० से ६० बूंद थोड़ी-थोड़ी देर बाद पिलायें ।

अन्य औषधियाँ—

टेबलेट (Tablet)—

१. बीटाब्लॉक फोर्ट (Betabloc forte) (USU & P)

२. कार्डेक्स कै० (Cardex capsule) (इथिको)

३. निफेडीन टे० (Nifedine tablet) (एस० जी० फार्मा)

४. निफेलाट कै० (Nifelat cap.) (सिपला)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. सीडो-कोरोडिल (Sedo-corodil) (वाण्डर)
६. टे० कोरवीटा-४० डी (Corbeta–40 D) (साराभाई)
७. टे० कोरवीटा–८० डी (Corbeta-80 D) (साराभाई)
८. डिजोक्सीन (गुर्को फार्मा)—१–१ गोली अवस्थानुसार।
९. सेडिलेनिड (Cedilanid) (सैण्डोज) १–१ गोली दिन में ३ बार।
१०. सेडोनाल (Sedonal) (ईस्ट इण्डिया)—१–२ गोली दिन में ३ बार।
११. प्रिस्कोफेन (Priscophen)—१–१ गोली दिन में ३–४ बार।

पेय (Liquid or Syrup)—१. कोरमिड (Cormid) (स्टैण्डर्ड) १०-१२ बूंद रोगानुसार।
२. कोरवासिम्टोन (Corvacymton) (क्रुक्स)—१०-१२ बूंद जल में डाल कर।
३. कोर्नीजेन (Cornigen) (हैक्स्ट)—५-१० बूंद जल में मिलाकर।
४. हर्जोलान (Herzolan) (सिपला)—१–२ चम्मच फलों के रस से।

इञ्जेक्शन (Injection)—१. कैल्सीब्रोनेट (Calcibronate) (सैण्डोज)—५ मिली० I/M अथवा १० मिली० I/V दें।
२. विटामिन बी$_1$ (AFDC.) पुराने रोग में १ मिली० (१०० मि० ग्रा०) I/M अथवा S/C अथवा I/V प्रतिदिन लगायें। ⊡

हृद्वाहिका-संस्थान के रोग 3/3

हृद्रोध
(Heart Block)

परिभाषा—यह एक ऐसी अवस्था है, जिसमें इम्पल्स के चालन (Conduction) में विलम्ब होता है। साथ ही हृदय के मध्य टिशू के भी संवहन में विलम्ब होता है।

कारण (Causes)—१. **जन्मजात हृदय रोग** (Congenital heart block)—
(i) पेटेण्ट वेण्ट्रीकुलर सेप्टम।
(ii) इण्टरुप्शन ऑफ बण्डल ऑफ हिस।
(iii) एओर्टो-पल्मोनरी पेटेन्सी के कारण (कभी-कभी)।

२. **एक्वायर्ड हर्ट ब्लॉक** (Acquired heart block)—
○ शोथयुक्त विक्षति (Inflammatory lesion) जैसे—

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(i) आमवात (Rheumatism)
(ii) डिफ्थीरिया ।
(iii) इन्फ्लूएञ्जा ।
(iv) न्यूमोनिया ।
(v) आन्त्रिक ज्वर ।
(vi) स्कार्लेट फीवर ।
(vii) **औषधि प्रयोग से**—जैसे–डिजीटेलिस, सीक्विल, क्विनिडीन आदि के अधिक मात्रा में सेवन से ।
(viii) **सहायक कारण**—१. सिफिलिस की गम्भीर अवस्था ।
२. टयूमर अथवा सिस्ट ।
३. फाइब्रोसिस अथवा एट्राफी के कुछ भाग ।

प्रकार (Types)—यह ४ प्रकार का होता है—
१. साइनो-एट्रीयल ब्लॉक ।
२. वेण्ट्रीकुलर ब्लॉक ।
३. बण्डल ब्राञ्च ब्लॉक ।
४. वक्षीय रोध (आर्बोरिजेशनल ब्लॉक) ।

(१) साइनो-एट्रीयल ब्लॉक—

लक्षण (Symptoms)—१. इसमें सम्पूर्ण हृदय का कोई एक स्पन्द छूट जाता है । साथ ही उससे अगला स्पन्द सामान्य रूप का होता है ।
२. जब हृदय-स्पन्द मन्द होता है, तब वेण्ट्रीकुलर स्केप की अवस्था उत्पन्न हो जाती है ।
३. नाड़ी की गति ३० बार प्रति मिनट हो जाती है ।
४. व्यायाम से नाड़ी की गति दो गुनी हो जाती है ।

चिकित्सा (Treatment)—
℞ एट्रोपीन सल्फेट (Atropine sulphate)
मात्रा—३ मि० ग्रा० ३० मिली० जल में मिलाकर दिन में ३ बार ।
इफेड्रीन सल्फेट (Ephedrine sulphate)
मात्रा—२५ मि० ग्रा० मुख द्वारा दिन में ४ बार ।

चिरकालीन अवस्था में (In chronic condition)—
℞ एट्रोपीन इञ्जेक्शन (Atropine Inj.)
मात्रा—०·५ मि० ग्रा० I/V दें ।
○ इसके अतिरिक्त कारण की चिकित्सा करें ।

(२) एट्रिओ-वेण्ट्रीकुलर ब्लॉक—

इसके अन्तर्गत अलिन्द (Atrium) से निलय (Ventricle) में संवेग (Impusle) के प्रभाव में विलम्ब हो जाता है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग के कारण—वाहक विकार जैसे—डिजीटेलिस के प्रयोग से कोरोनरी हार्ट डिजीज, शोथयुक्त हृत्पेशीशोथ, रियूमेटिक फीवर अथवा फाइब्रोसिस ।

○ इसमें अन्तिम कारण विशेष महत्त्व का होता है ।

लक्षण—१. प्रारम्भ में इसमें कोई स्पष्ट लक्षण प्रतीत नहीं होते हैं ।

२. रोग के बढ़ने पर रोगी में बेहोशी का लक्षण उत्पन्न हो जाता है ।

○ यह कष्टकारक आक्रमण एकाएक उत्पन्न होता है । साथ ही चेहरे तथा बाहु में आक्षेपक गति (Convulsive movement) भी होती है ।

३. रोगी की जीभ श्वेत हो जाती है तथा वह गिर पड़ता है ।

४. रोगी का शरीर नीला हो जाता है और उसकी श्वास उल्टी चलने लगती है ।

५. निलय में पुनः स्पन्दन प्रारम्भ होने से पूर्व ही रोगी मर जाता है ।

परीक्षा—श्रवण-परीक्षा—(i) हार्ट एपेक्स में स्पन्दन (Beat) अनुपस्थित मिलता है ।

(ii) निलय गति ४० बार प्रति मिनट से कम ही मिलती है ।

(iii) कभी-कभी गले की शिरा (Jugular vein) में स्पन्दन मिलता है ।

चिकित्सा—(Treatment)—१. यदि रोग औपसर्गिक रोग (Infectious disease) के कारण हो तो रोगी को शय्या पर पूर्ण विश्राम दें ।

२. सिफिलिस निरोधी औषधियों का एक पूरा कोर्स दें ।

३. बेहोशी की स्थिति में—०.५ मिली० 'एड्रीनलीन' १ : १००० शक्ति के घोल का S/C सूचीवेध देते हैं ।

साथ ही—इथेड्रीन सल्फेट ३० मि० ग्रा० मुख द्वारा दिन में ३ बार ।

अथवा—आइसोफ्रिनेलीन सल्फेट (नियो-इपीनीन Neo-epinine)

मात्रा—१० मि० ग्रा० की गोली जीभ के नीचे रखते हैं ।

अथवा—कोरट्राफिन जिंक का ४० आई० यू० I/M प्रतिदिन ।

जब हृदय का स्पन्दन बन्द हो जाता है तब—तत्काल हृदयपेशीगत ०.५ मिली० की मात्रा में एड्रीनलीन (१ : १०००) का सूचीवेध देते हैं ।

(३) **बण्डल ब्राञ्च ब्लॉक** (Bundle branch block)—

○ इसके अन्तर्गत बण्डल ऑफ हिस जो अलिन्द और निलय (Auricle and ventricle) की ओर जाता है, उसकी एक या दो शाखाओं में संवेग-संवहन में विलम्ब हो जाता है ।

लक्षण (Symptoms)—जब लेफ्ट बण्डल ब्राञ्च ब्लॉक होता है, तब प्रथम हृदय ध्वनि (First heart sound) विभक्त हो जाती है ।

○ राइट बण्डल ब्राञ्च ब्लॉक में—द्वितीय हृदय ध्वनि (Second heart sound) विभक्त हो जाती है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निदान (Diagnosis)—इसका वास्तविक निदान इलेक्ट्रिक कार्डियोग्राम (E. C. G.) के द्वारा ही सम्भव होता है।

नोट—यह गम्भीर अवस्थाएँ हैं और इनका पता लगने के ३ वर्ष के अन्दर ही रोगी की मृत्यु हो जाती है।

जीर्ण हृद्‌रोध की चिकित्सा (Treatment of chronic heart block)—

℞ इफेड्रीन (Ephedrine)

मात्रा—३०-६० मि० ग्रा० दिन में ३ बार मुख से प्रारम्भ में।

लाभ न मिलने पर—

℞ आइसोफ्रिनेलीन (Isophrenaline)

मात्रा—१०-२० मि० ग्रा० जीभ के नीचे रखें।

अथवा—सेवेण्ट्रीन (Saventrine)

मात्रा—६०-१२० मि० ग्रा० प्रति घण्टे के अन्तर से।

निर्देश—यह एक विषाक्त औषधि है। अतः इसके दुष्परिणामों से सचेष्ट रहना चाहिए।

आधुनिकतम चिकित्सा (Recent treatment)—

○ आजकल गतिचालक (Pace maker) के प्रयोग से उत्तम लाभ मिलते देखा गया है। इसके इलेक्ट-रोड का एपीकार्डियम में सीवन (Suture) कर दिया जाता है। अथवा शिरामार्ग (Intravenous route) से राइट वेण्ट्रीकल इण्डोकॉर्डियम में स्थिर कर दिया जाता है।

तीव्र हृदयरोध की चिकित्सा (Treatment of acute heart block)

१. ℞ आइसोप्रेनालीन (Isoprenaline)

मात्रा—२० मि० ग्रा० दिन में ३ बार मुख द्वारा।

हर्ट-अटैक की स्थिति में (In post infarction)—

२. ℞ प्रेडनीसोलोन (Prednisolone) ५ मि० ग्रा०

मात्रा—२ गोली नित्य १० दिन तक।

अथवा – हाइड्रोकार्टीसोन (Hydrocartisone)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० I/V अथवा I/M दिन में ३ बार।

नोट—चिकित्सा में हाइड्रोकार्टीसोन से विशेष लाभ मिलते देखा गया है।

३. ℞ डिमाण्ड पेस मेकर (Demand pace maker) से भी उत्तम लाभ मिलता है। यह तभी कार्य करता है अब हृदय की संवहनक्रियाशीलता (Conduction mechanism) निष्क्रिय हो जाती है।

४. ○ अधिकांश रोगियों में इन्फार्क्शन के दूर होते ही हृदय की संवहन क्रिया पुनः चालू हो जाती है। इसके २-३ सप्ताह पश्चात् 'गति-प्ररेक' के इलेक्ट-रोड को दूर कर दिया जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. ○ जब हृदय रोग स्थिर रहता है, तब दीर्घकालिक गति-प्रेरक (Long term pace maker) का उपयोग किया जाता है।

६. किसी-किसी रोगी में हथेली के किनारे से मुक्का मारने पर रोगी के हृदय की क्रियाशीलता पुनः स्थापित हो जाती है।

नोट—यदि उपरोक्त विधि से भी हृदय की क्रिया पुनः स्थापित न हो तो तत्काल हृदय की बाह्य मालिश (External cardiae massage) तथा अन्य उपक्रम करने चाहिए।

○ गति-प्रेरक के अभाव में निम्न चिकित्सा-क्रम अपनाया जाता है—

१. ℞ आइसोप्रोटेरेनाल हाइड्रोक्लोराइड (Isoproterenol Hcl.)

मात्रा—५-१५ मि० ग्रा० गोली के रूप में जीभ के नीचे दिन में ३-४ बार चूसने को दें।

अथवा—इञ्जे० आइसोप्रोटेरेनाल हाइड्रोक्लोराइड

मात्रा—२-१५ मि० ग्रा० ५०० मिली० डेक्स्ट्रोज में मिलाकर I/V ड्रिप रूप में देते हैं।

अथवा—इफेड्रीन सल्फेट (Ephedrine sulphate)

मात्रा—२०-३० मि० ग्रा० दिन में ४ बार मुख से।

आवश्यकता पड़ने पर—

सीकोबार्बीटोल सोडियम (Sicobarbitol sodium) ३० मि० ग्रा० + इफेड्रीन सल्फेट २०-३० मि० ग्रा० के साथ दिन में ४ बार देते हैं।

२. जब रोग का वेग बार-बार आता है और उपरोक्त चिकित्सा से रोग नियन्त्रण में नहीं आता है तब—

℞ इपिनेफ्रिन (Epinephrine)

मात्रा—०·५ मिली० (१ : १०००) प्रति ८ घण्टे पर।

अथवा—इपिनेफ्रिन इञ्जे० ०·२ मिली० प्रति २ घण्टे पर S/C दें।

३. जब हृदय पूर्णतया अवरुद्ध होने लगता है तब—

℞ इपिनेफ्रिन (Epinephrine)

मात्रा—०·५ मिली० (१ : १०००) का सूचीवेध S/C देते हैं।

४. रोग का संक्रमण तात्कालिक होने पर—

℞ कोर्टिकोस्टेराइड का इञ्जे० दिया जाता है।

वुल्फ-पार्किन्सन-श्वेत-संलक्षण
(Wolff-Parkinson White Syndrome)

○ पहले इस अवस्था का समावेश 'बण्डल ब्राञ्च ब्लॉक' के अन्तर्गत किया जाता था। परन्तु केण्ट नामक वैज्ञानिक के अनुसार अब इसका कारण

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'प्री-इक्साइटेशन' अथवा 'एसीलेरेटिड कंडक्शन' (त्वरित चालन) माना जाता है।

○ इसके अन्तर्गत अलिन्द से निलय में जाने वाला संवेग (Impulse) विलम्बित होने के स्थान पर त्वरित (Accelarated) हो जाता है।

निदान (Diagnosis)—इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम में निम्न विभिन्नताएँ पायी जाती हैं—

१. P. R. छोटा होता है।

२. Q. R. S. चौड़ा हो जाता है।

३. Q. R. S. Complex की दिशा में परिवर्तन हो जाता है।

४. S. T. Segment तथा तरंग में परिवर्तन दिखलाई देता है।

लक्षण (Symptoms)—१. यह रोग प्रायः ३० वर्ष से कम की अवस्था वाले रोगियों में विशेषकर पुरुषों में मिलता है।

२. ५०% रोगियों में व्यायाम के उपरान्त पैरॉक्सिस्मल टेकीकार्डिया होती है।

३. इस अवस्था में रोगी की तत्काल मृत्यु हो जाती है।

चिकित्सा—℞ क्विनिडीन (Quinidine)

मात्रा—३०० मि० ग्रा० मुख द्वारा। तत्पश्चात् १८० मि० ग्रा० की मात्रा में।

नोट—इस चिकित्सा से तत्काल लाभ मिलता है।

वक्षीय रोध
(Arborisation Block)

यह अत्यन्त गम्भीर स्थिति है। इसका निदान इलेक्ट्रो-कार्डियोग्राम के द्वारा होता है। □

हृद्वाहिका-संस्थान के रोग 3/4

मूर्च्छा
(Syncope)

परिचय—जब प्रमस्तिष्क परिसंचरण (Cerebral circulation) की कमी से रोगी मूर्च्छित होकर बेहोश हो जाता है, तब उसे मूर्च्छा (Syncope) कहते हैं। इस अवस्था को मूर्च्छाजन्य अतिक्रम (Syncope attack) भी कहते हैं।

कारण (Causes)—१. रक्ताल्पता (Anaemia)।

२. अल्प रक्तदाब (Low blood pressure)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. रोगी के स्थिति में परिवर्तन।
४. वेसो-वेगल अतिक्रमण (Vaso-vagal attack)।
५. कैरोटिड साइनस रीफ्लेक्स।
६. हर्ट-ब्लॉक (हृद्‌रोध)।
७. एट्रीयल फ्लूटर (Atrial flutter)।
८. पीड़ा (Pain)।
९. सिम्पैथेटिक ब्लॉकिंग ड्रग्स (Sympathetic blocking drugs)।
१०. हाई टेकीकॉर्डिया (High tachycardia)।
११. पैरॉक्सीस्मल एरीथीमिया।
१२. सायनोटिक कञ्जेनीटल हर्ट डिजीज।
१३. हाइपोग्लाइसीमिया (Hypoglycaemia)।

लक्षण (Symptoms)—१. रोग के प्रारम्भिक लक्षणों में कमजोरी, इपिगैस्ट्रिक ट्रबुल्स, पसीना आना, बेचैनी, चक्कर तथा श्वास में अनियमितता हो जाती है।

२. रोगी का चेहरा सफेद तथा हाथ-पैर शीतल हो जाते हैं।
३. रोगी को साफ दिखलाई नहीं देता है।
४. शीघ्र अचेतनता का आना।
५. रक्तचाप घट कर ७० मि० मी० तक पहुँच जाता है।
६. नाड़ी मुख्य रूप से हलकी अथवा तेज होती है।
७. इसका आक्रमण दुर्बलता के साथ शनैः शनैः होता है। कभी-कभी मितली भी आती है।
८. आक्रमण के पश्चात् सामान्य शारीरिक दुर्बलता बनी रहती है।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)--एपिलेप्सी से इसका विभेद करना चाहिए।

चिकित्सा (Treatment)—१. चिकित्सा कारणों के अनुरूप होती है।

२. रोगी का सिर नीचा करके स्प्रिट अमोनिया एरोमेट अथवा आँख बन्द करके हलके से 'लाइकर अमोनिया फोर्टे' सुँघाना चाहिए।

३. पीने के लिए ठण्डा पानी दें।
४. रोगी के लिए स्वच्छ हवा का प्रबन्ध करें। ⊡

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हृत्मन्दता
(Bradycardia)

परिचय—इस अवस्था में नाड़ी की गति मन्द हो जाती है। इसे सामान्य भाषा में साधारण हृत्मन्दता (Simple bradycardia) भी कहते हैं।

कारण (Etiology)—○ दैनकीय (Physiological) कारण—

○ वृद्धावस्था, शीत, उपवास, व्यायाम तथा गम्भीर ज्वर के ठीक होते समय।

१. **ज्वर**—टाइफाइड के प्रथम सप्ताह में तथा इन्फ्लूएञ्जा, न्यूमोनिया तथा मलेरिया आदि ज्वरों में।

२. **विषमयता** (Toxaemia)—कामला, यूरीमिया, डायबिटीज आदि।

३. **औषधियाँ**—स्ट्रोफेन्थस, अफीम, थायराइड ग्रन्थि के स्राव में कमी।

४. **मस्तिष्क का दबाना** (Cerebral compression)—ब्लड-प्रेशर की वृद्धि तथा मेनिञ्जाइटिस आदि के कारण मस्तिष्क पर दबाव पड़ता है।

○ मेनिञ्जाइटिस में नाड़ी धीमी तथा उसका ताल (Rhythm) अनियमित होता है।

५. **हृद् रोग** (Heart disease)—हर्ट-ब्लॉक, एओर्टिक स्टेनोसिस, मूर्च्छा (Syncope) आदि।

६. **आमाशय के विकार** (Abdominal disturbances)—इस अवस्था में वेगस वातनाड़ी के प्रभाव से हृदय की गति मन्द हो जाती है।

अन्य कारण—○ गम्भीर स्वरूप की बीमारी के पश्चात् कन्वल्सन्स, सेरिब्रल एब्सिस, ट्यूमर तथा हीमोरेज। साथ ही मिक्सीडीमा, डिजीटेलिस आदि का अधिक मात्रा में सेवन, मायोकार्डियल डीजनरेशन (Myocardial degeneration)।

नोट—शरीर-क्रियात्मक हृत्-मन्दता (Physiological bradycardia) विशेष रूप से खेल-खिलाड़ियों, युवा व्यक्तियों तथा वृद्ध व्यक्तियों में भी देखा जाता है।

लक्षण—हृदय की एपेक्स बीट (Apex beat) ४० से ६० बार प्रति मिनट मिलती है।

परीक्षा—ई० सी० जी० परीक्षा में हर्ट-ब्लॉक के कोई भी चिह्न नहीं मिलते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा (Treatment)—○ इसकी एकमात्र चिकित्सा कारण को दूर करना ही है।

विशेष आवश्यकता पड़ने पर—यदि हर्ट एपेक्स बीट ४० से भी नीचे हो गई हो तब—

℞ इञ्जे० एट्रोपीन (Inj. Atropine)

मात्रा—०·५ मि० ग्रा० I/V अथवा I/M प्रति ३ घण्टे पर दुहरायें।

टेबलेट एलूपेण्ट (Tab. Alupent)

मात्रा—१ गोली प्रति ४ घण्टे पर।

Atrioventricular block की स्थिति में—'मायोकार्डियल इन्फार्क्शन' के समान चिकित्सा करें। ⊡

हृद्वाहिका-संस्थान के रोग 3/6

हृदयावरोध
(Cardiac Arrest)

पर्याय—इसे सरकुलेटरी अरेस्ट (Circulatory arrest) भी कहते हैं।

परिचय—विभिन्न कारणों से सहसा हृदयगति का संचालन बन्द हो जाने को हृदयावरोध कहते हैं।

कारण (Etiology)—१. कार्डियक थ्रोम्बोसिस।

२. वेण्ट्रीकुलर फिब्रीलेशन।

३. अनीस्थीसिया।

४. शस्त्रकर्म (Operations)।

५. औषधि सेन्सिटीविटी (Drug sensitivity) अथवा टॉक्सीसिटी।

६. मायोकार्डियल इन्फार्क्शन।

७. हार्ट ब्लॉक।

८. विद्युत्मारण (Electrocution)।

लक्षण (Symptoms)—१. केरोटिड अथवा फीमोरल ऑर्टेरी में नाड़ी अनुपस्थित मिलती है।

२. हृदय में किसी प्रकार की ध्वनि नहीं मिलती।

३. आँख के तारा (Pupils) फैल जाते हैं।

४. यदि ३ मिनट तक इसका उपाय न किया जाय, अर्थात् हृदय को फिर से चालू न किया जाय तो मस्तिष्क में अपरिहार्य विकृति हो जाती है।

चिकित्सा (Treatment)—सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हृदय की मालिश (Heart massage)—इसके लिए छाती को स्टर्न से १" बायें तथा चौथी या पाँचवीं इण्टर स्पेस में खोलकर हृदय पर मालिश की जाती है। यह कार्य बड़े अस्पतालों में ही सम्भव है।

बिना खोले हृदय की मालिश—रोगी को शय्या पर ऊपर को मुख करके लिटाकर उसकी गर्दन सीधी करके उसकी छाती पर थम्पिंग (Thumping) करें या भारी टकोर करें।

○ यदि इतने से लाभ न मिले, तो उसके मुँह में ३-४ फूंक मार कर फेफड़ों में हवा पहुँचानी चाहिए। तत्पश्चात् एक बाजू पर खड़े होकर एक हाथ की हथेली को उरोस्थि (Xiphoid) या स्टर्नम के निचले सिरे पर रखकर उस पर दूसरे हाथ को रख के अपने शरीर का बोझ देकर स्टर्नम को १-१½" तक रीढ़ की हड्डी की तरफ दबाना चाहिए। इसके बाद हाथ को ढीला कर दें, जिससे छाती पुनः फैल जाती है और रक्त दोनों क्षेपक कोष्ठों में भर जाता है।

○ इस प्रकार दबाने व ढीला करने की प्रक्रिया को प्रति मिनट ६० से ८० बार दुहराना चाहिए। अर्थात् १ सेकेण्ड में १ बार उरोस्थि को दबा कर साथ ही हाथ उठा लेना चाहिए।

यदि चिकित्सक अकेला ही हो तो—३-४ गहरी फूंक से फेफड़ों में हवा भर कर उसमें १-१½ मिनट तक हृदय की उपर्युक्त विधि से मालिश करनी चाहिए। साथ ही मुख में ३-४ फूंक मार कर हवा डालनी चाहिए।

○ यदि दो चिकित्सक हों तो—एक हवा पहुँचाने और दूसरा हृदय पर मालिश की प्रक्रिया को जारी रखने का कार्य करता रहे। इस प्रकार से हृदय-गति अर्थात् नाड़ी पुनः चालू हो जाती है।

नोट—○ उपरोक्त सामान्य व्यवस्था न होने पर निम्न ओषधि चिकित्सा अपनायें—

℞ इपीनेफ्रीन (Epinephrine) (१००० में १)

मात्रा—५ मिली० इन्ट्रावीनस सूचीवेध।

अथवा—५०० मिली० डेक्स्ट्रोज सोलूशन (५%)

℞ इसूप्रेल (Esuprel) ४ मिली०

दोनों को मिलाकर I/V धीरे-धीरे ड्रिप रूप में (१ मिनट में १५ बूंद) दें।

इसके साथ ही—

℞ हाइड्रोकार्टीसोन हेमीसक्सीनेट (Hydrocartisone hemisuccinate)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० I/V दें।

अथवा—मोलर सोडियम लेक्टेट सोलूशन प्रति मिनट I/V द्वारा १० मिली० की मात्रा में दें।

रोगी के ठीक होने पर—पुनः इसूप्रेल (Isuprel) १० मि० ग्रा० जीभ के नीचे १-१ घण्टे बाद रखना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्देश—कार्डियक अरेस्ट में प्रायः एसीडोसिस हो जाता है, अतः बाद में ३.७५ ग्राम सोडाबाइकार्ब ५० मिली० डिस्टिल्ड वाटर में मिलाकर शिरा द्वारा (I/V) धीरे-धीरे दें।

द्वितीय चिकित्सा-क्रम—यदि उपरोक्त चिकित्सा-क्रम उपलब्ध न हो सके तो निम्न चिकित्सा-क्रमानुसार रोगी की तत्काल औषधि की व्यवस्था करें—

℞ इञ्जे० सोडाबाइकार्ब (Inj. Sodabicarb)

मात्रा—५० मिली ७·५% I/V दें। इसे प्रति मिनट पर दुहरायें।

इञ्जे० एड्रीनलीन (Inj. Adrenaline)

१ मिली० में डायलूट करके (१:१०००) २० मिली० तक।

मात्रा—१ मिली० I/V अथवा हृदयगत इञ्जेक्शन (Intracardially) प्रति १० मिनट पर लगायें।

यदि उपरोक्त विधि से लाभ न मिले तब—

℞ इञ्जे० कैल्शियम क्लोराइड (Inj. Calcium chloride)

मात्रा—१० मिली० १०% I/V अथवा हृदय में सीधे इञ्जे० रूप में दें।

इञ्जे० एट्रोपीन ०.६ मि० ग्रा० I/V दें।

इञ्जे० आइसोप्रेनालीन (Inj. Isoprenaline) ०.१ मि० ग्रा० I/V दें।

इञ्जे० एड्रीनलीन (Inj. Adrenaline) 1:1000

मात्रा—१० मिली० I/V अथवा इण्ट्राकार्डियक।

इञ्जे० डेकाड्रान (Inj. Decadran) (M. S. D.)

मात्रा—८ मि० ग्रा० I/V दें।

वेण्ट्रीकुलर फिब्रीलेशन (Ventricular fibrillation)—

१. हृदय की बाह्य मालिश तथा शुद्ध वायु की व्यवस्था जारी रखें।

२. इञ्जे० सोडाबाइकार्ब एवं I/V इञ्जे० एड्रीनलीन (उपरोक्त अनुसार)

३. इञ्जे० जाइलोकार्ड (Xylocard) १०० मि० ग्रा० (As bolus)

तत्पश्चात्—१-२ मि० ग्रा० प्रति मिनट मेण्टेनेन्स रूप में।

अथवा—इञ्जे० इण्डेराल (Inj. Inderal) ५ मि० ग्रा० I/V दें। □

हृद्वाहिका-संस्थान के रोग 3/7

हृत्क्षिप्रता
(Tachycardia)

पर्याय—इसे शीघ्र हृदयता, हृत्क्षिप्रता, क्षिप्रहृदयता, हृदय की अति-शीघ्रता, हृत्प्रवेश, अतिहृत्स्पन्दन आदि नामों से जाना जाता है।

परिचय—नाड़ी की गति का अति तीव्र होना 'टैकीकार्डिया' कहलाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण (Etiology)—(१) **फिजियोलॉजिकल कारण**—

१. मासिकधर्म का समय (Menstrual period) ।

२. रजोनिवृत्ति काल (Menopause) ।

३. व्यायाम (Exercise) ।

४. इमोशनल स्टेट (Emotional state) ।

५. भोजनोपरान्त (After meals) ।

(२) **पैथोलॉजिकल कारण**—

१. तीव्र बुखार (पाइरेक्सिया) ।

२. बैक्टीरियल इन्फेक्शन—स्ट्रेप्टोकोकल, न्यूमोकोकल, ट्यूबरकुलोसिस इन ३ प्रकार के जीवाणुओं से ।

३. अन्य जीवाणु ।

(३) **इण्डोजीनस टॉक्सीमिया** (Indogenous toxaemia)—

१. ग्रेव्स डिजीज (Grave's disease) ।

२. यूरीमिया (Uraemia) ।

३. डीजनरेशन मेलिग्नेन्सी (Degeneration malignancy) ।

४. रक्त-विकार (Blood disorders) ।

(४) **एक्सोजीनस टॉक्सीमिया** (Exogenous toxaemia)—

१. तम्बाकू (Tobacco), २. मद्य (Alcohol), ३. चाय तथा कॉफी, ४. थायराइड इक्स्ट्रैक्ट तथा ५. एट्रोपीन ।

(५) **नर्वस स्टेट** (Nervous state)—

१. न्यूरेस्थेनिया (Neurasthenia) ।

२. एंग्जाइटी न्यूरोसिस (Anxiety neurosis) ।

३. न्यूरो-सर्क्यूलेटरी एस्थेनिया (Neuro-circulatory asthenia) ।

(६) **हृदय रोग**—जो हर्ट-फेल्योर से सम्बन्धित होते हैं ।

प्रकार (Types)—१. साधारण शीघ्र हृदयता (Simple tachycardia) ।

२. प्रवेगी शीघ्र हृदयता (Paroxysmal tachycardia) ।

(१) **साधारण शीघ्र-हृदयता** (Simple tachycardia)—

कारण—इसकी उत्पत्ति अनेक कारणों से होती है—१. परिश्रम, २. ज्वर, ३. भावुकता, ४. हाइपरथायरॉडिज्म, ५. जीर्ण उपसर्ग, ६. अनीमिया, ७. मद्यपान, ८. रक्तस्राव, ९. एट्रोपीन, १०. चाय-तम्बाकू तथा थायराइड इक्स्ट्रेक्ट के अधिक सेवन से ।

○ इसके अतिरिक्त इसकी उत्पत्ति 'राइट वॉरिकिल' में दाब की वृद्धि तथा हृदय के गतिप्रेरक में उत्तेजना के परिणामस्वरूप होती है ।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ रजोनिवृत्ति, अशान्ति, तीव्र ज्वर के ठीक होते समय।

○ यौवनारम्भ, अपतंत्रक या हिस्टीरिया एवं गर्भावस्था।

लक्षण (Symptoms)—१. नाड़ी की गति बढ़ जाती है, परन्तु १४० प्रति मिनट से कम रहती है। परिश्रम के उपरान्त यह बढ़कर १५०-१८० तक हो जाती है।

२. ज्वर (Fever)—ज्वर बढ़ जाता है। ज्वर के १ डिग्री बढ़ने पर नाड़ी की गति १० बार प्रति मिनट बढ़ जाती है।

३. यक्ष्मा की प्रारम्भिक अवस्था तथा रियूमेटिज्म में नाड़ी का तीव्र होना एक महत्त्वपूर्ण लक्षण है।

४. कुछ रोगियों में दिल धड़कने (Palpitation) की भी बीमारी हो जाती है।

५. रोग की ग्रीवा में थ्रोबिंग (Throbbing) का भी लक्षण मिलता है।

६. सिर चकराना (Giddiness) तथा कान में सनसनाहट की आवाज।

७. कभी-कभी पुरोहृद् वेदना (Precordial pain) की उपस्थिति।

परीक्षा करने पर (On Examination)—○ इसमें किसी प्रकार का कार्डियक इन्लार्जमेण्ट नहीं मिलता है।

○ एपेक्स अथवा हृदय के आधार पर साँफ्ट सिस्टोलिक मरमर सुनाई देती है।

चिकित्सा (Treatment)—१. रोग के कारण का पता लगाकर उसकी उपयुक्त चिकित्सा करनी चाहिए।

२. जब तक ऑर्गेनिक हर्ट लीजन की उपस्थिति न मिले, तब तक डिजीटेलिस के प्रयोग से कोई विशेष लाभ नहीं मिलता।

३. रोगी को फीनोबार्बीटोन ३० मि० ग्रा० की मात्रा में देने से लाभ होता है।

४. सेप्टिक फोकस (Septic focus), पल्मोनरी ट्युबरकुलोसिस तथा हाइपरथायरॉडिज्म का पता लगाकर उसकी उपयुक्त चिकित्सा करनी चाहिए।

(२) पैरॉक्सीस्मल टेकीकार्डिया (Paroxysmal tachycardia)—

१. इस अवस्था में नाड़ी की गति अकस्मात् १५०-२०० तक प्रति मिनट हो जाती है। परन्तु ताल (Rhythm) नियमित होती है।

२. यह कुछ घण्टों से लेकर कुछ सप्ताहपर्यन्त तक रह सकता है।

३. इसकी उत्पत्ति तथा समाप्ति अकस्मात् होती है।

प्रकार (Types)—**इसके निम्न प्रकार होते हैं**—

१. साधारण प्रवेशी शीघ्र हृदयता (Simple paroxysmal tachycardia)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. नोडल टेकीकार्डिया (Nodal tachycardia)।

३. वेण्ट्रीकुलर टेकीकार्डिया (Ventricular tachycardia)।

४. पैरॉक्सीस्मल एट्रीयल फ्लूटर।

५. पैरॉक्सीस्मल एट्रीयल फिब्रीलेशन।

साधारण प्रवेगी शीघ्र हृदयता
(Simple Paroxysmal Tachycardia)

कारण (Etiology)—१. अलिन्द में स्थित नये प्रेरणा स्थान से उत्पन्न संवेग।

२. अत्यधिक परिश्रम, आध्मान, भावुकता आदि से इसका अतिक्रमण बढ़ जाता है।

लक्षण (Symptoms)—१. रोगी को रह-रह कर दिल धड़कने की शिकायत रहती है।

२. मूर्च्छा, श्वासकष्ट, प्रीकॉर्डियल पेन का लक्षण मिलता है।

परीक्षा (Examination)—१. रोगी का चेहरा फीका (Pale), नीलापन लिये हुए (Cyanosis) तथा स्वेद युक्त (Sweating) दिखलाई देता है।

२. नाड़ी की गति—१४०-२५० प्रति मिनट रहती है।

३. हृदयताल—नियमित रहता है। लेटने पर हृदय-गति मन्द हो जाती है।

४. सिस्टोलिक ब्लडप्रेशर—गिरा हुआ मिलता है।

५. कार्डियक आउट पुट—प्रायः कम होता है।

६. रोग की उग्रावस्था में—फुप्फुस तथा पेरों में शोथ, कार्डियक डाइलेटेशन आदि लक्षण मिलते हैं।

इ० सी० जी० परीक्षा—१. तीव्र नियमित ताल दिखलाई देता है।

२. वेण्ट्रीकुलर कॉम्प्लेक्स सामान्य रहता है।

३. 'पी' तरंग इनवर्टेड दिखलाई देती है।

उपद्रव (Complications)—१. इसका आक्रमण कुछ सेकेण्डों से लेकर कुछ तक मिनटों रहता है; फिर एकाएक ठीक हो जाता है।

२. **अन्धता** (Blindness) तथा मिर्गी के समान आक्षेप आदि उपद्रव कुछ समय के लिए दिखलाई देते हैं।

पूर्वानुमान (Prognosis)—अतिक्रमण काल में रोगी की मृत्यु की पूरी सम्भावना होती है।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ प्रोप्रानोलोल (Propranolol)

मात्रा—२०-८० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर मुख द्वारा।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—वेरापामिल (Varapamil)
मात्रा—४०–१२० मि० ग्रा० प्रति ८ घण्टे पर।
अथवा—प्रोकेनामाइड (Procainamide)
मात्रा—२५०–५०० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर।
अथवा—क्विनीडीन (Quinidine)
मात्रा—२००–४०० मि० ग्रा० प्रति ७ घण्टे पर।
अथवा—लेनोक्सीन (Lanoxin)
मात्रा—०·२५ मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३ बार।

इस रोग में कोलीनर्जिक ड्रग्स लाभ पहुँचाती है; जैसे—

℞ मिथकोलीन क्लोराइड, मिकोलिल क्लोराइड
मात्रा—१०–२५ मि० ग्रा० S/C
साथ ही—कार्बाकोल (Carbachol) २ मि० ग्रा० मुख द्वारा।

नोट—○ यदि उपरोक्त औषधि के प्रयोग से वमन, मलत्याग तथा मूर्च्छा के लक्षण दिखलाई दे तो—

℞ एट्रोपीन सल्फेट ०·६ मि० ग्रा० I/V

रोग का प्रवेग जारी रहने पर—

℞ नैटसेडीन (Natsadine) १ गोली दिन में ३ बार जल से।

पुनराक्रमण को रोकने के लिए—

℞ क्विनीडीन (Quinidine) १८० मिग्रा० नित्य रोग-शमनकाल में।

नोडल टेकीकार्डिया
(Nodal Tachycardia)

परिचय—इसके अन्तर्गत अलिन्द (Atrium) तथा निलय (Ventricle) में निरन्तर संकोच होता रहता है।

परीक्षा—ई० सी० जी० परीक्षा—१. P. R. अन्तराल छोटा हो जाता है तथा २. 'P' तरंग इन्वर्टेड हो जाती है।

लक्षण—इसके लक्षण मुख्यरूप से साधारण पैरॉक्सीस्मल टेकीकार्डिया (Simple paroxysmal tachycardia) से मिलते-जुलते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—इसकी चिकित्सा प्रायः साधारण प्रवेगी शीघ्र हृदयता के समान ही है। इसके लिए—

℞ नियोस्टिग्मिन (Neostigmine)—१५ मि० ग्रा० मुख द्वारा दें।
अथवा—नियोस्टिग्मिन ०·५–१ मि० ग्रा० I/M अथवा I/V मन्द गति से।

लाभ न मिलने पर—डी० सी० करेण्ट शॉक देते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि फिर भी लाभ नहीं मिलता है तब—'लेनोक्सिन' देते हैं।

प्रारम्भिक मात्रा—०·५ मि० ग्रा०। तत्पश्चात् ०·२५ मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर।

बार-बार होने वाली प्रवृत्ति में—

℞ फायसोस्टिग्मीन (Physostigmine) ६० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

वेण्ट्रीकुलर टेकीकार्डिया
(Ventricular Tachycardia)

परिचय—यह रोग साधारण प्रवेगी शीघ्र हृदयता (Simple paroxysmal tachycardia) के समान होता है।

○ इसमें नियमित क्रम से Premature Ventricular systoles होते हैं।

○ वेण्ट्रीकुलर कंट्रेक्शन सिस्टोल १८० प्रति मिनट रहती है। जब कि अलिन्द (Atrium) संकोच-गति केवल ८० प्रति मिनट रहती है।

कारण—१. एक्यूट मायोकार्डियल इन्फार्क्शन।

२. डिजीटेलिस इन्टॉक्सीकेशन।

लक्षण (Symptoms)—○ इस रोग में निलय-स्पन्दन (Ventricular beats) अनियमित रहता है।

○ अन्य लक्षण साधारण प्रवेगी शीघ्र हृदयता के समान होते हैं।

नोट—'हर्ट रेट' का यह एक गम्भीर विकार है।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ प्रोकेनामाइड हाइड्रोक्लोराइड (Procainamide Hcl.)

व्या० नाम—प्रोनेस्टिल (Pronestyl)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० ५% डेक्स्ट्रोज घोल के १०० मिली० में घोल कर I/V देते हैं।

नोट—I/V तभी देना चाहिए जब कि रोगी को तत्काल औषधि देनी होती है।

○ यदि तत्काल आवश्यकता नहीं है तो इसकी गोली २५० मि० ग्रा० का मात्रा में प्रति २ घण्टे पर देना चाहिए।

यदि मायोकार्डियल इन्फार्क्शन से सम्बन्धित हो तो—

℞ लिग्नोकेन हाइड्रोक्लोराइड १ मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर-भार पर १ मात्रा में I/V देते हैं। तत्पश्चात् प्रति २० मिनट पर दुहराते हैं।

नोट—अधिक से अधिक मात्रा ६० मि० ग्रा० तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैरॉक्सीज्म ऑफ एट्रीयल फ्लूटर
(Paroxysm of Atrial Flutter)

कारण—प्रवेगी शीघ्र हृदयता (Paroxysmal tachycardia) के समान।

लक्षण (Symptoms)—

१. एपेक्स रेट तथा नाड़ी गति १६० प्रति मिनट होती है।

२. ताल (Rhythm) प्राय: नियमित रहता है।

३. अलिन्द गति (Atrial rate) २००–३०० प्रति मिनट होती है।

निदान (Diagnosis)—निदान की वास्तविक पुष्टि E. C. G. के द्वारा होती है।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ इञ्जे० लेनोक्सिन (Inj. Lanoxin) १ मि० ग्रा० I/V

तत्पश्चात्—टेबलेट लेनोक्सिन (Tab. Lanoxin)

मात्रा—२ गोली प्रति ६ घण्टे पर ४ मात्रा तक। तत्पश्चात् १ या २ गोली रोजाना।

नोट—जब तक वेण्ट्रीकुलर रेट ८० प्रति मिनट नहीं हो जातीं है।

यदि लाभ न हो तो—कार्डियोवर्सन (Cardioversion) करना चाहिए।

○ **यदि रेट बहुत अधिक हो तो**—

℞ इञ्जे० इण्डेराल (Inj. Inderal) ०·५ मि० ग्रा०

मात्रा—प्रति १५ मिनट पर जब तक २ मि० ग्रा० की मात्रा पूर्ण नहीं हो जाती।

○ लेनोक्सिन अथवा कार्डियोवर्सन।

पैरॉक्सीज्म ऑफ एट्रीयल फिब्रीलेशन
(Paroxysm of Atrial Fibrillation)

लक्षण—इसके अन्तर्गत 'एपेक्स बीट' तथा 'पल्स रेट' में एक विशेष प्रकार की अनियमितता मिलती है।

निदान—निदान की पुष्टि E. C. G. द्वारा होती है।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ टेबलेट लेनोक्सिन (Tab. Lanoxin)

मात्रा—२ गोली प्रति ६ घण्टे पर हृदय-गति ८० प्रति मिनट होने तक।

तत्पश्चात् मेण्टेनेन्स डोज—१ या २ गोली नित्य ६ दिन तक।

यदि रेट डिजोक्सिन के द्वारा कण्ट्रोल न हो तो—

℞ इण्डेराल (Inderal) अथवा सिप्लार (Ciplar) (सीबा)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—२० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

अथवा—आईसोप्टिन (Isoptin) ४०–१२० मिग्रा० दिन में ३ बार।

नोट—लक्षणों की भी उपयुक्त चिकित्सा करनी चाहिए।

यदि हृट डेजीटेलाइज्ड हो और कोई अन्य कण्ट्रा-इण्डिकेशन न हो तो—

℞ क्विनीडीन सल्फेट (Quinidine sulphate)

व्या० नाम—नेटीसेडिन (Natisedin) २०० मिग्रा० टेस्टिंग रूप में दें।

सेन्सिटीविटी देखने के पश्चात्—३०० मि० ग्रा० दिन में ६ बार ३ दिनों तक। लाभ मिलने पर मात्रा घटा कर ३०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार कर दें।

यदि पुनरावर्तन (Relapse) की सम्भावना हो तो—इस औषधि को २०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार लम्बे समय तक देते रहें।

नोट—रोगी को पूर्ण विश्राम दें।

सुप्रा-वेण्ट्रीकुलर पैरॉक्सीस्मल टेकीकार्डिया
(Supra-Ventricular Paroxysmal Tachycardia)

परिचय—इस प्रकार का विकार विशेषकर हर्टरेट-हाइपरटेन्शन, रियूमैटिक वल्वुलर डिजीज तथा थायरोटॉक्सीकोसिस से उत्पन्न होता है।

लक्षण (Symptoms)—१. वेण्ट्रीकुलर हर्टरेट १२० से १५० प्रति मिनट रहती है।

२. श्वासकष्ट।

३. हृदय-धड़कन (Palpitation)।

४. सिनकोप आदि लक्षण होते हैं।

५. रोगी चिन्तित दिखलाई देता है।

६. पोली यूरिया का लक्षण मिलता है।

चिकित्सा (Treatment)—१. इसकी कोई विशिष्ट चिकित्सा नहीं है।

२. सामान्य रूप से इसमें कोई चिकित्सा की आवश्यकता नहीं पड़ती है। रोगी को केवल सान्त्वना देते रहना चाहिए।

३. बर्फ का पानी पीने को दें।

४. वेगस स्टीम्युलेशन के लिए कैरोटिड साइनस मालिश करनी चाहिए। मालिश दिन में २-३ बार करनी चाहिए।

नोट—उपरोक्त विधियों से लाभ न मिलने पर लघुशामक (Mild sadative) का प्रयोग करें—

℞ फीनोबार्बीटोन अथवा एमाइलोबार्बीटोन

मात्रा—२०० मि० ग्रा० देकर रोगी को १-२ घण्टे विश्राम कराना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्पश्चात्—प्रोफेनोलोल या इण्डेराल को धीरे-धीरे I/V देते हैं।

नोट—यदि इसके प्रयोग काल में हाइपोटेन्शन ब्रैडीकार्डिया के लक्षण मिलें तो तत्काल एट्रोपीन का १ मि० ग्रा० की मात्रा में इन्जेक्शन देते हैं।

यदि इससे सफलता न मिले तो—

℞ एण्टाजोलीन-हाइड्रोक्लोराइड (Antazoline Hcl.)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० I/M आवश्यकतानुसार प्रति ५ मिनट पर दुहराते हैं, जब तक कि ३०० मि० ग्रा० औषधि नहीं पहुँच जाती।

प्रोस्टिग्मीन १ मि० ग्रा० I/M दें।

अथवा—कार्बोकोल ०.२५ मि० ग्रा० (१ मिली०) दें।

अथवा—इन्जे० मेथोक्सामाइन १० मि० ग्रा०

व्या० नाम—वेसोक्सीन (Vasoxine) I/V दें।

डायलेण्टिन (Dilantin) १०० मिग्रा० १ कै० दिन में ४ बार दें। ⊡

हृद्वाहिका-संस्थान के रोग 3/8

हृत्पात
(Heart Failure)

पर्याय—हृदयपात, हृदय का फेल होना, कार्डियक फेल्योर (Cardiac failure)।

○ इसे ही 'रक्ताधिक्य हृदयपात' (Congestive cardiac failure : C. C. F.) भी कहते हैं।

परिचय—'सर थामस लेविस' के मतानुसार हर्ट फेल्योर (हृदय-निपात होना) एक ऐसी हृदयजन्य अवस्था है, जिसमें हृदय पर्याप्त रूप से रक्त-निष्पात (Cardiac output) करने में समर्थ नहीं हो पाता। परिणाम-स्वरूप एक ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है, जिससे हृदय निष्पात (Cardiac output) में गिरावट आने पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में शरीर में सोडियम रिटेंशन पर प्रभाव पड़ता है, जिसके कारण शरीर में शोथ की स्थिति उत्पन्न हो जाती है और वेण्ट्रीकल अपना कार्य सामान्य रूप से करने में असमर्थ हो जाता है।

कारण (Etiology)—वेण्ट्रीकुलर फेल्योर के आधारभूत निम्नलिखित कारण हैं—

१. मायोकार्डियल दुर्बलता अथवा शोथ—

○ कोरोनरी आर्टेरी डिजीज, मायोकार्डाइटिस, कंजेस्टिव कार्डियो-मायोपेथीज एवं औषधियाँ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. अत्यधिक कार्य भार (Excess work load) ।

प्रकार (Types)—हर्ट फेल्योर ३ प्रकार का होता है—

१. **वाम हृदयपात** (Left heart failure)—इसी को 'लेफ्ट वेण्ट्रीकुलर फेल्योर' भी कहते हैं ।

२. **दक्षिण हृदयपात** (Right heart failure)—इसी को 'राइट वेण्ट्रीकुलर फेल्योर' भी कहते हैं ।

३. **कम्बाइण्ड लेफ्ट एण्ड राइट हर्ट फेल्योर** (Combined left and right heart failure)—जब लेफ्ट और राइट दोनों भाग फेल हो जाते हैं, जैसे—मायोकार्डाइटिस (Myocarditis) ।

वाम हृदयपात
(Left Ventricular Failure)

पर्याय—इसे लेफ्ट साइडेड हर्ट फेल्योर भी कहते हैं ।

परिभाषा—It is the failure of the left ventricle to propel blood forwards resulting in accumulation of blood in pulmonary circulation characterised by paroxysmal nocturnal dyspnoea, gallop rhythm, cough, fatigue, cardiac enlargement, rales pulmonary venous congestion, pulses alternans and basal crepitations.

कारण—१. उच्च रक्तचाप (Hypertension)—यह इसका सामान्य कारण है ।

२. कोरोनरी थ्रोम्बोसिस (Coronary thrombosis) ।

३. एऑर्टिक वाल्व डिजीज जैसे—एऑर्टिक स्टेनोसिस एवं एऑर्टिक इन्कम्पीटेशन ।

४. मिट्रल इन्कम्पीटेशन ।

५. कंजेनिटल हर्ट डिजीज, जैसे—पी० डी० ए० (P. D. A.) ।

६. इस्केमिक हर्ट डिजीज (Ischaemic heart disease) ।

७. कार्डाइटिस (Carditis) ।

८. कार्डियो-मायोपेथी (Cardio-myopathy) ।

९. वेण्ट्रीकुलर टेकीएर्थमिया (Ventricular tachyarthmia) ।

१०. महाधमनी प्रत्यावहन (Aortic regurgitation) ।

११. जीर्ण वृक्कशोथ (Chronic nephritis), कोलेजन डिजीज (Collagen disease) ।

१२. हृदय धमनी अवरोध (Coronary occlusion) ।

रोग की अवस्थाएँ (Stages of disease)—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) प्रवेगी फुप्फुसीय रक्ताधिक्य (Paroxysmal pulmonary congestion)—

१. इसमें पल्मोनरी ईडिमा के तीव्र प्रवेग उठते हैं।

२. रात्रि के समय श्वासकष्ट (Noctured dyspnoea) होता है।

३. खाँसी के वेग आते हैं।

(२) श्रमजनित फुप्फुसीय रक्ताधिक्य (Pulmonary congestion of efforts)—

१. इसमें जल्दी-जल्दी श्वास चलती है।

२. रक्त-मिश्रित कफ के साथ खाँसी आती है।

(३) जीर्ण फुप्फुसीय रक्ताधिक्य (Chronic pulmonary congestion)—

१. इसमें रोगी की श्वास जल्दी-जल्दी चलती है।

२. कभी-कभी हीमोटाइसिस (Haemoptysis) होता है।

नोट—प्रायः ऐसे रोगियों में क्रॉनिक ब्रॉन्काइटिस तथा पल्मोनरी टी० बी० अथवा ट्यूमर का भ्रम हो जाता है।

लक्षण एवं चिह्न—(Symptoms and signs of left sided heart failure)—

१. श्रमजनित श्वासकष्ट (Exertional dyspnoea)

○ स्वल्प श्रमजनित श्वासकष्ट इसका पहला लक्षण है। वाम हृदयपात की स्थिति में शीघ्रता से चलने पर, ऊँचा बोलने पर, मानसिक आवेश के होने पर, सीढ़ी चढ़ने पर श्वास उथला तथा तीव्र हो जाता है।

○ जैसे-जैसे वाम हृदय निर्बल होता जाता है और फेफड़े में ईडिमा बढ़ता है, वैसे-वैसे ही स्वल्प श्रम से श्वास चढ़ने लगता है।

२. हृदय जनित रात्रि श्वास (Cardiac asthma) अथवा पल्मोनरी ईडिमा या पैरॉक्सीस्मल नोक्चुर्नल डिस्पनीया—

(i) इसमें रात्रि के समय श्वासवेग उठ खड़ा होता है। रोगी को ऐसा लगता है कि उसका दम घुट जायेगा और उसके प्राण निकलने लगते हैं। वह हड़बड़ा कर उठ बैठता है और बाहर की खुली हवा लेने के लिए व्याकुल हो जाता है।

(ii) रोगी का चेहरा फीका हो जाता है तथा पसीने से गीला हो जाता है।

(iii) छाती फूली हुई होती है। उसे लगातार उठने वाली खाँसी आने लगती है। बड़ी मात्रा में झागदार बलगम भी निकलने लगता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(iv) फुप्फुस के निचले भाग से राल्स की ध्वति सुनने में आती है। श्वास-प्रश्वास के साथ सीटियों की ध्वनि सुनाई देती है।

(v) रोगी की व्याकुलता तो शीघ्र शान्त हो जाती है, परन्तु श्वास-कृच्छ्रता कुछ देर बाद शान्त होती है।

(vi) यह वेग लगभग १ घण्टे तक रह कर सहसा शान्त हो जाता है। रोगी के सो जाने के बाद फिर यह वेग नहीं उठता है।

३. **शय्याश्वास** (Orthopnoea)—

(i) जब रोग अधिक बढ़ जाता है तब निरन्तर श्वासकृच्छ्रता का लक्षण रहता है। ऐसी स्थिति में रोगी के लिए सीधा होकर लेटना और सोना कठिन हो जाता है।

(ii) उसके उठकर बैठ जाने से या आराम कुर्सी पर सोने से यह कष्ट श्वास शान्त हो जाता है।

(iii) प्रारम्भ में रोगी एक के स्थान पर २-३ तकिये रख कर सोता है। रोग के बढ़ने पर वह रातभर बैठ कर समय काटता है। किन्तु दिन में वह लेट कर सो सकता है।

४. **कृशता** (Weakness)—वाम हृदय के दुर्बल होने से अंगों को रक्त कम मिल पाता है, जिससे उसका पोषण कम हो जाता है और रोगी कृश हो जाता है।

५. **थकान** (Fatigue)।

६. **हृदय-विवर्धन** (Cardiac enlargement)।

७. **फुप्फुसीय शिरागत रक्ताधिक्य** (Pulmonary venous congestion)।

८. **विषम श्वास** (Periodic breathing)—रोगी के कुछ-एक श्वास गहरे होते हैं और कुछ-एक श्वास हलके होते हैं। रोगी को कुछ बेचैनी होती है और वह उठकर बैठ जाता है।

९. **कास** (Cough)—रोगी को इस रोग में कम या अधिक रूप में खाँसी भी होती है तथा कुछ बलगम भी आता है। रात को या लेटने पर खाँसी का वेग अधिक हो जाता है। खाँसी सूखी अथवा तर दोनों प्रकार की हो सकती है। संक्रमण की स्थिति में म्यूको-पुरुलेण्ट अर्थात् कफ पूय-मिश्रित आता है।

○ मिट्रल स्टेनोसिस में यह झागदार, पिंक और कोपियस होता है। पल्मोनरी इन्फार्क्शन में यह बिलकुल लाल होता है।

१०. **हृदयकम्प** (Tachycardia)—हल्का-सा परिश्रम करने पर टेकीकार्डिया का होना तथा श्रम के पश्चात् उसका देर तक जारी रहना इस रोग का प्रमुख लक्षण है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्य लक्षण—१. निर्बलता, थकान तथा उन्निद्रता आदि लक्षण अंगों को रक्त न मिलने से होते हैं।

२. ○ रात के समय अधिक और दिन के समय कम मूत्र आना आदि लक्षण भी होते हैं।

३. रोग के वेग के समय शाखाओं के सिरे ठण्डे तथा पाण्डुमय दिखलाई देते हैं।

संक्षेप में—श्रमजनित श्वासकष्ट, शय्याश्वास, कफ/खाँसी, एग्जर्शनल फेटीग एवं वीकनेस, Nocturia आदि इसके प्रमुख लक्षण हैं।

निदान (Diagnosis)—**सामान्य निरीक्षण** (General survey)—

१. **उम्र तथा लिंग** (Age & Sex)—मुख्यरूप से ४० वर्ष से अधिक आयु वाले पुरुषों में। रियूमेटिक केसिस में यह लम्बी आयु में भी होता है।

२. रोगी चिन्तित दिखलाई देता है। पसीने से उसका शरीर गीला हो जाता है।

३. रोगी में श्यावता (Central cyanosis) मिलती है।

४. **श्वसन-गति**—रेस्पिरेशन की गति सदा ऊँची रहती है। चेन स्ट्रोक्स ब्रीदिंग (Cheyne strokes breathing) उपस्थित मिलती है।

५. **नाड़ी**—नाड़ी की गति सदा ऊँची रहती है। यह गति १०० से १२० बार प्रति मिनट तक होती है। पल्सस आल्टरनेन्स उपस्थित मिलता है। आर्टीरियल दीवार मोटी होती है।

६. **ब्लड-प्रेशर** (Blood pressure)—○उच्च रक्तचाप (हाइपर-टेशन) इसका एक कामन कारण है। रक्तचाप ऊँचा होता है। एक औसत रोगी में यह २००/१०० mm of Hg. से ऊपर होता है।

○ सिस्टोलिक ब्लड-प्रेशर की तुलना में डिस्टोलिक ब्लड-प्रेशर अधिक बढ़ा होता है।

एक्स-रे परीक्षा—इस परीक्षा के अन्तर्गत फुप्फुसीय धमनीगत छाया (Palmonary arterial shadows) मिलती है तथा फुप्फुसीय शोफ (Pulmonary oedema) को प्रदर्शित करती हुई इसमें अस्पष्ट भाग प्रदर्शित होता है।

○ X-ray Chest (P. A.) के अन्तर्गत बाइलेटरल पेरी हिलार बटरफ्लाई छाया दिखलाई देती है। बायाँ वेण्ट्रीकल बढ़ा हुआ दीखता है।

इलेक्ट्रो-कार्डियोग्राम (Electro-cardiogram)—इस परीक्षा में लेफ्ट एक्सिस डेवीएशन (Left axis deviation) मिलता है। इसके साथ-साथ T_1 अथवा T_2 इन्वर्टेड मिलते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ E. C. G. में 'बण्डल ब्राञ्च ब्लॉक' की तरंगें मिलती हैं। इसके अतिरिक्त लेफ्ट वेण्ट्रीकुलर इन्लार्जमेण्ट, स्ट्रेन पेटर्न, इस्केमिक चेञ्जेज अथवा इन्फार्क्शन दिखलाई देता है।

सापेक्ष्य निदान (Differential diagnosis)—इस रोग का निम्न रोगों से विभेद करना चाहिए—

१. ब्रॉन्कियल अस्थमा (Bronchial asthma)।
२. रीनल फेल्योर (Renal failure)।
३. डायबीटिक एसिडोसिस (Diabetic acidosis)।
४. एक्यूट लेफ्ट-वेंट्रिकल फेल्योर (Acute L. V. failure)।

चिकित्सा (Treatment)—

१. रोगी को शय्या पर विश्राम दें।
२. ऑक्सीजन को नेजल केथेटर के द्वारा सुँघाएँ।
३. ℞ इञ्जे० पेथीडीन (Inj. Pethidine) १०० मिग्रा० I/M.

अथवा—इञ्जे० मॉर्फीन (Inj. Morphine) १५ मि० ग्रा० I/M. तथा साथ में—

इञ्जे० सीक्विल (Inj. Siquil) १० मि० ग्रा० I/M.
अथवा—इञ्जे० स्टेमेटिल (Inj. Stemetil) २५ मि० ग्रा० I/M
४. ℞ इञ्जे० लैसिक्स (Inj. Lasix) ४०–८० मि० ग्रा० I/V
५. ℞ इञ्जे० लेनोक्सिन (Inj. Lanoxin) १ मि० ग्रा० I/V

अथवा—इञ्जे० सेडीलानिड (Inj. Sidilanid) ०.४ मिं० ग्रा० (२ मिली०) I/V followed up—टेबलेट लेनोक्सिन अथवा सेडीलानिड।

मात्रा—२ गोली प्रति ६ घण्टे पर ३ मात्रा तक।
तत्पश्चात् मेण्टेनेन्स डोज १ गोली दिन में १ या २ बार सप्ताह में ६ दिन।
नोट—इसे ३ माह अथवा अधिक समय तक दें।

६. ℞ इञ्जे० एमीनोफाइलिन (Inj. Aminophyllin) ०.२५ ग्राम I/V धीरे-धीरे दें। आवश्यकतानुसार ६-८ घण्टे पर दुहरायें।

७. पोटैशियम सप्लीमेण्ट (पोट-क्लोर Pot-chlor के नाम से)
मात्रा—दिन में २ बार २-२ चम्मच दें।
८. आहार—२४ घण्टे तक तरल रूप में। नमक का पूर्ण निषेध।
९. **यदि रोग का कारण ब्लड-प्रेशर हो तो—**
℞ इञ्जे० सर्पासिल (Inj. Serpasil) १ मि० ग्रा० I/V
अथवा—इञ्जे० अर्कामिन (Inj. Arkamin)
मात्रा—१५० माइक्रोग्राम मांसपेशीगत इञ्जे०।
अथवा—इञ्जे० रिसर्पिन (Inj. Reserpin)

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—०.५–१ मि० ग्रा० I/M तत्काल दें। यदि आधा घण्टे तक प्रभाव न हो, तब पुनः ०.५ मि० ग्रा० दें।

१०. श्वासकष्ट के समाप्त होने पर—

℞ सीरप ट्राइक्लोफोस (ट्रिक्लोरिल Tricloryl)

मात्रा—बच्चों में—५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर विभाजित मात्रा में दें।

नोट—जो रोगी तीव्र हृदय श्वासकष्ट (Acute attack of cardiac dyspnoea) से पीड़ित हो, उसे पूर्ण चिकित्सा तक 'डिजीटेलिस' तथा 'डायोरेटिक' का प्रयोग करायें।

○ रोगी को आक्रमण के पश्चात् ४ सप्ताह तक शय्या पर विश्राम करायें।

जीर्णावस्था में (In chronic stage)—

१. सामान्य प्रबन्ध—शय्या पर विश्राम तथा धूम्रपान का निषेध।

२. इन्फेक्शन चिकित्सा—एम्पीसिलीन २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कै० दिन में ३ बार ५ दिन तक।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—उपरोक्त औषधि चिकित्सा-क्रम में लाक्षणिक चिकित्सा का सम्मलित रूप में प्रयोग किया गया है; फिर भी यहाँ पर हम कुछ अन्य उपयोगी चिकित्सा प्रस्तुत कर रहे हैं—

(१) श्रमजन्य श्वास-कष्ट (Dyspnoea)—

℞ मॉर्फीन सल्फेट (Morphine sulphate)

मात्रा—१५ मि० ग्रा० I/M तत्काल दें। तत्पश्चात् १५ मि० ग्रा० की मात्रा में पुनः दोहरा सकते हैं। २४ घण्टे पर ६० मि० ग्रा० से अधिक न दें।

Followed by—

℞ एमीनोफाइलिन (Aminophyllin) ०.२५ ग्राम १० मिली० में।

इसे २५% ग्लूकोज घोल में (२० मिली०) डायलूट करके I/V धीरे-धीरे दें।

○ यदि निदान (Diagnosis) में कोई आशंका हो तब मॉर्फीन का प्रयोग बन्द कर दें। क्योंकि ब्रॉन्कियल अस्थमा में यह खतरनाक है। ऐसी स्थिति में हानि रहित औषधि 'एमीनोफाइलिन' ०.२५ ग्राम (१० मिली० में) I/V दें। साथ ही एक दिन छोड़कर पैथीडीन हाइड्रोक्लोराइड १०० मि० ग्रा० I/M दें।

(२) श्यावता (Cyanosis)—

℞ ऑक्सीजन ४ लीटर प्रति मिनट के हिसाब से मास्क अथवा ह्वाई नेजल कैथेटर द्वारा दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) **फुप्फुसीय शोफ** (Pulmonary oedema)—

℞ फूरोसीमाइड (Furosemide) १ एम्पुल (२० मिग्रा०) I/M दें।

Followed by—

१ गोली (४० मि० ग्रा०) खाली पेट प्रातः समय, जब तक फुप्फुसीय चिह्न गायब न हो जायें।

फूरोसीमाइड की अनुपस्थिति में—

℞ मर्सेलिल इञ्जेक्शन (Inj. Merselyl) २ मिली० I/M दें।

Fllowed by—

℞ बेण्ड्रोफ्लाउजीड (Bendroflauzide)

व्या० नाम—निओ-नेकलेक्स (Neo-naclex)

मात्रा—२ गोली (२.५ मि० ग्रा० प्रत्येक) देना प्रारम्भ करें।

नोट—'पल्मोनरी ईडिमा' की स्थिति में ऑक्सीजन देना बन्द कर दें।

(४) **उच्च रक्तचाप** (High blood pressure)—

℞ रिसर्पिन (Reserpine)

व्या० नाम—सर्पासिल (Serpasil) १ मि० ग्रा० I/M

इसके साथ ही—क्लोरप्रोमेजीन हाइड्रो० (Chlorpromazine Hcl.)

व्या० नाम०—लार्गेक्टिल (Largactil) I/M दें।

(५) **रेस्ट एण्ड स्लीप** (Rest & sleep)—फीनोबार्बीटोन का प्रयोग करें।

○ रोगी को नमकरहित भोजन की व्यवस्था करें। आहार में चावल, चीनी तथा दूध का उपयोग सर्वोत्तम रहता है।

राइट हर्ट फेल्योर
(Right Heart Failure)

पर्याय—फुप्फुसीय हृदय विकार (Pulmonary heart diseases), राइट वेण्ट्रीकुलर फेल्योर, राइट साइडेड कंजेस्टिव कार्डियक फेल्योर, राइट कंजेस्टिव हर्ट फेल्योर, दक्षिण हृदय दौर्बल्य, राइट साइडेड फेल्योर।

परिभाषा—It is a condition characterised by inability of the right ventricle to propel blood forward resulting in engorgement of right atrium, systemic veins with enlargement of liver and dependent oedema.

○ इस प्रकार का हृदयनिपात अधिक सामान्य है। इसका आरम्भ तथा शमन धीरे-धीरे होता है।

रोग के कारण (Eliology)—१. इसका प्रमुख कारण लेफ्ट वेण्ट्रीकल फेल्योर (Secondary to left ventricular failure) होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. रियूमेटिक हर्ट डिजीज जैसे—मिट्रल स्टेनोसिस ।
३. फुप्फुस तथा पल्मोनरी ब्लड वेसिल्स के रोग जैसे—कोर पल्मोनेल ।
४. कंजेस्टिव हर्ट डिजीज जैसे—पल्मोनरी स्टेनोसिस ।
५. एम्फीसीमा (Emphysema) ।
६. फेफड़े में फाइब्रस धातु का बनना एवं संचय ।
७. चिरकालिक ब्रॉन्काइटिस (Chronic bronchitis) ।
८. ब्लड-प्रेशर के अधिक रहने से ।
९. पल्मोनरी इम्बोलिज्म ।
१०. कार्डियोमायोपेथी (Cardiomyopathy) ।
११. वेण्ट्रीकुलर टेकी-एरीथमिया (Ventricular tachyarrhythmia) ।

विकृति-विज्ञान (Pathology)—फेफड़े में रक्तभार (Blood pressure) बढ़ने से दक्षिण हृदय निर्बल हो जाता है । यदि वाम हृदय (Left ventricle) निर्बल हो जाय तो स्वतः दक्षिण हृदय के सामने अवरोध के बढ़ने से उसमें अति वृद्धि तथा शिथिलता आ जाती है । इससे दक्षिण हृदय आकार में बड़ा तथा स्थूल हो जाता है । इसके अतिरिक्त फेफड़े में फाइब्रोसिस होने तथा राइट वेण्ट्रीकल में टॉक्सिन के दुष्प्रभाव से अथवा कोरोनरी डिजीज के कारण फाइब्रोसिस अथवा फैटी डीजनरेशन की प्रतिक्रिया होने से दक्षिण हृदय में शिथिलता आ जाती है । दक्षिण हृदय के शिथिल होकर फैल जाने से ट्राइकस्पिड वाल्व या छिद्र भी कुछ चौड़ा हो जाता है, जिससे शिराओं में रक्त अधिक मात्रा में रुकने लगता है । जिसके परिणामस्वरूप पैरों में श्वयथु (Oedema) प्रकट हो जाता है ।

लक्षण (Symptoms)—१. एनोरेक्सिया (Anorexia) ।
२. ब्लॉटिंग अथवा एग्जर्सनल पेन ।
३. ओलीगूरिया (दिन के समय) ।
४. पोली यूरिया (रात के समय) ।
५. श्वासकष्ट (Dyspnoea)
६. वेनस प्रेशर का बढ़ना ।
७. शोफ (Oedema) ।
८. गैस्ट्रो-इण्टेस्टिनल तथा सेण्ट्रल नर्वस सिस्टम के लक्षण ।
९. कास (Cough) ।
१०. सायनोसिस ।
११. शय्या-श्वसन ।
१२. जलोदर (Ascites) ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ शरीर की शिराओं में रक्त के अधिक भर जाने तथा आस-पास के अवयवों में सोडियम तथा जल के अधिक रुक जाने से इस रोग के लक्षण होते हैं।

○ शरीर के विभिन्न भागों में रक्त का एकत्र होना इसका प्रधान लक्षण है। इसके अन्तर्गत—

१. शिरायें रक्त से भरी होती हैं। विशेषकर गर्दन की शिरायें फूली तथा स्पंदन युक्त (Pulsating) होती हैं। यह शिरायें रक्त से अधिक भरी हुई दीखती हैं। इस प्रकार से इनका सामान्य रक्तभार ५०-१४० M.M. होता है जो २५० तक हो जाता है।

२. यकृत् बढ़ जाता है। निदान की दृष्टि से 'यकृत् का बढ़ना' इस रोग का प्रधान लक्षण है। यकृत् को दबाने से पीड़ा होती है तथा यकृत् में स्पन्दन होता है। यकृत् के बढ़ने से रोगी के पेट में बेचैनी होती है।

३. प्लीहा में पोर्टल कंजेशन के कारण रक्त अधिक भर जाता है।

४. पाचन-संस्थान में रक्त इकट्ठा होने के कारण अजीर्ण, भूख की कमी, मितली (Nausea) तथा रक्तमिश्रित वमन होता है। भोजन के बाद पेट में भारीपन तथा मलबन्ध के लक्षण रहते हैं।

५. वृक्क के कार्य में विकृति होने के कारण मूत्र की मात्रा कम हो जाती है अर्थात् मूत्र कम बनता है। दिन के समय मूत्राल्पता (Oliguria) रहती है, किन्तु रात में मूत्राधिक्य (Nocturia) होता है।

○ इस रोग में मूत्र द्वारा न्यूनाधिक प्रोटीन निकलता रहता है। मूत्र में ग्रेनूलर कास्ट भी मिलते हैं। मूत्र का भार बढ़ा होता है तथा मूत्र गहरे रंग का होता है।

६. हृदय की विकृति के कारण सूजन पैरों से प्रारम्भ होती है। शनैः-शनैः सारा शरीर फूल जाता है।

७. हृदय की कमजोरी के कारण जब उदर में जल एकत्रित हो जाता है तब जलोदर (Ascites) के लक्षण मिलते हैं।

८. रोगी का साँस फूलता है तथा आक्षेप (Convulsions) आते हैं।

९. चिरकालिक ब्रॉन्काइटिस (Chronic bronchitis) के कारण ट्राइकस्पिड रेगर्जिटेशन हो जाने से हृदय-मन्दता का क्षेत्र दाहिनी ओर बढ़ जाता है।

१०. **मस्तिष्क सम्बन्धी लक्षण**—मस्तिष्क के सेलों को रक्त तथा ऑक्सीजन कम मिलने से उसका पोषण कम हो जाता है, जिससे बेचैनी, मानसिक विक्षोभ, एकाग्रता की कमी तथा तन्द्रा एवं निद्रा के लक्षण होते हैं।

११. **श्वासकृच्छ्रता**—रोगी की श्वास और प्रश्वास की गति तीव्र होती है तथा उथली-उथली होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ रोगी को खाँसी उठती है, जिसमें कठिनता से बहुत थोड़ा झागदार बलगम निकलता है।

○ चेहरे पर नीलाभ का विशेष लक्षण होता है जो नाक के सिरे, कानों तथा अँगुलियों में अधिक देखने को मिलता है।

○ थकावट हो जाने से श्रम-श्वास के लक्षण भी मिलते हैं।

नोट—○ 'श्वासकृच्छ्रता' तथा 'शोफ' (Oedema) इस रोग के प्रधान लक्षण हैं।

१२. **ईडिमा** (Oedema)—दिन के समय टाँगों की शिराओं में रक्त-भार अधिक रहता है, अतः उन स्थानों में शोफ हो जाता है। रात के समय यह शोफ घट जाता है। दिन के समय रोगी के पैर भारी हो जाते हैं। पहले यह भारीपन बाहों तथा पैरों में आता है। शोफ के बढ़ने पर रोगी का वजन बढ़ जाता है और 'डायोरेटिक औषधि' के प्रयोग से घट जाता है।

○ शोफ के बढ़ने पर अण्डकोषों, पेरीटोनियम, प्लूरा (विशेषकर दाहिनी तरफ) में और कभी-कभी हृदयावरण (Pericardium) में भी जल भर जाता है।

१३. **कार्डियक लक्षण**—(i) 'टेकीकार्डिया' अथवा 'कार्डियक एरीथमिया' के द्वारा हृदय की धड़कन (Palpitation) सम्बन्धी लक्षण मिलते हैं।

(ii) हृदयावरण (Pericardium) में भारीपन प्रतीत होता है।

१४. **शरीर की सूजन** (Swelling of body)—यह सर्वप्रथम गुल्फ (Ankle) पर उपस्थित होती है। जब रोगी पूरे दिन का काम समाप्त कर लेता है, तब यह लक्षण विशेषरूप से दिखलाई देता है। जूते और मोजे अधिक टाइट होने के कारण उनसे भी यह सूजन बढ़ जाती है।

चिह्न (Signs)—१. रेस्पिरेशन रेट तीव्र होती है।

२. नाड़ी (Pulse) तीव्र (Tachycardia) होती है।

३. श्यावता (Cyanosis) – सेण्ट्रल तथा पेरीफेरल श्यावता उपस्थित मिलती है।

४. गर्दन की शिराएँ उभरी हुई होती हैं।

५. 'पिटिंग टाइप' ईडिमा उपस्थित मिलता है।

परीक्षा (Examination)—१. **उदर-परीक्षा**—(i) उदर बढ़ा हुआ तथा स्पर्श में मुलायम होता है।

(ii) प्लीहा (Spleen) आसानी से अनुभव में नहीं आती है, परन्तु कभी-कभी कार्डियक सिरोसिस के कारण बढ़ी हुई मिलती है।

(iii) कुछ केसिस में जलोदर (Ascites) का चिह्न मिलता है।

२. **हृदय-परीक्षा**—हृदय के विभिन्न खण्ड बढ़े हुए मिलते हैं।

३. **लंग्स-परीक्षा**—वेसल क्रेपीटेशन उपस्थित मिलते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष अन्वेषण (Special investigation)—

१. वेनस-प्रेशर ऊँचा होता है।

२. भुजा से फेफड़े तक सरकुलेशन टांइम बढ़ा हुआ मिलता है।

३. एक्स-रे Chest में हृदय का बढ़ना दिखलाई देता है।

४. ई० सी० जी० (E. C. G.) में राइट वेण्ट्रीकुलर हाइपरट्रॉफी दिखलाई देती है।

५. चेस्ट स्कियाग्राम (Chest skiagram) में राइट वेण्ट्रीकल बढ़ा हुआ मिलता है।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—इस रोग का निम्न रोगों से विभेद करना चाहिए—

१. लिवर सिरोसिस।

२. वृक्कजनित ईडिमा (Oedema due to renal causes)।

३. हाइपोप्रोटीनीमिया (Hypoproteinaemia)।

४. लिम्फेटिक ऑब्स्ट्रक्शन (Lymphatic obstruction)।

चिकित्सा (Treatment)—१. रोगी को प्रॉप्ड-अप पोजीशन (Propped-up position) में शय्या पर विश्राम करायें।

२. ऑक्सीजन इन्हेलेशन—४–६ लीटर प्रति मिनट के हिसाब से नेजल कैथेटर द्वारा।

नोट—इसे 'वेण्टीमास्क' द्वारा सुँघाना अधिक उपयुक्त रहता है।

३. ℞ टेबलेट लेनोक्सीन (Tab. Lanoxin) अथवा कार्डियोक्सिन (Cardioxin)।

मात्रा—२ गोली प्रति ६ घण्टे पर ३ मात्रा तक।

तत्पश्चात्—१–२ गोली नित्य (नाड़ी की गति ८० बार प्रति मिनट के आसपास होने पर) सप्ताह में ६ दिन तक।

निर्देश—○ जो रोगी डिजोक्सिन (लेनोक्सिन) को सहन न कर सकें उन्हें—

℞ ओयाबेन (Ouabain) ०·२५ मि० ग्रा० को ५% ग्लूकोज के २० मिली० घोल में मिला कर I/V दें।

विषाक्तता (Toxicity)—○ डिजीटेलिस के प्रयोग से वमन, मितली तथा भूख की कमी आदि लक्षण हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में औषधि बन्द कर रोगी को पोटैशियम क्लोराइड अथवा साइट्रेट मुख द्वारा दें। साथ ही एट्रोपीन का इञ्जेक्शन ०·६ मि० ग्रा० (१/१०० ग्राम) S/C दें।

४. ℞ टेबलेट लासिक्स (Tab. Lasix) ४० मि० ग्रा० (हैक्स्ट)

अथवा—टेबलेट इसीड्रेक्स (Tab. Esidrex) ५० मि० ग्रा०

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१ गोली प्रातः खाली पेट ३ दिन तक। तत्पश्चात् १ गोली १ दिन छोड़कर ३ मात्राओं तक। तत्पश्चात् सप्ताह में १ गोली।

५. पोटैशियम सप्लीमेण्ट (Potassium chlor.) दिन में २ बार।

६. ℞ डायटिड (Dytide) अथवा एल्डाक्टिड (Aldactid)

मात्रा—२ गोली ३ बजे सायंकाल।

नोट—'डायटिड' के प्रयोग करते समय पोटैशियम सप्लीमेण्ट की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

यदि श्वासकृच्छ्रता (Dyspnoea) अधिक हो तो—

℞ १. ऑक्सीजन सुँघाएँ।

२. इन्जे० एमीनोफाइलिन ०.२५ ग्राम I/V दिन में २ बार ३ दिन।

तत्पश्चात्—दिन में १ बार ३ दिन तक।

अथवा—टेबलेट डेरीफाइलिन रिटार्ड (Tab. Deriphyllin retard)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

℞ हिप्नोटेक्स अथवा नाइट्रावेट (Nitravet) टे० रात में सोते समय।

गम्भीर अवस्था में (For severe failure)—

℞ हाइड्राजालीन (Hydrazaline)

व्या० नाम—नेप्रीसोल (Nepresol) २५ मि० ग्रा० की १ गोली

मात्रा—२०० मि० ग्रा० तक दिन में ३ बार।

अथवा—सालबूटामोल (Salbutamol)

मात्रा—४-१२ मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—उपरोक्त चिकित्सा-क्रम में सभी लक्षणों से युक्त चिकित्सा यथास्थान दी गई है, फिर भी सुविधा के लिए हम इसे यहाँ पुनः प्रस्तुत कर रहे हैं—

१. श्वासकृच्छ्रता (Dyspnoea) तथा श्यावता (Cyanosis) में—

℞ ऑक्सीजन इन्हेलेशन—४ लीटर प्रति मिनट के हिसाब से।

साथ ही—एमीनोफाइलिन २५० मि० ग्रा० ५% के ग्लूकोज घोल में २० मिली में मिलाकर I/V धीरे-धीरे दें।

२. शोफ (Oedema)—

℞ मर्सेलिल (Mersalil) २ मिली० I/M. प्रातःकाल नित्य ४-५ दिन तक। तत्पश्चात् १ दिन छोड़ कर।

इसके साथ ही—अमोनियम क्लोराइड मिक्श्चर रूप में दिन में ३ बार दें।

अथवा—पोट-क्लोर—२-२ चम्मच दिन में ३ बार।

○जब 'मर्सेलिल' से लाभ न मिले तब निम्न 'डायोरेटिक' का प्रयोग करना चाहिए—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

℞ हाइड्रोक्लोरोथियाजाइड (Hydrochlorothiazide)

व्या० नाम—इसीड्रेक्स, डाईक्लोट्राइड

मात्रा—५०-१०० मि० ग्रा० प्रातः ३-४ दिन तक।

तत्पश्चात्—२५-५० मि० ग्रा० २-३ सप्ताह तक।

अथवा—निओ नेकलेक्स (Neo-naclex)

मात्रा—२ गोली (.५ मि० ग्रा०) दें। तत्पश्चात् १ गोली (२·५ मि० ग्रा०) सप्ताह में केवल ३ दिन।

अथवा—नेवीड्रेक्स (Navidrex) १ गोली प्रति तीसरे दिन।

नोट—○ इन औषधियों के साथ पोटैशियम क्लोराइड १·५ ग्राम नित्य दें।

विशेष ज्ञातव्य—'लासिक्स' जो फूरोसेनाइड ग्रुप की उत्तम औषधि है, दक्षिण हृदयपात में विशेष लाभ पहुँचाती है।

३. **अनिद्रा की स्थिति** (Insomnia) में—

℞ फीनोबार्बीटोन ६० मि० ग्रा० दिन में २ बार।

अथवा—ट्राइक्लोफॉस (Triclofos) मिक्श्चर दें।

आल्टरनेटली—मेल्सेडीन (Melsedine)

मात्रा—१ गोली (१५० मि० ग्रा०) रात में सोते समय।

नोट—नमक का प्रयोग सभी अवस्थाओं में निषिद्ध है। आहार में भी १ ग्राम से अधिक नमक नहीं होना चाहिए।

चिकित्सा-निर्धारण (Treatment suggested for a mild to moderate CCF)—

१. डिजोक्सिन ०·२५ मि० ग्रा० १ गोली रोजाना सप्ताह में ६ दिन।

२. फूरोसेमाइड (Furosemide)—४० मि० ग्रा० की १ गोली प्रातः १ दिन छोड़कर।

३. ऑक्सीजन यदि प्राप्त हो सके।

४. नमक रहित आहार विशेषकर फल, फलों का रस, दूध, चाय, शाकों का सूप (Soups) बिना नमक का—प्रारम्भ के कुछ दिनों में।

५. एण्टीबायोटिक—यदि इन्फेक्शन की आशंका हो।

६. विटामिन्स सप्लीमेण्ट्स—'बी-कॉम्प्लेक्स' तथा 'सी'।

७. रोग के उत्पादक कारण की चिकित्सा—यदि मालूम हो सके।

८. रोग को बढ़ाने वाले कारणों (Precipitating factors) को नियन्त्रण में करें।

पूर्वानुमान (Prognosis)—○ प्रथम ६ माह में सबसे अधिक मृत्यु होती है। १ वर्ष के पश्चात् मृत्यु-दर १०% होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ यदि फेफड़े में शोफ अधिक न हो, रक्तभार विशेष न हो, गुर्दे अधिक निर्बल न हों, यकृत् अधिक बढ़ा न हो, ब्रॉन्को न्यूमोनिया न हो तो रोगी वर्षों जीवित रह सकता है।

पश्चात् चिकित्सा (After treatment)—१. इस चिकित्सा के अन्तर्गत रोगी को तब तक शय्या पर विश्राम देना चाहिए जब तक नाड़ी की गति ८० बार प्रति मिनट न हो जाय।

२. तत्पश्चात् रोगी को कुछ-कुछ बैठने की अनुमति देनी चाहिए। इसके बाद रोगी को टहलने का निर्देश दें।

३. रोगी को २४ घण्टे में केवल ९००–१२०० मिली० पानी का सेवन कराना चाहिए।

४. मूत्रल औषधि का सेवन।

५. हाथ-पैर की मालिश।

कार्डियक फेल्योर के रोगी की आहार-व्यवस्था—

१. सुबह के नाश्ते में—प्रातः ७ बजे—१ अण्डा + १ रोटी ३० ग्राम आटे की; साथ ही कुछ मक्खन, चाय, हलवा, दूध, फल का रस ४ औंस।

२. १० बजे—दूध के साथ चाय।

३. दोपहर का भोजन—

(i) मांसाहार अथवा मछली—२ औंस।

(ii) शाकाहार—हरी सब्जी + फल का रस ४ औंस।

४. ३-४ बजे चाय अथवा दूध के साथ ३० ग्राम आटे की रोटी, बिना नमक मिले थोड़े मक्खन के साथ।

५. रात्रि का भोजन—१ अण्डा, मांस या मछली, बिना नमक की हरी तरकारी, सलाद, ताजे फल, ३० ग्राम की १ रोटी, मक्खन १५ ग्राम तथा दूध १० औंस।

नोट—नमक के स्थान पर—

○ साल्ट सब्स्टीट्यूट (Salt substitute) लिया जा सकता है। इसमें से किसी एक का प्रयोग कर सकते हैं—१. फ्लेवोसाल (Flavosal), २. यूनीसाल्ट (Unisalt), ३. के-साल्ट (K-salt), ४. प्रोसोल (Prosol), ५. ट्राइट्रो-सिना (Titro-sina), ६. सेलोरा (Selora)।

○ कुछ-एक साल्ट इनमें से प्राप्त नहीं है। कुछ लोग इन्हें टेस्ट के कारण पसन्द नहीं करते हैं। अन्तिम २ साल्ट अधिक स्वादयुक्त (Palatable) हैं।

कार्डियक हर्ट फेल्योर के रोगी के लिए—

चिकित्सकीय दृष्टिकोण से—

१. ○ हृदय को निर्बल कर देने वाले भावों से बचाना ही इसकी चिकित्सा है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. जब रोगी को कोई संक्रामक रोग हो जाय, तब उसे अधिक समय तक विश्राम करायें।

३. फेफड़ों में जीवाणु-संक्रमण हो जाने पर एण्टीबायोटिक का प्रयोग आवश्यक है।

४. क्रोध, वाद-विवाद या मोटरकार आदि चलाने की जिम्मेदारी से बचें।

५. हृदय को पुष्ट करने वाला सुपाच्य पोषक आहार तथा हलका व्यायाम करें।

६. मलावरोध न होने दें। इसके लिए कभी-कभी कोई मृदुविरेचक औषधि देनी चाहिए।

७. पाण्डुता के लिए आयरन का सेवन कराना चाहिए।

८. भोजन करके दूर तक चलने, सीढ़ियों पर चढ़ने, अधिक भार उठानें अथवा अधिक मात्रा में चाय, मद्य, तम्बाकू, नमक आदि के सेवन से बचायें।

९. रोग-आक्रमण के पश्चात् कम से कम १ मास से कुछ अधिक शय्याबद्ध होकर विश्राम करना चाहिए। केवल मलत्याग और भोजन के बाद मुख धोने के लिए उठना चाहिए।

१०. २ सप्ताह बाद प्रतिदिन ½ घण्टे के लिए हाथ-पैर का मर्दन करें।

११. यदि सीधा लेटने में श्वासकृच्छ्रता हो तो सिर और कन्धे के पीछे बड़े-बड़े तकिये के सहारे लेटना चाहिए। अथवा हार्ड टेबुल पर झुककर पड़े रहना चाहिए। यदि शय्या-श्वास हो तो आरामकुर्सी पर लेटना चाहिए।

आवश्यक निर्देश—○ यदि शोफ की अधिकता हो और ब्लडप्रेशर घटा हुआ हो तो स्टेराइड्स (प्रेडनीसोलोन) १०० मि० ग्रा० प्रतिदिन अथवा पीटामेथासोन ०·५ मि० ग्रा० दिन में ३ बार देने से लक्षणों में लाभ मिलता है। इसके साथ ही मूत्रल औषधि अधिक सक्रिय हो जाती है।

हृदय फेल होने से बचाने के आवश्यक संकेत—

१. शरीर से बहुत अधिक रक्त निकल जाने अथवा रक्तसंचार में बाधा पड़ने के कारण हृदय फेल होने की पूर्ण सम्भावना रहती है। यदि रोगी का सिस्टोलिक प्रेशर ७० मि० मी० से भी कम रह जाये तो तत्काल ब्लड-ट्रान्स-फ्यूजन द्वारा रोगी को रक्त चढ़ायें।

○ रक्त बहने से उत्पन्न बेचैनी को दूर करने के लिए—

℞ मार्फीन १५ मि० ग्रा० I/M दें।

○ **साँस कठिनाई से आने पर हृदय फेल होने की स्थिति में—**

℞ निकेथामाइड (Nikethamide)

व्या० नाम—कोरामिन (Coramine) (सीबा गाइगी)।

मात्रा—३ मिली० I/M दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. बहुत अधिक ब्लडप्रेशर गिर जाने पर हृदय फेल होने की आशंका में—

℞ आइसोप्टीन (Isoptin) (बी० नॉल), नार-एड्रीनलीन

मात्रा—४ मि० ग्रा० (४ मि० ली० में) ग्लूकोज ५% सोलूशन नार्मल सैलाइन २५० से ५०० मिली० में मिलाकर २० बूंद प्रति मिनट के हिसाब से शनैः-शनैः I/V दें।

३. शरीर नीला होने पर—ऑक्सीजन सुंघायें।

४. साँस कठिनाई से आने पर—

℞ मार्फीन हाइड्रोक्लोराइड १५ मिग्रा० (१ मिली० में) I/M दें।

○ हृदय फेल होने की स्थिति में अथवा हृदय में दर्द होने पर रोगी को तत्काल विस्तर पर लिटाकर अस्पताल भिजवा देना चाहिए।

हृदय फेल होने में प्रयुक्त अन्य औषधियाँ—

१. एनाकार्डोन (Anacordone) (एलेन वरीज)

मात्रा—१५-६० बूंद जल में मिलाकर दिन में ३-४ बार।

२. रोनिकाल (Ronicol) (रोशे)

मात्रा—१-२ मिली० मांसपेशीगत। साथ ही इसी की १-३ गोली दिन में ३ बार दें।

३. कार्डियामिड (Cardiamid) (सिपला)

मात्रा—१-२ एम्पुल I/M दिन में २-३ बार।

४. कार्डियाजोल (Cardiazol) (नोल)

मात्रा—१ मिली० प्रति घण्टे पर I/M या S/C या I/V दें।

५. डिजीटॉक्सिन आर० बी० (Digitoxin R. B.) (रेप्टाकोस)

मात्रा—१-२ गोली दिन में १ या २ बार।

६. नियामीन (Niamine) (ईस्ट इण्डिया)

मात्रा—२५% २०-४० बूंद थोड़े जल में मिलाकर पिलायें। आवश्यकतानुसार दुबारा दें।

शीघ्र लाभ के लिए—२-८ मिली० इण्ट्रावीनस धीरे-धीरे दें।

७. कोरामीन (Coramine) (सीबा गाइगी)

मात्रा—१-२ मिली० I/M दें। आवश्यकतानुसार दुबारा दे सकते हैं।

शीघ्र लाभ के लिए—४ मिली० औषधि को ५० मिली० डेक्स्ट्रोज (२५% में) सोलूशन में घोल कर धीरे-धीरे I/V दें।

८. रेस्टिमुलेन (Restimulen) (सुहृदय गाइगी)

मात्रा—४·५–९ मिली० औषधि को २००-५०० मिली० आइसोटोनिक डेक्स्ट्रोज सोलूशन में मिलाकर I/V धीरे-धीरे ३० से ४५ मिनट में।

साथ ही—

रेस्टिमुलेन पर्ल १-२ अथवा २-४ बूंद दिन में २-३ बार दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. रोग की तीव्रता में—डिजॉक्सिन (Dizoxin)

मात्रा—१ एम्पुल को १० मिली० नार्मल सेलाइन में मिलाकर I/V दें।

१०. कोरामीन-एड़िनोसीन (Coramine adenosine) (सीबा-गाइगी)

मात्रा—½-१ गोली या ½-१ मिली० ड्राप दिन में ३ बार भोजन के साथ।

अथवा—कोरामीन एडिनोसीन इञ्जे०—१-२ मिली० S/C या I/M या I/V धीरे-धीरे दिन में कई बार।

११. एन्सोलाइसेन (Ansolysen) (M. B.)

मात्रा—१०-२० मि० ग्रा० गोली दिन में २-३ बार।

तीव्रावस्था में—०.५ से १ मि० ग्रा० औषधि को नार्मल सैलाइन या डेक्स्ट्रोज में मिलाकर I/V प्रति ५ मिनट पर धीरे-धीरे दें।

१२. कार्डेक्स (Cardex) (इथिको)

मात्रा—१-२ कैप्सूल ६-८ घण्टे पर।

१३. कार्डिओक्सिन (Cardioxin) (सैण्डोज)

मात्रा—०.२५ मि० ग्रा० की टेबलेट।

१४. डोपामिन इञ्जे० (Inj. Dopamine) (TTK Pharma)

हृद्वाहिका-संस्थान के रोग 3/9

हृत्शूल
(Angina Pectoris)

पर्याय—हृदयशूल, दिल का दर्द, हृदयशूल का रोग, इस्कीमिक डिजीज ऑफ द हर्ट, कोरोनरी हर्ट डिज़ीज, मायोकार्डियल इस्कीमिया, इस्कीमिक हर्ट डिजीज।

परिचय—It is a condition characterized by sudden onset of acute cardiac pain of short duration associated with physical efforts on the part of sufferer.

○ छाती के मध्य भाग में कुछ अन्तराल से होने वाली तीव्र प्रकार की वेदना को हृदयशूल (Angina pectoris) कहते हैं। यह शूल विशेष रूप से हृदय-प्रदेश से वाम स्कन्ध और वाम भुजा की ओर फैलता है। इस प्रकार का शूल प्रायः परिश्रम अथवा मानसिक असन्तुलन के बाद होता है।

○ इस रोग में हृदय में खिचावट उत्पन्न होकर अत्यन्त तीव्र प्रकार का दर्द होता है तथा साँस लेने में कष्ट होता है। ४५ वर्ष के पश्चात् यह रोग प्रायः स्त्रियों में अधिक होता है। इस रोग में हृदय-गति एकाएक बन्द होकर रोगी की मृत्यु हो जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण (Etiology)—१. यह रोग अधिक आहार ग्रहण करने के बाद निष्क्रिय बैठे रहने वालों में अधिक होता है; विशेषकर ४५ से ५० वर्ष के ऊपर के दिमागी कार्य करने वाले व्यक्तियों में। इसके विपरीत हीन आहार करने वाले ग्रामवासियों में यह सर्वथा नहीं होता।

२. मानसिक आवेश के समय अथवा सहसा शीत जाने से हृदय-पोषक धमनियों में स्पाज्म होकर भी ऐसा होना सम्भव है।

३. यह रोग जैतून, तिल, सोयाबीन, बादाम आदि के तेल की अपेक्षा जीवों के फैट खाने वालों में अधिक होता है।

४. शान्त प्रकृति के स्थूल व्यक्तियों की अपेक्षा विक्षोभशील प्रकृति के नाटे कद के स्थूल व्यक्तियों में यह अधिक होता है।

५. ३०–३५ वर्ष की आयु के व्यक्तियों में कोलेस्टरोल २६० मिली० प्रतिशत से ऊपर होने पर इस रोग के होने की अधिक सम्भावना रहती है। विशेषरूप से जब वह शारीरिक श्रम या व्यायाम न करता हो।

६. थायराइड ग्रन्थि की मन्दता में भी इसकी आशंका रहती है। अर्थात् जो अवस्थाएँ शरीर में मधुमेह या मिक्सीडीमा (Myxoedema) या मेदोवृद्धि अथवा गाउट (Gout) जैसे लक्षणों को उत्पन्न करती हैं, वे इस रोग को बढ़ाने वाली होती हैं।

७. समृद्ध देशों के व्यक्तियों में असमृद्ध व्यक्तियों की अपेक्षा यह अधिक होता है।

८. तम्बाकू इस रोग का प्रधान कारण है। जो व्यक्ति १५–२० सिगरेट प्रतिदिन पीता है, उनमें इसके होने की आशंका ४–५ गुना अधिक होती है।

○ ऐसे व्यक्तियों में रक्तभार भी अधिक हो और मेदोवृद्धि भी अधिक हो तो इस रोग के होने की अधिक सम्भावना रहती है।

९. माता-पिता में से यदि किसी को यह रोग हो चुका है तो सन्तान में भी इसके होने की आशंका रहती है। यदि उनमें मधुमेह भी हो तो यह आशंका और भी बढ़ जाती है।

१०. शाखाओं की मांसपेशियों पर जब कार्य-भार अधिक आ पड़ता है और उतनी मात्रा में उन्हें रक्त नहीं मिलता तब उनमें दर्द होने लगता है।

○ इसी प्रकार जब हृदय पर कार्यभार तो अधिक पड़े और उसे उचित मात्रा में रक्त न मिले तब उसमें भी दर्द हो जाता है। जैसे—सीढ़ियों पर चढ़ने या किसी भारी बोझ को उठाने या तीव्र आवेश के साथ बोलने अथवा वाद-विवाद करने तथा घबड़ाकर शीघ्रता में चलने पर।

११. हृदयशूल प्रायः हृदय रोग के अन्तर्गत धमनीकाठिन्य (Arterio-sclerosis) के कारण होता है। कभी-कभी यह बिना कारण के भी हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१२. सिफिलिस भी इसका एक कारण है। प्रायः मलेरिया, फ्लू, आमवात ज्वर (Rheumatic fever) आदि तीव्र रोगों के बाद भी उत्पन्न हो जाता है।

१३. यह रोग एक परिवार से दूसरे परिवार में भी संवाहित होता है।

१४. थायराइड चिकित्सा के पश्चात् तीव्र रक्ताल्पता (Acute anaemia) अथवा टेकीकार्डिया के कारण भी हृदयशूल की उत्पत्ति होती है।

नोट—○ अन्य उत्तेजक कारणों में अत्यधिक व्यायाम जिसमें हृदय पर दबाव पड़ता है तथा शीत लगने, मानसिक परिश्रम तथा उद्वेग, गरिष्ट भोजन, अधिक तम्बाकू का सेवन आदि प्रधान है। जिसके कारण कोरोनरी आर्टेरीज में स्पाज्म उत्पन्न होकर आकर्षी हृदयशूल (Spasmodic angina) की उत्पत्ति होती है।

संक्षेप में रोग के कारण—१. रक्त में कोलेस्टरोल की वृद्धि।
२. प्लेटलेट्स में चिपचिपेपन की उत्पत्ति।
३. प्लाज्मा में फाइब्रीनोजेन की वृद्धि और फाइब्रिनोलिसिस की मन्दता।
४. मेदोवृद्धि (Obesity)।

एक्साइटिंग कारण (Exciting causes)—
१. रक्त-भार में वृद्धि (Hypertension)।
२. मधुमेह, मेदोवृद्धि।
३. मानसिक आवेश, प्रबल तनाव तथा अधिक श्रम।

लक्षण (Symptoms)—**पूर्वरूप**—१. हृदयशूल के वेग के १–२ दिन पूर्व रोगी को हृदयशूल के हलके-हलके वेग आते हैं तथा तबीयत कुछ गिरी-गिरी-सी लगती है। विश्रामावस्था में पड़े हुए रोगी में भी हलके वेग आते हैं।

२. बाद में ऐसे ५०-७० वर्ष के व्यक्तियों में जिनका रक्त-भार बढ़ा होता है और हृदयशूल के वेग आते रहे हैं तथा अजीर्ण जैसे लक्षण होते रहे हैं; आराम से पड़े हुए ऐसे रोगी में हृदय मांस में इन्फार्क्ट होकर सहसा तीव्र एवं असह्य हृदयशूल होता है।

हृदयशूल—हृदयावरण (Pericardium) से पीड़ा वाम स्कन्ध और वाम भुजा की दिशा में फैलती है। अर्थात् यह शूल स्टर्नम के मध्य अथवा अधिकतर निम्न भाग के पीछे होता है अथवा वाम बाहु या दोनों बाहुओं में अँगुलियों तक या ऊपर कन्धों में अधो हनु और ग्रीवा तक प्रसरण करता है अथवा दोनों स्केपुला के बीच के प्रदेश तक जाता है।

शूल की विशेषता—१. यह सभी शूलों में प्रबलतम शूल होता है। यह क्रमशः बढ़कर निरन्तर मिनटों या घण्टों तक बना रहता है। आधे घण्टे तक यह विशेष रूप से रहता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. शूल अत्यन्त वेदनाजनक होता है, जब कि साधारण शूल १-२ मिनट ही रहता है।

३. रोगी को अपनी छाती में ऐसा प्रतीत होता है जैसे वह एक शिकंजे में कसी जा रही हो, भींची जा रही हो, दबाई जा रही हो अथवा कुचली जा रही हो या पीसी जा रही हो।

४. रोगी शान्त एवं निश्चल न रहकर अत्यन्त बेचैन होता है।

५. थोड़े से परिश्रम अथवा कुछ ही दूर चलने मात्र से हृदयशूल (Angina of effort) तीव्र हो जाता है। इसी प्रकार से यह शूल करवट बदलने में तीव्र हो जाता है। यह शूल विश्रामकाल में शान्त रहता है।

६. आकर्षीशूल (Spasmodic angina) परिश्रम या विभिन्न प्रकार का व्यायाम न करने पर भी अर्थात् विश्राम काल में ही उत्पन्न हो जाता है।

७. कभी-कभी परिश्रम के उपरान्त हृदयशूल (Angina of effort) तथा आकर्षी हृदयशूल (Spasmodic angina) एक के बाद एक तथा साथ-साथ भी उत्पन्न हो जाते हैं।

८. आकर्षीशूल (Spasmodic colic) में यह विशेषता होती है कि उक्त शूल केवल विश्राम से ही दूर नहीं होता है। जब तक कोई पीड़ानाशक औषधि नहीं दी जाती तब तक यह शान्त नहीं होता है।

९. कभी-कभी आकर्षीशूल मानसिक उद्वेग (Mental excitement) से भी उत्पन्न हो जाता है, जैसे—सायरन सुनने से, अधिक शीत लगने अथवा गरिष्ट भोजन करने से।

१०. आकर्षीशूल (Spasmodic angina) स्टर्नम के पीछे मध्य रेखा से प्रारम्भ होकर बायें कन्धे की ओर तथा बायें बाहु की दिशा में प्रसारित होता है। कभी-कभी यह शूल केवल जबड़े तक ही सीमत रहता है तथा दाहिने पार्श्व की ओर प्रसारित हो जाता है।

○ इस प्रकार से उक्त शूल कभी-कभी उरोस्थि प्रवर्ध (Xyphoid process), इपिगैस्ट्रियम जिसको एब्डामिनल एञ्जाइना कहते हैं, बाहु की धमनियों में भी प्रतीत होता है।

११. हृदयशूल की एक अपनी विशेषता होती है कि यह शूल काफी तीव्र तथा लगातार होता है, परन्तु यह शूल थ्रोविंग (Throbbing) रूप का नहीं होता है।

१२. शूल की अवधि कुछ सेकेण्ड से लेकर कुछ मिनटों तक रहती है। कभी-कभी सतत हृदयशूल (Status anginosus) की स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है, जिसके अन्तर्गत हृदयशूल के एक के बाद एक वेग आते रहते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३. ○ एक विशेष प्रकार का हृदयशूल और होता है जिसमें रोगी को एकाएक मृत्यु सामने दिखलाई देती है। इसमें रोगी स्तब्ध तथा श्वेत हो जाता है।

○ इसके आक्रमणकाल में रोगी को लार अधिक आती है अथवा वमन होता है। वेग से वायु निकलने अथवा अधिक मूत्र-त्याग के बाद यह दूर हो जाता है। इस अवस्था को एञ्जाइना साइने डोलोरे कहते हैं।

नोट—पीड़ा की विशेषता यह है कि इसका आक्रमण उस समय होता है जब व्यक्ति जल्दबाजी कर रहा होता है। आराम के साथ काम करते समय इस पीड़ा का दौरा नहीं पड़ता।

उक्त प्रकार के शूल के परिणामस्वरूप—१. पीड़ित रोगी को वमन भी बार-बार होता है तथा श्वासकष्ट का लक्षण भी हो सकता है।

२. रोगी का चेहरा भय एवं चिन्ता से ग्रसित होता है तथा फीका एवं श्वेत स्वेद से युक्त होता है।

३. इस रोग में रोगी अपने को अत्यधिक निर्बल अनुभव करता है।

४. रोगी को मरते समय तक कष्ट होता रहता है। उसे ऐसा प्रतीत होता है कि उसका अन्त सन्निकट है।

५. कभी-कभी रोगी को पेट में दर्द उठता है। साथ ही वमन के भी वेग होते हैं। ऐसी अवस्था में पेप्टिक अलसर का भ्रम हो जाता है।

६. नाड़ी की गति तीव्र, अस्पष्ट, अति निर्बल अर्थात् स्वल्प (टिक-टेक किस्म की) होती है। नाड़ी की गति १०० के लगभग एवं विषम होती है।

७. श्वासगति मन्द पड़ जाती है।

८. स्तब्धता के लक्षण जैसे—ठंडा पसीना, बेचैनी आदि दिखलाई पड़ते हैं।

९. पीड़ा की अवधि अधिकतर ४–५ मिनट होती है।

१०. कुछ देर विश्राम करने पर प्रायः पीड़ा शान्त हो जाती है।

११. हृदय सम्बन्धी कोई स्पष्ट विकृति नहीं मिलती है।

१२. भुजा में पीड़ा के स्थान पर दाब-वेदना के कई बिन्दु या प्रदेश पाये जाते हैं।

१३. इस रोग में रोगी का गला घुटता-सा प्रतीत होता है।

१४. कई एक रोगियों में पीड़ा न होकर केवल सीने में भारीपन या दबाव प्रतीत होता है।

आघात प्रधान हृदयशूल—

१. इस प्रकार के शूल में रोगी बैठा-बैठा नीचे लुढ़क जाता है और तुरन्त मर जाता है। अथवा किसी-किसी व्यक्ति को निर्बलता, शिरोभ्रम, अरुचि, मूर्च्छा, वमन, शीतलता, हाथ-पैरों का ठंडा होना आदि लक्षण हो जाते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. रोगी को ऐसा लगता है कि उसकी मृत्यु से निकट है। उसकी नाड़ी निर्बल एवं तीव्र तथा रक्तभार व तापमान गिरा हुआ होता है। कुछ घण्टों के बाद उसका तापक्रम पुनः बढ़ने लगता है।

३. शॉक के कारण रोगी को मूत्राघात (Anuria) हो जाता है।

४. रोगी के वाम हृदय-दौर्बल्य (Left heart failure) का भी लक्षण मिलता है।

शूल का वेग शान्त हो जाने पर—

१. छाती में हलके दर्द की प्रतीति कुछ घण्टों तक बनी रहती है।

२. २४ घण्टे बाद १००° फा० के लगभग ज्वर भी हो जाता है, जो २–४ दिनों में शान्त हो जाता है।

निदान (Diagnosis)—१. ○ उपरोक्त लक्षणों के आधार पर विशेष कर रिट्रोस्टर्नल अथवा बाईं तरफ दाबयुक्त शूल होता है, जो परिश्रम के समय एकाएक उत्पन्न होता है और एक निश्चित प्रारूप में प्रवाहित होकर विश्राम के उपरान्त शान्त हो जाता है।

२. **इलेक्ट्रिक कार्डियोग्राम**—E. C. G. लेने पर ७०% रोग का निदान हो जाता है। ३०% के लगभग ई० सी० जी० में कोई विशेष परिवर्तन नहीं मिलता है।

३. प्रायः रोगी की नाड़ी अप्रभावित रहती है, परन्तु कभी-कभी यह मन्द पड़ जाती है।

४. रोगी का रक्तचाप (Blood pressure) बढ़कर २४० मिलीमीटर हो जाता है।

५. तापक्रम नार्मल से कम मिलता है।

नोट—○ इस रोग की पहचान यह है कि पीड़ा के समय रोगी ग्लाइसराइल ट्राइनाइट्रेट की गोली जीभ के नीचे रखकर चूसने लगे तो कुछ ही मिनटों में यह पीड़ा शान्त हो जाती है।

चिरकालिक रोगी (Chronic patient)—एञ्जाइना की पीड़ा का आक्रमण वर्षों तक होता रह सकता है। कुछ समय पश्चात् ऐसी भी स्थिति आ सकती है कि विश्राम की अवस्था में भी पीड़ा होने लगे। विशेषकर जबकि रोगी किसी कारण से बहुत उत्तेजित हो अथवा अत्यन्त मानसिक तनाव से ग्रसित हो।

गम्भीर अवस्था (Severe stage)—○ यदि एञ्जाइना के किसी पुराने रोगी में पीड़ा कुछ मिनटों की न होकर अधिक समय तक रहने लगे और साथ ही अधिक पसीना आने लगे तो समझना चाहिए कि स्थिति गम्भीर है। ऐसा व्यक्ति कोरोनरी थ्रोम्बोसिस अर्थात् मायोकार्डियल इन्फार्कशन का रोगी हो चुका है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—एञ्जाइना पेक्टोरिस का निम्न रोगों तथा अवस्थाओं से भेद करना चाहिए—

१. कोरोनरी थ्रोम्बोसिस ।
२. डायाफ्राग्मेटिक हर्निया ।
३. ग्रासनलिका आकर्ष (Oesophagea spasm)
४. बिलियरी तथा इण्टेस्टाइनल कॉलिक ।
५. वाम शोथयुक्त शूल ।
६. इण्टरकोस्टल पेन ।

उपद्रव (Complications)—१. हाइपोस्टेटिक न्यूमोनिया ।
२. कंजेस्टिव हर्ट फेल्योर ।
३. एरीथमिया (Arrhythmia) ।
४. वाम हृदय रक्तार्बुद (Left ventricular aneurism) ।
५. पल्मोनरी ईडिमा ।
६. सेरिब्रल हीमोरेज या थ्रोम्बोसिस ।
७. संक्रमण के पश्चात् कोरोनरी थ्रोम्बोसिस ।

नोट—○ रोगी के प्रथम संक्रमण की अवस्था में ही मृत्यु हो जाती है । इसके विपरीत किसी-किसी में संक्रमण की पुनरावृत्ति होती है और क्रमशः हृत्पेशी (Myocardium) में कमजोरी आ जाती है ।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. २५% रोगी १ सप्ताह के अन्दर-अन्दर ही मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं ।

२. रोग का दूसरा आक्रमण होने पर ५०% रोगियों की मृत्यु हो जाती है ।

३. यदि रोगी २–३ दिन तक बच जाता है तो प्रायः वह ठीक हो जाता है ।

४. रोगी की मृत्यु वेण्ट्रीकुलर फिब्रिलेशन शॉक तथा पल्मोनरी ईडिमा से होती है ।

५. अति स्वेद तथा श्वासकृच्छ्रता इस रोग का दुर्लक्ष है ।

○ अध्ययन से यह देखा गया है कि हृत्शूल के कारण मृत्युदर ५ वर्ष है । अर्थात् ३–४ प्रतिशत प्रतिवर्ष है ।

○ इससे ग्रसित प्रायः आधे रोगी मर जाते हैं ।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) पीड़ा के आक्रमण के समय—

१. दर्द प्रतीत होते ही लेट जाना चाहिए । दर्द शान्त होने पर भी कुछ समय तक आराम करना चाहिए ।

२. आक्रमण के बाद ३–४ सप्ताह तक शय्या पर पूर्ण विश्राम आवश्यक है ।

औषधि चिकित्सा—

℞ टेबलेट ग्लाइसराइल ट्राइनाइट्रेट ०·५ मि० ग्रा०

ब्रा० नाम—टेबलेट एञ्जाइसेड (Tab. Angised) (B. W.)

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रयोग—शूल प्रकट होते ही जीभ के नीचे टेबलेट रखें। इससे लगभग २–३ मिनट में शूल शान्त हो जाता है।

नोट—जब तक शूल शान्त न हो जाय एक-एक गोली जीभ के नीचे रखकर प्रति ५ मिनट के अन्तर पर चूसते रहें। जितनी गोली की आवश्यकता हो प्रयोग की जा सकती है।

अथवा—टेबलेट सौरबाइड नाइट्रेट १० मि० ग्रा०

व्या० ना०—टेबलेट सोरबीट्रेट (Tab. Sorbitrate)

मात्रा—½–१ गोली जीभ के नीचे रखकर चूसनी चाहिए। ५ मिनट के पश्चात् पुनः गोली आवश्यकतानुसार दर्द शान्त होने तक ली जा सकती है।

अथवा—एमिल नाइट्रेट (Amyl nitrate) ३–५ बूंद कैप्सूल में आता है। इसे रूमाल में तोड़ कर सूँघना चाहिए।

नोट—यदि उपरोक्त औषधियाँ तत्काल न मिल सकें तो—

℞ अल्कोहल अर्थात् ब्रॉण्डी या व्हिस्की अथवा कार्मीनेटिव मिक्श्चर १ औंस (३० मिली०) पिला देने से यही लाभ होता है।

अथवा—℞ मॉर्फीन सल्फ (Morphine sulph)

मात्रा—१५ मि० ग्रा० S/C दें।

अथवा—टेबलेट कॉम्पोज (Tab. Compose)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

इण्डेराल टेबलेट (Inderal tab.) ४० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—टेबलेट पेरीट्रेट (Tas. Peritrate)

मात्रा—१ गोली प्रतिदिन।

नोट—लेफ्ट वेण्ट्रीकुलर फेल्योर की स्थिति में—प्रोपेनोलोल (इण्डेराल) का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

निर्देश—१. धूम्रपान का पूर्ण निषेध करें।

२. रोगी का मोटापा आहार तथा व्यायाम से घटायें।

३. 'हाइपर लिपीडेमा' को रोकने के लिए—एट्रोमिड-एस २ गोली दिन में ३ बार दें।

४. अनीमिया तथा हाइपरटेन्शन को दूर करें। मधुमेह का निराकरण आवश्यक है।

(२) **शूल शान्त होने पर**—

℞ टेबलेट आइसोसोर्बिड डाइनाइट्रेट १० मि० ग्रा०

व्या० नाम—टेबलेट आइसोर्डिल (Tab. Isordil)

मात्रा—१ गोली दिन में ३–४ बार। इस गोली को निगल कर ऊपर से पानी पीना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—टेब० पैण्टाएरीथ्रीटोल टेट्रानाइट्रेट ८० मि० ग्रा०

व्या० नाम—टेबलेट पैरीट्रेट एस० ए० (Tab. Peritrate S. A.)

मात्रा—१ गोली प्रातः खाली पेट तत्पश्चात् दूसरी टेबलेट १२ घण्टे बाद रात्रि के समय।

नोट—○ इस औषधि का प्रयोग 'हृदयशूल' की रोग-निरोधी चिकित्सा में बहुत अधिक होता है।

○ इसकी मात्रा १२ घण्टे बाद दुहरानी पड़ती है, जो कि इसकी एक विशेषता है।

निषेध—१. हृदयरोध-गलन (Myocardial infarction) में इसका प्रयोग न करें।

२. ग्लाइकोमा के रोगी में प्रयोग करते समय रोगी पर बराबर दृष्टि रखें। लक्षण बढ़ने पर इसका प्रयोग तत्काल बन्द कर दें और इसके स्थान पर अन्य किसी औषधि का प्रयोग करें।

बचाव हेतु चिकित्सा (Prophylactic treatment or prevention of anginal attack)—

℞ सोरबीट्रेट (Sorbitrate) १० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में २-३ बार।

अथवा—प्रेनीलामीन लेक्टेट (Prenylamine lactate)

व्या० नाम०—सेगॉण्टिन (Segontin) (हैक्स्ट)

मात्रा—१ गोली दिन में २-३ बार मुख द्वारा।

अथवा—वेरापामिल (Verapamil)

व्या० नाम—आइसोप्टिन (Isoptin) १०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—प्रोपेनोलोल (Propranolol) २० मि० ग्रा०

व्या० नाम—इण्डेराल, सिप्लार (Inderal, Ciplar)

मात्रा—१ गोली दिन में ३-४ बार।

नोट—यह टेबलेट हर्ट-रेट तथा ब्लड-प्रेशर को ठीक करती है, पर इससे 'ब्रॉन्कोस्पाज्म' उत्पन्न हो जाता है।

चिरकालिक रोगी में (In chronic case)—

℞ ऑक्सीफ्रेडीन हाइड्रोक्लोराइड ८ मि० ग्रा०

व्या० नाम—इल्डामेन (Ildamen)

मात्रा—१ गोली दिन में २-३ बार।

मेण्टेनेन्स मात्रा—१ गोली नित्य प्रातःकाल।

ग्लिसरिल ट्राइनाइट्रेट ०.५ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली जीभ के नीचे रखें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानसिक तनाव के रोगियों में—

℞ मेप्रोबेमेट २०० मि० ग्रा०+इक्वानाइट्रेट १० मि० ग्रा० दें।

एञ्जाइना पेक्टोरिस के बचाव की नवीनतम चिकित्सा-विधि—

(१) एञ्जाइना कार्डियक फेल्योर—

१. ○ डायोरेटिक या डिजीटेलिस अथवा दोनों का साथ-साथ प्रयोग।

○ पूर्ण विश्राम (Complete rest)।

२. नाइट्रोग्लिसरीन (Nitroglycerine)।

मात्रा—०·३–०·६ मिग्रा० जीभ के नीचे तत्काल अनुभूति की स्थिति में।

(२) लांग एक्टिंग नाइट्रेट (Long acting nitrate)—

℞ आइसो सोरबिड डाइनाइट्रेट

व्या० नाम—आइसोर्डिल (Isordil), सोरबीट्रेट (Sorbitrate)

मात्रा—२·५–१० मि० ग्रा० जीभ के नीचे दिन में ३ या अधिक बार।

अथवा—१०-४० मि० ग्रा० दिन में ४ बार मुख द्वारा।

(३) बीटा-ब्लॉकिंग एजेण्ट्स (Beta-blocking agents)—

℞ प्रोप्रेनोलोल (Inderal) १०-८० मि० ग्रा० दिन में ३-४ बार।

मेटोप्रोलोल (Metoprolol or Lopressor)—५० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

नेडोलोल (Cargard)—४० मि० ग्रा० दिन में १ बार।

एटीनोलोल (Tenormin)—५०–१०० मि० ग्रा० दिन में १ बार।

पिण्डोलोल (Visken)—५–१० मि० ग्रा० दिन में २ बार।

अथवा—टिमोलोल (Blocadren)—१०-२० मि० ग्रा० दिन में २ बार।

निर्देश—इनमें प्रत्येक औषधि की मात्रा सहनशक्ति के अनुसार बढ़ाई जा सकती है।

(४) कैल्शियम इण्ट्री-ब्लॉकिंग एजेण्ट्स—निफेडोपीन (Nifedipine), वेरापेमिल (Verapamil) तथा डिल्टियाजेम (Diltiazem)—ये एञ्जाइना में प्रमुख भूमिका अदा करते हैं।

सावधानी रखें—विशेषकर जब बीटा-ब्लॉकिंग एजेण्ट्स के साथ प्रयोग किया जा रहा हो।

(५) सामान्य प्रबन्ध (General measures)—○ जो कारण एञ्जाइना के अटैक को उत्पन्न करते हो; उन सभी आदतों तथा कार्य-प्रणालियों को त्याग देना चाहिए। समवस्थित (Coexisting) विकारों विशेषकर अनीमिया अथवा कार्डियक एरीथमियाज की चिकित्सा करनी चाहिए। क्योंकि यह कार्डियक इस्केमिक हर्ट डिजीज को बढ़ाते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ एन्जाइना के अधिकांश रोगी शय्या पर लम्बे समय तक विश्राम करना नहीं चाहते हैं, किन्तु इसमें विश्राम करना लाभकारी होता है। इसके साथ ही मानसिक विश्राम (Relaxation) अति आवश्यक होता है। स्थूल रोगियों का आहार कम करके शरीर के वजन को नार्मल अथवा हलके सब-नार्मल अवस्था में लाना चाहिए।

○ तम्बाकू का पीना बन्द कर देना चाहिए। धूम्रपान के द्वारा वेण्ट्रीकुलर एरीथमियाज अवक्षेपित (Precipitate) होती हैं और कोरोनरी डिजीज से रोगी की मृत्यु हो जाती है।

○ नियमित व्यायाम करायें।

(६) **सेडेटिव्स अथवा ट्रैंक्वीलाइजर** (Sadatives or Tranquilizers)—यह आक्रमण को कम करती है और बार-बार होने वाले शूल में लाभ होता है।

(७) **ओरल वेसोडाइलेटर थेरापी** (Oral vasodilator therapy)—जैसे—हाइड्रालाजीन (Hydralazine) तथा डायोरेटिक थेरापी साथ में अथवा अकेले। ओरल नाइट्रोग्लिसरीन, लाँग एक्टिंग नाइट्रेट अथवा कैल्शियम इण्ट्री-ब्लॉकिंग ड्रग्स आदि सहायता पहुँचाती हैं। परन्तु इन सब पर अभी विशेष अनुसन्धान जारी है।

(८) एरीथमीयाज पर नियन्त्रण करें।

(९) अति लिपिडरक्तता (Hyperlipidemia) पर भी नियंत्रण करना चाहिए।

(१०) हाइपरटेंशन पर नियन्त्रण करें।

रोगी के सम्बन्ध में आवश्यक निर्देश—

१. एन्जाइना पेक्टोरिस के सम्भावित रोगी को 'एन्जीसिड' (Angisid) टेबलेट हमेशा अपने पास रखनी चाहिए। जैसे ही पीड़ा उत्पन्न हो, तुरन्त एक टेबलेट जीभ के नीचे रख कर धीरे-धीरे उसका रस चूसना चाहिए। ३-४ मिनट में पीड़ा समाप्त होते ही बाकी टेबलेट थूक देनी चाहिए।

२. परिश्रम अथवा स्त्री-सम्भोग के पूर्व एहतियात के रूप में ४-५ मिनट पहले १ टेबलेट जीभ के नीचे रख लेनी चाहिए।

३. एक दिन में बिना किसी भय के २० टेबलेट तक ली जा सकती है।

चेतावनी—इस टेबलेट को कभी चबाना अथवा पानी के साथ निगलना नहीं चाहिए।

○ **एन्जाइना पेक्टोरिस में प्रयुक्त एक अन्य विशिष्ट चिकित्सा-क्रम—**

स्टेबिल एन्जाइना (Stable angina)—

℞ सोरबीट्रेट (Isordial) १० मि० ग्रा० की गोली

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक।

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्पश्चात् – १ गोली दिन में ३ बार भोजन से पूर्व।

℞ क्रोसिन (Crocin) अथवा नोवाल्जिन टेबलेट

मात्रा—½-१ गोली दिन में ३ बार यदि 'सोरबीट्रेट' से शिरःशूल उत्पन्न हो।

℞ इण्डेराल अथवा सिप्लार अथवा वेटनाओल टे० ४० मिग्रा० की गोली

मात्रा—½ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—मेट्रोप्रोलोल (Metroprolol) ५०–१०० मि० ग्रा० दिन में २ बार।

अथवा—स्लो-ट्रान्सीकोर (Slow transicor) १६० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में केवल १ बार।

नोट—टेकीकार्डिया अथवा उच्च रक्तदाब से युक्त हृत्शूल में विशेष लाभकारी है।

डायजीपाम (Diazepam) अथवा लार्पोज (Larpose) २ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

○ तीव्र स्वरूप के चेस्ट पेन तथा डिस्-कम्फर्ट में—

℞ एञ्जीसिड टे० (Angised tab.) अथवा आइसोर्डिल (Isordil)

मात्रा—५ मि० ग्रा० की १ गोली जीभ के नीचे।

○ यदि १ गोली से लाभ न हो तो २ गोली प्रति पाँच मिनट पर दें। यदि फिर भी लाभ न हो तो रोगी को विश्राम करायें और 'हृदयरोग-चिकित्सक' (Cardiologist) के पास भेज दें।

अथवा—निफेडीपीन (Nifedipine) १०० मि० ग्रा०।

यदि हाइपर लिपीडिमिया हो तो—

१. शरीर का वजन घटायें।

२. फैट का लेना बन्द कर दें।

३. कोलेस्टरोल विशेषकर अण्डे न लें।

४. चिन्तारहित हों।

साथ ही—क्लोफीब्रेट (Clofibrate) एट्रोमिड-एस० अथवा लिपोमिड २ गोली दिन में ३ बार।

निषेध—१. धूम्रपान न करें।

२. टहलना अथवा भोजन के तत्काल बाद कार्य न करें।

नोट—'हाई ब्लडप्रेशर' तथा डायबिटीज को कण्ट्रोल में करें। ४ सप्ताह बाद १ मील तक टहलें।

रेसिस्टेण्ट एञ्जाइना में (Resistant angina)—

○ यदि उपरोक्त चिकित्सा-व्यवस्था असफल हो तो—

℞ निफेडीपीन (Nifedipine) १० मि० ग्रा०

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

अथवा—टेबलेट वेरापामिल (Tas. Verapamil) ४० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

टेबलेट सोरबीट्रेट (Tab. Sorbitrate)

मात्रा—१० मि० ग्रा० प्रति ४ घण्टे पर।

अथवा—टेबलेट इल्डामेन (Tab. Ildamen)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—टेबलेट डिलाजेप (Tab. Dilazep)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—टेबलेट पेक्सिड (Tab. Pexid)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार। इसे दिन में ३ बार भी दे सकते हैं।

साथ ही—उपरोक्त चिकित्सा के साथ ही साथ 'नाइट्रोग्लिसरीन आइण्टमेण्ट २% छाती पर १ इंच के दायरे में रात्रि के समय मलें।

○ घर पर १० सप्ताह तक विश्राम करें।

नॉक्टर्नल एञ्जाइना (Nocturnal angina)—

यदि बुरे स्वप्नों के कारण हो तो—

℞ हिप्नोटेक्स टेबलेट (Hypnotex tab.)

मात्रा—१ गोली रात में सोते समय।

अथवा—टेबलेट डायजीपाम (Tab. Dizepam)

मात्रा—५ मि० ग्रा० की गोली रात में सोते समय।

यदि प्रारम्भिक कार्डियक डीकम्प्रेशन के कारण हो तो—

℞ लेनोक्सिन (Lanoxin)

साथ ही—इसीड्रेक्स अथवा लासिक्स का प्रयोग करें।

प्रारम्भिक इन्फार्क्शन एञ्जाइना (Pre-infarction angina) में—

रोगी को पूर्ण विश्राम दें अथवा चिकित्सालय में भर्ती करा दें। साथ ही 'मायोकार्डियल इन्फार्क्शन' की तरह चिकित्सा करें।

℞ टेबलेट सोरबीट्रेट (Tab. Sorbitrate)

मात्रा—१ गोली प्रति ३ घण्टे पर।

नेफेडीपीन (Nifedipine) १० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—वेरापामिल (Verapamil)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

टेबलेट प्रोप्रानोलोल (Tab. Propranolol) ४० मि० ग्रा०

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार।

टेबलेट परसेण्टिन (Tab. Persantin) १०० मि० ग्रा०

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

टेबलेट डिस्प्रन (Tab. Disprin)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

नोट—यदि ७२ घण्टे तक आराम न मिले तो कोरोनरी बाइपास सर्जरी (Coronary bypass surgery) पर विचार करना चाहिए।

वेरीएण्ट एञ्जाइना (Varient angina)

'कोरोनरी एञ्जियोग्राफी' के लिए निर्देश दें।

(i) एञ्जाइना शूल का पुनराक्रमण होने पर यदि कोई ऑब्स्ट्रक्टिव लीजन न हो तो—

℞ सोरबीट्रेट या आइसोर्डिल १० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ४ बार।

नोट—'बी-ब्लॉकर्स' का प्रयोग न करें।

(ii) यदि कोरोनरी एथीरोस्क्लेरोटिक ऑब्स्ट्रक्शन तथा रिपीटेड कोरोनरी स्पाज्म का एपीसोड्स हो तो—

'कोरोनरी वाइपास सर्जरी' अथवा एञ्जियोप्लास्टी अपनायें।

हृदय-पीड़ा की मिश्रित चिकित्सा (Combined therapy)—

१. ℞ पैरीट्रेट एस० ए० (वार्नर) १ गोली
गार्डीनल ३० मि० ग्रा० (एम० बी०) १ गोली
१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा तत्काल दौरे के समय दें। १२ घण्टे बाद पुनः खाली पेट ताजे जल से दें।

२. ℞ सिप्लार १० मि० ग्रा० टेबलेट (सिप्ला) १ गोली
लार्जेक्टिल १० मि० ग्रा० (एम० बी०) १ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार जल से। १ मात्रा।

३. ℞ कार्डीलेट ५ मि० ग्रा० की टे० (वरोज वेल्कम) १ गोली
मिल्टान (कार्टर वालेस) ½ गोली
ऐसी एक मात्रा तत्काल पीड़ा के समय दें। १ मात्रा।

४. ℞ एंञ्जीसिड (Angised) (बी० डब्लु०) १ गोली
बेटानॉल (M. M. labs) १० मि० ग्रा० १ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार जल से दें। १ मात्रा।

५. ℞ आईसोप्टिन (बी० नॉल) १ गोली
आइसोरडिल (जी० मैनर्स) १ गोली
१ मात्रा।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों को पीस कर ऐसी १ मात्रा प्रति घण्टे पर जल से।

साथ ही तीव्र हृदयशूल में 'आइसोरडिल सर्बलिगुअल' ५ मि० ग्रा० की गोली २-३ घण्टे पर जीभ के नीचे रख कर चूसते रहें।

निषेध—'ग्लाइकोमा' के रोगी में इसका प्रयोग न करें।

६. ℞ थियोब्रोमीन	३२५ मि० ग्रा०
फीनोबार्बीटोन	३२ मि० ग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार दें।	१ मात्रा।

हृदयशूल-नाशक अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. रोनिकोल (Ronicol) (रोशे)—१-२ गोली दिन में २-३ बार दें। अथवा—इसका इञ्जे० प्रतिदिन मांस में (I/M) लगायें।

२. विस्कार्डन (Viscardan) (एलेन बरीज)—२ गोली नित्य २-३ बार भोजनोपरान्त।

३. सेगोण्टिन (Segontin) (हैक्स्ट)—६० मि० ग्रा० की १ ड्रेगी दिन में २-३ बार।

४. एञ्जियोसेडीन (Angiosedine) (विगर लेबो०)—१-२ गोली शूल के समय।

५. कीर्डीलेट (Cardilate) (वरोज वेल्कम)—१-२ गोली दिन में २ बार जल से।

६. निकोटिनिक एसिड (Nicotinic acid) (बूट्स)—१ गोली प्रति २-३ घण्टे पर।

७. न्यूरो-ट्रासेण्टिन (Neuro-trasentin) (सीबा गाइगी)—१-२ गोली हृदयशूल के समय।

८. थीयो-गार्डीनल (Theo-gardinal) (एम० बी०) १-२ गोली दर्द के समय।

९. पेरीट्रेट (Peritrate) (वार्नर)—१-२ गोली दिन में ३ बार भोजन से पूर्व सीढ़ियाँ तथा चढ़ाई पर चढ़ने के समय।

१०. मिनाफाइलिन (Minaphillin) (F. D. C.)—१-२ मिली० I/M or I/V दें।

आवश्यकता पड़ने पर डेक्स्ट्रोज सोलूशन में I/V ड्रिप रूप में दें।

११. इक्वैनाइट्रेट (Equanitrate) (वाईथ)—१-२ गोली दिन में ३ बार।

१२. इल्डामेन (Ildamen) (जर्मन रेमेडीज)—८ मि० ग्रा० की २ गोली दिन में ३ बार प्रतिदिन दें। तत्पश्चात् १ गोली दिन में ३ बार दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३. मेटामाइन (Metamine)—२-४ मि० ग्रा० दिन में ४ बार ओरली ।

१४. वेटालोक (Betaloc) (एस्ट्रा-आइडियल)—१००-२०० मि० ग्रा० विभाजित मात्रा में प्रातः-सायं ।

१५. कैल्सीगार्ड (Calcigard) (टोरेण्ट)—१-२ कै० प्रति ६-८ घण्टे पर ।

१६. कार्डेक्स (Cardex) (इथिको)—१-२ कै० प्रति ६-८ घण्टे पर ।

१७. कार्डीलेट (Cardilate) (वरोज वेल्कम)—५ मि० ग्रा० जीभ के नीचे अथवा १० मि० ग्रा० मुख द्वारा दिन में २-३ बार ।

१८. कार्डियोप्टिन ४० एवं ८० (Cardioptin 40 & 80) (रेलिस) ४०-८० मि० ग्रा० दिन में ३ बार ।

१९. सिप्लार (Ciplar) (सिपला)—२ गोली दिन में ४ बार ।

२०. सिप्लार–८० (Ciplar-80) (सिपला)—१ गोली दिन में ३ बार ।

२१. सिप्लार फोर्ट (Ciplar forte) (सिपला)—१ गोली दिन में ४ बार । मात्रा बढ़ाते हुए २ गोली दिन में ४ बार ।

२२. सिप्लार इञ्जे० (Ciplar Inj.) (सिपला)—१-२ मि० ग्रा० १ एम्पुल प्रति मिनट इण्ट्रावीनस ।

२३. कॉम्बीग्जेन्थिन (Combixanthin) (मैक)—१ गोली दिन में ३ बार ।

२४. कोरबेटा (Corbeta) (साराभाई)—१०-२० मि० ग्रा० दिन में ३-४ बार । औसतन १६० मि० ग्रा० प्रतिदिन । आवश्यकतानुसार बढ़ाते हुए ३२० मि० ग्रा० प्रतिदिन ।

२५. कॉर्वेनिट (Corvanit) (स्टैण्टर्ड)—१-२ गोली दिन में ३ बार भोजन के पूर्व ।

नोट—इसका प्रयोग हृदयशूल से बचाव हेतु होता है ।

२६. मायोगार्ड (Myogard) (सर्ल)

२७. इसोर्डिल लाँग (Isordil long) १० मि० ग्रा० (मैनर्स)—१०-३० मि० ग्रा० ।

२८. इसोर्डिल सबलिन्गुअल (Isordil sublingual) (मैनर्स)—१-२ गोली प्रति २-३ घण्टे पर ।

२९. पेरीट्रेट एस० ए० (Peritrate S. A) (वार्नर)—१ गोली तत्काल । १२ घण्टे बाद १ गोली खाली पेट ।

३०. पिनाडोल (Pinadol) (रैनवैक्सी)—Effort Angina में २·५-५ मि० ग्रा० दिन में ३ बार ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३१. ट्रेसीकोर (Trasicor) (हिन्दुस्तान सीबा गाइगी)—१६० मि० ग्रा० विभाजित मात्रा में।

३२. वेरानिल ४० एवं ८० (Veramil 40 & 80) (थेनिस)—१ गोली दिन में ३ बार।

३३. वेराट्रिल (Veratril) (F D C)—१२०-४८० मि० ग्रा० ३ विभाजित मात्रा में।

३४. निफीकार्ड (Nificard) (रैनवैक्सी)—Chronic stable angina, unstable angina तथा Vasospastic angina में लाभकारी नवीनतम औषधि है। □

हृद्वाहिका-संस्थान के रोग 3/10

हृद्-धमनी घनास्त्रता
(Coronary Thrombosis)

पर्याय—हृदय की धमनी में रक्त का जमना। इसे 'हृद्धमनी घनास्त्रता' भी कहते हैं।

परिचय—Coronary thrombosis is a condition in which a lesion of the coronary artery causes rapid ischaemia of an area of the ventricular heart muscle. It is much more common after the age of 40; up to the age of 60 it is more frequent in men than in women.

○ Coronary thrombosis (Myocardial infarction) has now become the commonest cardiae cause of death.

—*Savill's System of Clinical Medicine*

○ हृदय-धमनी की किसी भी शाखा में रक्त जम जाने को कोरोनरी थ्रोम्ब्रोसिस कहते हैं।

विकृति (Pathology)—कोरोनरी थ्रोम्बोसिस प्रायः लेफ्ट वेण्ट्रीकल के अन्तिम भाग अर्थात् हृदयकोण की ओर जाने वाली छोटी-सी अन्तिम शाखा में ही रक्त जमता है। यदि हृदय की मुख्य धमनी में रक्तस्कंदन हो जाय तो रोगी की तत्काल मृत्यु हो जाती है। यदि किसी अन्तिम छोटी-सी धमनी में रक्त जमता है तो उस स्थान की मांसपेशी के सेल्स मृत् हो जाते हैं। ऐसा रोगी बच तो जाता है, परन्तु उसका हृदय सदैव के लिए निर्बल हो जाता है।

○ हृदय की विकृति कम या अधिक धमनी शाखा के अनुरूप होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण (Etiology)—१. अधिकतर प्रौढ़ अवस्था के पश्चात् ३५–६० वर्ष की आयु में यह रोग होता है।

२. प्रायः देखा गया है कि यह रोग उन व्यक्तियों में अधिक होता है, जिन्हें हृदय-उद्वेष्टन के दौरे पहले से ही आते रहे हैं।

३. जिन्हें उपदंश रोग हो चुका है, विशेषकर जब सम्यक् चिकित्सा न करने के कारण उपदंश का रोग बाहर से तो लुप्त हो जाता है, किन्तु अन्दर ही अन्दर रोग बना रहता है। ऐसे रोगियों की हृदय-धमनी की आन्तरिक कला अधिक खुरदरी हो जाती है। खुरदरे स्थान में रक्त के सम्पर्क में आने से वह जम जाता है।

४. जिनका रक्तभार (B. P.) अधिक होता है और ज्वर, श्रम, थकावट आदि के कारण रक्तभार एकाएक कम हो जाता है, उनमें भी यह रोग अधिक मिलता है।

५. स्त्रियों की अपेक्षा यह पुरुषों में अधिक होता है। ऐसे व्यक्ति प्रायः हृष्ट-पुष्ट होते हैं।

○ The primary disease is nearly always due to coronary atheroma.

लक्षण (Symptoms)—1. The cardinal symptom is pain in the chest which rapidly and progressively increases in severity.

○ रोगी अच्छा-भला होता है; अकस्मात् उसे वक्ष में तीव्र शूल प्रारम्भ हो जाता है। यह शूल हृदय-प्रदेश (Cardiac region) में ही होता है।

२. किसी-किसी रोगी में रोग के आक्रमण से १०–१५ दिन पूर्व वक्ष में साधारण पीड़ा के दौरे रुक-रुक कर आते हैं। ऐसे रोगी सामान्यतया उपदंश रोग से पीड़ित होते हैं।

३. स्टर्नम के पीछे तीव्र वेग की पीड़ा होती है और वहाँ से बायें कन्धे और बाईं बाहु की ओर जाती हुई प्रतीत होती है।

○ पीड़ा हृदय-उद्वेष्टन के समान होती है। यह पीड़ा कभी-कभी कौड़ी प्रदेश में प्रारम्भ होती है।

४. यदि रोगी आधा घण्टे तक बच जाता है तो पीड़ा या तो मिट जाती है अथवा कुछ कम हो जाती है।

○ साध्यावस्था में पीड़ा शनैः शनैः कई दिनों में मिट जाती है।

५. प्रारम्भ में रोगी पीड़ा के कारण अत्यधिक बेचैन रहता है। पीड़ा की तीव्रता कम होने पर बेचैनी थोड़ी कम हो जाती है, परन्तु थोड़ी या बहुत अनेक दिनों तक बनी रहती है।

६. रोग का प्रारम्भ प्रायः विश्रामकाल में होता है।

७. श्वासकष्ट होता है तथा श्वास चढ़ने लगता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. किसी-किसी रोगी में हिचकी, वमन तथा उत्क्लेश आदि लक्षण भी मिलते हैं।

९. दूसरे या तीसरे दिन रोगी को १००-१०२° फा० तापक्रम हो जाता है, जो ४ से ७ दिन रहकर उतर जाता है। यदि ७ दिन के बाद भी ज्वर बना रहे अथवा उतर कर फिर चढ़ जाय तो समझना चाहिए कि रक्तस्कंदन (Thrombosis) अधिक फैल रहा है अथवा फेफड़ों में भी रक्त का छिछड़ा अटक गया है या पेरीकार्डाइटिस आदि उपद्रव साथ में उपस्थित हो गये हैं। ऐसी अवस्था में रोगी की स्थिति बिलकुल विपरीत हो जाती है। कदाचित् यदि रोगी के बचने की कोई आशा रही होती है तो वह भी समाप्त हो जाती है। ऐसी स्थिति में विरले ही रोगी बच पाते हैं।

१०. रक्तभार (B. P.) कम हो जाता है, यदि पूर्व में अधिक रहा हो।

११. पसीना अधिक आता है।

१२. नाड़ी की गति प्रायः मन्द पड़ जाती है।

अन्य लक्षण—

○ The pain lasts longer than in 'Angina' of effort and is not relieved by resting.

Signs—○ Shock varies in intensity : in severe cases it may be profound, the patient being pale, frightened, restless, vomiting, sweating profusely and with a rapid fall in blood pressure.

○ Signs of heart failure may be observed, with dyspnoea even at rest. Right ventricular failure may produce 'cyanosis' dsstension of the neek veins and engorgement of the liver : Left ventricular failure is accompained by a poor pulse, weak heart sound and triple rhythm at the apex and tachycardia is more common than bradycardia.

परीक्षात्मक विशेषता—○ इस रोग की विशेषता यह है कि इसकी पीड़ा हृदयशूल-हर औषधियों (Anti-anginal drugs) से शान्त नहीं होती।

निदानात्मक परीक्षा—१. हृदय-परीक्षा (Heart examination)—

(i) हृदय की शब्द-ध्वनियाँ प्रायः मन्द पड़ जाती हैं। प्रथम ध्वनि प्रायः लुप्त हो जाती है।

(ii) रोगी का हृदय विस्तृत हो जाता है।

(iii) आकुंचनीय मरमर सुनाई पड़ने लगती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. **रक्त-परीक्षा** (Blood examination)—

○ श्वेतकण बढ़े हुए मिलते हैं। यह ७००० के स्थान पर १२ हजार या १५ हजार तक हो जाते हैं।

३. **मूत्र-परीक्षा** (Urine test)—

○ मूत्र में थोड़ा अल्ब्युमिन तथा थोड़ी मात्रा में सुगर मिलती है।

४. **इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम परीक्षा**—

○ इससे रोग निश्चित हो जाता है तथा यह मालूम हो जाता है कि हृदय का कौन-सा भाग और कितने भाग को क्षति पहुँची है। इससे रोगी भविष्य के लिए सावधानी बरत सकता है।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—कोरोनरी थ्रोम्बोसिस का विभेद मुख्यरूप से हृदयशूल (एन्जाइना पेक्टोरिस) तथा पल्मोनरी इम्बोलिज्म से करना होता है। इनमें एन्जाइना से भेद करना विशेष महत्त्व रखता है, जैसा कि आगे प्रस्तुत किया जा रहा है—

कोरोनरी थ्रोम्बोसिस (Coronary Thrombosis)	हृदयशूल (Angina Pectoris)
१. **प्रारम्भ**—	
रोग का प्रारम्भ विश्रामकाल में होता है। अथवा आक्रमण किसी समय हो सकता है दिन में या रात में।	आक्रमण प्रायः व्यायाम के समय उत्पन्न होता है; विशेषरूप से भोजन के पश्चात्।
२. **शूल**—	
शूल दीर्घकालिक होता है।	शूल अल्पकालिक होता है।
३. **श्वासकष्ट**—	
रोगी को श्वास कष्ट रहता है।	इसमें ऐसा नहीं होता है।
४. **पसीना**—	
इसमें रोगी को स्वेद अधिक आता है।	स्वेद प्रायः कम आता है।
५. **तापक्रम**—	
टेम्परेचर प्रायः रहता है।	प्रायः अनुपस्थित रहता है।
६. **रक्तचाप**—	
ब्लड-प्रेशर गिरा रहता है।	इसमें ब्लड-प्रेशर बढ़ा रहता है।
७. **हृदय-अताल** (Cardiac rhythm)—	
सामान्य नहीं रहता है।	इसमें यह सामान्य रहता है।
८. **नाड़ी**—	
नाड़ी की गति मन्द रहती है।	इसमें ऐसा नहीं होता।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. रक्त-परीक्षा —

W. B. C. तथा रक्त सेडमेण्टेशन रेट बढ़ जाता है। इसमें कोई परिवर्तन नहीं होता।

१०. कार्डियोग्राम—

विशेष परिवर्तन मिलते हैं। इसमें कोई परिवर्तन नहीं मिलता।

११. शरीर—

शरीर शीतकाय होता है। इसमें ऐसा नहीं होता है।

१२. नाइट्राइटस तथा शूलहर औषधियों का प्रयोग—

इन औषधियों से कोई लाभ नहीं मिलता है। इनसे उत्तम लाभ मिलता है।

१३. आक्रमण कुछ घण्टों तथा दिनों में समाप्त होता है। आक्रमण कुछ मिन्टों में समाप्त हो जाता है।

१४. हृदय-ध्वनियाँ (Heart sound) दुर्बल होती हैं। इसमें स्पस्ट होती हैं।

१५. ट्रान्स-एमाइनेज टेस्ट पोज़ीटिव होता है। इसमें निगेटिव होता है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. यह एक भयानक रोग है। ५०% रोगी रोग के आक्रमण के बाद ही मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। अथवा आक्रमण अवस्था में ही इनकी मृत्यु हो जाती है।

२. ५०% रोगी जो बच जाते हैं, उनका हृदय सर्वदा के लिए थोड़ा-बहुत पीड़ित रहता है। पीड़ा के अनुसार रोगी को अपना शेष अल्प जीवन अधिक सावधानी के साथ काटना पड़ता है।

३. इसमें रोग के पुनराक्रमण की अधिक सम्भावना रहती है।

○ यदि रोगी को इसका दुबारा आक्रमण हो जाये तो उसका बचना कठिन होता है।

चिकित्सा (Treatment)—यह एक इमर्जेन्सी रोग है। इसमें तात्कालिक चिकित्सा की आवश्यकता होती है।

१. पीड़ा और उद्वेग (Anxiety) के लिए—

℞ इञ्जे० मॉर्फीन सल्फेट (Inj. Morphine sulphate)

मात्रा—१०-१५ मि० ग्रा० I/M

अथवा—इञ्जे० पैथीडीन (Inj. Pethidine)

मात्रा—१०० मि० ग्रा०+१ मिली० स्वीक्विल I/M

नोट—○ आवश्यकतानुसार प्रति ६ से ८ घण्टे पर दुहरायें।

○ डिलौडाइड (Dilaudide) का भी प्रयोग २ मि० ग्रा० की मात्रा में S/C किया जा सकता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ उपरोक्त चिकित्सा से पीड़ा शान्त हो जाती है और रोगी को नींद आ जाती है।

निर्देश—कभी-कभी ऐसा भी देखने में आता है कि पीड़ा पहले दिन शान्त हो जाती है और दूसरे दिन पुनः आरम्भ हो जाती है, तब भी यही चिकित्सा करनी चाहिए।

२. **ऑक्सीजन** (Oxygen)—नेजल कैथेटर अथवा मास्क के द्वारा ४-६ लीटर प्रति मिनट के हिसाब से दें।

३. **यदि ब्रेडीकार्डिया हो तो**—

℞ इन्जे० एट्रोपीन सल्फेट (Inj. Atropine sulphate)

मात्रा—०·६–१·२ मि० ग्रा० I/M दें।

४. I. C. C. U.

(१) शय्या-विश्राम (Bed rest)—रोगी को १ माह तक विश्राम करायें। तीव्र अवस्था में अधिक समय तक विश्राम की आवश्यकता पड़ती है। रोगी को धीरे-धीरे उठाना चाहिए। उसे अधिक परिश्रम से बचायें।

निषेध—○ इस रोग के रोगी को आजीवन अधिक श्रम करना वर्जित है।

(२) **ऑक्सीजन इन्हेलेशन**—नेजल कैथेटर अथवा Face mask द्वारा ४-६ लीटर प्रति मिनट की दर से अन्तिम ४८ घण्टे तक; यदि कोई उपद्रव न हो।

(३) **सेडेशन** (Sadation)—

℞ टेबलेट डायजीपाम (Tab. Diazepam)

मात्रा—५ मि० ग्रा० प्रति ८ घण्टे पर।

टेबलेट मेप्रोबेमेट (Tab. Meprobamate)

मात्रा—४०० मि० ग्रा० प्रति ८ घण्टे पर।

अथवा—टेबलेट फीनोबार्बीटोन (Tab. Phenobarbitone)

मात्रा—३० मि० ग्रा० प्रति ८ घण्टे पर।

अथवा—क्लोर डायजीप्रोक्साइड (Chlor-diazeproxide)

मात्रा—५-१० मि० ग्रा० प्रति ८ घण्टे पर।

(४) **आहार** (Diet)—१. प्रारम्भ के ५-७ दिनों तक तरल एवं सुपाच्य आहार विशेषकर दूध, चाय, फलों का रस व नारियल पानी आदि। प्रथम ४८ घंटों में उक्त तरल की मात्रा १५०० मिली० तक दी जा सकती है।

२. तत्पश्चात्—अर्ध तरल तथा खिचड़ी, फल, साबूदाना।

३. इसके बाद सख्त आहार।

(५) **मलावरोध** (Constipation)—

℞ बिसाकोडिल (Bisacodyl)

मात्रा—१० मि० ग्रा० रात में सोते समय।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—लिक्विड पैराफिन १ औंस रात में सोते समय।

(६) पीड़ा के शमन के पश्चात् निम्न औषधि-चिकित्सा करें—

१. चूंकि इस रोग में हृदय की मांसपेशियों का संकोच होता है। अतः प्रसार करने वाली औषधियों का व्यवहार करना चाहिए—

℞ एमीनोफायलिन (Aminophyllin)

मात्रा—½–१ ग्राम दिन में ३ बार पानी के साथ।

अथवा—इसका I/V इन्जेक्शन दें।

पेपेवेरीन (Papeverine) ½–१ ग्राम दिन में ३ बार पानी के साथ अथवा इन्जेक्शन रूप में दें।

साथ ही—

२. रक्तस्कन्दन को रोकने के लिए—

℞ ट्रोमेक्सान (Tromexane)

(i) प्रथम दिन—९००–१२०० मि० ग्रा० (३०० मि० ग्रा० दिन में ३-४ बार)।

(ii) तत्पश्चात्—३०० मि० ग्रा० १-२ बार ३-४ सप्ताह तक।

अथवा—

(i) प्रथम दिन—हेपेरिन (Heparin)—२५० मि० ग्रा० I/V

(ii) तत्पश्चात्—१०० मि० ग्रा० रोजाना।

नोट—○ इसमें ट्रोमेक्सान अपेक्षाकृत अधिक प्रभावकारी है।

३. हृदय को शक्ति प्रदान करने के लिए—

℞ डिजोक्सिन (Digoxin)

व्या० नाम—लेनोक्सिन (Lanoxin)

मात्रा—०·२५ मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

तत्पश्चात्—०·२५ मि० ग्रा० दिन में १ बार।

४. ज्वर तथा फुप्फुस विकार में—पेनिसिलीन ४ लाख यूनिट ५–६ दिन तक।

साथ ही—विटामिन-सी (सीलिन-ग्लैक्सो) ५०० मिग्रा० दिन में १ बार।

○ मायोकार्डियल इन्फार्क्शन की अन्य विशिष्ट चिकित्सा—

(१) पीड़ा दूर करने के लिए—

साधारण पीड़ा (Mild pain)—

℞ इन्जे० फोर्टविन (Inj. Fortwin) अथवा इन्जे० पेन्जाइल (Inj. Penzyl) १ मिली० I/M।

गम्भीर पीड़ा (Severe pain)—

℞ इन्जे० पेथीडीन (Inj. Pethidine) ७५–१०० मि० ग्रा० तथा इन्जे० सीक्विल १० मि० ग्रा० दोनों मिलाकर;

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—इन्जे० फेनरगान (Inj. Phenergan) २५ मि० ग्रा० I/M

यदि पीड़ा दूर न हो तो—

℞ इन्जे० मॉर्फीन (Inj. Morphine) १५ मि० ग्रा० + इन्जे० सीक्विल अथवा—स्टेमेटिल (Stemetil) I/M अथवा इन्जे० मॉर्फीन १५ मि० ग्रा० I/V धीरे-धीरे।

(२) ऑक्सीजन देना प्रारम्भ करें।

रोगी को अस्पताल भेजने करने का प्रबन्ध करें।

प्री-हॉस्पिटल केयर (Pre-hospital care)।

यदि ब्रैडीकार्डिया हाइपोटेन्शन हो तो—

℞ इन्जे० एट्रोपीन ०·३ मि० ग्रा० I/V दें।

यदि वेण्ट्रीकुलर एक्टोपिक्स हो तो—

℞ इन्जे० जाइलोकेन (Xylocard or Gesicard) ३०० मि० ग्रा० गहरे मांसपेशी में (Into deltoid muscles)।

नोट—○ प्री-एग्जिस्टिंग ब्रैडीकार्डिया, हाइपोटेन्शन अथवा CCF में इसका प्रयोग न करें।

(३) शय्या पर विश्राम।

(४) साथ ही—टे० डायजीपाम २ मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

(५) आहार (Diet)—प्रथम २४ घण्टे में केवल तरल आहार जिसमें फलों का रस, चाय, कोकोनट वाटर, पतला सूप्स आदि हो। अगले दिन हलका भोजन दें। नमक का पूर्ण निषेध करें।

नोट—कुछ दिनों तक रोगी को अधिक गर्म एवं ठंडे पेय (Cold drinks) आदि न दें।

(६) आँतों (Bowels) के लिए—

यदि रोगी कोष्ठबद्धता से पीड़ित हो तो—

℞ क्रीमाफिन (Cremaffin) अथवा एगारोल (Agarol)

मात्रा—१ बड़ा चम्मच (Table spoon) रात के समय।

यदि इससे सफलता न मिले तो—

'Practoclys enema' का प्रयोग करें।

(७) एण्टी-कोएगुलेशन (Anti-coagulation)—

यदि शॉक, गम्भीर कंजेस्टिव कार्डियक फेल्योर (Severe CCF), Previous thrombotic or embolic episodes अथवा गम्भीर स्वरूप का फुप्फुस रोग हो तो—

℞ इन्जे० हेपेरिन (Inj. Heparin) ८००० यूनिट्स I/V

मात्रा—प्रति ८ घण्टे पर ३ मात्राओं तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

℞ टेबलेट वारफेरिन (Tab. Warfarin) ५ मि० ग्रा०

पहले दिन—२ गोली दिन में ३ बारे।

दूसरे दिन—१ गोली दिन में ३ बार।

तीसरे दिन तथा आगे—१ या २ गोली नित्य।

उपद्रवों की व्यवस्था—

(i) एरिथमियाज (Arrhythmias)—

℞ ५% डेक्स्ट्रोज सोल्युशन I/V ड्रिप से प्रारम्भ करें।

(ii) वेण्ट्रीकुलर प्री-मेच्योर बीट्स—

℞ जेसीकार्ड (Gesicard) या जाइलोकार्ड (Xylocard) २%

मात्रा—५० मि० ग्रा० I/V १ मिनट में बोलस (Bolus) रूप में।

एवं ५०० मि० ग्रा० ग्लूकोज ड्रिप में (२ मि० ग्रा० प्रति मिनट की दर से) २४ से ४८ घण्टे के लिए।

यदि लाभ न मिले तो—

℞ इञ्जे० प्रोनेस्टिल (Inj. Pronestyl)

मात्रा—७५० मि० ग्रा० I/V ड्रिप ३०-६० मिनट में।

Note—Careful monitoring of QRS and B. P. necessary.

अथवा—इञ्जे० नॉरपेस (Inj. Norpace) अथवा (Rhythmodan)

मात्रा—२०० मि० ग्रा० Loading dose, तत्पश्चात् १०० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—इञ्जे० मेक्सीटिल (Mexitil) १०० मिग्रा० I/V ३ मिनट में।

तत्पश्चात्—१०० मि० ग्रा० इफ्यूजन १ घण्टे में एवं २५० मि० ग्रा० २ घण्टे में। तदुपरान्त ०·५ मि० ग्रा० प्रति मिनट।

पुनराक्रमण के बचाव हेतु—(Prophylaxis against recurrence)—

℞ इञ्जे० जाइलोकेन इफ्यूजन २-४ मि० ग्रा०। Minute be continued for 5 days followed by—

℞ प्रोनेस्टिल (Pronestyl) २५० मि० ग्रा० दिन में ४ बार।

अथवा—℞ क्विनीडीन (Quinidine) २०० मिग्रा० प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—℞ प्रोप्रानोलोल (Propranolol) २० मिग्रा० दिन में ४ बार।

अथवा—℞ मेक्सीटिल (Mexitil) २०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार। मुख द्वारा ४ सप्ताह तक।

(iii) वेण्ट्रीकुलर टेकीकार्डिया (Ventricular tachycardia)—

उपरोक्त चिकित्सानुसार व्यवस्था करें। अथवा इलेक्ट्रिकल कार्डियोवर्सन (Electrical cardioversion)।

(iv) वेण्ट्रीकुलर फिब्रीलेशन (Ventricular fibrillation)—

तत्काल डी-सी० शॉक की व्यवस्था करें।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(v) **साइनस ब्रैडीकार्डिया** (Sinus bradycardia)—

℞ इन्जे० एट्रोपीन (Inj. Atropine) ०·३ मि० ग्रा० I/V आवश्यकतानुसार ४ घण्टे पर दुहरायें। यदि लाभ न मिले तो—

℞ इन्जे० आइसोप्रेनालीन (Inj. Isoprenaline)।

मात्रा—२ मि० ग्रा० ५०० मिली० डेक्स्ट्रोज ड्रिप में।

(vi) **एट्रियल प्रीमेच्योर बीट्स** (Atrirl premature beats)—

℞ टेबलेट क्विनीडीन (Tab. Quinidine)

मात्रा—२०० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर।

(vii) **एट्रियल फ्लूटर** (Atrial flutter)—

℞ इन्जे० लेनोक्सिन (Inj. Lanoxin)

मात्रा—०·५ मि० ग्रा० I/V

(viii) **एट्रियल फिब्रीलेशन** (Atrial fibrilldtion)—

℞ इन्जे० लेनोक्सिन (Inj Lanoxin)

मात्रा—०·५ मि० ग्रा० I/V दें।

℞ इन्जे० इण्डेराल (Inj. Inderal)

मात्रा—१ मि० ग्रा० I/V दें।

(ix) **शॉक** (Shock)—

℞ ऑक्सीजन लगातार (Oxygen continuosly)

इन्जे० सोडाबाइकार्ब (७५%) १०० मिली० I/V दें।

℞ इन्जे० नॉरएड्रीनलीन (Inj. Noradrenaline) ४ मि० ग्रा०। ५०० मिली० डेक्स्ट्रोज में I/V ड्रिप द्वारा (सिस्टोलिक B. P. को १०० mm Hg पर) मेण्टेन करने के लिए।

अथवा—℞ इन्जे० मेफेण्टीन (Inj. Mephentine) ३०० मि० ग्रा० ५०० मि० ली० डेक्स्ट्रोज ड्रिप में।

(x) **कार्डियक फेल्योर** (Cardiac failure)—

℞ टेबलेट लेसेक्स (Tab. Lasex)

मात्रा—१–२ गोली प्रतिदिन।

℞ लेनोक्सिन (Lanoxin) ०·५ मिग्रा० मुख से अथवा I/M या I/V तत्पश्चात्—०·२५ मि० ग्रा० (१ गोली) दिन में २ बार कण्ट्रोल होने तक।

℞ ऑक्सीजन (Oxygen)

(xi) **पेरीकार्डाइटिस** (Pericarditis)—

℞ एस्प्रिन (Asprin) ६० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

अथवा—℞ इण्डोमेथासिन (Indomethacin) २५ मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि स्थिति गम्भीर हो तो—

℞ इञ्जे० हाइड्रोकार्टीसोन १०० मि० ग्रा०

अथवा—℞ इञ्जे० डेक्सामेथासोन (Inj. Dexamethasone)

मात्रा—४ मि० ग्रा० I/V प्रति ६ घण्टे पर।

(८) पुनःस्थापन (Rehabilitation)—

○ यदि रोगी स्वास्थ्य-लाभ पाता है तो लगभग २ सप्ताह बाद घूमना प्रारम्भ कर देता है। साथ ही ३ माह के अन्तर्गत अपना कार्य करने लगता है। ३ माह बाद रोगी को हवाई यात्रा की स्वीकृति दी जा सकती है।

(९) Secondary prevention following myocardial infarction—

(i) हाइपरटेन्शन, सिगरेट का पीना तथा हाइपर लिपिडिमिया जैसे आरम्भिक जोखिम वाले कारकों (Primary risk factors) को ठीक करें।

(ii) नियमित व्यायाम।

अथवा—℞ कैप्सूल एण्टीरान (Anturan)

मात्रा—२०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

(iii) यदि रोग में मुख्य वाम हृद्धमनी (Left coronary artery) अथवा ३ बड़ी धमनियाँ प्रभावित हो गई हों तो 'कोरोनरी बाइपास सर्जरी' की व्यवस्था करना आवश्यक है।

(१०) विलम्बित उपद्रवों की व्यवस्था (Management of late complications)—

(i) एञ्जाइना (Angina)—कोरोनरी बाइपास सर्जरी चिकित्सा।

(ii) कार्डियक फेल्योर—डिजीटेलिस, डायोरेटिक्स।

(iii) पोस्ट मायोकार्डियल इन्फार्क्शन सिण्ड्रोम—

एण्टीकोएगुलेण्ट (Anticoagulant) बन्द कर दें।

℞ टेबलेट एस्प्रिन (Tab. Asprin)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार।

℞ टेबलेट बेटनीसोल (Tab. Betnisol)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार।

थ्रोम्बस की नवीनतम चिकित्सा प्रणाली
(Recent Treatment of Thrombos)

○ इन्फार्क्शन (वाहिका अवरोध के कारण ऊतक का गल जाना) के कारण विश्व में अभी भी अनेक लोगों की मृत्यु हो जाती है। यह रोग बहुधा 'थ्रोम्बोसिस' अर्थात् किसी एक वाहिका के भीतरी भाग में एथिरोस्केलेरोसिस (वाहिकाकाठिन्य) वाले खण्ड में रुधिर का थक्का जम जाने के कारण होता

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। इस प्रकार के थक्के को हटाकर खतरा कैसे दूर किया जाए ? अ० बाकुलेव हृदय-वाहिका शल्य-चिकित्सा संस्थान के विभागाध्यक्ष प्रोफेसर 'डेविड इओसेलिआनी' ने इस सम्बन्ध में बतलाया है कि—

○ पारम्परिक उपचार के अन्तर्गत थक्के को गलाने वाली औषधियाँ शिरा के अन्दर (Intravenous) प्रविष्ट कराई जाती हैं। सोवियत हृदय-रोग वैज्ञानिकों ने ऐसी विधि का विकास किया है, जिससे यह प्रक्रिया सुविधा-जनक हो जाती है। इसमें थक्के को पिघलाने वाली औषधि सहित एक सूक्ष्म नलिका को जाँघ की धमनी में प्रविष्ट कराया जाता है और एक्स-रे के नियन्त्रणान्तर्गत थ्राम्बस तक पहुँचाया जाता है। इस प्रक्रिया से औषधि की मात्रा को ३० गुना तक घटाना और ठीक थ्राम्बस पर चोट करना सम्भव हो जाता है।

○ अधिकांश रूप से थ्राम्बस के गल जाने के उपरान्त भी वाहिका मार्ग तंग ही रह जाता है। ऐसी अवस्था में उसके सामान्य मार्ग को पुनः चालू करने के लिए भी सूक्ष्म नलिका का उपयोग करते हैं। परन्तु इस बार नलिका के सिरे पर एक रबर की घुण्डी लगी होती है। जब यह सिरावाहिका के तंग भाग में पहुँचता है तो रबर की घुण्डी को फुला दिया जाता है, जिससे वाहिका फैल जाती है और ब्लड-सरकुलेशन सामान्य रूप में होने लगता है।

○ उपरोक्त प्रत्येक प्रक्रिया में एक घण्टे से कम का समय लगता है। ऐसे १०० रोगियों की चिकित्सा की गई जिनमें अधिकांश में सफलता मिली है।

○ कुछ केसिस ऐसे भी सामने आये हैं जिनमें वाहिका फैलती ही नहीं और पूर्व की भाँति तंग ही बनी रहती है। ऐसे गम्भीर केसिस में शल्य चिकित्सा करनी पड़ती है। इसमें हृदयवाहिका के तंग एवं क्षतिग्रस्त भाग को जहाँ का तहाँ छोड़कर उसमें एक अतिरिक्त वाहिका जोड़ दी जाती है, जिससे होकर रुधिर सामान्य गति से प्रवाहित होने लगता है। इस शल्य चिकित्सा के अच्छे परिणाम सामने आये हैं। ९०% से अधिक केसिस में रोगी जीवित रहते हैं और अनेक वर्षों तक अपना काम-काज करते रहते हैं। □

हृद्वाहिका-संस्थान के रोग 3/11

हृदयावरणशोथ
(Pericarditis)

परिभाषा—यह वह अवस्था है जिसमें पेरीकार्डियम की दोनों परतों में शोथ उत्पन्न हो जाता है।

प्रकार (Types)—१. एक्यूट पेरीकार्डाइटिस (Acute pericarditis)—६ सप्ताह के समय के बीच का। यह २ प्रकार का होता है—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(i) ड्राई (Dry)।
(ii) विद इफ्यूजन (With effusion)।

२. सब-एक्यूट पेरीकार्डाइटिस (Subacute pericarditis)—अधिक से अधिक ६ सप्ताह के समय का। यह २ प्रकार का होता है—

(i) कंस्ट्रिक्टिव (Constrictive)।
(ii) विद इफ्यूजन (With effusion)।

३. क्रॉनिक पेरीकार्डाइटिस (Chronic pericarditis)—यह ३ प्रकार का होता है—

(i) कंस्ट्रिक्टिव पेरीकार्डाइटिस (Constrictive pericarditis)।
(ii) एटेरेण्ट मेडीस्टीनो पेरीकार्डाइटिस।
(iii) विद इफ्यूजन (With effusion)।

रोग के कारण (Etiology)—

(१) **इन्फेक्टिव** (Infective)—

(i) वाइरल (Viral)।
(ii) पायोजेनिक (Pyogenic)।
(iii) ट्यूबरकुलर (Tubercular)।
(iv) माइकोटिक फंगल अथवा पैरासिटिक इन्फेक्शन।

(२) **नान इन्फेक्टिव** (Non infective)—

(i) मायोकार्डियल इन्फार्क्शन।
(ii) यूरीमिया (Uraemia)
(iii) नियोप्लाज्म (प्राइमरी तथा सेकेण्डरी)
(iv) मिक्सीडीमा (Myxoedema)।
(v) ट्रौमा (Trauma)।
(vi) एण्टीकोएगुलेण्ट थेरापी के समय।
(vii) काइलो पेरीकार्डियम।
(viii) गम्भीर स्वरूप की अनीमिया।
(ix) इडियोपैथिक (Idiopathic)।

(३) **ऑटो-इम्युनिटी अथवा हाइपर सेंसिटिविटी रिएक्सन**—

(i) रियूमेटिक फीवर।
(ii) कोलेजीनोसिस।
(iii) औषधि प्रयोग—१. प्रोकेनामाइड (Procainamide)।
२. हाइड्रालाजीन (Hydralazine)।

(४) **पोस्ट कार्डियक इञ्जरी**।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक्यूट ड्राई पेरीकार्डाइटिस
(Acute Dry Pericarditis)

पर्याय—शुष्क हृदयावरणशोथ, तीव्र तान्तवजन्य हृदयावरणशोथ (Acute fibrinous pericarditis)।

परिचय—○यह हृदयावरण (पेरीकार्डियम) की तीव्र शोथयुक्त अवस्था है, जिसमें तरल का निर्माण अल्पतम होता है, अथवा बिलकुल ही नहीं होता।

कारण—पेरीकार्डाइटिस के अनुरूप।

आक्रमण—तीव्र (Acute) स्वरूप का आक्रमण होता है।

लक्षण (Symptoms)—(१) **पीड़ा**—शूल पेरीकार्डियम (Pericardium) तक ही सीमित रहता है। कभी-कभी ग्रीवा, बाहु अथवा उदर तक प्रसारित हो जाता है। यह शूल श्वसन, खाँसी अथवा गति (Movement) करने से तेज हो जाता है। इस प्रकार से थोड़ी गति से ही रोगी को कष्ट बढ़ जाता है। किसी-किसी रोगी के शूल के स्थान पर मृदुस्वरूप की वेदना (Dull-ache pain) होती है।

○ तीन प्रकार की पीड़ा उपस्थित मिलती है—

१. **प्लूरिटिक पेन** (Pleuritic pain)—यह रेस्पिरेशन से सम्बन्धित होती है; जैसे—खाँसी, छींकना आदि।

२. **स्टीडी** (Steady)—कुचलने जैसी सब-स्टर्नल पीड़ा होती है।

३. पीड़ा बायें कन्धे तथा वाम हृदय के बार्डर पर होती है।

○ यूरीमिया के केस में पेरीकार्डियम का मेलिग्नेण्ट इन्वॉल्वमेण्ट हो जाता है, पीड़ा नहीं होती है।

○ यदि रोगी बालक अथवा शिशु है तो उसमें आमवात तथा कोरिया से ग्रसित होने का इतिहास अवश्य मिलता है।

(२) **ज्वर** (Fever)—हलके स्वरूप का बुखार (Lowgrade temperature) होता है। यूरीमिया के केसिस में यह नहीं मिलता है।

चिह्न (Signs)—१. कुछ केसिस में तापक्रम बढ़ा हुआ मिलता है। यह १०१ फा० तक बढ़ जाता है।

२. नाड़ी तीव्र गति वाली (टेकीकार्डिया) होती है। अर्थात् १००-१२० प्रति मिनट होती है।

३. परीक्षा करने पर पेरीकार्डाइटिस का रोगी रुग्ण, चिन्तित तथा फीका दिखलाई पड़ता है।

वक्ष-परीक्षा (Chest examination)—

१. **परिदर्शन** (Inspection)—द्रुत स्पन्दनीय हृदसंवेग (Rapidly beating cardiac impulse) प्रतीत होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. **परिस्पर्शन** (Palpitation)—नियमित रूप की घर्षण ध्वनि मिलती है।

३. **परिताड़न** (Purcussion)—इस परीक्षा में हृदयगत मन्दता (Cardiac dullness) मिलती है।

४. **परिस्रवण** (Auscultation)—घर्षण ध्वनि सुनाई देती है। यदि स्टेथिस्कोप पर दबाव डाला जाये तो ध्वनि और स्पष्ट सुनाई देती है।

○ हृदय-ध्वनि बिना स्टेथिस्कोप लगाये मन्द अथवा तीव्र किरकिराहट के रूप में सुनाई देती है। रोगी जब बैठा हुआ होता है तब यह ध्वनि अधिक स्पष्ट सुनाई देती है।

नोट—○ कभी-कभी यह ध्वनि इतनी अस्थिर होती है कि पहली परीक्षा में तो ध्वनि स्पष्ट सुनाई देती है, पर दूसरी परीक्षा में बिलकुल ही नहीं सुनाई देती है।

५ **इलेक्ट्रिक कार्डियोग्राम** (E. C. G.) **परीक्षा**—पेरीकार्डाइटिस के अन्तर्गत S. T. Sigments कुछ उत्थापित (Elevated) दिखलाई देते हैं, परन्तु कुछ दिनों के बाद आइसो इलेक्ट्रिक लाइन पर दिखलाई पड़ते हैं।

६. **इकोकार्डियोग्राम** (Echocardiogram)—पेरीकार्डियम का थिकनिंग (Thickening) तथा तरल एकत्रित होता दिखलाई पड़ता है।

७ **एस० जी० ओ० टी०** (S. G. O. T.) तथा एल० डी० एच० (L. D. H.) उत्थापित लेविल का होता है।

८. **रक्त-परीक्षण** (Blood test)—ल्यूकोसाइटोसिस मिलता है। ई० एस० आर० (E. S. R.) बढ़ा हुआ मिलता है।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—पेरीकार्डाइटिस के शूल का विभेद प्लूरिसी तथा एञ्जाइना पेक्टोरिस शूल से करना चाहिए, जिससे निदान में भूल न हो सके।

संक्षेप में पेरीकार्डाइटिस के विशिष्ट लक्षण—१. सब-स्टर्नल पेन तथा प्रीकॉर्डियल पेन की उपस्थिति जो वाम ग्रीवा, वाम कन्धे अथवा पीठ की दिशा में प्रसारित होता है।

२. पेरीकार्डियल फ्रिक्शन का सुनाई पड़ना।

३. ई० सी० जी० में S. T. उत्थापित (Elevated) मिलता है।

उपद्रव (Complications)—१. पेरीकार्डियल इफ्यूजन इसका मुख्य उपद्रव है।

२. पेरीकार्डियम का चिपक जाना (Adhesion of pericardium)।

पूर्वानुमान (Prognosis)—कारणों पर आधारित है, वैसे यह घातक रोग है। सामान्यतः १५ से २५ दिन तक यह रोग रहता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा (Treatment)—१. शय्या पर पूर्ण विश्राम दें। उसे टट्टी-पेशाब लेटे-लेटे ही करायें।

२. एनाल्जेसिक्स—℞ एस्प्रिन (Asprin)

मात्रा—३०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

अथवा—इण्डोमेथासिन (Indomethacin)

मात्रा—२५–५० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

पर्याप्त लाभ न मिलने पर—℞ पेथिडीन हाइड्रोक्लोराइड १०० मि० ग्रा० इन्जे० रूप में।

इससे भी लाभ न मिलने पर—℞ मॉर्फीन सल्फेट १०–१५ मि० ग्रा० इन्जेक्शन।

रियूमेटिक पेरीकार्डाइटिस में—सोडा सैलिसिलास का मिक्श्चर दें।

नोट—○ यदि चिकित्सा काल में निपात (Collapse) के लक्षण दिखलाई दें तो सोडा सैलीसिलास रोककर 'कोरामीन' १–५ मिली० इन्जे० रूप में दें।

टचुबरकुलर पेरीकार्डाइटिस में—स्ट्रेप्टोमाइसिन, पी० ए० एस० तथा आइसोनियाजिड अथवा इथैम्बुटाल (Ethambutal) का सेवन कराना चाहिए।

नोट—○ रियूमेटिक पेरीकार्डाइटिस में सोडा सैलीसिलास तथा कॉर्टीकोट्रोपिन अथवा कॉर्टीकोस्टेराइड्स लाभ पहुँचाता है।

○ जब यह रोग रियूमेटिक फीवर, लूपस इरीथेमेटोसिस तथा कनेक्टिव टिशू डिजीज के लक्षणों में प्रकट हों तो इसकी चिकित्सा के अन्तर्गत उसकी प्राथमिक अवस्था की चिकित्सा करनी चाहिए।

आवश्यक निर्देश—१. रोगी को तरल तथा सेमी-सॉलिड (अर्ध तरल) आहार का सेवन करायें।

२. रोग के ज्वररहित होने तथा नाड़ी के सामान्य स्थिति में आने के ३ माह तक रोगी को शय्या पर पूर्ण विश्राम करायें।

○ तत्पश्चात् कम से कम ९ माह तक रोगी को कोई परिश्रम न करने दें। इसके साथ ही २ वर्ष के पूर्व रोगी को खेलने-कूदने का भी निषेध करें।

पेरीकार्डाइटिस विद इफ्यूजन
(Pericarditis with Effusion)

पर्याय—सीरो-फाइब्रीनस पेरीकार्डाइटिस अथवा सीरो-पेरीकार्डियम, पेरीकार्डियल इफ्यूजन।

परिचय—यह सीरस पेरीकार्डियल एक्जुडेट (Serous pericardial exudate) की एक शोथयुक्त अवस्था है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण—यह प्रायः एक्यूट पेरीकार्डाइटिस के उपरान्त उत्पन्न होता है। यूरीमिया, कैंसर, लिम्फोमा, कनेक्टिव टिशू, वाइरल पेरीकार्डाइटिस, मेडीएस्टीनम का रेडिएशन, मिक्सीडीमा, टी० बी०, रियूमेटाइड आर्थ्राइटिस, पुरुलेण्ट पेरीकार्डाइटिस।

लक्षण (Symptoms)—१. **पीड़ा** (Pain)—शूल प्रायः अनुपस्थित रहता है। अथवा तीव्र हृदयावरणशोथ (Acute pericarditis) के समान लक्षण उत्पन्न होते हैं।

२. **श्वासकष्ट** (Dyspnoea)—सूखी खाँसी के साथ श्वासकष्ट होता है। जिससे रोगी उठ कर बैठ जाता है और उसको बाहर निकालने का प्रयत्न करता है।

३. **निगलने में कष्ट** (Dysphagia)—यह लक्षण बढ़ा मिलता है।

४. बुखार तथा अन्य लक्षण प्रारम्भिक रोग (Primary disease) के ऊपर निर्भर करते हैं। जैसे—सेप्टीसीमिया, एम्पाइमा, कैंसर आदि।

५. इस रोग से ग्रसित रोगी या तो बालक होता है अथवा युवा व्यक्ति होता है। इसमें शुष्क हृदयावरणशोथ (Dry pericarditis) का पूर्व इतिहास मिलता है।

६. हलके स्वरूप का बुखार रहता है।

७. रोगी शुष्क कास से पीड़ित रहता है।

८. श्वास लेने में अत्यधिक कष्ट होता है।

९. हृदय का अधिक धड़कना (Palpitation)।

१०. इस रोग में निद्रानाश एक अत्यन्त कष्टकारी लक्षण माना गया है।

परीक्षा (Examination)—

सामान्य निरीक्षण (General survey)—

१. रोगी का चेहरा फीका, ओष्ठ तथा कान श्यावतामय (Cyanosed) दिखलाई देते हैं।

२. रोगी अत्यधिक बेचैन दिखलाई देता है। साथ ही चित लेटने में असमर्थ होता है। बैठने अथवा करवट के बल लेटने में उसको आराम मिलता है।

३. ग्रीवा की शिरायें फूली हुई होती हैं।

वक्ष-परीक्षा (Chest examination)—

१. **परिदर्शन** (Inspection)—

(i) पेरीकार्डियम में उभार दिखलाई पड़ता है। वाम पार्श्व में श्वास लेते समय प्रसार में काफी कमी दिखलाई देती है।

(ii) बायें भाग की डायाफ्रामेटिक हरकत बिलकुल लुप्त अथवा अस्पष्ट होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. परिस्पर्शन (Palpation)

(i) हृद्संवेग (Cardiac impulse) लुप्त अथवा मन्द होता है।

(ii) पेरीकार्डियल घर्षण जो पूर्व में होता है, वह नहीं मिलता।

(iii) अँगुली से दबाने पर पेरीकार्डियम की वक्ष दीवार पर शोफ (Oedema) प्रतीत होता है।

३. परिताड़न (Percussion)—

(i) हृदय-मन्दता का क्षेत्र (Area of cardiac dullness) बढ़ जाता है, जिसका आकार नासपाती जैसा हो जाता है।

(ii) रोगी की स्थिति में परिवर्तन के अनुरूप ऊपर की मन्दता (Dullness) का स्तर परिवर्तित हो जाता है।

४. परिस्रवण (Auscultation)—

(i) जैसे-जैसे पेरीकार्डियम में इफ्यूजन की मात्रा बढ़ती जाती है, हृदय-ध्वनि क्रमशः मन्द पड़ती जाती है।

(ii) घर्षण ध्वनि (Friction sound) लुप्त होकर कभी-कभी हृदय के आधार पर सुनाई देती है। खड़े होने पर यह अधिक स्पष्ट सुनाई पड़ सकती है।

नाड़ी-परीक्षा—नाड़ी की गति तीव्र होती है। नाड़ी का वेग अन्तःश्वसन के समय कम हो जाता है और बहिःश्वसन के समय बढ़ जाता है।

रक्तदाब (B. P.)—१. रक्तदाब (Blood pressure) घट जाता है। ग्रीवा की शिरायें फूली हुई दिखलाई पड़ती हैं।

२. ब्लड-प्रेशर घटने के साथ-साथ नाड़ी की गति बढ़ जाती है।

३. शिरागत दबाव बढ़ जाता है, जिससे ग्रीवा की नसें फूल जाती हैं।

रक्त-परीक्षा (Blood examination)—श्वेत रक्तकणों की संख्या अत्यधिक बढ़ी हुई मिलती है।

एक्स-रे परीक्षा—एक्स-रे में निःसरण (Effusion) की एक विशिष्ट प्रकार की छाया दिखलाई देती है। बैठी हुई अवस्था में यह छाया गोलाकार प्रतीत होती है।

इलेक्टिक कार्डियोग्राम (Electric cardiogram)—

१. 'टी' तरंग ('T' waves) निम्न चपटी, डिफेसिक अथवा इनवर्टेड दिखलाई देती हैं।

२. क्यू० आर० एस०. (Q. R. S) Low मिलती है।

इकोकार्डियोग्राम (Echocardiogram)—

○ यह परीक्षण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना गया है। यह परीक्षण रोगी की शय्या पर भी किया जा सकता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—इसका विभेद 'Dilated heart' तथा 'Loft sided pleural effusion' से करना चाहिए।

उपद्रव (Complications)—१. कार्डियक टेम्पोनेड (Cardiac temponade)—यह एक गम्भीर उपद्रव है।

२. कभी-कभी तरल पूययुक्त (Purulent) हो जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) **विशिष्ट चिकित्सा**—इसकी विशिष्ट चिकित्सा रोग के औत्पत्तिक कारण के अनुसार की जाती है—

१. **राजयक्ष्माजन्य हृदयावरणशोथ** (Tubercular pericarditis)—इसमें रोगी को पूर्ण विश्राम देकर यक्ष्मा-निरोधी औषधियाँ तब तक दी जाती हैं, जब तक रोगी को रोग से मुक्ति नहीं मिल पाती।

२. **रियूमेटिक पेरीकार्डाइटिस विद इफ्यूजन**—इसकी चिकित्सा रियूमेटिक फीवर के अनुरूप की जाती है। तरल (Fluid) के अवशोषण हेतु सैलीसिलेट देना चाहिए।

३. **हाइड्रोपेरीकार्डियम**—इसमें कंजेस्टिव फेल्योर की चिकित्सा ही पर्याप्त होती है।

४. **इन्फेक्शन** (Infection)—एण्टीबायोटिक–पेनिसिलीन तथा स्ट्रेप्टोमाइसिन।

○यदि इस चिकित्सा से लाभ न हो और पूय की उत्पत्ति हो गई हो तो उसे सर्जिकल ड्रेनेज (पेरीकार्डियोटोमी) द्वारा बाहर निकालना चाहिए।

५. **यूरीमिक पेरीकार्डाइटिस**—क्लिनिकली स्पष्ट होने पर 'डायलिसिस थेरापी' का प्रयोग आरम्भ कर देना चाहिए।

○ गम्भीर टेम्पोनेड में 'पेरीकार्डियोटोमी' की आवश्यकता पड़ती है।

६. **मिक्सिडीमा** (Cautiously treatment)—प्रारम्भिक मात्रा छोटी T_3 अथवा T_4। कुछ लोग T_3 से प्रारम्भ करने के समर्थक हैं।

७. **कनेक्टिव टिशू डिस्आर्डर्स**—कॉर्टीकोस्टेराइड्स से चिकित्सा करें।

○ **इडियोपैथिक** (Idiopathic)—कॉर्टीकोस्टेराइड्स अरोग्यता में लाभकारी है।

℞ डेक्सामेथासोन, वाइमेसोन, डेकाड्रान अथवा बीटामेथासोन (बेटनीलान)।

मात्रा—२ गोली दिन में ४ बार ४८ घण्टे तक। तत्पश्चात्—
१ गोली दिन में ४ बार अगले ४८ घण्टे तक। इसके बाद—
१ गोली दिन में २ बार ३-४ दिन तक। तदुपरान्त—
४ गोली नित्य कुछ दिनों तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. अन्य—○ सार्कोडोसिस (Sarcoidosis) की चिकित्सा कॉर्टीकोस्टेराइड से करें।

○ लिम्फोमा तथा ट्यूमर की चिकित्सा रेडियो-थेरॉपी अथवा केमो-थेरॉपी से।

(२) **सामान्य चिकित्सा** (General treatment)—

○ इसकी चिकित्सा 'एक्यूट ड्राई पेरीकार्डाइटिस' के समान है।

○ इसकी प्रधान चिकित्सा हृदयावरण पारवेधन (Pericardial paracentasis) है। यह इस रोग की विशेष चिकित्सा-विधि है। इस विधि का प्रयोग तब अपेक्षित होता है जब तरल तीव्र गति के साथ बढ़ता है। इसका आभास तब होता है जब नाड़ी की गति में तीव्रता, अत्यधिक श्वास कष्ट तथा बेचैनी हो जाती है अथवा जब तरल पूययुक्त हो जाता है।

○ इस विधि में ट्रोकार केनुला को हृदयावरण में प्रविष्ट कराकर तरल को बाहर निकालते हैं। तरल के अधिक हो जाने पर अधिकांश तरल निकाल कर थोड़ा रहने दिया जाता है और आवश्यकता पड़ने पर ३-४ दिन बाद पुनः निकाल सकते हैं।

औषधियों में—'प्रेडनीसोलोन' १० मि०ग्रा० दिन में ३ बार दें।

नोट—इसमें पुनरावर्तन की सम्भावना कम होती है।

पीड़ा के लिए—एसीटिल सेलीसिलिक एसिड + कोडीन पाउडर मिलाकर दिन में ३ बार दें।

गम्भीर स्वरूप की पीड़ा में—℞ 'पेथिडीन हाइड्रोक्लोराइड' १०० मि० ग्रा० इञ्जे० रूप में।

श्यावता (Cyanosis) **के लिए**—ऑक्सीजन ४ लीटर प्रति मिनट के हिसाब से नाक से (Intra nasal) अथवा BLB मास्क द्वारा दें।

सामान्य प्रबन्ध—जब तक रोगी लाक्षणिक तथा बुखार की स्थिति में रहे तब तक शय्या पर पूर्ण विश्राम करायें।

पुरुलेण्ट पेरीकार्डाइटिस
(Purulent Pericarditis)

पर्याय—पूययुक्त हृदयावरणशोथ।

परिचय— ○ इस अवस्था में पेरीकार्डियम के अन्तर्गत पूय (Pus) संचित हो जाता है। अर्थात् यह पूय-संचय (Pus accumulation) की अवस्था है।

कारण (Causes)— पायमिया के उपद्रवस्वरूप।

○ एम्पाइमा (Empyema) अथवा पल्मोनरी एब्सिस के कारण पेरीकार्डियम में उपसर्ग का सीधा प्रसार हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्षण (Symptoms)—१. इसके लक्षण एक्यूट ड्राई पेरीकार्डाइटिस से मिलते-जुलते हैं।

२. ज्वर मे प्राय: दैनिक परिवर्तन मिलता है।

३. नाड़ी की गति तीव्र होती है।

४. कभी-कभी रोगी को ज्वर कम्पन के साथ आता है।

५. किसी-किसी रोगी को पसीना भी आता है।

परीक्षा (Examination)—**रक्त-परीक्षा** (Blood test)—

१. W. B. C. की संख्या बढ़ी हुई मिलती है। यह संख्या लगभग १२,००० प्रति क्यूबिक मिली मीटर होती है।

२. इसमें बहुत कम रोगी ज्वररहित होते हैं।

उपद्रव (Complications)—१. पेरीकार्डियम में कैल्सीभवन (Calcification) हो जाता है।

२. तरल के प्लूरा में विदार (Rupture) उत्पन्न करने से एम्पाइमा की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

पूर्वानुमान (Prognosis) — यह एक घातक रोग है। इसमें ट्यूबरकुलस पायोपेरीकार्डियम के रोगी स्वयं ठीक हो जाते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—चिकित्सा निम्न दो उद्देश्यों की पूर्ति के लिए की जाती है—

१. उपसर्ग-निरोधक।

२. तीव्र सम्पीडन (Acute temponade) के निवारण हेतु।

१. **उपसर्ग-निरोध के लिए**—एण्टीबायोटिक तथा ब्रॉड स्पेक्ट्रम एण्टीबायोटिक का लगातार प्रयोग करते हैं।

अथवा—एम्पीसिलीन का विधिवत् मुख तथा सूचीवेध के रूप में प्रयोग।

अथवा—'सेफेलेक्सिन' ५०० मि० ग्रा० दिन में २ बार।

इसके अतिरिक्त पेरीकार्डियल पैरासेण्टेसिस (हृदयावरण-पारवेधन) कर उपसर्ग का पता लगाते हैं।

○ पारवेधन के लिए—सुई को जीफाइड प्रोसेस (Xyphoid process) तथा लेफ्ट कोस्टल कार्टीलेज में प्रवेश कर एण्टीबायोटिक प्रवेश किया जाता है।

○ इसके अतिरिक्त निम्न सामान्य सूचीवेध देते हैं—

℞ प्रोकेन पेनिसिलीन (Procain penicillin)

मात्रा—६००,००० यूनिट प्रति १२ घण्टे पर I/M ३-४ सप्ताह तक।

अथवा—टेरामाइसिन, एम्पीसिलीन, गेरामाइसिन का सूचीवेध।

२. **राजयक्ष्मा के लिए**—यक्ष्मा-निरोधी औषधि देते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—○ यदि रोगी का सामान्य स्वास्थ्य अच्छा हो और रोग यक्ष्मा-जन्य न हो तो शल्यकर्म द्वारा पूय को निकाल देते हैं।

○ इस क्रिया को 'सर्जिकल ड्रेनिज' (Surgical drainage) कहते हैं।

क्रॉनिक कंस्ट्रिक्टिव पेरीकार्डाइटिस
(Chronic Constrictive Pericarditis)

पर्याय—इसे पिक्स रोग (Pick's disease) भी कहते हैं।

कारण—१. टचुबरकुलस पेरीटोनाइटिस के परिणामस्वरूप; ऐसा लोगों का विचार है।

२. पायोपेरीकार्डियम तथा हीमोपेरीकार्डियम भी इसका प्रधान कारण होता है।

३. कुछ लोग इसे सेप्सिस (Sepsis) का कारण, मानते हैं।

४. कुछ लोगों का विचार है कि यह विषाणुजन्य (Viral) होता है।

५. कभी-कभी आघात (Trauma) तथा मेलिग्नेन्सी इसके कारणों में प्रधान माना जाता है।

नोट—○ वास्तव में इसके औत्पत्तिक कारणों का सही निराकरण नहीं हो पाया है।

विकृति विज्ञान (Pathology)—इसके अन्तर्गत पेरीकार्डाइटिस, लिवर इन्लार्जमेण्ट, पेरिहेपाटाइटिस तथा जलोदर हो जाता है।

लक्षण (Symptoms)—१. इसके सामान्य लक्षणों में—रोगी में थकान, कमजोरी (Weakness), दम फूलना, उदर तथा पैरों में शोथ के लक्षण होते हैं।

२. विशिष्ट लक्षण निम्न प्रकार से हैं—

(i) वेनस प्रेशर (Venous pressure) अधिक बढ़ जाता है।

(ii) हृदय का बढ़ना (Cardiac inlargement)।

(iii) गर्दन की शिरायें फूली हुई मिलती हैं।

(iv) नाड़ी आयतन में नीचे (Down) होती है।

(v) ब्लड-प्रेशर सब-नार्मल मिलता है।

(vi) पैरों के अन्तिम भाग ठंडे होते हैं।

(vii) श्यावता (Cyanosis) उपस्थित मिलती है।

(viii) शोथ (Oedema) दिखलाई देता है।

परीक्षण में—१. शरीर का ऊपरी भाग कमजोर होता है।

२. सर्विकल प्रेशर बढ़ा हुआ होता है।

३. यकृत् बढ़ा हुआ मिलता है।

४. नाड़ी प्रायः मन्द स्वरूप की मिलती है और विरोधाभासी होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. हाथ-पैर ठंडे होकर रोगी श्यावतामय (Cyanosed) हो जाता है।

६. ब्लड-प्रेशर मन्द होता है।

इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम (Electrocardiogram)—

१. इस परीक्षण में वेण्ट्रीकुलर फिलिंग में एकाएक रुकावट तथा वाम निलय (Left ventricle) की क्रियाहीनता प्रदर्शित होती है।

२. 'T' तरंग फ्लैट अथवा इनवर्टेड होती है।

३. एट्रीयल फिब्रीलेशन कामन होता है।

इकोकार्डियोग्राम—इसमें पेरीकार्डियम की थिकनिंग (Pericardium thickening) देखी जा सकती है।

लेबोरेटरी फाईण्डिंग्स—बहुत कम। लंग्स का ट्युबरकुलस इन्फेक्शन अथवा अन्य ऑर्गन नोट किये जा सकते हैं।

एक्स-रे-परीक्षा—इसके अन्तर्गत लघु स्पन्दन (डिमिनिस्ड पल्सेशन) दिखलाई देता है।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—इसका निम्न रोगों से विभेद करना चाहिए—

१. ट्राइकस्पिड स्टेनोसिस।

२. कंजेस्टिव हर्ट फेल्योर।

३. यकृत् सिरोसिस।

४. मेडीस्टेनल ट्यूमर।

५. महाशिरा अवरोध।

६. नेफ्रोसिस।

उपद्रव (Complications)—१. मिलियरी प्रकार का यक्ष्मा।

२. पैर की शिरा का थ्राम्बोफ्लेबाइटिस रोग।

३. नेफ्रोटिक सिण्ड्रोम (Nephrotic syndrome)।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. शल्य-चिकित्सा से ५०% रोगी स्वस्थ हो जाते हैं।

२. शल्य-चिकित्सा के उपरान्त भी ५-१०% रोगी मर जाते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—१. रोगी को कम नमक वाला आहार देना चाहिए।

२. एसाइटिस तथा कंजेस्टिव हर्ट फेल्योर के निमित्त 'डायोरेटिक्स' का प्रयोग कम मात्रा में करें।

नोट—डायोरेटिक्स का अधिक प्रयोग खतरनाक होता है।

३. डिजीटेलिस का प्रयोग थोड़ी मात्रा में किया जा सकता है।

शल्य-चिकित्सा (Surgical treatment)—

१. इस रोग की उपयुक्त चिकित्सा शल्य-चिकित्सा ही है।

CC-0. Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. शल्य-चिकित्सा से पूर्व प्लूरा से तरल का चूषण (Aspiration) करके अल्प मात्रा में मूत्रल औषधियों का सेवन कराया जाता है :

३. इसी प्रकार जलोदर के तरल के लिए टेपिंग क्रिया अपना कर जल का निष्कासन कर मूत्रल औषधियाँ दी जाती हैं।

४. तत्पश्चात् शल्य-क्रिया द्वारा स्थूल हृदयावरण (Thickened pleura) के व्यापक क्षेत्र को निकाल दिया जाता है।

५. उपद्रव से बचाव के लिए 'डिजॉक्सिन' का पर्याप्त मात्रा में प्रयोग कराया जाता है। ⊡

हृद्वाहिका-संस्थान के रोग 3/12

अन्तर्हृत्शोथ
(Endocarditis)

पर्याय—वल्वुलाइटिस (Vulvulitis)।

परिभाषा—It is an inflammation of the endocardium chiefly involving the valve structure.

प्रकार एवं कारण (Types and etiology)—

१. इन्फेक्टिव (Infective)।

२. नान-इन्फेक्टिव (Non-infective)।

१. **इन्फेक्टिव इण्डोकार्डाइटिस**—यह बैक्टीरिया, फंजाई (Fungi) अथवा रिकेट्सिया (Rickettsia) के द्वारा होता है। यह २ प्रकार का होता है—

(i) एक्यूट इन्फेक्टिव इण्डोकार्डाइटिस।

(ii) सब-एक्यूट इण्डोकार्डाइटिस।

२. **नान-इन्फेक्टिव इण्डोकार्डाइटिस**—यह प्रकार रियूमेटिक फीवर, लूपस एरीथेमेटस, पोस्ट मायोकार्डियल इन्फार्क्शन के रोगियों में मिलता है।

तीव्र रूप—○ आजकल 'एण्टीबायोटिक' तथा 'केमोथेराप्यूटिक' एजेण्ट्स के कारण तीव्र रूप (Acute variety) कम देखने को मिलता है।

○ यह स्ट्रेप्टोकोकाई, स्टेफिलोकोकाई, न्यूमोकोकाई आदि के संक्रमण द्वारा होता है। यह जीवाणु नार्मल वाल्व पर अपना प्रभाव दिखलाते हैं।

सब-एक्यूट वेराइटी (Sub-acute variety)—यह प्रकार अपेक्षाकृत अधिक कामन होता है और स्ट्रेप्टोकोकस विरीडेन्स (Streptococcas viridans) रोग का उत्पादक कारण होता है। इसके अतिरिक्त अन्य जीवा-

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

णुओं में स्ट्रेप्टोकोकस फेकेलिस, स्टेफिलोकोकस ऑरियस, सालमोनेला, ब्रूसेला, हीमोफाइलस, क्यू फीवर, कैण्डिडा एल्बीकेन्स आदि होते हैं।

प्री-डिस्पोजिंग कारण (Pre-disposing causes)—

१. रियूमेटिक वाल्व डिजीज।

२. कंजेनिटल हर्ट डिजीज।

३. दाँत, टॉन्सिल्स अथवा मसूड़ों (५०%), यूरीनरी पेल्विक तथा कार्डियक सर्जरी।

४. अपर रेस्पिरेटरी ट्रैक्ट इन्फेक्शन।

५. प्रोस्थेटिक वाल्व।

○ ९०% रोगियों में हृदय का वाम भाग (Left side of the heart) प्रभावित होता है। दक्षिण भाग (Right side) बहुत कम प्रभावित होता है।

○ एट्रियल फिब्रीलेशन, कंजेस्टिव कार्डियक फेल्योर तथा सिफिलिसजन्य हृदय रोग में सब-एक्यूट बैक्टीरियल इण्डोकार्डाइटिस उत्पन्न नहीं होता है।

एक्यूट इन्फेक्टिव इण्डोकार्डाइटिस—

लक्षण (Symptoms)—१. आक्रमण धीरे-धीरे होता है।

२. अरुचि।

३. शारीरिक शक्ति का ह्रास, रोगी का अचानक ही कमजोर होने लगना।

४. हलके स्वरूप का तापक्रम बराबर बना रहता है, किन्तु अनियमित रहता है।

५. कमर में पीड़ा होती है।

६. रोगी को कभी-कभी पसीना आता है और कभी-कभी कँपकँपी भी होती है।

७. कभी-कभी कोमा (Comma), कन्वल्सन्स (Convulsions) तथा पैरालिसिस की उपस्थिति मिलती है।

८. त्वचा पर लाल-लाल चकत्ते निकल आते हैं। नाखून के नीचे रक्तस्राव होता है।

सामान्य परीक्षण. (General survey) में—

१. अनीमिया सामान्य से गम्भीर होती है।

२. तापक्रम बढ़ा हुआ मिलता है।

३. नाड़ी तीव्र गति वाली (Tachycardia) होती है।

४. अँगुलियों के अग्रभाग मोटे मिलते हैं तथा उनमें पीड़ा होती है।

५. चिह्नी रक्तस्राव (Petechial haemorrhage)।

○ यह रक्तस्राव त्वचा पर उपस्थित मिलता है, विशेषकर आँख की कञ्जंक्टाइवा में। नाखूनों के अन्दर भी रक्तस्राव के चिह्न मिलते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. रोगी सुस्त तथा मानसिक रूप से अवसादित रहता है।

उदर-परीक्षा (Examination of abdomen)—प्लीहा बढ़ी हुई तथा मुलायम होती है। इसमें वेदना भी मिलती है।

मूत्र-परीक्षा (Urine test)—१. अल्बुमिन तथा R. B. C. मिलते हैं।

२. ब्लडयूरिया बढ़ी हुई मात्रा में मिलती है।

विशेष अन्वेषण—१. ब्लड कल्चर (Blood culture) २ बार नित्य ३ से ५ दिन तक करने पर जीवाणु की वृद्धि मिलती है।

२. Routine blood examination में हाइपोक्रोमिक अनीमिया तथा उच्च E. S. R. मिलता है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. प्रारम्भ में निदान होने पर रोग साध्य होता है।

२. विलम्ब से निदान होने पर पूर्वानुमान गम्भीर होता है। विशेष रूप से हर्ट फेल्योर, यूरीमिया तथा गम्भीर स्वरूप की अनीमिया की स्थिति में।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ क्रिस्टेलाइन पेनिसिलीन (Crystalline penicillin)

मात्रा—१०-२० मेगा यूनिट I/M प्रतिदिन विभाजित मात्रा में ४ से ६ सप्ताह तक।

नोट—यह जीवाणु की सेन्सिटिविटी पर निर्भर करती है।

निर्देश—पेनिसिलीन की अधिक मात्रा खतरनाक हो सकती है। इसलिए इसमें स्ट्रेप्टोमाइसिन मिलाकर देना चाहिए।

१. यदि रोग के जीवाणु का पता न चल सका हो तथा लेबोरेटरी रिपोर्ट आने में विलम्ब हो रही हो तो रोगी की चिकित्सा पेनिसिलीन + जेण्टामाइसिन अथवा स्ट्रेप्टोमाइसिन के साथ प्रारम्भ कर देनी चाहिए।

(i) ℞ बेन्जिल पेनिसिलीन १०,००,००० यूनिट्स

मात्रा—१० मिली० डिस्टिल्ड वाटर में घोलकर I/V प्रतिदिन १ बार।

(ii) ℞ जेण्टामाइसिन इन्जेक्टेबुल (Gentamycin injectable)

मात्रा—२ मिली० मांसपेशीगत दिन में १ बार ३ दिन तक।

व्या० नाम—जेण्टामाइसिन इन्जेक्टेबल (इंडियन शेरिंग कं०)

यदि इससे लाभ न हो तब—पेनिसिलीन १०,००,००० यूनिट + स्ट्रेप्टोमाइसिन ०·५ ग्राम नित्य दें।

○ **जब कार्डियक मरमर में वृद्धि हो रही हो**—तब ऐसे रोगी को स्ट्रेप्टोकोकल जीवाणु जनित इण्डोकार्डाइटिस का रोगी समझना चाहिए।

ऐसी स्थिति में चिकित्सा—क्लोक्सासिलीन (Cloxacillin

मात्रा—१ ग्राम दिन में ३ बार मुख मार्ग से प्रारम्भ करना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. ○ **जब ब्लड-कल्चर में जीवाणु का पता लग गया हो तब निम्नवत् चिकित्सा करें—**

रोग-उत्पादक जीवाणु	विशिष्ट औषधि
एस विरीडेन्स	पेनिसिलीन
एस-फिकेलिस	पेनिसिलीन + स्ट्रेप्टोमाइसिन
स्टेफिलोकोकाई	यदि पेनिसिलीन सेंसिटिव हो तो पेनिसिलीन + स्ट्रेप्टोमाइसिन।
	यदि लाभ न हो तो—
	℞ क्लोक्सासिलीन (Cloxacillin)
ग्राम निगेटिव ऑर्गेनिज्म (E. Coli)	℞ एम्पीसिलीन + को-ट्रीमोक्साजोल (Co-trimozole)

चिकित्सा सम्बन्धी निर्देश—आजकल एम्पीसिलीन (Ampicillin) का मांसपेशीगत (I/M) अथवा शिरागत (I/V) एवं मुख द्वारा प्रयोग अधिक लाभकारी सिद्ध हुआ है।

○ अन्य एण्टीबायोटिक्स में—'टेट्रासाइक्लीन ग्रुप' की औषधियाँ तथा क्लोरेम्फेनिकाल ग्रुप की औषधियाँ भी प्रभावकारी हैं।

○ प्रारम्भिक अवस्था में इन औषधियों में से २ सप्ताह तक चिकित्सा चलानी चाहिए।

○ जिन रोगियों में पुनरावर्तन की सम्भावना हो, उनमें उपरोक्त चिकित्सा को ५-६ सप्ताह तक चलाना चाहिए।

नोट—○ १. जहाँ तक हो सके औषधियों को इञ्जेक्शन के रूप में देना चाहिए। मुख द्वारा इनका प्रयोग तभी करना चाहिए, जब इस बात की पुष्टि हो जाय कि आँत द्वारा औषधि का शोषण पर्याप्त मात्रा में हो रहा है।

○ २. जब तक रोगी का ज्वर न उतर जाये, तब तक रोगी को शय्या पर ही विश्राम कराना चाहिए।

○ ३. जब रोगी में 'हर्ट फेल्योर' के लक्षण सम्भावित हो रहे हों, तब रोगी को शय्या पर विश्राम का समय और अधिक बढ़ा देना चाहिए।

लाभ की आशा कब करनी चाहिए—

जब ई० एस० आर० (E. S. R.) गिरने लगे और रक्तमूत्रता आदि लक्षण कम होने लगें तब रोग में पर्याप्त लाभ समझना चाहिए।

चेतावनी—रोगी के रक्त में यूरिया की परीक्षा सर्वदा करते रहना चाहिए, जिससे वृक्क की क्रियाशीलता का ज्ञान होता रहे।

○ **एण्टीबायोटिक चिकित्सा के साथ-साथ निम्न चिकित्सा भी करनी चाहिए—**

१. पीड़ा के लिए—पैरासिटामोल।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. अनीमिया के लिए—आयरन (Iron)।

३. हार्ट-फेल्योर के लिए—डिजोक्सिन (Digoxin) तथा मूत्रल (Diuretic) औषधियों का प्रयोग।

४. दंत विकार—दाँत उखाड़ कर उसकी उचित चिकित्सा करनी चाहिए। इसके लिए पूर्व में पेनिसिलीन-जी २ ग्राम १ घण्टे पहले और १ ग्राम ६ घण्टे बाद।

यदि रोगी पेनिसिलीन के प्रति सेन्सिटिव हो तो—

℞ इरीथ्रोमाइसिन १ ग्राम पूर्व में तथा ०·५ ग्राम ६ घण्टे पश्चात् दें।

पेरेण्टेरल रूप में—℞ एम्पीसिलीन १ ग्राम अथवा पेनिसिलीन-जी २ लाख यूनिट मांसपेशीगत अथवा I/V।

जेण्टामाइसिन १·५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर I/M अथवा I/V शल्यकर्म के १ घण्टे पूर्व तथा ८ घण्टे पश्चात् दें।

यदि पेनिसिलीन एलर्जिक हो तो—℞ वैनकोमाइसिन (Vancomycin) १ ग्राम I/V इफ्यूजन प्रारम्भ के १ घण्टे पूर्व। ८ घण्टे पश्चात् पुनः दुहरायें।

सब-एक्यूट इन्फेक्टिव इण्डोकार्डाइटिस
(Sub-acute Infective Endocarditis)
चिरस्थायी जीवाणुजनित हृदय-अन्तःशोथ

पर्याय—इसे अन्तःकलाशोथ लेण्टा (Endocarditis lenta), सब-एक्यूट बैक्टीरियल इण्डोकार्डाइटिस (Sub-acute bacterial endocarditis) भी कहते हैं।

परिभाषा (Definition)—It is an endocarditis of the abnormal valves usually caused by streptococcus viridans characterized by irregular pyrexia, embolic phenomena, spleenic enlargement and changing cardiac murmurs, the E. S. R. is very high.

○ यह हृदय के कुछ भाग की अन्तर्हृत्कला (Endocardium) की प्रगाली जीवाणुज शोथयुक्त (Progressive bacterial inflammatory) अवस्था है जो कि दीर्घकालिक होती है।

○ रोगियों में सबसे अधिक मिलने वाला इण्डोकार्डाइटिस का यह अधिक कामन प्रकार है।

रोग के कारण (Causes of the disease)—१. इस रोग का प्रमुख औत्पत्तिक कारण स्ट्रेप्टोकोकस वेरिडेन्स है, जो ९०% रोगियों को आक्रान्त करता है।

२. यह रोग १५-३० वर्ष के ऐसे युवकों में होता है, जिन्हें पहले से आमवातिक हृदय-अन्तःशोथ (Rheumatic endocarditis) का रोग होता

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है अथवा जिन्हें जन्मजात हृदय-रोग (Congenital heart disease) होता है।

३. दाँत तथा टॉन्सिल्स में उपसर्ग।

४. कभी-कभी एच० इन्फ्लूएञ्जाई से भी रोग हो जाता है।

लक्षण (Symptoms)—१. यह रोग धीरे-धीरे अज्ञात रूप में प्रसारित होता है, जिससे रोगी को यह बतलाना कठिन होता है कि उसे रोग कब प्रारम्भ हुआ था।

२. रोगी को क्रमशः अपने आप कृशता अनुभव होने लगती है। वह थोड़े ही परिश्रम से थक जाता है।

३. रोगी की क्षुधा नष्ट हो जाती है।

४. रोगी को हलका-हलका ज्वर भी रहने लगता है, जो प्रातः उतर जाता है और सायं शीत लगकर पुनः चढ़ जाता है। बुखार महीनों तक चलता रहता है।

५. सामान्य दुर्बलता, एनोरेक्सिया, सिरदर्द (Headache), रात्रि के समय पसीना (Marked night sweating) आदि लक्षण मिलते हैं।

६. रोगी के शिर, मांस तथा संधियों में आने-जाने वाला दर्द भी होने लगता है।

७. रोगी में पाण्डुता का लक्षण प्रारम्भ से ही उपस्थित रहता है, जिससे उसका रंग भूरा-मटियाला जैसा (Caf-au-late) हो जाता है।

८. परिश्रम करने पर रोगी का साँस फूलने लगता है।

९. शरीर-भार घट जाता है।

१०. कभी-कभी रोगी के जोड़ों में शूल के साथ शोथ भी हो जाता है।

११. किसी-किसी रोगी में प्रारम्भिक लक्षणों के अन्तर्गत प्लीहा में शूल अथवा प्लूरिसी होती है।

१२. प्लीहा (Spleen) कुछ बढ़ जाती है, किन्तु स्पर्श में वह मृदु प्रतीत होती है।

१३. त्वचा पर छोटे-छोटे चकत्ते निकल आते हैं, जो हँसली की हड्डी पर, गिट्टों पर, उसके अन्दर की झिल्ली पर तथा निचली पलक की अंदर की झिल्ली में निकल आते हैं।

१४. इस रोग में हाथ की अँगुलियों के सिरे मोटे हो जाते हैं।

नोट—चिरस्थायी जीवाणु-संक्रमण का यह एक विशेष चिह्न है।

१५. इस रोग में हाथ-पैर की अँगुलियों के मांस में मटर के आकार की छोटी-छोटी वेदनायुक्त ग्रन्थियाँ-सी बन जाती हैं।

अन्य लक्षण—1. Sooner or later a define mitral or aortic valvular lesion is found, alternatively a congenital heart lesion is present.

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

2. Emboli may be gross or minute.

सामान्य परीक्षण (General survey) में—

१. रोगी में विवर्णता मिलती है तथा उसकी अँगुलियाँ मुद्गरण (Clubbing) हो जाती है।

२. ग्रीवा के चारों ओर रुधिरांक रक्तस्राव (Petechial haemorrhage) दिखलाई देते हैं, जो कभी-कभी कंधे तथा नाखून के चारों तरफ होते हैं।

३. हाथ तथा अँगुलियों के पोर एवं पैर के तलवों पर छोटे-छोटे वेदना-युक्त लाल चकत्ते दिखलाई देते हैं, जो बाद में गायब हो जाते हैं।

तापक्रम (Temperature)—रोगी के शरीर का तापक्रम ९९° फा० मिलता है। जो हफ्तों तक सामान्य रहता है।

○ **नाड़ी** (Pulse)—नाड़ी की गति १००-१२० बार प्रति मिनट मिलती है।

रक्त-परीक्षा (Blood test)—१. प्रोग्रेसिव अनीमिया के लक्षण दिखलाई देते हैं।

२. R. B. C. की संख्या कुछ बढ़ी हुई मिलती है।

३. रक्त में श्वेतकण की वृद्धि मिलती है, अर्थात् वे बढ़ कर १२ हजार तक हो जाते हैं।

४. सेडीमेण्टेशन रेट कुछ बढ़ा हुआ होता है।

○ **ब्लड कल्चर** (Blood culture)—किसी-किसी रोगी में पॉजीटिव मिलता है।

○ **मूत्र-परीक्षा** (Urine test)—रक्तस्राव होने से कुछ रक्तकण तथा कुछ अल्बुमिन मिलता है।

○ **हृदय-परीक्षा**—हृदय की परीक्षा करने पर इसमें प्रथम के स्थान पर एक कठोर फूत्कार (Pansystolic murmur) सुनाई देता है। हृदय गति कुछ तीव्र होती है। देखने में उसका आकार कुछ बढ़ा हुआ मिलता है।

○ **निदान** (Diagnosis)—ज्वर, त्वचा पर चकत्ते, अँगुलियों का मुद्गरण (Clubbing) होना, प्लीहावृद्धि, पाण्डुता, मूत्र में रक्त की उपस्थिति, हृदय पर फूत्कार सुनाई पड़ना आदि लक्षणों तथा चिह्नों से रोग का निदान हो जाता है।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—क्षयरोग, टायफाइड फीवर तथा रियूमेटिक फीवर से इसका विभेद करना चाहिए।

उपद्रव (Complications)—धमनीरोध (इम्बोलिज्म) इसका सबसे बड़ा उपद्रव है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. रोग के प्रारम्भ होने से १-२ माह के अन्दर ही अन्दर इसकी चिकित्सा प्रारम्भ हो जाये तो ९०% रोगी अच्छे हो जाते हैं।

२. ३ मास के बाद चिकित्सा प्रारम्भ होने पर ५०% रोगी बच जाते हैं।

३. चिकित्सा के अभाव में रुग्ण वाल्व की असमर्थता के कारण हृदय फेल हो जाता है।

४. किसी-किसी अंग में इम्बोलिज्म होने की आशंका रहती है।

५. एण्टीबायोटिक औषधियों के आवर्त प्रयोग से रोग साध्य हो जाता है।

○ **नोट**—इस रोग के पूर्ण ठीक होने में १-२ वर्ष का समय लग जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) **रोग निरोधी चिकित्सा** (Prophylactic treatment)—

○ यदि किसी रियूमेटिक कार्डाइटिस (Rheumatic carditis) के रोगी में कोई आपरेशन करना हो तो एक दिन पहले उसे ५ लाख यूनिट पेनिसिलीन दिन में २ बार देना चाहिए। साथ ही ऑपरेशन के १ दिन बाद भी।

○ इसी प्रकार जन्मजात हृदय-विकार (Congenital heart disease) अथवा जीर्ण कपाटी विकार (Chronic vulvular disease) तथा दाँत उखाड़ने के उपरान्त उपसर्ग के निराकरण हेतु पर्याप्त मात्रा में एण्टीबायोटिक औषधियों का प्रयोग करना चाहिए।

(२) **रोगहर चिकित्सा** (Curative treatment)—

रोग का पता लगते ही रोगी के रक्त के कुछ नमूने ब्लड कल्चर (Blood culture) के लिए लेने के बाद—

℞ इन्जे० पेनिसिलीन बेन्जिल

मात्रा—२ मिलियन यूनिट्स I/M प्रति ६ घण्टे पर २ सप्ताह तक।

यदि लाभ मिल रहा हो तब निम्न चिकित्सा प्रारम्भ करें—

℞ इन्जे० प्रोकेन पेनिसिलीन फोर्टीफाइड

अर्थात्—बेन्जिल पेनिसिलीन ३००,००० यूनिट्स+प्रोकेन बेन्जिल पेनिसिलीन ९००,००० यूनिट्स I/M दिन में २ बार ६ सप्ताह तक।

नोट—यदि रोगी पेनिसिलीन के प्रति सेंसिटिव हो तो—

℞ टेबलेट प्रेडनीसोलोन (Tab. Prednisolone) ५ मि० ग्रा०

मात्रा—२ गोली दिन में २ बार २ सप्ताह तक।

○ **यदि सतत स्वरूप का (Persistent) ज्वर हो तो—**

℞ इन्जे० बेन्जाइल पेनिसिलीन ५० मिलियन्स यूनिट्स I/V इफ्यूजन प्रतिदिन।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—१ लीटर डेक्स्ट्रोज इफ्यूजन में 'इन्जे० हेपेरिन' १००० यूनिट मिला लेने से थ्रोम्बोफ्लेबाइटिस (Thrombophlebitis) का भय नहीं रहता है।

○ यदि रोगी अधिक बीमार हो—

℞ इन्जे० जेण्टामाइसिन (Inj. Gentamycin) ८० मि० ग्रा०

मात्रा—१ इन्जे० दिन में ३ बार मांसपेशीगत।

○ यदि फिर भी इन्फेक्शन रेसिस्टेण्ट हो गया हो तो—

कल्चर सेन्सिटिविटी (Culture sensitivity) के अनुसार एण्टीबायोटिक (Antibiotic) का प्रयोग करें।

१. यदि स्ट्रेप्टोकोकस फेकेलिस की उपस्थिति मिले तो—

℞ इन्जे० 'एम्पीसिलिन' अथवा 'एमोक्सीसिलिन' (Inj. Ampicillin or Amoxicillin)

मात्रा—१० ग्राम I/V नित्य। साथ ही—

℞ इन्जे० जेण्टामाइसिन ५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर नित्य I/V अथवा I/M ४ सप्ताह तक।

२. यदि स्टेफिलोकोकस ऑरियस की उपस्थिति मिले तो—

℞ इन्जे० मेथीसिलीन (Inj. Methicillin)

मात्रा—१० ग्राम I/V प्रतिदिन।

अथवा—इन्जे० सेफेलोटिन (Inj. Cephalotin)

मात्रा—१२ ग्राम I/V नित्य ४ सप्ताह तक।

३. पायोसायनियस की उपस्थिति मिलने पर—

℞ इन्जे० कोलेस्टिन (Inj. Colistin)

मात्रा—१-५ मिलियन्स यूनिट्स I/M प्रति ८ घण्टे पर कम से कम २ सप्ताह तक।

४. सूडोमोनास एरूजीनोसा (Pseudomonas aeruginosa)

℞ टोब्रामाइसिन (Tobramycin) + एजलोसिलीन (Azlocillin)

अथवा—टिकारसिलीन (Ticarcillin)।

तत्पश्चात्—

℞ १. टेबलेट ओरासिन (Tab. Oracyn) १२५ मि० ग्रा०

अथवा—पेण्टिड्स-८०० दिन में २ बार जीवनपर्यन्त।

२. दिन में २ बार चिकित्सा समाप्ति के ३ माह तक टेम्परेचर रिकर्ड किया जाये।

३. २, ४ तथा ६ सप्ताह पर ब्लड कल्चर कराना चाहिए।

४. दाँत में कोई संक्रमण हो तो उसकी चिकित्सा करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. संक्रमण ठीक होने के बाद आवश्यकतानुसार ३ माह से १ वर्ष पश्चात् वाल्व (कपाट) बदला जा सकता है।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)

१. अनीमिया (Anaemia)—

℞ फैरस सल्फेट २०० मि० ग्रा० मुख द्वारा दिन में ३ बार भोजन के बाद जब तक हीमोग्लोबिन स्तर नार्मल न हो जाये।

इसके साथ ही रोगी को पर्याप्त विटामिन्स तथा प्रोटीन युक्त आहार मिलना चाहिए।

२. इन्सोम्निया (Insomnia)—रोगी को पूर्ण विश्राम तथा नींद आ सके, इसके लिए क्लोरल हाइड्रेट्स मिक्श्चर अथवा फीनोबार्बीटोन दें।

आवश्यक निर्देश—○ इस रोग का पुनरावर्तन (Relapse) तभी होता है, जब कि कुछ समय औषधियाँ देना बन्द कर दी जाती हैं। ऐसी अवस्था में पुनः चिकित्सा प्रारम्भ कर देनी चाहिए।

○ इस रोग की चिकित्सा में दाँतों पर विशेष ध्यान रखना चाहिए। दन्तपूय (पायरिया) होने पर दाँत का तत्काल एक्स-रे कराकर दाँत को निकाल देना ही श्रेयस्कर होता है।

○ इसी प्रकार से विकृत टॉसिल्स की उपयुक्त चिकित्सा अपेक्षित है।

एक्यूट रियूमेटिक इण्डोकार्डाइटिस
(Acute Rheumatic Endocarditis)
तीव्र आमवातज अन्तर्हृदयकलाशोथ

परिभाषा—रियूमेटिक के परिणामस्वरूप इण्डोकार्डाइटिस तथा हृत्पेशी (Myocardium) के कुछ भाग में शोथ (Inflammation) उत्पन्न हो जाता है।

कारण (Causes)—१. आमवातज ज्वर (Rheumatic fever)।

२. रोगी सामान्यतः युवा होता है और मुख्य रूप से बालक।

३. कुछ परिवारों में यह रोग अधिक कामन होता है।

विकृति (Pathology)—इस रोग में हृदय का मांस सूज कर कुछ मोटा हो जाता है, विशेषरूप से वामक्षेपक कोष्ठ अधिक बड़ा हो जाता है तथा मिट्रल वाल्व का रिंग (Ring) कुछ चौड़ा हो जाता है।

लक्षण (Symptoms)—१. रोगी की आयु १० से २० वर्ष के बीच की होती है।

२. नाड़ी क्रमशः बढ़ने लगती है, साथ ही ज्वर भी बढ़ता जाता है।

३. रोगी में हृदयगत लक्षणों की प्रधानता होती है।

४. हृत् प्रदेश पर पीड़ा मिलती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. थोड़े परिश्रम से रोगी में कष्टश्वास के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

६. रोगी की भूख मारी जाती है।

७. पाण्डुता (Jaundice) उपस्थित रहती है।

परीक्षा (Examination)—१. ई० एस० आर० (E. S. R.) बड़ा हुआ होता है।

२. हृदय का शिखर (Apex) कुछ बाहर की दिशा में बढ़ जाता है।

३. हृदय के एक स्थान पर मरमर ध्वनि सुनाई देती है।

४. जैसे-जैसे रोगी में सुधार होता जाता है, वैसे-वैसे हृदय एपेक्स अपने सामान्य रूप में आता जाता है। इसके साथ ही मरमर ध्वनि लुप्त हो जाती है।

इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम (Electrocardiogram)—

○ इस रोग में रोगी का इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम लेने पर P. R. अन्तराल बड़ा हुआ होता है।

उपद्रव (Complications)—कुछ माह के पश्चात् माइट्रल स्टेनोसिस (Mitral stenosis) का उपद्रव हो जाता है। अन्य उपद्रव निम्नवत् हैं—

१. पेरीकार्डाइटिस (Pericarditis)।

२. प्लूरिसी (Pleurisy)।

३. कंजेस्टिज हर्ट फेल्योर (Congestive heart failure)।

चिकित्सा (Treatment)—१. रोगी को पूर्ण विश्राम की सलाह दें। उसे जरा भी परिश्रम न करने दें।

२. उपद्रव की स्थिति में कुछ सप्ताह का विश्राम अपेक्षित होता है।

३. कुछ माह के उपरान्त आराम कुर्सी पर लेटने की अनुमति प्रदान करनी चाहिए।

४. जब तक रोगी का E. S. R. सामान्य न हो जाय, तब तक उस पर बराबर निगरानी रखनी चाहिए।

औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ सोडियम सैलीसिलेट (Sodium salicylate)

मात्रा—१५-२० ग्रेन पानी के साथ प्रति ३-४ घण्टे पर।

नोट—बालक को कम मात्रा में दें।

टेबलेट डिजॉक्सिन (Tab. Digoxin) या लेनोक्सिन (Lanoxin) दें।

साथ ही—℞ प्रेडनीसोलोन (Prednisolone)

मात्रा—१० मि० ग्रा० जल के साथ प्रति ६ घण्टे पर।

तत्पश्चात्—१ सप्ताह बाद ५ मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर।

नोट—प्रेडनीसोलोन २० मि० ग्रा० की मात्रा दिन में २–३ बार दी जा सकती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही—℞ एम्पीसिलीन (Ampicillin) अथवा एमोक्सीसिलीन

मात्रा—२५० मि० ग्रा० का कैप्सूल मुख द्वारा दें या इसका इञ्जे० दें।

अन्य उपसर्ग की उपस्थिति में—

℞ फेनोक्सीमेथिल पेनिसिलीन (Phenoxymethyl penicillin)

मात्रा—२५० मि० ग्रा० दिन में २ बार दें। अथवा इसका इञ्जे० दें।

नोट—Premature systole की अवस्था में 'डिजॉक्सिन' का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

निर्देश—○ उपरोक्त चिकित्सा-क्रम १½ मास तक चलाना आवश्यक होता है।

○ Careful treatment of the condition may require prolonged rest in bed for 6 to 9 months.

○ यदि साथ में अनीमिया की उपस्थिति मिले तो 'एण्टी अनीमिक ड्रग्स' का उपयोग करें। अथवा फैरी-एट अमोनिया साइट्रेट १५ ग्रेन दिन में ३ बार दें। □

हृद्वाहिका-संस्थान के रोग 3/13

द्विकपर्दीकपाटिका-अक्षमता
(Mitral Incompetence)

माइट्रल बाल्व का कार्य न करना

पर्याय—इसे माइट्रल रेगर्जीटेशन भी कहते हैं।

परिचय—इस अवस्था में माइट्रल वाल्व के कार्य न करने के कारण बायें वेण्ट्रिकल के सिकुड़ते समय रक्त बायें ऑरिकल में प्रवेश करता है। यह विकृति रियूमेटिज्म के कारण माइट्रल वाल्व विकृत हो जाने से या ज्वर, रक्ताल्पता, ब्लड-प्रेशर आदि के कारण हृदय के फैलने से होती है। रियूमेटिक जन्य अवस्था रचनात्मक तथा अन्य अवस्थाएँ गुणकर्मी (Functional) होती हैं।

कारण (Etiology)—१. 'रियूमेटिक फीवर' इसका विशेष कारण है।

२. बैक्टीरियल इण्डोकार्डाइटिस।

३. पेपिलरी मीजिल्स की अकर्मण्यता (Dysfunction) अथवा विदार (Rupture)।

४. जन्मजात (Congenital)।

५. माइट्रल वल्वोटोमी के समय आघातयुक्त अश्रुस्राव (Accidental tearing during mitral valvotomy)।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. हाइपरटेंशन, कोरोनरी वेस्कुलर डिजीज़ अथवा एऑर्टिक वाल्व डिजीज आदि किसी कारण से वाम निलय (Left ventricle) के विकृत (विस्तृत) होने से।

७. कॉर्डल टेण्डाइनी (Chordal tendinea) का इडियोपेथिक रप्चर।

८. माइट्रल वाल्व का प्रोलैप्स।

नोट—यह मुख्य रूप से आमवातज (Rheumatic) होता है।

लक्षण (Symptoms)—१. एक लम्बे समय तक किसी प्रकार के कोई लक्षण प्रकट नहीं होते।

२. रोग से ग्रसित रोगी में रियूमेटिक इन्फेक्शन का पूर्व इतिहास मिलता है।

३. दीर्घ काल के पश्चात् हृदय पेशी में कम्पेंसेटरी फेल्योर हो जाता है।

४. कम्पेंसेटरी फेल्योर के पश्चात् अनेक लक्षण, विशेषकर परिश्रम से अकारण श्वास फूलना, धड़कन तथा बाद में एड़ी (Ankle) में शोथ, खाँसी तथा बलगम का निकलना प्रारम्भ हो जाता है।

नोट—○ इसके लक्षण माइट्रल स्टेनोसिस से मिलते-जुलते होते हैं।

परीक्षण में (On examination)—१. विशेषकर कोई लक्षणात्मक चिह्न नहीं दिखलाई देता है। नाड़ी छोटी तथा आयतन (Volume) में ऊँची होती है।

२. **परिस्पर्शन** (Palpation)—'एपेक्स बीट' बहुत नीची (More down) होती है।

३. **परिस्रवण** (Auscultation)—हृदयगत दोनों ध्वनियाँ एपेक्स तथा हृदय के आधार पर सुनाई देती हैं। एपेक्स पर सिस्टोलिक मरमर सुनाई देता है। यह हृदय की प्रथम ध्वनि का अनुसरण करती है। कभी-कभी यह मरमर स्केपुला के कोण पर सुनाई देती है। इसकी तीव्रता एपेक्स पर सबसे अधिक प्रतीत होती है।

○ द्वितीय हृदय ध्वनि के पश्चात् तृतीय हृदय ध्वनि सुनाई देती है। ट्राईकस्पिड प्रदेश (Tricuspid area) में सिस्टोलिक मरमर सुनाई देता है। इसके साथ-साथ यकृत् विस्तृत तथा स्पन्दनकारी दिखलाई देता है और फुप्फुस के आधार पर 'राल्स' सुनाई देते हैं।

○ कभी-कभी सिस्टोलिक थ्रिल माइट्रल एरिया पर प्रतीत होती है।

अन्वेषण (Investigation)—१. छाती का एक्स-रे (P. A.)—लेफ्ट ऑरिकल तथा लेफ्ट वेण्ट्रीकल के इन्लार्जमेण्ट को प्रदर्शित करता है। अर्थात् एक्स-रे में वाम अलिन्द तथा वाम निलय विस्तृत दिखलाई देते हैं।

○ माइट्रल वाल्व पर कैल्सीफिकेशन दिखलाई पड़ता है।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. ई० सी० जी० (E. C. G.)—लेफ्ट वेण्ट्रीकुलर तथा लेफ्ट एट्रियल इन्लार्जमेण्ट प्रदर्शित करता है।

३. माइट्रल प्रोलैप्स में इको-कार्डियोग्राम विशेष महत्त्व रखता है।

कम्पेन्सेटरी फेल्योर के साथ-साथ हृदयगत अन्य लक्षण—

१. इसके अन्तर्गत चेहरे पर श्यावता (Cyanosis) तथा थोड़े परिश्रम से ही श्वासकष्ट (Dyspnoea) मिलता है।

२. एपेक्स और अधिक बाईं तरफ खिसक जाता है तथा उसकी गति बढ़ जाती है।

३. शिरागत रक्त की अधिकता के लक्षण भी दिखलाई देते हैं। इसके अन्तर्गत गर्दन की शिरायें विस्तृत हो जाती हैं। साथ ही ट्राईकस्पिड वाल्व भी विस्फारित हो जाता है।

४. पैर के गुल्फ (Ankles) के विभिन्न अंगों में शोथ दिखलाई देता है।

५. रोगी में मूत्र-त्याग की क्रिया कम हो जाती है।

६. मूत्र में एल्बुमिन (Albumine) तथा रक्त भी दिखलाई देते हैं।

७. प्रारम्भ में हृदय के चारों प्रकोष्ठ (Chambers) छोटे हो जाते हैं, इसके पश्चात् फैल जाते हैं तथा फेफड़े में रक्त का संचय हो जाता है।

८. नाड़ी मन्द हो जाती है।

चिकित्सा (Treatment)—१. इसमें कंजेस्टिव कार्डियक फेल्योर की चिकित्सा की जाती है।

२. कम्पेन्सेटरी केसिस की कोई चिकित्सा नहीं है।

३. रियूमेटिज्म सम्बन्धी कोई विकार शेष रह गया हो तो उसकी चिकित्सा करें।

४. चिकित्सा कारण के अनुसार करनी चाहिए।

५. सामान्य चिकित्सा के अन्तर्गत रोगी को आराम का जीवन व्यतीत करने का परामर्श दें। हृदय में शक्ति का संचय आवश्यक होता है।

○ आजकल शल्य-चिकित्सा के अन्तर्गत प्रोस्थेसिस कृत्रिम अंग द्वारा कपाट (Volve) को बदल दिया जाता है। इसमें डाइरेक्ट विजिन के साथ कार्डियो पल्मोनरी वाइपास सर्जरी द्वारा वाल्व को बदला जाता है।

○ शल्य-चिकित्सा के पूर्व रोगी को कष्ट से बचाने के लिए डिजॉक्सिन तथा डायोरेटिक औषधियों का प्रयोग किया जाता है।

नोट—पल्मोनरी हाइपरटेंशन के रोगी की शल्य-चिकित्सा खतरनाक होती है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. जब हृदय का आकार सामान्य रहता है, मायोकार्डियम पुष्ट रहता है और परिश्रम से कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता तो ऐसा रोगी वर्षों तक जीवित रहता है।

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. जब इस रोग में रोगी का वाम निलय (Left ventricle) अधिक बढ़ जाता है, तब ५० वर्ष के ऊपर के रोगी में हृदयपात (हर्ट फेल्योर) की अधिक सम्भावना रहती है।

माइट्रल स्टेनोसिस
(Mitral Stenosis)

माइट्रल छिद्र का छोटा हो जाना

परिचय—○ यह माइट्रल वाल्व की संकीर्णन (Narrowing) अवस्था है। अर्थात् माइट्रल वाल्व की जड़ में फाइब्रस टिसू के जमने के कारण बायें ऑरिकिल तथा बायें वेण्ट्रिकल के बीच का रास्ता छोटा हो जाता है।

यह रोग प्रायः स्त्रियों में मिलता है। इस रोग से ग्रसित रोगियों में ४५ वर्ष या इससे ऊपर की अवस्था वाली लगभग ७५% स्त्रियाँ होती हैं।

कारण (Etiology)—१. रियूमेटिज्म के कारण उत्पन्न होने से यह विकृति माइट्रल इन्कॉम्पीटेन्स के साथ-साथ मिलती है।

२. यह प्रायः शोथजन्य होता है, जिसमें १०% आमवातिक होता है।

३. उपसर्ग जैसे—स्कार्लेट फीवर, इन्फ्लूएञ्जा आदि के उपसर्ग के परिणामस्वरूप भी हो जाता है।

४. यह रोग पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में मध्य आयु के उपरान्त अधिक मिलता है।

अन्य कारण—

१. कंजेनीटल (Congenital)—ASD; कोर ट्राइट्रीटम तथा कॉर्टेशन एओर्टा से सम्बन्धित होता है।

२. बैक्टीरियल इण्डोकार्डाइटिस।

३. इण्डोकार्डियल फाइब्रोक्लैस्टोसिस।

४. वाइरल एवं रिकेट्सियल इन्फेक्शन।

५. लेफ्ट एट्रियल मिक्सोमा (Left atrial myxoma)।

विकृति-विज्ञान (Pathology)—○ इस रोग में वाल्व रिंग संकीर्ण हो जाते हैं तथा उसकी कर्पदिकाएँ (Cusps) आसंजित हो जाती है। साथ ही कार्डी कण्डरा बच्चों में छोटी होती है। हृदय तथा अन्य स्थानों में द्वितीयक परिवर्तन (Secondary changes) हो जाते हैं।

लक्षण (Symptoms)—○ रोग के प्रारम्भ में कोई लक्षण नहीं मिलते हैं।

○ रोग बढ़ने पर—

१. हृदय-धड़कन (Palpitation) मिलती है।

२. [illegible]

 CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. कपोल का लाल रहना।
४. नख एवं नेत्र आदि में पीलापन।
५. 'जुगलर वेन' का फूलना।
६. हृदय का विस्फारित होना।
७. खाँसी के साथ रक्त का आना।
८. नाक का अग्रभाग, कान तथा हाथ-पैर शीतल तथा नीला हो जाना।
९. नाड़ी दुर्बल तथा उसकी गति तीव्र रहती है।
१०. रक्तचाप कम हो जाता है।
११. एड़ी (Ankle) पर हलका शोथ।

○ इसके लक्षण एक्यूट रियूमेटिज्म के ३-४ वर्ष बाद धीरे-धीरे प्रारम्भ होते हैं, जिसमें ७५% स्त्रियाँ होती हैं। रोगी के गाल तथा होंठ गहरे रंग के हो जाते हैं।

परीक्षण—(१) **परिदर्शन** (Inspection)—१. प्रीकार्डियल बल्गिंग (Precordial bulging) उपस्थित मिलता है।

२. पैरास्टर्नल हीन तथा इपीगैस्ट्रिक पल्सेशन उपस्थित मिलता है।

३. एपेक्स बीट प्रायः नार्मल तथा बाईं तरफ मिलती है।

४. राइट वेण्ट्रीकुलर हाइपरट्रॉफी के साथ-साथ कार्डियक इन्लार्जमेण्ट मिलता है।

५. लघु संवेद (Short impulse) प्रतीत होता है जो एपेक्स पर तीव्र स्वरूप का दिखलाई देता है।

६. हृदय-प्रदेश पर हाथ रखने से एक विशेष प्रकार का स्पन्दन प्रतीत होता है, जैसा कि किसी बल्ली के ऊपर हाथ रखने से होता है।

(२) **परिस्रवण** (Auscultation)—१. इसके अन्तर्गत एक विशेष प्रकार की 'मरमर' सुनाई देती है, जो मन्द तथा तीव्रता लिये हुए होती है। साथ ही अनुशिथिलन (Diastole) के समय सुनाई देती है।

२. एपेक्स पर प्री-सिस्टोलिक थ्रिल तथा डायस्टोलिक मरमर मिलती है। यह मरमर चित लेटने में अधिक स्पष्ट सुनाई देती है। हृदय के द्वितीय शब्द के ठीक बाद प्रारम्भ होती है और डायस्टोल के मध्य में इसकी तीव्रता कम हो जाती है। इसकी प्रकृति कुत्ते के भूँकने के समान कर्कश होती है तथा परिश्रम से और अधिक तीव्र हो जाती है।

३. एपेक्स पर हृदय का प्रथम शब्द तीव्र तथा द्वितीय शब्द अस्पष्ट होता है।

४. पल्मोनरी द्वितीय शब्द तीव्र तथा दो भागों में विभाजित हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्वेषण (Investigation)—

(१) रेडियोलॉजी एक्स-रे (P. A.)—

१. एक्स-रे परीक्षा में पल्मोनरी धमनी बढ़ी हुई (Prominent) मिलती है।

२. लेफ्ट ऑरिकिल विस्तृत (Dilated) मिलता है।

३. राइट वेण्ट्रिकल भी विस्तृत मिलता है।

४. कोनस आर्टीरिओसस तथा लेफ्ट एट्रियल एपेण्डिक्स विस्फारित (Dilated) तथा प्रॉमिनेण्ट दिखलाई देता है।

५. महाधमनी (Aorta) छोटा दिखलाई पड़ता है।

६. हाइलम पर वैस्कुलर छाया अतिपूरित (Engorged) मालूम होती है।

७. हृदय छाया के मध्य में माइट्रल वाल्व पर कैल्सीफिकेशन मिलता है।

८. बेरियम आहार पिलाने पर ग्रासनली (Oesophagus) विस्फारित तथा वाम अलिन्द (Left atrium) के चारों तरफ वक्र (Curved) दिखलाई देता है।

(२) इलेक्ट्रिक कार्डियोग्राम —

१. लम्ब हृदय (Vertical heart) हो जाने के कारण दक्षिण अक्षीय विस्थापन (Right axis deviation) दिखलाई देता है।

२. E. C. G. 'राइट वेण्ट्रीकुलर हाइपरट्रॉफी' तथा 'पार्शियल राइट बण्डल ब्राञ्च ब्लॉक' के चिह्न तथा लक्षण मिलते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा तथा आवश्यक निर्देश —

१. रोगी को पूर्ण विश्राम के साथ रखा जाये। ऐसा प्रबन्ध किया जाय जिससे उसके हृदय पर कोई दबाव न पड़े।

२. कम्पेन्सेटरी तथा एट्रियल फिब्रीलेशन की उपयुक्त चिकित्सा करें।

३. रोग के मृदु स्वरूप में कोई विशेष लक्षण उपस्थित नहीं होते। ऐसी अवस्था में रोगी की पर्याप्त देखभाल करनी पड़ती है।

४. हृदय की शक्ति रिजर्व रखने का प्रयत्न करना चाहिए।

५. इन्फेक्शन (संक्रमण) से बचाव किया जाय।

६. रियूमेटिक एक्टिविटी की चिकित्सा आवश्यक है।

७. यदि कोई उपद्रव हो तो उसकी समुचित चिकित्सा करनी चाहिए।

(२) शल्य-चिकित्सा (Surgical treatment)—

○ रोग की उग्रावस्था में जब श्वासकष्ट का इतिहास मिले और शरीर में श्यावता (Cyanosis) के लक्षण उत्पन्न होने लगे तो अवस्था के अनुकूल होने पर कपाट का उच्छेदन (Valvectomy) की व्यवस्था करनी चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) अन्य चिकित्सा—इस रोग में अधिकांश चिकित्सा कारणों के अनुरूप की जाती है—

१. यदि रोगी फुप्फुसीय शिरागत रक्ताधिक्य (Pulmonary veinous congestion) से पीड़ित हो तो ऐसी अवस्था में मूत्रल औषधियों का प्रयोग करना चाहिए।

२. यदि रोगी पेरॉक्सीस्मल एट्रियल फिब्रीलेशन से पीड़ित हो तब उसकी चिकित्सा क्विनिडीन (Quinidine) से करनी चाहिए।

(४) शल्य-चिकित्सा के पश्चात् औषधि-चिकित्सा—

१. कंजेस्टिव हर्ट फेल्योर से बचाव की व्यवस्था की जाय।

२. कम नमक का आहार दिया जाय।

३. डिजीटेलिस का उचित मात्रा में प्रयोग करायें।

४. 'मर्क्यूरिक डायोरेटिक्स' की व्यवस्था करें।

५. पेनिसिलीन-जी २ मैगा यूनिट दिन में २ बार मुख से दें।

६. शारीरिक परिश्रम न करने दें। धीरे-धीरे व्यायाम की आदत डालें।

७. प्राणायाम (Breathing exercise)।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. इस रोग में बिना ऑपरेशन के रोगी का जीवन सीमित रहता है।

२. ४० वर्ष से पूर्व सेरिब्रल इम्बोलिज्म के कारण रोगी की मृत्यु हो जाती है।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—इस रोग का निम्न रोगों से पार्थक्य करना चाहिए—

१. प्राइमरी पल्मोनरी हाइपरटेंशन।

२. कण्डक्टेड मरमर ऑफ एऑर्टिक इन्कॉम्पीटेंस।

३. फंक्शनल माइट्रल मिड-डायस्टोलिक मरमर।

४. ए० एस० डी०।

५. लेफ्ट एट्रियल मिक्सीमा।

६. बोन फ्लिण्ट्स मरमर।

एऑर्टिक इन्काम्पीटेंस
(Aortic Incompetence)
महाधमनी अक्षमता

पर्याय—इसे एऑर्टिक रिर्गिजिटेशन (Aortic regurgitation) भी कहते हैं।

परिचय—इस रोग के अन्तर्गत महाधमनी कपाट (Aortic valve) के द्वारा रक्त का प्रतिवर्त (Blood reflux) होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ अर्थात् इस अवस्था में एओर्टा के वाल्व के कार्य न करने से जब वाम वेण्ट्रिकल फूलता (Diastole) है, तब एओर्टा की ओर से रक्त बायें वेण्ट्रिकल में प्रवेश करता है।

○ एओर्टा के वाल्वों में विकृति हो जाने से रक्त की कुछ मात्रा पीछे की ओर बायें वेण्ट्रिकल में पुनः प्रवेश करती है।

कारण (Etiology)—१. आर्टीरियोस्क्लेरोसिस जो मुख्य रूप से सिफिलिस से सम्बन्धित होता है।

२. रियूमेटिक फीवर।

३. बैक्टीरियल इण्डोकार्डाइटिस।

४. आघात (Trauma)

५. एथीरोस्क्लेरोटिक।

६. हाइपरटेंशन।

७. मार्फन सिण्ड्रोम।

८. रिउमेटाइड स्पॉण्डीलाइटिस।

९. डिसेक्टिंग एऑर्टिक एन्यूरिज्म।

१०. रेटर्स सिण्ड्रोम।

११. अल्सरेटिव कोलाइटिस।

१२. एओर्टा की दीवार में व्रण (Atheroma) के होने से।

१३. जन्मजात (Congenital)—इसके अन्तर्गत २ कपाट कर्पदिकाएँ (Valve cusps) जुड़ जाती हैं। इसके कारण यह कपाट आपस में भलीभाँति बन्द नहीं हो पाते हैं।

१४. महाधमसी के प्रथम भाग तथा 'एऑर्टिक रिंग' में विस्फारण (Dilatation) होने से कर्पदिकाएँ (Cusps) भलीभाँति बन्द नहीं हो पाती हैं।

विकृति विज्ञान (Pathology)—१. इस रोग में महाधमनी की कर्पदिकाएँ (Valve cusps) अपरदित तथा संकुचित हो जाती है।

२. प्रायः इस रोग में वाम निलय (Left ventricle) की अतिवृद्धि (Hypertrophy) हो जाती है।

३. हृदय इन्लार्ज्ड (Heart enlarged) हो जाता है।

४. इसके अतिरिक्त रोगी में तान्तव हृत्पेशी परिवर्तन तथा महाधमनी इथीरोमा भी हो जाता है।

लक्षण (Symptoms)—१. यह रोग मुख्य रूप से पुरुषों में लगभग ३० वर्ष की उम्र में होता है।

२. हृदय-धड़कन (Palpitation)।

३. श्रम करने से श्वासकष्ट।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. हृदयशूल (Anginal pain)।

५. मूर्च्छा (Syncope)।

६. रोगी में कुछ वर्ष पूर्व का आमवात ज्वर (रियूमेटिक फीवर) का इतिहास मिलता है।

७. ऐसे रोगियों में जीवन के प्रारम्भिक काल में सिफिलिस होने का इतिहास भी मिलता है।

८. चक्कर तथा भ्रम की उपस्थिति मिलती है।

९. शिरःशूल रहता है।

१०. रोगी के चेहरे का रंग सफेद हो जाता है।

११. केशिकाओं में स्पन्दन।

१२. ब्लड-प्रेशर बढ़ जाता है।

१३. परिश्रम करने पर वक्ष में पीड़ा अनुभव होती है।

१४. कभी-कभी रोग का प्रारम्भ एकाएक होता है, जिससे रोगी में कष्टश्वास के लक्षण मिलते हैं।

१५. गर्दन की कैरोटिड धमनियों में सुस्पष्ट स्पन्दन मिलता है।

१६. डायस्टोलिक रक्तचाप अत्यधिक कम हो जाता है।

१७. लगभग १० से १५% रोगी इस रोग से एकाएक मर जाते हैं।

परीक्षा (Examination)—१. रोगी का चेहरा पाण्डुवर्ण का (Anaemic) हो जाता है। यह इस रोग का प्रमुख सूचक लक्षण है।

२. रोगी की आकृति चिन्ताजनक होती है।

३. कैरोटिड धमनी में स्पन्दन मिलता है।

○ हृदय का परिदर्शन (Cardiac inspection)—१. हृदयगत संवेद (Cardiac impulse) तीव्र तथा व्यापक होता है।

२. 'एपेक्स बीट' चूचक रेखा के थोड़ा बाहर मिलती है।

३. हृदय-परिस्पर्शन में स्पन्दन तीव्र स्वरूप का होता है, जो नीचे तथा बाहर की दिशा में विस्थापित प्रतीत होता है।

परिश्रवण (Auscultation)—१. डिस्टोलिक मरमर केरोटिड प्रदेश में सुनी जा सकती है। सबसे स्पष्ट थर्ड लेफ्ट इण्टरकोस्टल स्पेस (स्टर्नम के पास) में सुनाई देती है।

२. सिस्टोलिक मरमर हृदय के आधार पर सुनी जा सकती है।

३. रोगी को बैठाकर सुनने से स्टर्नम के मध्य में मरमर सुस्पष्ट सुनाई देता है।

४. मरमर ध्वनि अपनी पूर्ण अवधि पर्यन्त एक समान रहती है।

नोट—हृदय की परीक्षा करने पर लेफ्ट वेण्ट्रिकल के मोटा होने अथवा फैल जाने के कारण एपेक्स बाईं ओर तथा नीचे की दिशा में खिसक जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्य हृदयगत लक्षण—

१. हृदयताल (Cardiac rhythm) प्रायः नियमित रहता है तथा हृदयगति (Heart rate) सामान्य अथवा बढ़ी हुई मिलती है।

२. इस रोग में धमनियाँ प्रायः स्थूल हो जाती हैं।

३. नाडी प्रायः कोलैप्सिंग टाइप की होती है।

४. ब्लड-प्रेशर बढ़ा हुआ तथा डिस्टोलिक प्रेशर गिरा हुआ मिलता है।

५. पैर का रक्तदाब हाथ की तुलना में काफी बढ़ा हुआ मिलता है।

६. होष्ठ के भीतर की ओर केशिका स्पन्दन (Capillary pulsation) सुनाई देता है।

रेडियोलोजी (Rediology)—इस परीक्षा में वाम निलय (Left ventricle) बढ़ा हुआ मिलता है।

इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम—लेफ्ट वेण्ट्रिकल हाइपरट्रॉफी दिखलाई पड़ती है। कभी-कभी L B B B मिलती है।

अन्य परीक्षाएँ—सिफिलिस के रोगियों में W R, K T एवं V D R L टेस्ट पॉजीटिव मिलता है।

भावीफल (Prognosis)—१. आघात जन्य (Traumatic) में रोगी की तत्काल मृत्यु हो जाती है।

२. पुनरावर्ती (Recurrent) 'जीवाणुजन्य इण्डोकार्डाइटिस' के कुछ माह तथा वर्षों में रोगी की मृत्यु हो जाती है।

नोट—प्रायः सभी अवस्थाओं में तत्काल मुत्यु अवश्यम्भावी है।

चिकित्सा (Treatment)—१. साधारण तथा मध्य श्रेणी के रोग में प्रशामक चिकित्सा (Palliative treatment) एवं रोग-निरोधी (Prophylactic) एण्टीबायोटिक तथा डायोरेटिक के साथ करनी चाहिए।

२. **गम्भीर स्वरूप के रोगियों में**—एऑर्टिक वाल्व को 'शल्य-चिकित्सा' के द्वारा बदल दिया जाता है।

३. तीव्र स्वरूप के रोग में जो इन्फेक्टिव इण्डोकार्डाइटिस के पश्चात् उत्पन्न होता है, उचित 'एण्टीबायोटिक' तथा 'वेसो डाइलेटर्स' का पहले प्रयोग करने के पश्चात् शल्य-चिकित्सा का अवलम्बन करना चाहिए।

४. K T, W R तथा V D R L परीक्षा में उपसर्ग की उपस्थिति मिलने पर सिफिलिस विरोधी (Anti-syphilitic) औषधियों का प्रयोग किया जाता है।

५. इस रोग में हर्ट फेल्योर की भाँति डिजीटेलिस का प्रयोग करते हैं।

६. हृदयशूल की स्थिति में रोगी को पूर्ण विश्राम अपेक्षित होता है।

○ **नोट**—जब रोगी में 'लेफ्ट वेण्ट्रिकल फेल्योर' की स्थिति उत्पन्न हो जाती है, तब औषधि-चिकित्सा से कोई लाभ नहीं मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चेतावनी—इन्फेक्टिव इण्डोकार्डाइटिस के उपरान्त कुछ सप्ताह तथा महीनों के पश्चात् उग्र हृदयपात (Severe cardiac failure) के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

एऑर्टिक स्टेनोसिस
(Aortic Stenosis)
महाधमनी-संकोच

परिचय—यह बहुत कम मिलनें वाला रोग है। यह महाधमनी कपाट छिद्र (Aortic valve orifice) की संकीर्णता की अवस्था है।

○ इस रोग में हृदय के एओर्टा का छिद्र (Aortic opening) छोटा हो जाता है। इससे लगभग ८०% पुरुष आक्रान्त होते हैं।

कारण (Etiology)—१. सिफिलिस इसका प्रमुख कारण है।

२. इण्डोकार्डाइटिस (रियूमेदिक टाइप) के पश्चात् यह एक शोथयुक्त परिवर्तन की अवस्था है।

३. युवा व्यक्तियों में यह केलकेरियस डीजनरेशन के कारण होता है।

४. आमवातज उपसर्ग जो जीर्ण स्वरूप का होता है, इसका औत्पत्तिक कारण माना जाता है।

○ **नोट**—कुछ लोगों के मत में यह रोग सिफिलिस के कारण बहुत ही कम होता है, जबकि कुछ लोग इसे प्रमुख कारण मानते हैं।

विकृति विज्ञान (Pathology)—१. इस रोग में वाल्व कस्प्स (Valve cusps) स्थूल हो जाती है। इसके साथ-साथ ये संकुचित होते तथा जुड़ जाते हैं। परिणाम यह होता है कि 'वाल्व कस्प्स' अपनी क्रियाशीलता खो बैठती है और कपाट छिद्र संकीर्ण हो जाता है।

२. वाम निलय की अतिवृद्धि हो जाती है।

३. महाधमनी छिद्र सामान्य आकार का होता है। परन्तु छिद्र के ऊपर का धमनी वाला भाग विस्फारित हो जाता है।

लक्षण (Symptoms)—१. यह रोग स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में अधिक होता है।

२. प्रायः रोगग्रस्त व्यक्ति युवावस्था का होता है।

३. रोगी में आमवात (Rheumatism) तथा सिफिलिस का इतिहास मिलता है।

४. हृत्शूल (Angina pectoris)—परिश्रम के उपरान्त रोगी में हृदय-शूल का लक्षण मिलता है।

५. श्वासकष्ट—पल्मोनरी शोथ के कारण रोगी में श्वासकष्ट का लक्षण मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. मूर्च्छा—कीर्डियक आउटपुट का नीचा होना, हाइपोटेन्शन, लेफ्ट वेण्ट्रीकुलर फेल्योर आदि के कारण रोगी में मूर्च्छा उत्पन्न हो जाती है।

७. रोगी के चेहरे का रंग सफेद हो जाता है।

८. रोगी को चक्कर आता है।

९. अन्य लक्षण—इस रोग में रोगी की दृष्टि विकृत हो जाती है।

नोट—अधिकांशतः इस रोग में 'एञ्जाइना पेक्टोरिस' हो जाता है।

○ **परीक्षा करने पर**—रोगी देखने में प्रायः स्वस्थ प्रतीत होता है।

१. **नाड़ी** (Pulse)—नाड़ी की गति मन्द तथा स्थायी संवेग वाली होती है।

२. **ब्लड-प्रेशर** (B. P.)—कम रहता है। कभी-कभी इसमें सिस्टोलिक ब्लड-प्रेशर तो सामान्य रहता है, किन्तु डिस्टोलिक ब्लड-प्रेशर बढ़ा हुआ रहता है।

नोट—रक्तदाब (B. P.) १४०/१०० रहता है।

३. **परिदर्शन** (Inspection)—हृदय-संवेग (Cardiac impulse) बलवान् होता है।

४. **एपेक्स बीट** (Apex beat)—५वें और ६ठे इण्टरकोस्टल स्पेस तथा चूचक रेखा के कुछ बाहर दिखलाई देता है।

५. **पल्पेशन** (Palpation)—एपेक्स बीट तीव्र मिलती है।

६. **परिताड़न** (Percussion)—हृदयमन्दता का क्षेत्र (Area of cardiac dullness) नीचे तथा बाईं ओर बढ़ा हुआ होता है।

७. **परिश्रवण** (Auscultation)—

(i) एऑर्टिक प्रदेश पर द्वितीयक हृदय ध्वनि अनुपस्थित मिलती है।

(ii) एऑर्टिक सिस्टोलिक मरमर मिड सिस्टोल पर तीव्रतम हो जाता है।

(iii) एऑर्टिक डिस्टोलिक मरमर प्रायः सुनाई देता है।

(iv) पल्मोनरी द्वितीयक ध्वनि प्रायः कमजोर होती है, जो कभी-कभी बिलकुल ही स्पष्ट नहीं होती है।

(v) एऑर्टिक सिस्टोलिक मरमर कभी-कभी पीठ पर प्रतीत होती है।

(vi) हृदयगति (Heart rate) प्रायः मन्द रहती है, अर्थात् ५०-६० प्रति मिनट रहती है। ताल (Rhythm) प्रायः नियमित रहता है।

८. **रेडियोलॉजी** (Radiology)—१. इस परीक्षा में हृदय का आकार सामान्य मिलता है।

९. कभी-कभी एऑर्टिक वाल्व का कैल्सीफिकेशन 'L A O' पोजीशन में देखा जा सकता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. इलेक्ट्रिक कार्डियोग्राम (E. C. G.)—वाम निलय (Left ventricle) में अतिवृद्धि (Hypertrophy) दिखलाई देती है।

११. इकोकार्डियोग्राम (Echo-cardiogram)—इस परीक्षा से लेफ्ट वेण्ट्रिकल के कार्य का पता चलता है।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—इस रोग का विभेद निम्न रोगों से करना चाहिए—

१. सब-एऑर्टिक स्टेनोसिस (Sub-aortic stenosis)।

२. हाइपरट्रॉफिक कार्डियोमायोपैथी (Hypertrophic cardiomyopathy)।

○ **भावीफल** (Prognosis)—इस रोग का रोगी प्रायः मर जाता है।

○ सर्वाधिक्य मृत्यु ५० वर्ष से अधिक की अवस्था में होती है।

चिकित्सा (Treatment)—१. K. T., W. L. टेस्ट में यदि उपसर्ग की उपस्थिति मिले तो सिफिलिस-निरोधी चिकित्सा करनी चाहिए।

२. रोगी को सभी अवस्थाओं में अधिक परिश्रम से बचना चाहिए।

३. मूर्च्छा तथा कार्डियक फेल्योर की स्थिति में उसकी विशिष्ट चिकित्सा करनी चाहिए।

४. इसकी शल्य चिकित्सा 'एऑर्टिक इन्कॉम्पीटेंस' के समान ही है, किन्तु इससे लाभ की कम ही आशा की जाती है। ⊡

हृद्वाहिका-संस्थान के रोग 3/14

अल्प रक्तदाब
(Hypotension)

पर्याय—निम्न रक्तचाप (Low blood pressure), रक्तचाप-न्यूनता, न्यून रक्तदाब, रक्तचाप-क्षीणता।

परिभाषा—Blood pressure readings consistently below 100 mm Hg. systolic in adult subjectes are indicative of hypotension or low blood pressure.

○ किसी भी कारण से उत्पन्न रक्तदाब की कमी की अवस्था को हाइपोटेन्शन (Hypotension) अथवा 'लो ब्लड-प्रेशर' (Low blood pressure) कहते हैं।

○ वयस्कों में सिस्टोलिक ब्लड-प्रेशर १०० mm Hg. से कम मिलने पर भी उन्हें अल्प रक्तदाब का रोगी माना जा सकता है।

रोग के कारण—इसके अनेक उत्पादक कारण हैं—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) कार्डियक डिजीज, विशेषकर लेफ्ट वेण्ट्रिकल फेल्योर (Such as occurs in coronary thrombosis and toxic myocarditis with diphtheria) ।

(२) सामान्य स्थिति (General condition)—

१. सुप्रारीनल एट्रॉफी अथवा टचुबरकुलोसिस (एडीसन्स डिजीज) ।

२. पल्मोनरी ट्युबरकुलोसिस ।

३. केचेक्सिया (Cachexia) एवं मालन्यूट्रीशन (Malnutrition) ।

४. शॉक, कोलैप्स, रक्तस्राव अथवा डिहाइड्रेशन ।

5. Exhaustion due to mental or physical overstrain; or asthenic types of fever, especially typhoid and influenza.

६. रीनल डिजीज एवं सेनाइल आर्टीरियोस्क्लेरोसिस ।

(३) दौर्बल्य, उपवास, भोजन तथा जल की कमी, शारीरिक तथा मानसिक परिश्रम की अधिकता, खराब स्वास्थ्य, इन्फ्लूएञ्जा ज्वर के पश्चात् की अवस्था ।

(४) यक्ष्मा रोग, सुप्रारीनल ग्रन्थि की अपुष्टि, मानसिक आघात ।

(५) निपात (Collapse), लेफ्ट वेण्ट्रीकुलर डिजीज, Severe haemorrhage, वमन (Vomiting) एवं डायरिया अथवा एक्यूट गैस्ट्रो इण्टेराइटिस, Severe extensive burns, हर्ट अटैक (Myocardial infarction), कंजेस्टिव कार्डियक फेल्योर आदि कारण ।

○ जीर्ण अल्प रक्तदाब (Chronic hypotension), मिनरलोकॉर्टिकॉइड्स (Mineralocorticoids), वल्वुलर हर्ट डिजीज जैसे एऑर्टिक स्टेनोसिस आदि कारणों से होता है ।

प्रकार (Types)—अल्प रक्तदाब मुख्य रूप से तीन प्रकार का होता है—

१. लाक्षणिक अल्प रक्तदाब (Symptomatic hypotension) ।

२. अज्ञात हेतुक अल्प रक्तदाब (Essential hypotension) ।

३. ऊर्ध्व-स्थितिज अल्प रक्तदाब (Orthostatic hypotension) ।

(१) लाक्षणिक अल्प रक्तदाब के कारण (Causes of symptomatic low blood pressure)—

निम्न रोगों में अल्प रक्तदाब एक लक्षण के रूप में मिलता है—

१. एडिसन का रोग (Addison's disease) ।

२. स्तब्धता (Shock) ।

३. एम्फीसीमा (Emphysema) ।

४. यक्ष्मा रोग (Tuberculosis) ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. मायोकार्डियल इन्फार्क्शन (Myocardial infarction)।

(२) **अज्ञात हेतुक अल्प रक्तदाब** (Essential hypotension)—इस प्रकार का अल्प रक्तदाब बिना किसी कारण के प्रकट होता है। ३% रोगी ऐसे होते हैं, जिनमें अल्प रक्तदाब की स्थिति पायी जाती है। इसमें एक विशेष बात यह होती है कि ऐसे रोगियों में अल्प रक्तदाब का कोई लक्षण तथा चिह्न उपस्थित नहीं मिलता है।

(३) **ऊर्ध्व-स्थितिज अल्प रक्तदाब** (Orthostatic hypotension)—इस प्रकार का अल्प रक्तदाब अल्पकालिक घटना-चक्र के रूप में, जैसे—थोड़ी देर के लिए रोगी द्वारा थोड़ा भी श्रम आरम्भ करते ही अथवा लेटी हुई स्थिति से खड़ा होने पर होता है, ऊर्ध्व-स्थितिज अल्प रक्तदाब कहलाता है।

○ ऐसे अल्प रक्तदाब के उत्पादक कारण तंत्रिकातंत्र के रोग तथा अन्तः-स्रावी ग्रन्थियों की तमाम विकृतियाँ होती हैं।

○ कभी-कभी यह बिना किसी कारण के भी उत्पन्न हो जाता है।

लक्षण एवं चिह्न (Symptoms & signs)—

(१) **लाक्षणिक अल्प रक्तदाब के लक्षण तथा चिह्न**—इस प्रकार के अल्प रक्तदाब में रोग की तीव्रता के अनुसार मृदु तथा तीव्र (Mild and acute) प्रकार के लक्षण तथा चिह्न प्रकट होते हैं। सामान्य रूप से यह निम्न प्रकार के होते हैं—

१. सब-नार्मल तापक्रम (Subnormal temperature)।

२. श्वासकष्ट (Dyspnoea)

३. हाथ-पैर का ठंडा पड़ जाना।

४. माथे तथा शरीर के अन्य भागों में पसीना होना।

५. त्वचा का पीला पड़ जाना।

६. रोगी चुपचाप पड़ा रहता है, परन्तु वह होश में रहता है।

७. रोगी की आँखें गड्ढे में धँसी हुई प्रतीत होती हैं। साथ ही आँखों की स्वाभाविक चमक गायब हो जाती है।

८. रोगी की दृष्टि-शक्ति कम हो जाती है। तारा विस्फारित अवस्था में रहता है, ऐसे में उस पर प्रकाश डालने से भी वह बिलकुल नहीं सिकुड़ता।

९. रोगी की नाड़ी तीव्र गति वाली सूत्र के समान (Thready type) होती है।

१०. शरीर में ऐंठन होती है; विशेषकर हाथों में कम्पन होता है।

११. रोगी को मूत्र कम आता है। प्रायः मूत्र में अल्बुमिन की उपस्थिति मिलती है।

१२. रोगी का ब्लड-प्रेशर और अधिक गिरने से वह बेहोश हो जाता है तथा उसकी मृत्यु हो जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) अज्ञात हेतुक अल्प रक्तदाब के लक्षण तथा चिह्न—

१. इस प्रकार का अल्प रक्तदाब बिना किसी लक्षण के उत्पन्न होता है।

२. ऐसा रक्तदाब प्रायः स्त्रियों में मिलता है।

(३) ऊर्ध्व-स्थितिज अल्प रक्तदाब के लक्षण तथा चिह्न—

१. इसमें अस्थाई मूर्च्छा की उपस्थिति मिलती है। यह केवल ४ से ३० सेकेण्ड के लिए रहती है।

२. रोगी लेटने के पश्चात् जैसे ही खड़ा होता है, उसे एकाएक मूर्च्छा आ जाती है और वह गिर जाता है। इस प्रकार की स्थिति प्रायः गर्मियों के मौसम में धूप में खड़े हो जाने से होती है।

३. रोगी के कुछ देर लेटने पर मूर्च्छा स्वतः शान्त हो जाती है और रक्त-चाप भी अपनी सामान्य अवस्था में आ जाता है।

४. इस प्रकार के अल्प रक्तदाब में सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि रोगी के खड़े होने पर रक्तचाप एकाएक कम हो जाता है, किन्तु नाड़ी की गति नार्मल ही रहती है।

५. रोगी में बेहोशी के समय पसीना बिल्कुल नहीं मिलता।

६. कुछ-एक रोगियों में ऐसा भी देखने में आया है कि खड़े होने पर २-३ मिनट के लिए अपनी भुजाओं को हृदय के स्तर पर रखने से उनका सिस्टोलिक ब्लड-प्रेशर एकाएक कम होकर ५० mm Hg. रह जाता है और रोगी में मूर्च्छा उत्पन्न हो जाती हैं।

७. कुछ रोगिमों में इस प्रकार के अल्प रक्तदाव की प्रवृत्ति वर्षों तक चलती रहती है।

नोट—१. कभी-कभी किसी-किसी रोगी में यह अल्प रक्तदाब रोग-लक्षण रहित होता है और उसका पता रक्तचाप-मापन के पश्चात् ही चल पाता है।

२. न्यून रक्तदाब तीव्र (Acute) तथा अस्थिर अवस्था (Temporary condition) में होता है।

३. इस प्रकार के रक्तदाब से बेहोशी (Unconciousness) तथा मूर्धा (Fainting) प्रधान लक्षण होते हैं।

४. जिन रोगियों में न्यून रक्तदाब स्थायी स्वरूप का होता है, उनमें रोगी को सुस्ती, अनिद्रा, शिरःशूल तथा चक्कर आना (Giddiness) आदि लक्षण होते हैं।

५. अल्प रक्तदाब में आलस्य, अनुत्साह, शरीर का दुर्बल होना, शक्ति का निरन्तर घटते जाना, मस्तिष्क अवसाद, बातें भूल जाना, अल्प श्रम से ही चिड़चिड़ापन होना तथा शिरःशूल आदि लक्षण देखने को मिलते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निदान (Diagnosis)—१. नाड़ी धीमी तथा छोटी होती है।

२. रोगी थोड़ा भी श्रम करने पर थक जाता है। उसे गश आ जाता है और साँस फूलता है।

३. रक्तचाप-मापक यन्त्र से ब्लड-प्रेशर की परीक्षा करने पर रक्तचाप ३० से १०० तक मिलता है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. उचित चिकित्सा व्यवस्था होने पर रोगी का जीवन आराम से कट जाता है।

२. रोग पुराना होने पर निरन्तर शिरःशूल कष्ट पहुँचता रहता है। साथ ही सिर चकराया करता है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोग के मूल कारण की चिकित्सा करनी चाहिए।

२. रोगी को मलावरोध से बचाते रहें।

३. हृदय, लिवर तथा तिल्ली (Spleen) को सदा स्वस्थ रखें।

४. रोगी की मनोविकारों से रक्षा करें।

५. रोगी को कोमल शय्या पर पूर्ण विश्राम दें।

६. रोगी के स्वास्थ्य-लाभ के लिए हलके व्यायाम तथा शरीर पर तैल की मालिश की व्यवस्था करें।

(२) औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—रोग के प्रकारों के अनुसार चिकित्सा निम्नवत् है—

(क) लाक्षणिक अल्प रक्तदाब की चिकित्सा—

१. इसके लिए लाक्षणिक चिकित्सा (मूल कारण) आवश्यक होती है। रोग का कारण दूर होते ही अल्प रक्तदाब स्वतः नार्मल स्थिति में आ जाता है।

२. यदि रोग स्तब्धता तथा मायोकार्डियल इन्फार्क्शन के कारण उत्पन्न हुआ हो तो इन रोगों के अन्तर्गत बतलायी गई लाक्षणिक चिकित्सा करनी चाहिए। इसके लिए ऐसी औषधियों तथा इन्जेक्शनों का प्रयोग करना चाहिए जिससे रक्तदाब नार्मल हो जाये।

○ **नोट**—स्तब्धता तथा मायोकार्डियल इन्फार्क्शन में रक्तचाप सदैव ऊँचा करने का प्रयत्न करना चाहिए।

(ख) अज्ञात हेतुक अल्प रक्तदाब की चिकित्सा—

१. रोगी को आश्वासन देना चाहिए कि अल्प रक्तदाब से उसे कोई हानि नहीं होगी। वह बिलकुल ठीक है और इससे उसे अधिक आयु प्राप्त होगी।

२. गर्मी के दिनों में रोगी को अपेक्षाकृत अधिक नमक के सेवन का निर्देश देना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. रोगी को अधिक समय तक खड़ा होने से मना करना चाहिए।

४. रोगी को ऐसा निर्देश दें कि सोकर अथवा लेटे रहने के पश्चात् वह एकाएक खड़ा न हो। उसे कुछ देर के लिए उठकर बैठ जाना चाहिए अथवा चलना चाहिए।

५. औषधि-चिकित्सा—

℞ सीरप टोनियाजोल (Syrup Toniazol)

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३ बार भोजन के १ घण्टे पूर्व।

अथवा—टेबलेट मीफैंटर्मिन सल्फेट १० मि० ग्रा०

व्या० नाम—टेबलेट मीफैण्टाइन (Tab. Mephentine)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार प्रातः-सायं।

निर्देश—इसकी मात्रा शाम ५ बजे देनी चाहिए, जिससे कि रोगी की नींद में कोई कमी न आये।

अथवा—℞ ओरिहेप्टाल (Orheptal) (ई० मर्क)

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में ३ बार भोजन से कुछ पूर्व।

अथवा—वेरीटोल इन्जेक्शन (Veritol Inj.) (नोल कं०)

मात्रा—½-१ एम्पुल मांस या नस में लगायें।

(ग) ऊर्ध्व-स्थितिज अल्प रक्तदाब की चिकित्सा—

१. सोते समय रोगी का सिर पलंग के स्तर से ३० सेण्टीमीटर ऊँचा रहे। इसके लिए २-३ तकिये की व्यवस्था होनी चाहिए।

२. रोगी को उठकर कुछ देर तक बैठे रहना चाहिए, तत्पश्चात् उठ कर चलना चाहिए।

३. भोजन में नमक की अतिरिक्त मात्रा लेनी चाहिए।

४. औषधि का प्रयोग निम्न प्रकार से करें—

℞ टेबलेट एफेड्रीन सल्फेट (Tab. Ephedrine sulphate)

मात्रा—३० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—टेबलेट मीफैंटर्मिन सल्फेट।

मात्रा—२०-२५ मि० ग्रा० दिन में २ बार।

साथ ही—'कोरामीन' तथा १ : १००० शक्ति के एड्रीनलीन का मांस-पेशीगत इन्जेक्शन लगायें।

५. अन्तःस्रावी ग्रन्थियों की विकृति तथा तंत्रिका-तंत्र की किसी व्याधि की सम्भावनाओं की ओर भी ध्यान रखना चाहिए।

○ अल्प रक्तदाब की विशेष चिकित्सा-व्यवस्था—

इस चिकित्सा के अन्तर्गत शिरामार्गीय ग्लूकोज सैलाइन, डेक्स्ट्रावेन (Dextravan) तथा उसी के समक्ष किसी औषधि का निःसरण (Iffusion)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया जाता है। इसे तब तक करते रहना चाहिए, जब तक स्थिति नार्मल नहीं हो जाती।

○ आवश्यकतानुसार इसी के साथ 'वेरिटाल', नार-एड्रीनलीन आदि औषधियों का प्रयोग करना चाहिए।

○ **अनीमिया की स्थिति में**—'आयरन' तथा लिवर एक्स्ट्रेक्ट आदि का इञ्जेक्शन दें।

रक्तस्रावजनित अल्प रक्तदाब की स्थिति में—ब्लड-ट्रान्स्फ्यूजन का प्रयोग करें।

○ **हृदय के अत्यधिक थक जाने पर**—

℞ मिकोरिन पर्ल्स (Micorin purles) (गाइगी)

मात्रा—१ या २ दाने जल के साथ।

नोट—यह औषधि हृदय के रोग (साँस फूलना आदि) में दी जाती है।

○ **हृदय-क्रिया के विकार के कारण**—

℞ कारनीजेन ड्राप्स (Cornizen drops)

मात्रा—१०–१५ बूंद आवश्यकतानुसार कई बार दें।

न्यून रक्तदाब में प्रयुक्त अन्य औषधियाँ—

टेबलेट—

१. कोरासोल (सिपला)—१–२ गोली दिन में ३–४ बार।
२. फोसेलाइट वी (मैक)—१–२ ड्रेगी दिन में ३ बार भोजनोपरान्त।
३. थेराग्रान (लिली कं०)—१ कै० दिन में २ बार।
४. कार्डियाजोल (नोल)—१ गोली दिन में ३–४ बार।
५. मेथीड्रीन (वरोज वेल्कम)—१–४ गोली शाम से पूर्व दें।
६. कोरामीन इफेड्रीन टेबलेट—½–१ गोली दिन में २–३ बार भोजन के बाद।

पेटेण्ट पेय—

१. कोरासोल (सिपला)—१०–२० बूंद दिन में तीन-चार बार।
२. एनकार्डोन—१५–३० बूंद दिन में तीन-चार बार जल से।
३. टोनियाजोल (नोल)—१–२ चम्मच खाने के बाद।
४. बी० जी० फॉस (शार्प डोम)—२–३ चम्मच दिन में २–३ बार।
५. डूरोल (डूमेक्स)—२–३ चम्मच भोजनोपरान्त।
६. सिनकाल्टोन (जर्मन रेमेडीज)—२०–३० बूंद दिन में ३ बार।
७. हाई-न्यूट्रोन (हिन्द कं०)—१० मिली० २–३ बार दूध के साथ।
८. ओरहेप्टाल (ई० मर्क)—१–२ चम्मच भोजन से पूर्व।
९. कोर्निजेन ड्राप (हेक्स्ट)—२० बूंद जल में दिन में ३–४ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेटेण्ट इन्जेक्शन—

१. कोरामीन इफेड्रीन (सीवा)—१ एम्पुल S/C या I/M दें।

२. वेरीटोल (नोल)—½–१ एम्पुल I/M या I/V दें।

३. मेथीड्रीन (वरोज वेल्कम)—१ इन्जेक्शन I/V या I/M दें।

४. इन्फेण्डिन (वरोज वेल्कम)—½ मिली० S/C या I/M दें।

५. एड्रोस्कोर्वीन—½–१ मिली० S/C दें।

अन्य—१. गाइनर्जेन (सैण्डोज)—१-१ गोली दिन में ३ वार।

२. नॉर-ड्रिन (यूनिकेम)—१–२ अथवा आवश्यकतानुसार अधिक से अधिक २ मिली० के एम्पुल को ५०० मिली० नार्मल सैलाइन या ५% ग्लूकोज सैलाइन सोल्यूशन में मिलाकर I/V ड्रिप रूप में ०·५–१ मिली० प्रति मिनट की दर से अन्दर प्रविष्ट करें।

३. डिण्डेवान (Dindevan) (वायो-इवान)—आवश्यकतानुसार १-२ गोली दिन में १-२ बार दें।

४. डोकाबोलिन (ऑर्गेनन)—१ मि० ली० I/M सप्ताह में एक बार ४ से ६ सप्ताह तक।

५. ट्राइरेडिसाल-एच (एम० एस० डी०) ५०० से १००० माइक्रोग्राम मात्रा—१ मिली० गहरे मांसपेशी में प्रति तीसरे दिन दें।

साथ ही—ऑट्रिन (Autrin) (सायनेमिड)—१ कै० प्रतिदिन नाश्ते के साथ।

६. डाइहाइडर्गोट (Dihydergot) (सैण्डोज)—१-२ गोली दिन में ३-४ बार।

७. कोर्वासिम्टोन (Corvasymton) ½–१ गोली दिन में ३-४ बार।

रक्तचाप की मिश्रित पेटेण्ट चिकित्सा—

१. ℞ वेसोग्रेन (कैडिला)	१ गोली
एमीकार (सायनामाइड)	१ गोली
कैम्पोफेरान (बेयर)	१ कैप्सूल
मेटाटोन लिक्विड (पी० डी०)	१० मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजनोपरान्त दें।	१ मात्रा
२. ℞ सैंगोबिआन (मर्क)	१ कैप्सूल
माइग्रिल (वरोज वेल्कम)	२ गोली
सीलिन ५०० मि० ग्रा० (ग्लैक्सो)	½ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार दें।	१ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतिरक्तदाब
(Hypertension)

पर्याय—हाई ब्लडप्रेशर (High blood pressure), अति रक्तदाब, धमनी जरा रोग, ब्लड-प्रेशर एवं रक्तभार वृद्धि आदि ।

परिभाषा—Systemic hypertension is the persistent rise of basal blood pressure above the arbitrary level of 150/90 mm of Hg.

सिस्टोलिक रक्तचाप स्थायी रूप से १५० से अधिक या डायस्टोलिक रक्तचाप ९० मिली० से अधिक रहने पर बढ़ा हुआ रक्तचाप माना जाता है ।

○ स्वस्थ व्यक्ति में सिस्टोलिक प्रेशर (Systolic pressure) १०० १४५ mm Hg. और डायस्टोलिक प्रेशर (Diastolic pressure) ६० से ९० mm Hg के मध्य रहता है । अर्थात् किसी व्यक्ति में निम्नलिखित रक्त-दाब (Blood pressare) सामान्य माना जाता है—

100-145/60-90 mm Hg.

इस प्रकार से स्वस्थ व्यक्ति में १५०/९० mm Hg. से अधिक रक्तदाब के निरन्तर मिलना अति रक्तदाब (Hypertension) कहलाता है ।

○ किसी भी कारण से उत्पन्न हुए रक्तदाब को अति रक्तदाब (High blood pressure) अथवा हाइपरटेन्शन (Hypertension) कहते हैं । अति रक्तदाब का रोग १५ से २०% तक हृदय-रोगियों में मिलता है तथा आम व्यक्तियों में से १०% व्यक्ति इस रोग से ग्रसित रहते हैं । उनमें २०% के लगभग रोगियों की इस रोग से मृत्यु होती है ।

○ कुछ लोगों का विचार है कि किसी युवा व्यक्ति में विश्राम या बैठी हुई अवस्था में धमनीगत दाब (Arterial pressure) १६०/९५ मि० मी० अथवा उससे अधिक मिले तब ऐसे व्यक्ति को ब्लड-प्रेशर अथवा हाइपरटेन्शन से ग्रस्त मानना चाहिए ।

विकृत सूचक चिह्न—स्वस्थ व्यक्तियों में सामान्य सिस्टोलिक प्रेशर में 20-30 mm Hg. की अस्थायी वृद्धि, चिन्ता, भय तथा उत्तेजना आदि मानसिक कारणों से हो सकती है । इन कारणों के दूर होने पर सिस्टोलिक प्रेशर को अपनी नार्मल अवस्था (१००-१४५) के अन्तर्गत लौट आना

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिए। किन्तु यदि ऐसा नहीं होता है और व्यक्ति में शारीरिक तथा मानसिक विश्राम के समय भी रक्तदाब १५०/९० mm Hg. से अधिक निरन्तर बना रहता है तो उसको विकृत सूचक समझना चाहिए।

रोग के प्रकार (Kinds of disease)—अति रक्तदाब के २ प्रकार होते हैं—

१. अज्ञात हेतुक अति रक्तदाब (Essential hypertension or idiopathic)—इसको प्राथमिक अति रक्तदाब (Primary hypertension) भी कहते हैं।

२. लाक्षणिक अति रक्तदाब (Symptomatic hypertension)—इसको द्वितीयक अति रक्तदाब (Secondary hypertension) भी कहते हैं।

रोग के कारण (Causes)—**अज्ञात हेतुक अति रक्तदाब**—वह रक्तदाब जिसमें बाह्यरूप से उसकी उत्पत्ति का कोई स्पष्ट कारण नहीं मिलता है अज्ञात हेतुक अति रक्तदाब कहलाता है। ९०% व्यक्ति इसी प्रकार के अति रक्तदाब से पीड़ित रहते हैं।

○ जनरल प्रैक्टिस में मिलने वाले अति रक्तदाब के रोगी अधिकतर इसी श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं।

कारण—इस प्रकार के अति रक्तदाब का वास्तविक कारण अभी तक वैज्ञानिकों को ज्ञात नहीं हो सका है। किन्तु विद्वानों ने इसके निम्नलिखित प्रवर्तक कारण (Predisposing causes) माने हैं—

१. आयु (Age)—इस प्रकार का ब्लड-प्रेशर ४० वर्ष से ऊपर की आयु में मिलता है; विशेषकर ४० से ६० वर्ष की आयु के रोगी होते हैं। ४० वर्ष से कम आयु के युवा व्यक्तियों में यह देखने को नहीं मिलता है।

२. लिंग (Sex)—पुरुषों में ऐसा रक्तदाब स्त्रियों की अपेक्षा दो गुना मिलता है।

३. आनुवंशिकता (Heriditary)—अधिकतर यह एक ही परिवार के सदस्यों में पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलता रहता है।

४. प्रतिबल (Stress) **तथा मानसिक विकृति**—व्यक्ति की मानसिक विकृतियाँ भी इस प्रकार के अति रक्तदाब के पूर्व प्रवर्तक कारणों में माने जाते हैं, जैसे—भय, चिन्ता तथा व्याकुलता आदि।

५. स्थूलता (Obesity)—प्रायः यह देखने में आता है कि जो लोग अधिक स्थूल होते हैं, वे ही इस रोग से अधिक प्रभावित होते हैं और जब ऐसे व्यक्ति का शरीर-भार कम कर दिया जाता है तब उसका रक्तदाब सामान्य हो जाता है। इससे यह सिद्ध होता है कि रक्तदाब तथा स्थूलता में कोई न कोई सम्बन्ध अवश्य है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हाइपरटेन्शन का श्रेणीकरण (Gradation of hypertension)—अति रक्तदाब के रोगी प्रायः निम्न ४ श्रेणियों में रखे जाते हैं—

१. मृदु (Mild) प्रकार के अति रक्तदाब वाले रोगी—इस श्रेणी में वे रोगी आते हैं, जिनका अनुशिथिलन दाब (Diastolic pressure) १०० से कम होता है।

२. मध्यम प्रकार के अति रक्तदाब वाले रोगी—इसमें वे रोगी आते हैं, जिनका अनुशिथिलन दाब १०० से १२० के मध्य होता है।

३. उग्र प्रकार के अति रक्तदाब वाले रोगी—इस श्रेणी में वे रोगी आते हैं, जिनका अनुशिथिलन दाब १२० से १४० के मध्य होता है।

४ अति उग्र प्रकार के अति रक्तदाब वाले रोगी—इस वर्ग के अन्तर्गत उन रोगियों की गणना की जाती है, जिनका अनुशिथिलन दाब १४० से अधिक रहता है।

नोट—उपरोक्त श्रेणीकरण से रोग की तीव्रता का ज्ञान होता है, अतएव चिकित्सकों को सदैव अपने अति रक्तदाव के रोगियों को इन श्रेणियों में रखने का यत्न करना चाहिए।

○ इस रोग में रोगी का अनुशिथिलन दाब ही विशेष महत्त्व रखता है।

लक्षण एवं चिह्न—अति रक्तदाब के रोगियों में भिन्न-भिन्न लक्षण पाये जाते हैं। किसी रोगी में कुछ लक्षण मिलते हैं तो किसी में कुछ अन्य प्रकार के लक्षण मिलते हैं। ऐसे रोगियों में अति रक्तदाब का पता रोगी की सामान्य परीक्षा से अनायास ही हो जाता है।

इसके विपरीत कुछ ऐसे भी रोगी देखते में आते हैं, जिनमें शुरू से ही कुछ-न-कुछ लक्षण अवश्य मिलते हैं। ये लक्षण निम्न प्रकार के होते हैं—

१. शिरःशूल (Headache)—इस रोग के अन्तर्गत सिर में दर्द पश्च कपाल में पाया जाता है। ऐसा दर्द रोगी प्रातःकाल उठ कर महसूस करता है।

२. थकावट—इस रोग में थोड़े ही परिश्रम से रोगी को थकावट आ जाती है।

३. अनिद्रा—अति रक्तदाब के रोगी को नींद नहीं आती है।

४. चक्कर आना।

५. किसी भी काम में एकाग्रता का अभाव।

६. याददाश्त की कमी (स्मृति-ह्रास)।

७. दिल का धडकना।

८. कष्टश्वास।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ **कष्टश्वास**—यह बहुत ही प्रारम्भिक लक्षण है। थोड़ा परिश्रम करने पर रोगी का श्वास फूलने लगता है। यह अवस्था रात्रि में सोने के २ घण्टे बाद तीव्र रूप में उत्पन्न हो सकती है।

○ जब अति रक्तदाब की स्थिति काफी दिनों तक बनी रहती है; तब रोगी में धमनीकाठिन्य (Arteriosclerosis) नामक एक महत्त्वपूर्ण विकृति उत्पन्न हो जाती है। इस विकृति में धमनियों की प्राचीरों की प्राकृत लचक (Elasticity) समाप्त हो जाती है और वे मोटी हो जाती हैं। मोटी होने से उनका मार्ग संकीर्ण हो जाता है, जिससे रक्तप्रवाह में बाधा उत्पन्न हो जाती है।

अति रक्तदाब के परिणामस्वरूप मस्तिष्क, दृष्टिपटल (Retina) और हृदय की मांसपेशियों को रक्त पहुँचाने वाली धमनियों में धमनीकाठिन्य की अवस्था उत्पन्न होती देखी जाती है। कभी-कभी ऐसी अवस्था वृक्कों और शाखाओं को रक्त ले जाने वाली धमनियों में भी उत्पन्न हो जाती हैं। अंगों के अनुसार धमनीकाठिन्य निम्न ५ प्रकार का माना जा सकता है—

१. प्रमस्तिष्क धमनीकाठिन्य (Cerebral arteriosclerosis)।
२. दृष्टिपटल धमनीकाठिन्य (Retinal arteriosclerosis)।
३. परिहृद् धमनीकाठिन्य (Coronary arteriosclerosis)।
४. वृक्कीय धमनीकाठिन्य (Renal arteriosclerosis)।
५. शाखाओं की रक्तवाहिनियों का धमनीकाठिन्य (Arteriosclerosis of limb vessels)।

○ इन विभिन्न धमनीकाठिन्य के कारण अति रक्तदाब के रोगी में प्रभावित क्षेत्र के अनुसार निम्न प्रकार की विकृत अवस्थाएँ उत्पन्न होती हैं—

(१) प्रमस्तिष्क धमनीकाठिन्य के कारण निम्न विकृतियाँ उत्पन्न हो सकती हैं—

१. प्रमस्तिष्क रक्तस्राव (Cerebral haemorrhage)।
२. मस्तिष्क घनास्रता (Cerebral thrombosis)।
३. अति रक्तदाबी मस्तिष्क विकृति (Hypertensive encephalopathy)।
४. विक्षिप्ति (Insanity)।
५. आक्षेपी आक्रमण (Convulsive scizures)।
६. धमनीकाठिन्य पार्किन्सनता (Arteriosclerotic parkinsonism)।

(२) दृष्टिपटल धमनीकाठिन्य के कारण निम्न लक्षण अथवा रोग उत्पन्न हो सकते हैं—

१. दृष्टिह्रास (Dimness of vision)।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. अति रक्तदाबी दृष्टिपटल विकृति (Hypertensive retinopathy)।

(३) परिहृद् धमनीकाठिन्य से निम्न विकृतियाँ उत्पन्न हो सकती हैं—

१. हृत्शूल (Angina pectoris)।

२. हृद्-धमनी घनास्रता (Coronary thrombosis)।

(४) वृक्कीय धमनीकाठिन्य निम्न लक्षण उत्पन्न कर सकते हैं—

१. यूरीमिया (Uraemia)।

२. रक्तमेह (Haematuria)।

३. बहुमूत्रता (Polyuria)।

४. नक्तमेह (Nocturia)।

(५) शाखाओं की रक्तवाहिनियों में धमनीकाठिन्य से निम्न विकृतियाँ उत्पन्न हो सकती हैं—

१. अरक्ततताजन्य शाखा वेदना (Ischaemic limb pain)।

२. सविरामी क्लॉडीकेशन (Intermittent claudication)।

३. कोथ (Gangrene)।

○ अति रक्तदाब की दुर्दम प्रावस्था (Malignant phase) में—सिर दर्द, सिर चकराना, व्यक्तित्व में परिवर्तन, आक्षेपों के दौरे (Fits) प्रमस्तिष्क रक्तस्राव, कष्टश्वास, हृदय-जन्य श्वास (Cardiac asthma), हृदय की अस्वाभाविक ध्वनियाँ (Abnormal heart sounds), हृदयशूल, हृद्वृद्धि (Cardiac enlargement); हृत्पेशि का रोधगलन (Myocardial infarction), संकुल हृत्पात (Congestive heart failure), धमनियों की दीवारों का मोटा होना, धमनीकाठिन्य, धमनी का टेढ़ापन; एकांतरित नाड़ी (Pulsus alternance), एन्यूरिज्म, रक्तस्राव (उग्र रक्तस्राव की अवस्था में नाक, मुँह तथा पेशाब में रक्तस्राव हो सकता है), सविरामी खंजता—थोड़ी दूर चलने पर पिंडलियों में पीड़ा होने लगती है और आगे चलना कठिन हो जाता है। धुंधला दिखलाई देना, अक्षिबिम्ब शोफ (Papilloedema) आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं।

रोग की कम उग्रावस्था में—धमनियों का टेढ़ा-मेढ़ा होना, शिराओं में छोटे-छोटे उभार होना, धमनियों के छिद्रों में परिवर्तन, वाहिकाओं की खण्डीय घनास्रता, धमनियों का आच्छादन (Sheathing of the arteries) तथा बहुमूत्रता (बार-बार मूत्रत्याग) आदि परिवर्तन मिल सकते हैं।

○ बार-बार मूत्रत्याग (रात्रि में) रक्तदाब की प्रारम्भिक अवस्था में ही मिलने लगता है। किसी भी उपाय से यदि रक्तदाब कम कर दिया जाय तो यह लक्षण लुप्त हो जाता है। उग्र स्वरूप के रक्तदाब में मूत्रत्याग बहुत हो सकता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परीक्षण—रोग का पता मूत्र-परीक्षण (Urine test), बायोप्सी, रक्त-परीक्षा, क्रियेटिनीन उत्सर्जन परीक्षण, वक्ष का एक्स-रे चित्र, इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम तथा विभक्त वृक्ककार्य के अध्ययन आदि से होता है।

○ **रक्तदाब परिमापन**—रक्तदाब-मापक यन्त्र (Sphigmomanometer) द्वारा होता है।

रोगी की मृत्यु—अधिकांश रूप से अति रक्तदाब के रोगी की मृत्यु निम्न उपद्रवों से होती है—

१. ६०% रोगियों की मृत्यु तीव्र वाम हृद् निलयपात से होती है।
२. ३५% रोगियों की मृत्यु प्रमस्तिष्क रक्तस्राव से होती है।
३. ५% रोगियों की मृत्यु मुश्किल से यूरीमिया द्वारा हो सकती है।

चिकित्सा—अनुशिथिलन दाब (Diastolic pressure) ९०-१०५ तक होने पर रोगी को निम्न चिकित्सा प्रदान करनी चाहिए—

℞ टेबलेट डायजीयाम (Tab. Diazepam) ५ मि० ग्रा०
व्या० नाम—टेबलेट वैलियम या कम्पोज
मात्रा—१ गोली प्रातः-सायं दें।
साथ ही—१. रोगी के भोजन में नमक की मात्रा कम कर दें।
२. रोगी का शरीर-भार प्रारम्भ से ही कम करने का प्रयास करना चाहिए।
३. रोगी को प्रतिदिन घूमने का परामर्श देना चाहिए।
४. रोगी को कम से कम ८ घण्टे सोने का परामर्श दें।

○ **अनुशिथिलन रक्तदाब १०५ से १४० तक के बीच होने पर निम्न चिकित्सा प्रदान करनी चाहिए—**

℞ अडेल्फेन टेबलेट (Adelphane tab.)
मात्रा—१-२ गोली दिन में २-३ बार रक्तदाब के अनुसार।
अथवा—टे० इण्डापामाइड (Tab. Indapamide) २·५ मि० ग्रा०
व्या० नाम—टे० नैट्रीलिक्स (Tab. Natrilix)
मात्रा—१ गोली प्रतिदिन।
निर्देश—रोगी का रक्तदाब (B. P.) प्रतिदिन देखें। ४-५ दिन में संतोषजनक लाभ न मिलने पर किसी अन्य औषधि की व्यवस्था करनी चाहिए।

○ कुछ समय उपरान्त जिस औषधि से रोग नियंत्रित होता दिखलाई दे, उसी औषधि की मात्रा घटा-बढ़ा कर उसकी धारक मात्रा निकाल कर प्रतिदिन देनी चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपरोक्त औषधियों से लाभ दिखलाई न देने पर—ऐसी स्थिति में निम्न औषधियाँ देना प्रारम्भ कर देना चाहिए—

℞ टेबलेट प्रोप्रेनोलोल हाइड्रोक्लोराइड (Tab. Propranolal Hcl.)
व्या० नाम—टेबलेट इण्डेराल (Tab. Inderal) ४० मि० ग्रा०
मात्रा—१ गोली दिन में २ बार प्रातः-सायं ।
नोट—यह औषधि टेकीकार्डिया की स्थिति में विशेष लाभकारी है ।
अथवा—टेबलेट मेथिलडोपा (Tab. Methyldopa)
या० नाम—टे० एल्डोमेट (Tab. Aldomet)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार ।

○ **अनुशिथिलन रक्तदाब १४० से अधिक होने पर**—

नोट—अनुशिथिलन रक्तदाब (Diastolic blood pressure) १४० से अधिक होने पर रोगी को किसी चिकित्सालय में भर्ती करा देना चाहिए । यह सुविधा प्राप्त न होने पर निम्न औषधि देनी चाहिए—

℞ टे० डाइहाइड्रालाजीन सल्फेट (Dihydrallazine sul.) २५ मिग्रा०
व्या० नाम—टेबलेट नेप्रीसोल (Tab. Nepresol)
मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ।
अथवा—टेबलेट मिनिप्रेस (Tab. Minipress) १ मि० ग्रा०
मात्रा—१ गोली दिन में २ बार ।

○ **त्वरण प्रावस्था** (Acceleration phase)—यह वह अवस्था है जब रोगी में अति रक्तदाब बराबर बढ़ता जाता है और मुख द्वारा औषधियों से लाभ दिखलाई नहीं देता है, तब ऐसी स्थिति में निम्नलिखित औषधियों को इञ्जेक्शन के रूप में देना लाभकर होता है ।

℞ इञ्जे० रेसर्पिन (Inj. Reserpine) १ मि० ग्रा०
व्या० नाम०—इञ्जे० सर्पासिल (Inj. Serpasil)
मात्रा—१ एम्पुल मांसपेशीगत या इण्ट्रावीनस ।
नोट—जब तक रोगी का ब्लड-प्रेशर नियन्त्रण में न आ जाये, प्रति ४ घण्टे पर इसकी मात्रा को दुगनी करते जायें ।
अथवा—इञ्जे० डायजोक्साइड (Inj. Diazoxide)
व्या० नाम—इञ्जे० हाइपोस्टैट (Inj. Hypostat)
मात्रा—५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर I/V शनैःशनैः लगायें ।
अथवा—℞ इञ्जे० मेथिलडोपा ५०० मि० ग्रा०
व्या० नाम०—इञ्जे० इल्डोमैट
मात्रा—५०० मि० ग्रा० की मात्रा में I/V आवश्यकतानुसार प्रति ४ घण्टे पर दिया जा सकता है ।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा— ℞ इन्जे० नाइट्रो-प्रूसाइड सोडियम (Inj. Nitroprusside sodium)

व्या० नाम— इन्जे० निप्राइड (Inj. Nipride)

मात्रा एवं प्रयोग-विधि—५% डेक्स्ट्रोज के ५०० मिलीलिटर में ५० मि० ग्रा० उपरोक्त इन्जेक्शन का पाउडर घोल लें। इस ड्रिप को ०.५ माइक्रोग्राम/प्रति किलो शरीर-भार की दर से प्रति मिनट शरीर में प्रवेश करना आरम्भ कर दें जब तक ब्लड-प्रेशर सामान्य स्तर पर न आ जाये।

नोट—एक बार ब्लड-प्रेशर सामान्य स्तर पर आने पर मुख द्वारा दी जाने वाली औषधि की धारण मात्रा (मेण्टेनेन्स डोज) मालूम कर प्रतिदिन देनी चाहिए।

अति रक्तदाब (High blood pressure) की मिश्रित योगों द्वारा चिकित्सा—

१. ℞ एल्डोमेट (एम० एस० डी०)	१ गोली
बी-कॉम्प्लेक्स (ग्लैक्सो)	१ गोली
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल से। रोग में लाभ मिलने पर प्रतिदिन एक बार या प्रति तीसरे दिन एक मात्रा दें।

नोट—इसके सेवन से ब्लड-प्रेशर शीघ्र ही नार्मल स्तर पर आ जाता है। साथ ही हृदय, मस्तिष्क, यकृत् तथा अन्य अंगों को शक्ति तथा शान्ति मिलती है एवं रोगी की बेचैनी दूर होती है।

२. ℞ अर्कामिन (यूनिकेम)	½ गोली
ब्रिनर्डीन (सैण्डोज)	१ गोली
	१ मात्रा

दोनों को पीस कर एक पुड़िया बना लें। ऐसी १ पुड़िया दिन में दो बार जल से।

सावधानी—अवनमन की दशा में इसका प्रयोग न करें।

३. ℞ सर्पासिल (Serpacil) (सिबा गैगी)	१ गोली
एटारेक्स (यूनिकेम) १० मि० ग्रा०	१ गोली
गार्डीनल (एम० बी०) ३० मि० ग्रा०	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल से।	१ मात्रा

नोट—इसके सेवन से बढ़ा हुआ रक्तचाप, घबराहट, बेचैनी, तनाव एवं सिरदर्द आदि दूर होते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. ℞ कॉर्बेटाजीन (सरााभाई) ½ गोली
क्लोथैल्टॉन (एम० जी०) ½ गोली
इस्बैटल (बी० डब्लु०) १० मि० ग्रा० की २ गोली
१ मात्रा

तीनों को पीसकर मिला लें। ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार सेवन करायें।

नोट—यह हर प्रकार के हाई ब्लड-प्रेशर की उत्तम व्यवस्था है।

५. ℞ एस्मेलिन (सीबा गैगी) १ गोली
रेडॉक्सान (रोशे) ५०० मि० ग्रा० की ½ गोली
१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में एक बार हाई ब्लड-प्रेशर के बार्मल होने तक।

सावधानी—○ इस योग के प्रयोग से कुछ रोगियों का ब्लडप्रेशर बहुत अधिक घट जाता है, अतः इसका प्रयोग बहुत सावधानी से करना चाहिए।

○ हृदय तथा वृक्करोगों से पीड़ित रोगी में इसका व्यवहार नहीं करना चाहिए।

अति रक्तदाब नाशक पेटेण्ट औषधियाँ—

१. एडेल्फेन-इसीड्रेक्स (Adelphane-esidrex) (हिन्दुस्तान-सीबा-गैगी)

मात्रा—१ गोली दिन में २-३ बार। गम्भीर केसिस में २ गोली दिन में २-३ बार। मेण्टेनेन्स डोज—१-२ गोली प्रतिदिन। यह हाई ब्लड-प्रेशर की प्रत्येक अवस्था तथा रीनल हाइपरटेन्शन में उपयोगी है।

२. एल्डेक्टिड (Aldactide) (सर्ले कं०)

मात्रा—५०-१०० मि० ग्रा० नित्य और बढ़ाते हुए ४०० मि० ग्रा० तक प्रतिदिन।

बालक—१·५ से ३ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर प्रतिदिन।

३. आल्ट्रिप (Altrip) (एलेम्बिक)

मात्रा—१-२ गोली दिन में २-३ बार। मेण्टेनेन्स थेरापी—१-२ गोली नित्य।

४. अर्कामिन, अर्कामिन-एच (Arkamin, Arkamin-H) (यूनीकेम)

मात्रा—½-१ गोली दिन में १ बार। सभी प्रकार के हाइपरटेन्शन में लाभकारी।

५. बीटालॉक (Betaloc) (एस्ट्रा-आयडियल)

मात्रा—१००–२०० मि० ग्रा० विभाजित मात्रा में प्रातः-सायं।

६. बीटानोल-१०, ४०, ८० (एम० एम० लेबोरेटरी)

मात्रा—२०–४० मि० ग्रा० दिन में दो बार/मात्रा बढ़ाते हुए जब तक रोग कण्ट्रोल में न आ जाये।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. बीटानोल–डी (एम० एम० लेबोरेटरी)

मात्रा ½–१ गोली दिन में २ बार। मात्रा बढ़ाते हुए ५ गोली तक रोजाना।

८. बीटाजाइन (Betazine) (एम० एम० लेबो०)

मात्रा—१–२ गोली नित्य। मात्रा बढ़ाते हुए ५ गोली तक रोजाना। यह अज्ञात हेतुक अति रक्तदाब (Essential hypertension) तथा रीनल हाइपरटेन्सन में लाभकारी है।

नोट—इस कम्पनी ने बीटाजाइन-डी नामक औषधि भी बनाई है।

अन्य औषधियाँ—

१. विडूरेट टेबलेट (Biduret tab.) (विडल शायर)।

२. ब्रिनर्डिन टेबलेट (Brinerdin tab.) (सैण्डोज़)।

३. कैल्सीगार्ड कैप्सूल (Calcigard cap.) (टोरेण्ट)।

४. कार्डेक्स कैप्सूल (Cardex cap.) (इथिको)।

५. कार्डियोप्टिन ४० और ८० (Cardioptin 40 & 80) (रेलिस)।

६. केटाप्रेस (Catapres) (जर्मन रेमेडीज)।

७. केटाप्रेस डियू (Catapres diu) (जर्मन रेमेडीज)।

८. सिप्लार टेबलेट (Ciplar tab.) एवं सिप्लार फोर्ट टे० (सिपला)

नोट—इसका 'सिपलार इञ्जेक्शन' भी आता है।

९. सिपलार-एच (Ciplar-H) (सिपला)।

१०. कोर्वीटा, कोर्बीटा–40 डी टेबलेट (साराभाई)।

११. कोर्बीटाजाइन (Corbetazine) (साराभाई)।

१२. कोर्डीलोक्स ४० और ८० (Cordilox 40 & 80) (जर्मन रेमेडीज)

१३. डोपाजिट (Dopagyt) (थेमिस केमिकल्स)।

१४. डोपाजिट-एच टेबलेट (थेमिस केमिकल्स)।

१५. इमडोपा (Emdopa) (आई० डी० पी० एल०)।

१६. हाइपरडीन (Hyperdine) (एस० जी० फार्मा)।

१७. हाइथाल्टोन–आर (Hythalton–R) (एस० जी० फार्मा)।

१८. इसोप्टिन ड्रेगीज (Isoptin dregrees) (नोल)।

१९. लिडिन (Lidin) (गूफिक)।

२०. मेटोलार-एच (Metolar–H) (सिपला)।

२१. मेटोप्रोलोल (Metoprolol) टेबलेट (सिपला)।

२२. नेप्रीसोल (Neprisol) (हिन्दुस्तान सीबा-गैगी)।

२३. निफेडीन टेबलेट (Nifedine tab.) (एस० जी० फार्मा)।

२४. पिनाडोल (Pinadol) (रैनबेक्सी)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२५. सेलोप्रेस (Salopres) टेबलेट (एस्ट्रा आयडियल)।
२६. सेम्ब्रिना–२५० (Sembrina–250) (नोल)।
२७. टर्बोलान टेबलेट (Terbolan tab.) (हॉचेस्ट)।
२८. ट्रेसीकोर (Trasicor) (सीबा-गैगी)।
२९. वाल्मस टेबलेट (Valmus tab.) (टी० टी० के० फार्मा)।
३०. वेरामिल ४० और ८० (Veramil 40 & 80) (थेमिस)।
३१. वेरात्रिल टेबलेट (Veratril tab.) (एफ० डी० सी०)।
३२. जिपामिड टेबलेट (Xipamid tab.) (जर्मन रेमेडीज)।
३३. जिनेप्रेस टेबलेट (Zinepres tab.) (साराभाई)।

आवश्यक निर्देश—

१. हाई ब्लड-प्रेशर के रोगी को शारीरिक एवं मानसिक परिश्रम में कमी करने की सलाह देनी चाहिए। उग्रावस्था में अधिक विश्राम की आवश्यकता हो सकती है।

२. रोगी की चिन्ता एवं व्यस्तता में कमी लाने का यत्न करना चाहिए।

३. भोजन में कम से कम नमक का उपयोग करना चाहिए।

४. भोजन में घी, तेल, मक्खन, मांस, मछली, अण्डा आदि कम कर शाक, सब्जी, फल आदि की मात्रा बढ़ानी चाहिए।

५. चिकित्सा तभी करनी चाहिए, जब यह विश्वास हो जाय कि चिकित्सा करना आवश्यक है। मृदु एवं मध्यम श्रेणी के अति रक्तदाब (Mild and moderate hypertension) की चिकित्सा आवश्यक नहीं।

६. केवल एक बार ब्लड-प्रेशर नाप कर ही चिकित्सा नहीं करनी चाहिए। कम से कम तीन बार नाप कर यह निश्चित करना चाहिए कि चिकित्सा करना आवश्यक है या नहीं।

७. वृक्कपात (Renal failure) अधिक बढ़ जाने पर हाई ब्लड-प्रेशर की चिकित्सा करना या न करना दोनों हानिकारक हो सकते हैं।

८. जिस अति रक्तदाब में कारण का पता लग जाये, वहाँ कारण को दूर करने की चिकित्सा करनी चाहिए।

९. उग्र एवं सम्पूर्ण अति रक्तदाब की चिकित्सा केवल एक औषधि से सफल नहीं होती है। मुख्य औषधि के साथ मूत्रल औषधि (Diuretic) औषधि का प्रयोग कम से कम दो तिहाई रोगियों की चिकित्सा में आवश्यक होता है।

१० एक औषधि का पूरी मात्रा में प्रयोग करने के बाद अथवा उससे आनुषंगिक लक्षण उत्पन्न होने के बाद भी यदि लाभ न हो तो उसे बदल देना चाहिए अथवा उसके साथ दूसरी औषधि का प्रयोग करना चाहिए। कुछ रोगियों को दो प्रधान औषधियों के साथ एक मूत्रल औषधि भी देनी पड़ती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धमनीकाठिन्य
(Arteriosclerosis)

पर्याय—इसे धमनी-जठरता, धमनी का कड़ा होना तथा धमनीकाठिन्य रोग भी कहते हैं।

परिचय—इस रोग में धमनी की दीवार के बीच के भाग (Media) में विनाशकारी परिवर्तन (Degeneration), फाइब्रस धातु का संचय (Fibrosis) तथा कैल्सियम का संचय होता है। धमनी की दीवार के अन्दर का भाग (Intima) ऊँचा-नीचा हो जाता है। इसके साथ ही दीवार पर व्रण (Atheroma) भी हो सकता है।

फाइब्रस धातु जमने के कारण धमनी का छिद्र छोटा हो जाता है। जिसके परिणामस्वरूप रक्तप्रवाह में कमी हो जाती है और परिश्रम के समय पेशी को पर्याप्त मात्रा में रक्त नहीं मिलता है। जिसके कारण पीड़ा उत्पन्न हो जाती है।

सामान्य कारण (General causes)—

१. यह वृद्धावस्था का एक व्यापक रोग है। यह अधिकांश रूप से ६० से ६५ वर्ष की अवस्था से मिलने लगता है।

२. मद्यपान, तम्बाकू का सेवन, मलावरोध, चिरकारी वृक्कशोथ (Chronic nephritis), रक्तचाप की वृद्धि, डायबिटीज रोग, चिरकारी ब्रॉन्काइटिस, गठिया रोग आदि से इसका घनिष्ठ सम्बन्ध प्रतीत होता है।

३. विटामिन्स की न्यूनता भी इस रोग का कारण माना जाता है।

प्रकार (Types)—लाक्षणिक दृष्टिकोण से इसको २ भागों में विभक्त किया जा सकता है—

१. **एथीरोस्क्लेरोसिस** (Atherosclerosis)—जो प्रधान रूप से महाधमनी (Aorta) तथा उसकी मुख्य शाखाओं को आक्रान्त करता है।

२. पेरीफेरल आर्टीरियोस्क्लेरोसिस (Peripheral arteriosclerosis)—जो धमनियों की परिधि की शाखाओं को आक्रान्त करता है।

एथीरोस्क्लेरोसिस
(Atherosclerosis)

कारण (Causes)—यह रोग कोलेस्ट्राल मेटाबोलिज्म (Cholesterol metabolism) के विकार के परिणामस्वरूप होता है। यह इसका प्रमुख कारण माना जाता है।

प्रवर्तनपूर्व कारण (Predisposig causes)—

१. **आयु (Age)**—जैसे-जैसे रोगी की अवस्था बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे इस रोग की सम्भावना भी बढ़ती जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. लिंग (Sex)—पुरुषों में यह रोग अधिक होता है। परन्तु आर्तवक्षय काल के उपरान्त स्त्रियों में यह पुरुषों के समान ही होता है।

३. अति रक्तदाब इसका एक विशेष कारण है।

४. आनुवंशिक प्रवृत्ति।

५. अधिक भोज।

६. अधिक मद्यपान का सेवन।

७. शरीर का अधिक मोटापन (Obesity)।

पेरीफेरल आर्टीरियोस्क्लेरोसिस
(Peripheral Arteriosclerosis)

प्रकार (Types)—इसके २ प्रकार होते हैं—

१. मेडियल स्क्लेरोसिस (Medial sclerosis)।

२. गलन एवं सड़न का विसरित अतिविकसन काठिन्य।

आर्टीरियोस्क्लेरोसिस के प्रधान लक्षण—

१. रोग शनैः-शनैः प्रारम्भ होता है तथा वृद्धावस्था तक मिलता है।

२. प्रारम्भ में इसके कोई लक्षण दिखलाई नहीं देते हैं। जब तक कि इस रोग के कारण कोई विशिष्ट भाग पूर्ण रूप से प्रभावित नहीं हो जाता है।

३. कुछ रोगियों में विभिन्न धमनियों में विसरित स्थूलता (Diffuse thickening) उत्पन्न हो जाती है। रोगी को समय से पूर्व ही वृद्धावस्था प्रतीत होने लगती है।

४. रोगी का रक्तदाब बढ़ा हुआ रहता है।

५. इस रोग में हृदय की अतिवृद्धि (Hypertrophy) हो जाती है।

६. विसरित अतिविकसन काठिन्य में रेडियल आर्टेरी चाबुक के कोड़े के समान दृढ़ हो जाती है।

सेरिब्रल सिम्प्टम्स (Cerebral symptoms)—

१. रोगी में मानसिक हानि, एकाग्रता की कमी तथा निद्रानाश के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

२. कभी-कभी रोगी में भ्रम, क्षणिक संज्ञानाश, आंशिक घात (Paresis) तथा मिर्गी के समान आक्षेप होने लगते हैं।

३. कभी-कभी धड़ तथा अधो शाखाओं में दृढ़ता (Rigidity) उत्पन्न हो जाती है।

४. कभी-कभी रोगी में क्षणिक अंधापन का लक्षण भी दिखलाई देता है।

उपद्रव—१. सेरिब्रल थ्रोम्बोसिस तथा २. रक्तस्राव।

हृदयगत लक्षण (Cardiac symptoms)—एओर्टा तथा कोरोनरी आर्टेरी के एथिरोस्क्लेरोसिस के कारण रोगी में एन्यूरिज्म, एऑर्टिक इनकॉम्पीटेन्स, मायोकार्डियल डीजनरेशन, कार्डियक हाइपरट्राफी, एञ्जाइना पेक्टोरिस, कोरोनरी थ्रोम्बोसिस आदि विकार उत्पन्न हो जाते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उदरीय लक्षण (Abdominal symptoms)—इस रोग के कारण उदर-शूल, मलावरोध तथा मेसेण्ट्रिक थ्रोम्बोसिस आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

वृक्क तथा मूत्र-सम्बधी लक्षण (Renal and vesical symptoms)—वृक्कों में आर्टीरियोस्क्लेरोसिस के कारण जीर्ण वृक्कशोथ (Chronic nephritis) का रोग हो जाता है।

मूत्राशय में रोग के परिणामस्वरूप रक्तमूत्रता (Haematuria) की उत्पत्ति हो जाती है।

परिसरीय लक्षण (Peripheral symptoms)—पैरों की धमनियों के प्रभावित होने पर इण्टरमिटेण्ट क्लॉडीकेशन (Intermittent claudication) नामक उपद्रव उत्पन्न हो जाता है।

इस रोग में रोगी चलने में असमर्थ हो जाता है। साथ ही पैरों में अत्यधिक वेदना हो जाती है। रोग के बढ़ने पर पैरों में ऐंठन का रोग हो जाता है। आगे चलकर गैंग्रीन की सम्भावना रहती है।

अन्य लक्षण—१. विसरित अतिविकसन काठिन्य में रोगी का सिस्टोलिक ब्लडप्रेशर बढ़कर १८० मि० मी० तक हो जाता है। इसके साथ ही द्वितीयक कार्डियक हाइपरट्रॉफी हो जाती है। ऐसी अवस्था में रोगी हाइपरटेन्सिव हर्ट डिजीज से ग्रसित हो जाता है।

२. वृद्धावस्था में मूत्र पर मस्तिष्क नाड़ियों का नियंत्रण समाप्त हो जाता है, जिससे रोगी में मूत्रावरोध (Incontinence) का रोग होने की सम्भावना रहती है।

३. कोष्ठ अंगों को रक्त पहुँचाने वाली धमनियों की मांसमय स्तर के कठोर हो जाने से कोष्ठ सम्बन्धी अंगों को रक्त की पूरी मात्रा नहीं मिल पाती है, जिससे आमाशय में एसिड की मात्रा कम हो जाती है। जिसके परिणामस्वरूप भूख तथा पाचन-शक्ति घट जाती है। अन्त में अरुचि, अफारा तथा दर्द आदि लक्षण मिलने लगते हैं।

४. यकृत् का आकार कुछ छोटा हो जाता है। रोगी को पोषण न मिलने से उसका भार घट जाता है।

५. अब यदि इन धमनियों में स्रोतोरोध (Atherosclerosis) की भी प्रतिक्रिया होने लगे तो अजीर्ण, मधुमेह, तीव्र मलबन्ध तथा पेट में गैस होने के लक्षण मिलने लगते हैं।

६. आँत के एक भाग को रक्त न मिलने से वह भाग मृत् हो जाता है, जिससे पेरीटोनाइटिस का रोग हो जाता है। इस अवस्था में कोष्ठ की दीवार में स्पर्शाक्षमता का लक्षण मिलता है।

पाँव सम्बन्धी लक्षण—जब पैरों को रक्त कम मिल पाता है, तब अंगुलियों के सिरे ठंडे रहते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—यदि एक पाँव दूसरे की अपेक्षा अधिक ठंठा रहे तो इस रोग का निश्चय हो जाता है।

अँगुलियों को रक्त न मिलने से उनका रंग कुछ पाण्डुमय हो जाता है तथा वहाँ की त्वचा पतली पड़ जाती है।

नख कठोर, खुरदरे तथा भंगुर हो जाते हैं। अँगुलियों पर बाल नहीं रहते हैं तथा वहाँ की मांसपेशियाँ सूख जाती हैं। पैरों की अँगुलियों में दर्द होने लगता है। अँगुलियों की चमक समाप्त हो जाती है। पैर ठंड सहन करने में असमर्थ हो जाते हैं।

जंघा सम्बन्धी—अवरोध अधिक होने पर तीव्र जंघा शूल उत्पन्न हो जाता है। जिससे उसे आगे कदम रखना असम्भव हो जाता है। रोगी वहीं खड़ा हो जाता है और खड़े होने पर शूल शान्त हो जाता है।

त्वचा सम्बन्धी लक्षण—त्वचा की शुष्कता, छिलकों का झड़ना, कोमलता की कमी, दबाने पर नखों में रंग का देर से आना तथा व्रणों का देर से भरना आदि लक्षण होते हैं।

अस्थि सम्बन्धी लक्षण—रक्त की कमी से अस्थियों को कैल्सियम कम मिल पाता है, जिससे 'ऑस्टियोप्रोसिस' का रोग हो जाता है। जिससे वृद्धावस्था में वह अधिक पोली तथा भंगुर हो जाती है। ऐसी अस्थियाँ थोड़े झटके से ही टूट जाती हैं। फीमर (Femur) के हिस्से पर तथा रेडियस के निचले भाग का अस्थिभंग (Fracture) हो जाता है। रोगी के पृष्ठ में वेदना का लक्षण मिलता है।

मांसपेशी सम्बन्धी लक्षण—१. इस रोग के कारण मांसपेशियों का पोषण कम हो जाता है, जिससे थोड़े परिश्रम से ही वे थक जाती हैं।

२. टाँगों, जोड़ों एवं कूल्हे की सन्धियों पर मांसपेशियाँ कुछ-कुछ संकुचित होती हैं।

सन्धियों सम्बन्धी लक्षण—१. सन्धियों में विशेषकर कूल्हे, जोड़ों तथा रीढ़ की हड्डी को पोषण कम मिलने से वह खुरदरी तथा विषम आकृति की हो जाती है।

२. रोगियों में ऑस्टियो-आर्थ्राइटिस का रोग हो जाता है।

३. संधियों का लचीलापन समाप्त होकर उनमें फाइब्रोसिस के आ जाने से स्तब्धता हो जाती है।

४. यह रोग स्थूल व्यक्तियों में अधिक होता है।

श्वास सम्बन्धी लक्षण—१. श्वासनलिकाओं तथा श्वासकोष्ठकों की मांसपेशियों में कठोरता (Fibrosis) होने पर वह निर्बल हो जाती हैं, जिससे फेफड़ों की क्षमता घट जाती है और श्रम करने से श्वास फूलने लगता है।

२. एम्फीसीमा का रोग हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. फेफड़ों में अधिक स्राव संचित होने लगता है, जिससे फेफड़े में इन्फेक्शन सुगमता से पहुँच जाता है।

उपद्रव (Complications)—इस रोग में अनेक रूप के परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं—

१. रक्तस्राव।

२. गैंग्रीन (Gangrene)।

३. मस्कुलर डीजनरेशन (Muscular degeneration)।

४. आगे चलकर ब्रॉन्काइटिस की अधिक सम्भावना रहती है।

भावीफल (Prognosis)—१. युवा व्यक्ति की धमनियों में कैल्सीभवन (Calcification) होने के कारण उक्त भाग की आकृति एक विशेष प्रकार की हो जाती है।

२. मायोकार्डियल डीजनरेशन, एन्यूरिज्म तथा वृक्क-विकारों के उत्पन्न होने से रोग की गम्भीरता बढ़ जाती है।

चिकित्सा (Treatment)—१. इस रोग की चिकित्सा उच्च रक्तचाप (High blood pressure) के समान है।

२. आर्टीरियोस्क्लेरोसिस को रोकने के लिए सामान्य चिकित्सा के अन्तर्गत विटामिन-ए तथा विटामिन-बी का भरपूर मात्रा में प्रयोग करना चाहिए। इसके लिए रोविगान (Rovigan) (नि० रोशे कं०) तथा स्क्लेरोबियान (Sclerobion) का सेवन लाभकारी होता है।

३. यदि मधुमेह रोग हो तो उसकी पूर्ण चिकित्सा करनी चाहिए।

४. विटामिन-बी$_{१२}$ को १-२ हजार मा० ग्रा० की मात्रा में कुछ समय तक देना चाहिए। इससे कोलेस्टरोल की मात्रा घट जाती है।

५. इस रोग में वेसोडाइलेटर्स (Vasodilator) या पेरीफेरल वेसोडाइलेटर्स (Peripheral vasodilator) का उपयोग लाभकारी होता है। इसके लिए निम्न औषधियों का प्रयोग करें—

℞ टोलाजोलीन हाइड्रोक्लोराइड

व्या० नाम—प्रिसकोल (Priscol) २५ मि० ग्रा० टेबलेट

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

नोट—इसका इञ्जेक्शन भी आता है। इसे I/V अथवा I/M रूप में देते हैं। इसका मलहम भी आता है, जिसे शीत व्रणों पर लगाते हैं।

विशेष—यह इण्टरमिटेण्ट क्लॉडीकेशन में भी लाभकारी है।

अथवा—फेण्टोलामाइन हाइड्रो० (Phentolamine hydrochloride)

व्या० नाम—रेजीटीन (Regitine)

मात्रा—५०–६० मि० ग्रा० दिन में ३ बार मुख द्वारा।

नोट—यह औषधि प्रिस्काल से अधिक उपयोगी है।

४२ए१ CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही—निकोटिनिक एसिड (Nicotinic acid)

मात्रा—१००–२०० मि० ग्रा० अनेक विभक्त मात्रा में दिन में कई बार मुख द्वारा।

साथ ही—५० मि० ग्रा० I/M दें।

नोट—इसके प्रयोग से हाथ-पैरों तथा हृदय एवं मस्तिष्क आदि में होने वाली रक्त की कमी दूर होती है।

अथवा—रोनीकोल (Ronicol) (रोशे कं०)

मात्रा—२५–५० मि० ग्रा० दिन में ३–४ बार मुखमार्ग से।

अथवा—वेसोडिलान (Vasodilan) तथा डुवाडिलान (Duvadilan)

मात्रा—१० मि० ग्रा० टेबलेट दिन में ४ बार (प्रथम दिन) तत्पश्चात् ३ गोली रोजाना।

अथवा—आर्लीडिन टेबलेट (Arlidin tab.) ५ मि० ग्रा० टेबलेट

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार भोजन के बाद।

उपयोग—यह रात्रि-उद्वेष्टन की उपयोगी औषधि है।

चेतावनी—इसका प्रयोग एञ्जाइना, आमाशयव्रण तथा टेकीकार्डिया में नहीं करना चाहिए।

अथवा—एजापेटीन फॉस्फेट २५ मि० ग्रा०

व्या० नाम—इलीडार (Ilidar)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार भोजन के बाद १ सप्ताह तक।

तत्पश्चात्—२ गोली दिन में ३ बार १ सप्ताह तक।

६. उपरोक्त औषधि चिकित्सा के बीच-बीच में हाइडरजीन (Hydergine) ०·२५ मि० ग्रा० की ३-८ गोली जीभ के नीचे प्रयोग कराते हैं।

इसके साथ इसी का इञ्जेक्शन S/C सप्ताह में १ या २ बार देते हैं। लाभ मिलने पर उपरोक्त मात्रा कम करके १–३ गोली प्रतिदिन देते हैं।

७. जंघाओं की धमनियों में अवरोध या स्तंभ (Spasm) होकर श्रम-जनित जंघाशूल होने पर रोगी को धीरे-धीरे चलाना चाहिए।

साथ ही—पेपावेरीन हाइड्रोक्लोराइड (Pepaverin Hcl.)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० प्रति ४ घण्टे पर दें।

८. तम्बाकू-सेवन का पूर्णतया निषेध करना चाहिए।

९. सेचुरेटेड स्नेह के स्थान पर अनसेचुरेटेड स्नेह का प्रयोग करना चाहिए।

नोट—जेरियाटोन (Geriatone) (वीथ कं०), जेरोवियोन (ई० मर्क), जेरियाटिण्डोन (Geriatindon) (इण्डोफार्मा)—ये औषधियाँ इदावस्था में आर्टीरियोस्क्लेरोसिस की रोकथाम में विशेष उपयोगी है। ⊡

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चतुर्थ खण्ड

*

मूत्र-प्रजनन-संस्थान के रोग

(Diseases of Urogenital System)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूत्रकृच्छ्र
(Dysuria)

पर्याय—मूत्रकृच्छ्रता, मूत्र-त्याग करने में पीड़ा अथवा जलन का होना।

परिचय—इस रोग में मूत्र कष्ट के साथ आता है। मूत्रत्याग के समय दाह तथा पीड़ा का अनुभव होता है।

कारण—१. मूत्राशय-विकार।

२. मूत्रवह स्रोत के विकार।

३. मूत्र की प्रतिक्रिया अत्यधिक अम्लीय होने पर।

४. मूत्र का विशिष्ट गुरुत्व (Specific gravity)।

लक्षण—मूत्र करते समय पीड़ा तथा जलन का अनुभव होता है।

चिकित्सा—१. रोगी को सोडाबाइकार्ब ४ ग्राम १ गिलास पानी में पिलाने के बाद पेडू पर गरम जल से सेंक करें।

२. स्पाज्मोसिबाल्जिन (Spasmocibalgin), न्यूरोट्रैसेण्टिन (Neurotrasentin), लिस्पामिन (Lyspamin) आदि का सेवन।

अधिक कष्ट होने पर—एट्रोपीन सल्फेट $\frac{1}{150}$ ग्रेन की सुई S/C लगायें।

३. मूत्राशय में शोथमूलक औपसर्गिक विकारों का अनुमान होने पर—'एण्टीबायोटिक' औषधि का प्रयोग करें।

४. मूत्र की प्रतिक्रिया अधिक अम्लीय होने पर—दाल एवं मांस और अम्ल युक्त पदार्थों का त्याग करें तथा क्षारयुक्त तरल का अधिक प्रयोग करें।

५. मूत्राशय अथवा वस्ति में अधिक क्षोभ होने पर—स्थानीय संज्ञाहरण 'नोवोकेन' अथवा 'एनिथेन' ५–१० मिली० की मात्रा में स्टेरेलाइज्ड रबर की मूत्रशलाका द्वारा मूत्राशय तथा मूत्रवहस्रोत में प्रवेश करायें। १०-१५ मिनट तक घोल को मूत्राशय में रखने के पश्चात् औषधि बाहर निकाल दें और प्रोटार्गल का २% घोल ५-१० मिली० की मात्रा में मूत्राशय में प्रविष्ट कर छोड़ देना चाहिए। यह क्रिया दो-तीन दिन तक करनी चाहिए। ⊡

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूत्र-असंयति
(Incontinence of Urine)

पर्याय—मूत्र का अपने-आप निकल जाना। इसे Urinary incontinance भी कहते हैं।

परिचय—इस अवस्था में मूत्राशय (Bladder) की धारण-शक्ति समाप्त हो जाती है; अर्थात् जितना मूत्र मूत्राशय में आता है वह बिना रुके ही तत्काल मूत्रनली (यूरेथ्रा) द्वारा बाहर निकल जाता है। इसमें मूत्राशय-अवरोधिनी (Sphincter of bladder) की संकोचक शक्ति का नाश हो जाता है। यह रोग बच्चों में अधिक मिलता है।

कारण—१. हाइड्रोनेफ्रोसिस (Hydronephrosis)।

२. माता की लापरवाही से।

३. अवरोधिनी की निष्क्रियता (Inactivity of sphincter)।

○ यह रोग उन बच्चों में अधिक मिलता है, जिनकी माताएँ आलसी होती हैं। बच्चे को समय पर मूत्र-त्याग नहीं करातीं और बच्चे में ओवर-फ्लो के कारण मूत्र अपने आप निकल जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—

१. टेबलेट प्रोबेन्थीन (Tab. Probanthine)

मात्रा—२५-५० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३ बार जल से।

२. टेबलेट यूरिसपास (Tab. Urispas)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

३. टेबलेट डिट्रोपान (Tab. Ditropan)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

४. इन्जेक्शन पेराल्डिहाइड (Inj. Paraldehyde)

मात्रा—५ मिली० मांसपेशीगत। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

असूत्रता/मूत्राघात
(Anuria)

पर्याय—मूत्र का न बनना; मूत्राघात (Supression of urine)।

परिचय—इसमें मूत्र का निर्माण बन्द हो जाता है। मूत्र न बनने के कारण मूत्राशय खाली रहता है।

कारण—१. वृक्कशोथ (Nephritis)।

२. रीनल आर्टेरी में आर्टीरियोस्क्लेरोसिस का होना।

३. जलाल्पता (डिहाइड्रेशन)।

४. स्तब्धता (Shock)।

५. वृक्कों की कार्य-अक्षमता।

६. अंशुघात।

७. दक्षिण हृदयनिपात की गम्भीर अवस्था।

लक्षण—१. इसमें रोगी को मूत्र आना बन्द हो जाता है।

२. मूत्राशय खाली रहता है।

३. मूत्राशय के ऊपर ताड़न करने पर मूत्र की उपस्थिति-निदर्शक मन्द ध्वनि का अभाव रहता है।

४. यह एक गम्भीर अवस्था है।

५. कभी-कभी मूत्रावरोध काफी समय तक रहने तथा मूत्राशय में मूत्र के अत्यधिक मात्रा में दीर्घकाल तक संचित रहने के कारण मूत्रपिण्डों पर तनाव पड़ता है, जिससे मूत्र की उत्पत्ति पूर्ण रूप से अवरुद्ध हो जाती है।

६. कभी-कभी सल्फा ड्रग्स का पर्याप्त मात्रा में प्रयोग करते हुए रोगी उचित परिमाण में जल का सेवन नहीं कर पाता है अथवा वमन तथा अतिसार के कारण शरीर में पहले ही जल की कमी रहती है। सल्फा ड्रग्स का उत्सर्ग वृक्कों के द्वारा होने से उनके सूक्ष्म कण जल की कमी से गवीनीमुख (Pelvis) को अवरुद्ध कर देते हैं, जिससे गम्भीर स्वरूप का मूत्राघात उत्पन्न हो जाता है।

चिकित्सा—१. पीठ पर गरम सेंक।

२. अधिक से अधिक मात्रा में जल का सेवन।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. जलाल्पता, परम ज्वर (High pyrexia) एवं अंशुघात आदि की सम्भावना में जल-चिकित्सा, इण्ट्रावीनस से पर्याप्त जल की आपूर्ति तथा दूसरे उपयुक्त उपचार करने चाहिए।

४. मूत्राशय में दीर्घकाल तक मूत्र-संचय रहने से मूत्र की उत्पत्ति में अवरोध होने पर—पीठ पर सेंक, अन्त्र-धावन (Colon wash) अर्थात् गरम जल से बड़ी आँत की सिंकाई तथा गुनगुने जल से मूत्राशय का प्रक्षालन करें। आवश्यक होने पर साधारण मूत्रल औषधियों का प्रयोग करें।

५. सल्फा ड्रग्स से उत्पन्न, गम्भीर स्वरूप के मूत्राघात में—गवीनी मूत्र नलिका (Ureteric catheter) को यूरेटर में प्रविष्ट कर ग्लूकोज या डेक्स्ट्रोज के समबल घोल (Isotonic dextrose solution) से गवीनीमुख का प्रक्षालन करके सल्फा ड्रग्स के संचित स्फटिकों को निकालना। तत्पश्चात् मूत्राशय (Bladder) तथा मूत्रमार्ग को भी भली प्रकार धो देना चाहिए।

○ साथ ही रोगी को मुख द्वारा पर्याप्त मात्रा में क्षारीय मिश्रण (Alkaline mixture) पिलाना चाहिए।

नोट—क्षारीय मिश्रण को सदैव ग्लूकोज मिलाकर कई बार पिलाना चाहिए। साथ ही समलवण जल I/V ड्रिप से १–२ पाइण्ट तक देना चाहिए।

वमन, अतिसार अथवा पसीने के कारण जल की कमी से उत्पन्न जलाल्पता की स्थिति में—सोडा सल्फ का २% घोल २५० मि० ली० की मात्रा में गुदा मार्ग से देना चाहिए।

विशिष्ट चिकित्सा—

१. डेक्स्ट्रोज का ५% घोल ५०० मिली० मात्रा में I/V ड्रिप द्वारा।

२. ग्लूकोज सैलाइन (Glucose saline) १००० मि० ली०।

३. नार्मल सैलाइन ५०० मिली० तक I/V द्वारा दिया जा सकता है

४. एण्टीबायोटिक जैसे–जेण्टामाइसीन का उचित मात्रा में प्रयोग।

५. इञ्जे० कैफीन सोडा बेञ्जोएट २ मि० ली० I/M. द्वारा।

६. ब्लड-ट्रान्स्फ्यूजन (Blood transfusion) अनीमिया की स्थिति में।

अन्य चिकित्सा—

मूत्रविषमता की स्थिति में—रक्तमोक्षण (रक्त निकालने के बाद) सम मात्रा में प्लाज्मा का I/V से प्रयोग करने पर लाभ मिलता है।

मूत्रविषमयता की स्थिति में मूत्राघात होने पर—सोडियम मोलर लैक्टेट घोल २५० मि० ली० की मात्रा में दिन में एक बार ४–६ दिन तक I/V ड्रिप से देने पर उत्तम लाभ मिलते देखा गया है।

निम्न चिकित्साक्रम मूत्राघात की स्थिति में लाभकारी होता है—

○ डेकोलीन २०% घोल के १० मि० ली० में विटामिन-सी ५०० मि० ग्रा० + ग्लूकोज ५०% घोल २५–५० मि० ली० मिलाकर I/V द्वारा।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ डीयूरेटिन (Diuretin) ६०० मि० ग्रा० दिन में ३–४ बार देने से भी मूत्र आ जाता है। इसी प्रकार पायरीडियम (Pyridium) की १–१ गोली देने से भी मूत्र आता है।

यदि मूत्र बिलकुल न बन रहा हो तो—कैल्सियम डीयूरेटिन (Calcium diuretin) १–१ गोली दिन में ३ बार दें। साथ ही वृक्क प्रदेश पर सिंकाई करायें। ▣

मूत्र-प्रजनन-संस्थान के रोग 4/4

वृक्कशोथ
(Nephritis)

पर्याय—वृक्कप्रदाह, वृक्कशोथ, गुर्दे की सूजन।

परिचय—इस रोग में वृक्क के स्थान पर कमर में दर्द होता है, जो नीचे की तरफ जाँघों में जाता प्रतीत होता है। जिस वृक्क में शोथ होता है, उस तरफ का पाँव खींचने से दर्द में वृद्धि हो जाती है। जाँघ का भीतरी भाग सुन्न-सा हो जाता है। मूत्र थोड़ा-थोड़ा और बार-बार कष्ट के साथ आता है जो दुर्गन्धित भी होता है। कभी-कभी मूत्र में काले रंग का रक्त भी आता है। इसके अतिरिक्त शीतकम्प के साथ ज्वर, कै, मितली, पेशाब में एल्बुमिन की उपस्थिति, समस्त शरीर में सूजन, मुखमण्डल एवं नेत्र की पलकों की सूजन, सिरदर्द और अधिक प्यास आदि इस रोग के प्रमुख लक्षण हैं।

प्रकार—नेफ्राइटिस मुख्य रूप से ४ प्रकार का होता है—

१. तीव्र वृक्कशोथ (Acute nephritis)।

२. अनुतीव्र वृक्कशोथ (Subacute nephritis)।

३. अनुतीव्र सद्रव वृक्कशोथ (Subacute glomerulo-tubular nephritis)।

४. चिरकारी वृक्कशोथ (Chronic nephritis)।

तीव्र वृक्कशोथ
(Acute Nephritis)

पर्याय—इस अवस्था को तीव्र विस्तृत गुत्सक वृक्कशोथ (Acute diffuse glomerulonephritis), तीव्र रक्तस्रावी वृक्कशोथ (Acute haemorrhagic nephritis), तीव्र गुत्सक नलिकीय वृक्कशोथ (Acute glomerulo-tubular nephritis) तथा प्रथम प्रकार का वृक्कशोथ (Type-1 nephritis) भी कहते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिचय—It is an immune complex disease affecting both the kidneys from diverse causes.

○ इस रोग में विशेष रूप से वृक्क के अन्दर स्थित केशिकास्तवक (Glomerulus) में शोथ हो जाता है।

कारण—○ रोग की उत्पत्ति किसी स्ट्रेप्टोकोकस संक्रमण—जो कि विशेषकर गले में होता है और इतना हलका होता है कि इस पर ध्यान नहीं जाता है—के १ से ३ सप्ताह बाद होता है। यह स्ट्रेप्टोकोकस बैक्टीरिया वर्ग 'ए' के होते हैं, जो गुर्दों को सीधा प्रभावित करते हैं।

○ जिन बालकों में इस रोग के होने की प्रवृत्ति पहले से ही होती है, उनमें टॉन्सीलाइटिस का अथवा त्वचा में पिंडिका, अग्निदाह (Burn) आदि कोई रोग स्पष्ट या अस्पष्ट रूप में होकर वहाँ से हीमोलिटिक स्ट्रेप्टोकोकस का संक्रमण वृक्कों में हो जाता है।

○ इस प्रकार से यह रोग शरीर के किसी एक भाग के द्वितीयक संक्रमण (Secondary infection) का कारण होता है। इस इन्फेक्शन का सम्बन्ध टॉन्सिल्स शोथ, डेण्टल सेप्सिस, सर्विकल एडीनाइटिस, पेरीटोनाइटिस, गलशोथ (Mumps) तथा सब-एक्यूट बैक्टीरियल इण्डोकार्डाइटिस आदि से होता है। कोलेजन डिजीज, एलर्जिक परप्यूरा, ड्रग्स हाइपर सेन्सिटीविटी एवं रेडिएशन भी इसके कारण हो सकते हैं।

○ इसके अतिरिक्त न्यूमोकोकस अथवा स्ट्रेप्टोकोकस भी इसके कारण होते हैं जिनका सम्बन्ध वास्तव में लाल बुखार (Scarlet fever), खसरा, चेचक तथा डिफ्थीरिया से होता है।

○ इस रोग को ऑटो-इम्यूनिटी से होने वाला रोग माना जाता है।

आयु—यह रोग ३ से १० वर्ष के बीच बाल्यावस्था में होता है।

लिंग—यह लड़कियों की अपेक्षा लड़कों में अधिक होता है।

व्यापकता—यह रोग पहले अधिक होता था, परन्तु आजकल यह कम होता है।

लक्षण—१. **रोग का आक्रमण**—अचानक होता है। यह रोग स्ट्रेप्टोकोकाई के संक्रमण के १५ दिन बाद सहसा आरम्भ होता है।

२. रोग के प्रारम्भ में बालक को १००° फा० तक मन्द ज्वर रहता है, जो इस रोग के जीवाणु-संक्रमण का सूचक है।

३. बालक या नवयुवक की आँखों के आस-पास शोथ उत्पन्न हो जाता है, जो कुछ दिनों में पैरों, अण्डकोषों तथा पीठ की त्वचा पर प्रसरण कर जाता है। शोथ मुख्यरूप से सुबह देखा जाता है।

३. इस रोग में शोथ से चेहरा अधिक प्रभावित होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. तापक्रम निम्न स्तर का जो ३८ से ३८·५° सें० अर्थात् १०० से १०१° फा० रहता है।

५. रीनल कैप्सूल के स्ट्रेचिंग (Stretching) के कारण उदर तथा कमर में पीड़ा होती है।

६. इस रोग में अरुचि (Anorexia), मितली, वमन, मलावरोध तथा सोर थ्रोट आदि लक्षण मिलते हैं।

७. नाड़ी को गति तीव्र होती है।

८. वृक्को में शोथ के परिणामस्वरूप वृक्क नलिकाओं में अवरोध उत्पन्न हो जाता है, जिससे बहुत कम मात्रा में तथा गाढ़ा मूत्र आता है। किसी-किसी केसिस में मूत्र आना बिलकुल ही बन्द हो जाता है।

९. मूत्र-परीक्षा में अल्बुमिन, कुछ श्वेतकण (W. B. C.) तथा कुछ लाल रक्तकोशिकाएँ (R. B. C.) तथा रक्त उपस्थित मिलता है।

१०. रोगी में प्रारम्भिक संक्रमण के लक्षण, यथा—टॉन्सीलाइटिस, डेण्टल इन्फेक्शन आदि उपस्थित रहते हैं।

११. शोथ के कारण रक्त में प्लाज्मा की वृद्धि हो जाती है, अर्थात् रक्त का रंग हलका पड़ जाता है, जिससे पाण्डुता का लक्षण उत्पन्न हो जाता है।

१२. बी० एस० आर० (B. S. R.) बढ़ जाता है।

१३. मूत्र की मात्रा बहुत घट जाती है। दिन भर की मात्रा लगभग २५०–५०० मि० ली० तक ही होती है। मूत्र का रंग काला अथवा धुएँ के रंग के समान हो जाता है। मूत्र में अल्बुमिन की अधिकता रहती है, जो ०·४ से २% तक रहती है।

नोट—मूत्रगत अल्बुमिन धमनी गुच्छों की रुग्णता का सूचक होता है। इसके अतिरिक्त मूत्र में ल्यूकोसाइट्स, रक्तकण, हायलीन तथा ग्रेनुलर कास्ट का मिलना भी धमनी गुच्छों के रुग्ण होने का द्योतक है।

१४. रोगी का रक्तभार (B. P.) बढ़ जाता है।

१५. कुछ केसिस में रोग आरम्भ के १–१½ मास बाद हृदय में अतिवृद्धि के स्थान पर कुछ डाइलेटेशन भी होता है। जिससे हृदय की शिथिलता तथा दुर्बलता में हृत्कम्प (Tachycardia) तथा श्वासकष्ट के लक्षण तथा जुगलर वेन में रक्तभार-वृद्धि के लक्षण होते हैं, जो रात के समय अधिक हो जाते हैं।

सूचना—बालकों में हृदय-नैर्बल्य सम्बन्धी इन लक्षणों को देखकर वृक्क रोग का सन्देह करना चाहिए।

○ अल्बुमिन की अधिकता (Albuminuria), रक्तमूत्र (Haematuria), रक्तभार तथा शोथ जितना अधिक होगा, रोग उतना ही अधिक तीव्र होगा।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१६. रक्तभार की अधिकता से शिरःशूल, तन्द्रा तथा आक्षेप (Convulsion) के उपद्रव हो जाते हैं।

१७. मूत्र की मात्रा अधिक घटने से 'यूरिया विष-संचार' के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। जिससे नाड़ियों तथा मांसपेशियों में कम्प (Twitching) आदि लक्षण मिल सकते हैं। विष-संचार (आमाशय और आँतों में) होने से वमन तथा अतिसार के लक्षण उत्पन्न हो सकते हैं। नाक से भी रक्त आ सकता है। कभी-कभी आँख की रेटिना में भी रक्तस्राव हो जाता है।

संक्षेप में प्रधान लक्षण—शोफ (Oedema), रक्तभार में वृद्धि, मूत्र में अल्बुमिन, रक्त तथा कास्ट की उपस्थिति, मूत्र की कमी आदि को देख कर निदान का निश्चय हो जाता है।

निदान (Diagnosis)—निदानात्मक चिह्न—

१. ज्वर, कटिशूल, रक्ताल्पता (अनीमिया), शोफ (Oedema), ब्लड-प्रेशर का बढ़ना तथा मूत्र में परिवर्तन—ये ६ लक्षण प्रमुख रूप से मिलते हैं।

२. रोगी का चेहरा सूजा हुआ एवं सफेद प्रतीत होता है।

३. मूत्र की मात्रा अल्प तथा विशिष्ट गुरुत्व अधिक होता है।

४. मूत्र का रंग धुएँ के समान काला होता है।

५. मूत्र में अल्बुमिन की अधिकता (०·१ से १% तक)।

६. सूजन आँखों के नीचे, पैरों पर तथा जननेन्द्रिय तक सीमित रहती है

७. नाड़ी की गति तीव्र होती है।

लेबोरेटरी परीक्षण—(१) मूत्र-परीक्षा (Urine test)—

१. मूत्र की मात्रा (Urine volume) लगभग ३००-५०० सी० सी०।

२. स्पेसिफिक ग्रेविटी बढ़ी हुई (१०२५-१०३५ तक) होती है।

३. रंग गहरा (Dark), रक्त और यूरेट्स के साथ।

४. प्रोटीन ०.४—२% तक।

५. मूत्र में हायालीन, रक्त तथा इपीथेलियल कास्ट्स तथा रीनल इपीथेलियल की उपस्थिति।

६. कल्चर स्टेराइल (Culture sterile)।

(२) रक्त-परीक्षा (Blood examination)—

१. ई० एस० आर० (E. S. R.) बढ़ा हुआ मिलता है।

२. नान प्रोटीन नाइट्रोजन बढ़ा हुआ होता है।

३. प्रोटीन तथा कोलेस्टरोल नार्मल।

(३) वाटर एलीमिनेशन टेस्ट—नीचा होता है।

उपद्रव (Complications)—

१. यूरीमिया (रक्त-मूत्र विष-संचार)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. हाइपरटेन्सिव इन्सेफेलोपैथी ।
३. लेफ्ट वेण्ट्रिकुलर फेल्योर ।
४. सबएक्यूट एवं क्रॉनिक नेफ्राइटिस।
५. पेरीकार्डाइटिस ।
६. पेरीटोनाइटिस ।
७. पल्मोनरी ईडिमा ।
८. एक्यूट रीनल फेल्योर ।
९. ईडिमा ग्लॉटिस ।
१०. सेकेण्डरी इन्फेक्शन—ब्रॉन्काइटिस, पेरीटोनाइटिस ।

कोर्स (Course)—औसतन ३ से ४ सप्ताह ।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—निम्न रोगों से इस रोग का विभेद करना चाहिए—

१. हीमेचूरिया के अन्य कारणों से ।
२. एक्जियो न्यूरोटिक ईडिमा ।
३. एक्यूट बी-कोलाई पाइलोनेफ्राइटिस ।
४. इम्बोलिक नेफ्राइटिस (सब-एक्यूट बैक्टीरियल इण्डोकार्डाइटिस) ।

अन्य उपद्रव—१. रक्ताल्पता (Anaemia) ।
२. वमन (Vomiting) ।
३. फुप्फुस शोफ (Oedema lungs) ।
४. अमूत्रता (Anuria) ।
५. मूत्रविषमयता शोफ ।
६. मस्तिष्क शोफ ।
७. फुप्फुसपाक (न्यूमोनिया) ।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. ८५% केसिस में ७ से १४ दिनों में स्वास्थ्य-लाभ हो जाता है ।

२. १५% रोगियों में विकृति अधिक गम्भीर होती है । इनमें से ५०% रोगियों की मृत्यु हो जाती है । केवल १०% रोगियों में विकृति अधिक स्थायी रहती है और यह रोगी क्रमशः रोग की अनुतीव्र (Subacut) तथा चिर-कालिक अवस्था (Chronic stage) की ओर प्रगति करते हैं ।

३. आयु जितनी अधिक होती है, रोग उतना ही कष्टसाध्य होता है ।

४. मृत्यु हृदयदौर्बल्य, मूत्राघात तथा फुप्फुसशोफ से होती है ।

चिकित्सा (Treatment)—

सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) शय्या पर विश्राम तथा त्वचा को गर्म रखना—

१. जब तक वृक्कों में शोथ रहे रोगी को शीत तथा श्रम से बचाना चाहिए।

२. रोगी की त्वचा को गरम रखा जाय। रोगी को गरम कमरे में तथा गरम कपड़ों में एक माह तक विश्राम कराना चाहिए। ऐसा करने से शोफ का पर्याप्त शमन होता है।

नोट—इतना करने से रोगी का रक्तभार घट जाता है। मूत्र में अल्बुमिन तथा रक्त की मात्रा घट जाती है। B. S. R. कम हो जाता है।

○ इसलिए प्रति दूसरे या तीसरे दिन मूत्र की मात्रा, रक्तभार, शरीर भार, मूत्र में अल्बुमिन तथा रक्त की जाँच करते रहना चाहिए।

३. जब रक्तभार तथा N. P. N. दो सप्ताह तक नार्मल बना रहे और जब तक मूत्र में अल्बुमिन की मात्रा २ ग्राम दैनिक न आ जाय तब तक रोगी को उठने-बैठने की अनुमति नहीं देनी चाहिए।

४. यदि रोगी को एक महीने की विश्राम चिकित्सा से लाभ न हो तो दो माह तक विश्राम चिकित्सा जारी रखनी चाहिए।

५. विश्राम काल में वृक्क प्रदेश पर 'केओलिन पुल्टिस' बाँधें।

(२) उपवास या भोजन-चिकित्सा—

१. जब तक रक्त में यूरिया की मात्रा नार्मल न हो जाय, तब तक आहार तथा पेय पदार्थों की मात्रा कम कर देनी चाहिए। प्रथम ३-४ दिन तक रोगी को लंघन कराना चाहिए।

२. रोगी को प्यास लगने पर बराबर संतरे को चुसवायें अथवा दिन में २ बार आधा-आधा गिलास जल या लेमोनेड जिसमें थोड़ा ग्लूकोज+आधा नीबू अथवा आधा गिलास सन्तरे का रस मिला हो, दें। रोगी को ग्लूकोज पर्याप्त मात्रा में देते रहना चाहिए।

३. जब उपरोक्त लंघन प्रक्रियाओं से मूत्र की मात्रा बढ़ जाये तब दूध और सोडावाटर आधा पाइण्ट की मात्रा में दिन में दो बार विभक्त कर दें। तत्पश्चात् २-३ दिन तक प्रतिदिन १ पाइण्ट दूध+५% ग्लूकोज के साथ ५० ग्राम की मात्रा में प्रति दो घण्टे पर दें। शेष द्रव भोजन में ग्लूकोज मिश्रित लेमोनेड, इम्पीरियल ड्रिन्क्स, सन्तरा, टमाटर, अँगूर आदि के रस के रूप में देना चाहिए।

○ इसके पश्चात् रोगी को प्रतिदिन १ पाइण्ट दूध स्वतन्त्र या चाय के रूप में दिया जा सकता है। शेष द्रव आहार में लेमोनेड+इम्पीरियल ड्रिंक्स+सन्तरे का रस+टमाटर तथा अँगूर के रस के रूप में। इसके साथ ४-५ टोस्ट, घृत अथवा शहद दिया जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ दूध तथा रोटी अथवा बिना नमक के बना हुआ डबल रोटी का टोस्ट स्वल्प मात्रा में दिया जा सकता है।

नोट—रोगी को नमक नहीं देना चाहिए। नमक के स्थान पर उसका सब्सीटचुट 'निओसेलारोम' (Neoselarom) दिया जा सकता है।

संक्षेप में— ○ तीव्र वृक्कशोथ के केसिस में फल का रस तथा ग्लूकोज को ही आहार रूप में प्रयोग करना चाहिए।

○ थोड़ा दूध तथा लवण रहित डबल रोटी मक्खन के साथ दी जा सकती है।

औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—

इस रोग की प्रधान रूप से सहायक (Supporting) तथा लाक्षणिक (Symptomatic) चिकित्सा ही होती है।

○ इसकी सर्वश्रेष्ठ चिकित्सा दीर्घकाल तक प्रभाव रखने वाली 'पेनिसिलीन' के द्वारा होती है। इसके लिए—

℞ बेञ्जोथीन पेनिसिलीन-जी

मात्रा—६ लाख यूनिट मांसपेशीगत बच्चों में प्रति माह।

○ चिकित्सा तब तक जारी रखना चाहिए जब तक मूत्र प्राकृत रूप में न आ जाय।

बड़ी आयु के रोगियों में—

१२ लाख यूनिट बेञ्जोथीन पेनिसिलीन-जी मांसपेशीगत सप्ताह में १ बार।

गम्भीर अवस्था में—६ लाख यूनिट मांसपेशीगत १ दिन के अन्तर पर।

नोट—इस रोग में प्रधान रूप से 'बी० हीमोलिटिक स्ट्रेप्टोकोकाई' का संक्रमण होता है, जिससे नासा, फेरिंग्स तथा नॉस्ट्रिल ग्रसित होते हैं। ऐसी अवस्था में—

℞ बेञ्जाइल पेनिसिलीन (Benzyle penicillin)

मात्रा—५,००,००० यूनिट दिन में २ बार मांसपेशीगत ४ दिन तक।

तत्पश्चात्—फीनोक्सीमेथाइल पेनिसिलीन २५० मि० ग्रा०

मात्रा—दिन में २ बार ४-६ सप्ताह तक।

निर्देश—○ यदि उपरोक्त चिकित्सा से रोगी के लक्षणों में कोई सुधार दिखलाई न पड़े तथा उसके स्वास्थ्य में कोई प्रगति न हो तो किसी विशेषज्ञ को दिखलाना चाहिए।

○ यदि रोगी को लाभ मिल रहा हो तो चिकित्सा जारी रखनी चाहिए।

○ रोग-मुक्ति के पश्चात् भी १०-१५ दिन तक मूत्र में थोड़ा-सा रक्त तथा महीने-दो महीने तक मूत्र में थोड़ा-थोड़ा अल्बुमिन आता रह सकता है। इसके लिए विशेष चिन्ता की आवश्यकता नहीं है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ कुछ चिकित्सक निम्न चिकित्सा व्यवस्था-पत्र निर्दिष्ट करते हैं—

१. गरम शय्या पर ३-४ सप्ताह तक विश्राम।

२. आहार—ग्लूकोज वाटर, बार्ली वाटर, हॉर्लिक्स, साफ्ट राइस (मुलायम भात), उबला आलू तथा सब्जी।

३. औषधि—क्रिस्टालिन पेनिसिलीन उचित मात्रा में ६-७ दिन तक (सोर थ्रोट के लिए)।

विटामिन-सी टेबलेट (५०० मि० ग्रा०) प्रतिदिन विभाजित मात्रा में ६-७ दिन तक।

४. यदि कोई उपद्रव हो तो उसकी चिकित्सा पृथक से करें।

५. जब रोगी सब तरह से ठीक हो जाये तब दीर्घकालिक प्रभावकारी पेनिसिलीन का प्रयोग करें—

℞ बेन्जाथीन पेनिसिलीन (Benzathine penicillin)

मात्रा—१२ लाख यूनिट गहरे मांसपेशी में प्रति २-३ सप्ताह पर कुछ माह तक।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

१. शोफ (Oedema)—२४ घण्टे तक कोई भी तरल आहार न दें। वयस्कों में ५०० मि० ली० तक दूध दिया जा सकता है। पानी 'ग्लूकोज वाटर' के रूप में देना चाहिए।

○ नमक ०.५ ग्राम से अधिक न दें।

नोट—रोग की तीव्र अवस्था में मूत्रल (Diuretics) का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

२. रक्ताल्पता (Anaemia)—

℞ टे० फैरस सल्फेट २०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार भोजन के बाद।

साथ ही—विटामिन-सी १०० मि० ग्रा० दिन में १ बार जब तक हीमोग्लोबिन नार्मल स्तर पर न आ जाये।

उपद्रवों की चिकित्सा (Treatment of complications)—

१. रक्तभार-वृद्धि (Hypertension)—

℞ मेथिलडोपा (Methyldopa)

व्या० नाम०—एल्डोमेट (Aldomet)

मात्रा—बालकों में १ गोली (१२५ मिग्रा०) दिन में १ बार मुख द्वारा।

वयस्कों में—१ गोली (२५० मिग्रा०) दिन में २ बार मुख द्वारा १ दिन छोड़ कर।

℞ एडेल्फेन (Adelphane)

मात्रा—१ गोली दिन में २ या ३ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. कंजेस्टिव कार्डियक फेल्योर—

○ डिजोक्सिन (Digoxin) ०.२५ मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर।

○ ऑक्सीजन सुँघाएँ (Oxygen inhalation)।

३. हाइपरटेन्सिव इन्सेफेलोपेथी—

आक्षेपों की स्थिति में—पैराल्डिहाइड २-८ मि० ली० मांसपेशीगत।

बालकों में—१ मि० ली०/प्रति किलो शरीर-भार पर।

रक्तभार कम करने के लिए—सर्पासिल (Serpasil)

मात्रा—०.५–१ मि० ग्रा० मांसपेशीगत। तत्पश्चात्—

इन्जे० क्लोरप्रोमेजीन हाइड्रोक्लोराइड

मात्रा—५० मि० ग्रा० मांसपेशीगत।

४. ऑलीगूरिया एवं एनूरिया —

वमन की स्थिति में—५०० मि० ली० (५%) डेक्स्ट्रोज सोलूशन आई० वी० ड्रिप २४ घण्टे में।

यदि वमन न हो तो—२०० मि० ली० दूध + ३०० मि० ली० पानी + ५० ग्राम ग्लूकोज मुख द्वारा रोजाना।

५. प्रोटीनूरिया (Protinuria)—

ACTH २५ मि० ग्रा० ५% डेक्स्ट्रोज सोलूशन में इण्ट्रावीनस १०-१२ दिन तक। मूत्र में अल्बुमिन की मात्रा घट जाती है और मूत्र अधिक आने लगता है।

अथवा—प्रेडनीसोलोन (Prednisolone)

○ वयस्कों में—१० मि० ग्रा० दिन में २ बार विभक्त कर दें। रोग जब भी प्रकट हो २०-२५ मि० ग्रा० दैनिक मात्रा के हिसाब से विभक्त कर दें।

○ बालकों में—१-२ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर-भार पर।

नोट—यदि मूत्र में प्रोटीन न मिले तो—सप्ताह में ३ दिन तक लगातार ६० मि० ग्रा० दैनिक मात्रा में इस चिकित्सा को जारी रखें। सप्ताह में शेष ४ दिन इसे बन्द रखें। इस प्रकार से बिना किसी रोक-टोक के इसे महीनों जारी रखना चाहिए।

चेतावनी—रक्तभार की अधिकता में इस औषधि का प्रयोग न करें।

○ इस औषधि के साथ ही—

फोवेन (Fovane) ५० मि० ग्रा० प्रातः १ दिन छोड़कर दें।

पोट-क्लोर (Pot-chlor) ०·५ ग्राम टेबलेट या कै० दिन में ४ या ६ बार दें।

डेक्स्ट्रान सल्फेट १०% सोलूशन ५०० मि० ली० I/V दें।

○ साथ ही—पेनिसिलीन आदि कोई एण्टीबायोटिक, आयरन, कैल्सियम तथा विटामिन्स का प्रयोग प्रतिदिन करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुतीव्र वृक्कशोथ
(Subacute Nephritis)

पर्याय—इसे जीर्ण अन्तःसरीय वृक्कशोथ (Chronic parenchymatous nephritis), बृहत् श्वेत वृक्क (Large white kidney), एलिस टाइप द्वितीय नेफ्राइटिस (Ellis type 2nd nephritis) या अनुतीव्र गुत्सकीय वृक्कशोथ (Subacute glomerulo-nephritis) आदि नामों से भी जाना जाता है।

परिचय—इस अवस्था में मूत्र द्वारा अधिक से अधिक मात्रा में अल्बुमिन (Albumin) का त्याग होता है। साथ ही शोफ तथा रक्ताल्पता की प्रधानता रहती है।

रोग का प्रारम्भ—तीव्र वृक्कशोथ (Acute nephritis) के २ या ३ माह के पश्चात् रोग की यह अवस्था प्रारम्भ होती है।

लक्षण—१. इस अवस्था में तीव्र अवस्था के अनेक लक्षणों का शमन हो जाता है। साथ ही अन्य नये लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

२. मूत्र में अल्बुमिन सर्वाधिक आता है।

३. शोफ तथा रक्ताल्पता की अधिकता रहती है।

४. रक्तभार सामान्य रहता है।

५. कभी-कभी शोफ (Oedema) पैरों से प्रारम्भ होता है।

६. शरीर में जल तथा सोडियम का संचय होता है।

७. वृक्क का आकार बड़ा हो जाता है।

८. रीनल फंक्शन टेस्ट नार्मल रहता है।

९. शोफ के कारण रोगी का चेहरा बड़ा प्रतीत है तथा रक्ताल्पता के कारण रोगी का रंग सफेद हो जाता है।

प्रकार (Types)—सूजन (Oedema) की प्रधानता अथवा अनुपस्थिति के अनुसार इस अवस्था के २ प्रकार माने जाते हैं—

१. सद्रव अनुतीव्र वृक्कशोथ।

२. शुष्क वृक्कशोथ या एजोटीमिक नेफ्राइटिस।

(१) सद्रव अनुतीव्र वृक्कशोथ (Subacute glomerulo-tubular nephritis)—

१. इस अवस्था में शरीर से अधिक मात्रा में अल्बुमिन निकल जाने से पूरे शरीर में सूजन आ जाती है।

२. रक्ताल्पता इसका विशिष्ट लक्षण होता है। इसमें रक्ताल्पता स्पष्ट प्रतीत होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. अधिक सूजन तथा रक्ताल्पता के कारण रोगी का चेहरा बड़ा मालूम होता है तथा खून की कमी से सफेद प्रतीत होता है। इस प्रकार से रोगी की एक विशिष्ट आकृति होती है।

४. रक्त में कोलेस्टरोल की मात्रा बढ़ जाती है। साथ ही प्रोटीन की अधिक कमी हो जाती है।

५. रोगी को आलस्य रहता है। उसकी पाचन-क्रिया समाप्त हो जाती है।

६. ब्लड-प्रेशर अधिक नहीं होता।

७. अन्त में चिरकालिक अवस्था आने पर शरीर की सूजन कम हो जाती है तथा ब्लड-प्रेशर बढ़ने लगता है। रक्त में यूरिया का संचय भी होने लगता है।

नोट—इस अवस्था को 'द्वितीयक संकुचित वृक्क' (Secondary contracted kidney) भी कहते हैं।

चिकित्सा—१. रोग की सामान्य चिकित्सा तीव्र अवस्था के समान ही है।

२. इस रोग में शय्याव्रण (Bedsore) की अधिक सम्भावना रहती है। इसलिए समय-समय पर रोगी को करवट बदलते रहना चाहिए। शय्या व्रण की अवस्था में प्रभावित स्थान को साबुन से नित्य धोकर स्प्रिट तथा एण्टीसेप्टिक डस्टिंग पाउडर लगायें।

३. शोफ के लिए प्रोटीन प्रधान आहार दें। प्रारम्भ में दूध तथा एक सप्ताह तक शनैः-शनैः अण्डा, दूध के बने पदार्थ, रसगुल्ला तथा छेना आदि दें।

४. भोजन में नमक का प्रयोग बिलकुल न करें।

५. रक्ताल्पता के लिए आयरन के योग दें।

६. थाइराइड इक्स्ट्रेक्ट ३०-६० मि० ग्रा० प्रतिदिन तीन बार देने से शोफ में कमी आती है।

७. ए० सी० टी० एच० तथा कार्टीसोन का प्रयोग करें।

८. मूत्र में रक्त न रहने पर डीयूरेटिन (Diuretin) ३००-६०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार दें।

९. उपसर्ग के लिए पेनिसिलीन अथवा एम्पीसिलीन का प्रयोग अपेक्षित है।

१०. उदर तथा अन्य स्थानों से ट्रोकार द्वारा जल निकाला जा सकता है।

निषेध—○ रोगी को ठंड से बचायें।

○ मरकरी के योग का प्रयोग न करें।

(२) शुष्क वृक्कशोथ (Azotemic nephritis)—

सूजन का न होना, ब्लड-प्रेशर का बढ़ना, मूत्रविषमयता (Uraemia) की सम्भावनाएँ इसके प्रधान लक्षण हैं। शेष लक्षणों में—

१. सूजन न होने से रोगी का शरीर शुष्क होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. धमनियों की दीवार कड़ी होने के कारण ब्लड-प्रेशर बढ़ जाता है।

३. हृत्पेशी मोटी हो जाती है। अन्त में दक्षिण हृदय-निपात के लक्षण उत्पन्न होते हैं।

४. रक्त में यूरिया एकत्रित होने के कारण मूत्रविषमयता के लक्षण पैदा हो जाते हैं।

५. ब्लड-प्रेशर की वृद्धि से रेटिना में वैकृतिक परिवर्तन हो जाते हैं। रोगी का चेहरा सफेद हो जाता है।

६. चेहरे पर समय-समय पर सूजन मिल सकती है।

७. इस अवस्था में वृक्क के कार्य में निरन्तर कमी होती जाती है।

८. मूत्र की मात्रा अधिक होती है और विशिष्ट गुरुत्व अधिक हो जाता है।

९. मूत्र में अल्बुमिन की मात्रा कम होती है।

१०. दौर्बल्य, शिथिलता, शिरःशूल, रक्ताल्पता आदि लक्षण भी मिल सकते हैं।

रोगी का अन्त—मूत्रविषमयता तथा उच्च रक्तदाब के कारण मस्तिष्क में रक्तस्राव होने से रोगी का प्राणान्त हो जाता है।

चिकित्सा—१. रोग की कारण के अनुरूप चिकित्सा करें।

२. उपसर्ग की स्थिति में पेनिसिलीन अथवा जेण्टामाइसिन का प्रयोग।

३. रोगी को अधिक परिश्रम तथा शीत से बचायें।

४. उपद्रवों की उपयुक्त चिकित्सा करें।

चिरकारी वृक्कशोथ
(Chronic Nephritis)

पर्याय—इसे चिरकालिक गुत्सकीय वृक्कशोथ (Chronic glomerulo-nephritis), अन्तिम वृक्कशोथ (Terminal nephritis), अन्तरालीय वृक्कशोथ (Interstitial nephritis) आदि नामों से भी जाना जाता है।

○ कुछ लोग इसे 'स्माल ह्वाइट किडनी' तथा 'क्रॉनिक रीनल फेल्योर' भी कहते हैं।

परिचय—यह रोग तीव्र वृक्कशोथ (Acute nephritis) तथा दूसरे शोथयुक्त मन्द वृक्कशोथ (Subacute nephritis) इन दोनों में से किसी के दीर्घकाल तक (लगभग २ वर्ष तक) बने रहने से होता है।

लक्षण—१. प्रारम्भ में इसमें कोई विशेष लक्षण नहीं होते हैं। केवल मूत्र में थोड़ा-सा अल्बुमिन मिल सकता है। मूत्र कुछ पतला होता है। मूत्र के साथ कुछ-कुछ रक्त भी आ सकता है।

२. इस अवस्था में रोगी २०–२५ वर्ष तक जीवित रह सकता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. जब वृक्कों का कार्य २०–२५% से नीचे गिर जाता है, तब रोगी में इस रोग के लक्षण प्रकट होने लगते हैं।

रोग के प्रारम्भ में—

१. रात्रिमेह (Nocturia) का लक्षण मिलता है।

२. प्यास की अधिकता।

३. अरुचि (Anorexia), मितली (Nausea) तथा वमन (Vomiting)।

४. दुर्बलता (Weakness)।

५. हृदय का अधिक धड़कना (Palpitation)।

६. आँख से धुँधला दिखलाई पड़ना (Dimness of vision)।

७. इस प्रकार के रोग में शोफ (Oedema) का लक्षण नहीं मिलता है।

८. कई बार मूत्र-परीक्षा करने पर भी अल्बुमिन नहीं मिलता है। अतः स्वल्प स्वरूप का अल्बुमिन आना इस रोग का सूचक होता है।

९. वृक्कों में मूत्र को गाढ़ा करने की शक्ति घट जाती है, जिससे मूत्र मात्रा में तो अधिक (लगभग १०० औंस तक) आता है, किन्तु उसमें गाढ़ापन नहीं रहता। मूत्र की स्पेसिफिक ग्रेविटी घट कर १·०१० या १·०१२ तक रह जाती है।

१०. रोगी में कुछ-न-कुछ बहुमूत्र (Polyurea) की शिकायत रहती है जिससे रोगी को प्यास अधिक लगती है और डिहाइड्रेशन रहता है।

११. मूत्र में ग्रेनुलर तथा हायालीन कास्ट्स होते हैं।

१२. रोगी के रक्त में अम्लीयता बढ़ जाती है। प्लाज्मा pH घट जाता है। श्वास गहरे-गहरे हो जाते हैं।

१३. अस्थियों में कैल्शियम की न्यूनता से उनमें पीड़ा होने लगती है। बालकों में टिटेनी का रोग हो जाता है।

१४. कुछ केसिस में रक्तभार बढ़ने से वाम हृदय में अतिवृद्धि (Hypertrophy) हो जाती है।

१५. कभी-कभी त्वचा पर लाल-लाल चकत्ते भी निकल आते हैं। नाक अथवा अन्य मार्ग से रक्त भी आ सकता है।

१६. रक्तभार बढ़ने से शिरःशूल, शिरोभ्रम, मानसिक विक्षोभनशीलता अथवा वृक्करोग-जनित दृष्टिनाश आदि हो जाते हैं। रोगी की दृष्टिशक्ति कम हो जाती है। कभी-कभी रेटिना पर रक्त के धब्बे भी मिलते हैं।

१७. शरीर में फीकापन हो जाता है, जिसमें पाण्डु की औषधियों से लाभ नहीं मिलता है।

१८. नाड़ियों पर विक्षोभक प्रभाव होकर हाथ-पैर की मांसपेशियों में स्तम्भ (Cramp) के लक्षण होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९. आमाशय तथा आँतों पर दुष्प्रभाव होने से अन्न में अरुचि, वमन तथा अतिसार के लक्षण हो जाते हैं, जो चिकित्सा से ठीक नहीं होते।

२०. मस्तिष्क पर रोग के प्रभाव से दिन में निद्राधिक्य (Drowsiness) तथा रात को उन्निद्रता (Insomnia) के लक्षण मिलते हैं।

२१. यह रोग वर्षों तक रहता है। यदि रोग तीव्र हो तो ५ से १० वर्ष में और मृदु होने पर २५ से ३० वर्ष में मूत्रविषमयता (यूरीमिया) हो जाती है।

सामान्य निरीक्षण—१. अनीमिया की उपस्थिति मिलती है।

२. ब्लड-प्रेशर बढ़ा हुआ मिलता है।

३. लेफ्ट वेण्ट्रीकुलर हाइपरट्रॉफी (Left ventricular hypertrophy)।

४. डिहाइड्रेशन के चिह्न।

रोग का अनुमान—यदि किसी बड़ी आयु के रोगी में शिरःशूल, दृष्टि की मन्दता, आक्षेप (Convulsions), दिशाभ्रम, मूर्च्छा (Coma), पाण्डु या मूर्च्छा, रात्रिमेह, नासारक्तस्राव, श्वास, अरुचि, वमन, पूरे शरीर में खुजली (कण्डु), स्वल्प परिश्रम से ही श्वास का चढ़ना, मुख पर हलकी-सी सूजन, मलबन्ध या अतिसार तथा रक्तभार-वृद्धि आदि लक्षण हो तो चिरकालिक वृक्कशोथ (Chronic nephritis) का संदेह करना चाहिए।

निदानात्मक विशेष परीक्षा—

मूत्र-परीक्षा में—१. अल्बुमिन की थोड़ी मात्रा का मिलना।

२. ग्रेनुलर तथा हायलीन कास्ट की उपस्थिति।

३. स्पेसिफिक ग्रेविटी का कम मिलना। यह १·०१० पर स्थित होती है।

४. रक्त में यूरिया की अधिकता होती है।

५. मूत्र मात्रा में अधिक जो २४ घण्टे में लगभग ३ लीटर या इससे अधिक होता है।

६. मूत्र का रंग साफ होता है।

७. रीनल फंक्शन टेस्ट बढ़ा हुआ मिलता है।

कुछ लोगों के विचार—

○ जीर्ण वृक्कशोथ (Chronic nephritis) को वृक्कशोथ का जीर्ण रूप नहीं समझना चाहिए। बल्कि यह एक अन्य प्रकार का रोग है। इस रोग में ग्लोमेरूलस की कुछ कोशिकाओं में गड़बड़ी उत्पन्न हो जाती है।

○ वृद्ध व्यक्तियों में इस प्रकार का एक अन्य रोग जिसमें एक अन्य प्रकार की कोशिकाएँ मोटी होकर ऐंठ जाती हैं। इन दोनों के लक्षण एक-दूसरे से इतने अधिक मिलते-जुलते हैं कि कौन-सा रोग है, यह बतलाना कठिन हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ अतः जीर्ण वृक्कशोथ का नाम 'नेफ्रोटिक संलक्षण' (Nephrotic syndrome) रख दिया गया है। इस रोग का प्रमुख लक्षण है—मूत्र में बहुत अधिक मात्रा में अल्बुमिन का आना तथा पूरे शरीर में शोफ की स्थिति।

○ इन लोगों का कथन है कि बच्चों में इसकी उत्पत्ति तीव्र वृक्कशोथ के बाद हो सकती है। पर अन्य आयु वर्ग के रोगियों में इसकी उत्पत्ति मधुमेह, कंजेस्टिव हर्ट-फेल्योर तथा वृद्धावस्था के कारण होने वाले आन्तरिक परिवर्तनों के कारण होती है।

चिकित्सा—इस अवस्था का अन्तिम परिणाम मृत्यु है। इसलिए चिकित्सा द्वारा रोगी के जीवन की अवधि बढ़ाने का प्रयास किया जाता है। इसके लिए यह आवश्यक है कि वृक्क का जो भाग विकृत होने से बच गया है, उस पर अधिक भार न डाला जाय तथा उत्पन्न लक्षणों की उपयुक्त चिकित्सा की जाये। इसके लिए नियमित जीवन व्यतीत करना आवश्यक होता है।

○ इस अवस्था में मूत्रविषमयता तथा अम्लोत्कर्ष (Acidosis) की अत्यधिक सम्भावना रहती है। अतः इन उपद्रवों के लक्षणों की ओर सतर्क रहना चाहिए। इनके उत्पन्न होते ही उनकी समुचित चिकित्सा करनी चाहिए।

रोग की सामान्य चिकित्सा—तीव्र रोग के ही समान है।

१. ज्वर आदि उपद्रव होने पर शय्या पर पूर्ण विश्राम आवश्यक है।

२ उपसर्ग की उपयुक्त चिकित्सा करें।

३. शारीरिक तथा मानसिक परिश्रम, शीत, मद्यपान आदि से बचना चाहिए।

४. रोग के कारण की उपयुक्त चिकित्सा करें।

५. भोजन साधारण तथा निरामिष हो।

६. पर्याप्त मात्रा में (४–५ लीटर तक) जल पिलाना चाहिए।

७. प्रोटीन की मात्रा वृक्क की कार्यशीलता के अनुसार निर्धारित करें।

○ फैट्स की भी मात्रा कम हो। रोगी को दूध, रोटी, मक्खन, चावल, हलकी चाय तथा फल आदि दिये जा सकते हैं।

८. कोष्ठबद्धता की स्थिति में रोगी को पपीता, अंगूर, मुनक्का आदि दें।

९. ब्लड-प्रेशर की उपयुक्त चिकित्सा आवश्यक है।

१०. हृदय-निपात की सम्भावना में उपयुक्त चिकित्सा करनी चाहिए।

११. एसीडोसिस को रोकने के लिए मूत्र की प्रतिक्रिया क्षारीय आवश्यक है। इसके लिए 'एल्कलाइजर'—अल्कासोल आदि का व्यवहार करना चाहिए।

१२. रक्त में रासायनिक पदार्थों को नार्मल स्थिति में रखने के लिए—सोडी साइट्रस १८०० मि० ग्रा० + कैल्शियम क्लोराइड ६० मि० ग्रा० + कैल्शियम लैक्टेट ६०० मि० ग्रा० ३ बार प्रतिदिन दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—○ रोगी की जीवनपर्यन्त मूत्र-परीक्षा तथा रक्त-परीक्षा करते रहना चाहिए।

○ उपद्रवों की उपयुक्त चिकित्सा जो आगे दी गई है, करनी चाहिए।

नेफ्रोटिक सिण्ड्रोम की चिकित्सा—

१. शोफ की स्थिति में शय्या पर विश्राम।

२. नमकरहित आहार।

३. शोफ (Oedema) कम करनें के लिए—

℞ लासिक्स (Lasix)। मात्रा—१ गोली प्रातः नित्य।

नोट—यदि वृक्कों में मूत्र बनना बन्द हो गया हो तो 'मूत्रल औषधि' नहीं देनी चाहिए।

साथ ही—℞ प्रेडनीसोलोन १ मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर-भार पर ३ सप्ताह तक। इसके बाद मात्रा घटाते हुए १० मि० ग्रा० तक प्रतिदिन ५-६ महीने तक।

निर्देश—यदि ६ सप्ताह तक प्रयोग करने पर भी मूत्र में आने वाली प्रोटीन की मात्रा में कमी न हो तो इसका प्रयोग बन्द कर देना चाहिए।

चेतावनी—यदि साथ में मधुमेह भी हो तो 'कोर्टिकोस्टेराइड' का प्रयोग न करें।

उपद्रवों की चिकित्सा—

१. मितली, कै एवं हिक्कफ—

℞ क्लोरप्रोमेजीन २५ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

साइक्लीज़ीन हाइड्रोक्लोराइड (Cyclizine hydrochloride)

व्या० नाम—मार्ज़ीन टेबलेट (Marzine tab.) (B. W.)

मात्रा—५० मि० ग्रा० की १ गोली आवश्यकतानुसार।

२. उच्च रक्तचाप (High blood pressure)—

℞ मेथिल डोपा (Methyl dopa) २५० मि० ग्रा०

व्या० नाम—एल्डोमेट टेबलेट (M. S. D.)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

३. शोफ (Oedema)—

(i) कम मात्रा में मूत्रल (Diuretic) का प्रयोग।

(ii) **यदि शोफ हर्ट-फेल्योर से सम्बन्धित हो तो—**

℞ टेबलेट डिजोक्सिन (Tab. Digoxin) ०·२५ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृक्कशोथ-नाशक मिश्रित थेरापी—

१. ℞ ट्रिएम्टेरीन पाउडर ५० मि० ग्रा०
बेन्जेथाएजाइड पाउडर २५ मि० ग्रा०

मात्रा—ऐसी १ मात्रा दिन में ४ बार।

नोट—इसे SKF कम्पनी ने डायटिड (Dytide) नाम से निर्मित किया है।

२. ℞ पोटासियम साइट्रेट १२०० मि० ग्रा०
पोटासिमय बाइकार्ब ९०० मि० ग्रा०
एक्वा कुल १५ मि० ली०

इनको भलीभाँति मिलाकर ऐसी एक मात्रा प्रति ४ घण्टे पर दें।

विशेष उपयोगिता—इससे वृक्कों की सूजन समाप्त होकर मूत्र खुलकर आता है।

शोफ (ईडिमा) के लिए—

३. ℞ टेबलेट लासिक्स (हैक्स्ट) १ गोली
रेडॉक्सान या सीलिन ५०० मि० ग्रा० ½ गोली

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार प्रात-सायं। १ मात्रा

४. ℞ डीयूरिल टेबलेट (एलेम्बिक) १ गोली
डायटिड (एस्काय लैब) १ गोली
मैक्राफोलिन विद आयरन (ग्लैक्सो) १ गोली
१ मात्रा

तीनों को पीस कर एक पुड़िया बना लें। ऐसी एक पुड़िया दिन में २-३ बार जल से।

विशेष उपयोगिता—समस्त प्रकार के शोथ में।

५. ℞ होल लिवर एक्स्ट्रेक्ट (रैलीज) १ मि० ली०
मैक्राबिन ५०० मा० ग्रा० १ मि० ली०
लासिक्स (हैक्स्ट) २ मि० ली०
१ मात्रा

तीनों को मिलाकर सूचीवेध द्वारा गहरे मांसपेशी में प्रति तीसरे दिन।

६. ℞ टेबलेट नेफिल (फाइजर कं०) १ गोली
जाइपैमिड-जी-आर (जर्मन रेमेडीज) १ गोली
फर्सोलेट (ग्लैक्सो) २ गोली
१ मात्रा।

ऐसी एक मात्रा दिन में २ या ३ बार। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूत्राशयशोथ/वस्तिशोथ (Cystitis)

पर्याय—मूत्राशय-प्रदाह, मूत्राशयशोथ, वस्तिशोथ, वस्ति की सूजन ।

परिचय—इस रोग में बार-बार मूत्र आता है । मूत्राशय (Bladder) में असह्य दर्द होता है । पेशाब करते समय जलन होती है । पेडू में भारीपन तथा बेचैनी होती है । मूत्र कम आता है जो बलगम तथा रक्त-मिश्रित, दुर्गन्धित, एवं तलछट वाला होता है । इसमें रोगी को पेशाब करते समय बार-बार काँखना पड़ता है । रोग की अधिकता में कम्पन से ज्वर हो जाता है और रोगी का जी मिचलाता है । ○ मूत्राशयशोथ का दर्द कमर में भी फैल जाता है ।

कारण—विभिन्न प्रकार में उपसर्गों से ।

१. **मूत्र की प्रतिक्रिया अम्लीय (Acidic) होने पर**—बी० कोलाई का संक्रमण होता है ।

२. **मूत्र की प्रतिक्रिया क्षारीय होने पर**—अन्य जीवाणु संक्रमण से ।

अन्य कारण—निम्न कारणों से भी मूत्राशयशोथ की स्थिति उत्पन्न होती है—

१. प्रोस्टेट-ग्रन्थि की वृद्धि ।
२. मूत्रमार्ग का तंग होना ।
३. अनेक प्रकार के नर्वस रोग ।
४. वृद्धावस्था के कारण मूत्राशय की शिथिलता ।
५. मूत्राशय के अर्बुद ।
६. मूत्राशय का अंगघात या लकवा ।
७. शीत का लगना ।
८. मूत्र लाने के लिए कैथेटर आदि यन्त्रों का गलत ढंग से प्रयोग ।
९. सूजाक या पथरी रोग ।
१०. गर्भावस्था में प्रायः मूत्राशयशोथ हो जाता है ।

लक्षण—मूत्राशय-प्रदेश में दर्द, अकड़न, भार का प्रतीत होना, बार-बार पेशाब की इच्छा, मूत्र की उपस्थिति, अंगों में शीत या कँपकँपी आदि लक्षण होते हैं ।

प्रकार—मूत्राशयशोथ २ प्रकार का होता है—

१. तीव्र मूत्राशयशोथ (Acute cystitis) ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. चिरकारी मूत्राशयशोथ (Chronic cystitis) ।

(१) **तीव्र मूत्राशयशोथ** (Acute cystitis)—

१. प्रारम्भ में मूत्र की प्रतिक्रिया अम्लीय होती है ।

२. मूत्र में रक्त की अधिकता एवं पूय की मात्रा कम होती है ।

३. शीघ्र ही मूत्र क्षारीय हो जाता है ।

४. श्लेष्मा तथा पूय के कारण मूत्र गाढ़ा होता है ।

(२) **चिरकारी मूत्राशयशोथ** (Chronic cystitis)—

१. इसमें मूत्र की प्रतिक्रिया क्षारीय होती है ।

२. मूत्र में श्लेष्मा की अधिकता होती है ।

३. दर्द कम हो जाता है ।

४. पीव का परिमाण और बढ़ जाता है और मूत्र पहले से अधिक गाढ़ा हो जाता है । पीव रस्सी के समान होता है ।

५. रोगी को बार-बार मूत्र-त्याग की प्रवृत्ति होती है ।

नोट—इस रोग में दर्द ऊपर की ओर कमर तक फैल जाता है। साथ में हलका बुखार भी रहता है ।

निदान (Diagnosis)—इसमें दर्द ऊपर की ओर कमर तक फैल जाता है । साथ ही उपरोक्त लक्षणों के आधार पर निदान में कोई कठिनाई नहीं होती है ।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. नया रोग आसानी से ठीक हो जाता है ।

२. चिरकालिक रोग पूर्ण रूप से ठीक नहीं होता ।

३. दुर्बलता तथा रक्तविषाक्तता (Septicaemia) होने से रोगी की मृत्यु हो जाती है ।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) **सामान्य चिकित्सा** (General treatment)—

१. मूत्र-संस्थान के उपसर्ग में रोग के प्रधान कारण की चिकित्सा करनी चाहिए ।

२. रोग की तीव्रावस्था में मूत्र-संस्थान के अन्दर किसी प्रकार का यन्त्र प्रवेश नहीं करना चाहिए । यथासम्भव तीव्र अवस्था का शमन होने के पश्चात् ही ऑपरेशन की व्यवस्था करनी चाहिए ।

३. रोग की तीव्रावस्था में जब तक रोगी को ज्वर रहे, तब तक शय्या पर पूर्ण विश्राम आवश्यक है ।

४. रोगी को अधिक से अधिक जल पिलायें । इसके विपरीत जब रोगी को मूत्रत्याग में कष्ट हो तब अधिक जल नहीं पिलाना चाहिए ।

५. रोगी के लिए पौष्टिक आहार तथा औषधि-व्यवस्था उपयुक्त ढंग से करनी चाहिए ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ अल्कासोल (Alkasol)

मात्रा—२-२ चम्मच दिन में ३-४ बार।

अथवा—पोटाशियम बाइकार्बोनेट ०.६ ग्राम

पोटाशियम साइट्रस	०.६ मि० ग्रा०
टिं० हायोसायमस	१ मि० ली०
टिं० बेलाडोना	०.३ मि० ली०
वाटर	३० मि० ली०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।

कोट्रीमोक्साजोल (Co-trimoxazole)

व्या० नाम—वैक्ट्रिम, सेप्ट्रान या सूमेट्रिल

मात्रा—२ गोली दिन में २ बार ७ दिन तक।

साथ ही—एम्पीसिलीन (Ampicillin) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैप्सूल प्रति ६ घण्टे पर ५ दिन तक।

नोट—बच्चों के लिए 'एम्पीसिलीन ड्राई सीरप' आता है।

मात्रा—५ मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर-भार पर प्रति ६ घण्टे पर ५ दिन तक।

व्या० नाम—रोसिलिन (Roscillin) (नि० रैनबैक्सी), स्केसिलिन (Eskaycillin-SKF) तथा मार्टीसिलिन (M H) आदि।

बार-बार के आक्रमण में (Treatment of recurring attack)—

℞ नाइट्रोफूराण्टोन (Nitrofurantoin) ५० मि० ग्रा०

व्या० नाम—फूराडेण्टिन (Furadantin–SKF), ली-फूरान (Le-furan–Lamedica)।

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार भोजन के साथ ३ दिन तक।

विशिष्ट संक्रमण की चिकित्सा—

कोलाई (Coli) इन्फेक्शन—

(i) मेडीलामीन (Medilamine) ०.५ ग्राम

मात्रा—१ गोली नित्य ७ दिन तक।

(ii) हेक्सामीन (Hexamine)	६०० मि० ग्रा०
ऑरेञ्ज सीरप	२ मि० ली०
क्लोरोफार्म वाटर	३०० मि० ली०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।

(iii) कोट्रीमोक्साजोल (Co-trimoxazole)

व्या० नाम—सेप्टान (B. W.) तथा बैक्ट्रिम (रोशे)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—२ गोली प्रातः-सायं ७ दिन तक।

चिरकालिक मूत्राशयशोथ की चिकित्सा—

१. मूत्राशय को रबर की नलिका या कैथेटर से धोना। इसके लिए मूत्राशय में रबरनलिका प्रवेश कर एक्रीफ्लेवीन १ : १०,००० अथवा पोटाशियम परमैंगनेट १ : २००० अथवा मरक्यूरोक्रोम १% के घोल से धोते हैं।

२. मूत्राशय को प्रतिदिन अथवा एक दिन छोड़ कर २ पाइण्ट घोल से धोते हैं।

३. धोने वाले घोल का तापक्रम ११०° फा० रहता हैं। रखे गये धोल का पात्र ३ फीट से अधिक ऊँचा नहीं रखना चाहिए।

४. धोने के पश्चात् रबर की नलिका द्वारा मूत्राशय में आर्जीराल लोशन ५-१०%—५-१० मि० ली० प्रवेश करना चाहिए।

मूत्राशयशोथ में प्रयुक्त होने वाली अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. एजो-विण्टोमाइलोन (Azo-wintomylon) (विन मेडीकेयर)

मात्रा—२ गोली प्रति ६ घण्टे पर २-३ दिन तक।

तत्पश्चात्—प्लेन विण्टोमाइलोन (Plain Wintomylon)

मात्रा—२ गोली दिन में ४ बार ५-७ दिन तक।

निषेध—१२ वर्ष से नीचे की आयु के बालक में इसका प्रयोग न करें।

२. डायनासिल (Dynacil HAL) २५० और ५०० मिग्रा० कैप्सूल।

मात्रा—२५० मि० ग्रा० से १ ग्राम प्रति ६ घण्टे पर।

नोट—इसका ड्राई सीरप भी आता है।

३. जेण्टीसिन (Genticyn) (निकोलस)

मात्रा—वयस्क—३ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर-भार पर प्रतिदिन ३ विभाजित मात्राओं में।

○ गम्भीर संक्रमण में—५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर-भार पर।

४. निफ्रोजेसिक (Nephrogesic) (इथनोर)

मात्रा—वयस्क १-२ गोली दिन से ३-४ बार भोजन के तत्काल बाद।

नोट—यह सिस्टाइटिस की उत्तम औषधि है।

५. पैराक्सिन कैप्सूल (Paraxin cap.) (नोल)

मात्रा—२५० मि० ग्रा० (५०० मि० ग्रा० गम्भीर संक्रमण में) दिन में ४ बार।

नोट—पैराक्सिन ड्रेगीज भी आती है।

विशेष—सिस्टाइटिस की यह उत्तम औषधि है।

६. फूराडेण्टिन (Furadantin) (S K F)

मात्रा—वयस्क—५०-१०० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर भोजन के साथ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालक—६ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर-भार पर दिन में ४ बराबर मात्राओं में विभाजित कर दें।

नोट—इसका सीरप भी आता है।

नोट—सिस्टाइटिस की यह प्रमुख औषधि है।

७. ट्राईफूरान (Trifuran) (M. M. Labs.)

तीव्रावस्था से—वयस्क–२ कैप्सूल दिन में २ बार।

चिरकारी अवस्था में—० कैप्सूल रात में सोते समय।

८. यूरोलोमिन (Urolomin) (सिपला)

मात्रा—२ गोली दिन में २ बार भोजन के बाद।

बालक—१ गोली दिन में २ बार भोजन के बाद।

९. लेडरमाइसिन (Ledermycin) (सायनेमिड)

मात्रा—१ कैपसूल दिन में ३ बार।

○ इसका सीरप भी आता है।

१०. मेड्रीबोन (Madribon) (रोशे कं०)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में २-३ बार।

बालक—२ बूंद/प्रति किलो शरीर-भार पर सीरप रूप में।

विशेष—यह 'सिस्टाइटिस' की सफल औषधि है।

११. यूरोबायोटिक (Urobiotic) (फाइजर)

मात्रा—१ कैपसूल दिन में ३ बार।

१२. सेक्लोपेन (Seclopen) (ग्लैक्सो)

मात्रा—१ वायल की सुई प्रतिदिन मांस में।

१३. ड्यूपेन (Dupen) (फाइजर)

मात्रा—½-१ वायल प्रतिदिन गहरे मांसपेशी में।

साथ ही—फेनोसिन (Fenocin) (फाइजर)

मात्रा—१ गोली दिन में २-३ बार।

सिस्टाइटिस की मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१. ℞ सेप्ट्रान (बी० डब्लु०)	१ गोली
पेण्टिड सल्फा (साराभाई)	१ गोली
	१ मात्रा

दोनों को पीस कर एक पुड़िया बना लें। ऐसी एक पुड़िया प्रति ४-६ घण्टे पर दें। साथ ही—'प्रोसिलिन' का इञ्जे० मांस में लगायें।

२. ℞ कैम्पीसिलीन (कैडिला) ५०० मि० ग्रा०	१ कै०
पाइरिडायम (वार्नर)	१ गोली
ऐसी १ गोली दिन में २-३ बार	१ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. R/	ब्रॉडिसिलीन (एल्केम)	१ कैपसूल
	पाइरिडैसिल (एथनोर)	१ गोली

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार जल से। १ मात्रा। □

मूत्र-प्रजनन-संस्थान के रोग 4/6

तीव्र गोणिकावृक्कशोथ
(Acute Pyelonephritis)

पर्याय—तीव्र पूयमय वृक्कशोथ, तीव्र वृक्काशयशोथ पूयमेह, जीवाणुमेह (Bacteriuria), गवीनीमुख वृक्कशोथ, वेसीलूरिया।

परिचय—It is an acute inflammation of pelvis of ureter and the adgoing part of renal parenchyma caused by various organism.

○ यह यूरेटर के पेल्विस की तीव्र शोथ की अवस्था है, जो विभिन्न प्रकार के जीवाणुओं के संक्रमण से होती है। इसमें रीनल पैरेंकाइमा के भाग भी शामिल होते हैं।

○ इस अवस्था में वृक्काशय (Pelvis) में 'अन्त्र दण्डाणु' या 'बी० कोलाई' का उपसर्ग होता है। इसमें तीव्र ज्वर, कमर में पीड़ा तथा मूत्र त्याग करने की संख्या में वृद्धि आदि प्रमुख लक्षण होते हैं। यह स्त्रियों में मिलने वाला रोग है।

कारण—यह एक उपसर्गजन्य रोग है। अधिकांश रोगियों में स्थूलान्त्र दण्डाणु (B. Coli) का उपसर्ग मिलता है। इसके अतिरिक्त स्ट्रेप्टोकोकाई, स्टेफिलोकोकाई, गोनोकोकाई आदि भी पाये जाते हैं। अधिकतर ग्राम-निगेटिव जीवाणु का संक्रमण होता है।

○ वृक्क में पहले से कोई अवरोध होता है, तभी यह वहाँ रोगजनक होते हैं। यह रोग ९०% जीवाणु-संक्रमण से होते देखा गया है।

लक्षण—आक्रमण अकस्मात् एवं तीव्र होता है।

१. मूत्र का बार-बार आना (Frequency of micturition)।

२. तापक्रम ३८° सें० से ४०° सें० (१००–१०४° फा०) शीत और कम्प के साथ। बुखार पसीना देकर उतर जाता है।

३. कमर में पीड़ा।

४. मूत्र करते समय जलन।

५. मधुमेह के केसिस में एक्यूट पाइलोनेफ्राइटिस के बाद 'प्रीकोमा' अथवा कोमा (Pre-coma or coma) की उत्पत्ति हो जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. **अन्य लक्षण**—मितली, वमन, अरुचि, शरीर में पीड़ा आदि लक्षणों की उपस्थिति ।

चिह्न (Signs)—तापक्रम बढ़ा हुआ मिलता है ।

रूप—यह रोग निम्न स्वरूपों में मिलता है—

१. तीव्र वृक्काशयशोथ (Acute pyelonephritis) ।

२. अनुतीव्र वृक्काशयशोथ (Subacute pyelonephritis) ।

३. चिरस्थायी वृक्काशयशोथ (Chronic pyelitis) ।

४. जीर्ण वृक्काशयशोथ तथा वृक्कशोथ (Chronic pyelonephritis) ।

(१) तीव्र वृक्काशयशोथ (Acute pyelonephritis)—

१. **ज्वर**—इस रूप में तीव्र संक्रमण के कारण शीत से अकस्मात् ज्वर चढ़ता है और १०० से १०४° फा० तक हो जाता है, जो बराबर बना रहता है अथवा कम या अधिक होता है । कभी-कभी बीच-बीच में उतर भी जाता है ।

नोट—इसमें विषमज्वर (Malaria) का भ्रम हो जाता है ।

२. वृक्काशय में विष-संचार के कारण सिर में पीड़ा, अरुचि, वमन, सर्वांगशैथिल्य (Malaise) के लक्षण मिलते हैं ।

३. रोगी में पाण्डुता का लक्षण मिलता है ।

४. एक ओर के वृक्कप्रदेश पर (विशेष कर दाहिने) मन्द-मन्द स्वरूप का दर्द होता है, जो या तो ठहर-ठहर कर उठता है अथवा लगातार रहता है । दर्द के स्थान पर स्पर्शाक्षमता का भी लक्षण मिलता है । यह दर्द आगे चल कर 'इलियक फोसा' तथा 'प्यूबिस' तक जाता है ।

५. मूत्र विक्षुब्ध रहने के कारण बार-बार (आधे-आधे घण्टे पर) और थोड़ा-थोड़ा जलन के साथ आता है । मूत्र के साथ पूय तथा रक्त भी आता है । मूत्र धुंधला तथा दुर्गन्धित होता है, जिससे मछली की-सी गन्ध आती है ।

६. रक्त-परीक्षा में पॉलीमॉर्फोन्यूक्लियर नामक श्वेतकणों की वृद्धि मिलती है ।

७. नाड़ी की गति तीव्र तथा निर्बल होती है ।

८. बी० एस० आर० (B. S. R.) तीव्र हुआ मिलता है ।

९. ज्वर के अनुपात में नाड़ी तथा श्वसनगति तीव्र रहती है ।

१०. रोगी को प्रायः मलावरोध अथवा कब्ज रहता है ।

११. बच्चों में वमन तथा प्रवाहिका के लक्षण मिलते हैं ।

(२) अनुतीव्र वृक्काशयशोथ (Subacute pyelonephritis)—यह प्रकार अधिक देखने को मिलता है ।

१. इसमें सर्दी के साथ ज्वर चढ़ता है । तापक्रम १००° फा० के लगभग रहता है जो समय-समय पर कम या अधिक होता रहता है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. विष-संचार के कारण भोजन में अरुचि, पाण्डु तथा शिरःशूल आदि लक्षण होते हैं।

३. मूत्र गहरे रंग का (धुएँ जैसा) थोड़ा-थोड़ा और बार-बार आता है

४. कमर में एक ओर वृक्कप्रदेश पर हलका दर्द भी रहता है। वहाँ पर दबाने पर स्पर्शाक्षमता का लक्षण मिलता है।

५. मूत्र अम्लीय प्रतिक्रिया (Acidic reaction) का होता है। इसके १ मि० ली० में १० लाख तक जीवाणु मिलते हैं तथा इसमें मछली जैसी गन्ध होती है।

६. मूत्र-परीक्षा में कुछ अल्बुमिन, पूय सैल, ग्रेनुलर कास्ट्स तथा कुछ इपीथीलियल सेल्स मिलते हैं, जो स्थिर रखने पर नीचे बैठ जाते हैं।

७. रक्त-परीक्षा में—श्वेतकणों की संख्या १०-१५ हज़ार प्रति क्यूबिक मिलीमीटर मिलती है।

८. नाड़ी की गति तापक्रम की अपेक्षा अधिक बढ़ी हुई मिलती है।

९. रोगी को मलावरोध रहता है।

१०. उचित चिकित्सा से यह रोग शीघ्र ठीक हो जाता है। चिकित्सा के अभाव में यह चिरस्थायी रूप (Chronic stage) ले लेता है।

(३) चिरस्थायी वृक्काशयशोथ (Chronic pyelitis)—उपरोक्त रोग जब २-३ सप्ताह रहकर ठीक हो जाता है और बाद में समय-समय पर फिर हो जाता है अथवा मृदु स्वरूप (Subacute) में ३-४ मास से भी अधिक समय तक बना रहता है, तब इसे चिरस्थायी वृक्काशयशोथ कहते हैं। इस अवस्था में निम्न लक्षण मिलते हैं—

१. बार-बार मूत्र के वेग।

२. मूत्र धुँधला तथा दुर्गन्धित होता है।

३. कभी-कभी मृदु स्वरूप का ज्वर होता है।

४. शरीर का अशक्त हो जाना।

५. शिरःशूल।

६. अरुचि, पाण्डुता, वृक्कप्रदेश पर पीड़ा आदि।

नोट—यह अवस्था महीनों तथा वर्षों तक बनी रहती है।

(४) जीर्ण वृक्काशयशोथ तथा वृक्कशोथ (Chronic pyelonephritis) **तथा पाइलोनेफ्राइटिक कंट्रेक्टेड किडनी**—लोगों के विचार में जिसे क्रॉनिक पाइलाइटिस कहते हैं, वही 'क्रॉनिक पाइलोनेफ्राइटिस' होता है।

○ यह एक सर्वसुलभ रोग है, जो एक या दोनों ओर हो सकता है। इसका स्वतंत्र विवेचन आगे किया जायेगा।

निदान (Diagnosis)—उपरोक्त लक्षणों के आधार पर रोग-निदान में पर्याप्त सहायता मिलती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेबोरेटरी परीक्षा—

१. मूत्र-परीक्षा (Urine test)—

(i) मूत्र का रंग गहरा होता है।

(ii) रीएक्शन—एसीडिक।

(iii) सूक्ष्मदर्शक परीक्षा में ल्यूकोसाइटिक कास्ट्स की उपस्थिति।

(iv) यूरिन कल्चर में जीवाणु की उपस्थिति मिलती है।

२. रक्त-परीक्षा—पोलीमॉर्फो-न्यूक्लियर ल्यूकोसाइटोसिस।

३. एक्स-रे परीक्षा—(i) प्लेन एक्स-रे में रेडियो ओपैक केलकुलस की उपस्थिति।

(ii) इण्ट्रावीनस पाइलोग्राम।

उपद्रव (Complications)—१. चिरकारी पूयमय वृक्कशोथ (Chronic pyelonephritis)।

२. रीनल फेल्योर।

३. हाइपरटेंशन (Hypertension)।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—इस रोग का निम्न रोगों से विभेद करना चाहिए—

१. टाइफस फीवर।

२. मस्तिष्कावरणशोथ (Maningitis)।

३. मलेरिया ज्वर।

४. एपेण्डीसाइटिस।

पूर्वानुमान (Prognosis)—यह घातक रोग नहीं है। उचित चिकित्सा से १०-१५ दिन में रोग ठीक हो जाता है।

चिकित्सा—यह यूरीनरी ट्रैक्ट का इन्फेक्शन (Infection of urinary tract) है। अतः इसकी सम्पूर्ण चिकित्सा इन्फेक्शन की भाँति की जाती है। चिकित्सा-व्यवस्था निम्न प्रकार से है—

१. शय्या पर विश्राम।

२. अधिक जल पिलाना।

३. ℞ को-ट्रीमोक्साजोल (Co-trimoxazole)

व्या० नाम—सेप्ट्रान या बैक्ट्रिम

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार ७ दिन तक।

साथ ही—४. एम्पीसिलीन (Ampicillin) ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल दिन में ४ बार।

नोट—'सीडोमोनास एरीजीनोसा' के संक्रमण में 'जेण्टामाइसिन' (Gentamycin) का प्रयोग।

अथवा—सल्फाफीनाजोल (Sulphaphenazole)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्या० नाम—ओरीसिल (Orisil)
मात्रा—२ ग्राम दिन में केवल एक बार।
तथा—ट्रेटासाइक्लीन, ऑक्सीटेट्रासाइक्लिन (टैरामाइसिन)
मात्रा—२५० मि० ग्रा० कैप्सूल प्रति ६ घण्टे पर।
अथवा—लीडरमाइसिन (Leadermycin)
मात्रा—३०० मि० ग्रा० दिन में २ बार।
अथवा—क्लोरम्फेनिकोल (Chloramphenicol)
मात्रा—२५० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर।
अथवा—फूराडैण्टिन (Furadantin)
मात्रा—१०० मि० ग्रा० दिन में ३-४ बार।

○ साथ ही निम्न एल्कलाइन मिक्श्चर (Alkaline mixture) अथवा 'अल्कासोल' का सेवन करायें—

℞ सोडियम बाइकार्बोनेट	२ ग्राम
सोडियम साइट्रेट	२ ग्राम
पोटाशियम एसीटेट	२ ग्राम
स्प्रिट क्लोरोफार्म	२ मि० ली०
पिपरमेण्ट वाटर	३० मि० ली०
ऐसी १ मात्रा प्रति ६ घण्टे पर।	१ मात्रा

एक विशिष्ट औषधि-चिकित्साक्रम—

℞ एम्पीसिलीन (Ampicillin), एम्पीलिन
मात्रा—२ कैपसूल (२५० मि० ग्रा० प्रति कै०) दिन में ४ बार ४-५ दिन तक। तत्पश्चात्—१ कै० दिन में ४ बार ४-५ दिन तक।

निरन्तर वृक्कशोथ की स्थिति में—

℞ सल्फाडायाजीन या सल्फाडायामिडीन
मात्रा—३ गोली दिन में ४ बार ४-५ दिन तक।
तत्पश्चात्—१ गोली दिन में २ बार ७ दिन तक।

निर्देश—इस औषधि के साथ उपरोक्त 'एल्कलाइन मिक्श्चर' अथवा 'अल्कासोल' दिन में ४ बार दें।

एम्पीसिलीन की अनुपस्थिति में—

℞ सल्फाडायाजीन या सल्फाडायमिडीन
मात्रा—३ गोली दिन में ४ बार ५ दिन तक।
तत्पश्चात्—१ गोली दिन में २ बार ७ दिन तक।
साथ ही एक दिन के अन्तराल पर—सेप्ट्रान या बैक्ट्रिम
मात्रा—२ गोली दिन में २ बार ७ दिन तक।

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

नोट—यदि उपरोक्त चिकित्सा से ७ दिन में लाभ न मिले तो—

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्ट्रेप्टोमाइसिन १ ग्राम मांसपेशीगत दिन में २ बार ५ दिनों तक।

○ यदि स्ट्रेप्टोमाइसिन चिकित्सा से भी लाभ न मिले तो—'टेट्रासाइक्लीन' देना प्रारम्भ कर दें।

मात्रा—२५० मि० ग्रा० का १ कै० दिन में ४ बार ७ दिनों तक।

रेसिस्टेण्ट केसिस की स्थिति में—

℞ फूराडाण्टिन (Furadantin)

मात्रा—५-६ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर-भार पर नित्य। औसतन ६-८ गोली ४ भागों में विभक्त कर भोजन के बाद ४ दिन तक। इस समय तक मूत्र शुद्ध हो जाता है। इसके पश्चात् २ गोली दिन में ३ बार ३ दिन तक दें।

○ यदि चिकित्सा लम्बे समय तक चलानी हो तो—१०० मि० ग्रा० दिन में २ बार दें।

याद रखिये—'टेट्रासाइक्लीन', 'पेनिसिलीन' तथा 'फूराडाण्टिन' औषधि चिकित्सा के साथ मूत्र का अम्लीय होना आवश्यक है। अतः विटामिन-सी (सीलिन) ५०० मि० ग्रा० की २ गोली दिन में ३-४ बार देते रहें।

○ एक बार इन्फेक्शन कण्ट्रोल होने के बाद 'लीडरकिन' (Lederkyn) (लीडर्ले कं०) ५०० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में एक बार १ माह तक और देते रहें। साथ ही एल्कलाइन मिक्श्चर का सेवन करायें।

○ यदि इन्फेक्शन कण्ट्रोल होने के पश्चात् 'किडनी' क्षतिग्रस्त हो गई हो तो—टेट्रासाइक्लीन कैपसूल (२५० मि० ग्रा०) दिन में २ बार १ माह तक।

क्रॉनिक पाइलोनेफ्राइटिस
(Chronic Pyelonephritis)

कारण (Etiology)—१. तीव्र पाइलोनेफ्राइटिस की यथा समय उचित चिकित्सा न करने पर।

२. मूत्र सम्बन्धी अवरोध (Urinary obstruction) जो पथरी (Stone), प्रोस्टेटिक वृद्धि तथा सिस्टोसील के द्वारा होता है।

३. न्यूरोपैरालिटिक ब्लड की अवस्था (जैसा कि पैराप्लेजिया, टेबीस डॉर्सेलिस) में होता है।

४. रीनल ट्यूबरकुलोसिस।

५. मेटाबोलिक डिसीज, यथा—डायबिटीज, गठिया।

लक्षण (Symptoms)—इसमें तीव्र पाइलोनेफ्राइटिस के हलके स्वरूप के लक्षण होते हैं। गम्भीर केसिस में हाइपरटेन्शन तथा रीनल फेल्योर की उपस्थिति मिलती है। रोगी का स्वास्थ्य गिर जाता है। कमर में पीड़ा के साथ ज्वर का पुनः आक्रमण होता है। हाइपरटेन्शन दो-तिहाई केसिस में मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ रोग की बढ़ी हुई स्थिति में रोगी का चेहरा शोथ के कारण फूला हुआ तथा मूत्र में कुछ रक्त की उपस्थिति मिलती है।

लेबोरेटरी परीक्षा (Laboratory test)—

(१) **रक्त-परीक्षा** (Blood examination)—यह परीक्षा इस रोग में कोई विशेष महत्त्व की नहीं है।

(२) **मूत्र-परीक्षा** (Urine test)—

१. मूत्र की प्रतिक्रिया क्षारीय (Alkaline) होती है।

२. हलकी स्वरूप की प्रोटीन्यूरिया (Slight protinuria) किंचित् ३ ग्राम से ऊपर प्रतिदिन।

३. हीमेचूरिया (Haematuria) की उपस्थिति।

४. ल्यूकोसाइटिक कास्ट्स।

५. कुछ पूय सेल्स की उपस्थिति।

६. कल्चर में ई० कोलाई की प्रधान रूप से उपस्थिति।

७. ब्लड यूरिया लेवल (Blood uria lavel) ऊँचा होता है।

८. पाइलोग्राफी तथा सिस्टोस्कोपी परीक्षा किडनी तथा ब्लैडर की विकृति का पता लगाने में सहायक होती है।

चिकित्सा (Treatment)—१. संक्रमण के कण्ट्रोल हेतु 'एण्टीबैक्टीरियल एजेण्ट्स' (एण्टीबायोटिक एवं सल्फा ड्रग्स) का प्रयोग १४ दिन अथवा अधिक दिन तक; जैसा कि तीव्र पाइलोनेफ्राइटिस में बतलाया गया है।

२. अवरोध (Obstruction) अथवा पथरी (Calculi) आदि की कोई उपस्थिति हो तो उसकी अलग से चिकित्सा करें। इसके लिए शल्य-चिकित्सा आवश्यक होती है।

३. यदि कोई उपद्रव उपस्थित हों तो उसकी उचित चिकित्सा करें।

४. भोजन में तरल की मात्रा बढ़ायें। आहार में प्रोटीन ६०-८० ग्राम दें।

विशिष्ट चिकित्सा—इस रोग की चिकित्सा का मुख्य उद्देश्य इन्फेक्शन को नियन्त्रित करना होता है।

○ एम्पीसिलीन, सल्फाडायाजीन, स्ट्रेप्टोमाइसिन, टेट्रासाइक्लीन, सेप्ट्रान और नाइट्रोफूराण्टोइन (Nitrofurantoin) का प्रयोग तीव्र पाइलोनेफ्राइटिस की भाँति करें। इसकी चिकित्सा इन औषधियों के कम मात्रा में प्रयोग से कई महीनों तक की जाती है।

मिश्रित संक्रमण की स्थिति में—एम्पीसिलीन, सल्फाडायाजीन, टेट्रासाइक्लीन तथा नाइट्रोफूराण्टोइन को एक रोटेशन के अनुसार दें। इनमें प्रत्येक औषधि को १ सप्ताह तक प्रयोग करें, जब तक कि प्रत्येक औषधि के ४ क्रम पूरे न हो जायें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रॉनिक केसिस तथा बार-बार संक्रमण के आक्रमण में—

℞ हेक्सामीन मेण्डेलेट (मेण्डेलामाइन Mendelamine)

मात्रा—१ गोली (७ ग्राम) दिन में ४ बार ।

नोट—इस औषधि को देने से पूर्व मूत्र का अम्लीय (Acidic) होना आवश्यक है । अतः विटामिन 'सी' ५०० मि० ग्रा० की १ गोली औषधि देने से पूर्व दें ।

लाक्षणिक चिकित्सा—

१. **अनीमिया**—विटामिन बी$_{१२}$ का प्रयोग ।

२. **यूरीमिया**—इसके कारण रोगी में क्रॉनिक रीनल फेल्योर के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं । इसमें रोगी को पूर्ण आराम दें ।

○ स्वस्थ किडनी का प्रत्यारोपण (Transplantation) ही इसकी उचित चिकित्सा है । □

मूत्र-प्रजनन-संस्थान के रोग 4/7

मूत्रपथ का संक्रमण
(Infection of Urinary Tract)

परिचय—मूत्र-संस्थान में उपसर्ग होने पर ज्वर, कम्प, बार-बार मूत्र-त्याग की इच्छा, मूत्रत्याग के समय पीड़ा, मितली एवं वमन आदि लक्षण होते हैं । इस प्रकार के उपसर्ग पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में अधिक सामान्य होते हैं ।

कारण (Etiology)—इस रोग में प्रायः अन्त्रदण्डाणु (B. coli) मिलते हैं । गोनोकोकाई, न्यूमोकोकाई, बी प्रोटियश, यक्ष्मा दण्डाणु (T. B.) तथा आन्त्रिक ज्वर दण्डाणु (बी० टायफस) आदि के कारण भी उपसर्ग होता है ।

लक्षण (Symptoms)—१. ज्वर, कम्प, बार-बार मूत्रत्याग की इच्छा, जी मिचलाना एवं कभी-कभी वमन के लक्षण मिलते हैं ।

२. वृक्क में उपसर्ग होने पर कमर में पीड़ा होती है । पीड़ा का संवहन अधोदिशा में यूरेटर के मार्ग से होता हुआ जननेन्द्रिय की दिशा में होता है ।

३. पीठ की ओर 'Costovertebral angle' पर दबाने से पीड़ा होती है ।

४. स्थिति गम्भीर होने पर पेल्विस में पूय मिलता हैं ।

५. कभी-कभी वृक्क के चारों ओर पूयभवन (Suppuration) हो जाता है । इसको वृक्क में विद्रधि (Abscess) अथवा पेरीनेफ्रिक एब्सिस कहते हैं ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. उपसर्ग के कारण ही पाइलाइटिस, पाइलोनेफ्राइटिस, नेफ्राइटिस तथा पायोनेफ्रोसिस आदि रोगों की उत्पत्ति होती है।

७. चिरकालिक अवस्था में वृक्क का पर्याप्त भाग नष्ट हो जाता है। ऐसी स्थिति में उपसर्ग को औषधि द्वारा ठीक करना अत्यन्त कठिन हो जाता है।

निदान (Diagnosis)—१. मूत्र-परीक्षा (Urine test)—

(i) अल्बुमिन, आर० बी० सी०, श्लेष्मा, श्वेतकण (W. B. C,) तथा इपीथीलियल सेल्स की उपस्थिति मिलती है।

(ii) इस परीक्षा में मूत्र का कल्चर करने पर जीवाणु की उपस्थिति मिलती है।

२. रक्त-परीक्षा (Blood test)—

(i) रक्त-परीक्षा में पॉलीमार्फोन्यूक्लियर ल्यूकोसाइटोसिस मिलता है।

(ii) मूत्र-पथ की एक्स-रे परीक्षा (Pyelography) करने से अवरोध का ज्ञान होता है और इस बात का भी पता चलता है कि किस वृक्क से रक्त आ रहा है।

चिकित्सा (Treatment)—पीड़ा के लिए—१. टिं० हायोसायमस (Tr. Hyoscyamus) ३० मिनिम की मात्रा में दिन में ३ बार दें।

२. रोग की चिरकालिक अवस्था में मूत्राशय को पोटाश परमैंगनेट या बोरिक एसिड से प्रतिदिन धोना चाहिए।

साथ ही—यूरोल्यूकोसील (Uroleucosil) की गोली देना चाहिए।

उपसर्ग के लिए निम्न औषधियों का प्रयोग अपेक्षित है—

१. एजो-विण्टोमाइलोन (Azo-wintomylon) (विन मेडीकेयर)

मात्रा—२ गोली प्रति ६ घण्टे पर २-३ दिन तक।

तत्पश्चात्—'प्लेन विण्टोमाइलोन' २ गोली दिन में ४ बार ५-७ दिन तक।

○ इसे १२ वर्ष से कम वय वाले बालकों में नहीं देना चाहिए।

विशेष उपयोग—यह तीव्र पीड़ा युक्त यूरीनरी ट्रैक्ट के इन्फेक्शन में विशेष लाभकारी है।

२. ℞ कै० डायनासिल (Dynacil) (HAL)

मात्रा—बालक २५० मि० ग्रा० का १ कै० प्रति ६ घण्टे पर।

वयस्क—१००० मि० ग्रा० का १ कै० प्रति ६ घण्टे पर।

३. फूराडाण्टिन (Furadantin) (S K F)

मात्रा—वयस्क ५०-१०० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर भोजन के साथ।

बालक—६ मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर भार पर नित्य ४ मात्रा में विभक्त कर।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ इसका सीरप भी आता है। टेबलेट रूप में ५० और १०० मि० ग्रा० के रूप में आता है।

४. जेण्टीसिन (Genticyn) (निकोलस)

मात्रा—वयस्क ३ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर-भार पर प्रतिदिन ३ बराबर मात्राओं में।

गम्भीर अवस्था में—५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर-भार पर प्रतिदिन तीन बराबर मात्राओं में।

दो सप्ताह तक के शिशु को—६ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर-भार पर दो बराबर मात्राओं में।

बालक—३-५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर-भार पर ३ बराबर मात्राओं में।

नोट—ग्राम-निगेटिव यूरीनरी ट्रैक्ट के इन्फेक्शन में उपयोगी।

५. ग्रामोनेग टेबलेट (Gramoneg tab.) (रैनवैक्सी)

मात्रा—वयस्क—२ गोली दिन में ३ बार ५-७ दिन तक।

बालक—६० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर-भार पर विभाजित मात्राओं में ७ दिन तक।

६. मेण्डालामीन (Mandelamine) (वार्नर)

मात्रा—वयस्क—१ गोली दिन में ३ बार।

बालक—½ गोली दिन में ३ बार।

७. नेफ्रोजेसिक (Nephrogesic) (इथनोर)

मात्रा—वयस्क—१-२ गोली दिन में ३-४ बार भोजन के बाद।

८. पेराक्सिन कैपसूल (Paraxin cap.) (नोल)

मात्रा—२५० मि० ग्रा० दिन में ३ बार २ सप्ताह तक।

नोट—यह ड्रेगी तथा ड्राई सीरप रूप में भी आता है।

९. प्राइमीसिन (Primicin) (HAL)

मात्रा ३-५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर I/M अथवा I/V दिन में तीन बार विभाजित मात्राओं में ७-१० दिन तक।

○ **निषेध**—गर्भावस्था में इसका प्रयोग न करें।

१०. यूरोबायोटिक कै० (Urobiotic cap.) (फाइजर कं०)

मात्रा—वयस्क—१-२ कै० दिन में २-३ बार ७ दिन तक।

बालक—४५ किलो शरीर भार तक १ कैपसूल दिन में ३ बार ७ दिन तक। २७ किलो भार तक १ कै० दिन में २ बार ७ दिन तक।

११. यूरोलोकोसिल (वार्नर)

मात्रा—वयस्क—१ गोली दिन में ३-४ बार १० दिन तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालक—६ वर्ष से ऊपर वाले को वयस्क की आधी मात्रा दें।

विशेष—तीव्र स्वरूप के इन्फेक्शन में।

१२. ट्राइफूरान कै० (Trifuran cap.) (एम० एम० लैब)

मात्रा—वयस्क—२ कै० दिन में ३ बार।

१३. यूरोबायोटिक (Urobiotic) (फाइजर) □

मूत्र-प्रजनन-संस्थान के रोग 4/8

मूत्रविषयमता
(Uraemia)

पर्याय—मूत्रविषमयता, मूत्रविष-संचार, क्रॉनिक रीनल फेल्योर, रीनल यूरीमिया।

परिचय—Uraemia is blood poisoning due to retention in the urine of waste products especially nitrogen that should be eliminated with urine.

○ Chronic uraemia is a clinied syndrom characterised by headache, drowsiness, nausea, vomiting and dyspnoea, convulsions and coma may occur.

○ यूरीमिया वह अवस्था है, जिसमें मूत्र के विषैले पदार्थ रक्त में मिलकर सिरदर्द, बेंहोशी, प्रलाप, ऐंठन, मस्तिष्क में गड़बड़ी तथा पक्षाघात आदि भयंकर लक्षण उत्पन्न होते हैं।

कारण (Etiology)—

(१) रीनल सम्बन्धी कारण—

१. एक्यूट इण्टरस्टीशियल नेफ्राइटिस।
२. एक्यूट, सब-एक्यूट एवं क्रॉनिक ग्लोमेरूलो-नेफ्राइटिस।
३. बाइलेटरल कॉर्टिकल नेफ्रोसिस।
४. मैसिव इन्फार्क्ट्स।
५. मेलिग्नेण्ट नेफ्रोस्क्लेरोसिस।
६. पोली सिस्टिक किडनी।
७. सुपुरेटिव पाइलोनेफ्राइटिस।
८. डाइबिटिक ग्लोमेरूलोस्क्लेरोसिस।

(२) एक्स्ट्रा रीनल सम्बन्धी कारण—

१. वमन और दस्त (Vomiting and diarrhoea)।
२. डायबिटिक कोमा (Diabetic coma)।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. एडीसन्स का रोग (Addisons disease)।

४. इण्टेस्टाइनल ऑब्स्ट्रक्शन (Intestinal obstruction)।

५. लूपस एरीथमेटोसिस (Lupus erythematosis)।

६. विष (Poisons) जैसे—मरकरी बाइक्लोराइड, डाइ-इथाइलीन, ग्लाइकोल, पोटेशियम क्लोरेट।

○ यूरीमिया—जीर्ण वृक्करोग, मधुमेह जनित वृक्करोग तथा वृक्काशय शोथ (Pyelonephritis) के उपद्रव रूप में होता है।

○ रक्तभार-वृद्धि तथा मूत्रमार्ग में अवरोध (प्रोस्टेट ग्रन्थि की अतिवृद्धि) से भी यह रोग हो जाता है।

○ जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि यूरीमिया का प्रमुख कारण किसी विष-विशेष से भी होता है। अथवा अनेक स्वाभाविक एवं अस्वाभाविक चयापचयक (Metabolites) की वृद्धि से होता है।

○ हृदय नैर्बल्य के उपद्रवस्वरूप भी यह रोग होते देखा गया है।

○ जलाल्पता (Dehydration) की बढ़ी हुई अवस्था इस रोग का प्रमुख कारण है। जैसे—कालरा, वमन, अतिसार, अजीर्ण एवं वर्नस की अवस्थाओं में।

लक्षण (Symptoms)—चिरस्थायी वृक्करोग के कारण धमनी रोग हो जाने तथा रक्त में कुछ रासायनिक द्रव्यों (Chemicals) के जमा हो जाने से लक्षण पैदा होते हैं।

○ इस रोग के प्रारम्भिक लक्षण तो जीर्ण वृक्करोग (क्रॉनिक नेफ्राइटिस) से उत्पन्न रक्तभार के कारण होते हैं।

सामान्य लक्षण इस प्रकार हैं—शरीर-विशेष के प्रभाव के अनुसार—

१. मस्तिष्क के पोषण में न्यूनता आने से—स्मृतिनाश, एकाग्रता की कमी, आवेश, बेचैनी, कोथ आदि। नाड़ीशूल, शिरोभ्रम (Vertigo) तथा कर्णघोष (Tinnitus) के भी लक्षण होते हैं।

२, रक्तभार-वृद्धि की स्थिति में—शिरःशूल, मस्तिष्क सम्बन्धी इन्सेफेलोपैथी के लक्षण तथा वेग, दृष्टि सम्बन्धी लक्षण।

३. वृक्कों के रुग्ण होने पर—निद्रा की प्रबलता--रोगी बिस्तर पर पड़ते ही खर्राटे लेने लगता है, पर शीघ्र ही निद्रा भंग हो जाती है। इस प्रकार रात में कई बार निद्रा का आना और टूटना—यह क्रम चलता रहता है।

४. वाम हृदय-दुर्बलता के कारण—नाड़ी निर्बल तथा तीव्रगामी होती है। साथ ही रीनल अस्थमा (हृदय-नैर्बल्यजनित श्वासरोग) का वेग। दक्षिण हृदय की निर्बलता से कंजेस्टिव कार्डियक फेल्योर के लक्षण।

५. रेटिना की रक्तवाहिनियों की क्षीणता से—दृष्टिमन्दता का लक्षण। यह सहसा उत्पन्न होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. शरीर की समस्त रक्तवाहिनियों के कठोर होते जाने से—शरीर-कृशता तथा मस्तिष्क-क्षीणता से शीघ्र थकावट का लक्षण।

नोट—सामान्य रूप से रक्त में २० मि० ग्रा० प्रति शतक तथा वृद्धों में ५० मि० ग्रा० प्रति शतक यूरिया होता है।

○ यदि यह बढ़ कर ७० मि० ग्रा० प्रति शतक हो जाय तो यह वृक्क के रुग्ण होने का सूचक है।

○ १२० मि० ग्रा० प्रति शतक होने पर तो यह मूत्रविष-संचार (यूरीमिया) का सूचक होता है।

पुनश्च—जब मूत्रविष-संचार का वेग अधिक बढ़ जाता है, अर्थात् १०० मि० ली० रक्त में २०० मि० ग्रा० से अधिक मात्रा में यूरिया मिलता है, तब वास्तव में 'मूत्रविष-संचार' के विषैले लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं, जो रोग की असाध्यता तथा कष्टसाध्यता के सूचक होते हैं।

विष-संचार सम्बन्धी विशिष्ट लक्षण—ये निम्न प्रकार के होते हैं—

१. प्रारम्भिक लक्षण—अन्न के प्रति अरुचि का होना (Anorexia)।

२. रोग बढ़ने पर—प्रातःकालीन वमन। साथ ही एसीडोसिस के कारण थोड़े परिश्रम से ही थकावट का आना।

नोट—'थकावट का आना' यूरीमिया का सूचक लक्षण होता है।

३. शरीर-कृशता—क्षुधानाश तथा प्रोटीन के अधिक व्यय होने से कृशता तथा निर्बलता के लक्षण।

४. कैल्शियम की न्यूनता अथवा पोटैशियम की वृद्धि से—हाथ-पाँव की अँगुलियों में सोते समय स्तम्भ (Cramp), कम्पन (Twitching), न्यूराइटिक पेन तथा आक्षेप (Convulsions); साथ ही पैरों में दाह, वेदना, चमचमाहट आदि न्यूराइटिस के लक्षण।

५. मस्तिष्क पर विष-संचार का प्रभाव होने पर—तन्द्रालुता या तन्द्रा अथवा उदासीनता का लक्षण।

○ रोगी दिन में सोता रहता है तथा रात को उन्निद्र (Insomnia) अर्थात् जागता रहता है अथवा शीघ्र ही सो जाता है और तत्काल जाग जाता है। ऐसा क्रम बराबर चलता रहता है।

याद रखिये—मृत्यु से पूर्व मोह-निद्रा (Stupor) तथा कोमा (Coma) का लक्षण रहता है।

६. अम्लीयता अथवा लेफ्ट वेण्ट्रिकल के फेल होने से—फुप्फुस में शोफ (Oedema lungs) हो जाता है, जिससे रोगी को गहरे-गहरे श्वास आने लगते हैं। लेटे रहने पर श्वास न आने का भी लक्षण मिलता है। अथवा विषम श्वास कई सप्ताहों तक चलता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. विष का अन्नमार्ग पर प्रभाव पड़ने से—अजीर्ण, अरुचि, वमन, अफारा मलावरोध आदि लक्षण प्रारम्भ में होते हैं। बाद में जीभ का सूखना, मुख का आना (Stomatitis) तथा श्वास में मूत्र की गन्ध के लक्षण मिलते हैं और अन्त में तीव्र अतिसार होकर रोगी की मृत्यु हो जाती है।

नोट—यदि वृद्ध व्यक्तियों में कभी-कभी वमन का लक्षण मिले तो उनमें अजीर्ण का सन्देह न करके वृक्करोग का सन्देह करना चाहिए।

८. त्वचा की नाड़ियों में विक्षोभ होने पर—कण्डू का लक्षण मिलता है। इसके पश्चात् पामा या पेपूल्स शथवा विस्फोट (Vesicles) आदि निकल आते हैं। यह टाँगों पर विशेष रूप से देखने को मिलते हैं। यह चिकित्सा से ठीक नहीं होते।

○ त्वचा शुष्क तथा मटमैले रंग की हो जाती है। टाँगों पर हलका शोफ (Oedema) भी उपस्थित रहता है।

९. अस्थि-मज्जा पर प्रभाव होने से—रोगी में पाण्डुता के लक्षण मिलते हैं।

१०. कैल्शियम तथा सोडियम की न्यूनता यथा पोटाशियम के बढ़ जाने पर—हृदयमांसपेशी के कार्य में क्षति पहुँचती है, जिससे उसकी गीत में विषमता उत्पन्न हो जाती है।

नोट—○ 'ब्रैडीकार्डिया' इसका सूचक लक्षण है।

○ अस्थियों में शुष्कता का लक्षण मिलता है। कभी-कभी 'ऑस्टियो-मलेसिया' का भी रोग हो जाता है, जो इसका एक उपद्रव है।

११. रक्तस्राव—मूत्रविषमयता के कारण कभी-कभी धमनी रोग, ब्लड-प्रेशर के कारण नाक, दाँत, अन्नमार्ग, मूत्रमार्ग तथा त्वचा आदि से रक्तस्राव होता है।

याद रखिए—यदि बड़ी आयु में नासा-रक्तस्राव (Epistaxis) का लक्षण मिले तो वृक्करोग का सन्देह करना चाहिए।

मिले-जुले लक्षण—

१. तापक्रम असामान्य (Subnormal temperature)।
२. हीमोरेजिक अल्सरेटिव वेजिनाइटिस।
३. रक्ताल्पता (Anaemia)।
४. हीमोरेजिक डायथेसिस।

यूरीमिया के संक्षेप में लक्षण—

१. शिरःशूल, २. शिरोभ्रम (Vertigo), ३. मांसपेशी-दुर्बलता (Muscular weakness), ४. स्फुरण, ५. नाड़ीशूल (Neuralgic pain), ६. मोटी आवाज (Thick speech), ७. गले का सूखना (Drowsiness),

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. अनिद्रा (Insomnia), ९. प्रलाप, १०. गले व मुख का सूखना, ११. जीभ का पीलापन या ग्रे रंग सदृश मलावृत होना, १२. व्रणयुक्त मुख का आना (Ulcerative stomatitis); १३. मुख से मूत्र जैसी गन्ध, १४. रक्त-स्राव तथा दाँतों का ढीलापन (Loosening of teeth), १५. एनोरेक्सिया, १६. मितली तथा वमन, १७. श्वास से अमोनिया जैसी गन्ध, १८. श्वास शुष्क तथा तेज, १९. मुँह से रक्त आना (Haemoptysis), २०. पेरीकार्डाइटिस, २१. हाइपरटेन्शन, २२. शुष्क पीली मटमैली त्वचा, २३. खुजली (Pruritis), २४. स्किन इरुप्शन, २५. सब-नार्मल टेम्परेचर, २६. रक्ताल्पता (Anaemia), २७. हीमोरेजिक अल्सरेटिव वेजिनाइटिस आदि मस्तिष्कगत, एलीमेण्टरी संस्थानगत, श्वसनसंस्थानगत, मूत्रवह संस्थानगत, त्वचागत लक्षण भिन्न-भिन्न यूरीमिया के केसिस में देखने को मिलते हैं।

निदान (Diagnosis)—उपरोक्त लक्षणों के आधार पर रोग के निदान में सहायता मिलती है।

लेबोरेटरी परीक्षण—रक्त-परीक्षण (Urine test)—

१. ओलीगूरिया।

२. मूत्र की स्पेसिफिक ग्रेविटी कम होती है।

३. ब्लड यूरिक एसिड बढ़ी हुई होती है।

४. क्लोराइड्स गायब मिलते हैं।

५. फॉस्फेट तथा सल्फेट बढ़े हुए मिलते हैं।

६. हाइपोकैल्सीमिया उपस्थित मिलती है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. जब यूरीमिया जीर्ण वृक्करोग के उपद्रवस्वरूप होता है, तब रोग असाध्य हो जाता है।

२. बड़ी आयु में होने पर मस्तिष्क में रक्तस्राव होकर रोगी की मृत्यु हो जाती है।

३. कृत्रिम गुर्दे (Artificial kidney) के द्वारा डायलिसिस चिकित्सा सप्ताह में १-२ बार १०-१२ घण्टे तक लेने से रोगी को २ वर्ष तक और जीवित रखा जा सकता है।

चिकित्सा (Treatment)—(१) **सामान्य चिकित्सा**—

१. रोगी को कम प्रोटीन वाला आहार देना चाहिए। अथवा १-२ कप दूध दिन में ३-४ बार थोड़ा-थोड़ा बिस्कुट, थोड़ी रोटी एवं फल के साथ दिया जा सकता है। इस भोजन को १ से १½ माह तक देने के पश्चात् प्रोटीन वाले पदार्थों की कुछ मात्रा बढ़ाई जा सकती है। इसके लिए निम्न आहार-व्यवस्था उत्तम रहती है—

प्रातः—अण्डा १, रोटी या टोस्ट ६० ग्राम, मक्खन या घी १५ ग्राम, दूध १२० ग्राम, मधु १५ ग्राम, चाय १५० मि० ली०।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोपहर (१२ बजे)—आलू १२० ग्राम, रोटी ९० ग्राम, हरी सब्जी ६० ग्राम, फल ६० ग्राम, मक्खन या घी १५ ग्राम, चाय ६० मि० ली० ।

सायंकाल—आलू १२० ग्राम, हरी सब्जी ६० ग्राम, रोटी या टोस्ट ९० ग्राम, मक्खन १५ ग्राम, फल १२० ग्राम, खांड ६० ग्राम ।

इसके बाद भोजन में घृत, खांड तथा कार्बोहाइड्रेट युक्त आहार बढ़ाया जा सकता है । किन्तु प्रोटीन युक्त आहार अधिक नहीं देना चाहिए ।

पानी की मात्रा—दिन भर में २-३ लीटर जल पर्याप्त होता है ।

○ रोगी को नमक ६-७ ग्राम नित्य दिया जा सकता है ।

२. एसीडोसिस (Acidosis) को कम करने के लिए—सोडियम लैक्टेट २५-३० ग्राम + सोडियम बाइकार्बोनेट १५-३० ग्रेन की मात्रा में दिन में ३ बार दें । अम्लीयता की अधिकता में सोडियम बाइकार्बोनेट १-१ ग्राम दिन में ३-४ बार देना चाहिए ।

३. कैल्शियम-न्यूनता—इस कमी को पूरा करने के लिए कैल्सीफेरोल विटामिन 'डी' १·२५ मि० ग्रा० दिन में ३ बार देना चाहिए ।

४. तीव्रावस्था में—यदि रोग तीव्र अवस्था में हो और रक्त में यूरिया १०० मि० ग्रा० प्रतिशत से अधिक हो तो रोगी को दिन भर में १½ कि० तक जल देना चाहिए ।

इसके साथ पर्याप्त मात्रा में ग्लूकोज देना चाहिए । साथ में कुछ मक्खन भी देते रहना चाहिए । प्रोटीन देना बन्द कर देना चाहिए ।

(२) औषधि-चिकित्सा—

१. इसकी चिकित्सा पूर्णतया लाक्षणिक होती है ।

२. लो प्रोटीन डाइट (Low protein diet) ३-४ सप्ताह तक ।

३. तरल २-३ लीटर नित्य । गम्भीर डिहाइड्रेशन की स्थिति में—डेक्स्ट्रोज सैलाइन ५% इण्ट्रावीनस ड्रिप रूप में ।

४. वमन की स्थिति में—

℞ क्लोरप्रोमेजीन हाइड्रोक्लोराइड ५० मि० ग्रा०

मांसपेशीगत आवश्यकतानुसार ६ से ८ घण्टे पर दुहरायें ।

५. आक्षेप (Convulsions)—

℞ पैराल्डिहाइड (Paraldehyde)

मात्रा—८-१० मि० ली० मांसपेशीगत आवश्यकतानुसार ६-८ घण्टे पर दुहरायें ।

साथ ही—कैल्शियम ग्लूकोनेट (Calcium gluconate)

मात्रा—५ मि० ली० (१०% सोलूशन) दिन में २ बार ।

६. रक्ताल्पता (Anaemia)—

℞ इन्जे० डेकाडूराबोलिन (Inj. Decadurabolin)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१०० मि० ग्रा० मांसपेशीगत महीने में एक बार।

मेक्राफोलिन-आयरन (Mecrafolin iron)

मात्रा—१ गोली दिन में एक बार।

७. हिक्कफ (Hiccough)—

℞ टेबलेट लार्गेक्टिल (Tab. Largactil)

मात्रा—१० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३ बार।

टेबलेट रिगलार (Tab. Reglor) या मेक्सीरोन (Mexerone)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—स्पारिन (Sparine) ५० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

अथवा—ऑक्सीजन का प्रयोग।

८. अनिद्रा (Insomnia) में—

○ १. क्लोरल हाइड्रेट मिक्श्चर दिन में ३ बार। साथ ही—

○ २. डोरीडेन (Doriden) ५०० मि० ग्रा० सोते समय।

९. एसीडोसिस, मितली तथा वमन आदि में—

सोडाबाइकार्ब पाउडर ३ ग्राम प्रति दिन मुख द्वारा।

अथवा—टिं० सोडा मिण्ट ४ गोली दिन में ३ बार।

१०. यदि एसीडोसिस के साथ एन्यूरिया भी हो तो—

ग्लूकोज सोलूशन २५० मि० ली० (५%)+सोडियम लैक्टेट सोलूशन २५० मि० ली० मिलाकर आई० वी० ड्रिप २४ घण्टे में।

नोट—इफ्यूजन देने से पूर्व १० यूनिट सोल्युबल इन्सुलिन रोगी को दे देना चाहिए।

११. कार्डियक फेल्योर (Cardiac failure)—

लेनोक्सिन (Lanoxin tab.) आवश्यकतानुसार।

१२. स्तम्भ (Cramp) अथवा टिटेनी के लिए—

कैल्शियम क्लोराइड ५% घोल—१०-२० मि० ली० I/V।

शथवा—कैल्शियम ग्लूकोनेट १०% घोल—१०-२० मि० ली० I/V।

साथ ही विटामिन्स का उपयोग।

१३. रक्तस्राव में—

विटामिन-सी २०० मि० ग्रा० दिन में एक बार।

१४. फुप्फुस तथा किसी मार्ग में इन्फेक्शन की उपस्थिति—

बेन्जाइल पेनिसिलीन का उपयोग।

१५. अरुचि और वमन की स्थिति में—(i) मुख से पानी न दें।

(ii) डेक्स्ट्रोज नार्मल सैलाइन ५%—१२०-२४० मि० ली० की मात्रा में प्रति ४ घण्टे पर गुदामार्ग से।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—ग्लूकोज नार्मल सैलाइन ५-१०%—घोल आई० वी० देने से अरुचि में लाभ होता है।

○ वमन के लिए—स्टेमेटिल (Stemetil) १०-२५ मि० ग्रा० ६ घण्टे पर मुख द्वारा।

○ साथ ही—४ ग्राम ग्लूकोज+जल ३० मि० ली० मिलाकर पिलायें।

अथवा—सिक्लीजीन लेक्टेट ५० मि० ग्रा० I/M रूप में।

१६. त्वचा में कण्डू होने पर—

बेलर्गल (Bellergale) ½ मि० ग्रा० दिन में ३ बार मुख से।

अथवा—फीमर्जिन (Femergin) ½ मि० ग्रा० दिन में ३ बार मुख से।

१७. तीव्र अतिसार की स्थिति में—

स्ट्रेप्टोमाइसिन १ ग्राम दिन में २ बार मुख से।

नोट—'क्लोरोस्ट्रेप' अथवा 'इण्टेरोस्ट्रेप' का भी प्रयोग किया जा सकता है।

○ अतिसार से जल की न्यूनता होने पर—डेक्स्ट्रोज सैलाइन I/V दें।

१८. सिरदर्द, व्याकुलता, उन्निद्रता के लिए—

डोरीडेन (Doriden) ५० मि० ग्रा० रात्रि के समय।

○ लाभ न मिलने पर—हीरोइन (Heroin) ५-८ मि० ग्रा० S/C.

○ साथ ही रक्तभार कम करने के लिए—'एज्मेलिन' (Asmelin) अथवा एल्डोमेट (Aldomet) का प्रयोग करें।

नोट—यूरीमिया के प्रारम्भिक लक्षणों (हाइपरटेंसिव यूरीमिया) में प्रति सप्ताह एक बार रात में 'मरकरी पिल्स' लेकर प्रातः मैगसल्फ की एक मात्रा दें। साथ ही सप्ताह में एक बार वाष्प स्नान करायें।

○ इसके अतिरिक्त सर्पासिल २५ मि०ग्रा० की १ गोली दिन में २ बार।

अथवा—एडेल्फेन (Adelphane) २-३ गोली नित्य।

हृदय-नैर्बल्य के लिए—डिजोक्सिन—१-१ गोली सप्ताह में ३ बार।

यूरीमिया के इमरजेन्सी केस में—

℞ इन्जे० कैल्शियम ग्लूकोनेट (Inj. Calcium gluconate) १० मि० ली० (१०%) I/V। इसके बाद निम्न इफ्यूजन I/V ड्रिप रूप में—

डेक्स्ट्रोज १०% अथवा डेक्स्ट्रोज सैलाइन ५%-३०० मि० ली०+ सोडियम बाइकार्ब ७·५%-१०० मि० ली०+ग्लुकोज ५०%-१०० मि० ली०+रेगुलर इन्सुलिन २० यूनिट। ⊡

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरःस्थग्रन्थिशोथ
(Prostatitis)

पर्याय—पौरुषग्रन्थि का शोथ, प्रोस्टेट-वृद्धि (Enlargemeat of prostate)।

परिचय—६०–७० वर्ष के बीच विशेषकर ५५ वर्ष के ऊपर की आयु के ४०–४५ फीसदी वृद्ध पुरुषों में यह पौरुषग्रन्थि आकार में कुछ बड़ी हो जाती है, जिसे 'इनलार्जमेण्ट ऑफ प्रोस्टेट' कहते हैं। इसमें आगे चलकर स्नायुतन्तु की वृद्धि हो जाती है, तब इसे 'फाइब्रो एडीनोमा' कहते हैं।

कारण (Etiology)—१. गोनोकोकस, स्टेफिलोकोकस, स्ट्रेप्टोकोकस, आँतों के जीवाणु–बी० कोलाई।

२. कैथेटर का अनुचित प्रयोग।

३. पथरी।

४. वृद्धावस्था में टेस्टोस्टेरोन की उत्पत्ति कम होने पर।

लक्षण (Symptoms)—१. प्रारम्भ में रोगग्रस्त स्थान पर तीव्र पीड़ा और जलन होती है।

२. रोगी को टीसें होती हैं जो गुदा और सीवन तक प्रसारित होती हैं।

३. पहले रात में तत्पश्चात् दिन में भी मूत्र की प्रवृत्ति बराबर रहती है।

४. प्रारम्भ में पुरुष के अन्दर कामशक्ति कुछ बढ़ जाती है। किन्तु ग्रन्थि जब कुछ बड़ी हो जाती है, तब कामशक्ति लुप्त होने लगती है।

५. मूत्र त्याग के समय मूत्र देर से उतरता है।

६. मूत्र की धार निर्बल हो जाती है। वह आगे की ओर दूर तक न जा कर नीचे की ओर परपेण्डीकुलर गिरती है। कभी-कभी मूत्र की धार बीच-बीच में टूट कर फिर से आरम्भ होती है। मूत्र के अन्त में बूँद-बूँद कर मूत्र आता रहता है। इस प्रकार से मूत्र त्याग करने में पर्याप्त समय लग जाता है।

७. यदि मूत्र त्याग की प्रवृति को उस समय रोक दिया जाय तो पुनः मूत्र बहुत देर से उतरता है।

८. यदि रोगी अधिक गरम द्रव पदार्थ लेता है, मद्यपान करता है अथवा दीर्घकाल तक बिस्तरे पर पड़ा रहता है अथवा उसे ठंड लग जाती है तब मूत्राघात की स्थिति (Retantion of urine) उत्पन्न हो जाती है।

९. मूत्राशय के अन्दर मूत्र के पर्याप्त समय तक रुके रहने के कारण कालान्तर में गुर्दे पर प्रभाव पड़ने से मूत्र-निर्माण की शक्ति घट जाती

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, जिससे वे यूरिया को पूरी तरह से बाहर नहीं निकाल पाते हैं। जिससे रक्त में यूरिया की मात्रा बढ़ जाती है और यूरीमिया की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

१०. यूरीमिया की स्थिति में रोगी की जीभ सूखने लगती है, जिससे उसे अधिक प्यास लगती है। ऐसा रोगी रात को तो उन्निद्रत-सा रहता है और दिन में भी ऊँघता रहता है। रोगी को शिरःशूल भी होता है।

११. शोथ की अधिकता के कारण कभी-कभी मूत्र बन्द भी हो जाता है।

१२. कुछ दिनों के बाद मूत्र से तरल भी आने लगता है।

निदान (Diagnosis)—गुदा के अन्दर अंगुली प्रवेश करने से प्रोस्टेट ग्रन्थि बढ़ी हुई प्रतीत होती है।

○ यह गाँठ आगे की ओर कठोर किन्तु लचीली होती है, जिसके ऊपर गुदा की श्लेष्मकला को हिलाया जा सकता है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—यदि समय पर उचित चिकित्सा न की जाय तो यह शोथ फोड़े में बदल जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—इस रोग की विशिष्ट चिकित्सा अब तक आविष्कृत नहीं हुई है। फिर भी इसमें निम्न चिकित्सा लाभकर सिद्ध हुई है—

℞ टेस्टोस्टेरोन प्रोपियोनेट (Testosteron propionate)

व्या० नाम—टेस्टोवीरोन (Testoviron) (शेरिंग कं०)

मात्रा—२५ मि० ग्रा० सप्ताह में २ बार मांसपेशीगत।

अथवा—मेथिल टेस्टोस्टेरोन (Methyl Testosterone)

व्या० नाम—पैराण्ड्रीन (Parandren) (सीवा कं०)

मात्रा—२ मि० ग्रा० दिन में ३ बार मांसपेशीगत।

अथवा—१०–२५ मि० ग्रा० सप्ताह में २ बार मांसपेशीगत।

टेबलेट स्पीमेन (Tab. Spemen)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार लम्बे समय तक।

○ **शोथ की स्थिति में**—विस्ट्रापेन (Bistrapen) अथवा प्रो-के-माइसीन (Pro-k-mycin) (डेज कं०)–५०० मि० ग्रा० मांसपेशीगत।

○ **शोथ पुराना होने पर**—डायापेन-एफ (Diapen-F) सप्ताह में २ बार I/M।

○ **मूत्र में जलन होने पर**—

१२०० मि० ग्रा० की मात्रा में सोडाबाइकार्ब जल में घोल कर प्रति ३ घण्टे पर।

○ **मूत्र त्याग के कष्ट में**—

टेबलेट पाइरीडियम (Tab. Pyridium) (वार्नर कं०)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१ गोली प्रति ६ या ८ घण्टे पर।

○ **पीड़ा की स्थिति में—**

कोडोपाइरीन (Codopyrine)

मात्रा—१-१ गोली आवश्यकतानुसार।

○ **स्थानीय चिकित्सा—**

एक्थ्याल बेलाडोना ग्लिसरीन का सुबह-शाम स्थानिक लेप करें। ⊡

मूत्र-प्रजनन-संस्थान के रोग 4/10

वृक्कशूल/गुर्दे की पथरी
(Renal Colic/Renal Calculus)

परिचय— गवीनी (Ureter) में अश्मरी (Stone) आदि शल्य (Foreign bodies) प्रवेश करने से कमर में एक ओर अकस्मात् तीव्र पीड़ा प्रारम्भ होकर जननेन्द्रिय की ओर जाती है। कभी-कभी यह पीड़ा संवहन के परिणामस्वरूप स्वस्थ वृक्क में प्रतीत होती हैं। इसमें बहुमूत्रता (Polyurea), वमन, कम्प, अत्यधिक पसीना, स्तब्धता (Shock) व निपात (Collapse) आदि लक्षण होते है। जिस तरफ के गुर्दे में बीमारी होती है, यह दर्द उस तरफ के गुर्दे से लेकर उस ओर के पैर के तलवे तक फैल जाता है।

कारण (Etiology)—१. वृक्क अश्मरी (Renal calculi)—यह इस रोग का प्रधान कारण है।

२, रक्त या पूय का थक्का (Clot)।

३. इथीनोकोकस के सिस्ट।

४. यूरेटर के अंकुरार्बुद (Ureterine papilloma) के टुकड़े।

लक्षण (Symptoms)—१. जब पथरी वृक्कों से निकल कर यूरेटर (मूत्रप्रणाली) में जाने लगती है तो उस समय ऐंठन युक्त तीव्र पीड़ा एवं दर्द होता है। कमर में दर्द होता है, जिसकी टीस अण्डकोषों और जाँघों तक जाती है। रक्त मिश्रित मूत्र बार-बार आता है।

२. पथरी निकलने पर अत्यधिक दर्द होता है, जिससे रोगी तड़पने लगता है।

३. शूल का आक्रमण अकस्मात् होता है। जिस ओर के गुर्दे में अश्मरी होती है, उसी ओर की कमर में शूल होता है।

४. आक्रमण के समय कभी-कभी कम्प प्रतीत होता है। मितली एवं वमन उपस्थित रहता है। रोगी को काफी पसीना आता है। नाड़ी की गति तीव्र

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और क्षीण होती है। साँस तेज चलती है। कभी-कभी ज्वर १००-१०२° फा०. तक हो जाता है।

शरीर की स्थिति—वेदना के कारण रोगी अत्यधिक बेचैन रहता है। वह अपने शरीर को दोहरा (Double) किये हुए पड़ा रहता है। अथवा विभिन्न प्रकार से अपने शरीर को तोड़ता-मरोड़ता रहता है।

मूत्र— ○ शूल के समय रोगी को बार-बार मूत्र की प्रवृत्ति होती है। मूत्र की मात्रा कम होती है और उसमें रक्त की उपस्थिति मिलती है।

● कभी-कभी मूत्र के साथ अश्मरी के स्फटिक भी निकलते हैं।

○ कभी मूत्र अधिक मात्रा में आता है, तो कभी बिलकुल बन्द हो जाता है।

शूल की अवधि—आवेग या दौरे की अवधि कुछ मिनटों से लेकर कुछ घण्टों तक की रहती है। यह अवधि कभी-कभी एक-दो दिन तक चल सकती है।

अवधि के अनुसार शूल की प्रकृति—जब शूल के दौरे की अवधि कम होती है तब शूल की तीव्रता एक-सी रहती है। पर जब आवेग दीर्घकालीन होता है, तब शूल बीच-बीच में अंशतः शान्त होकर पुनः होने लगता है।

अन्य लक्षण—१. शूल के समय परीक्षा करने पर कोई स्पष्ट संकेत नहीं मिलता है। किसी-किसी केसिस में वृक्क स्पर्शलभ्य (Palpable) मिलता है और उसमें स्पर्शासह्यता (Tenderness) रहती है।

२. दुबले-पतले रोगियों में यूरेटर में टटोलने से पथरी प्रतीत होती है।

३. दौरा समाप्त होने पर असह्य पीड़ा समाप्त हो जाती है, परन्तु कमर में मन्द-मन्द पीड़ा या संवेदना (Sensation) कुछ समय तक बनी रहती है।

४. कई एक केसिस में शूल के आवेग (Paroxysms) बार-बार आया करते हैं। ऐसी स्थिति में यह पता नहीं चलता है कि पथरी कहाँ चली गई है और कहाँ पर स्थित है। केवल इतना अनुमान किया जा सकता है कि रीनल पेल्विस में कोई बड़ी पथरी है, जो बार-बार नीचे की ओर को खिसक कर यूरेटर के मुख में अटक कर शूल पैदा करती है और मोटाई के कारण नीचे आने में असमर्थ होती है।

निदान (Diagnosis)—१. रोग का अनुमान—(i) शूल के दौरे का पूर्व इतिहास, (ii) स्थान के अनुसार शूल की प्रकृति, (iii) वृषण की सूजन, (iv) बार-बार मूत्रत्याग की इच्छा, (v) मूत्र की अल्पता तथा उसमें रक्त की उपस्थिति (Haematuria) तथा (vi) दौरे के पश्चात् मूत्र में पथरी का निकलना आदि लक्षणों के आधार पर रोग का अनुमान किया जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. **मूत्र-परीक्षा** (Urine test)—(i) माइक्रोस्कोप से मूत्र-परीक्षा करने पर मूत्र में R. B. C. की उपस्थिति मिलती है।

(ii) यूरिक एसिड तथा क्रिस्टल्स की उपस्थिति अश्मरी का सूचक लक्षण है।

(iii) मूत्र में पथरी प्राप्त होने पर असंदिग्ध निदान हो जाता है।

३. **एक्स-रे परीक्षा**—एक्स-रे परीक्षा से अश्मरी की उपस्थिति का पता चलता है। यह परीक्षा रोग-निदान में पर्याप्त सहायक होती है।

४. **ब्लड कैल्सियम इस्टीमेशन** (Blood calcium estimation)—इस परीक्षा में ब्लड कैल्शियम फॉस्फोरस का परिमापन (Estimation) किया जाता है। रक्त में चूने की मात्रा ११ मि० ग्रा० तथा फॉस्फोरस की मात्रा ३ मि० ग्रा० से कम मिलने पर पैराथायराइड ग्लैण्ड्स के अर्बुद (Tumour) का संदेह दृढ़ हो जाता है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. यदि नियमित उचित पथ्य-पालन तथा औषधि-चिकित्सा न की जाय तो अश्मरी बराबर बनी रहती है। एक अश्मरी के रहते ही दूसरी अश्मरी तैयार हो जाती है, जिससे वृक्कशूल का पुनरावर्तन होता रहता है।

२. छोटी अश्मरियाँ बिना कष्ट पहुँचाये मूत्र से बाहर निकल जाती हैं। बड़ी अश्मरी बहुत काल तक वृक्क अलिन्द में पड़ी-पड़ी रोगी को कष्ट देती रहती है।

३. वृक्क अश्मरी तत्काल घातक नहीं होती है। परन्तु जब उसके कारण वृक्क खराब हो जाते हैं और उनमें उपसर्ग (Infection) हो जाता है, तब 'वृक्क की कार्य-अक्षमता' तथा मूत्रविषमयता के कारण रोगी की मृत्यु हो जाती है।

४. कभी-कभी गुप्त मूत्रविषमयता के कारण रोगी की मृत्यु शूल के वेग के समय ही हो जाती है।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—वृक्कशूल का पार्थक्य निम्न प्रकार के शूलों से करना चाहिए—

१. अन्त्रशूल (Intestinal colic)।

२. पित्ताश्मरी शूल (Biliary colic)।

३. गर्भाशय शूल (Uterine colic)।

४. उण्डुकपुच्छ शूल (Appendicular colic)।

O इन शूलों की पार्थक्य दिग्दर्शन तालिका आगे प्रस्तुत की जा रही है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोग के मूल कारण को दूर करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

पार्थक्य विषय	वृक्कशूल (Renal colic)	अन्त्रशूल (Intestinal colic)	पित्ताश्मरीशूल (Biliary colic)	गर्भाशयशूल (Uterine c.)	उण्डुपुच्छशूल (Appendicular c.)
१. स्थान (Place)	कटिप्रदेश के एक ओर	नाभि	पित्ताशय के पास	गर्भाशय के ऊपर	मैकबर्नी बिन्दु पर
२. लिंग (Sex)	अधिकतर पुरुष	दोनों में समान रूप से।	अधिकतर महिलाएँ	केवल स्त्रियाँ	दोनों में एक समान
३. आयु (Age)	युवावस्था में	बालक और युवा	मध्यम आयु में	युवावस्था में	युवावस्था में
४. विकिरण (Rediation)	वृषण के चारो ओर	नाभि के चारों ओर	दक्षिण स्कन्ध की ओर ऊपर	नीचे जाँघों की तरफ	मैकबर्नी बिन्दु पर
५. पीड़ा (Pain)	सन्तर और आवेग युक्त	अन्तरित और भ्रमणशील	सन्तर और आवेग युक्त	सन्तर और आवेग युक्त	सन्तर
६. प्रकोप	उछल-कूद	दुष्पाच्य आहार	आहार	मासिकधर्म	आहार
७. उपशय	सेंक	दबाव या अपान वायु-निर्गमन	दबाव	सेंक, पुल्टिस	शीत उपचार
८. मुख्य लक्षण	मूत्र की बारम्बारता	मलावरोध आध्मान	कामला	पीड़ा नीचे को जाती हुई	मलावरोध, एवं ज्वर
९. वमन (Vomiting)	उपस्थित	प्रायः उपस्थित	उपस्थित	योनिस्राव	कभी-कभी W.B.C. की अधिकता
१०. मूत्र	अल्परक्त की उपस्थिति	Indican present	बाइल पिग्मेण्ट	—	—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. दर्द दूर करने के लिए रोगी को कमर तक गरम टब के जल में बिठायें।

३. कमर पर बिजली की मशीन से सिंकाई करें।

४. वेग के समय रोगी को बिस्तर पर लिटायें। दर्द कम करने के लिए गर्म पानी में टरपेण्टाइन आयल की कुछ बूँदें डाल कर तौलिया भिगो कर गर्म सेंक करें। तीसी की गरम-गरम पुल्टिस लगाई जा सकती है। अथवा गर्म पानी की बोतल से सेंक करें।

५. यदि रोगी को अमूत्रता (Anuria) न हो, तब उसे अधिक से अधिक जल (४-५ पाइण्ट तक) पिलाना चाहिए।

६. यदि अश्मरी कुछ समय पश्चात् मूत्र-संस्थान से न निकल पाये अथवा यूरेटर में फँस जाय तो उसे ऑपरेशन द्वारा निकालना आवश्यक होता है।

७. रोगी को किसी भी हालत में मांसाहार भोजन नहीं देना चाहिए।

८. शरीर को कम से कम हिलाया-डुलाया जाय। घोड़े की सवारी तथा साइकिल पर उबड़-खाबड़ जगह में चलने से बचना चाहिए।

(२) औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—

१. शूल की चिकित्सा—उदर पर गर्म पानी की थैली अथवा गरम पानी में तारपीन तैल मिलाकर तौलिये को उदर पर रखना।

(i) मध्यम स्वरूप की पीड़ा में—

℞ टेबलेट बेरालगन (Tab. Beralgan) (हैक्स्ट)

अथवा—लेनाजेसिक (Lanagesic) (टाटा फार्मा)।

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

(ii) गम्भीर स्वरूप की पीड़ा में—

℞ मेथाडोन हाइड्रोक्लोराइड (Mathadone Hcl.)

ब्या० नाम०—फाइसेप्टोन (Physepton) ५ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली मुख द्वारा आवश्यकतानुसार।

यदि उपरोक्त चिकित्सा से लाभ न मिले तो—

मॉर्फीन हाइड्रोक्लोराइड (Morphine hydrochloride) १५ मि० ग्रा० + एट्रोपीन सल्फेट (Atropine sulphate) ०.६ मि० ग्रा० + एक्वा डिस्टीलेटा १ मि० ली०—मिलाकर मांसपेशी में।

अथवा—'पेथीडीन हाइड्रोक्लोराइड' १०० मि० ग्रा० २ मि० ली० मांसपेशीगत आवश्यकतानुसार २ घण्टे पर दुहरायें।

२. शूल के पश्चात् की चिकित्सा—

यूरिक एसिड क्रिस्टल्स की उपस्थिति में—

(i) रोगी को अधिक से अधिक पानी पिलायें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ii) पोटाश साइट्रेट	६०० मि० ग्रा०
सोडियम बाइकार्बोनेट	६०० मि० ग्रा०
स्प्रिट क्लोरोफार्म	१ मि० ली०
एक्वा एनीसी	३० मि० ली०
	१ मात्रा

ऐसी एक मात्रा प्रति ८ घण्टे पर भोजन से पूर्व ।

○ यदि पीड़ा भी हो तो प्रति खुराक में 'टिं० हायोसायमस' ०.६ मि० ली० मिला लें ।

(iii) प्रोबेनेसिड (Probenecid) ०.५ ग्राम

मात्रा—½ गोली दिन में ३ बार ।

व्या० नाम—बेनेमिड (Benemid) (M. S. D.)

कैल्शियम क्रिस्टल्स की उपस्थिति में—

आहार में कैल्शियम के पदार्थ न दें । दूध से परहेज रखें ।

फॉस्फेट क्रिस्टल्स की उपस्थिति में—

℞ एल्यूमिनियम हाइड्रोक्साइड जैल ६० मि० ली० दिन में ३ बार ।

ऑक्जेलेट क्रिस्ट्ल्स की उपस्थिति में—

℞ बीफ्लेविन (Beflavin) (रोशे) १० मिग्रा० की १ गोछी नित्य ।

○ **नोट**—इस औषधि का उपयोग बचाव हेतु भी होता है ।

विशेष चिकित्सा—

१. मॉर्फीन सल्फेट १५ मि० ग्रा० एवं एट्रोपीन ०.६ मि० ग्रा० का S/C इञ्जेक्शन ।

२. पैथीडीन हाइड्रोक्लोराइड ५०. मि० ग्रा० की १ गोली दें । रोग की प्रबलता में इसी का इञ्जेक्शन दें । यूपेको (Eupaco) (ई० मर्क) १-२ गोली खिलाने से भी लाभ मिलता है ।

३. यूरिक एसिड से बनने वाली पथरियाँ (Stones) भूरी एवं हल्की लाल होती हैं । इनको निकालने के लिए बेनेमिड (M. S. D) ½-½ गोली दिन में तीन वार दें ।

४. विटामिन-ए की कमी से भी अश्मरियाँ बन जाती हैं । अतः रोगी को विटामिन 'ए' २५ हजार यूनिट (एरोविट-रोशे) + थायमीन हाइड्रो-क्लोराइड (वेरिन) ५ मि० ग्रा० प्रतिदिन सेवन करायें ।

५. मूत्र में कैल्शियम के कम आने पर कैल्शियम के स्टोन्स बनने से रोकने के लिए एमोनियम क्लोराइड ६०० मि० ग्रा० + एक्वा एनीसी ३० मि० ली० । ऐसी एक मात्रा दिन में तीन बार दें ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिना ऑपरेशन के गुर्दे की पथरी का इलाज

गुर्दे में पथरो की बीमारी से पीड़ित लोग अब शल्यचिकित्सा के बगैर भी ठीक हो सकेंगे। 'शॉक वेव' उपचार के माध्यम से इस बीमारी का इलाज अब अपने देश में भी उपलब्ध है। इसमें प्रथम बार बम्बई के 'आर० जी० स्टोन क्लीनिक' में कम्प्यूटर तकनीक के माध्यम से गुर्दे की पथरी का इलाज शुरू किया गया।

इस नई तकनीक का इलाज पश्चिम जर्मनी की सीमेन्स कम्पनी ने किया। 'एक्स्ट्रा कोपोरियल शॉक वेव लिथोटेप्सी' नामक इस नई तकनीक के माध्यम से कुछ ही मिनटों में बिना किसी परेशानी के स्टोन को एकत्रित कर लिया जाता है। अब तक इस तकनीक से विश्व भर में ५ लाख लोगों का सफल इलाज किया जा चुका है।

○ सर्वप्रथम एक्स-रे के माध्यम से स्टोन का सही पता किया जाता है। बाद में स्टोन के टुकड़े करके पेशाब के रास्ते से निकाल लिया जाता है। अब देश में ७५ से ८० प्रतिशत लोगों का इलाज इस नई तकनीक से किया जा रहा है।

इस तकनीक के सम्बन्ध में डाक्टर बंसल ने बतलाया है कि इस तरह के क्लिनिक बाद में दिल्ली, अहमदाबाद और बंगलोर में भी स्थापित किये जायेंगे। उन्होंने बतलाया कि इस तकनीक में सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें चीरफाड़ की जरूरत नहीं होती है और न ही रोगी के शरीर पर कोई दाग ही रहता है। रोगी को अस्पताल में केवल दो-तीन दिनों तक ही रहना पड़ता है। उच्च रक्तचाप, वृद्ध और मधुमेह के रोगी जो शल्यक्रिया नहीं करा सकते, अब उन्हें भी इस नई तकनीक से ठीक किया जा सकेगा। ⊡

मूत्र-प्रजनन-संस्थान के रोग 4/11

शैंकराभ/सॉफ्ट सोर

(Chancroid/Soft Sore)

परिचय—यह एक रतिजन्य रोग है, जो रोगग्रस्त वेश्या के सम्पर्क में आने से हो जाता है। इसमें सिफिलिस के समान शिश्न पर एक या एक से अधिक व्रण निकलते हैं। ये व्रण मुलायम होते हैं, इसीलिए इन्हें सॉफ्ट शैंकर कहा जाता है। सिफिलिस का व्रण अपेक्षाकृत अधिक सख्त होता है।

लक्षण—इस रोग की उत्पत्ति 'स्ट्रेप्टोबेसिलस ऑफ डूके' नामक जीवाणु से होती है। यह जीवाणु सलाई जैसे आकार के होते हैं।

संचयकाल—३ से ५ दिन और कम से कम २४ घण्टे।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्षण (Symptoms)—१. सिफिलिस के ही समान शिश्न पर व्रण बनता है, जो उसकी अपेक्षा बड़ा होता है; साथ ही मुलायम भी।

२. इसमें शीघ्र पाक होकर पूय पड़ जाता है।

चिकित्सा—जंघा की ग्रन्थियों (वद Bubo) के पकने से पूर्व—

℞ सल्फाडायाजीन (Sulphadiazine) या सल्फामेजाथीन (I. C. I.)

मात्रा—०.५ ग्राम टेबलेट पहली मात्रा ४ गोली मुख द्वारा। तत्पश्चात् २-२ गोली दिन में ४ बार १०-१४ दिन तक।

अथवा—सल्फामिथोक्सी-पायरीडाजीन (लेडरकेन अथवा मिडिकेल)

मात्रा—पहले दिन ०.५ ग्राम की ३ गोली और उसके बाद घाव भरने तक प्रतिदिन १ गोली।

नोट—'लेडरकेन' एक लम्बे समय तक की प्रभावकारी औषधि है।

यदि रोगी 'सल्फा ड्रग्स' के प्रति सेन्सिटिव हो तो—

℞ स्ट्रेप्टोमाइसिन (Streptomycin)

मात्रा—१ ग्राम मांसपेशीगत दिन में १ बार ५ दिन तक।

अथवा—टेट्रासाइक्लीन ५०० मि० ग्रा० (०.५ ग्राम) दिन में ४ बार १-२ सप्ताह तक।

नोट—कभी-कभी उपरोक्त चिकित्सा के होने पर भी वद (Bubo) में घाव पड़ जाता है। अतः छेद कर पूय को सिरिंज से निकाल लेना चाहिए और पूर्ववत् औषधियाँ सेवन कराते रहना चाहिए।

नोट—वद (Bubo) का ऑपरेशन करने पर घाव देर में भरता है।

स्थानीय चिकित्सा— ○ शैंकरायड के व्रणों को सीटाब्लॉन अथवा सेटब्लान के ९% घोल में प्रतिदिन प्रातः-सायं दो बार धोकर शुष्क कर लेना चाहिए।

अथवा—'सीटाब्लेक्स क्रीम' को व्रण पर धीरे-धीरे लगायें। क्रीम को दिन में २ बार लगाना चाहिए।

मूत्र-प्रजनन-संस्थान के रोग 4/12

अविशिष्ट मूत्रमार्गशोथ
(Nonspecific Urethritis)

परिचय—मिश्रित जीवाणुओं से उत्पन्न होने वाला आधुनिकतम रोग जिसमें मूत्रमार्ग में जलन, पूय का निष्कासन, आँखों का दुखना, आर्थ्राइटिस आदि लक्षण होते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण—यह रोग वायरस, विभिन्न प्रकार के मिश्रित जीवाणुओं अथवा ट्राइकोमोनास के द्वारा होता है।

○ कभी-कभी यह रोग बिना जीवाणु के भी उत्पन्न होते देखा गया है।

प्रभावित व्यक्ति—अधिकतर नवयुवक।

रोग की प्रवृत्ति—इस रोग में बार-बार आक्रमण की प्रवृत्ति होती है।

लक्षण—१. मूत्रमार्ग (Urethra) में जलन होती है।

२. दिन में कई बार मूत्र के साथ पूय आता है।

३. कुछ रोगियों की आँखें दुखने लगती हैं।

४. कुछ रोगियों में एक या कई हड्डियों के जोड़ों में शोथ (आर्थ्राइटिस, सन्धिवात) का प्रभाव देखा जाता है। जोड़ों में सूजन तथा पीड़ा के लक्षण मिलते हैं।

५. कुछ दिन बाद मूत्र में पूय आना बन्द हो जाता है। परन्तु आर्थ्राइटिस के लक्षण कई महीनों तक बने रहते हैं।

याद रखिये—○ कुछ लोग इसे पुराना सुजाक समझकर चिकित्सा करते हैं, जब कि स्थिति कुछ और ही होती है।

○ 'नानस्पेसिफिक थूरेथ्राइटिस' एक सर्वाधिक प्रचलित आधुनिक रोग है।

○ यद्यपि आजकल नवीन एण्टीबायोटिक औषधियों के प्रयोग तथा वेश्यावृत्ति पर अंकुश लगने के कारण सिफिलिस तथा सुजाक के रोगियों की संख्या में उल्लेखनीय रूप से कमी आई है। परन्तु अविशिष्ट मूत्रमार्गशोथ (Nonspecific urethritis) के रोगी काफी संख्या में चिकित्सकों के पास आने लगे हैं।

औषधि-चिकित्सा—

℞ टेट्रासाइक्लीन कैपसूल ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कै० दिन में ४ बार ५ दिन तक।

अथवा—सेप्ट्रान (Septran) या बैक्ट्रिम (Bactrim)

मात्रा—२ गोली प्रातः-सायं ५–१० दिन तक।

याद रखिये—इस रोग में 'पेनिसिलीन' तथा 'एम्पीसिलीन' से कोई लाभ नहीं होता है।

लाक्षणिक चिकित्सा—जोड़ों की पीड़ा तथा सिरदर्द में—

℞ पैरासिटामोल (क्रोसिन) या प्लस्प्रिन।

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—ऑक्सेल्जिन (Oxalgin)

मात्रा—१ गोली दिन में २–३ बार। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूत्रमार्ग का दर्द
(Pain in Urethra)

परिचय—मूत्रमार्ग में टीस के साथ दर्द का होना।

कारण—१. मूत्रमार्ग पर चोट लगने से।
२. साइकिल की अधिक सवारी करने से।
३. उष्ण पदार्थों का अधिक मात्रा में सेवन।
४. सुजाक तथा अन्य जीवाणु-संक्रमण से।

लक्षण—१. मूत्र कष्ट के साथ बूँद-बूँद कर आता है।
२. रोगी को टीस के साथ दर्द होता है। यह दर्द मूत्रमार्ग में होता है।
३. मूत्र का वर्ण गहरा पीला तथा लाल होता है।

चिकित्सा—

℞ सायनामॉक्स (साराभाई) २५० मि० ग्रा० १ कैपसूल
एक्वाजेसिक (जॉन वाइथ) १ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार जल से। १ मात्रा।

अथवा—पेण्टिड्स ४ लाख यूनिट १ गोली
लेनाजेसिक (टाटा फार्मा) १ गोली
ऐसी एक मात्रा दिन में ३ बार जल से। १ मात्रा। ⊡

रक्तमेह
(Haematuria)

परिचय—इस रोग में मूत्रत्याग से पहले अथवा बाद में रक्त मिश्रित मूत्र आता है।

कारण—१. मूत्रमार्ग के अंगों पर चोट लगना।
२. मूत्राशय में पथरी (Stones)।
३. वृक्कों का क्षय रोग।
४. वृक्कशोथ एवं उनमें पथरी की उपस्थिति।

लक्षण—१. इस रोग में मूत्र-त्याग से पहले या मूत्र-त्याग के बाद रक्त-मिश्रित मूत्र आता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. कभी-कभी मूत्र न आकर केवल रक्त ही आता है।

चिकित्सा—१. ℞ एमिकार (सायनेमिड)—१ गोली दिन में ३ बार।

२. ℞ कैडिस्पर सी (कैडिला)—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—केरूटिन-सी (Kerutin-C) (मरकरी) १ गोली दिन में २–३ बार।

नोट—इसका इञ्जेक्शन भी आता है—

अथवा—स्ट्रेप्टोक्रोम (Streptochrome) (डॉल्फिन)

मात्रा—२ मि० ली० मांसपेशीगत आवश्यकतानुसार।

हीमेचूरिया में प्रयुक्त मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१. ℞ कैडिस्पर-सी (कैडिला)	१ गोली
स्टिप्टोविऑन (मर्क)	१ गोली
ब्रैडीसिलीन सीरप (अल्केम)	५ मि० ली०
ऐसी १ मात्रा प्रति ६ घण्टे पर।	१ मात्रा।
२. ℞ सिन्काविट (रोशे)	१ गोली
पेण्टिड्स ४ लाख	१ गोली
स्टिप्टोविट (डॉल्फिन)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा प्रति ८ घण्टे पर जल से।	१ मात्रा।

नोट—यह संक्रमणजनित हीमेचूरिया में लाभकारी है।

३. ℞ एमिकार (सायनेमिड)	१ गोली
केरूटिन-सी (मरकरी)	१ गोली
हेमोसिड सीरप (विडलशायर)	१० मि० ली०
	१ मात्रा।

गोलियों को पीस कर सीरप में मिला लें।

ऐसी एक मात्रा दिन में ३ बार। □

मूत्र-प्रजनन-संस्थान के रोग 5/15

मधुमेह

(Diabetes Mellitus)

परिचय—मधुमेह एक ऐसा रोग है, जिसमें रक्त के अन्दर ग्लूकोज की मात्रा बढ़ जाती है। इसमें इन्सुलिन की उत्पत्ति कम होती है एवं कार्बोहाइड्रेट्स का परिपचन ठीक से नहीं होता है। यह स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में अधिक मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ मधुमेह एक अति व्यापक रोग है। १०० व्यक्तियों के पीछे १ में यह अवश्य मिलता है। हम लोग जो कुछ मीठा पदार्थ खाते हैं, वे शर्करा में बदल कर शरीर के ताप को बढ़ाने का कार्य करते हैं। इसके विपरीत इस रोग में शर्करा अच्छी तरह न पच कर, बिना किसी परिवर्तन के, लगभग उसी हालत में पेशाब के साथ बाहर निकल जाती है। इसमें पेशाब बहुत अधिक होता है और उसमें चीनी भी मिली रहती है। प्रारम्भ में प्यास अधिक लगती है, मुँह सूख जाता है। दाँत और मसूड़े खराब होकर पाचन-क्रिया बिगड़ जाती है। कार्बंकल और फोड़ा निकल आता है। मूत्र की जाँच करने पर मूत्र में शर्करा की उपस्थिति मिलती है।

○ रक्त में शर्करा को सन्तुलित रखने की क्रिया जब भलीभाँति सम्पादित नहीं होती है तब मधुमेह रोग होता है।

कारण (Etiology)—१. मधुमेह का रोग प्रायः ५०–६० वर्ष के बीच के उच्च वर्ग के शिक्षित, बैठ कर काम करने वाले, अधिक मात्रा में आहार लेने वाले, शाकाहारी, स्थूल व्यक्तियों में अधिक होते देखा जाता है। इसके विपरीत निर्धन तथा श्रम करने वाले एवं ग्रामवासियों में नहीं मिलता है।

२. यह अधिक मानसिक परिश्रम करने, चिन्ता, उत्तेजना, चोट एवं कुछ तंक्रामक रोग जैसे—डिफ्थीरिया, मलेरिया, फ्लू, टॉन्सीलाइटिस आदि के बाद भी कभी-कभी होते देखा गया है।

३. अधिक मधुर पदार्थ अथवा शर्करा या मिठाइयाँ अधिक मात्रा में बहुत दिनों तक खाते रहने से।

४. अधिक मद्यपान, भाँग, गाँजा आदि नशीली वस्तुओं के अधिक सेवन से।

५. यकृत् या क्लोम ग्रन्थियों के कार्यों में कमी आने से।

६. स्थूलता इस रोग का सबसे बड़ा कारण है। इससे रक्त में ग्लूकोज की मात्रा बढ़ती है।

७. इस रोग की निर्बलता पैतृक-परम्परा से भी आती प्रतीत होती है। यह देखा गया है कि यदि माता-पिता दोनों में मधुमेह रोग रहा है तो उनकी सन्तान में भी मधुमेह होता देखा गया है।

८. कभी-कभी नाड़ीमण्डल की विक्षोभशीलता भी इस रोग का कारण हो सकती है अर्थात् चिन्ता की अधिकता से यह रोग हो सकता है।

लक्षण (Symptoms)—१. मधुमेह का रोग धीरे धीरे अज्ञात रूप में होता है। रोगी को सबसे पहले बहुमूत्र (Polyuria) की शिकायत होती है। दिन भर में बार-बार तथा मात्रा में अधिक (२४ घण्टे में १½ से लेकर ३ लीटर या इससे भी अधिक) मूत्र आना है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

२. जल के अधिक निकल जाने से रोगी को प्यास अधिक लगती है।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. ३५% रोगियों में शर्करा के अधिक निकल जाने से भूख अधिक लगती है, किन्तु धीरे-धीरे भूख मन्द पड़ती जाती है।

४. ४०% रोगी प्रायः अपनी बढ़ती हुई अशक्ति एवं घटते हुए भार की शिकायत लेकर आते हैं। शरीर कृश होने से स्वल्प श्रम से ही शरीर में थकावट आ जाती है।

५. शरीर से शर्करा तथा जल के अधिक निकल जाने से निर्बलता तथा किटोसिस (Ketosis) के लक्षण मिलते हैं।

६. मूत्र द्वारा जल के अधिक निकलते रहने से धातुओं में जलहीनता (Dehydration) या शुष्कता-कठोरता के लक्षण होते हैं। जिससे धमनियों की दीवारें कुछ-कुछ कठोर होती जाती हैं। यह कठोरता विशेषरूप से हृदय, मस्तिष्क तथा टाँगों की रक्तवाहिनियों में होती है।

७. आँतों की श्लेष्मकला के शुष्क रहने से रोगी को प्रायः मलावरोध (Constipation) की शिकायत रहती है।

८. शरीर की त्वचा सूखी तथा स्पर्श में रूखी-खुरदरी प्रतीत होती है।

९. मसूड़े फूल जाते हैं और उनसे रक्त आने लगता है।

१०. मूत्र का आपेक्षिक गुरुत्व १०६० से ऊपर हो जाता है।

११. ○ पेशाब में शर्करा का निकलना, शरीर में खुजलाहट, शरीर का रूखा होना, दुर्बलता, शरीर का भार घटते जाना—इसके प्रमुख लक्षण माने गये हैं। इसके पश्चात् शरीर धीरे-धीरे क्षीण होता जाता है।

१२. त्वचा में शुष्कता के कारण तथा उसका पोषण भलीभाँति न होने से उसमें शुष्कता तथा रूक्षता का लक्षण होता है जिससे उसमें स्टेफिलोकोकाई का संक्रमण शीघ्रता से हो जाता है, जिससे पिडिकाएँ (Boils) तथा मधुमेह पिडिकाएँ निकल आती हैं।

○ यदि पिडिकाएँ सीवन-प्रदेश के आस-पास निकलें तो इस रोग का संदेह करना चाहिए।

१३. कुछ केसिस में स्त्रियों में भगकण्डू (Pruritus) तथा पुरुषों में शिश्नमुण्डशोथ (Balanitis) का लक्षण मिलता है।

१४. २०% रोगियों की जाँघों में नाड़ी-शोथ (Peripheral neuritis) का लक्षण मिलता है, जिससे टाँगों में दर्द रहता है।

१५. २०% रोगियों में स्त्रियों के स्तनों के नीचे तथा जननेन्द्रिय के समीप की त्वचा में रक्तवर्ण पामा (Eczema) रोग भी हो जाता है, जिससे शरीर में कण्डू रहती है।

१६. बीमारी बढ़ने पर फुप्फुस आदि अंगों में भी खराबी आ जाती है और 'कार्बंकल' होकर रोगी की मृत्यु हो जाती है।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ मुँह से शर्करा की वृद्धि जनित गन्ध, पुरुषों में कामशक्ति का ह्रास तथा स्त्रियों में मासिकधर्म का बन्द होना आदि।

रोग का संदेह—इस रोग का प्रारम्भ अज्ञात रूप में होता है जिससे बहुत समय तक इस रोग का पता नहीं चलता है। किन्तु यदि किसी के अंगों में दर्द तथा ऐंठन का लक्षण मिलने लगे, चलने-फिरने में कमजोरी प्रतीत हो, त्वचा में खुजली होने लगे, पिडिकाएँ निकलने लगें, हाथ-पाँव में शीतलता तथा उष्णता लगने लगे, रात्रि के समय मूत्र आने लगे, शरीर-कृशता निरन्तर बढ़ती जाये तथा ब्लड-प्रेशर बढ़ता रहे तो इस रोग का संदेह करना चाहिए।

निदान (Diagnosis)—अत्यधिक प्यास, रात्रि में तेज प्यास के साथ गले का सूखना, अपरितृप्त क्षुधा, चीनीयुक्त वर्णशून्य अधिक मूत्र का आना, शरीर का शुष्क और दुर्बल होना आदि प्रधान लक्षणों से इसे सरलतापूर्वक पहचाना जा सकता है। निम्न लेबोरेटरी टेस्ट भी रोग-निदान में पर्याप्त सहायक सिद्ध होते हैं—

१. **क्लिनिटेस्ट रिएजेण्ट** (Clinitest reagent)—इस निदानात्मक टेस्ट में क्लिनिस्टिक्स (Clinistix) एक औषधि निर्मित पात्र होता है, उसे मूत्र में डाल कर उस पर हुई रंग की प्रतिक्रिया से मधुमेह का निश्चित निदान हो जाता है।

२. **पोस्ट-प्रेण्डियल ब्लड ग्लूकोज परीक्षा** (Examination of post-prandial blood glucose)—मधुमेह के सही निदान के लिए रक्त-परीक्षा आवश्यक होती है। क्योंकि कई बार रक्त में ग्लूकोज के अधिक होने पर भी मूत्र मे इसका टेस्ट नहीं आता।

○ भोजन से पहले लिये गये रक्त में १४० मिली० प्रतिशत से अधिक ग्लूकोज हो तो भी इस रोग का निश्चय हो जाता है। रक्त-परीक्षा करने पर उसमें शर्करा की मात्रा १ प्रतिशत से अधिक होती है।

३. **ग्लूकोज टॉलेरेन्स टेस्ट** (Glucose tolerance test)—रक्त में चीनी के बढ़ने पर अग्न्याशय के सेल कितने उत्तेजित होते हैं, इसकी परीक्षा के लिए यह टेस्ट होता है। इस जी० टी० टी० (G. T. T.) में प्रातःकाल खाली पेट रक्त का नमूना ले लिया जाता है और उसमें मधुमेह के लिए शर्करा की परीक्षा की जाती है। इसके बाद ५० ग्राम ग्लूकोज २०० मि० ली० जल में मिलाकर पिला दिया जाता है। इसके आधे-आधे घण्टे के बाद रक्त के ५ नमूने लिये जाते हैं, जिनमें से प्रत्येक में शर्करा की परीक्षा की जाती है।

नोट—'कोर्टीसोन टेस्ट' भी रोग-निदान में सहायक होता है।

○ १४० मिली० से ऊपर रक्त-शर्करा होने पर इस रोग का संदेह पूर्ण हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपद्रव (Complications)—उरःक्षय (१५%), रक्त में एसीटोन का मिलना, मधुमेह जनित नाड़ी रोग, नाड़ीशूल (Diabetic neuropathy), मधुमेह जनित वृक्क रोग (Diabetic neuropathy), मधुमेह जनित दृष्टि-रोग—डायबिटिक कैटरेक्ट, डायबिटिक रेटिनोपेथी आदि उपद्रव होते हैं।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. ५०% रोगी 'डायीबिटिक कोमा' अर्थात् मधुमेहजन्य संन्यास से मरते हैं।

२. २५% रोगी न्यूमोनिया या क्षयरोग से मरते हैं।

३. शेष २५% रोगी गैंग्रीन, वृक्कप्रदाह, घाव, क्षत, स्फोटक तथा मस्तिष्क रक्तस्राव आदि से मरते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ टेबलेटे डाओनिल (Tas. Daonil) (हैक्स्ट)

मात्रा—½-१ गोली दिन में १ बार खाने के बाद। लाभ न मिलने पर २ गोली प्रातः एवं ½-१ गोली शाम के खाने के बाद दें।

अथवा—टेबलेट डायबिनीज (Dabinese) (फाइजर)

वयस्क—२५० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में एक बार।

वृद्धों को—१०० मि० ग्रा० की १ गोली दिन से एक बार।

अथवा—℞ डी० बी० आई० टी० डी० (D. B. I. T. D.)

मात्रा—१ कैपसूल प्रातः तथा १ कै० सायं खाने के साथ।

अथवा—डायाबीगोन (Diabigon) (बंगाल केमिकल्स)

प्रारम्भ में २००-२५० मि० ग्रा० प्रातः नास्ते के बाद ५ दिन तक।

तत्पश्चात्—आवश्यकतानुसार।

अथवा—एल्केमाइड (Alkamide) (एलेम्बिक)

मात्रा—½-२ गोली नास्ते के पूर्व।

साथ ही—इन्सुलिन का सूचीवेध लगायें।

अथवा—℞ ग्लाइसीफेज (Gliciphage) (फ्रेन्को इण्डिया)

वृद्धों के नवीन रोग में—३-६ गोली नित्य। १-२ गोली प्रत्येक खाने के बाद दें। मात्रा धीरे-धीरे घटाते हुए २ गोली नित्य दें।

नोट—यदि रोगी को इन्सुलिन का इञ्जेक्शन लग रहा हो तो प्रारम्भ में ३-३ गोली नित्य दें और इन्सुलिन की मात्रा क्रमशः घटाते जायें।

इन्सुलिन चिकित्सा (Insulin treatment)—

१. प्रीटामीन जिंक इन्सुलिन (वेल्कम)—१ मिली० का इञ्जेक्शन एक दिन छोड़ कर चर्म में।

२. इन्सुलिन नोवोलेण्टे (ह्यूमेक्स)—उचित मात्रा में रोगानुसार चर्म में खाने से १-२ घण्टे पूर्व।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. **इन्सुलिन नोवो सेमी लेण्टे**—उचित मात्रा में चर्म में।

○ इञ्जेक्शन का स्थान बदल-बदल कर।

४. **इन्सुलिन नोवो अल्ट्रा-लेण्टे (ड्यूमेक्स)**—शर्करा की मात्रा के अनुसार उचित मात्रा में लगायें।

५. **इन्सुलिन जिंक सस्पेंशन लेण्टे एमॉर्फस**—आवश्यक मात्रा में चर्म में सूचीवेध।

○ इसका प्रभाव मध्यम स्वरूप का तथा २४ घण्टे तक रहता है।

६. **आइसोफेन इन्सुलिन**—एम० पी० एच० इन्सुलिन—१ वायल को भलीभाँति हिलाकर चर्म में लगायें।

○ इसका प्रभाव इञ्जेक्शन देने के २ घण्टे बाद प्रारम्भ हो जाता है और २० से ३० घण्टे तक रहता है।

इन्सुलिन चिकित्सा सहयोगी औषधि के साथ में—

१. ℞ आइसोफेन इन्सुलिन (बी० डब्लु० कं०)

मात्रा—२०-४० लाख यूनिट चर्म में रोग की तीव्रता के अनुसार।

साथ ही—बेरिन (Berin) (ग्लैक्सो)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० का सूचीवेध १ मिली० की मात्रा में मांस में लगायें।

२. ℞ कोम्बा-इन्सुलिन (Comba-Insulin) (हैक्स्ट)

मात्रा—४० लाख यूनिट प्रति मिली० प्रातः-सायं रोगानुसार चर्म या मांस में।

साथ ही—एण्ड्रोस्कोर्बिन (Androscorbin) (सिपला)

मात्रा—३ से ५ बूंद नित्य ३ बार दें।

डायबिटीज की मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१. ℞ डायोनिल (हैक्स्ट) — ½ गोली

डाइबिनीज (फाइजर) १०० मि० ग्रा० की — १ गोली

ऐसी १ मात्रा दिन में १ बार। बालक—½ मात्रा। — १ मात्रा

२. ℞ डायबिनीज (फाइजर) १०० मि० ग्रा० की १ गोली

वी-कॉम्प्लैक्स (ग्लैक्सो) — १ गोली

१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार प्रातः-सायं नास्ते के बाद जल से।

○ ४० वर्ष से ऊपर तथा मोटे व्यक्तियों के रोग में विशेष लाभकारी है।

निर्देश—○ रोग घटने पर मात्रा आधी कर दें।

○ लाभ न मिलने पर इसकी २५० मि० ग्रा० की गोली खिलायें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. ℞ डायोनिल (हैक्स्ट)	½ गोली
बीकोसूल्स (फाइजर)	१ कैपसूल
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजनोपरान्त जल से ।

४. ℞ लिक्विड एक्स्ट्रेक्ट जाम्बूलम	४ मिली०
ग्लाइसरो फॉस्फेट कम्पाउण्ड	४ मिली०
कोडीन फॉस्फेट	३० मिग्रा०
जल—कुल	३० मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार दें ।	१ मात्रा

इसके साथ—कोम्बा-इन्सुलिन (हेक्स्ट) ४० लाख यूनिट प्रति मिली-लीटर शक्ति का एक-एक इञ्जेक्शन दिन में २ बार मांस या चर्म में लगायें ।

५. ℞ ग्लाइसीफेज (फ्रेन्को इण्डियन)	१ गोली
सीलिन (ग्लैक्सो) ५०० मि० ग्रा० की	½ गोली
दिन में २ बार भोजनोपरान्त जल से	१ मात्रा
६. ℞ डायोनिल	½ गोली
डाइबिनीज १०० मि० ग्रा० की	१ गोली
लिक्विड एक्स्ट्रेक्ट जाम्बूलम	४ मि० ली०
ऐसी १ मात्रा दिन में १ बार दें ।	१ मात्रा
७. ℞ डी० बी० आई० (यू० एस० विटामिन)	१ गोली
सीलिन १०० मि० ग्रा० की	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजनोपरान्त ।	१ मात्रा

○ बच्चों में इसका प्रयोग न करें ।

○ मधुमेह में यह ९०% सफल योग है ।

अतिरिक्त चिकित्सा—मधुमेह में मदु विरेचक तथा भोजन चिकित्सा विशेष महत्त्व रखती है ।

○ रोगी के मूत्र को शर्करा से मुक्त करने के लिए उसे दो दिन सैलाइन परगेटिव औषधि देते हुए उपवास पर रखना चाहिए । इतना करने से फिर मूत्र में खाण्ड या शर्करा नहीं आती है ।

○ पनीर, अण्डा, मांस, चाय, मक्खन, पत्तों वाले शाक, शलजम, मूली, गोभी, टमाटर, नीबू आदि उपयुक्त रहते हैं । रोगी को स्वल्प मात्रा में रोटी, फल तथा दूध दिया जा सकता है ।

सावधान—मद्यपान, शर्करा, ग्लूकोज, शहद तथा शर्करा से बने पदार्थ अपथ्यकारक होते हैं ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ प्रत्येक भोजन में मात्र इतना कार्बोहाइड्रेट होना चाहिए कि वह शरीर में खप जाये और मूत्र से न निकले। इसके लिए मूत्र की दैनिक परीक्षा करनी चाहिए। जब कभी मूत्र में शर्करा प्रकट हो, आहार की मात्रा तुरन्त घटा देनी चाहिए। रोगी को शर्करा के स्थान पर सेक्रीन देना चाहिए। दिन भर में २००-२५० ग्राम ही रोटी देनी चाहिए। पनीर का प्रयोग अधिक किया जा सकता है। चाय, काफी, सोडा, लेमनेड, घी, मक्खन तथा सब्जियाँ यथेष्ट ली जा सकती हैं। दिन भर में ४०० मि० ली० दूध एवं ३० ग्राम घी लेते हुए प्रातः २०० ग्राम दलिया और चाय, दोपहर को २ छोटी रोटियों के साथ थोड़ा दही, सब्जी और लस्सी, तीसरे पहर डबल रोटी के २ टोस्ट और चाय, रात को २ फुलकी और सब्जी लिया जाय तो रक्त में शर्करा की मात्रा नियंत्रित रहती है।

○ पनीर के स्थान पर १ अण्डा लिया जा सकता है। ⊡

मूत्र-प्रजनन-संस्थान के रोग 4/16

उदकमेह
(Diabetes Insipidus)

पर्याय—यह बहुमूत्र तथा सामान्य डायबिटीज आदि नामों से जाना जाता है।

परिचय—पश्च पिट्यूटरी ग्रन्थि (Posterior pituitary gland) की क्रियाहीनता से उत्पन्न होने वाला एक ऐसा रोग, जिसमें बहुमूत्रता, प्यास की अधिकता तथा निर्जलीभवन आदि के लक्षण पाये जाते हैं, उदकमेह (Diabetes insipidus) कहलाता है। इस रोग में मूत्र की मात्रा अधिक बढ़ जाती है। मुँह, जबान और त्वचा में खुश्की आ जाती है। कभी-कभी रोगी अत्यन्त दुर्बल हो जाता है।

कारण (Etiology)—१. जन्मजात (Congenital)।
२. अभिघात या संक्रमण के परिणामस्वरूप।
३. किसी नवीन रोग के पैदा होने अथवा कठिन बुखार के बाद।
४. मस्तिष्क अर्बुद तथा मेनिञ्जाइटिस के परिणामस्वरूप।
५. उदर-विकार, जैसे—आन्त्रिक क्षय आदि में।

लक्षण (Symptoms)—१. रोग के लक्षण धीरे-धीरे बढ़ते हैं।
२. मूत्र बार-बार और अधिक परिमाण में आता है। इसका १५-२० गाइण्ट तक होना साधारण बात है। इस प्रकार से रोगी को २४ घण्टे के अंदर सामान्य मात्रा से बहुत अधिक मूत्र आता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. रोगी को अधिक प्यास लगती है, जो रोग की उग्रता के अनुसार होती है।

४. मूत्र पानी की तरह रंगहीन होता है।

५. जीभ लाल तथा चमकदार होती है।

६. पाचनशक्ति का ह्रास।

७. मासिक दुर्बलता तथा शिरःशूल।

८. ○ पश्च ग्रन्थि के सत्त्व का इञ्जेक्शन देने से रोगी के समस्त लक्षणों में सुधार दिखलाई पड़ने लगता है।

निदान (Diagnosis)—मूत्र-परीक्षा तथा उपरोक्त लक्षणों के आधर पर रोग का निदान सरलता से हो जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—

१. ℞ टेबलेट टैगरीटोल (Tab. Tegeretol)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

○ यह औषधि साधारण रोग में विशेष लाभकारी है।

२. ℞ इञ्जे० वेसोप्रेसिन टैनेट (Inj. Vasopressin tannate)

मात्रा—½-१ मि० ली० I/M एक दिन छोड़ कर सोने से पूर्व।

नोट—इसके १ मि० ली० के एम्पुल आते हैं।

साथ ही—टेबलेट एसीड्रेक्स (Tab. Esidrex)

मात्रा—२५ मि० ग्रा० की १ गोली दिन में २ बार। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पञ्चम खण्ड

*

मानसिक विकार

(Psychic Disorders)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तन्त्रिकादौर्बल्य/तन्त्रिकावसाद
(Neurasthenia)

पर्याय—मनःशान्ति, मानसिक अशान्ति ।

परिचय—जब रोगी बिना किसी कारण के मस्तिष्क एवं शारीरिक थकान अनुभव करने लगता है, तब उस अवस्था को मानसिक अशान्ति (Neurasthenia) कहते हैं ।

कारण—इस रोग के कोई विशिष्ट कारण नहीं हैं । कुछ उत्तेजक कारण अवश्य हैं, जो इस प्रकार हैं—

१. अति परिश्रम ।

२. अधिक चिन्ता ।

३. रुग्णावस्था, विशेषकर फ्लू, रक्ताल्पता अथवा आन्त्रिक ज्वर आदि ।

४. मद्यपान तथा कोकेन का अधिक सेवन ।

५. पैत्रिक कारण (Hereditary causes) ।

आयु (Age)—२० से ४५ वर्ष की आयु में ।

लिंग (Sex)—स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में अधिक ।

लक्षण (Symptoms)—१. जब रोगी चिकित्सक के पास आता है, तब वह शारीरिक थकान सम्बन्धी लक्षण बताता है, जबकि उसमें मानसिक लक्षणों की प्रधानता रहती है ।

२. रोग का प्रारम्भ धीरे-धीरे होता है ।

३. रोगी अपने में थकान का अनुभव करता है । वह अपने में क्षुधानाश, आध्मान, अपचन तथा पश्चकपाल शिरोवेदना (Occipital headache) के लक्षण बतलाता है ।

४. रोगी को अपना सिर अत्यधिक खाली अथवा भरा हुआ प्रतीत होता है ।

५. दिल की धड़कन, चक्कर आना, चेहरे का लाल होना, अत्यधिक स्वेद, जम्भाई आना, गले में किसी वस्तु का अटक जाना, शरीर के विभिन्न भागों में सुन्नता आदि लक्षणों का मिलना ।

६. रोगी को पृष्ठशूल (Bachache) होता है ।

७. नपुंसकता (Impotency) इसका प्रधान लक्षण है ।

८. रोगी प्रायः भयभीत रहता है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. वह किसी एक स्थान पर एकाग्र होकर बैठ नहीं सकता और न ही सो सकता है और न पढ़ सकता है।

१०. रोगी की नींद गायब हो जाती है।

११. प्रान्तीय रक्त-संचार (Peripheral circulation) अव्यवस्थित होने से हाथ-पैर ठंडे तथा नीले पड़ जाते हैं।

१२. कुछ केसिस में रक्तचाप गिर जाता है तथा नाड़ी की गति अनियमित हो जाती है।

निदान (Diagnosis)—उपरोक्त लक्षणों के आधार पर निदान में कोई कठिनाई नहीं होती।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—मस्तिष्कगत अर्बुद, उपदंश तथा पक्षाघात के प्रारम्भिक लक्षण इस रोग से मिलते-जुलते हैं। कभी-कभी लोग पल्मोनरी ट्युबरकुलोसिस को न्यूरेस्थेनिया का औत्पत्तिक कारण समझ जाते हैं।

उपद्रव (Complications)—पागलपन (Insanity) इसका एक प्रमुख उपद्रव है।

भावीफल (Prognosis)—चिकित्सा के अभाव में रोगी पर्याप्त समय तक कष्ट पाता रहता है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) **सामान्य चिकित्सा** (General treatment)—

१. रोगी के सभी औत्पत्तिक तथा उत्तेजक कारणों का पता लगाकर रोग की उपयुक्त चिकित्सा करनी चाहिए।

२. रोग की उग्रावस्था में रोगी को पूर्ण विश्राम, वातावरण-परिवर्तन, अनुकूल व्यवसाय आदि की उचित व्यवस्था करनी चाहिए।

३. प्रातःकाल दूध की व्यवस्था करें।

४. हलका व्यायाम करना भी आवश्यक है।

(२) **औषधि-चिकित्सा** (Medicinal treatment)—

१. ℞ ऑक्साजीपाम (Oxazepam) १५ मि० ग्रा०

व्या० नाम—ओलीवोन (Olivon) (शेरिंग)

मात्रा—१ गोली रात्रि में सोते समय।

अथवा—सेरीपेक्स (Serepex) (वीथ कं०)

अथवा—डायजीपाम (Diazepam) ५ मि० ग्रा०

व्या० नाम—कालमोड (Calmod), केल्मपोज (Calmpose) (रैनबैक्सी) तथा पेक्सिल (रैलिस) आदि।

मात्रा—१ गोली रात में सोते समय।

२. **हृदय-धड़कन** (Palpitation)—यह न्यूरेस्थेनिया का उपद्रव है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

℞ प्रोप्रेनोलोल (Propranolol) २० मि० ग्रा०

व्या० नाम—इण्डेराल (Inderal) (आई-सी-आई कं०)

मात्रा—१० मि० ग्रा० की ½ गोली आवश्यकतानुसार। इसे ट्रैन्क्विलाइजर (Tranquillizer) के साथ दें।

३. पृष्ठशूल (Backache)—

℞ एरिस्टोपायरिन टेबलेट (Aristopyrin tab.) (·एरिस्टो कं०)

मात्रा—१–२ गोली दिन में ३ बार।

४. शारीरिक, मानसिक तथा स्नायु क्षीणता—

℞ टेबलेट लिबरियम	१० मि० ग्रा० की	१ गोली
बिनर्वा	१०० मि० ग्रा० की	१ गोली
		१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।

अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. टेबलेट—एरोविट, नारडायल, बीकोजाइम फोर्ट, ल्युमिनेलेप्स, सीपनी, एटोफेन, पर्नाविट, माइवेट्स-जी आदि।

२. पेय—आसवान, कोलिरोन, नवफोस, नार्विटोन, बीकाडेक्स सीरप, बीकोजाइम, हक्सलेज, नरवीगर, हिपाफोलिन, हिपाटेक्स, फॉस्फोटोन, फॉस्फोमिन, न्यूरोजाइम, ओरहेप्टाल।

३. इन्जेक्शन—कैल्सीब्रोनेट, परकोर्टिन; बीकोजाइम, ल्यूमियल सोडियम, हिपेजिन हिमोसाइटिन विद आयरन, एरोविट। ⊡

मानसिक विकार 5/2

विखण्डित-मनस्कता

(Schizophrenia)

पर्याय—अन्तराबन्ध, चित्तविक्षेप, विक्षिप्तता, युवा-सुलभ उन्माद, डिमेंशिया प्रीकॉक्स (Dementia precox)।

परिचय—This is a form of mental illness characterised by an abnormal emotional reaction associated with deterioration in personality.

○ यह एक अति सुलभ मानसिक रोग (Mental disease) है। इसमें रोगी के अन्दर व्यक्तित्व विदलन अथवा व्यक्तित्व विघटन के लक्षण मिलते हैं। इसमें बुद्धि की तमाम शक्तियाँ युवावस्था में ही दुर्बल हो जाती हैं।

○ मानसिक रोग चिकित्सालय में आधे से अधिक रोगी इसी रोग से ग्रस्त देखे जाते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण (Etiology)—१. **वंशानुगत कारक** (Hereditary factor)—इस रोग की दुष्ट प्रवृत्ति जन्म से ही प्रतीत होती है। अधिकांश रूप में रोगी के पूर्वजों में मानसिक रोग होने का इतिहास मिलता है। इस रोग के पैतृक परम्परागत से आने के कारण ही यह रोग १५-२० वर्ष की युवावस्था में ही प्रकट होने लगता है।

२. **दैहिक कारक** (Physical factor)—कुछ लोगों का विचार है कि यह रोग अन्तःस्रावी ग्रन्थियों की विकृति के कारण होता है।

३. मनोजात कारक (Psychogenic factor)।

४. शरीरगणनात्मक कारक (Constitutional factor)।

५. परसोनेलिटी (Personality)।

६. पैरेण्ट-चाइल्ड रिलेशनशिप (Parent child relationship)।

७. सोसल क्लास (Social class)।

८. इण्टेलीजेन्स (Intelligence)।

९. वातावरण का प्रभाव (Influence of surrounding)।

उम्र (Age)—१५ से ३५ वर्ष।

लिंग (Sex)—स्त्री-पुरुष दोनों समान रूप से पीड़ित होते हैं।

लक्षण (Symptoms)—इस रोग में निम्न लक्षणों की प्रधानता रहती है—

१. विचारहीनता।

२. भावहीनता।

३. इच्छाहीनता।

४. मनोविभ्रम, भ्रान्तचित्तता।

५. मिथ्या प्रतीति।

(१) **विचारहीनता**—रोगी की विचार-शक्ति नष्ट हो जाती है। उसकी बात का कोई लक्ष्य नहीं होता है। उसके कहे वाक्यों में भी परस्पर मेल नहीं होता है। रोगी कम बोलता है। रोग बढ़ने पर रोगी भिनभिनाता हुआ बहुत धीरे-धीरे बोलता है।

○ यदि कोई नवयुवक असम्बद्ध और सारहीन भाषा में बोलता है तो उसमें इस रोग की प्रारम्भिक अवस्था ही समझनी चाहिए।

(२) **भावहीनता** (Loss of emotion)—१. रोगी के मन के भ्रष्ट हो जाने से उसमें हर्ष, शोक आदि भाव मन्द पड़ जाते हैं। वह सुख में सुखी और दुःख (कष्ट) मिलने पर दुःखी नहीं होता है। वह माता-पिता, गुरु आदि से घृणा करने लगता है। वह अपने निकटतम सम्बन्धी आदि की मृत्यु की घटना सुन कर हँसने लगता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. रोगी का चेहरा उदासीन तथा भावहीन हो जाता है।

३. रोगी मैला-कुचैला दीखता है। उसमें शरीर को सजा कर रखने का भाव समाप्त हो जाता है।

४. उसके चेहरे पर कभी-कभी हँसी का भाव दीखता है।

५. ○ उदासीनता का भाव इस रोग का सूचक लक्षण है।

(३) इच्छाहीनता—१. रोगी की इच्छाशक्ति समाप्त हो जाती है। उसे किसी कार्य को करने की इच्छा नहीं रहती है।

२. रोगी देर तक बिस्तरे पर पड़ा रहता है। इसके बाद उठ कर बिना किसी उद्देश्य के इधर-उधर घूमने लगता है। कभी-कभी खड़ा होकर अथवा बैठ कर एक ही ओर टकटकी लगाये देखता रहता है।

३. इच्छाशक्ति नष्ट हो जाने से वह आवारा-सा इधर-उधर घूमता है।

४. रोगी अधिक स्वप्नशील होकर देर तक निद्रा में पड़ा रहता है।

(४) मनोविभ्रम/भ्रान्तचित्तता—१. रोगी का चित्त भ्रमित रहता है।

२. रोगी को सदैव यही भ्रम रहता है कि लोग उसे हानि पहुँचाने का प्रयत्न कर रहे हैं।

३. रोगी को भ्रम रहता है कि दूसरे व्यक्ति उसे अपनी इच्छा से चला रहे हैं या उससे काम करा रहे हैं।

○ जब किसी व्यक्ति में अजीब-से भ्रम होने लगे तो इस रोग का संदेह करना चाहिए।

(५) मिथ्याप्रतीति (Hallucination)—इस रोग में दृष्टि तथा श्रवण सम्बन्धी मिथ्या प्रतीति होने लगती है। अर्थात् किसी वस्तु के न होने पर भी वह मिथ्या दिखलाई दे और जो शब्द न हो रहा हो वह सुनाई पड़े।

○ इसमें रोगी को विभिन्न प्रकार की धमकी, तिरस्कार अथवा प्रशंसा की आवाजें सुनाई पड़ती हैं। आगे चलकर वह आवाजें रोगी को इतना अधिक प्रभावित करती हैं कि वह इसके निर्देशानुसार कार्य अथवा व्यवहार करने लगता है। यह सभी लक्षण थोड़े समय के लिए होते हैं।

○ शक्की स्वभाव के रोगियों में सदैव स्पर्श सम्बन्धी झूठे भ्रम की प्रतीति होती है। उसे ऐसा प्रतीत होता है कि कोई उसके शरीर में बिजली का करेण्ट प्रवेश करा रहा है अथवा सोने की स्थिति में कोई रहस्यमय ढंग से औषधि की सुई लगा रहा है।

कुछ अन्य लक्षण—१. वाक् विकृति (Speech disorder)—

(i) अनेक रोगी या तो मूक हो जाते हैं अथवा कम बोलते हैं। उन्हें समाज से कोई सम्बन्ध नहीं रहता है।

(ii) कुछ रोगी बहुत वाचाल होते हैं। कभी-कभी वह एक ही बात को बार-बार दुहराते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ नई शब्द-रचना भी अन्तराबन्ध के रोगियों की अपनी विशेषता होती है।

२. **लेखन-विकृति** (Writing disorder)—इन रोगियों में बोलने में जो असमान्यताएँ होती हैं, वे ही लिखने में भी होती हैं। इनकी शैली में अस्थिरता रहती है। इनके विचार असम्बद्ध तथा समझ के बाहर होते हैं।

३. **दैहिक लक्षण** (Physical symptoms)—इस रोग के रोगियों का सामान्य स्वास्थ्य प्रायः खराब ही रहता है। वह निर्बल तथा त्रस्त रहते हैं। शरीर का नियंत्रण दोषपूर्ण रहता है। शरीर का तापक्रम घटता-बढ़ता रहता है।

संक्षेप में—अन्तराबन्ध के रोगी के विचार अस्पष्ट और निरर्थक होते है।

अन्तराबन्ध के प्रकार (Types of schizophrenia)—

(१) **साधारण प्रकार** (Simple type)—इस प्रकार के रोगी बहुत ही कम (५%) अस्पताल में आते हैं। अधिकांश रोगी निठल्ले, अपराधी, आवारा तथा इधर-उधर भटकने वाले होते है।

(२) **मनोकुण्ठात्मक अन्तराबन्ध** (Hebephrenic schizophrenia)—इस प्रकार का रोगी व्यर्थ के ध्यान, पूजापाठ आदि कार्यों में लग जाता है। यह रोग धीरे-धीरे और अज्ञात रूप में होता है। रोगी में कोई न कोई भ्रम अवश्य रहता है। अथवा उसे दृष्टि सम्बन्धी एवं श्रवण सम्बन्धी कोई मिथ्या प्रतीति अवश्य रहती है।

(३) **सामंजस्यहासात्मक अन्तराबन्ध** (Catatonic schizophrenia)—जब २५ से ३० वर्ष की आयु में यह रोग अकस्मात् प्रारम्भ होता है, तब शून्योन्माद, ध्यानोन्माद, निद्रोन्माद (Catatenia) के रूप में उत्पन्न होता है। ऐसी स्थिति में—

१. रोगी भावहीन, इच्छाहीन तथा मौन-सा होकर परिवर्तन न होने वाली स्थिति या मुद्रा में बहुत लम्बे समय तक पड़ा रहता है।

२. रोगी के मुँह से लार चूती रहती है। वह उसे थूकने का तनिक भी प्रयास नहीं करता।

३. रोगी कभी एक ओर खड़ा हो जाता है अथवा एक ओर को देखता रहता है।

४. रोग की बढ़ी हुई अवस्था में वह चुपचाप निश्चेष्ट होकर एक ही स्थिति में पड़ा रहता है अथवा चुपचाप बैठा रहता है।

५. रोगी कई-कई दिन तक बिना खाये ही रहता है।

६. रोगी जिस शब्द को सुन लेता है, उसी को बार-बार दुहराता रहता है। वह दूसरों में जिस चेष्टा को देखता है उसी को बार-बार करता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. रोगी बैठा-बैठा आँख, भौंह तथा चेहरे से कोई न कोई चेष्टा अवश्य करता रहता है।

८. रोगी भावों से शून्य होता है। पर कभी-कभी हलकी हँसी का भाव प्रकट करता है।

९. कोई-कोई रोगी निश्चेष्ट भाव से बैठे रहने की स्थिति में भी बीच-बीच में उत्तेजित होकर कोई प्रबल चेष्टा करने लगता है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे वह ऐसा क्रोध में कर रहा है।

१०. रोगी बिना किसी उद्देश्य के एक नियत परिधि के अन्तर्गत अथवा अपने कमरे के अन्दर घूमता रहता है। अथवा उदासीन-सा दीखता हुआ भी बीच-बीच में आवेशपूर्वक उद्देश्यरहित कोई प्रबल चेष्टा करता रहता है।

११. रोगी का चेहरा भावशून्य हो जाता है।

१२. रोगी के आदतों में गंदगी आ जाती है।

१३. रोगी को खाने-पीने के लिए भी प्रोत्साहित करना पड़ता है और सहायता देने की आवश्यकता पड़ती है।

१४. इस अवस्था में रोगी सम्पर्कशून्य रहता है। यदि बोलता भी है तो एक-दो शब्दों को ही बार-बार दुहराता रहता है।

संक्षेप में—इस अवस्था के अन्तर्गत रोगी में अरुचि, उदासीनता, ध्यान केन्द्रित करने की क्षमता का अभाव और ऊँघते रहने की स्थिति जैसे लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

○ यदि कोई युवक सहसा शिष्टाचार के विरुद्ध व्यवहार करने लगे तो उसमें इस रोग की आशंका करनी चाहिए।

(४) भ्रमोन्माद अथवा संविभ्रमवत् अन्तराबन्ध (Paranoid schizophrenia)—इस प्रकार का रोग ४०-४५ वर्ष की आयु में शनैः-शनैः अज्ञात रूप में होता है तब रोगी में विचारहीनता, भावहीनता, इच्छाहीनता के लक्षण प्रधान रूप में होते हैं। साथ ही ऐसे रोगी में—

१. सदैव यह भ्रम रहता है कि दूसरे लोग उसके साथ सदा दुर्व्यवहार कर रहे हैं अथवा उस पर हमला करने का कुचक्र रच रहे हैं। इस प्रकार के रोगियों को प्रायः यह सुनाई पड़ता है कि उनके शत्रु उसे तरह-तरह के अवाञ्छनीय नामों से पुकार रहे हैं अथवा धमका रहे हैं।

२. रोगी भोजन नहीं लेता है। उसे भ्रम रहता है कि उसमें विष मिलाया गया है। अतः भोजन लाने वाले के ऊपर हमला भी कर सकता है।

३. रोगी में श्रवण सम्बन्धी मिथ्या प्रतीत भी होती है।

४. रोगी को स्वयं अपने में किसी प्रकार की महानता की प्रतीत होने लगती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग निदान (Diagnosis)—उपरोक्त सभी लक्षणों के आधार पर रोग निदान में कोई कठिनाई नहीं होती है। अर्थात् जब कोई रोगी विचारहीन, भावहीन, इच्छाहीन सा हो जाय, समाज से दूर होता जाय, स्वयं अपने में ही मस्त रहे, उसका बोलना-चालना, रहन-सहन अजीब-सा हो जाय, उसे सदैव भ्रम रहने लगे, वह एक ही स्थिति में अधिक समय तक खड़ा रहे, उसका स्वभाव बिलकुल विपरीत हो जाय तो ऐसे रोगी में अन्तराबन्ध की आशंका करनी चाहिए।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी को एक पारिवारिक तथा सामाजिक परिवेश में ही रखने का प्रयास करना चाहिए।

२. रोग की प्रारम्भिक अवस्था में उसके मन में उत्पन्न होने वाली एकाकीपन की भावना (Feeling of isolation) दूर करने के लिए रोगी को अन्य लोगों के समूहों में अधिकाधिक रूप में रखना चाहिए।

३. रोगी को किसी न किसी कार्य में लगाये रखना चाहिए।

४. आवश्यकता पड़ने पर औषधि सहायता भी लेनी चाहिए।

५. परिवार के लोगों को चाहिए कि उसे परिवार में समायोजित (Adjust) करने में सहायता करें।

६. रोगी की उत्तम चिकित्सा पागलखाने में भर्ती करा देने से ही सम्भव है। ऐसी परिस्थिति में परिवार के लोगों से उसका सम्पर्क अवश्य बनाये रखना चाहिए।

७. रोगी की विशेष निगरानी आवश्यक है। जिससे उत्तेजना की अवस्था में वह स्वयं को कहीं चोट न मार ले अथवा दूसरों को घायल न कर दे।

८. चिकित्सालयों में रोग की तीव्रता के अनुसार अथवा रोग के पूर्ण निराकरण हेतु विभिन्न प्रकार की चिकित्सा-विधियों की आवश्यकता पड़ती है।

(२) औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ क्लोर प्रोमेजीन (Chlor promazine)

व्या० नाम—लार्गेक्टिल (Largactil)

मात्रा—२००-३०० मि० ग्रा० प्रतिदिन।

अथवा—ट्राईफ्लूपेराजीन (Trifluperazine)

व्या० नाम—स्टेलाजीन (Stelazine)

मात्रा—५-१५ मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

अथवा—हेलोपेरीडोल (Heloperidol)

मात्रा—५ मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ मात्रा धीरे-धीरे बढ़ानी चाहिए और उचित मेण्टेनेन्स डोज पर स्थिर करनी चाहिए। कुछ रोगियों में इसे इञ्जेक्शन के रूप में भी दिया जाता है।

तीव्र स्वरूप का अन्तराबन्ध (Schizophrenia)—

℞ इञ्जे० सेरीनेस (Inj. Serenace)

मात्रा—१० मि० ग्रा० तत्काल, उसके बाद प्रति ८ घण्टे पर मांस-पेशीगत।

अथवा—इञ्जे० लार्गेक्टिल (Inj. Largactil)

मात्रा—५० मि० ग्रा० गहरे मांस में तत्काल, बाद में प्रति ८ घण्टे पर।

अथवा—इञ्जे० स्केजीन (Inj. Eskazine)

मात्रा—१० मि० ग्रा० तत्काल तत्पश्चात् प्रति ८ घण्टे पर मांसपेशीगत।

○ छोटी उम्र के लोगों में तथा प्रसव के पश्चात् महिलाओं में इसका प्रयोग न करें।

○ इञ्जे० सेरीनेस और इञ्जे० स्केजीन से पाइरामिडल साइड इफेक्ट्स (ओकुलोगाइरिक क्रिसिस, मीजल्स स्पाज्म) पैदा होते हैं, ऐसे रोगियों में—

℞ इञ्जे० बेलियम (Inj. Belium)

मात्रा—१० मि० ग्रा० I/M अथवा I/V तत्काल।

इञ्जे० फेनर्गान (Inj. Phenergan)

मात्रा—५० मि० ग्रा० I/M तत्काल। तथा—

टेबलेट पेसीटेन (Tab. Pacitane) २ मि० ग्रा०

मात्रा—१-१ गोली दिन में ३ बार।

इन्सीपियेण्ट स्काइज़ोफ्रीनिया (Incipient schizophrenia)—

℞ टेबलेट स्केजीन (Tab. Eskazine) ५ मि० ग्रा०

अथवा—

टेबलेट लार्गेक्टिल (Tab. Largactil) ५० मि० ग्रा०

मात्रा—१-१ गोली दिन में ३ बार।

○ उपरोक्त औषधियों का पूर्ण प्रभाव देखने के लिए ३-४ सप्ताह तक औषधि देनी चाहिए।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

१. सामान्य रोग में—

℞ क्लोर प्रोमेजीन (Chlor Promazine)

व्या० नाम—लार्गेक्टिल (Largactil)

मात्रा—१५०-१००० मि० ग्रा० नित्य। इससे २ सप्ताह में लाभ होने लगता है।

○ औषधि-सेवन-अवधि—६ माह तक। जीर्ण स्वरूप के रोगियों में आजीवन।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—नये रोगियों में—

℞ स्टेलाजीन (Stelazine) ५ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

२. तीव्र रोग की अवस्था में—

℞ स्टेलाजीन १–३ मि० ग्रा० I/M ३–४ दिन तक। तत्पश्चात् कुछ दिन तक इसे मुख द्वारा सेवन कराते हैं। २ सप्ताह में लाभ होने लगता है।

○ चिकित्साक्रम—४ सप्ताह तक जारी रखा जाता है।

३. भ्रमणशील एवं संविभ्रमवत् रोगियों में—

(i) मृदु अवस्था में—℞ रिसरपिन (Reserpin)

व्या० नाम—सर्पासिल (Serpacil)

मात्रा—१ मि० ग्रा० I/M इञ्जेक्शन।

(ii) तीव्र रोग की अवस्था में—२ मि० ग्रा०। ६ घण्टे में लाभ होने लगता है। इसके बाद औषधि ०·२५ मि० ग्रा० की मात्रा में मुख द्वारा देते हैं।

निर्देश—इसे कुछ समय देकर फिर इसके साथ-साथ 'लार्गेक्टिल' भी देते हैं।

४. चेष्टा या भ्रम-प्रधान रोग में—

℞ प्रोमेजीन (Promazine) (वीथ कं०)

व्या० नाम—स्पाइरीन (Spirine)

मात्रा—२५-२०० मि० ग्रा० मुख द्वारा प्रति ६ घण्टे पर।

५. साधारण चिन्ता तथा मानसिक तनाव की स्थिति में—

℞ ट्राइफ्लूप्रोमेजीन (Triflupromazine)

व्या० नाम—सीक्विल (Siquill) (स्क्विब कं०)

मात्रा—१०-२० मि० ग्रा० दिन में ३-४ बार।

नोट—यह डेलूसिन, हेलूसिनेस तथा मेनिया में लाभकारी है।

६ संविभ्रमवत् (Paranoid), वमन, शिरोभ्रम तथा संसार से विरत हुए रोगियों में—

℞ स्टेमेटिल (Stemetil) (एम० बी०)

मात्रा—५-१० मि० ग्रा० दिन में १-२ बार इञ्जेक्शन रूप में।

७. संविभ्रम से ग्रसित एवं संसार से विरत तथा निद्रित अथवा मूक रहने वाले रोगियों में—

℞ स्केजीन (Eskazine) (स्मिथ कं०)

मात्रा—२-१० मि० ग्रा० नित्य।

विद्युत् आक्षेपी चिकित्सा (Electric convulsive therapy : E. C. T.)—इलेक्ट्रिक करेण्ट लगाना—१००-१५० वोल्ट्स वेन के माध्यम से २

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेकेण्ड तक पास की जाती है। इसे तीसरे दिन पुनः दुहराते हैं। ऐसे १०–१५ कोर्स पर्याप्त होते हैं।

○ तीव्र अन्तराबन्ध तथा जड़िमा (Stupor) की अवस्था में इस चिकित्सा-विधि से विशेष लाभ मिलता है।

निर्देश—ई० सी० टी० चिकित्सा के साथ लार्गेक्टिल तथा सामाजिक चिकित्सा (Social measures) साथ-साथ चलानी चाहिए।

व्यावसायिक चिकित्सा (Occupational therapy)—

○ जिन रोगियों में अन्तराबन्ध की नवीन औषधियों से लाभ नहीं मिलता है, उनमें यह चिकित्सा लाभकारी होती है। ऐसे रोगी एकाकीपन से और भी विकृत हो जाते हैं। इसके विपरीत जब उन्हें किसी मानसिक चिकित्सालय (Mental hospital) अथवा पागलखाने में भर्ती करा दिया जाता है, तब रोग स्थिर हो जाता है और रोगी अच्छा होने लगता है।

○ चिकित्सालय से मुक्त हो जाने के पश्चात् रोगी को व्यावसायिक तथा सामाजिक कार्यों में लगाये रखना चाहिए। जिससे उनमें पुनः निष्क्रियता एवं अकर्मण्यता की स्थिति उत्पन्न न हो सके।

पागलपन-नाशक अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. एनाटेंसोल (Anatensol) (साराभाई)

मात्रा—२.५ मि० ग्रा०–१० मि० ग्रा०/प्रतिदिन विभाजित मात्रा में प्रति ६-८ घण्टे पर।

नोट—'एनाटेन्सोल डेकानोएट' इञ्जेक्शन भी आता है। प्रयोग-विधि विवरण पत्र के अनुसार।

२. स्केजीन प्लस (Eskazine plus) (स्केलैब)

मात्रा—केवल वयस्कों में १ गोली दिन में दो बार।

३. मेलेरिल (Melleril) (सैण्डोज)

मात्रा—वयस्क–१०-७५ मि० ग्रा० नित्य।

यह १०, २५ और १०० मि० ग्रा० टेबलेट रूप में आती है।

४. ट्राइबिन प्लस (डॉप्सोन फार्मा)

मात्रा—१ गोली दिन में तीन बार १ सप्ताह तक। धीरे-धीरे बढ़ाते हुए ६ गोली प्रति दिन तक करें।

○ इसका 'ट्राइबिन फोर्ट' इञ्जेक्शन भी आता है।

५. जोनिक (Zonic) (ईस्ट फार्मा)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार। मात्रा बढ़ाते हुए ६ गोली प्रतिदिन।

○ यह औषधि तीव्र तथा चिरकारी सभी प्रकार की स्काइजोफ्रीनिया में लाभकारी है।

६. हेलीडोल–१.५ (Helidol–1.5) (विडल शायर)

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१ गोली प्रतिदिन; प्रत्येक ४ दिन बाद मात्रा बढ़ाते हुए।

निषेध—गर्भावस्था में इसका प्रयोग न करें।

७. सोमेटिन (Sometin) ५ मि० ग्रा० टेबलेट (खण्डेलवाल)

मात्रा—२-१० मि० ग्रा० २-४ बार नित्य।

अतिरिक्त औषधियाँ—राओडिक्सिन, ल्यूमीनाल, एडल्फेन, एल्डोमेट, अर्कामिन-एच, ब्रिनड्रिन, इस्बैटाल आदि। ⊡

मानसिक विकार 5/3

अनिद्रा
(Insomnia)

पर्याय—अनिद्रा, उन्निद्रता, नींद न आना।

परिचय—लेट जाने पर जब नींद बहुत देर से आये या नींद के दौरान नींद बार-बार टूटे अथवा प्रातः ३ बजे के लगभग टूट कर फिर बिलकुल न आये। साथ ही रात को उन्निद्रत रहने के कारण व्यक्ति बेचैन रहे और अति कष्ट का अनुभव हो, तो इसे अनिद्रा (Insomnia) कहते हैं।

B 'नींद न आना' प्रायः अन्य रोगों का एक लक्षण ही होता है।

कारण (Etiology)—१. उदर में वायु की अधिकता।

२. चिन्ता, शोक तथा मनःसन्ताप।

३. यकृत् की क्रिया में मन्दता।

४. अधिक रक्तदाब।

५. प्रियजन का वियोग।

६. किसी प्रकार की हानि का होना।

७. मस्तिष्क में रक्त की अधिकता तथा पैर ठंडे होना।

८. मानसिक उत्तेजना।

९. अधिक उपवास।

१०. बड़ी आयु के लोगों में सेरिब्रल आर्टीरियोस्क्लेरोसिस के कारण मस्तिष्क को रक्त कम मिलने से।

११. अधिक भोजन।

१२. चाय, कॉफी का अधिक सेवन।

लक्षण (Symptoms)—१. इस रोग में रोगी को नींद नहीं आती है। चिन्ता प्रबल होने से नींद देर से आती है।

२. विषाद या अधिक दुःख की स्थिति में सुबह नींद शीघ्र टूट जाती है और फिर नहीं आती है।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Public Domain.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. निद्रा न आने से शरीर और मन थके-से रहते हैं। रोगी में कार्य करने की शक्ति भी घट जाती है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी को अंधेर में रखें।

२. चाय-कॉफी का सेवन न करें।

३. शाम के समय कुछ परिश्रम अवश्य करें।

४. पैरों को गर्म जल से धोना।

५. सोने से पूर्व २५–५० मि० ली० बढ़िया ह्विस्की लेने से नींद अच्छी आती है।

६. मूल कारण को दूर करें। साथ ही रोगी को मनोविकारों से बचायें।

७. सोने से पूर्व मनपसन्द मनोरंजन भी लाभकारी होता है।

८. रात्रि के समय एक कप गर्म दूध लेना चाहिए।

९. रात को नींद न आये तो विस्तर पर मात्र पड़े न रह कर किसी अच्छे ग्रन्थ का अध्ययन करना चाहिए। इससे भी मन की एकाग्रता होने पर नींद आ जाती है।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

१. नानबार्बीटयूरेट्स (Non-barbiturates)—

℞ मेथिल पेण्टीनोल (Methyl Pentinol)

व्या० नाम—ओब्लीवॉन-सी (Oblivon-C)

मात्रा—२–४ ओवेट्स (१०० मि० ग्रा० प्रति) मुख द्वारा दिन में १–२ बार।

नोट—○ यह ३० मिनट में अपना कार्य प्रारम्भ कर देती है और ४ घण्टे में इसका प्रभाव समाप्त हो जाता है।

अथवा—ग्लूटेथिमाइड (Glutethimide)

व्या० नाम०—डोरीडेन (Doriden)

मात्रा—२ गोली (५०० मि० ग्रा०) रात में सोते समय।

अथवा—१ गोली (२५० मि० ग्रा०) २–३ बार आवश्यकतानुसार।

चेतावनी—गर्भावस्था में इस औषधि का प्रयोग न करें।

अथवा—मेप्रोबामेट (Meprobamate)

व्या० नाम—इक्वानिल (Equanil) तथा मिल्टोन (Milton)

मात्रा—२००–४०० मि० ग्रा० आवश्यकतानुसार।

अथवा—प्रोमेथाजीन हाइड्रोक्लोराइड (Promethazine Hcl.)

व्या० नाम—फेनरगान (Phenergan)

मात्रा—१ चम्मच (५ मि० ग्रा०) बच्चों में मुख द्वारा।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ तत्काल लाभ के लिए—१ एम्पुल (२५ मिग्रा०) इन्जेक्शन रूप में।
अथवा—ट्राइक्लोफोस सोडियम (Triclofos sodium)
व्या० नाम—ट्रिक्लोरिल (Tricloryl)
मात्रा—वयस्क—२ गोली (५०० मि० ग्रा० प्रति गोली)
बालक—सीरप ½–१ चम्मच।
शिशु—¼–½ चम्मच।
अथवा—पैराल्डिहाइड (Paraldehyde)
मात्रा—५–१० मि० ली० गहरे मांसपेशी में।
○ इसे १६–३२ मि० ली० की मात्रा में ३०–६० मि० ली० 'ओलिव ऑयल' में मिलाकर गुदामार्ग से भी दिया जा सकता है।

विशेष—यह एक उत्तम हानि रहित नींद लाने वाली औषधि है।

२. बार्बीट्यूरेटस (Barbiturates)—

℞ फीनोबार्बीटोन (Phenobarbitone)
व्या० नाम—गार्डीनल, ल्यूमीनाल।
१. मुख द्वारा—३०–६० मि० ग्रा० दिन में २–३ बार।
२. इन्जेक्शन रूप में—२०० मि० ग्रा० I/M सोडियम फीनोबार्बीटोन के रूप में।

अथवा—बार्बीटोन सोडियम
व्या० नाम—मेडीनाल (Medinal) } Long acting drug.
मात्रा—१००-२०० मि० ग्रा० मुख द्वारा।

अथवा—एमाइलो बार्बीटोन
व्या० नाम—एमीटाल (Amytal) } Short acting drug.
मात्रा—५०-१५० मि० ग्रा० १-२ बार।

अथवा—बूटोबार्बीटोन (Butobarbitone)
व्या० नाम०—सोनेरिल (Soneryl) } Short acting drug.
मात्रा—१ गोली (१०० मि० ग्रा०) १-२ बार नित्य।

अथवा—क्वाइनल बार्बीटोन
व्या० नाम—सेकोनाल (Seconal) } Short acting.
मात्रा—५०-१०० मि० ग्रा० दिन में २-३ बार।

लाक्षणिक चिकित्सा—

१. तीव्र दर्द के कारण रोगी को नींद न आने पर—'मॉर्फीन सल्फेट' या 'मॉर्फीन हाइड्रोक्लोराइड' का इन्जेक्शन दें। अथवा १० और २० मि० ग्रा० की गोलियाँ दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. पाचन-क्रिया के दोष तथा पेट में गैस उत्पन्न होने के कारण नींद न आने पर—आधे गिलास गरम पानी में ६०० से १२०० मि० ग्रा० सोडाबाइ कार्ब घोल कर पिलायें।

३. मानसिक उत्तेजना, चिन्ता, दुःख, मस्तिष्क में रक्त की अधिकता और दर्द के कारण नींद न आने पर—लार्गेक्टिल (Largactil) (M. B.) २५ मि० ग्रा० की १-२ गोली सोते समय दें।

४. वृद्ध रोगियों की आधी रात के बाद नींद खुल जाने पर—'इक्वैनिल' (Equanil) (वीथ कं०) १ गोली खिलाने से १५-२० मिनट में नींद आ जाती है।

मिश्रित औषधि चिकित्सा (Combination therapy)—

१. ℞ ट्रिक्लोरिल (ग्लैक्सो)	२ चम्मच
हैलीडॉल (विडल शायर) ०·२५ मि० ग्रा०	१ गोली
बेबिडॉक्स (अब्बोट)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा रात में सोते समय।	१ मात्रा
२. ℞ सोनेरिल (एम० बी०)	१ गोली
लार्गेस्टिल (एम० बी०)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा रात में सोते समय।	१ मात्रा
३. ℞ टेबलेट निरवेन (F. D. C.)	१ गोली
एक्वेनिल (वीथ)	१ गोली
सीलिन (ग्लैक्सो) १०० मि० ग्रा०	१ गोली
ऐसी १ मात्रा रात में सोते समय जल से।	१ मात्रा
४. ℞ रेस्टिल (सिपला)	१ गोली
सेडामॉन (सिपला)	१ गोली
कैल्मपोज़ (रैनबैक्सी)	१ गोली
पोलिबियॉन (मर्क)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा सोते समय जल से दें।	१ मात्रा
○ इससे गहरी निद्रा आती है।	
५. ℞ यूनीइन्जाइम (यूनिकेम)	१ गोली
सोडा मिण्ट (बूट्स)	२ गोली
सीलिन (ग्लैक्सो) ५०० मि० ग्रा० की	½ गोली
रेस्टिल (सिपला)	१ गोली
	१ मात्रा

○ सबको मिलाकर पीस लें। ऐसी १ मात्रा दिन में दो बार भोजन के बाद तथा रात में सोते समय जल से।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ पाचन-संस्थान के विकार, यथा—अपचन तथा उदर गैस आदि के कारण नींद न आने पर लाभकारी है।

६. ℞ प्रोडॉर्म (कार्टर वैलेस)	१ गोली
मिलटॉन (,, ,,)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा रात में सोते समय।	१ मात्रा
७. ℞ टेबलेट गार्डीनल (एम० बी०)	१ गोली
टेबलेट सोनेरिल (एम० बी०)	१ गोली
बी-कॉम्प्लेक्स (ग्लैक्सो)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा रात में सोते समय जल से।	१ मात्रा
८. ℞ क्वेल (Quell) (स्टैडमैड)	१ गोली
मिलीब्रोम (मेडिनेक्स)	½ गोली
मल्टी-विटाप्लेक्स (फाइजर)	१ कैपसूल
ऐसी १ मात्रा सोने से पूर्व।	१ मात्रा
९. ℞ हिप्नोटेक्स (P. C. I.) ५ मि० ग्रा०	१ गोली
लिब्रियम (रोशे)	१ गोली
बीकोजाइम फोर्ट (रोशे)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा रात में सोते समय।	१ मात्रा
१०. ℞ एनाटेशॉल (साराभाई)	२ गोली
नाइट्रावेट (A. F. D.)	१ गोली
बेटोनिन (बूट्स)	१० मि० ली०
ऐसी १ मात्रा नींद न आने पर जल से।	१ मात्रा

अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. हिप्नोटेक्स कैपसूल (P. C. I.)
मात्रा—५-१० मि० ग्रा० रात में सोते समय।
बालक—२.५–५ मि० ग्रा० सोते समय।
२. निरवेन (Nirven) (F. D. C.)
मात्रा—५-१० मि० ग्रा० रात में सोते समय।
३. नाइट्रावेट (Nitravet) (एग्लो-फ्रेंच कं०)
मात्रा—५-१० मि० ग्रा० सोते समय।
कम उम्र वालों को—२.५–५ मि० ग्रा० सोते समय।
शिशु—२·५ मि० ग्रा० सोते समय।
४. रेस्टिल (Restyl) (सिपला)
मात्रा—१ गोली सोते समय।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निषेध—हेपेटिक विकार, इपीलेप्सी तथा एक्लेम्प्सिया में प्रयोग न करें।

५. सेडामोन (Sedamon) (सिपला)

मात्रा—१-२ गोली रात में सोते समय।

६. सेडिन (Sedyn) (एम० एम० लेबो०)

मात्रा—१-२ गोली रात में सोते समय।

○ इञ्जेक्शन रूप में—१-२ मि० ली० आवश्यकतानुसार।

नोट—'कम्पोज', 'वेस्पारेक्स' तथा 'सिक्विल' भी निद्राकारक औषधियाँ हैं। यह चिन्ता रोग में भी लाभकारी है।

७. आप्टेलीडोन (Optalidon) (सैण्डोज कं०)

मात्रा—दर्द के कारण नींद न आने पर २ गोली सोते समय दें।

८. वास्पेरेक्स (Vasparex) (यूनि० यू० सी० बी०)

मात्रा—१ गोली रात में सोते समय।

९. प्रोडोर्म (Prodorm) (कार्टर-वैलेस)

मात्रा—१ गोली रात में सोते समय दें।

निषेध—गर्भवती, दूध पिलाने वाली माता तथा यकृत् के रोगी में इसका प्रयोग न करें।

१०. डोल्विरॉन (Dolviran) (बेयर कं०)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार अथवा रात्रि में सोते समय।

मानसिक विकार 5/4

उन्माद/पागलपन
(Mania/Insanity)

पर्याय—उन्माद, पागलपन, विक्षिप्ति, उन्मत्तता आदि।

परिचय—This is a condition of continuously excited or restless state with a pathological combination of elevation of mood and energy expenditure showing flight of ideas or lacking in control.

○ मन की स्वाभाविक अवस्था में गड़बड़ी हो जाने को ही मेनिया कहते हैं। यह रोग युवावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था (२५ से ४० वर्ष) तक अधिक होता है।

कारण (Etiology)—

(१) आकारिकी पूर्वप्रवृत्ति (Constitutional predisposition)—यह इसका प्रमुख कारण है अर्थात् अत्यधिक परिश्रम, उद्वेग, अधिक खाना-

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीना, इन्द्रिय परिचालन, शराब तथा गाँजा का अधिक सेवन, स्वास्थ्य-हानि, निराशा एवं मृगी आदि।

(२) **पूर्वप्रवर्तक कारण** (Predisposing causes)

१. पूर्व पुरुषों को उन्माद रोग रहना।

२. मस्तिष्क या मेरुदण्ड की यान्त्रिक खराबियाँ।

३. शारीरिक गहरी चोट।

४. भयानक घटनाओं वाले उपन्यास आदि का पढ़ना।

५. अनुचित शिक्षा।

लक्षण (Symptoms)—१. एलीवेशन ऑफ मूड।

२. बेकार ही हाथ-पैरों को चलाना अथवा बेकार ही बोलना।

३. चेहरे तथा अंगों की भावभंगिमा बदलती हुई होना।

४. गलत देखना, गलत बोलना, अंट-संट बकना अथवा बड़बड़ाना।

५. नींद न आना (Insomnia) और ऊँचे-ऊँचे विचारों को लेकर उड़ना।

६. रोगी की बुद्धि विकृत हो जाती है। उसका किसी काम में मन नहीं लगता है।

७. क्रोध, भय, प्रसन्नता, शोक, रोना आदि मानसिक भावों की अधिकता।

८. अपनी इच्छाशक्ति को काबू में न रखना।

९. आत्मदाह करने की इच्छा।

१०. रोगी भोजन तथा अपनी ड्रेस की परवाह नहीं करता है।

११. रोगी बातों का क्रम योजनाबद्ध रूप में प्रारम्भ करता है और बिना एक को समाप्त किये ही कूद कर दूसरी बातों पर चल जाता है।

१२. रोगी धीरे-धीरे दुर्बल हो जाता है।

१३. प्रिय जनों का अनादर करना।

१४. लगातार प्रलाप करना।

१५. कृशता (Emaciation)।

○ नींद न आना एवं खाने की इच्छा न होना—इस रोग का प्रधान लक्षण है।

प्रकार (Types)—(१) **साधारण उन्माद** (Simple mania)—

१. रोगी में स्वयं का संतुलन समाप्त हो जाता है।

२. उसकी निर्णय करने की शक्ति समाप्त हो जाती है।

३. रोगी विशेष बातूनी हो जाता है।

(२) **तीव्र उन्माद** (Acute mania)—

१. इस प्रकार का उन्माद रोग एकाएक कुछ रोगों के आक्षेप की अवस्था

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में अथवा सेण्ट्रल नर्वस सिस्टम के रोगों में (जैसे–जी० पी० ओई०) अथवा कुछ मनोवैज्ञानिक विकारों आदि में उत्पन्न हो जाता है।

२. रोगी बराबर बेचैन रहता है अथवा चिरकालिक अवस्था में बदल जाता है।

३. रोगी को नींद नहीं आती है।

४. रोगी कुछ माह बाद स्वस्थ हो जाता है अथवा चिरकालिक उन्माद में बदल जाता है।

(३) **चिरकालिक उन्माद** (Chronic mania)—

१. यह प्रकार विशेष रूप से मध्यम आयु में मिलता है।

२. इसमें बेचैनी, उत्तेजना आदि उपस्थित रहते हैं।

३. इस अवस्था के रोगी में क्षुधा पुनः लौट आती है।

४. श्रवण-विभ्रम (Auditory hallucination) प्रायः उपस्थित रहता है।

निदान (Diagnosis)—रोगी के कार्यकलाप तथा विचारशक्ति, भ्रम, (Illusion), विभ्रम (Hallucination), भ्रान्त विश्वास (Delusion) आदि लक्षणों के द्वारा इसे आसानी से पहचाना जा सकता है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. जन्म का पागलपन प्रायः ठीक नहीं होता है।

२. युवकों तथा प्रौढ़ों का रोग उचित चिकित्सा से ठीक हो जाता है।

चिकित्सा—(१) **सामान्य चिकित्सा व्यवस्था**—

१. ऐसे रोगी को किसी मेण्टल हॉस्पिटल में भर्ती करा देना ही उतम है।

२. शय्या पर विश्राम, अच्छी भोजन व्यवस्था (पौष्टिक आहार, मल्टी विटामिन्स आदि), खुली हवा का सेवन लाभदायक है।

३. मूल कारण को दूर करना आवश्यक है।

४. नाड़ी-संस्थान को सबल तथा उत्तेजित करें।

५. रोगी को हलका-फुलका कार्य कराकर उसे बराबर किसी न किसी कार्य में लगाये रखना चाहिए।

६. शीतल जल से स्नान करायें।

७. रोगी के चारों तरफ के लोगों को सावधान करा देना चाहिए कि वे रोगी के आसपास के वातावरण को शान्त रखें, जिससे रोगी उत्तेजित न हो।

(२) **औषधि चिकित्सा**—इस रोग की चिकित्सा शामक (Sedative) तथा प्रशामक (Tranquillisers) औषधियों से की जाती है।

℞ टेबलेट सेरीनेस (Tal. Serenace) ५ मि० ग्रा०

मात्रा—½ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—टेबलेट लार्गेक्टिल (Tab. Largactil)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१-१ गोली दिन में ३ बार।

साथ ही—टेबलेट लिथानेट (Tab. Lithanate) २५ मि० ग्रा०

मात्रा—½ गोली दिन में ३ बार।

○ **नोट**—यदि रोगी में उत्तेजना के लक्षण विद्यमान हों तो—

इलेक्ट्रो कन्वल्सिव थेरापी (E. C. T.) का प्रयोग करना चाहिए।

मेनिया की चिकित्सा निम्न व्यवस्थानुसार भी की जाती है—

१. **डीयूर्नल सेडाटिव्स** (Diurnal sedatives)—

℞ एमाइलो बार्बीटोन (Amylo Barbitone)

मात्रा—५० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

फीनोबार्बीटोन (Phenobarbitone)

मात्रा—१५ मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

मिथाइल पेण्टीनोल (Methyl Pentynol)

व्या० नाम—ओब्लीवोन (Oblivon)

मात्रा—२५०-५०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

२. **नॉक्टर्नल सेडाटिव्स** (Nocturnal sedatives)—

(i) एमाइलो बार्बीटोन—१००–२०० मि० ग्रा०।

(ii) ओब्लीवोन—१–२ ग्राम।

(iii) सोनेरिल—१००–२०० मि० ग्रा०।

(iv) नेम्बूटाल सोडियम—१००–२०० मि० ग्रा०।

(v) सेकोनाल—१००–२०० मि० ग्रा०।

३. **प्रशामक** (Tranquillisers)—

इनका उपयोग 'डीयूर्नल सेडेटिव' तथा नॉक्टर्नल सेडेटिव के स्थान पर किया जाता है।

℞ मेप्रोबामेट (Equanil)

मात्रा—४०० मि० ग्रा० दिन में ३ या ४ बार।

अथवा—क्लोरडायजिपोक्साइड (लिब्रियम, एसीब्रियम)

मात्रा—५–१० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

अथवा—डायजीपाम (Calampose, Valium) ५-१० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

४. **इलेक्ट्रो कन्वल्सिव थेरापी**—इसका उपयोग भी पर्याप्त लाभकारी होता है।

उन्माद या पागलपन में प्रयुक्त होने वाली अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

(१) **टेबलेट्स**—१. गार्डीनल (M. B.)—१ गोली दिन में ३ बार।

२. ल्यूमिनल (बायर)—१ गोली दिन में ३ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. लार्गेक्टिल (M. B.)—२५-५० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३-४ बार।

४. एडानिल (बायर)—१ गोली दिन में ३-४ बार।

५. रैलफेन (बंगाल केमिकल)—१-३ गोली खाने से पूर्व दिन में ३-४ बार।

६. ट्रिक्लोरिल (ग्लैक्सो)—काबू में लाने के लिए १ गोली।

७. ल्यूपीब्रियम (ल्यूपिन कं०)—२ गोली दिन में ३-४ बार।

○ इससे रोगी काबू में आ जाता है।

८. हिप्टोजीन (स्टैण्डर्ड कं०)—१ गोली दिन में ३-४ बार तथा १ गोली सोने से पूर्व।

९. कार्बीटाल (P. D.)—नींद लाने के लिए सोने से पूर्व १ कैपसूल।

१०. ट्रैन्कोजीन (ला मेडिका)—१ गोली दिन में ३-४ बार।

११. न्यूलेक्टिल (M. B.)—१ गोली दिन में ३-४ बार।

१२. इस्बैटल (बी० डब्लु०)—प्रारम्भ में १० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३ बार दें। तत्पश्चात्—अधिकतम २०० मि० ग्रा० प्रतिदिन।

१३. एल्डोमेट (M S D) २५० मिग्रा० की १ गोली दिन में ३-४ बार।

१४. एडल्फेन (सिबा-गैगी)—१-२ गोली दिन में २-३ बार।

(२) पेय (Syrup)

१. इलिक्सिर सर्पाब्रोम (बंगाल इम्युनिटी)—२-४ चम्मच दिन में ३-४ बार।

२. ब्रोमेलिन इलिक्सिर (A. F. D.)—२-३ चम्मच दिन में ३-४ बार।

३. लार्गेक्टिल (M. B.)—२-२ चम्मच दिन में कई बार।

४. ब्रोमो राउलफिन (इस्टर्न ड्रग)—३-४ चम्मच दिन में ३-४ बार।

(३) इञ्जेक्शन—

१. गार्डीनल सोडियम (M. B)—१ इञ्जेक्शन I/M उत्तेजना कम करने हेतु।

२. ल्यूमिनल सोडियम—१-३ मि० ली० S/C

३. सर्पासिल (सीबा-गैगी)—१-२·५ मि० ग्रा० का इञ्जेक्शन मांस में एक या दो बार।

४. हायोसीन हाइड्रोब्रोमाइड ०·३२ से ०·६५ मिग्रा० का इञ्जे० S/C

○ इसके लगाने से रोगी का जोश कम हो जाता है और उसको गहरी नींद आती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पागल रोगी की स्थिति—रोगी की अत्यधिक उत्तेजनशीलता (Irritability) आक्रामक व्यवहार तथा उसके जिद्दीपन के कारण परिवार के सदस्यों एवं सगे-सम्बन्धियों तथा समाज के लिए सिरदर्द हो जाता है।

निर्देश—○ ऐसी स्थिति में चिकित्सक एवं सहयोगियों को पर्याप्त धैर्य तथा सूझबूझ के साथ औषधि देने के लिए उसे तैयार करना चाहिए।

○ उग्र स्वरूप के रोगियों को पागलखाने या मानसिक चिकित्सालय में अवश्य भर्ती करा देना चाहिए।

लाभ की आशा—सीमित लक्षण होने पर औषधि-चिकित्सा से २ माह के अन्दर ही लाभ की अपेक्षा की जाती है।

पागलपन की विशिष्ट चिकित्सा—

℞ क्लोरप्रोमेजीन (Chlorpromazine)

व्या० नाम—लार्गेक्टिल (Largactil) १५०-६०० मि० ग्रा०

उग्रावस्था में—हैलोपैरिडॉल (Haloperidol)

व्या० नाम—सेरिनेस (Serenace)

प्रारम्भ में—१·५ मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

अथवा—सेरिनेस इञ्जेक्शन ५-१० मि० ग्रा० दिन में २ बार।

○ इससे ४८ घण्टे में ही नियंत्रण हो जाता है। इसके पश्चात् औषधि की मात्रा घटा कर साधारण मात्रा (Maintenance dose) पर रखा जाता है।

चेतावनी—कभी-कभी 'हैलोपैरिडाल' औषधि से रोगी में विकृतजन्य उपद्रव हो जाते हैं। ऐसी अवस्था में औषधि बन्द करके 'ऑर्फेनाड्रिन' (Orphenadrine) जो बाजार में 'डिसिपाल' (Disipal) के नाम से मिलती है, का प्रयोग करना चाहिए।

अति तीव्र रोगी में—लार्गेक्टिल इञ्जे० २५; ५० और १०० मि० ग्रा० की मात्रा में।

सावधानी—ध्यान रहे कि इस औषधि से रोगी का ब्लड-प्रेशर न गिरने पाये।

उत्तेजना की स्थिति में—

℞ पैरल्डिहाइड—२·५ मि० ली० I/M दें।

○ इसका गुदामार्ग से एनिमा भी दिया जा सकता है।

अथवा—℞ एस्काजीन (Eskazine)

मात्रा—१·५ मि० ग्रा० I/M।

अथवा—○ डेसेरिल (Deseril)—यह एक नवीनतम औषधि है, जिसके प्रयोग से रोगी के पागलपन में अति शीघ्र नियंत्रण पाया जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष चेतावनी—यह देखा गया है कि कभी-कभी इसके प्रयोग से 'रिट्रो-पेरीटोनियल फाइब्रोसिस' नामक रोग हो जाता है।

लीथियम चिकित्सा—अन्य उपचारों से लाभ न मिलने पर इस चिकित्सा का उपयोग किया जाता है। इसके लिए—

℞ लीथियम कार्बोनेट (Lithium Carbonate)

प्रारम्भिक मात्रा—२५० मि० ग्रा० प्रतिदिन। इस मात्रा को आवश्यकतानुसार—७००–१·००० मि० ग्रा० प्रतिदिन की दर से बढ़ाया जाता है।

साथ ही—इसके बीच-बीच में 'प्रायडेल' (Priadel)

मात्रा—४०० मि० ग्रा० दिन में २ बार।

नोट—उपरोक्त मात्रा में दुष्परिणामों की सम्भावना नहीं रहती है। कभी-कभी हाथ-पैरों में कम्पन होने लगता है, जो कुछ समय बाद स्वयं शान्त हो जाता है।

विद्युत् आक्षेपी (E. C. T.) चिकित्सा—जब 'लार्गेक्टिल' तथा 'हैलोपैरिडाल' औषधियों से लाभ नहीं मिलता है तब इस चिकित्सा का उपयोग किया जाता है। ई० सी० टी० का उपयोग सप्ताह में २ बार किया जाता है।

लाभ न होने पर—पुनः 'हैलोपैरिडाल' औषधि का उपयोग करने पर स्थायी लाभ मिल जाता है।

उपरोक्त सभी चिकित्सा-विधियाँ फेल होने पर—'ल्यूकोटोमी' (Leucotomy) का अवलम्बन किया जाता है। इस विधि में रोगी के सिर के दोनों ओर कनपटियों (Temples) में एक छोटा छिद्र बना दिया जाता है। इस छिद्र से छोटी छुरी डालकर मस्तिष्क के 'फ्रण्टल लोब' और 'थेलमस' को संयुक्त करने वाले तंत्रिका तन्तुओं को काट दिया जाता है।

याद रखिये—इस विधि का उपयोग असाधारण अवस्था में ही किया जाता है।

पागलपन की मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१. ℞ कम्पोज (रैनबेक्सी)	२ गोली
प्रोडॉर्म (कॉर्टर-बैलेस)	१ गोली
एक्वानिल (जॉन-वीथ)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में दो बार जल से।	१ मात्रा
२. ℞ मेलेरिल (सैण्डोज) २५ मि० ग्रा०	१ गोली
एटारेक्स (यूनिकेम) २५ मि० ग्रा०	१ गोला
ऐसी १ मात्रा दिन में दो बार जल से।	१ मात्रा

○ इससे उत्तेजना शान्त होकर मानसिक स्थिति में सुधार होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. ℞ बिलीब्रोम (मेडिनेक्स)	१ गोली
लार्गेक्टिल (एम० बी०) ५० मि० ग्रा०	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल से ।	१ मात्रा

○ इस योग से जंजीरों में बँधे पागल रोगी भी ठीक होते देखे गये हैं ।

४. ℞ लिब्रियम (रोशे)	१ गोली
ट्रिक्लोरिल (ग्लैक्सो)	५ मिली०
क्वैल (स्टेडमेड)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार ।	१ मात्रा

○ इससे मानसिक अवस्था में सुधार होता है । □

मानसिक विकार 5/5

मद्यसार व्यसन
(Alcohol Addiction)

परिचय—An alcohol addict can be defined as one who has lost control over his drinking and has a compulsion to keep on drinking with deterioration of emotional social work activities.

○ मद्यपान-व्यसन (शराब पीना) एक मानसिक रोग है ।

कारण (Etiology)—१. मद्यपान युक्त वातावरण (Alcoholic environment) ।

२. ऐसे व्यक्ति जो एन्जाइटी से पीड़ित हों ।

३. मनोरोगमय व्यक्ति (Psychopathic persons) ।

लक्षण (Symptoms)—१. सीमित और थोड़ी मात्रा में मद्य (शराब) पीने वालों में सबसे पहले गर्मी, आनन्द और आह्लाद उत्पन्न होता है ।

२. श्वास-प्रश्वास की क्रिया तथा नाड़ी की गति में तीव्रता आ जाती है और शराब पीने वाला अपने में स्फूर्ति अनुभव करता है ।

३. अधिक पी लेने पर व्यक्ति की विचारशक्ति और निर्णय करने की क्षमता क्षीण तथा कुंठित हो जाती है ।

४. मानसिक क्रिया को नियन्त्रित करने वाले मस्तिष्क के उच्च केन्द्र असम्बद्ध हो जाते हैं । अर्थात् शराब पीने वाले की आवाज तीव्र तथा विचार असंयत और अनुपयुक्त हो जाते हैं ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. परीक्षण के आधार पर यह देखा गया है कि वास्तव में ऐसे शराबी रोगियों की शारीरिक तथा मानसिक क्षमता काफी कम हो जाती है।

६. थोड़ी मात्रा में मदिरा पीने से रोगी में स्फूर्ति तथा आह्लाद उत्पन्न होता है। ज्यों-ज्यों मात्रा बढ़ती जाती है, रोगी में उद्दण्डता, चिड़चिड़ापन तथा डींग हाँकने की प्रवृत्ति परिलक्षित होने लगती है।

७. रक्त में मदिरा की १% मात्रा होने पर व्यक्ति का अपने व्यवहार और कार्यों पर से नियन्त्रण समाप्त हो जाता है। जब रक्त में २% से अधिक मदिरा का अंश पहुँच जाता है, तब रोगी व्यक्ति अपने को सम्भाल सकने में पूर्ण असमर्थ हो जाता है और चलने में उसे दूसरों की सहायता की आवश्यकता पड़ती है। ऐसा व्यक्ति कभी रोता है, कभी हँसता है और कभी ऊँघने लगता है। धीरे-धीरे उसमें विमूढ़ता और निद्रा आ जाती है।

८. उपरोक्त अवस्था में रोगी कुछ मिनटों से लेकर कभी-कभी घण्टों तक रहता है। उसकी समस्त क्रियाएँ अस्त-व्यस्त हो जाती हैं।

९. कभी-कभी रोगी में अपराध, हत्या या आत्महत्या तक की प्रवृत्ति देखी जाती है।

१०. कभी-कभी शराब पीने वाले व्यक्ति में रक्त के अन्तर्गत शर्करा की मात्रा कम हो जाती है, जिससे ऐसे व्यक्ति में पैथोलॉजिकल इण्टॉक्सीकेशन' की अवस्था उत्पन्न हो जाती है।

११. अधिक मद्यपान करने वाले व्यक्ति की मदिरा जब छुड़ा दी जाती है, तब उसमें 'कम्पोन्माद' (Delirium tremens) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। कभी-कभी हफ्तों या महीनों बाद भी इस रोग के आवेग आते हैं। वेग के शुरु होते ही नींद न आना, व्याकुलता, भूख की कमी आदि लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। इसके बाय बुखार आता है और जीभ पर मैल की सफेद तह जमा हो जाती है। रोगी को मलावरोध रहता है। नाड़ी की गति प्रारम्भ में ठीक रहती है, पर शनैःशनैः मन्द होती जाती है। अन्त में क्षीणता, हाथ-पैरों में कम्पन तथा वाणी-विकार उत्पन्न हो जाता है।

○ रोगी भयभीत तथा सशंकित रहता है। रोगी भूत-प्रेत आदि के भयानक दृश्यों के निर्मूल भ्रम (Hallucination) से ग्रस्त रहता है। रोगी की सभी संवेदनाएँ समाप्त हो जाती हैं। कभी-कभी रोगी में पहचानने की शक्ति भी समाप्त हो जाती है। उसे तुरन्त की घटनाओं का भी स्मरण नहीं रहता।

१२. कई वर्षों तक बराबर मद्यपान करते रहने से कभी-कभी रोगी में व्यक्तिगत विघटन के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। इसके सामान्य लक्षणों के अन्तर्गत रोगी में—

 CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ चिड़चिड़ापन, आवेगजन्य क्रूरता, स्मृतिभ्रंश, अतिरंजित संवेदनशीलता, उत्साहहीनता, इच्छा-शक्ति की कमी, परिवार के लोगों के प्रति उपेक्षात्मक भाव आदि मिलते हैं।

○ इसके अतिरिक्त अन्य लक्षणों में—नाक और चेहरे पर लाली, शोथयुक्त मासपेशियाँ, कलेजे का बढ़ना आदि लक्षण भी मिलते हैं।

१३. मद्यपान के कारण मद्यपी रोगी में अनेक मानसिक विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। किसी में अस्थिर व्यामोह, किसी में स्थिर व्यामोह, किसी में विषाद तो किसी में मानसिक अस्तव्यस्तता के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

अन्य लक्षण—१. मदिरा-सेवन के बाद रोगी की स्मरणशक्ति क्षीण हो जाती है। मुख से मदिरा की दुर्गन्ध आती है। आमाशय में जलन, मितली तथा वमन आदि लक्षणों की उपस्थिति मिलती है।

२. रोगी में कण्ट्रोलिंग पावर समाप्त हो जाता है।

३. चिरकारी अवस्था में रोगी कई-कई दिनों तक निरन्तर पीता रहता है और अन्य सभी वस्तु को त्याग देता है।

४. अन्त में रोगी के अन्तर्गत मदात्यय (Alcoholism) के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। इसके अन्तर्गत—

नींद कम आना, रात्रि में भयंकर स्वप्न देखना, यकृद् वृद्धि, बेचैनी, अनाप-सनाप बकना, मूत्र में अल्बुमिन की वृद्धि, भूख कम लगना, हाथों में कँपकँपी, ब्लड-प्रेशर का बढ़ना, मूत्र में अल्बुमिन तथा शर्करा की उपस्थिति, हाथ-पैर और छाती का सूखना तथा जलोदर की उपस्थिति।

नोट—ये सभी लक्षण मद्यपान-व्यसन के अन्तर्गत ही आ जाते हैं।

एक्यूट ऐल्कोहॉल इण्टॉक्सीकेशन—

१. रोगी के मुख से मदिरा की गन्ध आती है।
२. आमाशय में जलन (Gastric irritation)।
३. वमन और मितली (Vomiting and nausea)।
४. असम्बद्ध वार्ता एवं असमंजन (Incoordination)
५. अल्प तनाव (Hypotonia) तथा विषादयुक्त प्रतिक्षेप।
६. पुतली सामान्य रहती है अथवा फैल जाती है।

गम्भीर इण्टॉक्सीकेशन की अवस्था में—

१. प्रतिक्षेप की कमी (Loss of jerks)
२. पुतली का फैलना।
३. अनियमित श्वासगति।
४. मूर्च्छा (Coma)।
५. मेडुलरी पैरालिसिस के कारण रोगी की मृत्यु।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. सामान्यतया रोगी को चिकित्सालय में भर्ती करा देना चाहिए।

२. मदिरा का सेवन बिलकुल बन्द करा देना चाहिए। उसमें ऐसी भावना पैदा करनी चाहिए, जिससे उसके स्वस्थ होने पर भी यदि उसे मदिरा उपलब्ध हो तो भी वह उसे न पिये।

३. आधारभूत कारणों को दूर करना आवश्यक है। इसके लिए मनश्चिकित्सा (Psychotherapy) करनी चाहिए।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)

रोगी के मद्यपान के लिए उद्यत होने पर—

१. ℞ डाइसल्फिराम (Disulfiram)

मात्रा—१ गोली तत्काल।

○ इसका प्रभाव २४ से ४८ घण्टे तक रहता है। इसके बाद ही रोगी शराब के लिए उद्यत होता है।

अथवा— ℞ कैल्शियम कार्बोमाइड (Calcium Carbomide)

व्या० नाम—एबेस्टेम (Abestem)

मात्रा—५०-१०० मि० ग्रा० तत्काल।

○ यह एक नवीनतम औषधि है।

२. रोगी को विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स युक्त पोषक आहार दें। रोगी को बड़ी मात्रा में विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स I/V द्वारा देना उपयुक्त रहता है।

३. 'क्लोरप्रोमेजीन' तथा 'प्रोक्लोरपेराजीन' का उपयोग आवश्यकतानुसार करें।

४. एपोमॉर्फीन (Apomorphine)—२–८ मि० ग्रा० S/C इञ्जेक्शन रूप में। आवश्यकतानुसार २ घण्टे बाद पुनः दें। इसका ३ दिन का पूरा कोर्स होता है।

५. इण्टॉक्सीकेशन केसिस में—

(i) अनवशोषित विष (Unabsorbed poison) को 'गैस्ट्रिक लेवेज' द्वारा दूर करना।

(ii) हाइपोग्लाइसीमिया को दूर करने के लिए—५०% डेक्स्ट्रोज ५० मि० ली० I/V द्वारा दें।

(iii) यदि रोगी तन्द्रा (Drowsiness) की स्थित में हो तो—5% डेक्स्ट्रोज ड्रिप ४ से ६ घण्टे पर।

(iv) यदि रोगी में इतना करने पर भी सुधार न हो तो—℞ मेनीटोल (Mannitol) २०% को ३५० मि० ली० I/V इन्फ्यूजन रूप में दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(v) उत्तेजना तथा एक्साइटेशन की स्थिति में—डायजीपाम–१० मि० ग्रा० की मात्रा में दें।

अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

टेबलेट—१. पेलोनिन टेबलेट—१ गोली दिन में ३–४ बार।
२. बीकोजाइम फोर्ट—२–३ गोली दिन में ३ बार।
३. सीलिन १० मि० ग्रा०—१ गोली दिन में ३–४ बार।
४. इक्वानिल (Equanil)—१ गोली दिन में ३–४ बार।
५. ट्रान्कोजीन—१ गोली दिन में ३–४ बार।
६. सीक्विल टेबलेट—१–२ गोली दिन में २–३ बार।
७. ल्यूमीनाल—१–१ गोली आवश्यकतानुसार।

सीरप—१. हिपाफोलीन—२–३ चम्मच भोजनोपरान्त।
२. मायनेसीन—१–१ चम्मच दिन में २ बार।

इञ्जेक्शन—१. पिलोनिन—१ एम्पुल मांसपेशीगत (I/M)।
२. बीडोम—२५–५० मि० ग्रा० नित्य मांसपेशीगत। □

मानसिक विकार 5/6

हिस्टीरिया
(Hysteria)

पर्याय—योषापस्मार, अपतंत्रक, गुल्मवायु।

परिचय—This is a form of mental illness characterised by an abnormal emotional reaction associated with deterioration in personality.

○ जब कोई रोगी अपनी इच्छा अथवा आशा के विघात हो जाने के कारण भय की स्थिति में उनको सह लेने पर और समझदारी से काम लेने के स्थान पर अपनी इच्छा अथवा भय के वशीभूत होकर एक अजीब आवेशपूर्ण अथवा असाधारण रूप में नाटकीय व्यवहार करे, तब उसके इस असाधारण व्यवहार (Abnormal behaviour) को हिस्टीरिया कहते हैं। इस रोग में हाथ-पैर और शरीर अकड़ जाते हैं, गला घुटने लगता है, शरीर काँपता है, रोग के दौरे के समय रोगी जोर से हँसने या रोने लगता है, फिर मूर्च्छा आ जाती है। मूत्र त्याग के पश्चात् दौरा दूर हो जाता है।

○ यह रोग विशेषकर कोमल प्रकृति की स्त्रियों में होता है।

आयु (Age)—यह रोग युवा लड़कियों और वयस्क स्त्रियों को अधिक होता है और ४० वर्ष की आयु तक रहता है। परन्तु कई बार बचपन और वृद्धावस्था में भी ऐसा होते देखा जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण (Etiology)—१. पैतृक-परम्परागत-प्रवृत्ति इस रोग का प्रधान कारण है।

२. विवाह सम्बन्धी कोई कष्ट, किसी प्रकार की आर्थिक हानि या अन्य कोई समस्या इस रोग का कारण हो सकता है।

३. माता-पिता का उपदंश रोग, उनका कण्ठमाला से ग्रसित होना और शराबी होना भी उनकी सन्तान में हिस्टीरिया रोग का कारण होता है।

४. नाजुक स्वभाव एवं विलासितापूर्ण जीवन व्यतीत करने वाली युवा स्त्रियों में भी यह रोग होते देखा जाता है।

५. घर के काम-काज से निश्चिन्तता और विलासिता की अवस्था में तीव्र कामेच्छा होने पर भी सहवास प्राप्त न होना, मन में हर समय सम्भोग के विचार रहना, प्रेम व मुहब्बत की कहानियाँ और उपन्यास पढ़ना, अश्लील फिल्में और चित्र देखना, युवा लड़कियों की अधिक समय तक शादी न करना और अपूर्ण मैथुन इस रोग का कारण है।

६. गर्भाशय सम्बन्धी रोग जैसे—मासिकधर्म का रुकना, कम आना अथवा बिलकुल न आना; ल्यूकोरिया, गर्भाशयशोथ, प्रसव के उपरान्त रक्तस्राव का रुक जाना, गर्भाशय टेढ़ा हो जाना आदि विकारों से यह रोग हो जाता है।

७. स्वास्थ्य कमजोर होना, आर्थिक कष्ट, बहुत सख्त परिश्रम, पौष्टिक आहार की कमी तथा दुर्बलता लाने वाले रोगों के कारण भी यह रोग हो जाता है।

८. उत्तेजनात्मक मानसिक जोश, सदमा, मस्तिष्क पर चोट लगना, निराशा, चिन्ता, सम्बन्धियों की मृत्यु तथा मोटर-गाड़ी आदि की दुर्घटना हो जाने के कारण।

९. आमाशय, यकृद् दोष, मलावरोध, अजीर्ण, पेट फूलना, गैस का रोग, शरीर में दूषित तरल का एकत्रित होना आदि भी इस रोग के कारण हैं।

१०. पुरुषों में कामेच्छा की अधिकता किन्तु सम्भोग का अवसर न मिलना, हस्तमैथुन, गुदामैथुन, अधिक मानसिक परिश्रम, अनिद्रा आदि इस रोग के कारण होते हैं।

११. शारीरिक (Physical) और निगेटिव प्रकार के मानसिक दोष इसके प्रधान कारण हैं।

१२. दूसरे लोगों की उपस्थिति में ही मानसिक भावनाओं में उत्तेजना उत्पन्न होने पर रोगी बार-बार वहम में पड़कर स्वयं ही इस रोग को पैदा करने का कारण बन जाता है। ○ सहानुभूति प्रकट करना हिस्टीरिया का दौरा पड़ने में सहायक होता है।

१३. रजोनिवृत्तिकाल (Menopause) में कई स्त्रियों को हिस्टीरिया का दौरा पड़ते देखा गया है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४. डॉ० 'वाइट' ने हिस्टीरिया के दौरों का कारण मानसिक आघात बतलाया है। जैसे किसी स्त्री को बहुत भला-बुरा कहना, गाली-गलौज, अथवा उसके किसी सम्बन्धी या किसी प्रिय जन की मृत्यु के कारण स्त्री इन विकारों को अपने मन में बिठा लेती है और बार-बार सोचने से उसके मन को आघात पहुँचता है, जिसका परिणाम हिस्टीरिया के दौरों के रूप में प्रकट होता है।

○ जब किसी स्त्री की सम्भोग की इच्छा पूर्ण नहीं होती है, तब उसका दुष्प्रभाव मस्तिष्क के वासना केन्द्र पर पड़ता है, जिससे रोगिणी को हिस्टीरिया के दौरे पड़ने लगते हैं।

१५. डॉ० वेविन्सकी के विचार में हिस्टीरिया दुर्बल मस्तिष्क वाले रोगी को एक ही विचार बार-बार सोचने और समझने के कारण होता है।

१६. डॉ० जेनेट का विचार है कि स्त्री के 'सेरिब्रल कॉर्टेक्स' में दोष पैदा हो जाने से हिस्टीरिया रोग हो जाता है।

हिस्टीरिया के कारणों में प्रधानरूप से पारिवारिक इतिहास (Family history), मेण्टल स्ट्रेस (Mental stress) तथा Contitutinal factors होते हैं।

○ निर्बल चित्त वाले व्यक्तियों के मन का बाह्य प्रभावों से शीघ्र प्रभावित हो जाना भी इस रोग का एक प्रमुख कारण प्रतीत होता है। यदि कोई प्रामाणिक व्यक्ति ऐसे व्यक्ति को गलती से यह कह दे कि उसे हिस्टीरिया रोग है अथवा भविष्य में उसे हो सकता है तो उस व्यक्ति पर इस कथन का ऐसा दुष्प्रभाव पड़ता है कि उसको अपने अन्दर हिस्टीरिया रोग का अनुभव होने लगता है।

सारांश में—प्रसिद्ध डॉ० चारकोट की राय में—हिस्टीरिया मस्तिष्क में असाधारण उत्तेजना की दशा है। उनका मत है कि हिस्टीरिया की रोगिणी में कुछ वहम और विचार बैठ जाते हैं जिनको बार-बार सोच कर वह मन में उनका पालन-पोषण करती रहती है; जिससे उसको दौरा पड़ने लगता है।

○ हिस्टीरिया वास्तव में एक विशेष प्रकार का मानसिक व स्नायविक रोग है, जो शारीरिक लक्षणों के रूप में प्रकट होता है।

लक्षण तथा चिह्न—

१. मूर्च्छा एवं आक्षेप—मूर्च्छा (Fit) का होना इस रोग का प्रधान लक्षण है। इसके अतिरिक्त कँपकँपी, आक्षेप (Convulsions), दाँत का बैठ जाना आदि लक्षण होते हैं।

२. मानसिक दशा में असामान्य परिवर्तन—हिस्टीरिया के अधिकांश रोगियों की मानसिक दशा में असामान्य परिवर्तन हो जाता है। इस परिवर्तन की अधिकता या कमी के अनुसार महिलाओं में विभिन्न लक्षण

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होते हैं। स्त्री की इच्छाशक्ति में दोष आ जाता है। रोगिणी स्वयं को नियन्त्रित नहीं कर पाती। वह अपने अनुचित विचारों को ही ठीक समझती है और उनको मनवाना चाहती है।

○ पुरुषों में इस रोग से मानसिक विचारों में हीनता तथा दुर्बलता आ जाती है। साधारण-सी बात पर क्रोधित होना और काबू से बाहर हो जाना आदि लक्षण होते हैं।

३. बात करने का विशेष ढंग—हिस्टीरिया की रोगिणी अपने कष्टों को बहुत अधिक बढ़ा-चढ़ा कर बतलाती है, जो वास्तव में उसको नहीं होते हैं। वह अपने दुःखों में सहानुभूति प्राप्त करने की इच्छुक होती है।

४. स्मृतिनाश—थोड़े समय के लिए स्मृतिनाश हो जाता है।

५. संज्ञा-सम्बन्धी लक्षण—रोगी को अर्धदृष्टि-नाश या पूर्णदृष्टि-नाश का लक्षण हो सकता है।

○ बधिरता, शिरःशूल, चुभने वाला भारी दर्द, एक या दोनों हाथों में संज्ञानाश का लक्षण हो सकता है। किसी-किसी में गूँगेपन का भी लक्षण होता है और उसके खाँसने में आवाज होती है।

६. चेष्टा-सम्बन्धी लक्षण—गले की मांसपेशियों में स्तम्भ होने से गले में अवरोध का लक्षण मिलता है। यह अवरोध रोगी को खाते समय प्रतीत होता है।

○ अन्त में स्तम्भ होने पर आध्मान या अन्त्रशूल का लक्षण मिलता है अथवा श्वासावरोध का लक्षण मिलता है। मूत्र का अवरोध होने पर मूत्राघात के लक्षण प्रकट होते हैं। डायाफ्राम में स्तम्भ होने पर हिचकी उत्पन्न हो जाती है। इसी प्रकार हृदयगत मांसपेशियों में विक्षोभ होने पर धड़कन (Palpitation) के लक्षण होते हैं।

○ मूर्च्छा के साथ-साथ शरीर में रह-रह कर आक्षेप भी होने लगते हैं। कभी-कभी रोगी अपनी ऐच्छिक मांसपेशियों में संकोच उत्पन्न करके पक्षाघात के समान लक्षण प्रकट करता है। किसी-किसी रोगी में अनेक प्रकार के दौरे (Fits) या स्फुरण (Twitching) के लक्षण प्रकट होते हैं।

○ इस रोग में कभी रोगी हँसता है, तो कभी उसमें रोने के दौरे पड़ने लगते हैं।

हिस्टीरिया का दौरा—दौरा पड़ने से पूर्व रोगिणी को आभास हो जाता है कि अब मुझे रोग का हमला होने वाला है। इसलिए अनेक महिलाएँ आक्रमण होने से पूर्व सावधान होते भी देखी जाती हैं। वह कस कर कपड़े पहन लेती हैं ताकि वह फट न जाये।

○ रोगिणी को बेहोशी आने से पूर्व कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता है कि पेट से गले तक गोले के समान कुछ चढ़ रहा है। दौरा पड़ते समय उसकी

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुट्ठियाँ बँध जाती हैं और उसका शरीर धनुष के समान टेढ़ा हो जाता है। रोगिणी अपने हाथ-पैरों को इधर-उधर पटकती है। उसकी साँस से आवाज आती है। वह कभी हँसती है तो कभी रोती है; कभी चुपचाप पड़ी रहती है तो कभी नाराज होने लगती है। दौरा समाप्त होने पर पेशाब अधिक आता है।

○ दौरे का समय कुछ मिनटों से लेकर कुछ घण्टों या कुछ दिनों तक का हो सकता है। रोग की तीव्रता में दौरों के बीच का समय कम हो जाता है। यहाँ तक कि कई बार दौरे पर दौरे पड़ने लग जाते हैं। परन्तु रोग साधारण होने पर दो दौरों के बीच का समय कई महीनों का हो सकता है।

○ रोगिणी का स्वभाव प्रायः चिड़चिड़ा हो जाता है। वह कभी बहुत प्रसन्न हो जाती है तो कभी बहुत रोने लगती है। कभी क्रोधित और कभी भयभीत हो जाती है। वह जरा-जरा-सी बातों पर अप्रसन्न हो जाती है। यदि कोई बात उसके विपरीत होती है और उसको बुरी लगती है तो तुरन्त दौरा प्रारम्भ हो जाता है। रोगिणी चाहती है कि अन्य लोग उससे सहानुभूति प्रकट करे और उसका आदर करें। उसकी इच्छाएँ और उसके विचार जल्दी-जल्दी बदलते रहते हैं। वह स्वयं को ऐसे रोगों से ग्रसित बतलाती है, जो उसे बिलकुल ही नहीं होते हैं। वह अपने रोग और कष्टों को बहुत बढ़ा-चढ़ा कर बतलाती है।

दो दौरों के अन्तर के समय में मिलने वाले लक्षण—

१. हृदय की धड़कन, सिर में भारीपन, शिरःशूल।

२. कुछ महिलाओं में प्रकाश का सहन न होना।

३. कुछ महिलाओं के स्तनों में सख्त तनाव युक्त दर्द, किसी के पेट में तो किसी के पीठ में दर्द रहता है। कभी-कभी गर्दन या टांग में भी दर्द रहता है।

४. शरीर के किसी एक भाग की त्वचा में चुभन, कभी खरास, कभी सनसनाहट अथवा संज्ञाहीनता उत्पन्न हो जाती है।

○ कभी-कभी संज्ञाहीनता इतनी तीव्र हो जाती है कि उस स्थान को दबाने अथवा उत्तेजना पहुँचाने से तुरन्त दौरा प्रारम्भ हो जाता है।

५. किसी-किसी की पिण्डलियों में दुर्बलता तथा बेचैनी-सी प्रतीत होती है।

६. कई स्त्रियों को कभी गर्मी तो कभी सर्दी लगती है।

७. दौरे के बीच अनेक महिलाओं को मल-मूत्र निकल जाने का आभास भी नहीं होता है।

८. प्रायः कोष्ठबद्धता, पाचन-सम्बन्धी विकार, आध्मान आदि उपद्रव स्वरूप लक्षण मिलते हैं।

९. कुछ महिलाओं को मितली, हिचकी अथवा खाँसी आने लगती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. किसी-किसी में मलावरोध की स्थिति उत्पन्न होती है तो किसी-किसी को अधिक मूत्र आने लगता है।

११. किसी-किसी में पागलपन जैसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

१२. हिस्टेरिकल पक्षाघात का लक्षण अधिकांश देखने को मिलता है। इसका आरम्भ एकाएक किसी शारीरिक चोट या भावना के अधीन होता है। उसके मन में यह वहम समा जाता है कि उसे पक्षाघात या अंगों की शिथिलता का रोग हो गया है। इस भ्रमवश वह पाँव घसीट कर चलती है।

१३. प्रायः रोगी की आवाज बैठ जाती है और बोलने में कष्ट होता है।

१४. निगलने में प्रायः कष्ट होता है।

१५. किसी-किसी में बहरापन हो जाता है।

१६. किसी-किसी में गूंगेपन का लक्षण उत्पन्न हो जाता है। वह प्रयत्न करने पर भी नहीं बोल पाती है।

१७. ○ हिस्टीरिया के अनेक रोगी ऐसे भी देखे गये हैं जिनको दौरा पड़ने पर कुछ दिखलाई नहीं देता। परन्तु दौरे की समाप्ति पर उनकी दृष्टि नार्मल हो जाती है।

१८. कई महिलाएँ ऐसी भी देखी गई हैं जिनका पेट बढ़ जाता है और उनमें गर्भ का संदेह हो जाता है।

दौरे के विशिष्ट लक्षण—

१. दौरा प्रारम्भ में बहुत साधारण होता है। परन्तु क्रमशः बढ़ कर हिंसा और जोश का रूप धारण कर लेता है। स्त्री का धड़ और शेष अंग अकड़ कर सख्त हो जाते हैं।

२. कई बार हिस्टीरिया के दौरे के समय स्त्री का सारा शरीर इतना तन जाता है जिससे लेटी हुई अवस्था में उसके सिर का पिछला भाग और पाँव की एड़ियाँ ही भूमि पर लगी होती हैं। शेष शरीर भूमि से ऊँचा उठा होता है।

३. कभी दौरा कम हो जाता है और कभी दुबारा स्त्री हाथ-पाँव जोर से मारने लग जाती है और सिर एक ओर से दूसरी ओर को जोर से मारती है। स्त्री जोश में आकर अपने या दूसरों के कपड़े फाड़ डालती है। सिर के बालों को नोंचती है। अपने होठों को दाँतों से काटती अथवा दूसरे के अंगों को काटने का प्रयत्न करती है। रोगिणी के परिवार अथवा सम्बन्धी लोग उसे जितना दबाने का यत्न करते हैं, उसे उतना ही अधिक जोश आता है।

४. यदि रोगिणी को दौरे की स्थिति में अकेला छोड़ दिया जाय तो दौरा स्वतः शान्त हो जाता है।

५. किसी समय तो रोगिणी अनेक प्रकार के मिथ्या विचारों से ग्रसित हो जाती है। कभी वह बड़बड़ाने लगती है और बकवास की शिकार हो जाती

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। दौरा समाप्त होने के पश्चात् उसे यह होश नहीं रहता है कि दौरे के समय उस पर क्या बीती। रोगिणी का चेहरा तमतमा जाता है।

निदान (Diagnosis)—दौरे के समय रोगिणी का चेहरा तमतमा जाता है। गले में कोई वस्तु चढ़ती हुई प्रतीत होती है। पेट में गोला-सा उठने लगता है। इन लक्षणों से यह रोग सरलतापूर्वक पहचाना जा सकता है।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—हिस्टीरिया के दौरों के लक्षण मिर्गी और बेहोशी से बहुत अधिक समानता रखते हैं। इसलिए इन रोगों का पार्थक्य चिकित्सक के लिए बहुत आवश्यक होता है जिससे कि चिकित्सा में त्रुटि न हो। इन रोगों के लक्षणों का अन्तर आगे की तालिका से भली प्रकार स्पष्ट हो जाता है।

हिस्टीरिया और मिर्गी के लक्षणों में अन्तर

हिस्टीरिया	मिर्गी
१. दौरे के समय बेहोशी पूर्ण रूप से नहीं होती है। वह दूसरों की बातें बराबर सुनती रहती है, किन्तु जवाब नहीं देती।	दौरे के समय बेहोशी पूर्ण रूप से रहती है। उसे कुछ सुनाई नहीं देता है।
२. दौरा धीरे-धीरे पड़ता है जो चिकित्सा से ठीक हो जाता है।	दौरा अचानक पड़ता है और स्वतः दूर हो जाता है।
३. रोगिणी बेहोश होकर धीरे से जमीन पर गिरती है।	अचानक भूमि पर गिरती है और अपने को सम्भालने में असमर्थ होती है।
४. मुँह से झाग नहीं आता है।	मुँह से झाग आता है।
५. मुँह बन्द होता है, जीभ अपने स्थान पर होती है और दाँत जम जाते हैं।	मुँह खुला होता है, जीभ बाहर निकल आती है और दाँत नहीं जमते हैं।
६. यह रोग प्रायः स्त्रियों को होता है।	प्रायः पुरुषों को होता है।
७. दौरे की दशा में मल-मूल नहीं निकलता है।	प्रायः मलमूत्र निकल जाता है।
८. चेहरे का रंग पीला अथवा लाल हो जाता है।	चेहरे का रंग नीलापन लिये हुए होता है।
९. चेहरे में कोई खिंचावट नहीं होती है।	चेहरा एक तरफ को खिंच जाता है।
१०. दौरे की अवस्था में खर्राटे की आवाज नहीं होती है।	खर्राटे की आवाज बहुत अधिक होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. दौरे की स्थिति में कभी रोगी हँसता है तो कभी रोता है।

१२. शरीर ऐंठ जाता है। हाथ-पाँव तेजी से फैलते और सिकुड़ते हैं।

१३. इसमें आँखें बन्द रहती हैं। आँख के पपोटों में फड़कन मिलती है।

१४. पुतलियाँ प्रकाश से सिकुड़ जाती हैं।

१५. पेट में एक गोला-सा उठता है जो ऊपर को चढ़ कर गले में अटक जाता है और बेहोशी उत्पन्न हो जाती है।

१६. इसका दौरा सोते समय कभी नहीं पड़ता है।

१७. रोग का दौरा देर तक रहता है।

१८. दौरे के बाद मूत्र अधिक आता है।

इसमें ऐसी स्थिति कभी नहीं होती है।

शरीर एक ओर अधिक और एक ओर कम ऐंठता है।

आँखें आधी खुली रहती हैं और ऊपर को चढ़ जाती हैं।

इसमें ऐसा नहीं होता है।

ऐसा नहीं होता है बल्कि हाथ-पाँव तथा पीठ से सर-सराहट उत्पन्न होकर बेहोशी उत्पन्न हो जाती है।

सोने की स्थिति में ही पड़ सकता है।

इसमें ऐसा नहीं होता।

इसमें ऐसा नहीं होता।

हिस्टीरिया और बेहोशी के लक्षणों में अन्तर

हिस्टीरिया	बेहोशी
१. इसमें रोगी का चेहरा लाल दिखलाई देता है।	१. चेहरा पीला और कुम्हलाया हुआ मिलता है।
२. रोगी पूर्ण रूप से बेहोश नहीं होता है।	२. पूर्ण बेहोशी होती है। रोगी किसी की बात नहीं सुन पाता।
३. इसमें रोगी को ठंडा पसीना नहीं आता है।	३. ठंडा पसीना आता है।
४. अमोनिया आदि सुँघाने से रोग बढ़ जाता है।	४. अमोनिया सुँघाने से रोग घट जाता है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. यह रोग जिसको एक बार हो जाता है, कठिनता से जाता है।

२. गर्भाशय अथवा डिम्बाशय आदि के रोग के परिणामस्वरूप यह रोग होने पर उचित चिकित्सा करने पर इसके ठीक होने की आशा की जाती है।

३. यदि रोगिणी का विवाह नहीं हुआ है तो विवाह कर देने के रोग स्वतः ठीक हो जाता है।

४. विवाह होने के कुछ वर्षों बाद जब रोगिणी एक दो बच्चों की माँ बन जाती है, तब इस रोग में कमी आ जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. जब रोग युवावस्था में उत्पन्न होता है, तब बड़ी आयु होने पर रोग धीरे-धीरे घटने लगता है।

६. जब रोग मस्तिष्क की खराबी से उत्पन्न होता है, तब मानसिक चिकित्सा करने पर कुछ हद तक ठीक होने की आशा की जाती है।

नोट—अच्छा हो जाने पर यह रोग जिसे पुनः होता है, उसमें इसकी बारम्बार पुनरावृत्ति होती है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी को पूर्व वातावरण से हटाकर अन्य वातावरण में रखने तथा उचित औषधि चिकित्सा द्वारा रोगी के तन-मन को शान्त रखने का प्रयास करना चाहिए।

२. वेग के समय अन्य व्यक्तियों से अलग रखना चाहिए। साथ ही उसे हर प्रकार के विक्षोभों से बचाना चाहिए।

३. सिर और गर्दन पर ठण्डे पानी से तर किया हुआ कपड़ा रखना चाहिए।

४. मन और शरीर को शान्त तथा बलवान् बनाने का प्रयास करें।

५. रोग के शारीरिक अथवा मनोवैज्ञानिक कारणों का पता लगाने का प्रयत्न करना चाहिए तथा मनश्चिकित्सा करनी चाहिए।

६. स्नायु दुर्बलता दूर करना ही इस रोग की सफलतम चिकित्सा है।

७. रोगी को नित्य सामान्य प्रकार का व्यायाम तथा सैर आवश्यक है।

८. रोगिणी महिला को पति का भरपूर प्यार मिलना चाहिए। उसकी कामेच्छा की पूर्ण सन्तुष्टि आवश्यक है।

९. रोगिणी को होश में लाने के लिए 'स्मैलिंग साल्ट' अथवा 'लाइकर अमोनिया फोर्टे' सुंघाना चाहिए।

१०. रोगी को किसी न किसी कार्य में व्यस्त रखना चाहिए। उसकी रुचि को बदलना आवश्यक है।

११. दौरे के समय रोगी से सहानुभूति प्रदर्शित न करें।

१२. रोगी को चिन्तारहित रखने का प्रयत्न करें।

१३. रोगी का पेट साफ रखना आवश्यक है। यदि उसे कब्जियत की शिकायत हो तो परसेनिड (Pursenid) (नि०-सैण्डोज) की २ गोली रात को सोते समय दें। अथवा एनीमा का प्रयोग करें।

१४. सजेशन (Suggestion) Persuation अथवा Re-education के द्वारा स्थानीय लक्षणों को दूर करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—

१. दौरे के समय की चिकित्सा—

(i) रोगी को होश में लाने के लिए स्प्रिट अमोनिया स्ट्राँग सुँघायें। अथवा इमाइल नाइट्रेट रूमाल पर डाल कर सुँघायें।

(ii) होश में लाने के तत्काल बाद—एसाफटीडा + वेलेरियन मिक्श्चर की १ मात्रा दें।

(iii) यदि रोगी को घबराहट तथा बेचैनी अधिक हो तो उक्त मिक्श्चर पिलाने के आधे घण्टे पश्चात् टेबलेट गार्डीनल दें।

२. दौरे के पश्चात् की चिकित्सा—

℞ इलिग्जिर ब्रोमोवाल (Elixir Bromoval) (सिपला)

मात्रा—१–१ चम्मच दिन में ३ बार।

अथवा—इलिग्जिर वैलेरियन ब्रोम (Elixir valerian brom) (एलेम्बिक)

मात्रा—वयस्क महिला को—१–२ चम्मच दिन में ३ बार।

अथवा—पोलीब्रोम (Polybrom) (बी० सी०)

मात्रा—१–३ चम्मच दिन में २–३ बार।

अथवा—ब्रोमोफेन (Bromofen) (बंगाल केमिकल)

मात्रा—१–१ चम्मच दिन में ३ बार।

अथवा—टे० एक्वानिल (Tab. Equanil) (वीथ)

मात्रा—१–१ गोली दिन में २ बार प्रातः-सायं।

○ यह औषधि हिस्टीरिया के रोगी की जटिलताओं और उनके उपद्रवों को दूर करती है।

अथवा—इलिग्जिर वैलेरोब्रोम (एडको)

इलिग्जिर ब्रोमोवेलिन (इंडियन हैल्थ)

ब्रोमालिन (ए० एफ० डी०)

ब्रोमो राउलीफन (ईस्टर्न ड्रग कं०)

एटारेक्स टेबलेट (यू० वी० यू० सी० वी०)

कॉमिटाल-एल टेबलेट (बायर)

डाइलैण्टिन-पी कैपसूल (पी० डी०)

○ उपरोक्त में से किसी भी औषधि का उपयोग सुविधानुसार किया जा सकता है।

लाक्षणिक चिकित्सा—

१. कै और मितली—

℞ एवोमिन या लार्गेक्टिल

मात्रा—१ गोली (१० मि० ग्रा०) दिन में ३ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. हिचकी—

℞ टे० न्यो-ऑक्टीनम (Tab. Neo-Octinum)

मात्रा—१–१ गोली दिन में ३ बार।

३: उत्तेजनात्मक दशा और पागलपन जैसी स्थिति में—

℞ इलिग्जिर सरपाब्रोम (बंगाल इम्युनिटी)

मात्रा—२–२ चम्मच दिन में २ बार।

साथ ही—लार्गेक्टिल टेबलेट (२५ मि० ग्रा०)

मात्रा—१ गोली रात्रि के समय अथवा दिन में भी।

○ यदि रोगी दवा न खा सकता हो तो—

लार्गेक्टिल इञ्जे० (M. B.) मांसपेशीगत दें।

४. चिड़चिड़ापन, वहम तथा अन्य मानसिक विकार—

℞ एटारेक्ट (Atarex) (यू० वी० यू० सी० वी०)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

अथवा—टे० एनाटेन्सोल (स्क्विब)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

५. आलस्य, दुर्बलता, शक्तिहीनता तथा लो ब्लड-प्रेशर—

○ सर्पगन्धा से निर्मित औषधियों का प्रयोग न करें।

○ ℞ टोनियाजोल (Toniazol)

मात्रा—१–१ चम्मच दिन में ३ बार।

अथवा—'कोरामीन' दें। इसे टेबलेट, ड्रॉप या इञ्जेक्शन रूप में दे सकते हैं।

६. पक्षाघात की स्थिति हो तो—

℞ इञ्जे० बिनर्वा (Inj. Benerva) (रोशे)

मात्रा—२ मि० ली० I/M पक्षाघात की दिशा की ओर लगायें।

साथ ही—वेरिन टेबलेट १०० मि० ग्रा०

मात्रा—१–१ गोली दिन में २ बार।

अथवा—वी-न्यूरोफॉस (B. Neurophos)

मात्रा—१–१ चम्मच दिन में २ बार।

○ साथ ही रोगी के विचारों को बदलें। इसके लिए 'सेरिन' (Serin) टेबलेट (थैराप्यूटिक फार्मा) या 'एक्वीप्लान (Equiplon) (खण्डेलवाल) १–१ गोली दिन में ३ बार दें।

नोट—'एटारेक्स' का प्रयोग भी लाभकारी होता है।

७. मूत्रावरोध की स्थिति में—

○ तत्काल कैथेटर से मूत्र निकालें।

○ साथ ही—एक्वानिल टे० १–१ गोली दिन में २ बार दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. आधे सिर के दर्द के साथ हिस्टीरिया रोग होने पर—

℞ एटारेक्स टेबलेट (१० मि० ग्रा०) १ गोली
सोनाल्जिन १ गोली

दोनों को मिलाकर पानी के साथ दें।

९. उदरशूल या वृक्कशूल सह हिस्टीरिया रोग में—

℞ बुस्कोपान कम्पोजिटम (Buscopan compozitum)

मात्रा—१ गोली दिन में १ या २ बार जल से।

१०. नींद न आने पर—

℞ वेस्पारेक्स (Vesparax)

मात्रा—१ गोली रात में सोते समय।

अथवा—प्लेसोनाल की १ गोली दें।

११. भूख न लगने पर—

℞ बेरिन टेबलेट (१० मि० ग्रा०)

मात्रा—½ गोली दिन में २ बार दूध के साथ। इसके तत्काल बाद—
एटारेक्स टेबलेट (१० मि० ग्रा०) १–१ गोली दिन में २ बार।

१२. पाचन-क्रिया में गड़बड़ी, पेट फूलना, गैस का बनना—

℞ केम डाइजेस्टान (Chem Digeston) (केमो फार्मा)

मात्रा—२ चम्मच थोड़े जल में मिलाकर भोजन के तत्काल बाद।

हिस्टीरिया की मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१. ℞ एटारेक्स १० मि० ग्रा० १ गोली
बेरिन (१०० मि० ग्रा०) ½ गोली
ग्लूटामिक एसिड ½ गोली
१ मात्रा

सबको पीस कर पुड़िया बना लें। ऐसी १ पुड़िया प्रातः-सायं दें।

२. ℞ टेबलेट एक्वानिल (२०० मि० ग्रा०) १ गोली
टेबलेट गार्डीनल १ गोली
बेरिन १०० मि० ग्रा० ½ गोली
१ मात्रा

सबको पीस कर पुड़िया लें। ऐसी एक पुड़िया दिन में २ बार।

○ हिस्टीरिया के उपद्रवों, बेचैनी, व्याकुलता, उलझन, भय, अनिद्रा एवं सिहरन आदि में लाभकारी है।

३. ℞ सर्पासिल (सिबा-गैगी) १ गोली
बेरोडेज (पी० डी०) १ गोली
ल्यूमिनाल (बायर) १ गोली
१ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी १ मात्रा दौरे के समय दें। लाभ न मिलने पर दुबारा दें।

४. ℞ एनाटेन्साल (साराभाई)	१ गोली
गार्डीनल (एम० बी०) ६० मि० ग्रा०	१ गोली
कम्पोज सीरप (रैनवैक्सी)	५ मिली०
	१ मात्रा

गोलियों को पीसकर सीरप में मिला लें। ऐसी १ मात्रा प्रति ६-१२ घण्टे पर।

५. ℞ टेबलेट एटारेक्स १० मि० ग्रा०	१ गोली
टेबलेट मेगविट (ज्यॉफेरी मेनर्स)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार।	१ मात्रा
६. ℞ मायनेसिन	१ गोली
सर्पीरूटिन-सी	१ गोली
ल्युपोट (Lupot)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार।	१ मात्रा
७. ℞ मिल्टान (कार्टर वालेस) २०० मि० ग्रा०	१ गोली
गार्डीनल (एम० बी०) ३० मि० ग्रा०	१ गोली
बेरिन (ग्लैक्सो) १०० मि० ग्रा०	½ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल से	१ मात्रा
८. ℞ एनाटेन्साल (साराभाई)	१ गोली
बेरिन १०० मि० ग्रा०	१ गोली
ग्लूटान्यूरॉल	१ गोली
ऐसी एक मात्रा दिन में २ बार जल से।	१ मात्रा □

मानसिक विकार 5/7

मनोलैंगिक विकार
(Psychosexual Disorders)

○ मनुष्य के सामान्य स्वास्थ्य एवं उसके मानसिक विकास के लिए सेक्स एक बहुत ही आवश्यक फैक्टर है।

जनरल प्रेक्टिस में सामान्य रूप से प्रायः निम्न लैंगिक विकार (Sexual disorders) देखने को मिलते हैं—

१. समय-पूर्व अपसारण (Premature ejaculation)।

२. नपुंसकता (Impotency)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. हस्तमैथुन (Masterbation)

४. स्वप्नदोष (Nocturnal emission)—इसे 'Night pollution' भी कहते हैं।

५. वन्ध्यत्व या बाँझपन (Infertility)।

समय-पूर्व अपसारण
(Premature Ejaculation)

परिचय—It is a condition where a male ejaculates and reaches to an organs before the penis enters the vegina or during the time of penetration.

○ युवा व्यक्तियों में होने वाला यह एक सामान्य रोग है, जिसके कारण व्यक्ति में अनेक प्रकार के मनोदैहिक विकार (Psychosomatic diseases) उत्पन्न हो जाते हैं। ऐसी स्थिति प्रायः विवाह के प्रारम्भिक काल में अधिक होती है।

कारण (Etiology)—१. मानसिक कारण (Psychic causes)—यह इस रोग का प्रधान कारण है।

२. चिन्ता (Anxiety) एवं तनाव (Tension) आदि इस रोग के लिए विशेष उत्तरदायी हैं।

३. अधिक अन्तराल के बाद स्त्री-समागम (Intercouse after long time intervals) भी समय-पूर्व अपसारण का कारण है।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ क्लोरडियाजिपोक्साइड (Chlordiazepoxide)

मात्रा—१ गोली (१० मि० ग्रा०) सोने से पूर्व।

साथ ही—स्पीमेन (Spemen) (हिमालय ड्रग्स कं०)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार।

एवं—फोर्टेज (Fortage)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

निषेध—जननेन्द्रिय के ऊपर किसी प्रकार के एनेस्थेटिक आइण्टमेण्ट का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

निर्देश—ट्रैंक्विलाइजर (Tranquilliser) का प्रयोग लाभकारी होता है।

○ चिकित्सा का उद्देश्य लैंगिक समागम (Sexual intercourse) को सफल बनाना है।

नपुंसकता
(Impotency)

पर्याय—नामर्दी, ध्वजभंग आदि।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी १ मात्रा दौरे के समय दें। लाभ न मिलने पर दुबारा दें।

४. ℞ एनाटेन्साल (साराभाई)	१ गोली
गार्डीनल (एम० बी०) ६० मि० ग्रा०	१ गोली
कम्पोज सीरप (रैनवैक्सी)	५ मिली०
	१ मात्रा

गोलियों को पीसकर सीरप में मिला लें। ऐसी १ मात्रा प्रति ६-१२ घण्टे पर।

५. ℞ टेबलेट एटारेक्स १० मि० ग्रा०	१ गोली
टेबलेट मेगविट (ज्याँफेरी मेनर्स)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार।	१ मात्रा
६. ℞ मायनेसिन	१ गोली
सर्पीरूटिन-सी	१ गोली
ल्युपोट (Lupot)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार।	१ मात्रा
७. ℞ मिल्टान (कार्टर वालेस) २०० मि० ग्रा०	१ गोली
गार्डीनल (एम० बी०) ३० मि० ग्रा०	१ गोली
बेरिन (ग्लैक्सो) १०० मि० ग्रा०	½ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल से	१ मात्रा
८. ℞ एनाटेन्साल (साराभाई)	१ गोली
बेरिन १०० मि० ग्रा०	१ गोली
ग्लूटान्यूरॉल	१ गोली
ऐसी एक मात्रा दिन में २ बार जल से।	१ मात्रा □

मनोलैंगिक विकार
(Psychosexual Disorders)

○ मनुष्य के सामान्य स्वास्थ्य एवं उसके मानसिक विकास के लिए सेक्स एक बहुत ही आवश्यक फैक्टर है।

जनरल प्रेक्टिस में सामान्य रूप से प्रायः निम्न लैंगिक विकार (Sexual disorders) देखने को मिलते हैं—

१. समय-पूर्व अपसारण (Premature ejaculation)।
२. नपुंसकता (Impotency)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. हस्तमैथुन (Masterbation)

४. स्वप्नदोष (Nocturnal emission)—इसे 'Night pollution' भी कहते हैं।

५. वन्ध्यत्व या बाँझपन (Infertility)।

समय-पूर्व अपसारण
(Premature Ejaculation)

परिचय—It is a condition where a male ejaculates and reaches to an organs before the penis enters the vegina or during the time of penetration.

○ युवा व्यक्तियों में होने वाला यह एक सामान्य रोग है, जिसके कारण व्यक्ति में अनेक प्रकार के मनोदैहिक विकार (Psychosomatic diseases) उत्पन्न हो जाते हैं। ऐसी स्थिति प्रायः विवाह के प्रारम्भिक काल में अधिक होती है।

कारण (Etiology)—१. मानसिक कारण (Psychic causes)—यह इस रोग का प्रधान कारण है।

२. चिन्ता (Anxiety) एवं तनाव (Tension) आदि इस रोग के लिए विशेष उत्तरदायी हैं।

३. अधिक अन्तराल के बाद स्त्री-समागम (Intercouse after long time intervals) भी समय-पूर्व अपसारण का कारण है।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ क्लोरडियाजिपोक्साइड (Chlordiazepoxide)

मात्रा—१ गोली (१० मि० ग्रा०) सोने से पूर्व।

साथ ही—स्पीमेन (Spemen) (हिमालय ड्रग्स कं०)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार।

एवं—फोर्टेज (Fortage)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

निषेध—जननेन्द्रिय के ऊपर किसी प्रकार के एनेस्थेटिक आइण्टमेण्ट का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

निर्देश—ट्रैंक्विलाइजर (Tranquilliser) का प्रयोग लाभकारी होता है।

○ चिकित्सा का उद्देश्य लैंगिक समागम (Sexual intercourse) को सफल बनाना है।

नपुंसकता
(Impotency)

पर्याय—नामर्दी, ध्वजभंग आदि।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिचय—This is a male sexual disorder where by a male can not maintain an eraction of penis during copulation.

○ पुरुषों में होने वाली यह एक विचित्र लैंगिक व्याधि है। इसमें पुरुष के शिश्न में स्त्री-समागम करने की शक्ति बिलकुल नहीं रहती है। पुरुष मैथुन-क्रिया में असमर्थ होता है।

नोट—जो व्यक्ति सम्भोग-क्रिया में दो-चार अवसरों पर असफल रह चुका है, उसे नपुंसक नहीं माना जा सकता है।

○ नपुंसक उस व्यक्ति को कहा जा सकता है जिसके शिश्न में उत्थान आता ही नहीं है, चाहे स्वर्ग की अप्सरा जैसी सुन्दरी नवयौवना ही उसकी बगल में क्यों न लेटी हो और प्यार के आवेश में वह उसे बार-बार अपनी ओर आकर्षित कर रही हो, तो उसे नपुंसक कहा जाता है, किन्तु ऐसे नपुंसक विरले ही मिलते हैं।

कारण (Etiology)—

१. मानसिक कारण (Psychological causes)—नपुंसकता का यह प्रमुख कारण है। विवाह सम्बन्धी अज्ञानता का भय, वार्धक्य (Senility), पत्नी के सम्मुख प्रतिरोध (Hostility), हस्तमैथुन का भय तथा अधिक चिन्ता आदि।

○ चिकित्सक की जनरल प्रेक्टिस में जितने पुरुष नपुंसकता की चिकित्सा कराने आते हैं, उनमें अधिकांश नपुंसक होते ही नहीं हैं। उनमें किसी न किसी मनोवैज्ञानिक कारण से उनकी कामेच्छा दबी होती है, जिससे शिश्न में उत्थान नहीं आता है। इन लोगों के शिश्न में कोई दोष नहीं होता है; दोष होता है उनके मस्तिष्क में। जब बाहरी चिन्ता या मानसिक क्लेश होता है, उस समय न तो कामवासना जाग्रत् होती है और न शिश्न में उत्थान आता है।

○ चिकित्सा सम्बन्धी आधुनिक अनुसंधानों से पता चला है कि संसार में जितने पुरुष स्वयं को नपुंसक समझते हैं, उनमें ९५% वास्तव में नपुंसक नहीं होते हैं, वे मानसिक रूप से नपुंसक होते हैं। उनकी कोई न कोई मानसिक समस्या अवश्य होती है जो उन्हें नपुंसक बनाये रखती है। शेष ५% शारीरिक रोगों के कारण वास्तव में नपुंसक होते हैं।

○ अधिकांश नवयुवक जो कभी न कभी कुछ समय तक हस्तमैथुन के शिकार रह चुके हैं, वे ऐसा समझने लगते हैं कि इस कुटेव के कारण उनका शिश्न कमजोर और पतला हो गया है, जिससे उनके अन्दर यौन-समागम में नारी को सन्तुष्ट करने की क्षमता का अभाव हो गया है। अपनी इस धारणा के कारण वे मानसिक रूप से नपुंसक बन जाते हैं।

○ कुछ पुरुष अपने शिश्न को छोटा समझ कर मैथुन से इसलिए कतराते हैं कि उनके छोटे शिश्न को देखकर कहीं उनकी पत्नी तिरस्कार न कर दे।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ यद्यपि छोटे शिश्न से पुरुष की यौन मैथुन-क्षमता में कोई कमी नहीं आती है। परन्तु ऐसा व्यक्ति यदि किसी वेश्या के पास जाता है और वह यदि यह कह देती है कि तुम्हारा शिश्न तो छोटा है, इससे तुम्हारी पत्नी को क्या तसल्ली मिलेगी तो उसी समय से वह व्यक्ति हीन भावना से ग्रसित होकर नपुंसक बन जाता है।

○ अनेक बार अपनी पत्नी के असहयोग अथवा उसके किये हुए कटाक्षों से भी पुरुष में नपुंसकता के लक्षण आ सकते हैं। ऐसा प्रायः शीघ्रपतन के रोगियों में होता है।

○ भय, लज्जा, आत्मसंदेह के कारण शिश्न में उत्थान नहीं होता है और व्यक्ति अपने अन्दर पुरुषत्व रखते हुए भी अपने आपको मानसिक कारणों से नपुंसक समझने लगता है।

○ स्वप्नदोष, प्रमेह और समय-पूर्व अपसारण के पश्चात् नपुंसकता का स्थान आता है। अत्यधिक मैथुन या विवाह के पश्चात् अत्यधिक स्त्री-समागम नपुंसकता का कारण होता है।

याद रखिये—नपुंसकता या तो कामवासना की कमी से उत्पन्न होती है अथवा शिश्न के उत्थान को कायम न रख सकने (Failure to sustain eraction) के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है।

२. **शारीरिक नपुंसकता**—५% रोगी ऐसे होते हैं जो वास्तव में नपुंसक की श्रेणी में आते हैं। उनमें कोई न कोई शारीरिक रोग अवश्य होता है, जो उन्हें नपुंसक बना देता है। जैसे—

(i) अधिक मदिरापान अथवा नशीले पदार्थों का सेवन करने के अभ्यस्त रोगी पुरुष कुछ वर्षों में नपुंसक बन जाते हैं।

(ii) मधुमेह के रोगी प्रायः नपुंसक हो जाते हैं।

(iii) कुछ पुरुषों के वृषणों में हार्मोन्स का उत्पादन किसी कारण से कम हो जाता या बन्द हो जाता है। ऐसे पुरुषों का शिश्न छोटा रह जाता है और वे नपुंसक बन जाते हैं।

(iv) अण्डकोष का अविकसित होना; यह असाध्य नपुंसकता है। यह एक प्रमुख जन्मजात कारण है।

३. **रोगजन्य कारण**—यह प्रायः २ प्रकार के होते हैं—

(i) **जननेन्द्रिय सम्बन्धी रोग**—लिंगक्षत, लिंगनाश, अण्डकोष सम्बन्धी रोग, गर्मी और सुजाक।

(ii) **शारीरिक रोग**—तीव्र ज्वर, मधुमेह, रक्तन्यूनता (Anaemia), कर्णशूलशोथ (Mumps) आदि।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. **जरा सम्भव कारण**—प्रकृत के अनुसार बुढ़ापा आने पर शरीर के सभी अंग शिथिल हो जाते हैं, जिससे शुक्र भी क्षीण हो जाता है। ऐसी स्थिति में लिंग का उत्थान न होने से नपुंसकता उत्पन्न हो जाती है।

५. **औषधियाँ**—कभी-कभी 'डिप्रेशन' के कारण अवसाद-निरोधी (Anti-depressive) औषधियों के तथा रक्तचाप कम करने वाली औषधियों के अत्यधिक सेवन से भी नपुंसकता आ जाती है। यथा—

(○ अफीम (Opium) और मॉर्फीन, बार्बीट्यूरेट्स, एल्कोहॉल, फीनोथायजीन्स, निकोटीन, रिसर्पीन, फीमेल हार्मोन्स आदि का अधिक उपयोग नपुंसकता उत्पन्न कर सकते हैं।

६. **आर्गेनिक डिजीज**—मधुमेह, पेरिफेरल न्यूराइटिस, स्क्लेरोसिस, क्रॉनिक मालन्यूट्रीशन, मिक्सोडिमा, हृदयरोग, ल्यूकीमिया, स्थूलता, गनोरिया आदि रोगों से भी नपुंसकता उत्पन्न हो सकती है।

लक्षण (Symptoms)—१. इसमें मैथुन करने की शक्ति या तो बिल्कुल समाप्त हो जाती है अथवा कम हो जाती है।

२. पुरुष को हर समय स्त्री-समागम की इच्छा बनी रहती है, किन्तु वह स्त्री-सम्भोग में असमर्थ रहता है।

३. शिश्न की दुर्बलता के कारण यह स्त्री के पास जाने से भयभीत रहता है। यदि किसी प्रकार प्रसंग करने की हिम्मत करता भी है तो शीघ्र ही उसका श्वास फूलने लगता है।

४. रोगी के शरीर से पसीना आने लगता है और उसकी इन्द्रिय ठीक से उत्तेजित नहीं होती है। इस प्रकार रोगी लज्जित होकर अत्यन्त दुःखी हो जाता है।

५. नपुंसक रोगी रात-दिन चिन्ता में घुलता रहता है।

६. रोगी के सिर में पीड़ा रहती है।

७. हृदय धड़कता है।

८. खाया-पीया हजम नहीं होता एवं उसे बराबर मलावरोध रहता है।

९. रोगी को रात-दिन नींद नहीं आती है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)

१. सबसे पहले रोग के कारण को दूर करें।

२. रोगी के मन को दृढ़ बनायें और उसे यह आश्वासन दें कि वह जल्दी ठीक हो जायेगा, उसे कोई रोग नहीं है; कौन कहता है कि तुम नामर्द हो, इत्यादि ढंग से उसे आश्वासन देना चाहिए।

३. रोगी को मधुर गाने सुनने का परामर्श दें। उसे सेक्स-प्रधान पत्र-पत्रिकाओं का अवलोकन तथा इसी प्रकार की फिल्मों को रुचिपूर्वक देखने को

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेरित करें। इससे उसके अन्दर की सुप्त कामवासना जाग्रत् होकर शरीर में एक प्रकार का कम्पन उत्पन्न हो जाता है।

४. नपुंसकता कोई जटिल रोग नहीं है। यह केवल एक मानसिक समस्या है। इसलिए रोगी का मानसिक परिवर्तन करना आवश्यक है।

५. रोगी को हलका सुपाच्य तथा पौष्टिक आहार देना चाहिए।

६. रोगी को नियमित रूप से हलका व्यायाम करायें। उसे बेकार नहीं बैठने देना चाहिए।

७. रोगी का पेट साफ रखना चाहिए। मलावरोध रहता हो तो एनीमा का प्रयोग करें।

○ नपुंसकता के रोगी को जुलाब (Purgative) कभी न दें।

विशेष—चिकित्सा से पूर्व जुलाब देकर पेट साफ करें और चिकित्सा के समय कब्ज होने पर जुलाब का प्रयोग न कर एनीमा का प्रयोग करें।

८. नपुंसकता के रोगी को प्रमेह तथा स्वप्नदोष अवश्य रहता है। इसलिए पहले इन रोगों को दूर करें, तत्पश्चात् नपुंसकता की चिकित्सा करें। क्योंकि नपुंसकता में पौष्टिक पदार्थों के सेवन से प्रमेह तथा स्वप्नदोष दोनों ही बढ़ते हैं।

९. रोग की सफल चिकित्सा तभी हो सकती है जब रोगी की पाचन-क्रिया सही ढंग की होगी।

१०. लिंग पर लगाने के लिए कोई न कोई लेप अथवा तेल आदि का प्रयोग अवश्य करें।

(२) **औषधि चिकित्सा** (Medicinal treatment)—

℞ मिथोक्सीटोन (Mithoxitone)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।
साथ ही—फॉस्फोटोन (Phosphotone)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।
एवं—योहिम्बीन (Yohimbine)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।
अथवा—पासुमा स्ट्राँग (Pasuma strong) (मर्क कं०)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।
लाभ न मिलने पर—पासुमा स्ट्राँग मांसपेशीगत इन्जेक्शन रूप में।
साथ ही—स्पीमेन (Spemen) १ गोली दिन में ३ बार।
इससे भी सफलता न मिलने पर—
℞ टेण्टेक्स फोर्ट (Tentex forte)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।
अथवा—फोर्टेज (Fortage) (एलोसिन)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

हार्मोन चिकित्सा—यह चिकित्सा वृद्धों में विशेष लाभकारी होती है, यथा—

℞ फ्लु-ऑक्सीमेस्ट्रोन (Fluoxymestrone)

व्या० नाम—अल्ट्रेण्डन (Ultrandon)

मात्रा—१ से ५ गोली दिन में १ बार मुख से।

○ 'यह टेस्टोस्टेरोन' हार्मोन्स का एक नवीनतम योग है।

अथवा—℞ टेस्टोस्टेरोन ईनान्थेट (Testosterone oenanthate)

मात्रा—२५० मि० ग्रा० मांसपेशीगत प्रति दूसरे या तीसरे सप्ताह।

अथवा—टेस्टोस्टेरोन प्रोपीयोनेट (Testosterone propionate)

मात्रा—१० से २५ मिग्रा० मांसपेशीगत सप्ताह में ३ या ४ दिन।

नोट—यदि रोगी में अनुकूल लक्षण न दिखलाई पड़े तो समझ लेना चाहिए कि 'हार्मोन चिकित्सा' की उसे आवश्यकता नहीं है। अतः उसे हार्मोन देना बन्द कर देना चाहिए। यदि उपरोक्त हार्मोन चिकित्सा से अच्छा लाभ हो तो अगले ४-५ महीने तक इसी प्रकार से उपचार करते रहना चाहिए।

निर्देश—हार्मोन के इञ्जेक्शन अथवा टेबलेट का सेवन सुबह का नाश्ता कर लेने के बाद ही करना चाहिए।

अथवा—सीबा कं० का 'पेरेण्ड्रेन' अथवा 'ट्रोपोलेण्ड्रान' अथवा 'सस्टेनान' का एक इञ्जेक्शन सप्ताह में एक बार लगाया जा सकता है।

स्थानिक रूप से—'हिम्कोलीन' अथवा 'पेराण्ड्रान मलहम' अथवा 'नियो-होम्प्रिमोल स्ट्रांग आइण्टमेण्ट' स्त्री-सम्भोग के आधे घण्टे पूर्व शिश्न के मूल-भाग में लगाने से पर्याप्त कामोत्तेजना उत्पन्न होती है।

(३) **भोजन चिकित्सा**—नपुंसकता के रोगियों से लिए सन्तुलित भोजन का विशेष महत्त्व है। इन लोगों को पौष्टिक भोजन देना चाहिए।

(४) **यान्त्रिक चिकित्सा**—(i) शिश्न की जड़ में रिबन (फीता) बाँध लेने से शिश्न में बराबर उत्थान रहता है। यहाँ तक कि स्खलित हो जाने के बाद भी उत्थान में कमी नहीं आती है।

नोट—फीता न तो बहुत टाइट बाँधना चाहिए और न ही अधिक ढीला रहना चाहिए। इसमें डेढ़ गाँठ लगानी चाहिए ताकि खुलने में आसानी रहे।

(ii) 'ऑर्गेन डेवलेपर' या वैक्यूम मसाज पम्प—इनका उपयोग शिश्न की लम्बाई में वृद्धि करने के लिए किया जाता है।

लाक्षणिक चिकित्सा—

१. शारीरिक दुर्बलता, शीघ्रपतन, धातुक्षीणता के बाद नपुंसकता का होना—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

℞ ओब्लीटोन-सी	१ गोली
पेरेण्ड्रेन १० मि० ग्रा० की	१ गोली
योहिम्बीन	१ गोली
विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स	१ गोली
	१ मात्रा

इन सबको पीसकर एक पुड़िया बना लें।

मात्रा—ऐसी १ पुड़िया दिन में २-३ बार।

२. मोटापा के कारण नामर्दी होना—

℞ थायराइड टेबलेट ($\frac{1}{2}$ ग्रेन वाली) $\frac{1}{2}$ गोली + रोवीगान (रोशे कं०) की १-१ गोली दिन में ३ बार दें।

३. धातुक्षीणता एवं शीघ्रपतन के साथ-साथ नपुंसक होना—

℞ 'योहिम्बीन हाइड्रोक्लोराइड	१ गोली
डैप्जेड्रीन	१ गोली
पैराण्ड्रान १० मि० ग्रा०	१ गोली
स्ट्रिक्नीन हाइड्रोक्लोराइड ०.५ मिग्रा०	१ गोली
	१ मात्रा

इन सबको पीसकर १ पुड़िया बना लें। ऐसी १ पुड़िया दिन में ३ बार दें।

नोट—यह योग नपुंसकता में विशेष लाभकरी सिद्ध हुआ है।

नपुंसकता की पेटेण्ट मिश्रित चिकित्सा—

१. ℞ टेस्टोविरॉन डिपोट (जर्मन रेमेडीज)	२५० मिग्रा० १ मिली०
न्यूरावोल-एच (कैडिला)	२ मिली०
	१ मात्रा

दोनों को भलीभाँति मिलाकर गहरे मांसपेशी में सप्ताह में १ बार लगायें।

२. ℞ सस्टैनॉन-१०० (आर्गेनन) इन्जेक्शन	१ मि० ली०
ट्राईर्नजिक (यूनिकेम)	१ मि० ली०
	१ मात्रा

दोनों को मिलाकर गहरे मांसपेशी में सप्ताह में २ बार लगायें।

○ यह नपुंसकता-नाशक विशिष्ट योग है।

३. ℞ पासुमा-स्ट्राँग (ई० मर्क)	१ गोली
ओकासा	१ गोली
टेण्टेक्स फोर्ट	१ गोली
एक्वाविरॉन (निकोलस) २५ मि० ग्रा०	१ गोली
	१ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार—प्रातः एवं रात्रि में सोते समय गाय के गर्म दूध के साथ दें।

साथ ही—सेक्स विगर (हक्सले) १ मि० ली० मांसपेशीगत प्रति तीसरे दिन लगायें।

४. ℞ पोलीविटॉन (मर्क)	२ मि० ली०
एक्वाविरॉन बी-१२ (निकोलस)	१ मि० ली०
वेलामाइल (साराभाई)	१ मि० ली०
	१ मात्रा

तीनों को भलीभाँति मिलाकर गहरे मांसपेशी में सप्ताह में २ बार लगायें। साथ ही—

बिविनॉल फोर्ट विद विटामिन-सी (एलेम्बिक)	१ कैप्सूल
एक्वासॉल ए-ई (यू० एस० वी० एण्ड पी०)	१ कैप्सूल
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रातः एवं सायं गर्म दूध के साथ दें।

○ यदि साथ में पैरेण्ड्रेन (सिबा-गैगी) मलहम की सुपारी और शिश्न पर दिन में २ बार मालिश की जाय तो रोगी में चमत्कारी लाभ दिखलाई देता है।

५. ℞ जिरियाटोन टेबलेट (जॉन-वाइथ)	१ गोली
पासुमा स्ट्रांग (ई० मर्क)	१ गोली
टेण्टेक्स फोर्ट	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजन के ½ घण्टे बाद दें।

६. ℞ फॉस्फोटोन	१ गोली
पासुम स्ट्रांग	१ गोली
अल्ट्रेण्डन	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार गर्म दूध के साथ। साथ ही 'पैरेण्ड्रेन मलहम' की शिश्न तथा सुपारी पर मालिश करें।

हस्तमैथुन
(Masterbation)

परिचय—विभिन्न कारणों से लिंगोद्रेक होने के परिणामस्वरूप कृत्रिम मैथुन (हस्तमैथुन) करने की प्रवृत्ति हो जाती है। इसमें लिंग के स्नायु उत्तेजित हो जाते हैं, फलस्वरूप मैथुन जैसा आनन्द मिलता है। बार-बार मैथुन करने से लिंग में एक प्रकार की अकड़न पैदा हो जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण—१. मनःकायिक कारण (Psychosomatic causes) ।

२. प्रोस्टेट ग्रन्थि के आर्गेनिक रोग ।

३. ब्लैडर नेक, यूरेथ्रा, मस्तिष्क आदि कारण ।

अन्य कारण—१. आँतों में कृमि की उपस्थिति ।

२. लिंग की खुजली ।

३. जननेन्द्रिय के पास या ऊपर दाद या खुजली ।

४. अश्लील उपन्यास, नाटक या कहानियाँ पढ़ना, अश्लील वार्तालाप अथवा सेक्स-प्रधान फिल्में देखना आदि ।

५. जननेन्द्रिय को साफ तथा स्वच्छ न रखना ।

लक्षण (Symptoms)—१. रोगी को एकान्त में रहने की इच्छा होती है ।

२. रोगी में लज्जालु भाव, डरपोकपन, उदासी, स्वरभंग आदि लक्षण मिलते हैं ।

३. स्मरणशक्ति का ह्रास ।

४. रोगी को शिरःशूल रहता है । थोड़ी भी वाहन यात्रा करने पर सिर दर्द करने लगता है ।

५. भूख मारी जाती है और उसे बराबर कब्ज रहता है ।

६. रोगी उदासीन दिखलाई देता है । किसी कार्य में उसका मन नहीं लगता है ।

७. रोगी का शिश्न निर्बल हो जाता है । वह शिथिल तथा अस्वाभाविक हो जाता है । शिश्न में टेढ़ापन भी आ जाता है ।

८. कान में साँय-साँय की आवाज आती है । उसमें बहरेपन के लक्षण भी मिलने लगते हैं । हस्तमैथुन की लत पड़ने पर शरीर में दुर्बलता, सिर में भारीपन, किसी कार्य में मन न लगना, स्मरणशक्ति का ह्रास, दिल का धड़कना, मन में एक प्रकार का भय, श्वास का फूलना, हमेशा लेटे रहने का मन करना आदि अनेक लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं ।

९. स्वप्नदोष को बढ़ावा मिलता है ।

१०. रोगी का चेहरा तेजहीन तथा शरीर दुर्बल हो जाता है ।

११. इस कुटेव से रोगी के भावी जीवन में अनेक उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं । विशेषकर मैथुन-दुर्बलता (Sex weakness), नपुंसकता, समय-पूर्व अपसारण आदि ।

पूर्वानुमान (Prognosis)—इसमें मेरुदण्ड के रोग, मस्तिष्क रोग, प्रमेह, नपुंसकता, बहुमूत्र, अजीर्ण, सुस्ती, पित्त विकार, आत्महत्या की प्रवृत्ति, एकाएक मूर्च्छा, खाँसी, यक्ष्मा आदि रोग हो सकते हैं ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. मूल कारण को दूर करें।

२. मलावरोध (Constipation) की स्थिति में एनीमा दें तथा दूध में 'कास्टर आयल' मिलाकर दें।

३. विटामिन तथा आयरन का अधिक प्रयोग करें।

४. शरीरिक दुर्बलता को दूर करें।

५. रोगी को एकान्त में रहने से बचायें तथा उसे आवश्यक कार्यों में व्यस्त रखें।

६. लघु पौष्टिक आहार, नियमित व्यायाम तथा शीतल जल का स्नान।

७. लिंग में विकार की स्थिति में स्थानिक चिकित्सा करें।

(२) औषधि चिकित्सा—इसमें प्रशान्तक (Tranquillisers) औषधियाँ लाभकारी होती हैं।

साथ ही—स्पीमेन या टेण्टेक्स की १-१ गोली दिन में ३ बार दें।
अथवा—डीमयाना कम्पाउण्ड (ब्रिटिश ड्रग हाउस)
मात्रा—१-१ गोली दिन में २ बार गाय के दूध से।
टेस्टोफॉस (Testophos) (नि० शिगफ्रीड)
मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

स्थानीय चिकित्सा—रात में सोते समय लिंग पर 'हिमकोलीन' की मालिश करें। जलन होने पर इसका प्रयोग बन्द कर दें और जलन समाप्त होने पर पुन लगायें।

○ निम्न योग के सेवन करने से कामोत्तेजना कम होती है। साथ ही हस्तमैथुन की प्रवृत्ति में कमी आती है—

℞ टिंचर बेलाडोना	५ बूंद
पोटाश ब्रोमाइड	१५ मिग्रा०
टिं० हायोसायमस	२० मिली०
स्प्रिट क्लोरोफार्म	१० मिली०
जल	१ औंस
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।	१ मात्रा

स्वप्नदोष
(Nocturnal Emission)

पर्याय—Night discharge, night pollution, night fall and night dreams.

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिचय—This is a condition of involuntary loss of semen without sexual act associated with various psychosomotic manifestation.

○ यह एक ऐसी अवस्था है, जब स्वप्न में कामोत्तेजना अथवा स्त्री-समागम के कारण वीर्य स्खलित हो जाता है तो उसे स्वप्नदोष कहते हैं। इसमें स्त्री-समागम के बिना ही वीर्य अपने आप निकल जाता है। यह एक मानसिक रोग है।

कारण—१. विषय भोग की बातें बराबर ध्यान में रखना।
२. कामोत्तेजक विचारों को बार-बार मन में लाना।
३. गर्म अथवा उत्तेजक पदार्थों का अधिक सेवन।
४. मलावरोध।
५. मानसिक कार्य की अधिकता।
६. अधिक चिन्ता व गम में डूबे रहना।
७. अप्राकृतिक मैथुन।
८. मानसिक दुर्व्यसनों की प्रवृत्ति।

○ स्वप्नदोष एक मानसिक व्याधि है। इसका सम्बन्ध मन से है। यदि मन वासनाओं से रहित होगा तो स्वप्नदोष हो ही नहीं सकता।

○ महीने में ३-४ बार स्वप्नदोप होना कोई रोग नहीं है, बल्कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण से ऐसा होना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है।

○ वैज्ञानिकों का विचार है कि हस्तमैथुन करने वाले व्यक्तियों के यौन अंग थकावट के कारण क्षुब्ध तथा उत्तेजित रहते हैं। वह किसी प्रकार का भार वहन करने में असमर्थ रहते हैं। इसलिए हस्तमैथुन करने वाले नवयुवकों को स्वप्न अधिक आते हैं।

○ शिश्न की सुपारी की खाल के नीचे और खाई के अन्दर सफेद मैल एकत्रित हो जाता है। इसके साफ न रहने से भी स्वप्नदोष होते देर नहीं लगती है।

लक्षण (Symptoms) —जब स्वप्नदोष महीने में ३-४ बार से अधिक होने लगता है, तब उसमें निम्न लक्षण मिलते हैं—
१. चेहरे की रौनक तथा सुन्दरता समाप्त हो जाती है।
२. रोगी को शिरःशूल रहता है।
३. अल्प परिश्रम से थकावट का आना।
४. सिर में भारीपन।
५. मलावरोध की शिकायत रहना।
६. शरीर दुर्बल हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. आँखों के आगे अंधेरा-सा छा जाता है। साथ ही दृष्टिशक्ति में कमी आ जाती है।

८. मूत्र के साथ कभी-कभी वीर्य की उपस्थिति मिलती है।

९. रोगी थोड़ा भी खाली बैठने पर ऊँघने लगता है।

१०. आँखें अन्दर को धँस जाती हैं।

११. मस्तिष्क में निर्बलता आने से रोगी की याददास्त कम हो जाती है।

१२. सारे शरीर में दर्द तथा टूटन होती है।

१३. रोगी में शीघ्रपतन के लक्षण मिलते हैं।

अन्य लक्षण—○ अनिद्रा, लज्जा की भावना, चिड़चिड़ापन, कटिशूल, सुख का अभाव, भय, थकान, जीवन में विरक्तता, क्षुधानाश, मितली आना, सीने में दबाव की अनुभूति, त्वचा का शीतल रहना, चेहरा लाल रहना, हृदय ध्वनि की अनियमितता तथा अवसाद आदि लक्षण मिल सकते हैं। किन्हीं-किन्हीं रोगियों में चिन्ता तथा व्याकुलता के लक्षण भी मिलते हैं।

○ जनरल प्रेक्टिस में चिकित्सक के पास स्वप्नदोष के जो रोगी आते हैं उनकी प्रायः यही शिकायत होती है कि जिस रात में उन्हें स्वप्नदोष होता है उसके अगले पूरे दिन उनका शरीर ढीला-ढाला रहता है और कमजोरी महसूस होती है। कुछ रोगी सिर और कमर में दर्द बतलाते हैं। उनमें मानसिक अवसाद के लक्षण भी मिलते हैं।

○ कुछ व्यक्तियों की दृष्टि की एकाग्रता में कमी और आँखों के पीछे की तरफ पीड़ा की शिकायत रहती है।

पर यह क्या है—उपरोक्त अनेकों लक्षण लगभग निश्चित रूप से रोगी की अपनी कल्पना में उत्पन्न होते हैं, किन्तु वास्तविकता कुछ और ही है। इसका कारण यह होता है कि रोगी यह समझता है कि 'वीर्य ही जीवन है'। अतः स्वप्नदोष के अनेकों रोगी प्रायः मानसिक अवसाद और चिन्ता से पीड़ित रहते हैं। इसी चिन्ता में उनकी पुंस्त्व-शक्ति क्षीण होती जाती है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. चिकित्सक को चाहिए कि सर्वप्रथम रोगी को इस रोग के भय से मुक्त करने का यत्न करे और उसे बतलाये कि—

(i) स्वप्नदोष कोई रोग नहीं है। स्वस्थ पुरुषों में भी स्वप्नदोष का होना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है।

(ii) स्वप्नदोष से कोई कमजोरी नहीं होती है।

(iii) पुरानी बेबुनियाद तथा मनगढ़न्त बातों को त्याग दें कि 'सौ बूंद रक्त से एक बूंद वीर्य बनता है'। यह सोच बिल्कुल निराधार है। जो व्यक्ति

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नित्य कई-कई बार स्त्री-सम्भोग करते हैं, वह भी स्वस्थ देखे जाते हैं। इस प्रकार से रोगी को मानसिक चिन्ता तथा भ्रम से मुक्त करें।

२. चिकित्सा केवल उन्हीं व्यक्तियों की करनी चाहिए जो अत्यधिक दुर्बलता की शिकायत करें और मानसिक अशान्ति से ग्रस्त हों।

३. रोगी को गन्दे विचारों से बचायें। अश्लील उपन्यास पढ़ने एवं सेक्स-प्रधान फिल्म देखने का परित्याग करें।

४. रोगी को किसी न किसी कार्य में व्यस्त रखना चाहिए।

५. रोगी का आहार सादा हो। मिर्च, मसाले, चटनी आदि का त्याग करें।

६. रात का भोजन सोने से २ घण्टे पूर्व कर लिया जाये। रात के समय गर्म दूध न पियें। यदि दूध पीना ही है तो ठंडा करके पियें।

७. इसमें मद्य का पूर्ण निषेध आवश्यक है। मद्य का सेवन उत्तेजना पैदा करता है।

८. रोगी को सलाह दी जाय कि रात में जितनी बार उसकी आँख खुले उसे पेशाब कर लेनी चाहिए। क्योंकि मूत्राशय में पेशाब भरे होने से इसका बोझ शुक्राणुओं पर पड़ता है, जिससे वीर्य स्खलित हो जाता है।

९. कुछ रोगियों में यह देखा गया है कि उन्हें प्रातःकाल एक निश्चित समय पर स्वप्नदोष होता है। ऐसे रोगियों को सलाह दी जाय कि वह प्रातः शीघ्र उठ जायें और शौचादि से निवृत्त होकर खुली हवा में टहलने जायें।

१०. रात में सोते समय ऐसा कोई कार्य न करे जिससे शिश्न पर अतिरिक्त दबाव पड़े। लंगोट तथा अंडरवियर ढीला पहनना चाहिए।

११. अधिकांश रोगी यह शिकायत करते हैं कि पीठ के बल लेटने से उनको स्वप्नदोष हो जाता है। ऐसी स्थिति में उन्हें सलाह दें कि वह अपनी कमर में एक तौलिया इस प्रकार बाँध ले कि उसकी गाँठ कमर पर रहे। ऐसा करने से वे कमर के बल नहीं लेट सकेंगे।

१२. अच्छी बातें करना, धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन, मन को प्रसन्न रखना आदि विशेष लाभकारी होता है।

१३. पेशाब के बाद जननेन्द्रिय को धोयें तथा शीतल जल से नित्य स्नान करें।

१४. वीर्य नाश के उपस्थित अन्य कारणों का निराकरण करें।

१५. मस्तिष्क तथा स्नायुमण्डल की थिकलता तथा क्षुब्धता का उपचार करें।

(२) औषधि-चिकित्सा—

℞ स्पीमेन फोर्ट (Spemen forte)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार ४ सप्ताह तक।

तत्पश्चात्—स्पीमेन टेबलेट प्लेन (Spemen tab. plain)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—टेण्टेक्स फोर्ट या ओकासा

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार।

साथ ही—फॉस्फोमिन या मल्टीविटामिन टॉनिक

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में २-३ बार।

अथवा—पोटैशियम ब्रोमाइड

मात्रा—१ ग्राम दिन में ३ बार जल से।

जैसे-जैसे स्वप्नदोष का विकार घटता जाये इसकी मात्रा घटाते जायें।

यदि स्वप्नदोष बहुत अधिक हो रहे हों तो—

पोटैशियम ब्रोमाइड १ ग्राम जल में घोल कर प्रत्येक मात्रा में टिं० ओपीयम ५ बूंद मिलाकर दें।

फिर भी लाभ न हो तो—

℞ ल्यूमिनल (Luminal) ६० मि० ग्रा० जल में घोल कर पिलायें।

साथ ही—पोटैशियम ब्रोमाइड	१५ ग्रेन
टिं० बेलाडोना	५ बूंद
टिं० हायोसायमस	५ बूंद
स्प्रिट क्लोरोफार्म	१० बूँद
डिस्टिल्ड वाटर	१ औंस
ऐसी १ मात्रा दिन में दो बार भोजनोपरान्त दें।	१ मात्रा

नोट—वास्तविकता यह है कि स्वप्नदोष की कोई भी पूर्ण सफल औषधि अभी तक आविष्कृत नहीं हुई है। इस रोग में केवल ऐसी ही दवाओं से लाभ पहुँचते देखा गया है जो रोगी के मानसिक और तन्त्रिका-तन्त्र के तनाव को शिथिल कर सके। इसके लिए सबसे निरापद औषधि 'पोटाशियम ब्रोमाइड' ही है।

अन्य औषधियां—

१. गार्डीनल टेबलेट (M. B.)—१-२ गोली सोने से आधे घण्टे पूर्व।

२. लेसीथिन (Lacithin)—१ मि० ली० १ दिन छोड़कर S/C दें।

नोट—कुछ लोग 'पासुमा स्टाँग' (मर्क० कं०) का भी प्रयोग करते हैं। इसकी १-१ गोली ४-४ घण्टे पर दी जाती है। साथ ही बीच-बीच में इसका सूचीवेध भी दिया जाता है।

३. बेलार्गल (Bellargal) (सैण्डोज कं०)—१ गोली शाम को और १ गोली रात को।

४. लार्गेक्टिल (Largactil) (M. B.)—२५ मि० ग्रा० की १ गोली सोने से आधे घण्टे पूर्व।

५. इलिक्जिर वैलेरियन ब्रोम (Elixir valerian brom) (एलेम्बिक)।

मात्रा—२ चम्मच सोने से १-२ घण्टे पूर्व।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वप्नदोष की मिश्रित चिकित्सा—

℞ स्पीमेन टेबलेट (हिना)	२ गोली
गार्डीनल टे० (M. B.)	२ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रातः और सोने से आधा घण्टे पूर्व ।

वन्ध्यत्व या बाँझपन
(Infertility)

परिचय—स्त्री अथवा पुरुष या दोनों में विद्यमान किसी विकृति के फल-स्वरूप सन्तनि उत्पन्न करने में असमर्थता को वन्ध्यत्व कहते हैं ।

कारण— ○ पुरुषों में वन्ध्यत्व—वीर्य में शुक्राणुओं की संख्या, चलन-शीलता एवं आकारिकी आदि का प्राकृत स्थिति में न होना आदि कारण से होता है ।

○ स्त्रियों में वन्ध्यत्व—योनि के रोग, गर्भाशयग्रीवा के विकार, गर्भाशय के विकार, डिम्ववाहिनियों के विकार तथा डिम्वग्रन्थियों के रोग आदि कारणों से होता है ।

उपरोक्त दोनों में मनोवैज्ञानिक कारण—पति-पत्नी के आपसी झगड़े, मन-मुटाव, चिंता या भय आदि भी बाँझपन उत्पन्न करते हैं । सम्भवतः यह मनो-वैज्ञानिक कारण अन्तःस्रावी ग्रन्थियों के स्रावों का असंतुलन उत्पन्न कर देते हैं, जिसके फलस्वरूप डिम्बक्षरण आदि महत्त्वपूर्ण क्रियाएँ नहीं हो पाती हैं और स्त्री सन्तान-सुख से वंचित रह जाती है ।

चिकित्सा—विटामिन 'ई' बाँझपन को दूर करने की प्रमुख औषधि है । विटोलिन (ग्लैक्सो) का इञ्जेक्शन दें ।

अथवा—विटोलिन (Vitolin) (ग्लैक्सो)

मात्रा—१ कैपसूल दिन में २-३ बार २-३ माह तक ।

अथवा—इयूविन (Euvin) (मर्क) अथवा इफीनाल कै० (Ephynal)

मात्रा—१ कैपसूल दिन में २-३ बार २-३ माह तक ।

अथवा—एटीसाइक्लीन (Eticycline) (सिवा-गैगी), डाइलोफार्म (Dyloform) (एलनवरीज), प्राजीनोन-सी (Progynon–C) (शैरिंग) इनमें से कोई एक ०.०५ मि० ग्रा० की १ गोली दिन में २ बार मासिकधर्म आने के पूर्व प्रतिदिन जीभ के नीचे रख कर घुलने दें । यह औषधि २० दिनों तक सेवन करायें ।

अथवा—गर्भ ठहरने के लिए—

○ ल्यूटोसाइक्लीन (Lutocycline), ल्यूटोफार्म (Lutoform) (एलनवरीज), प्रोजेस्ट्रोल (Progestrol) (आर्गेनन), लेप्रोनेक्स (Lepro-nex) (फाइजर), परमोल्ट-एन (शैरिंग)—इनमें से कोई एक ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—५ मि० ग्रा० दिन में ३ बार मासिकधर्म आने से २ सप्ताह पूर्व ।

योनि के तरल में अम्लता की अधिकता—

सोडाबाइकार्ब १ चम्मच १½ लीटर पानी में मिलाकर सम्भोग से पूर्व डूश करने से भी खारापन उत्पन्न होकर गर्भ ठहर जाता है ।

साथ ही—औषधि चिकित्सा के अतिरिक्त मनोवैज्ञानिक चिकित्सा अति आवश्यक है; इसमें—

○ स्त्री-वन्ध्यत्व की चिकित्सा करते समय रुग्णा को यह विश्वास दिलायें कि वह माँ बनने में समर्थ है । ऐसा आश्वासन कभी-कभी चमत्कारी प्रभाव दिखलाता है । प्रायः देखने में आता है कि ऐसी निराश और चिंतित स्त्री इस प्रकार के आश्वासन के बाद गर्भवती हो जाती है । इस प्रकार की मनोवैज्ञानिक चिकित्सा का प्रभाव किस प्रकार पड़ता है, कहना कठिन है । परन्तु ऐसा अनुमान है कि इससे उनकी मानसिक दशा के बलवती हो उठने से अन्तःस्रावी ग्रन्थियों को अधिक हार्मोन बनाने की प्रेरणा मिलती है ।

प्रायः देखने में आया है सन्तान की ओर से निराश दम्पति जब किसी बालक को गोद ले लेते हैं तो कुछ समय पश्चात् उस दत्तक पुत्र की माँ गर्भवती होकर स्वयं भी स्वस्थ बच्चे को जन्म देती है । इसलिए वन्ध्यत्व की चिकित्सा कराने वाली महिलाओं में विश्वास जाग्रत् करने की परम आवश्यकता है । रुग्णा को हतोत्साहित नहीं होने देना चाहिए ।

वन्ध्यत्व की मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१. ℞ ओवोसाइक्लीन	१ गोली
ल्यूटोसाइक्लीन	१ गोली
इविआन (मर्क) २०० मि० ग्रा० की	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार गाय के ताजे दूध के साथ दें ।

२. ℞ इफीनाल (रोशे कं०)	१ गोली
फर्टोमिड (सिपला)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में १ बार ५ दिन तक ।	१ मात्रा

○ इससे डिम्बक्षरण होकर गर्भधारण हो जाता है ।

३. ℞ एडिनाल (बायर)	१ कैपसूल
सिस्टोमेट्रिल (सीबा-गाइगी)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में १-२ बार जल से ।	१ मात्रा

नोट—स्त्री रोगों से सम्बन्धित विशिष्ट चिकित्सा हेतु लेखक की 'सचित्र स्त्रीरोग-चिकित्सा' देखें ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

षष्ठ खण्ड

*

तन्त्रिका-तन्त्र के रोग

(Diseases of Nervous System)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिरःशूल
(Headache)

पर्याय—शिरोवेदना, सिर-दर्द ।

परिचय—संक्रामक तथा दोषज सभी प्रकार की व्याधियों में शिरःशूल एक महत्त्वपूर्ण लक्षण होता है। कोमल प्रकृति के व्यक्तियों में शरीर के किसी भाग में उत्पन्न हुई विकृति के परिणामस्वरूप इसकी उत्पत्ति होती है।

○ यह समस्त रोगों का निदर्शक लक्षण मात्र होता है।

कारण—१. कपाल के अन्तर्गत धमनियों में रक्त के अधिक भर जाने, उनके फैलने तथा उनके तीव्र स्पंदन के कारण।

२. धमनियों में रक्तदाब (B. P.) के बढ़ जाने से।

३. रक्त में जीवाणु तथा विषरक्त की उपस्थिति।

४. शिरा-प्रसारक औषधियों (जैसे—नाइट्रेट) के अधिक प्रयोग से।

५. शरीर में हिस्टामिन पदार्थों के बढ़ने अथवा बाह्य एवं प्रतिकूल प्रोटीन के शरीर में प्रवेश करने से।

६. क्रोध आदि तीव्र आवेश से कपालीय धमनियों में डाइलेटेशन होने से।

७. चिंता और मानसिक आवेशों के कारण चेहरे और कपाल की मांस-पेशियों में तनाव के बढ़ने तथा वहाँ पर रक्त के कम पहुँचने से।

८. ब्लड-प्रेशर के कम होने के कारण मस्तिष्क को रक्त एवं ऑक्सीजन कम मिलने से, जैसा कि पाण्डुरोग में।

९. उन्निद्रता (Insomnia) की उपस्थिति में।

१०. मेनिञ्जाइटिस, मस्तिष्कार्बुद, मस्तिष्क-विद्रधि, हाइड्रोसेफेलस, मस्तिष्कगत आर्टीरियोस्क्लेरोसिस, थ्रोम्बोसिस एवं मस्तिष्कगत रक्तस्राव के परिणामस्वरूप।

११. मलावरोध, अजीर्ण, थकावट, मानसिक परिश्रम, चिंता, तेज धूप में देर तक यात्रा करना, नजला-जुकाम, दुर्बलता, हिस्टीरिया, मृगी, स्नायु-दुर्बलता, पेट में गैस आदि बनने के कारण।

१२. तीव्र ज्वरों की विषमयता की अवस्था एवं अन्य विषमयताएँ, समलवाय, माइग्रेन, यकृत् तथा पित्ताशय के विकार, स्त्रियों में मासिकधर्म की अनियमितता, कृमिरोग, विषमज्वर, न्यूमोनिया, आन्त्रिक ज्वर आदि व्याधियों में शिरःशूल एक प्रमुख लक्षण होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ शिरःशूल एक ऐसा लक्षण है जो विभिन्न रोगों में मिलता है।

लक्षण (Symptoms)—१. शिरःशूल हलका हो या तीव्र, रोगी को कष्ट पहुँचाता है। तीव्र दर्द में रोगी उठ-बैठ भी नहीं सकता है।

२. रोगी की निद्रा गायब हो जाती है।

३. कभी-कभी रोगी सिरदर्द के कारण अत्यधिक बेचैन रहता है।

४. वमन एवं मितली की उपस्थिति।

५. प्रायः सिरदर्द कपाल के सामने दोनों कनपटियों में या पीछे की ओर होता है। यह २–३ दिन तक उपस्थित रह सकता है।

६. पेट की गैस, स्नायुदुर्बलता तथा ब्लड-प्रेशर के रोगी में रात-दिन सिरदर्द रहता है।

७. सिर फटने जैसा दर्द प्रायः हाइपरटेंशन में रहता है।

८. तनाव के कारण जो दर्द होता है, उसमें इस प्रकार की शिकायत न होकर सिर में दबाव या जकड़ाहट आदि होती है।

९. मस्तिष्कार्बुद का दर्द प्रायः प्रातःकाल होता है।

१० खाँसने, झुकने और जोर लगाने से सिर में प्रेशर बढ़ता है।

११. मस्तिष्कावरणशोथ, तीव्र ज्वरों की विषमयता की अवस्था एवं दूसरी विषमताएँ, समलवाय, अर्धावभेदक आदि रोगों से ग्रसित व्यक्तियों में तीव्र स्वरूप की वेदना होती है।

१२. यकृत् तथा पित्ताशय के विकार, कब्ज, स्त्रियों में आर्तव की अनियमितता, रक्ताल्पता तथा कृमिरोग आदि व्याधियों से ग्रस्त रोगियों में प्रायः मन्द स्वरूप की वेदना मिलती है।

१३. चिंता, क्रोध आदि मानसिक कारणों का सिरदर्द से घनिष्ट सम्बन्ध प्रतीत होता है।

१४. आँख, नाक, कान, अस्थि-विकार, दन्त-विकार, ग्रीवा-विकार आदि के स्थानिक शोथ या वेदनामूलक विकारों में शिरःशूल का कष्ट अवश्य देखने को मिलता है।

प्रकार (Kinds)—शिरःशूल अनेक प्रकार का होता है। किन्तु यहाँ उसके कुछ प्रमुख भेदों का वर्णन किया जा रहा है।

सामान्य शिरःशूल

इस प्रकार का शिरःशूल प्रायः मानसिक कारणों से होता है। इसमें मस्तिष्क तथा उसकी मेम्ब्रेन्स की रक्तवाहिनियों में विस्फारण हो जाता है। यह सबसे अधिक मिलने वाला सामान्य प्रकार है।

चिकित्सा (Treatment)—○ इस प्रकार के शिरःशूल में एस्प्रिन औषधियाँ लाभकारी नहीं होती हैं। शामक औषधियों से विशेष लाभ मिलता है। इसमें 'फीनोबार्बीटोन' तथा 'डायजीपाम' प्रमुख स्थान रखती हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ औषधि-चिकित्सा के साथ-साथ चिन्ता तथा मानसिक असन्तुलनजन्य कारणों से रोगी को बचाना चाहिए।

○ निम्न औषधि-चिकित्सा इसमें लाभकारी होती है—

℞ टेबलेट फीनोबार्बीटोन ३० मि० ग्रा०

व्या० नाम—गार्डीनल टेबलेट

मात्र—१ गोली दिन में २ बार प्रातः और रात्रि में सोते समय।

नोट—रात्रि के समय इसकी ६० मि० ग्रा० की टेबलेट भी दी ज सकती है।

अथवा—℞ ऑक्सेजीपाम (Oxazepam) १५ मि० ग्रा०

व्या० नाम—सेरीपेक्स (Serepex)

मात्रा—१ गोली दिन में २-३ बार।

अथवा—टेबलेट डायजीयाम ५ मि० ग्रा०

व्या० नाम—टेबलट कम्पोज

मात्र—१ गोली दिन में ३ बार आवश्यकतानुसार।

आधे सिर का दर्द/अर्धकपारी
(Migraine)

पर्याय—अर्धावभेदक, हेमीक्रेनिया (Hemicrania), सूर्यावर्त, आधा शीशी का दर्द।

परिचय—यह दर्द सिर के आधे भाग में होता है। यह एक ऐसा शिरः-शूल है, जो वेगों में होने वाला तथा घण्टों तक रहने वाला होता है। इसमें जी मिचलाना, उबकाई, आँखों से चिनगारियाँ निकलना आदि लक्षण प्रकट होते हैं। सामान्यतया यह सिर के एक पार्श्व में होता है। इस प्रकार का दर्द बचपन से आरम्भ होता है और मध्य आयु तक पहुँचते-पहुँचते समाप्त भी हो जाता है।

○ This is a form of recurrent paroxysmal headache often confined to one side of the head beginning in childhood to adult life.

कारण—इसका ठीक-ठीक कारण नहीं मालूम हो सका है। सम्भवतः रक्तविकार, मैथुन की अधिकता, अपच, वृक्करोग, पुराना कब्ज आदि इसके उत्पन्न करने वाले उत्तरदायी कारण हैं।

प्रीसीपिटेटिंग फैक्टर्स—

१. चिन्ता रोग (Anxiety)।

२. अधिक परिश्रम (Over work)।

३. इमोशनल अपसेट्स, रजोनिवृत्तिकाल।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. उच्च रक्तदाब (Hypertension)।
५. सेरिब्रल ट्यूमर।
६. मासिकधर्म-पूर्व तनाव (Premenstrual tension)।
७. फास्टिंग स्टेट।
८. कुछ आहार जैसे—ऑरेञ्ज अथवा चॉकलेट।
९. पेशाब की बीमारी।
१०. धातुदोष।

○ पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में यह बीमारी अधिक देखने को मिलती है। यह रोग प्रायः पैत्रिक होता है।

○ स्त्रियों में इसका सम्बन्ध मासिकधर्म, गर्भावस्था अथवा प्रसव-पश्चात् के कुछ महीनों में विशेषरूप से मिलता है।

○ जो व्यक्ति बेकार बैठे रहते हैं अथवा दिमागी कार्य अधिक करते हैं या जो दूषित स्थानों में रहते हैं, उनमें यह रोग अधिक होता है। क्षुधा भी एक उत्तेजक कारण होता है।

उम्र (Age)—नवयुवक तथा वयस्कों में।

लिंग (Sex)—सामान्यतः स्त्रियों में।

फेमिली हिस्ट्री—पोजीटिव (+) मिलती है।

लक्षण (Symptoms)—१. प्रातःकाल जब रोगी तकिये से सिर उठाता है, तो उसका सिर चकराने लगता है। उसकी आँखों के सामने अंधेरा-सा छा जाता है। यह पूर्वरूप १०–१५ मिनट तक रहता है।

२. उपरोक्त पूर्वरूप के पश्चात् रोगी में अरुचि या मितली के लक्षण हो जाते हैं।

३. इसके पश्चात् रक्तवाहिनियाँ फैल जाती हैं और एक ओर की कनपटी या नेत्र पश्चियत प्रदेश पर चुभने वाला दर्द प्रारम्भ हो जाता है।

४. जिस आँख के सामने अँधेरा-सा आता है, उसके विपरीत दिशा की ओर यह दर्द आरम्भ होता है और धीरे-धीरे यह अन्य क्षेत्रों में फैलता जाता है और क्रमशः तीव्र होता जाता है। हिलने, प्रकाश पड़ने तथा शोरगुल से यह शूल और भी बढ़ जाता है।

५. शूल के साथ अरुचि तथा वमन का लक्षण मिलने लगता है। वमन हो जाने के पश्चात् रोगी को कुछ आराम मिलता है।

६. आँख और नाक से जल गिरता है।

७. २–३ घण्टे तक शूल क्रमशः बढ़ते रहने के बाद घटने लगता है।

८. जिस ओर दर्द होता है, उधर की पुतली फैली हुई होती है।

९. शाखाओं में दुर्बलता प्रतीत होती है। अन्त में रोगी को नींद आ जाती है और जब वह सोकर जागता है, तब तक दर्द समाप्त हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—इस प्रकार से यह दर्द क्रमानुसार पूरे दिन रहता है।

देखने में रोगी का चेहरा कुछ फीका दिखलाई देता है।

शिरःशूल के दौरे—सिरदर्द के दौरे बहुत वर्षों तक होते रहते हैं। मध्य आयु के बाद यह दौरे हलके पड़ जाते हैं और बन्द हो जाते हैं।

संक्षेप में—○ आधाशीशी में दर्द के दौरे पड़ते हैं और सिर फटने जैसी अनुभूति होती है। यह सिर के एक तरफ ही होता है और बाद के दौरे में भी उसी तरफ रहता है। इस प्रकार से शिरःशूल प्रस्पन्दन (Throbbing) प्रकार का होता है।

○ पीड़ा की तीव्रता के कारण रोगी में उत्क्लेश, वमन आदि भी उत्पन्न हो सकते हैं।

○ इस दर्द की विशेषता यह होती है कि इसके आक्रमण कुछ-कुछ अन्तराल पर चलते रहते हैं और रोगी पीड़ा की तीव्रता से बेचैन हो जाता है।

○ रोशनी के सामने रोगी की आँखें नहीं खुलतीं।

○ दर्द के दौरे के बाद गर्दन में जकड़ाहट रहती है।

○ दर्द के कारण रोगी अत्यन्त बेचैन रहता है और उसे नींद नहीं आती। उसे खाना-पीना अच्छा नहीं लगता और वह दुर्बल हो जाता है। रोगी अँधेरे कमरे में लेटने की इच्छा करता है। यह शूल लगभग १२ घण्टों में समाप्त हो जाता है।

याद रखिये—मनोभावों को दबाने से माइग्रेन का दौरा हो जाता है।

निदान (Diagnosis)—○ इस रोग के आक्रमण का समय प्रायः निश्चित होता है। सूर्योदय से सूर्यास्त तक सिर में दर्द रहने से इसके निदान में कोई कठिनाई नहीं होती है।

○ जैसे-जैसे सूर्य ऊपर की ओर बढ़ता जाता है, दर्द भी बढ़ता जाता है और जैसे-जैसे सूर्य दोपहर बाद ढलता जाता है, दर्द भी उसी क्रम से कम होता जाता है।

○ दौरे कई दिन, सप्ताह और महीनों के अन्तर पर पड़ते हैं।

पूर्वानुमान (Prognosis)—इसकी चिकित्सा कठिन है और चिकित्सा के निश्चित फल की आशा करना भी व्यर्थ है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोग के मूल कारण को दूर करें।

२. रोगी को अजीर्ण से बचायें।

३. मलावरोध न रहे, इसकी उचित चिकित्सा करें।

४. दौरे के पश्चात् शामक चिकित्सा करें।

५. दौरे के समय रोगी को अंधेरे कमरे में रखें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. रोगी को सोडावाटर और दूध पिलायें।

७. माथे पर बहुत शीतल अथवा बहुत गर्म पानी की पट्टी रखें।

८. सिर को बाँधने से भी आराम मिलता है।

निर्देश—पूर्ण विश्राम, उचित निद्रा, नियमित हलका व्यायाम तथा तेल-मालिश की व्यवस्था।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

१. दर्द के समय—

℞ डाइहाइड्रो अर्गोटामिन मीथेन सल्फोनेट

व्या० नाम—डाइहाइडर्गोट (Dihydergot)

मात्रा—१ मि० ली० मांसपेशीगत सूचीवेध। तत्पश्चात्—

कैफरगोट (Cafergot) अथवा मिग्रिल (Migril)

मात्रा—१-१ गोली प्रति १ घण्टे के अन्तर पर दिन में ३-४ बार।

अथवा—टेबलेट अर्गोटामीन टार्ट्रेट १ मि० ग्रा०

मात्रा—२ गोली दौरे के आरम्भ के तुरन्त बाद। लाभ न मिलने पर १-१ गोली प्रति आधा घण्टे पर तब तक सेवन कराते रहें जब तक लाभ न हो जाये।

नोट—ध्यान रहे कि २४ घण्टे में इसकी मात्रा ६ मि० ग्रा० से अधिक न हो। गर्भवती स्त्री में इसका प्रयोग निषिद्ध है। ब्लड-प्रेशर के अधिक होने तथा एन्जाइना पेक्टोरिस के रोगी में इसका प्रयोग न करें।

अथवा—○ बाह्य केरोटिड आर्टेरी पर दबाव डालना अथवा १००% ऑक्सीजन इन्हेलेशन नेजल मास्क द्वारा देना लाभकारी होता है।

○ एस्प्रिन, पैरासिटामोल अथवा कोडीन टेबलेट हलके माइग्रेन के दौरे में लाभकारी होती है।

२. दर्द के वेग को देर हो गई हो तो—इन औषधियों से लाभ नहीं होता है। ऐसी स्थिति में—कोडीन ६० मि० ग्रा० या सोडियम एमाइटल ८० मि० ग्रा० दें।

३. जी मिचलाना और वमन के लिए—टेबलेट स्टेमेटिल (Tab. Stemetil) ५ मि० ग्रा० उपरोक्त 'अर्गोटामीन टार्ट्रेट' की पहली मात्रा के साथ १ गोली इसे भी दें। बाद में इसे रोकथाम के लिए देते रहें।

निर्देश—कुछ रोगी ऐसे भी हैं, जिन्हें वमन होने पर माइग्रेन का दर्द कम हो जाता है। उनमें वमन-निरोधी औषधि देने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

सूचना—सरकार ने अब अर्गट+पीड़ाहर इन दोनों की मिश्रित औषधि रोक लगा दी है। अतः ऐसी औषधियाँ बाजारों में उपलब्ध नहीं हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोकथाम अथवा दो आक्रमणों के मध्य की चिकित्सा—

℞ टेबलेट कोडोमोलिडौन	१ गोली
टेबलेट गाइनर्जन	१ गोली
टेबलेट स्टेमेटिल	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार १ माह तक। इसके बाद गाइनर्जन टेबलेट प्रतिदिन १ बार दें। शेष औषधियाँ पूर्व मात्रा में ही १ मास तक दें।

अथवा— ℞ फीनोबार्बीटोन ३० मि० ग्रा०	१ गोली
अर्गोटामिन टार्ट्रेट १ मि० ग्रा०	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा तीव्र स्वरूप की गम्भीर अवस्था में दें।

अथवा— ℞ फीनोबार्बीटोन ३० मि० ग्रा०	१ गोली
स्टेमेटिल (Stemetil) ५ मि० ग्रा०	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में १ बार।	१ मात्रा
अथवा— ℞ स्टेमेटिल	५ मि० ग्रा०
निकोटिनिक एसिड	५० मि० ग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में १ बार।	१ मात्रा

निर्देश—इन औषधियों के प्रयोग से रोगी में इसकी आदत पड़ जाती है। अतः इन्हें अदल-बदल कर देना चाहिए।

माइग्रेन के दौरे से बचाव के लिए—अर्गोटामिन टार्ट्रेट का ०.२५ मि० ग्रा० का मांसपेशीगत इञ्जेक्शन दिया जा सकता है।

सान्तर अर्धकपारी (Status migraine)—इसमें रोगी के माथे में हथौड़े की चोट के समान शूल होता है। इसमें मानसिक उपचार (Psychotherapy) तथा अस्पताल में रोगी को भर्ती करा देने से कष्ट दूर हो जाता है।

○ इसमें शामक चिकित्सा + अर्गोटामीन से तत्काल लाभ मिलता है। निम्न इञ्जेक्शन मिलाकर प्रतिदिन १ बार सोने से पूर्व देने से पर्याप्त लाभ मिलता है-

इञ्जे० गाइनर्जन (Inj. Gynergen)	१ मि० ली०
इञ्जे० स्टेमेटिल (Inj. Stemetil)	१ मि० ली०
इञ्जे० एनाल्जिन (Inj. Analgin)	२ मि० ली०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा मांसपेशीगत इञ्जेक्शन रूप में।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माइग्रेन की रोकथाम में निम्न औषधियों का प्रयोग भी लाभकारी होता है—

१. बेलार्गल (Bellargal) (सैण्डोज)—१-२ गोली दिन में २-३ बार कुछ मास तक।

२. निकोटिनिक एसिड १०० मि० ग्रा०—दिन में २-३ बार भोजनोपरान्त कुछ मास तक।

३. रिबोफ्लेबीन—१० मि० ग्रा० दिन में ३ बार ५-६ मास तक।

४. डोरिल—२ मि० ग्रा० दिन में २-३ बार।

५. बेटानोल (Betanol) (M. M. Labs)—२० मि० ग्रा० दिन में ४ बार।

निषेध—○ ब्रॉन्कियल अस्थमा में इसका प्रयोग न करें।

६. मिग्रानिल (इनगा० कं०)—वयस्क—२ गोली जीभ के नीचे आराम मिलने तक प्रति ३० मिनट पर।

बालक—३-९ वर्ष वयस्क की $\frac{1}{3}$ मात्रा।

१०–१४ वर्ष—वयस्क की $\frac{1}{2}$ मात्रा।

निषेध—○ 'एञ्जाइना पेक्टोरिस' तथा 'कोरोनरी डिजीज' में इसका प्रयोग न करें।

७. रोनीकोल—$\frac{1}{2}$–२ गोली दिन में ४-५ बार।

८. एटारेक्स—१-१ गोली दिन में ३-४ बार।

९. ड्रामेमीन (सेरले कं०)—$\frac{1}{2}$–१ गोली रोगानुसार।

१०. सेरीडोन—१-१ गोली दिन में ३-४ बार।

११. साइनोपेन—१-१ गोली दिन में ५-६ बार।

○ तीव्र शूल में—गाडनर्जन + बेलाफोलीन—$\frac{1}{2}$ मि० ली० के साथ इञ्जे० रूप में।

माइग्रेन-नाशक उत्तम चिकित्सा-क्रम—

आक्रमण के समय (During attack)—

वेसोग्रेन (Vasograin) (केडिला)

मात्रा—१ गोली प्रति $\frac{1}{2}$ घण्टे पर ३ मात्रा तक।

अथवा—कैफरगॉट (Cafergot) (सैण्डोज) २ गोली तत्काल।

अथवा—मिग्रिल (Migril) या मिग्रानिल (Migranil)

मात्रा—२ गोली तत्काल और १ गोली आधे घण्टे बाद ५ गोली तक।

○ बालकों और गर्भवती स्त्री में इसका प्रयोग न करें।

स्टेमेटिल (Stemetil) ५ मि० ग्रा० की १ गोली

+

सेरिडोन (Seridon) (राँची)

ऐसी १ मात्रा पहले दें। स्टेमेटिल को सेरिडोन से आधे घण्टे पूर्व दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—℞ कैफरगॉट (सैण्डोज)	२ गोली
वेसोग्रेन (कैडिला)	१ गोली
ऐसी एक मात्रा आक्रमण होते ही दें।	१ मात्रा
अथवा—℞ सोनेरिल (एम० बी०)	१ गोली
सीलिन १०० मि० ग्रा०	१ गोली
कोडोपीन (स्टेडमेड)	२ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा सूर्योदय से पूर्व गर्म जल से दें। यदि दर्द का समय निश्चित न हो तो प्रातः-सायं दोनों समय एक-एक मात्रा दें।

निर्देश—यदि रोगी को कब्ज रहता हो तो पहले कब्ज दूर करें। तत्पश्चात् इस औषधि का सेवन करायें। कब्ज के लिए 'लैक्सिल' (बी० सी०) ४ गोली खिलायें।

अथवा—℞ बेटेनॉल (M. M. Labs) १० मिग्रा०	२ गोली
मिग्रिल (बी० डब्लु०)	१ गोली
न्यूरोबिऑन प्लेन (मर्क)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार भोजन के बाद।	१ मात्रा
अथवा—℞ फेनरगान (एम० बी०)	१ गोली
इण्डेराल (ए० सी० सी० आई०) १० मिग्रा०	१ गोली
कैफरगॉट (सैण्डोज)	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रातः सूर्योदय से पूर्व एवं आवश्यकतानुसार शाम को एक मात्रा जल से।

नोट—सिरदर्द, वमन, मितली तथा बेचैनी में एक साथ लाभ होता है।

अथवा—℞ मिग्रानिल (इनगा)	१ गोली
सीलिन ५०० मिग्रा० (ग्लैक्सो)	½ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा सूर्योदय से पूर्व जल से दें। आवश्यकतानुसार शाम को भी दी जा सकती है।

आक्रमणों के बीच की चिकित्सा—

℞ कोडोमोलीण्डोन (Codomolindon)	१ गोली
गाइनर्जन (Gynergen)	१ गोली
स्टेमेटिल (Stemetil)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार एक माह तक।	१ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्पश्चात् गाइनर्जन की १ गोली दिन में केवल १ बार १ माह तक।

डिक्सारिट (Dixarit) (बी० डब्लु०)

२ गोली दिन में २ बार। बढ़ाते हुए २ गोली दिन में ३ बार तक दें।

यदि १ सप्ताह के बाद लाभ न मिले तो—

लिब्रियम (Librium) ५ मि० ग्राम

अथवा—लार्पोज (Larpose) १ मि० ग्रा० दिन में २ बार।

फ़िर भी लाभ न हो तो—

डेसेरिल (Deseril) (सैण्डोज) १ मि० ग्रा० नित्य। मात्रा बढ़ाते हुए २ मि० ग्रा० तक दिन में ३ बार ३ माह तक दें।

प्रोपेनोलोल २० मि० ग्रा० दिन में २ बार।

तनावजन्य शिरःशूल
(Tension Headache)

परिचय—इस प्रकार के शिरःशूल में तनाव के कारण सिर में दबाव होने या जकड़ाहट के लक्षण होते हैं। लगभग एक तिहाई सिरदर्द के रोगी इसी श्रेणी में आते हैं।

कारण—१. भय, चिन्ता आदि मानसिक विकार।

२. गर्दन और स्कैल्प की मांसपेशियों पर बहुत देर तक खिचाव पड़ने से।

३. बहुत समय तक कार चलाते रहने से।

४. सिर पर चोट लगने से।

लक्षण—१. यह सिरदर्द अधिक तीव्र नहीं होता है और न ही प्रस्पन्द प्रकार का (Throbbing) होता है।

२. ऐसे सिरदर्द में वमन तथा मितली प्रायः अनुपस्थित रहते हैं।

३. सिरदर्द प्रायः सिर के पिछले भाग से आरम्भ होता हैं और समस्त सिर के चारों ओर फैल जाता है अथवा एक ही स्थान पर प्रतीत होता है।

४. माथा, गर्दन तथा शिरो वल्क (Scalp) को दबाने से दाबवेदना मिलती है।

चिकित्सा—इस प्रकार के शिरःशूल में 'एस्प्रिन टेबलेट' लाभकारी होती है। इसकी १–२ गोली दिन में २–३ बार दी जा सकती है।

O किसी-किसी रोगी में इससे लाभ नहीं मिलता है। ऐसी अवस्था में–

℞ मेप्रोबेमेट ४०० मि० ग्रा०

व्या० नाम—मिल्टाउन (Miltown) और इक्वानिल (Equanil)

मात्रा—१ गोली दिन में २–३ बार।

अथवा—ऑक्सेजीपाम (Oxazepam) १५ मि० ग्रा०

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्या० नाम—सेरेपैक्स (Serepax)
मात्रा—१–२ गोली दिन में २–३ बार।
अथवा—एस्प्रिन १२० मि० ग्रा०
कोडीन फॉस्फेट १० मि० ग्रा०
मेप्रोबेमेट १२० मि० ग्रा०
१ मात्रा

इसके साथ ही—ऑक्सेजीपाम (Serepax) ५ मि० ग्रा० टेबलेट रात में सोते समय।

अथवा—टेबलेट क्लोरडायजीपॉक्साइड १० मि० ग्रा०
व्या० नाम—टेबलेट इक्विब्रोम (Tab. Equibrom)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

नोट—इस औषधि को टे० एस्प्रिन के साथ देने से बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है और पीड़ा का शीघ्र शमन हो जाता है।

सहायक चिकित्सा—इन औषधियों के अतिरिक्त गर्दन की मांसपेशियों की मालिश और गर्म सेंक से लाभ मिलता है।

ज्वरजन्य शिरःशूल
(Headache in Fever)

○ सामान्य ज्वर युक्त सभी प्रकार की व्याधियों तथा सभी संक्रामक रोगों में यह सिरदर्द एक सामान्य लक्षण के रूप में मिलता है।

चिकित्सा—१. कारण का पता लगाकर मुख्य व्याधि की चिकित्सा करें।
२. कोल्ड कम्प्रेस (Cold compress)।
३. स्थानीय रक्तवाहिनियों को सिकोड़ने की व्यवस्था।
○ साथ ही शिरःशूल नाशक औषधियाँ—एस्प्रिन, सैरिडोन आदि में से किसी एक का उपयोग करना।

अतिरक्तदाबजन्य शिरःशूल
(Headache Duc to High Blood Pressure)

परिचय—आजकल ब्लड-प्रेशर के रोगी दिन-पर-दिन बढ़ते ही जा रहे हैं। चिकित्सक के पास जनरल प्रैक्टिस में यदि कोई ऐसा रोगी आता है जो सिरदर्द की बराबर शिकायत करता है तो उसका ब्लडप्रेशर अवश्य चेक करना चाहिए। क्योंकि अतिरक्तदाब के कारण भी सिरदर्द पाया जाता है।

लक्षण—१. अतिरक्तदाब के कारण उत्पन्न शिरःशूल प्रायः सिर के पिछले भाग में प्रतीत होता है।
२. रोगी के समस्त सिर में भारीपन रहता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. प्रायः दोपहर तक शिरःशूल कम हो जाता है।

४. अधिकांश रोगियों में चक्कर आता है।

चिकित्सा—रक्तदाब कम करने वाली औषधियों (Hypotensive drugs) के उपयोग से उत्तम लाभ मिलता है। रक्तदाब कम होने पर सिरदर्द स्वतः समाप्त हो जाता है। इसके लिए—

१. B रिसर्पीन (Reserpine)

व्या० नाम—सर्पासिल (Serpasil) १ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली नित्य।

२. फीनोबार्बीटोन (Pnenobarbitone) ३०० मि० ग्रा० + थियोब्रोमीन ३०० मि० ग्रा०।

व्या० नाम०—थियोगार्डीनल (M. B.)

विवर शिरोवेदना
(Sinus Headache)

○ इस प्रकार की शिरोवेदना उग्रस्वरूप के प्रतिश्याय के परिणामस्वरूप होती है।

विवर सिरोवेदना क्या है—नेत्रों के ऊपर और नीचे आनन अस्थियों (Facial bones) के मध्य कुछ रिक्त स्थान होता है; जिसमें सामान्यतया वायु भरी होती है, जिसे नासा-विवर (Nasal sinus) कहते हैं। यह नासा-विवर नाक में आकर खुलते हैं।

○ जिन व्यक्तियों में बार-बार जुकाम होने की प्रवृत्ति होती है, उनके नाक की श्लैष्मिककला में जीवाणुओं का द्वितीयक संक्रमण (Secondry infection) हो जाता है। संक्रमण को उत्पन्न करने वाले जीवाणु शनैः-शनैः नासा-विवरों की श्लेष्मकला में भी शोथ उत्पन्न कर देते हैं। शोथ की इस अवस्था को 'साइनूसाइटिस' कहते हैं।

○ संक्रमण के परिणामस्वरूप इन विवरों में बड़ी मात्रा में तरल एकत्रित होकर आस-पास की तन्त्रिकाओं (Nerves) पर दबाव पड़ता है। यह तन्त्रिकाएँ माथे और सिर में जहाँ-जहाँ फैली होती हैं, वहाँ इन नर्व्स की संवेदनशीलता अधिक हो जाती है, जिससे रोगी को पीड़ा की अनुभूति होती है। इसे ही विवर शिरोवेदना (Sinus headache) कहते हैं।

लक्षण—१. रोगी को उग्रस्वरूप का प्रतिश्याय होता है।

२. शोथ के कारण नासाविवर का रास्ता बन्द हो जाता है और इन स्थानों में तरल एकत्रित होने से विवरों के आस-पास के क्षेत्र में रोगी को पीड़ा की अनुभूति होती है।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. पीड़ा की प्रमुख विशेषता यह है कि रोगी के झुकने, करवट लेने, सीढ़ियों पर चढ़ने अथवा उतरने से पीड़ा में वृद्धि होती है। दर्द दोपहर के समय बढ़ जाता है।

४. जिन नासाविवरों में तरल एकत्रित होता है, उनके ऊपर के स्थान में दाबवेदना मिलती है।

५. आँखों में भारीपन प्रतीत होता है। रोगी आँखें बन्द किये लेटे रहना अधिक पसन्द करता है।

रोग का निदान—१. उपरोक्त लक्षणों के आधार पर रोग का निदान हो जाता है।

२. एक्स-रे परीक्षा भी रोग-निदान में सहायक होती है। इसमें एक्स-रे पी० एन० एस० तथा वाटर्स व्यू एण्ड लेटरल व्यू नैदानिक प्रयोगशाला में भेजे जाते हैं।

चिकित्सा—१. विवरों के पथ की सूजन कम की जाय और जो तरल विवरों में एकत्रित होता है वह बाहर निकल जाय।

२. विवरों के मार्ग की सूजन समाप्त हो जाने से ही छींकों के द्वारा दबाव पड़ने पर तरल बाहर निकल जाता है।

○ इसके लिए निम्न प्रकार से चिकित्सा करनी चाहिए—

१. संक्रमण को समाप्त करने के लिए—

℞ कैपसूल डॉक्सीसाइक्लिन १०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार (प्रथम दिन)

तत्पश्चात्—१०० मि० ग्रा० चौबीस घण्टे में १ बार पाँच दिनों तक।

अथवा—टेबलेट को-ट्राईमोक्साजोल

व्या० नाम—टेबलेट सेप्ट्रान या बैक्ट्रिम

मात्रा—२ गोली दिन में २ बार ५ दिनों तक।

अथवा—डबल सेप्ट्रान दिन में १ बार ५ दिन तक।

२. बंद नासा-विवरों को खोलने के लिए—

℞ म्यूकोरिस-ई (Mucoris-E)

मात्रा—३-४ बूँद दिन में ४ बार बन्द नासा में १ सप्ताह तक डालें।

अथवा—डिस्ट्रान नेजल ड्राप (Distran nasal drop)

मात्रा—३-४ बूँद दिन में तीन बार १ सप्ताह तक बन्द नासा में डालें।

३. शिरःशूल के लिए—

℞ ए० पी० सी० (A. P. C.) टेबलेट

अथवा—टेबलेट विकोरिल (Tab. Vikoril)

अथवा—टेबलेट डिस्ट्रान (Tab. Distran)

मात्रा—इनमें से कोई एक गोली दिन में ४ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. वाष्प सूँघना (Inhalation)—

टिंक्चर बेन्जोइन को गर्म पानी में डाल कर सूँघना।

○ इससे वायु-विवरों में एकत्रित स्राव पतला होकर बाहर निकल जाता है।

५. सामान्य स्वास्थ्य के सुधार हेतु—ऐसे रोगी को प्रतिदिन दिन में २ बार विटामिन-सी ५०० मि० ग्रा० की १-१ गोली सेवन करायें।

इससे शारीरिक रोगक्षमता उत्पन्न होकर बार-बार होने वाले जुकाम की प्रवृत्ति समाप्त हो जाती है।

६. नेत्र-तनावजन्य शिरःशूल (Headache due of eye tension)—

कारण—(i) अधिक लिखने-पढ़ने से आँखों में जोर पड़ने पर।

(ii) आँखों में अपवर्तन दोष (Error of refraction)।

लक्षण—रोगी की आँखें दुखती हैं तथा लाल हो जाती हैं।

चिकित्सा—(i) अपवर्तन दोष (Error of refraction) को उचित चश्मे द्वारा ठीक किया जा सकता है।

(ii) यदि ग्लाइकोमा उपस्थित हो तो उसकी चिकित्सा करें।

७. मधुमेहजन्य शिरःशूल (Diabetic headache)—

कारण—मधुमेह के रोगियों में रक्तगत शर्करा के अधिक कम होने पर (इन्सुलिन चिकित्सा जारी रहने पर भी) अन्य लक्षणों के साथ-साथ शिरःशूल भी उत्पन्न हो जाता है।

चिकित्सा—रोगी को तत्काल ग्लूकोज अथवा चीनी को पानी में घोल कर पिलायें। रक्त में शर्करा पहुँचते ही शिरःशूल समाप्त हो जायेगा।

८. पर्वतारोहणजन्य शिरःशूल—

कारण—इस प्रकार का शिरःशूल ऑक्सीजन कम मिलने से होता है। अधिक ऊँचाई पर ऑक्सीजन की मात्रा घट जाती है, जिससे पर्वतारोहियों को अधिक ऊपर चढ़ने पर इस प्रकार की शिरोवेदना उत्पन्न हो जाती है।

चिकित्सा—ऑक्सीजन इन्हेलेशन (Oxygen inhalation)।

९. मस्तिष्कार्बुदजन्य शिरःशूल—

कारण—इस प्रकार का शिरःशूल मस्तिष्क में ट्यूमर बनने से उत्पन्न होता है।

लक्षण—१. रात्रि में सोते समय शिरोवेदना से रोगी जाग जाता है।

२. क्षोभ तथा तंत्रिकातंत्र सम्बन्धी अन्य लक्षण मिल सकते हैं।

चिकित्सा—यह एक भयंकर व्याधि है। ऑपरेशन ही इसकी एकमात्र चिकित्सा है। रोगी को किसी बड़े अस्पताल में भर्ती कराने का परामर्श देना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिरःशूल-नाशक अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. केफीएस्प्रिन (Cafiaspirin) (बायर कं०)

मात्रा—वयस्क—१-२ गोली प्रति ४ घण्टे पर।

बालक—½ गोली प्रति ४ घण्टे पर।

२. कोफामोल (Cofamol) (CFL Pharma)

मात्रा—वयस्क—२ गोली। तत्पश्चात् १-२ गोली दिन में ३-४ बार आवश्यकतानुसार।

नोट—इसका सीरप भी आता है।

मात्रा—बालक—३-७ वर्ष—१-२ चम्मच दिन में ३ बार।

३. मेलीडेन्स (Melidens) (निकोलस)

मात्रा—वयस्क—१-२ गोली दिन में ३ बार।

बालक—६ वर्ष से ऊपर—१ गोली दिन में ३ बार।

३-६ वर्ष—½-१ गोली दिन में ३ बार।

४. पेरामेट (Paramet) (वेलेसी)

मात्रा—२ गोली। ६ गोली रोजाना अधिकतम।

५. पेराजोलाण्डिन (Parazolandin) (S. G. Pharma)

वयस्क—१-२ गोली दिन में ३ बार।

निषेध—पेप्टिक अलसर के रोगी में इसका प्रयोग न करें।

६. फाइसेप्टोन (Physeptone) (वेल्कम)

मात्रा—१ मि० ली० मांसपेशीगत इन्जेक्शन।

इसके अतिरिक्त—सिवाल्जिन, टुक्सीन, नोवाल्जिन, लेनाजेसिक (टाटा फार्मा), सेरिडोन, एनासीन, वेरिण्डोन, सिण्डोज, स्टर्न्स हेडेक क्योर, डोल्वीरोन, सिडेमोन, माइक्रोपाइरीन आदि शिरःशूलनाशक औषधियाँ हैं।

शिरःशूल की मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१. प्रतिश्याय, ज्वर एवं शारीरिक पीड़ा के साथ शिरःशूल—

℞ टेबलेट ए० पी० सी०	१ गोली
सेप्ट्रान	१ गोली
सीलिन	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ पुड़िया दिन में ३ बार गर्म जल के साथ।

२. स्नायु तथा मानसिक विकारों से उत्पन्न शिरःशूल में—

℞ सेरिडोन	१ गोली
ऐटारेक्स १० मि० ग्रा०	१ गोली
सीलिन १०० मि० ग्रा०	१ गोली
ऐसी १ मात्रा गर्म जल से दिन में ३ बार	१ मात्रा

 CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. तनाव, चिन्ता, रक्त की अधिकता एवं हाइपरटेंशन से उत्पन्न शिरःशूल में—

℞ सर्पासिल	१ गोली
रिडोक्सोन २०० मि० ग्रा०	१ गोली
ऐसी १ पुड़िया दिन में ३-४ बार।	१ मात्रा

४. प्रतिश्याय, नाक बन्द तथा ज्वरयुक्त शिरःशूल में—

℞ सुप्रिन (Suprin)	१ गोली
सीलिन १०० मि० ग्रा०	१ गोली
ऐसी १ पुड़िया दिन में ३ बार।	१ मात्रा

५. बेचैनी और चिन्तायुक्त शिरःशूल में—

℞ गार्डीनल ½ ग्रेन की	१ गोली
नोवाल्जिन	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ पुड़िया दिन में २-३ बार आवश्यकतानुसार।

अथवा—℞ पाइराल्जिन	१ गोली
इक्वानिल	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।	१ मात्रा

६. आधाशीशी का दर्द—

℞ कैफरगट	१ गोली
गार्डीनल ½ ग्रेन की	१ गोली
सीलिन १०० मि० ग्रा० की	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३–४ बार जल से।	१ मात्रा

तन्त्रिका-तन्त्र के रोग 6/2

गृध्रसीरोग
(Sciatica)

पर्याय—गृध्रसी, कटिस्नायुशूल, अर्कुलनसा, साइटिका आदि।

परिचय—यह एक विशिष्ट प्रकार का दर्द है, जो नितम्बों से शुरू होकर टखनों तक जाने वाले स्नायु (गृध्रसी नाड़ी–सियाटिका नर्व) में दर्द होने से उत्पन्न होता है। अर्थात् यह सियाटिका नर्व की शोथयुक्त अवस्था है। गृध्रसी-तन्त्रिका विकृत होकर कमर से लेकर पैर के टखने तक भयंकर पीड़ा होती

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। कभी एक पैर और कभी दोनों पैरों में धीमा-धीमा दर्द होता है, जो बाद में बढ़कर तीव्र हो जाता है।

कारण—१. नितम्ब-सन्धिशोथ।

२. कशेरुका शोथ (Spondylitis)।

३. गठिया, वायु, उपदंश आदि रोग के कारण।

४. स्नायुदुर्बलता, ठंड लगने, अधिक कठोर श्रम करने, अधिक चलने से।

५. चोट लगने से।

६. स्थानिक अस्थियक्ष्मा।

७. श्रोणिगत अर्बुद का दबाव।

८. इण्टर-वर्टिब्रल डिम्ब का फटना।

अन्य कारण—कुछ लोग इसका कारण 'Focal sepsis' मानते हैं। आमवात (Rheumatism), मदात्यय (Alcoholism), मधुमेह आदि भी इसका कारण माना जाता है।

○ लाक्षणिक गृध्रसी प्रायः निकटवर्ती मांसपेशियों में 'फाब्रोसाइटिस' के कारण होता है।

उम्र तथा लिंग—मुख्य रूप से यह २० वर्ष की अवस्था में पुरुषों में होता है।

सहायक कारण—ठंडक तथा कमर की मांसपेशियों में झटका लगने से यह दर्द उग्रतम हो जाता है।

लक्षण (Symptoms)—१. इस रोग में कमर से लेकर पैर तक गृध्रसी नाड़ी (Sciatica nerve) में लगातार दर्द होता है।

२. रोग के प्रारम्भ में रोगी के उक्त नर्व्स में सुन्नता तथा झुनझुनाहट प्रतीत होती है। जिससे रोगी को चलने-फिरने, उठने-बैठने और लेटने के समय अत्यन्त कष्ट होता है।

३. इस दर्द में नितम्बों से लेकर घुटने के पिछले हिस्से तक और कभी-कभी एड़ी तक दर्द की एक लकीर-सी खींची प्रतीत होती है।

४. यह दर्द कभी-कभी अधिक तेज होता है अथवा बहुत हलका प्रतीत होता है। तीव्र दर्द के समय रोगी का खड़ा रहना कठिन हो जाता है।

५. इस रोग में सबसे पहले एक तरफ की गृध्रसी नाड़ी में ही दर्द होता है। दर्द किसी समय टाँग में और घुटने की पिछली तरफ से होता हुआ टखने तक प्रतीत होता है।

○ यह दर्द कभी एक टाँग में और कभी दोनों टाँगों में होता है।

६. गृध्रसी नाड़ी का दर्द यद्यपि बराबर बना रहता है, फिर भी बिना पैर मोड़े आगे झुकने से, खाँसने अथवा छींकने से बढ़ता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निदान (Diagnosis)—१. गृध्रसी नाड़ी या उसकी शाखाओं के मार्ग पर दबाने से यदि रोगी को पीड़ा प्रतीत हो तो इस रोग का सन्देह करना चाहिए।

२. रोगी को कमर के बल लिटाकर टाँग को बिना मोड़े वंक्षण सन्धि पर संकुचित करने अथवा थोड़ा उठाने पर दर्द होने लगे तो उसकी पीछे की मांसपेशियों के ऊपर के भाग में फाइब्रोसिस अथवा वातिक गृध्रसी का सन्देह करना चाहिए।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) **सामान्य चिकित्सा** (General treatment)—

१. रोगी को कठोर शय्या पर २–३ सप्ताह तक विश्राम देना अति आवश्यक है।

२. रोग के कारणों का पता लगाने के लिए कटिप्रदेश का एक्स-रे कराना चाहिए और कारणों के अनुसार ही चिकित्सा करनी चाहिए।

३. टाँग पर मालिश नहीं करनी चाहिए; इससे कष्ट बढ़ता है।

४. वस्ति (एनीमा) के द्वारा आँतों की सफाई करें।

५. यदि मधुमेह हो तो उसकी उचित चिकित्सा करनी चाहिए।

६. स्थानिक रूप में किसी वेदनाहर औषधि का उपयोग करना चाहिए। साथ ही गर्म पानी की बोतल का सेंक करें। ○ लाभ न मिलने पर इन्फ्रा रेड का उपयोग करना चाहिए।

७. यदि दाँत की जड़ में पूय की उपस्थिति मिले तो उसकी उचित चिकित्सा आवश्यक है।

(२) **औषधि-चिकित्सा** (Medicinal treatment)—

दर्द की शान्ति के लिए—

℞ सोडियम सैलीसिलेट (Sodium salicylate)

मात्रा—६०० मि० ग्रा० दिन में ३–४ बार।

अथवा—बूटाजोलीडिन (Butazolidin)

मात्रा—२००–४०० मि० ग्रा० दैनिक मात्रा में।

अथवा—इस्जीपायरीन (Esgipyrine) (गायगी)

मात्रा—२–२ गोली दिन में २–४ बार।

अथवा—इञ्जे० इस्जीपायरीन ३.५ मि० ली० गहरे मांसपेशी में १ दिन छोड़कर।

साथ ही— मेक्राबेरीन (Macrabarin) १ मि० ली० रोजाना ३० दिन तक।

○ इस चिकित्सा से तन्त्रिकाशोथजन्य सियाटिका में विशेष लाभ मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपरोक्त चिकित्सा के असफल होने पर—

नोवोकेन (Novocain) अथवा जायलोकेन (Xylocain) ४% का ४ मि० ली० सियाटिका नर्व्स में सूचीवेध ।

○ अथवा तेज दर्द में—मॉर्फिन सल्फ दें ।

निर्देश—दर्द के निराकरण हेतु मुखमार्ग तथा सूचीवेध के रूप में वेदनाहर औषधियों, यथा—नोवाल्जिन, इस्जीपायरीन तथा बूटारिन का उपयोग लाभकारी होता है । माइक्रोपायरिन-सी का भी उपयोग किया जाता है ।

सियाटिका-नाशक मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१. ℞ कोडोपायरीन (Codopyrine)	१ गोली
रिडॉक्सोन ५०० मि० ग्रा०	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार ।	१ मात्रा

○ यह योग साधारण प्रकार के रोग में उत्तम है ।

२. ℞ लिब्रियम टेबलेट	१ गोली
विटनेलान	१ गोली
क्रोसिन	½ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २–३ बार ।	१ मात्रा

३. ℞ (i) ए० पी० सी०	१ गोली
लिब्रियम	१ गोली
डेकाड्रान	१ गोली
सीलिन १०० मि० ग्रा०	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ पुड़िया जल में मिलाकर दिन में २–३ बार ।

(ii) ब्रूफेन ४०० मिग्रा० की १ गोली दिन में ४ बार २ सप्ताह तक ।

(iii) टेबलेट कालपोल ½ गोली दिन में २ बार ।

(iv) इञ्जे० ऑप्टीन्यूरॉन (Inj. Optineurone)

मात्रा—३ मि० ली० I/M १ दिन छोड़कर १० इञ्जेक्शन तक ।

(v) रिलेक्सिल आइण्टमेण्ट दिन में २ बार लगायें ।

(vi) लीडर कोर्ट (Leader cort) १ गोली दिन में ३ बार ।

४. ℞ इस्जीपायरीन (एस० जी०)	२ गोली
न्यूरोबियान फोर्ट (मर्क)	१ गोली
डेल्टाकॉर्टिल (फाइजर)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजनोपरान्त ।	१ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. ℞ मेक्राबेरिन (ग्लैक्सो)	२ गोली
सिवाल्जिन कम्पोजीटम (सिबा-गैगी)	२ गोली
विटाप्लेक्स सीरप (ईस्ट इण्डिया)	१० मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजनोपरान्त ।	१ मात्रा
६. ℞ इक्वाजेसिक (वीथ)	१ गोली
बीटाफ्लेम (विलको)	१ गोली
एनाल्जिन ५०० मि० ग्रा०	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २–३ बार जल से दें ।	१ मात्रा

साथ ही—१. एस्जीपायरीन ५ मिली० मांसपेशीगत हर तीसरे दिन ।

२. न्यूरोबियान ३ मि० ली० मांसपेशीगत प्रति तीसरे दिन ।

सियाटिका में प्रयुक्त अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

टेबलेट्स—

१. नोवापायरीन (Novapyrine)—१–३ गोली दिन में ३–४ बार ।

२. फिनास्कोडीन (Phenascodine)—१–२ गोली दिन में ३–४ बार ।

३. एल्गीकोर्ट (Algicort)—१–२ गोली भोजनोपरान्त दिन के २ बार ।

४. पायरालिजन (Pyaralgin)—१–२ गोली आवश्यकतानुसार ।

५. प्रेडासिन (Predacin)—१–२ गोली दिन में ३–४ बार ।

इञ्जेक्शन—

१. एस्जीपायरीन—३ से ५ मि० ली० गहरे मांसपेशी में नित्य या तीसरे दिन ।

२. टोटालिन बी०—१–२ मि० ली० मांसपेशीगत ।

३. नोवाल्जिन—२–५ मि० ली० तीसरे दिन मांसपेशी या नस में ।

४. पैथीडीन हाइड्रोक्लोराइड—तीव्र दर्द की स्थिति में—५–१० मि० ग्रा० नित्य I/M या S/C दें ।

५. बूटारिन (Butarin)—१ मि० ली० मांसपेशीगत १ दिन छोड़कर ।

६. फाइसेप्टोन—१ मि० ली० I/M या S/C या I/V रूप में ।

७. यूनाल्जिन—५–१० मि० ली० मांसपेशीगत ।

८. विटामिन बी$_{१}$—१ मि० ली० (१०० मिग्रा०) रोजाना या तीसरे दिन मांसपेशीगत ।

९. मैक्राबिन इञ्जे०—रोजाना या तीसरे दिन १ माह तक ।

नवीनतम औषधियाँ (Recent medicines)—

१. मेलीडेन्स (Melidens)

वयस्क—१–२ गोली दिन में ३ बार ।

बालक—६ वर्ष से ऊपर—१ गोली दिन में ३ बार ।

३ से ६ वर्ष—½ गोली दिन में ३ बार ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. पारामेट (Paramet) (वैलेसी)
मात्रा—२ गोली । अधिकतम मात्रा ६ गोली नित्य ।
३. प्रेस्टीफेन फोर्ट (Prestifen forte) (सिन्थिको)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार ।
४. प्रेस्टीजेसिक (Prestigesic) (सिन्थिको)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार अथवा आवश्यकतानुसार ।
○ बच्चों के लिए इसका 'पीडियाट्रिक ड्राई सीरप' भी आता है ।
मात्रा—५ मि० ली० दिन में ३ बार ।
५. ट्रोमाजेसिक (Tromagesic) (थेमिस केमिकल्स)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार ।
चिरकारी रोग की अवस्था में—१ गोली दिन में ३ बार ।
६. डोल्विरॉन (Dolviran) (बायर)
मात्रा—१-२ गोली आवश्यकतानुसार ।
७. ऑप्टालिडोन (Optalidon) (सैण्डोज)
मात्रा—१-३ गोली आवश्यकतानुसार ।
८. एल्जेसिन (Algesin) (एलेम्बिक)
मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार भोजनोपरान्त ।

○ यदि कब्ज हो तो कैस्टर आयल १५-३० मि० ली० रात्रि में तथा प्रातःकाल पिलायें ।

○ रोग की तीव्रावस्था में इसका इञ्जे० ३ मि० ली० की मात्रा में गहरे मांसपेशी में लगायें ।

सियाटिका-नाशक अनुभूत योग—

एस्जीपायरीन (सुहृद् गायगी)	१ गोली
न्यूरोबियान फोर्ट (मर्क)	½ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार भोजनोपरान्त । ⊡

तन्त्रिका-तन्त्र के रोग 6/3

कटिवेदना
(Lumbago)

पर्याय—बैक-एक् (Backache), Pain is trunk, कटिशूल, कटि-वात, कमर का दर्द ।

परिचय—यदि वातरोग कमर की पेशियों में हो जाय तो उसे कटिवात (Lumbago) कहते हैं । कठोर परिश्रम, सर्दी लगना, कब्ज एवं धातु की

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षीणता के कारण अकस्मात् कमर में दर्द होने लगता है। जिससे झुकने, बैठने और मुड़ने पर दर्द बढ़ जाता है।

○ इस रोग में रोगी न सीधा होकर बैठ सकता है और न आराम से खड़ा हो सकता है। कटिशूल भी शिरःशूल के समान एक कष्टदायक व्याधि है।

कारण—१. सर्दी लगना।
२. फ्लू, गर्भाशयग्रीवाशोथ।
३. टेबीस डॉर्सेलिस (Tabes dorselis)।
४. स्पाइनल ट्यूमर (Spinal tumour)।
५. पॉट्स डिजीज (Pott's disease)।
६. स्पॉण्डीलाइटिस (Spondilitis)।
७. मेनिञ्जाइटिस (Meningitis)।
८. विसर्प (Herpes zoster)।
९. हिस्टीरिया (Hysteria)।
१०. पानी में भींगना।
११. भारी वस्तु उठाना।

○ उपरोक्त कारणों से यह रोग अचानक पैदा हो जाता है। स्त्रियों को प्रायः श्वेतप्रदर अथवा मासिकधर्म की विकृतियों में उनके कमर में दर्द मिलता है।

लक्षण—१. रोगी की कमर में दर्द होता है।
२. तापक्रम कभी बढ़ा हुआ मिलता है और कभी नहीं भी मिलता।
३. प्रभावित स्थान को दबाने या हिलाने-डुलाने से दर्द बढ़ता है।
४. जब दर्द तीव्र स्वरूप का होता है, तब खाट से उठना भी मुश्किल हो जाता है।

निदान (Diagnosis)—जब कोई रोगी शूलनिवारण हेतु चिकित्सक के पास आता है, तब चिकित्सक को चाहिए कि रोग-निदान हेतु रोगी से ऐसे प्रश्न करे जिससे कि रोगी के विशिष्ट तन्त्रिका-तन्त्र की विकृति का पता लग सके। साथ ही रोगी के छींकने व खाँसने पर शूल घटता अथवा बढ़ता है, इसकी भी जानकारी प्राप्त करनी चाहिए।

निम्न लक्षणों के आधार पर विशिष्ट तंत्रिकाजन्य रोग का निदान किया जाता है—

१. कटिप्रदेश में मेखला शूल तथा नेत्रतारे और तंत्रिकागत अन्य प्रतिक्रियाएँ मिलने पर 'टेबीस डॉर्सेलिस' नामक रोग की शंका करनी चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. यदि वृद्धावस्था में कटिप्रदेश के तंत्रिकामूल में शूल हो एवं रोगी में उपदंश का इतिहास मिले तो उक्त स्थान पर किसी न किसी प्रकार के उपदंश की सम्भावना समझना चाहिए।

३. यदि रोगी आगे की ओर कमर झुकाकर चलता हो तो रीढ़ का यक्ष्मारोग समझना चाहिए।

४. यदि शूल का स्थान बदलता हो तथा उसका सम्बन्ध किसी विशेष तंत्रिका से न हो तो हिस्टीरियाजन्य अथवा किसी अन्य सामान्य रोग के कारण इसकी शंका करनी चाहिए।

५. किसी-किसी केसिस में यह कटिशूल 'एपेण्डीसाइटिस' तथा गैस्ट्रिक अल्सर में भी होता है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. सर्वप्रथम रोगी के कष्ट का निवारण करें। इसके लिए शूलहर औषधियों का तत्काल प्रयोग करना चाहिए।

२. गर्म पानी की बोतल से प्रभावित स्थान को सेंकना चाहिए। लाभ न मिलने पर इन्फ्रारेड (Infra-red) के स्थानिक सेंक से विशेष लाभ मिलता है।

३. अन्य चिकित्सा तत्तत् कारणों के अनुरूप करनी चाहिए।

(२) औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ टेबलेट इक्वाजेसिक (Tab. Equagesic)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार भोजन के बाद तीव्रता समाप्त होने तक। तत्पचात्—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—टेबलेट बेसीरोल (Tab. Besirol)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार भोजनोपरान्त।

प्रभावित स्थान पर मेडिक्रीम (Medicrem) अथवा रिलेक्सिल आइण्टमेण्ट की दिन में २-३ बार हलकी मालिश तथा सिंकाई करें।

निर्देश—२-३ सप्ताह तक शय्या पर पूर्ण विश्राम।

मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१. ℞	टेबलेट कैल्सीनोल	१ गोली
	टेबलेट बेरिन	१ गोली
	टेबलेट ट्रासेण्टीन	१ गोली
	टेबलेट एनासिन	१ गोली
	ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार।	१ मात्रा

○ यह प्रिस्क्रिप्शन समस्त प्रकार के कटिशूल में लाभकारी है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. ℞ एस्जीपायरीन (एस० जी०)	१ गोली
मैक्राबेरीन (ग्लैक्सो)	१ गोली
विटाहैक्स्ट्स सीरप (हॉचेस्ट)	१० मिली०
गोलियों को पीस कर उसमें सीरप मिला लें।	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार जल से दें।

३. ℞ कोडोपायरीन	१ गोली
रिडोक्सिन ५०० मि० ग्रा०	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार।	१ मात्रा

नोट—साधारण कटिशूल में लाभकारी।

४. ℞ न्यूरोबियॉन फोर्ट (मर्क)	½ गोली
बूटाकॉर्टिण्डोन (इण्डोन)	२ गोली
विटाप्लेक्स (ईस्ट इण्डिया)	१० मिली०
गोलियों को पीस कर सीरप में मिला लें।	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार जल से।

○ साथ ही—न्यूरोयॉन (मर्क) ३ मि० ली० या ट्राईरेडिसाल-एच (मर्क) ५०० या १००० माइक्रोग्राम प्रति मि० ली० शक्ति का १ मि० ली० अथवा इन्जे० ऑप्टीन्यूरान ३ मि० ली० गहरे मांसपेशी में लगायें।

नोट—यह इन्जेक्शन प्रति तीसरे दिन दिये जाते हैं।

५. ℞ लिब्रियम	१ गोली
क्रोसिन	१ गोली
सीलिन १०० मि० ग्रा०	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ४ बार जल से।	१ मात्रा
६. ए० पी० सी०	१ गोली
नोवाल्जिन	१ गोली
रिडॉक्सोन ५०० मि० ग्रा०	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार जल से।	१ मात्रा

नोट—यह योग श्रोणिवेदना तथा कष्टरजयुक्त कटिशूल में उपयोगी है।

७. ℞ बिटनेलॉन ५ मि० ग्रा०	१ गोली
रिडॉक्सोन ५०० मि० ग्रा०	१ गोली
एस्प्रिन	३०० मिग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार चाय के साथ।	१ मात्रा

नोट—यह आमवातजन्य कटिशूल में लाभकारी है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. ℞ ऑप्टालिडॉन (सैण्डोज)	१ गोली
ऑक्साल्जिन (कैडिला)	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार जल से दें।

९. ℞ ए० बी० सी० लिनिमेण्ट	१५ मिली०
आयल टर्पेण्टाइन	½ मिली०
मस्टर्ड आयल	६½ मिली०
	१ मात्रा

सबको मिलाकर प्रभावित स्थान पर दिन में २-३ बार मलें।

कटिशूल-नाशक अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. एण्टाडोन (सिपला)—१-२ गोली दिन में २-३ बार।

२. मायानेसीन (Myanecine)—१-२ गोली दिन में ५-६ बार।

३. सेडामोन (Sedamon)—१-२ गोली दिन में २-३ बार।

४. सेरिडोन (रोशे)—१-१ गोली दिन में २-३ बार।

५. इक्वानिल (वीथ)—१-१ गोली दिन में ३-४ बार।

६. पायरालिजन (एलेम्बिक)—१-२ गोली आवश्यकतानुसार।

७. प्रेडनासील (Prednacyl) (आर्गेनन)—१-२ गोली दिन में ३ बार।

८. सेलामाइड (Salamide)—१-२ गोली दिन में ३-४ बार।

९. एल्गीकोर्ट (जॉन वाइथ)—१-२ गोली दिन में २ बार भोजनोपरान्त।

१०. पैराफोन टेबलेट (इथनोर)—१-२ गोली दिन में ३ बार।

११. एरिस्टोपायरिन (एरिस्टो कं०)—२ गोली दिन में ३ बार।

१२. वेसीरोल (विन मेडीकेयर)—१-२ गोली दिन में ३ बार।

१३. लेनाजेसिक (Lenagesic) (टाटा फार्मा)—१-२ गोली प्रति ६ घण्टे पर।

१४. मेलीडेन्स (निकोलस)—१-२ गोली दिन में ३ बार।

बालक—½–१ गोली दिन में ३ बार।

१५. मेफ्टाल (Meftal)—२ कैप्सूल दिन में ३ बार।

मेफ्टाल-५०० भी आता है। मात्रा—१ कै० दिन में ३ बार।

इसका लिक्विड भी आता है।

नवीनतम औषधियाँ—

१. मेंटापार (Metapar) (C F L Pharma)—२ गोली। अधिक से अधिक ६ गोली २४ घण्टे में।

२. नॉर्जेसिक (Norgesic) (सिपला)—१-२ गोली दिन में ३ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. पेरामेट (Paramet) (वालेस)—२ गोली। अधिकतम ६ गोली २४ घण्टे में।

४. सेडिन फोर्ट (Sedyn forte) (एम० एम० लैब०)—१-२ मिली० I/M इञ्जेक्शन।

५. जिमाल्जिन ए (Jimalgin–A) (रेलिस)—१-४ गोली नित्य।

स्थानीय प्रयोग के लिए—

१. प्रेस्टीजेसिक क्रीम (सिन्थिको)—प्रभावित भाग पर दिन में २-३ बार मलें।

२. रुमाटिन (नोल)—दिन में ३-४ बार मलें।

नोट—यह 'सियाटिका' तथा 'मोच' में भी उपयोगी है।

३. एल्जिपान (बाइथ कं०), स्लोन्स लिनीमेण्ट (वार्नर कं०), यूथेरिया क्रीम (बंगाल केमिकल), वेटुल आइल (हक्सले)—इनमें से किसी का भी उपयोग किया जा सकता है। □

तन्त्रिका-तन्त्र के रोग 6/4

लास्य/कम्पवात
(Chorea)

पर्याय—नर्तन रोग; लासक, अंगनर्तन, ताण्डव, अंगों का अपसारण, अंगों का अकारण हिलना।

परिचय—Chorea is a convulsion disease with irregular and jerky movements.

○ कोरिया एक आक्षेप वाली व्याधि है, जिनमें अनियमित तथा जर्की (Jurky) हरकतें होती हैं। यह एक पुराना स्नायविक रोग है। कभी-कभी यह पैत्रिक प्रभावों से भी होता है। चेहरा, कमर एवं गर्दन नहीं मुड़ती तथा आँखें नहीं झपकती। रोगी छोटे-छोटे कदम उठाता है। उसका सिर, हाथ-पैर जीभ और अन्य अंग अकारण ही हिलते और काँपते रहते हैं।

रोग का कारण—इसके निम्न उत्पादक कारण माने जाते हैं

१. **मुख्य उद्दीपक कारण**—भय, क्रोध, मेरुदण्ड में चोट का लगना, मासिकधर्म की गड़बड़ी या अनियमितता आदि।

२. आमवात ज्वर, खसरा एवं स्कार्लेट फीवर आदि संक्रामक रोगों के कारण।

○ स्नायविक एवं अवसाद रोग से ग्रस्त परिवार के बच्चे इस रोग से अधिक प्रभावित होते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लक्षण (Symptoms)—१. बालक में उग्र स्वरूप की हरकत के साथ शरीर में कम्पन होता है तथा वह कुर्सी या चारपाई से नीचे गिर जाता है।

२. रोगी बालक को बोलने तथा लेटने में अत्यधिक कष्ट होता है।

३. हाथ-पैर, मुखमण्डल तथा जीभ आदि में अनैच्छिक कम्पन होता है।

४. पूरा शरीर इधर-उधर हिलता-डुलता है।

५. रोगी को देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे उसका सारा शरीर नृत्य कर रहा हो।

६. स्मरणशक्ति दुर्बल हो जाती है।

७. कभी-कभी रोगी में संज्ञाहीनता (Delirium) तथा दृष्टिगत निर्मूल भ्रम की अवस्था भी उत्पन्न हो जाती है।

८. कुछ केसिस में पक्षाघात के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं, जिसका प्रभाव किसी एक हाथ पर अथवा दोनों हाथों पर पड़ता है। इस प्रकार से रोगी का प्रभावित अंग बेकार हो जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी बालक को पूर्ण विश्राम दें।

२. गर्म पानी से स्नान कराना उपयुक्त रहता है।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)

℞ क्लोरप्रोमेजीन (Chlorpromazine)

व्या० नाम—लार्गेक्टिल (Largactil) २५ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

ट्राइफ्लूओपेराजीन (Trifluoperazine) ५ मि० ग्रा०

व्या० नाम—इस्केजीन (Eskayzine)

मात्रा—१ गोली दिन में २ या ३ बार।

सावधान—इन औषधियों का लगातार प्रयोग नहीं करना चाहिए।

प्रेडनीसोलोन (Prednisolone) ३० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार। मात्रा धीरे-धीरे घटाते जायें।

निम्नलिखित चिकित्सा-क्रम भी कोरिया में लाभकारी है-

℞ पेण्टिड्स–४०० (Pandids–400)

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

एस्प्रिन (Asprin) टेबलेट ३०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

टेबलेट सेरीनेस (Tab. Serenace) १·५ मि० ग्रा०

मात्रा—½ गोली दिन में ३ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेचैनी की अवस्था में—

फीनोबार्बीटोन (Phenobarbitone) ३० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

आक्षेपों में—कभी-कभी हायोसीन हाइड्रोब्रोमाइड के इञ्जेक्शन से पर्याप्त लाभ मिलता है।

कोरियानाशक पेटेण्ट ओषधियाँ—

१. गार्डीनल (Gardinal)—१-२ गोली दिन में ३-४ बार।

२. मायनेसिन (Myanesin)—१-२ गोली दिन में ३-६ बार।

३. एनूरोक्सिन (Anuroxin)–१-१ गोली आवश्यकतानुसार।

४. फ्रीजिविट फोर्ट—३-६ गोली २४ घण्टे में।

५. केमेड्रीन (Kemadrin) (वरोज वेल्कम)—५–२० मि० ग्रा० दिन में ३ बार दें।

○ इसकी २·५ और ५ मि० ग्रा० की गोली आती हैं।

○ यह पक्षाघात युक्त कम्पन, पट्ठों की कठोरता, मुँह से लार बहने और ढीले होंठ रहने में लाभकारी है।

६. पैसीटोन (Pacitone) (सायनेमिड)—२ मि० ग्रा० की गोली आती है। पहले दिन १ मि० ग्रा० देकर ३ से ५ दिन के अन्तर पर २ मि० ग्रा० बढ़ाते हुए कुल ६ से १० मि० ग्रा० तक प्रतिदिन भोजन के समय ३-४ मात्राओं में बराबर विभाजित कर दें।

७. पार्बेज (Parbez) (मेडिकेयर)—पहले दिन १ मि० ग्रा०, दूसरे दिन २ मि० ग्रा० और शेष 'पैसीटोन' के समान सेवन करायें।

८. एमैण्ट्राल (Amantral) (सिपला)—१०० मिग्रा० दिन में २ बार। जब इसके साथ दूसरी औषधि भी दी जा रही हो तो इसका १०० मि० ग्रा० का कैप्सूल दिन में १ बार दें।

९. लेवोपा (Levopa) (कार्टर-वालेस)—२५०-१००० मि० ग्रा० (½-२ गोली) प्रतिदिन कई मात्राओं में बाँट कर दें। तत्पश्चात् बढ़ाते हुए २·५ से ८ ग्राम तक प्रतिदिन भोजन के साथ सेवन करायें। ⊡

तन्त्रिका-तन्त्र के रोग 6/5

बहुतन्त्रिकाशोथ
(Polyneuritis)

पर्याय—नाड़ी-प्रदाह, बहुनाड़ीशोथ, स्नायु-प्रदाह, तंत्रिकाशोथ, नाड़ी शोथ, पेरिफेरल न्यूराइटिस, पॉलीन्यूरोपेथी, मल्टीपुल सिमेट्रिकल पेरिफेरल न्यूराइटिस।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिचय—जब किसी एक प्रधान स्नायु में शोथ पैदा हो जाता है, तब उसे न्यूराइटिस कहते हैं और जब प्रधान और उसकी सहवर्ती कई स्नायुओं में शोथ हो जाता है तो उसे बहुतन्त्रिकाशोथ (Polyneuritis) कहते हैं। इसमें दर्द, चक्कर, चिलक आदि विकार हो जाते हैं। जब प्रान्तीय तंत्रिकाओं में शोथ हो जाता है, तब उसे प्रान्तीय तंत्रिकाशोथ (Peripheral neuritis) कहते हैं।

○ It is a syndrome characterised by disturbances of the functions of peripheral nerves due to varised aetiology.

कारण—१. बैक्टीरियल तथा वाइरल इन्फेक्शन।

२. विष (Toxic)—मद्य, संखिया, लेड, मरकरी, आई० एन० एच०, क्लोरीन कम्पाउण्ड, कार्बनडाइसल्फाइड, कार्बन मोनोऑक्साइड आदि के लम्बे समय तक शरीर में जाते रहने से।

३. डेफीसियेन्सी डिजीज (Deficiency disease)—बेरी-बेरी, बी१२ न्यूरोपैथी, पेलाग्रा, फोलिक एसिड की न्यूनता, न्यूट्रीशनल न्यूरोपेथी।

४. मेटाबोलिक डिजीज़—डायबिटीज़, गर्भावस्थाजन्य यूरीमिया, मिक्सोडीमा, गठिया, यकृद् विकार।

५. जेनेटिक तथा हेरीडिटेरी रोग—पारिवारिक पॉलीन्यूराइटिस।

६. मेलिग्नेन्सी (Malignency)।

७. इडियोपैथिक (Idiopathic)।

अन्य कारण—लाठी या मुक्के की चोट लगना, ठंड लगना आदि।

रोग लक्षण—१. यह रोग किसी भी अवस्था में हो सकता है। किन्तु २० से ४० वर्ष की अवस्था में अधिकतर होता है।

२. रोग का प्रारम्भ क्रमशः होता है।

३. जिस स्नायु में शोथ होता है, उसमें चिलक तथा टपकन जैसा दर्द होता है।

४. प्रकाश सहन नहीं होता है और आँखों में जलन होती है।

५. दिन के समय दर्द में कुछ कमी रहती है, किन्तु रात के समय अधिक हो जाती है।

६. दर्द प्रायः दौरे के रूप में होता है। दर्द एक बार होकर रुक जाता है और पुनः शुरू हो जाता है। जो कुछ समय तक लगातार बना रहता है। दर्द कभी कम और कभी तेज होता है।

७. रोगी को प्रायः चक्कर आते हैं।

८. मलावरोध रहता है।

९. संज्ञावह सूत्रों के ग्रस्त होने से हाथ-पैर, जाँघ तथा बाहु आदि में वेदना का लक्षण मिलता है, रात को आराम करते समय पैरों-पिंडलियों आदि

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में उद्वेष्टन (Cramps) की वेदना होती है। पैर की अँगुलियों में सुइयाँ जैसी चुभती हैं तथा तलवों में जलन होती है। पिण्डलियों तथा तलवों की मांसपेशियों को दबाने से उनमें दर्द होता है।

१०. पहले अँगुलियों की सूक्ष्म मांसपेशियाँ क्षीण हो जाती हैं, जिससे बारीक काम करने तथा लिखने की शक्ति घट जाती है। इसके बाद अँगुलियों तथा कलाइयों को पसारने वाली तथा पैरों के ऊपर की मांसपेशियाँ क्षीण हो जाती हैं, जिससे पैर नीचे की ओर ढुलक जाते हैं।

११. त्वचा, नखों एवं बालों का पोषण कम होता है। त्वचा पतली पड़ जाती है। नाखूनों में लकीरें बन जाती हैं। ऐसी स्थिति में हाथ-पैर आदि में व्रण बन सकते हैं, जो देर से भरते हैं। मधुमेह के रोगी के पैर में प्रायः ऐसा ही व्रण देखने को मिलता है। इस प्रकार का मधुमेहजनित नाड़ीशोथ अधिक देखने को मिलता है।

○ इसमें जाँघ की मांसपेशियों को दबाने से दर्द होता है। पैर तथा जाँघ में रात के समय वेदना का होना इसका विशेष लक्षण होता है।

१२. कुछ रोगियों में वैसोमोटर सूत्रों में क्षीणता हो जाती है, जिससे पैरों की अँगुलियाँ तथा कान अधिक लाल तथा गर्म अथवा अधिक ठंडे रहने लगते हैं।

निदान (Diagnosis)—उपरोक्त लक्षणों के आधार पर इसे आसानी से पहचाना जा सकता है।

○ सेरिब्रो-स्पिनल फ्लूइड में प्रोटीन की मात्रा ५ मि० ली० प्रतिशत से अधिक हो तो इस रोग का सन्देह करना चाहिए।

चिकित्सा (Treatment)—

सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी को २-३ सप्ताह तक शय्या पर विश्राम की सलाह दें।

२. मूल कारण की चिकित्सा करें।

३. भौतिक चिकित्सा (Physiotherapy) सहायक होती है।

४. चुने हुए रोगियों में 'स्टेराइड्स' चिकित्सा करनी चाहिए।

५. नाड़ी-संस्थान की निर्बलता दूर कर उसे सबल बनायें।

६. अधिक पौष्टिक आहार की व्यवस्था करें। पीड़ित भाग को पूर्ण विश्राम दें।

७. यदि रोगी को मधुमेह हो तो उसकी चिकित्सा करें।

(२) **आनुषंगिक चिकित्सा**—प्रभावित स्थान पर लिनीमेण्ट ए० बी० सी० की मालिश कराकर गर्म रूई से सिंकाई करें और बाँधे अथवा बी० आई० एल० जिस्टीन लगायें।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)

एक्यूट इडियोपैथिक पॉलीन्यूराइसिस में—

℞ बेटनीसोल ०.५ मि० ग्रा०

मात्रा—२ गोली प्रति ४ घण्टे पर भोजनोपरान्त जब रोग प्रगति पर हो।

एम्पीसिलीन ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल दिन में ४ बार।

साथ ही—विटामिन बी$_{१}$, बी$_{६}$, बी$_{१२}$ उचित मात्रा में सूचीवेध के रूप में।

रुग्ण नाड़ी की दुर्बलता को दूर करने के लिए—

विटामिन बी$_{१}$ (बेरिन)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० दिन में २ बार १ सप्ताह तक।

तत्पश्चात्—५० मि० ग्रा० दिन में १ बार कुछ सप्ताह तक।

अथवा—१०० मि० ग्रा० कुछ सप्ताह तक।

साथ ही—बी$_{१२}$ १००० माइक्रोग्राम मांसपेशीगत।

एवं—निकोटिनिक एसिड (Nicotinic acid)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० मुख द्वारा दिन में २ बार।

अथवा—विटामिन बी$_{१२}$ २५ मि० ग्रा० + निकोटिनिक एसिड १० मि० ग्रा० + पाइरीडॉक्सीन ५ मि० ग्रा० + पेण्टोथिनिक एसिड १० मि० ग्रा० + राइबोफ्लेबीन १० मि० ग्रा०।

○ कुछ चिकित्सक विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स बड़ी मात्रा में डेक्स्ट्रोज सैलाइन में मिलाकर I/V कुछ दिनों तक देते हैं।

मधुमेह के साथ रोग होने पर—

℞ न्यूरोविऑन इञ्जे० १ दिन छोड़कर मांस में २-३ सप्ताह तक।

साथ ही—'इन्सुलिन चिकित्सा' जारी रखें।

पीड़ा के लिए—सेरिडोन (Seridon)—१ गोली दिन में ३-४ बार।

अथवा—'पैरासिटामोल' ०.५ ग्राम + गार्डीनल ६० मि० ग्रा०।

मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१. ℞	बेरिन (Berin)	१ गोली
	सिबाल्जिन (Cibalgin)	१ गोली
	थायमिन हाइड्रोक्लोराइड २५ मिग्रा०	१ गोली
	ईस्ट (Yeast)	९०० मिग्रा०
	ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार।	१ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. ℞ टेबलेट बेरिन	१ गोली
सिबाल्जिन	१ गोली
सल्फाथायाजोल	१ गोली
सोडाबाइकार्ब	३०० मिग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार।	१ मात्रा
३. ℞ बिटनेलान	१ गोली
एस्जीपायरीन	१ गोली
रिडॉक्सोन ५०० मि० ग्रा०	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार जल से।	१ मात्रा

विशेष चिकित्सा व्यवस्था—

○ बेरिन १०० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३ बार दें।

साथ ही—दर्द की जगह प्रोकेन का इन्जेक्शन लगायें।

एवं—नोवाल्जिन की १ गोली दिन में २-३ बार दें।

साथ ही—'कुशन साल्ट' १ चम्मच प्रातः जल के साथ।

अन्य पेटेण्ट औषधियां—ट्राइर्नजिक इन्जे० (यूनीकेम), मेजिटॉल टे०, कोडोपायरीन, नोवाल्जिन, इस्जीपायरीन, प्रेडासिन, एनासिन, आवेदन, एस्प्रो, फीनैस्कोडिन, ए० पी० सी० आदि लाक्षणिक पीड़ा के शमनार्थ।

○ मेक्राबिन, ट्राइ रेडिसाल एच०, बीप्लेक्स फोर्ट, यूनी बी-कॉम्प्लेक्स फोर्ट, कोबमैक, विवेलान, बीकोसूल, विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स फोर्ट, कॉम्बेक्स आदि। □

तन्त्रिका-तन्त्र के रोग 6/6

अपस्मार/मिरगी

(Epilepsy)

पर्याय—अपस्मार, मिर्गी, मृगी, दौरे पड़ना।

परिचय—It is a recurrent paroxysmal cerebral dysto. with or without fit.

○ अचानक बेहोश हो जाना और बेहोश होने के साथ ही शरीर में थोड़ी-बहुत अकड़न होने को एपिलेप्सी कहते हैं। मिर्गी आने के पूर्व तरह-तरह की संवदेना, यथा—शोर, गीत-संगीत, चुनचुनी, आँख के आगे लपटें दिखलाई पड़ना, कीड़े रेंगना आदि का अनुभव होकर आक्षेप या मिर्गी आती है।

○ इसमें रोगी को बेहोशी आने से पूर्व उसे यह पता चल जाता है कि उसे दौरा पड़ने वाला है। उसके दाँत किटकिटाने लगते हैं, साथ ही शरीर

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में अकड़न होने लगती है और एकाएक वह बेहोश हो जाता है। कोई-कोई रोगी जोर से चिल्लाने के बाद बेहोश होता है।

कारण—१. मद्य, कोकेन, कार्डियाजोल, लेड, कीटाणुनाशक मिश्रण आदि विषों के सेवन से।

२. मूत्रविषमयता, कोलीमिया, एक्लेम्प्सिया, विटामिन्स की न्यूनता आदि मेटाबोलिक कारण।

३. श्वासरोग अथवा इससे सम्बन्धित अवस्थाएँ।

४. मानसिक कारण—दन्तशूल, बुखार, वर्म्स आदि के कारण।

५. हाइपरटेन्सिव, इन्सेफेलोपेथी, इम्बोलिज्म आदि।

६. प्रसव के समय सिर में चोट लगने से।

७. सेरिब्रल ट्यूमर, विद्रधि आदि स्थान-संचय इसका कारक हो सकता है।

८. इन्सेफेलाइटिस, मेनिञ्जाइटिस, सिफिलिस आदि शोथजन्य कारण।

अन्य कारण—अधिक हस्तमैथुन, मद्य का अधिकांश मात्रा में सेवन, अधिक मानसिक तथा शारीरिक परिश्रम करना, मासिकधर्म सम्बन्धी विकार, आँव, संक्रामक ज्वर, आँतों में अत्यधिक कीड़ों का होना, दुःख, शोक, भय, क्रोध आदि मानसिक आवेग।

○ आज तक इसके सही कारण का पता नहीं चल सका है। यह बीमारी अधिकतर १० से २० वर्ष की उम्र के अन्दर ही होती है।

रोग के रूप—१. स्तम्भावस्था (Tonic phase)।

२. आक्षेपावस्था (Clonic phase)।

(१) **स्तम्भावस्था** (Tonic phase)—इस अवस्था में प्रथम रोगी की मांसपेशियों में स्तब्धता के लक्षण उत्पन्न होते हैं, जिससे उसमें मूर्च्छा तथा स्तम्भ दिखलाई देते हैं। स्तम्भ के कारण—

१. रोगी की ग्रीवा, धड़, आँखें सीधी तथा अकड़ी हुई होती हैं।

२. गले के स्तम्भ के कारण श्वासावरोध उत्पन्न हो जाता है।

३. चेहरा नीला पड़ जाता है।

४. गर्दन पीछे की ओर को मुड़ जाती है।

५. दोनों बाहु अकड़े हुए, कोहनी पर संकुचित धड़ के साथ सटे हुए और हाथ की मुट्ठियाँ बँधी होती हैं।

६. रोगी मूर्च्छित और स्तब्ध होकर अकस्मात् पीठ के बल जमीन पर गिर जाता है।

७. सिर, ग्रीवा तथा दोनों आँखें एक पार्श्व की ओर मुड़ जाते हैं।

८. रोगी मस्तिष्क के बल गिरता है, जिससे उस पर चोट आ जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. स्तब्ध हुए कंठ से श्वासवायु के अन्दर जाने से एक विशेष प्रकार की चीख जैसी आवाज होती है, जो भयंकर स्वरूप की होती है। किन्तु कभी-कभी यह लक्षण अनुपस्थित होता है।

१०. जीभ दाँतों के अन्दर आकर कट जाती है।

११. श्वास-मांसपेशियों के स्तब्ध हो जाने से रोगी का चेहरा नीला पड़ जाता है।

नोट—यह अवस्था आधा मिनट तक रहती है। इसके बाद आक्षेपावस्था प्रारम्भ हो जाती है।

(२) **आक्षेपावस्था** (Clonic phase)—यह अवस्था स्तम्भावस्था के बाद प्रारम्भ होती है। इस अवस्था में निम्नलिखित लक्षण मिलते हैं—

१. रोगी अपनी बाहें तथा जाँघों को तेजी से पटकने लगता है।

२. पलकें बन्द होती और खुलती हैं।

३. जबड़ा बन्द होता है और खुलता है।

४. श्वास रुक-रुक कर आती है, जिससे चेहरे पर नीलापन दीखता है।

५. श्वास खर्राटेदार (Sterterous) होती है। इस अवस्था में रोगी की जीभ कट जाती है।

नोट—यह अवस्था लगभग १ मिनट तक रहती है।

इस अवस्था के बाद रोगी की स्थिति—

१. सम्पूर्ण शरीर शिथिल हो जाता है।

२. श्वासगति पुनः प्रारम्भ हो जाती है। इसके प्रारम्भ होते ही मुख में एकत्रित थूक में मन्थन-सा होने लगता है, जिससे वह झाग नाक तथा मुँह से निकलता दिखलाई देता है।

३. इस अवस्था में रोगी जमीन पर पड़ा (मूर्च्छित होकर) खर्राटे लेता है।

परीक्षा करने पर—१. रोगी की पुतलियाँ फैली हुई होती हैं।

२. मूर्च्छा क्षणिक होती है। इसके बाद रोगी घबराया हुआ-सा आँखें खोल कर चकित होकर चारों ओर देखने लगता है। जो कुछ अभी घटित हुआ था रोगी को इसका कोई ज्ञान नहीं होता है।

३. पूछने पर रोगी केवल सिरदर्द की शिकायत करता है। वह एकान्त में सोना पसन्द करता है। सोने पर १–२ घण्टे की नींद लेकर ही तत्काल उठ-खड़ा होता है।

निदान—○ यदि कोई युवा व्यक्ति सहसा मूर्च्छित होकर गिर पड़े और उसके शरीर में थोड़ा या अधिक स्तम्भ और आक्षेप के लक्षण हों और शीघ्र ही पुनः सचेत दिखलाई पड़े तो इसे अपस्मार का ही रोग समझना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दौरे का वेग—एक वर्ष में २–४ बार अथवा और अधिक।

दौरे का समय—१५–२०% रोगियों में प्रायः रात्रि के समय।

उपद्रव—बुद्धि का मन्द पड़ना, एकाग्रता की कमी तथा स्मरणशक्ति का ह्रास।

इडियोपैथिक एपिलेप्सी का वर्गीकरण (Classification of idiopathic epilepsy)—

(१) **सार्वदैहिक एपिलेप्सी** (Generalised epilepsy)—

१. ग्राण्ड माल एपिलेप्सी (Grand mal epilepsy)।

२. पेटिट माल एपिलेप्सी (Patit mal epilepsy)।

३. द्वितीयक सार्वदैहिक एपिलेप्सी (Secondary generalised epilepsy)।

४. अनडिटर्मिण्ड जनरेलाइज्ड एपिलेप्सी।

(२) **स्थानीय एपिलेप्सी** (Local epilepsy)—

१. टेम्पोरल लोब (Psychomotor) एपिलेप्सी।

२. जेक्सोनियन एपिलेप्सी। (Jacksonian epilepsy)

३. ग्राण्ड माल एपिलेप्सी विद फोकल ऑनसेट (Grand mal epilepsy with focal onset)।

○ इनमें से कुछ प्रमुख प्रकार की एपिलेप्सी का वर्णन किया जा रहा है–

गुरु अपस्मार
(Grand Mal Epilepsy)

उम्र (Age)—मुख्य रूप से २ वर्ष बाद से २० वर्ष की उम्र तक।

अवस्थाएँ—इसकी निम्न ४ क्रमिक अवस्थाएँ होती हैं—

१ **प्रथमावस्था**—रोगी बड़ी जोर से चीखकर अकस्मात् पूर्णरूप से चेतना-शून्य होकर जमीन पर गिर पड़ता है।

२. **द्वितीयावस्था** (Tonic spasm)—प्रथम अवस्था के तुरन्त बाद ही टॉनिक स्पाज्म की अवस्था प्रारम्भ होती है। इस अवस्था में रोगी की समस्त पेशियों में एक प्रकार का आकर्ष होने लगता है। कभी-कभी श्वास-प्रश्वास की क्रिया भी अवरुद्ध हो जाती है।

○ अवस्था का समय—३० सेकेण्ड से १५ मिनट तक।

३. **तृतीयावस्था**—इस अवस्था में रोगी को झटके आने लगते हैं। मुँह से झाग निकलने लगता है। रोगी अनजाने में मल-मूत्र त्याग करता है। ४-५ मिनट तक रोगी इसी अवस्था में रहता है। इसके बाद रोगी को बेहोशी के समान निद्रा आ जाती है, जो एक से डेढ़ घण्टे तक बनी रहती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विभिन्न प्रकार के लक्षण—इस अवस्था में कुछ रोगियों को बेहोशी नहीं आती है। इसके विपरीत वह अन्य प्रकार की क्रियाएँ करने लगता है। जैसे—

○ कभी-कभी रोगी बिना किसी उद्देश्य के दूसरे स्थान पर चला जाता है।

○ कभी-कभी सबके सम्मुख अपने कपड़े उतारने लगता है अथवा अपने समीप के व्यक्ति को मारने लगता है।

दौरे के पूर्व रोगी को पूर्वाभास—लगभग ५०% रोगियों में दर्द, सर्दी-गर्मी की प्रतीति, दिल का बैठना, दम का घुटना आदि अनुभव होते हैं। एक रोगी को सदैव एक ही प्रकार का अनुभव होता है।

४. सान्तर मिर्गी की अवस्था (Status epilepticus)—

एक दौरा आने के बाद दूसरा दौरा के आने तक रोगी सामान्यरूप से अपना सामान्य कार्य करने लगता है। परन्तु कभी-कभी दौरे जल्दी-जल्दी आने लगते हैं, जिससे रोगी में ज्वर, स्वेद, नाड़ी की तीव्रता, शरीर के कृश होने तथा रक्तभार बढ़ने के लक्षण हो जाते हैं। यह अवस्था घण्टों तथा दिनों तक बनी रहती है, जिससे रोगी अत्यन्त त्रस्त होकर मर जाता है।

आक्षेप (दौरे) के बाद—रोगी कुछ घबराया-सा रहता है और थकान अनुभव करता है। परन्तु मानसिक स्थिति दौरे के पूर्व की अपेक्षा अच्छी रहती है।

लघु अपस्मार
(Patit Mal Epilepsy)

इसे माइनर एपिलेप्सी भी कहते हैं। इस प्रकार की एपिलेप्सी में रोगी में निम्न लक्षण देखने को मिलते हैं—

१. ३ से १० वर्ष तक के बालक या युवक में ५ सेकेण्ड के लिए अचेतनता उत्पन्न होकर उसकी समस्त चेष्टाएँ रुक जाती हैं।

२. इसमें रोगी का चेहरा क्षणभर के लिए फीका पड़ जाता है और तुरन्त ठीक भी हो जाता है।

३. रोगी किसी भी प्रकार का कार्य करने में लड़खड़ाने लगता है। यदि उसके हाथ में कोई वस्तु होती है तो वह गिर जाती है।

४. आँखें उलट जाती हैं।

५. रोगी को ऐसा प्रतीत होता है कि उसका सिर चकरा गया था और क्षणभर के उसे कुछ हो गया था।

६. यदि मूर्च्छा कुछ गहरी होती है तो सिर कुछ आगे को झुक जाता है या रोगी गिरकर एकदम खड़ा हो जाता है।

७. ○ सहसा मन्द मूर्च्छा का होना इसका प्रधान लक्षण होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. मूर्च्छा के बाद कभी-कभी रोगी ऐसा कार्य कर बैठता है जिसका उसे पता ही नहीं होता है कि वह क्या कर रहा है; जैसे—वह अपने कपड़े उतारने लगता है अथवा इधर-उधर घूमने लगता है या किसी पुस्तक आदि को फाड़ देता है अथवा पास में पड़ी हुई वस्तु को उठा कर जेब में रख लेता है।

९. आक्षेप कुछ क्षणों में समाप्त हो जाता है और उसके बाद रोगी अपना कार्य सामान्य रूप में करने लगता है, मानों कुछ हुआ ही नहीं था।

१०. आक्षेपों की अल्पकालिक अवधि के कारण कभी-कभी रोगी को यह मालूम ही नहीं होता है कि उसे दौरा भी आया था।

११. दिन में कई बार आक्षेपों का आना 'पिक्नोलेप्सी' (Pyknolepsy) की अवस्था कहलाती है।

१२. पेटिट माल एपिलेप्सी बाल्यावस्था में आरम्भ होती है और युवावस्था में गायब हो जाती है।

१३. सोते समय यह अवस्था उत्पन्न नहीं होती है।

मनःप्रेरक अपस्मार
(Psychomotor Epilepsy)

१. इसमें रोगी की चेतना का ह्रास नहीं होता है। इसके विपरीत उसमें व्यतिक्रम उत्पन्न हो जाता है।

२. रोगी खोया-खोया-सा रहता है।

३. रोगी के व्यवहार में एक विचित्र प्रकार का परिवर्तन मिलता है।

४. मन्द स्वरूप का आवेग होने पर रोगी अपना सामान्य कार्य करता रहता है। रोग का वेग तीव्र होने पर वह एकाएक क्रोध प्रकट करने लगता है अथवा इधर-उधर दौड़ने लगता है या चीजें फेंकने लगता है।

५. दौरे के पश्चात् आवेग की दशा में रोगी द्वारा किये गये कार्यों की उसे स्मृति बनी रहती है।

जेक्सोनी अपस्मार
(Jacksonian Epilepsy)

१. इस अवस्था में रोगी को दौरा आने के पूर्व एकाएक चक्कर आता है। उसकी आँखों के आगे चिनगारी अथवा अंधेरा-सा छा जाता है।

२. उपरोक्त स्थिति के बाद रोगी बेहोश हो जाता है और गिरने से रोगी को चोट लग जाती है।

३. रोगी के पूरे शरीर में ऐंठन आरम्भ हो जाती है और उसके हाथ-पैर अथवा मस्तिष्क के फटने जैसा अनुभव होता है।

४. रोगी के मुँह से झाग निकलता है और वह मल-मूत्र का त्याग भी कर देता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. रोगी को अत्यधिक पसीना भी आता है।

६. उसकी जीभ फट जाती है तथा होंठ एवं नाखून नीले पड़ जाते हैं।

७. रोगी में ऐंठन २ से १० मिनट तक रहती है। इसके बाद रोगी शान्त भाव में पड़ा रहता है।

८. रोगी को अन्त में शनैः शनैः होश आने लगता है। होश आने के बाद रोगी दुर्बलता तथा दर्द का अनुभव करता है।

९. यह दौरा दिन में कई बार आता है। कभी-कभी वर्ष भर दौरे नहीं भी पड़ते।

निदान (Diagnosis)—उपरोक्त लक्षणों के आधार पर निदान में कोई कठिनाई नहीं होती है। फिर भी निदानात्मक संक्षिप्त लक्षण इस प्रकार हैं—

१. रोगी को दौरे आते हैं।

२. मुँह एक ओर को घूम जाता है।

३. आँखें पथरा जाती हैं और मुट्ठियाँ कस जाती हैं।

४. जबड़ा बैठ जाता है तथा रोगी को दाँती लग जाती है।

५. रोगी ओं-ओं या गों-गों जैसी विचित्र आवाज करता है।

६. अन्त में रोगी बेहोश हो जाता है।

सापेक्ष निदान (Differntial diagnosis)—हिस्टीरिया रोग से इसका पृथक्करण करना होता है, जैसा कि हिस्टीरिया रोग की तालिका में दर्शाया गया है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. यह दीर्घकालिक आक्षेपों वाला रोग है।

२. कभी-कभी यह यौवनावस्था अथवा प्रौढ़ावस्था में अकस्मात् शान्त हो जाता है, तो कभी-कभी आजीवन कष्ट पहुँचाता रहता है।

३. रोग जैसे-जैसे बढ़ता जाता है, रोगी की मानसिक स्थिति बिगड़ती जाती है।

४. रोगी की स्मरणशक्ति नष्ट हो जाती है। कभी-कभी तो रोगी की ज्ञानशक्ति बिलकुल ही नष्ट हो जाती है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. मूल कारण को दूर करें।

२. रोगी को कब्ज तथा थकान न होने दें।

३. रोगी को तनाव तथा मनोविकारों से बचायें।

४. यदि रोगी बालक है तो सबसे पहले पेट की कृमि को नष्ट करने की चिकित्सा करें।

५. रोगी को शारीरिक तथा मानसिक कार्य न करने दें तथा सुबह-शाम खुली हवा में टहलायें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. तरल भोजन तथा पेय पदार्थ कम मात्रा में दें। रोगी को खाने में नमक कम मात्रा में दें।

७. दौरे के समय कसे हुए कपड़े ढीले कर दें और रोगी को गद्देदार विस्तर पर तकिया लगाकर सुलायें और उसका सिर ऊँचा कर दें।

(२) आनुषंगिक चिकित्सा —

१. हाथ-पैरों में गरम सेंक तथा माथे पर ठंडे पानी की पट्टी रखें।

२. रोगी का शरीर धीरे-धीरे दबायें।

३. एमिल नाइट्रेट की ५ बूंदें रूमाल पर डाल कर सुघायें। अथवा लाइकर अमोनिया फोर्ट सुँघायें। जोर के दौरे में क्लोरोफार्म सुँघायें। अथवा मॉर्फीन हाइड्रोक्लोराइड का इन्जेक्शन दें।

४. श्वास में रुकावट न हो इसकी विशेष सावधानी रखें।

(३) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ फीनोबार्बीटोन (Phenobarbitone)

व्या० नाम—ल्यूमिनाल (Luminal)

मात्रा—३००-४०० मि० ग्रा० नित्य २-३ भागों में विभाजित कर दें।

○ जिन्हें यह औषधि सहन न हो उनको—

℞ फीनोबार्बीटोन	५० मि० ग्रा०
फेनीटायन (Phenytoin)	१०० मि० ग्रा०
ग्लूकोज	६०० मि० ग्रा०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार।

अथवा—फेनिटायन सोडियम

व्या० नाम—इपैन्यूटिन (Epanutin)

मात्रा—बच्चों में—५० मि० ग्रा० दिन में २ बार।

वयस्कों में—४०० मि० ग्रा० प्रति दिन।

○ नोट—उपरोक्त फीनोबार्बीटोन तथा फेनिटायन औषधियों से लाभ न मिलने पर—

℞ प्राइमिडोन (Primidon)

व्या० नाम—मायसोलीन (Mysoline)

मात्रा—१२५ मि० ग्रा० दिन में २ या ३ बार। इसकी मात्रा क्रमशः बढ़ाते हुए २ ग्राम प्रतिदिन तक दे सकते हैं।

○ नोट—उपरोक्त सभी औषधियों के असफल होने पर—

℞ इथोटायन (Ethotoin)

व्या० नाम—फेगानन (Pheganone)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१२०-१८० मि० ग्रा० प्रतिदिन।

अथवा— ℞ इथोसक्सीमाइड (Ethosuximide)

व्या० नाम—जेरोण्टिन (Zerontin)

मात्रा—२५० मि० ग्रा० दिन में ४ बार।

नोट—यदि १० दिन तक सेवन से लाभ न मिले तो इसे देना बन्द कर दें।

गुरु अपस्मार (Grand mal epilepsy) की चिकित्सा—

१. फीनोबार्बीटोन—०.१ से ०.४ ग्राम विभाजित मात्रा में मुख से।

२. डिलाण्टिन सोडियम—०.३ से ०.६ ग्राम विभाजित मात्रा में।

३. मेसेण्टायन (Mesantoin)—०.३ से ०.५ ग्राम विभाजित मात्राओं में।

४. मायसोलीन (Primidon)—०.५ से २ ग्राम विभाजित मात्राओं में मुख द्वारा।

५. इथोटायन (Peganone)—२-३ ग्राम विभाजित मात्राओं में।

६. क्लोरडायजीपोक्साइड (Chlordiazepoxide)—१५-६० मि० ग्रा० विभाजित मात्राओं में।

७. डायजीपाम (Diazepam)—८-३० मिग्रा० विभाजित मात्रा में।

○ इनमें से किसी औषधि का व्यवहार किया जा सकता है।

विशेष चिकित्सा—ग्राण्ड माल की चिकित्सा में निम्न चिकित्सा-क्रम विशेषरूप से व्यावहारिक माना जाता है—

℞ डायलेण्टिन (Dilantin) या इप्टोइन (Eptoin)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार भोजनोपरान्त थोड़े दूध के साथ।

○ यदि कण्ट्रोल न हो तो निम्न औषधि भी साथ में दें—

℞ गार्डीनल (Phenobarbitone) ३० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार। क्रमशः मात्रा बढ़ाते हुए २ गोली दिन में तीन बार।

नोट—'डायलेण्टिन' का उपयोग बच्चों में अधिक सहन नहीं होता है।

○ यदि फिर भी दौरे चालू रहें; अथवा बालकों में—

℞ मायसोलीन (Mysoline)

मात्रा—½ गोली दिन में १ बार। प्रति सप्ताह ½ गोली बढ़ाते हुए १ दिन में ३ बार।

इस प्रकार ३ डायलेण्टिन तथा ३ मायसोलीन तक दें।

अथवा निम्न औषधि के साथ देना आरम्भ करें—

℞ मेजीटोल (Mezetol)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—½ गोली दिन में ३ बार। ½ गोली प्रति सप्ताह बढ़ाते हुए १-१ गोली दिन में ३ बार।

नोट—३ माह के अन्तराल पर CBC चेक करें।

अथवा—सोडियम वालप्रोएट (Sodium Valproate)

मात्रा—२०० मि० ग्रा० दिन में २ बार। अधिकतम मात्रा ३० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर प्रतिदिन।

○ औषधि चिकित्सा ४ वर्ष तक जारी रखें।

○ देना बन्द करें—१ गोली प्रति ४ माह पर।

सान्तर-मिर्गी की अवस्था (Status epilepticus)—

१. कोमा (Coma) के सभी साधन अपनाने चाहिए।

२. क्लोरोफॉर्म (विप्स) अनीस्थीसिया।

३. फीनोबार्बीटोन सोडियम—२००–८०० मि० ग्रा० I/V धीरे-धीरे।

४. पैराल्डिहाइड—८-१० मि० ली० I/M (प्रत्येक साइड में 5 C. C. से अधिक नहीं)।

अथवा—१-२ मि० ली० I/V (३ गुने सेलाइन में घोल कर)।

५. डिलाण्टिन सोडियम (Dilantin sodium)—२००–५०० मि० ग्रा० I/V एक दिन छोड़ कर २५०–५०० मि० ग्रा० I/M।

६. डायजीपाम १० मि० ग्रा० इण्ट्रावीनस

७. 'हाइपोटेन्शन' तथा 'रेस्पिरेटरी डिप्रेशन' की चिकित्सा करें।

नोट—इनमें से किसी भी औषधि का उपयोग किया जा सकता है।

○ कुछ चिकित्सक निम्न व्यवस्था अधिक उपयुक्त बतलाते हैं—

℞ सोडियम फीनोबार्बीटोन	२०० मि० ग्रा०
सोडियम एमाइलोबार्बीटोन	५०० मि० ग्रा०
सैलाइन (Saline)	२०० मि० ली०

तीनों का घोल बना कर I/V धीरे-धीरे दिया जाता है।

इसके साथ ही—'फेनिटायन सोडियम' १ मि० ली० में ५० मि०ग्रा० की मात्रा में। १–२ मि० ली० प्रति मिनट की दर से।

दौरों को कम करने के लिए—५ मि० ली० पैराल्डिहाइड I/M देते हैं।

नोट—इसे उपरोक्त किसी भी औषधि के साथ दिया जा सकता है।

सान्तर मिर्गी नाशक विशिष्ट चिकित्सा-क्रम—

इञ्जे० डायजीपाम १० मि० ग्रा० I/V बहुत धीरे-धीरे।

○ यदि दौरा फिर से आये तो—आधा घण्टे बाद पुनः दोहरायें (२०–३० मि० ग्रा० तक)।

नोट—श्वसन, डिप्रेशन तथा हाइपोटेन्शन की निगरानी रखें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब दौरे (Fits) कण्ट्रोल में आ जायें तब—

℞ इन्जे० इप्सोलिन (Inj. Epsolin) १०० मि० ग्रा० प्रति एम्पुल

मात्रा—२५० मि० ग्रा० I/V धीरे-धीरे (आधा घण्टे में)।

तत्पश्चात्—प्रति १ घण्टे पर ४ मात्राओं तक दुहरायें।

तथा—५०० मि० ग्रा० I/M प्रथम मात्रा के साथ।

अथवा—℞ इन्जे० सोडियम ल्यूमीनाल (गार्डीनल सोडियम)

मात्रा—१८० मि० ग्रा० I/M प्रति १२ घण्टे पर।

अथवा—इन्जे० पैराल्डिहाइड

मात्रा—१० मि० ली० गहरे मांसपेशी में। ५ मिली० प्रत्येक चूतड़ में।

लघु अपस्मार (Patit mal epilepsy) की चिकित्सा—

१. ट्राईडियोन या ट्राईमेथाडियोन (Tridione or Trimethadione)

मात्रा—०·३ ग्राम से २ ग्राम तक विभाजित मात्रा में।

२. पारामिथाडिओन या पाराडियोन—०·५–२ ग्राम विभाजित मात्रा में।

३. इथोसक्सीमाइड—७५०–१५०० मि० ग्रा० विभाजित मात्रा में।

४. फेनसक्सीमाइड—०·५–२·५ ग्रा० विभाजित मात्रा में।

५. एसीटाजोलामाइड—१-३ ग्राम विभाजित मात्रा में।

○ इनमें से किसी भी औषधि का उपयोग किया जा सकता है।

विशेष चिकित्सा-क्रम—पेटिट माल की चिकित्सा में निम्न चिकित्सा-क्रम विशेष लाभकारी है—

℞ सोडियम वालप्रोएट (Sodium valproate)

मात्रा—२०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार। क्रमशः मात्रा बढ़ाते हुए २ दिन में ३ बार।

○ बालकों की प्रत्येक प्रकार की एपिलेप्सी में उपयोगी।

℞ जेरोण्टिन सीरप (Zarontin syrup)

बालक—१ चम्मच दिन में १ बार।

टेम्पोरल लोब एपिलेप्सी—इस प्रकार की एपिलेप्सी में टेम्पोरल लोब के रोग के कारण अस्थायी बधिरता अथवा शिरोभ्रम का लक्षण हो सकता है।

℞ मायसोलीन अथवा डिलाण्टिन अथवा दोनों

मात्रा—उपरोक्त अनुसार।

अथवा—मेजीटोल (Mezetol)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार। १ गोली की मात्रा बढ़ाते हुए दिन में ४ बार।

○ यदि कण्ट्रोल न हो तो साथ में मायसोलीन + डिलाण्टिन दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिरगी (Epilepsy) में प्रयुक्त कॉम्बीनेशन थेरापी—

१. ℞	डाइलेण्टिन (Dilantin) (P. D.)	१ कैपसूल
	इप्सोलिन (Epsolin) (कैडिला)	१ गोली
		१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार आक्रमण से पूर्व ।

२. ℞	जेरोण्टिन (Zarontin) (P. D.)	१० मिली०
	ट्रिडियोन (अब्वोट)	१ कैपसूल
		१ मात्रा

कैपसूल को खोलकर औषधि को सीरप में मिला लें ।

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार ।

अन्य औषधियाँ—इलिग्जिर ब्रोमोवेलेरियन, एपिलान, डायल (Dial), सोनेरिल (Soneryl), ल्यूमीनाल, इक्वानिल आदि । □

तन्त्रिका-तन्त्र के रोग 6/7

त्रिधारा तन्त्रिकार्ति
(Trigeminal Neuralgia)

पर्याय—अनन्तवातशूल, त्रिधारा तन्त्रिकाशूल, एपीलेप्टीफार्म न्यूरेल्जिया, ट्राइफेसियल न्यूरेल्जिया, Tic douloureux.

परिचय—It is a paroxysmal severe pain in the distrilution of the trigeminal nerve, of short duration, not associated with any sign.

○ मस्तिष्क पंचमनाड़ी (Trigeminal) के प्रदेश पर अल्प काल के लिए वेगों में होने वाला यह एक तीव्र चुभने वाला बिजली की तरह का शूल का रोग होता है ।

कारण—अब तक कारण के बारे में कुछ निश्चित नहीं हो पाया है । अनुमान है कि—

१. पंचम मस्तिष्क नाड़ी के पोषण में न्यूनता के हो जाने से ।

२. बड़ी आयु में होने से धमनीकाठिन्य (Arteriosclerosis) भी इसका कारण प्रतीत होता है ।

३. कभी-कभी यह मुख धोने, कुल्ला करने, शेव बनाने या खाने के स्वल्प विक्षोभ से भी इसका वेग प्रारम्भ हो जाता है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. पेरोनियम मस्कुलर एट्रॉफी, पेगेट्स रोग, न्यूरोफाइब्रोमेटोसिस, फेसियल हेमी एट्रॉफी, फेसियल मायोक्लोनस आदि रोगों में।

उम्र (Age)—५० से ७० वर्ष।

लिंग (Sex)—स्त्रियों में विशेष रूप से।

लक्षण—१. मुखमण्डल में होने वाला यह तीव्र स्वरूप का शूल है। इसमें वेधन के समान स्थानिक शूल की अनुभूति होती है।

२. शूल एकाएक विद्युत् के समान प्रारम्भ होता है और इतना तीव्र होता है कि जैसे कोई सुई चुभो रहा हो।

३. यह शूल चेहरे के एक ओर ही होता है, दोनों ओर एक साथ नहीं। कभी तो आँख के ऊपर भ्रू में यह शूल होता है, कभी आँख के नीचे गाल में, तो कभी यह ठोड़ी में मिलता है।

४. रोगी एकदम अवाक् और निश्चेष्ट होकर पड़ा रहता है। रोगी के बोलने अथवा जरा भी मुख हिलाने आदि से शूल बढ़ जाता है।

५. शूल का वेग कुछ सेकेण्ड तक रहता है और कुछ मिनटों के पश्चात् पुनः प्रारम्भ हो जाता हैं। इस प्रकार से घण्टों तक यह क्रम जारी रहता है।

६. शूल का प्रारम्भ सदैव रोगी के कार्य करते समय होता है. आराम की स्थिति में नहीं।

७. शूल के वेग महीनों अथवा वर्षों के अन्तर पर आते हैं।

८. शूल के वेग के समय उधर के चेहरे में स्तब्धता के लक्षण मिलते हैं। उधर की आँख, नाक तथा चेहरे से स्राव भी होता है।

९. आक्रमण के समय रोगी का चेहरा लाल हो जाता है। वह पसीने से तर हो जाता है।

१०. किसी प्रकार की उत्तेजना, प्यास लगने, चेहरे को धोने, भोजन करने अथवा मुख तथा दाँतों को साफ करने आदि से शूल बढ़ जाता है।

११. रोग के दीर्घकालिक होने पर शरीर और मन सभी निर्बल हो जाते हैं।

नोट—यह रोग वसन्त ऋतु में अधिक होता है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. वेदना युक्त भाग की सिंकाई करने से रोगी को आराम मिलता है। इसके लिए गरम पानी की बोतल की सिंकाई उपयुक्त रहती है।

२. रोगी को कम से कम ३ सप्ताह तक विश्राम देना आवश्यक है।

(२) औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ कार्बोमिजीपीन (Carbomezepine)

व्या० नाम—टेग्रेटाल (Tegretol) ५० मि० ग्रा०

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—½ गोली दिन में ३ बार। पर्याप्त लाभ न मिलने पर उपद्रवों पर सावधानी रखते हुए क्रमशः मात्रा बढ़ाई जा सकती है।

○ कुछ रोगियों में ८०० मि० ग्रा० तक प्रतिदिन दी जा सकती है।

कोडीन सल्फेट १ मात्रा दिन में २ बार।

अथवा—लार्गेक्टिल २५ मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३ बार।

असफलता मिलने पर—इन्जे० एल्कोहॉल ८०% ५-१० मिनिम ट्राइजेमिनल गैंग्लियन में।

चेतावनी—इस पद्धति का उपयोग अनुभवी चिकित्सकों को ही करना चाहिए।

अन्य चिकित्सा—

℞ नेम्पेटाल (Nempatal) ३० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली रात के समय।

अथवा—ट्राइक्लोरोइथाइलीन

व्या० नाम—ट्राईलीन (Trilene)

मात्रा—५-१५ बूँद रूमाल में रखकर भोजन के ½ घण्टे पूर्व सुँघायें।

नोट—उससे शूल में अत्यधिक लाभ मिलता है।

आक्रमण को रोकने के लिए—

℞ निकोटिनिक एसिड १०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली रात में भोजन से पूर्व।

टोलाजोलीन (Tolazoline)

व्या० नाम—प्रिसकाल (Priscol) ५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

साथ ही—इन्जे० 'ट्राई रेडिसाल एच' १००० मि० ग्रा० अथवा न्यूरोक्सिन बी$_{१२}$ २ मि० ली० I/M दिन में १ बार १० से १४ दिन तक।

तत्पश्चात्—सप्ताह में २ बार कुछ महीनों तक।

रोग के तीव्र होने पर किसी भी औषधि से लाभ न मिलने पर—

पोस्टीरियर सेन्सरी रूट रिसेक्शन का ऑपरेशन इसका अन्तिम इलाज है।

अनन्तवातशूल में प्रयुक्त अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. एरिस्टोपायरीन टेबलेट (एरिस्टो)—१-२ गोली दिन में ३ बार।

२. बेनाल्जिस (Benalgis) (फ्रेन्को इंडियन)—१ गोली दिन में ३ बार।

३. मेजीटोल (Mezetol) (एस० जी० फार्मा)—१-२ गोली। इसे बढ़ाते हुए १-२ गोली दिन में ३-४ बार तक। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भ्रमि
(Vertigo)

पर्याय—शिरोभ्रम, कर्णनाद (Tinnitus), घुमेर, भ्रम, चक्कर आना, सिर चकराना (Giddiness), मेनियर रोग (Menier's disease) ।

परिचय—सिर में चक्कर आने से समीप की वस्तु घूमती हुई दृष्टिगोचर होती है । खड़े होते ही नेत्रों के समक्ष अन्धेरा छा जाता है और रोगी गिर पड़ता है ।

O Vertigo is a subjective feeling of movement of the external environment or of the brain within the head, accompanied by a disturbance of balance leading to seaking of a support or to fall.

संक्षेप में—इसमें रोगी को लेटने-बैठने अथवा खड़े रहने की अवस्था में अपना शरीर तथा आस-पास की वस्तुएँ घूमती हुई प्रतीत होती हैं ।

O कभी-कभी इस रोग के साथ सहसा कर्णघोष (Tinnitus), अरुचि या वमन एवं बधिरता (Deafness) का लक्षण मिलता है तो इसे मेनियर रोग (Meniere's disease) कहते हैं । इस रोग में रोगी गिर पड़ता है और पुनः खड़ा नहीं हो सकता ।

O मेनियर संलक्षण (Meniere's syndrome) एकपक्षीय (Unilateral) एवं तन्त्रिका बधिरता (Nerve deafness) की अवस्था है । इसमें कर्णनाद (Tinnitus) तथा भ्रमि (Vertigo) लक्षण के रूप में उत्पन्न होते हैं ।

कारण—१. अत्यधिक मानसिक परिश्रम ।
२. अत्यधिक शुक्रक्षय ।
३. मादक पदार्थों का अधिक सेवन ।
४. रात्रि-जागरण ।
५. अधिक अध्ययन तथा चिन्ता ।
६. मस्तिष्क में रक्त की अधिकता अथवा कमी ।
७. मलेरिया में क्विनीन का अधिक सेवन ।
८. स्त्रियों में मासिकधर्म के बन्द होने से ।
९. हृदय तथा वृक्करोग ।
१०. हाइपोटेंशन ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. सेरिब्रोवेस्कुलर डिजीज ।

१२. बड़ी आयु में वेसिलर ऑर्टेरी में एथीरोस्क्लेरोसिस या स्टेनोसिस के कारण ।

१३. लेबीरिन्थ की धमनी में स्पाज्म के होने से ।

१४. जुकाम के कारण इयूस्टेशियन ट्यूब तथा मध्यकर्ण में शोथ के परिणामस्वरूप ।

१५. लघुमस्तिष्क (सेरीवेलम), श्रवणतंत्रिका (ऑडिटरी नर्व), लेबीरिन्थ आदि अंगों की व्याधियों में रोगी की सन्तुलन-शक्ति में बाधा उत्पन्न होने से इस प्रकार के भ्रम के अनुभव होते हैं ।

१६. इसी प्रकार मेनियर्स सिण्ड्रोम, हाई ब्लड-प्रेशर, मस्तिष्कगत रक्त-वाहिनी विकार आदि व्याधियों में भ्रम एक प्रधान लक्षण के रूप में उत्पन्न होता है ।

१७. टेम्पेनिक मेम्ब्रेन, कर्णगूथ (Ear wax) का दबाव पड़ने, शरीर में अत्यधिक रक्त की कमी, जीर्ण स्वरूप का जुकाम (Chronic rhinitis) तथा इस्टेशियन ट्यूब में अवरोध, कृमि रोग (Worms disease), मलावरोध, रजोनिवृत्तिकाल आदि व्याधियों में भ्रम के लक्षण मिलते हैं ।

१८. युवा व्यक्तियों तथा वृद्धों में मस्तिष्कगत रक्तवहसंस्थान में मस्तिष्क धमनीगत रक्तावरोध को भ्रम का सामान्य कारण माना जाता है ।

○ सही भ्रम (True vertigo) लेबीरिन्थ के प्रान्तीय एवं केन्द्रीय कारणों से उत्पन्न व्यतिक्रम की अवस्था है ।

कुछ अन्य कारणों में—ऑकुलर मीजिल्स पैरालिसिस, मोशन सिकनेस, वेस्टीब्युलर न्यूरोनाइटिस, मस्तिष्क में आघात, मम्प्स, टिनीटस आदि कारण हो सकते हैं ।

○ विषैली औषधियाँ (Toxic drugs) जैसे—स्ट्रेप्टोमाइसीन आदि की असात्म्यता की अवस्था होने पर प्रायः श्रवणतंत्रिका पर विषाक्त प्रभाव पड़ने से भ्रम रोग की उत्पत्ति होती है ।

नोट—इस प्रकार से भ्रमि रोग के सही कारणों का पता अब तक नहीं लग सका है । कुछ रोगियों में माइग्रेन का इतिहास मिलता है ।

लक्षण—१. रोगी का सिर चकराता है ।

२. रोगी अपने चारों ओर की वस्तुओं को घूमता हुआ या स्वयं को वस्तुओं के चारों ओर घूमता हुआ अनुभव करता है ।

३. कई बार तो रोगी गिर जाता है । उसे ऐसा प्रतीत होता है मानों उसका शरीर झूल रहा है । गिर जाने के भय से वह किसी वस्तु को पकड़े रहता है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. रोगी को आँख के सामने अँधेरा दीखता है। ऊपर देखने या एक तरफ ताकते रहने से उसे ऐसा प्रतीत होता है जैसे बिस्तर, घर, मकान सभी गोलाई में घूम रहे हैं।

५. सिर चकराते समय शरीर फीका तथा ठंडा पड़ जाता है।

६. अनेक बार उपरोक्त लक्षणों के साथ वमन तथा मितली भी उपस्थित मिलती है।

७. कानों में घूं-घूं की आवाज होती है तथा कुछ कम सुनाई पड़ता है।

८. गम्भीर भ्रमि रोग की अवस्था में रोगी गिर जाता है और खड़े होने में असमर्थ होता है।

९. किसी-किसी रोगी में वमन तथा मितली के साथ ठंडा पसीना, पेलर, कभी-कभी अतिसार, ब्रैडीकार्डिया, सिनकोप (Syncope) आदि लक्षण मिलते हैं।

१०. न्यून रक्तचाप तथा उच्च रक्तचाप के कारण उठते-बैठते समय थोड़ी देर के लिए उत्पन्न चक्कर तथा भ्रम में अंतर होता है।

११. मेनियर्स डिजीज में रोगी गिर पड़ता है और खड़ा नहीं हो सकता है। उसका शरीर फीका होता है और ठंडा पसीना निकलता है। रोग का वेग आधे घण्टे से लेकर कुछ घण्टों तक रह सकता है। रोगी मूर्च्छित तो नहीं होता किन्तु भय से अचल होकर पड़ा रहता है। उसके वेग समय-समय पर होते रहते हैं।

१२. भ्रमि रोग में किसी-किसी रोगी को कर्णनाद (Tinnitus) रुक-रुक कर या लगातार होता रहता है। यह एक कान या दोनों कानों में हो सकता है। ○ रात के शान्त वातावरण में यह अधिक कष्टदायक प्रतीत होता है।

निदान—उपरोक्त लक्षणों के आधार पर निदान में कोई कठिनाई नहीं होती। इसमें रोगी का सिर चकराता है। उसे ऐसा प्रतीत होता है कि उसका शरीर हिल रहा है अथवा चारों ओर की वस्तुएँ घूम रही हैं। एकाएक खड़े होने से आँखों के आगे अँधेरा-सा छा जाता है। कभी-कभी रोगी चक्कर खाकर गिर जाता है।

○ भ्रमि (Vertigo) तथा कर्णघोष (Tinnitus) दोनों साथ-साथ मिलने वाले रोग हैं।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. रोगी को चक्कर कुछ मिनट से लेकर २-३ घण्टे तक रहता है।

२. दौरे कुछ दिनों से लेकर कुछ सप्ताहों के अंतर पर आते हैं।

३. दौरे के बाद रोगी बहरा हो जाता है। रोगी के बहरे हो जाने के बाद दौरा बन्द हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. अधिकांश रोगी चिकित्सा से ठीक हो जाते हैं। इनमें से बहुत कम रोगियों में शल्य-चिकित्सा की आवश्यकता पड़ती है।

५. लेबीरिन्थ एवं लघुमस्तिष्क आदि अंगों की विकृति से उत्पन्न रोग कष्टसाध्य होता है।

चिकित्सा (Treatment)—

सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. कारण को दूर करें।

२. पेट में गैस न बनने दें।

३. मलावरोध का पूर्ण निराकरण करें।

४. पाचन-संस्थान तथा नाड़ी-संस्थान को स्वस्थ तथा सबल बनाने का यत्न करें।

५. रोग की चिकित्सा प्रारम्भ करने के पूर्व 'टिम्पेनिक मेम्ब्रेन' तथा श्रवण यंत्र के विकार तथा रक्तचाप की चिकित्सा की ओर विशेष ध्यान रखें।

६. स्ट्रेप्टोमाइसीन के विषाक्त प्रभाव से उत्पन्न भ्रम रोग में औषधि बन्द करके प्रचुर मात्रा में विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स का सेवन करायें।

७. 'इयूस्टेशियन टयूब' में वायु प्रवेश करने से भी लाभ मिलता है।

८. रोगी को शान्त तथा अन्धेरे कमरे में रखें। उसे शारीरिक तथा मानसिक परिश्रम से बचायें।

९. मद्यपान, बीड़ी, सिगरेट, चाय, तम्बाकू आदि कुछ समय के लिए बन्द करा दें।

१०. सिर पर शीतल प्रयोग अथवा घी की मालिश करायें।

११. मध्यकर्ण का शोथ दूर करें।

१२. रक्त की कमी में निकोटिनिक एसिड दें।

१३. कर्णघोष (Tinnitus) का ध्यान या उसकी चिन्ता न करने से भी इस रोग का कष्ट दूर होता है।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ इञ्जे० लूमीनाल (Inj. Luminal)

मात्रा—३ मि० ग्रा० मांसपेशीगत दिन में २ बार।

इञ्जे० केलम्पोज (Inj. Calampose) १० मि० ग्रा०

मात्रा—१ मि० ली० मांसपेशीगत दिन में २ बार।

अथवा—वेनाड्रिल या फेनार्गन (Phenargan) रात्रि में सोने से पूर्व

अथवा—टेबलेट स्टेमेटिल (Tab. Stemetil) १२.५ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

अथवा—टेबलेट मॉर्जीन (Tab. Marzine) २५ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।

इञ्जे० एट्रोपीन ०.७५ मि० ग्रा० S/C

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ जब रोगी मुख से औषधि न ले सके तो—
ग्लूकोज ५%-५००-२००० मि० ली० I/V ड्रिप रूप में दें।
अस्पताल में भर्ती रोगियों के लिए औषधि चिकित्सा—
℞ प्रोकेन सोलूशन (०.२%) २५ मि० ली० को २५० मि० ली० नार्मल सैलाइन में घोल कर अथवा ५% ग्लूकोज +
इञ्जे० रिडोक्सोन (Inj. Redoxon) १०० मि० ग्रा० +
इञ्जे० बेनाड्रिल ५० मि० ग्रा०
नोट—नाड़ी तथा ब्लड-प्रेशर को देखते रहें।
आवश्यक निर्देश—बर्टिगो तथा मेनियर्स दोनों सम्मिलित रोग हैं। अतः दोनों की चिकित्सा भी एक ही समान है।
दौरे से बचाव (Prevention of attack)—
○ अधिक नमक तथा पानी से बचाव रखें। ○ लेबीरिन्थ का व्यायाम।
℞ टेबलेट वेर्टिन (Tab. Vertin)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार १-४ सप्ताह तक।
टेबलेट वेलियम (Tab. Velium) ५ मि० ग्रा०
मात्रा—१ गोली दिन में २ या ३ बार।
अथवा—टेबलेट गार्डीनल ३० मि० ग्रा०
मात्रा—१ गोली दिन में २ बार।
टेबलेट डायामोक्स (Tab. Diamox)
मात्रा—१ गोली दिन में केवल एक बार ४–७ सप्ताह तक।
तत्पश्चात्—१ गोली प्रति तीसरे दिन।
अथवा—टेबलेट हाइथाल्टोन (Tab. Hythalton) १०० मि० ग्रा०
मात्रा—१ गोली प्रातः समय ४ दिन तक।
तत्पश्चात्—१ गोली प्रति तीसरे दिन धीरे-धीरे घटाते हुए।
टेबलेट आर्लीडिन (Tab. Arlidin)
अथवा—टेबलेट निकोटिनिक एसिड १०० मि० ग्रा०
मात्रा—१ गोली दिन में २ बार खाली पेट।
निर्देश—स्टेमेटिल, ड्रामामीन, डेलीगान आदि का प्रयोग अधिक समय तक न करें।
लाक्षणिक चिकित्सा—
अकस्मात् बिलकुल सुनाई न देना (Sudden severe hearing loss)—
१. रोगी को शय्या पर पूर्ण आराम दें।
२. ℞ टेबलेट लूमीनाल (Tab. Luminal) ३० मि० ग्रा०
मात्रा—१ गोली दिन में २ या ३ बार नित्य।
○ यदि रोगी सुनाई न देने के ४ घण्टे पश्चात् आया हो तो—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इञ्जे० एट्रोपिन ०.७५ मि० ग्रा० I/M

℞ बेनाड्रिल ५० मि० ग्रा० मुख द्वारा अथवा I/M इञ्जे० रूप में दिन में २ या ३ बार।

टेबलेट आर्लीडिन (Tab. Arlidin) ६ मि० ग्रा०

अथवा—टेबलेट निकोटिनिक एसिड ५० मि० ग्रा०

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार और रात्रि सोते समय ३ सप्ताह तक।

टेबलेट प्रेडनीसोलोन ५ मि० ग्रा०

अथवा—टेबलेट बेटनीलान ०.५ मि० ग्रा०

मात्रा—२ दिन में ३ बार १० दिन तक। इसके बाद मात्रा घटायें।

अस्पताल में भर्ती रोगियों में—

इण्ट्रावीनस प्रोकेन ०.२% २५० मिली० नार्मल सैलाइन दिन में २ बार २ दिन तक।

इञ्जे० हिस्टामीन एसिड फॉस्फेट २.७५ मि० ग्रा० २५० मि० ली० नार्मल सैलाइन में। अथवा—५% डेक्स्ट्रोज नित्य ३ दिन तक।

○ Asthmatic का प्रयोग न करें।

लोमोडेक्स (Lomodex) १०%–५०० मि० ली० I/V ६ से १२ घण्टे पर ३ दिन तक।

यूरोग्राफीन (Urographine) I/V

मात्रा—१ मि० ली० प्रथम दिन। तत्पश्चात् २ मि० ली० अगले दिन। कुल १०–१५ दिनों तक।

अविशिष्ट कारणजनित भ्रम की चिकित्सा—

℞ निकोटिनिक एसिड	५० मिग्रा०
फीनोबार्बीटोन	१५ मिग्रा०
पायरीडॉक्सीन	१० मिग्रा०
स्टेमेटिल ५ मि० ग्रा०	१ गोली
	१ मात्रा

इन्हें पीस कर एक पुड़िया बना लें। ऐसी १ पुड़िया दिन में ३ बार।

आवश्यक निर्देश—रोगी को झटके से उठने की मनाही करनी चाहिए। शरीर पर ढीले कपड़े पहनें। रोग की तीव्रावस्था में रोगी को शान्तचित्त पड़े रहने का निर्देश देते रहें।

कॉम्बिनेशन थेरापी—

१. ℞ स्टेमेटिल (एम० बी०) ५ मि० ग्रा०	१ गोली
मैक्राफ्लेबिन आयरन (ग्लैक्सो)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार जल से।	१ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. ℞ डिलिगन (यूनि० यू० सी० बी०)	१ गोली
डायेट्रिनेट (यूनिक)	१ गोली
मैक्सेरॉन लिक्विड (कार्टर वालेस)	५ मिली०
	१ मात्रा

गोलियों को पीस कर सीरप में मिला लें। ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार।

३. ℞ डिलीगॉन (यूनि० यू० सी० बी०)	१ गोली
सीलिन १०० मि० ग्रा०	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल से।

○ सिर चकराने में यह एक विशेष सफल योग है।

अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. स्टेमेटिल (Stemetil) (एम० बी०)—पहले दिन ५ मि० ग्रा० की २ गोली दिन में २ बार। तत्पश्चात् २ गोली प्रतिदिन दें।

२. एस्केजीन (Eskazine) (S K F)—१ गोली दिन में कई बार आवश्यकतानुसार।

३. वर्टिन (Vertin) (डूफार)—१–२ गोली दिन में ३ बार भोजनोपरान्त लाभ होने तक।

साथ ही – बैसिटोन फोर्ट (Basitone forte)—दिन में १ बार।

नोट—इससे शारीरिक और मानसिक कमजोरी दूर होकर सिर चकराने में लाभ होता हैं।

४. एनकालोक्सीन (Ancoloxin) (एलेन वरीज)—१–२ गोली दिन में ३ बार।

○ यात्रा करने पर सिर चकराने में इसकी १ गोली यात्रारम्भ से १ घण्टे पूर्व दें।

५. थेराग्रान (Theragran) (साराभाई)—१ गोली प्रतिदिन।

○ शारीरिक तथा मानसिक कमजोरी एवं बुढ़ापे में सिर चकराने में लाभकारी।

६. फॉस्फोमिन (Phosphomin) (साराभाई)—१ चम्मच दिन में २–३ बार जल से।

○ पाचन अंगों में दोष, स्नायुदुर्बलता तथा मानसिक कमजोरी से उत्पन्न सिर चकराने में।

७. ड्रामामीन (Dramamine) (सेरले)

मात्रा—बालक—१–६ वर्ष—$\frac{1}{4}$–$\frac{1}{2}$ गोली दिन में २ या ३ बार।

६–१२ वर्ष—$\frac{1}{2}$–१ गोली दिन में २ या ३ बार।

१२ से ऊपर—१ गोली दिन में २ या ३ बार।

वयस्क—१–२ गोली दिन से ३ या ४ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. ग्रेवोल (Gravol) (वेलेसी)—१–२ गोली प्रति ४ घण्टे पर।

९. प्रेग्नीडॉक्सिन (Pregnidoxin) (U N I–U. C. B.)—१–२ गोली रात में सोते समय।

○ मेनियर्स सिण्ड्रोम में विशेष उपयोगी। ⊡

तन्त्रिका-तन्त्र के रोग 6/9

अधराङ्गघात
(Paraplegia)

पर्याय—ऊरुस्तम्भ, सक्थि-संस्तम्भ, पैरों का लकवा।

परिचय—It is the paralysis of both the two lower limbs the term paraparesis indicated a condition of weakness of both the two lower limbs.

○ जब रोगी के दोनों पैरों में पक्षाघात हो जाता है, तब उस अवस्था को 'पैराप्लेजिया' कहते हैं।

कारण—(१) नर्वस सिस्टम के सामान्य रोगों के कारण—

१. हिस्टीरिया।
२. मल्टीपुल स्क्लेरोसिस।
३. पेरिफेरल न्यूराइटिस।
४. एमियोट्रॉफिक लेटरल स्क्लेरोसिस।
५. सिफिलिटिक एमियोट्रॉफी।
६. सीरिंगोमाइलिया (Syringomyelia)।
७. पेरोनियल मस्कुलर एट्रॉफी।
८. बालकों में—स्पाइनल मस्कुलर एट्रॉफी।
९. डेविक्स डिजीज।
१०. सबएक्यूट कम्बाइण्ड डीजनरेशन ऑफ द स्पाइनल कॉर्ड।

(२) स्पाइनल कॉर्ड को प्रभावित करने वाले कारण—

१. ट्रामेटिक माइलोपेथी।
२. ट्युबरकुलस माइलोपेथी।
३. माइलाइटिस।
४. स्पाइनल इपीड्यूरल एब्सिस।
५. स्पाइनल इपीड्यूरल हीमोरेज।
६. इन्फार्क्शन ऑफ द स्पाइनल कॉर्ड।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. स्पाइनल कॉर्ड ट्यूनर्स ।

लक्षण—१. इसमें पहले-पहल रोगी को अपने हाथ-पैरों को संकुचित करने में कठिनाई प्रतीत होती है। इसके बाद टाँगों को संकुचित करने में कठिनाई होती है।

२. शाखाओं में निर्बलता की वृद्धि के साथ-साथ मांसपेशियों में स्तम्भ की वृद्धि हो जाती है।

३. टाँगों में संकोच के कम होने से टाँगों को जमीन से ऊपर उठाने में कठिनाई होती है। रिक्शा, ताँगा आदि वाहनों पर चढ़ने में भी कठिनाई होती है।

४. टाँगों के सीधा तथा स्तब्ध रहने से अँगूठा जमीन के साथ चोट खाने लगता है। दोनों टाँगें स्तब्ध ही नहीं परस्पर समीपस्थ भी हो जाती हैं। इस अवस्था में टेण्डन रिफ्लेक्सर तीव्रतर हो जाते हैं तथा एब्डॉमिनल रिफ्लेक्सर लुप्त हो जाता है।

५. स्पाइनल कॉर्ड के जिस ओर के खण्ड में रोग होता है, उधर की टाँग में पहले लकवा होता है। यदि उधर की ऊपर जाने वाले संज्ञावाही सूत्र समूहों पर दबाव पड़ जाय तो ग्रस्त खण्ड से सम्बन्धित दूसरी ओर की त्वचा में स्पर्श, वेदना तथा शीतोष्ण की प्रतीति कम होती है। इस ग्रस्त हुए खण्ड के नीचे के क्युटेनियस रिफ्लेक्सर भी लुप्त हो जाते हैं।

६. जिस ओर यह रोग होता है, उधर की टाँग में संज्ञा कम हो जाती है। जब पूरे खण्ड पर दबाव बढ़ जाता है तब दोनों टाँगों में स्तब्धता आ जाती है। साथ ही दोनों ओर संज्ञानाश का लक्षण भी हो जाता है। इस स्थिति में मल-मूत्र पर नियंत्रण भी शिथिल हो जाता है।

७. रोग के अधिक बढ़ने पर टाँगों को फैलाने में बल लगाना पड़ता है। यदि इन्हें फैला भी दें तो वे संकुचित हो जाती हैं। धीरे-धीरे टाँगें संकुचित अवस्था में रहने लगती हैं।

८. अर्बुद आदि के कारण स्पाइनोथेल्मिक सूत्र-समूह के दब जाने से दूसरी ओर के जिस प्रदेश से वहाँ संज्ञावाही सूत्र आते हैं, उनमें दर्द का लक्षण मिलता है। अथवा दोनों ओर टाँगों में वहाँ दर्द का लक्षण पहले होता है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—रोग धीरे-धीरे प्रकट होता है। यदि रोग का शीघ्र शमन न किया जाय तो इसमें रोगी के अंग क्रमशः सूखते लगते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी को १ से १½ मास तक के लिए पूर्ण प्रसार (Extension) की अवस्था में रखें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. रोगी जहाँ गिरा हो, वहाँ से अस्पताल तक उसे मुँह के बल लिटा कर ले जाना चाहिए। रीढ़ की हड्डी को सीधा रखने का प्रयास करें।

३. मूत्रावरोध होने पर कैथेटर डाल कर रखना चाहिए।

४. साधारण रोग में जंघाओं पर शुष्क मालिश करनी चाहिए। साथ ही उसमें पैसिव मूवमेण्ट कराना चाहिए। यदि रोगी समर्थ हो तो वह स्वयं उसे हिलाये-डुलाये।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ टेबलेट मायनेसीन (Tab. Myanesine)

मात्रा—१-१ गोली दिन में ३ बार।

℞ मायनेसीन इलिग्जिर (Myanesine elixir)

मात्रा—१-४ ड्राम दिन में ३-४ बार।

○ **पृष्ठवंश अर्बुद में**—लेमीनेक्टोमी (Laminectomy) का ऑपरेशन लाभकारी होता है। ⊡

तन्त्रिका-तन्त्र के रोग 6/10

पक्षाघात
(Hemiplegia)

पर्याय—अर्धांग पक्षाघात, अर्धांगवात, पक्षाघात, फालिज, लकवा।

रोग परिचय – It is the paralysis of one half of the body including lower half of the face, upper and lower extremities due to offosite sided pyramidal lesion.

○ इस रोग में शरीर के एक ओर के अंग जैसे—एक ओर का हाथ, एक ओर का पैर, एक ओर की आधी जीभ, एक ओर का आधा चेहरा, एक ओर की आँख और इसी प्रकार अन्य अंग रोगग्रस्त हो जाते हैं।

कारण (Causes)—आकस्मिक रूप से अर्धांग पक्षाघात निम्न कारणों से होता है—

१. प्रमस्तिष्कगत थ्रोम्बोसिस (Cerebral thrombosis)।
२. सेरिब्रल इम्बोलिज्म (Cerebral embolism)।
३. प्रमस्तिष्कगत रक्तस्राव (Cerebral haemorrhage)।
४. मस्तिष्कशोथ (Encephalitis)।
५. आघात (Trauma)।
६. हिस्टीरिया (Hysteria)।
७. सेरिब्रल एब्सिस (Cerebral abscess)।
८. सेरिब्रल ट्यूमर (Cerebral tumour)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. कंजेस्टिव अटैक ऑफ जी० पी० आई० (Congestive attack of G. P. I.)।

१०. उच्च रक्तचापीय इन्सेफेलोपैथी (Hypertensive encephalopathy)।

○ इनमें 'प्रमस्तिष्कगत थ्रोम्बोसिस', 'सेरिब्रल इम्बोलिज्म', 'सेरिब्रल हीमोरेज' ही प्रमुख स्थान रखते हैं। इनका वर्णन आगे किया जायेगा।

पक्षाघात के पूर्व रूप—○ केरोटिड तथा बर्टिब्रल धमनी में थ्रोम्बोसिस अथवा इम्बोलिज्म जनित रोग अधिक होते हैं। इसके पूर्वरूप निम्न प्रकार से हैं—

१. रोगी में उच्च रक्तचाप का इतिहास मिलता है।

२. कभी-कभी मस्तिष्क के एक भाग में अल्पकालीन निर्बलता आ जाती है।

३. कभी-कभी रोगी के एक ओर के पैर अथवा हाथ में शून्यता की अनुभूति होती है। अथवा रोगी में अस्थायी पक्षाघात या अस्थायी मूर्च्छा—पूर्वरूप में उपस्थित होती है।

४. कभी-कभी रोगी को भ्रमवश उसे जमीन पर गिरने जैसी अनुभूति होती है। ऐसे रोगी को अपने जीवन के प्रति बहुत ही कम आस्था रहती है। उसका स्वभाव बदल जाता है। वह क्रोधी प्रवृत्ति का हो जाता है तथा उसकी विचारशक्ति निर्बल हो जाती है।

○ अन्त में रोगी भला-चंगा सोता है। सुबह जागकर जब खड़ा होता है तो गिर पड़ता है, तब कहीं उसे पता चलता है कि उसके शरीर का कोई अंग दुर्बल हो गया है।

पक्षाघात के लक्षण—१. रोगी के सिर में भारी पीड़ा होती है।

२. ग्रीवा में स्तम्भ हो जाता है।

३. इसके १-२ मिनट पश्चात् रोगी को एकाएक मूर्च्छा आ जाती है, जो गम्भीर स्वरूप की होती है।

४. मूर्च्छा के पश्चात् रोगी को तीव्र वमन होता है।

५. श्वास-प्रश्वास के खर्राटे की आवाज आती है।

६. जिस ओर पघाक्षात होता है, उस तरफ का गाल दूसरी ओर की अपेक्षा अधिक फूल जाता है।

७. पूरा शरीर शिथिल हो जाता है, पर जिस ओर का गाल फूलता है, उधर की शाखाएँ अधिक शिथिल हो जाती हैं।

८. आँखों के तारे (Pupils) फैल जाते हैं। जिस ओर का मस्तिष्क आक्रान्त होता है, उधर के नेत्रतारे अधिक प्रसारित दिखलाई देते हैं।

९. पक्षाघात ग्रस्त भाग की स्वाभाविक शक्ति (Tone) लुप्त हो जाती है तथा उस ओर का हाथ-पैर निर्जीव-सा हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. रोगी के शरीर में जिस ओर शिथिलता अधिक होती है, उधर के पैर के तलवे को किसी नुकीली वस्तु से खुजलाने पर पैर का अँगूठा ऊपर की ओर फूटता दिखाई देता है। साथ ही उस भाग को तेजी से खुलजाने पर भी उधर की टाँग में किसी प्रकार की हरकत नहीं होती है जबकि दूसरी टाँग में पर्याप्त हरकत मिलती है।

११. ऊपर की मांसपेशियों पर किसी नुकीली वस्तु से चारों कोनों पर लम्बी लाइन खींचने से उदरीय सहज क्रिया (Abdominal reflex) लुप्त हो जाते हैं।

१२. रोगी का सारा शरीर शीतल तथा स्वेदयुक्त हो जाता है।

१३. नाड़ी की गति मन्द पड़ जाती है।

१४. रोगी के चेहरे पर पीलापन झलकता है।

१५. मूत्र में अल्बुमिन की उपस्थिति मिलती है।

१६. रक्तभार बढ़ा हुआ मिलता है।

१७. मस्तिष्क के पोन्स (Pons) के निकट रक्तस्राव होने से रोगी में अत्यधिक ज्वर मिलता है। नेत्र के तारे का आकार सुई की नोक के समान हो जाता है।

१८. मस्तिष्क के जिस ओर रोग होता है, उसके दूसरे ओर की कॉर्नियल रिफ्लैक्स लुप्त हो जाती है।

१९. मस्तिष्कगत रक्तस्राव जनित पक्षाघात (सेरिब्रल हीमोरेज पैरालिसिस) में रोगी तुरन्त बेहोश हो जाता है।

२०. रक्तस्राव जनित पक्षाघात के रोगी में जैसे-जैसे रक्तस्राव होता जाता है, वैसे-वैसे ब्लडप्रेशर गिरता जाता है।

○ **सारांश में**—मुख के एक ओर या दोनों ओर अथवा एक ओर के सम्पूर्ण अंगों में घात उत्पन्न हो जाता है, जिससे मुख से लार टपकती है। रोगी सीटी बजाने में असमर्थ रहता है, बोलते समय मुँह टेढ़ा हो जाता है एवं प्रभावित भाग की ओर की आँख खुली रहती है।

○ इस रोग में रोगी के एक ओर के अंग, निचले अंग, हाथ या पाँव पक्षाघात ग्रस्त होकर बेकार हो जाते हैं। जब रोगी के मुँह और चेहरे में पक्षाघात हो तो उसे लकवा का रोगी समझना चाहिए।

पूर्वानुमान (Prognosis)—रक्तस्राव से उत्पन्न पक्षाघात 'धमनी अवरोध' की अपेक्षा कष्टसाध्य होता है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रक्तस्राव से उत्पन्न पक्षाघात की स्थिति में सिर पर बर्फ की टोपी रखें।

२. रोगी के सिर को हिलने-डुलने न दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. रोगी की गर्दन को एक तरफ घुमाकर जीभ को बाहर की ओर खींचें रहें जिससे रोगी में श्वासावरोध न होने पाये।

४. नाक तथा मुँह में संचित स्राव को बराबर निकालते रहें।

५. श्वासावरोध को दूर करने के लिए रोगी को निरन्तर ऑक्सीजन सुंघाते रहें।

६. पेट में संचित स्राव को 'रायल्स ट्यूब' द्वारा निकाल लें तथा उसी के द्वारा उचित भोजन पहुँचाने का यत्न करें।

७. धमनीगत अवरोध के कारण मूर्च्छा होने पर रोगी को शय्या पर लिटा दें तथा पायताना ऊँचा कर दें।

८. शिथिल हाथ-पैर में बालू की पोटली अथवा तख्त रख देना चाहिए ताकि उक्त अंग की आकृति में किसी प्रकार की विषमता न उत्पन्न हो सके। साथ ही जाँघ के बाहर की ओर रेत की थैली रखनी चाहिए।

९. शिथिल हुआ हाथ वक्ष से सट न जाये, इसके लिए कक्षा के बीच में तकिया लगाकर बाहु को बाहर की ओर खिसका कर रखना चाहिए।

१०. दिन में कई बार हाथ-पैर को हिलाते-डुलाते रहना चाहिए।

११. कुछ दिन के बाद रोगी के शरीर पर हलकी मालिश प्रारम्भ करनी चाहिए। साथ ही शरीर के प्रत्येक जोड़ को मोड़ते-फैलाते रहना चाहिए। यह क्रिया तब तक जारी रखनी चाहिए, जब तक रोगी स्वयं उठने-बैठने न लगे।

१२. सर्दी बिलकुल न लगने दें। हमेशा गर्म कपड़ों से ढँका रखें।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

रोग के प्रारम्भ में—पोटाशियम आयोडाइड ३०० मि० ग्रा० ३० मि० ली० पानी में घोल कर ऐसी एक मात्रा दिन में २-३ बार एक सप्ताह तक पिलायें। एक सप्ताह तक यह दवा पिलाने के बाद नर्व्स को शक्ति देने वाली औषधियाँ दें।

पक्षाघात होने के १½–२ माह पश्चात्—ऐसे रोगी में निम्न योग देने से नर्व्स में शक्ति आ जाती है और रोग कम हो जाता है।

℞ कुनीन सल्फ २ ग्राम + फैरम फॉस्फेट ४ ग्राम + स्ट्रिकनिया सल्फ ०.०६ ग्राम + एक्स्ट्रैक्ट जेन्शन २ ग्राम + एसिड आर्सेनिक ०.०६ ग्राम। सबको मिलाकर ३२ गोलियाँ बना लें। ऐसी १ गोली दिन में २ बार भोजन के बाद दें।

अथवा— ℞ विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स फोर्ट दें। विटामिन बी$_1$ के इन्जेक्शन लगायें।

अथवा ℞ ग्लुटान्युरॉल (फ्रेन्को-इण्डियन) ४ गोली
मैक्राबिन विटामिन बी$_{12}$ (ग्लैक्सो) ५० माइक्रोग्राम १ गोली

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार जल से दें। १ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पक्षाघात के सामान्य रोगियों की चिकित्सा—

℞ मेक्रावेरिन फ़ीज ड्राइड इन्जेक्शन (ग्लैक्सो)

एक इन्जेक्शन सप्ताह में ३ बार मांसपेशीगत ।

अथवा— ℞ प्रोस्टिग्मिन (Prostigmin) (रोशे)

मात्रा—१ मि० ली० मांसपेशीगत या त्वचा में २४ घण्टे में १ बार ।

साथ ही— प्रेडनीसोलोन (Prednisolone) ५ मि० ग्रा० जैसे—होस्टाकार्टिन या वायसोलान । ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार दें ।

एवं—पैरालाइटॉल (Paralytol)—इस तेल की दिन में २-३ बार पीड़ित अंग पर मालिश करें ।

साथ ही तीव्र दर्द के लिए—ए० पी० सी० टेबलेट दिन में २ बार दें ।

लकवा के रोगी में मांसपेशियों में ऐंठन के कारण सख्त दर्द में—

℞ एनॉटेन्साल (Anatensel) (साराभाई)

मात्रा—½-१ गोली दिन में २ बार दूध के साथ १५ से २० दिन तक ।

नोट—लाभ न मिलने पर औषधि बन्द कर दें ।

अथवा—न्यूरोबियान (Neurobion) (मर्क)

मात्रा—३-६ मि० ली० मांसपेशीगत सप्ताह में २ बार ।

अथवा—ट्राइरेडिसॉल-एच (M S D) १००० मि० ग्रा०

मात्रा—१ मि० ली० हर तीसरे दिन मांस में ।

अथवा—ट्राईजिक कैपसूल (यूनिकेम)

मात्रा—१-२ कैपसूल प्रतिदिन ।

अथवा—जेव्राल (Gevral) (सायनेमाइड कं०)

मात्रा—१ कैपसूल प्रतिदिन भोजन के बाद ।

साथ ही—मैकाल्विट सीरप (सैण्डोज कं०)

मात्रा—१० मि० ली० दिन में ३ बार पिलायें ।

○ आवश्यकता पड़ने पर इसका इन्जेक्शन १-२ मि० ली० की मात्रा में मांस में प्रतिदिन या एक दिन छोड़ कर दिया जा सकता है ।

कम्पनयुक्त पक्षाघात में (In parkinsonism)—

℞ टेबलेट सोवेण्टोल (Tab. Soventol)—

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार जल से ।

अथवा—टेबलेट क्रिमाड्रीन (Tab. Kemadrin) (वरोज-वेल्कम)

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३-४ बार ।

अथवा—टेबलेट पेसीटान (Tab. Pacitan)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार भोजनोपरान्त ।

अथवा—टेबलेट पर्पानिट (Tab. Parpanit) (गायगी कं०)

मात्रा—½ से १ गोली तक रोगानुसार दें ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग के कारणों के अनुसार हेमीप्लेजिया का वर्णन

प्रमस्तिष्क थ्राम्बोसिस
(Cerebral Thrombosis)

परिचय—आजकल इस प्रकार का अर्धांग पक्षाघात अधिक देखने को मिलता है। इसमें मस्तिष्क की रक्तवाहिनियों में अवरोध हो जाता है। इसमें अधिकांश रोगियों की मृत्यु हो जाती है।

लक्षण (Symptoms)—१. रोग का आक्रमण—रोग का आक्रमण अकस्मात् होता है।

२. लिंग (Sex)—स्त्री-पुरुष दोनों में समान रूप से।

३. आक्रमण का समय—आक्रमण प्रायः आराम की स्थिति में विशेष कर सोते समय होता है।

विशेष लक्षण—१. कभी बेहोशी आती है तो कभी सम्पूर्ण शरीर में आक्षेप आने लगते हैं।

२. रोगी की जीभ लड़खड़ाने लगती है तथा अन्त में उसमें बेहोशी तथा पक्षाघात के सभी लक्षण उपस्थित हो जाते हैं।

३. इस प्रकार के पक्षाघात से ग्रस्त रोगी प्रायः अधेड़ आयु के ही होते हैं।

४. प्रायः ऐसे व्यक्ति हृदय एवं रक्तविकार से पीड़ित रहा करते हैं।

५. रोग के सम्पूर्ण लक्षण २४ से ७२ घण्टे के अन्तर्गत दिखलाई देने लगते हैं।

विशेष अन्वेषण—१. सिफिलिस के रोगी में डब्लु० आर० के० टी० तथा वी० डी० आर० एल० पाजिटिव (+) होता है।

२. C. S. F. प्रायः नार्मल रहता है।

औषधि-व्यवस्था निर्देश—१. रोग की तीव्रावस्था में 'सेरिब्रल वेसोडाइलेटर्स' का उपयोग करना चाहिए।

२. मेनीटोल (Manitol) इफ्यूजन अथवा ग्लिसरीन का उपयोग मुख मार्ग से किया जा सकता है।

३. सेरिब्रल ईडिमा की स्थिति में 'स्टेरॉइड्स' तथा 'डायोरेक्टिस' का प्रयोग लाभकारी होता है।

४. यदि रोगी बेहोशी की स्थिति में हो तो 'कोमा' की सम्पूर्ण व्यवस्था करें।

५. सेकेण्डरी इन्फेक्शन के लिए 'एण्टीबायोटिक' दें।

६. न्यूरोट्रॉपिक + विटामिन्स का उपयोग लाभकारी होता है।

७. यदि हीमोप्लेजिया लगातार चालू रहे तो भौतिक चिकित्सा (Physio therapy) का उपयोग करना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औषधि-चिकित्सा—रोगी को शय्या पर सुलाकर उसका पैंताना ऊँचा कर दें। साथ ही रोगी को गर्म कपड़े या कम्बल से ढँक दें। तत्पश्चात्—

℞ कोरामीन (Coramine) या कार्डियाजोल (Cardizol)

मात्रा—१ मिली० मांसपेशीगत अथवा ड्रॉप १५ बूँद आवश्यकतानुसार।

○ यदि रोगी का शरीर नीला पड़ गया हो तो—ऑक्सीजन सुघायें।

℞ हिपेरिन (Heparin)

मात्रा—५ मि० ली० (१० मि० ग्रा०) अर्थात् १०० यूनिट मांसपेशीगत तथा ५० मि० ग्रा० (५००० यूनिट) I/V अथवा I/M द्वारा दें।

○ युवा व्यक्तियों में—५००० यूनिट वाले ट्यूब में १० औंस सैलाइन मिलाकर देते हैं और इसे ८-८ घण्टे पर दुहराते हैं।

नोट—यह चिकित्सा १ सप्ताह तक जारी रखी जाती है।

तत्पश्चात्—℞ डाइकोमेराल (Dicomerol) या डिण्डिवान (Dindivan)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

सावधानी—इस औषधि के अधिक प्रयोग से रक्तस्राव की सम्भावना रहती है। अतः बीच में कोएगूलेशन टाइम देखते रहना चाहिए।

साथ ही—विटामिन-सी (सीलिन) तथा अन्य विटामिन्स का प्रयोग करते रहना चाहिए।

पक्षाघात ग्रस्त अंगों को स्वस्थ रखने के लिए—

℞ ट्राई-रेडिसाल-एच १००० मि० ग्रा०

अथवा—इञ्जे० न्यूरोक्सिन बी$_{१२}$

मात्रा—१-२ मि० ली० मांसपेशीगत प्रतिदिन या सप्ताह में ३ बार।

○ **यदि ब्लड-प्रेशर अधिक हो तो—**

℞ सर्पासिल (Serpacil) २५ मि० ग्रा० टेबलेट

मात्रा—१ गोली दिन में १ या २ बार। अथवा १ मिग्रा० का इञ्जे० दें।

मानसिक उत्तेजना को कम करने के लिए—'ल्यूमिनाल' तथा कम्पोज का उपयोग।

रोगशमन के पश्चात्—पक्षाघात ग्रस्त अंगों पर हलकी मालिश।

○ **मांसपेशियाँ अकड़ी हुई हों तो—**

℞ माइनेसिन (Mynesin) $\frac{1}{2}$ ग्रेन की १ गोली

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

साथ ही दर्द के लिए—'एनाल्जेसिक' औषधि दें।

सेरिब्रल इम्बोलिज्म
(Cerebral Embolism)

कारण—१. पल्मोनरी शिरा का थ्रोम्बोसिस।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. पल्मोनरी इन्फेक्शन या ट्यूमर।

३. मिट्रल स्टेनोसिस।

४. अस्थिभग्न (Fracture)।

५. मिट्रल तथा एऑर्टिक इण्डोकार्डाइटिस।

६. मस्तिष्क की बड़ी धमनी में थ्रोम्बोसिस के कारण।

७. सब-एक्यूट बैक्टीरियल इण्डोकार्डाइटिस।

८. मायोकार्डियल इन्फार्क्शन (Myocardial infarction)।

९. पैराडॉक्सिकल इम्बोलिज्म।

○ सेरिब्रल इम्बोलिज्म उपरोक्त किन्हीं कारणों से उत्पन्न हो सकता है।

लक्षण (Symptoms)—जिस स्थान पर इम्बोलिज्म अटकता है, उसी के अनुसार इसके लक्षण निर्भर करते हैं।

१. इसमें रोगी यद्यपि पूर्णरूप से बेहोश तो नहीं होता है, परन्तु उसमें बुद्धिभ्रम अवश्य हो जाता है।

२. रोग का आक्रमण तूफानी (Stormy) अथवा तीव्ररूप का होता है।

३. रोगी बेसुध (Unconscious) अथवा व्यग्र (Dazed) स्वरूप का होता है।

४. शिरःशूल तथा Convulsive scizure के लक्षण मिलते हैं।

५. प्रायः हेमीप्लीजिया दाहिनी ओर विकसित होता है।

६. Vasospasm के साथ लक्षण तथा चिह्न धीरे-धीरे बढ़ते हैं।

७. यह रोग युवावस्था की बढ़ी हुई उम्र में मिलता है।

८. ब्लड-प्रेशर प्रायः नार्मल रहता है।

९. रोगी की नाड़ी तीव्र तथा अनियमित चलती है।

१०. परीक्षा करने पर W. R. K. T. तथा V. D. R. L. टेस्ट निगेटिव मिलता है।

११. C. S. F. परीक्षा Clear होती है। कुछ केसिस में Pleocytosis अथवा रक्त की उपस्थिति मिलती है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—७–१०% मृत्युदर।

चिकित्सा—सेरिब्रल थ्रोम्बोसिस के समान।

○ कुछ केसिस में एण्टी कोएगुलेण्ट्स (Anticoagulants) चिकित्सा का प्रयोग किया जा सकता है, किन्तु विशेष सावधानी के साथ। इस चिकित्सा का उपयोग बैक्टीरियल इण्डोकार्डाइटिस की अवस्था में नहीं किया जाता है।

○ रोग के कारण की चिकित्सा अवश्य करनी चाहिए।

○ यदि रोग का आक्रमण बार-बार होता हो तो लम्बे समय तक एण्टी कोएगुलेण्ट थेरापी का उपयोग किया जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ आवश्यकता पड़ने पर शल्य-चिकित्सा द्वारा 'वर्टिब्रल आर्टेरी' को निकाल दिया जाता है।

○ सिफिलिटिक केसिस में एण्टी सिफिलिटिक व्यवस्था अपनाई जाती है।

○ Residual haemiplegia में 'Physiotherapy' का उपयोग किया जा सकता है।

नोट—शेष चिकित्सा 'सेरिब्रल थ्रोम्बोसिस' के समान है।

इण्ट्रासेरिब्रल हीमोरेज
(Intracerebral Haemorrhage)

कारण—१. यह अवस्था मुख्य रूप से हाई ब्लड-प्रेशर के रोगियों में मस्तिष्क की धमनी के आकस्मिक रूप से फट जाने से होती है।

२. आघात (Trauma)।
३. कुक्कुरखाँसी (Whooping cough)।
४. ब्लड डिस्क्रेसियस (Blood dyscrasias)।
५. एञ्जियोमेटा।
६. नियोप्लाज्म में रक्तस्राव।
७. इन्फार्क्शन के चारों ओर रक्तस्राव।
८. आर्टीरियल एवं वेनस इन्फ्लैमेशन।
९. अज्ञात कारण।

लक्षण—आयु (Age)—४० वर्ष से ऊपर।
लिंग (Sex)—सामान्य रूप से पुरुषों में।
आक्रमण—अकस्मात्।

१. मस्तिष्क की धमनी के फटने से पहले रोगी को तीव्र शिरःशूल, वाणी में अनियमितता तथा अन्य प्रकार के नर्वस सम्बन्धी लक्षण होते हैं।

२. रक्तस्राव हो जाने के पश्चात् रोगी तत्काल मूर्च्छित होकर अतितीव्र मूर्च्छा (Dup coma) की स्थिति में पहुँच जाता है।

३. रोगी को आक्षेप आने लगते हैं।

४. आँखें लाल हो जाती हैं तथा नेत्रतारे (Pupils) असामान्य हो जाते हैं।

५. रोगी पूर्णरूप से बेहोश हो जाता है तथा रोगी में एक विशेष प्रकार की 'चैन स्टोक्स रेस्पिरेशन' होने लगता है।

६. प्रमस्तिष्क के इण्टर्नल कैपसूल में रक्तस्राव होने से तात्कालिक पक्षाघात के कारण विकृत पार्श्व की दिशा में नेत्र तथा सिर घूम जाता है और इसी के साथ ही चेहरा और हाथ-पैर पक्षाघात-ग्रस्त हो जाते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. जब 'पोन्स की धमनी' में रक्तस्राव होता है, तब नेत्र-तारे पिन के आकार के हो जाते हैं तथा रोगी तीव्र ज्वर से पीड़ित हो जाता है।

८. विकृत पार्श्व की फेसियल नर्व्स पक्षाघात से ग्रस्त हो जाती है।

९. अत्यधिक रक्तस्राव के कारण स्वस्थ पार्श्व की ओर के अंग भी पक्षाघात-ग्रस्त तथा क्रियाहीन हो जाते हैं। साथ ही रोगी में मानसिक क्षोभ के लक्षण दिखलाई देने लगते हैं।

१०. रोगी का चेहरा लाल (Congested) हो जाता है तथा उसे पसीना आता है।

११. जिधर की शाखाओं (Limbs) में पक्षाघात का प्रभाव नहीं होता है, उनमें हरकत (Movements) मिलती है।

१२. यूरिनरी ब्लैडर भरा हुआ रहता है।

१३. नाड़ी भरी हुई तथा धीमी होती है।

१४. पेरिफेरल आर्टेरी में स्थूलता (Thickening) मिलती है।

१५. श्वसनगति (Respiration rate) धीमी होती है।

१६. प्रायः ब्लडप्रेशर हाई मिलता है जो २०० MM of Hg से ऊपर (Systolic) रहता है।

१७. तापक्रम प्रायः नार्मल रहता है, किन्तु पोण्टाइन हीमोरेज तापक्रम बढ़ा हुआ मिलता है।

१८. दोनों ओर के एब्डॉमिनल रिफ्लेक्स समाप्त हो जाते हैं। साथ ही पक्षाघात की ओर के आन्तरिक रिफ्लेक्स भी समाप्त हो जाते हैं।

१९. लेफ्ट वेण्ट्रिकुलर इन्लार्जमेण्ट मिलता है।

निदानात्मक परीक्षा (Investigation)—१. C. S. F. बढ़ा हुआ प्रेशर प्रदर्शित करता है।

२. रंग—Frank Blood.

३. प्रोटीन लेवल बढ़ा हुआ मिलता है।

४. माइक्रोस्कोपिक परीक्षा—सैकड़ों R. B. C. प्रदर्शित करता है।

५. मूत्र परीक्षा में अल्बुमिन की उपस्थिति मिलती है।

६. शर्करा उपस्थित मिलती है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—यह रोग प्रायः असाध्य होता है। इससे ग्रस्त कुछ ही रोगी बच पाते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—१. रोगी को अंधेरे कमरे में रखें।

२. शिरःशूल नाशक औषधियों की व्यवस्था करें।

३. रोगी को अनिवार्य रूप से शय्याबद्ध रखना चाहिए।

४. रेचक औषधियों से मलावरोध दूर करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. उच्च रक्तचाप को घटाने का हर सम्भव प्रयास करें। साथ ही लम्बर पंक्चर कर रोग-निदान की पुष्टि करें।

○ लम्बर पंक्चर में यदि C. S. F. का दबाव २५० मि० ली० से अधिक मिले तब कम से कम १५ C. C. प्रमस्तिष्कीय मेरु द्रव (Cerebro-spinal fluid) निकाल देना चाहिए।

नोट—द्रव निकालने से ब्लड-प्रेशर में भी कमी आती है। साथ ही मूर्च्छा भी कम हो जाती है।

○ सेकेण्डरी इन्फेक्शन की सम्भावना में 'एण्टीबायोटिक' का प्रयोग करें।

पक्षाघात की मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१ ℞	न्यूरोबियान फोर्ट या प्लेन (मर्क)	१ या २ गोली
	डेल्टाकॉर्ट्रिल (फाइजर)	१ गोली
	रुब्राप्लेक्स इलिग्जिर (साराभाई)	१० मिली०
		१ मात्रा

गोली को पीसकर इलिग्जिर में मिला लें। ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार भोजन के बाद दें।

२. ℞	न्यूरोबियान फोर्ट (मर्क)	१ गोली
	ग्लूटान्यूरॉल (फ्रेन्को-इण्डियन)	२ गोली
	बीप्लेक्स (ए० एफ० डी०)	२ गोली
		१ मात्रा

ऐसी एक मात्रा प्रातः-सायं भोजन के बाद जल से।

३. ℞	हार्मो-जेरोबियान (मर्क)	१ गोली
	प्रोस्टिग्मिन (रोशे)	१ गोली
	ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल से।	१ मात्रा

४. ℞	ट्राई-रेडिसाल-एच (MSD) १००० मा० ग्रा०	१ मिली०
	बेरिन (ग्लैक्सो) १०० मिग्रा०	१ मिली०
		१ मात्रा

दोनों को भलीभाँति मिलाकर ऐसी १ मात्रा गहरे मांसपेशी में प्रति तीसरे दिन।

५. ℞	ग्लूटान्यूरॉल (फ्रेन्को-इडियन)	४ गोली
	मैक्राबिन विटामिन बी$_{१२}$ (ग्लैक्सो) ५० मा० ग्रा०	१ शीशी
	ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार जल से।	१ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. ℞ डेग्जेड्रीन (इस्काय लैब)	१ गोली
ग्लूटामाल्ट (मिडिनेक्स)	१० मिली०
बेरिन १०० मि० ग्रा०	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल से ।	१ मात्रा

○ इसके प्रयोग से मस्तिष्क तथा नर्व्स में उत्तेजना होती है। पक्षाघात, लकवा तथा स्नायविक एवं मानसिक कमजोरी में उत्तम लाभकारी है। ▣

तन्त्रिका-तन्त्र के रोग 6/11

अर्दित
(Facial Paralysis)

पर्याय—आनन पक्षाघात, चेहरे का लकवा आदि।

परिचय—It is condition characterized by suddan paralysis of the muscles of one half of the face due to the involvement of the seventh cranial nerve.

○ इसमें चेहरे की किसी एक ओर की पेशियों पर रोग का आक्रमण होता है, जिससे चेहरे का एक पार्श्व टेढ़ा हो जाता है। यह मस्तिष्क की सातवीं नर्व्स जिसे 'Facial nerve' कहते हैं, का पक्षाघात हो जाता है।

रोग के कारण—१. पानी में भींगने से।

२. ठंड लगने से।

३. चोट या आघात लगने से।

४. मस्तिष्कगत रक्तस्राव अथवा मस्तिष्कगत धमनी अवरोध। यह इस रोग का प्रधान कारण माना जाता है।

उम्र (Age)—रोग ५०-६० वर्ष की अवस्था के बाद होता है।

रोग लक्षण—१. इसका आक्रमण अकस्मात् होता है।

२. कभी-कभी इसके होने के पूर्व कान के नीचे पीड़ा होती है, जिसमें स्पर्शासह्यता मिलती है।

३. चेहरे की एक तरफ की पेशियाँ प्रभावित होती हैं। इसलिए मुख मण्डल का एक पार्श्व टेढ़ा हो जाता है।

४. रोगी का आधा चेहरा भावहीन हो जाता है तथा उसकी मांसपेशियाँ शक्तिहीन हो जाती है।

५. विकृत पार्श्व का चेहरा स्तब्ध तथा अकड़ा हुआ-सा प्रतीत होता है।

६. विकृत पार्श्व के ओर की आँखों की पलकें ठीक से बन्द नहीं होती है। पलकें बन्द करने पर नेत्रगोलक ऊपर और बाहर की ओर मुड़ जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. विकृत पार्श्व की ओर का ओष्ठ भी परस्पर मिल नहीं पाता है जिससे रोगी का खाया-पिया मुँह के एक तरफ से निकल जाता है। ओष्ठ से निकलने वाले शब्द स्पष्ट नहीं होते हैं।

८. रोगी द्वारा लिया गया भोजन मुख में ही संचित रह जाता है।

९. रोगी का चेहरा स्वस्थ पक्ष की ओर घुमा हुआ प्रतीत होता है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. यदि रोग तीव्र स्वरूप का न हो तथा पलकों में झपकाने की कुछ शक्ति हो तो १ से ३ माह में रोगी के ठीक होने की आशा की जाती है।

२. रोगी में स्वाद नाश का लक्षण मिले तो रोगी ठीक हो सकता है।

चिकित्सा (Treatment)—फेसियल पैरालिसिस की चिकित्सा अन्य पक्षाघात के समान होती है। इसमें प्रायः लाक्षणिक चिकित्सा की जाती है।

साधारण रोग में—

℞ प्रोस्टिग्मिन (Prostigmine)

मात्रा—½–१ गोली दिन में ३-६ बार। १ सप्ताह तक देकर २-३ दिन बन्द रखें।

साथ ही—सोडा सैलीसिलास ६०० मि० ग्रा० दें।

विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स ५० मि० ग्रा० या विटामिन B_1 १०० मि० ग्रा० मांसपेशीगत इञ्जे० सप्ताह में २ बार।

दर्द दूर करने के लिए—

१. Hot compress—मेस्टुआयड रीजन पर गर्म सेंक, इन्फारेड या डायथर्मी।

२. एनाल्जेसिक—

(i) ℞ ए० पी० सी० (A. P. C.)

मात्रा—एक गोली दिन में ३ बार।

○ तीव्र शूल की अवस्था में—पेथीडीन १०० मि० ग्रा० I/M दें।

(ii) विटामिन B_{12} ५०० माइक्रोग्राम

मात्रा—१ मि० ली० की मात्रा में I/M सप्ताह में २ बार।

अथवा—न्यूरोक्सिन B_{12} १००० माइक्रोग्राम + B_1 + B_6 I/M प्रतिदिन २ सप्ताह तक।

३. कोर्टीकोस्टेराइड्स—प्रेडनीसोलोन (Prednisolone)

मात्रा—३ गोली दिन में ४ बार ४ दिन तक।

तत्पश्चात्—२ गोली दिन में १ बार।

४. मालिश (Massage)—'ब्लेण्ड आयल' अथवा क्रीम तीसरे सप्ताह बाद चेहरे की पेशियों में। प्रत्येक बार ५-१० मिनट तक दिन में ३-४ बार।

१५ दिन बाद इलेक्ट्रिक स्टीमुलेशन का प्रयोग १ दिन छोड़ कर करें।

○ इसके लिए Faradic current अधिक उपयुक्त होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चेहरे के लकवे में प्रयुक्त अन्य अनुभूत चिकित्सा—

℞ पोटाश आयोडाइड (Pot. Iodide)	३·२ ग्राम
सोडा सैलीसिलेट (Soda salicylate)	०·६ ग्राम
सोडाबाइकार्ब	१.० ग्राम
जल (Aqua)	३० मिली०
	१ मात्रा

सबको मिलाकर मिक्श्चर बना लें। ३० मि० ली० दिन में ३ बार भोजनोपरान्त दें।

साथ ही—क्लोरब्यूटोल	६०० मिग्रा०
ल्यूमीनोल	६० मिग्रा०
लैक्टोजम	६०० मिग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।	१ मात्रा

इनको मिलाकर १ मात्रा बना लें। ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।

○ पलकें बन्द न हों, आँखों को बोरिक लोशन से धोयें।

○ चेहरे पर 'महानारायण तैल' की मालिश कर बिजली की सिकाई करें। ⊡

तन्त्रिका-तन्त्र के रोग 6/12

मस्तिष्कशोथ
(Encephalitis)

पर्याय—विचित्र रोग, मस्तिष्क ज्वर।

परिचय—यह एक घातक रोग है और विशेष प्रकार के वायरस के संक्रमण से होता है। मस्तिष्क में शोथ हो जाने के कारण रोगी बेहोश हो जाता है। रोगी मूर्च्छा में अंट-संट बातें करता है। रोगी के बच जाने पर भी उसका मस्तिष्क स्थाई रूप से विकृत हो जाता है। कुछ रोगी ठीक भी होते देखे जाते हैं। खसरा, फ्लू और मम्प्स के रोग के बाद प्रायः यह रोग हो जाता है।

नोट—चूँकि 'इन्सेफेलाइटिस' का रोग वायरसजन्य होने के कारण 'संक्रामक रोगों' के अन्तर्गत आता है। अतः इसका विस्तृत वर्णन आगे 'संक्रामकरोग की चिकित्सा' में किया जायेगा। ⊡

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपतानिका
(Tetany)

पर्याय—हस्तपाद आकर्ष (Carpo-pedal spasm), अल्पकैल्शियम रक्तता (Hypocalcaemia)।

परिचय—कैल्शियम की कमी से होने वाले दौरे वाले इस रोग को टिटैनी कहते हैं।

○ कैल्सियम की कमी से मांसपेशियों तथा संज्ञावाही वाततन्त्रिकाओं में अक्षमता या विक्षोभशीलता बढ़ जाती है।

○ इस रोग में प्रधान रूप से हाथ और बाहु की मांसपेशियों में प्रबल आकुंचन (Contraction) के दौरे होने लगते हैं।

लक्षण—१. आकुंचन के वेग के समय हाथ की अँगुलियों में प्रसार होता है, किन्तु हथेली संकुचित रहती है और एक-दूसरे के साथ लग जाती है। अँगुलियाँ भी अँगूठे के साथ लगी रहती हैं।

२. पाँव में जब स्तम्भ का प्रभाव होता है, तब वह ऊपर और अन्दर की ओर जकड़ा हुआ तथा अँगुलियों एवं तलुए की ओर संकुचित होता है।

३. स्तम्भ का वेग कुछ सेकेण्ड रहता है; इसके बाद मांसपेशियाँ शिथिल हो जाती हैं।

४. शरीर की अनेक मांसपेशियों में हलके-हलके कम्प होते हैं।

५. तापक्रम प्रायः नार्मल रहता है। कभी-कभी हल्का ज्वर मिलता है।

६. ६ मास से २ वर्ष के बालकों में श्वासकृच्छ्रता के लक्षण मिलते हैं। इसमें शीत लगने से गले में स्तम्भ हो जाता है। साथ ही श्वासावरोध के कारण बालक का शरीर नीला पड़ जाता है।

७. मानसिक अशान्ति, चिन्तनशीलता, स्मृति-मन्दता, विचारशक्ति की कमी आदि लक्षण मिल सकते हैं।

८. बालकों में आक्षेप के लक्षण अधिक होते हैं।

९. इस रोग में त्वचा शुष्क तथा छिलकेदार हो जाती है।

१०. नख पहले भंगुर हो जाते हैं और बाल उड़ जाते हैं।

११. दाँतों का निर्माण ठीक तरह से नहीं होता है।

○ कभी-कभी रोग के आक्षेप उदर, छाती, पीठ और चेहरे आदि की मांसपेशियों में भी होने लगते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निदान—रोग के आक्षेप १५ मिनट या कुछ घण्टों तक रहते हैं। लक्षणों के द्वारा इसे आसानी से पहचाना जा सकता है।

चिकित्सा—℞ कैल्शियम ग्लूकोनेट (Calcium gluconate)

मात्रा—१० मि० ली० (१०%) इण्ट्रावीनस

साथ ही—कैल्शियम ग्लूकोनेट ३० ग्रेन मुख द्वारा दिन में ३ बार।

अथवा—कैल्शियम लैक्टेट १०-२० ग्रेन

अथवा—कैल्शियम ऑस्टेलिन या कैल्शियम ऑस्टेलिन विद बी$_{१२}$ I/M. इन्जेक्शन।

○ वमन रोग में जब टिटेनी कम्प्लीकेशन रूप में उत्पन्न होता है तब—कैल्शियम ग्लूकोनेट १०%–५-१० मि० ली I/V दें।

○ **इन्फेण्टाइल डायरिया की स्थिति में टिटैनी रोग**—

टिटैनी उत्पन्न होने पर—कैल्शियम ग्लूकोनेट १०%–२ मि० ली० I/M प्रतिदिन तब तक देते हैं, जब तक बालक दूध नहीं लेने लगता है।

कोलो-कैल-डी (Collo-Cal-D), कैल्शि-ऑस्टेलिन (Calci-ostelin) १ मि० ली० मांसपेशीगत नित्य जब तक वमन उपस्थित रहें।

○ **ट्रॉपिकल स्प्रू रोग में टिटैनी होने पर**—कैल्शियम ग्लूकोनेट १०%–१० मि० ली० I/M नित्य ७ दिन तक। साथ ही १ ग्राम मुख द्वारा नित्य।

अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—**टेबलेट**—एब्डेक कैपसूल, कैल्शियम लैक्टेट विद पैराथायराइड ग्लैण्ड, काल्सकॉर्बोट (Calscorbot)।

सिरप—एब्डेक ड्राप्स, प्रोटोविट, माइनोलेट, रेडियोस्टोलियम।

इन्जेक्शन—ऑस्टेलिन फोर्ट, कैल्शी-ऑस्टेलिन बी$_{१२}$, रेडियोस्टेलियम। ▣

तन्त्रिका-तन्त्र के रोग 6/14

सकम्प पक्षाघात
(Parkinsonism)

पर्याय—सकम्प पक्षाघात, पार्किन्सनता।

परिचय—This is a syndrome characterised by poverty of movement, rigidity of muscles and tremor.

○ यह वृद्धों का रोग है। इसमें हाथ-पैर या सिर से कम्पन आरम्भ होकर समस्त शरीर में फैल जाता है। अपनी इच्छा से अंगों को हिलाना कठिन हो जाता है। चेहरा, ग्रीवा एवं कमर की मांसपेशियों में तनाव आ जाता है, आँखें नहीं झपकतीं तथा गर्दन नहीं मुड़ पाती, रोगी छोटे-छोटे कदम उठाता है तथा गिरने के भय से आशंकित रहता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण—रोग का कारण अज्ञात है।

लिंग (Sex)—अधिकांश रूप से पुरुषों में।

आक्रमण—रोग धीरे-धीरे प्रारम्भ होता है।

लक्षण—१. इस रोग में शरीर की सामान्य मृदुता तथा लचीलापन क्रमशः कम होता जाता है और उसके स्थान पर शरीर में दृढ़ता (Rigidity) आने लगती है।

२. 'दृढ़ता' का लक्षण सबसे पहले एक ओर के हाथ अथवा अग्रबाहु में प्रतीत होता है। इसके बाद क्रमशः उस ओर की टाँग में यह प्रकट होने लगता है। कुछ समय के पश्चात् पूरा शरीर ही इससे प्रभावित हो जाता है।

३. रोगी के हाथों का झूलना बन्द हो जाता है।

४. रोगी देखने में शून्य-सा दिखलाई देता है। चेहरे पर हर्ष, शोक आदि भावसूचक चेष्टाएँ लुप्त हो जाती हैं। आँखें सामान्य से अधिक खुली रहती हैं, जिससे रोगी घूरता-सा नजर आता है।

५. ग्रीवा की मांसपेशियों में स्तब्धता के कारण रोगी को एक तरफ मुँह करने के लिए उसे अपना पूरा धड़ मोड़ना पड़ता है।

६. टाँगों की स्तब्धता के कारण उनकी गति मन्द पड़ जाती है तथा उसकी स्वाभाविक स्फूर्ति लुप्त हो जाती है।

७. मांसपेशियों में स्तब्धता तथा निर्बलता के साथ-साथ प्रकम्प (Tremors) भी होने लगते हैं।

८. रोगी को उठने-बैठने तथा लिखने में कठिनाई होती है। बाहु तथा पीठ में पीड़ा की अनुभूति होती है।

९. रोगी को सामान्य रूप से सर्दी-गर्मी तथा थकावट की अनुभूति होने लगती है। इसके बाद कम्पन होने लगता है और रोग का क्रम बढ़ता जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. इसकी कोई संतोषजनक चिकित्सा नहीं है। इसमें मद्य का सेवन कुछ अवश्य लाभकारी होता है।

२. पौष्टिक आहार तथा विटामिन्स आदि का उचित मात्रा में व्यवहार करना चाहिए।

३. शरीर की मांसपेशियों की पुष्टि के लिए मालिश आवश्यक है। हाथ-कलाई, ग्रीवा, अग्र बाहु तथा अँगुलियों की मालिश करने से रोग का वेग कम हो जाता है।

४. जितना आसानी से सहन हो सके नियमित व्यायाम आवश्यक है।

(२) औषधि-चिकित्सा—इसकी चिकित्सा केवल लाक्षणिक होती है। चिकित्सा से पूर्व निम्न परीक्षण आवश्यक होते हैं—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

1. E. C. G.

२. ब्लड काउण्ट, प्लेटलैट काउण्ट।

३. किडनी फंक्शन तथा लिवर फंक्शन टेस्ट।

℞ केमाड्रिन (Kemadrin) (बरोज वेल्कम) २.५ मि० ग्रा० टेबलेट

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार भोजनोपरान्त। २.५ मि० ग्रा० प्रति दिन बढ़ाते हुए। मेण्टेनेन्स मात्रा—१०-३० मि० ग्रा० नित्य।

अथवा—एमीनो-एसिड एल० डोपा (Ameno-acid L. dopa)

मात्रा—८ ग्राम प्रतिदिन।

○ यह इस रोग की उत्तम औषधि मानी जाती है।

अथवा—लार्डोपा अथवा लेवोपा (Levopa) ५०० मि० ग्रा० टेबलेट

मात्रा—½ गोली दिन में १ बार। बढ़ाते हुए प्रति सप्ताह ½ गोली दिन में ४ बार भोजनोपरान्त थोड़े दूध के साथ।

अथवा—सिनेमेट (Synemet) लेवोडोपा २५० मि० ग्रा०

तथा—कार्बीडोपा (Carbidopa) २५ मि० ग्रा०

मात्रा—उपरोक्त के अनुसार। अधिकतम ६ गोली प्रति दिन।

अथवा—मेडोपार (Madopar) १२५ मि० ग्रा० कैपसूल

मात्रा—१ कै० दिन में २ बार, धीरे-धीरे मात्रा बढ़ाते हुए १ कैपसूल दिन में ३ बार।

पेसीटैन (Pacitane)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

○ यदि रोगी अवसाद युक्त हो तो—

℞ टेबलेट डिसीपाल (Tab. Disipal)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

एमाण्ट्रेल (Amantrel) १०० मि० ग्रा० (सिपला)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

उपद्रवों की चिकित्सा—

१. **अनिद्रा**—(i) डायजीपाम १० मि० ग्रा० टेबलेट

अथवा—प्रोमेथाजीन (Phenergan) २५ मि० ग्रा० टेबलेट

(ii) बेनाड्रिल ५० मि० ग्रा० दिन में १ या २ बार।

२. **लालास्राव**—प्रोबेन्थीन (Probenthine) (सेरले)

अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. एमाण्ट्रेल (Amantrel) (सिपला)—१ कै० दिन में २ बार।

२. इल्डोपाल (Eldopal) (विडल शायर)—१-८ ग्राम नित्य विभाजित मात्रा में।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ सभी प्रकार के पारकिन्सोनिज्म में उपयोगी।

नवीन अनुसंधान—पिछले कुछ समय से इस रोग में शल्य-चिकित्सा द्वारा अधिक सफलता प्राप्त हुई है। यह चिकित्सा केवल अनुभवी चिकित्सकों द्वारा ही की जानी चाहिए।

पारकिन्सोनिज्म की मिश्रित चिकित्सा—

१. ℞	एमैण्टीडीन हाइड्रोक्लोराइड	१०० मिग्रा०
	लेवोडोपा	५०० मिग्रा०
		१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार मधु के साथ।

२. ℞	केमाड्रीन (बी० डब्ल्यु०) ५ मि० ग्रा०	१ गोली
	पेसीटीन (सायनेमाइड)	१ गोली
	ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल से भोजनोपरान्त	१ मात्रा □

तन्त्रिका-तन्त्र के रोग 6/15

मस्तिष्क-विद्रधि
(Brain Abscess)

परिचय—Brain abscess is an encapsulated or free collection of pus in the substance of the brain tissue following an acute purulent infection.

○ जब पूयजनित उपसर्ग मेनिञ्जेज (मेनिञ्जाइटिस) में प्रवेश कर जाता है, तब ऐसी अवस्था (Brain abscess) उत्पन्न होती है।

कारण—१. डायरेक्ट एक्स्टेन्शन।

२. मेटास्टेटिक इन्फेक्शन।

३. द्वितीयक संक्रमण (Secondary infection)।

○ लगभग दो-तिहाई रोगियों में यह रोग पुराने मध्यकर्णशोथ के रोगी में मेस्टायड बोन में पायोजेनिक जीवाणुओं के प्रवेश कर जाने से होता है।

लक्षण—१. शिरःशूल।

२. वमन एवं मितली।

३. कभी-कभी शीत सहित बुखार।

४. रोगी में पूयजनित मध्यकर्णशोथ का दीर्घकालीन इतिहास मिलता है।

५. रह-रह कर शिरःशूल का कष्टदायक लक्षण मिलता है।

६. शंखप्रदेश को दबाने से शूल तीव्र हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ रोग के बढ़ने पर रोगी में मानसिक मन्दता बढ़ जाती है, जो आगे चलकर बेहोशी में बदल जाती है।

○ अन्त में अर्धांग पक्षाघात के लक्षण दिखलाई देने लगते हैं। नाड़ी प्रायः मन्द रहती है।

○ चेन स्टोक्स श्वसन (Cheyne stokes breathing)।

चिकित्सा—कारण की चिकित्सा करें। बेन्जिल पेनिसिलीन, एम्पीसिलीन तथा गैरामाइसिन का उपयोग इसकी सफल चिकित्सा है.।

○ ऑपरेशन द्वारा विद्रधि का पूय निकाल कर उसमें पेनिसिलीन अथवा अन्य एण्टीबायोटिक का प्रवेश लाभकर होता है। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सप्तम खण्ड

*

संक्रामक रोग

(Infectious Diseases)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मस्तिकशोथ
(Encephalitis)

पर्याय—एनसेफेलाइटिस लिथार्जिका (Encephalitis lithargica), वायरल एनसेफेलाइटिस, जानपदिक मस्तिष्कशोथ (Epidemic encephalitis), मस्तिष्क ज्वर, विचित्र रोग।

परिचय—Encephalitis is an inflammation of the brain usually due to a virus infection, characterized by suddan onset of fever, drowsiness, suddan behaviour changes, muscular twitchings, inversion of sleep rhythm, oculomotor paralysis and rapid onset of coma. Rigiditiy and tremor develop at a last stage.

○ एनसेफेलाइटिस एक प्रकार का मस्तिष्क शोथ है, जो वायरस के संक्रमण से होता है। इसमें आकस्मिक ज्वर (तीव्र स्वरूप का), तन्द्रा (Drowsiness), व्यवहार में अकस्मात् परिवर्तन, मांसपेशियों में स्फुरण (Twitching), निद्रालुता, अंगघात और तेजी के साथ मूर्च्छा (Coma) आदि लक्षण मिलते हैं।

○ यह एक अत्यन्त घातक रोग है और विशेष प्रकार के वायरस के संक्रमण से उत्पन्न होता है। मस्तिष्क में शोथ हो जाने के कारण रोगी बेहोश हो जाता है। वह मूर्च्छा में बेतुकी बातें करता है। रोगी के बच भी जाने पर उसका मस्तिष्क स्थायी रूप से विकृत हो सकता है। कुछ रोगी ठीक भी हो जाते हैं। खसरा, फ्लू और मम्प्स रोग के बाद प्रायः यह रोग होता है।

कारण—१. इसका कारण एक विषाणु का उपसर्ग माना जाता है।

२. एनसेफेलाइटिस का रोग इपिडेमिक, इण्डेमिक अथवा स्पोरेडिक होता है। प्रायः इसका आक्रमण इपिडेमिक रूप में विशेषकर शीतऋतु में बालकों तथा युवकों में अधिक होता है। इससे १० वर्ष के ऊपर के बालक अधिक प्रभावित होते हैं।

३. भोजन, आवास और वस्त्रादि आवश्यक जीवनोपयागी साधनों से हीन व्यक्ति इसके अधिक शिकार होते देखे जाते हैं।

४. इस रोग की वृद्धि विशेषकर खसरा (Measles), मम्प्स, चिकिन पॉक्स तथा फ्लू की बीमारी के समय अधिक होते देखी जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. सिर, कपाल तथा तालु में आघात होने के बाद अथवा मस्तिष्क में शोथ होने पर इसका प्रकोप अधिक होता है।

६. इस रोग की सद्यः मारकता तथा तीव्र संक्रामकता का कोई निश्चित कारण ज्ञात नहीं हो पाया है।

○ सन् १९८०-८२ में रह-रह कर कई बार भारत के पूर्वांचल में इसका प्रकोप हुआ था। उत्तर प्रदेश के देवरिया, गोरखपुर, बस्ती आदि जलों में सैकड़ों व्यक्ति रोगग्रस्त होकर चिकित्सा-सुविधा के पूर्व ही कालकवलित हो गये थे।

संक्रमण (Infection)—प्रारम्भ में वायरस का इन्फेक्शन ड्रॉपलेट के द्वारा श्वासमार्ग से और कभी-कभी रक्त के द्वारा मस्तिष्क में पहुँचता है।

संचयकाल (Incubation period)—५ से ७ दिन का होता है।

लक्षण (Symptoms)—तीव्र शिरःशूल, गर्दन में जकड़न, अर्ध-विक्षिप्तता, मस्तिष्क की क्रियाओं में क्षोभ, नेत्रों में क्षोभ, अनिद्रा तथा शरीर में पीड़ा (अंगमर्द) के साथ तीव्र ज्वर हो जाता है।

○ रोगी की शारीरिक शक्ति अचानक क्षीण हो जाती है। उसे रह-रह कर आक्षेप आते हैं। पेशियों में जकड़न (Muscle rigidity) तथा प्रकम्प (Tremor) होता है।

(१) **निद्रा**—१. रोगी में निद्रा तथा तन्द्रा की अधिकता रहती है। रात के समय रोगी को नींद नहीं आती है। इसके विपरीत दिन में समय नींद की अधिकता रहती है।

२. रोगी को ज्वर रहता है।

३. रोगी बराबर चुपचाप शिथिल अवस्था में तन्द्रा में पड़ा रहता है।

४. रोगी में अवसाद तथा क्लान्ति के कारण उसे जोर से बुलाने अथवा पूछने पर थोड़े में ही उत्तर देता है।

५. कभी-कभी रोगी में अर्धचेतना (Semi-conciousness) की भी स्थिति मिलती है।

(२) **क्रेनियल नर्व्स की विकृति** (Affections of cranial nerves)—

१. नेत्र-सम्बन्धी वातनाड़ियों में विकृति के कारण प्रकाश-संत्रास, द्विदृष्टि (Diplopia), वर्त्मघात, तिर्यग् दृष्टि, नेत्र-प्रचलन, अर्ध-अन्धता अर्थात् मद्धिम दिखलाई देना (Hemianopsia), कनीनिकाओं की विषमता एवं अनियमित संकोच आदि नेत्रगण लक्षण मिलते हैं। कभी-कभी Lack of accommodation, प्रकाश-प्रतिक्षेप का नाश आदि विकार होते हैं।

२. Extra pyramidal नाड़ी तन्तुओं में विशेषकर एक पार्श्व में विकृति होने के कारण पार्किन्सन आकृति पैदा हो जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ इस स्थिति के उत्पन्न होने पर पेशियों में स्तब्धता, भावहीन आकृति (Maske like facies) तथा मुख से लार का आना आदि विचित्र लक्षण उत्पन्न होते हैं। इसीलिए इसे 'विचित्र रोग' भी कहते हैं।

३. कभी-कभी पायरामिडल ट्रैक्ट (Pyramidal tract) में भी विकृति 'Upper motor neuron' प्रकार की होती है, जिससे एक अंग में पैरालिसिस, पक्षवध आदि उत्तरकालीन उपद्रव उत्पन्न होते हैं।

४. रोग का आक्रमण तीव्र स्वरूप का होने पर मूर्च्छा, प्रलाप, अनियंत्रित मल-मूत्र का उत्सर्ग आदि लक्षण उत्पन्न होकर रोगी की मृत्यु हो जाती है।

संक्षेप में—१. **प्रारम्भिक ५ दिनों तक**—प्रतिश्याय (Common cold) तथा सम्पूर्ण अंगों में पीड़ा आदि इन्फ्लूएञ्जा सदृश लक्षण होते हैं।

२. **तत्पश्चात्**—क्रेनियल नर्व्स का घात होने के कारण आँख तथा दूसरे अंगों की विकृति, तन्द्रालुता, रात के समय नींद न आना तथा दिन के समय अधिक निद्रा का आना (निद्राविपर्यय) आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं।

३. **चिरकालीन अवस्था में**—उपरोक्त पार्किन्सोनिज्म के लक्षण प्रधान रूप से उपस्थित होते हैं।

रक्त-परीक्षा—रक्त में कोई विशेष परिवर्तन नहीं मिलता है।

○ मस्तिष्कसुषुम्ना द्रव (Cerebro-spinal fluid) प्रायः नार्मल रहता है।

○ लिम्फोसाइट की संख्या कुछ बढ़ जाती है।

○ **CSF परीक्षा**—प्रेशर नार्मल अथवा ऊँचा मिलता है। प्रोटीन्स बढ़ा हुआ तथा सेल काउण्ट ऊँचा होता है। शर्करा नार्मल अथवा बढ़ी हुई मिलती है। CSF क्लोराइड्स वमन तथा लिये गये द्रव पदार्थ पर निर्भर करता है, विशेष कर बच्चों में।

○ **इलेक्ट्रो-एनसेफेलोग्राम**—धीमी क्रिया प्रदर्शित करता है।

○ **मूत्र-परीक्षा** (Urine examination)—अल्प अल्बुमिन की उपस्थिति, कुछ ल्यूकोसाइट्स अथवा लाल कण (Red cells) तथा ट्रांजिट ग्लाईकोसूरिया। ब्लड सुगर नार्मल बढ़ा हुआ अथवा नीचा होता है।

शिशुओं में (In infants) चिड़चिड़ापन (Irritability), लेथार्जी, आहार का न लेना, वमन, हलका अतिसार, कम अथवा उच्च तापक्रम, कन्वल्सन्स, जकड़न, अर्ध कोमा अथवा कोमा (Semi coma or coma) आदि लक्षण।

बढ़े हुए केसिस में (In advanced cases)—श्वास चेन-स्टोक टाइप (Cheyene-stocks type) होती है। गम्भीर संन्यास (Coma) की स्थिति तथा हृदय की गति बदल जाती है। ऐसे केसिस में अधिकांशतः मृत्यु अधिक होती है।

 CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़े बच्चों में (In older children)—रोग का अकस्मात् आक्रमण, गम्भीर शिरःशूल (Severe headache), मितली, वमन, कन्वल्सन्स, चेतना की कमी।

○ इनमें क्रेनियल नर्व्स का पैरालिसिस हो जाता है। इनमें पैरों का पैरालिसिस तथा पेपीलोईडिमा (Papilloedema) कामन होता है। निर्जलीभवन, एरीडोसिस, मिनरल्स तथा इलेक्ट्रोलाइट्स सभी अनियमित रूप से कामन होते हैं।

○ रोग की पुरानी अवस्था में बालक के साथ असावधानी रखने में हाइपरटोनिया, मांसपेशी का गम्भीर पैरालिसिस, हृदय-श्वाससंस्थान का फेल होना, पुतली का फैल जाना और अन्त में मृत्यु।

निदान (Diagnosis)—१. इपिडेमिक संक्रमण के समय निदान में कोई कठिनाई नहीं होती है। इसके विपरीत अन्य स्थितियों में इसका निदान अत्यन्त कठिन हो जाता है।

२. साधारण ज्वर, निद्रालुता (Sleepy), तन्द्रा-निद्रा विपर्यय, वर्त्मघात, तिर्यग् दृष्टि, प्रकाश सहन न होना, पक्षवध, एकांगघात आदि लक्षणों के आधार पर रोग का निदान हो जाता है।

३. कोष्ठबद्धता (Constipation), मलमूत्र का अनियन्त्रित उत्सर्ग, रक्त तथा सुषुम्ना द्रव में विशेष विकृति का न मिलना इस रोग का साक्ष्य माना जाता है।

४. ज्वर रहने के २–४ दिन बाद दोनों पार्श्वों में वर्त्मघात (Ptosis) का मिलना इस रोग का विशिष्ट निदानात्मक लक्षण है।

उपद्रव (Complications)—इस रोग में निम्न प्रकार के उपद्रवों की सम्भावना होती है—१. मूर्च्छा, २. प्रलाप, ३. अंगघात (Paralysis), ४. मूकता, ५. उन्माद, ६. बहिरापन, ७. अन्धापन तथा ८. उच्च मानसिक भावों तथा वृद्धि का कुंठित होना आदि।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. इस रोग में ७०% रोगियों की मृत्यु हो जाती है।

२. सामान्य स्वरूप का आक्रमण होने पर भी उत्तरकालीन अंगघात, मूढ़ता और कोई न कोई अनुगामी विकार जीवन-पर्यन्त कष्ट देते रहते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी को अर्ध प्रकाशित स्वच्छ कमरे में शय्या पर पूर्ण विश्राम कराना चाहिए।

२. नासा, गला तथा मुख की सफाई करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. कोष्ठबद्धता को दूर करने के लिए किसी मृदु-विरेचक (Luxative) का प्रयोग आवश्यक होता है। मल की शुद्धि न होने पर ग्लिसरीन की वस्ति दें।

४. मूत्रावरोध की स्थिति में तत्काल मूत्रशलाका (Catheter) से मूत्र त्याग करायें।

५. दिन में कई बार गर्म जल से तौलिया भिंगोकर शरीर को धीरे-धीरे पोंछना चाहिए।

६. ३ दिन तक रोगी को खाने को न दें। तत्पश्चात् मधुर रस, ताजे फल, ग्लूकोज, दूध तथा अन्य पौष्टिक आहार की विशेष व्यवस्था होनी चाहिए।

७. इस रोग में रोगी को प्रकाश सहन नहीं होता है, अतः खिड़कियों पर पर्दे डाल देने चाहिए और कमरे में पूर्ण शान्ति रखनी चाहिए।

८. प्रति २ घण्टे पर रोगी का आसन बदलते रहना चाहिए।

९. 'कोमा' की स्थिति में ट्यूब द्वारा आहार (Tube feeding) पहुँचाना चाहिए। द्रव को इण्ट्रावीनस ड्रिप द्वारा दें।

१०. सक्सन द्वारा बार-बार वायुमार्ग को साफ करना चाहिए।

११. इण्ट्रावीनस ड्रिप द्वारा द्रव (Fluids), इलेक्ट्रोलाइट्स, मेटाबोलाइट्स तथा अन्य औषधियाँ दें।

(२) **औषधि चिकित्सा** (Medicinal treatment)—वायु मार्ग को व्यवस्थित रखें तथा ऑक्सीजन दें।

℞ डेक्सामेथासोन सोडियम फॉस्फेट

व्या० नाम—'डेकाड्रान' फॉस्फेट इञ्जेक्शन (MSD.)

मात्रा—२ मि० ली० दिन में १ बार मांसपेशीगत।

लाभ मिलने पर ३ दिन तक। मात्रा धीरे-धीरे घटाते जायें।

अथवा—बेटनेसोल (Betnesol) (ग्लैक्सो)

मात्रा—०.५ मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३ बार २ सप्ताह तक/मात्रा धीरे-धीरे घटाते जायें।

अथवा—℞ बीटाकॉर्ट्रिल (Betacortril) (फाइजर)

अथवा—बालाकार्ट (Balacort) (कार्टर वालेस)

मात्रा—०.५ मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३ बार।

○ १–१० गोली तक नित्य अवस्थानुसार दी जा सकती है।

इञ्जे० मेनीटोल (Inj Mannitol)

मात्रा—२५० मि० ली० इण्ट्रावीनस ड्रिप द्वारा।

इञ्जे० ग्लूकोज सैलाइन (Inj. Glucose saline)

आई० वी० ड्रिप द्वारा २-३ दिन तक। तत्पश्चात् इण्ट्रागैस्ट्रिक ट्यूब द्वारा मुख से आहार दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इञ्जे० एम्पीसिलीन (Inj. Ampicillin)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० मांसपेशीगत प्रति ६ घण्टे पर।

इञ्जे० कैलम्पोज (Inj. Calampose) अथवा वेलियम (Valium)

मात्रा—१० मि० ग्रा० I/M प्रति ६ घण्टे पर।

डाइलेण्टिन सोडियम (Dilantin sodium)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० I/M अथवा I/V प्रति ६ घण्टे पर।

हर्पीज सिम्प्लेक्स इनसेफेलाइटिस में—

℞ इञ्जे० विडारावीन (Inj. Vidaravine)

मात्रा—१०–१५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर प्रतिदिन I/V दें।

पोलियो माइलाइटिस तथा मीजिल्स में—रोग होने पर तदनुसार चिकित्सा करें।

○ वैसे इस रोग की विशिष्ट चिकित्सा अब तक ज्ञात नहीं हो पायी है। कुछ सफल चिकित्सकों की निम्नलिखित व्यवस्थाएँ चिकित्सा की दृष्टि से उपयोगी पायी गयी हैं—

१. ℞ सोडा सैलीसिलास १०% घोल (Soda salicylos 10% solution)

मात्रा—२–१० मि० ली० I/V इञ्जे० रूप में २५ मि० ली डेक्स्ट्रोज २५% में मिलाकर दिन में १ बार ५-७ दिनों तक।

○ इससे ज्वर तथा निद्रा में विशेष लाभ मिलता है।

२. ℞ यूरोट्रोपिन (Urotropin) या हेक्सामिन (Hexamin) २०% घोल I/V द्वारा दिन में १ बार।

अथवा—६००-९०० मिग्रा० मुख द्वारा प्रति ४ घण्टे पर ५–७ दिन।

३. ℞ क्विनीन (Quinine)

मात्रा—२४०–३६० मि० ग्रा० प्रति ४ घण्टे पर कैपसूल में भरकर दें। अथवा घोल बनाकर ४ दिन तक दें। इससे ज्वर शान्त हो जाता है।

४. कटिवेध (Lumber puncture)—इससे पेशियों की स्तब्धता, शिरःशूल, वमन, मूर्च्छा आदि का निराकरण होता है। विषमयता में भी लाभ मिलता है।

रोग की तीव्रावस्था में—सिनरमाइसिन (Synermycin) तथा कार्टीसोन का प्रयोग।

नोट—इससे अपेक्षाकृत अधिक लाभ मिलता है।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

(१) विषमयता तथा निद्रानाश एवं बेचैनी की स्थिति में—

○ बेचैनी की शान्ति के लिए—

℞ फीनोबार्बीटोन (Phenobarbitone) ३० मि० ग्रा०

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—हायोसीन हाइड्रोब्रोमाइड $\frac{1}{200}$ से $\frac{1}{150}$ ग्रेन

○ यदि शरीर में कम्प अधिक हो तो—

पैराल्डिहाइड २-३ ड्राम जैतून के तेल के साथ गुदामार्ग से।

अथवा—हायोसीन हाइड्रोब्रोमाइड (Hyocine hydrobromide)

मात्रा—१ मि० ली० मांसपेशीगत अथवा S/C दें।

नोट—इससे Muscular twitching में विशेष लाभ मिलता है।

अथवा—सोडियम फीनोबार्बीटोन (Sodium phenobabritone)

मात्रा—१२० मि० ग्रा० मांसपेशीगत।

केवल अनिद्रा के लिए—

एमाइलोबार्बीटोन (Amylobarlitone) १०० मि० ग्रा०

अथवा—बूटोबार्बीटोन (Butobarbitone) २०० मिग्रा० सोते समय।

अथवा—पोटाश ब्रोमाइड+क्लोरल हाइड्रेट ६००-९०० मि० ग्रा० दोनों मिलाकर दें।

सर्वांग वेदना की शान्ति के लिए—'ओम्नापोन' का इन्जेक्शन वयस्कों में दिया जा सकता है। वैसे उपरोक्त सैलीसिलेट चिकित्सा से लाभ मिल जाता है। कुछ लोग सर्वांग वेदना की शान्ति के लिए 'ओम्नापोन' को अलग से देने का परामर्श देते हैं।

नोट—उपरोक्त लक्षणों की चिकित्सा हेतु 'लार्गेक्टिल' का उपयोग भी लाभकर होता है।

शिशु तथा बालक के अंगघात के लिए—गुनगुने जल से शरीर को कई बार पोछना चाहिए। स्तब्ध पेशियों पर वाष्पस्वेदन तथा गरम बालू की थैली रखना चाहिए। साथ ही निम्न योग दें—

℞ कोडीन फॉस (Codin Phos)	२० मिग्रा०
फिनासिटिन	१२० मिग्रा०
एस्प्रिन	१८० मिग्रा०
सिबाल्जिन	½ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार गरम जल से।	१ मात्रा

○ अन्य व्यवस्था—उपरोक्त स्तब्धता, बेचैनी आदि लक्षणों की शान्ति के लिए रोगी को तरल एवं पोषक द्रव्यों का सेवन करायें। ग्लूकोज को जल में घोल कर बार-बार दें। दूध में अण्डा, हॉलिक्स, ओवल्टीन आदि मिलाकर दें।

रोग की आत्ययिक अवस्था में—२५% डेक्स्ट्रोज+नार्मल सैलाइन के साथ मिलाकर ५०० से १००० मि० ली० की मात्रा में प्रतिदिन I/V अथवा S/C दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोगी के मूर्च्छित होने पर—नाक से रबर की नली आमाशय तक पहुँचा-कर पेय द्रव्यों का सेवन कराना चाहिए।

(२) कन्वल्सन्स (Convulsions)—

℞ हायोसीन हाइड्रोब्रोमाइड (Hyocine hydrobromide)

मात्रा—१ मि० ली० (०.६ मि० ग्रा०) I/M इञ्जे० रूप में।

○ लाभ न मिलने पर—

पेराल्डिहाइड (Paraldehyde)

मात्रा—८-१० मि० ली० मांसपेशीगत।

(३) ऑकुलोगाइरिक क्रिसिस (Oculogyric crisis)—

℞ एम्फेटामीन सल्फेट (Amphetamine sulphate)

मात्रा—१ गोली ५ मि० ग्रा० मुख द्वारा दिन में ३ बार।

(४) दिन के समय सोना—

℞ इफेड्रीन हाइड्रोक्लोराइड (Ephedrine hydrochloride)

मात्रा—१५ मि० ग्रा० दिन में २ बार प्रातः-दोपहर।

(५) पार्किन्सोनिज्म—यह एक जटिल उपद्रव है। इसकी चिकित्सा मुख्यरूप से लाक्षणिक होती है। पेशियों की स्तब्धता, कम्प तथा दुर्बलता आदि लक्षणों में औषधि चिकित्सा से पर्याप्त लाभ मिलता है। इसके लिए—

℞ रेबेलोन टेबलेट (Rabellon tab.) (शार्प एण्ड डोम)

प्रारम्भिक मात्रा—½ गोली दिन में ३ बार। सहन होने पर १ गोली दिन में ३ बार और अन्त में १ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—वायनोबेल (Vinobel) या बेला-वल्गारा (Bella-balgara)—इनमें से किसी एक का प्रयोग उपरोक्त अनुसार किया जाता है।

नोट—इसमें पेशी-स्तब्धता कम होती है और अंगों की गति व्यवस्थित होती है।

अथवा—पेसीटोन (Pacitone) (लीडर्ले)

मात्रा—१-४ मि० ग्रा० दिन में ३ बार भोजन के साथ रेबेलोन अथवा थियोफोरिन (Theophorin) के साथ मिलाकर देते हैं।

○ **नोट**—इससे पेशी-स्तब्धता में विशेष लाभ मिलता है। अधिक कम्प की स्थिति में 'पेसीटोन' को बेनाड्रिल के साथ देते हैं।

चेतावनी—हृल्लास आदि विपरीत लक्षण होने पर औषधि को कुछ समय के लिये बन्द कर पुनः प्रारम्भ करना चाहिए।

निर्देश—यदि अधिक लार आने लगे तो औषधि को 'एट्रोपीन' के योगों के साथ मिलाकर दें।

अथवा— ℞ डाइपारकोल (Diparcol) (M. B)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रारम्भिक मात्रा—५० मि० ग्रा० दिन में ४ बार। मात्रा को क्रम से बढ़ाते हुए २५० मि० ग्रा० दिन में ४ बार।

अथवा—परपेनिट (Parpanit) (गायगी)

प्रारम्भिक मात्रा—१२½ मि० ग्रा० दिन में ४–५ बार। सहन होने पर मात्रा बढ़ायी जा सकती है।

नोट—पेशियों की स्तब्धता, स्तब्धता युक्त अंगघात (Spastic paralysis) एवं तीव्र हिचकी (Spasmodic hiccup) में लाभ होता है।

निगलने में कठिनाई तथा भार की न्यूनता होने पर—

℞ विटामिन बी$_{१२}$ (Vitamin B_{12})

मात्रा—१००० मा० ग्रा० मांसपेशीगत सप्ताह में ३ बार।

○ कुछ समय बाद इसका प्रयोग मुख से कराया जा सकता है।

आवश्यक निर्देश—उपरोक्त पार्किन्सोनिज्म के उपद्रव में बेनाड्रिल + पेसीटोन + रेवेलोन—इन सबको मिलाकर देना अधिक उपयुक्त रहता है।

अन्य पेटेण्ट औषधियाँ जो इन्सेफेलाइटिस में उपयोगी हैं—

१. ℞ एमाण्ट्रेल (Amantral) (सिपला)

मात्रा—१ कैपसूल दिन में २ बार।

२. डिसीपाल (Disipal) (विडल शायर)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

३. डेक्सावोलिन (Dexabolin) (आर्गेनन)

मात्रा—०·५ मि० ग्रा० की २–६ गोली आवश्यकतानुसार।

४. वाइमेसान (Wymeson) (वाइथ कं०)

मात्रा—१–८ गोली नित्य रोग की तीव्रतानुसार।

इनसेफेलाइटिस की शल्य चिकित्सा—विसम्पीडन (Decompression) की आवश्यकता तब होती है जब मेडिकल ट्रीटमेण्ट असफल होता है।

इनसेफेलाइटिस की मिश्रित चिकित्सा—

℞ कोरामीन (Coramine) (सिबा गैगी) २ मि० ली०.

डेक्स्ट्रोज १२½% ५० मि० ली०

दोनों को भलीभाँति मिलाकर धीरे-धीरे शिरा में दें।

○ रोगी को होश में लाने के लिए यह व्यवस्थापत्र अधिक उपयुक्त रहता है।

उपद्रवों के निराकरण हेतु अन्य व्यवस्थाएँ—

१. नियमित रूप से व्यायाम एवं अंग-संचालन का अभ्यास।

२. सारे शरीर में हलके हाथों की मालिश।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. रोगी को इस बात के लिए आश्वस्त करें कि उसे कोई ऐसा न ठीक होने वाला कष्ट नहीं है, अतः वह शीघ्र ही ठीक हो जायेगा।

नोट—इस प्रकार के उपद्रवों में औषधि-चिकित्सा, व्यायाम, अंग-संचालन तथा मानसिक चिकित्सा से लाभ मिलते देखा गया है। ⊡

संक्रामक रोग 7/2

पूतिजीवरक्तता
(Septicaemia)

परिचय—पूय (Pus) उत्पादक जीवाणु के रक्त में मिल जाने से यह अवस्था उत्पन्न हो जाती है। इसमें तीव्र अविसर्गी रूप का ज्वर, कोष्ठ-बद्धता, नाड़ी की तीव्रता, अतिशय दुर्बलता, रक्तन्यूनता, सन्धिशूल आदि लक्षण मिलते हैं।

कारण—स्टेफिलोकोकस ऑरियस तथा स्ट्रेप्टोकोकस पायोजिनस; कभी-कभी न्यूमोकोकस, गोनोकोकस आदि भी।

संक्रमण—प्रायः स्थानिक संक्रमण से ही सेप्टिसीमिया की उत्पत्ति होती है। जैसे—गलशोथ तथा सूतिका ज्वर में गर्भाशय अथवा व्रण से। ऑपरेशन के घाव से भी कीटाणु रक्त में प्रविष्ट हो जाते हैं और उपद्रवस्वरूप सेप्टि-सीमिया उत्पन्न हो जाता है।

लक्षण—सेप्टिसीमिया की उत्पत्ति विभिन्न प्रकार के कीटाणुओं से होती है। अतः इसके लक्षण भी भिन्न-भिन्न होते हैं और उसके अनुसार ही व्याधि का वेग और काल भी अलग-अलग होता है।

सामान्य लक्षण (General symptoms)—

१. ज्वर सदैव तीव्र तथा अविसर्गी रूप में (विषम) होता है। यह १००–१०४° फा० के बीच बराबर उतरता-चढ़ता रहता है। कभी-कभी शीत लग कर भी ज्वर आता है।

२. मलावरोध तथा आध्मान मिलते हैं। कुछ केसिस में अतिसार मिलता है।

३. पीड़ा एवं अंगमर्द प्रायः नहीं मिलते। किन्तु सन्धिशूल एवं सन्धिशोथ देखने में आता है।

४. रोगी अत्यधिक क्षीण तथा दुर्बल हो जाता है।

५. नाड़ी की गति तीव्र तथा हलकी होती है।

६. अनेक बार हृदय की मांसपेशियों पर विष का प्रभाव पड़ कर हृदय अतिशय दुर्बल हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. रक्तन्यूनता तीव्रता से बढ़ती जाती है।

सेप्टिसीमिया की विशेषता—रक्त-परीक्षण में श्वेतकण (W. B. C.) बहुत बढ़े हुए मिलते हैं। स्वस्थ व्यक्ति में इनकी संख्या ६–८ हजार प्रति क्यूबिक मि० मी० होती है, जो इस अवस्था में १६-२०-३० हजार तक बढ़ जाती है।

○ 'सेप्टिसीमिया' न्यूमोनिया, मेनिञ्जाइटिस तथा टाइफाइड की एक भयानक उपद्रवीय अवस्था है।

चिकित्सा—१. सभी केसिस में जितनी शीघ्र हो सके उचित चिकित्सा व्यवस्था (एण्टीबायोटिक तथा सल्फा ड्रग्स चिकित्सा) करनी चाहिए। विलम्ब होने से स्थिति गम्भीर हो सकती है।

२. ब्लड-कल्चर (Blood culture) तथा पूय (Pus) की जाँच कर कीटाणुओं की उपस्थिति के अनुसार औषधि की व्यवस्था करनी चाहिए।

○ जब तक लेबोरेटरी की रिपोर्ट न मिले, तब तक निम्न चिकित्सा व्यवस्था प्रारम्भ कर देनी चाहिए—

१. ℞ लिनकोमाइसिन (Lincomycin) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल प्रति ४ घण्टे पर ७ दिन तक।

अथवा—जब तक पूर्ण लाभ न मिल जाय।

बच्चों के लिए—लिनकोमाइसिन सीरप (Lincomycin syrup)

मात्रा—२·५ मि० ली० प्रति ४ घण्टे पर ७ दिन तक।

इञ्जेक्शन—६०० मि० ग्रा०/२ मि० ली० मांसपेशीगत जब रोगी मुख से औषधि लेने में असमर्थ हो।

व्या० नाम—लिनकोसिन (Lincocin)

बीच-बीच में—

क्लोक्सासिलिन (Cloxacillin) ०.५ ग्रा० मांसपेशीगत।

२. **स्थानीय चिकित्सा** (Treatment of local foci)—

व्रण (Wound) की ड्रेसिंग करें। आवश्यक हो तो एब्सिस को खोलकर एण्टीसेप्टिक ड्रेनिज तथा ड्रेसिंग करें।

३. **सेप्टिसीमिया जन्य शॉक** (Septicaemic shock)—

℞ डेक्स्ट्रोज सैलाइन सोलूशन

मात्रा—५०० मि० ली० I/V ड्रिप धीमी गति से।

○ यदि ४ घण्टे के पश्चात् भी कोई सफलता न मिले तो—

℞ हाइड्रोकार्टीसोन सोलूशन १०० मि० ग्रा०

मात्रा—२ मि० ली० डिस्टिल्ड वाटर में घोल कर I/V बहुत धीरे-धीरे दें।

यदि आवश्यक हो तो इसे ६ घण्टे पर पुनः दोहरायें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेप्टिसीमिया में प्रयुक्त अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. वायोपेन्स (Biopence) (बायोकेम)—१ ग्राम इन्जेक्शन वायल साथ में व्यवस्थापत्र के अनुसार।

२. सेफलेड (Ceflad)—(बायोकेम)।

३. डायनासिल इन्जे० (Dynacil Inj.) (Hal)—१५०-२०० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर प्रति ३-४ घण्टे पर विभाजित मात्राओं में I/M अथवा I/V रूप में।

४. एनसामाइसिन (Ensamycin) (फुलफोर्ड)—१०-५० मि० ग्रा० I/M अथवा I/V इन्जेक्शन।

५. गेरामाइसिन (Garamycin) (फुलफोर्ड)—२ मि० ली० I/M अथवा I/V इन्जेक्शन।

६. जेण्टीसिन (Genticyn) (निकोलस)—४० मि० ग्रा०/मि० ली० वायल।

७. इफीसिलिन (Eficillin) (यूनीक)—२५० मि० ग्रा० कैपसूल प्रति ६ घण्टे पर। इसका इन्जेक्शन भी आता है।

८. केनसिन (Kancin) (एलेम्बिक)—५–७.५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर दिन में २ बार I/M

९. प्राइमिसिन (Primicin) (Hal)—३-५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर I/M या I/V ३ बराबर मात्राओं में विभाजित कर ७-१० दिनों तक।

१०. पायोपेन (Pyopen) (जर्मन रेमेडीज)–३० ग्राम I/V अथवा ८ ग्राम I/M प्रतिदिन विभाजित मात्रा में।

११. ○ स्पोरीडेक्स कै०—१-४ ग्राम बराबर मात्राओं में विभाजित कर प्रति ६ घण्टे पर दें। इसका ड्राई सीरप भी आता है।

१२. एल्कोरिम-एफ (Alcorim–F) (एल्वर्ट डेविड)—१ गोली दिन में २ बार। इसका सीरप भी आता है।

१३. एण्ट्रीमा (Antrima) (M. B.)—१ दिन में २ बार। गम्भीर अवस्था में २ गोली दिन में २ बार।

१४. बैक्ट्रिम इण्ट्रामस्कुलर (Bactrim I/M.) (रोशे)—१ एम्पुल दिन में २ बार ५ दिन तक।

○ गम्भीर अवस्था में—१½ एम्पुल दिन में २ बार अधिक से अधिक ३ दिन तक।

१५. बैक्ट्रिम इण्ट्रावीनस (Bactrim I/V)—२ मि० ली० दिन में २ बार अधिक से अधिक ३ दिन तक।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिकतम मात्रा—३ एम्पुल दिन में २ बार अधिक से अधिक ३ दिन तक।

○ इसे १२५ मि० ली० ५% डेक्स्ट्रोज घोल में मिलाकर I/V ड्रिप से दिया जा सकता है।

१६. नियो-प्रिम (Neoprim) (स्टैण्डर्ड)—१ गोली दिन में २ बार।

१७. निकोट्रिम-एस (Nicotrim-S) (निकोलस)—१ गोली दिन में २ बार।

१८. ओरीप्रिम डी० एस० (Oriprim D. S.) (केडिला)—१ गोली दिन में २ बार।

○ इसका पीडियाट्रिक सस्पेन्शन भी आता है। ओरीप्रिम डी० एस० इञ्जे० भी उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त ओरीप्रिम आई० वी० इफ्यूजन भी मिलता है।

१९. सेप्ट्रान (Septran) (वरोज-वेल्कम)—२ गोली दिन में २ बार। गम्भीर अवस्था में—३ गोली दिन में २ बार। सेप्ट्रान पीडियाट्रिक सस्पेन्शन तथा टेबलेट भी आती है।

२०. सोलोप्रिम (Soloprim) (निकोलस)—१ गोली दिन में २ बार।

२१. स्टानसोल (Stansol)—२ गोली दिन में २ बार। गम्भीर संक्रमण में ३ गोली दिन में २ बार। लम्बे समय तक १ गोली दिन में १ बार।

○ स्टेन डी० एस० (Sten D. S.) भी आता है। मात्रा—१ गोली दिन में २ बार। गम्भीर संक्रमण में—१½ गोली दिन में २ बार। लम्बे समय तक चिकित्सार्थ—½ गोली दिन में २ बार। स्टेन पीडियाट्रिक टेबलेट तथा सस्पेन्शन रूप में भी आता है।

२२. सल्फूनो (Sulfuno) (जर्मन रेमेडीज)—४ गोली प्रथम दिन। तत्पश्चात् विभाजित मात्रा में भोजन के बाद।

२३. ट्रीमोजिन (Trimozin) (एंग्लो फ्रेंच)—१ गोली दिन में ३ बार। गम्भीर अवस्था में २ गोली दिन में २ बार। इसका सस्पेन्शन भी आता है। मात्रा—५ मि० ली० दिन में २ बार। □

संक्रामक रोग 7/3

पूयरक्तता
(Pyaemia)

पर्याय—रक्तपूयता, रक्त में पूय का संचार होना।

परिचय—'पाइमिया' सेप्टिसीमिया की उस अवस्था को कहते हैं, जिसमें

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर के अन्तर्गत स्थान-स्थान पर विद्रधियाँ (Abscess) बन जाती हैं और उसमें पूय आ जाता है।

प्रायः प्रत्येक पाइमिया का रोगी सेप्टिसीमिया की अवस्था का हो सकता है, किन्तु प्रत्येक सेप्टिसीमिया का रोगी पाइमिया का रोगी नहीं हो सकता है, क्योंकि पाइमिया की अवस्था प्रारम्भ से ही एब्सिस की उत्पत्ति से ही होती है। किन्तु सेप्टिसीमिया के किसी-किसी रोगी में कुछ समय तक यह अवस्था रहने के बाद पाइमिया होती है।

कारण—१. पाइमिया का आदि कारण विस्फोट, दुष्ट व्रण, अस्थिमज्जा शोथ (ऑस्टियोमाइलाइटिस) आदि है।

२. स्टेफिलोकोकस ऑरियस तथा स्ट्रेप्टोकोकस जीवाणु।

लक्षण—१. शीतकम्प के साथ ज्वर आता है। यह बढ़ कर १०३-१०४° फा० तक हो जाता है। ज्वर नित्य या एक दिन का अन्तर देकर आता है।

२. जाड़ा और ताप अनियमित रहने पर भी रोगी को पसीना आता है।

३. भूख नहीं लगती है।

४. अतिसार, मल में सड़ी बदबू, शरीर-क्षीणता आदि लक्षण मिलते हैं।

५. रोगी का मांसक्षय होकर दुर्बलता अधिक बढ़ जाती है।

६. ○ प्लीहा बढ़ जाती है, जिसमें पीड़ा होती है।

७. यदि बीमारी टाइफाइड का रूप ले लेती है और बेहोशी आने लगती है, तब वह स्थिति अधिक गम्भीर हो जाती है।

प्रकार—जीवाणुओं के प्रकार के अनुसार इसके ३ प्रकार माने गये हैं—

१. शिरागत पूयमयता (Systemic venous pyaemia)।

२. प्रतिहारी-संचरण शिरागत पूयमयता (Portal pyaemia)।

३. धमनीगत पूयमयता (Arterial pyaemia)।

(१) शिरागत पूयमयता (Systemic venous pyaemia)—

१. इसमें प्रमेहपिडिका, अस्थिमज्जाशोथ, श्वसनमार्ग के रोग या मूत्र मार्ग के रोगों में पूय को उत्पन्न करने वाले जीवाणु रक्त में प्रवाहित हो जाते हैं और इनके विष से वृक्क, फुप्फुस, अस्थि तथा हृदय आदि में विद्रधियाँ उत्पन्न हो जाती है।

२. इसमें प्रायः उग्र सेप्टिसीमिया जैसे लक्षण होते हैं। साथ ही जिस स्थान से पूय (Pus) रक्त में मिला था, वहाँ के रोग के लक्षण भी उपस्थित रहते हैं।

(२) प्रतिहारी-संचरण पाइमिया (Portal pyaemia) —

१. इसमें संयुक्त शिरा या धमनी के द्वारा पूय उत्पादक जीवाणु छोटी आँत, बड़ी आँत, पित्ताशय या पाचन-संस्थान के अवयवों में शोथ उत्पन्न कर

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूय पैदा करते हैं और रक्त में मिलकर स्थान-स्थान पर विद्रधि (Abscss) उत्पन्न करते हैं।

२. इससे यकृद् वृद्धि के साथ-साथ तीव्र ज्वर, कामला आदि लक्षण होते हैं।

३. कभी-कभी तीव्र स्वरूप का उदरशूल होता है।

४. यह एक घातक अवस्था है।

(३) **धमनीगत पाइमिया** (Arterial pyaemia) इसमें हृदयावरणशोथ (Pericarditis) हो जाता है। तत्पश्चात् पूय की उत्पत्ति हो जाती है और छोटे-छोटे टुकड़े रक्त के साथ मिलकर शरीर के विभिन्न भागों में पहुँच कर विद्रधि उत्पन्न करते हैं।

यह रोग वाम हृदय के मध्य स्थित कपाटों में होता है और वहाँ से इसका संक्रमण धमनी द्वारा प्लीहा, वृक्क, मस्तिष्क तथा शाखाओं में फैलकर विद्रधि उत्पन्न होती है।

निदान—शीत, कम्प और ज्वर के साथ विद्रधि तथा उसमें पूय के होने आदि लक्षणों से इसका अनुमान होता है।

उपद्रव—न्यूमोनिया, प्लूरिसी, पेरिकार्डाइटिस, जोड़ों में फोड़ों की उत्पत्ति।

पूर्वानुमान—उपरोक्त उपद्रवों की स्थिति में रोगी की ६ से १० दिनों में मृत्यु हो जाती है।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ पेनिसिलीन क्रिस्टेलाइन-जी (डेज)

मात्रा—५० हजार यूनिट प्रति ३ घण्टे पर मांसपेशीगत अथवा २-५ लाख यूनिट दिन में १-२ बार मांसपेशीगत।

अथवा—प्रोकेन पेनिसिलीन (Procain Penicillin)

मात्रा— ४ लाख यूनिट मांसपेशीगत दिन में २ या ३ बार।

अथवा—डाइहाइड्रो-स्ट्रेप्टोमाइसीन (डेज मेडिकल)

मात्रा—½ ग्राम (५०० मि० ग्रा०) २ मि० ली० डिस्टिल्ड वाटर में घोल कर मांसपेशीगत दिन में २ बार।

अथवा—इं० ओम्नामाइसीन (Inj. Omnamycin)

मात्रा—१ इञ्जे० मांसपेशीगत दिन में १ बार।

○ **यदि रोगी पेनिसिलीन के प्रति सेन्सिटिव हो तो—**

℞ एक्रोमाइसिन (Acromycin) (लीडर्ले)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० (१० मि० ली० नार्मल सैलाइन में) प्रति १२ घण्टे पर I/V.

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—टैरामाइसिन, सिन्थोमाइसिटीन, स्पोरीडेक्स कै०, लीडरमाइसीन क्लोरोमाइसिटीन—इनमें से किसी एक औषधि का २-२ कै० प्रति ४ से ६ के अन्तर पर मुख से।

साथ ही—सेप्ट्रान (Septran) या बैक्ट्रिम (Bactrim)

मात्रा—२ गोली दिन में २ बार।

विटामिन 'सी' (सीलिन)—५०० मि० ग्रा० दिन में १ बार। ⊡

संक्रामक रोग 7/4

बॉटुलिज्म
(Botulism)

परिचय—Botulism is an intoxication produced by the indigestion of proformed neurotoxin of botulinum an anaerobic germ generated in improperly sterilized food canned at home, it begins with veniting, followed by weaking of muscles.

○ यह एक अत्यन्त भयंकर रोग है, जो एक विशेष जीवाणु से उत्पन्न होता है। इसके रोगी की शीघ्र मृत्यु हो जाती है।

कारण—'क्लास्ट्रीडियम बॉटुलिज्म' नामक जीवाणु।

रोग-संक्रमण—यह रोग उन लोगों में अधिक पाया जाता है जो डिब्बा बन्द खाद्य पदार्थों का अधिकतर सेवन करते हैं।

○ डिब्बों में खाद्य पदार्थ भरने के बाद उनको उचित ताप पर स्टेरिलाइज्ड करने के पश्चात् उनको सील कर दिया जाता है, ताकि उनमें वायु का लेशमात्र प्रवेश न हो सके।

○ अनेक बार कारखाने के कर्मचारियों की असावधानी के कारण किसी प्रकार ये जीवाणु अथवा उनके स्पोर्स (Spores) डिब्बे में रखे पदार्थ में मिल जाते हैं। जिससे उन डिब्बों का खाद्य पदार्थ संक्रमित हो जाता है। सील बन्द डिब्बे में वायु की अनुपस्थिति में यह जीवाणु अत्यधिक मात्रा में वृद्धि करते हैं और पूरा का पूरा खाद्यपदार्थ जीवाणु युक्त हो जाता है। ऐसा संक्रमित आहार जब कोई स्वस्थ व्यक्ति शौक से खाता है, तब वह रोगग्रस्त हो जाता है।

लक्षण—१. रोगी को तत्काल वमन होने लगता है।

२. शरीर की मांसपेशियों में अत्यधिक दुर्बलता आ जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. श्वास-नलिका तथा अन्न-नलिका की मांसपेशियों में पक्षाघात (Paralysis) हो जाता है। जिससे रोगी साँस लेने में असमर्थ रहता है। अन्त में रोगी की मृत्यु हो जाती है।

चिकित्सा—इसकी चिकित्सा लक्षणों को देखकर तथा रोग के इतिहास के आधार पर अनुमानित रूप से की जाती है। इन जीवाणुओं पर निम्न चिकित्सा प्रभावशाली होती है—

℞ टेट्रासाइक्लीन (Tetracycline) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल प्रति ८ घण्टे पर।

एम्पीसिलीन (Ampicillin) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल प्रति ८ घण्टे पर।

विशिष्ट चिकित्सा—यदि एण्टीटॉक्सिन (Antitoxin) उपलब्ध हो सके तो ४०,००० यूनिट्स की मात्रा मांसपेशीगत।

लाक्षणिक चिकित्सा— ○ जब तक श्वासनलिका का पक्षाघात रहे तब तक रोगी को ट्यूब द्वारा आहार पहुँचाएँ।

○ दम घुटने से बचाव हेतु श्वासमार्ग में श्वासयंत्र लगाने की आवश्यकता पड़ती है।

○ रोगी को यान्त्रिक विधियों से श्वास देना चाहिए।

नोट—इस रोग की चिकित्सा किसी साधन-सम्पन्न चिकित्सालय में ही सम्भव होती है।

याद रखिये—इसका विष 'टिटेनस' से भी अधिक शक्तिशाली होता है।

बचाव—१. डिब्बा बन्द खाद्य पदार्थों में मछली तथा मांस का सेवन नहीं करना चाहिए।

२. यदि खाना आवश्यक हो तो इनके टुकड़े-टुकड़े कर अथवा अन्य खाद्य सामग्री को कम से कम ५-१० मिनट तक उबालने के बाद ही प्रयोग में लायें। उबालने से इसके जीवाणु नष्ट हो जाते हैं।

निर्देश—१. डिब्बा-बन्द पुलाव अथवा डिब्बा-बन्द कोरमा जो आजकल बाजारों में उपलब्ध है, इनका सेवन नहीं करना चाहिए।

२. इसके विपरीत साधारण डिब्बा बन्द पेठे तथा आँवले के मुरब्बे के सेवन से संक्रमण का भय नहीं रहता है। क्योंकि इनमें जीवाणुओं की वृद्धि नहीं होती है। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जियार्डिया-रुग्णता
(Giardiasis)

परिचय – It is an infestation caused by giardia intestinalis cyst causes infection.

○ इसकी परिभाषा निम्न प्रकार से की जा सकती है—

It is an infection of the intestine caused by a flagellate giardia intestinalis. Clinically it is usually symptomatic, but periodical attacks of diarrhoea and flatulence may be present.

○ मनुष्य की आँतों में 'जियार्डिया लैम्बलिया' नामक एक पूँछदार जीवाणु के संक्रमण के फलस्वरूप उत्पन्न अवस्था को जियार्डिया-रुग्णता (Giardiasis) कहते हैं। इसके संक्रमण के फलस्वरूप अतिसार तथा आध्मान प्रायः देखने को मिलते हैं।

संक्रमण (Infection)—मनुष्य में इसका संक्रमण 'जियार्डिया लेम्बलिया' जिसे जियार्डिया इण्टेस्टाइनेलिस भी कहते हैं, नामक अन्त्र कशाभी (Flagellate) के कारण होता है। जिसकी लम्बाई १२ से १८ U तक होती है। इसका आकार नाशपाती जैसा होता है। इसकी गति मन्द होती है। इसके सिस्ट अण्डाकार होते हैं।

उम्र (Age)—साधारणतः ४ से लेकर १० वर्ष तक की आयु के बच्चे इससे ग्रस्त होते हैं। कुछ क्षेत्रों में आबादी का लगभग १०% भाग इससे ग्रस्त होता है।

संचरण-पद्धति (Mode of transmission)—यह परजीवी भोजन, मल एवं मक्खियों द्वारा एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में सीधे सम्पर्क द्वारा फैलता है।

विकृति-विज्ञान (Pathology)—परजीवी के कशाभी (Flagellate) ग्रहणी (ड्यूडेनम) और ऊपरी मध्यान्त्र (Upper jejunum) में रहता है। वहाँ पर यह वर्षों तक बना रहता है अथवा स्वतः गायब हो जाता है। विशेषकर बच्चों तथा वयस्कों में 'ट्रोफोजाइट' शरीर के बाहर आकर कुछ ही घण्टों में मर जाता है, किन्तु सिस्ट जो संक्रमी होती है, अधिक समय तक जीवित रहती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ 'जियार्डिया लेम्बलिया' काफी संख्या में आन्त्र की श्लेष्मकला (Intestinal mucosa) से चिपके रहते हैं और पोषण में हानि पहुँचाते रहते हैं। यह अधिकतर बच्चों के मल में मिलता है। ऐसे बच्चों में आमाशय-आन्त्र पथ (Gastrointestinal tract) की शिकायतें बराबर बनी रहती हैं। स्प्रू (Sprue) जैसे लक्षण तथा कुक्षि रोग (Coeliac disease) इसी परजीवी के कारण होते हैं।

रोग-लक्षण तथा चिह्न—१. जन्तु-बाधा (Infestation) प्रायः लक्षणहीन होते हैं। किन्तु तीव्र प्रवाहिका (Diarrhoea), उदर-पीड़ा तथा श्लेष्मा (Mucous) के साथ पीला एवं पतला मल आना इसका विशेष लक्षण है।

२. रोगी को दस्त आते हैं और उनकी संख्या क्रमशः बढ़ती ही जाती है।

३. मल की मात्रा स्वाभाविक से अधिक होती है, विशेषकर बच्चों में। इस मल को देखकर बड़ा आश्चर्य होता है कि आखिर इतना मल कहाँ से आ रहा है।

४. दस्तों में एक प्रकार की अम्लीयता (खटास) होती है।

५. कभी-कभी दस्त शिशुओं तथा बालकों में पानी जैसा पतला होता है।

६. मल में जरा भी रक्त नहीं रहता।

७. आध्मान की उपस्थिति के कारण रोगी का पेट फूला रहता है और मल-त्याग के समय आवाज के साथ वायु निकल जाती है।

८. मल दुर्गन्धित होता है। मल के साथ कभी-कभी आमांश की उपस्थिति मिलती है।

९. शनैः-शनैः कृशता (Gradual emaciation) के लक्षण मिलते हैं।

१०. Allergic manifestation सदैव मिलते हैं।

११. रोगी बालक दिन-प्रतिदिन कमजोर होता जाता है।

१२. अधिक दिन तक रोग बना रहने पर बालक में निर्जलीभवन के लक्षण तथा चिह्न मिलने लगते हैं।

१३. रोग की गम्भीर अवस्था में अपावशोषण (Malabsorption) सिण्ड्रोम उत्पन्न हो जाते हैं।

○ इस रोग में उदरशूल, मितली, प्रवाहिका तथा मल के साथ कभी-कभी आमांश की उपस्थिति, शारीरिक दौर्बल्य तथा आमप्रवाहिका के समान लक्षण मिलते हैं। उदरशूल, मितली तथा बार-बार प्रवाहिका का प्रकोप अपेक्षाकृत अधिक मिलता है।

निदान (Diagnosis)—मल-परीक्षा में 'जियार्डिया लैम्बलिया' की उपस्थिति मिलने पर रोग का असंदिग्ध रूप में निर्णय हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ मल की सूक्ष्मदर्शी जाँच में कशाभी (Flagellate) अथवा उनके सिस्ट्स की उपस्थिति से निदान का पता चलता है।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ टेबलेट मेट्रोनिडाजोल २०० मि० ग्रा०

व्या० नाम०—टेबलेट मैट्रोजिल (Tab. Metrozil)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार ८ दिन तक।

कुछ में—३५०–७५० मि० ग्रा० दिन में ३ बार १० दिन तक।

अथवा—एमीजोल या यूनीमेजोल

मात्रा—१ गोली (२०० मि० ग्रा०) दिन में ३ बार ७ दिन तक।

बालकों में—½ गोली (१०० मि० ग्रा०) दिन में ३ बार ५ दिन तक।

नोट—संक्रमण तीव्र होने पर—'मैट्रोनिडाजोल' की ४०० मि० ग्रा० की टेबलेट दिन में ३ बार वयस्कों को दी जाती है।

○ बालकों एवं शिशुओं के लिए—इस औषधि का सस्पेन्शन आता है।

मात्रा—१०–२० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर विभाजित मात्रा में प्रतिदिन।

नोट—२ सप्ताह के अन्तराल पर पुनः एक और कोर्स देना उत्तम है।

अथवा—बालकों के लिए—

℞ एरिस्टोजिल-एफ सस्पैन्शन (Aristogyl-F suspension)

मात्रा—१०–२० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर प्रतिदिन विभाजित मात्रा में। अर्थात् ४० मि० ग्रा० २ मि० ली० की दर से।

○ इस सस्पेंशन में मेट्रोनिडाजोल + फूराजोलीडोन + पैक्टिन + केओलिन—ये औषधियाँ मिलाई गई हैं। बच्चों के लिए यह सर्वोत्तम औषधि है।

२. ℞ टिनिडाजोल (Tinidazole)

मात्रा—१५० मि० ग्रा० दिन में ३ बार ८ दिन तक।

३. ℞ क्विनाक्रीन हाइड्रोक्लोराइड (Mepacrine)

मात्रा—०.१ ग्राम दिन में ३ बार ५–७ दिन तक।

अथवा—१०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार ७ दिन तक।

४. ℞ फूराजोलीडोन (Furazolidone)

व्या० नाम—फूरोक्सोन (Furoxone)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार ७ दिन तक।

नोट—○ इनमें से प्रथम दो औषधियों का प्रयोग अधिक हो रहा है, शेष का कम।

○ 'जियार्डियेसिस' की चिकित्सा में 'क्लोरोक्वीन' का भी उपयोग किया जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्देश—जियार्डियेसिस के रेसिस्टेण्ट केसिस में—जब ७ दिन के अन्तराल पर दूसरा कोर्स देना हो तब दूसरी औषधि बदल कर देनी चाहिए।

○ कुछ चिकित्सक 'मेट्रोनिडाजोल' को निम्न मात्रा में प्रयोग की सिफारिस करते है।

वयस्क—२०० मि० ग्रा० (१ गोली) दिन में ३ बार १४ दिन तक।

बालक—५०–१०० मि० ग्रा० दिन में २ बार १४ दिन तक।

टिनिडाजोल के सम्बन्ध में—

वयस्क—१५० मि० ग्रा० दिन में २ बार १० दिन तक।

बालक—२५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर दिन में २ बार १० दिन तक।

जियार्डियेसिस में प्रयुक्त होने वाली अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. एब्डोजिल-५०० (Abdogyl–500) (विडल शायर)

मात्रा—४ गोली की केवल एक मात्रा।

२. अमीबा मेग्मा (Ameba magma) (वीथ कं०)

मात्रा—५ गोली की एक मात्रा। इसकी १ गोली ३०० मि० ग्रा० की आती है।

बालक—१ वर्ष की आयु—६०० मिग्रा० अर्थात् २ गोली की १ मात्रा।

१–७ वर्ष की आयु—१२०० मिग्रा० अर्थात् ४ गोली की १ मात्रा।

७–१२ वर्ष की आयु—१५०० मिग्रा० अर्थात् ५ गोली की १ मात्रा।

३. ℞ एमीबान (Amiban) (खण्डेलवाल)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार ७ दिन तक।

४. ℞ एरिस्टोजिल (Aristogyl) (एरिस्टो कं०)

मात्रा—४०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार ७ दिन तक।

५. ℞ बायोमेबिक (Biomebic) (बायोकेम लेबो०)

मात्रा—२०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार ७ दिन तक।

६. डायाफूर (Diafur) (डॉप्सोन फार्मास्युटिकल)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक भोजन के साथ।

७. डायरेड-एम (Dyrade-M) (सिपला)

मात्रा—वयस्क—२ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक।

बालक—१ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक।

○ रोग के अधिक तीव्र होने पर–१० दिन तक।

नोट—इस औषधि का सस्पेन्शन भी आता है।

बालक की मात्रा—५-१२ वर्ष–१० मिली० दिन में ३ बार ५ दिन तक।

५ वर्ष नीचे—५ मि० ली० दिन में ३ बार ५ दिन तक।

८. इण्टामीजोल (Entamizole) (बूट्स)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—वयस्क–२ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक।

बालक—५-१२ वर्ष–१ गोली दिन में ३ बार ५ दिन तक।

९. फार्निड (Farnid) (फॉर ईस्ट)

मात्रा—वयस्क—१-२ गोली दिन में ३ बार ७ दिन तक।

बालक—½-१ गोली दिन में ३ बार ७ दिन तक।

१०. ℞ फ्लैजिल सीरप (Flagyl syrup) (M. B.)

मात्रा—५० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर प्रतिदिन विभाजित मात्रा में ७ दिन तक।

११. ℞ लूमीजिल (Lumigyl) (प्लाज्मा)

मात्रा—वयस्क—१-२ गोली दिन में ३ बार ७ दिन तक।

बालक—½-१ गोली दिन में २ बार ७ दिन तक।

नोट—इसका सस्पेन्शन भी आता है।

मात्रा—बालक—५-१० मि० ली० दिन में २ बार ७ दिन तक।

○ इसके अतिरिक्त–मेट्रोक्वीन (नोल), मेजोल क्यू (M. M. Labs), मोइबाजिल (ईवर्स), निडिल (गूफिक), ओरोजिल-डी० एफ० (F. D. C.), प्रोविट (P C I), क्यूजिल (सियरी), टिनाजिल-३००/५०० (सिपला), टिनी सस्पेन्शन, टिनिबा (केडिला), टिनीसाइड, टिनीसाइड फोर्ट, टिनिड, टिनीस्टेन-३००, ट्रेग-३०० ट्राइडाजोल आदि पेटेण्ट औषधियाँ हैं। ⊡

संक्रामक रोग 7/6

आमाशयान्त्रशोथ
(Gastroenteritis)

परिचय—इस रोग में आमाशय और क्षुद्र अन्त्र की श्लेष्मकला में शोथ हो जाता है। इसमें वमन तथा पतले दस्त बार बार आते हैं।

कारण—१. आहार विषाक्तता (Food poisoning)।

२. जीवाणु विष (Toxins), संक्रमण (Infection), रासायनिक विष मिले हुए खाद्य पदार्थ, विषैले फंगस युक्त शाक और संक्रमित आहार के खाने से इस रोग की उत्पत्ति होती है।

आहारजन्य विषाक्तता
(Food Poisoning)

इस अवस्था में भोजन करने के कुछ ही समय बाद रोगी को दस्त तथा वमन आरम्भ हो जाते हैं। वमन तथा दस्त 'कॉलरा' की ही भाँति होते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस स्थिति में हैजे की आशंका उत्पन्न हो जाती है, जब कि वस्तुस्थिति कुछ और ही होती है।

१. उपरोक्त स्थिति तभी उत्पन्न होती है, जबकि भोजन किसी न किसी प्रकार विषाक्त होता है।

२. कुछ भोजन स्वयं ही विषैले होते हैं।

३. अनेक बार विषैले फंगस आहार में मिल जाते हैं।

४. कभी-कभी भोजन का रख-रखाव भली प्रकार को न होने पर भी विषाक्त हो जाता है।

○ जो आहार अथवा खाद्य पदार्थ सीलबन्द डिब्बों में आता है, कारखानों में असावधानीवश उसमें जीवाणु मिल जाते हैं और हवा की अनुपस्थिति में वे बढ़कर खाद्य पदार्थों को विषैला बना देते हैं। जब इस आहार को कोई स्वस्थ व्यक्ति खाता है तो वह इन जीवाणुओं से संक्रमित हो जाता है।

५. कभी-कभी बैक्टीरिया भी आहार पदार्थ में मिल जाते है और उनसे उत्पन्न टॉक्सिन विषाक्तता का कारण बन जाते हैं। ये बैक्टीरिया प्रायः साल्मोनेला जाति के होते हैं।

बैक्टीरियाजन्य विषाक्तता
(Bacterial Poisoning)

यह विषाक्तता २ प्रकार की होती है—

१. बैक्टीरिया (साल्मोनेला) के स्वयं आहार में मिल जाने से।

२. संक्रमित हाथों से भोजन बनाने, परोसने अथवा खाने से।

○ संक्रमित भोजन द्वारा जितने अधिक बैक्टीरिया भोजन के साथ आमाशय में पहुँचते हैं, रोग उतना ही अधिक उग्र होता है।

लक्षण—१. रोगी में पेट दर्द के साथ वमन होता है।

२. वमन आरम्भ होते ही अतिसार का लक्षण प्रारम्भ हो जाता है। वमन तथा अतिसार साथ-साथ होते हैं।

३. रोगी का जी मिचलाता है।

४. यदि भोजन में कोई रासायनिक विष मिल गया होता है तो आधे के अन्दर ही रोगी को उल्टियाँ आने लगती हैं।

○ यदि जीवाणुविष (टॉक्सिन) भोजन में मिल जाता है तो ४ से १२ घण्टे के अन्दर उसके लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

○ ये जीवाणु जब सीधे आहार में मिल जाते हैं तब लक्षण १२ से २४ घण्टे के अन्दर उत्पन्न होते हैं।

५. रोग की उग्रावस्था में वमन और दस्त इतनी तीव्रता के साथ आते

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं कि रोगी में हैजा जैसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। शरीर से जलीयांश के अधिक निकल जाने से निर्जलीभवन (Dehydration) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है और स्तब्धता के लक्षण दिखलाई पड़ने लगते हैं। इस समय रोगी का जीवन संकट में पड़ जाता है।

○ शरीर से ठंडा पसीना आने लगता है और नाड़ी की गति तीव्र हो जाती है। रोगी अत्यन्त घबराया हुआ सा संकटमय स्थिति में दिखलाई देता है।

○ कुछ समय के पश्चात् रोगी में शनैः शनैः सुधार होने लगता है। यह सुधार संक्रमण के ऊपर निर्भर करता है।

६. जब बैक्टीरिया के संक्रमण से रोग की उत्पत्ति होती है तब रोगी को तेज बुखार हो जाता है।

७. जीव विष तथा रासायनिक विष से उत्पन्न स्थिति में शरीर का तापक्रम बहुत घट जाता है।

८. जब रोग सीधे जीवाणुओं के संपर्क में होता है, तब रोगी को रोगमुक्त होने में कई दिन लग जाते हैं।

रोग-निदान—१. इसका निदान बहुत आसान है। रोग भोजन के कुछ ही घण्टे बाद प्रारम्भ हो जाता है।

२. बहुत से व्यक्ति एक साथ इस रोग से ग्रस्त हो जाते हैं, जिन्होंने किसी शादी-विवाह आदि आयोजन में सामूहिक रूप से इस प्रकार का विषाक्त भोजन ग्रहण किया हो।

चिकित्सा—यह रोग स्वयं मर्यादित स्वरूप का होता है। इसकी चिकित्सा प्रायः लाक्षणिक होती है।

(१) सामान्य चिकित्सा व्यवस्था—

१. रोगी को चारपाई पर पूर्ण विश्राम दें।

२. रोगी के शरीर के ताप की रक्षा करना आवश्यक होता है। अतः उसके पेट पर गरम पानी की बोतलें रखनी चाहिए। अथवा रोगी को कम्बल से आदि से ढँक देना चाहिए।

३. वमन की शान्ति के लिए रोगी को बर्फ के टुकड़े चुसवायें।

४. निर्जलीभवन से रक्षा करना आवश्यक होता है। अतः रोगी को इण्ट्रावींनस रूट से सैलाइन देना चाहिए।

(२) औषधि-चिकित्सा—इसकी कोई विशिष्ट औषधि नहीं है। क्योंकि यह कई प्रकार के विषाणुओं के द्वारा होता है। फिर भी सम्भावित जीवाणुओं को नष्ट करने के लिए एण्टीबायोटिक तथा सल्फा ड्रग्स का प्रयोग अवश्य लाभकारी होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. ℞ क्लोरोमाइसिटीन (क्लोरम्फेनिकाल) २५० मि० ग्रा०
मात्रा—२-२ कैपसूल प्रति ६ घण्टे पर प्रथम २ दिन तक।
तत्पश्चात्—१-१ कैपसूल दिन में ३ बार ५ दिन तक।

२. ℞ को-ट्राईमेथोक्साजोल
व्या० नाम०—सेप्ट्रान या बैक्ट्रिम
मात्रा—२-२ गोली दिन में २ बार ४ दिन तक।
अथवा—डबल सेप्ट्रान या ओरीप्रिम डी० एस०
मात्रा—१-१ गोली दिन में ३ बार।

अतिसार, आहारविषमयता, गैस्ट्रोइण्टेराइटिस में—

३. ℞ सल्फूमेट (Sulfumet) (एल्वर्ट डेविड)
मात्रा—१ गोली दिन में ३-४ बार।
इसका सीरप भी आता है—
मात्रा—वयस्क—१५-२० मि० ली० दिन में ३-४ बार।
बालक—५-१० मि ली० दिन में ३-४ बार।
शिशु—२.५-५ मि० ली० दिन में ५ बार।

४. ℞ डिपेण्डाल (Dipendal)
मात्रा—वयस्क—१ गोली प्रति ६ घण्टे पर।
बालक ५ वर्ष तक—$\frac{1}{2}$-$\frac{1}{2}$ गोली प्रति ६ घण्टे पर।

○ इस औषधि को १ वर्ष के भीतर की आयु के शिशुओं को नहीं देना चाहिए।

मात्रा—बालक २ वर्ष ~ १-२ चाय चम्मच दिन में ३-४ बार।
२ वर्ष से ऊपर—२-४ चम्मच दिन में ३-४ बार।

○ यह गैस्ट्रो-इण्टेराइटिस की उत्तम औषधि है।

६. ℞ डाइरेस्ट (Diarrest)
मात्रा—$\frac{1}{2}$-१ चम्मच दिन में ३-४ बार।
इमाण्टिड टेबलेट (Emantid tab.) (M. M. Lab.)
मात्रा—वयस्क—१ गोली दिन में ३-४ बार।
बालक—$\frac{1}{2}$-$\frac{1}{2}$ गोली दिन में ४ बार।
नोट—इसे आहारजन्य विषमयता में देते हैं।

७. ℞ इण्टरोमैक (Enteromak) (मैक लेबो०)
मात्रा—वयस्क—२ चम्मच प्रति ४-६ घण्टे पर।
बालक—१-२ चम्मच प्रति ४-६ घण्टे पर।

८. ℞ फूरोक्सोन (Furoxone) (SKF)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालक—५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर दिन में ४ विभाजित मात्राओं में।

नोट—इसका सस्पेन्शन भी आता है।

बालक—१ वर्ष की आयु—१-२·५ मि० ली० दिन में ४ बार।

१–४ वर्ष— ५ मिली० दिन में ४ बार।

५ वर्ष से ऊपर—५-७ मि० ली० दिन में ४ बार।

९. Ⓑ इमोसेक–एस (Emosec–S) (इथनोर)

मात्रा—१ कैपसूल दिन में ४ बार ३-५ दिन तक।

नोट—यह 'सालमोनेला आहारजन्य विषमयता' में लाभकर है।

१०. Ⓑ जेटोसेक–एस (Jetosec–S) (इथनोर)

बालक—५ वर्ष से नीचे—१·५ मि० ली०/प्रति ५ किलो शरीर भार पर दिन में ३-४ बार।

५ वर्ष से ऊपर—१ चम्मच दिन में ३-४ बार।

अन्य औषधियाँ—

१. क्लासक (Klassak) (इथिको)—१ कै० दिन में ३–४ बार ३–५ दिन तक।

○ सालमोनेला आहारजन्य विषमयता में लाभकारी।

२. लोमोफेन (Lomofen) (सेरले)

मात्रा—वयस्क—२ गोली प्रति ४ घण्टे पर जब तक दस्त बन्द न हो जायें।

बालक—२ वर्ष से ऊपर—०·२५ मिग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर।

३. नेलडार (Neldar) (फार-ईस्ट)

चिरकारी रोगियों में—शिशु—½–१ चम्मच दिन में ४–६ बार।

२–६ वर्ष की आयु—½–१ चम्मच दिन में ४-६ बार।

४. न्यू कोम्बाक्टिन (New combactin) (CFL Pharma)

मात्रा—शिशु—१ चम्मच दिन में ४-६ बार।

बालक—१-२ चम्मच दिन में ४-६ बार।

४. प्रेक्टोकेब (Practokab) (केमाजी)

मात्रा—वयस्क—१-२ चम्मच दिन में ३ बार।

बालक—½ चम्मच दिन में ३ बार।

शिशु—¼ चम्मच दिन में ३ बार।

६. पेक्टोकेब-एम-एफ सस्पेन्शन (Pectokab-M-F sus.) (केमाजी)

मात्रा—वयस्क—१०-१५ मि० ली० दिन में ३ या ४ बार।

बालक—२ ५–५ मि० ली० दिन में ३ या ४ बार।

७. स्ट्रेप्टो-पैराक्सिन (Strepto-paraxin) (बोहरिंगर नोल)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१–४ कैपसूल दिन में ४ बार। बच्चों के लिए ड्राप आता है।

तीव्र अतिसार—प्रारम्भ में दस्तों को रोकने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। क्योंकि इस समय मल के साथ ही दूषित पदार्थों का शरीर से निष्कासन होता है।

○ यदि दस्त वास्तव में अधिक आ रहे हों तो उपरोक्त औषधियों में से किसी का भी प्रयोग किया जा सकता है।

अथवा—स्ट्रेप्टोमेग्मा (Streptomegma)

मात्रा—वयस्क—२० मि० ली० प्रति ६ घण्टे पर।

बालक—१० मि० ली० प्रति ६ घण्टे पर।

उदर-पीड़ा (Colic)—

१. एट्रोपीन सल्फेट ०·६ मि० ग्रा० S/C इञ्जेक्शन।

२. पेट को गरम पानी से सेंकना चाहिए।

यदि वमन होने के बाद भी उदर पीड़ा जारी रहे—

℞ प्रोबेन्थेलीन ब्रोमाइड (Probentheline bromide)

व्या० नाम—प्रोबेन्थीन (Probanthine)

मात्रा—१५ मि० ग्रा० ६-६ घण्टे पर।

वमन (Vomiting)—

℞ ट्राईफ्लूप्रोमेजीन (Trifluprомezine)

व्या० नाम—सीक्विल (Siquill)

मात्र—५ मि० ग्रा० एम्पुल मांसपेसीगत।

तत्पश्चात्—१० मि० ग्रा० की १ गोली प्रति ८–१२ घण्टे पर मुख से देते रहें।

निर्जलीभवन (Dehydration) **में—**

१. रोगी को इलेक्ट्राल पाउडर मिला जल बार-बार पिलायें। अथवा—

२. ५% डेक्स्ट्रोज ५०० मि० ली० I/V ड्रिप से दें। उसके बाद ५०० मि० ली० नार्मल सैलाइन दें।

○ रोग की गम्भीर स्थिति में 'कॉलरा' के समान चिकित्सा करें।

सरक्यूलेटरी फेल्योर—इसमें कॉलरा के समान चिकित्सा करें।

रोगी की आहार-व्यवस्था—

१. प्रारम्भ में रोगी को केवल जल तथा नारियल का पानी पिलायें।

२. स्थिति में सुधार होने पर सुपाच्य कार्बोहाइड्रेट युक्त तरल भोजन दें।

३. २–३ दिन बाद पतली खिचड़ी दें।

बचाव व्यवस्था—१. बाजार की धूल भरी दूषित चाट आदि तथा सड़े-गले फलों का प्रयोग न करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. सड़क के किनारे की धूल भरी लस्सी, मिल्क केक तथा ठंडे पेयों का सेवन न करें।

३. सीलबन्द डिब्बों में अधिक दिनों तक रखी आहार सामग्री का सेवन न करें।

४. गन्दे होटलों तथा रेस्टोरेण्ट्स में भोजन तथा जलपान न करें।

५. मांस, मछली तथा पकौड़ियाँ जो कम पकाई गई हों, सेवन न करें।

○ आषाढ़ एवं भादों में इस प्रकार में दूषित खाद्य पदार्थों के सेवन करने से गैस्ट्रोइण्टेराइटिस की अधिक सम्भावना रहती है। □

संक्रामक रोग 7/7

गलसुआ
(Mumps)

पर्याय—मम्प्स पैरोटाइटिस (Mumps parotitis), कनफेड़, कर्णफेर, पाषाणगर्दभ, इपीडेमिक पेरोटाइटिस (Epidemic parotitis)।

परिचय—यह संक्रामक रोग विशेष प्रकार के कीटाणुओं से उत्पन्न होता है। रोगी के गले की पैरोटिड ग्लैण्ड में शोथ हो जाता है। गले में दोनों जबड़ों के संगम-स्थल पर गले के एक ओर या दोनों ओर कान के नीचे शोथ हो जाता है। इस रोग में रोगी की अन्य ग्रन्थियाँ भी रोगग्रस्त हो जाती हैं। अण्डकोष एवं डिम्बाशय तथा पैन्क्रियाज़ ग्लैण्ड में भी शोथ उत्पन्न हो सकता है।

कारण—यह फिल्टरेबुल वायरस—जिसे R. N. A. वाइरस कहते हैं—के द्वारा होता है।

संक्रमण (Infection)—इसका विषाणु लार में रहता है और यह रोग बिन्दुकसंक्रमण (Droplet infection) और संक्रमणी पदार्थों (Formintes) से फैलता है।

○ यह रोग जानपदिक (Epidemic) रूप में फैलता है।

○ जानपदिक रूप में यह घरों, सड़कों, कैम्प्स तथा स्कूलों आदि स्थानों में प्रसारित हो जाता है।

○ स्पोरेडिक केसिस (Sporadic cases) वर्ष भर उत्पन्न होते हैं। किन्तु जाड़े तथा वसन्त ऋतु (Spring season) में विशेष होता है।

उम्र एवं लिंग (Age & sex)—यह रोग शिशुओं में कम होता है, परन्तु विद्यालय में पढ़ने वाले बालकों में अधिक होता है। अधिकांश केसिस

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५ से १७ वर्ष के बीच मिलते हैं। यह बालिकाओं की अपेक्षा बालकों में अधिक होता है।

संचय-काल (Incubation period)—औसतन १८ दिन का।

लक्षण (Symptoms)—१. रोगी में थोड़ी-सी ठंड लगकर हल्की-सी कँपकँपी के साथ ज्वर चढ़ कर ३८-३९° सें० (१००-१०२° फा०) अथवा अधिक पहुँच जाता है।

२. रोगी बहुत दुर्बल तथा व्याकुल हो जाता है।

३. रोगी में Light sore throat, गर्दन में पीड़ा, सिर-दर्द आदि लक्षण प्रारम्भ होते हैं।

४. प्रथम जबड़े के कोने के पीछे दर्रों (Vicess) में एक कोमल सूजन हो जाती है। यह सूजन पहले दाहिनी ओर होती है। इसका आकार जैसे-जैसे बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे यह अधिक वेदनापूर्ण होती जाती है। एक या दो दिनों में यह दूसरी ओर भी हो जाती है। कभी-कभी अन्य लार-ग्रन्थियाँ भी बढ़कर कोमल हो जाती हैं और बालक को मुँह खोलने में भी कठिनाई होती है।

५. सूजन अधिक बढ़ जाने पर रोगी का खाना-पीना भी मुश्किल हो जाता है।

६. कभी-कभी बिना ज्वर के ही ग्रन्थि सूज जाती है और बाद में हलका-सा ज्वर आता है।

७. रोगी के जबड़े में कठोरता (Stiffness) आ जाती है, जिससे रोगी मुँह खोलने में असमर्थ हो जाता है।

८. पेरोटिड ग्लैण्ड्स एक के बाद एक २४ से ३६ घण्टे में सूज जाती है। कभी-कभी एक ही समय में दोनों ग्लैण्ड्स एक साथ सूज जाती हैं।

९. तीसरे दिन के बाद प्रायः एक ओर की आक्रान्त ग्रन्थि की सूजन कम होने लगती है।

१०. कभी-कभी ज्वर एक बार कम होकर २ दिन के लिए पुनः बढ़ सकता है।

११. अरुचि, जी मिचलाना, मुँह में शुष्कता, दुर्गन्धयुक्त श्वास, सिरदर्द, बेचैनी आदि लक्षण प्रायः उपस्थित रहते हैं।

१२. सामान्यतया ४-५ दिन के पश्चात् ज्वर पर्याप्त मृदुस्वरूप का होकर एक सप्ताह के भीतर ही उतर जाता है। किन्तु सूजन ८-१० दिनों तक रह सकती है और उसके सामान्य आकार में आने में कुछ और समय लग जाता है।

१३. कर्णमूलशोथ हो जाने पर मुख खोलने, चबाने तथा निगलने आदि क्रियाओं में रोगी को अत्यधिक कष्ट होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१४. लार प्रायः कम आती है, परन्तु कुछ रोगियों में लालास्राव बराबर होते रहने से बार-बार थूकने की प्रवृत्ति हो जाती है।

१५. रोगी की कर्णपाली उभरी हुई तथा बाहर की ओर उठी-सी प्रतीत होती है। उसकी त्वचा पाण्डुवर्ण की चमकीली होती है। दबाने पर प्रायः पीड़ा होती है।

१६. रोगी की नाड़ी प्रायः नार्मल रहती है।

१७. इस रोग के साथ-साथ मेनिञ्जियल तथा मस्तिष्कशोथ (Encephalitis) के लक्षण भी प्रायः मिलते हैं।

उपद्रव (Complications)—इस रोग में आर्काइटिस (Orchitis), ओऑफोराइटिस (Oophoritis), प्रोस्टेटाइटिस (Prostatitis), मैस्टाइटिस, पैन्क्रियेटाइटिस, मेनिंगो-इन्सेफेलाइटिस, मेनिञ्जाइटिस, थायराइडिटिस, मायोकार्डाइटिस (Myocarditis), सेकेण्डरी इन्फेक्शन आदि उपद्रव होते हैं। आर्काइटिस इसका प्रधान उपद्रव है।

अन्य उपद्रव—अग्न्याशयशोथ (Pancreatitis) तथा गलसुए के सिलसिले में सन्धिशोथ (Arthritis) भी पाया गया है।

○ डिम्बशोथ तथा स्तनशोथ का उपद्रव कम ही देखने को मिलता है।

○ इस प्रकार इस रोग में अनेक उपद्रव देखने में आते हैं। कुछ वैज्ञानिकों की धारणा है कि ये रोग के उपद्रव नहीं बल्कि रोग के ही असाधारण लक्षण हैं, जो विभिन्न अंगों में इस रोग को उत्पन्न करने वाले वायरस के पहुँच जाने के कारण उत्पन्न होते हैं।

निदान (Diagnosis)—१. इस रोग के सही निदान हेतु 'कम्प्लीमेण्ट फिक्सेशन टेस्ट' करना होता है। यह पाजीटिव (+) होता है।

२. सीरम एमाइलेज (Serum amylase) बढ़ा हुआ मिलता है।

३. CCF में लिम्फोसाइटोसिस उपस्थित रहता है (मेनिंगो-इन्सेफेलाइटिस)।

४. यूरीनरी डायस्टेज—यद्यपि यह नार्मल (700-5200 I U/24 h) रहता है, पर कभी-कभी बढ़ा हुआ मिलता है।

विभेदी निदान (Differential diagnosis)—सर्जिकल एडीनाइटिस तथा वृषभ ग्रीवा (Bull nack) प्रकार के डिफ्थीरिया से इसका भेद करना आसान होता है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. यह स्वयं मर्यादित स्वरूप का रोग है, घातक नहीं।

२. उपद्रव होने पर भी इससे कोई विशेष कष्ट नहीं होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. इसकी सम्पूर्ण चिकित्सा लाक्षणिक होती है।

२. रोगी को स्वच्छ हवादार कमरे में १० दिनों तक पूर्ण विश्राम कराना चाहिए। अधिक उम्र के बालक को २-३ सप्ताह तक विश्राम आवश्यक होता है।

३. मुँह, दाँत, गला, नासा आदि की भलीभाँति सफाई रखनी चाहिए।

४. प्रारम्भ के २-३ दिनों तक केवल तरल पदार्थ ही देना चाहिए।

५. सम्पूर्ण शरीर को गरम पानी से पोंछना तथा शोथ स्थान को सेंकना लाभकर होता है।

६. भोजन से पूर्व एनाल्जेसिक का प्रयोग लाभकर होता है।

बचाव हेतु (For prevention)—सम्पर्क में आये व्यक्तियों को रोग से बचाने के लिए—

○ 'मम्प्स कन्वल्सेण्ट सीरम' २० मि० ली० या मम्प्स कन्वल्सेण्ट गामा ग्लोबुलिन २·५ मि० ली० इण्ट्रामस्कुलर देना चाहिए।

○ 'मम्प्स वायरस वैक्सीन' के १ मि० ली० के १ सप्ताह के अंतर पर S/C दो बार देने से लगभग ६-१२ माह तक इस रोग की प्रतिरोधक शक्ति बनी रहती है।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ टेरामाइसीन कैपसूल (फाइजर)

मात्रा—१ कै० दिन में २ या ३ बार। अथवा १-२ मि० ली० इञ्जे० मांस में लगायें। बच्चों के लिए पीडियाट्रिक सीरप १-२ चम्मच दिन में ३ बार।

अथवा—℞ एक्रोमाइसिन कै० (Achromycin cap.) (सायनेमिड)

मात्रा—१-२ कैपसूल प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—क्लोरटेट्रासाइक्लीन (ऑरियोमाइसिन)

मात्रा—१-२ कै० प्रति ६ घण्टे पर १ सप्ताह तक।

○ **रोग की प्रारम्भिक अवस्था में**—लगातार ३ दिनों तक डाइहाइड्रो-अर्गोटामिन का I/M इञ्जे० पीड़ा तथा शारीरिक लक्षणों में आराम पहुँचाता है।

अथवा पीड़ा के लिए—℞ नोवाल्जिन टे०, सिवाल्जिन टे०, इस्जी-पायरिन टे० या कोडोपायरिन टे०।

मात्रा—इसमें से कोई १ गोली दिन में १-२ बार आवश्यकतानुसार।

अथवा—टेबलेट टाइलेनोल (Tab. Tylenol)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—ए० पी० सी० टेबलेट (A. P. C. tab.) या डॉल्विरान (Dolviran) १ गोली दिन में ३ बार।

साथ ही—पैरोटिड ग्लैण्ड्स पर 'बेलाडोना प्लास्टर' लगायें।

अथवा—केओलिन पुल्टिस दिन में २-३ बार बदल कर बाँधे।

अथवा—बेलाडोना ग्लिसरीन लगाकर सेंक करें।

अथवा—एण्टीफ्लोजिस्टीन का गर्म-गर्म प्लास्टर शोथ पर लगायें।

एवं—सोडियम क्लोराइड ४ ग्राम + सोडियम बाइकार्ब २ ग्राम + ५०० मि० ली० पानी में मिलाकर गरारे करायें।

पेट साफ रखने के लिए—अल्वा मिक्श्चर (मैग सल्फ १ ड्राम + मैग कार्ब लाइट) ६०० मि० ग्रा० + पिपरमेण्ट वाटर १५ मि० ली०।

अथवा—'इलिग्जिर केस्केरा सेग्रेडा' ½ ड्राम दिन में १ बार दें।

रोगक्षमता की वृष्टि से—आर्सेनिक के योग देने चाहिए। निम्न योग लाभकर है—

℞ सोडा सैलीसिलास	६०० मिग्रा०
सोडाबाइकार्ब	६०० मिग्रा०
पोटाश क्लोरेट	१८० मिग्रा०
लाइकर आर्सेनीकेलिस	३ बूँद
टिं० बेलाडोना	१० बूँद
सीरप ऑरेंशयाई	१ ड्राम
जल	१ औंस
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।	१ मात्रा

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

(१) शोथ एवं वेदना की शान्ति के लिए—

℞ 'डाइहाइड्रो-अर्गोटामीन टार्ट्रेट' का I/M इञ्जेक्शन। २-३ इञ्जे० पर्याप्त रहते हैं।

अथवा—इञ्जे० न देने की स्थिति में—मेथर्जिन या न्योगाइनर्जिन

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार दें।

अथवा—प्रेडनीसोलोन १ गोली + इस्जीपाइरीन १ गोली + विटामिन-सी (२०० मि० ग्रा०) + कैल्शियम ग्लूकोनेट ३०० मि० ग्रा० की १ मात्रा।

मात्रा—ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार ५-६ दिन तक गर्म जल से।

(२) वृषणशोथ (Orchitis)—

(i) इससे बचने के लिए—O रोग प्रारम्भ में ही 'स्टिल्बेस्टरोल', 'ईस्टरॉडियोल' १-२ मि० ग्रा० दिन में २-३ बार देने से रोग का निरोध रहता है

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ यदि वृषणशोथ हो भी गया हो तो भी इससे लाभ मिलता है।

(ii) रोग होने पर—

℞ डेकाड्रान, प्रेडनीसोलोन या बेटनेसोल तथा बाइसोलान।

मात्रा—१ गोली (५ मि० ग्रा०) दिन में २ बार ३ दिन तक।

साथ ही—वृषणों पर इक्थियोल बेलाडोना का लेप लगाकर लंगोट बाँध दें।

○ इसके अतिरिक्त रोगी को निम्न औषधियाँ देनी चाहिए—

℞ टेबलेट सुगारनिल (Tab. Sugarnil)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—टेबलेट प्रेडनीसोलोन ६० मि० ग्रा० ३ दिन तक।

तत्पश्चात्—मात्रा कम करते हुए अगले ४ दिन तक और दें।

अथवा—पैथीडीन हाइड्रोक्लोराइड (Pethidine Hcl.)

मात्रा—५० मि० ग्रा० प्रतिदिन १ या २ बार।

अथवा—टेबलेट टाइलीनोल विद कोडीन (Tab. Tylenol with codine)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

नोट—वयस्कों में ग्रन्थि आदि की पीड़ा में एस्प्रिन के स्थान पर 'टाइलीनोल' सीरप (Tylenol syrup) का उपयोग किया जा सकता है।

मात्रा—१०-२० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर १ मात्रा दिन में ३ बार।

○ इसके ५ मि० ली० सीरप में १२० मि० ग्रा० औषधि होती है।

उपरोक्त चिकित्सा के साथ ही—

फ्रूसेमाइड (Frusemide) तथा लासिक्स (Lasix)।

मात्रा—½–१ गोली दिन में १ बार प्रातः दें।

लाभ न मिलने पर—उपरोक्त चिकित्सा से सफलता न मिलने पर, तथा अधिक कष्ट की स्थिति में 'स्पर्मेटिक कॉर्ड' को फाड़कर उसमें नोवोकेन अथवा प्रोकेन का २% घोल २-४ मि० ली० की मात्रा में इन्जेक्शन द्वारा प्रविष्ट कराना चाहिए।

वृषणशोथ के दर्द में—℞ कोर्टिकोट्रोफिन (Corticotrophin)

मात्रा—१०० यूनिट्स इन्जेक्शन रूप में २-३ दिन तक।

साथ ही—प्रेडनीसोलोन ५ मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ४ बार २-३ दिन तक।

अथवा—शोथ के लिए बीटामेथासोन या डेक्सामेथासोन

मात्रा—५ मि० ग्रा० दिन में २ बार २-३ दिन तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) **बीजग्रन्थिशोथ** (Oophritis)—

टेस्टोस्टेरोन प्रोपियोनेट, अथवा कार्पस ल्यूटियल हार्मोन्स (Progestirone or Corpus leutrium hormones)

मात्रा—२ मि० ग्रा० दिन में ३-४ बार ४-५ दिन तक।

○ साथ ही कोष्ठ के निम्न प्रदेश पर सिंकाई करें। सम्भव होने पर बिजली का सेंक (डायथर्मी) करायें। यह शीघ्र लाभकर होता है।

नोट—विशेष चिकित्सा के लिए लेखक की 'सचित्र स्त्री-रोग चिकित्सा' का अवलोकन करें।

(४) **अग्न्याशयशोथ** (Pancreatitis)—एब्डॉमिनल पेन तथा वमन की स्थिति में अग्न्याशयशोथ की आशंका करनी चाहिए।

○ ऐसी स्थिति में दर्द के लिए—पैथीडीन हाइड्रोक्लोराइड

मात्रा—१०० मि० ग्रा० I/M इञ्जे० दिन में १ बार।

पीड़ा के स्थान पर गरम पानी का सेंक करें।

साथ ही—टेबलेट प्रेडनीसोलोन (Tab. Prednisolone) ५ मि० ग्रा०

मात्रा—२ गोली दिन में ४ बार। आराम मिलने पर मात्रा क्रमशः घटाते हुए बन्द कर दें।

एवं—कैपसूल टेट्रासाइक्लीन २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कै० प्रति ४ घण्टे पर दिन में ४-६ बार।

○ मॉर्फीन का इञ्जेक्शन तथा I/V सैलाइन देना भी हितकारी है।

○ 'प्रेडनीसोलोन' के स्थान पर 'हाइड्रोकार्टीसोन' भी दिया जा सकता है।

○ अग्न्याशय की कोशिकाएँ पूर्णरूप से नष्ट न होने पायें, इसके लिए उपरोक्त चिकित्सा के साथ-साथ विटामिन बी$_{१२}$ ५०० मि० ग्रा० + विटामिन-सी ५०० मि० ग्रा० दोनों मिलाकर स्वतंत्र या ग्लूकोज के साथ दिया जा सकता है।

(५) **सावरण मस्तिष्कशोथ**—ज्वर-मुक्ति के ४-५ दिन पश्चात् तीव्र शिरः-शूल, मितली तथा वमन, प्रलाप, गर्दन की स्तब्धता तथा नेत्र-प्रचलन आदि की उपस्थिति में इस उपद्रव का अनुमान किया जाता है।

चिकित्सार्थ—१. कपाल पर बर्फ की थैली रखें।

२. कटिवेध (Lumbar puncture)।

३. सिरदर्द, वमन आदि की शान्ति के लिए लाक्षणिक चिकित्सा।

रोगमुक्ति के पश्चात् की चिकित्सा—

१. रोगमुक्ति के पश्चात् १ सप्ताह तक पूर्ण विश्राम करायें।

२. कैलोमल आदि के द्वारा पेट की सफाई करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. सुपाच्य पोषक आहार, विटामिन्स 'ए' और 'बी', प्रोटीनेक्स, लौह व संखिया युक्त औषधियों तथा अन्य टॉनिक्स का उचित मात्रा में प्रयोग करें।

मम्प्स की पेटेण्ट मिश्रित औषधि-चिकित्सा—

१. ℞ एक्रोमाइसिन	१ कैप्सूल
सीलिन ५०० मि० ग्रा०	१ गोली
कोरामिन लिक्विड	१० मिनिम
गम अकेसिया	आवश्यकतानुसार
ऐसी १ मात्रा दिन में ४ बार ५–६ दिन तक।	१ मात्रा
२. ℞ सल्फाडायजीन	१ गोली
सल्फामेराजीन	१ गोली
एल्कोसिन	१ गोली
सीलिन १०० मि० ग्रा०	१ गोली
ए० पी० सी०	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३–४ बार गर्म जल से दें।

साथ ही—डी० सी० या प्रोसिलिन का मांसपेशीगत इञ्जेक्शन दें।

शोथ पर—बेलाडोना प्लास्टर लगायें। अथवा ग्लिसरीन बेलाडोना दिन में ३–४ बार फुरेरी से लगायें। तत्पश्चात् सेंक करें।

एवं—डेल्टाकॉर्ट्रिल—१–१ गोली दिन में प्रातः-सायं दें।

३. ℞ कोडेलकॉर्टोन (Codelcortone) (एम० एस० डी०)

मात्रा – ५ मि० ग्रा० की १ गोली दिन में २ बार खिलायें।

साथ ही—ट्रायसिन (Trysin) (M. S. D.) २५० मि० ग्रा० का १ कैपसूल प्रति ४ घण्टे बाद दें। ⊡

संक्रामक रोग 7/8

कुक्कुरखाँसी

(Whooping Cough)

पर्याय—काली खाँसी, परटूसिस (Pertussis)।

परिचय—It is an acute infectious disease of the children caused by 'B. pertussis'. It is characterized by rise of temperature at the onset, mild coryza and paroxysms of cough which may end in long-drawn crowing inspiration called the 'whoop'

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

and is often followed by vomiting. Blood picture shows marked lymphocytosis.

○ यह एक तीव्र संक्रामक रोग है, जो एक विशेष प्रकार का प्रावेगिक कास एवं ज्वर तथा सामान्य स्वरूप के प्रतिश्याय के लक्षणों के साथ 'बी० परटूसिस' के ड्रापलेट इन्फेक्शन के रूप में होता है। प्रारम्भ में तेज खाँसी और कुत्ते के हुप-हुप करने जैसी आवाज, मन्द ज्वर, खाँसते-खाँसते दम रुक जाने जैसी अवस्था, खाँसते हुए वमन एवं मितली होना, बच्चों में नींद न आना, चेहरा तमतमाया हुआ, आँखे लाल, शरीर का प्रतिदिन दुर्बल होते जाना आदि लक्षणों से युक्त रोग 'हूपिंग कफ' कहलाता है।

○ यह रोग खाँसी में 'हुप' का आरम्भ होने से १ सप्ताह पहले तथा २ सप्ताह पश्चात् तक अत्यन्त संक्रामक होता है।

कारण—यह 'बेसिलस हीमोफिलस परटूसिस' नामक बैक्टीरिया से होता है। यह एक ग्राम निगेटिव एनोरोबिक बेसिलस है।

संक्रमण (Infection)—यह रोग खाँसने तथा छींकने के समय बिन्दु के संक्रमण से फैलता है तथा श्लेष्मास्राव की स्थिति में अत्यन्त संक्रामक होता है।

उम्र (Age)—२ से ५ वर्ष की आयु में विशेष रूप से। फिर भी इसके लिए कोई भी उम्र प्रतिक्षम (Immune) नहीं है।

लिंग (Six)—यह रोग लड़कियों में अपेक्षाकृत अधिक होता है।

ऋतु (Season)—यह शीत तथा वसन्तऋतु में अधिक कामन होता है।

उद्भवन काल—औसतन १० से १४ दिन।

लक्षण (Symptoms)—आक्रमण धीरे-धीरे होता है। इसकी २ अवस्थाएँ होती हैं—

(१) प्रसेकी अवस्था (Catarrhal stage)—

यह प्रतिश्याय के समान होती है। इसके लक्षण नेजल कटार तथा कंजक्टिवाइट्रिस के होते हैं। नाक से स्राव आता है, आँखें लाल हो जाती हैं खाँसी तथा बुखार उपस्थित रहता है और तापक्रम प्रायः बहुत हलका होता है। रोगी को सूखी खाँसी आती है। यह दिन या रात में किसी भी समय उत्पन्न हो सकती है, किन्तु रात्रि के समय अधिक कष्ट पहुँचाती है। कभी-कभी वमन भी होता है।

○ इसके अतिरिक्त एनोरेक्सिया, इन्सोम्निया (Insomnia), छींकना, अश्रुस्राव (Lacrimation), प्रावेगिक श्वासकष्ट, शोथयुक्त आकृति, स्वरयंत्रशोथ, नासा से रक्तस्राव की प्रवृत्ति आदि लक्षण होते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ यह अवस्था प्रायः ७-१० दिनों तक रहती है। कभी-कभी स्वरयंत्र-शोथ के कारण तापक्रम की वृद्धि हो जाती है। इसे 'ज्वरयुक्त कासावस्था' (Febrile catarrhal stage) भी कहते हैं।

○ प्रसेक शान्त होने के साथ-साथ ज्वर का उपशम हो जाता है और इस समय तक इस रोग का प्रमुख लक्षण एक विशेष प्रकार की 'हूप' की ध्वनि के साथ प्रावेगिक कास (Paroxysmal cough) की उत्पत्ति हो जाती है। यह व्याधि इस अवस्था में अधिक संक्रामक होती है।

(२) प्रावेगिक कास की अवस्था (Paroxysmal stage)—

इसे ज्वररहित कासवेगावस्था (Abrible paroxysmal stage) भी कहते हैं। उपरोक्त प्रसेकी अवस्था के पश्चात् यह द्वितीयावस्था प्रारम्भ होती है। इसमें निम्न लक्षण मिलते हैं—

१. इस अवस्था में रोगी बालक को दिन-रात में दो-चार बार या १०-१५ बार कास के वेग उठते हैं।

२. रात को सोते समय ट्रेकिया में म्यूकस के अधिक जमा हो जाने से इस रोग का वेग पहले रात को ही होता है।

○ प्रत्येक वेग को निम्न ३ भागों में बाँटा जा सकता है—

(१) वेग के प्रथम भाग में—बालक एक छोटा सा अन्तःश्वास लेता है।

(२) वेग के द्वितीय भाग में—बालक छोटी-छोटी ५-७ खाँसियों का एक ताँता-सा बाँध कर खाँसता है, जिसमें प्रत्येक अगली खाँसी पहली खाँसी की अपेक्षा अधिक तीव्रतर तथा प्रबल होती है। खाँसियों का यह ताँता आधा से एक मिनट तक चलता है। यहाँ तक कि फेफड़े से सम्पूर्ण वायु निकल कर रोगी का दम घुटने लगता है। रोगी का चेहरा नीला पड़ जाता है और फूलता जाता है। उसकी आँखें लाल हो जाती हैं और जीभ बाहर निकल आती है।

(३) वेग के तृतीय भाग में—

१. श्वास केन्द्र के उत्तेजित हो जाने से रोगी बालक तत्काल एक अन्तः-श्वास लेता है, जिससे स्तम्भ के कारण ग्लॉटिस के द्वारा कुछ-कुछ बन्द हुए कंठ में गुजरने से हूप (Whoop) जैसी एक कठोर अन्तःश्वास की आवाज उत्पन्न होती है। जिसके कारण इसे हूपिंग कफ कहते हैं।

२. अन्तःश्वास के साथ कास का वेग समाप्त हो जाता है और श्वास नलिकाओं से चिपचिपा व गाढ़ा श्लेष्मा बाहर निकलता है।

३. खाँसी के वेग के साथ-साथ कभी-कभी आमाशय का आहार द्रव्य भी बाहर आता है।

४ शिशु में खाँसते-खाँसते मुँह फूल जाता है। खाँसी का वेग लगभग २ मिनट तक रहता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. खाँसने के बाद चिकनी श्लेष्मा निकल जाने से रोगी को शान्ति मिल जाती है।

६. ग्रीवा की शिराएँ फूली होती हैं और श्वास चढ़ा हुआ होता है।

७. कभी-कभी खाँसी में वेग के कारण नाक से रक्तस्राव तथा उग्र अवस्था में मस्तिष्क की धमनी के फटने का भय रहता है।

आक्षेपक अवस्था (Convulsant stage)—यह अवस्था २ से ४ सप्ताह तक रहती है। यह अवस्था मुख्यरूप से आक्रमण के ४ सप्ताह बाद प्रारम्भ होती है। इसमें 'हूप' की उपस्थिति नहीं रहती है। हल्की-सी खाँसी आती हैं। कभी-कभी वमन होता है। भूख बढ़ने लगती है।

रोग के अन्य लक्षण—

१. कभी-कभी श्वासावरोध के कारण रोगी की मृत्यु हो जाती है।

२. वेग के समय अत्यधिक कष्ट होने के कारण रोगी बालक अत्यधिक भयग्रस्त हो जाता है और नये वेग का पूर्वाभास होते ही निकट के व्यक्ति या वस्तु का सहारा लेना चाहता है। अथवा अपने घुटनों पर हाथ रखकर झुक जाता है अथवा बिस्तर का तकिया या चारपाई को बल पूर्वक पकड़ लेता है।

३. रोगी बालक में अवरोध युक्त कास, श्वास एवं आक्षेप का कष्ट अधिक होता है।

४. आवेग के समय बार-बार वमन होने के कारण तथा आवेग के भय से भोजन न करने के कारण बालक अत्यधिक दुर्बल तथा क्षीण हो जाता है।

○ द्वितीयावस्था में यह सभी लक्षण मिलते हैं, जो ४-६ सप्ताह तक बने रहते हैं।

○ इसके पश्चात् (लगभग ४-५ सप्ताह के बाद) रोगी की स्थिति में सुधार होने लगता है। रोगी धीरे-धीरे सामान्य स्थिति में आने लगता है तथा भोजन आदि ग्रहण करने लगता है।

○ रोग-मुक्ति के पश्चात् रोगी को पूर्ण रूप से स्वस्थ होने में काफी समय लग जाता है।

○ रोग के अधिक समय तक बने रहने से फुप्फुसकोष्ठ-विस्तृति (एम्फीसीमा) तथा टी० बी० होने का भय रहता है।

याद रखिये—मृदुस्वरूप के रोग में 'हूप' का शब्द प्रायः अनुपस्थित रहता है।

निदान (Diagnosis)—'हूप' की अनुपस्थिति में निदान कठिन हो जाता है। बच्चों के श्वास-संस्थान के अन्य रोगों, जैसे—'ब्रॉन्काइटिस' आदि में भी खाँसी उठती है और काली खाँसी जैसे अन्य लक्षण उपस्थित मिलते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परन्तु 'हूप' प्रारम्भ होने पर ही इस बात का निश्चित निदान हो पाता है कि बच्चे को काली खाँसी है।

लेबोरेटरी परीक्षा—

१. **रक्त-परीक्षा** (Blood examination)—○ टोटल ल्यूकोसाइट काउण्ट—१५,००० से २०,००० प्रति क्यूबिक मिमी० तथा ○ लिम्फोसाइट्स लगभग ६०–८० प्रतिशत।

२. नेजोफैरेञ्जियल स्राव का कल्चर करने में 'H. Pertussis' की उपस्थिति मिलती है।

३. X-Ray Chest में—हिलार ग्लैण्ड्स बढ़े हुए दिखलायी देते हैं।

४. E. S. R. कम रहता है।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—इन्फ्लूएञ्जा, ब्रॉन्काइटिस एवं लैरिंग्स तथा ट्रेकिया में बाह्य पदार्थ (Foreign bodies) की उपस्थिति आदि से इस रोग का भेद करना चाहिए।

उपद्रव (Complications)—

१. **श्वसन-संस्थान के उपद्रव**—न्यूमोनिया, एटीलेक्टेसिस, एम्फीसीमा, ब्रॉन्कीएक्टियेसिस, न्यूमोथोरेक्स।

२. **नाड़ी सम्बन्धी**—कन्वल्सन्स, मेनिञ्जाइटिस, टॉक्सिक इन्सेफेलाइटिस, सेरिब्रल हीमोरेज।

३. **आमाशयान्त्र सम्बन्धी उपद्रव** (Gastro-intestinal complications)—अम्बिलिकल हर्निया, प्रोलैप्स ऑफ रेक्टम, फ़ेनल अलसर, इण्टेराइटिस।

४. **अन्य उपद्रव**—मध्यकर्णशोथ, एक्यूट नेफ्राइटिस, टचुबरकुलोसिस, सबकंजंक्टाइवल हीमोरेज।

नोट—यह प्रायः मध्यकर्णशोथ (Otitis media) एवं कुक्कुरखाँसी से ग्रसित बालकों में अधिक मिलता है। कभी-कभी अंगघात तथा आक्षेप आदि वातसंस्थानगत उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. बच्चा जितना ही छोटा होता है, पूर्वानुमान उतना ही प्रतिकूल होता है; क्योंकि उपद्रव अधिक होते हैं।

२. बड़े बच्चों में आरोग्य-लाभ निश्चित ही होता है, भले ही समय अधिक लग जाये।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी को स्वच्छ एवं हवादार कमरे में रखें। यदि ज्वर न हो तो खुले स्थान में भी परिचर्या हो सकती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. रोगी बालक का आहार मुलायम होना चाहिए। विटामिन 'ए' तथा 'डी' का अतिरिक्त प्रयोग द्वितीयक संक्रमण का प्रतिरोध करने में सहायक होते हैं।

३. रोगी को सान्त्वना आदि देना औषधियों की अपेक्षा अधिक लाभकारी होता है।

४. शीतल वायु इस रोग के कष्ट को तथा उपद्रवों को बढ़ाने में सहायक होती है। रोगी को हलके गरम कपड़े पहनाकर शीत से बचाना चाहिए।

५. छाती पर विक्स, अमृतांजन, घी-कपूर आदि की मालिश आवश्यक है।

६. टिं० बेञ्जोइन की गर्म पानी की बाष्प सुंघाना चाहिए। इससे गले की खुश्की शान्त होती है।

७. गम्भीर तथा कॉम्प्लीकेटिड केसिस में रोगी को 'इन्फेक्शियस डिजीज हॉस्पिटल' में भर्ती करा देना आवश्यक हो जाता है।

८. जब तक टेम्परेचर सबसाइड न हो जाय, रोगी बालक को शय्या पर आराम कराना चाहिए।

९. श्वास सम्बन्धी उपद्रवों में ऑक्सीजन की आवश्यकता पड़ती है।

१०. दिन के समय एक्सपेक्टोरेण्ट (कफ निकालने वाले) तथा रात्रि के समय सेडेटिव्स (Sadatives) देना हितकर होता है।

औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—

१. रोग के प्रारम्भ से ही 'एण्टीबायोटिक' औषधियों के प्रयोग से पर्याप्त लाभ मिलता है। किन्तु १०–१५ दिन बाद सेवन कराने से विशेष लाभ की आशा नहीं की जानी चाहिए।

२. 'एण्टीबायोटिक' औषधियों के प्रयोग से उत्तरकालीन उपद्रवों का प्रतिबंध हो जाता है।

३. व्याधि के जीर्ण हो जाने पर कफशामक औषधियों का सहायक प्रयोग आवश्यक हो जाता है।

४. 'एण्टीबायोटिक' औषधियों के साथ 'कोर्टीकोस्टेराइड्स' का प्रयोग करने से रोग में शीघ्र एवं स्थायी स्वरूप का लाभ होता है।

○ इस रोग की चिकित्सा निम्न क्रम से करनी चाहिए—

१. ℞ इरीथ्रोमाइसिन (Erythromycin) १०० मि० ग्रा०
मात्रा—१ मात्रा दिन में ४ बार १० दिनों तक।
सालबूटामोल लिक्विड (Salbutamol liquid)
मात्रा—१ मि० ग्रा० दिन में ३ बार।
अथवा—टिक्सीलिक्स (Tixylix) सीरप (M. B.)
मात्रा—१ चम्मच दिन में ३ बार गर्म जल से।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—'इरीथ्रोमाइसिन' के दाने शीशी में उपलब्ध होते हैं। १ ग्राम दानों के साथ ५० मि० ली० गरम जल मिलाकर घोल बना लिया जाता है।

मात्रा—१ चम्मच (५ मि० ली०) दिन में ४ बार १० दिन तक।

○ इसके प्रति ५ मि० ली० घोल में १०० मि० ग्रा० औषधि रहती है।

○ व्यापारिक नाम—एल्थ्रोसिन (Althrocin) (एलेम्बिक)।

इरीथ्रोसिन (Erythrocin) (एव्वोट)।

२. ℞ एम्पीसिलीन (Ampicillin)

व्या० नाम—एम्पीलिन सीरप (Ampillin syrup)

मात्रा—१ चम्मच (१२५ मि० ग्रा०) ५ मि० ली० दिन में ४ बार १० दिन तक।

३. ℞ टैरामाइसिन या टेट्रासाइक्लीन लिक्विड

मात्रा—१ वर्ष की आयु तक २५–३० मि० ग्रा०।

५ वर्ष तक ,, ५०–१०० मि० ग्रा०।

तत्पश्चात्—१२५ मि० ग्रा० प्रति ४ घण्टे पर ४ दिन तक।

तत्पश्चात्—१२५ मि० ग्रा० प्रति ४ घण्टे पर ६ दिन तक।

○ आवश्यकता पड़ने पर—५० मि० ग्रा० I/M इञ्जे० रूप में भी देना चाहिए।

नोट—सन्तोषजनक लाभ न मिलने पर—'साइनरमाइसिन' या 'लेडरमाइसिन' का प्रयोग करें।

४. ℞ क्लोरम्फेनिकाल (Chloramphenicol), पामीटेट, स्टेरीएट (Steriate) - इसके १ चम्मच में १२५ मि० ग्रा० औषधि आती है।

मात्रा—१ वर्ष के बच्चे को—½ चम्मच प्रति ४ घण्टे पर ८–१० दिन।

५ वर्ष तक —१ चम्मच प्रति ४ घण्टे पर ८–१० दिन।

तत्पश्चात् अवस्थानुसार—१½ चम्मच प्रति ४ घण्टे पर ८–१० दिन।

नोट—यदि इसके साथ 'टिक्सीलिक्स' का प्रयोग गर्म पानी के साथ किया जाय तो शीघ्र लाभ मिलता है।

○ उपरोक्त किसी एक औषधि के साथ निम्न योग का प्रयोग करने से प्रावेगिक कास में शीघ्र लाभ मिलता है—

℞ इफेड्रीन हाइड्रोक्लोराइड	५ मि० ग्रा०
प्रेडनीसोलोन	१·२५ मि० ग्रा०
सोडियम गार्डीनल	५ मि० ग्रा०
सीलिन	२५ मि० ग्रा०
लैक्टोज	३०० मि० ग्रा०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रति ४ से ६ घण्टे पर २–३ दिन तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ यह मात्रा २ वर्ष के बच्चे की है।

५. ℞ स्ट्रेप्टोमाइसिन (Streptomycin) ०·५ ग्राम मांसपेशीगत दिन में १ बार ५–६ दिन तक।

उपरोक्त एण्टीबायोटिक चिकित्सा के साथ-साथ—

स्टेराइड्स (Steroids) का एक छोटा कोर्स—

प्रेडनीसोलोन (Prednisolone) २ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर २४ घण्टे में ३–४ मात्राओं में विभाजित कर।

नोट—लैरिञ्जाइटिस, लैरिञ्जोट्रेकीयाइटिस अथवा सेरिब्रल ईडिमा की स्थिति में लाभकारी होती है।

कफ लिन्क्टस (Cough linctus) जैसे—फेन्सिडिल (Phensedyl)

मात्रा—१ चम्मच दिन में ३ बार।

सेडेटिव जैसे—ट्राईक्लोफॉस (ट्राइक्लोरिल–Tricloryl) सीरप

मात्रा—२५० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

हाइपर इम्यून कन्वल्सेण्ट सीरम (Hyper immune convulsant s.)

मात्रा—२० मि० ली० इण्ट्रावीनस २–३ दिन के अन्तर पर।

अथवा—गामा ग्लोबुलिन (Gamma globulin)

मात्रा—२½-५ सी० सी० I/M प्रति दूसरे दिन ४ बार तक।

नोट—'एण्टीबायोटिक' औषधियाँ विशेष लाभकर तभी होती हैं, जब वह रोग के आक्रमण के ७ दिनों के अन्दर ही प्रारम्भ कर दी जाती हैं।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

प्रावेगिक कास (Paroxysms cough)

○ सीरप परटूसिस, Spasmopertusol, सीरप कोडीन फॉस आदि कफ शामकयोगों का उपयोग किया जा सकता हैं। निम्न योग का प्रयोग प्रशस्त है—

इफेड्रीन १० मिग्रा० + एविल ½ गोली + सीरप वसाका ३० मि० ली०।

मात्रा—१ चम्मच (५ मि० ली०) दिन में ३ बार।

अथवा—℞ फोल्कोडीन (Pholcodine)

ब्या० नाम—इथनीन (Ethnine)

मात्रा—१ चम्मच (५ मि० ली०) दिन में ३-४ बार। अन्तिम मात्रा सोते समय।

○ एक दिन छोड़ कर—

℞ क्लोफेडियानोल हाइड्रोक्लोराइड (Chlophedianol Hcl.)

ब्या० नाम—डिटीगोन (Ditigon)

मात्रा—१० बूंद दिन में ४ बार तीव्र अवस्था में।

तत्पश्चात्—५ बूंद दिन में ३ बार।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि उपरोक्त औषधि अधिक प्रभावशाली न हो तो—

℞ एट्रोपीन मेथोनाइट्रेट (Atropine methonitrate)
व्या० नाम—माइड्रिण्डोन (Mydrindon)
मात्रा—०·१ मि० ग्रा० दिन में ४ बार रोग की तीव्रावस्था में।
○ लाभ मिलने पर—०·१ मि० ग्रा० दिन में २ बार २-३ सप्ताह तक।
○ उपरोक्त चिकित्सा के साथ ही साथ—
℞ फीनोबार्बीटोन (Phenobarbitone)
मात्रा—१५ मि० ग्रा० नित्य मुख द्वारा।
टिक्सीलिक्स सीरप दिन में ३-४ बार दें।
मात्रा—१ वर्ष तक की आयु में—१ मि० ली०।
१ से ५ वर्ष तक—२ मि० ली०।
६ वर्ष से अधिक—४ मि० ली०।

निद्रा (Sleep)—'ट्राइक्लोरिल सीरप'—½ चम्मच। आवश्यकतानुसार ½ घण्टे बाद दोहराया जा सकता है।

वमन की स्थिति में—लाक्षणिक उपचार से पूर्व ६०० मि० ग्रा० सोडा-बाइकार्ब ४-५ औंस गुनगुने पानी में १ चम्मच ग्लूकोज मिलाकर पिलायें। बड़े बालकों में इसकी दूनी मात्रा। आवश्यकतानुसार दिन में १-२ बार दिया जा सकता है।

○ वमन में निम्न योग का प्रयोग किया जा सकता है—

सीक्विल	२·५ मिग्रा०
क्लोरेटोन	६० मिग्रा०
सोडाबाइकार्ब	१२० मिग्रा०
ग्लूकोज	१०० मिग्रा०
	१ मात्रा

ऐसी एक मात्रा दिन में ३-४ बार भोजन से १ घण्टे पूर्व।

उपद्रवों की चिकित्सा (Treatment of complications)—

१. **ब्रॉन्को-न्यूमोनिया** (Broncho-pneumonia)—इसकी चिकित्सा 'टेट्रासाइक्लीन' द्वारा की जाती है। अथवा—इरीथ्रोमाइसीन, एम्पीसिलीन या अन्य एण्टीबायोटिक का प्रयोग किया जा सकता है।
○ कभी-कभी ऑक्सीजन की आवश्यकता पड़ सकती है।

२. **कन्वल्सन्स** (Convulsions)—

℞ ट्राइक्लोरिल सीरप (Tricloryl syrup)
मात्रा—½ चम्मच दिन में २ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इञ्जे० पैराल्डिहाइड (Inj. Paraldehyde)

मात्रा—१-२ मि० ली० मांसपेशीगत।

३. सब-कञ्जंक्टिवल हीमोरेज (Subconjunctival haemorrhage)—इसकी आवश्यकता नहीं पड़ती है।

अन्य—सायनोसिस की स्थिति में—क्लोरफेनिकाल तथा स्ट्रेप्टोमाइसिन का प्रयोग करें। अथवा पेनिसिलीन १ लाख यूनिट्स प्रति ६ घण्टे पर।

○ मध्यकर्णशोथ की चिकित्सा भी इसी प्रकार से करनी चाहिए।

रोग-मुक्ति के पश्चात् की चिकित्सा—पर्याप्त समय तक मल्टीविटामिन्स विशेषकर फैराडोल, मालवेरोन (Malveron), केपलर्स माल्ट, प्रोलीबो (Prolybo) आदि उचित मात्रा में दें। कॉड लिवर आयल कुछ समय तक दें।

प्रतिषेध (Prevention)—बचाव हेतु D. P. T. का टीका लगाना चाहिए। इसके ३ इञ्जेक्शनों की आवश्यकता पड़ती है।

१. पहला टीका—२ मास की आयु में।

२. दूसरा टीका—३½ मास की आयु में।

३. तीसरा टीका—५ मास की आयु में।

○ इससे बालकों में 'हूपिंग कफ' से बचाव हो जाता है।

नोट—D. P. T. तुरन्त निर्मित की हुई प्रयोग में लानी चाहिए। १ वर्ष से पूर्व बने योग निष्क्रिय हो जाते हैं।

हूपिंग कफ की मिश्रित औषधि-चिकित्सा—

१. ℞	क्लोरम्फेनिकाल पाउडर	२५० मिग्रा०
	विटामिन 'बी' कॉम्प्लेक्स	१०० मिग्रा०
	विटामिन 'सी' पाउडर	१५० मिग्रा०

○ ऐसी १ मात्रा फलों के रस के साथ प्रति ३ घण्टे पर वयस्कों को चटायें।

○ बालकों को ½ मात्रा फलों के रस के साथ प्रति ३ घण्टे पर।

२. ℞	क्लोरोमाइसेटीन (P. D.)	२५० मिग्रा० १ कैपसूल
	आइसोनेक्स फोर्ट (फाइजर)	१ गोली
	वाइसोलान	२ गोली
	सीलिन ५०० मि० ग्रा०	१ गोली
	पिरीटोन कफ सीरप	२ चम्मच
	कॉस्कोपेन (एवन्स)	३ चम्मच

गोलियों को पीस कर कैपसूल की दवा में मिला लें। इसके बाद सीरप में मिलाकर ६ मात्राएँ बना लें। ऐसी १ मात्रा प्रातः-सायं दिन में २ बार वयस्कों को दें। बच्चों को ¼–½ मात्रा दें।

○ यह काली खाँसी का एक विशिष्ट योग है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. ○ कैम्पीसिलीन (कैडिला) २५० मिग्रा०	१ कैपसूल
कैटिलन (हैक्स्ट) २५० मिग्रा०	१ कैपसूल
सीलिन (ग्लैक्सो) ५०० मिग्रा०	१ गोली
ग्लाइकोडीन टर्प वसाका या टिक्सीलिक्स	२ चम्मच
	१ मात्रा

○ गोलियों को पीस कर कै० की दवा में मिला लें। इसके बाद सीरप में मिलाकर ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर चटायें।

○ यह कुक्कुर खाँसी में विशेष लाभकारी है।

४. ℞ बैसिपेन (एलेम्बिक)	१ कैपसूल
बीकोसूल्स (फाइजर)	१ कैपसूल
क्लोरोमाइसेटीन पामीटेट (P. D.)	१० मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार ५-६ दिन तक।	१ मात्रा

अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—जेफरोल (Zephrol) (M. B.), माइस्टेक्लिन-बी (साराभाई)—कैपसूल एवं ड्राप्स के रूप में, विस्कार्डन (Viscarden) (एलेनवरीज), पर्टुसिन (Pertussin), सीरप कैल्सिड्रिन (एब्बोट), कार्डियाजोल डायकोटिड, प्रोटूस्सा (Protussa) (बूट्स)।

नवीनतम (Recent) औषधियाँ—अब कुक्कुर खाँसी की चिकित्सा में लिन्कोमाइसिन (Albiotic : रैनबेक्सी), सेफेलेक्सिन (Cephalexin) (Alcephin : एलेम्बिक) तथा एमोक्सीसिलीन (Amoxylin) (विडल शायर) का प्रयोग विशेष लाभकर होता है।

अनुभूत चिकित्सा-क्रम—

℞ ब्रॉडीसिलीन (एल्केम) २५० मि० ग्रा० में डिस्टिल्ड वाटर १-२ मि० ली० मिला लें। तत्पश्चात् 'बीप्लेक्स' (A. F. D.) १-२ मि० ली० मिला लें। अब दोनों को भलीभाँति मिलाकर नितम्ब के गहरे मांसपेशी में लगायें। इसे दिन में ३-४ बार देना चाहिए।

साथ ही—मिश्रित औषधि चिकित्सा का उपरोक्त क्रमाङ्क ४ वाला योग दें।

अथवा—℞ फेन्सेडिल लिक्टस (M. B.)	१५ मि० ली०
ग्रि-सीरप (Gri-syrup) (ग्रिफान)	१५ मि० ली०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार वयस्कों के लिए।	१ मात्रा

बालकों को उक्त मात्रा का $\frac{1}{3}$–$\frac{1}{2}$ भाग दिन में ३ बार दें। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन्फ्लूएञ्जा
(Influenza)

पर्याय—वातश्लैष्मिक ज्वर, श्लैष्मिक ज्वर, दुष्ट प्रतिश्याय, फ्लू (Flue), इपीडेमिक कटारल फीवर (Epidemic catarrhal fever), ला-ग्रिप (La-grippe)।

परिचय—It is an acute infectious disease characterised clinically by fever disproportionate aches and pains all over the body and symptoms of upper respiratory tract.

○ यह एक तीव्र संक्रामक रोग है, जिसमें प्रतिश्याय, सम्पूर्ण शरीर में दर्द, अत्यधिक अवसाद आदि लक्षणों के साथ ज्वर का आक्रमण होता है। कभी-कभी यह रोग महामारी (Epidemic) का रूप धारण कर अति शीघ्रता के साथ फैल जाता है।

कारण (Etiology)—इसका मुख्य उत्पादक कारण इन्फ्लूएञ्जा वायरस 'ए', 'बी' और 'सी' होता है। जिसमें मुख्यतः इन्फ्लूएञ्जा वायरस 'ए' द्वारा संक्रमण फैलता है। 'बी' और 'सी' का संक्रमण बालकों में होता है।

○ इसके साथ अन्य बैक्टीरिया मुख्यतः 'स्ट्रेप्टोकोकस पायोजेनस' स्टेफिलोकोकस पायोजेनस', एच० इन्फ्लूएञ्जाई, न्यूमोकोकस का भी द्वितीय संक्रमण (Secondary infection) हो जाता है। ये इस रोग के सहायक कारण माने जाते हैं।

ऋतु—इसका संक्रमण प्रायः जाड़ों में अधिक होता है। वैसे वसंत ऋतु में भी होता है।

संक्रमण (Infection)—इसका संक्रमण विशेषरूप से दूषित वस्त्रों तथा वायु से फैलता है। इसका वायरस थूक (Saliva) में उपस्थित रहता है।

○ रोग का आक्रमण प्रायः ऋतु-परिवर्तन के समय होता है। विषाणु एवं जीवाणु का संक्रमण स्वस्थ मनुष्य में रुग्ण व्यक्तियों के नासास्राव, कफ तथा दूषित वायु के द्वारा होता है।

संचय काल—१ से ४ दिन। कभी-कभी कुछ घण्टों से लेकर ३ दिनों तक का होता है।

लक्षण (Symptoms)—रोग का आक्रमण तीव्र वेग से तथा आकस्मिक रूप में जो शीतकम्प, तीव्र शिरःशूल, हाथ-पैरों में पीड़ा के साथ तीव्र ज्वर के

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप में होता है। इसमें तीव्र प्रतिश्याय के समान रक्तवर्ण की आकृति, गला तथा मुख की शुष्कता, नासास्राव आदि लक्षण होते हैं। स्थान-भेद के अनुसार इसके लक्षण निम्न प्रकार के होते हैं—

(१) **तीव्र ज्वरयुक्त आक्रमण**—१. दिन के समय एकाएक शीत कम्प के साथ ज्वर चढ़कर पहले दिन ही १०२ से १०३° फा० (३९–३९·५° सें०) तक पहुँच जाता है।

२. नाड़ी ज्वर के अनुपात में मन्द होती है।

३. ज्वर के साथ रोगी के सारे शरीर में असह्य वेदना होती है।

४. रोग ज्वर के साथ तीव्र सर्वांग वेदना, शिरःशूल, नेत्रों में फटने के समान वेदना आदि लक्षणों के साथ प्रारम्भ होता है।

५. प्यास की अधिकता, कोष्ठबद्धता, श्वसन की तीव्रता, ऑलीगूरिया, नेत्राभिष्यन्द, जीभ का मलावृत होना, श्वास में दुर्गन्ध, नासास्राव तथा नासागत रक्तस्राव आदि लक्षण होते हैं।

६. गले की लस ग्रन्थियाँ बढ़ जाती हैं।

७. जीभ मलावृत होती है और उसकी भूख मारी जाती है।

८. सिर और कमर में अत्यधिक दर्द होता है।

९. ज्वर प्रायः ३ से ६ दिन में दारुणमोक्ष होता है। रोगी का बुखार १ हफ्ते के बाद कम या बिलकुल ही दूर हो जाता है।

१०. ज्वर-मुक्ति के पश्चात् भी रोगी अत्यधिक दुर्बल तथा सर्वांग वेदना से पीड़ित रहता है।

(२) **श्वास-मार्ग सम्बन्धी**—१. उपर्युक्त लक्षणों के साथ ही प्रतिश्याय के लक्षण भी आ जाते हैं।

२. रोगी को सूखी खाँसी आती है, जो अधिक तीव्र होती है। रक्तमिश्रित कफ आता है।

३. शारीरिक वेदना, अवसाद, नासास्राव या नासावरोध, श्वासकृच्छ्रता, छींक की अधिकता आदि लक्षण उपस्थित मिलते हैं।

४. प्रारम्भ में ज्वर तीव्र होता है।

५. खाँसने पर प्रायः थूक नहीं आता है। यदि थोड़ा-बहुत निकलता भी है तो वह गुलाबी, चमकीला तथा अत्यधिक फेनयुक्त होता है।

६. प्रलाप, तीव्र कास तथा न्यूमोनिया के समान पार्श्वशूल होता है।

७. रोग टेंटुए से वायुप्रणाली और उससे आगे फेफड़े में फैल जाता है जिससे न्यूमोनिया, ब्रॉन्को-न्यूमोनिया, पल्मोनरी ईडिमा आदि उपद्रव हो जाते हैं। जिससे ऑक्सीजन का ग्रहण भलीभाँति नहीं हो पाता है और रोगी अत्यधिक बेचैन हो जाता है। उसके होंठ नीले पड़ जाते हैं। यह सभी प्राणघातक लक्षण हैं। यह प्रायः महामारी के रूप में फैलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ यह लक्षण प्रायः तीसरे दिन व्यक्त होते हैं।

(३) **आन्त्रिक सम्बन्धी**—१. ज्वर का अकस्मात् आक्रमण मितली, वमन, अरुचि, भूख की कमी, उदरशूल, अतिसार आदि लक्षणों के साथ होता है।

२. अतिसार के साथ पीड़ा की अनुभूति होती है। कभी-कभी कामला भी हो जाता है।

३. ज्वर १०२–१०३° फा० या इससे अधिक होता है।

४. ये सभी लक्षण प्रायः ५-७ दिनों तक रहकर शान्त हो जाते हैं।

नोट—कभी-कभी ये लक्षण अधिक दिन तक चलते रहते हैं। ऐसी स्थिति में आन्त्रिक ज्वर का संदेह हो जाता है।

(४) **वातिक सम्बन्धी**—तीव्र आकस्मिक ज्वर, शिरःशूल, सर्वांग वेदना, नाड़ीशूल, नींद का न आना, प्रलाप, मूर्च्छा आदि लक्षणों के साथ इसका प्रारम्भ होता है।

○ कभी-कभी त्वचा पर विस्फोट तथा चकत्ते भी निकल आते हैं।

इन्फ्लूएञ्जा के प्रधान लक्षण—१. अत्यधिक बेचैनी एवं अवसाद सभी में रहते हैं। केवल स्थानीय विशेषताएँ अधिक हो जाती हैं।

२. इस रोग में मृदु प्रतिश्याय से लेकर तीव्र भयानक लक्षण तक मिलते हैं।

३. प्रारम्भ में तेज सर्दी एवं कँपकँपी के साथ तीव्र ज्वर आता है जो कुछ समय में ही (एक या दो दिन में) १०४–१०५° फा० तक पहुँच जाता है।

४. तीव्र शिरःशूल तथा सर्वांग वेदना। प्रतिश्याय के लक्षण उपस्थित रहते हैं। रोगी की कमर में पीड़ा होती है।

५. रोगी शीघ्र ही बेचैन तथा दुर्बल हो जाता है।

६. प्रायः सभी रोगियों में दुर्बलता, अरुचि, मितली तथा वमन के लक्षण मिलते हैं।

७. कुछ केसिस में इन लक्षणों के पश्चात् गले में दुखन (Sore throat), शुष्क कास तथा हलके कंजंक्टिवाइटिस (आँख आना) के लक्षण मिलते हैं। नेजल कंजेशन कभी मिलता है तो कभी नहीं भी मिलता।

८. त्वचा लाल तथा शुष्क रहती है। आँखें लाल तथा पीड़ायुक्त होती हैं।

९. जीभ मलावृत रहती है तथा रोगी की भूख मारी जाती है।

१०. ○ दुर्बलता इसका प्रधान लक्षण होता है।

११. हृदय पर विषैला प्रभाव पड़ने से उसमें शैथिल्य (Dilatation) हो जाता है, जिससे रोगी को उठा-बैठा नहीं जाता है। रोगी बिस्तरे पर शान्तिपूर्वक लेटा रहता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१२. स्टर्नम के पीछे दाहयुक्त वेदना, गलशोथ तथा नासाशोथ के लक्षण मिलते हैं।

१३. प्रथम सप्ताह के अन्त से ही रोग अधिक बढ़े तो इसका प्रभाव फेफड़े, आमाशय अथवा स्नायुमण्डल—इनमें से किसी पर पड़ता है। तत्पश्चात् न्यूमोनिया, ब्रॉन्काइटिस, ब्रॉन्को-न्यूमोनिया, प्लूरिसी तथा कर्णमूलप्रदाह आदि अनेक प्रकार के उपसर्ग होने लगते हैं।

१४. ज्वर ४ से १० दिनों तक रहकर तेजी के साथ उतरता है। अन्य जीवाणुओं के संक्रमण से ज्वर अधिक दिनों तक बना रहता है।

१५. अधिक समय तक रोग के रहने पर रक्त में श्वेतकण (W. B. C.) कम हो जाते हैं।

१६. सामान्य रूप से १ सप्ताह के बाद कम या बिलकुल दूर हो जाते हैं।

नोट—साधारणतया इस रोग का सामान्य आक्रमण कफ, ज्वर अथवा प्रतिश्याय के समान होता है। परन्तु अधिक कष्टदायक तथा शक्तिनाशक होता है।

संक्षेप में—ज्वर का आकस्मिक आक्रमण, तीव्र शिरःशूल, सर्वांग वेदना, छींक, कास, नासास्राव, गलशोथ, स्वरयंत्रशोथ, श्वासकष्ट, अत्यधिक दुर्बलता तथा तीव्र प्रतिश्याय के समान लक्षणों की उपस्थिति इस रोग की विशेषता होती है।

निदान (Diagnosis)—

१. रोगी की परीक्षा करने पर उसका तापक्रम ऊँचा रहता है।

२. नाड़ी की गति तापक्रम की अपेक्षा कुछ मन्द रहती है।

३. जिह्वा मलावृत्त रहती है।

४. नेत्र रक्तवर्ण के दीखते हैं।

५. नासा, गला तथा तालु रक्तवर्ण के तथा शुष्क होते हैं।

६. चेहरा कुछ-कुछ रक्तवर्ण का मिलता है।

७. रोगी में खुश्क कास होती है।

८. त्वचा स्पर्श में शुष्क होती है।

९. ज्वर प्रायः चौथे या पाँचवें दिन उतर जाता है। किन्तु दुर्बलता एक सप्ताह तक बनी रहती है।

नोट—वैसे इस रोग की पहिचान कठिन है, पर तेज बुखार, सिरदर्द, बेचैनी, खाँसी, प्रतिश्याय, छाती में दर्द, दुर्बलता आदि लक्षणों से इसे पहचाना जा सकता है।

विशेष अन्वेषण (Special investigation)—

रक्त-परीक्षा—ल्यूकोसाइट्स काउण्ट सामान्य (Normal) अथवा नीचा (Low) होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—तीव्र प्रतिश्याय, न्यूमोनिया, आन्त्रिक ज्वर, मेनिञ्जाइटिस, घातक मलेरिया (Malignant malaria), एपेण्डिसाइटिस आदि रोगों से इसका भेद करना चाहिए।

उपद्रव (Complications)—इस रोग में—न्यूमोनिया, ब्रॉन्को-न्यूमोनिया, मेनिञ्जाइटिस, प्लूरिसी, टी० बी०, मायोकार्डाइटिस, गैस्ट्राइटिस, इन्सेफेलोमाइलाइटिस, शीघ्रहृदयता, पक्षाघात, उरुस्तम्भ, मध्यकर्णशोथ, सन्धिशोथ, अवसाद, हृत्शूल, श्वासकृच्छ्रता, ट्रेकिए-ब्रॉन्काइटिस आदि उपद्रवों की सम्भावना रहती है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी को स्वतन्त्र तथा साफ-सुथरे हवादार कमरे में रखना चाहिए।

२. रोगी को गरम कपड़े पहनाना चाहिए।

३. जब तक रोगी का ज्वर न उतर जाये और उसके बाद भी २ दिन तक शय्या पर आराम से लिटाकर रखें।

४. रोगी के कमरे में धूम्र-रहित अँगीठी रखनी चाहिए। इसके लिए लोबान का धुआँ उत्तम रहता है।

५. दिन में १ या २ बार गुनगुने पानी से तौलिया भिगोकर शरीर पोछें। पीने के लिए गुनगुना जल दें।

६. श्वासकृच्छ्रता की अवस्था में ऑक्सीजन का प्रयोग करें।

७. रक्तमिश्रित विष को कम करने के लिए दिन में ३ लीटर जल पिलाना आवश्यक है। दिन में कई बार जल में १००–१५० ग्राम तक ग्लूकोज मिलाकर पिलाना चाहिए।

८. मलबन्ध को दूर करने के लिए मृदु विरेचन दें।

९. भोजन के रूप में २-३ दिन ग्लूकोजयुक्त जल, फल का रस, बार्ली पानी, सादी चाय आदि द्रव रूप में ३ लीटर तक की मात्रा में दें।

१०. गर्म पानी में टिं० बेञ्जोइन डालकर सुँघायें।

११. इस रोग में शारीरिक क्षीणता अधिक होती है। अतः रोगी को उपवास नहीं कराना चाहिए। आरम्भ से ही रोगी का बल बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए।

(२) औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—

इन्फ्लूएञ्जा की चिकित्सा मुख्यतः तीन उद्देश्यों से की जाती है—

१. रोग की विशिष्ट चिकित्सा।

२. लाक्षणिक चिकित्सा।

३. द्वितीयक संक्रमण (Secondary infection) की चिकित्सा।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) रोग की विशिष्ट चिकित्सा—

१. ℞ एमाण्टेडिन हाइड्रोक्लोराइड (Amantadine Hcl.)

व्या० नाम—एमाण्ट्रेल (Amantrel) (सिपला)

(i) बचाव हेतु (Prophylaxis) मात्रा—

इन्फ्लूएञ्जा A_2–वयस्क—१ कै० (१०० मि० ग्रा०) दिन में ४ बार १० दिन तक।

बालक—१–९ वर्ष की आयु में—४-९ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर प्रतिदिन अधिक से अधिक १५० मि० ग्रा०।

(ii) चिकित्सा हेतु मात्रा—१००–३०० मि० ग्रा० प्रतिदिन।

नोट—○ यह एक नवीनतम औषधि है, जो 'इन्फ्लूएञ्जा वायरस' पर अधिक प्रभावशाली सिद्ध हुई है। इसका प्रयोग विदेशों बड़ी जोरों के साथ हो रहा है।

अथवा—℞ रिमेण्टाडीन (Remantadine) २०० मि० ग्रा० प्रतिदिन मुख द्वारा इन्फ्लूएञ्जा A में।

२. एण्टीबायोटिक औषधियों का प्रयोग प्रारम्भ से ही आवश्यक मात्रा में करें।

३. ५% ग्लूकोज सैलाइन १-२ पाइण्ट की मात्रा में I/V द्वारा प्रति १२ घण्टे पर।

○ इससे रक्त स्थित विष कम होता है।

४. फिनोल्फ्थेलिन १२० मि० ग्रा०+केलोमल १२० मि० ग्रा०।

ऐसी १ मात्रा देने से आँतों की क्रिया सुचारु रूप में कार्य करती है और मलबन्ध दूर होता है।

(२) लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

(i) **वेदना (Aches and pains)—**

℞ एस्प्रिन	२४० मिग्रा०
फेनासेटीन,	२४० मिग्रा०
कोडीन फॉस्फेट	९ मिग्रा०
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार जल से।

अथवा—सेरीडोन (Seridon) (रोशे)

मात्रा—१ गोली प्रति ६ घण्टे पर।

○ इसके साथ सीलिन ५०० मिग्रा० की १ गोली देते रहने से विशेष लाभ मिलता है।

अथवा—एसीटिल सेलीसिलिक एसिड

मात्रा—३०० मि० ग्रा० दिन में ४ बार दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—जो व्यक्ति एसीटिल सेली० एसिड के प्रति सेन्सिटिव हों, उन्हें 'पैरासिटामोल' (क्रोसिन Crocin) ५०० मि० ग्रा० दिन में ४–६ बार दें।

अथवा— ℞	प्रेडनीसोलोन	½ मिग्रा०
	कोडीन फॉस	१५ मिग्रा०
	सिबाल्जिन	१ गोली
	यीस्ट	१ गोली
	ऐसी १ मात्रा प्रति ६ घण्टे पर जल के साथ।	१ मात्रा

○ इससे सर्वांग वेदना तथा शूल की शान्ति होकर रोगी को निद्रा आ जाती है।

तीव्र ज्वर की स्थिति में सर्वांग वेदना तथा नासास्राव में—

	℞ फेनासेटीन	१२० मिग्रा०
	एमीडोपायरिन	१२० मिग्रा०
	सीलिन	१०० मिग्रा०
	ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार गर्म जल से।	१ मात्रा

अथवा—नोवाल्जिन, इस्जीपायरीन (Esgipyrine), डेकापायरीन आदि में से किसी का प्रयोग किया जा सकता है।

(ii) **खाँसी** (Cough)—

℞ जीट (Zeet) अथवा बेनाड्रिल एक्स्पेक्टोरेण्ट

मात्रा—१–२ चम्मच दिन में ४ या ५ बार।

अथवा—	टिं० कैम्फर को०	३० मिनिम
	कोड्रीन	२० मिग्रा०
	सीरप टोलू	१ ड्राम
	जल	३० मिली०
	ऐसी १ मात्रा दिन में २–३ बार।	१ मात्रा

यदि कफ अधिक निकलता हो तो—पोटाश बाइकार्ब ९०० मि० ग्रा० १ औंस कैम्फर वाटर में मिलाकर ३ बार पिलायें।

खाँसी में लाभ न मिलने पर—

१. टिं० बेन्जोइन कं० का गर्म जल में वाष्प (Inhalation) दें।

२. मेथाडोन (Methadone)

व्या० नाम—फाइसेप्टोन लिंक्टस (Physeptone linctus)

मात्रा—१ चम्मच दिन में ३-४ बार।

(iii) **अनिद्रा**— ℞ लिब्रियम (Librium) अथवा कॉम्पोज (Calampose)

मात्रा—५ मि० ग्रा० की १ गोली रात में सोते समय।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि शुष्क खाँसी के कारण नींद न आ रही हो तो—

℞ पोटैशियम ब्रोमाइड	६०० मिग्रा०
सीरप क्लोरलहाइड्रेट	१ ड्राम
ब्रोमोफार्म	१० मिनिम
एक्स्ट्रेक्ट ग्लिसराइजा लि०	१ ड्राम
एक्वा	३० मिली०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा रात में सोते समय। अत्यधिक बेचैनी में इसे दिन में २ बार दें।

अथवा—ल्यूमीनोल, एमाइटल (Amytal), डायल, सोनेरिल, मेडोमीन (Medomine) आदि में से किसी एक का उपयोग किया जा सकता है।

(iv) **द्वितीयक संक्रमण** (Secondary infection)—संक्रमण के बचाव हेतु रोग की विशिष्ट चिकित्सा के साथ इसका प्रयोग प्रारम्भ से ही करना चाहिए—

℞ एम्पीसिलीन (Ampicilline)

व्या० नाम—एल्बर्सिलीन (Alburcillin), एम्पीलिन, एम्पीलोक्स, केम्पीसिलीन, सीमोक्सिन, ब्रोआसिल (Broacil), रोसिलीन (Roscillin), सिडोमेक्स आदि में से कोई एक।

अथवा—पेनब्रीटिन (Penbritin)

मात्रा—१ कैपसूल (२५० मि० ग्रा०) दिन में ३ बार।

अथवा—बेञ्जाइल पेनिसिलीन (Benzyl penicillin)

मात्रा—५००,००० यूनिट्स I/M दिन में २ बार।

यदि न्यूमोकोकल इन्फेक्शन हो तो—

℞ बेञ्जाइल पेनिसिलीन (Benzyl penicillin)

मात्रा—१ मैगा यूनिट दिन में ३ बार I/M इञ्जेक्शन रूप में।

नोट—द्वितीयक संक्रमण के बचाव हेतु प्रारम्भ से ही स्ट्रेप्टोमाइसिन १ ग्राम + पेनिसिलीन (Inj. D. C., Inj. Procillin) का इञ्जे० दिन में २ बार ३ दिन तक। तत्पश्चात् दिन में १ बार देने से ज्वर उतर जाता है।

अथवा—इञ्जे० मेथीसिलीन (Inj. Methicillin)

मात्रा—१ ग्राम दिन में ३ बार।

अथवा—इरीथ्रोमाइसिन (Erythromycin) १ ग्राम दिन में ४ बार।

अथवा—क्लोरोमाइसिटीन (Chloromycetin) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल दिन में ४ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपद्रवों की चिकित्सा (Treatment of complications)—

१. श्यावता (Cyanosis) की स्थिति में—

(i) टेट्रासाइक्लीन—टेरामाइसिन आदि एण्टीबायोटिक का प्रयोग जारी रखें।

(ii) साथ ही एट्रोपीन सल्फेट तथा ऑक्सीजन सुँघायें।

○ ऑक्सीजन ४-६ लिटर प्रति मिनट के हिसाब से सुँघाना चाहिए।

२. कार्डियक फेल्योर (Cardiac failure)—

५% डेक्स्ट्रोज I/V ड्रिप से दें। कुछ अन्तर देकर आइसोटोनिक ग्लूकोज सैलाइन देना प्रारम्भ कर दें।

हाइड्रोकार्टीसोन सोडियम सक्सीनेट (Hydro. sodium succinate)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० I/V दें।

अथवा—कोरामीन (Coramine)–१-२ मि० ली० S/C दें।

मेफेण्टरमाइन सल्फेट (Mephentermyne sulphate)

मात्रा—१ मि० ली० I/M प्रति २-३ घण्टे पर।

यदि उपरोक्त चिकित्सा असफल हो जाये तो—नॉर-एड्रीनलीन ड्रिप देना प्रारम्भ कर दें।

३. रोग से उत्पन्न दुर्बलता में—

हाइड्रो-कार्टीसोन हेमी सक्सीनेट २ मि० ली० जल में, १०० मि० ग्रा० की मात्रा में इण्ट्रावीनस मार्ग से दें।

साथ ही—कार्टीसोन एसीटेट (Cortisone acetate) १०० मि० ग्रा० मांसपेशीगत प्रति ४ घण्टे पर; तत्पश्चात् ६-६ घण्टे पर।

इन्फ्लूएञ्जा का तीव्र आक्रमण होने पर—

१. एमाण्ट्रेल (सिपला) १ कै० दिन में २ बार १० दिन तक।

२. ५% डेक्स्ट्रोज सैलाइन I/V.

३. टेट्रासाइक्लीन—२५० मि० ग्रा० ४–६ घण्टे के अन्तर पर ३–४ दिन तक।

४. प्रेडनीसोलोन—५ मि० ग्रा० ४–६ घण्टे पर ३–४ दिन तक।

५. इस्जीपायरिन	१ गोली
एल्कोसिन	१ गोली
एविल	½ गोली
सीलिन	२०० मिग्रा०
पल्व ग्लिसराइजा	१८०० मिग्रा०।
	१ मात्रा।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार ६–७ घण्टे के अन्तर पर गर्म जल से।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. डोरीडेन (Doriden) या मेडोमिन (Medomin)

मात्रा—१ गोली रात में सोते समय ।

नोट—उपरोक्त चिकित्सा ५–६ दिन करने से पूर्ण लाभ मिलने के पश्चात् दुर्बलता को दूर करने के लिए 'टॉनिक्स' का प्रयोग करना चाहिए ।

टॉनिक्स (Tonics) के लिए—ईस्टर्न सिरप, सिरप मिनाडेक्स, फेरी-लेक्स, बिटोमिन (Betonin) आदि बलकारक पोषक लौह एवं विटामिन्स युक्त औषधियों का सेवन प्रारम्भ कराना चाहिए ।

साथ ही—कैल्सी ऑस्टेलिन (Calci-ostelin)	१ मिली०
विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स	१ मिली०
क्रूड लिवर एक्स्ट्रेक्ट	१ मिली०
इन्हें मिलाकर I/M सप्ताह में ३ बार ।	१ मात्रा

○ कोर्स—१० इञ्जेक्शनों का पूरा कोर्स होता है ।

○ इससे इन्फ्लूएञ्जा से उत्पन्न दुर्बलता तथा असहनशीलता आदि का शमन होता है ।

रोग से बचाव (Prophylaxis)—

१. पोलीवेलेण्ट इन्फ्लूएञ्जा वैक्सीन—इसमें ८०% केसिस का बचाव हो जाता है ।

मात्रा—०·२ मि० ली० इण्ट्राडर्मली । १० से १४ दिन बाद दुहराते हैं ।

अर्थात् रोग-संक्रमण के समय (Epidemic time) १ मि० ली० की मात्रा में १ या २ बार त्वचा में लेने से १ सप्ताह तक इस रोग के विपरीत एण्टीबॉडीज रक्त के अन्दर उत्पन्न हो जाते हैं ।

२. एण्टी-वायरल एजेण्ट्स (Anti-viral agents)—

एमेण्टाड़िन हाइड्रोक्लोराइड (Amantadine Hcl.)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० दिन में २ बार ।

अथवा—आइसोक्विनोलोन्स (Isoquinolones) का प्रयोग करें ।

इन्फ्लूएञ्जा में प्रयुक्त अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. **टेबलेट**—एण्टी-फ्लू (स्टैण्डर्ड फार्मा), फ्लू-फो (Flu-Foe) (U. D. S. Co.), फ्लूकिल (Flukil) (कलकत्ता केमिकल्स), फ्लूइन (Fluen) (अमाबा कं०), कोड्राल (वरोज-वेल्कम), कोसाबिल (हैक्स्ट), नियो फ्रेविन, फिनास्कोडीन, रेफागोन, वेगानिन, माइक्रोपाइरिन (शेरिंग कं०), एस्पाल्जिन आदि ।

२. **सिरप**—सिरोलिन, क्लोरम्फाइसीन ड्राई सीरप (वोहरिंगर नाल) ।

(i) खाँसी के लिए—सोवेण्टोल एक्सपेक्टोरेण्ट्स, प्रियाटोन कफ सीरप, चेस्टोन एवं फेन्सेडिल ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ii) बाद की निर्बलता में—विटमोल कम्पाउण्ड (मर्क शार्प सण्ड डोम)।

३. **इञ्जेक्शन**—इञ्जे० इस्जिपायरिन, एस० यू० बी० ३६, ओम्नासिलीन, ओम्नामाइसिन, कॉम्बायोटिक, प्रोसीलिन (हिन्दुस्तान एटीबायोटिक), पोलीडीन, पल्मोट्रान, नोवाल्जिन, कोल्ड वैक्सीन (ग्लैक्सो)।

मिश्रित चिकित्सा (Combination therapy)—

१. सेरीडोन (रोशे)	१ गोली
सीलिन ५०० मिग्रा०	१ गोली
ऐसी १ मात्रा प्रति ६ घण्टे पर।	१ मात्रा

○ अंगों की टूटन, तेजदर्द तथा प्रतिश्याय रूपी लक्षणों में लाभकारी।

२. फेनासिटीन	१५० मिग्रा०
एमीडोपाइरीन	१२० मिग्रा०
कैफीन	३० मिग्रा०
बार्बीटीन	३० मिग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।	१ मात्रा

○ **बचाव हेतु**—

१. इन्फ्लूएञ्जा वैक्सीन (बंगाल इम्युनिटी)—½–१ मि० ली० S/C प्रति सप्ताह।

२. कोल्ड डिजाल्वड वैक्सीन (ग्लैक्सो)—५ मि० ली० S/C कुल ४ इञ्जेक्शन। □

संक्रामक रोग 7/10

मलेरिया
(Malaria)

पर्याय—शीतज्वर, जूड़ीताप, मौसमी बुखार, विषम ज्वर तथा कहीं-कहीं इसे तिजारी भी कहते हैं।

परिचय—Malaria is an acute and chronic infection characterized by fever, anaemia, splenomegaly and often serious or fetal complications and caused by the protozoa of the genous plasmodium.

○ मलेरिया एक तीव्र स्वरूप का तथा दीर्घकालिक संक्रामक ज्वर है। जिसमें सर्वप्रथम समूचे वदन में कँपकँपी, सिर-दर्द, वमन, फिर जाड़ा लगकर

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तेजी से बुखार आना, समस्त शरीर में दर्द, थोड़ी देर पश्चात् पसीना देकर ज्वर का उतर जाना, कभी ज्वर का घटना और कभी बढ़ना तथा कभी प्यास लगना आदि लक्षण मिलते हैं। यह पहले, दूसरे, तीसरे और चौथे दिन का अन्तर देकर आता है। यह बारी-बारी से आनेवाला ज्वर है, जो मच्छरों के काटने से होता है। इसमें शीतपूर्वक ज्वर चढ़ता है और कुछ ही घण्टे रह कर प्रायः पसीना आकर उतर जाता है। कभी-कभी ज्वर आने के बाद प्लीहा-वृद्धि और रक्त-न्यूनता हो जाती है।

कारण—इस ज्वर को उत्पन्न करने वाला एक परजीवी (Parasite) होता है, जिसे प्लाज्मोडियम (Plasmodium) कहते हैं। यह एक कोशीय जीवाणु होता है। इसकी निम्न ४ जातियाँ होती हैं—

१. प्लाज्मोडियम बाइवेक्स (Plasmodium vivex)।
२. प्लाज्मोडियम फैल्सिपेरम (Plasmodium falciparum)।
३. प्लाज्मोडियम मलेरी (Plasmodium malarie)।
४. प्लाज्मोडियम ओवेल (Plasmodium ovale)।

मलेरिया उत्पन्न करने वाले उपरोक्त परजीवी जीवाणु 'एनोफिलीज' नामक मादा मच्छर की लार-ग्रन्थियों (Salivary glands) में रहते हैं। जब यह मादा किसी स्वस्थ व्यक्ति को काटती है तो यह परजीवी उस व्यक्ति के रक्त में चले जाते हैं और वहाँ से यह पहले रक्त में पहुँचते हैं। यहाँ पर इनमें कुछ परिवर्तन होते हैं। इस समय यह यकृत् को छोड़ कर परिवर्तित रूप में पुनः रक्त-प्रवाह में आ जाते हैं और इस बार रक्त की लाल रक्तकोशिकाओं (R. B. C.) में प्रवेश कर जाते हैं। इन कोशिकाओं में रहकर इनमें पुनः परिवर्तन होते हैं।

○ प्लाज्मोडियम वाइवेक्स और प्लाज्मोडियम ओवेल ४८ से ७२ घण्टे तक R. B. C. के अन्दर रहता है।

○ प्लाज्मोडियम फैल्सिपैरम ४८ घण्टे और प्लाज्मोडियम मलेरी ७२ घण्टे तक R. B. C. को अपना निवास-स्थान बनाये रखते हैं।

इस समय तक रोगी में कोई लक्षण उत्पन्न नहीं होते हैं। विभिन्न परजीवी उपरोक्त अवधि के पश्चात् लाल रक्तकोशिकाओं (R. B. C.) को फाड़ कर बाहर निकल आते हैं। R. B. C. के फटने से एक प्रकार का विष मुक्त होकर रक्त-प्रवाह में आ मिलता है। जिसके कारण रोगी में ज्वर प्रारम्भ हो जाता है।

परजीवी पुनः लाल रक्तकोशिकाओं (R. B. C.) मे घुस जाते हैं और एक विशेष अवधि तक रह कर उसको फाड़ कर पुनः बाहर निकलते हैं, जिससे रोगी को पुनः बुखार आने लगता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ विभिन्न परजीवी के लाल रक्तकोशिकाओं में निवास करने की अवधि में भिन्नता होने के कारण ही ज्वर के आक्रमण काल की अवधि में भी अन्तर हुआ करता है।

○ जब परिपक्व परजीवी लालकणों को विदीर्ण कर बाहर आते हैं, तब शीत आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। जैसा कि ऊपर बतलाया गया है कि परिपक्व होकर बाहर आने का काल प्रत्येक परजीवी में भिन्न-भिन्न होने के कारण ज्वर का आक्रमण भिन्न-भिन्न समय पर होता रहता है। इसी ज्वर काल के अनुसार मलेरिया के तृतीयक आदि भेद किये जाते हैं।

प्रकार—परजीवी के उपरोक्त चार प्रकारों के अनुसार मलेरिया भी निम्न चार प्रकार का होता है—

(१) सुदम्य तृतीयक मलेरिया (Benign tertian malaria)—

○ इस प्रकार का मलेरिया प्लाज्मोडियम वाइवेक्स नामक परजीवी द्वारा उत्पन्न होता है। यह प्रकार सबसे अधिक मिलता है। इसमें ज्वर का अन्तराल ४८ घण्टे का होता है।

○ इस प्रकार तृतीयक के जीवाणुओं का उपसर्ग होने पर तीसरे दिन ज्वर का आक्रमण होता है। इस प्रकार इसे तृतीयक, तिजारी या अन्तरा अथवा अतरिया (Tertian) कहते हैं। यह एक दिन छोड़कर आता है।

○ इस प्रकार के ज्वर में उष्णता अधिक होती है और ४ घण्टे में इसका वेग अधिक हो जाता है। कभी-कभी यह ज्वर दिन में २ बार (प्रातः-सायं) आने लगता है। दूसरे दिन ज्वर बिलकुल न आकर पुनः तीसरे दिन २ बार आ जाता है। इसे 'डुप्लीकेटिड टरशियन फीवर' भी कहते हैं।

○ इसका परजीवी मनुष्य शरीर में अपना जीवन-चक्र ४८ घण्टे में पूरा करता है। अतः प्रति तीसरे दिन ज्वर आता है और लगातार ३६ घण्टे तक चढ़ा रहता है।

○ ज्वर प्रथम दिन के प्रथम १२ घण्टे नहीं होता है और उसी दिन के शेष १२ घण्टे तथा दूसरे दिन पूरे २४ घण्टे चढ़ा रहता है।

(२) दुर्दम तृतीयक मलेरिया (Subtertian malaria)—

१. सुदम्य तृतीयक मलेरिया के बाद मिलने वाला यह सर्वाधिक प्रकार है। यह 'प्लाज्मोडियन फैल्सिपेरम' के द्वारा उत्पन्न होता है।

२. इस प्रकार के मलेरिया में ज्वर का आक्रमण २४ से ४८ घण्टे के बाद हुआ करता है।

३. इसमें सुदम्य तृतीयक मलेरिया के साधारण लक्षण तीव्र होते हैं।

४. अधिक रक्तनाश के कारण पाण्डु आदि कामला तीव्र रूप में उपस्थित होते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. इस प्रकार के मलेरिया का ज्वर यदा-कदा घातक रूप धारण कर लेता है। इसके जीवाणु कुछ समय के पश्चात् सामूहिक रूप में एकत्रित हो जाते हैं और वहाँ एक गाँठ-सी बन जाती है, जो रक्त-प्रवाह में भ्रमण करते हुए किसी अंग विशेष की सूक्ष्म धमनी अथवा रक्तकेशिका में आकर रुक जाती है, जिससे रक्त का मार्ग बन्द हो जाता है। इसमें रोगी की मृत्यु तक हो जाती है। जिस अंग की रक्तवाहिनी में रुकावट होती है, लक्षण उसी के अनुसार होते हैं।

६. कभी-कभी पहले अनेक बार मलेरिया के आक्रमण आ चुकने के बाद एक दिन अकस्मात् निम्नलिखित में से कोई एक लक्षण उपद्रवरूप में उत्पन्न हो जाता है—

(i) **नर्वस सम्बन्धी लक्षण**—रोगी में मूर्च्छा, संन्यास, पक्षाघात आदि लक्षण अकस्मात् उत्पन्न हो जाते हैं। ज्वर अति तीव्र होता है।

(ii) **शीतकाय अवस्था**—रोगी का शरीर अकस्मात् ठंडा पड़ जाता है। उसे ठंडा पसीना आता है, नाड़ी की गति तीव्र और दुर्बल हो जाती है तथा ब्लड-प्रेशर कम हो जाता है। यद्यपि बाहर से शरीर ठंडा प्रतीत होता है, किन्तु अन्दर का ताप १०३-१०५° फा० होता है।

○ कभी-कभी वमन, अतिसार तथा उदरशूल भी उपस्थित होते हैं।

(iii) **हृदयरोग सम्बन्धी**—रोगी में बेचैनी, हृदय-धड़कन तथा श्वास चढ़ा हुआ मिलता है। कभी-कभी हृदयावसाद के लक्षण उपस्थित होकर रोगी की मृत्यु हो जाती है। इसका निदान रक्त-परीक्षा से हो जाता है।

(iv) **उदररोग सम्बन्धी**—उदर-शूल, अतिसार, प्रवाहिका, वमन आदि लक्षण उपरोक्त कारणों से रक्त-संचार के बन्द होने से उत्पन्न हो जाते हैं। ऐसी अवस्था में 'कालरा' तथा प्रवाहिका का सन्देह हो जाता है।

(v) **रक्तस्राव**—नाक, मुख, गुदा, मूत्र या योनिमार्ग से रक्त आने लगता है। कभी-कभी त्वचा के नीचे भी रक्तस्राव हो जाता है। इसका निदान केवल रक्त परीक्षा से ही होता है।

(vii) मूत्र में अल्बुमिन तथा रक्त आने लगता है।

(viii) न्यूमोनिया सदृश्य लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

(३) **चतुर्थक मलेरिया (Quartan malaria)**—

इस प्रकार का मलेरिया 'प्लाज्मोडियम मलेरी' नामक परजीवी से उत्पन्न होता है। इस ज्वर का चक्र ७२ घण्टे के अन्तराल पर मिलता है। इस प्रकार का मलेरिया अपेक्षाकृत बहुत कम देखने को मिलता है। इस प्रकार का ज्वर बीच-बीच में २ दिन छोड़कर चौथे दिन उत्पन्न होता है। इसलिए इस ज्वर को चतुर्थक ज्वर (Quartan fever) कहते हैं। यह मध्य के २ दिन विश्राम लेकर आता है। कभी-कभी यह प्राणघातक भी हो जाता है। यह पहले और चौथे दिन आता है और बीच के २ दिनों में ज्वर नहीं होता।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४) ओवेल तृतीयक मलेरिया (Ovale tertian malaria)—

इस प्रकार के मलेरिया की उत्पत्ति 'प्लाज्मोडियम ओवेल' के द्वारा होती है। इस प्रकार का मलेरिया बहुत कम देखने को मिलता है। यह केवल कुछ ही प्रदेशों में मिलता है।

आक्रमण के अनुसार मलेरिया के निम्न भेद किये जाते हैं—

१. सन्तत ज्वर (Remittent fever)।
२. सतत ज्वर (Double quotidian fever)।
३. अन्येद्युष्क ज्वर (Quotidian fever)।
४. तृतीयक ज्वर (Tertian fever)।
५. चतुर्थक ज्वर (Quartan fever)।

मलेरिया ज्वर की अवस्थाएँ—प्रत्येक प्रकार के मलेरिया ज्वर की ३ अवस्थाएँ होती हैं। इन अवस्थाओं की तीव्रता तथा इनका काल प्रत्येक मलेरिया ज्वर में प्रकारानुसार भिन्न-भिन्न होता है—

१. शीतावस्था (Cold stage)।
२. ऊष्मावस्था (Hot stage)।
३. प्रस्वेदावस्था (Sweating stage)।

(१) शीतावस्था (Cold stage)—ज्वर चढ़ने से कुछ काल पहले रोगी को शिरःशूल, शरीर में पीड़ा तथा उत्क्लेश आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। तत्पश्चात् अकस्मात् शीत लगकर ज्वर चढ़ता है। इसमें रोगी में निम्न लक्षण मिलते हैं—

१. रोगी को अत्यन्त शीत लगती है।

○ जाड़ा लगना इसका प्रधान लक्षण होता है, जिससे वह काँपने लगता है। यहाँ तक कि उसकी शय्या भी हिलने लगती है। दाँत किटकिटाते हैं। रोगी को कितना ही कम्बल या रजाई से ढँक दिया जाये, उसका जाड़ा नहीं जाता है। रोगी की यह दशा आधे से लेकर १ घण्टे तक रहती है।

२. रोगी विस्तर पर ऐसे उछलता है जैसे उसे किसी ने पकड़ लिया हो। दो-एक आदमी यदि उसके शरीर को दबाने की चेष्टा करते हैं तब भी वह जोरों से काँपता ही रहता है।

३. रोगी का शरीर बाहर से ठंडा प्रतीत होता है, परन्तु अन्दर का ताप (गुदा का ताप) १०४–१०५° फा० तक रहता है।

४. रोगी सिरदर्द तथा समस्त देह में पीड़ा का अनुभव करता है।

५. नाड़ी की गति तीव्र होती है।

६. हाथ-पैर और सन्धियों में भयानक ऐंठन होने लगती है। अँगुलियाँ सिकुड़ जाती हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. त्वचा का रंग नीलाभ हो जाता है।

८. रोगी का जी मिचलाने लगता है, कदाचित् वमन भी होने लगता है।

९. रोगी का सम्पूर्ण शरीर शिथिल हो जाता है।

१०. सन्धियों में पीड़ा होने लगती है।

११. प्यास अधिक लगती है। हाथ, पाँव बर्फ के समान ठंडे हो जाते हैं।

१२. कुछ समय पश्चात् शीतावस्था कम होने लगती है और रोगी को ज्वर चढ़ना प्रारम्भ हो जाता है।

(२) ऊष्मावस्था (Hot stage)—

१. जो ज्वर शीतावस्था में चढ़ना प्रारम्भ होता है, वह इस अवस्था तक पहुँचते-पहुँचते १०४° फा० अथवा इससे भी अधिक पहुँच जाता है। कभी-कभी १०६° फा० तक हो जाता है।

२. इस अवस्था में शीत लगना बिलकुल बन्द हो जाता है। शीत के स्थान पर रोगी को बहुत गर्मी मालूम पड़ती है।

३. रोगी का पूरा शरीर जलता हुआ प्रतीत होता है। उसे अत्यन्त गर्मी लगती है।

४. कभी-कभी रोगी प्रलाप करने लगता है।

५. सिर में तीव्र पीड़ा होती है।

६. इस अवस्था में प्रायः वमन उपस्थित मिलता है।

७. रोगी निढाल होकर पड़ा रहता है।

८. रोगी का मुख सुर्ख लाल हो जाता है।

९. त्वचा उष्ण तथा शुष्क-सी एवं रक्ताभ होती है।

१०. नाड़ी की गति तीव्र तथा आकृति और वेग अधिक होता है।

११. रोगी छटपटाता है और अंट-संट बकने लगता है।

१२. यह अवस्था बहुत देर तक (१-६ घण्टे तक) बनी रहती है।

(३) प्रस्वेदावस्था (Sweating stage)—

१. ऊष्मा के अन्तिम चरण में ही रोगी को थोड़ा-थोड़ा पसीना आना प्रारम्भ हो जाता है।

२. इस अवस्था में पहले मस्तक और मुँह पर स्वेदबिन्दुएँ आती हैं।

३. जैसे-जैसे पसीना बढ़ता है, रोगी का ज्वर कम होने लगता है।

४. कुछ समय बाद शरीर से जोरों से पसीना छूटने लगता है। रोगी के कपड़े और बिस्तर आदि भीग जाते हैं।

५. शिरःशूल आदि बेचैनी दूर होने से रोगी को तबीयत हलकी प्रतीत होने लगती है।

६. पसीना आने से रोगी में थकावट प्रतीत होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. मूत्र गहरे लाल रंग का होता है।

८. रोगी को कभी-कभी दस्त भी आने लगते हैं।

९. ज्वर कम होने पर अन्य लक्षण शान्त होने लगते हैं।

१०. कुछ केसिस में, विशेषकर उन रोगियों में जिनमें तापक्रम बहुत ऊँचा पहुँचता है, पसीना इतना अधिक आता है कि रोगी पसीने से नहा जाता है।

११. ज्वर छूटने के पश्चात् रोगी कमजोरी महसूस करता है। प्रायः उसे निद्रा आती है और जागने पर अपने को स्वस्थ अनुभव करता है।

तत्पश्चात् रोगी की स्थिति—

१. प्रस्वेदावस्था के बीत जाने के पश्चात् रोगी का तापक्रम सामान्य हो जाता है। दुर्बलता के अतिरिक्त अन्य कोई लक्षण उपस्थित नहीं होता।

२. रोगी प्रायः १-२ दिन तक ज्वरमुक्त रहता है। तीसरे दिन उसी समय वैसा ही आक्रमण पुनः होता है और रोगी को पुनः उपरोक्त तीनों अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है।

३. यदि अधिक काल तक इसी प्रकार ज्वर आता रहता है तो रोगी धीरे-धीरे क्षीण और दुर्बल हो जाता है। रोगी का शरीर निस्तेज हो जाता है और उसका मनोबल गिर जाता है।

४. कुपथ्य-सेवन से कदाचित् यकृत् तथा प्लीहा की वृद्धि हो जाती है।

५. अधिकांश केसिस में इन दिनों कब्ज पाया जाता है। होठ सूखे हुए प्रतीत होते हैं और उन पर पपड़ी जम जाती है।

६. ज्वर के समय रोगी को अत्यधिक प्यास लगती है।

नोट—○ 'सुदम्य तृतीयक' मलेरिया और 'ओवेल तृतीयक' मलेरिया के लक्षण तथा चिह्न उपरोक्त प्रकार के होते हैं।

विशेषता—इन दोनों प्रकार के मलेरिया में ज्वर प्रायः तीसरे दिन आता है। लोग इसे सामान्य भाषा में 'तिजारी' कहते हैं।

चतुर्थक मलेरिया (Quartan malaria)—

इस प्रकार के मलेरिया के लक्षण उपरोक्त वर्णित दोनों प्रकार के तृतीयक मलेरिया (Tertian fever) के समान ही होते हैं। अन्तर केवल इतना होता है कि चतुर्थक मलेरिया का आक्रमण चौथे दिन होता है। इसमें पुनरावृत्ति (Relapse) की अधिक सम्भावना रहती है। क्योंकि इसको पूर्णतया नष्ट करना कठिन हो जाता है।

दुर्दम तृतीयक मलेरिया (Subtertian malaria)—

१. इसका ज्वर अनियमित प्रकार का होता है। अर्थात् इसके चढ़ने तथा उतरने का कोई क्रम निश्चित नहीं होता है।

२. ज्वर कई दिनों तक निरन्तर बना रह सकता है अथवा थोड़े ही समय में उतर सकता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. ज्वर अधिक ऊँचा नहीं जाता है। परन्तु इसमें एक विशेषता होती है कि यह कई दिनों तक थोड़ा-थोड़ा बना रहता है, जिससे आन्त्रिक ज्वर का भ्रम हो जाता है।

४. इसमें शीत, ताप तथा प्रस्वेदावस्था अधिक स्पष्ट नहीं होती है।

५. वमन अपेक्षाकृत अधिक होता है। सिरदर्द भी अधिक रहता है।

६. यह शेष तीनों प्रकार के मलेरिया की अपेक्षा अधिक उपयुक्त तथा भयानक होता है।

७. यदि इसका शीघ्र निदान न हो सका तो प्राणघातक हो सकता है।

इसके निम्न प्रकार मिलते हैं—

१. बिलियस रेमीटेण्ट फीवर (Bilious remittant fever)।

२. सेरिब्रल मलेरिया (Cerebral malaria)।

३. एल्जिड मलेरिया (Algid malaria)।

४. गैस्ट्रिक मलेरिया (Gastric malaria)।

५. डिसेण्ट्रिक मलेरिया (Dysentric malaria)।

निदान (Diagnosis)—○ १. ज्वर का आकस्मिक आक्रमण, ज्वर के आक्रमण के पूर्व शीत, शिरःशूल, हृल्लास, पूरे शरीर में दर्द, ज्वर-वेग के क्रम से शीतावस्था, ऊष्मावस्था तथा प्रस्वेदावस्था की स्थिति, ज्वरमोक्ष के पश्चात् सामान्य दुर्बलता, ज्वर-वेग के समय प्लीहावृद्धि, कभी-कभी ज्वर में नियतकालिकता विशेषकर 'तृतीयक' और 'चतुर्थक' ज्वर में, तथा तीव्र बेचैनी आदि लक्षणों के आधार पर रोग-निदान में कोई कठिनाई नहीं होती है।

○ २. बारी-बारी से आने वाला ज्वर मलेरिया होता है।

○ ३. प्रारम्भ में ज्वर के वेग जब अनियमित रूप में आते हैं अथवा एक साथ जब हद से अधिक वेग चल रहे होते हैं तथा जीर्ण एवं घातक अवस्था में इसकी पहिचान कठिन होती है।

अथवा—दुर्दम तृतीयक मलेरिया होता है या २ प्रकार के परजीवी एक साथ होते हैं, अथवा संक्रमण दो दिन का होता है, तब रोग-लक्षणों के आधार पर इसकी पहचान करना कठिन होता है।

○ ऐसी स्थिति में निश्चित निदान के लिए मलेरिया परजीवियों के लिए रक्त-परीक्षा आवश्यक होती है।

१. **ब्लड-फिल्म** (Blood film)—घनी फिल्म (Thick film) इस परीक्षा में विशेष सहायक होती है।

२. **ल्यूकोसाइट काउण्ट** (Leucocyte count)—ल्यूकोपेनिया मिलती है।

३. **स्टर्नल पंक्चर** (Sternal puncture)—फ़िल्म में जब पैरासाइट दिखलायी नहीं देते हैं, तब इसका सहयोग लेना पड़ता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ रक्त की परीक्षा करने पर उसमें श्वेतकणों की न्यूनता (Leucopenia) हो, पर मोनोसाइट्स (Monocytes) १२-१५ प्रतिशत तक हो, रक्तकणों में मलेरिया पैरासाइट्स दिखलायी पड़े तो रोग का निश्चित निदान हो जाता है। कई प्रकार की जाँच विशेषकर रक्त के मोटे फिल्म की जाँच कर लेनी चाहिए।

○ शीत कम्प के बाद कुछ घण्टों तक परजीवियों की संख्या अधिक होती है।

नोट—यदि परजीवियों का पता न लग सके, किन्तु विशिष्ट नैदानिक लक्षण उपस्थित हों तो प्रभावी मलेरिया-निरोधी औषधि देकर जाँच की जा सकती है।

○ विषमज्वर-नाशक औषधि देने से लाभ प्रतीत हो, मूत्र आते समय मूत्रमार्ग में जलन प्रतीत हो, गालों पर काले रंग के व्यंग हों, तो मलेरिया का सन्देह करना चाहिए।

रक्त-परीक्षा निम्न दशाओं में नहीं करना चाहिए—कुनीन औषधियाँ देने पर सफलता न मिले तो रक्त-परीक्षा व्यर्थ है। मलेरियाज्वर-नाशक औषधियाँ देने के पश्चात् रक्त में जीवाणु नहीं मिलते हैं।

मलेरिया नहीं है—यदि कामाक्वीन के ३ दिन तक देने और २ बार क्विनीन इञ्जेक्शन और ३ दिन तक 'क्वीनारसोल' देने के बाद यदि ज्वर न उतरे तो समझ लेना चाहिए कि वह मलेरिया ज्वर नहीं हैं।

○ निश्चित समय पर जूड़ी के साथ ताप चढ़ कर समय से स्वेदन के साथ उतरने वाला केवल एक मात्र रोग मलेरिया ही है।

○ इसके विपरीत जब जूड़ी के साथ ताप चढ़ कर कई दिन तक ज्वर बना रहे और उसका क्रम अनिश्चित हो तो अनेक प्रकार के ज्वरों का विशेषकर पूयजनक जीवाणुओं से उत्पन्न ज्वर का सन्देह करना चाहिए। ऐसी अवस्था में रक्त-परीक्षा आवश्यक होती है।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—निश्चित स्वरूप का उपसर्ग होने पर अथवा घातक अवस्था में सन्तत स्वरूप का ज्वरानुबन्ध होने पर दण्डक ज्वर, आन्त्रिक ज्वर, सन्निपात, इन्फ्लूएञ्जा, श्लीपद आदि रोगों में सापेक्ष निदान करना चाहिए।

उपद्रव (Complications)— ○ पैरासाइट्स से उत्पन्न रक्त-प्रवाह में बाधा उपस्थित होने से रक्त-संचार की गड़बड़ी, मूर्च्छा, मानसिक विभ्रम, मूकता, पक्षाघात, उदर-पीड़ा और अतिसार, संन्यास (Coma), मन्द-दृष्टिता, अति ज्वर (Hyperpyrexia), प्रलाप (Delirium), आक्षेप, निपात, अमूत्रता, अल्पमूत्रता, यूरीमिया, अनीमिया, कालमेह ज्वर, वृक्कपात (Renal failure) और अन्त में रोगी की मृत्यु तक सम्भव है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ गम्भीर संक्रमण में तीव्र वृक्कशोथ (Acute nephritis) भी कभी-कभी देखा जाता है।

○ मलेरिया के दुबारा आक्रमण से उत्पन्न उपद्रव इस प्रकार हैं—गम्भीर अरक्तता, क्षय, वृद्धि तथा रोपण सम्बन्धी बाधाएँ तथा यकृत्-प्लीहा की अतिवृद्धि।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. सुदम्य तृतीयक मलेरिया, ओवेल तृतीयक मलेरिया और चतुर्थक मलेरिया ज्वर औषधि देने पर अन्दर ही रुक जाता है, किन्तु उसके पुनराक्रमण होते रहते हैं। इनके जीवाणु यकृत् कोशिकाओं में निवास कर वंशवृद्धि करते रहते हैं।

२. इसके विपरीत प्लाज्मोडियम फैल्सिपैरम यकृत् कोशिकाओं में निवास न बना सकने के कारण रक्त-परिसंचरण के साथ गई हुई औषधि इनको सरलता से नष्ट कर देती है।

○ इस प्रकार से दुर्दम मलेरिया को एक बार में ही औषधि-चिकित्सा से नष्ट किया जा सकता है और उसकी पुनरावृत्ति नहीं होती है।

जीर्ण मलेरिया (Chronic malaria)—

उपरोक्त वर्णित मलेरिया के चारों प्रकार उसके तीव्र रूप होते हैं। यदि किसी रोग में तीव्र मलेरिया (Acute malaria) की पुनरावृत्ति बार-बार होती रहे तो वह चिरकालीन मलेरिया (Chronic malaria) का रूप धारण कर लेता है।

○ कुछ स्थानों पर लोग सदैव मलेरिया के शिकार बने रहते हैं और इनमें बार-बार मलेरिया के आक्रमण चलते रहते हैं। इनमें दो प्रकार के लक्षण विशेष रूप से मिलते हैं—

१. अरक्तता (Anaemia)।

२. प्लीहा की अतिवृद्धि (Splenomegaly)।

चिकित्सा—१. ज्वर-आक्रमण से पूर्व जैसे ही रोगी को पूरे शरीर में तथा सिर में हलका-सा दर्द प्रतीत हो, उसे तत्काल शय्या पर लिटा कर गरम कपड़ों से उढ़ा देना चाहिए।

२. उसके हाथ-पैरों को गरम पानी की बोतलों से सेंकना तथा थोड़ा-थोड़ा गरम जल पीने को देना लाभकर होता है।

३. शीतावस्था समाप्त होकर ऊष्मावस्था के प्रारम्भ होते ही रोगी की बेचैनी दूर करने के लिए शीत उपचार; यथा—मस्तक पर बर्फ की थैली, ठंडे पानी से भीगा तौलिया निचोड़ कर शरीर पोंछना, पीने के लिए सोडा मिला पानी या नीबू का शर्बत देना चाहिए।

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. पसीना आते समय रोगी के सारे शरीर को ढके रखना चाहिए। भीतर ही भीतर सारे शरीर को सूखे कपड़ों से पोंछते रहना चाहिए। कपड़े भीग जाने पर दूसरे कपड़े बदलना चाहिए।

५. वेग शान्त होने पर लवण विरेचन औषधि देनी चाहिए, जिससे कोष्ठ की शुद्धि बनी रहे।

६. ज्वर की अवस्था में तरल द्रव्यों का ही प्रयोग करना चाहिए। सन्तरा, मौसम्मी, अंगूर आदि फलों के रस का सेवन कराना चाहिए।

७. ज्वर उतर जाने के बाद पसीने से त्वचा अधिक मलिन हो जाती है। अतः गरम पानी में कपड़ा भिगोकर शरीर को एक या दो बार भली-भाँति साफ करते रहना चाहिए।

चिकित्सा सम्बन्धी आवश्यक निर्देश—१. ज्वर का आक्रमण तीव्र तथा घातक न हो तो विशिष्ट मलेरिया-नाशक औषधियों का प्रयोग ज्वर के आक्रमण के २-३ दिन बाद करना चाहिए।

२. ज्वर के आक्रमण के पूर्व (रोग संचयावस्था : Incubation period) क्विनीन का प्रयोग लाभदायक नहीं होता है।

३. क्विनीन का अधिक मात्रा में तथा अधिक समय तक प्रयोग करना उपयोगी नहीं है। इससे रोग के पुनरावर्तन की सम्भावना रहती है।

४. प्रारम्भिक आक्रमण में क्विनीन का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में करना चाहिए। तत्पश्चात् तीव्रावस्था के शान्त होने पर नवीन रोगनाशक औषधियाँ देनी चाहिए।

५. रोग का सही निदान कर परजीवी की उपजाति के अनुरूप ही विशिष्ट औषधि की व्यवस्था करनी चाहिए।

६. रोग के प्रारम्भिक दिनों में मलशोधन तथा क्षारीय मिश्रणों के प्रयोग से औषधियों के लिए अनुकूल क्षेत्र का निर्माण करना चाहिए।

७. प्रारम्भ में ज्वरनाशक औषधियों का प्रयोग ७ दिनों तक करना चाहिए। तत्पश्चात् बीच में ७–१० दिनों का विराम देकर पुनः देना प्रारम्भ करना चाहिए।

८. मलेरिया के रोगी को कभी उपवास नहीं कराना चाहिए।

९. मलेरिया-नाशी औषधियों का प्रयोग कभी भी खाली पेट नहीं करना चाहिए। प्रत्येक खुराक से पहले रोगी को हलका-सा नास्ता दे दिया जाना चाहिए। जिस दिन रोग की पाली हो उस दिन भर पेट भोजन न दें। क्योंकि ज्वर चढ़ने पर अक्सर वमन हो जाता है। पाली उतर जाने के बाद सामान्य भोजन दिया जा सकता है।

(२) औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—मलेरिया की औषधि चिकित्सा को निम्न ३ भागों में बाँटा जा सकता है—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. रोगहर चिकित्सा (Curative treatment)।

२. रोग-निरोधी चिकित्सा (Prophylactic treatment)।

३. मलेरिया के उपद्रवों की चिकित्सा (Treatment of malarial complications)।

(१) रोगहर चिकित्सा (Curative treatment)—

℞ टेबलेट क्लोरोक्विन (Tab. Chloroquine) २५० मि० ग्रा०

व्या० नाम—निवाक्विन (Nivaquin), रिसोचिन (Resochin)।

मात्रा—पहले दिन पहली मात्रा—४ गोली एक साथ भोजनोपरान्त।

दूसरी मात्रा—२ गोली प्रथम मात्रा के ६ घण्टे बाद भोजनोपरान्त।

दूसरे दिन—१ गोली दिन में २ बार भोजनोपरान्त।

तीसरे दिन—१ गोली दिन में २ बार भोजनोपरान्त।

नोट—कोई-कोई चिकित्सक चौथे दिन भी १-१ गोली दिन में २ बार देते हैं। वैसे १० गोली का एक कोर्स होता है जो मलेरिया को ठीक करने के लिए पर्याप्त है।

अथवा—℞ टेबलेट एमोडियाक्विन (Tab. Amodiaquine)

व्या० नाम—टेबलेट केमाक्विन (Tab. Camaquin)

मात्रा—३ गोली की १ मात्रा रात्रि में सोने से पूर्व ३ दिन तक।

निर्देश—औषधि को दूध तथा ग्लूकोज के साथ दें। खाली पेट कभी न दें।

℞ टेबलेट प्रोक्लोर पेराजीन ५ मि० ग्रा०

व्या० नाम—टेबलेट स्टेमेटिल (Tab. Stemetil)

मात्रा—१ गोली रिसोचिन अथवा केमाक्विन के १ घण्टे पूर्व दें।

नोट—इससे वमन और चक्कर नहीं आते हैं।

℞ टेबलेट पैरासिटामोल (Tab. Paracitamol)

व्या० नाम—'क्रोसिन', मेटासिन आदि।

मात्रा—१ गोली प्रति ४ घण्टे पर दिन में ३ बार।

नोट—इससे तीव्र बुखार, सिरदर्द, शरीर-पीड़ा आदि सभी दूर होते हैं।

○ शिशुओं और बालकों के लिए मलेरिया ज्वर में—

℞ सीरप लैरियागो (Syrup Lariago)

मात्रा—प्रथम दिन—प्रथम मात्रा—

१ वर्ष तक के बच्चों में—१० मि० ली०।

१ से ४ वर्ष तक—१०-२० मि० ली०।

५ से ८ वर्ष तक—२० मि० ली०।

दूसरी मात्रा—उपरोक्त मात्रा देने के ६ घण्टे बाद—

आवश्यकतानुसार प्रथम मात्रा का ½ सीरप दूसरी मात्रा में दें।

 CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तत्पश्चात् अगले २ दिनों में—

मात्रा में बताये अनुसार सीरप की आधी मात्रा दिन में २ बार दें।

○ **आवश्यकतानुसार वयस्कों तथा बालकों में**—'क्लोरोक्वीन' का इञ्जेक्शन भी दिया जा सकता है।

इञ्जेक्शन की मात्रा—०·२मि० ली०/प्रति किलो शरीर भार पर I/M

नोट—पहली मात्रा १० मि० ली० से अधिक न हो और आगे की अन्य मात्राएँ ५ मि० ली० से अधिक न हों। वैसे एक बार में २–२½ मि० ली० क्लोरोक्विन का इञ्जे० पर्याप्त होता है। दूसरा इञ्जे० ६ घण्टे बाद दें। इसके बाद प्रतिदिन १ इञ्जेक्शन २ दिन तक लगाना चाहिए। मात्रा हमेशा २–२½ मि० ली० ही रखनी चाहिए।

○ **कोर्स**—४ इञ्जेक्शनों का एक कोर्स पूरा होता है।

○ यदि रोगी को वमन होता हो तो—क्लोरोक्विन इञ्जेक्शन में 'इञ्जे० सीक्विल' मिला कर देना चाहिए।

निर्देश—इञ्जेक्शन चिकित्सा के साथ अन्य मलेरिया-निरोधी औषधियों की आवश्यकता नहीं होती है।

उपरोक्त चिकित्सा के असफल होने पर—जिन रोगियों में क्लोरोक्विन से रोग ठीक नहीं होता है, उनमें नवीन औषधियाँ चमत्कारी प्रभाव दिखलाती हैं—

मात्रा—२ गोली की १ मात्रा।

○ रोग के ठीक होने के लिए २ गोली की मात्रा ही पर्याप्त होती है। आवश्यकता पड़ने पर २ गोली की १ मात्रा १ सप्ताह बाद दी जा सकती है।

अथवा—क्रॉयडॉक्सिन (Croydoxin-FM) (विडल शायर)

मात्रा—२–३ गोली की केवल १ मात्रा।

नोट—गर्भवती महिलाओं तथा दूध पिलाने वाली माताओं में इसका प्रयोग निषिद्ध है।

○ **क्लोरोक्विन रेसिस्टेण्ट मलेरिया के लिए**—

१ से ५ दिन तक—

क्विनीन (Quinine) अथवा क्वीनीडीन (Quinidine)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० प्रति ८ घण्टे पर।

सल्फाडॉक्सीन (Sulphadoxine) या सल्फामेथोपायराजीन (Sulphamethopyrazine) ५०० मि० ग्रा०+पायरीमेथामीन ५०० मि० ग्रा० की केवल १ मात्रा।

○ **प्लाज्मोडियम फैल्सीपेरम रेसिस्टेण्ट के लिए**—

एमीनोक्विनोलीन (Aminoquinoline)+एण्टीफोल–सल्फा मिश्रण—१ से ७ दिन तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्विनीन या क्विनीडीन ६०० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर + टेबलेट टेट्रासाइक्लीन २५० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर।

(२) रोग-निरोधी चिकित्सा (Prophylactic treatment)—

१. टेबलेट रिसोचिन (Tab. Resochin) या एल्लोक्लोर

मात्रा—२ गोली सप्ताह में १ बार।

○ २. टेबलेट केमाक्विन (Tab. Camaquine) (I. P.)

मात्रा—२ गोली सप्ताह में १ बार।

३. टेबलेट पायरीमेथामीन २५ मि० ग्रा०

व्या० नाम—डेराप्रिम (Deraprim)

मात्रा—२ गोली सप्ताह में १ बार।

○ बालकों में डेराप्रिम की मात्रा—

१ वर्ष से नीचे—६ मि० ग्रा० (¼ गोली)।

१ से ६ वर्ष—१२·५ मि० ग्रा० (½ गोली)।

७ से १२ वर्ष—१ गोली सप्ताह में १ बार।

नोट—उपरोक्त में से कोई एक औषधि सप्ताह में १ बार दी जा सकती है।

निर्देश—यदि कोई स्वस्थ व्यक्ति रोग रहित क्षेत्र से मलेरिया प्रभावित क्षेत्र में जाता है तो उसके लिए यह आवश्यक है कि उस क्षेत्र में प्रवेश करने से २४ घण्टे पूर्व उसे मलेरिया-नाशक औषधि का सेवन कर लेना चाहिए।

○ प्रभावित स्थान पर पहुँचने पर भी नियमित रूप से औषधि लेते रहना चाहिए।

○ स्थान छोड़ने के पश्चात् भी कम से कम २ सप्ताह तक औषधि लेते रहना चाहिए। अथवा १ महीने तक निम्नलिखित औषधियाँ नियमित रूप से खानी चाहिए।

℞ १. पायरीमेथामिन (डेराप्रिम Deraprim)

मात्रा—१ या २ गोली सप्ताह में १ बार प्रत्येक रविवार को।

२. प्राग्वानिल हाइड्रोक्लोराइड—प्रतिदिन १०० मि० ग्रा० की १ गोली।

३. क्लोरोक्विन सल्फेट (Chloroquine sulphate)

मात्रा—१५० मि० ग्रा० बेस की २ गोली सप्ताह में १ बार या १ गोली सप्ताह में २ बार।

४. केमाक्विन, फॉयरोक्विन (Fioroquin)

मात्रा—२०० मि० ग्रा० २ गोली सप्ताह में २ बार।

○ जिन रोगियों में मलेरिया की पुनरावृत्ति पायी जाय, उनमें पुनः आक्रमण होने पर क्लोरोक्विन, ऐमोडियाक्विन आदि के साथ १५ मि० ग्रा०

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राइमाक्विन (Primaquine) दिन में २ बार १४ दिनों तक बराबर देते रहना चाहिए।

दुर्दम मलेरिया से बचाव हेतु—

℞ प्रोगुआनिल (Proguanil) १०० मि० ग्रा०

व्या० नाम—पैल्युड्रिन (Peludrin) (आई० सी० आई०)

मात्रा—मलेरिया प्रभावित क्षेत्र में प्रवेश करने के २४ घण्टे पहले—१ गोली प्रतिदिन नाश्ते के साथ। तत्पश्चात् वह क्षेत्र छोड़ने के ३० दिन बाद तक नियमित रूप से १ गोली सेवन कराते रहना चाहिए।

नोट—मलेरिया के आक्रमण से बचने के लिए यह सबसे अधिक सुरक्षित तथा विश्वप्रसिद्ध औषधि है।

(३) मलेरिया के उपद्रवों की चिकित्सा (Treatment of complicated malaria)—मलेरिया के सुदम्य तृतीयक, ओवेल तृतीयक तथा चतुर्थक मलेरिया में प्रायः किसी प्रकार के उपद्रव नहीं पाये जाते हैं। हाँ इतना अवश्य है कि रोग के दीर्घकालिक होने पर अरक्तता उत्पन्न हो सकती है।

○ **अरक्तता का निवारण**—१. ऐसी अवस्था में मलेरिया के पुनरावर्तन (Relapse) को रोकने के लिए क्लोरोक्विन आदि औषधियों के साथ प्राइमाक्विन का भी प्रयोग करना चाहिए।

२. पुनरावर्तन चिकित्सा के पश्चात्—रोगी को मुख अथवा इञ्जेक्शन रूप में आयरन के किसी योग का प्रयोग करना चाहिए।

दुर्दम तृतीयक मलेरिया के उपद्रव—इस प्रकार के मलेरिया में अत्यधिक वमन, अति ज्वर, सिर तथा सम्पूर्ण शरीर में पीड़ा, मूर्च्छा, स्तब्धता तथा अल्प रक्तदाब (Low B. P.), आक्षेप तथा निर्जलीभवन आदि घातक उपद्रव उत्पन्न हो सकते हैं।

चिकित्सा—सर्वप्रथम दुर्दम तृतीयक मलेरिया की विशिष्ट चिकित्सा करनी चाहिए। जो निम्न प्रकार से है—

इसके लिए क्लोरोक्विन का प्रयोग I/M अथवा I/V मार्ग से किया जाता है। इञ्जे० निवाक्विन अथवा रिसोचिन जो क्लोरोक्विन का ही योग है—५ से ७ मि० ली० तक औषधि I/V देनी चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर ६ घण्टे में पुनः इञ्जे० दिया जा सकता है।

नोट—२४ घण्टे में २० मि० ली० से अधिक औषधि नहीं देनी चाहिए।

बच्चों में—इनमें भी इण्ट्रावीनस मार्ग से प्रति ६ घण्टे पर देना चाहिए।

चेतावनी—ध्यान रहे कि २४ घण्टे में ५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर अधिक औषधि नहीं देनी चाहिए।

नोट—संकट की अवस्था निकल जाने पर इञ्जेक्शन इण्ट्रामस्कुलर रूप में अथवा मुख द्वारा श्लो-चिकित्सा दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ उपरोक्त विशिष्ट चिकित्सा के उपरान्त विभिन्न उपद्रवों की चिकित्सा निम्न प्रकार से करनी चाहिए—

(१) अत्यधिक वमन तथा उत्क्लेश—

℞ इञ्जे० ट्राइफ्लूप्रोमेजीन हाइड्रोक्लोराइड

व्या० नाम—इञ्जे० सीक्विल (Inj. Siquill)

मात्रा—½–१ मि० ली० मांसपेशीगत। आवश्यकता पड़ने पर प्रति ४ घण्टे पर।

○ बच्चों में—०.२ मि० ग्रा०–०.२५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर दिन भर की मात्रा को निकाल कर तीन मात्राओं में विभाजित कर मांसपेशीगत दें।

नोट—बालकों में सारे दिन की मात्रा १ मि० ली० से अधिक नहीं होनी चाहिए।

शिशुओं तथा कम आयु के बालकों में—

℞ क्लोरप्रोमेजीन सीरप (लार्गेक्टिल सीरप) का प्रयोग उत्तम रहता है।

(२) अतिज्वर (Hyperpyrexia)—१. मस्तक पर ठंडे पानी की पट्टी अथवा बर्फ की थैली रखें।

२. सम्पूर्ण शरीर को भीगे तौलिये से पोंछें।

३. मेटासिन टेबलेट—१-२ गोली प्रति २-५ घण्टे तक। बालकों तथा शिशुओं में 'पैरासिटामोल सीरप' का प्रयोग करें।

(३) शिरःशूल तथा सर्वांग वेदना—'पैरासिटामोल' के प्रयोग से ज्वर दूर होता है, साथ ही शिरःशूल एवं सर्वांग वेदना में भी लाभ मिलता है। यदि पैरासिटामोल से लाभ दिखलाई न दे तो निम्न का प्रयोग करना चाहिए—

℞ टेबलेट एस्प्रिन ५०० मि० ग्रा०	१ गोली
टेबलेट डायजीपाम ६ मि० ग्रा०	½ गोली
ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर।	१ मात्रा।
अथवा—इस्जीपायरिन	१ गोली
फेनासिटीन	१२० मिग्रा०
एस्प्रिन	२४० मिग्रा०
कैफीन साइट्रेट	१२० मिग्रा०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा गरम जल के साथ प्रति ४ घण्टे पर।

नोट—२-३ मात्रा ही पर्याप्त होती है।

(४) मूर्च्छा (Coma)—इस उपद्रव के मिलने पर तत्काल—

इञ्जे० डेक्सामेथासोन (Inj. Dexamethasone)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्या० नाम०—डेकाड्रान इञ्जेक्शन (Dacadron Inj.)

मात्रा—२ मि० ली० I/V । आवश्यकता पड़ने पर प्रति ६ घण्टे पर इञ्जे० दिया जा सकता है । सुधार होने पर मांसपेशीगत दें ।

(५) **स्तब्धता तथा अल्प रक्तदाब**—स्तब्धता के लिए ५% ग्लूकोज सैलाइन का ड्रिप देना प्रारम्भ कर देना चाहिए ।

○ अल्प रक्तदाब के लिए—५०० मि० ली० ग्लूकोज सैलाइन की बोतल में नॉर-एड्रीनलीन ४ मि० ग्रा० मिला देना चाहिए । कुछ समय बाद ब्लड-प्रेशर सामान्य हो जाता है ।

(६) **आक्षेप** (Convulsions)—

१. मृदु प्रकार के आक्षेपों में—इञ्जे० फीनोबार्बीटोन सोडियम २०० मि० ग्रा० की मात्रा में मांसपेशीगत दें । बालकों में आयु के अनुसार दें ।

२. उग्र प्रकार के आक्षेपों में—

℞ इञ्जे० पैराल्डिहाइड (Inj. Paraldehyde)

मात्रा—२ मि० ली० कूल्हे की मांसपेशी में ।

℞ बच्चों में—०.१ मि० ली०/प्रति किलो शरीर भार पर I/M ।

नोट—यदि इञ्जे० देने के बाद भी आक्षेपों का दौरा बन्द न हो तो—½–१ घण्टे बाद वयस्कों में ५ मि० ली० और बालकों में १ मि० ली० का दूसरा इञ्जेक्शन दें ।

(७) **निर्जलीभवन** (Dehydration)—अत्यधिक मात्रा में स्वेदन तथा वमन होने के कारण शरीर से द्रव पदार्थ प्रचुर मात्रा में निकल जाता है, जिससे निर्जलीभवन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है । इसका पता रोगी की दशा तथा ब्लड-प्रेशर देख कर लग जाता है ।

○ ऐसे रोगियों को दिन में कई बार निर्जलीभवन दूर करने वाले मिक्श्चर पिलाते रहना चाहिए । साथ ही तत्काल शिरामार्ग से सैलाइन देना प्रारम्भ कर देना चाहिए ।

घातक (Malignant) **या तीव्र स्वरूप के फेल्सीपेरम मलेरिया की चिकित्सा**—

℞ क्विनीन हाइड्रोक्लोराइड (Quinine hydrochloride)

मात्रा—१० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर ५०० मि० ली० ग्लूकोज सैलाइन इण्ट्रावीनस मार्ग से ४ घण्टे में देते हैं ।

आवश्यकतानुसार प्रति ८ घण्टे पर दुहराया जाता है ।

नोट—२४ घण्टे में सम्पूर्ण मात्रा में २००० मि० ग्रा० से अधिक प्रयोग न करें ।

अथवा—क्विनीन बाइ हाइड्रोक्लोराइड ६०० मि० ग्रा० २ मि० ली० में

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

I/V १२½% ग्लूकोज २० मि० ली० में मिलाकर १५ मिनट में धीरे-धीरे लगायें।

निर्देश—यदि हृदय दुर्बल हो तो इण्ट्रावीनस इञ्जे० के आधा घण्टे पूर्व—'कोरामीन' १–७ मि० ली० अथवा स्ट्रिक्नीन एवं डिजीटेलिस प्रत्येक I/M देने के बाद उपरोक्त क्विनीन का इञ्जेक्शन दें।

अथवा—क्विनीन हाइड्रोक्लोराइड के उपलब्ध न होने पर निम्न इञ्जेक्शन का प्रयोग करें—

क्लोरोक्विन २०० मि० ग्रा० को ५०० मि० ली० ग्लूकोज सैलाइन में मिलाकर प्रति ८ घण्टे पर धीरे-धीरे I/V मार्ग से दें।

नोट—२४ घण्टे में ८०० मि० ग्रा० से अधिक मात्रा का प्रयोग न करें।

'इञ्जे० लोमोडेक्स' (Inj. Lomodax) ५०० मि० ली० I/V इफ्यूजन रूप में दिन में २ बार दें।

○ मैलिग्नेण्ट मलेरिया में जब रोगी गम्भीर रूप से ग्रसित हो तो उसे ऐसी आपत्कालीन स्थिति में 'क्विनीन हाइड्रोक्लोराइड' इञ्जेक्शन ०.२ मि० ली० (६०० मि० ग्रा०) I/M अथवा I/V दें। I/V इञ्जे० को १० मि० ली० डिस्टिल्ड वाटर में मिला कर दें। कई बार इञ्जे० को ५०० मि० ली० साधारण लवण घोल में मिलाकर ४ घण्टे तक इण्ट्रावीनस इफ्यूजन द्वारा भी दिया जाता है।

नोट—जैसे ही रोगी मुखमार्ग से औषधि लेने योग्य हो जाय, उसे क्विनीन का प्रयोग मुख से मार्ग कराना चाहिए।

℞ इञ्जे० मेनीटोल (Inj. Manitol)

मात्रा—३५० मि० ली० I/V इफ्यूजन रूप में दिन में २ बार।

इञ्जे० वाइमेसोन (Inj. Wymesone)

मात्रा—४ मि० ग्रा० I/V अथवा I/M प्रति ६ घण्टे पर २ दिन तक।

इञ्जे० ग्लूकोज सैलाइन (Inj. Glucose saline)

मात्रा—१००० मि० ली० I/V प्रतिदिन दें।

मैलिग्नेण्ट मलेरिया से बचाव—

१. ℞ यदि क्लोरोक्विन रेसिस्टेण्ट न हो तो—

क्लोरोक्वीन ३०० मि० ग्रा० सप्ताह में १ बार।

अथवा—प्रागुआनिल (Proguanil) २०० मि० ग्रा० दिन में १ बार।

२. यदि क्लोरोक्विन रेसिस्टेण्ट हो तो—

℞ मेलोप्रिम (Maloprim) (Dapsone + Pyrimethanine)

मात्रा—१ गोली + क्लोरोक्विन ३०० मि० ग्रा० सप्ताह में १ बार।

अथवा—क्रोइडोक्सिन एफ० एम० (Croydoxin F. M.) १ गोली + क्लोरोक्विन ३०० मि० ग्रा० सप्ताह में १ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ **घातक मलेरिया की अन्य चिकित्सा**—रोगी के बहुत दिनों तक रोग से ग्रस्त रहने के कारण यदि उसमें अनीमिया अधिक हो तो ब्लड-ट्रान्सफ्यूजन से रोगी के शरीर में रक्त चढ़ाना चाहिए। ऐसे रोगियों की अरक्तता दूर करने के लिए फैरस सल्फेट की गोलियाँ मुख से देनी चाहिए।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (W. H. O.) का निर्देशन—

तृतीयक ज्वर के लिए विश्व स्वास्थ्य संगठन ने निम्न योग को सर्वोत्तम प्रमाणित किया है—

℞ टोटाक्विना (Totaquina)	३०० मिग्रा०
पैल्यूड्रिन (Paludrine)	०.१ ग्राम
यीस्ट (Yeast)	०.५ ग्राम
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार नींबू के शर्बत के साथ १ सप्ताह तक।

मलेरिया के बार-बार आक्रमण में (Relapsing cases of malaria)—

℞ एमोप्रीमा (Amoprima) (पी० डी०)

मात्रा—२ गोली सप्ताह में २ बार ८ सप्ताह तक।

○ अथवा—पुनरावर्तन रोकने के लिए—एमोडियाक्विन अथवा क्लोरोक्विन का कोर्स देने के बाद प्राइमाक्विन (Primaquine) का कोर्स दिया जाता है। इसके लिए ०.५ मि० ग्रा० की प्राइमाक्विन टेबलेट दिन में ३ बार १० दिन तक सेवन कराते हैं।

नोट—○ यह एक विषाक्त औषधि है। इसलिए मलेरिया का पक्का निदान होने पर ही चिकित्सक की देखरेख में ही प्रयोग करना चाहिए।

बच्चों में एण्टी-मलेरियल औषधियों की देने वाली मात्रा की तालिका—

○ **क्लोरोक्विन तालिका** (Chloroquine schedule)—

आयु (वर्षों में)	ओरल मात्रा (मिग्रा० में)	इन्जेक्शन की मात्रा (Parenteral dose) मिग्रा०/किग्रा०
०-१	७५ मिग्रा०	५ मिग्रा०/प्रति कि० शरीरभार पर
१-४	१५० मिग्रा०	५ ,, ,,
४-८	३०० मिग्रा०	५ ,, ,,
८-१४	४५० मिग्रा०	५ ,, ,,
१५ वर्ष से अधिक	६०० मिग्रा०	५ ,, ,,

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ क्विनीन तालिका (Quinine schedule)—

आयु (वर्षों में) (Age in year)	ओरल मात्रा एवं समय (दिनों में)	इन्जेक्शन की मात्रा (Parenteral dose)
०–१	½ गोली दिन में २ बार १० दिन तक।	१० मिग्रा०/प्रति कि० शरीर भार पर विभाजित मात्रा में १-२ दिन, तत्पश्चात् मुख से।
१–६	१ गोली दिन में २ बार १० दिन	,,
६–१२	१½ गोली ,, ,,	,,
१२ वर्ष से ऊपर—२ गोली	,, ,,	,,

○ प्राइमाक्विन तालिका (Primaqine schedule)—

उम्र (वर्षों में)	मात्रा एवं सेवन-अवधि
०–१	नहीं देना चाहिए।
१–४	२·५ मिग्रा० ५ दिन तक।
४–८	५ मिग्रा० ५ दिन तक।
८–१४	१० मिग्रा० ५ दिन तक।
१४ वर्ष से ऊपर	१५ मिग्रा० ५ दिन तक।

○ प्राइमेथामिन तालिका (Prymethamine schedule)—

उम्र (वर्षों में)	मात्रा एवं समय
०–२	६·५ मिग्रा०/सप्ताह
२–६	१२·५ मिग्रा०/सप्ताह
६ वर्ष से ऊपर	२५ मिग्रा०/सप्ताह

○ बच्चों में क्लोरोक्विन की मात्रा वाली अन्य तालिका—

उम्र	इनीशियल डोज	अगले ४ दिन तक
१ वर्ष	२५ मिग्रा०	२५ मिग्रा०
१–२ वर्ष	७५ मिग्रा० दिन में २ बार	५० मिग्रा० दिन में ३ बार।
२–६ वर्ष	१०० मिग्रा० दिन में ३ बार	७५ मिग्रा० दिन में ३ बार।
६–१० वर्ष	१५० मिग्रा० दिन में ३ बार	१५० मिग्रा० दिन में ३ बार

नोट—राविन्सन एवं बालग्रेन रचित 'बाल-चिकित्सा' के अनुसार ७ वर्षों से कम उम्र के बच्चों को यथासम्भव मलेरियारोधी औषधि की अन्तःशिरा (I/V) सूचीवेध नहीं देना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गर्भावस्था और मलेरिया—

○ मलेरिया से गर्भपात होने का अत्यधिक भय रहता है। जब परजीवी गर्भनाल या प्लेसेण्टा में पहुँच जाता है, तब प्रायः गर्भपात हो जाता है। गर्भवती में प्रायः रक्त की कमी भी रहती है, जिससे वह मलेरिया के उग्र आक्रमण को सहन नहीं कर पाती है।

○ गर्भिणी की मलेरिया की चिकित्सा न करने से बच्चा पैदा होने के तत्काल या १ सप्ताह बाद मर जाता है।

यदि गर्भवती स्त्री मलेरिया से ग्रसित हो जाये तो उसकी पूर्व में बतलाई गई मलेरिया की चिकित्सा करनी चाहिए। मलेरिया नाशक औषधियों से उसे कोई हानि नहीं पहुँचती है। यह समझना कि मलेरिया-नाशक औषधियों से गर्भपात हो जाता है, भ्रामक है। वास्तव में इन औषधियों (क्विनीन) से गर्भपात नहीं होता है, जबकि मलेरिया से हो सकता है।

गर्भवती स्त्री की चिकित्सा करते समय मलेरिया-नाशक औषधियों के साथ मल्टीविटामिन्स (Multi-vitamins) का भरपूर मात्रा में प्रयोग कराना चाहिए।

○ कुछ चिकित्सक गर्भवती स्त्री की निम्न प्रकार से 'क्विनीन चिकित्सा' करते हैं—

क्विनीन हाइड्रोब्रोमाइड १२० मि० ग्रा० को कैपसूल में भरकर ऐसा १-१ कै० ३-३ घण्टे पर दें। साथ में निम्न योग का भी सेवन करायें—

ग्लूकोज २ ग्राम	४० मिग्रा० (२४०० मिग्रा०)
सोडाबाइकार्ब	६०० मिग्रा०
पोटाश ब्रोमाइड	३०० मिग्रा०
कैल्शियम ग्लूकोनेट	६०० मिग्रा०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रति ३ घण्टे पर जल के साथ दें।

○ वास्तव में क्विनीन का मर्यादित रूप में प्रयोग करने से गर्भपात का कोई भय नहीं होता। क्विनीन प्रयोग के पूर्व निम्नलिखित मिश्रण देने से गर्भाशय-संकोच की सम्भावना नहीं रहती है—

℞ कैल्शियम लैक्टेट	६०० मिग्रा०
विटामिन सी	१०० मिग्रा०
फीनोबार्बीटोन	३० मिग्रा०
सोडाबाइकार्ब	६०० मिग्रा०
ग्लूकोज	६०० मिग्रा०

ऐसी १ मात्रा क्विनीन प्रयोग के २ घण्टे पूर्व दें। १ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

याद रखिये—तीव्र स्वरूप के मलेरिया में ज्वर के प्रभाव से गर्भस्राव, गर्भपात या मृत् प्रसव की अधिक सम्भावना रहती है।

○ क्विनीन बाइ हाइड्रोब्रोमाइड (Quinine bi hydrobromide) २४० से ३६० मि० ग्रा० की मात्रा में दिन में ३ बार दूध के साथ उपरोक्त औषधि के २ घण्टे बाद दें।

मलेरिया के लिए सिन्थेटिक टीका—मलेरिया जो कि दुनिया की सबसे अधिक घातक बीमारी है, इसका टीका तैयार कर लिया गया है और अब उसका मानव पर परीक्षण आरम्भ किया गया है। इस टीके को जैनकट इंजीनियरिंग द्वारा तैयार किया गया है। वाशिंगटन के 'वाल्टर रीड आर्मी इन्स्टीट्यूट आफ रिसर्च' में स्वस्थ व्यक्तियों को इसकी पहली खुराकें दी गई हैं। इसके अतिरिक्त न्यूजर्सी विश्वविद्यालय में अनुसंधान किये गये हैं। एक अलग प्रकार की डिजाइन के टीके का भी परीक्षण आरम्भ होने वाला है। यह टीका पूरी तरह सिन्थेटिक है।

○ सिडनी २० सितम्बर १९८७ (ए० पी०)। वैज्ञानिकों ने मलेरिया विरोधी टीका बनाने की दिशा में एक बड़ी सफलता प्राप्त करने का दावा किया है।

○ आस्ट्रेलिया के 'मेलवार्न जिब्राल्टर एण्ड एलिजा हाल इन्स्टीट्यूट फॉर मेडिकल रिसर्च' के अनुसार प्रतिवर्ष करीब १० लाख लोगों की बलि देने वाली इस बीमारी के टीके का बन्दरों पर सफल परीक्षण किया जा चुका है।

○ मलेरिया पैरासाइट के द्वारा होता है। इसका आर्गेनिज्म इतना जटिल होता है कि प्रयोगशालाओं में इसका निदान करना सम्भव नहीं होता। समस्या तब और भी विकट हो जाती है जब मलेरिया का पैरासाइट अपने जीवन-चक्र में अपना आकार बदलता रहता है और इसके एक आकार के प्रति प्रतिरक्षण अन्य आकारों के लिए व्यर्थ साबित होता है।

मलेरिया की मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१ ℞ केमोक्विन (पी० डी०)	३ गोली
सीलिन (ग्लैक्सो) ५०० मि० ग्रा०	½ गोली
सीरप औरंशाई या सीरप टोलू	१० मिली०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार अथवा एक मात्रा प्रातः ४-५ बजे सूर्योदय से पूर्व दें।

२. ℞ पैरासिटामोल	२५० मिग्रा०
फेनासेटिन	२५० मिग्रा०
कैफीन साइट्रास	५० मिग्रा०

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोडीन फॉस्फेट	१० मिग्रा०
सीलिन	५० मिग्रा०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा जल के साथ दिन में ३ बार तक दें।

○ इसका प्रयोग मलेरिया-निरोधी औषधि के साथ शिरःशूल तथा सम्पूर्ण शरीर के दर्द के निवारण हेतु होता है।

३. ℞ सल्फाडाक्सीन ५०० मिग्रा०	१ गोली
पायरिमेथामीन (डायाप्रिम) २५ मिग्रा०	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रातः १ बार ६ से १० बर्ष के बालकों को फल रस से।

○ वयस्कों को इसकी ३ गुनी मात्रा दें।

मलेरिया-नाशक रीसेण्ट मेडिसिन—

१. मेटाकेल्फिन (Metakelfin) (वाल्टर बुशनैल)

यह सल्फामेथोपाइराजीन + पाइरीमेथामीन का उत्तम योग है।

प्रयोग—मलेरिया से बचाव (जो प्ला० फैल्सीपेरम, प्ला० वाइवेक्स तथा प्ला० मेलेरियाई, प्ला० ओवेल) होता है। मलेरिया की चिकित्सा में।

मात्रा—○ मलेरिया की चिकित्सा में—२ गोली की १ मात्रा। आवश्यकतानुसार इसे १ सप्ताह बाद दुहराया जा सकता है।

बालक—२५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर केवल १ बार।

○ बचाव हेतु—वयस्क—२ गोली सप्ताह में एक बार।

बालक—२५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर सप्ताह में एक बार।

२. रेजिज (Reziz) (प्लाज्मा कं०)

इसका प्रयोग मलेरिया से बचाव (Prophylaxis) तथा रेसिस्टेण्ट मलेरिया में होता है।

मात्रा—वयस्क—२-३ गोली।

बालक—१ गोली की केवल १ मात्रा।

निषेध—इसका प्रयोग गर्भावस्था तथा दुग्धावस्था में नहीं करना चाहिए।

३. मेलूब्रिन (Melubrin) (रैनबैक्सी)

○ यह क्लोरोक्विन फॉस्फेट का योग है।

मात्रा—वयस्क—प्रथम दिन ४ गोली तत्काल।

तत्पश्चात् २ गोली प्रति ६ घण्टे पर। उसके बाद २ गोली २ दिन तक।

४. क्रोइडोक्सिन एफ० एम० (Croydoxin F. M.) (विडल शायर)

○ यह सल्फाडोक्सिन + पाइरीमिथामिन का उत्तम योग है।

उपयोग—क्लोरोक्विन रेसिस्टेण्ट मलेरिया में।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—○ बचाव हेतु—वयस्क—१ गोली केवल १ मात्रा।
बालक—९-१४ वर्ष—$\frac{3}{4}$ गोली केवल १ मात्रा।
४-८ वर्ष—$\frac{1}{2}$ गोली केवल १ मात्रा।
४ वर्ष के अंदर—$\frac{1}{4}$ गोली केवल १ मात्रा।
○ चिकित्सा हेतु—वयस्क—२ गोली केवल १ मात्रा।
बालक—९-१४ वर्ष—२ गोली केवल १ मात्रा।
४-८ वर्ष—१ गोली केवल १ मात्रा।
४ वर्ष के अंदर—$\frac{1}{2}$ गोली केवल १ मात्रा।

५. क्विनारसोल (Qinarsol) (सिपला)
मात्रा—२-२ गोली दिन में ३ बार ज्वर उतरने तक।
तत्पश्चात्—२ गोली प्रातःकाल १ सप्ताह तक।
○ इसका इन्जेक्शन भी आता है।

६. मेलोसाइड (Malocide) (टोरेण्ट कं०)
○ यह सल्फाडोक्सिन + पाइरोमेथामीन का एक उत्तम योग है।
उपयोग—क्लोरोक्विन रेसिस्टेण्ट मलेरिया में।
मात्रा—○ बचाव हेतु—२ गोली की केवल १ मात्रा।
बालक—६-१० वर्ष—$\frac{1}{2}$ गोली १ माह के अन्तर पर।
○ चिकित्सा हेतु—वयस्क—२-३ गोली केवल १ मात्रा।
बालक—२० मिग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर।

७. ओनली-टू (Onli-2) (कोप्रान)
○ यह सल्फाडोक्सिन + पाइरीमेथामीन का उत्तम योग है।
उपयोग—यह मलेरिया के बचाव तथा चिकित्सा दोनों में लाभकारी है। विशेषकर चिरकारी (Chronic) तथा क्लोरोक्विन रेसिस्टेण्ट में।
मात्रा—बचाव हेतु—वयस्क—१ गोली की १ मात्रा।
बालक—९-१४ वर्ष—$\frac{3}{4}$ गोली केवल १ मात्रा।
४-८ वर्ष—$\frac{1}{2}$ गोली केवल १ मात्रा।
४ वर्ष के अंदर—$\frac{1}{4}$ गोली केवल १ मात्रा।
○ कम से कम १ सप्ताह बाद पुनः दुहराया जा सकता है।

मलेरिया की नवीनतम औषधि

अब केन्द्रीय औषधि अनुसन्धान संस्थान, लखनऊ में एक नये रसायन की खोज कर ली गई है, जो बार-बार आक्रमण करने वाले मलेरिया के उपचार के लिए बहुत कारगर सिद्ध हुई है। अभी इस रसायन का नाम '८०/५३' रखा गया है। यह रसायन 'प्राइमाक्वीन' से ३-४ गुना कम विषाक्त है और बार-बार होने वाले मलेरिया के उपचार के लिए एकमात्र औषधि है। इसे गर्भवती महिलाओं और शिशुओं को भी बिना हिचक दिया जा सकता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ संस्थान के निदेशक डा० एम० एम० धर के अनुसार संस्थान में मलेरिया वाहक मच्छरों के नियंत्रण के लिए बड़ी मात्रा में जैवविषों के निर्माण हेतु अनुसंधान किये जा रहे हैं। यहाँ एक ऐसा रसायन खोज लिया गया है, जो एनोफ्लीज स्टीफेन्सी और क्यूलेक्स मच्छरों के लार्वा को भलीभाँति नष्ट कर सकता है।

मलेरिया की अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

टेबलेट—

१. रिमोडार (Remodar) (एंग्लो फ्रेंच)—बचाव हेतु।
२. मेकेल्फ (Maykelf) (मायो कं०)
३. मेलाक्सिन (Malaxin) (सिन्थको)
४. रिसोचिन (Resochin) (बेयर कं०) इसका इञ्जे० भी आता है।
५. डेराप्रिम (Deraprim) (वरोज वेल्कम)
६. निवाक्विन (Nivaquine) (एम० बी०)
७. केमोक्विन (Camoquin) (पी० डी०)
८. सिप्लाक्विन (Ciplaquin) (सिपला)
९. एव्लोक्लोर (Avloclor) (आई० सी० आई०)
१०. क्वीनोप्लास्मोल (U. D. H.), केमोप्राइमा (P. D.), सी० सी० एफ० (सैण्डोज कं०)

पेटेण्ट पेय—क्वीनोप्लास्मोल (U. D. H.), क्विनो हीमोजिन (बंगाल इम्युनिटी), पाइरेक्स (बंगाल केमिकल)।

इञ्जेक्शन—क्विनारसोल (सिपला), क्विनोप्लास्मोल (U. D. H.), निवाक्विन (M. B.), रिसोचिन (बेयर कं०), हीमोसाइटिन विद आयरन (सिपला)। □

संक्रामक रोग 7/11

खसरा/रोमान्तिका
(Measles)

पर्याय—मॉबिली (Morbilly), रोबियोला (Robeola)।

परिचय—खसरा एक तीव्र संक्रामक वायरस रोग है, जो बच्चों तथा बालकों में विशेषरूप से पाया जाता है।

कारण—इसका उत्पादक वायरस 'RNA Paramyxo virus' नाम से जाना जाता है; जो इसका एकमात्र कारण है।

संक्रमण—इस रोग का संक्रमण बिन्दुक-विधि (Droplet method) से होता है। एक बार रोग हो जाने पर प्रायः बालक में रोगक्षमता (Imm-

CC-0. JM Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

unity) उत्पन्न हो जाती है । यदि पुनः आक्रमण होता भी है, तो बहुत हलके स्वरूप का होता है ।

उम्र (Age)—अधिकतर यह रोग ३-५ वर्ष की आयु के बालकों में होता है । ६ मास से कम आयु में इसका संक्रमण नहीं होता है । क्योंकि इस समय तक शिशु में माता से प्राप्त रोगक्षमता उपस्थित रहती है । १० वर्ष की अवस्था के पश्चात् इसका आक्रमण बहुत कम होता है ।

ऋतु (Season)—इसका संक्रमण जाड़े तथा वसन्तऋतु में होता है । माघ से लेकर बैसाख तक इसकी तीव्रता में स्वयं कमी होकर रोग शान्त हो जाता है ।

संचयकाल—८-१२ दिन ।

संक्रमण की प्रवृत्ति—इस संक्रमण का प्रसार ड्रापलेट मेथड के द्वारा प्रोड्रोमल अवस्था तथा Primary eruptive stage में होता है ।

रोग-लक्षण एवं चिह्न—संक्रमण के ८ से १२ दिनों के पश्चात् रोगी में इसके लक्षण तथा चिह्न प्रकट होने प्रारम्भ होते हैं । इन लक्षणों को निम्न श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं—

१. पूर्वरूप प्रावस्था (Prodromal phase) ।

२. विस्फोट की अवस्था (Stage of eruption) ।

३. ज्वरमोक्ष की अवस्था (Stage of defervescence) ।

(१) पूर्वरूप प्रावस्था (Prodromal phase)—इसे कटारल स्टेज (Catarrhal stage) भी कहते हैं । इसका प्रारम्भ सर्दी-जुकाम (Common cold) से होता है और ४ दिनों में यह अवस्था समाप्त हो जाती है । इसमें निम्नलिखित लक्षण मिलते हैं—

१. इसका प्रारम्भ अकस्मात् तेज बुखार (४०—४०.४° सें०) से होता है ।

२. रोगी में प्रारम्भ से ही सर्दी-जुकाम, छींकना (Sneezing), कंजंक्टिवाइटिस, फोटोफोबिया (Photophobia), खाँसी आदि लक्षण मिलते हैं ।

३. बालक में स्वररूक्षण (Hoarseness) आदि स्वरयंत्र घर्घर (Laryngeal stridor) मिलते हैं ।

४. खाँसी कष्टदायक तथा पीड़ायुक्त होती है ।

५. बालक में शीघ्र ही निरन्तर वमन प्रारम्भ हो जाता है और पतला मल विसर्जित होने लगता है ।

६. रोगी में व्याकुलता (Malaise) एवं क्षोभशीलता (Irritability) के भी लक्षण मिलते हैं ।

उपरोक्त लक्षणों का क्रम—

(i) प्रायः रोग के संक्रमण के ११वें दिन खाँसी के साथ तेज बुखार

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चढ़ता है, जो उसी दिन सायंकाल तक ४० से ४०.४° सें० अर्थात् १०४° फा० अथवा इससे भी अधिक पहुँच जाता है।

(ii) नासिका, गला, नेत्र आदि की श्लैष्मिककला में शोथ के कारण खुश्क खाँसी (Dry cough) उठती रहती है।

(iii) आँखों से पानी आता है, आँखें चौंधियाने लगती हैं और शरीर में दर्द होता है।

(iv) दूसरे-तीसरे दिन श्वासमार्ग में शोथ के कारण खाँसी और ज्वर के लक्षण होते हैं। ज्वर प्रातःकाल कुछ कम हो जाता है।

(v) प्रारम्भ में यह रोग सामान्य प्रतिश्याय (Common cold) से मिलता-जुलता है। किन्तु इसमें तन्द्रा का लक्षण मिलता है, जो खसरा का प्रारम्भिक प्रमुख लक्षण है। तापक्रम अपेक्षाकृत अधिक होता है।

(vi) आँखों की निचली पलक के अन्दर शोथ होता है। आँख से पानी आना उसका विशेष लक्षण होता है।

तत्पश्चात्—

७. गालों (Cheeks) के आन्तरिक भाग (Inner aspects), द्वितीय मोलर दाँत तथा गम मार्जिन के निकट मुख की श्लैष्मिककला में पिन की नोक के बराबर नीले-सफेद (Greyish-white) रंग के बहुत छोटे-छोटे धब्बे (Spots), जिनके चारों ओर कुछ उभरा हुआ सा लाल रंग का मण्डल होता है, दिखलाई देता है। यह नमक के कणों जैसे दीखते हैं। इनकी संख्या अनिश्चित होती है। इन धब्बों को 'कोपलिक धब्बे' (Koplick's spots) कहते हैं।

नोट—यह धब्बे रोग-निदान के प्रारम्भिक दिनों में विशेष महत्त्व रखते हैं। यह कभी-कभी अपेक्षाकृत कुछ बड़े भी होते हैं। रोगी बालक के शरीर पर विस्फोट निकलने पर यह हलके पड़ कर अदृश्य हो जाता है।

धब्बों का अन्य स्थानों पर निकलना—(i) कभी-कभी रोगी बालक के कोमल तालु पर लाल रंग के चकत्ते दिखलाई देते हैं।

(ii) किसी-किसी के ओष्ठ के अन्दर वाली श्लेष्मकला पर लोवर इन्सीजर (Lower incisors) के सामने भी 'कोपलिक धब्बे' देखने में आते हैं।

(iii) रोग की उग्रावस्था में यह समस्त मुख की श्लेष्मकला में भी देखे जा सकते हैं।

८. प्रायः तीसरे दिन तापक्रम निचले स्तर पर आ जाता है। इसे Day of remission of measles कहते हैं।

९. ट्रेकीयाइटिस (Tracheitis) तथा कभी-कभी गैस्ट्रो-इण्टेराइटिस के लक्षण भी दीखते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) विस्फोट की अवस्था (Stage of eruption)—

१. विस्फोट (Rash) तीसरे तथा चौथे दिन दिखलाई देते हैं। कभी-कभी यह युवा रोगियों में विलम्ब से ६ठे दिन दिखलाई देते हैं।

२. अर्थात् तीसरे दिन ज्वर-कास आदि लक्षण कम हो जाते हैं और इसके बाद अर्थात् रोग-संक्रमण के १४वें तथा ज्वर होने के चौथे दिन इस रोग के विस्फोट (दाने) निकल आते हैं, जो कि पहले माथे पर बालों के आस-पास तथा कान के पीछे मच्छर के काटने जैसे (दाल के दाने सदृश) रक्तवर्ण के के होते है। पहले यह केवल एक चकत्ते के रूप में होते हैं। तत्पश्चात् कुछ उठे हुए 'पेपूल्स' (Papules) बन जाते हैं। इसके पश्चात् माथे तथा कान के पीछे से यह चेहरे पर आते हैं। वहाँ से यह ग्रीवा तथा धड़ पर फैल जाते हैं। तत्पश्चात् शाखाओं (Limbs), हाथ-पैर तथा तलवों तक फैल कर ५वें दिन तक पूरे शरीर में प्रकट हो जाते हैं।

३. यह दाने चेहरे तथा धड़ पर अन्य स्थानों की अपेक्षा अधिक स्पष्ट होते हैं। प्रारम्भ में यह दाने अलग-अलग होते हैं और पीछे से यह परस्पर मिल जाते हैं। ये कुछ उठे हुए-से प्रतीत होने लगते हैं। जिससे रोगी का मुँह फूला हुआ दिखलाई देता है।

४. दानों के पूरे शरीर में फैलने में २४ से ३६ घण्टे लगते हैं, जिससे मुख तथा शरीर लाल रंग का हो जाता है।

५. ४८ घण्टे बाद यह जिस क्रम से निकले थे, उसी क्रम से फीके पड़ने लगते हैं।

६. चौथे दिन चित्तियों (Macules) के प्रकट होने के साथ ज्वर क्रमशः बढ़ जाता है जो १०३–१०४° फा० तक पहुँच जाता है और क्रमशः घटते हुए ५-६ दिनों तक रहता है।

७. इस समय खाँसी का लक्षण भी बढ़ जाता है। जब तक दाने निकलते हैं, अर्थात् ५वें दिन भी ज्वर बढ़ता रहता है। ज्वर के साथ खाँसी का कष्ट बढ़ जाता है।

अन्य लक्षण—दानों के अतिरिक्त इस अवस्था में निम्न लक्षण भी मिलते हैं—

१. नेत्रश्लेष्मलाशोथ (Conjunctivitis)।
२. प्रतिश्याय (Common cold)।
३. मुखपाक (Stomatitis)।
४. स्वरयंत्रशोथ (Laryngitis)।
५. ब्रॉन्काइटिस (Bronchitis)।

(३) ज्वरमोक्ष की अवस्था (Stage of defervescence)—

१. विस्फोट की अवस्था २-३ दिनों तक रहती है और फिर विस्फोट

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(दाने) मुरझाने लगते हैं। ज्वर भी २४ से ४८ घण्टे के भीतर सामान्य हो जाता है। दोनों के ऊपर से मृत् त्वचा की परतें हटने लगती हैं, जिसे सामान्य भाषा में 'भूसी उतरना' (Desquamation) भी कहते हैं।

२. इस प्रकार रोग प्रारम्भ के ९वें दिन से दाने पूर्णतया लुप्त हो जाते हैं और इसके स्थान पर एक भूरा-सा रंग ६-७ दिन तक रह जाता है।

३. प्रायः ६ठे दिन दानों के उतरने के साथ ज्वर भी सहसा उतरने लगता है। यह ७वें या ८वें दिन पूर्णरूप से उतर आता है। ज्वर उतरने के साथ खाँसी का लक्षण भी कम हो जाता है।

४. विस्फोट निकलने के पश्चात् १ सप्ताह तक रोगी बालक संक्रामक (Infective) बना रहता है। भूसी उतर जाने के बाद से बालक को स्कूल भेजा जा सकता है।

५. बालक को इस रोग में २-३ सप्ताह तक लग जाते हैं। जबड़े तथा पोस्टीरियर सर्विकल प्रदेश के लिम्फ नोड्स बढ़ जाते हैं। एब्डॉमिनल पेन तथा प्लीहा स्पर्शासह्य (Palpable) होती है।

अनयुजुअल फार्म (Unusual form)—इसकी एक अन्य अवस्था 'इन्फेण्टाइल मीजिल्स' होती है, जिसमें दोनों की अनुपस्थिति रहती है, जैसा कि बोलस (Bollus) तथा रक्तस्रावी (Haemorrhagic) प्रकार में होती है। नाक से रक्त आता है। डिलीरियम तथा कन्वल्सन्स सम्बन्धित रहते हैं।

ब्लैक मीजिल्स (Black measles)—कभी-कभी विस्फोट (Rashes) रक्तस्रावी (Haemorrhagic) होते हैं और आन्तरिक रक्तस्राव से सम्बन्धित होते हैं।

○ इस प्रकार के रोग में मुँह, नाक तथा आन्त्र मार्ग से भी रक्तस्राव हो सकता है। विस्फोट के प्रथम दो दिनों के दौरान ज्वर बढ़ जाता है तथा त्वचा में थोड़ी-सी खुजली तथा जलन होती है। आँखें अधिक लाल हो जाती हैं। जल्दी-जल्दी खाँसी आने लगती है जो दुखद होती है। क्षेत्रीय ग्रन्थियों में सूजन भी आ सकती है। जीभ पर तह जम जाती है। छोटे बच्चों में भूख का न लगना तथा प्रवाहिका इसके प्रमुख लक्षण हैं। जैसे-जैसे ये विस्फोट दबते हैं, वैसे-वैसे ज्वर घटने लगता है। साथ ही रोगी शीघ्र ही स्वास्थ्य-लाभ करने लगता है।

निदान (Diagnosis)—१. रोगी की आयु, ऋतुकाल, रोमान्तिका पीड़ित व्यक्ति के साथ सम्पर्क करने इत्यादि बातों पर ध्यान देने से रोग-निदान में सहायता मिलती है।

२. प्रतिश्याय युक्त ज्वर का आक्रमण, चेहरे की लालिमा, 'कोपलिक धब्बे' क्रमानुसार विशेष प्रकार के विस्फोटों की उत्पत्ति तथा इनकी उत्पत्ति

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के समय ज्वर आदि की तीव्रता, मोक्षावस्था में दानों का लुप्त होना और कभी-कभी नई उपस्थिति से रोमान्तिका का निर्णय हो सकता है।

प्रयोगशालीय परीक्षण (Laboratory investigation)—सामान्य रूप के प्रायोगिक निदान से इस रोग में कोई विशेष जानकारी रोमान्तिका के समर्थन में नहीं मिलती है।

○ प्रारम्भ में—सामान्य रूप से रक्त में 'ल्यूकोपेनिया' मिलती है। अथवा ब्लड काउण्ट नार्मल मिलता है।

द्वितीयक संक्रमण की स्थिति में (In secondary infection)—

१. ल्यूकोसाइटोसिस (Leucocytosis) की उपस्थिति मिलती है।

२. नासा, नेत्र तथा मुख के स्राव की परीक्षा करने पर मालागोलाणु, एवं फुप्फुसगोलाणु आदि द्वितीयक उपसर्गों की उपस्थिति मिलती है।

३. C. S. F. 0.500 सेल्स प्रदर्शित करती है।

४. फैरेन्जियल वाशिंग ब्लड तथा यूरिन से वायरस को अलग किया जा सकता है।

५. **सीरोलॉजिक टेस्ट**—यूट्रेलाइजेशन टेस्ट के समान होता है।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—इस रोग का भेद—जर्मन मीजिल्स, रोसीओला इन्फेण्ट्स ड्रग्स इरुप्शन, प्रतिश्याय, मसूरिका, डिफ्थीरिया, न्यूमोनिया, पोलियोमाइलाटिस, इन्सेफेलाइटिस तथा अन्य विस्फोटक युक्त ज्वर।

उपद्रव (Complications)—इस रोग में निम्न सामान्य उपद्रवों की अपेक्षा रहती है—लैरिन्जाइटिस, ब्रॉन्काइटिस, ब्रॉन्को-न्यूमोनिया, लंग्स कोलैप्स, न्यूमोनिया, टी० बी०, इण्डोकार्डाइटिस, पेरीकार्डाइटिस, कंजंक्टिवाइटिस, कॉर्नियल अल्सर, इण्टरोकोलाइटिस, ऑटिटिस मीडिया, इन्सेफेलाइटिस, सुपुरेटिव लिम्फेडिनाइटिसी, प्लूरिसी, स्टोमेटाइटिस, प्रवाहिका आदि।

○ इनमें ब्रॉन्को-न्यूमोनिया तथा मध्यकर्णशोथ के प्रमुख उपद्रव भी देखे जाते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ बालकों में सपूय नेत्रश्लेष्मलाशोथ (Purulent conjunctivitis) भी देखने को मिलता है।

अन्य रोगों पर खसरे का प्रभाव—यह देखा गया है कि खसरा ऐसे बच्चों को होता है, जो 'हॉजकिन' रोग अथवा श्वेतरक्तता से पीड़ित होते हैं। अब यह भी बात सिद्ध हो चुकी है कि क्वाशी ओर-कोर से पीड़ित बच्चों पर खसरे का प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. द्वितीयक संक्रमण की उपस्थिति एवं उपद्रवों से युक्त रोमान्तिका गम्भीरता की सूचक है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. जिस बच्चे का स्वास्थ्य अच्छा नहीं होता है, उसे खतरा हो जाने पर ब्रॉन्को-न्यूमोनिया या गैस्ट्रो-इण्टेराइटिस या मस्तिष्कशोथ से उसकी मृत्यु भी हो सकती है।

रोग-मर्यादिता—वैसे यह स्वयं मर्यादित स्वरूप का रोग है। बिना कोई विशेष उपद्रव हुए स्वतः १ सप्ताह में शान्त हो जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—

सामान्य चिकित्सा तथा आवश्यक निर्देश—

१. यह एक वायरसजन्य रोग है, अतः इसकी केवल लाक्षणिक चिकित्सा है। अभी तक इसकी कोई सफल औषधि निर्मित नहीं हो सकी है, जो इस वायरस को नष्ट कर सके।

२. रोगी को स्वच्छ एवं प्रकाशयुक्त हवादार कमरे में रखना चाहिए।

३. बालक की सफाई पर विशेष ध्यान रखा जाय। इससे द्वितीयक संक्रमण की सम्भावना कम रहती है।

४. ज्वर के लिए ज्वरशामक (Antipyretic) औषधि दें।

५. वमन की स्थिति में एण्टी-एमेटिक औषधि दें।

६. खाँसी की अधिकता में कफशामक सीरप (यथा—कोरेक्स) का प्रयोग करें।

७. दस्तों की स्थिति में केओलिन पैक्टिन का प्रयोग करें।

८. उपद्रवों की सम्भावना में प्रतिजीवी औषधियों का प्रयोग प्रारम्भ से ही करना चाहिए।

९. प्रवाहिका की स्थिति में दूध का पूर्णतया निषेध करें।

१०. नेत्रों में ABZ लोशन तथा सल्फासिटामाइड आई ड्राप डालते रहना चाहिए तथा आँखों को बोरिक लोशन से धोते रहें।

११. मुख की स्वच्छता आवश्यक है। इसके लिए डिटॉल या लिस्टरीन के मृदु घोल का प्रयोग करें। तत्पश्चात् बोरो-ग्लिसरीन मसूड़ों तथा जीभ पर लेप के रूप में लगायें।

१२. रोग-निदान हो जाने पर सौम्य विरेचन से कोष्ठ की शुद्धि आवश्यक होती है। इसके लिए मैगसल्फ २-३ ड्राम पर्याप्त होता है। विरेचन सम्भव न होने पर स्निग्ध वस्ति से मलाशय का शोधन करें।

१३. यदि रोगी बालक के दाने पूरी तरह से न निकलें हों तो गरम बोतलें रखकर अथवा गरम पानी से स्पंज करके दानों को बाहर निकालना चाहिए। दिन में १ बार गरम पानी का स्पंज आवश्यक होता है।

१४. ज्वरकाल में बालक को हलका दूध, ग्लूकोज तथा फलरस ही दें।

१५. स्वेदल, त्रल तथा रेचक औषधियों द्वारा बालक के शरीर से विष द्रव्य को बाहर निकालने का यत्न करना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१६. पौष्टिक भोजन के साथ तरल पदार्थ भी देना चाहिए।

औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—

१. अनुषंगी संक्रमण का मुकाबला करने के लिए 'सल्फोनामाइड' (Sulphonamide) तथा पेनिसिलीन (Penicillin) का प्रयोग किया जाता है।

२. ब्रॉन्को-न्यूमोनिया के उपद्रव वाले रोगियों को 'ऑक्सीजन इन्हेलेशन' तथा निकेथामाइड के साथ ही पेनिसिलीन स्ट्रेप्टोमाइसीन के इञ्जेक्शन देना चाहिए।

३. जिन रोगियों में अनुषंगी आक्रामक पेनिसिलीन तथा स्ट्रेप्टोमाइसिन के प्रतिरोधी हो चुके हों, उन्हें 'कार्टिकोस्टेराइड्स' चिकित्सा के साथ टेट्रासाइक्लीन का सूचीवेध 'क्लोरम्फेनिकाल' सहित अथवा उसके बिना भी देना लाभकारी सिद्ध हुआ है।

४. लैरिञ्जाइटिस की स्थिति में टिं० बेञ्जोइन इन्हेलेशन देना चाहिए। कष्टकर खाँसी (Irritating cough) के लिए कफ लिक्टस (जेफ्रोल कफ सीरप) का प्रयोग करें।

५. कुछ केसिस में इण्ट्रावीनस फ्लूइड्स का प्रयोग आवश्यक होता है।

६. उपद्रवयुक्त केसिस (Complicated cases) में अन्य चिकित्सा के साथ ब्लड-ट्रान्सफ्यूजन (Blood transfusion) तथा गामा ग्लोबुलिन (Gamma globulin) का प्रयोग लाभकारी होता है।

७. विटामिन-सी और बी-कॉम्प्लेक्स का उच्च मात्रा में उपयोग द्वितीयक बैक्टीरियल इन्फेक्शन के समय आवश्यक होता है।

८. ब्रॉन्को न्यूमोनिया, लैरिञ्जाइटिस, डायरिया, सायनूसाइटिस तथा इन्सेफेलाइटिस आदि उपद्रवों में ब्रॉड स्पेक्ट्रम एण्टीबायोटिक का प्रयोग लगभग १-२ सप्ताह तक करना चाहिए।

नोट—स्टेराइड्स का प्रयोग सामान्यतः सेकेण्ड्री बैक्टीरियल इन्फेक्शन में नहीं करना चाहिए।

आँखों को बोरिक लोशन से दिन में २-३ बार धोना चाहिए। साथ ही बोरिक आइण्टमेण्ट लगाना चाहिए। अथवा आँखों में सल्फासिटामाइड सोलू० १०% (एल्बूसिड आई ड्राप) दिन में ३-४ बार डालें।

औषधि चिकित्सा-क्रम—

℞ सीरप क्रोसिन (Syrup Crocin) अथवा मेटासिन (पैरासिटामोल)

मात्रा—१ चम्मच दिन में ३-४ बार।

अथवा—डिस्प्रिन (Disprin)

मात्रा—१०० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर-भार पर विभाजित मात्रा में भोजन के बाद या भोजन के साथ।

बी-कॉम्प्लेक्स सीरप (B-complex syrup)

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१-१ चम्मच दिन में ३ बार।
विटामिन-सी सीरप—½ चम्मच दिन में २ बार। (सीकोन सीरप)
बेनाड्रिल एक्सपेक्टोरेण्ट (Benadril expectorant)
अथवा—फेन्सेडिल लिक्टस (Phensedyl linctus)
मात्रा—½-१ चम्मच दिन में ३ बार।
अथवा—सीरप कोडीन फॉस्फेट (Syrup codine phosphate)
मात्रा—२ मि० ली० दिन में ३ बार।
साथ ही—छाती पर सफेद तेल की मालिश करें अथवा कोलीन पुल्टिस (Caolin poultice) का प्लास्टर बाँधें।

○ यदि बालक छोटी आयु का हो तो उसे दाने निकलने के साथ ही—
℞ बेन्जिल पेनिसिलीन (Benzyl penicillin)
मात्रा—३ लाख यूनिट मांसपेशीगत दिन में १ बार।
साथ ही—सल्फाडायजीन (Sulphadaizine) (M. B.)
मात्रा—½-१ गोली दिन में २ बार ४-५ दिन तक।
नोट—इतना करते रहने से उपद्रवों का प्रतिरोध हो जाता है।
२ वर्ष के बालक को—⅔ गोली प्रति ६ घण्टे पर।
३ वर्ष के बालक को १ गोली प्रति ६ घण्टे पर।
५ वर्ष के बालक को—१ गोली प्रति ४ घण्टे पर दूध में मिलाकर दें।

उपद्रवों की चिकित्सा—

१. मीजिल्स ब्रॉन्को-न्यूमोनिया (Measles broncho-pneumonia)
℞ सल्फाडायजीन या सल्फाडिमीडीन
मात्रा—३-४ ग्राम दैनिक मात्रा ३-४ दिन तक।
फोर्टीफाइड पेनिसिलीन ५००,००० यूनिट्स
मात्रा—२ मि० ली० डिस्टिल्ड वाटर में घोल कर मांसपेशीगत दिन में २ बार ५ दिन तक।

फिर भी लाभ न हो तो—

℞ टेट्रासाइक्लीन (Tetracycline) या क्लोरम्फेनिकाल का प्रयोग करें। यदि इसके प्रयोग से भी लाभ न मिले तो रोगी को अस्पताल में भर्ती करा दें।

अथवा—'एम्पीसिलीन' एवं जेण्टामाइसिन दें।
इण्ट्रावीनस फ्लूइड्स १०० सी० सी० /प्रति किलो शरीर भार पर।
५०० मि० ली० ५% डेक्स्ट्रोज + रिंगर लैक्टेट सोलूशन १ एम्पुल क्लोरोमाइसटीन मुख द्वारा अथवा I/V.
मात्रा—१०० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर ४ विभाजित मात्राओं में।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—एम्पीसिलीन (Ampicillin)

मात्रा—१०० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर ४ विभाजित मात्राओं में।

सीरप बी-कॉम्प्लेक्स+विटामिन-सी (सीकोन)–१ चम्मच दिन में १ बार।

सीरप ट्रिक्लोरिल (Syrup Tricloryl) (ग्लैक्सो)

मात्रा—१ चम्मच दिन में २ बार।

नोट—इसका प्रयोग तब करें जब बालक बेचैन हो।

○ रोगी बालक को दूध का आहार ४-६ औंस प्रति ३ घण्टे पर दें।

२. **ट्रेकीयाइटिस** (Tracheitis)—

○ गम्भीर अवस्था में—टिं० बेञ्जोइन वाष्प इन्हेलेशन दें।

साथ ही—कोडीन फॉस्फेट सीरप (Codine phosphate syrup)

मात्रा—२ मि० ली० दिन में ३ बार (१-५ वर्ष)

४ मि० ली० दिन में ३ बार (६ वर्ष तथा अधिक)

३. **मध्यकर्णशोथ** (Otitis media)—पूय (Pus) का कल्चर करने के पश्चात् उपयुक्त एण्टीबायोटिक का चयन कर प्रयोग करें। साथ ही कान में 'वेटनीसोल इयर ड्राप' दिन में २ बार डालें। अथवा निम्न तेल डालें—

℞ कार्बोलिक एसिड	६०० मिग्रा०
बोरिक एसिड	६०० मिग्रा०
स्पिरिट रेक्टीफाइड	२ ड्राम
ग्लिसरीन	१ औंस

कान में इसकी २-२ बूँद प्रातः-सायं डालें।

४. **प्रवाहिका**—इसके लिए सल्फाग्वानेडीन या कार्बेकिओलीन दें।

५. **मस्तिष्कशोथ**—इसके लिए बार्बीट्यूरेट्स या ब्रोमाइड्स का प्रयोग करें तथा शिरःशूल के लिए—एस्प्रिन, एमीडोपायरिन आदि का प्रयोग करें।

रोग-मुक्ति के पश्चात् रोगी की स्वास्थ्यकर चिकित्सा—रोग-मुक्ति के पश्चात् शारीरिक क्षमता बढ़ाने की दृष्टि से विटामिन्स ए०, डी०, सी०, प्रोटीन्स (प्रोटीनेक्स), कैल्शियम, लौह तथा संखिया के योग उचित व्यवस्था के साथ पर्याप्त समय तक देना चाहिए।

साथ ही—मक्खन, अण्डा, दूध, ताजे फलों का रस आदि विशेष रूप से आहार के रूप में देते रहें।

बचाव (Prophylaxis)—इस व्याधि से बचने के लिए 'गामा ग्लोबुलिन' का प्रयोग आधी मात्रा में करना चाहिए। १ दिन के अन्तर पर इसके २ इञ्जेक्शन पर्याप्त होते हैं। इसे 'Humen normal immunoglobulin' भी कहते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बच्चों की मात्रा—५ किलो भार तक १ मि० ली० । ६-१० किलो भार तक २ मि० ली० I/M. इञ्जे० ।

नोट—यह १०% के सोलूशन में १ और ३ मि० ली० के एम्पुल में आती है । इसे 'Cure Wel' ने निर्मित किया ।

टीका (Vaccine)—ग्लैक्सो कम्पनी ने एक मेवीलिन-२ (Mevilin-2) नाम से मीजिल्स वैक्सीन निर्मित की है, जिसकी एक सिंगल मात्रा ०.५ मि० ली० की है ।

छूत लगने पर—कन्वल्सेण्ट सीरम (Convalscent serum) २.५ मि० ली० मांस में लगायें । ○ इसे १ से ४ दिनों के अन्दर लगा देने से रोग का प्रभाव कम हो जाता है । ५ से ८ दिन हो जाने पर दुगनी मात्रा में इञ्जे० लगायें ।

साथ ही—माइस्टेक्लिन १००–१०० (Mysteclin-100-100) बच्चों को ¼–½ कैपसूल ४-४ घण्टे पर दें । ○ यह चिकित्सा खसरा में विशेष लाभकारी है ।

अथवा—ओरियोमाइसिन का १-१ कै० प्रति ४-६ घण्टे पर दें ।

अथवा—ओम्नामाइसिन का इञ्जेक्शन लगायें ।

मिश्रित चिकित्सा—

℞ सल्काडायजीन	½ गोली
सोडाबाइकार्ब	२४० मिग्रा०
ग्लूकोज	६०० मिग्रा०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार दूध पीते बच्चे को ।

विशेष निर्देश—रोगी की आँखें खसरा के कारण प्रकाश सहन नहीं कर पाती हैं, इसलिए बत्ती तथा लैम्प पर पर्दा या शेड डाल देना चाहिए । सूर्य का तीव्र प्रकाश रोकने के लिए खिड़कियों पर रंगीन पर्दे डाल देना चाहिए । ⊡

संक्रामक रोग 7/12

छोटी माता
(Chicken Pox)

पर्याय—वेरीसेला (Varicella), त्वङ्मसूरिका, विस्फोटिका, विस्फोटक ज्वर ।

परिचय—Chicken pox or varicella is an acute infectious and highly communicable disease, characterized by mild con-

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

stitutional symptoms, a short prodromal period and a rash which passes through the stage of macule, papule, vesicle and crust.

○ बालकों का एक सांसर्गिक रोग (Contagious disease) जिसमें शरीर के विभिन्न भागों में जल-विस्फोट (Vesicles) निकलते हैं, 'छोटी माता' कहलाता है।

कारण—यह एक 'फिल्टरेबिल वायरस' (Filterable virus) के द्वारा होता है।

मौसम—किसी भी मौसम में किन्तु शीत तथा वसन्त ऋतु में विशेष रूप से होता है।

आयु—अधिकतर १० वर्ष से कम उम्र के बालकों में। कभी-कभी अधिक उम्र के बालकों तथा युवकों में भी उत्पन्न होता हुआ देखा जाता है।

प्रसार—इसका प्रसार विस्फोटों, दूषित वस्त्रों, बर्तनों एवं संवाहकों तथा विषाणुओं से दूषित वायु द्वारा होता है।

संचयकाल—१४-२१ दिन। औसतन १७ दिन का होता है।

रोगक्षमता (Immmunity)—एक बार रोग होने पर रोगी में रोग-क्षमता उत्पन्न हो जाती है, जिससे एक बार इसका आक्रमण होने पर जीवन में पुनः नहीं होता है।

पूर्व लक्षण—रोग के लक्षण प्रकट होने से पूर्व रोगी व्याकुलता, दुर्बलता तथा सिर में पीड़ा का अनुभव करता है। कुछ रोगियों में नासाग्रसनीशोथ के लक्षण भी मिलते हैं।

लक्षण एवं चिह्न—

१. ज्वर (Fever)—ज्वर का प्रारम्भ अकस्मात् रूप में होता है तथा व्याधि की सम्पूर्ण अवधि तक विस्फोटों के मुरझा जाने तक बना रहता है। ज्वर मध्यम स्वरूप का प्रायः १०१-१०२° फा० (३८.५-३९° सें०) के बीच रहता है। कभी-कभी ज्वर इतना कम हो जाता है कि अधिक विस्फोट निकल आने के पश्चात् रोगी को अन्य व्याधि का आभास होता है।

२. विस्फोट (Vesicles)—यह सबसे पहले धड़ पर निकलते हैं। वक्ष और उदर की अपेक्षा इसकी संख्या कमर पर अधिक होती है। धड़ से यह विस्फोट चेहरे और दोनों कंधों की ओर फैलते हैं और अन्त में जंघाओं तथा पैरों पर दिखलाई देते हैं।

३. सम्पूर्ण विस्फोट एक साथ नहीं निकलते हैं। प्रत्युत् कुछ अन्तराल पर विभिन्न भागों में दिखलाई पड़ते हैं। जब नये स्फोटों का समूह निकलता है,

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तब ज्वर बढ़ जाता है, और आगे निरन्तर बना रहता है। छोटे बच्चों में ज्वर की तीव्रता बड़े बच्चों की अपेक्षा कम रहती है।

४. विस्फोट कई अवस्थाओं से होकर गुजरते हैं। पहले यह चकत्ते के रूप में निकलते हैं और फिर क्रमशः पिडिका (Papule), जलस्फोट (Vesicle) पूय स्पोटिका (Pustules) का रूप धारण करते जाते हैं।

नोट—मसूरिका दाना बगल में कभी नहीं होता है, किन्तु यह बगल में भी हो सकते हैं।

५. पेपूल्स की अवस्था कुछ-एक घण्टे ही रहती है। अर्थात् यह निकलने के बाद शीघ्र २४ घण्टे के अन्दर-अन्दर स्फोट (Vesicle) बन जाते हैं और ४८ घण्टे के अन्दर ही धुंधले-से होकर पस्टचुल्स (Pustules) बन कर सूखने भी लग जाते हैं और १ सप्ताह के अन्दर झड़ जाते हैं।

६. विस्फोट अनेक प्रकार के हो सकते हैं। जलस्फोटों में स्वच्छ तरल भर जाता है और अधिकतर ये १-३ मि० मी० व्यास के होते हैं। इनके चारों ओर एक छोटा-सा मंडल (Areola) दिखलाई देता है। प्रायः २-३ दिन बाद जलस्फोट 'पूय स्फोटिका' में बदल जाते हैं और इस समय इनके अन्दर पतला पूय भरा होता है।

७. यह रोग लगभग १ सप्ताह तक रहता है। ज्वर तथा बिस्फोटों के अतिरिक्त रोगी के समस्त शरीर में दर्द प्रतीत होता है। इसमें खुजली के अतिरिक्त अन्य कोई लक्षण नहीं मिलता है।

प्रकार—इसका सामान्य स्वरूप ऊपर बतलाया जा चुका है। किन्तु कभी-कभी निम्न अवस्थाएँ भी मिलती हैं—

१. **रक्तस्रावी रोमान्तिका** (Varicella haemorrhagica)—इसमें रक्तस्राव की प्रवृत्ति होती है।

२. **कोथयुक्त रोमान्तिका** (Varicella gangrenosa)—इसमें किंचित् स्फोटों में गैंग्रीन हो जाती है।

३. **बुद्बुदाकृतिक** (Varicella bullosa)—इसमें रोमान्तिका बड़े-बड़े छालों का रूप धारण कर लेती है।

नोट—सामान्य रूप ही अधिक देखने को मिलता है।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—प्रायः छोटी माता और चेचक (रोमान्तिका–स्माल पॉक्स) में बहुत कुछ समानता होती है और कभी-कभी दोनों का भेद कर पाना कठिन हो जाता है। दोनों में निम्न प्रकार से सापेक्ष निदान करना चाहिए—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

	छोटी माता (Chicken pox)	बड़ी माता (Small pox)
१. संचय काल	१४–२१ दिन	८–१२ दिन
२. प्रोड्रोमल स्टेज	०–२ दिन	२–४ दिन
३. लक्षण	हल्के व मध्यम स्वरूप के	गम्भीर स्वरूप के
४. तापक्रम	मध्यम स्वरूप का	उच्च तापक्रम
५. इरुप्टिव स्टेज दिखलाई देना	०–२ दिन	तीसरे तथा चौथे दिन
६. तापक्रम	बराबर एक सा रहता है	लगभग नार्मल रहता है। Pastulation के समय बढ़ जाता है।
७. प्रकृति (Character)	पोलीमॉर्फस (Polymorphus)	मोनोमॉर्फस (Monomorphus)

○ **अन्य लक्षण—**

१. सार्वदैहिक लक्षण कम उग्र होते हैं।	इसमें अधिक तीव्र होते हैं।
२. इसमें रोगी शीघ्र स्वस्थ हो जाता है।	इसमें ऐसा नहीं होता है।
३. विस्फोट शीघ्र निकलते हैं।	विस्फोट देर से निकलते हैं।
४. ठीक होने पर त्वचा पर गर्त नहीं बनते हैं।	त्वचा पर बड़े-बड़े गर्त बन जाते हैं।

○ **अन्य विशेषताएँ—**

५. विस्फोट सर्वप्रथम धड़ पर निकलते हैं।	विस्फोटों का प्रारम्भ माथे से।
६. विस्फोटों की प्रवृत्ति शरीर के अन्दर के भागों से बाहर के भागों पर आने की होती है।	विस्फोटों की प्रवृत्ति शरीर के बाहरी भागों से अन्दर की ओर जाने की होती है।
७. विस्फोट त्वचा पर कोई निशान नहीं छोड़ते हैं।	यह रोग रोगी को स्थायी रूप से कुरूप बना देता है। चेहरे के निशान जीवन भर बने रहते हैं।

नोट—अब हमारे देश में बड़ी माता (Small pox) के रोगी प्रायः नहीं मिलते। इसलिए अब सापेक्ष निदान की आवश्यकता कम ही पड़ती है।

अन्य रोगों से सापेक्ष निदान—

1. Pustular dermatitis.
2. Impetigo contagiosa.
3. Infected scabies.
4. Erythema multiform से।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपद्रव (Complications)—इस रोग में सामान्य रूप से कोई उपद्रव नहीं होता है। किन्तु विस्फोटों में द्वितीयक उपसर्ग के कारण निम्न उपद्रव उत्पन्न हो सकते हैं—१. विद्रधि, २. सेकेण्ड्री इन्फेक्शन ऑफ स्किन, ३. सैलूलाइटिस, ४. मेनिञ्जाइटिस, ५. इन्सेफेलाइटिस, ६. न्यूमोनिया, ७. पल्मोनरी इन्फार्क्शन, ८. मध्यकर्णशोथ, ९. बोलस इम्पेटिगो, १०. हेपेटाइटिस, ११. मायोकार्डाइटिस, १२. नेफ्राइटिस, १३. आर्थ्राइटिस, १४. वृषणशोथ तथा १५. अण्ड अतिवृद्धि (Orchitis and testicular atrophy)।

नोट—उपद्रव प्रायः विस्फोट निकलने के ४-६ दिन बाद अभिव्यक्त होते हैं।

निदान (Diagnosis)—१. मन्द स्वरूप के ज्वर-आक्रमण के २४ घण्टे के अन्तर्गत विस्फोटों का निकलना।

२. विस्फोटों की अवस्थाओं में एक-दो दिन के अन्दर ही सभी प्रकार के परिवर्तनों का होना तथा विस्फोटों की त्वचा उभड़ी हुई होना।

३. खुजली के अतिरिक्त अन्य कोई कष्ट न होना।

—इत्यादि उपरोक्त लक्षणों के आधार पर इस रोग का निदान सरलता से हो जाता है।

अन्य परीक्षात्मक निदान—रक्त में—१. लसकोशिका बहुलता (Lymphocytosis) मिलती है।

२. इओसिनोफिल कोशिकाओं की संख्या में पर्याप्त कमी पायी जाती है।

भावीफल (Prognosis)—यह एक साध्य व्याधि है। मस्तिष्कशोथ तथा रक्तस्रावी प्रवृत्ति प्रायः घातक होती है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)

१. यह एक वायरसजन्य रोग है। इसलिए इसकी लाक्षणिक चिकित्सा होती है।

२. जब तक छिलके न उतर जायें रोगी को २ सप्ताह के लिए सबसे अलग रखना चाहिए।

३. विस्फोटों की उपस्थिति में रोगी को बिस्तरे पर लिटाये रखना चाहिए।

४. रोगी के सम्पर्क में आये सभी कपड़े तथा प्रयोग में आनेवाले सभी सामानों को विसंक्रमित कर लेना चाहिए।

(२) औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—

एण्टीप्रूरीटिक औषधि (Anti-pruritic drug)

१. **B** सिप्रोहेप्टाडिन (Cyproheptadine)

व्या० नाम—पेरीएक्टिन (Periactin)

मात्रा—४ मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—टेबलेट इन्सीडाल (Tab. Incidal)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।
अथवा—टेबलेट एविल (Tab. Avil)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार जल से।
अथवा—प्रोमेथाजीन हाइड्रोक्लोराइड (Promethazine Hcl.) २५ मि० ग्रा०।
व्या० नाम—फेनरगान (Phenargan) (M. B.)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।
अथवा—डिफेन हाइड्रामीन (Diphen hydramine)
व्या० नाम—बेनाड्रिल कैपसूल (Benadryl cap.)
मात्रा—२५ मि० ग्रा० दिन में ३ बार।
अथवा—एण्टी-हिस्टाण्टिन (Anti-histantin)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

२. साथ ही—निम्न योग पीने को दें—

℞ पोटाशियम एसीटेट	९०० मिग्रा०
ला० अमोनिया एसीटेट डायलूट	६० बूँद
एक्वा मेन्थापिंप	३० मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार दें।	१ मात्रा

३. उपरोक्त चिकित्सा के साथ-साथ विस्फोटों पर निम्न औषधियाँ लगायें—
℞ लैक्टो कैलामिन लोशन अथवा जेन्शियन वायोलेट १% स्फोटों पर लगायें। अथवा कैलामिना लोशन + डिटाल १ मि०ली० का प्रयोग करें। शरीर को गरम पोटाशियम परमैंगनेट लोशन (४००० : १) से स्पंज कर बोरिक, जिंक, टाल्क पाउडर विस्फोटों पर लगायें।

○ नोट—निम्न एण्टी-सेप्टिक लोशन Pustules के लिए अधिक उपयोगी हैं—
डिटाल १ मि० ली० + मेन्थोल ०.३ ग्राम + आयल सिनामोम ½ मि० ली० + गरी का तैल ३० मि० ली०—इन्हें मिलाकर लगायें।

द्वितीयक संक्रमण की स्थिति में (In secondary infection)—
℞ बेन्जिल पेनिसिलीन (Benzyl penicillin)
मात्रा—५००,००० यूनिट I/M दिन में ३ बार जब तक इन्फेक्शन कण्ट्रोल में न हो जाय।

○ यदि इन्जेक्शन देना सम्भव न हो तो—
℞ एम्पीसिलिन (Ampicillin)
मात्रा—२५० मि० ग्रा० का १ कै० दिन में ४ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपद्रवों की चिकित्सा—

न्यूमोनिया (Pneumonia)—वायरल डिजीज होने के कारण एण्टी-बायोटिक का प्रयोग व्यर्थ है। अत: ऐसी स्थिति में निम्न चिकित्सा करें—

ऑक्सीजन (Oxygen) ४ लिटर प्रति मिनट के हिसाब से।

नोट—इससे श्यावता (Cyanosis) तथा श्वास सम्बन्धी कष्ट दूर होते हैं।

○ 'टॉक्सीमिया' प्रतीत होने पर—'कोर्टिकोस्टेराइड्स' का प्रयोग करें।

℞ बीटामेथासोन (Betamethasone) ४ मि० ग्रा०

मात्रा—१ मि० ली० I/M प्रति ४-६ घण्टे पर।

नोट—रक्तस्राव तथा मस्तिष्कशोथ की चिकित्सा रोगानुसार करनी चाहिए।

बचाव—(Preventive measures)—

१. खुरंटों (Scabs) को एकत्र कर जला देना चाहिए, जिससे संक्रमण फैलने का भय न रहे।

२ एक बार रोग के आक्रमण के बाद प्राय: स्थायी स्वरूप की क्षमता उत्पन्न हो जाती है।

३. बचाव हेतु कोई वैक्सीन उपलब्ध नहीं है। परन्तु जोस्टर इम्यून ग्लोबुलीन (Zoster immune globulin) Zig. प्राप्त की जा सकती है।

⊡

संक्रामक रोग 7/13

आन्त्रज्वर
(Typhoid)

पर्याय—आन्त्रिक ज्वर, एण्टेरिक फीवर, मियादी बुखार, मोतीझरा, मन्थर ज्वर, मधुकर ज्वर, मौक्तिक ज्वर, तन्द्रिक ज्वर।

परिचय—It is an acute infectious disease caused by salmonella typhi, characterized by gradual onset of fever with malaise, bradycardia, headache, abdominal discomfort and splenomegaly.

○ यह एक विशेष प्रकार का औपसर्गिक ज्वर है। इसमें आँतों में क्षत होता है। क्षुद्रान्य के आधे भाग की लसीका-ग्रन्थियों में तथा सम्पूर्ण क्षुद्रगन्थि समूह (पेयरियन पैच) में शोथ हो जाता है, प्लीहा बढ़ जाती है, शरीर पर मोती जैसे दाने उभड़ आते हैं तथा ज्वर लगातार चढ़ाव-उतार के साथ बना रहता है। यह एक सर्वाधिक होने वाला ज्वर है, जो प्राय: ३-४ सप्ताह तक

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बना रहता है। क्षुद्र अन्त्र में व्रण हो जाना, इस रोग की मुख्य विकृति है। इसीलिए इसे आन्त्रिक ज्वर भी कहते हैं।

कारण—यह 'साल्मोनेला टाइफी' नामक जीवाणु (Bacillus typhosis) द्वारा उत्पन्न होता है। यह संचरणशील जीवाणु है, जो अन्तःकोशीय विष का निर्माण करता है।

संक्रमण—रोग उत्पादक जीवाणु संक्रमित आहार, जल तथा दूध द्वारा आन्त्र में प्रवेश कर जाते हैं और रोगी के मल-मूत्र से बाहर निकलते हैं। जीवाणु के प्रसार में मक्खियों की विशेष भूमिका होती है। इसका संक्रमण प्रायः दूध से अधिक फैलता है।

○ जब रोगोत्पादक जीवाणु स्वस्थ व्यक्ति की आँतों में पहुँच कर व्रणोत्पत्ति करते हैं, जिसके फलस्वरूप रोगी को ज्वर आने लगता है।

रोग के प्रबल होने पर ज्वर के परिणामस्वरूप शरीर में निम्न परिवर्तन देखने को मिलते हैं—

१. जीवाणुओं के परिवर्धन तथा संख्या-वृद्धि काल में टाइफो-टॉक्सिन नामक एक रासायनिक विष उत्पन्न होता है, जिससे लसीकाग्रन्थियों तथा यकृत्-प्लीहा आदि की वृद्धि हो जाती है।

२. रक्त की अशुद्धि, पतलापन, श्वेतकण तथा हीमोग्लोबिन की न्यूनता होने से रोगी का शरीर निस्तेज हो जाता है।

३. मांस का नित्य-प्रति क्षय होता जाता है।

४. रोगी का शरीर श्यामवर्ण का हो जाता है।

५. नाड़ी क्षीण हो जाती है और उसकी गति डेढ़ से दो गुनी तक बढ़ जाती है।

६. उदर में गुड़गुड़ाहट होती है तथा मल दुर्गन्धित होता है।

७. उदर में स्पर्शासह्यता मिलती है।

८. प्यास की अधिकता, मैली जिह्वा तथा उदावर्त आदि परिवर्तन मिलते हैं।

९. रोगी में उपद्रवस्वरूप न्यूमोनिया, श्वासनलिकाशोथ, शुष्क कास आदि उपद्रव होते हैं।

१०. मूत्र लाल, पीला, दुर्गन्धयुक्त तथा थोड़ा-थोड़ा और बार-बार होता है।

११. मूत्र में यूरिया तथा फॉस्फेट अधिक तथा क्लोराइड्स की उपस्थिति कम मिलती है।

१२. शरीर से एक विशेष प्रकार की 'तीखी गन्ध' निकलती है। साथ ही शरीर में गले से लेकर ऊरु तक श्वेत रंग की गुलाबी पिडिकाएँ निकलती हैं जिससे रोग का निदान निश्चित हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१३. चक्कर आना, निद्रानाश, शिरःशूल, शारीरिक शक्ति का ह्रास आदि लक्षण मिलते हैं।

१४. रात्रि के समय प्रलाप की अधिकता होती है।

१५. रोग के प्रारम्भिक दिनों में सायंकाल के समय थोड़ा-थोड़ा ज्वर बढ़ता है। ज्वर के १०१° फा० हो जाने पर ४ दिन पश्चात् अथवा द्वितीय सप्ताह में तापक्रम स्थिर हो जाता है। अर्थात् प्रातः १०१° फा० और सायंकाल १०४° फा० के लगभग रहता है।

१६. प्रयोगशाला में रक्त, मूत्र तथा मल-परीक्षा करने पर आन्त्र जीवाणु (Bacillus typhosis) की उपस्थिति मिलती है।

१७. सीढ़ी के समान तापक्रम चित्रण, शिरःशूल, मैली जिह्वा, अनिद्रा, मोती जैसे दानों का निकलना तथा प्लीहा-वृद्धि आदि से रोग का निदान हो जाता है।

१८. तीव्र रोग में व्रणभाव होता है तथा अतिसार का लक्षण तीव्र होता है।

१९. धमनियों की शक्ति घटने से ब्लड-प्रेशर गिर जाता है।

रोग की प्रधानता (Incubation period)—१. इसका प्रकोप बालकों तथा युवाओं में होता है।

२. यह ग्रीष्म, वर्षा तथा शरद् ऋतु में अधिक होता है।

संचयकाल—५–१४ दिन।

लक्षण—आक्रमण—धीरे-धीरे होता है।

(१) प्रथम सप्ताह (First weak)—

तापक्रम–बुखार (Fever)—रोग के एकमात्र लक्षण रूप में यह एक ऐसा ज्वर है जो धीरे-धीरे प्रारम्भ होता है और सीढ़ीनुमा तापमान चित्र प्रदर्शित करता हुआ पूरे सप्ताह तक बढ़कर लगभग ४०° सें० (१०४° फा०) तक पहुँच जाता है। तापक्रम सुबह की अपेक्षा सायंकाल उच्चतम (Higher) हो जाता है। प्रत्येक सन्ध्या को २ डिग्री बढ़ जाता है और अगले दिन प्रत्येक प्रातः काल १ डिग्री कम हो जाता है।

○ उच्चतम तापक्रम १०वें दिन तक अथवा दूसरे सप्ताह के अन्त तक इतना ही बना रहता है। रोग की तीव्रावस्था में तापक्रम इससे भी अधिक बढ़ जाता है। तीसरे सप्ताह में ज्वर कम होने लगता है और इस सप्ताह के अन्त तक प्रायः उतर जाता है। अथवा चौथे सप्ताह के भी कुछ दिन ले लेता है।

○ प्रथम सप्ताह में तापक्रम कभी नार्मल स्थिति में नहीं आता। कभी-कभी शीत कम्प और तीव्र वेदना के साथ प्रारम्भ होकर सीढ़ी चढ़ने के सदृश ५-६ दिन तक क्रमशः १-१ डिग्री बढ़ता जाता है। कभी-कभी तापक्रम की वृद्धि क्रमिक न होकर आकस्मिक भी होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्य लक्षण—१. प्रायः तापक्रम के साथ तीव्र शिरःशूल, अंगमर्द, बेचैनी तथा उदरशूल के लक्षण मिलते हैं।

२. प्रारम्भिक दिनों में अरुचि (Anorexia), उदर में साधारण वेदना (Abdominal pain), आध्मान, कोष्ठबद्धता तथा अवसाद के लक्षण मिलते हैं। शिरःशूल (Headache) सदैव बना रहता है जो क्रोनल क्षेत्र में प्रसारित होकर शनैःशनैः बढ़ता रहता है।

३. कुछ केसिस में साधारण कास, नासागत रक्तस्राव, वमन, मितली, गले में व्रण (Sore throat) आदि लक्षण मिलते हैं। नासागत रक्तस्राव प्रायः बच्चों में देखने को मिलता है। नाड़ी की गति ९०–१२० बार प्रति मिनट होती है। तापक्रम की तुलना में नाड़ी की गति मन्द रहती है।

४. जीभ मलावृत होती है और उसके अग्रभाग एवं किनारे रक्तवर्ण के होते हैं।

५. प्लीहा स्पर्शलभ्य तथा उदर में दाहिनी ओर 'सीकम' के स्थान पर दबाने से गुड़गुड़ाहट तथा स्पर्शासह्यता मिलती है।

६. तृष्णा-वृद्धि, रात्रि-प्रलाप, अनिद्रा तथा जड़ता होती है। ज्वर के प्रारम्भ में कोष्ठबद्धता, किन्तु सप्ताह के अन्त में अतिसार हो जाता है।

७. उदर में नाभि के नीचे दबाने पर पीड़ा होती है। रोगी की पेशियाँ क्षीण हो जाती हैं तथा मांस गलने लगता है। मूत्र थोड़ा-थोड़ा गहरे लाल रंग का होता है।

८. रोग के प्रारम्भ में शिरःशूल अन्त में अरुचि तथा कार्य करने में अशक्ति होती है, फिर भी रोगी गिरता-पड़ता अपना कार्य करता रहता है। किन्तु २-३ दिनों में उसे शय्या की शरण लेनी ही पड़ती है।

९. इस सप्ताह में रोगी में आलस्य, तन्द्रालुता और मांसशैथिल्य (Prostration) के लक्षण विशेष होते हैं। दिन में वह सोया पड़ा रहता है, किन्तु रात्रि के समय शान्ति से नहीं सो पाता, बल्कि मन्द-मन्द प्रलाप करता रहता है।

१०. रोगी का पेट फूला हुआ मिलता है और स्पर्श में अधिक भारी होता है।

११. रोगी के होष्ठ और त्वचा खुश्क होते हैं।

१२. रोगी की श्वासगति कुछ तीव्र होती है।

१३. टाइफाइड के रोगी की जिह्वा पर मैल अंग्रेजी के अक्षर 'V' की आकृति में जमती है। अनुभवी चिकित्सक इस प्रकार की जिह्वा को देखते ही टाइफाइड का निदान कर लेते हैं। इस प्रकार की जिह्वा की नोक तथा किनारों पर मैल नहीं होती, प्रत्युत् ये भाग चमकीले होते हैं।

 CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—इस अवस्था को प्रसार की अवस्था (Invasion condition) कहते हैं। इसका समय १ सप्ताह का होता है। ज्वर के उत्पन्न होने से इस अवस्था में एक सप्ताह तक रोगी में उपरोक्त लक्षण तथा चिह्न मिलते हैं।

(२) द्वितीय सप्ताह (Second weak)—इसे प्रगति की अवस्था (Advance stage) भी कहते हैं। यदि प्रथम अवस्था में (Invasion stage) में चिकित्सा नहीं की जाती तो दूसरे सप्ताह में निम्नलिखित लक्षण तथा चिह्न मिलते हैं—

○ **ज्वर**—इस सप्ताह में ज्वर प्रायः एक-सा रहता है और वह लगभग १०४° फा० पर निरन्तर बना रहता है। किन्तु प्रातः और सायंकाल के टेम्परेचर में लगभग १ डिग्री या इससे भी कम का अन्तर रहता है।

○ कुछ केसिस में तापक्रम १०४° फा० से भी अधिक पहुँच जाता है। इस दूसरे सप्ताह में रोगी की त्वचा पर गुलाबी रंग के दाने निकल आते हैं। यह दाने शरीर के किसी भी भाग में हो सकते हैं, परन्तु नाभि-प्रदेश में यह अवश्य मिलते हैं। यह विस्फोट कुछ उभरे हुए होते हैं। दाने गुलाबी रंग के मोती के समान चमकदार तथा समूहों (Corps) में होते हैं। इनकी विशेषता यह होती है कि दबाने से ये अदृश्य हो जाते हैं। अनुभव के आधार पर देखा गया है कि ७०% रोगियों में इन विस्फोटों की उपस्थिति नहीं मिलती है। अथवा ये इतने हलके होते हैं कि नंगी आँखों से इन्हें देख पाना कठिन होता है। गौर-वर्ण के रोगियों में इनको देख पाना प्रायः सरल होता है।

○ दाने छाती और उदर पर अधिक निकलते हैं। ये इस रोग के विशेष सूचक लक्षण होते हैं। रोग की इस अवस्था को **व्रणावस्था** (Stage of ulceration) भी कहते हैं।

○ इस सप्ताह में रोगी अधिक तन्द्रालु, शिथिल तथा उदासीन हो जाता है। उसकी सभी मांसपेशियों में वातिक शिथिलता बढ़ जाती है। रोगी पीठ के बल सुस्त और उदासीन होकर शय्या पर पड़ा रहता है।

○ बेचैनी, अनिद्रा, दिन में भी नींद आना, रात्रि में प्रलाप आदि के कारण रोगी को अत्यधिक कष्ट होता है।

○ तृष्णा और अतिसार का कष्ट प्रायः इसी सप्ताह में होता है। मल हरे-पीले रंग का बदबूदार एवं गुड़गुड़ाहट के साथ दिन में ४-५ बार होता है। साथ ही दस्त बिना दर्द के होते हैं। पेट में विशेषकर अफारा रहता है। रोगी उदर में एक अजीब प्रकार की बेचैनी अनुभव करता है। उदर स्पष्ट रूप से फूला हुआ दिखलाई देता है। ५०% रोगियों में अतिसार का लक्षण चलता है। शेष में मलबन्ध (Constipation) की शिकायत होती है।

जीभ बीच में शुष्क तथा मलिन और किनारों पर साफ किन्तु लाल होती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ नाड़ी निर्बल और कम दबाव की द्विस्पंदी (Dicrotic) होती है। इसकी गति १ मिनट में १२० बार तक होती है।

○ रोगी को खाँसी आरम्भ से होती है। इस सप्ताह में यह लक्षण बढ़ जाता है। साथ ही ब्रॉन्काइटिस के लक्षण भी मिलने लगते हैं।

○ रोगी के होंठ सूखे, फटे हुए तथा मलावृत होते हैं।

○ इस सप्ताह तक प्लीहा (Spleen) के आकार में कुछ वृद्धि हो जाती है। हृदय की गति मन्द पड़ जाती है।

○ इसी सप्ताह में कुछ नये उपद्रव प्रारम्भ हो जाते हैं। यदि जीवाणुओं ने आँतों में व्रण उत्पन्न कर दिये हैं तो रोगी के दस्त में रक्त आने लगता है। अथवा आन्त्र-निच्छिद्रण (Perforation) तथा ब्रॉन्को-न्यूमोनिया के उपद्रवों की प्रबल सम्भावना रहती है। रोगी एक गम्भीर स्थिति में फँस जाता है।

नोट—इस सप्ताह में प्रलाप, बेचैनी, तन्द्रा, मुखशोष, जड़ता, कास, दौर्बल्य, अफारा आदि मानसिक सन्ताप बढ़ जाता है, किन्तु ज्वर बढ़कर स्थिर (१०४° फा०) हो जाता है। जिह्वा शुष्क होकर फट जाती है।

○ इस सप्ताह में प्लीहा तथा यकृत् दोनों में रक्तसंचय की वृद्धि हो जाने पर इनके आकार में लगभग १ अंगुल की वृद्धि हो जाती है। जो स्पर्श से अनुभव होती है। स्पर्श में वे मृदु होते हैं।

○ रात्रि के समय प्रलाप अधिक बढ़ जाता है और रोगी को नींद कम आती है। इस प्रकार से द्वितीय सप्ताह के अन्त में यह रोग अपने पूर्व रूप में होता है।

○ इस सप्ताह में तापक्रम बढ़ने पर नाड़ी की गति का अधिक मन्द पड़ जाना टाइफाइड की अपनी एक अलग विशेषता होती है। इस चिह्न को देख कर रोग के निदान में विशेष सहायता मिलती है। इस समय रोगी दिन के समय चुपचाप पड़ा रहता है। उसमें भावहीनता (Apathy) तथा अवसादन (Prostration) स्पष्ट रूप से दिखलाई देते हैं। इस समय शिरःशूल प्रायः अनुपस्थित रहता है।

○ इस सप्ताह में रोगी के रक्त की परीक्षा करने पर श्वेत रक्तकोशिकाओं (W. B. C.) की संख्या में पर्याप्त कमी पायी जाती है। टाइफाइड का यह एक महत्त्वपूर्ण चिह्न होता है। इन्हें देखकर टाइफाइड का निदान किया जा सकता है।

(३) **तृतीय सप्ताह** (Third weak)—इसे अपक्षय (Decline) अवस्था भी कहते हैं।

○ यदि कोई विशेष उपद्रव न हुआ और रोग मृदु प्रकार का रहा तो इस सप्ताह के प्रारम्भ से सन्ताप के लक्षणों में मृदुता आने लगती है। विष-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रक्तता (Toxaemia) के लक्षण जैसे—भावहीनता, अवसादन आदि कम होने लगते हैं। ज्वर भी धीरे-धीरे कम हो जाता है। प्रातःकाल का तापक्रम पूर्व की अपेक्षा कम तथा १-२ दिन बाद सायंकाल का तापक्रम भी कम होने लगता है।

○ तन्द्रा व प्रलाप में कमी, आध्मान व अतिसार की शान्ति तथा रोगी को भीतर से पूर्व की अपेक्षा हलकापन अनुभव होता है। तिल्ली उत्तरोत्तर घटती लगती है। दस्तों की दुर्गन्ध कम हो जाती है और नाड़ी सामान्य गति पर आने लगती है। जीभ साफ होने लगती है।

○ इस सप्ताह के अन्त तक ज्वर प्रायः प्रातःकाल पूर्ण शान्त तथा सायंकाल मन्द स्वरूप का हो जाता है। दाने जिस क्रम से निकलते हैं, उसी क्रम से शान्त होने लगते हैं।

○ इसके विपरीत उग्र प्रकार के रोग में विषरक्तता के लक्षण बढ़ने लगते हैं और विभिन्न प्रकार के उपद्रव दिखलाई पड़ने लगते हैं। इस अवस्था में अवसादन तथा भावहीनता में और अधिक वृद्धि हो जाती है। रोगी में प्रलाप उत्पन्न हो जाता है अथवा जडिमा (Stupor) दिखलाई देने लगती है। जडिमा की स्थिति में रोगी चुपचाप पड़ा रहता है और आधी आँखें खुली होती है। अनजाने में मल-मूत्र का विसर्जन हो जाता है। रोगी शिथिल और उदासीन अवस्था में पीठ के बल असहाय-सा पड़ा रहता है। बेहोशी में मन्द-मन्द प्रलाप करने लगता है। नाड़ी और हृदय की ध्वनि निर्बल हो जाती है, जिससे हाथ-पैर शीतल हो जाते हैं। उसकी अँगुलियों में कम्पन होता है। अथवा वह अपनी अँगुलियों से बिस्तरे के कपड़ों को पकड़ने और उठाने का प्रयास करता है। इस अवस्था को **'परम शिथिलावस्था'** कहा जाता है।

○ कभी-कभी मांसपेशियों में स्फुरण मिलता है और अन्त में विषज हृत्पेशीशोथ (Toxic myocarditis) के कारण रोगी की मृत्यु हो जाती है।

(४) चतुर्थ सप्ताह (Fourth weak)—यह 'उल्लाघ की अवस्था' (Convalescence stage) कहलाती है।

○ यदि रोगी में कोई उपद्रव नहीं होते हैं और विषरक्तता की अवस्था नहीं आती है तो इस सप्ताह में ज्वर सामान्य हो जाता है, परन्तु दुर्बलता बनी रहती है। यह धीरे-धीरे दूर होती है। आन्त्र के व्रण भरने लगते हैं, रोगी को भूख लगने लगती है और जिह्वा साफ हो जाती है। रोगी का भार धीरे-धीरे बढ़ते लगता है और वह अपने को मानसिक तथा शारीरिक रूप से स्वस्थ अनुभव करने लगता है। कुछ दिनों में सब कुछ सामान्य हो जाता है।

○ इसके विपरीत यदि इस सप्ताह में अपथ्य हो जाय तो व्रण बिगड़ जाते हैं और रोगी को पुनः ज्वर हो जाता है। यह देखा गया है कि ५-१० प्रतिशत

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोगियों में रोग का पुनराक्रमण हो जाता है। परन्तु यह आक्रमण पहले की अपेक्षा हलका होता है। असावधानता होने से ही पुनः उपद्रव होने की अत्यधिक सम्भावना रहती है। विरल अवस्था में ज्वर तीसरी और चौथी बार भी हो सकता है, परन्तु यह पूर्व दौरों की अपेक्षा हलका होता है।

○ उपद्रवों में न्यूमोनिया, कर्णमूलशोथ (Mumps) आध्मान, अतिसार, उदरावरणशोथ, पित्ताशयशोथ, सन्धिशोथ, अस्थिमज्जाशोथ, शय्याव्रण, शिराघनास्रता तथा कटिशूल आदि होते हैं।

○ इस सप्ताह में पूर्ण रूप से स्वस्थ होने में अगले दो-तीन सप्ताह और लग जाते हैं।

○ जिनमें रोग मृदु स्वरूप का होता है, उनमें १ सप्ताह तक ज्वर के क्रमशः उतरते रहने के बाद कभी-कभी इस ज्वर का पुनराक्रमण (Relapse) लगभग १५% रोगियों में हो जाया करता है।

नोट—रोग का उपरोक्त चित्रण उस दशा का है, जबकि कोई चिकित्सा नहीं की जाती है। सौभाग्यवश 'क्लोरोमाइसिटीन' तथा 'एम्पीसिलीन' आदि एण्टीबायोटिक्स के अनुसन्धान ने रोग की उपरोक्त लम्बी अवधि को बहुत ही कम कर दिया है।

निदान (Diagnosis)—लक्षणों से रोग को पहचानना कठिन नहीं होता है। ज्वर का क्रमशः चढ़ना, तापक्रम की अपेक्षा नाड़ी की गति का मन्द होना तथा जिह्वा का वर्ण इसे बिलकुल स्पष्ट कर देता है।

○ शिशुओं तथा छोटे बच्चों में इस रोग के कोई विशिष्ट लक्षण नहीं मिलते हैं। जब कभी इस रोग से ग्रसित किसी रोगी के साथ सम्पर्क का इतिहास मिले तब अन्य किसी भी निदान रहित दीर्घ स्थायी ज्वर की स्थिति में आन्त्र ज्वर का पता लगाने के लिए प्रयोगशालीय परीक्षण करना चाहिए।

१ **रक्त-परीक्षा** (Blood test)—

(i) रक्त में श्वेत रक्तकोशिकाएँ (W. B. C.) कम मिलती हैं।

(ii) इओसिनोफिल अनुपस्थित रहते हैं।

(iii) लिम्फोसाइटोसिस (Lymphocytosis) मिलते हैं।

नोट—उपरोक्त गणना मिलने पर टाइफाइड ज्वर की सम्भावना करनी चाहिए।

२. **कल्चर** (Culture)—प्रथम सप्ताह में ९५% रोगियों में कल्चर पॉजीटिव (+) मिलता है। रोगी के मल-मूत्र तथा रक्त में जीवाणुओं की उपस्थिति देख कर ही टाइफाइड का निश्चयात्मक निदान सम्भव होता है

३. **विडाल परीक्षा** (Widal test)—यह परीक्षा ज्वर प्रारम्भ के १०वें दिन की जाती है। इसका धनात्मक (+) होना टाइफाइड का निश्चयात्मक निदान प्रकट करता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—इस प्रकार से—

प्रथम सप्ताह में—रक्त-परीक्षा — { १. ब्लड कल्चर, २. ल्यूकोसाइट काउण्ट

द्वितीय सप्ताह में—विडाल टेस्ट

तृतीय तथा चतुर्थ सप्ताह में— { १. विडाल टेस्ट, २. मल तथा मूत्र-परीक्षा

○ मूत्र से आन्त्रिक ज्वर का ज्ञान प्राप्त करने के लिए 'डयाजो (Diazo) परीक्षा' की जाती है।

उपद्रव (Complications)—आन्त्रिक ज्वर में निम्न उपद्रवों की सम्भावना होती है—पेरीटोनाइटिस, आध्मान, अतिसार, रक्तस्राव, छिद्रण (Perforation), पेरीटाइटिस, कोलीसिस्टाइटिस, ब्रॉन्काइटिस, ब्रॉन्को-न्यूमोनिया, यकृद्विद्रधि, लंग्स अल्सर, मायोकार्डाइटिस, एक्यूट पेरीफेरल सरक्यूलेटरी फेल्योर, थ्रोम्बोफ्लेबाइटिस, मेनिञ्जाइटिस, कोमा, डिप्पीरिया, टाइफाइड स्टेट, न्यूराइटिस, कञ्जंक्टिवाइटिस, मध्यकर्णशोथ, बहरापन, नेफ्राइटिस, ऑस्टियोमाइलाइटिस, इण्डोकार्डाइटिस, इम्बोलिज्म, हीमोलाइटिक अनीमिया, स्पॉण्डीलाइटिस, सिस्टाइटिस, इन्फार्क्शन ऑफ स्प्लीन (Infarction of spleen) तथा प्लूरल इफ्यूजन आदि।

नोट—इसमें निम्न चार उपद्रवों का अधिक भय होता है—१. आध्मान (Meteorism), २. अतिसार (Diarrhoea), ३. रक्तस्राव (Haemorrhage) तथा ४. छिद्रण (Perforation)।

१. आध्मान (Meteorism)—आँत में उपस्थित जीवाणुओं के द्वारा फर्मेण्टेशन क्रिया से गैस उत्पन्न होती है, जिससे सम्पूर्ण उदर फूला हुआ दीखता है। इससे रोगी को अत्यधिक कष्ट होता है। परिस्पर्शन (Palpation) करने से ढोल जैसा शब्द होता है।

२. अतिसार (Diarrhoea)—इस उपद्रव के होने पर रोगी को बहुत पतले दस्त आते हैं। दस्तों के अधिक आने से रोगी अत्यधिक दुर्बल हो जाता है। शरीर में जल तथा लवणों (इलेक्ट्रोलाइट्स) का असन्तुलन उत्पन्न होने से स्तब्धता उत्पन्न हो जाती है।

○ यह एक भयंकर उपद्रव हो सकता है। अतः इसके ठीक करने की तत्काल व्यवस्था करनी चाहिए।

३. रक्तस्राव (Heamorrhage)—इस उपद्रव के होने पर रोगी की स्थिति चिन्ताजनक होती है। मल में रक्त आता है। यह उपद्रव प्रायः तीसरे सप्ताह में उत्पन्न होता है। इसके रोकने की तत्काल व्यवस्था करनी चाहिए, अन्यथा रोगी का जीवन संकट में पड़ सकता है। टेम्परेचर का एकाएक कम होना तथा नाड़ी की वृद्धि इसका प्रमुख लक्षण है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. **छिद्रण** (Perforation)—यह इस रोग का सबसे घातक उपद्रव होता है। इसमें जीवाणुओं के खाने से आँत के व्रण गहरे होते जाते हैं और इससे अन्त में आन्त्र की समस्त भित्तियाँ नष्ट हो जाती हैं और उसमें आर-पार छिद्र बन जाता है। पेरीटोनाइटिस होकर रोगी में स्तब्धता के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में तत्काल ऑपरेशन की आवश्यकता पड़ती है, अन्यथा रोगी की मृत्यु की आशंका दृढ़ हो जाती है।

○ उदर में अकस्मात् पीड़ा, नाड़ी की गति में एकाएक वृद्धि, तापक्रम का निरन्तर गिरते जाना, ब्लडप्रेशर का कम होते जाना—इत्यादि लक्षणों से आन्त्र में छिद्र का अनुमान हो जाता है।

नोट—आन्त्र में छिद्र होने का अनुमान होने पर औषधि चिकित्सा में व्यर्थ समय न गवाँ कर शल्य-विशेषज्ञ के परामर्श से ऑपरेशन की व्यवस्था करनी चाहिए।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. जहाँ पर पोषण का स्तर निम्न प्रकार का होता है, वहाँ के लिए यह रोग गम्भीर होता है। जिन बच्चों की पोषण तथा सेवा-सुश्रूषा उच्चकोटि की होती है, वहाँ मृत्यु दर कम होती है। बड़े बच्चों की अपेक्षा शिशुओं में पूर्वानुमान कम अनुकूल होता है।

२. ब्रॉन्को-न्यूमोनिया, आन्त्रिक रक्तस्राव, स्वरयंत्र में क्षत, आन्त्र-विदार, अतितीव्र ज्वर, सन्ताप, प्रलाप, आध्मान, वृक्कशोथ आदि घातक उपद्रव होते हैं। अधिकतर तीसरे सप्ताह के बाद इनसे मृत्यु हो जाती है।

३. रोगी की प्रथमावस्था में रक्तस्राव होने से रोग असाध्य हो जाता है।

४. रोगी के आन्त्र में उग्रता, समय-समय पर रक्तस्राव, तीव्र नाड़ी-गति, पेरीटोनाइटिस, सहसा आध्मान होना आदि घातक लक्षण होते हैं।

५. प्रातःकाल ताप का बढ़ना, सारे दिन बराबर रहकर रात्रि के समय पुनः बढ़ जाना अशुभ लक्षण है।

६. ताप की अति वृद्धि होकर सहसा ह्रास होना असाध्यता का सूचक है।

७. उदर में तीव्र वेदना, अतिसार, अति दुर्बलता, हाथ-पैर का काँपना आदि अरिष्ट लक्षण होते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) **सामान्य चिकित्सा** (General treatment)—

१. रोग का निदान होते ही रोगी को पूर्ण विश्राम दें।

२. औषधि-चिकित्सा के साथ-साथ उचित सेवा की आवश्यकता होती है।

३. रोगी को प्रतिदिन स्पंज कराकर उसके कपड़े बदल देना चाहिए। साथ ही ऐसा उपाय करना चाहिए जिससे उसे शय्याव्रण न होने पायें।

४ रोगी के मलमूत्र को विसंक्रमित (Disinfect) करने के बाद उसे नष्ट करने की उचित व्यवस्था करनी चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. रोगी को पर्याप्त पोषण की आवश्यकता होती है। अतः पर्याप्त मात्रा में गाय का दूध या दुग्ध-प्रोटीन चीनी मिलाकर पिलाना चाहिए। चाय, फलों का रस तथा शोरबा के रूप में अतिरिक्त तरल देना चाहिए।

६. रोगी को थोड़ा-थोड़ा जल बार-बार पिलाते रहना चाहिए।

७. आरम्भ में आमदोष के पाचन के लिए कम से कम १ सप्ताह तक लंघन कराना आवश्यक है।

८. प्यास लगने पर तथा अधिक दाह होने पर मुसम्मी का रस दिन में १ या २ बार दें।

९. दुर्बल व्यक्तियों में प्रोटीन, हाइड्रोलाइसेट्स तथा विटामिन्स का प्रयोग पूरक आहार के रूप में प्रारम्भ से ही करना चाहिए।

१०. द्वितीय सप्ताह में अधिक समय तक लंघन न कराकर कुछ पोषक आहार का प्रयोग कराना चाहिए। मीठा सन्तरा, मुसम्मी, सेव आदि फलों का रस दिन में १ या २ बार दें।

११. द्वितीय संप्ताह में मलावरोध की प्रवृत्ति रहती है। ग्लिसरीन की वस्ति देकर मल की शुद्धि कराई जा सकती है। छेने का पानी (Whey) पिलाने से मल की गाँठें साफ हो जाती हैं।

१२. चतुर्थ सप्ताह में धीरे-धीरे दूध की मात्रा बढ़ानी चाहिए। धान का लावा, साबूदाना, हॉर्लिक्स, ओवल्टीन और लघु पोषक आहार-द्रव्यों का प्रयोग क्रमिक रूप में किया जा सकता है।

१३. ज्वर-मुक्ति हो जाने के बाद मूंग की दाल का पानी बनाकर सायंकाल से देना आरम्भ कर दें। पहले दिन पथ्य अनुकूल होने पर दूसरे दिन प्रातः मूंग की दाल के पानी में उबले हुए आटे की रोटी का छिलका मिलाकर दें। रुचि बढ़ाने की दृष्टि से साथ में परबल का जूस दिया जा सकता है।

१४. सदा लेटे रहने से शय्याव्रण बनने की अधिक सम्भावना रहती है। अतः रोगी की करवट बदलते रहना चाहिए। शरीर पर रेक्टीफाइड स्प्रिट लगाकर जिंक, बोरिक, स्टार्च का डस्टिंग पाउडर मल दें।

१५. रोगी के लिए दूध सर्वोत्तम होता है। यदि दूध से अतिसार अथवा आध्मान या अजीर्ण की प्रवृत्ति हो तो इसमें लाइम वाटर मिलाकर देना चाहिए। दूध में चाय मिलाकर भी दी जा सकती है। बीच-बीच में फलों का रस भी देते रहें। यदि फिर भी पाचन न हो और उदर में अफारा या मल में छिछड़े आने लगें तो छेने का पानी देना चाहिए।

○ रोगी को दूध के समयों के बीच-बीच में उबाल कर ठंडा किया हुआ जल स्वतन्त्र या ५% ग्लूकोज मिलाकर या ५०० मिली० में १ औंस ग्लूकोज मिलाकर चौथाई-चौथाई करके देना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—यदि कोई रोगी दिन में २-३ लिटर जल या ग्लूकोज न ले तो ज्वरजनित विषों का मूत्र द्वारा निर्हरण करने के उद्देश्य से ४-५ पाइण्ट ५% ग्लूकोज वाला नार्मल सैलाइन इण्ट्रावीनस ड्रिप से देना चाहिए।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ कै० क्लोरम्फेनिकाल (Chloramphenicol)

व्या० नाम—कैपसूल क्लोरोमाइसिटीन (Cap. Chloromycetine)

अथवा—कैपसूल पैराक्सिन (Cap. Paraxin) आदि।

मात्रा—५०० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर जब तक ज्वर सामान्य न हो जाये।

ज्वर सामान्य होने पर—२५० मि० ग्रा० क्लोरम्फेनिकाल दिन में ४ बार १० दिन तक।

○ बच्चों को—क्लोरम्फेनिकाल पाल्मीटेट (Chloramphenicol palmitate)

मात्रा—२५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर।

अर्थात्—१ चम्मच प्रति ६ घण्टे पर।

साथ ही—विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स (Vit. B-complex)

मात्रा—२ चम्मच दिन में २ बार।

टेबलेट पैरासिटामोल (Tab. Paracitamol)

व्या० नाम—मेटासिन, क्रोसिन आदि।

मात्रा—½–१ गोली दिन में ३ बार।

○ पुनरावर्ती के रूप में (In case of relapse)—

℞ क्लोरम्फेनिकाल (Chloramphenicol)

मात्रा—२५० मि० ग्रा० दिन में ३ बार जबतक तापक्रम नार्मल न हो जाय।

तत्पश्चात्—२५० मि० ग्रा० दिन में २ बार ७ दिन तक।

नोट—यदि रोगी विषालु (Toxic) हो अथवा बेहोशी की अवस्था में मुख द्वारा औषधि न ले सके तो—

℞ इञ्जे० क्लोरम्फेनिकॉल सक्सीनेट

व्या० नाम—इञ्जे० कैमीसिटीन (Inj. Kemicitin)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० की १ मात्रा दिन में २ बार मांसपेशीगत।

इसके साथ ही—हाइड्रोकार्टीसोन (Hydrocortisone) I/M ३ मि० ली० डिस्टिल्ड वाटर में घोल कर।

मात्रा—५–१० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर।

निषेध—तीसरे एवं चौथे सप्ताह में 'स्टेराइड्स' का प्रयोग उत्तम नहीं माना जाता।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ जिन्हें क्लोरम्फेनिकाल अनुकूल न हो—

℞ एम्पीसिलीन (Ampicillin) ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल प्रति ६ घण्टे पर दिन में ४ बार ७ दिन तक। रिलैप्स की स्थिति में ७ दिन और दें।

व्या० नाम—एल्वसिलीन (हैक्स्ट), एम्पीसिलीन (यूनीक), पेनबिरीटोन (Penbiriton), वीकेम, रोसिलीन (Roscillin) (रैनवैक्सी)।

अथवा—एमोक्सीसिलीन (Amoxycillin) ५०० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—टेबलेट को-ट्रीमोक्साजोल (Tab. Co-trimoxazole)

व्या० नाम—सेप्ट्रान (Septran) या वेक्ट्रिम (Vectrim)

मात्रा—३ गोली दिन में २ बार १४ दिनों तक।

साथ ही—टेबलेट फूराजोलीडोन (Tab. Furazolidone)

व्या० नाम—फ्यूरोक्सोन (S K F)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० वाली २ गोली दिन में ४ बार जब तक ज्वर सामान्य न हो जाय।

नोट—इस औषधि को १० दिन से अधिक नहीं देना चाहिए।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

(१) परम तापक्रम (High fever)—१०३° फा० (३९·५° सें०) से अधिक होने पर तत्काल—सिर पर बर्फ की थैली का प्रयोग करें। इसके अभाव में सिर पर ठंडे पानी की पट्टी ही रखें। रोगी के शरीर को भीगे तौलिये को हल्का निचोड़ कर खूब पोछें। इस कार्य को प्रति १५ मिनट पर ३-४ बार तब तक करें, जब तक तापक्रम १००° फा० (३८° सें०) तक न न पहुँच जाये।

(२) आध्मान—१. उदर पर गर्म सेंक करें।

२. कार्मीनेटिव मिक्श्चर दें।

गर्म सेंक के लिए—गरम पानी में तारपीन का तेल डालकर मोटा कपड़ा भिगोकर निचोड़ लें। तत्पश्चात् दूसरे महीन कपड़े में लपेट कर उदर पर बाँधें।

○ अधिक आध्मान में आवश्यकता पड़ने पर फ्लेटस ट्यूब (Flatus tube) कॉस्टर आयल में चिकना कर सावधानी के साथ गुदा द्वारा ४–६" ऊपर तक प्रविष्ट किया जा सकता है।

अथवा—लिस्पेमिन (Lyspamine) सपोजीटरी गुदा में लगाई जा सकती है।

अथवा—चारकोल टेबलेट—१ गोली दिन में ३-४ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—अधिक आध्मान की स्थिति में—

पिट्यूट्रिन १ मि० ग्रा० या पिट्रेसिन, प्रोस्टिग्मीन आदि में से किसी का इञ्जेक्शन S/C दिया जा सकता है।

अथवा—(i) टेबलेट अल्ट्राकार्बन (Tab. Altracarbon)

मात्रा—४ गोली प्रति ४ घण्टे पर जब तक आध्मान कम न हो जाय।

(ii) सीरप कार्मीसिड स्ट्राँग (Syrup Carmicide strong)

मात्रा—२ चम्मच दिन में ३ बार।

(३) **अतिसार** (Diarrhoea)—

℞ केओलिन (Kaoline) लाइट (Light)

मात्रा—१ चम्मच प्रति ३ घण्टे पर जब तक यह मल में न निकलने लगे।

अथवा—℞ फुरोक्सोन सस्पेंशन (Furoxone Sus.) (S K F)

मात्रा—२ चम्मच दिन में ३ बार।

अथवा—क्लोरम्फेनिकाल पाल्मीटेट सस्पेन्शन ४ मिली०
केम्फोरेटिड टिं० आफ ओपियम २ मिली०
एनीसी वाटर ३० मिली०
ऐसी एक मात्रा प्रति ६ घण्टे पर। १ मात्रा

○ **विशेष दुर्गन्ध युक्त मल होने पर —**

℞ सल्फा ग्वानेडीन १ गोली
कार्बोकिओलिन ६०० मिग्रा०
विस्मथ कार्ब ६०० मिग्रा०
ऐसी एक मात्रा प्रति ४ घण्टे पर। १ मात्रा

नोट—इसके स्थान पर इण्ट्रोकार्ब, कार्बेण्ट्रीन (Carbentrine), क्लोरोस्ट्रेप (P. D.), सल्फामाइसेटीन, स्ट्रेप्टोट्राइड, फूराक्सोन आदि पेटेण्ट योगों का प्रयोग किया जा सकता है।

(४) **रक्तातिसार** (Bloody diarrhoea)—१. ऐसी स्थिति में आहार बिलकुल बन्द कर दें तथा रोगी को ठंडा जल घूंट-घूंट कर पिलायें।

२. रोगी का पायताना ऊँचा कर दें।

३. पेट के निचले दाहिने भाग पर हल्के-हल्के बर्फ की टकोर करनी चाहिए।

४. मॉर्फीन १० मिग्रा० तथा एट्रोपीन सल्फेट $\frac{१}{१००}$ ग्रेन का इञ्जे० दें।

अथवा—मेनेफ्थोन (Menaphthone)

मात्रा—१० मि० ग्रा० I/M प्रति ८ घण्टे पर।

साथ ही—३०० मि० ली० सैलाइन सोल्युशन को ग्लूकोज सोल्युशन के साथ मिलाकर I/V दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—डेक्स्ट्रोज २५%–१०० मि० ली० I/V।

अथवा—इञ्जे० मॉर्फीन १५ मि० ग्रा०+इञ्जे० एट्रोपीन ०.६ मि० ग्रा०—मिलाकर मांसपेशीगत दें। आवश्यकता पड़ने पर इसे १५ घण्टे बाद पुनः दें।

नोट—कोगूलिन (Coagulin) (सीबा कं०) २० मि० ली०, कैल्शियम ग्लूकोनेट १०%–२५ मि० ली०, विटामिन 'के' ५०० मा० ग्रा०—इनमें से किसी का प्रयोग किया जा सकता है।

○ ये औषधियाँ साथ-साथ या अलग-अलग प्रत्येक १२ घण्टे पर दी जा सकती हैं।

(५) **प्रलाप** (Delirium)—

℞ क्लोरप्रोमेजीन (Chlorpromazine)

व्या० नाम—लार्गेक्टिल (Largactil) २५ मि० ग्रा०

मात्र—१ गोली मुख द्वारा आवश्यकतानुसार।

○ कम्पोज टेबलेट भी दी जा सकती है।

○ तीव्र प्रलाप की स्थिति में—हायोसीन हाइड्रोब्रोमाइड (Hyoscine hydrobromide) १ मि० ली० मांसपेशीगत।

अथवा—पैराल्डिहाइड ५-८ मि० ली० मांसपेशीगत।

(६) **मलावरोध** (Constipation)—प्रारम्भ में मलावरोध रहता है। इसके लिए निम्न औषधि दें—

℞ केलोमल (Calomel)	१५ मिग्रा०
पल्व रिहाई (Pulv. Rehai)	१२० मिग्रा०
सोडा बाइकार्ब (Soda bicarb.)	३६० मिग्रा०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रति ½ घण्टे पर ३-४ बार तक।

अथवा—हर्बोलेक्स स्ट्रांग—१ गोली रात्रि में सोते समय।

अथवा—ग्लिसरीन सपोजीटरी बड़ी वाली १-२ गुदा में लगायें।

○ रोग के तृतीय सप्ताह में मलावरोध होने पर—

१२० मि० ली० साबुन वाले जल (९८° फा०) में ६० ग्राम ग्लिसरीन डाल कर कैथेटर युक्त एनीमा सिरिञ्ज से धीरे-धीरे वस्ति दें।

(७) **कास** (Cough) **की स्थिति में**—ऑरियोमाइसिन ट्रोचिस चूसने को दें। मेण्डलस पेण्ट या फैरी-ग्लिसरीन पेण्ट को गले में लगायें।

(८) **शय्याव्रण** (Bed sore)—रेक्टीफाइड स्प्रिट से साफ कर दिन में १ बार बोरिक एसिड पाउडर लगायें। यदि खाल फट कर अलसर बन गये हों तो एक्रीफ्लेवीन आइण्टमेण्ट लगायें।

(९) **विषमयता** (Toxaemia)—

℞ हाइड्रोकार्टीसोन सक्सानेट

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—२ मि० ली० मांसपेशीगत ३-४ दिन तक।

(१०) **कर्णमूलशोथ** (Mumps)—

१. **लगाने के लिए**—मुख को नियमित रूप से शुद्ध रखें। पोटाश या डिटॉल से कुल्ला करायें। शोथ स्थान को गर्म जल से सेंक कर 'एण्टीफ्लोजिस्टीन' की पुल्टिस बाँधें। इक्थियोल बेलाडोना का प्रयोग किया जा सकता है।

२. **खाने के लिए**—पेनिसिलीन, टेट्रासाइक्लीन, आइलोटाइसिन, ओरियोमाइसिन, एम्पीसिलीन आदि का व्यवहार करें।

(११) **न्यूमोनिया**—पेनिसिलीन, टेट्रासाइक्लीन—इनमें से किसी का प्रयोग करें। स्थानीय चिकित्सा हेतु—सेंक तथा पुल्टिस का प्रयोग करें। हृदय के लिए बलकारक औषधियाँ दें।

(१२) **आन्त्र-छिद्रण** (Intestinal perforation)—यह एक गम्भीर स्वरूप का उपद्रव होता है। यदि उदर में तीव्र पीड़ा मालूम पड़े और रोगी का तापक्रम सबनार्मल हो जाये तो आन्त्र-छिद्रण की चिकित्सा रक्तस्राव के समान करनी चाहिए।

○ इञ्जे० मॉर्फीन १५ मि० ग्रा०+इञ्जे० एट्रोपीन ०.६ मि० ग्रा०—इन दोनों को मिला कर मांसपेशीगत लगायें। 'क्लोरम्फेनिकाल' देना जारी रखें। इसका २४ घण्टे में ४-८ ग्राम तक इञ्जेक्शन दें।

○ इस उपद्रव के होने से पूर्व रोगी में शॉक (Shock) का कोई लक्षण हो तो 'ग्लूकोज सैलाइन' या 'डेक्स्ट्रोज' ५०० मि० ली०+इफकोर्लिन १०० मि० ग्रा० I/V दें।

○ रोगी को अस्पताल में रख कर ब्लड-ट्रान्स्फ्यूजन दिया जा सकता है। आवश्यकता पड़ने पर ऑपरेशन की व्यवस्था भी की जा सकती है। दुर्बल रोगियों का ऑपरेशन सम्भव नहीं।

(१३) **हृदय-नैर्बल्य** (Circulatory weakness)—एक चम्मच ब्रॉण्डी + ग्लूकोज जल मिलाकर प्रति ६ घण्टे पर दें।

○ यदि आवश्यक हो तो निकेथामाइड (Coramine) १ मि० ली० S/C या मांसपेशीगत दें।

○ सरक्यूलेटरी फेल्योर की स्थिति में—हाइड्रोकार्टीसोन सोडियम सक्सीनेट १०० मि० ग्रा० २ मि० ली० डिस्टिल्ड वाटर में घोल कर I/V दें। यह ग्लैक्सो कम्पनी का एफकोर्लिन सोल्युशन (Efcorlin solution) के रूप में आता है। इसे मांसपेशीगत भी दिया जा सकता है।

(१४) **आन्त्रगत रक्तस्राव** (Intestinal haemorrhage)—प्रायः तीसरे सप्ताह में धमनियों के फटने से यह उपद्रव होता है। इसमें अकस्मात् रक्तस्राव, उदरपीड़ा तथा सबनार्मल टेम्परेचर आदि लक्षण होते हैं। ऐसी स्थिति में तत्काल निम्न उपचार करें—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

℞ मॉर्फीन सल्फेट (Morphine sulphate)

मात्रा—१५ मि० ग्रा० (१ मि० ली० में) १ बार में मांसपेशीगत ।

○ यदि आवश्यक हो तो ब्लड-ट्रान्सफ्यूजन दें ।

○ क्रोमोस्टेट व स्ट्रेप्टोक्रोम आदि का उपयोग २ मि० ली० की मात्रा में इञ्जेक्शन रूप में किया जा सकता है । किन्तु लाभ संदिग्ध है ।

○ १ ड्राम एड्रीनलीन क्लोराइड २५० मि० ली० शीतल जल में मिलाकर १-१ चम्मच दिन भर में पिलाते रहें ।

साथ ही—कैल्शियम क्लोराइड और कैल्शियम ग्लूकोनेट को मांस या नस में लगायें ।

(१५) ब्रॉन्को-न्यूमोनिया—

℞ बेञ्जिल पेनिसिलीन (Benzyl penicillin) ३०० मि० ग्रा०

मात्रा—५००,००० यूनिट्स I/M दिन में २ बार ७ दिन तक ।

(१६) पित्ताशयशोथ—हेक्सामीन, काइलोट्रोपीन, ग्लूकोज सोलूशन तथा विटामिन सी आदि का उपयोग किया जा सकता है ।

(१७) मूत्राशयशोथ—पानी का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में करें । साथ ही निम्न योग दें—

℞ हेक्सामीन	१० ग्राम
डीकोलीन	३०० मिग्रा०
सोडा बाइकार्ब	१२०० मिग्रा०
टिं० हायोसायमस	१५ बूंद
सीरप औरेन्शाई	१ ड्राम
एक्वा क्लोरोफार्म	१ औंस
ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर ४-५ दिन तक ।	१ मात्रा

○ मूत्र की मात्रा कम होने पर—डेक्स्ट्रोज ५०० मि० ली० (१२½%) + विटामिन सी ५०० मि० ग्रा० + सोडा बाइकार्ब सोलूशन २० मि० ली० का प्रयोग I/V ड्रिप से करें ।

(१८) अनिद्रा की स्थिति में—'डायल' १ गोली अथवा 'सोमेरिल' १ गोली रात में सोते समय दें ।

रोग के पश्चात् की चिकित्सा—

रोग-मुक्ति के पश्चात् रोगी अत्यन्त दुर्बल हो जाता है । ऐसी स्थिति में—

१. आयरन, कैल्शियम, प्रोटीन युक्त विटामिन्स आदि का व्यवहार करें ।

२. मल्टी-विटामिन्स, यथा—थेराग्रान (Theragran), मल्टीविटा-प्लेक्स, बीकाडेक्स आदि का उपयोग करें ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. फेरीलेक्स, केसीलोन, लीडरप्लेक्स आदि का उचित मात्रा में प्रयोग करें।

बचाव हेतु (Proplylaxis)—

टी० ए० बी० वैक्सीन (T. A. B. Vaccine) १ मि० ली० S/C दें। १० दिन बाद दोहरायें।

टाइफाइड की मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१. ℞ इण्टेरोमाइसेटिन (डेज) ५०० मि० ग्रा०	१ कै०
डेल्टा-कार्ट्रिल (फाइजर)	१ गोली
पैरासिटामोल सीरप	१० मिली०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार। बच्चों को $\frac{1}{4}$–$\frac{1}{2}$ मात्रा।

○ यह उत्तम ज्वर-नाशक योग है।

२. ℞ क्लोरम्फेनिकाल पल्व	२५० मिग्रा०
प्रेडनीसोलोन पल्व	५ मिग्रा०
सीलिन पाउडर	१०० मिग्रा०
सीरप ऑरेञ्ज	१० मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।	१ मात्रा

टायफाइड रोग के सम्बन्ध में ज्ञातव्य—

१. यदि क्लोरम्फेनिकाल को देने के पश्चात् बच्चे के शरीर का तापक्रम अचानक गिर जाय अथवा परिसंचरण निपात होने लगे तो औषधि तुरन्त रोक देनी चाहिए। इसके बदले ऑक्सीटेट्रासाइक्लीन देने से कुछ लाभ मिलता है। इसके बदले में एम्पीसिलीन ५०–१०० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर विभाजित मात्रा में दिया जा सकता है।

२. इस रोग में पथ्य विशेष महत्त्व रखता है। जीवाणुओं के आक्रमण से रोगी की आँतों में जख्म हो जाते हैं, जिससे आँते अतिशय दुर्बल हो जाती हैं। इसलिए ४ सप्ताह या इससे भी अधिक समय तक रोगी को गरिष्ट भोजन जैसे—पूड़ी, कचौड़ी आदि खाने को नहीं देना चाहिए। इससे आँतों पर अधिक जोर पड़ता है और रोगी की मृत्यु की सम्भावना रहती है।

३. रोगी को जहाँ तक हो सके केवल दूध पर ही रखना चाहिए। दूध को अधिक पौष्टिक तथा स्वादयुक्त बनाने के लिए इसमें 'हॉलिक्स', 'कॉम्प्लान' तथा 'बोर्नविटा' आदि पेटेण्ट खाद्य मिला लेना चाहिए। दूध एक बार में १ कप से अधिक न दिया जाय।

४. जिन लोगों को दूध से अरुचि हो और दूध लेने से अतिसार आदि उत्पन्न हो जाते हों, उन्हें मूँग की दाल की पतली खिचड़ी दी जा सकती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. सन्तरा तथा मौसम्मी का रस यथेष्ट मात्रा में प्रयोग करायें। उबाल कर ठंडा किया हुआ जल भी पर्याप्त मात्रा में पीने को देना चाहिए।

६. रोगी को विश्राम अति आवश्यक है। रोगी के ठीक हो जाने पर भी १५-२० दिन तक पूर्ण विश्राम कराना चाहिए।

अन्य आवश्यक निर्देश—

१. क्लोरोमाइसेटीन (क्लोरम्फेनिकाल) सदैव पी. डी., आई. डी. पी. एल. अथवा हिन्दुस्तान एण्टीबायोटिक या साराभाई केमिकल की बनी 'Raclor' को ही प्रयोग में लाना चाहिए।

२. लोगों की धारणा है कि क्लोरम्फेनिकाल का प्रयोग ज्वर के पाचवें या ६ठे दिन से पहले नहीं करना चाहिए।

३. रोगी को औषधि (क्लोरम्फेनिकाल) चौथा घण्टा समाप्त होते ही दे देनी चाहिए। यदि रोगी को नींद आ जाय तो उसे जगाना नहीं चाहिए।

४. प्रति ४ घण्टे पर रोगी का तापक्रम देखना चाहिए और उसे कागज पर नोट करते जाना चाहिए। औषधि-सेवन करने के पाँचवें-छठे दिन तक रोगी का तापक्रम नार्मल स्थिति में आ जाना चाहिए। यदि तापक्रम का चार्ट देख कर यह मालूम हो कि ताप का शिखर नीचे आता जा रहा है तो समझना चाहिए कि औषधि अपना कार्य कर रही है। अन्यथा उसे कोई अन्य रोग है।

५. एक बार ज्वर के सामान्य होने पर इसकी १-१ कैपसूल (२५० मि० ग्रा० की) दिन में ३ बार अगले १ सप्ताह तक सेवन कराते रहना चाहिए। जिससे रोग की पुनरावृत्ति (Relapse) की आशंका न रहे।

६. रोग के पलट जाने पर २५० मि० ग्रा० का १ कै० दिन में ३ बार ज्वर उतरने तक देते रहना चाहिए। इसके बाद १ कै० दिन में २ बार १ सप्ताह तक और देते रहें।

७. आजकल चिकित्सक 'एम्पीसिलीन' तथा 'को-ट्राईमेथोक्साजोल' का अंधाधुंध प्रयोग करा रहे हैं। पर सदैव स्मरण रखना चाहिए कि टाइफाइड के लिए 'क्लोरोमाइसिटीन' अर्थात् क्लोरम्फेनिकाल से उत्तम अन्य कोई औषधि नहीं है।

○ इन औषधियों का प्रयोग तभी कराना चाहिए जब 'क्लोरम्फेनिकाल' से लाभ न मिले अथवा यह औषधि रोगी के माफिक न पड़ रही हो। अथवा रोग पलट जाने पर इनका प्रयोग करके देखा जा सकता है।

८. आजकल बहुत से नये चिकित्सक रोगी को तत्काल राहत दिलाने के लिए 'प्रेडनीसोलोन' का सेवन करा रहे हैं। परन्तु इनकी कोई आवश्यकता नहीं है। इनसे रोग कम नहीं होता है, बल्कि रोग के पलटने की सम्भावना बनी रहती है। अतः इनका सेवन न कराना ही अच्छा है। हाँ विषमयता की स्थिति में इनका प्रयोग उत्तम रहता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. अधिकांश नये चिकित्सक 'क्लोरम्फेनिकाल' के साथ प्रेडनीसोलोन का प्रयोग करने लगते हैं, जिससे रोगी का तापक्रम सामान्य से नीचे अर्थात् सब-नार्मल हो जाता है, जिससे रोगी के हाथ-पैर ठंडे हो जाते हैं, जो एक गम्भीर अवस्था का द्योतक है।

○ ऐसी स्थिति में तत्काल रोगी को ब्रॉण्डी पिलाना चाहिए। शरीर को कम्बल से ढँक कर हाथ-पैरों की मालिश करनी चाहिए।

१०. रोग का तृतीय सप्ताह अधिक नाजुक होता है। इस सप्ताह में ऐसे उपद्रव पैदा हो सकते हैं, जिससे रोगी की मृत्यु की अधिक सम्भावना रहती है। इसमें रक्तस्राव अथवा आँतों में छिद्र हो जाना (Perforation) प्रमुख है। अतः इस सप्ताह में मल का निरीक्षण करते रहना चाहिए। ○ यदि मल में १ बूँद भी रक्त दिखलाई दे अथवा पेट में तीव्र पीड़ा होने लगे; जिसके साथ-साथ तापक्रम अचानक कम हो जाये और नाड़ी की गति बढ़ जाये तो आँतों से रक्तस्राव हुआ है, इसका संदेह करते हुए रोगी को तत्काल अस्पताल भेज देना चाहिए, जिससे वहाँ ब्लड-ट्रान्सफ्यूजन तथा ऑपरेशन की उचित व्यवस्था हो सके।

○ ऐसी स्थिति में यदि रोगी को तुरन्त अस्पताल पहुँचाने में विलम्ब हो, तो तत्काल मॉर्फीन इञ्जेक्शन १५ मि० ग्रा०+हायोसीन ०·३ मि० ग्रा० मांसपेशीगत लगायें और 'क्लोरम्फेनिकाल' पूर्ववत् ही चालू रखें।

११. रोग-मुक्त व्यक्तियों में उनके मल में इस रोग के जीवाणु आते रहते हैं। कुछ-एक के मूत्र में ये जीवाणु आते हैं। यह जीवाणु गाल-ब्लैडर में भी एकत्रित हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में 'एम्पीसिलीन' १ ग्राम दिन में ३ बार ३ सप्ताह तक देते रहना चाहिए।

१२. 'क्लोरम्फेनिकाल' के प्रयोग के समय रोगी को विटामिन 'बी-कॉम्प्लेक्स' की गोलियाँ तथा इसके इञ्जेक्शन मांस द्वारा (I/M) अवश्य देते रहना चाहिए, क्योंकि जो जीवाणु इसे आँत में बनाते हैं, वह क्लोरम्फेनिकाल के द्वारा नष्ट हो जाते हैं।

१३. 'कोर्टिकोस्टेराइड' का प्रयोग तीव्र विषमयता (Acute toxaemia), मायोकार्डाइटिस, पेरिफेरल सरक्यूलेटरी फेल्योर तथा इन्सेफेलोपैथी की स्थिति में करना चाहिए।

१४. रोगी को उपयुक्त द्रव्य शिरामार्ग से (Intravenous fluids), एण्टीबायोटिक व्यवस्था, विटामिन-सी तथा पौष्टिक आहार (Neutritional diet) आदि की व्यवस्था एण्टीबायोटिक औषधियों के साथ होनी चाहिए।

१५. टाइफाइड के रेसिस्टेण्ट केसिस में 'सेफेलोस्पोरिन्स' (Cephalosporins) ५०–१०० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर, जेण्टामाइसीन

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(Gentamycine) ३-६ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर तथा स्ट्रेप्टोमाइसिन ४०-५० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर २४ घण्टे के अन्दर देना चाहिए। □

संक्रामक रोग 7/14

फाइलेरिया रोग
(Filariasis)

पर्याय—एलीफैण्टियेसिस (Elephantiasis), फीलपाँव, श्लीपद, हाथी पाँव, हस्तिचर्मता, फाइलेरिया, श्लीपद ज्वर, हाथीपगा आदि।

रोग-परिचय—It is a helminthic infection commonly due to *F. Bancrafti* transmitted by mosquito bite and is characterized by periodic rise of temperature, lymphangitis, orchitis, funiculitis, urticaria, hydrocele, scrotal lymphoedema and elephantiasis eosinophilia is common.

○ यह एक जीवाणुजन्य संक्रमण है, जो क्यूलेक्स मच्छर के दंश द्वारा शरीर में फाइलेरिया बैंक्रेफ्टॉई (Filaria bancrafti) के प्रविष्ट होने से उत्पन्न होता है। इस रोग के प्रारम्भ में हाथ-पैरों तथा वृषणों में सूजन और लालिमा उत्पन्न हो जाती है। शीतकम्प के साथ १५ दिनों पर एक बार ज्वर आता है। रक्त में इसकी प्रविष्टि सायं ६ बजे से शुरू होकर आधी रात तक में समस्त शरीर में फैल जाती है। लसीका वाहिनियों में रुकावट उत्पन्न होकर लटकने वाले अंगों में लसीका का संचय हो जाता है। पैरों, अण्डकोषों, हाथों में विचित्र सूजन एवं त्वचा की स्थूलता, जो धीरे-धीरे बढ़कर स्थायी हो जाती है। बाद में पुराना होकर पैर और हाथ सूजकर हाथी के पैर के समान हो जाते हैं।

कारण—'फाइलेरिया बेन्क्राफ्टाइ' नामक कृमि से रोग को उत्पत्ति होती है।

प्रसार—क्यूलेक्स जाति के फैटिगान्स (Fatigans) नामक मच्छरों द्वारा।

कृमि के जीवन-चक्र की अवस्थाएँ—प्रथम पूर्ण विकसित कृमि तथा द्वितीय सूक्ष्म श्लीपदी।

संक्रमण क्षेत्र—यह रोग भारतवर्ष के समुद्रवर्ती प्रान्तों में जैसे—असम, बंगाल, महाराष्ट्र तथा तमिलनाण्डु आदि में अधिक मिलता है। यह बिहार तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश के कई जिलों में भी मिलता है।

आयु—इस रोग का प्रकोप प्रायः मध्यम आयु वाले व्यक्तियों में अधिक देखने को मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिंग (Sex)—पुरुषों में अधिक ।

प्रकोप का विशेष समय—अमावास्या और पूर्णिमा के आस-पास ।

संचय काल—१२ माह तक ।

रोग लक्षण—फाइलेरिया के कारण विशिष्ट प्रकार के विकृतिजन्य निम्न-लिखित लक्षण उत्पन्न होते हैं—

१. रोगी को शीतपूर्वक ज्वर आता है । यह १०१–१०४° फा० तक रहता है । यह सन्तत या अर्ध विसर्गीरूप का होता है ।

२. ज्वर-आक्रमण के कुछ घण्टे बाद शरीर के किसी विशेष भाग में स्थानीय वेदना के लक्षण उत्पन्न होते हैं ।

३. शाखाओं में वेदना तथा लसग्रन्थियों की वृद्धि होती है । यह वृद्धि वंक्षण, कक्षा तथा जाँघ एवं प्रकोष्ठ के भीतरी भाग में होती है ।

४. थोड़ी मात्रा में लसग्रन्थियों में वृद्धि होकर त्वचा में शोथ उत्पन्न हो जाता है ।

५. इसके विपरीत कुछ व्यक्तियों में ज्वर सन्ताप की सीमा तक पहुँचकर गम्भीर विषमयता के लक्षण पैदा हो जाते हैं ।

६. रोगी में मलेरिया के समान तीव्र कम्प होता है ।

७. ज्वर कम होने पर रोगी को बहुत अधिक पसीना आता है । प्रायः ३ से ५ दिनों के अन्दर ज्वर स्वतः शान्त हो जाता है ।

८. द्वितीय संक्रमण की स्थिति में विकृत भाग में विद्रधि उत्पन्न हो जाती है, जिससे ज्वर एक लम्बे समय तक चलता रहता है । कुछ रोगियों में कई मास तक जीर्ण ज्वर के लक्षण मिलते रहते हैं ।

९. इसमें टाँगों के ऊपर की त्वचा में शोथ होकर उसका रंग गहरा हो जाता है । आक्रान्त टाँग दुगनी-तिगुनी मोटी हो जाती है, किन्तु वहाँ पर अँगुली का दबाव डालने पर गढ़े नहीं पड़ते ।

१०. लसीकावाहिनियों के फूलने से कई जगह उभार बन जाते हैं, जिनसे दूधिया जल के सदृश तरल बहता है ।

११. रोग का प्रभाव अण्डकोष में होने से अण्डकोष ४० किलोग्राम तक भारी हो सकते हैं ।

१२. रोग का आक्रमण बार-बार होता रहता है । प्रत्येक आक्रमण के बाद टाँग पहले की अपेक्षा स्थूल होती जाती है ।

नोट—फाइलेरिया में ज्वर के अनेक रूप मिल सकते हैं, जैसे—प्रतिदिन ज्वर का कम या अधिक होना, लसवाहिनीशोथ के कारण ज्वर का निरन्तर बने रहना, विद्रधि के कारण ज्वर के प्रारम्भ में जाडा लगना और बाद में पसीना आने से ज्वर का कम होना । ज्वर प्रायः शोथ या अनूर्जता के कारण होता है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिह्न (Signs)—रोगी में आक्रमण के समय निम्न लक्षण मिलते हैं—

१. तापक्रम प्रायः ऊँचा होता है।

२. लसिकावाहिनियाँ (Lymphatic vessels) स्पर्शयुक्त, कार्ड की तरह मुलायम (Tender) होती है।

३. लसिकाग्रन्थियाँ (Lymph nodes) बढ़ी हुई तथा मुलायम होती हैं।

४. क्युटेनियस एरीथिमा तथा आर्टीकेरियल रेसिस मिलते हैं।

५. स्पर्मेटिक कॉर्ड (Spermatic cord) मुलायम होती है और मोटी होकर पीड़ायुक्त हो जाती है।

६. कञ्जंक्टिवाइटिस तथा प्लूरिसी की उत्पत्ति हो जाती है।

○ ये सभी आक्रमण धीरे-धीरे कुछ दिनों में शान्त होकर पुनः होते हैं।

○ चिरकारी रोग (Chronic cases) में स्क्रोटम (Scrotum) में स्थायी शोथ (Swelling) उत्पन्न हो जाता है। यह स्थायी शोथ 'बल्वा' तथा पैरों में भी हो जाता है। काइलूरिया (Chyluria) तथा रक्तमेह (Haematuria) भी कदाचित् मिल सकता है।

○ इस रोग की गम्भीरता भिन्न-भिन्न रोगियों में भिन्न-भिन्न मिलती है। कई रोगियों में इसके कोई लक्षण नहीं मिलते हैं, जबकि अनेक रोगियों में उपरोक्त लक्षणों में से कई लक्षणों की उपस्थिति मिलती है।

विशेष अन्वेषण (Special investigation)—

रक्त-परीक्षा (Blood examination)—ल्यूकोसाइटोसिस के साथ इओसिनोफीलिया की उपस्थिति। इस परीक्षा में रक्त लेकर काँच की स्लाइड पर स्थूल लेप बनाकर परीक्षण करने से रक्त में फाइलेरिया मिलते हैं।

नोट—रक्त में कृमि की उपलब्धि न मिलने पर रोग-निदान के लिए 'इण्ट्राडर्मल टेस्ट' किया जाता है।

○ रक्त में W. B. C. तथा इओसिनोफिलस की संख्या में वृद्धि मिलती है।

○ कॉम्प्लीमेण्ट फिक्सेसन टेस्ट पोजीटिव (+) मिलता है।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—इस रोग का पार्थक्य निम्न रोगों से करना चाहिए—

१. मलेरिया।
२. आमवातिक ज्वर।
३. पूयविषमयता जन्य ज्वर।
४. शिराशोथ।

फाइलेरिया का अनुमानित निदान—

१. फाइलेरिया-प्रधान स्थानों में निवास करना।

२. शीतपूर्वक ज्वर का आक्रमण होना।

३. अमावास्या या पूर्णिमा के समय आक्रमणों की अधिकता

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. ज्वर आक्रमण के समय शरीर के किसी अंग में विशेषकर वृषण तथा पैरों में शोथ की उत्पत्ति।

५. ज्वरमोक्ष के बाद शोथ का उपशम।

६. समवृद्ध लसीकावाहिनी अथवा लस-ग्रन्थियों की वृद्धि एवं वेदना।

७. पसीने के साथ ज्वर का उतर जाना इत्यादि लक्षणों के आधार पर फाइलेरिया का अनुमान किया जाता है।

○ प्रायः रोगी चिकित्सक के पास परामर्श हेतु ऐसे समय आता है, जब प्रारम्भिक आक्रमण प्रायः समाप्त हो चुके होते हैं और ज्वर के उत्तरकालीन परिणाम—पैरों में शोथ (Elephantiasis) हो जाता है। ऐसी स्थिति में रोग-निदान में चिकित्सक को कोई कठिनाई नहीं होती।

○ रक्त में 'इओसिनोफिलस' की १५-२०% वृद्धि, फाइलेरिया कृमि की उपलब्धि अथवा 'कॉम्प्लीमेण्ट फिक्सेसन टेस्ट' का पॉजीटिव (+) मिलना रोगनिदान में पूर्ण सहायक होता है।

उपद्रव (Complications)—इस रोग में निम्न उपद्रव देखने को मिलते हैं—

१. त्वचा में हाथी के चर्म के समान विकृति।

२. वृषण की अत्यधिक वृद्धि (४० कि० ग्रा० तक)।

३. विद्रधि (Abscess)।

४. पायसमेह (Chyluria)।

५. जलोदर (Ascitis)।

६. तीव्र सन्ताप (Hyperpyrexia)।

७. प्रवाहिका (Diarrhoea)।

८. अन्तःशल्यता (Embolism)।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. विकृत लसवाहिनियों में द्वितीयक उपसर्ग का प्रवेश होने पर पूयमयता (Septicaemia), पूय अन्तःशल्यता, विद्रधि आदि उत्पन्न होकर रोगी की मृत्यु तक हो सकती है।

२. हाथ-पैर या वृषण के अधिक स्थूल हो जाने पर रोगी में 'विकलांगता' हो जाती है।

○ उपरोक्त दोनों घातक लक्षणों के अतिरिक्त अन्य कोई घातक लक्षण नहीं होते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी को पूर्ण विश्राम आवश्यक है।

२. आक्रान्त भाग को तकिया पर ऊँचा कर रखें तथा गरम रुई से सिकाई करें अथवा लैडलोशन में कपड़ा भिगोकर शोथ स्थान पर रखें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. कान, नाक, गला, गर्भाशय आदि अंगों की पूर्णतया सफाई करें।

४. रोगी को काफी गरम किया हुआ पानी पिलायें तथा गर्म पानी में कपड़ा भिगोकर शरीर को कई बार पोंछें।

५. कोष्ठ की शुद्धि आवश्यक है, अतः रोगी को मैगसल्फ का विरेचन दें।

६. ज्वर के समय रोगी का चलना-फिरना तथा स्नान आदि का पूर्णतया निषेध करें।

७. अमावास्या, पूर्णिमा, ग्रहण तथा वर्षा के समय रोग का आक्रमण तीव्र स्वरूप का होता है। अतः ऐसे समय नियमित जीवन, लघु आहार तथा कोष्ठ-शुद्धि की उचित व्यवस्था करें।

८. ज्वरमोक्ष के पश्चात् नीचे से ऊपर की ओर सूखे तौलिये से शरीर को मलना श्रेयस्कर होता है।

९. ज्वर-मुक्ति के बाद चलते-फिरते समय पैरों तथा वृषणों पर पट्टी बाँधनी चाहिए। साथ ही रात्रि में सोते समय इनके नीचे तकिया रखना चाहिए।

१०. प्रसार की अवस्था में केवल लाक्षणिक चिकित्सा की जाती है।

११. लक्षणहीन अवस्था में चिकित्सा की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती।

१२. चिरकारी अवस्था में शल्य-क्रिया की आवश्यकता पड़ती है।

चिकित्सा वैज्ञानिकों के मत—१. भारत में 'सिस्टोसोमा हीमेटोबियम' (Schistosoma haematobium) का संक्रमण छुट-पुट होता है। इसके जानपदिक फोसाई (Epidemic foci) महाराष्ट्र में पाये जाते हैं, जहाँ के ५०% बालक इस रोग के लिए पोजीटिव (+) पाये गये हैं।

२. भारत के अधिकांश भागों में इसके रोगवाहक मौजूद हैं। इसलिए यह बात सर्वदा ध्यान में रखना चाहिए कि जैसे-जैसे सिंचाई परियोजनाओं में विस्तार होगा, वैसे-वैसे इस संक्रमण के फैलने की सम्भावना है।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ डाई-इथाइल कार्बामाजीन (Diethyl Carbamazine)

व्या० नाम—हेट्राजान (Hetrazan)

मात्रा—२ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर दिन में ३ बार ३-४ सप्ताह तक।

○ उपरोक्त औषधि से लाभ न मिलने पर—

℞ थायोसेटारजामाइड (Thiocetarzamide)

मात्रा—१ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर १५ दिन तक।

○ **सेकेण्ड्री इन्फेक्शन के लिए**—एण्टीबायोटिक + सल्फा ड्रग्स का प्रयोग।

○ **एक्यूट लिम्फेञ्जाइटिस तथा लिम्फेडिनाइटिस**—

℞ टेबलेट बेनोसाइड फोर्ट १०० मि० ग्रा०

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार ३ सप्ताह तक।
इञ्जेक्शन टैरामाइसिन (Inj. Terramycin)
मात्रा—१०० मि० ग्रा० मांसपेशीगत दिन में २ बार।
टेबलेट मेटासीन, टेबलेट क्रोसिन आदि।
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार जल से।
टेबलेट सुगार्निल (Tab. Sugarnil)
मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार जल से।
प्रेडनीसोलोन (Prednisolone)
मात्रा—१० मि० ग्रा० दिन में ३ बार १ माह तक।
तत्पश्चात्—धीरे-धीरे मात्रा घटाते हुए बन्द कर दें।

यदि परसिस्टेण्ट इओसिनोफीलिया आदि चिरकारी शुष्क फास हो तब—

℞ टेबलेट बेटनीसोल (Tab. Betnisol)
प्रथम पाँच दिन तक—१-१ गोली दिन में ३ बार।
अगले ५ दिन तक—१-१ गोली दिन में ३ बार।
पुनः अगले ५ दिन तक—१-१ गोली दिन में १ बार।
℞ टेबलेट सेल्वीगोन (Tab. Salvigon)
मात्रा— १ गोली दिन में ३ बार।
अथवा—डेटीगोन लिक्टस (Detigon linctus)
मात्रा—१ चम्मच दिन में ३ बार।

फाइलेरिया में उपयुक्त एक अन्य चिकित्सा-क्रम—

१. ℞ हेट्राजान (Hetrazan) + सल्फाट्रायड (Sulphatried)
मात्रा—दोनों की १-१ गोली दिन में ३ बार १५-२० दिनों तक।
२. ओम्नासिलीन (Omnacillin) I/M ५-१० दिनों तक।
३. सोडा सैलीसिलास ६०० मिग्रा०
सोडा साइट्रास ६०० मिग्रा०
पोटाश साइट्रास ९०० मिग्रा०
मैग सल्फ १ ड्राम
टिं० बेलाडोना १० मिनिम
इक्स्ट्रेक्ट ग्लिसराइजा १ ड्राम
इफ्यूजन जेन्शन १ औंस।

ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार ४-५ दिन तक। १ मात्रा

केवल हेट्राजान चिकित्सा—

℞ डाइएथिल कार्बामाजीन (Diethyl carbamazine)
व्या० नाम—टेट्राजान, बेनोसाइड।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—वयस्क—२-२ गोली दिन में ३ बार भोजनोपरान्त ५-२१ दिनों तक।

○ यदि रोग बढ़ गया हो तो —२-२ गोली दिन में ४ बार ३ सप्ताह तक। तत्पश्चात्—३-३ सप्ताह का अन्तर देकर १ वर्ष तक।

○ प्रारम्भ के १ सप्ताह तक औषधि की सम्भावित एलर्जिक प्रतिक्रिया उत्पन्न होने से रोकने के लिए कोई हिस्टामीन जैसे—क्लोरम्फेनिरामीन मैलिएट ४ मि० ग्रा० की गोली दिन में २ बार सेवन करायें।

○ **रोग के पुनरावर्तन में** (In relapse cases)—

१. हैट्राजान या बेनोसाइड

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार १५ दिन तक।

१५ दिन का अन्तर देकर पुनः १५ दिन और दें।

२. फाइलोसिड (Filocid)

मात्रा—३० मि० ली० मांसपेशीगत प्रति तीसरे दिन।

कुल इन्जेक्शन १०–१२ तक।

नोट—उपरोक्त चिकित्सा-क्रम का प्रयोग ज्वर के आक्रमण तथा स्थानीय लक्षणों से उत्पन्न होने के बाद फाइलेरिया का निदान होनेपर किया जाता है।

प्रत्येक अवस्था में स्थानीय चिकित्सा भी लाभकारी होती है—

'ग्लिसरीन बेलाडोना' शोथयुक्त लसवाहिनी के ऊपर लेप कर ऊपर से गरम रूई की पट्टी बाँधनी चाहिए।

लाक्षणिक चिकित्सा—

(१) **लसीकावाहिनीशोथ** (Lymphangitis)—

℞ सल्फाडायजीन ०·५ ग्राम दिन में ३ बार ७ दिन तक।

○ इसके साथ 'अल्कलाइन मिक्श्चर' अवश्य दें।

बेन्जाइल पेनिसिलिन ३०० मि० ग्रा० (५००,००० यूनिट) I/M जब तक रोग की गम्भीरता समाप्त न हो जाय।

(२) **पीड़ा** (Pain)—

℞ एसीटिल सेलीसिलिक एसिड

व्या० नाम—एस्प्रिन (Asprin) ३०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

(३) **फाइलेरियल एब्सिस** (Filarial abscess)—

१. ℞ क्रिस्टेलाइन पेनिसिलीन (Crystalline penicillin)

५ लाख यूनिट I/M प्रति ८ घण्टे पर २ दिन तक। तत्पश्चात् प्रोकेन पेनिसिलिन (Procain penicillin) १ सप्ताह तक।

नोट—प्रोकेन पेनिसिलीन के स्थान पर 'ओम्नीसिलीन' का प्रयोग अधिक उपयुक्त रहता है।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. पेनिसिलीन के साथ-साथ सल्फा ड्रग्स उपरोक्त अनुसार।

साथ ही— १. प्रभावित अंग को पूर्ण विश्राम दें।

२. मैगसल्फ का स्थानीय उपयोग करें।

३. पूय उत्पन्न होने पर --ऑपरेशन कर व्रण की एण्टी-सेप्टिक ड्रेसिंग करें।

व्याधि की तीव्रता कम होने पर—T. A. B. वैक्सीन का उपयोग करें। इससे व्रण शीघ्र भरता है और रोग का पुनराक्रमण नहीं होता।

(४) वृषणशोथ (Orchitis)—

१. हेट्राजान, सल्फाड्रग्स, फाइलोसिड, फ्लोरोसिड, एन्थियोमेलीन अथवा मिल्क विद आयोडीन का संयुक्त प्रयोग।

२. स्थानीय उपचार हेतु—ग्लिसरीन मैगसल्फ पेस्ट, इक्थियोल बेलाडोना पेण्ट।

३. लंगोट अथवा इलास्टिक बैण्डेज बाँधना।

४. संचित जल का सुई से निकालना अथवा ऑपरेशन द्वारा निर्हरण करना।

(५) हस्तिचर्मता (Elephantiasis)—

१. यह फाइलेरिया का एक स्थायी उपद्रव है, जो रोगी को 'विकलांग' बना देता है।

२. पैर और वृषण में इसका सबसे अधिक प्रकोप होता है।

○ इसके लिए निम्न व्यवस्था करनी चाहिए—

१. पैर एवं वृषण के लिए नीचे तकिया रखें।

२. रोगमुक्ति-पर्यन्त विश्राम करें।

○ वृषण की त्वचा अधिक मोटी होने पर अथवा वृषण का आकार अधिक बढ़ जाने पर शिश्न की त्वचा अन्दर खिंच जाती है, जिससे मूत्रत्याग में बाधा पड़ती है। ऐसी स्थिति में ऑपरेशन से विकृत त्वचा को पूरी तरह निकाल दिया जाता है और जाँघ से त्वचा लेकर उसका संधान नवीन वृषण बनाने के लिए किया जाता है।

○ इसके बाद भी पर्याप्त समय तक हेट्राजान, फ्लोरोसिड-फाइलोसिड आदि का उपयोग किया जाता है।

○ पैरों पर नीचे से ऊपर की ओर 'लिनीमेण्ट कैम्फर' की मालिश।

○ रोगी को गद्दी पर बैठने की सलाह दी जाती है।

○ श्लीपद की सभी अवस्था में लहसुन का अधिक से अधिक प्रयोग करें।

फाइलेरिया-नाशक अन्य पेटेण्ट औषधियाँ—

१. कार्बामिल सीरप (Carbamyl syrup) (कोप्रान)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—४-६ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर ७ दिन तक। इसकी फोर्ट टेबलेट आती है।

२. यूनीकार्बाजान फोर्ट २५० (यूनीकेम)

मात्रा—२ गोली दिन में ४ बार। इञ्जे०—पहले दिन १ मि० ली०। तत्पश्चात् २ मि० ली० के २ इञ्जेक्शन लगातार २ दिन तक। अथवा १ मि० ली० ५ दिन तक।

३. डी० सी० सी० (D. C. C.) (थेमिस)

मात्रा—१-१ गोली अवस्थानुसार। इसका पेय भी आता है।

इञ्जेक्शन—१. 'फिलेरिन' (बंगाल इम्युनिटी)

मात्रा—१ मि० ली० प्रति तीसरे दिन I/M या S/C

२. प्लोरोसिड (ईस्ट इंडिया)—१ एम्पुल I/M सप्ताह में १ बार।

कुल—४-८ इञ्जेक्शन। □

संक्रामक रोग 7/15

मस्तिष्कावरणशोथ
(Meningitis)

पर्याय—मस्तिष्कावरणशोथ, मस्तिष्क-सुषुम्ना ज्वर, गर्दनतोड़ बुखार, सुषुम्ना-मस्तिष्कावरण प्रदाह, सेरिब्रो-स्पाइनल फीवर (Cerebro-spinal fever)।

परिचय—It is the inflammation of the layers of meninges (Pia & arachnoid usually).

○ पायोमेटर तथा अरैकनायड आवरणों में सूजन आ जाती है। तीव्र शिरःशूल, वमन, प्रकाश-असह्यता (Photophobia), तीव्र बेचैनी, ग्रीवा कठोरता (Cervical rigidity) आदि इसके प्रमुख लक्षण होते हैं। इसमें सिर के पीछे पीड़ा होती है। प्रारम्भ से ही गर्दन कड़ी हो जाती है। तत्पश्चात् सिर पीछे की ओर झुक जाता है।

○ सुषुम्ना से सम्बन्धित मस्तिष्कावरणों की विकृति होने से शरीर धनुष के समान पीछे की ओर मुड़ शाता है। कभी-कभी शरीर की पेशियाँ व्यापक रूप से कड़ी हो जाती हैं।

कारण—१. विविध जातियों के जीवाणुओं एवं कृमियों के उपसर्ग से। विशेषकर मेनिंगोकॉकस (Meningococcus) ४४% फुप्फुसगोलाणु, मालागोलाणु, श्लैष्मिक दण्डाणु, स्तवकगोलाणु आदि के द्वारा संक्रमण होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. सिर एवं पृष्ठवंश पर आघात, मस्तिष्क की खोपड़ी टूट जाने अथवा उसमें चोट लगने से, न्यूमोनिमा, वातरोग, मध्यकर्णशोथ, काली खाँसी (Whooping cough), विसर्प, टाइफाइड, स्कार्लेट फीवर, मस्तिष्क की हड्डी में घाव एवं सड़न होने से, रक्त दूषित होने से, मद्यपान, नासा, गला, ग्रसनिका, नासा-कोटर तथा नेत्र-विकार से पीड़ित रोगियों में तथा अन्य धातु बल क्षयकारक रोगों से ग्रसित होने के पश्चात् मस्तिष्कावरणशोथ की अधिक सम्भावना होती है।

३, आन्त्रिक ज्वर, डिप्थीरिया, रोमान्तिका, इन्फ्लूएञ्जा, अस्थिविवरशोथ न्यूमोनिया आदि में यह उपद्रवस्वरूप होता है।

४. बालकों में इसका आक्रमण अधिक होता है। ३० वर्ष की अवस्था में मध्यम स्वरूप का होता है। प्रायः वृद्धों में इसकी सम्भावना कम रहती है।

○ बच्चों में ट्यूबरकुलर मेनिञ्जाइटिस अधिक होता है।

रोगोत्पादक कारणों के अनुसार मस्तिष्कावरण के विभाग—

○ मस्तिष्क-सुषुम्ना ज्वर (Cerebro-spinal fever)।
○ यक्ष्मज मस्तिष्कावरणशोथ (Tubercular meningitis)।
○ फुप्फुसगोलाणुजन्य मस्तिष्कावरणशोथ।
○ माला-स्तवकगोलाणु जन्य मस्तिष्कावरण शोथ।
○ श्लेष्मक जीवाणुजन्य मस्तिष्कावरणशोथ (Haemophilus influenzae meningitis) इसे Influenzal meningitis भी कहते हैं।

मस्तिष्क-सुषुम्ना ज्वर
(Cerebro-spinal Fever)

इसे 'प्रमस्तिष्क-मेरु ज्वर', 'गशी वाला ज्वर' आदि नामों से भी जाना जाता है।

○ 'सेरिब्रो-स्पाइनल फीवर' इपीडेमिक के रूप में होता है। यह तीव्र ज्वर महामारी के रूप में एक प्रकार के कीटाणुओं से होता है। ये कीटाणु नासा एवं कंठ में जाकर मस्तिष्क में पहुँच जाते हैं। रोगी की नाक और गले की श्वास वायु द्वारा ये स्वस्थ मनुष्य में प्रवेश कर जाते हैं। यह रोग छोटे बच्चों से लेकर ४५ वर्ष तक की आयु के लोगों में होता है।

☝ इस ज्वर में भयंकर शिरःशूल, ज्वर का तापमान १०३° फा० (३९·५° सें०) तक या कभी-कभी इससे भी कम या अधिक, कंठ में जकड़न, गर्दन में तीव्र पीड़ा, सिर का पीछे की ओर खिंच जाना, हाथ-पैर आदि में संकोच तथा सम्पूर्ण शरीर में जकड़न आदि लक्षण मिलते हैं। इसे **सेरिब्रो-स्पाइनल मेनिञ्जाइटिस (मस्तिष्क एवं रीढ़ की झिल्ली का प्रदाह)** भी कहते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संक्रमण—मस्तिष्क-सुषुम्ना ज्वर (Cerebro-spinal fever) की उत्पत्ति 'मेनिंगोकॉकस' के उपसर्ग से होती है। छींक, खाँसी एवं जोर से बोलते समय श्वास एवं थूक के कणों के माध्यम से ये जीवाणु स्वस्थ व्यक्ति में प्रवेश कर नासा-ग्रसनिका शोथ (Rhino pharyngitis) उत्पन्न करते हैं। अधिकतर व्यक्तियों में यही कष्ट होता है। यह जीवाणु स्वस्थ व्यक्ति के गले में १–२ माह तक रह सकते हैं। तत्पश्चात् अनुकूल परिस्थितियाँ मिलने पर इनमें पर्याप्त वृद्धि हो जाती है और नासा से लिम्फ वेसिल्स के द्वारा सीधे मस्तिष्क में पहुँच जाते हैं अथवा रक्त में पहुँच कर मस्तिष्क में पहुँचते हैं। कभी-कभी सिर में चोट लगने अथवा मध्यकर्ण के संक्रमण के द्वारा जीवाणु मस्तिष्क में पहुँच जाते हैं। संक्रमित नीडिल द्वारा लम्बर पंक्चर करने से भी इसका संक्रमण फैलता है।

संक्रमण काल—विशेष कर हेमन्त एवं वसन्त ऋतु में।

संक्रमण का रूप—प्रायः स्थानपदिक, कभी-कभी जानपदिक रूप में भी।

संक्रमण स्थल—विशेषकर अधिक घनी वस्ती वाले क्षेत्र में। सामूहिक निवास-स्थल, मिलिटरी एरिया, कारागार, छात्रावास आदि स्थलों में इसका प्रकोप अधिक होता है।

आयु (Age)—विशेषकर शिशुओं एवं ३० वर्ष की आयु मे।

प्रभावित होने वाले रोगी—प्रतिश्याय, रोहिणी, टॉन्सीलाइटिस आदि रोगों से पीड़ित रोगी इससे अधिक प्रभावित होते हैं।

खान-पान का प्रभाव—हीनपोषण तथा अनियमित आहार-विहार वाले रोगी इससे अधिक प्रभावित होते हैं।

रोग-लक्षण—१. रोग का आक्रमण आकस्मिक होता है।

२. सिर के पिछले भाग में पीड़ा होती है।

३. रोगी को वमन होता है।

४. ग्रीवा तथा पृष्ठवंश की पेशियों में स्तब्धता, कठोरता एवं पीड़ा होती है। सन्धियों में भी पीड़ा मिलती है।

५. त्वचा पर गुलाबी रंग के विस्फोटों का निकलना।

६. मस्तिष्कावरण क्षोभ के कारण तीव्र शिरःशूल, प्रलाप, बेचैनी, तन्द्रा, ग्रीवास्तब्धता अथवा सिर का पीछे की ओर मुड़ जाना आदि लक्षण होते हैं।

○ इस रोग में सिर पीछे की ओर को खिचा हुआ होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि ग्रीवा पीछे की ओर मुड़ गई है।

७. रोगी अन्धेरे स्थान में एक पार्श्व पर पैर मोड़ कर लेटा रहता है। उसकी टाँगें संकुचित अवस्था में होती हैं। घुटने की पर्यावर्तन क्रियाएँ प्रायः लुप्त हो जाती हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. आँख की पुतलियाँ फैल जाती हैं, आँखें चौंधियाती हैं और कभी-कभी भैंगापन भी हो जाता है, जो रोग के उपशम होने पर भी उपस्थित रहता है।

९. रोगी को प्रकाश तथा शोरगुल से कष्ट होता है।

१०. उग्रावस्था में एक-न-एक शाखा आघातित हो जाती है।

११. रोगी में क्षीणता अधिक बढ़ जाती है।

१२. अति तीव्रावस्था में रोगी कुछ ही घण्टों तक जीवित रहता है। इसके विपरीत साध्यावस्था में कुछ दिन तक ज्वर सम अवस्था में रहता है। तत्पश्चात् ज्वर तथा अन्य लक्षण शनैःशनैः कम होने लगते हैं। रोगी धीरे-धीरे स्वस्थावस्था को प्राप्त हो जाता है।

१३. मस्तिष्क के अन्दर दबाव (Intracranial tension) के कारण नाड़ी की गति मन्द हो जाती है। नाड़ी की गति प्रारम्भ में तीव्र एवं बाद में मन्द हो जाती है।

१४. कभी-कभी दृष्टिनाड़ी शोथ (Optic neuritis) भी हो जाता है।

१५. मस्तिष्कावरण के विक्षोभ के कारण शरीर कड़ा हो जाता है। कभी-कभी शरीर की पेशियाँ व्यापक रूप से कड़ी हो जाती हैं।

१६. मस्तिष्क में विकृति होने से आक्षेप (Convulsions), पेशी-क्षीणता (Weakness of muscles) तथा मानसिक विकृति होती है।

१७. तृतीय मस्तिष्कीय वातनाड़ी के प्रभावित होने पर दोनों पुतलियाँ एक समान रहती हैं, अर्थात् एक आँख तिरछी हो जाती है।

१८. कटिशूल रहता है तथा रोगी निद्रित प्रतीत होता है। अन्त में मूर्च्छा उपस्थित हो जाती है।

१९. मूत्र का आना रुक जाता है और रोगी व्याकुल होकर चिल्लाता है।

२०. नौका के समान उदर पिचक जाता है (Boat-shaped belly)।

२१. पोजीटिव कर्निग का चिह्न तथा ब्रुडजिंस्की के चिह्न उपस्थित मिलते हैं।

२२. नाड़ी की ताल (Rhythm) अनियमित होती है।

नवजात शिशुओं में—१. एक माह तक के शिशु में ऐसे लक्षण स्पष्ट नहीं होते हैं।

२. प्रायः शिशु रोगी दूध पीना बन्द कर देता है।

३. बालक शान्त अथवा अधिक चिड़चिड़ा हो जाता है।

४. उल्टियाँ आने लगती हैं।

५. शरीर का टेम्परेचर बढ़ने की अपेक्षा घट जाता है।

६. बच्चा बारीक आवाज में चीखता है।

७. कुछ केसिस में पीलिया (Jaundice) भी मिलती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो वर्ष तक की आयु के बच्चों में—

१. बच्चा बेचैन रहता है।

२. उसे ज्वर तथा वमन होता है।

३. वह चमकदार रोशनी की ओर से मुँह मोड़ लेता है।

४. १ या २ दिन के बाद (ज्वर होने से) शरीर में बार-बार बाँयटें आना—'मेनिञ्जाइटिस' का संकेत देता है।

५. गर्दन की पेशियाँ ऐंठ जाने के कारण रोगी बालक की गर्दन कड़ी हो जाती है। सिर कुछ पीछे को झुक जाता है।

६. गर्दन की पेशियाँ इतनी अधिक ऐंठ जाती हैं, कि यदि कोशिश की जाय तो भी बच्चे का सिर आगे को झुककर घुटनों तक नहीं जा सकता है।

विकृति के अनुसार रोग की अवस्थाएँ—

१. प्रारम्भिक अवस्था अथवा दोषमयता।

२. द्वितीयावस्था अथवा क्षोभ की अवस्था।

३. तृतीयावस्था या अवसाद की अवस्था।

४. चतुर्थावस्था या अंगघात की अवस्था।

(१) प्रारम्भिक अवस्था या दोषमयता—

१. इसके पूर्व रोगी में तीव्र प्रतिश्याय, गले का शोथ तथा प्रसेक सम्बन्धी लक्षणों का इतिहास मिलता है।

२. कभी-कभी सिरदर्द, वमन और लक्षणों की उपस्थिति के साथ टॉन्सी-लाइटिस, नासा-ग्रसनिका शोथ, आँख का आना आदि लक्षण भी उपस्थित रहते हैं।

३. रोगी चुपचाप शान्त भाव से सिर को आगे मोड़ कर पैरों को जानु के पास एवं वंक्षण पर मोड़ कर एक करवट में पड़ा रहता है। ऐसा मालूम होता है कि मानों ठंड के कारण रोगी सिकुड़ कर लेटा हुआ है।

४. रोगी किसी से बातचीत करने की इच्छा नहीं करता है। यदि कोई व्यक्ति पास में बैठकर जोर से बातचीत कर रहा होता है तो भी रोगी उस ओर अपना ध्यान आकर्षित नहीं करता।

५. सम्पूर्ण शरीर की संधियों में तीव्र पीड़ा होती है और पीठ को छूने से वह वेदना का अनुभव करता है।

६. कमर तथा कन्धों पर लाल रंग के विस्फोट अधिक निकल आते हैं।

७. त्वचा के नीचे रक्तस्राव होता है। अधिवृक्क ग्रन्थियों में रक्तस्राव होने से ब्लड-प्रेशर कम हो जाता है।

परीक्षा में—ल्यूकोसाइटोसिस २० हजार से अधिक तथा पोलीमार्फ (Polymorph) की संख्या वृद्धि ९०% से अधिक हो जाती है।

○ ब्लड का कल्चर करने पर 'मैनिंगोकॉकस' की उपस्थिति मिलती है।

CC-0. Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) द्वितीयावस्था या क्षोभ की अवस्था—

१. रोग के आक्रमण के ३-४ दिन बाद क्षोभ के लक्षण उत्पन्न होते हैं।

२. वमन का अनुबन्ध चलता रहता है।

३. सिर पीछे की ओर झुक जाता है तथा शरीर धनुष के आकार का प्रतीत होता है।

४. आक्षेप तथा प्रलाप उपस्थित रहता है।

५. सम्पूर्ण शरीर की पेशियाँ कड़ी हो जाती हैं। यदि रोगी का सिर उठाया जाय तो सारा शरीर काठ के समान उठने लगता है।

६. इस अवस्था में 'कर्निग' तथा 'ब्रुडजिंस्की' के लक्षण मिलते हैं।

○ इन दोनों चिह्नों को नीचे स्पष्ट किया जा रहा है—

(क) कर्निग का चिह्न (Kernig's sign)—रोगी को पीठ के बल लिटा दिया जाता है और उसकी एक जाँघ को उदर पर समकोण की स्थिति में रखते हुए घुटने से आगे टाँग के भाग को सीधा करने की कोशिश की जाती है। परन्तु कमर की नीचे की पेशियों में ऐंठन आ जाने के कारण रोगी अपनी टाँग ऊपर की ओर सीधा नहीं कर पाता है। ऐसी अवस्था में घुटने पर लगभग १३५° या कम का कोण जाँघ और निचली टाँग के बीच बना ही रहता है, यह मैनिञ्जाइटिस की प्रमुख पहचान है।

नोट—मस्तिष्क-सुषुम्ना में शोथ होने के कारण रोगी की सियाटिका नर्व्स विकृत हो जाती है, जिससे रोगी टाँग फैलाने में असमर्थ होता है।

(ख) ब्रुडजिंस्की का चिह्न (Brudzinski's sign)—

(i) पीठ के बल लेटे हुए रोगी की गर्दन को छाती की ओर मोड़ने पर उसकी दोनों टाँगें वंक्षण तथा जानुसन्धि पर मुड़ जाती हैं। रोगी गर्दन मोड़ने के लिए मना करता है और उसकी पुतलियाँ फैल जाती हैं।

(ii) रोगी की एक टाँग मोड़ने पर दूसरी भी स्वतः मुड़ जाती है।

(iii) भगास्थि-सन्धि पर दबाव डालने पर टाँगें सिकुड़ती हैं।

७. ○ इस अवस्था में रिफ्लैक्स क्रियाएँ बढ़ जाती हैं। अवसाद कुछ कम होने लगता है।

८. कभी-कभी रोगी जोर-जोर से चिल्लाने लगता है।

९. रोगी की आकृति बदल जाती है और उसका मुँह लटका हुआ-सा प्रतीत होता है।

(३) तृतीय या अवसाद की अवस्था—

१. इस अवस्था में रोगी के सम्पूर्ण अंग अवसन्न-से रहते हैं।

२. रोगी तन्द्रायुक्त अर्धमूर्च्छित अवस्था में रहता है।

३. जोर से बुलाने पर रोगी प्रश्न का आशय समझ कर भी हाँ-हाँ कह कर पुनः करवट बदल कर सो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४) चतुर्थ या अंगघात की अवस्था—

१. इस अवस्था में रोगी पूर्णरूप से मूर्च्छित तथा आक्षेप युक्त रहता है।
२. रोगी प्रकाश सहन करने के असमर्थ होता है।
३. किसी एक अंग का पैरालिसिस हो जाता है।
४. मल-मूत्र का उत्सर्ग अनियंत्रित हो जाता है।
५. रोगी को पसीना अधिक आता है।
६. उसमें संन्यास की उपस्थिति मिलती है।

नोट—उपरोक्त लक्षण तीव्र तथा घातक नहीं होते हैं।

तीव्रता की दृष्टि से मस्तिष्क-सुषुम्ना ज्वर के भेद—

१. अति तीव्र प्रकार (More acute type)।
२. तीव्र या सामान्य प्रकार (Acute or general type)।
३. घातक रूप (Malignant type)।
४. पोस्ट-बेसिक मेनिञ्जाइटिस (Post basic meningitis)।
५. सौम्य या कॉलिक प्रकार।

(१) अति तीव्र प्रकार (More acut type)—

१. इस प्रकार के ज्वर का आक्रमण इपीडेमिक के समय होता है।
२. रोगी का तापक्रम १०४-१०६° फा० तक हो जाता है।
३. सिरदर्द, प्रलाप तथा निद्रानाश के कारण रोगी अत्यधिक बेचैन तथा उन्मत्त-सा रहता है।
४. रोगी की जीभ सूख कर काँटों से युक्त हो जाती है। उसमें कम्पन भी विद्यमान रहता है।
५. नाड़ी तथा श्वास की गति अधिक तीव्र हो जाती है।
६. त्वचा पर लाल-नीले रंग के विस्फोट अत्यधिक संख्या में निकल आते हैं।

परीक्षा में—○ ल्यूकोसाइटोसिस २०-४० हजार तथा पोलीमार्फ का अनुपात ९०% से अधिक मिलता है।

○ रक्त में 'मेनिंगोकॉकल' की उपस्थिति मिलती है।

मृत्यु—कुछ घण्टों से लेकर १-२ दिन में हो जाती है।

(२) तीव्र या सामान्य प्रकार (Acute or general type)—

१. आकस्मिक रूप में शीतपूर्वक ज्वर आता है। ज्वर १०२-१०४° फा० तक रहता है।

२. रोगी को प्रतिश्याय के साथ शिरःशूल, शाखा एवं सन्धियों में पीड़ा, वमन, त्वचा पर लाल-नीले विस्फोट तथा नासा-ग्रसनिकाशोथ आदि लक्षण उपस्थित रहते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. ३-४ दिन पश्चात् मस्तिष्कक्षोभ के लक्षण उत्पन्न होने पर वमन की क्रिया बढ़ जाती है।

४. रोगी में तीव्र असह्य शिरःशूल मिलने लगता है।

५. नाड़ी ज्वर के अनुपात में मन्द तथा अनियमित होती है।

६. रोगी की आकृति लाल रंग की दीखती है।

७. श्वास की गति अनियमित हो जाती है।

८. पेशियों में कठोरता उत्पन्न हो जाती है।

९. रोगी को प्रकाश सहन नहीं होता है।

१०. कर्निंग तथा ब्रुडजिंस्की के चिह्न व्यक्त होते हैं।

११. क्षोभ की अधिकता में गर्दन की पेशियाँ कठोर तथा वेदनायुक्त हो जाती हैं। सुबुम्ना के आवरण में शोथ होने पर रीढ़ की पेशियों में कठोरता उत्पन्न हो जाती है।

१२. उदर की पेशियाँ कड़ी होकर भीतर को धँस जाती हैं, जिससे रोगी के पेट की आकृति 'नौका' के समान हो जाती है।

१३. ६-७ दिन बाद अवसाद के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। रोगी में तन्द्रा, मूर्च्छा तथा अतिशय कृशता के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

○ बालकों में आक्षेप का लक्षण प्रारम्भ से रहता है।

○ मृत्यु—यदि रोगी की उचित चिकित्सा न हुई तो संन्यास तथा मूर्च्छा आदि के कारण मृत्यु हो जाती है।

(३) घातक रूप (Malignant type)—

१. मस्तिष्क-सुषुम्ना ज्वर एक घातक व्याधि है। कभी-कभी इपीडैमिक के समय आकस्मिक तीव्र ज्वर, प्रतिश्याय, वमन, शारीरिक दुर्बलता, अवसाद, श्वासकष्ट, दुर्बल एवं त्वरित नाड़ी, लाल-नीले-पीले विस्फोटों की उत्पत्ति तथा संन्यास आदि लक्षण होते हैं।

२. त्वचा तथा आन्तरिक अंगों में रक्तस्राव होता है।

३. रक्त में जीवाणुओं की उपस्थिति मिलती है।

४. 'मस्तिष्कावरणशोथ' तथा क्षोभ से सम्बन्धित लक्षण नहीं होते हैं।

नोट—इस प्रकार में 'न्यूमोनिया' तथा 'इन्फ्लूएञ्जा' का भ्रम हो जाता है।

(४) सौम्य या कॉलिक प्रकार—

१. इस प्रकार के लक्षण प्रायः सौम्य स्वरूप (साधारण) के होते हैं।

२. रोगी में शीतपूर्वक ज्वर का आक्रमण होता है।

३. विस्फोट तथा अस्थि-सन्धियों में पीड़ा सौम्य रूप की होती है।

४. 'कर्निंग' तथा गर्दन की जकड़ाहट प्रायः कम या अधिक होती है

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—इस प्रकार के लक्षण अनेक बार इपीडेमिक की समाप्ति के बाद देखने को मिलते हैं।

(५) पोस्टबेसिक मेनिञ्जाइटिस—

१. यह प्रकार अधिकांश रूप से १ वर्ष की अवस्था वाले बालकों में मिलते हैं।

२. रोग का आक्रमण अकस्मात् होता है। ज्वर, वमन तथा आक्षेप विद्यमान रहता है।

३. जीर्ण शीर्ष (Hydrocephalus) तथा सिर की अस्थियाँ विस्तृत मिलती हैं।

४. रोगी दिन-पर-दिन कृश होता जाता है।

५. आँखों की पुतलियाँ फैल जाती हैं। वह निरन्तर एक दिशा में देखता रहता है। कभी-कभी बालक में अन्धता का भी लक्षण मिलता है।

६. गर्दन तथा पीठ एवं अधोशाखाओं की प्रसारक पेशियाँ संकुचित होकर कठोर हो जाती हैं। जिससे बालक का सिर पीछे की ओर झुका रहता है।

७. पेशियों में अधिक दुर्बलता आ जाती है।

८. रोग २-३ सप्ताह तक चलता रहता है।

रोग-निदान (Diagnosis)—○ इपीडेमिक के समय रोग-निदान में कोई कठिनाई होती है।

○ निम्न लक्षणों के आधार पर रोग का अनुमान लगाया जा सकता है। यथा—१. आकस्मिक ज्वर, २. प्रतिश्याय के लक्षण, ३. ग्रसनिका शोथ का इतिहास, ४. सिर के पिछले भाग में तीव्र स्वरूप की पीड़ा, ५. सर्वांग वेदना, ६. प्रलाप, ७. आक्षेप (बालकों में), ८. तीव्र वमन, ९. तिरछी निगाह १०. ग्रीवा तथा पृष्ठवंश की पेशियों में कड़ापन और उनमें वेदना, ११. अनियमित नाड़ी, १२. प्रकाश सहन न होना, १३. रोगी का एक पार्श्व में लेटना, १४. नौका की आकृति का उदर, १५. कर्निग तथा ब्रुडजिंस्की के चिह्न, १६. अनियंत्रित मूत्र का उत्सर्ग, १७. अत्यधिक बेचैनी तथा १८. तन्द्रा एवं संन्यास आदि लक्षणों के आधार पर रोग का अनुमान किया जाता है।

रक्त-परीक्षा (Blood examination)—

१. 'ल्यूकोसाइटोसिस' यथा पोलीमार्फस की अधिकता मिलती है।

२. 'मैनिंगोकॉकल' की उपस्थिति मिलने पर रोग का असंदिग्ध निर्णय हो जाता है।

कटिवेध द्वारा सुषुम्ना द्रव को निकाल कर परीक्षा करना—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

१. यह निदान और चिकित्सा की दृष्टि से दोनों में उपयोगी है।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. लक्षणों के पूर्व व्यक्त होने पर इस रोग का असंदिग्ध निर्णय इस जल की परीक्षा से हो जाता है।

○ यहाँ पर स्मरण रखना चाहिए कि यह रोग अत्यन्त घातक होता है और अधिकांश केसिस में रोगी की मृत्यु हो जाती है। इसका निदान और चिकित्सा दोनों ही अत्यन्त जटिल हैं। अतः सामान्य मेडिकल प्रैक्टिशनरों को स्वयं इसकी चिकित्सा न करके रोगी को किसी सुविधा सम्पन्न अस्पताल में भिजवा देना चाहिए।

○ इस रोग की चिकित्सा के लिए कई बार मस्तिष्क-मेरु द्रव (Cerebro-spinal fluid) जिसे C. S. F. भी कहते हैं, सुषुम्ना से निकाल कर इसकी परीक्षा करनी पड़ती है। साथ-ही इसी मार्ग से पेनिसिलीन आदि एण्टीबायोटिक देने पड़ते हैं। यह एक कठिन कार्य है।

मस्तिष्क-सुषुम्ना जल (C. S. F.) द्वारा परीक्षा—

○ स्वस्थावस्था में C. S. F. का स्वरूप निम्न प्रकार का होता है—

१. जल निर्मल, पारदर्शक, वर्ण रहित तथा प्रतिक्रिया किंचित् क्षारीय।

२. मात्रा—१००-१५० मि० ली० के लगभग।

३. गुरुता—१००४–१००८ तक।

४. क्लोराइड्स एवं ग्लूकोज अल्प मात्रा में।

५. थोड़ी मात्रा में लिम्फोसाइट्स की उपस्थिति।

६. सुषुम्ना नली का अन्तर्निपीड—१००–२०० मि० ली० तक।

७. कटिवेध (Lumbar puncture) के बाद जल बूंद-बूंद रूप में (२०-६० बूँद प्रति मिनट) टपकता है।

नोट—C. S. F. का यह रूप मिलना रोग को नकारात्मक (–) सिद्ध करता है। इसके विपरीत निम्न स्वरूप उपरोक्त रोग को सूचित करता है।

मस्तिष्क-सुषुम्ना ज्वर से पीड़ित रोगी में C. S. F. का स्वरूप—

१. जल का वर्ण धुँधला, पूययुक्त अथवा लाल रंग लिये हुए होता है।

२. क्लोराइड की कमी।

३. शर्करा का अभाव।

४. पोलीमार्फस की अपेक्षाकृत वृद्धि।

५. जल में शुक्लि की अधिकता।

६. W. B. C की अत्यधिक वृद्धि (१०००० -५०००० प्रति घ० मि० मी०)।

७. सुषुम्ना नली का अन्तर्निपीड—५०० मि० मी० या उससे अधिक।

८. कटिवेध करने पर जल बड़े वेग से निकलता है।

नोट—मस्तिष्क-सुषुम्ना जल (C. S. F.) में यह रूप मिलने पर रोग का असंदिग्ध रूप से निर्णय हो जाता है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ केवल मटमैला, धुंधला वर्ण, निपीड की वृद्धि एवं लम्बर पंक्चर के बाद जल तेजी से धार के रूप में निकलने से रोग का सही निदान हो जाता है।

दोनों दृष्टिकोणों से—जैसा कि पहले ही बतलाया जा चुका है कि C. S. F. का लम्बर पंक्चर से निकालना तथा चिकित्सा दोनों दृष्टियों से उपयोगी है। अतः एक तो इससे रोग का असंदिग्ध निदान हो जाता है और दूसरा जल निकल जाने पर शिरःशूल, आक्षेप, वमन तथा अंगघात आदि लक्षणों में शीघ्र शान्ति मिलती है।

मस्तिष्कावरणशोथ (मेनिञ्जाइटिस) के अन्य भेद—

(१) क्षयज मस्तिष्कावरणशोथ (Tubercular meningitis)—

१. यह रोग प्रायः शिशुओं में मिलता है। उनमें टी० बी० का पारिवारिक इतिहास मिलता है। कुछ-एक केसिस में मीजिल्स का पूर्व इतिहास भी एक कारण हो सकता है।

२. छाती में यक्ष्मा के चिह्न तथा ग्रीवा की लसग्रन्थियों की वृद्धि मिलती है।

३. रोग का प्रसार मस्तिष्कावरण में शरीर के किसी दूसरे अंग के प्रभावित होने से होता है।

४. यह मिलियरी ट्युबरकुलोसिस का ही एक भाग है।

लक्षण एवं चिह्न—यह बीमारी २-५ वर्ष के बालकों में विशेष रूप से मिलती है।

१. रोग का प्रारम्भ शनैः शनैः बेचैनी, अरुचि तथा उत्तेजना आदि के साथ होता है। ज्वर १०१-१०२° फा० के बीच रहता है।

२. रात में कष्ट के कारण बालक चिल्लाता है।

३. शिरःशूल तथा वमन विद्यमान रहता है।

४. आक्षेप, गर्दन का अकड़ना, अंगघात, संन्यास आदि लक्षण उत्तरोत्तर दिखलाई देते हैं।

○ इस प्रकार के मेनिञ्जाइटिस में बच्चा खेल-कूद में रुचि लेना छोड़ देता है। वह चिड़चिड़ा हो जाता है और ढीला-ढाला-सा दिखलाई देता है। कभी-कभी उसे उल्टियाँ भी होती हैं। १-२ दिन ज्वर रहने के बाद बार-बार आक्षेप आते हैं।

लक्षणों के अनुरूप अवस्थाएँ—इसकी ४ अवस्थाएँ होती हैं—

१. प्रोड्रोमल अवस्था (Prodromal stage)।

२. उत्तेजना की अवस्था (Stage of meningeal irritation)।

३. अवसाद या सम्पीडन की अवस्था (Stage of meningeal compression)।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. संन्यास की अवस्था (Stage of coma or paralysis)।

निदान (Diagnosis)—१. रक्त-परीक्षा—(i) इस परीक्षा में कोई विशेष अन्तर नहीं मिलता।

(ii) E. S. R. ऊँचा (High) होता है।

२. एक्स-रे परीक्षा—ट्युबरकुलोसिस के साक्ष्य मिलते हैं।

३. मस्तिष्क-सुषुम्ना जल (C. S. F.) प्रारम्भ में स्वच्छ तथा निर्मल होता है। किन्तु कुछ देर रखने पर उसमें मकड़ी के जाले के समान थक्का जम जाता है।

४. शुक्लि की मात्रा अधिक होती है। शर्करा तथा क्लोराइड्स की मात्रा कम होती है।

५. प्रारम्भ में पॉलीमार्फस और बाद में ल्यूकोसाइट्स की वृद्धि होती है।

६. प्रोटीन १००-४०० मि० ग्रा०। प्रति १०० मि० ली० बढ़ जाती है।

७. क्षयज दण्डाणु की उपस्थिति मिलती है।

(२) फुप्फुसगोलाणुजन्य मस्तिष्कावरणशोथ—

१. इस प्रकार के रोग में आक्रमण तीव्र स्वरूप का होता है।

२. दूसरे-तीसरे दिन से संन्यास की अवस्था उत्पन्न हो जाती है।

३. अन्य लक्षण मस्तिष्क-सुषुम्ना ज्वर के ही समान होते हैं।

४. इसमें भीगने, शीत लगने आदि का इतिहास मिलता है।

परीक्षाएँ—प्रायः समान रूप की होती हैं, पर 'मेनिंगोकॉकस' के स्थान पर फुप्फुसगोलाणु की उपस्थिति मिलती है।

रक्त में 'पोलीमार्फस' तथा W. B. C. की वृद्धि दोनों में समभाव से होती है।

(३) मालागोलाणु जनित मस्तिष्कावरणशोथ—

१. आक्रमण—इस रोग का आक्रमण प्रायः विक्षत रोगों से ग्रसित लोगों में होता है—१. मध्यकर्णशोथ, २. सिर पर गभीर आघात, ३. विसर्प, ४. अस्थिविवरशोथ, ५. नासाकोटरशोथ, ६. टॉन्सिलाइटिस, ७. आमवात, ८. पायरिया आदि।

२. लक्षण विकार एवं आकृति—सभी मस्तिष्क सुषुम्ना ज्वर के ही समान होते हैं।

३. परीक्षाएं—(i) इस प्रकार में W. B. C. की संख्या-वृद्धि प्रायः कुछ कम होती है।

(ii) C. S. F. परीक्षा में कोई अन्तर नहीं मिलता है, केवल रोगोत्पादक जीवाणु में अन्तर मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४) श्लैष्मक दण्डाणुजनित मस्तिष्कावरणशोथ—

१. आक्रमण—कर्णमूलशोथ (Mumps) तथा इन्फ्लूएञ्जा के उपरान्त इसका आक्रमण ३ वर्ष से कम उम्र वाले बालकों में होता है।

२. लक्षण तथा शारीरिक चिह्न—मस्तिष्क-सुषुम्ना ज्वर के समान।

३. परीक्षाएँ—(i) C. S. F. परीक्षा द्वारा विशिष्ट श्लेष्मक दण्डाणु की उपलब्धि रोग निर्णायक होती है।

(ii) रक्त में W. B. C. की वृद्धि कुछ कम होती है। (१५-२० सहस्र)।

चिकित्सा की दृष्टि से मस्तिष्कावरणशोथ का वर्गीकरण—

१. मस्तिष्कगोलाणु (मैनिंगोकॉकस) जन्य मस्तिष्कावरणशोथ
फुफ्फुसगोलाणु जनित मस्तिष्कावरणशोथ
मालागोलाणु जनित मस्तिष्कावरणशोथ
} १ वर्ग में।

२. श्लेष्मकदण्डाणुजन्य मस्तिष्कावरणशोथ } १ वर्ग में।

३. क्षयज मस्तिष्कावरणशोथ } १ वर्ग में।

नोट—इस प्रकार से मेनिञ्जाइटिस की सम्पूर्ण चिकित्सा जीवाणुओं के आधार पर केवल उपरोक्त ३ वर्गों में विभाजित होती है।

उपद्रव (Complications)—मेनिञ्जाइटिस एक गम्भीर व्याधि है। इसका प्रत्येक लक्षण ही उपद्रवस्वरूप होता है। कुछ प्रमुख उपद्रव इस प्रकार हैं—हाइड्रोसेफेलस, स्थायी अन्धता, सेप्टीसीमिया, हाइपर पाइरेक्सिया, इन्सेनिटी, स्थायी बधिरता (८वीं नर्वस के पैरालिसिस से), हेमीप्लेजिया या पैराप्लेजिया, क्रेनियल नर्वस पैरालिसस, बैक्टीरियल इण्डोकार्डाइटिस, आर्थ्राइटिस, नेफ्राइटिस, न्यूमोनिया, ब्रॉन्को-न्यूमोनिया, एपीलेप्सी।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—इस रोग की निम्न रोगों से समता होती है—१. मस्तिष्क-विद्रधि, २. अभिघात, ३. मदात्यय, ४. मस्तिष्कगत रक्तस्राव, ५. मूर्च्छा, ६. मधुमेहजन्य मूर्च्छा।

○ ट्युबरकुलस मेनिञ्जाइटिस का पार्थक्य—Meninges, sub-arachnoid haemorrhage, इन्सेफेलाइटिस, पायोजेनिक मेनिञ्जाइटिस से करना चाहिए।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी को स्वच्छ हवादार एवं अंधेरे कमरे में मुलायम चारपाई पर पूर्ण विश्राम कराना चाहिए।

२. रोगी को बातचीत तथा कोलाहल से कष्ट होता है। अतः उसके कमरे में परिचारक के अतिरिक्त किसी अन्य को नहीं जाने देना चाहिए।

३. रोगी को प्रारम्भ से ही लगातार जल पिलाते रहना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. यदि रोगी को स्वतः मूत्र-त्याग न हो तो रबर की नली के द्वारा मूत्र त्याग करायें।

५. ग्रीवा तथा पृष्ठवेदना के लिए वाष्प स्वेदन करें।

६. शरीर को गुनगुने पानी से कई बार पोंछें।

७. प्रारम्भिक दिनों में केलोमल + सोडा बाइकार्ब मिलाकर देने के बाद मैगसल्फ का विरेचन दें।

८. शय्या व्रण की सम्भावना में दिन में ४ बार सम्पूर्ण शरीर को पोंछना तथा रगड़ वाले स्थानों में स्प्रिट लगाकर डस्टिंग पाउडर छिड़कना चाहिए।

९. रोगी के कपड़े बीच-बीच में बदलते रहना चाहिए।

१०. यदि मूर्च्छा के कारण रोगी निश्चेष्ट-सा पड़ा हुआ हो तो उसे हलके हाथों से सहारा देकर बीच-बीच में करवट बदलते रहना चाहिए। यदि रोगी आहार लेने में असमर्थ हो तो उसे रायल्स ट्यूब द्वारा पेट में पहुँचाना चाहिए।

११. विषमयता दूर करने के लिए—ड्रेक्स्ट्रोज नार्मल सैलाइन I/V ड्रिप द्वारा दें। अथवा बूँद-बूँद रूप में (Rectal drip) दें।

१२. ग्रीवास्तम्भ के लिए—गर्म पानी की थैली को गर्दन तथा कन्धे के नीचे रखें।

१३. मुख की सफाई आवश्यक है; इसके लिए दिन में २-३ बार नियमित रूप से कुल्ला करके (पोटाश, डेटॉल, लिस्टेरिन आदि) बोरो ग्लिसरीन जिह्वा पर लगायें।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

○ इस रोग की चिकित्सा तात्कालिक रूप से और समुचित मात्रा में औषधियाँ देकर करना अत्यन्त आवश्यक होता है।

○ रोग के आक्रमण के बाद जितनी शीघ्रता से औषधि चिकित्सा की जायेगी, उतनी ही अधिक सफलता मिलती है।

विशिष्ट चिकित्सा—

℞ एम्पीसिलीन (Ampicillin)

मात्रा—१५०–२५० मिग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर ७ दिन तक।

अथवा (विकल्प में)—

℞ क्रिस्टेलाइन पेनिसिलीन

मात्रा—२ मैगा यूनिट I/V प्रति २ घण्टे पर।

साथ ही—सल्फाडाइमिडीन अथवा सल्फामेजाथीन

मात्रा—२–२ गोली दिन में १–२ बार।

साथ ही—अल्कासोल (Alkasol) २–२ चम्मच दिन में ३ बार।

यदि रोगी पेनिसिलीन के प्रति सेंसिटिव हो तो—

℞ क्लोरम्फेनिकाल (Chloramphenicol)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१ ग्राम इण्ट्रावीनस प्रति ६ घण्टे पर।

साथ ही—मेनीटोल (Mannitol)

मात्रा—२ ग्राम/प्रति किलो शरीर भार पर I/V.

○ 'मल्टीविटामिन्स' का प्रयोग सभी अवस्थाओं में करें।

नोट—○ इस रोग की चिकित्सा में C. S. F. रिपोर्ट न आने तक—'सल्फाडायमिडीन', 'क्लोरम्फेनिकाल', 'बेञ्जिल पेनिसिलीन' का साथ-साथ प्रयोग करना चाहिए।

○ C. S. F. कल्चर की रिपोर्ट आने पर औषधि पर पुनर्विचार कर निम्नानुसार एण्टीबायोटिक का प्रयोग करें—

(i) मेनिंगोकॉकस में—सल्फाडायमिडीन + पेनिसिलीन।

(ii) न्यूमोकॉकस की उपस्थिति में—पेनिसिलीन।

(iii) एच० इन्फ्लूएञ्जाई में—क्लोरम्फेनिकाल।

(iv) द्रव में कोई जीवाणु न मिलने पर—उपरोक्त प्रकार से तीनों औषधियों (Triple therapy) का प्रयोग करें।

मेनिंगोकॉकल मस्तिष्कावरणशोथ अर्थात् सेरिब्रो-स्पाइनल फीवर में—

℞ इञ्जे० क्रिस्टेलाइन पेनिसिलीन (Inj. Crystalline penicillin)

मात्रा—२० लाख यूनिट मांसपेशीगत प्रति ६ घण्टे पर ६ दिन तक।

इञ्जे० सल्फाडायजीन (Inj. Sulphadaizine)

मात्रा—१०० मि० ली० नार्मल सैलाइन में ४ ग्राम ड्रिप द्वारा नित्य २ दिन तक।

तत्पश्चात्—टे० सल्फाडायजीन १ ग्राम प्रति ४ घण्टे पर ५ दिन तक।

अथवा—टेबलेट को-ट्रीमोक्साजोल (Tab. Co-trimoxazole)

मात्रा—२ गोली दिन में २ बार १० दिन तक।

यदि रोगी पेनिसिलीन के प्रति सेन्सिटिव हो तो—

℞ क्लोरम्फेनिकाल (Chloramphenicol)

मात्रा—५० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर २४ घण्टे में।

यदि इण्ट्राक्रेनियल टेन्शन के कारण चिह्न बढ़े हों तो—

℞ इञ्जे० मेनीटोल (Inj. Mannitol)

मात्रा—१०० मि० ली० दिन में २ बार ड्रिप द्वारा।

मेनिंगोकॉकल मेनिञ्जाइटिस का एक अन्य चिकित्सा-क्रम—

℞ टे० सल्फाडायजीन अथवा सल्फाडायमिडीन

मात्रा—६ गोली (०·५ ग्राम प्रति) १ मात्रा तत्काल। तत्पश्चात्—२ गोली प्रति ४ घण्टे पर जब तक शारीरिक सुधार न हो जाय।

अथवा—C. S. F. साफ (Clear) तथा शुद्ध (Sterile) न हो जाय। इसके बाद इसे प्रति ६ घण्टे पर अधिक से अधिक ४ दिनों तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बालकों में—३ वर्ष की आयु तक—३ ग्राम दिन भर में।
१२ वर्ष की आयु तक—६ ग्राम ,, ।
१२ वर्ष से ऊपर की आयु में—वयस्क की मात्रा दें।

○ यदि रोगी अधिक गम्भीर अवस्था में हो तथा वमन हो रहा हो तो—

℞ सल्फाडायमिडीन सोडियम

मात्रा—१ ग्राम I/V दें। साथ ही प्रति १२ घण्टे पर तब तक दुहरायें जब तक रोगी मुख से औषधि लेने योग्य न हो जाय।

○ यदि इण्ट्रावीनस द्वारा औषधि देना सम्भव न हो तो—

℞ सल्फाडायमिडीन (Sulphadimidine)

व्या० नाम—सल्फामेजाथीन (Sulphamezathine)

मात्रा—१ ग्राम दिन में २ बार मांसपेशीगत।

नोट—जब रोगी को लम्बे समय तक 'सल्फा औषधि' देनी हो तब साथ में 'एल्कलाइन' मिक्श्चर अवश्य दें।

साथ ही—बेञ्जाइल पेनिसिलीन (Benzyl penicillin)

मात्रा—६०० मि० ग्रा० (१ मेगा यूनिट्स) प्रति २ घण्टे पर तब तक जारी रखें, जब तक C. S. F. साफ और शुद्ध न हो जाय। तत्पश्चात् मात्रा घटाकर ३०० मि० ग्रा० (५००,००० यूनिट) दिन में ३ बार अगले ४८ घण्टे तक। तत्पश्चात् दिन में २ बार अगले ३ दिन तक।

अथवा—क्रिस्टेलाइन पेनिसिलीन (Crystalline penicillin)

प्रारम्भिक मात्रा—५ लाख यूनिट। तत्पश्चात् २ लाख यूनिट प्रति ४-६ घण्टे पर २ दिन तक। तत्पश्चात्—

प्रोकेन पेनिसिलीन (Procain penicillin)

मात्रा—४ लाख यूनिट मांसपेशीगत दिन में २ बार ७ दिन तक।

नोट—रोग के प्रारम्भ में ही पेनिसिलीन का प्रयोग करने से 'लम्बर पंक्चर' की आवश्यकता नहीं पड़ती।

कटिवेध द्वारा पेनिसिलीन का प्रयोग—जब प्रारम्भिक आक्रमण में ही तत्काल पेनिसिलीन चिकित्सा नहीं की जाती है, तब कटिवेध की आवश्यकता पड़ती है।

○ अतः मांसपेशी सूचीवेध द्वारा प्रयोग करने के साथ ही सुषुम्ना मार्ग से भी पेनिसिलीन का प्रयोग आवश्यक होता है। इसके लिए पेनिसिलीन की मात्रा ५०००-१०००० यूनिट तक ५-१० मि० ली० या इससे अधिक नार्मल सैलाइन में मिलाकर सुषुम्ना मार्ग से दिया जा सकता है। जितना द्रव कटिवेधन से निकाला जाय, उससे कुछ कम में ही निक्षेप करना चाहिए।

नोट—यदि कटिवेध के बाद C. S. F. न निकले और इसके स्थान पर १-२ बूंद पूय निकले, तब ऐसी स्थिति में पहले हीनलवण जल (·४५%)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का २००–४०० मि० ली० की मात्रा में इण्ट्रावीनस मार्ग से देकर C. S. F. की वृद्धि हो जाने पर ही पेनिसिलीन का कटिवेध द्वारा प्रयोग करें।

पेनिसिलीन चिकित्सा से सन्तोषजनक लाभ न मिलने पर—

○ आइलोटाइसिन, आरियोमाइसीन, टेट्रासाइक्लीन, एम्पीसिलीन आदि का प्रयोग करें।

मात्रा—२५० मि० ग्रा० प्रति ४ घण्टे पर २ दिन तक। तत्पश्चात् प्रति ६ घण्टे पर ४ दिन तक।

○ **न्यूमोकोकसजन्य मस्तिष्कावरणशोथ** (Pneumococcal meningitis) **की चिकित्सा—**

℞ इञ्जेक्शन पेनिसिलीन (Inj. Penicillin)

मात्रा—२० लाख यूनिट १०० मि० ली० नार्मल सैलाइन तीव्र इफ्यूजन के रूप में प्रति ४ घण्टे पर।

○ यदि पेनिसिलीन सेन्सिटिव हो तो—

℞ इञ्जे० क्लोरोमाइसिटीन (Inj. Chloromycetine)

मात्रा—५० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर २४ घण्टे में।

○ **इन्फ्लूएञ्जल मस्तिष्कशोथ की चिकित्सा—**

℞ क्लोरम्फेनिकाल (Chloramphenicol)

मात्रा—५०–७५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर प्रथम मांसपेशीगत। तत्पश्चात्—मुख द्वारा १० दिनों तक।

अथवा—क्लोरोमाइसिटीन (Chloromycetine) (P. D.)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर मुख द्वारा। अथवा—५०० मि० ग्रा० I/M प्रतिदिन विभाजित मात्रा में।

अथवा—एम्पीसिलीन (Ampicillin)

व्या० नाम—रोसिलीन (Roscillin) (रैनबेक्सी)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—रोसिलीन इञ्जेक्शन (Roscillin Inj.)

मात्रा—५०० मि० ग्रा० १ मात्रा में २ मि० ली० डिस्टिल्ड वाटर में घोल कर I/M दें।

पाँच माह से कम आयु के बच्चों में—प्रायः इस आयु के बच्चों में रोग का संक्रमण 'ई० कोलाई' नामक जीवाणु से होता है। साथ ही कुछ में क्षयज जीवाणुओं के द्वारा होता है। ऐसी स्थिति में निम्न दो चिकित्सा-क्रमों में से किसी एक का प्रयोग करना चाहिए—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औषधि	कुल दैनिक मात्रा	मात्रा विभाजन
१. बेञ्जिल पेनिसिलीन	६००,००० यूनिट/प्रति किलो	४–४ घण्टे पर
तथा	I/V अथवा I/M	
स्ट्रेप्टोमाइसिन	५० मिग्रा०/प्रति किलो I/M	१२-१२ घण्टे पर
(अथवा)—		
२. एम्पीसिलीन	३०० मिग्रा०/प्रति किलो	४-४ घण्टे पर
तथा	I/V अथवा I/M	
केनामाइसिन	१५ मिग्रा०/प्रति किलो I/M	१२-१२ घण्टे पर

○ बच्चे का वजन करना अति आवश्यक है।

ट्युबरकुलस मेनिञ्जाइटिस की चिकित्सा—

१. स्ट्रेप्टोमाइसिन—१ ग्राम मांसपेशीगत प्रतिदिन।

२. आइसोनियाजिड—३०० मि० ग्रा० नित्य। १० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर।

३. रिफाम्पिन (Refampen)—६०० मि० ग्रा० नित्य।

४. इथाम्बूटाल (Ethambutal)—१०० मि० ग्रा० नित्य। १५ मि० ग्रा० प्रति किलो शरीर भार पर।

○ चिकित्सा अवधि—१½ से २ वर्ष।

○ अन्य चिकित्सा—मस्तिष्कावरणशोथ के अनुसार।

अथवा 'टचूबरकुलस मेनिञ्जाइटिस' की चिकित्सा निम्न प्रकार से करें—

Triple drugs therapy—जब तक मेनिञ्जाइटिस से मुक्ति न मिल जाये। तत्पश्चात् २ औषधियाँ—Changing combination में कम से कम १८ माह तक।

बालकों में—

१. स्ट्रेप्टोमाइसिन—१ ग्राम (२०–४० मि० ग्रा०/प्रति किलो) दिन में १ बार I/M।

२. आइसोनेक्स—३०० मि० ग्रा० (१०–२० मि० ग्रा०/प्रति किलो) दिन में १ बार।

३. पी० ए० एस० (P. A. S.)—५ ग्राम (०·१ ग्राम/प्रति किलो) दिन में ३ बार।

४. थियासिटाजोन (Thiacitazone)—१५० मि० ग्रा० दिन में १ बार।

बड़े बच्चों में और शिशुओं में—C. S. F. रिपोर्ट आने तक तीनों प्रकार के सामान्य जीवाणुओं, यथा—'एच० इन्फ्लूएञ्जाई', 'यूमोकॉकस' तथा 'मेनिंगोकॉकस' संक्रमण की उपस्थिति मानकर पेनिसिलीन, सल्फाडिमीडीन तथा क्लोरम्फेनिकाल—इन तीनों का साथ-साथ प्रयोग करना चाहिए,—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औषधि	प्रारम्भिक मात्रा	मेण्टेनेन्स मात्रा
१. सल्फाडिमीडीन	४० मिग्रा०/प्रति किलो I/V	२०० मिग्रा०/प्रति किलो। प्रतिदिन I/V अथवा मुख द्वारा ४ भागों में विभाजित कर प्रति ६ घण्टे पर।
२. क्लोरम्फेनिकाल	५० मिग्रा०/प्रति किलो I/V	१०० मिग्रा०/प्रति किलो। प्रतिदिन I/V, I/M या मुख द्वारा ४ भागों में विभाजित कर ६ घण्टे पर। नोट—३ मास से कम शिशुओं में २५ मि० ग्रा०/प्रति किलो। प्रतिदिन।
३. बेञ्जिल पेनिसिलीन	१० लाख यूनिट I/M अथवा I/V	६००,००० यूनिट। प्रति किलो I/V अथवा I/M प्रति ४ घण्टे पर।
४. एम्पीसिलीन	३०० मिग्रा०/प्रति किलो प्रतिदिन ६-६ घण्टे पर।	१५० मिग्रा०/प्रति किलो। प्रतिदिन २ सप्ताह तक I/M प्रति ६ घण्टे पर।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—मस्तिष्कावरण शोथ की चिकित्सा में लाक्षणिक चिकित्सा विशेष महत्त्व रखती है, क्योंकि इसमें प्रत्येक लक्षण एक उपद्रव ही होता है।

(१) शिरःशूल की चिकित्सा—

प्रेडनीसोलोन ५ मिग्रा०	१ गोली
कोडीन फॉस्फेट	१५ मिग्रा०
फेनासिटीन	१८० मिग्रा०
एमीडोपायरिन	१८० मिग्रा०
	१ मात्रा

ऐसा १ मात्रा गरम जल से प्रति ६–८ घण्टे पर।

⊙ असह्य वेदना की स्थिति में—हेपाटाल्जिन (Hepatalgin), ओम्नापेन अथवा पेथीडीन हाइड्रोक्लोराइड का प्रयोग करें।

⊙ इन औषधियों से वास्तविक लाभ नहीं मिलता है। वास्तविक लाभ C. S. F. के निकाल देने के बाद ही होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) वमन (Vomiting) की चिकित्सा—

℞ क्लोरप्रोमेजीन हाइड्रोक्लोराइड (Chlorpromazine Hcl.)

व्या० नाम—लार्गेक्टिल (Largactil)

मात्रा—१ गोली (२५ मि० ग्रा०) दिन में ३ बार।

अथवा—ट्राई० फ्लूप्रोमेजीन हाइड्रोक्लोराइड

व्या० नाम—सीक्विल (Siquil)

मात्रा—१ एम्पुल मांसपेशीगत।

अथवा—एवोमिन (Avomin) अथवा एमोक्सिन का प्रयोग करें।

नोट—शरीर में जल की मात्रा कम होने पर डेक्स्ट्रोज, प्लाज्मा, समलवण जल आदि I/V दें।

(३) परम ज्वर (Hyperpyrexia) की चिकित्सा—

१. मस्तक पर बर्फ की थैली का निरन्तर प्रयोग।

२. पूरे शरीर को ठंडे पानी से पोंछना।

○ ज्वर को १०३–१०४° फा० की सीमा से अधिक नहीं बढ़ने देना चाहिए।

(४) अनिद्रा (Sleeplesseness) की चिकित्सा—

℞ फीनोबार्बीटोन ६० मि० ग्रा० दिन में ३ बार मुख द्वारा।

अथवा—फीनोबार्बीटोन सोडियम २०० मि० ग्रा० मांसपेशीगत।

अथवा—डायजीपाम ५–१० मि० ग्रा० इण्ट्रावीनस।

(४) आक्षेप (Convulions)—

℞ पैरल्डिहाइड (Paraldehyde)

मात्रा—५–८ मि० ली० मांसपेशीगत आवश्यकतानुसार।

(५) मूर्च्छा—१. गले में श्लेष्मा का संचय होने पर जीभ को फॉर्सेप्स से बाहर खींचकर श्लेष्मा को पोंछकर निकाल लेना चाहिए।

२. थोड़ी-थोड़ी देर बाद करवट बदलें।

३. श्यावता की उपस्थिति में ऑक्सीजन सुंघायें।

४. द्रव एवं औषधि पहुँचाने हेतु नासा द्वारा राय्ल्स ट्यूब का प्रवेश।

५. विषमयता के निराकरण हेतु शरीर को कई बार पोंछना तथा I/V ड्रिप से डेक्स्ट्रोज तथा समलवण जल का घोल ३००–६०० मि० ली० की मात्रा में प्रवेश करना।

६. हृदय टॉनिक्स का प्रयोग।

७. कटिवेध द्वारा C. S. F. को निकालना।

८. मूत्र-त्याग न होने पर रबर की नली लगाकर मूत्र कराना। साथ ही नली को मूत्राशय में प्रविष्ट कर छोड़ देना चाहिए। इसे अधिक दिन तक रहें।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(६) पृष्ठवंश की पेशियों में स्पर्शासह्यता—

१. सम्पूर्ण शरीर में वाष्पस्वेदन करना।

२. विण्टोजिनो (Vintogino), थर्मोजिन, विक्स आदि को मुलायम हाथ से गर्दन से नितम्ब तक पीठ की तरफ मालिश कर गर्म रुई रख कर बाँधना।

○ साथ ही निम्न योग का सेवन करायें—

℞ लार्गेक्टिल २५ मि० ग्रा०	१ गोली
इस्जीपायरीन	१ गोली
प्रेडनीसोलोन ५ मि० ग्रा०	१ गोली
विटामिन बी$_६$ (Pyridoxin)	२५ मिग्रा०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा आवश्यकतानुसार दिन में २–३ बार।

(७) प्रलाप—

१. रोगी को एकान्त कमरें में रखें।

२. सम्पूर्ण शरीर को हलके गुनगुने पानी से पोछें।

३. पानी अधिक मात्रा में पिलाना चाहिए।

४. अधिक ज्वर तथा विषमयता की स्थिति में—ठंडी भीगी चादर से शरीर को ५–१० मिनट तक लपेटना चाहिए।

५. आवश्यकता पड़ने पर 'डेक्स्ट्रोज नार्मल सैलाइन' का प्रयोग आवश्यक होता है।

६. पैरल्डिहाइड ३–६ मि० ली० मांसपेशीगत रात्रि ८–९ बजे।

(८) न्यून रक्तदाब (Hypotension)—'इन्जेक्शन डेक्स्ट्रोज नार्मल सैलाइन' ५०० मि० ली०+नॉर एड्रीनलीन ४ मि० ग्रा० I/V ड्रिप से।

(९) रेस्पिरेटरी फेल्योर—'कोरामीन' २ मि० ली० मांसपेशीगत अथवा जीभ के नीचे रखें।

(१०) कार्डियल फेल्योर—प्लाज्मा, डेक्स्ट्रोज, नार्मल सैलाइन आदि I/V मार्ग से। साथ ही एड्रीनल कार्टिकल एक्स्ट्रेक्ट का दिन में २-३ बार इन्जे०।

(११) रक्तस्राव (Haemorrhage)—१. प्रारम्भ से ही विषमयता शामक उपचार तथा विटामिन 'सी' एवं 'के' ५वें, ६ठे दिन बाद से प्रयोग करने पर लाभ होता है।

२. अधिवृक्क में रक्तस्राव का अनुमान होने पर—

℞ हाइड्रोकार्टीसोन सोडियम सक्सीनेट

व्या० नाम—इफकोर्लिन सोल्युबल (Efcorlin soluble)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० दिन में २ बार मांसपेशीगत।

शारीरिक सुधार होने पर क्रमशः मात्रा घटाते जायें।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—'डेकाड्रान' २ मि० ली० I/M लगायें।

३. तत्काल—ग्लूकोज नार्मल सैलाइन में डेकाड्रान मिलाकर I/V मार्ग से दें।

४. कुछ दिन बाद अधिवृक्क के सामान्य होने पर—ACTH का इञ्जे० दिन में २ बार ३-४ दिन तक दें।

(१२) नाड़ी अंगघात—इसमें तिरछी निगाह, वर्त्मघात, अन्धता, बहिरापन, मूकता आदि गम्भीर उपद्रव होते हैं। इसके लिए—

१. प्रारम्भ से ही सल्फाड्रग्स+पेनिसिलीन का प्रयोग करने से इन उपद्रवों से बचाव होता है।

२. अंगघात होने पर चिकित्सा से लाभ नहीं होता है, केवल आंशिक लाभ होता है।

३. अंगघात पूर्णरूप से न हुआ हो तो पोषक आहार एवं बलवर्धक औषधियाँ दें।

४. श्वासावरोध की स्थिति में ऑक्सीजन सुंघायें तथा कार्डियाजोल या कोरामीन का प्रयोग करें।

५. अंगघात की चिकित्सा के लिए—रोगमुक्ति के पश्चात् विटामिन बी$_1$, बी$_{12}$ तथा बी-कॉम्प्लेक्स का प्रयोग।

(१३) जलशीर्ष (Hydrocephalus)—इसकी एकमात्र चिकित्सा ऑपरेशन है।

सेरिब्रोस्पिइनल फीवर की मिश्रित चिकित्सा—

१. ℞ सल्फाडायजीन	१ गोली
पैरासिटामोल	२ गोली
फीनोबार्बीटोन ५ मि० ग्रा०	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार जल से।

○ संक्रमण, ज्वर, दर्द तथा अनिद्रानाशक है।

२. ℞ सल्फाडायजीन (M. B.)	१ गोली
ओरिसुल (सीबा)	१ गोली
ओरियोमाइसिन (सायनेमिड)	२ कैपसूल
	१ मात्रा

गोलियों को पीसकर कैपसूल की दवा में मिला लें। यह दो मात्राएँ हैं। ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार दें। बच्चों को ½-½ मात्रा दें। ▣

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोहिणी
(Diphtheria)

पर्याय—फॉसियल डिफ्थीरिया (Faucial diphtheria), डिफ्थीरिया, कण्ठरोहिणी।

परिचय—It is an acute infection caused by diphtherial characterised by formation of a pseudomembrane most commonly in the region of pharynx and aborption of a powerful exotoxin responsible for cellular injury and systemic manifestation.

○ यह एक भयानक संक्रामक रोग है। इस रोग में कण्ठ और स्वरयंत्र (तालु एवं टेटुए) में शोथ होकर एक दूषित नई झिल्ली हो जाती है, जिससे कण्ठ सूज जाता है। परिणामस्वरूप भोजन निगलने में कष्ट, खाँसी आदि लक्षण प्रकट हो जाते हैं। यह रोग २ वर्ष से १५ वर्ष तक की आयु में विशेषकर होता है। रोगारम्भ में जी मिचलाना, आलस्य, सिरदर्द, आवाज बैठ जाना तथा कण्ठ में दूषित झिल्ली बन कर फैल जाती है। कभी-कभी ज्वर भी होता है, लार टपकती है और मुँह से दुर्गन्ध आती है। गर्दन में जकड़न, श्वास लेने में कष्ट, कभी-कभी बेहोशी, प्रलाप तथा हाथ-पाँव में ऐंठन आदि लक्षण हो जाते हैं।

कारण—यह रोग कार्नीबैक्टीरियम डिफ्थीरी (Corynebacterium diphtheriae) या क्लेब्स-लोफलर्स (Klebs-loefflers) दण्डाणु (K. L. B.) के द्वारा होता है।

रोग का प्रसार—यह रोग खाँसने, बात करने, छींकने, चूमने आदि के समय बिन्दुक संक्रमण (Droplet infection) से प्रसारित होता है। स्कूलों में बच्चे प्रायः एक-दूसरों की पेन, पेंसिल्स या रूमाल प्रयोग करते रहते हैं, जिससे भी यह रोग फैल जाता है।

संचय काल—२ से ७ दिन।

उम्र (Age)—६ माह से ऊपर के बच्चे इससे अधिक प्रभावित होते हैं। कभी-कभी १०-१५ वर्ष तक की आयु में साधारण रूप में होता है। कभी-कभी वयस्क भी इससे पीड़ित देखे जाते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

रोग-प्रसार का विशेष समय—विशेष रूप से शीतकाल।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कॉन्स्टीट्युशनल सिम्प्टम्स—१. इस रोग में गले में झिल्ली बन जाती है और वहाँ से यह तत्काल चारों तरफ फैल जाती है।

२. रोगी को साधारण ज्वर (१००–१०३° फा० के बीच) रहता है।

३. गले की कौड़ियाँ फूल जाती हैं और गले में श्लेष्मा जैसी एक पतली झिल्ली बन जाती है। पहले यह झिल्ली तालु के मूल में बनती है और फिर यह पूरे गले को घेर लेती है। इसकी गति अति तीव्र होती है।

४. रोगी का खाना-पीना तथा श्वास-प्रश्वास बन्द होने लगते हैं।

५. लक्षण हलके (Mild), मध्यम स्वरूप के (Moderate) तथा गम्भीर (Severe) होते हैं। मृदु (Mild) स्वरूप का लक्षण शंकाजनक होता है। गम्भीर रोग में—टॉक्सीमिया, टेकीकार्डिया, पेलर (Pallar), अनीमिया, बेचैनी, दुर्बलता तथा श्वासकष्ट विशेषकर भोजन के बाद मिलता है। फ्रेंक हार्ट फेल्योर, सरक्यूलेटरी फेल्योर, ईडिमा, ओलीगूरिया, रक्तमूत्र तथा एनूरिया (Anuria) आदि गम्भीर स्वरूप के लक्षण रोगी में मिलते हैं।

६. रोग की तीव्रता से ज्वर का कोई सम्बन्ध नहीं होता है।

७. इस रोग में रक्तकणों की संख्या एवं गुरुता में वृद्धि होती है। रोग के प्रारम्भ से ही श्वेतकणों की वृद्धि १२-२५ हजार तक मिलती है।

८. रक्त में मायलोसाइटस (Mylocytes) का मिलना तीव्र विषमयता एवं असाध्यता का सूचक है।

स्थान-भेद से विभिन्न लक्षणों से युक्त उसके निम्न प्रकार मिलते हैं—

(१) **फॉसियल (Faucial) डिफ्थीरिया**—इसे टॉन्सिलर डिफ्थीरिया (Tonsillar diphtheria) भी कहते हैं। यह इस रोग में सर्वाधिक मिलने वाला स्वरूप है। स्थानीय लक्षण व चिह्न 'सोर-थ्रोट' जैसे होते हैं। इसके लक्षण निम्न प्रकार के होते हैं—

१. तापक्रम ९९–१००° फा० (३७.२°–३७.८° सें०) तक। किन्तु १०२° फा० (३९° सें०) से अधिक कभी नहीं जाता।

२. सामान्य घबराहट तथा दुर्बलता मिलती है।

३. सोर-थ्रोट की उपस्थिति, निगलने में कष्ट, निरन्तर लालस्राव (Continuous salivation) की प्रवृत्ति।

४. फैरिंग्स कंजेस्टिड तथा लाल (Dull red) होता है।

५. रोगी बालक गले की दुखन के साथ निढाल तथा सुस्त रहता है।

६. नाड़ी तीव्र तथा मृदु आयतन (Volume) की होती है।

७. एक या दोनों टॉन्सिल्स के सम्पूर्ण अथवा किसी एक हिस्से पर या गले के पिलर्स पर भी एक श्वेत वर्ण की झिल्ली छायी हुई दीखती है। यह स्पष्ट किनारों वाली, लाल तथा कुछ उठी हुई होती है। इस झिल्ली को अलग नहीं

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया जा सकता। अलग करने पर रक्तस्राव होने लगता है। इस झिल्ली के कारण रोगी बालक भोजन करने में असमर्थ रहता है।

८. झिल्ली के कारण सब-मैक्सिलरी (Submaxillary) तथा ग्रीवा-ग्रन्थियाँ भी कुछ फूली हुई होती हैं।

९. रोगी की जीभ मैली होती है।

१०. बालक बेचैन तथा उन्निद्रित रहता है।

११. नाड़ी तीव्र, निर्बल (Compressive) तथा गति ११० प्रति मिनट होती है।

१२. चेहरे पर पाण्डुता के लक्षण मिलते हैं।

१३. रक्त-संचार के फेल होने, ब्लड-प्रेसर के गिरने, नाड़ी-निर्बल तथा गति वाली एवं शीतल हो जाने के परिणामस्वरूप अन्त में रोगी की मृत्यु हो जाती है। ○ मूत्र में कुछ एल्बुमिन भी मिलती है।

तीव्र रूप में—तालु की श्लेश्मकला का अधिक लाल होना, मुख से दुर्गन्ध, ग्रीवा की ग्रन्थियाँ शोथमय, शरीर में शिथिलता, तीव्र नाड़ी, श्वास-प्रश्वास की तीव्रता, चेहरे पर बेचैनी तथा पाण्डुता आदि फॉसियल डिफ्थीरिया (Faucial diphtheria) के लक्षण होते हैं।

○ बालक जितनी कम उम्र का होता है रोग उतना ही असाध्य होता है।

○ इसमें 'ल्यूकोसाइटोसिस' तथा 'पोलीमार्फस' बढ़े हुए मिलते हैं।

○ मूत्र में एल्बुमिनमेह (Albuminuria) की उपस्थिति मिलती है।

(२) नेजल डिफ्थीरिया (Nasal diphtheria)—

१. इसमें रोग नासा तक ही सीमित रहता है। झिल्ली नासापुट से जुड़ी रहती है।

२. ज्वर अधिक तीव्र मिलता है।

३. श्वासकष्ट, पूययुक्त रक्तमय नासास्राव और कभी-कभी रक्तस्राव आदि लक्षण मिलते हैं।

४. इसमें नासा का अवरोध एक सामान्य लक्षण होता है।

५. इस प्रकार में तत्काल आवश्यक प्रबन्ध एवं चिकित्सा की आवश्यकता होती है।

(३) स्वरयंत्र रोहिणी (Laryngeal diphtheria)—यह रोग प्रधान रूप से स्वरयंत्र में होता है। कला लक्षित स्वरयंत्र का अवरोध कर सकती है। इसमें सूक्ष्म आवाज, तीव्र स्वरूप की खाँसी, श्वास के साथ बेचैनी, श्यावता (Cyanosis) आदि लक्षण होते हैं। यह तीव्र स्वरूप की होती है और ४ वर्ष की आयु वाले बालक में अधिक होती है।

○ यह प्राथमिक तथा द्वितीयक भी हो सकती है। इसकी ३ अवस्थाएँ होती हैं—

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(i) **प्रथमावस्था**—इसका समय २ दिन का होता है। इसमें तीव्र खाँसी तथा स्वर-भंग—ये दो लक्षण होते हैं।

(ii) **द्वितीयावस्था**—इसके निम्न लक्षण होते हैं—

१. श्वास में अधिकाधिक कठिनाई होती है।

२. श्वासकृच्छ्रता के दौरे प्रायः रात्रि के समय आते हैं। पहले दौरे का समय अधिक तथा अन्तर अल्प होता है। बाद में दोरे जल्दी-जल्दी आने लगते हैं और देर तक रहते हैं।

३. दौरे के समय गले की शिरायें फूल जाती हैं।

४. अँगुलियों के अग्र भाग नीले पड़ जाते हैं।

५. स्वेद की अधिकता, आँखें लाल तथा बेचैनी अधिक रहती है।

६. कभी-कभी दौरे के अन्त में कला के टुकड़े मुख से बाहर निकल आते हैं।

(iii) **तृतीयावस्था**—इस अवस्था में निम्न कष्टदायक लक्षण मिलते हैं—

१. पूर्ण श्वासावरोध की उपस्थिति।

२. इस अवस्था में दौरे कम होते हैं। हाथ-पैर ठंडे पड़ जाते हैं।

३. हृदय-दौर्बल्य, मूर्च्छा और कभी-कभी आक्षेप उत्पन्न होकर मृत्यु हो जाती है।

४. प्रायः १ वर्ष के बच्चे २४ घण्टे में ही मर जाते हैं।

(४) **दूषित रोहिणी** (Septic diphtheria)—

१. यह तीव्र प्रकार की होती है। इसमें स्यूडोमेम्ब्रेन (Pseudo-membrane) मोटी तथा कड़ी हो जाती है। साथ ही उसके स्थान में तीव्र शोथ तथा गैंग्रीन होती है।

२. ग्रीवा की लसग्रन्थियाँ अधिक फूल जाती हैं, जिससे गला अधिक मोटा हो जाता है।

३. नाड़ी मन्द व अनियमित होती है।

४. अन्त में हृदय दुर्बलता से रोगी की मृत्यु हो जाती है।

(५) **रक्तस्रावी रोहिणी** (Haemorrhagic diphtheria)—इस प्रकार के डिफ्थीरिया में झिल्ली के किनारे से नासा, वृक्क, आन्त्र व आमाशय से बार-बार रक्तस्राव होता है। यह प्रायः असाध्य होता है।

अन्य—नेत्र, भग एवं त्वचा की रोहिणी में क्रमशः नेत्रनाश, तीव्र विषमयता एवं त्वचा के नष्ट होने की आशंका रहती है।

डिफ्थीरिया के लक्षण : एक दृष्टि में—

*मन्द ज्वर	*अत्यधिक दुर्बलता	*श्वासावरोध
*शुष्क कास	*नासा से पूय रक्तस्राव	*श्यावता
*स्वर भंग	*गले का शोथ	*निगलने में कठिनाई

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

*बोलने में कठिनाई	*हृदय मन्दता एवं	*फॉसियल या गला, स्वरयन्त्र,
*ब्लड-प्रेशर कम होना	अनियमितता	मृदुतालु, नासा आदि अंगों में
*तीव्र बेचैनी	*गर्दन की लस-	धूसर वर्ण की एवं स्थिर स्वभाव
*यकृद् वृद्धि	ग्रन्थियों की वृद्धि	की कला की उपस्थिति ।
*अंगघात	*कभी-कभी त्वचा पर	*आकृति से वेदना, बेचैनी एवं
*मूत्राघात	विस्फोटों की उपस्थिति	पाण्डुता की अभिव्यक्ति

नोट—१. उपरोक्त लक्षणों की उपस्थिति से डिफ्थीरिया का अनुमान होता है ।

२. थोड़ा भी सन्देह होने पर गले से स्राव लेकर सूक्ष्मदर्शक यन्त्र से परीक्षा करने पर डिफ्थीरिया दण्डाणु का प्रत्यक्ष दर्शन होने पर असंदिग्ध निर्णय हो जाता है ।

निदान (Diagnosis)—उपरोक्त लक्षणों के आधार पर निदान में कोई कठिनाई नहीं होती है ।

लेबोरेटरी परीक्षा—यद्यपि उपरोक्त लक्षणों को देखकर साधारणतया रोग का निदान करने में भूल नहीं होती है । फिर भी यदि लेबोरेटरी की सुविधा पास में ही हो तो जीवाणु की पहिचान के लिए रोगी के गले का स्वाब (Swab) बनाकर लेबोरेटरी में भेज देना चाहिए ।

(१) **लोकल स्वाब टेस्ट**—इसके लिए लकड़ी या धातु की पतली-सी सलाई पर थोड़ी रूई लपेट कर इस फुरेरी को टॉन्सिल्स तथा गले में झिल्ली वाले स्थान पर फेर कर इसे टेस्ट ट्यूब में बन्द करके परीक्षा के लिए भेजा जाता है ।

○ जीवाणु विशेषज्ञ (Bacteriologist) इसे सूक्ष्मदर्शक यन्त्र में काँच की स्लाइड पर फैलाकर डिफ्थीरिया का जीवाणु देखता है । इसे लोकल स्वाब परीक्षा कहते हैं ।

(२) **शिक टेस्ट** (Schick test)—इस परीक्षा में ०.१ मि० ली० टॉक्सिन अग्रबाहु (Fore arm) में इण्ट्राडर्मली दे दिया जाता है । ५वें या ६ठे दिन इसका निरीक्षण किया जाता है। पॉजीटिव (+) होने पर वह भाग लाल तथा शोथयुक्त हो जाता है ।

(३) **अन्य परीक्षाएँ**—यदि सम्भव हो तो निम्न परीक्षाएँ करनी चाहिए—

१. ई० सी० जी० परीक्षा (E. C. G. examination) ।

२. रीनल फंक्शन टेस्ट (Renal function test) ।

३. **ब्लड टेस्ट** (Blood test)—इसमें ल्यूकोसाइटोसिस की उपस्थिति मिलती है । हीमोग्लोबिन रेड सैल के हीमोलाइसिस से तेजी से गिरती है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. C. S. F. परीक्षा।
५. लिवर फंक्शन टेस्ट।
६. चेस्ट एक्स-रे।
७. मलोनी टेस्ट (Maloni test)।

○ **चिकित्सक को चाहिए कि**—वह अपने यहाँ जनरल प्रेक्टिस में ज्वर की चिकित्सा के लिए आने वाले प्रत्येक रोगी बच्चे के गले का निरीक्षण अवश्य कर ले। भले ही रोगी गले में पीड़ा की शिकायत न करता हो। ऐसा नियम बनाने से इस रोग की पहिचान प्रारम्भिक अवस्था में ही हो जाती है, जिससे चिकित्सा में अभूतपूर्व सफलता मिलती है।

○ गले की परीक्षा के लिए चिकित्सक के पास एक उत्तम टार्च तथा जीभ दबाने वाला यन्त्र (Tounge depressor) होना चाहिए। इससे जीभ को दबाकर गले का निरीक्षण आसानी से होता है।

विभेदक निदान (Differential diagnosis)—टॉन्सीलाइटिस, स्ट्रेप्टोकोकल फैरिञ्जाइटिस, ग्लेण्डुलर फीवर, वायरल फैरिञ्जाइटिस, रोमान्तिका, इन्फ्लूएञ्जा, विन्सेण्ट्स एञ्जाइना आदि से इसका भेद करना चाहिए।

⊙ साधारणतया इसका भेद टॉन्सीलाइटिस से करना होता है।

○ यदि इन रोगों का पूर्ण निदान न हो तो रोहिणी की चिकित्सा करनी चाहिए।

○ ब्रॉन्को-न्यूमोनिया से भी इसके लक्षण मिल सकते हैं।

उपद्रव (Complication)—इस रोग में ब्रॉन्को-न्यूमोनिया, श्वासावरोध, हृदय-निपात, पेशियों का अंगघात, वृक्कशोथ, सपूय सद्रव फुप्फुसावरण शोथ, न्यूमोनिया, पक्षाघात, मूत्रविकार, अत्यधिक शुक्लमेह, रक्तमेह आदि भयानक उपद्रव होते हैं।

पूर्वानुमान (Prognosis)—स्वरयंत्र की रोहिणी, झिल्ली की मोटाई अधिक होना, झिल्ली का अधिक विस्तृत होना, आयु की कमी, ब्लड-प्रेसर का अधिक कम होना, मूत्र में अल्बुमिन की उपस्थिति, ग्रीवा-ग्रन्थियों का फूलना—ये सभी घातक लक्षण होते हैं।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. मृदु केसिस को छोड़ कर बच्चे को यथासम्भव ४ सप्ताह तक शय्या पर विश्राम दें।

२. यदि हृत्पेशीशोथ का भी लक्षण हो तो विश्राम की अवधि और बढ़ा देनी चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. हृदय के अधिक कमजोर हो जाने पर रोगी को विस्तर पर लिटाये रखें। चारपाई को पैरों की ओर ईंट रख कर ऊँची कर दें, जिससे कि रक्त हृदय की ओर अधिक वापिस जा सके।

४. सख्त शारीरिक कमजोरी, हृदय की कमजोरी और रोगी को मृत्यु से बचाने के लिए ५ प्रतिशत ग्लूकोज सोल्यूशन बूंद-बूंद करके गुदा में दें। यदि रोगी की अवस्था विशेष चिन्ताजनक हो तो ग्लूकोज सोलूशन २०% ड्रिप मेथड द्वारा शिरा में बूंद-बूंद कर प्रवेश करें।

५. कष्ट के कारण यदि भोजन मुख से न लिया जा सके तो नाक में ट्यूब डालकर पेय द्रव का प्रवेश करें।

६. इस रोग में रोगी को पक्षाघात होने तथा हृद्रय की मांसपेशियों में शोथ आ जाने (Myocarditis) की अत्यधिक सम्भावना होती है। इसलिए रोगी के हृदय की परीक्षा करते रहें। रोगी को पेय के रूप में जौ का पानी (बार्ली वाटर), दूध, फलों का रस, ग्लूकोज और पानी दें। रोगी को विटामिन खिलाते रहना लाभकारी होता है।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—निदान की प्रयोगशाला-सम्पुष्टि की प्रतीक्षा किये विना ही रोगी को एण्टीटॉक्सिन सीरम (Antitoxin serum) का इञ्जेक्शन देना चाहिए। रोग की उग्रता के अनुसार सीरम की मात्रा—२५,००० से १००,००० यूनिट तक इञ्जेक्शन I/M अथवा I/V मार्ग से दी जाती है। मामूली रोग में २ हजार से ८ हजार यूनिट का इञ्जे० मांसपेशी में लगायें। रोग की अधिकता होने पर ५० हजार से १ लाख यूनिट का इञ्जे० लगाया जाता है। रोग का सन्देह हो जाने पर १० हजार यूनिट का इञ्जे० लगा दिया जाये, जिससे कि बच्चा इस रोग से बच जाये।

निर्देश—१. सीरम की पूर्ण मात्रा देने से पूर्व सुग्राहिता-परीक्षण (Sensitivity test) कर लेना चाहिए।

२. आर्टीकेरिया या अनूर्जता वाले केसों में विसुग्राहीकरण (Desensitisation) विधि के द्वारा प्रतिजीव विष का सूचीवेध थोड़ी-थोड़ी मात्रा में धीरे-धीरे देना चाहिए।

○ एण्टी-टॉक्सिन की १०,००० और २०,००० यूनिट की मात्रा की वायल आती है। इस सीरम की मात्रा बच्चों और वयस्कों सबके लिए एक समान होती है।

नोट—जिनको पहली बार एण्टी-टॉक्सिन दिया जाता है, उनमें एलर्जिक रिएक्शन की अधिक सम्भावना रहती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एण्टीटॉक्सिन सीरम की मात्रा का निर्धारण—

अधिष्ठान	साधारण रूप	गम्भीर रूप
१. फॉसियल डिफ्थीरिया	२५-५० हजार यूनिट	१ से १½ लाख यूनिट
२. नासागत डिफ्थीरिया	१०-२० हजार यूनिट	४०-६० हजार यूनिट
३. फैरिंजियल डिफ्थीरिया	२०-४० हजार यूनिट	४०-८० हजार यूनिट
४. लैरिंजियल डिफ्थीरिया	४० हजार यूनिट	१-१½ लाख यूनिट
५. नेजो-फैरिंजियल डिफ्थीरिया	२०-४० हजार यूनिट	४०-८० हजार यूनिट तक।

नोट—यदि अधिष्ठान के अनुसार किसी प्रकार मात्रा निर्धारित न हो तो रोग की अवस्थानुसार निम्नवत् मात्रा दी जानी चाहिए—

१. रोगी बालकों में—सामान्य रोग में—१० हजार यूनिट मांसपेशीगत।
रोग का तीव्र वेग होने पर—२० हजार यूनिट।
और अधिक तीव्र वेग होने पर—४० हजार यूनिट।

२. रोगी युवकों में—मृदु रोग में—२० हजार यूनिट।
मध्यम रोग में—४० हजार यूनिट।
तीव्र रोग में—८० हजार यूनिट।

नोट—तीव्र रोग में ½ मात्रा I/M तथा आधा घण्टे बाद ½ मात्रा शरीर ताप पर गर्म करके बिना हलका किये धीरे-धीरे इण्ट्रावीनस लगायें।

याद रखें—यदि शिरा में देने में कठिनाई हो तो इसे इण्ट्रापेरीटोनियली देना चाहिए।

रियेक्शन की स्थिति में—एड्रीनलीन का सूचीवेध हमेशा अपने पास रखना चाहिए। अथवा हाइड्रोकार्टीसोन हेमीसक्सीनेट मांसपेशीगत ५० मि० ग्रा० या १०० मि० ग्रा० की मात्रा में ५०० मि० ली० डेक्स्ट्रोज सैलाइन में मिलाकर I/V दें।

'सेंसिटीविटी टेस्ट' के पश्चात् पूरी मात्रा अन्तःपेशी (I/M) इञ्जेक्शन द्वारा एक ही बार में दी जानी चाहिए। थोड़ी-थोड़ी मात्रा में २-३ बार में करके नहीं देना चाहिए। हाँ इतना किया जा सकता है कि पूर्ण मात्रा को अलग-अलग दो स्थानों में दिया जा सकता है।

○ गम्भीर रोग की स्थिति में I/V इञ्जेक्शन देना चाहिए। इस मार्ग से देने के लिए सीरम को थोड़े से १०% ग्लूकोज घोल में घोल कर बहुत धीरे-धीरे प्रयोग करना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ सीरम प्रयोग के २४ घण्टे के अन्दर रोग के लक्षण तथा झिल्ली समाप्त हो जाते हैं। यदि इतने समय में लाभ न दिखलाई दे तो २०००० यूनिट की एक मात्रा और दे देनी चाहिए।

○ रोग-मुक्ति के पश्चात् बच्चे को रोग के भावी आक्रमण से बचाने के लिए (Immune करने के लिए) 'डिफ्थीरिया टॉक्साइड' की २ मात्राएँ १½ महीने का अन्तर रखते हुए दी जाती है।

नोट—आजकल कन्सट्रेटिड रिफाइण्ड एण्टीटॉक्सिन (Concentrated refined antitoxin) उपलब्ध है। इसमें उपद्रवों की सम्भावना नहीं है।

कुछ लोग डिफ्थीरिया एण्टी-टॉक्सिन की मात्रा निम्न प्रकार से निर्धारित करते हैं—

एक टॉन्सिल्स पर छोटा-सा धब्बा	२०,००० यूनिट
दोनों टॉन्सिलों पर धब्बे	४०,००० यूनिट
कंठ का डिफ़्थीरिया	४०,००० यूनिट
नाल का डिफ्थीरिया	२०,००० यूनिट

नोट—डिफ्थीरिया एण्टी-टॉक्सिन की मात्रा व्याधि के अधिष्ठान, गम्भीरता, विषमयता तथा उपद्रवों आदि पर निर्भर करती है। यह आयु पर कम ही निर्भर करती है।

डिफ्थीरिया एण्टी-टॉक्सिन सीरम देने से पूर्व—

१. अनूर्जता-निरोधी (Anti-histaminics) जैसे—फेनर्गन, सायनोपेन वेनाड्रिल आदि का उचित मात्रा में प्रयोग उत्तम है।

एड्रीनलीन पिचकारी में तैयार रखना चाहिए। यदि इण्ट्राडर्मल प्रयोग से सीरम की असहनशीलता का ज्ञान हो तो ०·१ मि० ली० सीरम को १० सी. सी. नार्मल सैलाइन में मिलाकर क्रम से बढ़ाते हुए पूर्ण मात्रा मांसपेशीगत दें।

२. यदि सीरम की अधिक मात्रा देना आवश्यक हो तो—१५-२० हजार यूनिट I/M तथा शेष मात्रा २०० मि० ली० डेक्स्टोज नार्मल सैलाइन में मिलाकर ड्रिप रूप में I/V दें।

डिफ्थीरिया एण्टी-टॉक्सिन सीरम (D A S) की सहयोगी चिकित्सा—

D A S के प्रयोग से जीवाणु-वृद्धि तथा उनका विनाश शीघ्रता से नहीं होता है। अतः सहायक औषधि के रूप में निम्न चिकित्सा भी आवश्यक होती है—

℞ आइलोटाइसिन (Ilotycin) या इरीथ्रोमाइसिन (Erythromycin)

मात्रा—२ गोली (२०० मिग्रा०) प्रारम्भिक मात्रा। तत्पश्चात् प्रति ४ घण्टे पर १-१ गोली ३ दिन तक, तदुपरान्त १-१ गोली ६-६ घण्टे पर ३ दिन तक। कुल ३२ गोली।

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—इरीथ्रोमाइसिन ५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर दो मात्राओं में विभाजित कर प्रातः-सायं मांसपेशीगत ५ दिनों तक।

अथवा—पेनिसिलीन (क्रिस्टोपन-Crystapen) (ग्लैक्सो)

मात्रा—दिन में २ बार ७ दिनों तक मांसपेशीगत।

नोट—कुछ लोगों के मतानुसार प्रारम्भ में ही 'आइलोटाइसिन' अथवा 'इरीथ्रोमाइसिन' का प्रयोग करने से रोग निर्मूल हो जाता है और सीरम की आवश्यकता नहीं पड़ती। पर दोनों का संयुक्त प्रयोग करना चाहिए।

○ संयुक्त प्रयोग से द्वितीयक उपसर्गों तथा ब्रॉन्को-न्यूमोनिया की सम्भावना नहीं रहती है।

○ साथ ही—विटामिन 'सी' (Sukcee) ५०० मि० ग्रा० दिन में १ बार दें। इसके अतिरिक्त रोग में विद्यमान उपद्रवों (Complication) की चिकित्सा करें। लैरिञ्जियल डिफ्थीरिया की विशेष चिकित्सा करें। लैरिंग्स तथा ट्रेकिया से सक्सन पम्प के द्वारा म्यूकस तथा पूय (Pus) एवं झिल्ली का एस्पिरेशन करें।

○ कुछ केसिस में इण्ट्यूबेशन (Intubation) तथा ट्रेकियोस्टॉमी (Tracheostomy) की आवश्यकता पड़ती है।

डिसेन्सीटाइज रोगी (Disensitise patient) यदि सीरम के प्रति सेन्सिटिव हो तो—

℞ इञ्जे० क्रिस्टेलाइन पेनिसिलीन (Inj. Crystalline penicilline)

मात्रा—१० लाख यूनिट मांसपेशीगत प्रति ६ घण्टे पर २ दिन तक।

तत्पश्चात्—

इञ्जे० प्रोकेन पेनिसिलीन (Inj. Procain penicilline)

मात्रा—४ लाख यूनिट मांसपेशीगत नित्य ६ दिन तक।

यदि रोगी पेनिसिलीन के प्रति सेन्सिटिव हो तो—

℞ टेबलेट इरीथ्रोसिन (Tab. Erythrocin) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली दिन में ४ बार ७ दिन तक।

नोट—'इरीथ्रोमाइसिन' एक उत्तम औषधि है, क्योंकि इसके सेवन करने से पेनिसिलीन की तरह एनाफाइलेक्टिक शॉक का भय नहीं रहता।

○ इसके लिए 'इरीथ्रोमाइसिन एथिल सक्सीनेट' सेवन कराते हैं।

⊙ उपरोक्त चिकित्सा-क्रम के साथ ही रोगी को आधा गिलास गुनगुने पानी में २ गोली 'एस्प्रिन' का घोल बनाकर गरारे कराना चाहिए। इससे गले की पीड़ा कम होती है।

अथवा—'हाइड्रोजन-पर-ऑक्साइड' या 'पोटाश परमैंगेनेट' से कुल्ला कराना चाहिए। 'लिस्टरीन' अथवा सेवेलोन (Savelon) का प्रयोग किया जा सकता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ झिल्ली अथवा दूषित स्थानों पर रूई को सीरम में भिगोकर झिल्ली तथा दूषित स्थान में लगाना चाहिए। अथवा 'कोलार्गल' (Collargal) का पेण्ट करें।

द्वितीयक उपसंग (Secondary infection) की स्थिति में—'पेनिसिलीन' या 'आइलोटाइसिन' का प्रयोग सम्भव न होने पर 'सल्फा ड्रग्स' का प्रयोग करें। अथवा इस कार्य के लिए निम्न योग का सेवन कराया जा सकता है—

सल्फाडायज़ीन	१ गोली
सल्फामेराजीन	१ गोली
इल्कोसिन	१ गोली
विटामिन-सी १०० मि० ग्रा०	१ गोली
सोडा बाइकार्ब.	६०० मिग्रा०
ग्लूकोज	६०० मिग्रा०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ४ बार ५० ग्राम गुनगुने पानी में घोल कर दें।

○ यह १० वर्ष के बच्चे की मात्रा है। इसके २ घण्टे बाद—

कोरामीन लिक्विड	५ बूँद
पोटास साइट्रास	३६० मिग्रा०
टिं० नक्स	१ बूँद
टिं० कॉर्डे	१० बूंद
स्प्रिट क्लोरोफार्म	५ बूंद
सीरप ऑरेन्शाई	१ ड्राम
जल	२ ड्राम
मात्रा—२-२ चम्मच दिन में ३-४ बार।	१ मात्रा

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—इस रोग में निम्न लाक्षणिक चिकित्सा विशेष महत्त्व रखती है—

(१) बेचैनी तथा नींद न आना (Restlessness and insomnia)—

℞ ट्राइक्लोफोस (Triclofos)

व्या० नाम—ट्राइक्लोरिल सीरप

मात्रा—१-२ चम्मच आवश्यकतानुसार।

(२) तीव्र खांसी—टिं० बेन्जोइन का गर्म पानी में डाल कर वाष्प सूघें।

साथ ही—

केम्फोरेटिड टिं० ऑफ ओपियम	१ मिली०
सीरप ट्राइक्लोरिल	५ मिली०
क्लोरोफार्म वाटर	३० मिली०
	१ मात्रा

मात्रा—१ चम्मच (५ मिली०) प्रति ६ घण्टे पर।

CC-0. Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा–इफेड्रीन १० मिग्रा० + एविल ½ गोली + सीरप वसाका ३० मिली०।

मात्रा—१ चम्मच दिन में ३ बार।

अथवा—कोरेक्स कफ सीरप या फेन्सेड्रिल कफ एक्सपेक्टोरेण्ट।

मात्रा—½–१ चम्मच दिन में ४-५ बार।

उपद्रवों की चिकित्सा (Treatment of complications)—

(१) **सरक्यूलेटरी फेल्योर**—५०–१०० मि० ली० डेक्स्ट्रोज नार्मल सैलाइन I/V धीरे-धीरे दें।

अथवा—१२०–२५० मि० ली० ५% ग्लूकोज सैलाइन सोलूशन गुदामार्ग से (By rectal drip)।

मेफेण्टीन सल्फेट ५ मि० ग्रा० मांसपेशीगत प्रति ८ घण्टे पर।

एट्रोपीन सल्फेट ०.२ मि० ग्रा० + स्ट्रिकनीन हाइड्रोक्लोराइड S/C दें।

○ गम्भीर स्वरूप के फेल्योर की अवस्था में—

नॉर-एड्रीनलीन तथा हाइड्रोकार्टीसोन सोडियम सक्सीनेट दें।

(२) **कञ्जेस्टिव फेल्योर की स्थिति में**—पूर्ण विश्राम दें। क्लोरल हाइड्रेट मुख द्वारा अथवा पैराल्डिहाइड गुदा मार्ग से। ब्राण्डी ४ मि० ली० १ औंस जल में मिला कर दें। वमन होने पर ५% ड्रेक्स्ट्रोज नार्मल सैलाइन I/V दें।

(३) **हृत्शोथ** (Carditis) **तथा हृदयदौर्बल्य** (Cardiac weakness)—डिफ्थीरिया की विशिष्ट चिकित्सा के साथ-साथ जैसा कि पूर्व में बताया गया इसकी भी चिकित्सा आवश्यक है। इसके लिए—

'कार्डियाजोल', 'बेरिटाल' आदि का प्रयोग किया जा सकता हैं। निम्न योग भी इस कार्य के लिए लाभकारी है—

कोरामीन लिक्विड	३० बूँद
स्प्रिट क्लोरोफार्म	१५ बूँद
टिं० कॉर्डे	२० बूँद
सीरप ग्लूकोज	८ मिली०
एक्वा	३० मिली०

मात्रा—२ चम्मच प्रति ३ घण्टे पर। १ मात्रा

(४) **श्वासावरोध**—१. टिं० बेञ्जोइन इन्हेलेशन प्रारम्भ से ही।

२. श्वासावरोध की अधिकता में ऑक्सीजन सुँघायें।

३. गम्भीर श्यावता की स्थिति में गले से स्वरयंत्र के नीचे तक रबर की नली (Intubation) डालना।

○ उपरोक्त चिकित्सा के साथ-साथ लोवेलिन; एट्रोपीन, पिटयूट्रीन आदि इञ्जेक्शन का प्रयोग करना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(५) **अंगघात**—स्ट्रिक्नीन का प्रयोग। विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स, बी$_{१२}$ तथा बी$_{१}$ का प्रयोग। रोग-मुक्ति के पश्चात् ईस्टर्न सीरप का उपयोग कुछ दिनों तक।

(६) **वातनाड़ी शोथ**—स्ट्रिक्नीन का प्रयोग। विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स तथा बी$_{१२}$ का सेवन।

(७) **गम्भीर स्वरूप के स्थानीय शोथ, फॉसियल डिफ्थीरिया, बुल नेक, मायोकार्डाइटिस, मस्तिष्कशोथ, पेरीफेरल सरक्यूलेटरी फेल्योर**—

स्टेराइड्स (Steroids) २ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर २४ घण्टे में १ बार १-३ सप्ताह तक।

(८) **सेरिब्रल तथा पल्मोनरी ईडिमा में**—डायोरेटिक जैसे—फ्रूसेमाइड (लासिक्स) १ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर प्रतिदिन। साथ ही पोटाशियम क्लोराइड अथवा साइट्रेट ½–१ ग्राम नित्य दें।

कण्ठ-रोहिणी
(Laryngeal Diphtheria)

परिचय—यदि किसी बच्चे को लगातार सूखी खाँसी हो, गले में गरगराहट का शब्द हो, रोगी नथुने और छाती को फुलाकर खींच-खींच कर श्वास ले रहा हो तो बच्चे को कंठ-रोहिणी से प्रभावित समझना चाहिए।

○ इसमें झिल्ली बन कर वायुमार्ग में अवरोध उत्पन्न कर देती है। ऐसे रोगी को—डिफ्थीरिया एण्टी-टॉक्सिन सीरम (DAS) १०,००० यूनिट का मांसपेशीगत इञ्जे० दें। साथ ही क्रिस्टेलाइन पेनिसिलीन १० लाख यूनिट I/M देकर तत्काल अस्पताल भिजवा दें।

अस्पताल में—रोगी बालक को ऑक्सीजन दी जाती है। फेफड़ों में वायु के आने-जाने का मार्ग बनाना पड़ सकता है।

बचाव (Prevention)—इसके लिए D. P. T. वैक्सीन का प्रयोग होता है। इसकी मात्रा ०·५ मि० ली० है।

(i) पहली मात्रा—२ माह की आयु में।

(ii) दूसरी मात्रा—६ सप्ताह या ३½ माह की आयु में।

(iii) तीसरी मात्रा—इसके ६ सप्ताह बाद अर्थात् ५वें महीने में।

नोट— ○ D. P. T. (ट्रिपल एण्टीजन) ५ वर्ष से अधिक आयु के बच्चे को नहीं देना चाहिए।

○ डिफ्थीरिया टॉक्साइड ½-१ मि० ली०—इस क्रम से ३ मात्राएँ १ सप्ताह के अन्तर पर S/C दी जाती हैं। D. P. T. उपलब्ध होने से अब इनका चलन कम हो गया है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग-मुक्ति के पश्चात् की चिकित्सा—

○ रोगमुक्ति के पश्चात् कम से कम ६ सप्ताह तक रोगी को पूर्ण विश्राम देना चाहिए।

○ आयरन, प्रोटीनेक्स, विटामिन्स तथा टॉनिक्स पर्याप्त मात्रा में दें। बच्चों के लिए फेरीलेक्स, एन्डेक ड्राप, कैसिनान तथा माइनोलाड आदि उत्तम योग हैं।

शल्य-चिकित्सा (Surgical treatment)—इस चिकित्सा के अन्तर्गत माउथ गैग लगाकर कण्ठरोहिणी के कीटाणुओं द्वारा निर्मित झूठे पर्दे को कैंची से गोलाई में चारों ओर से काटकर एक अठन्नी परिमाण में पृथक् कर दिया जाता है। इसके पश्चात् रॉशिलिन (Roscillin–रैनबैक्सी) आवश्यकतानुसार २५०-५०० मि० ग्रा० का मांसपेशीगत इञ्जेक्शन प्रति १२ से २४ घण्टे बाद लगाते रहते हैं। □

संक्रामक रोग 7/17

सुजाक
(Gonorrhoea)

पर्याय—सुजाक, उष्णवात, पूयमेह, भूशोष्णवात।

परिचय—This is an infection of the mucous membrane of genito-urinary tract characterized by frequency of micturition with pain and burning sensation and serious or purulent discharges.

○ यह एक तीव्र स्वरूप का औपसर्गिक (Infectious) रोग है, जो रुग्ण स्त्री या पुरुष के आपसी समागम के फलस्वरूप हो जाता है। इस रोग में मूत्र-मार्ग में शोथ होकर उससे पूय आने लगती है। मूत्र-मार्ग के छिद्र के अन्दर खरास, जलन तथा दर्द होता है। साथ ही उससे हरे रंग का पूय आने लगता है।

कारण—यह रोग 'नाइसीरिया गोनोरी' नामक जीवाणु द्वारा फैलता है। यह जीवाणु स्त्री और पुरुष के मूत्रमार्ग को संक्रमित करता है। इस रोग से ग्रस्त स्त्री के साथ सम्भोग करने पर ये जीवाणु शिश्न के माध्यम से मूत्रमार्ग में प्रवेश कर जाते हैं। यह संख्या वृद्धि कर मूत्रनलिका को खाने लगते हैं, जिससे पीब बनने लगती है। रुग्ण व्यक्ति के साथ समागम करने के २ से ७ दिनों के अन्दर ही इस रोग के लक्षण दिखलाई देने लगते हैं।

लक्षण—पुरुषों में (In males)—१. पुरुषों में सबसे पहले संक्रमण मूत्र-मार्ग के अगले भाग में होता है, जहाँ से यह प्रोस्टेट ग्रन्थि, मूत्राशय और इपीडिडिमिस (Epididymis) में फैल जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. संसर्ग के २-४ दिन बाद मूत्र-मार्ग में जलन तथा पीड़ा होती है और कुछ ही घण्टों में पूय आना प्रारम्भ हो जाता है। इस समय शिश्नमुण्ड की सिरा रक्तमय तथा शोथ युक्त होती है।

३. पुरुष-जननांगों में विकृति होने के कारण रोगी को पेशाब करते समय जलन होती है। मूत्रपथ (Urethra) से सफेद या पीले रंग का स्राव निकलना प्रारम्भ हो जाता है।

४. रोगी को बार-बार मूत्र-त्याग की प्रवृत्ति होती है और मूत्रकृच्छ्र (Dysuria) के लक्षण मिलते हैं।

५. चिरकाल तक उपरोक्त लक्षण चलते रहते हैं। इसके साथ ही कटि और श्रोणि-प्रदेश में पीड़ा होती है।

६. तीव्र अवस्था में रोगी को ज्वर भी हो जाता है।

७. मूत्रमार्ग की श्लैष्मिककला काफी सूज जाती है और वहाँ पर व्रण बन जाते हैं। यहीं से रक्त और पूय आते हैं।

८. शोथ के कारण मूत्रमार्ग बन्द हो जाता है जिससे मूत्रावरोध हो जाता है।

९. धीरे-धीरे स्राव की मात्रा कम होती जाती है और कुछ समय बाद प्रातःकाल सोकर उठने पर दिखलाई देता है। इस समय के इस स्राव को 'ग्लीट' कहते हैं।

१०. कुछ समय बाद मूत्रमार्ग में निकुंचन (Stricture) की अवस्था उत्पन्न हो जाती है।

११. जब संक्रमण वृषणों में पहुँच जाता है, तब रोगी के वृषणों में तीव्र पीड़ा अनुभव होने लगती है। जिसके परिणामस्वरूप बन्ध्यत्व (Sterility) उत्पन्न हो जाता है।

विशिष्ट लक्षण—इसके कुछ महत्त्वपूर्ण लक्षण निम्न प्रकार हैं—

१. इस रोग में पेशाब साफ नहीं आती और बूंद-बूंद कर होती है।

२. हलकी हरारत, जाड़ा अथवा कँपकँपी तथा शिरःशूल की उपस्थिति।

३. रात में लिंग में अधिक कड़ापन होने के कारण रोगी को नींद नहीं आती।

४. रोग पुराना होने पर जलन और पीड़ा कम होती है, किन्तु पूय का स्राव जारी रहता है।

५. दीर्घकालिक रोग में पूय गोंद की तरह सफेद और लसीला होता है।

६. कुछ केसिस में कुछ काल बाद पूय का आना बन्द हो जाता है अथवा कम हो जाता है। कुछ समय तक बन्द रह कर पुनः आने लगता है। यह क्रम कुछ महीनों अथवा वर्षों तक चलता रहता है। इस प्रकार से पूय के बन्द होने को रोग-मुक्ति नहीं समझनी चाहिए। हो सकता है कि कुछ मास अथवा कुछ वर्षों बाद पुनः पूय आने लगे।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

७. रोग १५ दिन में मूत्रमार्ग के पूर्व भाग से पश्च भाग में फैल जाता है। यहाँ से यह पौरुष-ग्रन्थि, शुक्राशय एवं शुक्रग्रन्थियों में पहुँच कर शोथ पैदा करता है, जिससे बेहद दुखदायी लक्षण पैदा हो जाते हैं।

८. पौरुष-ग्रन्थि में शोथ उत्पन्न हो जाने पर इसका शान्त होना असम्भव हो जाता है। ऐसी अवस्था में पूय पुनः पतला निकलने लगता है जो बिना किसी पीड़ा और जलन के आता रहता है। कभी-कभी यह इतना कम हो जाता है कि केवल शिश्न के निचोड़ने से ही प्रतीत होता है। यह अवस्था कई वर्षों तक रहती है।

विभिन्न अंगों में संक्रमण के अनुसार संक्षिप्त लक्षण—

१. यूरेथ्रा में संक्रमण पहुँचने पर—जलन, पेशाब करते समय पीड़ा, बार-बार मूत्र का आना, कष्ट के साथ मूत्र की प्रवृत्ति, सफेद या हरा-पीला (Grenish yellow) स्राव।

२. प्रोस्टेट ग्रन्थि में संक्रमण—पेशाब का बन्द हो जाना (Retention of urine)।

३. सेमिनल वेसिकल में संक्रमण—पीड़ा और स्थानीय कड़ापन, शीत युक्त बुखार।

४. ब्लैडर में संक्रमण—पेशाब बार-बार आता है। साथ ही बिन्दु मूत्र-कृच्छ्र (Strangury) की उपस्थिति।

५. इपीडिडिमिस में—गम्भीर स्वरूप की पीड़ा (Severe pain), शोथ तथा कड़ापन।

६. टेस्टीकिल में संक्रमण—पीड़ा।

परीक्षा में (On examination)—१. स्थानीय लिम्फ नोड्स का बढ़ा हुआ मिलना। यह मुलायम होती है।

२. यूरेथ्रा का अग्र भाग लाल तथा शोथयुक्त (Oedematous) होता है।

३. Hazy urine की उपस्थिति। दो ग्लास टेस्ट में (In two glass test) द्वितीय सेम्पुल प्रथम की अपेक्षाकृत साफ होता है।

४. विष शोषण के कारण रोगी में टेम्परेचर तथा शिरःशूल आदि मिलते हैं।

स्त्रियों में (In females)—स्त्रियों में इसका संक्रमण मूत्रमार्ग, योनि, गर्भाशयग्रीवा (Cervix), डिम्बवाहिनियों (Fallopian tubes) और बर्थोलिन ग्रन्थियों तक ही सीमित होता है।

१. प्रारम्भ में महिला को मूत्रत्याग में कष्ट होता है।

२. बार-बार मूत्र त्यागने की प्रवृत्ति होती है।

३. योनिमार्ग से पूययुक्त मूत्र का आना।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डिम्बवाहिनियों में संक्रमण पहुँचने पर—

१. निम्न उदर के दोनों ओर पीड़ा होती है

२. बुखार (Fever)।

३. श्रोणि-परीक्षा करने पर दोनों पार्श्वों में दाब-वेदना युक्त पिण्ड (Mass) की उपस्थिति।

बालकों में—जिन स्त्रियों को सुजाक होता है, उनसे उत्पन्न नवजात शिशुओं में नेत्राभिष्यन्द (Opthalmic neonatorum) अधिकांशतः देखने को मिलता है।

निदान (Diagnosis)—१. मूत्रमार्ग से निकलने वाले स्राव की माइक्रोस्कोपिक परीक्षा करने पर गोनोकोकाई की उपस्थिति होने पर रोग का निश्चयात्मक निदान हो जाता है।

२. जीवाणु वृक्क की आकृति के तथा दो जीवाणु आमने-सामने एक कोषा के भीतर मिलते हैं। यह ग्राम निगेटिव होते हैं।

३. स्राव में बहुकेन्द्रिक श्वेतकयाणु बहुत अधिक संख्या में तथा उससिप्रिय अल्प संख्या में मिलते हैं।

४. कॉम्प्लीमेण्ट फिक्सेसन टेस्ट पोजीटिव (+) होता है।

रोग-विनिश्चय—रोग-निदान में निम्न लक्षण तथा चिह्न सहायक होते हैं—

१. अवैध मैथुन का इतिहास।

२. उपसर्ग के ३-७ दिन के अन्दर मूत्रत्याग में जलन तथा पीड़ा।

३. मूत्रमार्ग से विशेष प्रकार के पूय का स्राव।

४. पूय परीक्षा में जीवाणु-विशेष की उपस्थिति (अन्तःकोषीय युग्म रूप में)।

५. दिन के समय रोग की वृद्धि।

उपद्रव (Complications)—(१) **पुरुषों में**—१. यूरेथ्रल ग्लैण्ड्स शोथ, २. गोनोकोकल प्रोस्टेटाइटिस, ३. गनोरियल इपीडिडिमाइटिस एवं स्टेरिलिटी, ४. गनोरियल वेसीक्युलाइटिस, ५. गनोरियल पैरायूरेथ्राइटिस, ६. यूरेथ्रा का संकोच (Stricture of urethra), ७. गनोरियल सिस्टाइटिस।

(२) **स्त्रियों में** (In females)—१. स्केनाइटिस, २. बर्थोलिनाइटिस, ३. सालपिञ्जाइटिस, ४. गनोरियल वल्वो-वेजिनाइटिस, ५. गनोरियल इण्डोमिट्राइटिस, ६. गनोरियल पेरीटोनाइटिस।

मिले-जुले उपद्रव (Miscellaneous complication)—

(i) सेप्टीसीमिया (Septicaemia)।

(ii) आर्थ्राइटिस (Arthritis)।

(iii) नेत्राभिष्यन्द (Conjunctivitis)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(iv) स्पर-फॉर्मेशन (Sper-formation) ।

(v) टीनो-साइनोवाइटिस (Tenosynovitis) ।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. मूत्र-द्वार को गुनगुने नमक के पानी से साफ करें। स्त्रियों में इस गर्म पानी में रूई भिगो कर सेंक अथवा प्रक्षालन करें।

२. मलावरोध को दूर करें (मृदु विरेचन द्वारा)।

३. मूत्र को क्षारीय बनाये रखें ताकि मूत्र में जलन न हो।

४. रोगी को सलाह देनी चाहिए कि वह कम से कम १५ दिनों तक मदिरा का सेवन न करे। जब तक रोगी को स्वस्थ घोषित न कर दिया जाय तब तक स्त्री-समागम न करे।

५. रोगी को प्रतिदिन स्नान कराना आवश्यक है।

६. सुजाक का रोगी जब चिकित्सा कराने आये तो उसके मूत्रमार्ग से निकलने वाले पूय को तुरन्त लेबोरेटरी भेज कर यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि उसे इस रोग के साथ सिफिलिस का प्रभाव तो नहीं हो गया है।

७. यदि रोगी के कथन से यह पता लगे कि उसने रोगग्रस्त वेश्या से सम्भोग करने के बाद अपनी पत्नी से भी सम्भोग किया है तो उस परिस्थिति में पति और पत्नी दोनों की चिकित्सा करना आवश्यक है, जिससे कि भविष्य में एक-दूसरे को रोग न लगता रहे।

८. रोगी को दिन में कई बार ४ किलो दूध में १ किलो जल मिलाकर कच्चा दूध पिलायें।

नोट—वेश्यावृत्ति में सरकार का अंकुश लगने के कारण अब सुजाक के रोगी कम ही अथवा नहीं के बराबर देखने को मिलते हैं।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ इञ्जे० प्रोकेन पेनिसिलीन (Inj. Procain penicillin)

मात्रा—२-४ मेगा यूनिट मांसपेशीगत केवल १ इञ्जे०।

नोट—९०% केसिस में सफलता मिल जाती है।

यदि रोगी 'पेनिसिलीन' के प्रति सेन्सिटिव हो तो—

मात्रा—℞ केनामाईसिन (Kanamycin) अथवा को-ट्रीमोक्साजोल (Co-trimoxazole) का प्रयोग करें।

○ सन्तोषजनक लाभ के लिए अन्य एण्टीबायोटिक का प्रयोग अपेक्षित है।

शल्य-चिकित्सा—संकोचन (Stricture) तथा विद्रधि (Abscess) की उपस्थिति में।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुजाक चिकित्सा की एक अन्य विधि—

○ नये रोग में—प्रोकेन पेनिसिलीन २४ लाख यूनिट I/M दिन में १ बार २ दिन तक।

नोट—चूँकि मात्रा अधिक होती है। अतः आधी-आधी दोनों नितम्बों में लगायें।

निर्देश—यदि रोगी को साथ में सिफिलिस भी हो तो पेनिसिलीन के यह दोनों इञ्जे० ही पर्याप्त होते हैं। लगभग ४८ घण्टे में मूत्र से पूय आना बन्द हो जाता है। अन्य औषधि देने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

अन्य औषधियों का प्रयोग कब करें—

○ यदि २४ घण्टे में मूत्रमार्ग से आने वाले मवाद में सुजाक के जीवाणु पाये जायें।

○ बैक्टीरियोलाजिस्ट द्वारा यह रिपोर्ट मिलने पर कि जीवाणुओं पर पेनिसिलीन का प्रभाव दिखायी नहीं दे रहा है। अथवा—

○ रोगी पेनिसिलीन के प्रति सेन्सिटिव हो।

उपरोक्त अवस्थाओं में रोगी को पेनिसिलीन के स्थान पर 'टेट्रासाइक्लीन' अथवा 'एम्पीसिलीन'—५०० मि० ग्रा० का १-१ कैपसूल दिन में ४ बार ७ दिनों तक दें। अथवा—

℞ रिफाम्पीसिन (व्या० नाम—Riffocillin)

मात्रा—१५० मि० ग्रा० के ३ कैपसूल प्रातः नाश्ते के साथ।

तत्पश्चात्—३ कैपसूल शाम को ३ दिन तक लगातार।

कुछ नवीनतम औषधियाँ—

℞ को-ट्राईमोथोक्साजोल (Co-trimothoxazole)

व्या० नाम—सेप्ट्रान (Septran) या बैक्ट्रिम (Bactrim)

मात्रा—पहले दिन—३-३ गोली सुबह-शाम १२ घण्टे के अन्तर पर।

अगले दिन—२ गोली प्रातः और २ गोली सायं १ सप्ताह तक।

नोट—इस औषधि के सेवन काल में दिन में कई बार रोगी को अधिकाधिक जल पिलायें।

उपरोक्त चिकित्सा के साथ-साथ निम्न चिकित्सा भी करते रहें—

रोगी का पेट साफ होता रहे तथा मूत्र की रचना क्षारीय रहे, जिससे मूत्र त्याग में जलन न हो। इसके लिए निम्न योग दें—

एक्स्ट्रेक्ट कैसकरा लिक्विड	१ मिली०
पोटास साइट्रास	१२०० मिग्रा०
टिं० हायोसायमस	१ मिली०
सादा शर्बत	१ मिली०
जल	१ मिली०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ४ बार ३-४ दिन तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुजाक नाशक विशिष्ट चिकित्सा-क्रम—

(१) उपद्रवहीन सुजाक में (Uncomplicated gonorrhoea)—

पुरुष-स्त्री दोनों में (Both male & female)—

इञ्जे० प्रोकेन पेनिसिलीन-जी (Inj. Procain penicillin-G)

मात्रा—६ लाख यूनिट इण्ट्रामस्कुलर।

अथवा—४-८ लाख यूनिट मांसपेशीगत आधा-आधा दोनों साइड में।

टेबलेट बेनेमिड (Tab. Benemid) (M. S. D.)

मात्रा—०.५ ग्राम की २ गोली मुख से।

○ यदि 'पेनिसिलीन' गनोरिया के केस में रेसिस्टेण्ट हो अथवा—पेनिसिलीन' सेन्सिटिव हो तो—

℞ एम्पीसिलीन (अथवा-एल्बासिलीन) ५०० मि० ग्रा० कैपसूल

मात्रा—६ कैपसूल की १ मात्रा+बेनेमिड २ गोली मुख द्वारा।

अथवा—कैपसूल टेट्रासाइक्लीन २५० मि० ग्रा०

मात्रा—६ कैपसूल तुरन्त एक साथ दें। तत्पश्चात् २ कैपसूल प्रति ४ घण्टे पर ४ दिन तक निरन्तर (कुल ४० कैपसूल)।

अथवा—टेबलेट सेप्ट्रान या बैक्ट्रिम।

मात्रा—४ टेबलेट प्रति १२ घण्टे पर २ दिन तक।

तत्पश्चात्—२ टेबलेट प्रति १२ घण्टे बाद ३ दिन और दें।

(२) उपद्रवयुक्त सुजाक में (Complicated gonococcal infection)—

○ पेरीयूरेथ्रल एब्सिस, प्रोस्टेटाइटिस, इपीडिडिमाइटिस., सर्विसाइटिस तथा सालपिंजाइटिस आदि में—

℞ इञ्जे० प्रोकेन पेनिसिलिन-जी (Inj. Procain penicillin-G)

मात्रा—१०-२० लाख यूनिट प्रतिदिन I/M २ सप्ताह तक।

अथवा—कैपसूल टेट्रासाइक्लीन २५० मि० ग्रा०

मात्रा—२ कैपसूल दिन में ४ बार १० दिन तक।

अथवा—एम्पीसिलीन २ ग्राम साल्ट+बेनेमिड १ ग्राम तत्काल।

○ Any of the above regime is followed by—

एम्पीसिलीन (Ampicillin) ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल प्रति ६ घण्टे पर १० दिन तक।

प्रसृत सुजाक का संक्रमण (Disseminated gonococcal infection)—

एम्पीसिलीन ३·५ ग्राम+बेनेमिड १ ग्राम। इसके बाद—

एम्पीसिलीन ०.५ ग्राम मुख द्वारा दिन में ४ बार ७ दिन तक।

अथवा—टेट्रासाइक्लीन ०.५ ग्राम (५०० मि० ग्रा०) मुख द्वारा दिन में ४ बार ७ दिन

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—गर्भावस्था में इसका प्रयोग न करें।

अथवा—इरीथ्रोसिन (Erythrocin) ५०० मि० ग्रा० मुख द्वारा दिन में ४ बार ७ दिन तक।

अथवा—इन्जे० क्रिस्टेलाइन पेनिसिलीन १० लाख यूनिट प्रतिदिन अस्पताल में एडमिट हुए केसिस में तब तक दें जब तक लाभ न हो जाय।

तत्पश्चात्—'एम्पीसिलीन' ५०० मिग्रा० दिन में ४ बार ७ दिन तक।

नवजात शिशु के नेत्राभिष्यन्द में (Conjunctivitis in the newborn)

१. १०% गर्म नार्मल सैलाइन से आँख धोयें।

२. 'सल्फासिटामाइड सोलूशन' (Albucid, Loeula १०%) की कुछ बूंदें दोनों आँखों में प्रति ४ घण्टे पर डालें।

आर्थ्राइटिस (Arthritis)—

स्ट्रेप्टोमाइसिन १ ग्राम I/M दिन में १ बार ७ दिन तक। साथ ही डायथर्मी शार्ट वेव अथवा इन्फ्रारेड हीट का प्रयोग करें। केवल १ कोर्स।

आइराइटिस (Iritis)—

℞ स्ट्रेप्टोमाइसिन १ ग्राम प्रतिदिन ७ दिन तक।

अथवा—टेट्रासाइक्लीन २५० मि० ग्रा० कैपसूल

मात्रा—१ कै० दिन में ४ बार ७ दिन तक।

गम्भीर अवस्था में—१०% 'हाइड्रोकार्टीसोन सक्सीनेट' आइण्टमेण्ट अथवा ड्राप रूप में।

गनोरिया में प्रयुक्त अन्य औषधियाँ—एमोक्सीवान (Amoxivan) (खण्डेलवाल), एमोक्सीलिन कै० (विडल शायर), बायोसिलिन (Biocilin) (बायोकेम), सीडोमेक्स कै० (Cidomex cap.) (राउसेल), इनसामाइसिन (Ensamycin) (फुलफोर्ड), फ्लेमीपेन (Flamipen) (F.D.C.) लोंगासिलीन फोर्ट (Longacillin fort) (हिन्दुस्तान एण्टीबायो० लेबो०), लेक्सिन (Laxyn) (एंग्लो फ्रेंच कं०), लाइडोक्स कै० (Lydox cap.) (लाइका), मोक्स (Mox) (गूफिक), मोक्सीलियम (Moxilium) (बायोकेम), नोवामोक्स (Novamox) (सिपला), पेल्विन एल० ए० (Pelwin L. A.) (बोकार्ड), पेनीड्यूर ए० बी० वेलामोक्स (Walamox) (वेलेसी), एक्टीप्रिम-डी-एस०, एल्कोप्रिम-एफ, एण्ट्रीमा, कोमसेट टे०, इराडासिल कै०, ओरीप्रिम डी० एस०, स्टेनसोल, ट्राइमोजिन टेबलेट।

नोट—यह सभी नवीनतम औषधियाँ (Recent medicines) हैं। अब इनका ही प्रयोग गोनोरिया में सफलतापूर्वक किया जा रहा है।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गनोरिया की कॉम्बीनेशन थेरापी—

१. ℞ एमोक्सीसिलिन ट्राइहाइड्रेट	२५० मिग्रा०
सेफेलेक्सिन पाउडर	२५० मिग्रा०
सीरप ऑरेन्शाई	१५ मिली०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रति ६ घण्टे पर पूरा लाभ होने तक।

२. ℞ ब्रॉडिसिलीन (अल्केम)	१ कैपसूल
पाइरिडैसिल (एथनॉर)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा जल से २ बार प्रातः-सायं।	१ मात्रा
३. ℞ कैम्पीसिलीन (कैडिला) ५०० मिग्रा०	१ कै०
पाइरीडियम (वार्नर)	१ गोली
ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार जल से	१ मात्रा

संक्रामक रोग 7/18

आतसक
(Syphilis)

पर्याय—उपदंश, आतसक, फिरंग रोग, गरमी की बीमारी।

परिचय—It is an infection caused by treponema pallidum.

यह एक चिरस्थायी सांसर्गिक रोग है, जो एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में प्रायः मैथुन (Sexual intercourse) से ही पहुँचता है। प्रारम्भ में बाह्य जननेन्द्रिय पर व्रण बन जाता है। इसके बाद इसके रोगाणु रक्त में जाकर अनेक प्रकार के लक्षण उत्पन्न करते हैं।

○ यह एक विश्वव्यापी रोग है। इधर कुछ वर्षों से भारत में भी इसकी वृद्धि हुई। वेश्यावृत्ति और आतसक में अत्यन्त घनिष्ट सम्बन्ध है।

○ लोगों के विचार हैं कि यह बीमारी भारतवर्ष में विदेशियों के आने के बाद फैली, इस कारण से ही इसे 'फिरंग रोग' भी कहते हैं। पोर्तुगीज (फिरंगियों) के साथ सहवास करने से भारतवर्ष में इसका प्रसार हुआ।

○ यह अधिकांशतः फिरंगियों को ही होता है, अतः उनके देश के नाम पर इसे फिरंग रोग कहा जाता है। यह स्वोपार्जित (Self acquired) और माता के द्वारा होने से इसकी जन्मजात (Congenital) प्रवृत्ति भी होती है।

कारण—इस रोग का कारण एक जीवाणु (स्पैरोकीटा पालिडा या ट्रेपोनीमा पैलिडम) है। मैथुन से इनका प्रसार शरीर ऊपर की ओर होता है। इसका ९५% तक संक्रमण स्त्री-पुरुष के समागम से होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संक्रमण के अन्य माध्यम—

१. सीधा (Direct)—चुम्बन (Kissing) तथा दाँतों से काटना।

२. अप्रत्यक्ष रूप में—तौलिया तथा कपड़ों से; बर्तन द्वारा, जूठे कप आदि से दूध का पीना, जूठी सिगरेट पीना; पेन और पेन्सिल के चाटने से।

३. व्यापारिक कारण—जूते बनाने वाले एवं बढ़ई, चिकित्सक के इन्स्ट्रूमेण्टस से तथा ब्लड-ट्रान्स्फ्यूजन द्वारा।

४. जन्मजात (Congenital)।

यह संक्रामक रोग प्रायः वेश्यागामी तथा दुराचारी पुरुषों में ही होता है। दूषित तौलिया तथा वस्त्रों के उपयोग से जननेन्द्रिय के अतिरिक्त अन्य स्थानों पर संक्रमण होता है। प्रायः नर्सों तथा डाक्टरों के हाथों की अँगुलियों पर इस रोग के संक्रमण की उपस्थिति इसी माध्यम से मिलती है।

संचय काल—१०-९० दिन। औसतन २१ दिन।

रोग के प्रकार—सिफिलिस मुख्य रूप से ३ प्रकार का होता है—

- उपार्जिति सिफिलिस (Acquired syphilis)।
- जन्मजात सिफिलिस (Congenital syphilis)।

उपार्जित सिफिलिस
(Acquired Syphilis)

इस प्रकार का सिफ़िलिस स्वस्थ स्त्री तथा पुरुषों में होता है। इसकी निम्न ४ अवस्थाएँ मिलती हैं; यही इस रोग के लक्षण हैं—

(१) **प्रथमावस्था** (First stage)—सम्भोग के दूसरे या तीसरे सप्ताह में केवल शिश्न (Penis) पर या शिश्न के अग्रचर्म के भीतर की ओर पीछे जोड़ के पास अथवा नीचे की ओर सीवन पर तथा यूरेथ्रा में छिद्र के ओष्ठों के भीतर तथा स्त्रियों में बृहद् भगोष्ठ के भीतरी अंग पर एक छोटा-सा दाना बन जाता है, जो धीरे-धीरे बढ़कर फूट जाता है और वहाँ पर एक व्रण बन जाता है। यह व्रण छूने में कठोर होता है और इससे केवल लसीका का स्राव होता है। जिसमें रोग के जीवाणु उपस्थित रहते हैं।

नोट—छोटा-सा दाना जो अत्यन्त कठोर होता है, उसे कठोर शैंकर (Hard chancre) कहते हैं। स्त्रियों में इस शैंकर की उत्पत्ति बृहद् भगोष्ठ तथा लघु भगोष्ठ पर होती है। गर्भाशयग्रीवा पर भी यह मिलते देखा गया है।

कठोर शैंकर संख्या में केवल एक ही होता है। कभी-कभी एक से अधिक भी मिल सकते हैं। जननेन्द्रियों के अतिरिक्त स्थानों पर भी इनकी उपस्थिति मिल सकती है। विशेषकर गुद-द्वार के पास, उदर के निचले भाग में, मुख के ओष्ठ पर तथा स्तन पर भी ये उत्पन्न हो सकते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शैंकर की विशेषताएँ—१. यह पीड़ारहित होता है। २. मैथुन-कर्म के १ माह बाद निकलता है, जिससे रोगी को यह ध्यान ही नहीं होता है कि इसकी उत्पत्ति मैथुन से हुई है अथवा नहीं। ३. कभी-कभी कुछ समय बाद यह शैंकर अपने आप लुप्त हो जाता है। ऐसी स्थिति में रोगी को इसके प्रति कोई चिन्ता नहीं होती है कि भविष्य में यह कौन-सा उपद्रव पैदा कर सकता है, जबकि यह बहुत ही गम्भीर स्थिति होती है।

अन्य लक्षण—इस अवस्था में कभी-कभी स्थानीय लसीका ग्रन्थियाँ बढ़ी हुई मिलती हैं, जो कठोर होते हुए भी पीड़ा रहित होती हैं।

शैंकर प्रायः बिना किसी चिकित्सा के ४-६ सप्ताह में ठीक हो जाता है। कभी-कभी प्रारम्भिक व्रण से द्वितीयक उपसर्गों का प्रसार लसग्रन्थियों में हो जाने के कारण उनका स्वरूप 'बद' (Bubo) की भाँति पूययुक्त-सा हो जाता है।

नोट—प्रारम्भिक व्रण के स्राव की सूक्ष्मदर्शक यन्त्र से परीक्षा करने पर 'उदीप्त क्षेत्र प्रकाशन' (Dark field illumination) की उपलब्धि हो सकती है।

(२) **द्वितीयावस्था** (Second stage)—यह अवस्था संक्रमण के ३ माह बाद प्रारम्भ होती है। इसमें प्रधान रूप से निम्न लक्षण मिलते हैं—

(i) **रक्ताल्पता**—द्वितीय अवस्था का यह एक प्रमुख लक्षण है, जिसके कारण शरीर-दौर्बल्य, सिरदर्द तथा पाण्डुता आदि देखते को मिलते हैं। इस लक्षण की उत्पत्ति आमाशय तथा यकृत् में विकृत उत्पन्न होने से होती है।

(ii) **विस्फोट** (Rash)—प्रारम्भ में त्वचा पर विभिन्न प्रकार के विस्फोट निकलना प्रारम्भ होते हैं। यह विस्फोट शरीर के दोनों पार्श्वों में विभिन्न स्थानों पर निकलते हैं। सबसे पहले यह शरीर के मध्य भाग में निकलते हैं, तत्पश्चात् शाखाओं, पृष्ठ, नितम्ब, वक्ष, उदर आदि अंगों पर निकलते हैं। इनका रंग ताँबे की भाँति होता है। इनमें खुजली तनिक भी नहीं होती है।

(iii) **श्लेष्मल धब्बा** (Mucous patch)—मुख की श्लेष्मकला में पीड़ा रहित चिकने एवं भूरे रंग के धब्बे दिखलाई पड़ते हैं। इन धब्बों के ऊपर कला (Membrane) का आवरण रहता है। यह धब्बे बहुत ही संक्रमी (Infective) होते हैं।

(iv) विस्फोटों की उत्पत्ति के साथ-साथ मध्यम स्वरूप का ज्वर, सम्पूर्ण शरीर में पीड़ा, बेचैनी, कमजोरी तथा शिरःशूल (सायंकाल अधिक बढ़ने वाला) एवं गलशोथ (Sore throat) आदि लक्षण भी मिलते हैं।

(v) रोगी अत्यधिक बेचैन रहता है।

(vi) मुख तथा अन्य स्थानों की श्लेष्मकला पर श्लैष्मिक धब्बे निकल आते हैं। जिन्हें श्लेष्मल धब्बा (Mucous patches) कहते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(viii) यकृत् तथा प्लीहा-वृद्धि के लक्षण मिलते हैं। अस्थियों में विशेष कर शाखाओं (Limbs) में रात के समय अत्यधिक पीड़ा होती है।

(viii) बढ़ी हुई लस-ग्रन्थियाँ कठोर तथा वेदना रहित होती हैं। ये अलग-अलग और पास के अवयवों से जुड़ी होती हैं।

(ix) सिर एवं दूसरे अवयवों के बाल गिर जाते हैं। भौहों के बाहरी एक-तिहाई भाग के बाल झड़ जाते हैं।

(x) ३०% रोगियों में सेरिब्रल स्पाइनल फ्लूइड (C. S. F) में परिवर्तन मिलते हैं और मस्तिष्कावरणशोथ (Meningitis) के लक्षण भी उत्पन्न हो सकते हैं।

विशेष आकृति—विस्फोट, लस-ग्रन्थियों की वृद्धि, बालों के गिर जाने एवं रक्ताल्पता आदि के कारण रोगी की आकृति बिलकुल बदल जाती है।

नोट—उपरोक्त लक्षणों में से सभी लक्षण एक साथ प्रत्येक रोगी में नहीं भी मिल सकते।

तृतीयावस्था का प्रारम्भ—उपरोक्त लक्षण कई महीनों तक रहते हैं। इसके बाद द्वितीयक लक्षण अदृश्य हो जाते हैं। पुनः २-३ वर्ष के अव्यक्त काल (Latent period) के बाद रोगी की आगामी तृतीयक अवस्था (Third stage) प्रारम्भ होती है।

(३) **तृतीयावस्था** (Third stage)—इसे 'Tertiary stage' भी कहते हैं। इस अवस्था की मुख्य विकृति गोंदार्बुद (Gumma) होती है। यह मटर की आकृति की वेदना रहित संरचना होती है। यह शरीर के किसी भी अंग में बन सकती है। इनमें अन्दर गोंद के समान गाढ़ा निर्यास-सा एकत्रित रहता है। धीरे-धीरे इसमें सड़न पैदा होती है फिर फूट कर इसमें से धूसर वर्ण का पूय बहता है। यदि नासिका में इस गम्मा की उत्पत्ति होती है तो नाक बैठ जाती है। तालु में होने से वहाँ छिद्र बन जाता है। मस्तिष्क तथा सुषुम्ना में होने पर पक्षाघात तथा पंगुता का विकार उत्पन्न हो जाता है। कान में गम्मा होने पर सुनने की शक्ति नष्ट हो जाती है। आँख में होने पर दृष्टि-शक्ति समाप्त हो जाती है। जिह्वा पर होने पर वह फट जाती है। धमनियों की दीवारों में गाँठ बन कर गम्मा ऊतक उनकी पेशियों में फैल जाता है, जिससे पेशी ऊतक नष्ट होकर उनका लचीलापन समाप्त हो जाता है और वे कड़ी हो जाती हैं। इससे अति रक्तदाब (Hypertension) का विकार उत्पन्न हो जाता है।

O इस प्रकार से शरीर की तृतीयक अवस्था अत्यधिक गम्भीर प्रकार की होती है। गम्मा की उत्पत्ति जिस अंग विशेष में होती है, उसकी क्रियाशीलता समाप्त हो जाती है और ऐसी स्थिति में किसी भी उपद्रव की सम्भावना हो जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४) **चतुर्थावस्था**—उपसर्ग के १०-१२ वर्ष से २० वर्ष पश्चात् तक इस अवस्था के लक्षण उत्पन्न होते हैं। अथवा २५ से ३० वर्ष बाद भी विष का आक्रमण हो सकता है। इस अवस्था में मस्तिष्क संस्थान पर विशेष प्रभाव पड़ने से उन्माद तथा कलायखंज (लड़खड़ा कर चलना) की अवस्था उत्पन्न हो जाती है। यह अवस्था सदैव गुप्त रूप से प्रारम्भ होती है। इस अवस्था की अनेक व्याधियाँ ऐसी हैं, जिसके लक्षण अकस्मात् प्रारम्भ होते हैं। रोगी में कई वर्ष तक उपदंश के कोई लक्षण नहीं मिलते और वह समझता है कि रोग शान्त हो चुका है।

जन्मजात सिफिलिस
(Congenital Syphilis)

सिफिलिस एक ऐसा रोग है, जो सगर्भता में रोगग्रस्त माता से गर्भस्थ शिशु में पहुँच जाता है। माता में यदि सिफिलिस पुराना न हो तो ३-४ माह में गर्भपात हो जाता है। दूसरी बार ५-६ माह में, बाद में ६-७ माह में, फिर ७-८ माह में। इसके बाद धीरे-धीरे दीर्घ आयु के बच्चे पैदा होते हैं और उनमें भी उपदंश के लक्षण मिलते हैं।

उपदंश के जन्मजात लक्षण—बच्चे के उत्पन्न होने के समय कोई विशेष लक्षण नहीं होते हैं; परन्तु शीघ्र ही उनमें निम्न लक्षण प्रकट होने लगते हैं—

१. बालक की वृद्धि रुक जाती है और धीरे-धीरे उपार्जित सिफिलिस (Acquired syphilis) के लक्षण प्रकट होने लगते हैं।

२. रोगी शिशु दुर्बल दिखलाई देता है। उसकी वसा लुप्त होने लगती हैं। कुछ दिनों बाद बालक की त्वचा पर वृद्धों जैसी झुर्रियाँ पड़ जाती हैं।

३. ३-४ सप्ताह बाद गुलाबी रंग की पिड़िकाएँ (मुख, नासा आदि नग्न स्थलों पर) निकल आती हैं। कभी-कभी यह बढ़ कर आपस में मिल जाती हैं और वहाँ व्रण बन जाता है। ऐसे बच्चे पहले से भी अधिक दुर्बल हो जाते हैं।

४. बालक के नख या तो गिर जाते हैं अथवा विकृत या श्वेत हो जाते हैं।

५. सिर के बाल झड़ने लगते हैं। मुख के अन्दर तथा होष्ठ के कोनों पर उपदंश आर्द्र व्रण बन जाते हैं। यह व्रण क्रमशः नासा, कंठ एवं स्वरयंत्र की श्लैष्मिककला में भी बन जाते हैं।

६. नाक की हड्डी गल कर गिर जाती है, जिससे नाक पिचक जाती है।

७. यकृत् और प्लीहा बढ़ जाते हैं।

८. बालक के दाँत जल्दी निकलते हैं और जल्दी ही गिर जाते हैं।

९. अधिकांश रूप से ऐसे बच्चे १ वर्ष के अन्दर ही मर जाते हैं। जो जीते रहते हैं, उनमें लक्षण लुप्त हो जाते हैं। कुछ वर्ष बीतने के बाद या युवावस्था

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में पुनः सिफिलिस के तृतीयावस्था के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। अथवा १५-२० वर्ष बाद चतुर्थावस्था के लक्षण पैदा हो जाते हैं। उनमें सिफिलिस की छाप जीवनपर्यन्त बनी रहती है।

नोट—सिफिलिस से पीड़ित बालक की आकृति सदा के लिए विकृत हो जाती है। ऐसे व्यक्ति दूर से ही देख कर पहचाने जा सकते हैं।

(i) सिफिलिस से पीड़ित व्यक्ति दुर्बल तथा क्षीणकाय होता है।

(ii) वह अपनी आयु से अपेक्षाकृत अधिक बड़ा दिखलाई देता है।

(iii) नासासेतु बैठा हुआ, ललाट आगे को उभरा हुआ तथा सिर सपाट होता है।

(iv) ऊपर के भेदक दाँत कील के समान नुकीले होते हैं।

(v) लम्बी अस्थियों के सिरे मोटे होते हैं।

(vi) होष्ठ के किनारों से बाहर चक्र के आरों के समान चारों ओर फैलते हुए व्रण चिह्न दिखलाई देते हैं।

(viii) किसी-किसी में उपताराशोथ, फोला आदि विकार देखने को मिलते हैं।

निदान (Diagnosis)—रोगग्रस्त व्यक्ति के साथ समागम करने के उपरान्त उत्पन्न प्रारम्भिक कठिन व्रण का इतिहास, रक्ताल्पता, लस-ग्रन्थियों की पीड़ा रहित व्यापक वृद्धि और उसका विशिष्ट स्वरूप, त्वचा पर ताम्र वर्ण के खुजली रहित विस्फोट (Rashes), क्रॉनिक सोर थ्रोट, गम्मा की उत्पत्ति, धमनियों में अवरोध आदि लक्षणों के आधार पर रोग का अनुमान किया जाता है। इसके बाद निम्न परीक्षण से इसका असंदिग्ध निदान किया जाता है।

लेबोरेटरी परीक्षा (Laboratory investigation)—

१. **रक्त-परीक्षा**—द्वितीयावस्था में W. B. C. की वृद्धि २० हजार घन मि० मी० तक हो जाती है।

व्याधि की जीर्णावस्था में लसकयाणुओं की वृद्धि ६०-६५% तक होती है।

२. **विशिष्ट परीक्षा**—'वासर मैन प्रतिक्रिया' तथा 'काहन्स कसौटी' (Kahn's test) द्वितीय और तृतीय अवस्था में रोग निदान में सहायक होते हैं।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—

१. प्रथमावस्था में—परिसर्प, पामा (Scabies), जनेन्द्रिय व्रण, वंक्षणीय लसकणिकार्बुद से।

२. द्वितीयावस्था में—आर्टीकेरिया, सबोरिया, दाद (Ring worm), यक्ष्मा, सोरियेसिस आदि से।

३. तृतीयावस्था में—अर्बुद, यक्ष्मा तथा लसग्रन्थि की वृद्धि से।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपद्रव (Complications)—यह एक गम्भीर व्याधि है। इसलिए इसमें उपद्रवों की कोई सीमा नहीं है।

१. प्रथमावस्था में—कोई उपद्रव नहीं।

२. द्वितीयावस्था में—वातनाड़ी-शूल, जलोदर तथा शोथ।

३. तृतीयावस्था में—गम्मा के कारण धमनी अवरोध, धमनी घनास्त्रता, महाधमनी कपाटों की विकृति।

४. चतुर्थावस्था में—फिरंगी खंजता, फिरंगजन्य अंगघात (G. P. I.) एवं अन्य वातनाड़ी अंगघात।

चिकित्सा (Treatment)—

१. **सामान्य चिकित्सा**—इसमें सामान्य चिकित्सा का कोई महत्त्व नहीं है।

२. **औषधि चिकित्सा**—पेनिसिलीन इसकी सर्वश्रेष्ठ औषधि है। चिकित्सक को हमेशा याद रखना चाहिए कि रोग की प्रारम्भिक अवस्था में पेनिसिलीन के अतिरिक्त अन्य कोई भी औषधि देने की आवश्यकता नहीं है।

○ पेनिसिलीन देने से पूर्व टेस्ट अवश्य कर लिया जाय। यदि रोगी टेस्ट में पेनिसिलीन के प्रति सेन्सिटिव हो तो इसका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

○ प्राइवेट चिकित्सा क्षेत्र में सिफिलिस की चिकित्सा हेतु पेनिसिलीन के ऐसे योग का प्रयोग किया जाता है, जो एक लम्बे समय तक प्रभावकारी रहे। क्योंकि प्रायः ऐसा देखा गया है कि रोगी नियमित रूप से चिकित्सा कराने नहीं आते हैं। इस दृष्टि से बेञ्जाथीन पेनिसिलीन सर्वोत्तम रहती है।

एक वर्ष से पीड़ित रोगी की चिकित्सा—

℞ इञ्जे० बेञ्जाथीन पेनिसिलीन (Inj. Benzathine penicillin) २४ लाख यूनिट।

व्या० नाम—इञ्जे० पेनीडचोर एल. ए. (Inj. Penidure L. A.)

नोट—पेनीड्यूर एल० ए० की वायलें ६ लाख, १२ लाख तथा २४ लाख यूनिटों की आती हैं।

मात्रा—२४ लाख यूनिट वाली वायल मांसपेशीगत डिस्टिल्ड वाटर में घोल कर १ मात्रा के रूप में कूल्हे की मांसपेशी में।

एक वर्ष से अधिक पुराना रोग होने पर—

℞ इञ्जे० बेञ्जाथीन पेनिसिलीन (Inj. Benzathine penicillin)

व्या० नाम—पेनीड्यूर एल० ए० २४ लाख

मात्रा—१ इञ्जे० १-१ सप्ताह के अन्तर पर ३ इञ्जेक्शन दें।

अथवा—इञ्जे० प्रोकेन पेनिसिलीन ६ लाख अथवा १२ लाख यूनिट

मात्रा—१ इञ्जे० प्रतिदिन मांसपेशीगत १० दिन तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ यदि १ वर्ष से अधिक का रोग हो तो—६ या १२ लाख यूनिट प्रतिदिन I/M २१ दिनों तक।

नोट—यदि L. A. २४ लाख न मिले तो L. A. १२ लाख के २ वायल अथवा L. A. ६ लाख के ४ वायल एक साथ प्रयोग किये जा सकते हैं।

○ शैंकर (शिश्न की फुड़िया) की चिकित्सा आवश्यक नहीं है। उस पर केवल वैसलीन लगाकर पट्टी बाँध दें। अथवा बोरिक एसिड मिले गर्म पानी से धोकर पट्टी लपेट दें।

○ जिन रोगियों को 'पेनिसिलीन' उपयुक्त न पड़ रही हो, उनमें निम्नवत् चिकित्सा करें—

℞ कैपसूल टेट्रासाइक्लीन ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल दिन में ४ बार जल से १५ दिनों तक।

○ यदि रोग १ वर्ष से अधिक पुराना हो तो—

℞ कैपसूल टेट्रासाइक्लीन ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल दिन में ४ बार ३० दिन तक।

गर्भावस्था में—जो महिलाएँ पेनिसिलीन के प्रति अधिक सेंसिटिव हों—

℞ इरिथ्रोमाइसिन ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल दिन में ४ बार १५ दिनों तक।

○ यदि सिफिलिस का रोग १ वर्ष से अधिक पुराना हो तो—

℞ इरिथ्रोमाइसिन ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल दिन में ४ बार ३० दिनों तक।

नोट—इतना अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि सिफिलिस में इरिथ्रोमाइसिन का प्रभाव पेनिसिलीन की अपेक्षा हलका होता है। साथ ही इरिथ्रोमाइसिन से अनेक प्रकार के उपद्रव (Complications) उत्पन्न हो सकते हैं।

निर्देश—इस उपचार के पश्चात् पहले, दूसरे और तीसरे महीने में रोगी के रक्त की जाँच कराकर जीवाणुओं का पता लगाते रहना आवश्यक होता है। इसके पश्चात् हर तीसरे महीने में कुल २ वर्ष तक रक्त-परीक्षा होनी चाहिए।

निषेध—रोगी को ६ माह तक स्त्री-समागम का पूर्ण निषेध करें।

यदि सिफिलिस का रोग कई वर्ष पुराना पड़ जाने के बाद चिकित्सा की जा रही हो तो—पहले ३-४ सप्ताह तक 'विस्मथ' के इञ्जे० लगाने चाहिए, और इसके बाद 'पेनिसिलीन' का प्रयोग करना चाहिए।

नोट—इससे 'हक्स हैमर प्रतिक्रिया' (ज्वर बढ़कर नब्ज तेज होना तथा सारे शरीर में बेचैनी) से बचा जा सकता है।

सिफिलिस की द्वितीयावस्था में चिकित्सा—

१ वर्ष से ५ वर्ष तक का रोग होने पर—उपरोक्त पेनिसिलीन की दो गुनी मात्रा देनी चाहिए। ऐसी दशा में—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

℞ इञ्जे० क्रिस्टेलाइन पेनिसिलीन

मात्रा—६०० मि० ग्रा० (१० लाख यूनिट्स) नितम्ब की पेशी में प्रतिदिन १६ से २१ दिनों तक।

अथवा—पाम इञ्जेक्शन (Pam Inj.)

मात्रा—३६० मि० ग्रा० (६०००,००० यूनिट–२ मि० ली० में) I/M १४ दिनों तक।

पूरे कोर्स की मात्रा—५ ग्राम (८४ लाख यूनिट)

नोट—रोगी की प्रति माह जाँच आवश्यक है। सामान्य रूप से तीसरे माह के अन्त तक शरीर में स्थित जीवाणु समाप्त हो जाते हैं।

○ यदि यह पता चले कि बीच में एक बार पुनः जीवाणु कम होकर पुनः बढ़ गये हैं तो पेनिसिलीन का पुनः एक कोर्स और देना चाहिए।

जब सिफिलिस की चिकित्सा बहुत देर से करायी जाय तब—यदि सिफिलिस की चिकित्सा प्रारम्भ में नहीं कराई गई है और काफी समय व्यतीत हो गया है तथा रोग का आक्रमण हृदय तथा मस्तिष्क पर भी हो गया है; साथ ही रोगी के सिर में बराबर दर्द रहने लगा है और उसकी स्थिति पागलों जैसी हो गई है, तब ऐसी अवस्था में बहुत सावधानी के साथ चिकित्सा करनी चाहिए।

○ इस अवस्था में रोगी को पहले विस्मथ देना चाहिए। तत्पश्चात् पेनिसिलीन चिकित्सा करें। इसके लिए—

℞ विस्मथ ऑक्सीक्लोराइड ०.२ ग्राम का २ मि० ली०

व्या० नाम—इञ्जे० बाइसोक्सिल (Inj. Bisoxyl)

मात्रा—१ इञ्जे० नितम्ब के ऊपरी भाग में काफी गहरी पेशी में सप्ताह १ बार ४ सप्ताह तक।

पाँचवें सप्ताह में—इञ्जे० प्रोकेन पेनिसिलीन (जलीय—Aquous)

मात्रा—६०० मि० ग्रा० (१० लाख यूनिट) प्रतिदिन २० दिन तक।

पूरे कोर्स की कुल मात्रा—१२ ग्राम (२० लाख यूनिट्स)

अथवा—इञ्जे० पाम (Inj. Pam)

मात्रा—३६० मि० ग्रा० (६००,००० यूनिट) १४ दिनों तक।

अथवा—इञ्जे० बेञ्जाथीन पेनिसिलीन (Penidure L. A.)

मात्रा—२४ लाख यूनिट मांसपेशीगत नितम्ब में; १ सप्ताह बाद पुनः।

नोट—आवश्यक होने पर इसी प्रकार का कोर्स पुनः दिया जा सकता है।

ध्यान रहे—सिफिलिस की बढ़ी हुई अवस्था में कभी-कभी 'पेनिसिलीन' चिकित्सा से 'हृक्स हैमर रिएक्शन' हो जाता है, जो एक गम्भीर अवस्था है। इसके बचने के लिए कुछ चिकित्सक रोगी को 'प्रेडनीसोलोन' की १-१ गोली

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिन में ४ बार खिलाते हैं और तीसरे दिन से पेनिसिलीन का इञ्जेक्शन देते हैं।

आवश्यक निर्देश—चिकित्सा काल के मध्य रोगी के रक्त आदि की समय-समय पर जाँच करते रहना चाहिए। जिन चिकित्सकों को इस प्रकार के परीक्षणों द्वारा निष्कर्ष निकालने का अनुभव नहीं है, उन्हें इस रोग की चिकित्सा नहीं करनी चाहिए। रोग-मुक्ति के बारे में भी चिकित्सा का ज्ञान आवश्यक है।

कंजेनीटल सिफिलिस—२ वर्ष तक का पुराना रोग होने पर—

℞ इञ्जे० बेञ्जाथीन पेनिसिलीन-जी (Inj. Benzathine Penicillin-G)

मात्रा—५०,००० यूनिट/प्रति किलो शरीर भार पर केवल १ मात्रा में।

अथवा—इञ्जे० एक्वस पेनिसिलीन-जी

मात्रा—५,००,००० यूनिट/प्रति किलो शरीर भार पर I/M प्रतिदिन विभाजित मात्रा में १० दिन तक।

अथवा—इञ्जे० एक्वस प्रोकेन पेनिसिलीन-ज़ी

मात्रा—५०,००० यूनिट/प्रति किलो शरीर भार पर I/M १० दिन तक।

○ २ वर्ष से ऊपर का रोग होने पर—

जो चिकित्सा वयस्कों में प्रारम्भिक सिफिलिस में बताई गई है के अनुसार।

○ रिएक्शन होने पर—पेनिसिलीन बन्द कर दें।

साथ ही—इञ्जे० डेकाड्रान (Inj. Decadran) या इञ्जे० बेटनीसोल

मात्रा—२० मि० ग्रा० की १ मात्रा तत्काल दें।

सिफिलिस की पेटेण्ट मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१. ℞ पेनिसिलीन बी १ लाख यूनिट की	६ गोली
विटामिन ई०	३० मिग्रा०
इल्कोसिन	६ गोली
ग्लूकोज	४ ग्राम
ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर शीतल जल से।	१ मात्रा

○ कोर्स—१० दिन का।

२. ℞ पेनिसिलीन २ लाख यूनिट की	२ गोली
इल्कोसिन	४ गोली
पेलोनिन १०० मि० ग्रा० की	१६ गोली
	१ मात्रा

सबको मिलाकर ४ मात्रा बना लें। ऐसी १-१ मात्रा प्रति ६ घण्टे पर शीतल जल से।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्य उपयोगी पेटेण्ट औषधियाँ—

१. सेप्ट्रान (Septran) (बी० डब्लु०)—१-२ गोली दिन में ३ बार २ सप्ताह तक ।

२. ओरासीन-के (Oracyn-K) (एम० बी०)—आवश्यकतानुसार १-२ गोली दिन में २-३ बार ।

३. पेनिबोरल–पेनिवोरल फोर्ट (फ्रेन्को-इण्डियन)—१-२ गोली दिन में २-३ बार ।

४. डूरासाइक्लिन (Duracyclin) (यूनिकेम)—१ कै० दिन में २ बार १४ दिन तक ।

५. लीडरमाइसीन (Ledermycin) (लीडर्ले कं०)—१ कै० दिन में २ बार १४ दिनों तक ।

६. क्लोरोमाइसिटीन (Chloromycetin)—१-२ कै० प्रति ६ घण्टे पर नये आतसक रोग में ।

७. एसीटीलार्सन (Acitilarson) (एम० बी०)—२-३ मि० ली० गहरे मांसपेशी में २ बार तक । □

संक्रामक रोग 7/19

हर्पीज जोस्टर
(Herpes Zoster)

पर्याय—इसे शिन्गलेस (Shingles) नाम से भी जाना जाता है ।

परिचय—This is an acute infection involving the first sensory neurone of various nerves with appearence vesicles in the sensory distribution over the skin and mucous membrane caused by zoster-vericella vurus.

○ वायरस के संक्रमण से एक पार्श्व की वातनाड़ी के प्रसार की दिशा में द्रव युक्त विस्फोट, दाह, वेदना आदि लक्षणों से युक्त व्याधि हर्पीज जोस्टर कहलाती है ।

कारण—'जोस्टर वेरीसेला वाइरस' (Zoster vericella virus) इसका प्रमुख उत्पादक कारण है ।

आक्रमण—किसी भी आयु में । वयस्कों एवं वृद्धों में अपेक्षाकृत आक्रमणों की अधिकता तथा लक्षणों की उग्रता होती है ।

संक्रमणकाल—लगभग १५ दिन ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samáj Foundation Chennai and eGangotri

लक्षण—१. रोग का आक्रमण ज्वर से होता है। ज्वर साधारण स्वरूप का होता है, जो ३-४ दिन में उतर जाता है।

२. प्रभावित स्थल में पीड़ा, दाह अथवा खुजली होती है।

३. चौथे दिन प्रभावित प्रदेश पर पिड़िकाएँ निकल आती हैं। यह पिड़िकाएँ प्रभावित वातनाड़ी प्रदेश में ही होती हैं, जहाँ पर पूर्व में पीड़ा प्रारम्भ हुई थी।

४. पिड़िकाएँ प्रारम्भ में अत्यन्त सूक्ष्म तथा लाल रंग की होती हैं। अन्त में वहाँ पर छोटे-छोटे स्फोट बन जाते हैं। इन स्फोटों में सफेद तरल भरा होता है। कुछ समय बाद यह सूख जाती हैं और इन पर खुरण्ट बन जाते हैं। खुरण्ट के निकल जाने पर वहाँ पर निशान रह जाते हैं, जो कुछ दिन बाद मिट जाते हैं। कभी-कभी ये निशान आजीवन बने रह जाते हैं।

५. कभी-कभी आँख की कनीनिका पर भी विस्फोट निकल आते हैं, जिससे उस पर सफेदी आ जाती है और अर्धविभेदक (Migrane) जैसे लक्षण होने लगते हैं, जो कभी-कभी चिरकाल तक बने रहते हैं। यहाँ तक कि कभी-कभी ये आजीवन भी देखे जाते हैं।

६. सातवीं नाड़ी के प्रभावित होने पर अर्दित तथा एक ओर की जीभ के दो-तिहाई अग्र भाग की रसना-शक्ति नष्ट हो जाती है।

रोग की विशेषता—१. विस्फोट निकलने के पहले, विस्फोट निकलने के मध्य तथा विस्फोट शमन के बाद दाह एवं खुजली युक्त तीव्र वेदना होती है।

२. विस्फोट स्थल पर कई महीनों या वर्षों तक काले-काले व्रण वस्तु युक्त धब्बे-से बने रहते हैं।

शारीरिक विभिन्नता के आधार पर यह निम्न प्रकार का होता है—

१. पैरों तथा गर्दन का जोस्टर (Zoaster of the limbs and trunks)।

२. आँख का परिसर्प (Opthelmic zoster)—इसे गेसेरियन हर्पीज भी कहते है।

३. जेनीकुलेट जोस्टर (Geniculate zoster)।

४. जनरेलाइज्ड जोस्टर (Generalised zoster)।

५. जोस्टर इन्सेफेलाइटिस, माइलाइटिस एवं मेनिञ्जाइटिस।

उपद्रव (Complications)—

१. सम्बद्ध नाड़ियों का अंगघात, शून्यता तथा दाह।

२. वर्त्मघात (Ptosis)।

३. उदरपेशी का अंगघात।

४. कार्नियल ओपेसिटी (Corneal opacity)

५. नाड़ीशूल (Neuralgia) प्रधान उपद्रव।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. लम्बे समय तक दाह, चुभन तथा विशिष्ट प्रकार की बेचैनी का रहना।

औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ अर्गोटामीन टार्ट्रेट (Ergotamine tartrate)

अथवा—

℞ १. प्रोस्टिग्मीन (Prostigmine) मांसपेशीगत

मात्रा—प्रति १२ घण्टे पर कुल २-३ इञ्जेक्शन। साथ ही—

२. प्रेडनीसोलोन ५ मिग्रा०	१ गोली
नोवाल्जिन	१ गोली
विटामिन-सी १०० मिग्रा० की	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी एक मात्रा दिन में ३ बार ५-६ दिन तक।

नोट—इससे जलन तथा वेदना में लाभ होता है।

३. इञ्जेक्शन विटामिन 'बी'$_{१२}$

मात्रा—५०० माइक्रोग्राम I/M दिन में २ बार १० दिन तक।

४. इञ्जे० विटामिन बी$_{६}$ (पाइरीडॉक्सिन)

मात्रा—१०० मिग्रा० I/M दिन में २ बार १० दिन तक।

स्थानीय चिकित्सा—१. विस्फोटों को रगड़ आदि से बचाना।

२. विस्फोटों पर डस्टिंग पाउडर का छिड़कना।

३. खुरण्ट बनने पर बेटनोविट-एन स्किन आइण्टमेण्ट लगाना।

नोट—इससे धब्बों का निर्माण नहीं होता है।

हर्पीज जोस्टर नाशक अन्य चिकित्सा-क्रम—

(i) प्रथम चिकित्सा-क्रम—

एस्प्रिन तथा पैरासिटामोल का प्रयोग—इससे पीड़ा का शमन होता है।

पिट्यूट्रीन (Pituitrin)–१ मि० ली० मांसपेशीगत।

विटामिन 'बी'$_{१२}$ —१००० माइक्रोग्राम मांसपेशीगत।

ग्राइसोविन (Griesovin) अथवा स्टेराइड्स (Steroids) का प्रयोग।

स्पाइनल कॉर्ड, नर्व रूट तथा गेंगलिया (Ganglia) पर Deep x-ray चिकित्सा।

(ii) द्वितीय चिकित्सा-क्रम—

ए० पी० सी० (A. P. C.)—१ गोली दिन में ३-४ बार।

फीनोबार्बीटोन (Phenobarbitone)–१५ मिग्रा० दिन में ३ बार।

○ गम्भीर अवस्था में—पेथीडीन (Pethidine)

मात्रा—१०० मिग्रा० I/M दिन में २-३ बार।

तत्पश्चात्—५० मिग्रा० दिन में २ बार मुख मार्ग से।

 CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ यदि उपरोक्त व्यवस्था से लाभ न मिले तो—

मॉर्फीन सल्फेट १५ मिग्रा० S/C दें।

स्थानीय चिकित्सा हेतु—१. डस्टिंग पाउडर का छिड़कना।

२. खुरंट बनने पर हाइड्रोकार्टीसोन एसीटेट (१%) + नियोमाइसिन सल्फेट (०·५%) का प्रयोग करें।

आँखों में विस्फोट की स्थिति में (In corneal eruption)—

१. 'सल्फासिटामाइड' या 'टैरामाइसिन' अथवा 'वेटनीसोल आई ड्राप' डालें।

२. खाने के लिए—मुख द्वारा एण्टीबायोटिक दें। ⊡

संक्रामक रोग 7/20

जलसन्त्रास
(Hydrophobia)

पर्याय—अलर्क विष, जलसंत्रास, जलांतक, रैबीज (Rabbies)।

परिचय—It is an infectious disease characterised by encephalitis with spasm of different muscles, paralysis, fear of water ete. caused by a neorotic filterable virus transmitted commonly by the bite or lick of an infected rabied dog.

○ पागल कुत्ते के काटने से मनुष्य में संक्रान्त होने वाला यह एक तीव्र स्वरूप का औपसर्गिक रोग है, जिसमें निगलने में कष्ट, उद्वेष्टन तथा कुत्ते के समान भौंकने की ध्वनि होती है।

कारण—इस रोग का मुख्य उत्पादक कारण पागल कुत्तों, भेड़िया आदि आदि के लार से उत्सर्गिक होने वाला एक विषाणु (Virus) होता है। पागल कुत्ता, सियार अथवा बिल्ली के काटने से या इनके द्वारा कटा हुआ चमड़ा चाटने से यह रोग होता है। इनके दाँत और नाखूनों से घाव होकर उस जगह पर उसकी लार लगने से शरीर में विष फैल जाता है।

संचयकाल—काटने के १७–१८ दिन बाद प्रायः रोग होता है। इसका संचयकाल (Incubation period) १० दिन से २ वर्ष तक का है। औसतन ३–७ सप्ताह। परन्तु यह रोगी की आयु तथा घाव के अनुसार भिन्न-भिन्न होता है।

लक्षण—(Symptoms)—रोग के लक्षण पागल कुत्ते के काटने के ३ सप्ताह (२१ दिन) बाद से २ वर्ष के भीतर कभी भी उत्पन्न हो सकते हैं। इस रोग की निम्न ३ अवस्थाएँ होती हैं—

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. आक्रमण की अवस्था (Premonitory or initial stage) ।

२. उत्तेजना की अवस्था (Stage of irritability or excitement)

३. अन्तिम अवस्था (Stage of paralysis) ।

(१) आक्रमण की अवस्था (Initial stage)—

१. स्थानीय लक्षण—यह अवस्था १-२ दिन तक की होती है । रोगी कटी हुई जगह पर पीड़ा तथा असुविधा अनुभव करता है । दंश स्थान पर जलन तथा पीडन-अक्षमता होती है । वह स्थान लाल होता है । ये सभी स्थानीय लक्षण होते हैं ।

२. मानसिक लक्षण—मध्यम स्वरूप का ज्वर (Slightly temperature), निगलने में कठिनाई, पेशियों में ऐंठन, प्रकाश व शब्द सहन न होना, शिरःशूल, निद्रानाश, बेचैनी, स्वभाव में चिड़चिड़ापन, मन की चंचलता आदि लक्षण होते हैं । इसके अतिरिक्त रोगी की नाड़ी तीव्र गति वाली होती है । उसके नेत्र अधिक-चँचल होते हैं । रोगी अल्प उत्तेजना से ही उत्तेजित हो उठता है ।

(२) उत्तेजना की अवस्था (Stage of irritability or excitement)—

१. इस अवस्था में ज्वर तथा बेचैनी बढ़ जाती है ।

२. थोड़ी-सी भी उत्तेजना अनुभव होने पर मुखग्रसनिका तथा स्वरयंत्र की पेशियों में पीड़ा तथा उद्वेष्टन अनुभव होने लगता है ।

३. रोगी को निगलने में कष्ट होता है । वह गले की पीड़ा तथा ऐंठन के कारण लार तक निगलने में असमर्थ होता है । वह बार-बार थूकता रहता है ।

४. धीरे-धीरे गर्दन को पेशियों में भी सूक्ष्म वेदना बढ़ जाती है, जिससे रोगी पानी देखने, सुनने अथवा पानी के स्मरण मात्र से ही उसकी गले की मांसपेशियों में आक्षेप उत्पन्न होने लगते हैं । ऐसी अवस्था में जल तथा आक्षेपों के कारण रोगी डरने लगता है ।

५. जल के अतिरिक्त वायु के झोकों, प्रकाश, शब्द आदि अनेक कारणों से भी उसके गले में आक्षेप उत्पन्न होने लगते हैं ।

६. कुछ समय के पश्चात् श्वसन-मांसपेशियों तथा शरीर की अन्य पेशियों में भी आक्षेप आने लगते हैं । सम्पूर्ण शरीर में आक्षेप होने पर 'टेटनस' जैसे लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं ।

७. प्रारम्भ में आक्षेपों की अवधि १-२ मिनट और तत्पश्चात् १५-२० मिनट तक की होती है ।

८. रोगी खाने-पीने की वस्तु लेने में पूर्णतया असमर्थ हो जाता है ।

९. गर्दन की पेशियों में आक्षेपजन्य विकृति के परिणामस्वरूप कुत्ते के भौंकने के समान ध्वनि होती है और रोगी के मुख से लार आती है ।

अवधि—यह अवधि २ से ३ दिन तक रहती है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) अन्तिम अवस्था (Stage of paralysis)—

१. इस अवस्था के प्रारम्भ होते ही पेशियों के उद्वेष्टन (Spasmodic contraction) गायब होने लगते हैं और विभिन्न पेशीसमूहों (Muscles groups) में अंगघात (Paralysis) उत्पन्न होने लगता है। सर्वप्रथम जबड़े की पेशियों का पैरालिसिस होता है। तत्पश्चात् क्रम से शाखाओं तथा श्वसन-संस्थान के अवयवों की पेशियों का पैरालिसिस हो जाता है और रोगी की तत्काल मृत्यु हो जाती है। कभी-कभी हृदय की क्रिया रुकने से भी मृत्यु हो जाती है।

२. रोगी की अन्तिम अवस्था में टेम्परेचर बढ़ कर १०५ से १०६° फा० तक हो जाता है।

३. इस अवस्था में नाड़ी की गति क्षीण तथा तीव्र गति वाली होती है।

४. रोगी की मानसिक स्थिति अन्त तक एक जैसी रहती है, बदलती नहीं।

अवधि—यह अवस्था कुछ ही घण्टों की होती है।

नोट—कुछ रोगियों में कमजोरी होकर ऐंठन, मृगी तथा टेटनस आदि लक्षण होते हैं।

निदान (Diognosis)—१. पागल कुत्ते के काटने का इतिहास मिलने एवं पागल कुत्ते के जल्द ही मर जाने (१० दिन के अन्दर) आदि से इस रोग के निर्णय में सहायता मिलती है।

२. जल को देखते ही रोगी को दौरे पड़ने लगते हैं। इसे जलसंत्रास (Hydrophobia) कहते हैं।

नोट—जलसंत्रास (Hydrophobia) की स्थिति में निदान करना व्यर्थ है; इससे कोई लाभ नहीं होता है, क्योंकि रोग होने पर इसकी कोई चिकित्सा सम्भव नहीं है।

○ चिकित्सक के पास यदि कोई ऐसा केस आता है, जिसे कुत्ते ने काट लिया है तो उसके सही निदान के लिए पागल कुत्ते का निरीक्षण करना चाहिए कि काटने वाला कुत्ता पागल है अथवा नहीं। पागल कुत्ते के काटने पर रोगी के लिए तत्काल रेबीज वैक्सीन की व्यवस्था करनी चाहिए।

पागल कुत्ते में पागलपन के निम्न लक्षण होते हैं—

१. कुत्ता प्रारम्भ में घर वालों से ही अधिक प्रेम प्रदर्शित करता है और उनके अंगों को बार-बार चाटने की कोशिश करता है।

२. कुत्ते में कुछ अकस्मात् परिवर्तन आने लगते हैं। वह काल्पनिक वस्तु के पीछे दौड़ता है और भौंकता है। वह जानवरों अथवा कुत्तों तथा मनुष्यों को अकस्मात् काटने के लिए दौड़ता है। वह दीवार और लकड़ी आदि प्रत्येक वस्तु को चाटने लगता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. कुत्ते की भूख बढ़ जाती है, जिससे कि वह घास, लकड़ी, पत्थर आदि सभी अखाद्य वस्तुओं को खाने लगता है।

४. पागल कुत्ते का मुख फैल जाता है। इसके मुँह से बराबर लार टपकती रहती है।

५. पागल कुत्ता बड़ी दूर-दूर तक भागा चला जाता है और जो उसके रास्ते में जो भी मिलता है, बस उसी को काटने दौड़ता है। उसकी पूँछ बराबर लटकी हुई होती है।

६. अन्त में पैर एवं जबड़े की मांसपेशियों में पैरालिसिस होकर कुत्ता मर जाता है।

७. कुत्ते में पागलपन की अवधि ५ से ७ दिन और अधिक से अधिक १० दिन की होती है।

नोट—पागल कुत्ते में जलसंत्रास (Hydrophobia), जैसा कि मनुष्यों में होता है, ऐसा कोई लक्षण नहीं होता है। कुत्ता अपनी इच्छानुसार पानी पीता है। उसे पानी से कोई भय नहीं होता है।

निर्देश—सही अपेक्षित निदान के लिए आवश्यक है कि पागल कुत्ते को न मारा जाये, बल्कि उसे बाँध कर रखा जाये और देखा जाय कि कुत्ते में वास्तविक लक्षण उत्पन्न होकर ७-८ या १० दिन में मरता है अथवा नहीं।

○ मरे हुए पागल कुत्ते के आमाशय में लकड़ी, पत्थर, घास आदि पदार्थ मिलते हैं और उनके मस्तक की सूक्ष्म परीक्षा करने पर नेग्रा-बोडील पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं।

पूर्वानुमान (Prognosis)—पागल कुत्ते के काटने के बाद बचाव चिकित्सा (Prophylactic treatment) की व्यवस्था न करने पर रोग पूर्णतया असाध्य हो जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—

सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

स्थानीय चिकित्सा—कटे हुए स्थान के चारों ओर वैसलीन लगा देना चाहिए और घाव को दबा कर अधिक से अधिक मात्रा में रक्त निकाल देना चाहिए। साथ ही उसे कार्बोलिक एसिड से स्पर्श (Touch) करना चाहिए। अथवा पोटाश के घोल से साफ करना चाहिए। इनके अभाव में गर्म लोहे से दागा भी जा सकता है।

नोट—कुत्ते के काटने के तत्काल बाद उपरोक्त स्थानीय व्यवस्था आवश्यक है। इससे रोग के बचाव में सहायता मिलती है। इस व्यवस्था को तत्काल अपनाएँ, चाहे वह कुत्ता पागल हो अथवा नहीं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रेबीज वैक्सीन का उपयोग (Use of anti-rabic vaccine)— २ मि० ली० की मात्रा में प्रतिदिन S/C इन्जेक्शन के रूप में (उदर की त्वचा में) २ सप्ताह तक कुल १४ से २१ इन्जेक्शन तक।

उपलब्धता—प्रान्त के बड़े-बड़े शहरों, जिला अस्पतालों तथा सरकारी प्रधान चिकित्सालयों में इस वैक्सीन के टीके का प्रबन्ध राज्य सरकार की ओर से किया गया है। इन स्थानों पर रोगी टीका लगवा सकते हैं। बस यही बचाव का एकमात्र साधन है।

टीका की क्षमता—१ से १½ वर्ष तक रहती है।

नोट—इसका प्रयोग साधारण क्षतों (शाखाओं–Limbs) के घाव के लिए किया जाता है।

सुझाव—जब किसी पागल कुत्ते ने काटा हो और यह सन्देह हो कि वह कुत्ता पागल है या नहीं तो भी इसके वैक्सीन का इन्जेक्शन (७ या १४) अवश्य लगवा लेना चाहिए।

परम क्षम लसिका (Hyper immune serum)—इसे 'इक्वाइन रेबीज एण्टी सीरम' (Equine rabies antiserum) 40/U/kg का प्रयोग करना चाहिए।

नोट—इसका प्रयोग कपाल आदि स्थानों के घाव तथा दंश होने पर होता है। इसे उपरोक्त वैक्सीन के साथ-साथ प्रयोग किया जाता है।

रोगहर औषधि-चिकित्सा (Curative treatment)—हाइड्रोफोबिया होने पर कोई भी उपयुक्त चिकित्सा नहीं है। केवल कष्ट के निवारण के लिए निम्न चिकित्सा ही की जाती है—

१. रोगी को पृथक् कमरे में रखें।

२. रोगी की लार से दूषित कपड़ों को उबाल कर साफ करें। साथ ही रोगी से पास परिचायक को बड़ी सावधानी के साथ रहना चाहिए।

३. रोगी को दिन में ३ बार थोड़ा-थोड़ा गुड़ खिलायें।

४. रोगी को किसी औषधि से लाभ नहीं होता है, अतः उसे तत्काल किसी बड़े अस्पताल भिजवा देना चाहिए।

शूल एवं ऐंठन की शान्ति के लिए—टिं० केनाविस इण्डिका ५ मिनिम + टिं० हायोसायमस १५ मिनिम + जल ३० मि० ली०—इन्हें मिलाकर दिन में ३-४ बार दें।

गर्दन की मांसपेशियों का आक्षेप, स्तब्धता आदि की शान्ति के लिए—पैराल्डिहाइड तथा एवर्टिन आदि का उपयोग किया जाता है।

१. पैराल्डिहाइड—१ ड्राम मुख द्वारा प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—५ मि० ली० I/M अथवा २ मि० ली० I/V मार्ग से सावधानी पूर्वक दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. एवर्टिन (Avertin)—२५–५० ग्राम/प्रति किलो शरीर भार पर। मेण्टेनेंस मात्रा—१० मि० ग्रा० प्रति ३-४ घण्टे पर मुख द्वारा।

नोट—इसमें रोगी मूर्च्छित-सा हो जाता है, पर इसके लिए चिन्ता नहीं करनी चाहिए। ⊡

संक्रामक रोग 7/21

विसर्प
(Erysipelas)

पर्याय—विसर्प, अग्निविसर्प।

परिचय—यह 'हीमोलाइटिक स्ट्रेप्टोकोकाई' के उपसर्ग से उत्पन्न होने वाला तीव्र स्वरूप का ज्वर है, जिसका प्रमुख स्थानीय लक्षण चर्मशोथ होता है।

संक्रमण—त्वचा में क्षत या व्रण होने पर उपरोक्त स्ट्रेप्टोकोकाई शरीर के भीतर प्रविष्ट हो जाते हैं। ऑपरेशन के समय पूर्ण शुद्धता न रखने पर, स्त्रियों में प्रसव के समय बिना विसंक्रमित किये हुए यंत्र-शस्त्र का प्रयोग करने तथा नवजात का नाल छेदने पर इसका संक्रमण हो जाता है।

जो इससे पीड़ित होते हैं—

१. २ से ३ वर्ष के बालक।

२. ४० से ५० वर्ष के प्रौढ़।

३. पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियाँ अधिक।

४. यकृत् तथा वृक्क विकारों से पीड़ित व्यक्ति।

५. शराबी एवं मधुमेह से पीड़ित व्यक्ति।

६. हीनक्षमताकारक व्याधियों से मुक्त हुए व्यक्ति।

रोग का आक्रमण—१. रोग का आक्रमण चेहरे पर तथा कभी-कभी पैरों पर।

२. बालकों में नाल-छेदन के बाद नाल के चारों तरफ।

३. स्त्रियों के गुप्तांगों पर।

लक्षण—१. अकस्मात् शीत के साथ ज्वर १०३-१०४° फा० हो जाता है।

२. शिरःशूल, शारीरिक पीड़ा आदि लक्षण उपस्थित रहते हैं।

३. प्रारम्भिक दिनों में ज्वर प्रातःकाल १०३° और सायंकाल १०५° फा० या इससे भी अधिक हो जाता है।

४. बच्चों में ज्वर के आक्रमण के समय तीव्र आक्षेप, वमन, शिरःशूल आदि लक्षण हो जाते हैं। जिससे मस्तिष्क-सुषुम्ना ज्वर का सन्देह होने लगता है। कभी-कभी शिरःशूल इतना तीव्र होता है कि सिर फटा-सा जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. नाड़ी की गति अति तीव्र होती है और कभी-कभी रोगी प्रलाप भी करता है।

स्थानीय लक्षण (Local symptoms)—निम्न स्थानीय लक्षण मिलते हैं—

१. ज्वर चढ़ने के तुरन्त बाद ही व्रण स्थान रक्तमय और शोथयुक्त दिखलाई देता है। उस स्थान पर तीव्र जलन, पीड़ा तथा खुजली प्रतीत होती है। यह शोथयुक्त तना हुआ उभार कपोल, मस्तक अथवा नासिका पर होता है। यह शीघ्र अथवा धीरे-धीरे फैलता है।

२. उभार लाल रंग का, उस स्थान के चारों ओर का किनारा किंचित् बड़ा और फुंसियों से घिरा रहता है। २-३ दिन में शोथ बढ़कर अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाता है, जिससे रोगी का चेहरा फूल जाता है और उसकी आँखें बन्द हो जाती हैं तथा कान बाहर की ओर निकले-से प्रतीत होते हैं।

३. ग्रीवा की लसग्रन्थियाँ फूल जाती हैं, जिससे रोगी को निकलने में कठिनाई होती है।

४. चेहरे पर विसर्प प्रसरित होकर गले एवं स्वरयंत्र में पहुँच कर श्वासावरोध उत्पन्न कर देता है।

५. केन्द्र स्थान से इधर-उधर प्रसारित होने पर पहले का शोथ धीरे-धीरे कम होने लगता है और उस स्थान से भूसी निकलने लगती है। रोगी की आकृति बदल जाती है और उसको पहिचानना कठिन हो जाता है।

६. एक बार आक्रमण होने पर पुनः आक्रान्त होने की प्रबल सम्भावना रहती है।

७. पूय-दूषित केन्द्र के पास अनेक बार आक्रमण होने से वहाँ की त्वचा मोटी हो जाती है और लसवाहिनियों में अवरोध-सा होकर 'एलिफेण्टियेसिस' जैसे लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

निदान (Diagnosis)—रुग्ण स्थान की आकृति एवं साधारण लक्षणों से इसके पहिचानने में पर्याप्त सहायता मिलती है। सन्देह होने पर स्राव लेकर माइक्रोस्कोपिक कीटाणु परीक्षा की जाती है।

सापेक्ष निदान (Differntial diagnosis)—१. शीतपित्त २. अनूर्जता-जनित शोथ (Angro-neurotic oedema) तथा ३. मस्तिष्क-सुषुम्ना ज्वर से इसका भेद किया जाता है।

उपद्रव (Comptications)—

१. सेप्टीसीमिया	५. त्वचा का मोटापन	८. ब्रॉन्को-न्यूमोनिया
२. वृक्कशोथ	६. बालों का गिरना	९. पूयमयता
३. गैंग्रीन	७. स्वरयंत्रशोथ	१०. मस्तिष्कावरणशोथ
४. पुनरावर्तन की प्रवृत्ति		

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साध्यासाध्यता—१. यह एक स्वयं मर्यादित रोग है। उपद्रवों के अभाव में १०-११ दिन में स्वयं शान्त हो जाता है।

२. अधिक बुखार (Fever), श्यावता, तन्द्रा, प्रलाप आदि की उपस्थिति काफी घातक होती है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) **सामान्य चिकित्सा** (General treatment)—

१. शय्या पर पूर्ण विश्राम।

२. पीने के लिए पर्याप्त उबाला हुआ जल तथा दूध का सेवन।

३. वमन की शान्ति के लिए बर्फ के टुकड़े चूसना।

४. शिरःशूल एवं वमन की शान्ति के लिए सिर पर बर्फ की थैली का प्रयोग।

५. शरीर को मन्दोष्ण जल के पोंछना।

६. प्रारम्भ से ही मृदु विरेचक औषधियों का प्रयोग।

(२) **औषधि चिकित्सा** (Medicinal treatment)—

℞ सल्फाथियाजोल (Sulphathiazole)

मात्रा—पहले २ ग्राम (४ गोली)।

तत्पश्चात्—प्रति ४ घण्टे पर १ ग्राम ३ दिन तक।

क्रिस्टेलाइन पेनिसिलीन (Crystalline penicillin)

मात्रा—५ लाख यूनिट प्रति १२ घण्टे पर।

तत्पश्चात्—प्रोकेन पेनिसिलीन (Procain penicllin)

मात्रा—दिन में १ बार ४ दिन तक।

तत्पश्चात्—पेनीड्यूर (Penidure) का प्रयोग करें।

नोट—मुख द्वारा सल्फा ड्रग्स + इञ्जेक्शन द्वारा 'पेनिसिलीन' अथवा 'एम्पीसिलीन' का संयुक्त प्रयोग अधिक लाभकारी होता है।

○ 'आइलोटाइसिन', 'ओरियोमाइसिन', 'टेरामाइसिन', 'टेट्रासाइक्लीन' आदि का उपयोग किया जा सकता है।

नोट—उपरोक्त व्यवस्था के साथ ही साथ रक्तशोधक तथा ज्वर-शामक योगों का भी प्रयोग अपेक्षित होता है।

स्थानीय चिकित्सा—अधिक शोथ की स्थिति में—ग्लिसरीन मैगसल्फ पेस्ट (Mag-mag) अथवा सूमैग (Sumag) का प्रयोग करें। साथ ही गरम जल में बोरिक एसिड या तारपीन तेल डाल कर सेंक करें।

○ स्थानीय प्रयोगार्थ—पेनिसिलिन अथवा ओरियोमाइसीन आइण्टमेण्ट। फूरासिन, कार्टिसोन अथवा वेसीट्रेसीन मलहम।

नोट—इनमें से किन्हीं का उपयोग लगाने के लिए किया जा सकता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ यदि नेत्रों के पास विसर्प का स्थान हो तो—प्रातः-सायं नेत्रों को बोरिक के घोल से धोकर 'आर्जीरोल लोशन' या एल्बुसिड आई ड्राप ३०% डालें।

○ **एक्स-रे चिकित्सा**—प्रभावित स्थान पर एक्स-रे का उपयोग १-२ मिनट प्रतिदिन या तीसरे दिन किया जाता है। इससे विसर्प जीवाणु शीघ्र नष्ट हो जाता है।

○ **अल्ट्रावायोलेट रेज**—इनका उपयोग भी एक्स-रे चिकित्सा की भाँति किया जाता है और इसके अच्छे परिणाम भी मिलते हैं।

निर्देश—रोग के अधिक बढ़ने पर औषधि चिकित्सा तथा इस प्रकार के साधनों द्वारा स्थानीय चिकित्सा की जानी चाहिए।

रोग के बाद की चिकित्सा—विसर्प में पुनरावर्तन की अधिक सम्भावना रहती है। अतः रोग-मुक्ति के बाद भी ७–१० दिनों तक चिकित्सा चलानी चाहिए।

साथ ही 'मिल्क विद आयोडीन' अथवा Multin आदि का उपयोग क्षमता बढ़ाने के लिए करना चाहिए। □

संक्रामक रोग 7/22

आमवातिक ज्वर
(Rheumatic Fever)

पर्याय—रूमैटिक ज्वर, आमवातिक ज्वर।

परिचय—Rheumatic fever is an acute disease characterized by fever, joints pain and liability to carditis.

○ रूमैटिक फीवर एक तीव्र रोग है, जिसमें ज्वर, सन्धिशोथ आदि लक्षण होते हैं। इसमें प्रायः हृदय की मेम्ब्रेन (रक्तधरा) में शोथ उत्पन्न हो जाता है। वास्तव में यह एक विशिष्ट प्रकार का तीव्र औपसर्गिक ज्वर है।

कारण—इस रोग का संक्रमण सम्भवतः 'बी हीमोलाइटिक स्ट्रेप्टोकोकाई' के द्वारा होता है। विद्वानों का ऐसा विचार है कि इस रोग का गलग्रन्थि शोथ (टॉन्सीलाइटिस) तथा लोहित ज्वर (Scarlet fever) में घनिष्ट सम्बन्ध है और यह रोग भी इसी कीटाणु से फैलते हैं।

अन्य कारण—

ऋतु—शीत के महीने में। वसन्त तथा वर्षा ऋतु में भी होता है।

स्थान—आर्द्र तथा उष्ण स्थानों में अधिक।

लिंग (Sex)—स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में अधिक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयु (Age)—१. प्रायः नवयुवकों को १५-३० वर्ष की आयु में।
२. ३० वर्ष से अधिक की आयु में इसकी सम्भावना कम रहती है।
३. ६ से १२ वर्ष की आयु तक इसका सर्वाधिक आक्रमण होता है।

○ सामाजिक इतिहास—यह एक दरिद्रता (Poverty) का रोग है और ऐसे व्यक्ति अधिकांश आक्रान्त होते हैं, जिनका रहन-सहन निम्न कोटि का होता है।

○ स्वच्छता अवस्था (Sanitary condition)—यह भी देखने में आया है कि यह रोग उन स्थानों में अधिक होता है, जो अंधेरे और अस्वच्छ अवस्था में होते हैं।

○ अपर रेस्पिरेटरी इन्फेक्शन—व्याधि का विस्तार मुख्यरूप से अपर रेस्पिरेटरी इन्फेक्शन के द्वारा होता है। विशेषकर टॉन्सीलाइटिस अथवा फैरिन्जाइटिस से।

सहायक कारण—दरिद्रता की अधिकता, आर्द्र कपड़ों का पहनना, नम भूमि में सोना, पानी में भींगना, अधिक पसीना आने के बाद वायु के स्थान में बैठना तथा आकाश का बादलों से घिरा रहना आदि रूमैटिक फीवर के आक्रमण में सहायक होते हैं।

प्रकोप—इस रोग का प्रकोप मुख्य रूप से पायरिया, कान का बहना, टॉन्सीलाइटिस आदि चिरकारी व्याधियों के कारण होता है।

○ रक्त में विटामिन 'सी' की कमी रोग का उत्पादक सहायक कारण हो सकता है।

○ बहुत से परिवारों में इसकी विशेष प्रवृत्ति पायी जाती है।

○ एक बार रोग होने पर इसके बार-बार होने की प्रवृत्ति होती है।

नोट—श्रम, शीत और क्लिन्नता इस रोग के बढ़ाने में विशेष सहायक होते हैं।

लक्षण—(१) **तापक्रम** (Temperature)—तापक्रम मुख्य रूप से ऊँचा (३९° सें०) तक रहता है। यह एकाएक आता है। तापक्रम कुछ न कुछ अंश में अवश्य बना रहता है। बुखार का शीत और कम्प से कोई सम्बन्ध नहीं होता है। अर्धविसर्गी या विसर्गी स्वरूप का संतत ज्वर हो सकता है।

ज्वर के आक्रमण के कुछ घण्टे बाद—

१. सम्पूर्ण शरीर की संधियाँ पीड़ायुक्त एवं जकड़ाहट युक्त हो जाती हैं।
२. जिह्वा मलामृत हो जाती है।
३. पूरे शरीर से खट्टा एवं बदबूदार पसीना आता है।
४. मूत्र का रंग बदल कर गाढ़े रंग का हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. पूरे शरीर पर अम्हौरी (सरसों सदृश) जैसे दाने निकलते हैं। कभी-कभी रक्तवर्ण के या नीलाभ (Erythmatous) विस्फोट भी निकलते हैं।

६. ज्वर के साथ ही अंगमर्द, कंठ-प्रदाह, ग्रीवास्तम्भ और कभी-कभी गलग्रन्थि-शोथ के भी लक्षण मिलते हैं।

७. यदि चिकित्सा न की गई तो बुखार लम्बे समय तक बना रहता है। अथवा कुछ समय के लिए ज्वर कम होकर पुनः तीव्र आक्रमण के साथ प्रारम्भ होता है।

८. किंचित् 'हाइपर-पाइरेक्सिया' उपद्रव स्वरूप उत्पन्न हो जाती है।

९. रोगी को प्यास अधिक लगती है तथा नाड़ी की गति तीव्र होती है।

१०. सम्पूर्ण शरीर में स्तब्धता, क्लान्ति, कोष्ठबद्धता आदि लक्षण मिलते हैं।

११. प्रायः दूसरे दिन शरीर के किसी एक सन्धि में स्थानीय वेदना के लक्षण व्यक्त होते हैं। कुछ समय बाद इस सन्धि के लक्षण कुछ कम हो जाते हैं और अन्य नवीन सन्धियाँ प्रभावित हो जाती हैं। इस प्रकार से किसी एक सन्धि में स्थानीय पीड़ा या उपशम होता है तो दूसरी सन्धि आक्रान्त होती है। साथ ही अगली सन्धि इससे भी अधिक पीड़ायुक्त होती है।

नोट—इस प्रकार से आक्रान्त और उपशम का क्रम जारी रहता है। सभी सन्धियों में पीड़ा एक-सी नहीं होती है।

(२) **सन्धिशोथ** (Arthritis)—१. यह ७०% केसिस में देखने को मिलता है। शरीर की कोई भी सन्धि आमवात से प्रभावित हो सकती है।

२. बड़ी सन्धियाँ विशेष रूप से प्रभावित होती हैं। इस क्रम में घुटने, जानु, गुल्फ, मणिबन्ध, कलाई, स्कन्ध, ग्रीवा, कूल्हे की सन्धि (Hip zoint), हाथ और पैर की अस्थि-सन्धि आदि प्रभावित होते हैं।

३. प्रभावित संधियाँ शोथयुक्त, लाल, छूने में गर्म, स्पर्शासह्य एवं पीड़ायुक्त होती है। पीड़ा इतनी अधिक होती है कि रोगी के जरा भी हिलने-डुलने से अत्यन्त कष्ट होता है। रोगी कष्ट के कारण अपना दुःख प्रकट करता है। रोगी स्तब्ध-सा होकर चुपचाप पड़ा रहता है।

४. छोटी संधियों में शोथ का आक्रमण बहुत कम पाया जाता है।

५. प्रभावित सन्धि लाल हो जाती है। वह गर्म, पीड़ायुक्त, शोथमय तथा मुलायम होती है, जिससे सन्धि का चालन (Movement) रुक जाता है।

६. रोग-मुक्ति के बाद सन्धियाँ पूर्णरूप से स्वस्थ हो जाती हैं और व्याधि का कोई निशान नहीं रहता है। किन्तु अनेक पुनरावर्तनों के पश्चात् सन्धि में स्तब्धता, चिरकारी शोथ, सम्बद्ध मांसपेशियों का क्षय आदि स्थायी परिणाम हो सकते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट— ○ कभी-कभी आमवातिक छोटी-छोटी गाँठें (Nodules) त्वचा के नीचे बन जाती हैं; विशेषकर हाथ के पिछले भाग पर। ये गाँठें घुटने या कोहिनी अथवा छाती पर भी बनती हैं और शीघ्र ही मिट जाती हैं।

○ उचित चिकित्सा से ज्वर एक-डेढ़ सप्ताह में उतर जाता है और अस्थियों की पीड़ा भी धीरे-धीरे समाप्त हो जाती है। यद्यपि पीड़ा का क्रम एक जोड़ से दूसरे जोड़ में जारी रहता है।

(३) **हृदय-विकृति**—१. रूमैटिक फीवर एक ऐसा रोग है जिसका आक्रमण हृदय पर अवश्य होता है। इसके कीटाणु हृदय-कपाटों में जाकर शोथ उत्पन्न कर देते हैं और हृदयपेशी (Heart muscles) शोथयुक्त हो जाती है। यह विकार इतना अधिक हो जाता है कि इसे उपद्रव न समझ कर रोग का लक्षण मानना ही अधिक उपयुक्त है।

२. बच्चों में कभी-कभी संधियों के लक्षण स्पष्ट नहीं होते हैं, जबकि हृदय के लक्षण स्पष्ट मिलते हैं।

३. इसमें प्रारम्भ से ही हृदय की गति अधिक होती है।

४. परीक्षा करने पर हृदय का डाइलेटेशन स्पष्ट होता है।

५. हृदय एपेक्स की प्रथम ध्वनि क्षीण तथा प्रवाही, संकोचिक मरमर ध्वनि तथा ब्लड-प्रेशर की कमी आदि लक्षण मिलते हैं। R. B. C. के अधिक नष्ट होने से पाण्डुता का लक्षण स्पष्ट होता है।

हृदय-विकृति का अनुमान—स्पन्दन (Palpitation), हृदयशूल, ज्वर की वृद्धि, नाड़ी की गति तीव्र होना, बेचैनी, श्वासकष्ट आदि लक्षणों के आधार पर हृदय-विकृति का अनुमान किया जाता है।

(४) **आमवातिक ग्रन्थियाँ**—(Aschoff's nodules)—फाइब्रस युक्त छोटी-छोटी ग्रन्थियाँ प्रायः शरीर के दोनों पार्श्वों के समस्त स्थानों की अस्थियों तथा टेण्डन्स पर मिलती हैं।

निदान (Diagnosis)—लेबोरेटरी परीक्षण—

१ **रक्त-परीक्षा**—(i) श्वेतकणों (Leucocytosis) की संख्या १० से ३० हजार तक। (ii) सापेक्ष अनुपात में पोलीमार्फस की कुछ अधिकता। (iii) E S. R. हमेशा बढ़ा हुआ मिलता है—यह इसका प्रमुख लक्षण है।

२. **मूत्र-परीक्षा**—मूत्र में एल्बुमिन की उपस्थिति मिलती है।

३. **इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम** (E. C. G.)—एब्नॉर्मल (Abnormal) मिलता है। कार्डाइटिस के चिह्न मिलते हैं।

अन्य निदानात्मक चिह्न—

आयु—५ से १५ वर्ष की होती है।

लिंग—स्त्री-पुरुष दोनों में समान रूप से।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तापक्रम—तापक्रम बढ़ा हुआ मिलता है।

नाड़ी (Pulse)—टेकीकार्डिया (Tachycardia) प्रदर्शित करती है।

टॉन्सिल्स—बढ़े हुए, कंजेस्टिड तथा पूय के चिह्न उपस्थित मिलते हैं। टॉन्सिलर ग्लैण्ड्स बढ़ जाते हैं।

हृदय—७५% केसिस में कार्डाइटिस (Carditis) के लक्षण मिलते हैं।

○ रोगी सन्धि-पीड़ा के कारण घूमने में असमर्थ होता है।

कार्डाइटिस के विशिष्ट चिह्न (Specific signs of carditis)—

१. एपेक्स बीट—हर्ट डाइलेटेशन के कारण हृदग्र स्पन्द (Apex beat) बाहर की ओर हलका-सा मिलता है।

२. हृदयावरणशोथ (Pericarditis)—१०% केसिस में मिलता है। यह शुष्क प्रकार का होता है। किंचित् इफ्यूजन की स्थिति मिलती है। दीर्घ केसिस में मृत्यु-संख्या (Mortality) अधिक होती है। इस अवस्था में E. C. G. परीक्षा सहायक नहीं होती।

३. सीरियल एक्स-रे—हृदय छाया (Cardiac shadow) बढ़ी हुई दर्शाती है।

४. मिट्रल तथा एऑर्टिक (Aortic) डायस्टोनिक मरमर।

५. E. C. G. बदला हुआ मिलता है। P. R. अन्तराल अधिक से अधिक ०.०४ होता है।

६. नाड़ी—साइनस टेकीकार्डिया प्रदर्शित करती है।

७. **फुप्फुस (Lungs)**—१०% केसिस में प्लूरिसी (Pleurisy) तथा २% केसिस में न्यूमोनिया मिलता है।

८. **नर्वस सिस्टम सम्बन्धी चिह्न**—१०% रोगियों में रूमैटिक कोरिया के चिह्न मिलते हैं। यह स्त्रियों में ३ : १ के अनुपात में मिलता है।

९. **त्वचागत परिवर्तन**—रूमैटिक नोड्यूल्स, इरीथिमा नोडोजम, इरीथिमा मार्जीनेटम तथा Rashes आदि परिवर्तन मिलते हैं।

○ कुछ चिकित्सकों के मतानुसार 'सोडा सैलीसिलास' देने से रोगी को यदि लाभ हो जाता है तो उसे रूमैरिक फीवर का ही रोगी समझना चाहिए।

निर्देश—रूमैटिक फीवर एक गम्भीर रोग है। इसकी चिकित्सा तथा निदान में विशेष सावधानी रखनी चाहिए। कम से कम ८-१० वर्ष तक के बच्चे का समय-समय पर चेक-अप करते रहना चाहिए।

○ चिकित्सा न किये गये केसिस में E. S. R. १ मास से लेकर १ वर्ष तक या इससे अधिक समय तक लगातार रूमैटी सक्रियता (Rheumatic activity) का संकेत करते हुए बना रह सकता है।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ सभी केसिस में चिकित्सा के सम्बन्ध में मार्ग-दर्शन करने के निमित्त बारम्बार समय-समय पर नियमित रूप से E. S. R. निकालते रहना चाहिए।

○ रोग की तीव्रावस्था में 'सी' रिएक्टिव प्रोटीन जो एक अवशिष्ट पदार्थ है, सक्रिय रूमैटिक केसिस में रक्त में मिलता है।

○ जीवाणु का पता लगाने के लिए गला-फाहा (Throat swabs) और प्रतिस्ट्रेप्टोलाइसिन (A. S. O.) परीक्षा उपयोगी है।

रूमैटी सक्रियता के चिह्न—१. सन्धिशोथ। २. हृदयावरणशोथ। ३. नये हृदय मर्मर का विकास। ४. रूमैटिक नोड्यूल्स की उपस्थिति। ५. ज्वर के अन्य कारण उपस्थित न रहने पर ताप की वृद्धि। ६. हृदयपात (Cardiac failure)—ये सभी निःसन्देह निरन्तर रूमैटी सक्रियता के चिह्न माने जाते हैं।

○ **तीव्र अवस्था में**—लास्य (Chorea) का चिह्न भी रूमैटी सक्रियता का चिह्न माना जाता है।

○ इस सक्रियता के अन्य कारणों की अनुपस्थिति में बढ़ी हुई E. C. G., P. R. या Q. T. अन्तराल (Interval), हृदय आकार का एक्स-रे सबूत इसके अतिरिक्त चिह्न हैं।

○ 'सी' रिएक्टिव प्रोटीन और बढ़े हुए श्लेष्म प्रोटीन (Mucoproteins) अन्य संकेत हैं। एरीथिमा मार्जीनेटम (Erythema marginatum) सक्रियता का विश्वसनीय चिह्न है।

बालकों में—१. रोग का प्रकोप अधिक होने पर प्रायः निदान नहीं हो पाता है। बालकों में सन्धियों की अपेक्षा पेशियों में विशेषकर उदर, छाती तथा पिंडलियों में भ्रमणशील (Moveable) वेदना होती है।

२. ज्वर प्रायः मध्यम स्वरूप का १०२° फा० तक रहता है।

३. त्वचा में रक्ताभ-नीलाभ विस्फोटों की अधिक उत्पत्ति।

अनुमान—बालकों में—निदान की दृष्टि से टॉन्सिलशोथ का पूर्व इतिहास, शरीर में चल वेदना, कार्डियक इफ्यूजन, वक्षशूल, विश्राम के समय त्वरित नाड़ी, आमवातिक ग्रन्थियाँ, त्वचा विस्फोट तथा हृदयजन्य विकृतियाँ विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। इनकी उपस्थिति मिलने पर रोग का अनुमान किया जाता है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) **सामान्य चिकित्सा** (General treatment)—

१. रूमैटी ज्वर की चिकित्सा अस्पताल में ही भली प्रकार से हो सकती है। क्योंकि वहाँ आवश्यक विशेष अन्वेषणों की सुविधाएँ होती हैं और शय्या-विश्राम (Bead rest) अधिक आसानी से मिल जाता है।

२. इस रोग से ग्रसित सभी बच्चों को शय्या पर ही विश्राम की स्थिति में तब तक रखा जाय, जब तक रूमैटी सक्रियता के लक्षण लुप्त न हो जायें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. आगे बतलाई गयी चिकित्सा में कम से कम ६ से ८ सप्ताह का समय लग सकता है। इसके बाद धीरे-धीरे सक्रियता बढ़ाने की अनुमति दी जा सकती है।

४. रोगी का आहार सामान्य रखना चाहिए।

५. संधियाँ प्रभावित होने के कारण रोगी हिल-डुल नहीं पाता है। परिणामस्वरूप शय्या-व्रण (Bed sore) होने का भय रहता है। अतः इसकी ओर विशेष ध्यान देना आवश्यक होता है।

६. सन्धि पर सेंक आवश्यक होता है। उसे उष्ण रखने का प्रयत्न करना चाहिए। उस पर फलालेन, कपास, ऊन आदि की पट्टी बाँध दें।

७. रोगी को कोष्ठबद्धता से बचाना चाहिए। इसलिए समय-समय पर मृदु विरेचक देना आवश्यक है।

८. हृदय-विकार की स्थिति में रोगी को पौष्टिक तथा बलवर्धक औषधियों की व्यवस्था करनी चाहिए।

९. रूमैटिक ज्वर की चिकित्सा में चिकित्सक का मुख्य ध्यान वेदना कम करना, बेचैनी का निराकरण, व्याधि का शमन, उपद्रवों का प्रतिषेध एवं पुनरावर्तन निरोध के लिए शारीरिक क्षमता बढ़ाने में होता है।

१०. सूखे तौलिये से शरीर को बार-बार पोंछना चाहिए। बन्द कमरे में दिन में २-३ बार कपड़े बदलवायें।

११. आराम की दृष्टि से रोगी के आस-पास बालू की थैली सन्धियों के आस-पास रखी जा सकती है।

१२. प्रतिदिन रोगी की नाड़ी-परीक्षा तथा हृदय-परीक्षा आवश्यक होती है।

१३. मुख, गला एवं नासिका की सफाई आवश्यक है।

१४. रुग्ण सन्धि का सावधानी से अभ्यंग और उसके साथ गति आरम्भ कर दें और तब तक चालू रखें, जब तक उस सन्धि में पूर्णरूप से न गति आ जाये।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

सर्वाधिक वाँछनीय औषधि चिकित्सा 'सैलीसिलेट' के साथ 'कार्टिसोन' या इसका कोई एक व्युत्पन्न (Derivative) है। मुँह से कार्टीसोन की मात्रा निम्न प्रकार दी जाती है—

- ○ १ दिन—३०० मिग्रा०
- ○ २ से ४ दिन—२०० मिग्रा०
- ○ ५ से २१ दिन—१०० मिग्रा०
- ○ २२ से ३५ दिन—७५ मिग्रा०

यदि आवश्यक हो तो ३६वें दिन और इसके बाद ५० मिग्रा०। यदि 'प्रेडनीसोलोन' का प्रयोग किया जाय तो उपर्युक्त मात्राओं का एक-पाचवाँ भाग दिया जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—चिकित्सा के दौरान नमक का प्रयोग बन्द कर दिया जाता है। इसके अतिरिक्त ०·०६ ग्राम प्रति किलो भार की दर से एस्प्रिन दिया जाता है।

○ चिकित्सा तब तक चलायी जाती है जब तक ई० एस० आर० लगातार ३ सप्ताहों में सामान्य न आ जाये।

साथ ही—'प्रोकेन पेनिसिलीन' २ मि० ली० की मात्रा में तीन अन्तः-पेशी इञ्जेक्शन एक दिन के बाद हर दूसरे दिन दिये जाते हैं। इसके बाद रोग-निरोधी पेनिसिलीन लगातार दिया जाता है।

○ उपर्युक्त चिकित्सा करने पर लगभग सभी केसों में २–४ सप्ताह के अन्दर E. S. R सामान्य होने की सम्भावना रहती है।

○ जब सक्रियता के सभी लक्षण लुप्त हो जायें और E. S. R. सामान्य हो जाये तब पूर्णरूप से बिना किसी रुकावट के बालक को खेल-कूद में सक्रिय होने की अनुमति दे दी जाये।

नोट—'इंगलैण्ड' में बालक की चिकित्सा (हॉस्पिटल में भर्ती कराकर) उपरोक्त क्रम से ही की जाती है।

○ चिकित्सा जितनी ही जल्दी की जाती है, उतनी ही अधिक स्थायी क्षति से बचा जा सकता है। दुर्भाग्यवश प्रायः यही होता है कि जिस समय प्रथमतः चिकित्सा कराने की ओर ध्यान दिया जाता है, उस समय तक अपरावर्ती हृदय क्षति (Irreversible heart damage) हो चुकी होती है। ऐसे केसों में अधिक से अधिक इतना ही किया जा सकता है कि यह क्षति आगे और अधिक न बढ़ने पाये। साथ ही—

१. हृदयपात की चिकित्सा—डिजीटेलिस द्वारा की जाती है।

२. न्यूमोनिया की चिकित्सा—पेनिसिलीन द्वारा की जाती है।

रूमैटिक फीवर में प्रयुक्त इंडियन चिकित्सा-क्रम—

१. ℞ सोडा सैलीसिलास (Soda salicylas)

प्रारम्भिक मात्रा—९००-१२०० मि० ग्रा० की प्रथम ४ मात्राएँ प्रति ३ घण्टे पर। तत्पश्चात्—४ से ६ घण्टे के अन्तर पर।

○ 'वमन' 'अतिसार' 'कर्णनाद' के लक्षण उत्पन्न होने पर—

सोडा सैलीसिलास	९०० मिग्रा०
सोडा बाइकार्ब	६०० मिग्रा०
पोटाश साइट्रास	६०० मिग्रा०
टिं० बेलाडोना	५ मिनिम
टिं० कॉर्ड	१० मिनिम
सीरप जिंजर	१ ड्राम
एक्वा क्लोरोफार्म	३० मिली०
	१ मात्रा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऐसी १ मात्रा प्रथम ३ घण्टे पर; दूसरे दिन ४ घण्टे के अन्तर पर और तीसरे दिन ६ घण्टे के अन्तर पर दें :

नोट—यदि इससे पूर्व विरेचन न दिया गया हो तो उपरोक्त मिक्श्चर में सोडा सल्फ १८०० मिग्रा० अथवा केसकेरा सेगरेडा १५-३० बूँद मिलाकर दें।

○ बच्चों में—उपरोक्त की आधी मात्रा से भी कम दें।

ज्वर उतर जाने के बाद—६०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार १ सप्ताह तक सोडा सैलीसिलास।

सोडा सैलीसिलास के सहन न होने पर—एस्प्रिन का प्रयोग करें। इसके लिए—एस्प्रिन सोल्युबल, सोलास्पिन (Solaspin)

मात्रा—१०० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर। पूर्ण मात्रा ६-८ मात्राओं में विभक्त कर दें।

रोग का पुनरावर्तन होने पर—क्विनीन सैलीसिलेट ३००-६०० मि० ग्रा० दिन में ४ बार।

नोट—यह बच्चों में भी अधिक उपयुक्त है।

विषाक्त लक्षण होने पर—१. नीबू का रस अथवा ग्लूकोज+पोटाशियम साइट्रेट जल में मिलाकर दें।

२. विटामिन-सी (सीलिन : ग्लैक्सो) ५०० मि० ग्रा० (१ गोली) दिन में १ बार।

३. प्रेडनीसोलोन (Prednisolone) ४ गोली (५ मिग्रा० प्रति टेबलेट) दिन में ४ बार ४ दिन तक।

तत्पश्चात्—२ गोली दिन में ४ बार ३ सप्ताह तक।

४. फेनोक्सीमेथिल पेनिसिलीन—१३० मि० ग्रा० दिन में ४ बार १० दिनों तक।

अथवा—'एम्पीसिलीन' १ कैपसूल (२५० मिग्रा०) दिन में ४ बार।

नोट—जिन्हें सोडा सैलीसिलास कार्यक्षम न हो—

℞ इस्जीपायरिन (Esgipyrine) या बूटाजोलीडीन (Butazolidine)

मात्रा—३ से ५ मि० ली० मांसपेशीगत नित्य या तीसरे दिन।

○ तीव्रता कम होने पर—१ गोली दिन में ३-४ बार १ सप्ताह तक।

नोट—इसके स्थान पर डेकापाइरीन (Decapyrine), नोवाल्जिन इन्जे० I/V अथवा I/M ५ मि० ली० की मात्रा में दें।

चेतावनी—रूमैटिक फीवर में हृदय विकृति होने पर सोडियम सैलीसिलेट अथवा सोडियम बाइ कार्बोनेट का प्रयोग न करें।

रूमैटिक फीवर की विशिष्ट चिकित्सा-व्यवस्था—

रोगी को ३-६ सप्ताह तक शय्या पर विश्राम करायें। हृदयशोथ (Carditis) की स्थिति में ६ से १२ सप्ताह तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

℞ डिस्प्रिन (Disprin) अथवा माइक्रोपाइरिन (Micropyrine) अथवा एस्प्रिन टेबलेट

मात्रा—१००-१२० मिग्रा०/प्रतिकिलो भार पर विभाजित मात्रा में।

℞ एलूड्रोक्स (Aludrox) या जेलूसिल (Gelusil)

मात्रा—१ चम्मच प्रति एस्प्रिन की मात्रा के साथ। छोटी मात्रा में (२-३ सप्ताह तक) तब तक जारी रखें जब तक सभी लक्षण गायब न हो जायें और E. S. R. सामान्य न हो जाये।

यदि ८-१० दिन तक एस्प्रिन चिकित्सा से लाभ न मिले तब—

℞ प्रेडनीसोलोन (Prednisolone)

मात्रा—२ मिग्रा०/प्रतिकिलो शरीर भार पर प्रतिदिन ३-६ सप्ताह तक।

एण्टीबायोटिक संक्रमण की सम्भावना में निरोध हेतु—

इञ्जे० प्रोकेन पेनिसिलीन (Inj. Procain penicillin)

मात्रा—४ लाख यूनिट I/M दिन में १ बार १० दिन तक।

यदि रोगी 'पेनिसिलीन' के प्रति सेन्सिटिव हो तो—

℞ इरीथ्रोमाइसिन (Erythromycin)

मात्रा—५० मिग्रा०/प्रतिकिलो शरीर भार पर ४ विभाजित मात्राओं में।

मल्टी-विटामिन सीरप (Multi-vitamin syrup)

मात्रा—१-२ चम्मच दिन में १ बार। साथ ही—पौष्टिक आहार दें।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)

(१) **टॉन्सिलाइटिस** (Tonsillitis)—

℞ एम्पीसिलीन (Penbritin, Ampelin)

मात्रा—१ कैपसूल (२५० मि० ग्रा०) दिन में ४ बार।

अथवा—फेनोक्सी मेथिल पेनिसिलीन (Phenoxy-methyl penicillin)

मात्रा—१३० मि० ग्रा० दिन में ४ बार १० दिनों तक।

○ यदि मुख द्वारा औषधि देना सम्भव न हो तो—

℞ बेञ्जाइल पेनिसिलीन (Benzyl penicillin)

मात्रा—३०० मि० ग्रा० (५००,००० यूनिट) दिन में २ बार I/M ७ दिनों तक।

तत्पश्चात्—मुख द्वारा एम्पीसिलीन अथवा फीनोक्सी मेथिल पेलिसिलीन की मात्रा घटाते हुए ३ दिन तक।

जो रोगी पेनिसिलीन के प्रति सेंसिटिव हो—

℞ इरीथ्रोमाइसिन (Erythromycin)

मात्रा—१ कैपसूल (२५० मि० ग्रा०) दिन में ४ बार १० दिनों तक।

(२) **सन्धियों की पीड़ा** (Joints pain)—

१. प्रभावित संधि को रुई से ढँका रखें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. डोवर्स पाउडर ३०० मि० ग्रा० दें।

३. पैरासिटामोल २५० मि० ग्रा०+एनाल्जिन २५० मि० ग्रा०।

(३) कोरिया (Chorea)—

१. सैलीसिलेट थेरापी चालू रखें।

२. फीनोबार्बीटोन—१ गोली (६० मि० ग्रा०) दिन में २-३ बार दें।

(४) अनीमिया (Anaemia)—

फैरस सल्फेट (Ferrous sulphate)

मात्रा—२०० मि० ग्रा० दिन में ३ बार भोजनोपरान्त।

साथ ही—विटामिन-सी ५०० मि० ग्रा० नित्य १ बार।

○ रोग की तीव्रता कम होने पर अधिक रक्ताल्पता के लिए—इञ्जे० लिवर एक्स्ट्रेक्ट का प्रयोग करें। साथ में—फ़ेरीलेक्स, फैरो-बी लिवर दें।

(५) कंजेस्टिव कार्डियक फेल्योर (C. C. E.)—इसकी चिकित्सा 'डायोरेटिक' तथा 'डिजीटेलिस' से की जाती है।

○ बालकों में डिजीटेलिस की मात्रा प्रतिदिन के हिसाब से निम्न आधार पर कलकुलेट करनी चाहिए—०.०५ मि० ग्रा०/प्रतिकिलो शरीर भार पर।

लैसिक्स (Lasix)—१ गोली दिन में १ बार प्रातः।

बालकों में—$\frac{१}{२}$ एक मात्रा।

○ चिकित्सा C. C. F. के समान करें।

(६) रूमैटिक कार्डाइटिस (Rheumatic carditis)—

टेबलेट एस्प्रिन—उपरोक्तानुसार।

यदि एस्प्रिन से लाभ न हो तो—प्रेडनीसोलोन (Prednisolone)

मात्रा—२ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर नित्य ३-६ सप्ताह तक।

एण्टीबायोटिक (Antibiotic)—उपरोक्तानुसार।

विटामिन A. B. C+प्रोटीन्स के योग, आयरन आदि।

C. C. F. की चिकित्सा कार्डियक फेल्योर की भाँति करें।

रोग-मुक्ति के पश्चात् की चिकित्सा—

○ रोग ठीक होने के पश्चात् ताजे फल, दूध, मक्खन, मांसरस, अण्डा आदि पोषक एवं बलकारक आहार देना चाहिए।

○ 'स्टर्न सिरप' एवं अन्य बलकारक पेटेण्ट योगों का व्यवहार किया जा सकता है।

रूमैटिक फीवर से बचाव (Prophylaxis of rheumatic fever)

℞ इञ्जे० बेञ्जाथीन पेनिसिलीन (Penidure L. A_{12})

मात्रा—सप्ताह में १ बार २० वर्ष की आयु तक।

ओरासिन (Oracin) अर्थात् पेनिसिलीन 'बी' ६५ मि० ग्रा० दिन में २ बार जीवन-पर्यन्त।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि पेनिसिलीन के प्रति रोगी सेंसिटिव हो तो—

℞ इरीथ्रोसिन (Erythrocin) २५० मि० ग्रा० दिन में २ बार।

अथवा—ओरीसूल (Orisul) १ गोली नित्य।

अथवा—सल्फाडायजीन टेबलेट (Sulphadiazine tab.)

मात्रा—१ गोली (०.५ ग्राम) दिन में २ बार।

रूमैटिक फीवर की मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१. ℞ डेल्टाकॉर्ट्रिल १ गोली + सीलिन १०० मि० ग्रा० १ गोली/१ मात्रा। ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार।

२. ℞ इस्जीपायरीन १ गोली + सक्सी सेलील १ गोली + विटामिन 'सी' १०० मि० ग्रा० की १ गोली + वीवर्स पाउडर ९०० मि० ग्रा०/१ मात्रा। ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार गरम जल से।

३. पुराने रोग में—बूटाकॉर्ट (Buta-cort) (इण्डोफार्मा) १ गोली दिन में ३-४ बार।

४. बहुत तीव्र दर्द में—प्रभावित अंग पर बी० आई० फ्लोजिस्टीन प्लास्टर लगायें। अथवा 'थर्मोजिन वूल' लगायें। साथ ही—केनाकॉर्ट या इस्जीपायरीन १-२ गोली दिन में ३-४ बार दें।

५. ℞ इस्जीपायरिन १ गोली + न्यूरोबियान फोर्ट १ गोली + पैरासिटामोल १ गोली/१ मात्रा। ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर दें।

○ सन्धिशोथ, ज्वर, बेचैनी, दर्द एवं अनिद्रा में उपयोगी।

६. ℞ बूटाकॉर्ट इण्डोन (इण्डो फार्मा) १ गोली + रेडॉक्सॉन फोर्ट (रोहे) १ गोली/१ मात्रा। ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार गरम जल से।

○ सन्धिशोथ, आमवात, जोड़ों के दर्द में परम लाभकारी।

७. ℞ इस्जीपायरिन (सिबा-गैगी) १ गोली + होस्टाकार्टिन (हैक्स्ट) १ गोली + सीलिन १०० मि० ग्रा० की १ गोली/१ मात्रा। ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।

○ आमवात, जोड़ों के दर्द, जोड़ों के पथरा जाने आदि में लाभकारी।

८. ℞ जॉलैण्डिन (सुहृद गैगी) २०० मि० ग्रा० की १ गोली + डेल्टाकॉर्ट्रिल (फाइजर) १ गोली + न्यूरोबियॉन प्लेन (मर्क) १ गोली/१ मात्रा। ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार जल से।

साथ ही—न्यूरोबियॉन फोर्ट ½-१ गोली और दें।

९. ℞ केनाकॉर्ट १ गोली + सीलिन फोर्ट ½ गोली/१ मात्रा। ऐसी एक मात्रा दिन में २ बार।

○ रूमैटिक का सख्त दर्द, शोथ तथा जोड़ों के पथरा जाने में।

रूमैटिक फीवर में प्रयुक्त होने वाली अन्य पेटेण्ट नवीनतम औषधियाँ—

टेबलेट-कैपसूल—बूफेक्स, इन्फ्लेवन, सुगाफेन, बूटा प्रोक्सीवॉन कैपसूल, E B U–400 टेबलेट, फेनलोंग कै०, टे० इबूजेसिक, इबूजेसिक ४०० और

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६००, टे० इवूसिन्थ फोर्ट-४००, इवूसिन्थ ६००, इनोविड कैं०, मेफरिल कैप-सूल, नेपरिन टे०, ऑक्साल्जिन, ऑक्सीरिन, ऑक्सीट्रायक्टिन, Poal tablet, टे० प्रोस्टीजेसिक।

इञ्जेक्शन—इस्जीपायरीन, इफकोलिन सोल्युबल इञ्जेक्शन (ग्लैक्सो), कोण्ट्रामीन, डेल्टा कॉर्ट्रिल, पाइरीसाल, बूटारीन, मेक्राबिन, यूरोक्सीन, रूमीनोल, लेकोलान। □

संक्रामक रोग 7/23

विसूचिका/हैजा
(Cholera)

पर्याय—हैजा, विसूचिका, कॉलरा, कालातिसार, विसूची, दस्त एवं वमन का एक साथ होना, फ्लो ऑफ बाइल (Flow of bile)।

परिचय—It is an acute infection of the small intestine characterised by massive diarrhoea with rice waterly stool, vomiting and severe dehydration.

○ यह छोटी आँत का एक तीव्र संक्रमण है, जिसमें चावल के धोवन के समान सफेद रंग के पतले दस्त, वमन, हाथ-पैर और पेशियों की ऐंठन, मूत्राघात तथा निपात आदि लक्षण मिलते हैं; कॉलरा या हैजा कहलाता है। इसमें शरीर के अन्दर जल और लवण की कमी हो जाती है।

○ यह विसूचिका जीवाणु (V. cholera) के विष से उत्पन्न होने वाला अत्यन्त प्राणघातक तथा तीव्र औपसर्गिक रोग है। इसका प्रसार महामारी के रूप में होता है।

कारण (Etiology)—यह 'विब्रियो कॉलेरी' (Vibrio cholerae) नामक जीवाणु द्वारा उत्पन्न होता है। यह अर्ध विराम या कामा (') की आकृति के होते हैं। इस जीवाणु की विशेषता यह है कि यह मल और वमन में ही मिलता है, रक्त में कभी नहीं।

सहायक कारण—१. इस रोग के प्रसार में मक्खियाँ महत्त्वपूर्ण कारण होती हैं। मक्खियाँ किसी ऐसे भोजन या विष्टा पर बैठती हैं, जिनमें उक्त जीवाणु पहले से ही उपस्थित रहते हैं, जिससे उनके पैरों तथा पंखों पर जीवाणु चिपक जाते हैं। फिर जब यह किसी शुद्ध खाद्य पदार्थ या भोजन आदि पर बैठती हैं तो वह संक्रमित हो जाता है। जब इस संक्रमित भोजन का कोई स्वस्थ व्यक्ति सेवन का करता है, तो उसकी आँतों में पहुँच कर 'विब्रियो कालेरी' रोग उत्पन्न कर विभिन्न लक्षण उत्पन्न करता है। इस प्रकार से हजारों व्यक्ति हैजे के शिकार हो जाते हैं। इसीलिए सरकार की ओर से बड़े-बड़े मेलों एवं

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुम्भ आदि पर्वों पर आने वाले व्यक्तियों को हैजे के टीके लगाने का प्रबन्ध किया जाता है।

२. इस रोग की उत्पत्ति में स्थान-विशेष एक सहायक कारण होता है।

३. आर्द्र जलवायु, उष्णता, आनूपदेश तथा अधिक वर्षा कॉलरा के प्रसार में सहायक होते हैं।

४. विभिन्न कारणों से उत्पन्न जठराम्ल की हीनता तथा बार-बार विरेचक औषधियों के प्रयोग से पाचन-संस्थान की दुर्बलता इस रोग के आक्रमण में सहायक होती है।

रोग-प्रसार—जिन स्थानों पर खुले जलाशयों का संचित जल पीने में प्रयुक्त होता है, वहाँ इसका प्रसार अधिक होता है। इसी कारण बड़े-बड़े मेलों के बाद वहाँ हैजे का आक्रमण प्रायः हुआ करता है।

५. बर्फ, आइस्क्रीम या इसी प्रकार के शीत पेयों द्वारा इसका प्रसार आसानी से हो जाता है।

६. रोग-मुक्ति के पश्चात् पर्याप्त समय तक 'विब्रियो कॉलेरी' रोगी के पित्ताशय में संचित हो सकते हैं, जहाँ से ये मल में पहुँच कर रोग का प्रसार कर सकते हैं।

७. हैजे में रोगक्षमता (Immunity) अत्यन्त अस्थायी होती है। अतः एक ही व्यक्ति अनेक बार इस रोग से पीड़ित हो सकता है।

○ प्रायः प्रति पाँचवें-छठे वर्ष इसका जानपदिक (Epidemic) प्रकोप होता रहता है और विशाल जनसमुदाय एकत्रित होने के बाद व्याधि का स्थानीय प्रकोप तथा विभिन्न जिलों में इसका प्रसार आसानी से हो जाता है।

○ कलकत्ता, बम्बई आदि बड़े-बड़े शहरों में यह रोग एकाकी रूप में सदैव विद्यमान रहता है। इन स्थानों पर हजारों संक्रामक वाहक भी फिरते रहते हैं। उनके मल से अथवा रोगियों के मल से इन स्थानों में ग्रीष्म तथा वर्षा ऋतु में कभी-कभी यह रोग महामारी के रूप में फैल जाता है और वहाँ से निकट तथा दूरवर्ती स्थानों तक इसका प्रसार हो जाता है।

○ अब इस बीमारी का स्वरूप कुछ बदल गया है। यद्यपि हैजा आज-कल भी होता है, किन्तु इसकी चपेट में अब इतने अधिक व्यक्ति नहीं आते हैं जितने आज से लगभग ३५-४० वर्षों पहले आया करते थे। हमारे राज्यों के स्वास्थ्य-विभाग (Medical department) संक्रामक रोगों पर कड़ी नजर रखे हुए हैं और जहाँ किसी नगर या ग्राम आदि में यह रोग शुरू होता है, तत्काल स्वास्थ्य-विभाग के कर्मचारी वहाँ पहुँच कर तुरन्त इसकी रोकथाम कर देते हैं। इतना होने पर भी कभी-कभी इसका सामूहिक प्रकोप हो ही जाता है और प्रति वर्ष हजारों व्यक्ति चिकित्सा के अभाव में कालकवलित हो जाते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संचय-काल (Incubation period)—कुछ घण्टों से सप्ताहों तक।

आक्रमण—अकस्मात्।

लक्षण (Symptoms)—विसूचिका में सामान्य रूप से निम्न लक्षण मिलते हैं—१. वमन एवं अतिसार, २. प्यास की अधिकता, ३. शूल एवं भ्रम, ४. हाथ-पैर टूटना, ५. जम्भाई एवं दाह, ६. वेदनायुक्त आकृति, ७. ओष्ठ एवं नखों का पीलापन, ८. बेचैनी, ९. समस्त शरीर में नीलापन तथा झुर्रियाँ, १०. माँड़ के समान सफेद रंग के पतले दस्त, ११. अतिसार की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक दुर्बलता, १२. नाड़ी-क्षीणता, १३. अँगुलियों में पानी से भींगने के समान की सिकुड़न, १४. आँखों का गड्ढों में धँस जाना, १५. मूत्र की कमी या पेशाब का बन्द हो जाना, १६. त्वचा का शीतल होना तथा १७. पिंडलियों में अद्भुत सनसनाहट एवं ऐंठन।

रोग की अवस्थाएँ (Stages)—इसमें मिलने वाले लक्षणों तथा चिह्नों की तीन अवस्थाएँ होती हैं—

१. परित्याग की अवस्था (Stage of evacuation)।

२. निर्जलीभवन (Dehydration) और निपात (Collapse) की अवस्था।

३. प्रतिक्रिया की अवस्था (Stage of reaction)।

(१) परित्याग की अवस्था (Stage of evacuation)—

१. अतिसार (Diarrhoea)—इसे 'आक्रमणावस्था' अथवा 'अतिसारावस्था' भी कहते हैं। रोग का प्रारम्भ अतिसार (Diarrhoea) से होता है और पानी के समान पतले दस्त आने लगते हैं। पहले पीले रंग के फिर सफेद रंग के दस्त बार-बार होते हैं। मल में श्लैष्मिककला के परमाणु, इपीथेलिया, म्यूकस, असंख्य जीवाणु, लाल कण और श्वेत कण होते हैं। यह सफेदी लिये १०-१५ मिनट के अन्तर पर होने लगते हैं।

○ दस्त प्रायः चावल के माँड़ जैसे होते हैं। दस्त होते समय रोगी को उदर में किसी प्रकार की पीड़ा नहीं होती है। मल में एक विशेष प्रकार की गन्ध आती है। दस्तों की संख्या बहुत बढ़ जाती है। पहले दो-तीन दस्तों में मल आता है फिर केवल सफेद रंग के पानी जैसे पतले दस्त आने लगते हैं।

○ पेट में हलकी गुड़गुड़ाहट एवं आध्मान जैसा अनुभव होता है। किन्तु मरोड़, कुंथन अथवा शूल का अनुभव नहीं होता है।

○ मल में जल की मात्रा अधिक होती है तथा उसको रखने पर उसमें लच्छेदार तलछट और ऊपर स्वच्छ पानी की तह जम जाती है।

○ मल की प्रतिक्रिया क्षारीय तथा स्पेसिफिक ग्रेविटी १००६ से १०१२ तक होती है। सूक्ष्मदर्शक यन्त्र से परीक्षा करने पर मल में 'विब्रियो कॉलेरी', रक्तकण, श्वेतकण, इपीथैलियल सैल्स आदि मिलते हैं।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ दस्त के बाद वमन प्रारम्भ होता है। अन्त में अत्यधिक दुर्बलता के कारण रोगी उठने-बैठने में लाचार हो जाता है और वह शय्या पर ही पड़े-पड़े मल त्याग कर देता है। दस्तों की मात्रा १०-१५ लिटर तक हो सकती है।

२. **वमन** (Vomiting)—अतिसार होने के तत्काल बाद रोगी को वमन प्रारम्भ हो जाता है। वमन में पहले अन्न का अंश, आमाशयिक रस, तत्पश्चात् क्षुद्रान्त्र के पित्त और द्रव निकलते हैं। बाद में वमन भी पानी की तरह पतला और सफेद आने लगता है जो चावल के माँड़ जैसे सफेद रंग के होते हैं। वमन मात्रा में अत्यधिक और निरन्तर होते हैं।

○ इस प्रकार नीचे से (दस्त) एवं ऊपर से (वमन) २४ घण्टे के अन्दर कई पाइण्ट और कभी-कभी १५-२० लीटर तक जल शरीर से निकल जाता है। २०% रोगियों में वमन अनुपस्थित रहता है।

३. **पिपासा**—शरीर से अधिक मात्रा में जल निकल जाने के कारण रोगी को अत्यधिक प्यास लगती है। उसका मुँह निरन्तर सूखता रहता है। वह पानी के अतिरिक्त किसी अन्य वस्तु की इच्छा व्यक्त नहीं करता।

४. **शरीर-शिथिलता**—शरीर से अत्यधिक जल निकल जाने के कारण रोगी थोड़े ही समय में अधिक शिथिल हो जाता है।

५. **हाथ-पाँव तथा पेट की मांसपेशियों में ऐंठन** (Cramps)—जल के साथ बहुत-सा लवण, कैल्शियम तथा क्षारों के शरीर से निकल जाने से नाड़ियों (Nerves) पर दुष्प्रभाव पड़ने से हाथ-पाँव तथा पिंडलियों में स्तम्भ होने लगता है। पेट की मांसपेशियों में भी ऐंठन होती है।

६. **तापक्रम** (Temperature)—जैसे-जैसे अतिसार और वमन की संख्या बढ़ती जाती है, रोगी का टेम्परेचर अवसामान्य (Subnormal) होता जाता है।

७ **अल्पमूत्रता तथा मूत्राघात**—कुछ समय के पश्चात् रोगी को मूत्र कम आने लगता है और अन्त में मूत्र आना बिलकुल बन्द हो जाता है। मूत्राघात होकर रक्त में यूरिया की मात्रा बढ़ जाती है। साथ ही मूत्रविषमयता (Uraemia) के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

८. **पित्त** (Bile) **की अनुपस्थिति**—प्रायः सभी रोगियों में वमन तथा दस्तों में बाइल की अनुपस्थिति मिलती है। इसके अतिरिक्त रोगी की जीभ शुष्क हो जाती है; ब्लड-प्रेशर काफी कम हो जाता है; शरीर से पसीना आता है तथा मूत्र में प्रायः एल्बुमिन की उपस्थिति मिलती है।

नोट—यह अवस्था ५ से १० घण्टे तक रहती है।

(२) **निर्जलीभवन** (Dehydration) **और निपात** (Collapse) **की अवस्था**—इसे शीतावस्था (Algid stage) भी कहते हैं। अतिसार प्रारम्भ होने के ५-६ घण्टे बाद प्रायः १०-१२ दस्त तथा ४-५ वमन होने के बाद यह

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थिति आरम्भ होती है। कभी-कभी यह स्थिति २४ घण्टे बाद प्रारम्भ होती है। इसमें निम्न लक्षण मिलते हैं—

१. कभी-कभी एक बार की मल-प्रवृत्ति के बाद ही जीवाणु-विषमयता के कारण रोगी में निपात के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

२. वमन और दस्तों की तीव्रता बढ़ जाती है।

३. रोगी पूर्णतया अशक्त हो जाता है।

४. शरीर से पसीना निकलने के कारण रोगी का तापक्रम अवसामान्य (Subnormal) अर्थात् ९५° फा० से नीचे हो जाता है।

५. हाथ-पैर की त्वचा सिकुड़ कर सिलवटदार (Washer woman hands) हो जाती है और त्वचा ठंडी रहती है।

६. आँखें अन्दर को धँस जाती हैं।

७. शरीर में जलीयांश की कमी होने से हाथ-पैर तथा अन्य अंगों में ऐंठन बढ़ जाती है।

८. होष्ठ, नख और दाँत नीले पड़ जाते हैं और कपोल पिचक जाते हैं।

९. त्वचा नीली और शुष्क हो जाती है।

१०. आवाज क्षीण तथा नाड़ी मन्द, अनियमित व अस्पष्ट होती है।

११. रोगी को असाधारण बेचैनी होती है।

१२. रोग की तीव्रता में हृदय की क्रिया क्षीण तथा अनियमित होती है।

१३. रक्त गाढ़ा होने के कारण रक्त-संचार ठीक नहीं होता है, जिससे मूत्राघात तथा मूत्रविषमयता बढ़ जाती है।

१४. रोगी का ब्लड-प्रेशर कम हो जाता है।

१५. जिह्वा और होष्ठ शुष्क होते हैं।

१६. श्वास की गति तीव्र हो जाती है।

१७. सोडियम और पोटाशियम क्लोराइड की हानि के फलस्वरूप हाथ-पैर की मांसपेशियों में तीव्रतर पीड़ा होती है। रोगी को अपने हाथ-पैर कटने जैसे मालूम देते हैं।

१८. हृदय शब्द मन्द हो जाता है। रक्तभार गिर कर ७० मि० मी० के लगभग हो जाता है।

१९. शरीर के सभी अंग सूख कर पिचक-से जाते हैं। इसलिए रोगी का चेहरा कुम्हला जाता है और नाक पतली पड़ जाती है।

२०. यद्यपि रोगी की त्वचा ठंडी प्रतीत होती है, परन्तु उसे अन्दर से गर्मी लगती है।

२१. रोगी के बगल का टेम्परेचर ९५° फा० होता है, पर गुदा में १०१° फा० के लगभग मिलता है। तापक्रम जितना ही बढ़ता जाता है, रोग उतना ही उग्ररूप धारण करता जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२२. रोगी अन्त तक चेतन तथा चिन्तातुर रहता है।

२३. निपात की अन्तिम अवस्था में शरीर में जलीयांश की कमी होने के कारण वमन तथा दस्तों की मात्रा कम हो जाती है।

२४. चूंकि इस रोग में होश अन्त तक रहता है, पर यूरीमिया की प्रबलता होने पर मूर्च्छा (Stupor) का लक्षण उत्पन्न हो जाता है।

२५. यदि रोगी की उपयुक्त चिकित्सा न की गई तो हृदय और रक्तवाहिनियों का बल क्षीण हो जाने से तथा गुर्दों के फेल हो जाने से 'एसीडोसिस' तथा 'यूरीमिया' के कारण रोगी की मृत्यु हो जाती है।

नोट—जल की न्यूनता से मरने पर शरीर अधिक अकड़ जाता है।

अवस्था का समय—यह अवस्था ५ घण्टे से लेकर २४ घण्टे तक रह सकती है।

(३) प्रतिक्रिया की अवस्था (Stage of reaction)—जो रोगी स्तब्धता के फलस्वरूप बच जाते हैं, उनमें प्रतिक्रिया की अवस्था प्रारम्भ हो जाती है।

इस अवस्था में—

१. वमन तथा दस्तों की संख्या तथा मात्रा क्रमशः कम होने लगती है। दस्तों का रंग भी सामान्य मल की भाँति होने लगता है।

२. धीरे-धीरे नाड़ी की गति सामान्य होने लगती है।

३. ठंडा पसीना आना बन्द होकर त्वचा गरम होने लगती है।

४. रक्तभार (B. P.) बढ़ने लगता है।

५. रोगी को मूत्र आने लगता है और उसकी मात्रा क्रमशः बढ़ती जाती है।

६. मल में पित्त का अंश आने लगता है। शौच गाढ़ा और पीले रंग का होता है।

७. ५–६ दिन के भीतर रोगी पूर्ण स्वस्थ हो जाता है।

८. रोगी का वर्ण भी बदल जाता है और उसे निद्रा आने लगती है।

९. हृदय का बल बढ़ने लगता है।

१०. जल का आंत्र से आंशिक प्रचूषण होने के कारण रोगी की बेचैनी कम हो जाती है।

उपरोक्त अवस्थाओं में क्रमशः सुधार होकर रोगी स्वस्थ हो जाता है, किन्तु इसके विपरीत कुछ रोगियों में अवसाद के अधिक समय तक रहने से प्रतिक्रिया तीव्र स्वरूप की होती है, जिससे ज्वर कभी-कभी चरम सीमा तक पहुँच जाता है। रक्तप्रवाह चालू होने के कारण आन्त्र-स्थित विष के रक्त में प्रविष्ट होने से तीव्र विषमयता उत्पन्न हो जाती है। जिससे मूत्रविषमयता, मूत्राघात, प्रलाप,

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूर्च्छा तथा परम ज्वर (Hyperpyrexia) आदि अति गम्भीर लक्षण उत्पन्न होकर रोगी की मृत्यु हो जाती है।

○ इस अवस्था में रोगी की मृत्यु निपात की अवस्था में उचित व्यवस्था न करने तथा मूत्रविषमयता अथवा परम ज्वर की उचित चिकित्सा न करने से ही होती है। मृत्यु संख्या १२% या १५% से अधिक नहीं होती है।

कॉलरा के प्रकार (Kinds of cholera)—प्राय: हैजा ४ प्रकार का मिलता है—

१. प्रवाहिका प्रधान (Choleric diarrhoea)—रोग का प्रारम्भ प्रवाहिका से होता है। इसमें बेचैनी, सफेद रंग के पतले दस्त तथा हलका ज्वर रहता है।

नोट—इस प्रकार की विसूचिका में हाथ-पैर की पेशियों में ऐंठन, मूत्राघात आदि गम्भीर लक्षण नहीं होते हैं।

२. स्थानपदिक सौम्य विसूचिका—इस प्रकार की विसूचिका में सभी लक्षण सौम्य प्रकार के होते हैं। लम्बे समय तक मल का रंग पीला ही बना रहता है।

३. तीव्र विसूचिका—(Malignant cholera) उपरोक्त वर्णित सभी लक्षण तीव्र विसूचिका में भी मिलते हैं।

४. शुष्क विसूचिका (Dry cholera)—विसूचिका का यह सबसे तीव्र प्रकार होता है। इसमें प्रारम्भ से ही तीव्र विषमयता के लक्षण मिलते हैं; जब कि वमन तथा दस्तों की मात्रा नाममात्र की होती है। इसके लक्षण गम्भीर निपात के होते हैं। रोगी का पेट फूल जाता है।

○ यह विसूचिका का घातक प्रकार है। इस रोग का विष इतना प्रबल होता है कि वमन-विरेचन प्रारम्भ होने के पूर्व ही रोगी की मृत्यु हो जाती है।

○ इस प्रकार के कॉलरा में प्राय: ३–४ घण्टे में ही मृत्यु हो जाती है।

कॉलरा के सम्बन्ध में आवश्यक बातें—

१. कॉलरा में जल और लवण की बहुत कमी पड़ जाती है। रक्त का विशिष्ट गुरुत्व १०५५ से बढ़कर १०६५ या १०७० तक पहुँच जाता है। विशिष्ट गुरुत्व १ डि० बढ़ने का मतलब होता है कि ६० किलो शरीर भार वाले व्यक्ति में १५० मि० ली० जल की कमी हो जाना; अर्थात् इतना जल उस व्यक्ति के शरीर से निकल गया है। वास्तव में इससे कहीं अधिक जल शरीर से निकल जाता है।

२. कॉलरा के रोगी की नाड़ी कलाई पर टटोलने पर प्रतीत नहीं होती। यह कनपटी पर या कोहिनी के मोड़ के सामने टटोलने पर प्रतीत होती है।

३. ब्लड-प्रेशर ७० मि० मी० से कम हो जाता है। इस समय गुदा का तापक्रम १०५° फा० तक होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. इस रोग में रोगी को अत्यधिक मात्रा में उल्टियाँ होती हैं। उसमें तरल पदार्थ की मात्रा अधिक होती है। बिना जी मिचलाये तथा बिना प्रयत्न के ही रोगी को उल्टियाँ होती हैं। यह कुछ ही मिनटों के अन्तर पर होती है।

निदान (Diagnosis)—उपरोक्त लक्षणों के आधार पर रोग-निदान में कोई कठिनाई नहीं होती।

परीक्षा (Investigation)—

१. **मल-परीक्षा (Stool test)**—प्राय: रोगी के मल की परीक्षा करने पर कॉलेरा विब्रियो की उपस्थिति मिलती है।

○ कल्चर करने पर रोग का निदान असंदिग्ध रूप में हो जाता है।

२. **रक्त-परीक्षा (Blood test)**—इस परीक्षा में निम्न उपलब्धियाँ मिलती हैं—

(i) W. B. C. की अधिकता—१०-१५ सहस्त्र प्रति घन मि० मी० तथा मोनोसाइट्स की संख्या-वृद्धि।

(ii) P. C. V. बढ़ा हुआ मिलता है।

(iii) रक्त की स्पेसिफ़िक ग्रेविटी बढ़ी हुई मिलती है।

(iii) प्लाज्मा प्रोटीन बढ़ा हुआ मिलता है। प्लाज्मा बाइ कार्बोनेट कम मिलता है।

(v) आर्टीरियल पी० एच० कम रहता है।

(vi) प्लाज्मा सोडियम नार्मल तथा प्लाज्मा पोटेशियम मध्यम स्वरूप का होता है।

(vii) W. B. C. की वृद्धि ७०-८० लाख प्रति घ० मि० मी० तथा लवणांश की कमी।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—कॉलरा का निम्न रोगों से पार्थक्य करना चाहिए—

१. आहार-विषमयता (Food-poisoning)।

२. तीव्र अतिसार (Acute diarrhoea)।

३. संखिया विषमयता (Arsenic poisoning)।

४. विषमज्वर जन्य प्रवाहिका (Malarial diarrhoea or protozoal diarrhoea)।

५. वाइरल अतिसार (Viral diarrhoea)।

६. सालमोनेला विषमयता (Salmonella poisoning)।

नोट—वमन और अतिसार विभिन्न अवस्थाओं में उत्पन्न होते हैं, जैसा कि आगे की तालिका में दर्शाया गया है। शिशुओं में 'ई० कोलाई' अतिसार तथा वमन उत्पन्न करते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

कालरा : सापेक्ष निदानात्मक तालिका

पार्थक्य विषय	विसूचिका (Clolera)	तीव्र गैस्ट्रो-इन्टे० (Acute G.E.)	आहार विषाक्तता (Food poisoning)	संखिया विषाक्तता (Arsenic poisoning)	बेसिलरी पेचिश (Bacillary d)	एल्जिड मलेरिया (Algid maleria)
१. इतिहास (History)	जानपदिक या स्थानिक शोथ	स्पोरेडिक (Sporadic)	अनेक व्यक्तियों का सामूहिक भोजन	संखिया खाने का इतिहास मिलना	उदर में पीड़ा एवं ज्वर	शीतकम्प, तीव्र ज्वर, बदन में दर्द
२. उदर-सम्बन्धी लक्षण (Abdominal symptoms)	पीड़ारहित दस्त होना, दस्त के बाद वमन होना	वमन और दस्त	मितली, उदर-पीड़ा एवं दस्त की उपस्थिति	उदर-पीड़ा, उदर में जलन, सेंसेशन	उदर में पीड़ा एवं कुंथन	वमन व अतिसार
३. वमन किया पदार्थ (Vomitus)	चावल के माँड सदृश	पित्त सदृश	पित्त सदृश	प्रायः रक्त की उपस्थिति	कोई विशेष लक्षण नहीं	पित्त उपस्थित
४. मल (Stool)	चावल के माँड सदृश	बिष्ठा की उपस्थिति एवं पित्त के रंग का	कभी-कभी मल में रक्त की उपस्थिति	मल में रक्त का कभी-कभी मिलना	रक्त के साथ श्लेष्मा	पित्त सदृश
५. उदर (Abdomen)	कोई पीड़ा नहीं	उदर में उद्वेष्टकर पीड़ा बढ़ी हुई	उद्वेष्टकर एवं निरन्तर पीड़ा	पीड़ा की उपस्थिति	सपीड कुंथन, दाब-वेदना, समस्त उदर में पीड़ा	दाब-वेदना नहीं
६. तापक्रम (Temperature)	अवसामान्य (Subnormal)	बढ़ा हुआ	बढ़ा हुआ	कोई ज्वर नहीं	उच्च तापक्रम	गुदा का तापमान १०४° फा०
७. अमूत्रता (Anuria)	सामान्य (Common)	मिल सकती है	कामन नहीं	काफी विलम्ब से	मिल सकती है	प्रारम्भिक
८. अन्वेषण (मल-Stool)	मल में विब्रियो कॉलेरी की उपस्थिति	पूय कोशिकाएँ एवं जीवाणु उपस्थित	पूय कोशिकाएँ बहुत कम	मल में कुछ नहीं मिलता	पूयसेल्स, R. B. C. माइक्रोफेज सेल्स का आधिक्य	कोई जीवाणु नहीं मिलते

CC-0. Public Domain. Kaya Maha Vidyalaya Collection.
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. बालक-वृद्ध तथा गर्भवती स्त्रियों में यह रोग भयानक होता है। इसमें अधिकांश रोगियों की मृत्यु हो जाती है।

२. तीव्र रोग में ५०-६०% तक मृत्यु।

३. उचित चिकित्सा के अभाव में ७०% रोगी शीतावस्था में मर जाते हैं।

उपद्रव (Complications)—इस रोग में निम्न उपद्रवों की सम्भावना रहती है—

१ पेरिफेरल सरक्यूलेटरी फेल्योर (Peripheral circulatory failure)

२. ट्यूबूल्स का तीव्र आघात (Acute tubular necrosis)।

३. कंजंक्टाइवा की शुष्कता (Dryness of conjunctiva)।

४. वैसोकंस्ट्रिक्शन के कारण गैंग्रीन।

५. परम तापक्रम (Hyperpyrexia)।

६. आध्मान (Tympanitis)।

७. न्यूमोनिया (Pneumonia)।

८. कोलीसिस्टाइटिस (Cholecystitis)।

९. पेरोटिनाइटिस (Perotinitis)।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी को स्वच्छ हवादार कमरे में बिस्तर पर पूर्ण विश्राम कराना चाहिए। रोगी का सिरहाना नीचा रखना ठीक होता है। इससे जल की कमी होने पर भी मस्तिष्क की ओर रक्त का भलीभाँति प्रवाह होता रहता है।

२. रोगी को गरम कपड़े से ढँक कर रखना चाहिए। साथ ही निपात की अवस्था में गर्म थैली अथवा बोतलों में पानी भरकर पैरों के चारों तरफ रखना चाहिए।

३. परिचायक को रोगी की बगल एवं गुदा का तापक्रम, वमन की संख्या, नाड़ी की गति, मल-मूत्र की मात्रा एवं रंग आदि का रिकार्ड प्रति आधा घण्टे पर लेना चाहिए।

४. गरम पानी में नमक डालकर उसमें कपड़ा भिगोकर पिंडलियों को सेंकना चाहिए।

५. प्यास लगने पर रोगी को बर्फ के टुकड़े चूसने को दें।

६. रोगी को सदैव उष्ण रखना चाहिए।

७. यदि रोगी खाने की स्थिति में हो तो उसे तरल पदार्थ ही देते रहें। एनिमल प्रोटीन का भूल कर भी प्रयोग न करें।

८. महामारी के दिनों में यदि कोई उदर-विकार हो तो उसे तुरन्त दूर करने का यत्न करना चाहिए। जैसे-जैसे वमन और अतिसार आरम्भ हों उसकी तत्काल चिकित्सा-व्यवस्था करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. चिकित्सा में जल की कमी की पूर्ति करने का ध्येय होना चाहिए। प्राय: ३-४ पाइण्ट की आवश्यकता होती है।

१०. रोगी की समुचित व्यवस्था किसी साधन-सम्पन्न चिकित्सालय में होनी चाहिए। इसलिए रोगी को तत्काल इमरजेन्सी वार्ड में भरती करा देना चाहिए।

११. विशिष्ट औषधियों का प्रयोग तथा लवण जल (Normal saline) का शीघ्र उपयोग रोगी के प्राण बचाने में बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसलिए पूर्ण शक्ति के साथ सभी साधनों का उपयोग करना चाहिए।

१२. रोग का निर्णय होने के पश्चात् जितनी जल्दी हो सके चिकित्सा प्रारम्भ कर देनी चाहिए। क्योंकि रोगी का एक-एक क्षण भारी होता है। रोगी के शरीर में दस्त और वमन के द्वारा जितने द्रव की कमी हुई है उसका अनुमान—१. रोगी की दशा, २. ब्लड-प्रेशर तथा ३. रक्त के विशिष्ट गुरुत्व से लगता है।

○ प्राय: तीव्र अवस्थाओं में ५-१० लिटर तक की हानि होती है। इस मात्रा को यथाशीघ्र शरीर में पहुँचाना होता है। इसके लिए 'इण्ट्रावीनस इन्फ्यूजन' आवश्यक होता है। इस विधि से पर्याप्त मात्रा में लवण मिले जल को शरीर में प्रविष्ट कराया जाता है, जिससे कि वृक्क (Kidnly) अधिक क्षति-ग्रस्त न हो सके और 'हार्ट फेल्योर को रोका जा सके।

नोट—इसमें जरा-सी देर करने पर रोगी का सब कुछ बिगड़ जाता है।

निर्देश—इस प्रकार से हैजे की चिकित्सा में सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य रोगी के शरीर से निकले हुए द्रवों की क्षतिपूर्ति करना है, ताकि वृक्कों को अकर्मण्य होने से बचाया जा सके। इस प्रकार से इस रोग की प्रधान चिकित्सा 'रिप्लेस-मेण्ट थेरापी' (Replacement therapy) है।

(२) **औषधि-चिकित्सा**—कॉलरा की चिकित्सा निम्न २ प्रकार से की जाती है—

१. रोग-निरोधी चिकित्सा (Prophylactic treatment)।

२. रोगहर चिकित्सा (Curative treatment)।

चिकित्सा का मुख्य उद्देश्य—१. कॉलरा विब्रियों को नष्ट करने वाली औषधियों का प्रयोग।

२. जीवाणुओं को प्रभावहीन कर लक्षणों व उपद्रवों की चिकित्सा करना।

(१) **रोग-निरोधी चिकित्सा** (Prophylactic treatment)—

१. रोगी के वमन और मल को एक गहरे गड्ढे में गाड़ देना चाहिए, ताकि उस पर मक्खियाँ न बैठें।

२. जहाँ पर यह रोग फैला हो, वहाँ पर पानी सदैव उबाल कर पीना चाहिए। कुएँ के पानी में पोटाश परमैंगनेट अथवा ब्लीचिंग पाउडर डालना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. खाद्य पदार्थों को ढँक कर रखना चाहिए, जिससे उस पर मक्खियाँ न बैठें।

४. विसूचिका के इपीडेमिक के समय सभी दृष्टि से नियमित आहार होना चाहिए।

५. इपीडेमिक के समय विरेचक औषधियों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

६. भोजन, दूध और जल सदैव गरम करके प्रयोग करें।

७. सभी स्वस्थ व्यक्तियों में 'कॉलरा वैक्सीन' (Cholera vaccine) का प्रयोग करना चाहिए।

कॉलरा वैक्सीन की मात्रा—

(i) पहली मात्रा—०.५ मि० ली० I/M अथवा S/C

(ii) दूसरी मात्रा—१ मि० ली० १ सप्ताह बाद I/M अथवा S/C

(iii) कोर्स—केवल दो इन्जेक्शन पर्याप्त होते हैं।

(iv) रोग-निरोधी प्रभाव—६ मास तक रहता है।

नोट—१. कॉलरा-वैक्सीन का प्रयोग सामूहिक रूप से करना चाहिए।

२. इपीडेमिक के दिनों में बाजार की मिठाई, लस्सी, कुल्फी एवं आइस-क्रीम आदि का उपयोग बिलकुल नहीं करना चाहिए।

३. वैक्सीन की इम्युनिटी १ सप्ताह में उत्पन्न हो जाती है और ६ मास तक रहती है।

४. पैकिंग—इस वैक्सीन की पैकिंग ५ और १० मि० ली० की वायल में आती है।

(ii) रोगहर चिकित्सा (Curative treatment)—

विशिष्ट चिकित्सा—

(१) प्रारम्भिक अवस्था में - इन्फेक्शन की चिकित्सा (Treatment of infection)—

℞ टेट्रासाइक्लीन हाइड्रोक्लोराइड (Tetracycline Hcl.)

अथवा—क्लोरम्फेनिकाल (Chloramphenical) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—२ कैपसूल प्रति ४ घण्टे पर जब तक कि दस्त और वमन अपने नियन्त्रण में न हों।

यदि रोगी मुख द्वारा औषधि लेने में असमर्थ हो तो इन्जेक्शन रूप में दें।

इन्जे० टेट्रासाइक्लीन (Inj. Tetracycline) १०० मि० ग्रा०

मात्रा—१ इन्जे० प्रति ६ घण्टे पर I/V प्रथम २४ घण्टे में।

तत्पश्चात्—५०० मि० ग्रा० मुख द्वारा प्रति ६ घण्टे पर ४ दिन तक।

नोट—यद्यपि टेट्रासाइक्लिन का 'कॉलरा' की चिकित्सा में कोई विशिष्ट स्थान नहीं है। फिर भी इसे निम्न दो कारणों से प्रयोग किया जाता है—

 CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण—१. प्रथम यह कि इसके सेवन कराने से ३६ घण्टे के अन्दर ही रोगी का मल 'विब्रियो' जीवाणुओं से मुक्त हो जाता है।

२. दूसरा यह कि दस्तों की संख्या भी कम होती है।

निर्देश—टेट्रासाइक्लीन देने के बाद कोई अन्य एण्टीबायोटिक अथवा दस्त रोकने वाली औषधि देने की आवश्यकता नहीं है।

(२) रोगी के शरीर में द्रव की कमी होने से रोकने के लिए निम्न घोल बना कर रोगी को पिलाना चाहिए—

सोडियम क्लोराइड (खाने का नमक) ४ चाय के चम्मच + सोडा बाइ. कार्ब ३ चाय चम्मच + ग्लूकोज पाउडर २० चाय के चम्मच + पानी ४ लिटर।

इस घोल में से रोगी को थोड़ा-थोड़ा बराबर पिलाते रहना चाहिए। रोगी जितना भी पी सके पिलाते रहें, भले ही उसे उल्टियाँ हो रही हों। परन्तु यह घोल पिलाते रहने से निर्जलीभवन की अवस्था शीघ्र नहीं आती है। यदि आती भी है तो शिरामार्ग से द्रव की आवश्यकता आधी रह जाती है। यह भी देखने में आया है कि कभी-कभी इस घोल को पिलाते रहने से ही रोगी पूर्णतया ठीक हो जाता है। यह घोल बच्चों के लिए भी अत्यन्त उपयोगी है।

अथवा— ○ आजकल इलेक्ट्राल (Electral), मेडीलाइट (Medilyte) एवं मार्कलाइट (Marklyte) आदि नामों से ऐसे टेबलेट, पाउडर आते हैं, जिनमें लवण + सोडा यथावश्यक मात्रा में मिले रहते हैं। इनको पानी में मिलाकर रोगी को पिलाते हैं।

(३) ℞ फूराक्सॉन टेबलेट (Furoxon tab.)

मात्रा—प्रथम मात्रा २ गोली; तत्पश्चात् १-१ गोली प्रति ४ से ६ घण्टे के अन्तर पर २ दिन तक।

नोट—इसका प्रयोग मूत्राघात की स्थिति में नहीं होता है।

अथवा— ℞ को-ट्रीमोक्साजोल टेबलेट (Co-trimoxazole tab.)

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार।

साथ ही—सल्फाग्वानेडीन (Sulphaguanedine)

मात्रा—पहले ४ गोली तत्पश्चात् २ गोली १-१ घण्टे बाद।

रोग का लक्षण कम होने पर प्रति ४ घण्टे पर २-३ दिनों तक।

नोट—सल्फाग्वानेडीन के स्थान पर फर्मोसिबाजोल या थैलाजोल अथवा सक्सीनल सल्फाथियाजोल का उपयोग किया जा सकता है।

अथवा—कॉलरा की प्रारम्भिक अवस्था में निम्न चिकित्सा-क्रम अधिक व्यावहारिक तथा प्रभावकारी होता है—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. ℞ सल्फाग्वानेडीन	२ गोली
निकोटिनिक एसिड	५० मिग्रा०
सोडा बाइकार्ब	६०० मिग्रा०
गम अकेसिया	३०० मिग्रा०
कार्बो केओलिन	१ ड्राम
एक्वा एनीसी	१ औंस (३० मिली०)
	१ मात्रा ।

२. एसेन्सियल आयल मिक्श्चर १ ड्राम की १ मात्रा ।

दोनों औषधियाँ आधा-आधा घण्टे के अन्तर पर ४-६ बार दें । वमन कम होने पर १ घण्टे के अन्तर पर कर दें ।

○ इसके प्रयोगकाल में रोगी को उवाला हुआ जल पर्याप्त मात्रा में पिलाना चाहिए ।

अथवा—क्लोरम्फेनिकाल ५०० मि० ग्रा० + स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट २५० मि० ग्रा० दोनों को मिलाकर ऐसी १ मात्रा में ९०० मि० ग्रा० सोडा बाइ-कार्ब तथा ९० मि० ली० ताजे जल में मिलाकर दें । इसके बाद प्रति ४ घण्टे पर दें । इस समय इसकी आधी-आधी मात्रा दी जाती है । यदि मूत्राशय में मूत्र कम बन रहा हो तो – क्लोरम्फेनिकाल स्टेराइल पाउडर १ ग्राम, नार्मल सैलाइन ५०० मि० ली० बोतल में भलीभाँति घोल और मिलाकर ड्रिप मेपड (Drip method) से बूंद-बूंद कर I/V दें ।

(४) **इण्ट्रावीनस ड्रिप**—उपरोक्त चिकित्सा के साथ ही इण्ट्रावीनस ड्रिप का प्रयोग शरीर से निकले जलीयांश और लवणों की पूर्ति के लिए करना चाहिए ।

इण्ट्रावीनस मार्ग से जलीयांश (Fluid) तथा लवणों की क्षतिपूर्ति के लिए निम्न सिद्धान्त हैं—

१. रोगी की नब्ज कलाई पर प्रतीत न हो रही हो ।

२. रक्त का अपेक्षित गुरुत्व १०६० से अधिक हो गया हो ।

३. सिस्टोलिक ब्लड-प्रेशर ८० Hg से कम हो ।

४. पेशियों में ऐंठन (Cramps) हो ।

नोट—जब रक्त का अपेक्षित गुरुत्व प्राकृत (Normal) अर्थात् १०५५-५८ तक रहता है, सैलाइन देने की आवश्यकता नहीं होती है ।

रक्त का अपेक्षित गुरुत्व देखने का मोटा अनुमान—३० ग्राम मैग सल्फ + ३० मि० ली० पानी में घोल लें । १५ मिनट बाद इस सेचूरेटिड घोल में से ८ मि० ली० घोल लें और इसमें ३० मि० ली० जल और मिलाकर एक टेस्ट ट्यूब में रख लें । अब हैजे के रोगी के रक्त की १ बूंद टेस्ट ट्यूब में

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डाल दें। यदि रक्त की बूंद डूब कर नीचे चली जाती है तो रक्त का अपेक्षित गुरुत्व १०६० से ऊपर समझना चाहिए।

(५) यदि शरीर से बहुत तरल निकल चुका है और उग्र स्वरूप की निपात (Collapse) की स्थिति आ पहुँची है तो सैलाइन का 'हाइपरटोनिक सोलूशन' इण्ट्रावीनस ड्रिप द्वारा प्रवेश करना चाहिए।

(६) यदि तरल की मात्रा कम ही निकली है, तब 'आइसोटोनिक सैलाइन' का प्रयोग ही पर्याप्त रहता है।

○ 'आइसोटोनिक सैलाइन' को समबल लवण जल अथवा नार्मल सैलाइन (Normal saline) भी कहते हैं।

○ विसूचिका की चिकित्सा में 'नार्मल सैलाइन' विशेष महत्त्व रखता है। वमन और अतिसार से उत्पन्न स्तब्धता में इससे रोगी के प्राण बचाये जा सकते हैं।

○ नार्मल सैलाइन के पश्चात् ५% 'डेक्स्ट्रोज सैलाइन' प्रविष्ट करना चाहिए।

वास्तव में सैलाइन को इस प्रकार देना चाहिए—

पहले हाइपरटोनिक लवण या नार्मल सैलाइन की कुछ बोतलें चढ़ा कर, फिर ५% डेक्स्ट्रोज सैलाइन की बोतलें I/V ड्रिप द्वारा देनी चाहिए।

(७) तरल की क्षतिपूर्ति के लिए वैज्ञानिकों ने यह सिद्धान्त बनाया है कि प्रति इकाई वृद्धि के लिए ५०० मि० ली० जल शरीर में I/V द्वारा प्रविष्ट कराना चाहिए।

रक्त का विशिष्ट गुरुत्व—१०६१ होने पर—५०० मि० ली०।
१०६२ ,, —१००० मि० ली०।
१०६३ ,, —१५०० मि० ली०।
१०६४ ,, —२००० मि० ली०।
१०६६ ,, —७ पाइण्ट की मात्रा में प्रविष्ट कराना चाहिए।

नोट—रक्तदाब (B. P.), अतिसारों की संख्या तथा रोगी की अवस्था को ध्यान में रखकर तरल की मात्रा का निर्धारण करना चाहिए।

(८) ४ पाइण्ट द्रव के प्रयोग की अपेक्षा होने पर पहले १ पाइण्ट क्षारीय लवण जल (Alkaline saline) देने के उपरान्त २ पाइण्ट अतिबल लवण जल (Hypertonic saline) तथा अन्तिम में १ पाइण्ट हाइपरटोनिक सैलाइन + डेक्स्ट्रोज मिलाकर दें।

(९) कॉलरा के रोगियों में औसतन ५०० मि० ली० की ८ बोतलें ७२ घण्टे के अंदर प्रविष्ट कराना पर्याप्त होता है। पहले २–३ बोतलें तीव्र गति से

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देनी चाहिए, तत्पश्चात् सुधार दिखलाई देने पर गति को मन्द कर देना चाहिए।

○ यदि रोगी की हालत गम्भीर हो तो—पहली बोतल ५ मिनट में दी जा सकती है। इसके बाद ५०–६० मि० ली० प्रति मिनट की दर से इफ्यूजन चालू रखना चाहिए।

(१०) यदि इण्ट्रावीनस ड्रिप से रोगी को कँपकँपी होने लगे तो ड्रिप की गति कम कर देनी चाहिए। यह प्रतिक्रिया स्वरूप लक्षण कुछ समय बाद स्वतः शान्त हो जाते हैं। यदि शान्त न हों तो ड्रिप देना बन्द कर देना चाहिए।

(११) ज्वर, कँपकँपी आदि अस्थायी लक्षण होते हैं। रोगी को मूत्र सामान्य होने लगता है। शरीर से निकले तरल की पूर्ति होते ही ब्लड-प्रेशर सामान्य हो जाता है।

(१२) शरीर में लवण की कमी तथा एसीडोसिस (Acidosis) की अवस्था दूर होते ही ५% डेक्स्ट्रोज अथवा डेक्स्ट्रोज सैलाइन इण्ट्रावीनस ड्रिप द्वारा देना प्रारम्भ कर देना चाहिए।

○ आई० वी० ड्रिप की गति ५०-६० मि० ली० प्रति मिनट की होनी चाहिए।

(१३) एसीडोसिस (Acidosis) तथा क्षारमयता (Alkalosis) की स्थिति में—इञ्जे० 'सोडियम लैक्टेट' का प्रयोग किया जाता है। यह ६ मोलर शक्ति के रूप में प्रयोग किया जाता है। साथ ही २५० मि० ली० की मात्रा में प्रति २ लिटर सैलाइन देने के बाद ड्रिप द्वारा प्रविष्ट कराना चाहिए।

(१४) रोगी की सामान्य हालत तथा रक्तदाब आदि विशिष्ट गुरुत्व के प्राकृत रूप में आने पर I/V ड्रिप बन्द कर देना चाहिए और मुख द्वारा तरल तथा लवणों का प्रयोग प्रारम्भ कर देना चाहिए।

सावधानियाँ—१. सैलाइन को I/V मार्ग से बहुत धीरे-धीरे देना चाहिए। इसकी मात्रा ३० मि० ली० प्रति मिनट से अधिक न हो।

२. शरीर में अधिक जल न पहुँच जाये, इसके लिए फेफड़ों की स्थिति को स्टेथिस्कोप द्वारा उसकी ध्वनि को सुन कर देखते रहना चाहिए।

३. १० वर्ष से कम आयु के बच्चों में एक बार में २५० मि० ली० से अधिक सैलाइन नहीं देना चाहिए।

हाइपरटोनिक सैलाइन घोल (Hypertonic saline sol.) **अर्थात् रोजर्स घोल**—रक्त का विशिष्ट गुरुत्व अधिक होने पर इसका प्रयोग किया जाता है। इसका निर्माण निम्न प्रकार से होता है—

℞ सोडियम क्लोराइड (Sedium chloride) ८ ग्राम
कैल्शियम क्लोराइड (Calcium chloride) २४० मि०ग्रा०

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पोटेशियम क्लोराइड (Potassium chloride) ३६० मि०ग्रा०
डिस्टिल्ड वाटर (Distilled water) ५६० मि०ग्रा०

नोट—आजकल बाजारों में 'हाइपरटोनिक' टेबलेट आती हैं, जिसकी प्रति टेबलेट में २ ग्राम सोडियम क्लोराइड + ६० मि० ग्रा० कैल्सियम क्लोराइड होता है। इसकी ४ टेबलेट ५६० मि० ली० डिस्टिल्ड बाटर में घोल लेने पर 'हाइपरटोनिक घोल' बन जाता है।

देने की मात्रा—१०६० से कम आ० गु० होने पर—५०० मि० ली०।
१०६० से अधिक ,, ,, —१००० मि० ली०।

सैलाइन प्रतिक्रिया की चिकित्सा—

(१) **कम्प** (Shivering)—कुछ रोगियों में I/V ड्रिप से सैलाइन देने पर कँपकँपी-सी होने लगती है, जैसा कि मलेरिया ज्वर के चढ़ने के समय होता है।

चिकित्सा—रोगी को कम्बल उढ़ा देना चाहिए। अथवा उसके पेट पर गरम पानी की थैली रखनी चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर—'एड्रीनलीन' सोलूशन १ मि० ली० रोगी की जीभ के नीचे रख कर शोषित होने देना चाहिए।

(२) **शरीर का ताप बढ़ जाना** (Hyperpyrexia)—यह एक गम्भीर उपद्रव है। इसके लिए रोगों की गुदा का टेम्परेचर देखना चाहिए। यदि गुदा का तापक्रम १०३° फा० से अधिक हो तो—

१. रोगी के शरीर को ठंडे पानी से स्पंज करके तापक्रम कम करना चाहिए।

२. जब गुदा का तापक्रम १००° फा० पर आ जाय तब बिना गर्म किया हुआ सैलाइन दें।

३. यदि गुदा का तापक्रम १००° फा० से भी कम हो जाय तो सैलाइन को ९८-९९° फा० पर गर्म करके ड्रिप रूप में दें।

सैलाइन को गर्म करना—बोतल को थोड़ी देर के लिए गर्म पानी से भरी बाल्टी में रखना चाहिए।

सैलाइन का निषेध—सैलाइन को निम्न अवस्थाओं में प्रविष्ट नहीं करना चाहिए—

* हृदय की विकृति।
* फुप्फुसशोथ।
* अत्यधिक आध्मान।
* गर्भावस्था।
* अति वृद्ध, बालक आदि।
* पेरिफेरल वेस्कुलर फेल्योर।

नोट—शिशुओं, गर्भिणी स्त्री, हृदय तथा फुप्फुस शोथ के विकारों से पीड़ित व्यक्ति में सैलाइन S/C दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सैलाइन-प्रविष्टि की पुनः आवश्यकता निम्न अवस्थाओं में पड़ती है—

* मूत्राघात ।
* अत्यधिक वमन ।
* अतिसार की अधिकता ।
* नाड़ी-क्षीणता ।
* ब्लड-प्रेशर का कम होना ।
* रक्त का विशिष्ट गुरुत्व १०६३ से अधिक होने पर ।

सैलाइन चिकित्सा से सुधार न होने पर—प्रारम्भ में 'हाइपरटोनिक सैलाइन' या एल्कलाइन सैलाइन के प्रयोग करने के बाद भी ब्लडप्रेशर तथा निपात (Collapse) के दूसरे लक्षणों में सुधार न हो रहा हो तो—रक्त की कमी पूरी करने वाली अन्य औषधियाँ विशेषकर 'प्लाज्मोसान', 'डेक्स्ट्रावेन', 'पेरिस्टान' आदि का प्रयोग करना चाहिए । ऐसी अवस्था में 'प्लाज्मा' का प्रयोग विशेष लाभकर होता है ।

मात्रा—१ पाइण्ट प्लाज्मा ३०–४० बूँद प्रति मिनट के हिसाब से दी जा सकती है ।

कॉलरा की व्यवस्था में उपरोक्त प्रारम्भिक चिकित्सा के साथ-साथ निम्न चिकित्सा भी करनी चाहिए—

(१) निकेथामाइड (कोरामीन) चाय या कॉफी में डाल कर रोगी को धीरे-धीरे 'शिप' (Ship) कराना चाहिए । इससे हृदय को उत्तेजना मिलती है ।

(२) पोटाशियम परमैंगनेट १२० मि० ग्रा० मुख द्वारा प्रति घण्टे पर देते रहें । इससे 'कॉलरा विब्रियो' का टॉक्सिन समाप्त हो जाता है ।

(३) बेरालगन इञ्जे० ५ मि० ली० I/V दें । इससे शूल तथा अतिसार तत्काल समाप्त हो जाता है ।

(४) मुख द्वारा लवणोदक का प्रयोग ।

नोट—सैलाइन के साथ १०० मि० ग्रा० की मात्रा में टैरामाइसीन इञ्जे० मिलाकर देने से विशेष लाभ होता है ।

यदि हैजे के लक्षण तीव्र स्वरूप के न हों तो—

○ ½ लिटर 'आइसोटोनिक सैलाइन' S/C दें ।

○ यदि रोगी में तीव्र अतिसार के वेग न हों तो—१२० मि० ली० नार्मल सैलाइन २–२ घण्टे के अंतर पर मुख द्वारा दें ।

(५) स्थिति में सुधार होने पर तथा ब्लडप्रेशर एवं रक्त के विशिष्ट गुरुत्व आदि के स्पष्ट होने पर इण्ट्रावीनस ड्रिप बन्द करके मुख द्वारा तरल तथा लवण (Oral fluid administration) निम्नलिखित में से देना प्रारम्भ कर देना चाहिए—

B इलेक्ट्राल फोर्ट (Electral forte)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—१ चम्मच (साथ वाली) पाउडर को १२५ मि० ली० हलके गरम पानी में घोल कर रोगी को बराबर देते रहें। ४ घण्टे में २-३ लिटर घोल पिलाना चाहिए।

अथवा—एमलाइट पाउडर (Emlyte powder)

प्रयोग तथा मात्रा—इलेक्ट्राल फोर्ट के अनुसार।

(६) ℞ हाइड्रोकोर्टीसोन सोडियम सक्सीनेट (Hydrocortisone sodium succinate)।

व्या० नाम—इफकोर्लिन (Efcorlin)

इसकी १०० मि० ग्रा० के इण्ट्रावीनस सूचीवेध हेतु सोल्युबल आई० वी० वायल आती है। इसकी १ वायल को सैलाइन अथवा डेक्स्ट्रोज सैलाइन की पहली बोतल में ड्रिप देते समय अवश्य मिला लेना चाहिए।

नोट—इस विधि से सैलाइन देने पर रोगी में स्तब्धता तथा अति ज्वर (Hyperpyrexia) की अवस्था नहीं आती है।

(७) लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

१. वमन (Vomiting)—

℞ इञ्जे० ट्राइफ्लूप्रोमेजीन हाइड्रोक्लोराइड

व्या० नाम—इञ्जे० सीक्विल (Inj. Siquil)

मात्रा—१–३ मि० ग्रा० I/V अथवा ५–१० मि० ग्रा० I/M दें।

आवश्यकतानुसार—४ घण्टे पर पुनः दे सकते हैं।

अथवा—इञ्जे० प्रोमेथेजीन २५ मि० ग्रा०

व्या० नाम—इञ्जे० फेनरगन (Inj. Phenergan)

मात्रा—२५ मि० ग्रा० प्रति ८ घण्टे पर मांसपेशीगत।

अथवा—इञ्जे० स्टेमेटिल (Inj. Stemetil)

मात्रा—१ मि० ली० मांसपेशीगत।

नोट—अन्य औषधियाँ—वमन निरोध के लिए एवोमिन (M. B.), एथोमीन, एमोक्सीन (Amoxin), मारजीन (Marzine) आदि वमन शामक विशिष्ट योगों का व्यवहार किया जा सकता है।

२. अतिसार (Diarrhoea)—

टेट्रासाइक्लीन हाइड्रोक्लोराइड (एक्रोमाइसिन) अथवा क्लोरटेट्रासाइक्लीन हाइड्रोक्लोराइड (ओरियोमाइसिन)।

मात्रा—२ कैपसूल (२५० मि० ग्रा० प्रति कै०) दिन में ३ बार ७२ घण्टे तक।

नोट—प्रायः ८–१२ कैपसूल से अधिक की अपेक्षा नहीं रहती है। बच्चों में इसकी घुलनशील टेबलेट का व्यवहार करना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—क्लोरोस्ट्रेप कैपसूल (Chlorostrep capsule)

मात्रा—१–१ कै० प्रति ३ घण्टे पर।

तत्पश्चात्—अगले दिन १–१ कै० दिन में २ या ३ बार।

अथवा—टैरामाइसिन (Terramycin)

प्रारम्भ में २ कैप्सूल (२५० मि० ग्रा० प्रति कै०)। तत्पश्चात्—२ घण्टे पर १–१ कै० ४ बार।

अन्त में—रोग के उपशम होने पर प्रति ४ घण्टे पर १–१ कै० की ६ मात्राएँ और दें।

नोट—१. वमन की स्थिति में औषधि पेट में न रुकती हो तो उसे इञ्जे० रूप में दें।

२. अतिसार-निरोधी औषधियों के साथ कॉलरा-विषशामक औषधियों का प्रयोग अवश्य करना चाहिए।

३. अतिसार के निराकरण में सहायक औषधि के रूप में निम्न योग का उपयोग उत्तम माना जाता है—

पल्व क्रीटा पिपरेटा	६०० मिग्रा०
सोडा बाइकार्ब	६०० मिग्रा०
सोडा साइट्रास	६०० मिग्रा०
कोरामिन लिक्विड	१५ बूँद
टिं० केटेचू	१० बूँद
टिं० ओपआई	२० बूँद
एक्स्ट्रेक्ट वेल लिक्विड	१ ड्राम
एक्वा क्लोरोफार्म	३० मि० ली०
	१ मात्रा

नोट—अतिसार की लाक्षणिक निवृत्ति होने पर इसे तत्काल बन्द कर देना चाहिए।

अथवा—क्लोरोडिन (Chlordyne)	१५ बूँद
स्प्रिट क्लोरोफार्म	१५ बूँद
जल	२ ड्राम
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रति आधे घण्टे पर २–३ मात्राएँ। इससे अधिक नहीं।

३. **निर्जलीभवन** (Dehydration)—यह विसूचिका का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण लक्षण है तथा चिकित्सा की दृष्टि से सर्वाधिक पहले चिकित्सा के योग्य होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ वास्तव में चिकित्सक की जनरल प्रेक्टिस में ऐसी ही अवस्था के रोगी आते हैं। रोगी में ४-६ बार ही अतिसार तथा वमन से अत्यधिक जलीयांश निकल जाता है।

○ ऐसी स्थिति में रोगी के रक्त का विशिष्ट गुरुत्व (Specific gravity) ज्ञात कर तत्काल सैलाइन का ड्रिप देना प्रारम्भ कर देना चाहिए। जैसा कि सैलाइन ड्रिप का प्रवेश रोग की चिकित्सा में पहले ही बतलाया जा चुका है।

४. पेशी उद्वेष्ट (Muscle cramp)—इसके लिए सैलाइन आई० वी० ड्रिप ही पर्याप्त होता है।

अथवा—कैल्शियम ग्लूकोनेट १० मि० ली० I/V अथवा ग्लूकोज के घोल में मिलाकर दें।

साथ ही—गर्म पानी में नमक डालकर शाखाओं का सेंक करना चाहिए।

५. अत्यधिक पसीना आना (Much sweating)—

एट्रोपीन सल्फेट ०·६ मि० ग्रा० का S/C इञ्जे० लगायें।

६. शीतकम्प (Rigor)—'इफकोलिन' को ट्रान्स्फ्यूजन की बोतल में मिला लेना चाहिए। गुदा का तापक्रम १००° फा० से अधिक होने पर आई० वी० ड्रिप के सोलूशन को हल्का-सा गरम करके प्रयोग करने पर शीतकम्प की स्थिति पैदा नहीं होती है।

७. हिचकी (Hiccough)—

℞ क्लोरप्रोमेजीन (Chlorpromazine)

व्या० नाम—लार्गेक्टिल (Largactil)

मात्रा—२५–५० मि० ग्रा० मुख मार्ग से। आवश्यकतानुसार २–३ घण्टे पर दोहराया जा सकता है।

८. संक्रमण (Infections)—

℞ कैपसूल टेट्रासाइक्लीन (Cap. Tetracycline) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल दिन में ४ बार। द्वितीयक संक्रमण में बराबर देना जारी रखें।

नोट—'स्ट्रेप्टोमाइसिन' तथा 'सल्फालीनामाइड' का प्रयोग नहीं करना चाहिए, क्योंकि ये किडनी को हानि पहुँचाते हैं।

९. निपात (Circulatory failure)—

℞ मेफेण्टरमाइन सल्फेट (Mephentermine sulphate)

व्या० नाम—मेफेण्टीन (Mephentine)

मात्रा—१० मि० ग्रा० मांसपेशीगत अथवा आई० वी० इन्फ्यूजन के साथ प्रति ४-६ घण्टे पर ब्लड-प्रेशर के सामान्य आने तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—ब्लड-प्रेशर बढ़ाने के लिए यह औषधि 'कोरामीन' की अपेक्षा अधिक उपयोगी तथा प्रभावशाली है।

आवश्यक निर्देश—यह अवस्था उत्पन्न ही न हो, इसके लिए एक सबसे उत्तम उपाय यह है कि हाइड्रोकार्टीसोन हेमीसक्सीनेट (ट्रेड नाम—इफ-कोर्लिन सोल्युबल—नि० ग्लैक्सो) १०० मि० ग्रा० को २ मि० ली० डिस्टल्ड वाटर में मिलाकर यह घोल उस सैलाइन में मिला दिया जाय जो सबसे पहले रोगी को दिया गया था।

○ ऐसा करने से शॉक की स्थिति उत्पन्न नहीं होती है और न ही रोगी का ज्वर तीव्र होता है और न ही निपात की स्थिति आती है।

१०. रक्तचापन्यूनता (Hypotension)—

℞ इन्जे० मेफेण्टरमीन (Inj-Mephentermine)

व्या० नाम—इन्जे० मैफेण्टाइन (Inj. Mephentine)

मात्रा—१५-३० मि० ग्रा० मांसपेशीगत। दूसरा इन्जेक्शन ४ घण्टे बाद दुहराया जा सकता है।

नोट—इसके १५ और ३० मि० ग्रा० के अलग-अलग वायल आते हैं।

○ **ब्लड-प्रेशर एकदम से कम होने पर**—'इन्जे० मेफेण्टाइन' १५-३० मि० ग्रा० I/V दें। 'इसके अतिरिक्त ०.३ मि० ग्रा० प्रति मि० ली० सैलाइन अथवा ५% 'डेक्स्ट्रोज सैलाइन' की मात्रा में I/V ड्रिप के साथ दें।

११. आध्मान (Tympanitis)—

○ फ्लेटस ट्यूब (Flatus tube)—गुदा द्वारा प्रविष्ट कराकर तारपीन के तेल को पानी में डाल कर उदर पर सेंक करना चाहिए।

○ ज्वर अधिक न हो तो 'एट्रोपीन सल्फेट $\frac{1}{100}$ ग्रेन + स्ट्रिक्नीन १ मि० ग्रा० मिलाकर मांसपेशीगत दें।

○ आवश्यकतानुसार—'प्रोस्टिग्मीन', 'पिट्यूट्रीन', 'कार्बेकोल' का इन्जे० दिया जा सकता है।

१२. हाथ-पैर ठंडे हो जाना—१ बोतल सैलाइन में ४-५ बूंद 'एड्रीनलीन क्लोराइड' को मिलाकर I/V दें।

१३. जब रोगी को कै और दस्त बहुत अधिक आ रहे हों—

एट्रोपीन सल्फ $\frac{1}{200}$-$\frac{1}{100}$ ग्रेन को २ मि० ली० सैलाइन में घोल कर I/V दें।

१४. दुर्बलता एवं दिल की घबराहट में—'कार्डियाजोल' १०-२० बूंद पिलाना।

१५. ऐंठन और मरोड़ की अवस्था—नियो-ऑक्टीनम ड्रेगी या लिक्विड (नोल कं०) आवश्यकतानुसार दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपद्रवों की चिकित्सा (Treatment of complications)—

(१) परम ज्वर (Hyperpyrexia)—गुदा का तापक्रम १०६° फा० से अधिक रहने पर बर्फ से ठंडे किये पानी की आस्थापन वस्ति द्वारा मलाशय का प्रक्षालन (Rectal wash) करना तथा साथ ही सिर तथा नाभि पर बर्फ की थैली रखना चाहिए। टेम्परेचर कम होने पर ८०-९०° फा० ताप का सैलाइन देना चाहिए।

अति ज्वर की स्थिति में शरीर-पोंछन क्रिया (Cold sponging) बार-बार करनी चाहिए। साथ ही I/V ड्रिप देना बन्द कर देना चाहिए।

(२) मूत्र त्याग न होना (Anuria)—

१. ५० ग्राम ग्लूकोज को ५०० मि० ली० पानी में घोल कर २४ घण्टे में पिलायें; यदि रोगी पी सके तो।

२. वृक्क क्षेत्र पर गर्म पानी की थैली रखनी चाहिए।

३. मूत्र का निर्माण बढ़ाने के लिए—०.५ मि० ली० पिट्यूट्रिन (Pituitrin) का S/C इञ्जेक्शन दें।

४. यदि रोगी की निपात की अवस्था में (In collopse stage) सुधार दिखलाई देने लगे, पर मूत्रत्याग न हो तो आगे सैलाइन देना बन्द कर देना चाहिए और उपरोक्त संख्या १ का प्रयोग करना चाहिए। यदि रोगी ग्लूकोज का घोल मुँह से न ले सके तो इण्ट्रागैस्ट्रिक ड्रिप (Intragastric drip) विधि से आमाशय में पहुँचाना चाहिए।

जैसे ही मूत्रत्याग होने लगे और २४ घण्टे में मूत्र की मात्रा १ लिटर तक पहुँच जाय तो उसे प्रतिदिन ३ ग्राम 'सोडियम क्लोराइड' १ लिटर पानी में घोल कर प्रतिदिन तब तक पिलाना चाहिए जब तक कि रक्त में यूरिया का स्तर १०० मि० ग्रा० प्रति १०० मि० ली० से नीचे न आ जाये।

नोट—मूत्रत्याग न होने की स्थिति में कुछ लोग वृक्क-प्रदेश पर सेंक (Fomentation) करते हैं और I/V द्वारा सैलाइन के साथ ग्लूकोज + विटामिन 'सी' देते हैं।

कुछ लोग 'कैफीन सोडा बेञ्जोएट' १२०-३०० मि० ग्रा० की मात्रा में मांसपेशीगत ४-६ घण्टे के अन्तर पर २-३ बार देते हैं।

बहुत से रोगियों में 'टेस्टोस्टेरोन प्रोपियोनेट' २५–५० मि० ग्रा० (Aquous) की मात्रा में मांसपेशीगत २ से ५ दिन तक देने से अच्छा लाभ मिलता है।

(३) यूरीमिया (Uraemia)—इस स्थिति के उत्पन्न होने पर सेलाइन देना तत्काल बन्द कर देना चाहिए और १०% डेक्स्ट्रोज सो० १००० मि० ली० की मात्रा में २४ घण्टे में ड्रिप द्वारा देना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ विषमयता को दूर करने के लिए गुनगुने पानी से शरीर को पोंछना चाहिए। १ चम्मच सोडा बाइकार्ब + ३० ग्राम ग्लूकोज मिलाकर कई बार दें।

साथ ही ग्लूकोज घोल के साथ कैल्शियम + विटामिन 'सी' ग्लूकोज २५% ५० मि० ली० + सीलिन ५००–१००० मि० ग्रा०, कैल्शियम ग्लूकोनेट १० मि० ली० मिलाकर I/V द्वारा मन्द गति से देना भी लाभकर होता है।

एवं मुख द्वारा अल्कासाइट्रोन (Alkacitrone) या अल्कासोल (Alkasole) अथवा सायोसाइट्रा (Siocitra)—इनमें से किसी एक औषधि को २ चम्मच की मात्रा में दो गुना ग्लूकोज तथा जल मिलाकर देना चाहिए। अथवा निम्न योग का प्रयोग करें—

सोडा बाइकार्ब	९०० मिग्रा०
सोडा साइट्रास	९०० मिग्रा०
पोटास एसीटास	१२०० मिग्रा०
पोटास साइट्रास	१२०० मिग्रा०
इलिक्सिर पाइरावेञ्जामीन	१ ड्राम
एक्स्ट्रेक्ट ग्लिसराइजा लि०	१ ड्राम
बी-कॉम्प्लेक्स सीरप	२ ड्राम
लिक्विड ग्लूकोज	२ ड्राम
डिस्टिल्ड वाटर	३० मिली०
ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार दें।	१ मात्रा

सामान्य उपाय—१. कॉलरा के रोगी को २४ घण्टे तक कुछ भी खाने को नहीं देना चाहिए।

२. वमन तथा अतिसार बिलकुल बन्द हो जाने पर रोगी को बार्ली वाटर, चाय और तरल पदार्थ दिये जा सकते हैं। तत्पश्चात् क्रम से मण्ड, पेया, खिचड़ी आदि सुपाच्य पथ्य तथा प्रोटीन के पूर्व पाचित योग (Protein hydrolysate), मल्टी विटामिन्स तथा पूरक खनिज लवणों (Supplement minerals) की व्यवस्था करनी चाहिए।

३. भोजन के पश्चात् हाइड्रोक्लोरिक एसिड, डायस्टेज तथा इञ्जाइम्स आदि का विधिवत् प्रयोग भूख बढ़ाने की दृष्टि से करना चाहिए।

४. रोगी को रोग-मुक्ति के बाद भी कम्बल से ढँक कर रखना चाहिए।

रोग के बाद की दुर्बलता में—कॉलरा एक गम्भीर व्याधि है। रोग ठीक होने के बाद भी पर्याप्त समय तक शारीरिक क्षीणता तथा हृदय की दुर्बलता आदि का अनुबन्ध बना ही रहता है।

○ ऐसे रोगियों में स्वाभाविक रूप में कार्यक्षम होने में लगभग १ मास का समय लग जाता है। इसके लिए रोगी को क्रूड लिवर एक्स्ट्रेक्ट (Crude

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

liver extract) तथा 'बी-कॉम्प्लेक्स' अथवा 'नियो-हेपाटेक्स' २ मि० ली० की मात्रा में सप्ताह में २–३ बार मांसपेशीगत देना चाहिए।

कुल—१० इञ्जेक्शन पूर्ण स्वास्थ्य के लिए पर्याप्त रहते हैं।

हैजे की मिश्रित औषधि चिकित्सा—

१. ℞	एस्केजीन (स्काईलैब) १ मिग्रा०	१ गोली
	इण्टरोबायोफार्म (सिबा-गैगी)	२ गोली
	डिपेण्डाल एम	१ गोली
	सेप्ट्रान	१ गोली
	वालामाइसिन (कार्टर बालेस)	७·५ मिली०
		१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ४ बार। यह वयस्क की मात्रा है। बच्चों को ½–½ मात्रा दें।

○ वमन, मितली एवं अत्यधिक पतले दस्तों को तत्काल नियन्त्रित करता है।

२. ℞	सल्फाग्वानेडीन (एम० बी०)	२ गोली
	रेस्टेक्लीन (साराभाई) ५०० मिग्रा०	१ कैपसूल
	ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर मधु से।	१ मात्रा
३. ℞	क्लोरोस्ट्रेप (Chlorostrep)	१ कैपसूल
	सल्फाग्वानेडीन (Sulphaguanedine)	४ गोली
	क्लोरैम्बीन (Chlorambine) (A. F. D)	१ गोली
	डिस्फर प्लस (वायो-एवान्स)	१ गोली
		१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर। बच्चों को ½–½ मात्रा दें। □

संक्रामक रोग 7/24

बालपक्षाघात
(Poliomyelitis)

परिचय—Poliomyelitis is an acute systemic disease caused by an R N A virus, which replicates mainly in the gastro-intestinal tract. In some cases the virus may reach the C N S (Cerebrospinal fluid) and damage anterior horn cells of the spinal cord and occasionally the medula and motor cortex.

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ यह प्रायः बच्चों में होने वाला एक तीव्र संक्रामक रोग है, जिसमें सुषुम्ना नाड़ी के सैलमय अन्तःस्थ धूसर भाग में शोथ हो जाता है और किंचित् ज्वर होने के बाद शाखाओं (Limbs) का घात (Paralysis) हो जाता है।

यह रोग प्रायः छोटी आयु के बच्चों को हो जाता है। ज्वर के साथ बच्चे का एक हाथ या पैर पक्षाघात-ग्रस्त होकर बेकार हो जाता है और सूखने लगता है।

○ इस रोग को पहले शिशुओं का लकवा (Infantile paralysis) भी कहा जाता था। परन्तु आजकल इसका सर्वमान्य नाम पोलियो ही है। इस रोग में बच्चे के किसी अंग पर पक्षाघात हो जाता है। यह एक विश्वव्यापी रोग है। यह प्रत्येक देश में होता है। भारत में इसका प्रभाव जुलाई-अगस्त माह में अधिक होता है।

कारण—यह रोग एक अत्यन्त सूक्ष्म जीवाणु (Small R N A virus) द्वारा होता है। इसके ३ प्रकार होते हैं—

टाइप—१. (व्रनहाइड) इससे इपीडेमिक होता है।

टाइप—२. (लांगसिंग)—दूर-दूर पर अकस्मात् (Endemic) इसके रोगी मिलते हैं।

टाइप—३. (लीओन—Leon) इससे स्थानिक (Epidemic) मिलता है।

प्रकोप—१. कुक्कुरखाँसी, मसूरिका, डिफ्थीरिया आदि के प्रतिषेध के लिए वैक्सीन आदि के उपयोग के पश्चात् इस रोग का प्रकोप कुछ रोगियों में देखने को मिलता है।

२. मादा बच्चों की अपेक्षा नर बच्चों में इस रोग का आक्रमण अधिक होता है।

३. २–५ वर्ष की उम्र में इसका प्रकोप सबसे अधिक होता है।

४. १ वर्ष से कम उम्र के बच्चों में इसका प्रकोप नहीं होता है।

५. १२ वर्ष की आयु तक इसके होने की सम्भावना अधिक रहती है।

६. बड़ों को यह रोग नहीं होता है परन्तु जब अधिक फैलता है तब नव-युवकों को भी हो जाता है।

संक्रमण—इसका संक्रमण गले एवं नाक के स्रावों से ड्रापलेट (Droplet) द्वारा और मल के द्वारा फैलता है। यह मल के दूषित होने के कारण जल, आहार और पेयों द्वारा प्रसारित होता है।

विकृति-विज्ञान (Pathology)—वायरस गले और आन्त्र के मार्ग से शरीर में प्रविष्ट होता है। जहाँ वह स्पाइनल कॉर्ड की पूर्व Horn cells को ग्रसित कर देता है। यह तन्त्रिका कोशिकाएँ विकृत हो जाती हैं अथवा नष्ट हो जाती हैं। इस प्रकार से जिन पेशियों में इनसे तन्त्रिका सूत्र (Nerve fibre) जाते हैं, उनकी क्रिया बन्द हो जाने से पक्षाघात (Paralysis) हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संचयकाल (Incubation period)—४ से १२ दिन का। कभी-कभी यह ३०-३५ दिनों का भी हो जाता है।

लक्षण (Symptoms)—इसके लक्षण अंगघात एवं शोथ के अनुसार निम्न प्रकार से विभाजित किये जा सकते हैं—

१. अंगघात पूर्वावस्था (Pre-paralytic stage)।
२. अंगघात की अवस्था (Paralytic stage)।
३. उपशम की अवस्था (Stage of recovery)।

(१) अंगघात की पूर्वावस्था (Pre-paralytic stage)—

१. इस अवस्था में रोगी को ज्वर हो जाता है। प्रायः प्रथम ३ दिनों तक ज्वर १०२-१०३° फा० तक रहता है और उसके बाद शान्त हो जाता है। कभी-कभी २४ घण्टे के बाद कुछ समय के लिए फिर से बुखार का आक्रमण होता है।

२. प्रतिश्याय, शिरःशूल, वमन, भूख की कमी, आध्मान, अतिसार आदि लक्षण मिलते हैं।

३. पेशियों एवं संधियों में पीड़ा तथा बेचैनी होती है।

४. ज्वर के आक्रमण के समय नाड़ी तीव्र होती है। गले तथा सारे शरीर की त्वचा लाल रंग की हो जाती है। गर्दन तथा पीठ की मांसपेशियों में कड़ापन होने के कारण वर्त्मघात, प्रक्षोभ (Irritability) तथा शरीर मोड़ने पर पीड़ा की अनुभूति होती है।

५. कुछ रोगियों में सिरदर्द अधिक रहता है तथा पेशियों में पीड़ा, कम्प अथवा ऐंठन, अनजाने में मलमूत्र का त्याग आदि लक्षण उपस्थित हो जाते हैं।

६. रोग के अधिक तीव्र होने पर मूर्च्छा की उपस्थिति मिल सकती है।

अवधि—इसकी अवधि १ सप्ताह की होती है। अर्थात् इस अवस्था के लक्षण १ सप्ताह तक मिल सकते हैं।

नोट—रोग की तीव्रता के आधार पर लक्षण स्पष्ट अथवा अस्पष्ट हो सकते हैं।

(२) अंगघात की अवस्था (Paralytic stage)—

१. इस अवस्था में ज्वर प्रायः कम हो जाता है। अथवा बिलकुल ही जाता रहता है।

२. पेशियों में (मुख्यतया शाखा की) लकवा मार जाता है, प्रायः ऐसा देखने को मिला है। लकवा बायें पैर तथा दाहिने हाथ अथवा दाहिने पैर और बायें हाथ में होता है। जिस पेशी पर पक्षाघात होता है, उसके अतिरिक्त अन्य पेशीसमूह आक्रान्त नहीं होते।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. लकवा-ग्रस्त पेशी ढीली पड़ जाती है और उसका क्षय आरम्भ हो जाता है। वह धीरे-धीरे घुलने लगती है। रोगी हाथ-पैर हिलाने अथवा करवट बदलने में असक्त हो जाता है।

४. कई बार लकवा-ग्रस्त पेशियों में पुनर्जनन के लक्षण ६ सप्ताह बाद दिखलाई देने लगते हैं। साथ ही इनमें बल का संचार होने लगता है। ऐसी पेशी कुछ दिनों तक अभ्यास करते रहने से स्वस्थ हो सकती है।

५. इस अवस्था में कभी-कभी गले की पेशियाँ भी रोगग्रस्त हो जाती हैं। ऐसी स्थिति में दम घुटने का डर रहता है। इस अवस्था में बच्चे को तत्काल आयरन लंग (Iron lung) नामक यन्त्र में रख कर श्वसन देने का प्रबन्ध करना चाहिए। अन्यथा इसके अभाव में रोगी बालक की मृत्यु हो जाती है।

अवधि—इस अवस्था की अवधि ७ से १० दिनों तक की होती है।

(३) उपशम की अवस्था (Stage of recovery)—

१. कुछ समय बाद नष्ट हुई नाड़ियों से सम्बद्ध पेशियों में अंगघात स्थायी स्वरूप का हो जाता है। शेष में धीरे-धीरे स्वाभाविक शक्ति आने लगती है। किन्तु पेशियों में पीड़ा एवं अक्षमता बनी रहती है।

अवधि—इसकी अवधि १ से ३ मास की होती है।

२. इसके बाद पेशियों की वेदना समाप्त हो जाती है और क्रम से उनमें शक्ति-संचार होने लगता है। किन्तु अंगघात की निवृत्ति पूर्ण रूप से नहीं हो पाती है।

याद रखना चाहिए कि—○ इस रोग में मृत्यु-संख्या बहुत कम होती है। लेकिन साथ ही साथ इस बीमारी से शत-प्रतिशत रोग-मुक्त होने वालों की संख्या भी बहुत कम होती है और रोग कुछ-न-कुछ अंश में अपना प्रभाव अवश्य ही छोड़ जाता है।

○ जिस अंग पर लकवा का प्रभाव होता है, उस अंग को छोड़कर शरीर के प्रायः सभी अंग अपनी स्वाभाविक स्थिति में कार्य करते रहते हैं। जैसे यदि एक पैर लकवाग्रस्त हो तो सिवाय इसके कि रोगी लंगड़ा कर चले, इसके अतिरिक्त अन्य कोई कष्ट नहीं होता है।

रोग के भेद—

१. सामान्य अवस्था—उपरोक्त लक्षण उपस्थित रहते हैं। बहुत कुछ आराम हो जाता है; फिर भी मांसपेशियों का कुछ-न-कुछ आघात रह ही जाता है।

२. तीव्र अवस्था—पक्षाघात विस्तृत होता है और बहुत-सा भाग सदा के लिये आघातित रह जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. **मृदु अवस्था**—पक्षाघात न होकर केवल एक अंग आघातित होता है और वह शीघ्र ही स्वस्थ हो जाता है।

४. **गुप्त अवस्था**—इस रूप में रोगी को साधारण ज्वर, शिरःशूल आदि सामान्य लक्षण होते हैं।

○ किसी-किसी रोगी में लक्षण इतने कम होते हैं कि उसे इसका ज्ञान भी नहीं हो पाता और वह कुछ समय बाद स्वस्थ हो जाता है। ऐसे रोगी में अंगघात का कोई चिह्न नहीं होता है।

नोट—सौभाग्य से ऐसे गुप्त रोगी अत्यधिक (७०-८० % तक) हैं। यदि ऐसा न होता तो आज कितने ही पंगु, खञ्ज और विकलांग व्यक्ति देखने को मिलते।

रोग-निदान—तीव्रावस्था में इपीडेमिक के समय निम्न लक्षणों के आधार पर निदान में कोई कठिनाई नहीं होती है—

१. प्रतिश्याय (Common cold) पूर्वक ज्वर का आक्रमण।

२. शिरःशूल (Headache)।

३. पेशियों में पीड़ा तथा पीड़ा-अक्षमता।

४. गर्दन तथा पीठ की पेशियों में कड़ापन।

५. बच्चा पार्श्व के बल (करवट) लेटना पसन्द करता है।

६. बच्चे को गोदी में लेने अथवा सीधा लिटाने पर रोने लगता है।

७. सिर पीछे की ओर एवं पृष्ठवंश आगे की ओर झुका हुआ होता है, तथा रोगी बालक के पैर मुड़े हुए रहते हैं।

८. विकृत पार्श्व की पेशियों में वेदना तथा पीड़ा-अक्षमता होने के कारण रोगी बालक को जरा-सा भी हिलाने-डुलाने पर उसका दर्द बढ़ जाता है।

९. तीव्रावस्था समाप्त होते पर रोगी बालक विकृत अंग को अपने हाथों से शनैः-शनैः दबाता है।

नोट—शिथिल अंगघात (Flaccid paralysis) के लक्षण उत्पन्न होने पर भी निदान में कोई कठिनाई उत्पन्न नहीं होती है।

○ शेष अवस्थाओं में निदान में विशेष कठिनाई होती है।

रक्त-परीक्षा (Blood examination)—

१. W. B. C. की वृद्धि मिलती है।

२. लिम्फोसाइट्स की अपेक्षाकृत वृद्धि।

३. पॉलीमार्फस की वृद्धि विशेष महत्त्वपूर्ण होती है।

उपद्रव (Complications)—१. श्वासावरोध, २. वमन (Vomiting), ३. मूर्च्छा, ४. मलमूत्र का अवरोध तथा ५. आक्षेप।

नोट—१. उपरोक्त उपद्रव रोग की तीव्रावस्था में ही होते हैं।

२. उत्तरकालीन अंगघात के अतिरिक्त अन्य उपद्रव नहीं होते।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—इस रोग का निम्न रोगों से विभेद करना चाहिए—

१. मस्तिष्कावरणशोथ (Meningitis) ।
२. आमवात (Rheumatic fever) ।
३. मस्तिष्कशोथ (Encephalitis) ।
४. आन्त्रपुच्छशोथ (Appendicitis) ।
५. अस्थिमज्जाशोथ (Osteomyelitis) ।
६. इन्फ्लूएञ्जा (Influenza) ।

पूर्वानुमान (Prognosis)—१. ज्वर स्वयं ५-६ दिनों में ठीक हो जाता है ।

२. प्रारम्भ में अंगघात अधिक विस्तृत होता है और बाद में कुछ पेशी समूहों में ही स्थायी हो जाता है ।

३. लकवा प्रभावित अंग ऐच्छिक गति, प्रक्षेप-क्रियाएँ आदि से पूर्णरूप से ठीक हो सकता है । १-२ वर्ष तक कुछ-न-कुछ सुधार होता ही रहता है ।

४. एक बार रोग उत्पन्न होने पर स्थायी क्षमता (Parmanent immunity) उत्पन्न हो जाती है । जिससे रोग के पुनः उत्पन्न होने की सम्भावना नहीं रहती है ।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोग का अनुमान होते ही रोगी बालक को एकान्त कमरे में मुलायम विस्तरे पर रखना चाहिए ।

२. रोगी बालक जिस करवट आराम का अनुभव करता हो, उसे उसी करवट में लिटाना चाहिए ।

३. शाखाओं के नीचे गरम बालू की थैली अथवा पार्श्व में तकिया रखने की व्यवस्था करें ।

४. हिलाने-डुलाने में अधिक कष्ट होने पर शाखाओं में गरम रुई लपेट कर स्प्लण्ट रख कर बाँध देना चाहिए ।

५. कम से कम २ सप्ताह तक रोगी को पूर्ण विश्राम देकर सक्रिय तथा निष्क्रिय चेष्टाओं से अलग-अलग रखना चाहिए ।

६. रोगी को मल-मूत्र यथावत् होता रहे, इसका पूर्ण ध्यान रखना चाहिए । आवश्यकता पड़ने पर शलाका तथा वस्ति से मल-मूत्र की शुद्धि करायी जा सकती है ।

७. श्यावता तथा श्वासावरोध की स्थिति में 'ऑक्सीजन' की व्यवस्था आवश्यक है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. श्वासनलिकाओं में कफ एकत्र होने पर प्रचूषण यन्त्र द्वारा श्लेष्मा का शोधन करना चाहिए। अधिक कष्ट होने पर 'ट्रेकियोटोमी' करके श्वासावरोध दूर करने का यत्न करना चाहिए।

९. विकृत अंगों की वेदना में ज्वर आदि लक्षणों के कम होने पर गरम पानी में नमक तथा तारपीन का तेल डाल कर उसमें कपड़ा भिगोकर सहता-सहता स्वेदन करना आवश्यक होता है।

१०. रोग के प्रारम्भ में २ दिन तक अथवा ज्वर की तीव्रावस्था-पर्यन्त खाने को कुछ नहीं देना चाहिए। पर्याप्त मात्रा में केवल तरल देना चाहिए। उसके बाद पौष्टिक सुपाच्य तथा तरल आहार की व्यवस्था करें।

११. इस बात का ध्यान रखना-चाहिए कि रोगी बलगम आदि को न घोंट सकें। उसे इण्ट्रावीनस मार्ग से तरल देकर इलेक्ट्रोलाइट बैलेंस (Electrolyte balance) को बनाये रखना चाहिए।

१२. विवेकपूर्ण सलाह देकर इस लम्बे तथा विकलांगकारी रोग के प्रति बच्चे तथा उसके माता-पिता दोनों में इससे उत्पन्न मानसिक अवधारणा को दूर करने का प्रयास करें।

१३. ज्यों-ज्यों पेशियों का दर्द कम होता जाय, भौतिक चिकित्सा (Physical treatment) अवश्य प्रारम्भ कर देनी चाहिए। यदि यह वर्षों तक न हो सके तो कम से कम महीनों तक अवश्य चालू रखनी चाहिए।

१४. इस रोग में कटिवेध द्वारा सुषुम्ना से जल निकालना लाभदायक होता है।

१५. चूंकि इस रोग का आक्रमण प्रायः जुलाई-अगस्त में होता है और रोग के प्रारम्भिक लक्षण इन्फ्लूएञ्जा जैसे होते हैं, अतः इन दिनों चिकित्सकों को चाहिए कि वह ज्वरग्रस्त बच्चों को कोई इञ्जेक्शन न लगायें, क्योंकि अनेक बार देखा गया है कि जिस हाथ या पैर में इञ्जेक्शन लगाया जाता है उसी पर लकवे का आक्रमण हो जाता है। सम्भव है कि इसके वायरस इञ्जेक्शन की नीडिल के द्वारा शरीर में प्रविष्ट हो जाता हो।

१६. लकवाग्रस्त अंग पर १½ महीने तक कोई इञ्जेक्शन नहीं लगाना चाहिए और न ही तैल या किसी औषधि की मालिश ही की जाये।

१७. पेशियों में अकड़न तथा पीड़ा कम करने के लिए गरम पानी में कपड़ा भिगोकर और निचोड़ कर इससे सेंका जाय। यह सेंक दिन में ३-४ बार किया जा सकता है।

○ यदि आवश्यक हो तो पीड़ा कम करने के लिए 'एस्प्रिन' अथवा 'पैरासिटामोल' का प्रयोग करें।

१८. रोगी के लकवाग्रस्त अंग को स्प्लिण्ट (Splints) अथवा प्लास्टर

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऑफ पेरिस के द्वारा गतिहीन (Immobile) रखना अब वैज्ञानिक तरीका नहीं समझा जाता।

चिकित्सा का लक्ष्य—१. पूर्ण रूप से शारीरिक, मनोवैज्ञानिक तथा सामाजिक पुनर्वासन होना चाहिए।

२. ६ सप्ताह के पश्चात् रोगमुक्ति की अवस्था प्रारम्भ होती है। यहाँ से आगे की चिकित्सा लकवाग्रस्त पेशियों का पुनःस्थापन है। उनकी क्रिया नष्ट हो जाने से जिन अंगों की विकृति हो गई है, उनको फिर से ठीक करना इस चिकित्सा का मुख्य उद्देश्य है। जो अंग गति नहीं कर पाता है, उनको फिर से गतिशील बनाने के लिए पेशियों की कसरत करानी चाहिए।

३. शरीर की अशक्ति को दूर करना—जिससे यह अंग पहले की तरह ही उपयोगी बन जाय—इस चिकित्सा का प्रमुख अभिप्राय है।

४. चिकित्सा व्यायामों से ऐसी क्रियाएँ करायी जाती हैं, जिससे लकवाग्रस्त पेशियों में पुनः रक्त-संचार होने लगे और नर्वस से उनका सम्बन्ध पुनर्जीवित हो जाय।

नोट—यह चिकित्सा-प्रबन्ध हमारे देश में बड़े-बड़े अस्पतालों में स्थापित हैं।

(२) औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—

१. 'पोलियो' की कोई विशिष्ट चिकित्सा उपलब्ध नहीं है।

२. उपद्रव न होने पर ज्वर आदि की चिकित्सा आवश्यक नहीं। यह ४-६ दिनों बाद स्वतः ठीक हो जाता है।

३. इसकी सम्पूर्ण चिकित्सा लाक्षणिक होती है।

रोग की प्रारम्भिक अवस्था में—

१. ℞ यूरोट्रोपिन (Urotropin)

मात्रा—६००-१२०० मि० ग्रा० मुख द्वारा प्रति ४-६ घण्टे पर।

बच्चों में—३००-६०० मि० ग्रा० मुख द्वारा प्रति ६ घण्टे पर २ दिन तक।

मात्रा—२ दिन बाद ८ घण्टे पर तथा उपशम होने पर दिन में २ बार।

अथवा—I/V मार्ग से ४०% घोल ५-१० मि० ली० दिन में २ बार।

नोट—(i) प्रारम्भ में इसका प्रयोग करने से रोग का शीघ्र उपशमन हो जाता है।

(ii) लकवा आदि उपद्रवों की व्यापकता में कमी आती है।

निषेध—इसका प्रयोग लकवा की स्थिति में लाभकारी नहीं है। अतः इसका प्रयोग इस अवस्था में न करें।

२. डिस्प्रिन (Disprin) अथवा क्रोसीन (Crocin) अथवा पैरासिटामोल

मात्रा—½-१ गोली दिन में ३ बार पर्याप्त जल के साथ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—इससे मांसपेशी शूल में लाभ होता है।

३. एम्पीसिलीन (Ampicillin) अथवा टैरामाइसिन सीरप

मात्रा—१०० मि० ग्रा०/प्रतिकिलो शरीर भार पर प्रतिदिन ४ विभाजित मात्राओं में।

४. फीनोबार्बीटोन (ल्यूमिनल–Luminal)

मात्रा—३० मि० ग्रा० दिन में ३ बार।

५. टोलाजोलीन हाइड्रोक्लोराइड (Tolazoline hydrochloride)

व्या० नाम—प्रिस्कोल (Priscol)

मात्रा—२५–५० मि० ग्रा० दिन में ४ बार।

एक अन्य चिकित्सा-क्रम के अनुसार पोलियो की चिकित्सा—

१. ℞ सिनरमाइसिन (Synermycin) (फाइजर)

मात्रा—½-१ कैपसूल ७-८ घण्टे बाद मधु में मिलाकर।

२. बेरिन (Berin) १० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली + विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स विद बी$_{१२}$ (टी० सी० एफ०) १ गोली—दोनों को पीस कर ४ मात्रायें बना लें। ऐसी १–१ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर फलों के रस या दूध के साथ।

३. न्यूरोवियान (Neurobion) (मर्क)

बच्चों को—प्लेन १ गोली अथवा फोर्ट ½ गोली आहार के बाद दिन में २ बार। साथ ही—न्यूरोबियान इञ्जे० १–२ मि० ली० की मात्रा में गहरे मांसपेशी में सप्ताह में २–३ बार।

४. अल्फाप्सिन मलहम (Alfapsin) (रैनबेक्सी)।

प्रयोग—इसे पीड़ित स्थान पर दिन में २-३ बार लगायें।

५. ऑस्टो-कैल्सियम विद विटामिन बी$_{१२}$ सीरप (ग्लैक्सो)

मात्रा—बच्चों को—½-१ चम्मच दिन में २-३ बार।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

(१) बेचैनी और वेदना की चिकित्सा—

१. नमक की पोटली से वेदना स्थल को सेंकना।

२. निकोटिनिक एसिड ५० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में ३ बार।

३. ℞

सिबाल्जिन	१२० मिग्रा०
फेनासिटीन	६० मिग्रा०
कोडीन फॉस	८ मिग्रा०
एस्प्रिन	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रति ४ घण्टे पर गरम जल से।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(२) पेशी-स्तब्धता—

१. स्वेदन, तत्पश्चात् गरम बालू की थैली एवं स्प्लिण्ट का प्रयोग।

२. ℞ नियो-स्टिग्मीन (Neostigmine) या प्रोस्टिग्मीन (Prostigmine)

मात्रा—मुख द्वारा अथवा इञ्जेक्शन के रूप में।

३. लार्गेक्टिल (Largactil)

मात्रा—१०-२५ मि० ग्रा० मुख द्वारा दिन में २-३ बार।

इण्टो-क्रोस्ट्रिन (स्क्विब) इञ्जेक्शन प्रति तीसरे दिन।

नोट—वेदना कम होने पर शाखाओं को धीरे-धीरे गति देनी चाहिए।

(३) संताप एवं विषमयता—मुख द्वारा पर्याप्त जल पिलायें। ऐसा सम्भव न होने पर इण्ट्रावीनस मार्ग से सैलाइन दें।

(४) मूत्रावरोध—मूत्र-शलाका द्वारा मूत्र निकाल कर शलाका उसी में छोड़ दें।

साथ ही—सल्फा ड्रग्स + एण्टीबायोटिक का प्रयोग करें।

○ मूत्राशय की क्रियाशीलता नष्ट होने पर—फर्मेसाइड आयोडाइड का प्रयोग करें।

मात्रा—५-२० मि० ग्रा० दिन में २-३ बार मुख द्वारा।

○ इञ्जेक्शन रूप में—१ मि० ली० दिन में १ बार।

(५) लकवा/अंगघात (Paralysis)—

१. आक्रान्त पेशियाँ क्षीण, शीतल तथा शिथिल होती हैं तथा उनके सिकोड़ने एवं फैलाने की शक्ति समाप्त हो जाती है।

२. जिन पेशियों का अपजनन नहीं होता है, उनमें संकोच एवं ऐंठन के परिणामस्वरूप पैर टेढ़ा, अँगूठा नीचे की ओर को खिचा हुआ, जानु मध्य की ओर चिपकी हुई, हथेली मुड़ी हुई आदि विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं।

३. अतः अंगघात से प्रभावित पेशियों को क्रियाशील रखने के लिए गरम बालू की थैली, तकिया, स्प्लिण्ट आदि रखकर व्यवस्था करनी चाहिए।

४. लकवायुक्त पेशियों का संचालन तथा मालिश का निषेध होना चाहिए।

५. २-४ सप्ताह तक पेशियों में अकड़न, वेदना आदि कष्ट रहते हैं।

६. प्रायः ३-४ माह तक पेशियों में बल मिल जाने पर रोगी को सहारा देकर चलने का परामर्श दिया जा सकता है। शीघ्रता से नहीं चलाना चाहिए। ऐसी अवस्था में टॉनिक्स के प्रयोग से कुछ लाभ मिल सकता है।

अंगघात की अवस्था में निम्न क्रम से व्यवस्था करनी चाहिए—

(१) रोग के आक्रमण के एक माह पर्यन्त—

१. ℞ सीरप ईस्टर्न (Syrup Eastern) + मल्टी-विटामिन्स ड्राप + इलिक्जिर 'बी' कॉम्प्लेक्स—तीनों को मिलाकर उचित मात्रा में भोजन के बाद दिन में २ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही—इञ्जे० विटामिन बी$_1$ (१०० मि० ग्रा०) विटामिन 'बी-कॉम्प्लेक्स', बी$_{१२}$ तथा पाइरीडॉक्सिन (बी$_6$) को मिलाकर दें। अथवा इन्हें अलग-अलग दें।

२. स्थानीय चिकित्सा—

(i) रोगी को गरम पानी के टब में बिठा कर सहता-सहता गरम पानी डालें तथा पानी के भीतर अंग का संचालन करें।

(ii) प्रभावित भाग का गरम पानी + नमक मिलाकर स्वेदन करें।

(iii) जाँघ, एड़ी तथा कोहनी के पास गरम बालू की थैली रखें।

(२) एक माह के बाद की व्यवस्था —

१. (i) विटामिन्स के योग, हाइपोफास्फाइट, आर्सेनिक योग आदि टॉनिक्स का पर्याप्त मात्रा में व्यवहार करें।

(ii) दूध + प्रोटीनेक्स मिलाकर दें।

२. स्थानीय चिकित्सा—(i) पहले की तरह गर्म पानी के टब में बैठा कर टब में ही धीरे-धीरे हाथ-पैरों को गति देना।

(ii) नियमित रूप से लेटे-लेटे ही हाथ-पैर मोड़ना।

(३) तीन माह के पश्चात् की चिकित्सा—

१. औषधि चिकित्सा—पूर्व की तरह।

२. स्थानीय चिकित्सा—(i) रोगी को धीरे-धीरे खड़ा करने एवं ट्राइ-साइकिल अथवा पंगुल गाड़ी (Invalid chair) में बैठाकर चलने-फिरने का निर्देश दें।

(ii) एक ही पैर का लकवा होने पर 'विशेष प्रकार के जूते' की व्यवस्था करें।

(iii) इस समय मालिश के लिए 'कॉड लिवर आयल' का उपयोग किया जा सकता है

अन्त में—

१. संकोच जन्य विकृति को व्यवस्थित करने के लिए ऑपरेशन भी कुछ सहायक हो सकता है।

२. गम्भीर रोगियों में कम से कम २ वर्षों के लिए पुनर्वासन (Rehabilitation) आवश्यक होता है।

३. प्रत्येक रोगी में एक ऐसी अवस्था आती है जिसमें आगे के विकास होने की सम्भावना नहीं रहती है। ऐसी स्थिति में विकलांग या शल्य-प्रक्रियाओं पर विचार किया जा सकता है।

४. कंडरा-प्रतिरोपण (Tendon transplantation), संकुचनशीलता तथा अस्थि-विच्छेदन की सलाह दी जा सकती है। किन्तु स्वस्थ अंगों के विकास पर भी सदैव ध्यान रखना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. विरूपता (Deformities) को ठीक करने तथा प्रेरक कार्यों में सहारा देने के लिए उपकरणों का अधिक महत्त्व होता है।

प्रतिषेध-व्यवस्था (Prophylactic treatment)—

रोग से बचने के लिए 'साबिन ओरल पोलियो वैक्सीन' (Sabin oral polio vaccine) का उपयोग करना चाहिए। इस वैक्सीन से बच्चे का जीवन भर के लिए पोलियो से बचाव हो जाता है।

वैक्सीन की खुराक—

पहली मात्रा—३ बूंद	३ मास की आयु में।
दूसरी मात्रा—३ बूंद	इसके ६ सप्ताह बाद।
तीसरी मात्रा—३ बूंद	इसके ६ सप्ताह बाद।
चौथी मात्रा—	तीसरी खुराक के १८ माह बाद।

○ यदि १ से ५ वर्ष के बीच की आयु के बच्चों को देना हो तो इन्हें केवल २ खुराकें ६ सप्ताह (१½ माह) के अंतर पर दी जाती हैं।

निर्देश— ○ जिन बालकों को 'पोलियो वैक्सीन' सेवन नहीं करायी जाती है, उन्हें ५ वर्ष की अवस्था के बाद सेवन कराने की आवश्यकता नहीं होती है।

○ 'पोलियो वैक्सीन' पिलाने के ६-७ घण्टे पहले और वैक्सीन पिलाने के ६-७ घण्टे बाद तक माँ को अपना दूध बालक को नहीं पिलाना चाहिए। साथ ही वैक्सीन पिलाने के आधा घण्टे बाद तक गर्म दूध अथवा चाय भी बच्चे को नहीं पिलाना चाहिए।

पोलियो वैक्सीन पिलाने का उपयुक्त समय—जुलाई और अगस्त माह में।

पोलियो-ग्रस्त बच्चे के सम्पर्क में आये हुए बच्चे को—सम्पर्क के ४ सप्ताह बाद वैक्सीन पिलाना चाहिए।

नोट—रेफ्रिजिरेटर में रखी हुई 'पोलियो वैक्सीन' ही प्रयोग में लानी चाहिए।

पोलियो की नवीनतम चिकित्सा-प्रणाली—

सोवियत वैज्ञानिकों ने अब बालपक्षाघात की चिकित्सा की सफल विधि खोज निकाली है। सोवियत वैज्ञानिकों में पता लगाया है कि मस्तिष्क में उपस्थित रहने वाला एक तत्त्व 'डोफामिन' शरीर की मोटर प्रणाली को नियंत्रित करता है। इस तत्त्व की कमी से ही बालकों में पक्षाघात की उत्पत्ति होती है। इस नई चिकित्सा-विधि में 'डोफामिन' संश्लेषण को उत्प्रेरित किया जाता है। इसके लिए यूगोस्लाविया में तैयार की गई औषधि 'नाकोम' भी बहुत सहायक सिद्ध हुई है। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुनरावर्ती ज्वर
(Relapsing Fever)

परीक्षा—पुनरावर्तक ज्वर, बार-बार आने वाला बुखार।

परिचय—It is characteristically a relapsing type of fever caused by 'Borelia Recurrentis.'

○ यह एक संक्रामक रोग है, जिसमें अकस्मात् ज्वर चढ़कर ७वें दिन उतर जाता है। इसी क्रम से इसके १, २, ३ वेग आते रहते हैं।

कारण—'बोरेलिया रिकरेण्टिस' नामक जीवाणु से होता है।

संक्रमण—भारत में यह जीवाणु एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में जूं द्वारा फैलता है। जो व्यक्ति अधिक मैले-कुचैले तथा दरिद्री होते हैं अथवा इकट्ठे सोते हैं, उनमें अधिक होता है।

ऋतु—प्रायः शीत ऋतु में अधिक होता है।

संचयकाल—५ से ८ दिन।

लक्षण—१. रोगी को शीत लगकर अकस्मात् ज्वर आता है और पहले दिन १०४° फा० ज्वर हो जाता है।

२. रोगी के माथे में पीड़ा, कटिशूल, उत्क्लेश और वमन आदि लक्षण मिलते हैं।

३. रोगी को सूखी खाँसी आती है।

४. श्वास और नाड़ी की गति अति तीव्र होती है।

५. रोगी की जिह्वा शुष्क तथा मलावृत रहती है।

६. रोगी को प्यास अधिक लगती है।

७. प्लीहा तथा यकृत् बढ़ जाते हैं और रोगी को अनीमिया हो जाता है।

८. ५वें, ६ठे दिन ज्वर चरम सीमा पर पहुँच जाता है। ऐसा मालूम पड़ता है मानों मृत्यु सामने खड़ी है।

९. ज्वर अधिक तीव्र होने के बाद अकस्मात् अत्यधिक पसीने के साथ उतर जाता है और रोगी का शरीर बिलकुल शीतल हो जाता है। रोगी ऐसी स्थिति में अपने को रोगमुक्त समझने लगता है। तत्पश्चात् रोगी एक सप्ताह तक ठीक रहता है। एक सप्ताह के बाद ज्वर का दूसरा वेग पुनः प्रारम्भ होता है। यह वेग पहले की अपेक्षाकृत कुछ कम तीव्र होता है, परन्तु इससे दुर्बलता तथा तन्द्रा अधिक बढ़ जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. रोगी को क्रमशः इसी प्रकार के २-३ वेग आते हैं और फिर शान्त हो जाते हैं। कभी-कभी तो कुछ केसिस में इस प्रकार के वेगों का ४-५ बार आक्रमण होता है।

११. प्रत्येक वेग के पश्चात् क्षीणता तथा तन्द्रा बढ़ती ही जाती है। यह दोनों कभी-कभी इतने बढ़ जाते हैं कि रोगी की मृत्यु तक हो जाती है।

१२. कामला, Patechial rash, स्पर्शलभ्य प्लीहा (Palpable spleen), आमाशयान्त्र रक्तस्राव (Gastro-intestinal bleeding), न्यूमोनिया आदि लक्षण भी देखने को मिलते हैं।

निदान (Diagnosis)—

रक्त-परीक्षा (Blood examination)—

१. ल्यूकोसाइटोसिस मिलती है। W. B. C. काउण्ट १०,००० और १५,००० क्यू० मिमी० के बीच मिलता है।

२. रक्त फिल्म (Blod smear) पोजीटिव (+) मिलती है।

३. सी० एस० एफ० (C. S. F.) प्रोटीन तथा मोनोन्यूक्लियर बढ़ी हुई प्रदर्शित करता है।

४. एनिमल इनोकुलेशन टेस्ट (Animal inoculation test) पॉजीटिव (+) होता है।

उपद्रव (Complications)—

* अतिसार * कामला * रक्तस्राव
* प्रवाहिका * तीव्र कामला * फुफ्फुसावरणप्रदाह।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ बेञ्जाइल पेनिसिलीन (Benzyle penicillin)

मात्रा—१ मैगा यूनिट दिन में २ बार मांसपेशीगत १ सप्ताह तक।

यदि रोगी पेनिसिलिन के प्रति सेंस्टिव हो तो—

℞ क्लोरटेट्रासाइक्लीन (Chlortetracycline)

व्या० नाम—ऑरियोमाइसिन (Aureomycin) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—२ कैपसूल प्रति ६ घण्टे पर मुख द्वारा ७ दिन तक।

जूं द्वारा उत्पन्न रिलैप्सिंग फीवर की स्थिति में—

℞ नियो-आर्सफेनामिन (Neo-arsphenamine)

व्या० नाम—नोवार्सनोबीलोन (Novarsenobillon)

मात्रा—४५०-६०० मि० ग्रा० १० मि० ली० डिस्टिल्ड वाटर में घोल कर I/V द्वारा ४ दिन तक।

नोट—ज्वर के प्रारम्भ में ही इञ्जेक्शन देना विशेष लाभकारी होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाक्षणिक चिकित्सा—

१. **शिरःशूल (Headache)**—एसीटिल सेलीसिलिक + एसिड कोडीन मिला कर दें।

२. **वमन (Vomiting)**—क्लोरप्रोमेजीन हाइड्रोक्लोराइड १० मिग्रा०।

मात्रा—१ गोली दिन में २ बार। □

संक्रामक रोग 7/26

स्कारलेट फीवर
(Scarlet Fever)

पर्याय—अरुण ज्वर, आरक्त ज्वर, लोहित ज्वर, लाल बुखार।

परिचय—यह एक तीव्र संक्रामक रोग है, जिसमें ज्वर, शिरःशूल, वमन तथा प्ररूपी विस्फोट (Typical rash) आदि लक्षण मिलते हैं।

कारण—रक्तसंलापी स्ट्रेप्टोकोकाई (Haemolytic streptococci) रोग का प्रमुख कारण है। नाक और कान के आश्रय भी इसके संक्रमण के कारण हैं।

उम्र—५-१० वर्ष के बालकों में अधिक। यह रोग उन बालकों में अधिक होता है जो जमीन पर अधिक खेला करते हैं।

संक्रमण—१. सामान्यतः संक्रमण बिन्दुक-संक्रमण (Droplet transmission) को द्वारा फैलता है।

२. संक्रमित दूध (Infected milk) या आइसक्रीम के द्वारा फैलता है।

संचयकाल (Incubation period)—१-३ दिनों का होता है।

लक्षण (Symptoms)—१. रोग का आक्रमण अचानक होता है। इसके साथ सिरःदर्द, वमन तथा गलशोथ भी हो जाता है।

२. शरीर का तापक्रम ३८° से लेकर ४०° सें० (१००-१०४° फा०) तक हो जाता है।

३. प्रायः गले की ग्रन्थियाँ, तालु तथा गला आदि लाल होकर प्रभावित हो जाते हैं।

४. जीभ सूखी तथा मल से आवृत रहती है।

५. नाड़ी की गति अधिक तीव्र होती है।

६. २४ से ४८ घण्टों के बाद गर्दन, कंधों तथा वक्ष के ऊपरी भाग के आस-पास विस्फोट निकल आते हैं और यह तेजी से धड़ तथा अन्य शाखाओं में फैल जाते हैं। मुँह के आस-पास विस्फोट नहीं होते हैं।

७. 'Circumoral pallor' इस रोग का एक विशिष्ट लक्षण है। मुँह और गला बिलकुल लाल तथा रक्ताधिक्य (Congested) दिखलाई पड़ने लगता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. कुछ समय के पश्चात् टॉन्सिल्स तथा आस-पास की श्लेष्मकला की सतह पर पीले पूयदार बिन्दु दिखलायी देने लगते हैं। आस-पास की ग्रीवा-ग्रन्थियाँ बढ़ जातीं हैं और उनमें पीड़ा होने लगती है। कभी-कभी उनसे पूय भी आता है।

९. मुँह से दुर्गन्ध आने लगती है और किसी-किसी रोगी के कान तथा नाक से पूय भी बहने लगता है।

१०. नाड़ी की गति शरीर के ताप की अपेक्षा अधिक तीव्र होती है।

११. लगभग १ सप्ताह बाद विस्फोट गायब हो जाते हैं और त्वचा पर भूँसी-सी दिखलायी देने लगती है और यह सिलसिला १० दिन से लेकर ६ सप्ताह तक जारी रहता है। चेहरे और शरीर से सूक्ष्म पपड़ियाँ गिरती हैं और हाथ-पाँव की त्वचा बड़े-बड़े चकत्तों के रूप में फट जाती हैं।

विभेदक निदान (Differential diagnosis) – मीजिल्स (खसरा), जर्मन मीजिल्स तथा औषधि-प्रतिक्रिया (Drug reaction) से इसका भेद करना पड़ता है।

चिकित्सा—१. शय्या पर पूर्ण विश्राम (Complete bed rest), जब तक कि तापक्रम नार्मल न हो जाय।

२. Ꞵ फीनोक्सीमिथाइल पेनिसिलीन (Phenoxymethyl penicillin)

मात्रा—२५० मि० ग्रा० मुख द्वारा प्रति ६ घण्टे पर।

अथवा—२-५ लाख यूनिट पेनिसिलीन इञ्जे० मांसपेशीगत प्रति ६ घण्टे पर।

साथ ही—बारी-बारी से—'सल्फा ड्रग्स' (सल्फाडायजीन)

मात्रा—५-८ ग्राम रोगानुसार।

अथवा—सल्फामेराजीन (Sulphamerazine) (I. C. I.)

पहली मात्रा—३-४ ग्राम। तत्पश्चात्—प्रति ८ घण्टे पर १ ग्राम।

अथवा—एक्रोमाइसीन कैपसूल (Achromycine cap.)

मात्रा—१-१ कैपसूल प्रति ४ घण्टे पर।

इञ्जे० नार्मल ह्यूमैन प्लाज्मा लायबेक (F. D. C.)

मात्रा—२५० मि० ली० मांसपेशीगत।

रोग-निरोधी चिकित्सा—१. जिन बच्चों में बार-बार गलशोथ हो जाता है, उन्हें अधिक समय तक दीर्घकालिक (Long acting) 'सल्फा ड्रग्स' की छोटी-छोटी मात्रायें देनी चाहिए।

२. वृक्क सम्बन्धी तथा रूमैटी उपद्रवों को रोकने के लिए पन्द्रह दिनों में १ बार दीर्घकालिक पेनिसिलीन सूचीवेध बारी-बारी से अन्तःपेशी मार्ग से दिया जाता है। □

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूषकदंश ज्वर
(Rat-bite Fever)

पर्याय—मूषक विषज ज्वर, चूहे काटे का बुखार, मूषकदंश ज्वर।

परिचय—यह एक प्रकार का पुनरावर्तक ज्वर (Relapsing fever) है, जो संक्रमित चूहे के काटने से होता है। इसमें विशेष लक्षण यह है कि दंश स्थान जो स्वस्थ हो चुका होता है, वह पुनः शोथयुक्त हो जाता है। साथ ही ज्वर के पुनः-पुनः वेग आने लगते हैं।

कारण—इसके प्रमुख उत्पादक कारण 'स्पाइरीलम माइनस' (Spirillum minus) तथा 'स्ट्रेप्टोबेसिलस मोनिलिफॉर्मिस' (Streptobacillus moniliformis) नामक जीवाणु हैं, जो चूहों में रहते हैं। जब संक्रमित चूहा मनुष्य को काटता है, तब ये जीवाणु मनुष्य के शरीर में प्रविष्ट हो जाते हैं और रोग पैदा कर देते हैं।

लक्षण (Symptoms)—१. दंशस्थान प्रायः स्वयं ठीक हो जाता है, किन्तु ३-६ सप्ताह के पश्चात् उसी स्थान पर पुनः पीड़ा प्रारम्भ हो जाती है और वह पुनः फट कर व्रण का रूप ले लेता है।

२. शोथ प्रारम्भ होकर चारों तरफ फैल जाता है। लसीकावाहिनियों में भी शोथ हो जाता है और वह फूट जाती है।

३. शोथयुक्त स्थान रक्तमय हो जाता है और वहाँ पर छोटे-छोटे छाले-से उभर आते हैं।

४. सन्धिशूल, शिरःशूल, ज्वर, अंगमर्द, वमन और मितली आदि लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

५. ज्वर चढ़ने के समय रोगी को ठंड लगती है। ज्वर ४ से ८ दिनों तक तीव्र रूप में रहकर उतर जाता है और अन्य लक्षण भी शान्त हो जाते हैं, किन्तु दुर्बलता बनी रहती है। ज्वर कुछ दिन शान्त रहने के बाद पुनः चढ़ जाता है, किन्तु पहले की अपेक्षा हलका रहता है। इस प्रकार से ३-४ या ५ बार मन्द-मन्द वेग आकर अन्त में शान्त हो जाता है। कभी-कभी महीनों और वर्षों तक इस रोग के वेग चलते रहते हैं।

○ यह रोग बिलकुल 'रिलैप्सिंग फीवर' के ही समान होता है।

निदान (Diagnosis)—मूषकदंश का इतिहास, पुनरावर्तक ज्वर तथा स्थानिक लक्षण आदि से रोग का अनुमान हो जाता है।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रक्त-परीक्षा—१. W. B. C. काउण्ट बहुत भिन्न होता है (बहुत कम अथवा बहुत उच्च स्तर पर)।

२. ब्लड-कल्चर अथवा अलसर के मेटेरियल को लेकर जाँच करने पर किंचित् पॉजीटिव (+) मिलता है।

३. एनिमल इनोकुलेशन टेस्ट पोजीटिव (+) होता है।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ बेन्जाइल पेनिसिलीन (Benzyl penicillin)

मात्रा—१ मैगा यूनिट I/M २ दिन तक। तत्पश्चात्—

फीनोक्सी मेथाइल पेनिसिलीन (Phenoxymethyle penicillin)

मात्रा—१२५ मि० ग्रा० दिन में ४ बार ५ दिन तक।

यदि रोगी पेनिसिलीन सहन न कर सके तो—

℞ स्ट्रेप्टोमाइसिन (Streptomycin)

मात्रा—१ ग्राम मांसपेशीगत ५ दिन तक।

अथवा—टेट्रासाइक्लीन (Tetracycline) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—२ कै० प्रति ६ घण्टे पर मुख द्वारा टेम्परेचर नार्मल होने तक।

स्थानीय चिकित्सा—व्रण को साबुन और पानी से साफ कर टिं० आयोडीन पेण्ट कर दें और एक विसंक्रमित ड्राई ड्रेसिंग कर व्रण को ढँक दें। ⊡

संक्रामक रोग 7/28

टाइफस ज्वर
(Typhus Fever)

पर्याय—टाइफस ज्वर, मोहक ज्वर, मोह, तन्द्रिक ज्वर, इपीडेमिक टाइफस।

परिचय—An acute febrile disease causd by 'R. Prowazekii' transmitted by louse, charaterized by continued fever, intense headache, muscular skin rash and neurological disturbances.

○ यह एक 'रिकेट्सिया प्रोवाजेकी' नामक जीवाणु के उपसर्ग से होने वाला तीव्र स्वरूप का ज्वर है, जिसमें तीव्र स्वरूप का संतत ज्वर, शिरःशूल, विशेष प्रकार के मस्कुलर विस्फोट, अवसाद, नाड़ी-संस्थान का विक्षोभ आदि लक्षण होते हैं।

कारण—टाइफस 'रिकेट्सिया प्रोवाजेकी' नामक जीवाणु से।

संक्रमण—स्वस्थ व्यक्तियों में जूं के द्वारा जीवाणुओं का संवहन।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संक्रमण क्षेत्र—गन्दे स्थानों में एक साथ रहने वालों में अधिक होता है। भारत में हिमालय की तराई, बम्बई, तमिलनाडु और पूना के पठारी प्रदेश में इसका प्रकोप अन्य प्रान्तों की अपेक्षा अधिक होता है।

लक्षण—१. रोगी को तीव्र शिरःशूल एवं कँपकँपी के साथ ज्वर आता है जो क्रमशः बढ़ता जाता है।

२. तीन दिन में ज्वर की तीव्रता काफी बढ़ जाती है। ज्वर पहले दिन १०२-१०३° फा० तक रहता है। किन्तु क्रमश बढ़ते-बढ़ते चौथे दिन १०५-१०६° फा० तक पहुँच जाता है।

३. शरीर का ताप पहले से ही जल्दी-जल्दी बढ़ता है और अचानक एक दिन घट जाता है। ज्वर की तीव्रता १०-१५ दिनों तक रहती है। प्रातःकाल इस ज्वर में कुछ कमी आती है।

४. १४-१५ दिनों तक ज्वर एक समान रह कर अकस्मात् पसीना आकर उतर जाता है। अथवा प्रतिदिन चढ़ता ही जाता है। यहाँ तक कि १०८-१०९° फा० तक होकर रोगी की मृत्यु तक हो जाती है।

५. ज्वर के प्रारम्भ से ही रोगी में प्रलाप, क्षोभ, निद्रानाश आदि लक्षण हो जाते हैं।

६. रोगी का चेहरा लाल तथा क्षुब्ध हो जाता है। शिरःशूल तथा कटि-शूल आदि रोगी को अत्यधिक कष्ट पहुँचाते हैं। यह शनैः-शनैः अवसाद का रूप धारण कर लेता है। प्रायः १०वें दिन क्षोभ अवसाद के रूप में बदल जाता है।

७. रोगी क्षीण तथा संज्ञाहीन होकर शय्या पर पड़ा गुनगुनाता रहता है। उसकी आँखें खुली-सी रहती हैं और वह हाथों से शरीर पर कुछ चुनता-सा रहता है।

पिडिकाएँ या विस्फोट—१. रोग-आक्रमण के चौथे या पाँचवें दिन शरीर पर गुलाबी रंग के विस्फोट निकल आते हैं। यह पिडिकाएँ नाभि और दोनों पार्श्वों से प्रारम्भ होकर क्रम से छाती तथा उदर पीठ से होकर शाखाओं एवं हस्तपाद तल तक फैल जाती हैं। यह प्रायः चेहरे पर नहीं फैलती।

२. प्रारम्भ में विस्फोट गुलाबी रंग के दबने वाले होते हैं। किन्तु बाद में लाल एवं भूरे रंग के न दबने वाले हो जाते हैं।

३. रोग का तीव्र आक्रमण होने पर इनमें रक्तस्राव की प्रवृत्ति होती है।

अन्य लक्षण—१. रोग के प्रारम्भिक २ दिनों में मस्तक एवं शाखाओं में पीड़ा तथा मितली।

२. गम्भीर स्वरूप के आक्रमण में आक्षेप, प्रलाप, मस्तिष्कावरण प्रक्षोभ, निद्रानाश तथा पुतली का सिकुड़ना।

३. रक्तस्रावी प्रवृत्ति होने पर कोष्ठबद्धता, नासारक्तस्राव आदि।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. कुछ रोगियों में W. B. C. का विनाश होने पर कामला की स्थिति।

५. हृदय की मांसपेशी में विकृति होने से हृदय-दौर्बल्य, रक्तचाप-न्यूनता, तथा सायनोसिस (Cyanosis)।

६. कुछ केसिस में ज्वर के समय प्लीहावृद्धि एवं ब्रॉन्काइटिस के लक्षण।

७. त्वचा (Skin) पाण्डुवर्ण की एवं विशेष गन्ध वाली।

८. मूत्र की मात्रा कम तथा उसमें शुक्लि की उपस्थिति।

९. रूक्षता के कारण रोगी अपनी जीभ बाहर नहीं निकाल पाता है।

निदान (Diagnosis)—○ बुखार, रोगी की बेचैनी तथा विशेष प्रकार के दानों से इसे भली प्रकार पहिचाना जा सकता है।

○ २ सप्ताह तक लगातार रहने वाला शीतपूर्वक तीव्र ज्वर, ज्वरारम्भ के ५वें दिन मध्य शरीर में लाल रंग के विशेष विस्फोटों की उत्पत्ति क्रमशः उनका अन्य स्थानों में बढ़ना, त्वचा में विशेष प्रकार की गन्ध, ब्लड-प्रेशर का नीचा होना, शिरःशूल, प्रलाप, तन्द्रा, आक्षेप आदि लक्षणों के आधार पर रोग का निदान हो जाता है।

विशेष परीक्षण (Special investigation)—

१. रक्त-परीक्षा में—श्वेतकणों की संख्या-वृद्धि १०–१२ हजार तक मिलती है।

रोग की गम्भीर अवस्था में—लिम्फोसाइट्स की अपेक्षाकृत वृद्धि।

२. वेल फेलिक्स रियेक्शन—पोजीटिव (+) मिलती है।

रोग-चिकित्सा—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी को वायु एवं प्रकाशयुक्त स्वच्छ कमरे में लिटाना चाहिए।

२. शय्याव्रण न हो इसके लिए समय-समय पर करवट बदलते रहें।

३. विषमयता तथा अधिक ताप के निराकरण हेतु अधिक से अधिक शीतल जल पिलाना।

४. आहार में मौसम्मी या सन्तरे का रस आवश्यक मात्रा में दें।

५. रोगी को ज्वर के बाद भी १ सप्ताह तक पूर्ण विश्राम की स्थिति में रखें।

६. त्वचा में गन्ध आने पर दिन में १ बार डिटॉल या सेवलान (Savlon) मिले जल से शरीर पोछें।

७. टेम्परेचर की अधिकता में शरीर को शीतल जल से पोंछें एवं सिर पर बर्फ की थैली रखें।

(२) औषधि चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ टेट्रासाइक्लीन (Tetracycline)

प्या० नाम—टेरामाइसिन (Terramycin) (फाइजर)

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—५०० मि० ग्रा० (२ कैपसूल) प्रति ४ घण्टे पर।

तत्पश्चात्—२५० मि० ग्रा० (१ कैपसूल) प्रति ४ घण्टे पर २ दिन तक।

तत्पश्चात्—प्रति ६ घण्टे पर ३ दिन तक।

○ ज्वर-मुक्ति के पश्चात् भी—२५० मि० ग्रा० प्रति ६ घण्टे पर ३ दिन तक।

नोट—रोग की तीव्रावस्था अथवा उपद्रवों की स्थिति में—टेरामाइसिन का भली प्रकार हलका घोल बनाकर इसकी प्रारम्भिक मात्रा I/V मार्ग से दें।

अथवा—ऑरियोमाइसिन (Aureomycin) और एक्रोमाइसिन (Acromycin)

प्रथम २ दिन—२५० मि० ग्रा० ४–६ घण्टे पर।

तत्पश्चात्—५ दिन तक—२५० मि० ग्रा० ६–८ घण्टे पर।

अथवा—क्लोरम्फेनिकाल (Chloramphenical)

प्रारम्भिक मात्रा—१००० मि० ग्रा० या ४ कैपसूल।

तत्पश्चात्—५०० मि० ग्रा० (२ कै०) प्रति ४ घण्टे पर ३ दिन तक।

तत्पश्चात्—प्रति ६ घण्टे पर ५०० मि० ग्रा० (२ कै०) ३ दिन तक।

○ मुख द्वारा औषधि न लेने पर—क्लोरम्फेनिकाल सक्सीनेट १ ग्राम दिन में २ बार मांसपेशीगत दें। तत्पश्चात् १ ग्राम प्रतिदिन जब तक रोगी मुख से औषधि न लेने लगे।

○ गम्भीर रोगियों में—℞ प्रेडनीसोलोन (Prednisolon) ५ मिग्रा०।

मात्रा—२ गोली दिन में ४-६ बार। तत्पश्चात् मात्रा धीरे-धीरे कम करते हुए ७ दिन बाद बन्द कर दें।

○ जो रोगी मुख से औषधि न ले सकें—

℞ डेक्सामेथासोन फॉस्फेट

व्या० नाम—वाइमेसोन (Mymeson) या डेकाड्रान

मात्रा—२ मि० ली० (४ मि० ग्रा०) दिन में ३ बार I/M

अथवा—वीटामेथासोन सोडियम फॉस्फेट

व्या० नाम—बेटनीसोल इञ्जेक्शन (Betnisol Inj.)

मात्रा—१ मि० ली० I/M दिन में ३ बार।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

निर्जलीभवन (Dehydration)—

१. पर्याप्त मात्रा में तरल का सेवन।

२. तरल न ले सकने की स्थिति में—डेक्स्ट्रोज ५०० मि० ली० (५%) I/V दें। तत्पश्चात्—'आइसोटोनिक ग्लूकोज सैलाइन' I/V दें।

३. 'हाइपरपाइरेक्सिया' तथा 'डिलीरियम' की चिकित्सा करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्देश—यह एक ऐसा रोग है, जिसमें रक्तस्राव की प्रवृत्ति रहती है। अतः प्रारम्भ से ही सहायक औषधि के रूप में विटामिन 'सी' और 'के' का प्रयोग करते रहें। साथ ही इससे विषमयता में भी लाभ मिलता है।

○ एक लम्बे समय तक 'विटामिन्स' तथा 'टॉनिक्स' का नियमित प्रयोग अपेक्षित है। ⊡

संक्रामक रोग 7/29

डेंग्यू ज्वर
(Dengue Fever)

पर्याय—डेण्डी फीवर (Dandy fever), अस्थि-भंजन ज्वर, शूलास्थि ज्वर, दण्डक ज्वर, ब्रेक बोन फीवर (Break bone fever), हड्डी-तोड़ ज्वर।

परिचय—It is an acute viral infection with diphasic febrile episode, severe headache, myalgia and morbilliform rash.

○ यह उपसर्ग से होने वाला तीव्र स्वरूप का औपसर्गिक ज्वर है। इससे प्रभावित रोगी अत्यन्त दुर्बलता का अनुभव करता है। टेम्परेचर का अनुबन्ध बीच में कम होकर पुनः बढ़ता है। साथ ही पूरे शरीर में विशेषकर अस्थियों (Bones) एवं सन्धियों (Joints) में जकड़ाहट एवं तीव्र वेदना होने के कारण शरीर दण्ड के समान कड़ा हो जाता है। प्रायः पाँचवें अथवा सातवें दिन के बीच विसर्प के समान त्वचा पर एक विशेष प्रकार के लाल चकत्ते निकलते हैं।

○ इसमें ज्वर के साथ-साथ हड्डियों में तेज दर्द होता है और ऐसा प्रतीत होता है जैसे हड्डिया टूट रही हों। त्वचा पर छोटे-छोटे गुलाबी रंग के दानें (विस्फोट) निकलते हैं। ज्वर एकाएक १०४° फा० तक बढ़ जाता है।

कारण—इस रोग का प्रमुख कारण 'डेंग्यू वायरस' होता है।

संक्रमण—इसका संक्रमण 'क्यूलेक्स मच्छर' 'Aedes aegypti' के द्वारा प्रसारित होता है।

संक्रमण-क्षेत्र—यह रोग संसार के विभिन्न भागों में महामारी (Epidemic) के रूप में फैलता है। हमारे देश में सन् १८७१ से १८७५ तक इसका भयंकर रूप से प्रसार हुआ था। समुद्र के निकट के प्रदेशों, यथा—बम्बई, मद्रास, उड़ीसा, बंगाल आदि में इसका स्थानीय आक्रमण कुछ-न-कुछ सदैव बना ही रहता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीड़ित होने वाले व्यक्ति—प्रायः सभी व्यक्ति समान रूप से पीड़ित होते हैं। कोई भी व्यक्ति अपने जीवन में इससे २-३ बार से अधिक पीड़ित नहीं होता है, क्योंकि उनमें क्रमशः रोग-प्रतिकारक क्षमता बढ़ती ही जाती है।

○ नये रोगग्रस्त व्यक्ति ही इससे अधिक पीड़ित होते हैं।

संचयकाल—३-१५ दिन।

लक्षण—१. तापक्रम—इस रोग में ज्वर का सहसा आक्रमण होता है, जो १०२–१०५° फा० तक चला जाता है। साधारण आक्रमण होने पर १००° फा० तक ही रहता है।

२. शूल (Pain)—इसमें आमवात की तरह हाथ-पैर, पीठ, सन्धियों तथा कटि आदि में शूल होता है।

३. यह रोग अस्थियों को अधिक प्रभावित करता है, जिससे रोगी चलने में असमर्थ रहता है।

४. पहले एक सन्धि में पीड़ा होती है। इसके बाद सभी सन्धियों में पीड़ा होकर रोगी का टेम्परेचर बढ़ जाता है।

५. मुखमण्डल लाल हो जाता है और गले में खराश होती है।

६. वमन, हृल्लास (Nausea) तथा कोष्ठबद्धता बनी रहती है।

७. नाड़ी-गति न्यूनता—तापक्रम बढ़ने पर भी नाड़ी की गति न्यून ही बनी रहती है, जो इस रोग की एक विशेषता है।

८. तापक्रम कम होने पर प्रस्वेद एवं अतिसार हो जाता है।

९. कुछ केसिस में नाक से रक्त भी आता है।

१०. रोगी के शरीर तथा हड्डियों में तीव्र दर्द होता है, जो इस रोग का प्रधान लक्षण है। दर्द सबसे पहले हाथ की अँगुलियों में अधिक होता है और एक जगह से हटकर दूसरी जगह होने लगता है।

११. जीभ का स्वाद बिगड़ जाता है; कुछ भी खाते-पीते नहीं बनता है। रोगी की भूख मारी जाती है।

१२. ५-६ दिन के अन्दर खसरे के समान दाने भी निकल आते हैं।

१३. प्रायः ८वें दिन ज्वर अकस्मात् उतर जाता है और पीड़ा आदि लक्षण भी दूर हो जाते हैं, तब रोगी को पसीना तथा अतिसार हो जाता है।

१४. कभी-कभी उपसर्ग के रूप में कर्णमूलशोथ (Mumps) भी हो जाता है।

अन्य लक्षण—उपरोक्त लक्षणों के अतिरिक्त रोगी में निम्न लक्षणों की भी सम्भावना रहती है—

१. कटिशूल (Backache)।

२. शारीरिक शक्ति का अतिशय ह्रास।

३. चलने में असमर्थता (Stiffness)।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. अरुचि (Anorexia)।
५. शिर:शूल (Headache)।
६. आँख के पीछे शूल होना (Pain behind the eye)।
७. गर्दन की जकड़ाहट (Stiffness in neck)।
८. मलावरोध (Constipation)।
९. उदरशूल (Colicky pain)।
१०. लिम्फ नोड्स का बढ़ना।
११. संज्ञाहीनता (Dilirium)।
१२. मूत्रकृच्छ्र (Dysuria)।
१३. गले में व्रण तथा खाँसी।
१४. प्रकाश सहन न होना (Photophobia) आदि।

नोट—लम्बी हड्डियों में गम्भीर स्वरूप की पीड़ा होती है।

निदान (Diagnosis)—विशिष्ट प्रकार का तीव्र ज्वर, सर्वांगवेदना, अस्थि-पीड़ा, नाड़ी-मन्दता तथा अन्तिम रूप से ज्वरमोक्ष के पूर्व लाल रंग के विस्फोटों की उत्पत्ति, मानसिक अवसाद एवं ज्वर की स्वयं मर्यादितता के आधार पर 'डेंग्यू फीवर' का निर्णय हो जाता है।

परीक्षण में (On examination)—१. तापक्रम बढ़ा हुआ मिलता है, जो तीसरे दिन उतर जाता है। चौथे-पाँचवें दिन पुन: बढ़ जाता है।
२. रक्तचाप (B. P.) कम मिलता है।
३. प्लीहा (Spleen) कभी-कभी अनुभव होती है।
४. ब्लड-काउण्ट प्राय: नार्मल मिलता है।
५. ज्वर के अनुपात में नाड़ी मन्द होती।
६. लिम्फोसाइट्स की वृद्धि (२०००–४००० तक)।
७. कॉम्प्लीमेण्ट फिक्सेसन टेस्ट पोजीटिव (+) होता है।

नोट—लक्षणों में अत्यधिक विविधता होने के कारण प्राय: बिना निदान हुए ही रोगी ज्वर-मुक्त हो जाता है।

सापेक्ष निदान—शीतपूर्वक ज्वर आरम्भ होने के समय निम्न रोगों से विभेद करना चाहिए—१. रोमान्तिका, २. मसूरिका, ३. मलेरिया, ४. लोहित ज्वर, ५. इन्फ्लूएञ्जा तथा ६. आमवात ज्वर आदि।

नोट—इसका सापेक्ष निदान विशेषकर इन्फ्लूएञ्जा से करना चाहिए।

कोर्स—प्राय: रोग का कोर्स ६ से ९ दिन का होता है।

चिकित्सा (Treatment)—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोगी को १ सप्ताह तक शय्या पर पूर्ण विश्राम दें।
२. रोग-प्रसार के समय मच्छरदानी का प्रयोग करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. उच्च तापक्रम (High temperature) तथा बेचैनी की स्थिति में उबाल कर शीतल किये हुए जल से शरीर पोंछें।

४. वमन तथा मितली की स्थिति में बर्फ का टुकड़ा चूसने को दें।

५. प्रथम ३ दिन तक उबला हुआ शीतल जल अधिक से अधिक दें। तत्पश्चात् तीसरे दिनों से फलों का रस, ग्लूकोज + पानी थोड़ा-थोड़ा करके दें।

६. मल-शुद्धि के लिए ज्वर आते ही 'केलोमेल' तत्पश्चात् मैगसल्फ का विरेचन दें।

७. ज्वर तीव्र होने पर सिर पर बर्फ की थैली का प्रयोग करें।

८. अक्षिगोलक (Eyeball) की वेदना की शान्ति के लिए बर्फ के टुकड़े को कपड़े में लपेट कर आँख पर रखें।

○ **सर्वांग वेदना के लिए**—'विक्स वेपोरब' अथवा 'विण्टोजीनो' (Wintogeno) मलना चाहिए।

(२) **औषधि-चिकित्सा** (Medicinal treatment)—इस रोग की कोई विशिष्ट चिकित्सा नहीं है, केवल लाक्षणिक चिकित्सा ही की जाती है।

(१) **बुखार** (Fever)—१. उच्च तापक्रम पर ठंडे पानी का स्पंज करें।

२. सिर पर बर्फ की थैली रखें।

३. अल्कलाइन मिक्श्चर—अल्कासोल (Alkasol)

मात्रा—२-२ चम्मच दिन में ३ बार।

अथवा निम्न योग दें—

सोडा सैलीसिलास	६०० मिग्रा०
सोडा बाइकार्ब	१२०० मिग्रा०
टिं० बेलाडोना	१० मिनिम
टिं० कॉर्डं	१० मिनिम
सीरप ऑरेंशाई	१ ड्राम
जल	३० मिली०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार।

साथ ही—'नोवाल्जिन' अथवा 'इस्जीपायरिन' का इञ्जेक्शन दें।

नोट—इस क्रम से ज्वर तथा सर्वांग वेदना में लाभ मिलता है।

अथवा निम्न योग दें—

सोडा सैलीसिलास पाउडर	६०० मिग्रा०
फेनासिटिन पाउडर	१८० मिग्रा०
टिं० नक्स	०.३ मिली०
स्प्रिट क्लोरोफार्म	०.३ मिली०
जल कुल	३० मिली०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३-४ बार

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—इससे ज्वर शान्त हो जाता है तथा हड्डी टूटने जैसी तीव्र वेदना दूर होती है।

साथ ही शोथयुक्त संधियों की पीड़ा में—लिनीमेण्ट एकोनाइट + लि० बेलाडोना + लि० कैम्फर—तीनों को बराबर-बराबर मिलाकर (लि० ए० बी० सी०) आक्रान्त शोथयुक्त सन्धियों पर दिन में २-३ बार मलें।

(२) **सर्वांग वेदना**—टेबलेट ए० पी० सी० (Tab. A. P. C.)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार दें।

अथवा—पैरासिटामोल	५०० मिग्रा०
फेनासेटिन पाउडर	१५० मिग्रा०
कैफीन साइट्रास पाउडर	५० मिग्रा०
एस्प्रिन पाउडर	५० मिग्रा०
ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार जल से।	१ मात्रा

गम्भीर वेदना की स्थिति में—

℞ पैथिडीन (Pethidine) ५० मि० ग्रा० मुख द्वारा।

अथवा—एस्प्रिन	१८० मिग्रा०
फेनासिटीन	१२० मिग्रा०
सिवाल्जिन	१ गोली
कैफीन साइट्रेट	१२० मिग्रा०
सोडा बाइकार्ब	३०० मिग्रा०
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा प्रति ६ घण्टे पर गर्म जल से।

(३) **निद्रानाश** (Sleeplessness) **में**—उपरोक्त योग में 'सोडियम गार्डीनल' ६० मि० ग्रा० मिलाकर दें।

(४) **मितली एवं वमन** (Nausea and vomiting)—

℞ क्लोर प्रोमेजीन (Chlorpromezine)

व्या० नाम—लार्गेक्टिल (Largactil) २५ मि० ग्रा० ओरली।

(५) **डिहाइड्रेशन**—इण्ट्रावीनस इन्फ्यूजन दें।

○ **रोग की प्रत्येक अवस्था में**—'एक्रोमाइसिन' एवं 'आइलोटाइसिन' का प्रयोग करना चाहिए।

○ **रोगमुक्ति के पश्चात् की दुर्बलता में**—ज्वरमोक्ष के तत्काल बाद से 'ईस्टर्न सीरप'—२-२ चम्मच दिन में २ बार भोजनोपरान्त दें।

साथ ही—'सीरप मिनाडेक्स' २-२ चम्मच प्रातः-सायं दूध के साथ दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डेंग्यू ज्वर में प्रयुक्त अन्य चिकित्सा-क्रम—

(१) शूल तथा ज्वर में—

नोवाल्जिन क्विनीन (हैक्स्ट कं०)
मात्रा—१-२ ड्रेगी दिन में २-३ बार।
अथवा—कोडोपाइरीन (Codopyrine) (ग्लैक्सो)
मात्रा—१-१ गोली दिन में ५-६ बार।
अथवा—पेथिडीन हाइड्रोक्लोराइड (Pethidine hcl.)
मात्रा—५०-१०० मि० ग्रा० I/M या I/V दें।
अथवा—नोवाल्जिन, सेरीडोन अथवा सिवाल्जिन
मात्रा—१-१ गोली दिन में ३-४ बार।
अथवा—इञ्जे० नोवाल्जिन २ मि० ली० मांसपेशीगत १-२ बार।

(२) अनिद्रा तथा बेचैनी में—

℞ टेबलेट फीनोबार्बीटोन (बूट्स कं०)
मात्रा—१-४ गोली दिन में ३-४ बार जल से।
अथवा—माइक्रोपाइरिन (Micropyrine) (शेरिंग कं०)
मात्रा—२-२ गोली दिन में ४ बार।
अथवा—टे० सिवाल्जिन ½ गोली + एस्प्रिन १५० मि० ग्रा०
दोनों को मिलाकर १ मात्रा दिन में ३-४ बार।
अथवा—इञ्जे० फाइसेप्टोन (Inj. Physepton)
मात्रा—१ मि० ली० I/M अथवा S/C दें। □

संक्रामक रोग **7/30**

लीशमैनिएसिस
(Leishmaniasis)

पर्याय—कृष्णज्वर, काला बुखार, काला-जार, भारतीय कालज्वर (Indian kala-azar), डमडम ज्वर (Dum-dum fever), वर्दवान ज्वर (Burdwan fever) या आशयिक लीशमनीयता (Visceral leishmaniasis), उष्णकटिबन्ध जन्य प्लीहावृद्धि (Tropical splenomegali)।

परिचय—It is a specific disorder due to systemic infection caused by *'Leishmania donovani'* characterized by irregular fever, pigmantation, wasting, hepetosplenomegali, anaemia and leucopenia.

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ कालाजार एक चिरस्थायी संक्रामक रोग है, जिसमें अनियमित मन्द ज्वर आता रहता है। यकृत्-प्लीहावृद्धि, रक्तन्यूनता एवं क्षीणता आदि इसके विशेष लक्षण हैं।

कारण—इसका वास्तविक रोग उत्पादक जीवाणु 'लीशमैनिया डोनोवानाइ' (Leishmania donovani) है।

प्रसार—रोग का प्रसार मरुमक्षिका के दंश से होता है।

प्रभावित होने वाले क्षेत्र—विश्व में इसके सर्वाधिक स्थानिक क्षेत्र (Endemic area) भारत और पाकिस्तान में पड़ते हैं। हमारे देश में यह रोग आसाम, बंगाल, बिहार, उड़ीसा, पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं तमिलनाडु आदि आर्द्र एवं उष्ण जलवायु वाले स्थानों में अधिक होता है।

प्रकोप माध्यम—विषम ज्वर (Malaria) जीवाणु की तरह कालाजार का जीवाणु भी बालु मक्षिका के शरीर में एक अलग जीवन-चक्र सम्पादित करता है।

संचय-काल—लगभग २-६ महीना। कम से कम ३ सप्ताहों और अधिक से अधिक २ वर्षों तक का।

रोग-लक्षण—इसके लक्षण निम्न प्रकार से होते हैं—

(१) **ज्वर-सम्बन्धी लक्षण**—१. ज्वर अनियमित रहता है। ज्वर का प्रारम्भ कभी मलेरियल ज्वर के समान होता है, तो कभी टाइफाइड के समान। कभी-कभी शनैः शनैः अनियमित रूप का होता है।

○ २. ज्वर सदैव अनियमित अविसर्गी रूप से आता है। ज्वर पहले ३-४ सप्ताह तक आता है। कुछ समय बाद ज्वर दिन में २ बार आने लगता है। यही इस ज्वर का विशेष लक्षण है।

३. ज्वर कुछ समय बन्द होकर पुनः आने लगता है।

४. ज्वर के वेग एक-दो बार आकर स्थायी रूप से मन्द-मन्द आने लगते हैं।

५. ८०% रोगियों में ज्वर अनियमित एवं अविसर्गी होता है।

६. इस ज्वर की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि रोगी १०३-१०४° फा० तक टेम्परेचर से पीड़ित होने पर भी अस्वस्थ नहीं मालूम होता है। वह अपना सामान्य कार्य करता रहता है।

७. ज्वर-मुक्ति के पश्चात् रोगी का स्वास्थ्य कुछ समय के लिए सुधर जाता है।

८. रात्रि के समय रोगी को पसीना अधिक आता है और वह अपने को ज्वर रहित अनुभव करता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

९. इस ज्वर में ज्वरमोक्ष मध्यरात्रि के पूर्व हो जाता है।

१०. कुछ केसिस में रोगी को किसी विक्षोभ लक्षण के बिना ही अनेक सप्ताहों तक सविरामी (Intermittent) या अल्प विरामी (Remittant) ज्वर हो सकता है।

११. कभी-कभी रोगी को चौबीस घण्टों के दौरान ज्वर में २ बार वृद्धियाँ अर्थात् उभय अल्पविरामी ज्वर (Double remittent fever) हो जाता है।

(२) प्लीहावृद्धि सम्बन्धी लक्षण—

१. प्लीहावृद्धि इसका एक विशिष्ट लक्षण है। ज्वर-मुक्ति के बाद भी प्लीहा उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है।

२. प्लीहा सामान्यतया रोग के लगभग तीसरे सप्ताह में परिस्पृश्य (Palpable) होती है और उसके बाद उसमें Progressive enlargement होने लगता है।

३. लगभग ५-६ महीनों में प्लीहा का निचला छोर नाभि तक पहुँच जाता है। इस प्रकार से प्लीहा १ माह के पश्चात् स्पर्शलभ्य और ४ माह के बाद २ अंगुल और ५-६ मास के बाद नाभि तक बढ़ जाती है। बहुधा सर्वप्रथम प्लीहावृद्धि ही रोग का सन्देह उत्पन्न करती है।

४. प्लीहा प्रारम्भ में कोमल (Soft) तथा पुराने केसिस में सुदृढ़ हो जाती है।

(३) यकृद्वृद्धि सम्बन्धी लक्षण—८०% केसों में यकृत् बढ़ता जाता है। यकृत् स्पर्श में कठोर तथा वेदनारहित होता है।

(४) कृष्णता—अधिकांश केसों में मस्तक, मुख, हाथ-पैर के तल आदि स्थानों पर काले रंग के धब्बे दिखलाई देते हैं। इसी विवर्णता के आधार पर इस रोग का नाम 'काला ज्वर' रखा गया है।

(५) कृशता (Weakness)—१. इस ज्वर में लगातार दुर्बलता बढ़ती जाती है।

२. वजन में कमी एवं अरक्तता में वृद्धि होती जाती है।

३. चिरकारी केसों में रोगी का विशिष्ट स्वरूप दिखलाई देने लगता है।

४. बाल पतले, शुष्क तथा कान्तिहीन दिखलाई पड़ते हैं और पर्याप्त संख्या में गिरते रहते हैं।

(६) त्वचा सम्बन्धी लक्षण—त्वचा शुष्क और रूक्ष होती है।

(७) अन्य लक्षण—१. रोगी दुर्बल हो जाता है और उसके टखनों (Ankles) के चारों तरफ शोफ (Oedema) हो जाता है।

२. प्लीहा एवं यकृद् वृद्धि से उदर में उभार हो जाता है। कभी-कभी रोगी को जलोदर भी हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. प्रॉमीनेण्ट रिब्ज सहित वक्षभित्ति (Chest wall) क्षीण हो जाती है।

४. रक्तचाप (B. P.) का कम होना।

५. मन्यास्तम्भ।

नोट—भोजन के प्रति रुचि एवं पाचन-शक्ति के ठीक होते हुए भी शरीर का कृश होते जाना कालाजार में अधिक मिलता है।

(८) **रक्तस्राव-प्रवृत्ति**—इस रोग में रोगी के नाक, दन्तमूल और मल के साथ रक्त का आना अधिक मिलता है। मसूड़ों और नाक से रक्तस्राव की प्रवृत्ति मिलती है। दाँतों के ढीलेपन की शिकायत हो सकती है।

○ चिरकारी रोग में (In chronic cases) त्वचागत रक्तस्राव (Cutaneous haemorrhage) की प्रवृत्ति मिलती है।

निदान (Diagnosis)—जीर्ण स्वरूप का अनियमित ज्वर, अहोरात्रि में दो बार आरोह-अवरोह क्रम, प्लीहा का क्रम से बढ़ते जाना, यकृद् वृद्धि, पाचनशक्ति का स्वाभाविक रहना, त्वचा पर काले रंग के धब्बे, शरीर-क्षीणता होने पर भी रोगी को व्याधि का अनुभव न होना, नाक, दंतमूल, मलद्वार आदि स्थानों से रक्तस्राव की प्रवृत्ति आदि लक्षणों के आधार पर काला ज्वर का अनुमान किया जाता है।

अन्य निदानात्मक चिह्न—

१. रोगी में रक्ताल्पता मिलती है।

२. बुखार न भी होने पर नाड़ी ऊँची मिलती है।

३. पिटिंग ईडिमा की उपस्थिति।

४. बालों का सूखा होना।

५. चिरकारी रोगों में यकृत् एवं प्लीहावृद्धि में १ और २½ का अनुपात मिलता है।

६. हृदय टेकीकार्डिया और Haemic murmur प्रदर्शित करता है।

७. फुप्फुस ब्रॉन्काइटिस के चिह्न प्रकट करता है।

८. रक्तचाप (B. P.) कम मिलता है।

९. लिवर बढ़ा हुआ मिलता है।

१०. प्लीहा स्पर्श-लभ्य तथा १ माह के अन्त में २-३ सेण्टीमीटर बढ़ी हुई मिलती है।

नोट—उपरोक्त लक्षणों एवं चिह्नों के आधार पर कालाज्वर का निदान हो जाता है।

परीक्षण (Investigation)—**रक्त-परीक्षा**—रक्त की परीक्षा करने पर निम्न तथ्यों की प्राप्ति होती है—

१. ल्यूकोपेनिया (Leucopenia) मिलती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. चिरकारी केस में टोटल W. B. C. काउण्ट ३,००० प्रति क्यूबिक मि० मी० होती है।

३. अनेक सीरोलॉजिकल टेस्ट पोजीटिव (+) मिलते हैं।

४. रोग की प्रारम्भिक अवस्था में निदान के लिए कॉम्प्लीमेण्ट फिक्सेसन टेस्ट पर्याप्त होता है।

५. बीमारी के तीसरे सप्ताह से लगभग ९५% केसों में धनात्मक प्रतिक्रिया (Positive reaction) पायी जाती है।

○ 'एल्डिहाइड' और 'एण्टीमनी' परीक्षण चिरकारी कालाजार के निदान के लिए उपयोगी होती है।

○ लसीका-परीक्षा—इस रोग में लसीका का रासायनिक संगठन परिवर्तित हो जाता है। उसमें शुक्लि का अनुपात स्वाभाविक से कम और ग्लोबुलिन का अनुपात स्वाभाविक से अधिक होता है।

नोट—निदान की दृष्टि से सापेक्ष टोटल W. B. C. काउण्ट तथा लसीका परीक्षा विशेष महत्त्व रखती है।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—काला ज्वर का निम्न रोगों से भेद करना चाहिए—

१. जीर्ण मलेरिया ज्वर (Chronic malarial fever)

२. हॉजकिन्स रोग।

३. टायफाइड फीवर (Typhoid fever) t

चिकित्सा (Treatment)—

(१) **सामान्य चिकित्सा** (General treatment)—१. कमरे की भलीभाँति सफाई तथा डी० डी० टी० का प्रयोग।

२. रोगी को लघुपाकी पौष्टिक आहार, फल तथा दूध का सेवन करायें।

(२) **औषधि चिकित्सा** (Medicinal treatment)—

℞ इञ्जे० सोडियम एण्टीमनी ग्लूकोनेट (१०० मिग्रा०/प्रति मि० ली० १० मि० ग्रा०/प्रति किलो (अधिकतम मात्रा ६०० मि० ग्रा०) I/M अथवा I/V प्रतिदिन १० दिनों तक।

अथवा—एरोमेटिक डायमिडीन (Aromatic diamidine)

व्या० नाम—पेण्टामिडीन इसीथियोनेट (Pentamidine isethionate)

मात्रा—५ मि०ग्रा०/प्रति किलो भार पर; ७ इञ्जेक्शन (कुल मात्रा २ ग्राम ७ इञ्जेक्शनों की)।

अथवा—निओस्टीबामिन (Neostibamine)

मात्रा—०·३ ग्राम I/M अथवा I/V। टोटल मात्रा–३–३·५ ग्राम।

अथवा—इञ्जे० यूरिया-स्टीबामिन (Inj. Urea stibamine)

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा—३ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर I/V इञ्जे० प्रतिदिन १० दिनों तक।

कुल ३ कोर्स तक। प्रति कोर्स के बीच १० दिनों का अन्तराल दें।

जब सभी औषधियाँ असफल हो जायें तब—

℞ इञ्जे० एम्फोटेरीसिन (Inj. Amphotericin)

मात्रा—२५० माइक्रोग्राम—१ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर प्रतिदिन। ५% डेक्स्ट्रोज घोल में मिलाकर I/V दें। टोटल मात्रा—२ ग्राम।

यदि बीमारी बहुत प्रतिरोधी (Resistant) हो तो—

प्लीहा-उच्छेदन (Splenoctomy) की आवश्यकता पड़ती है।

बच्चों में—सोडियम स्टीबोग्लूकोनेट की मात्रा—१ मिली०। अधिकतम मात्रा—३ मि० ली०।

शिशुओं के लिए—२ मि० ली०।

कुल १० इञ्जेक्शन के माध्यम से प्रतिदिन या १ दिन छोड़कर। १० दिन का विराम देकर पुनः १० इञ्जेक्शन देने चाहिए।

ग्लूकामाइन एण्टिमोनिएट (Glucamine Antimoniate)

वयस्क—प्रारम्भिक मात्रा—३-५ मि० ली०। अधिकतम मात्रा—५-१० मि० ली०।

शिशुओं और बच्चों के लिए—१५ इञ्जेक्शन १—१ दिन बाद दिया जाता है।

लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment)—

(१) श्वेतकणों की संख्या स्वाभाविक न होने पर—

℞ सोडियम न्यूक्लिनेट (Sodium Nuclenate)

मात्रा—३ मि० ली० I/M २ दिन छोड़ कर कुल ६—१२ इञ्जेक्शन।

अथवा—पाइरीडॉक्सिन हाइड्रॉक्लोराइड (Pyridoxin Hcl.) का उचित मात्रा में प्रयोग।

अथवा—सोडियम कैकोडिलेट (Sodium cacodylate)

मात्रा—६०—१२० मिग्रा० I/M कुल ६ से ८ इञ्जेक्शन पर्याप्त हैं।

(२) प्लीहावृद्धि—इसके लिए निम्न योग लाभकारी होता है—

क्विनीन सल्फ	२४० मिग्रा०
एसिड सल्फ डिल	५ मिनिम
फैरी सल्फ	१८० मिग्रा०
टिं० नक्स	५ मिनिम
टिं० आयोडीन रेक्टी०	१ मिनिम
लाइकर आर्सेनिकेलिस	३ मिनिम

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्लिसरीन	२० मिनिम
मैग सल्फ	१ ड्राम
एक्स्ट्रेक्ट कालमेघ	१० मिनिम
एक्वा	१ औंस
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार १० दिनों तक।

आवश्यक होने पर १ सप्ताह बाद पुनः १० दिन तक दे सकते हैं।

(३) **रक्ताल्पता** (Anaemia)—

टेबलेट फैरस सल्फेट २०० मि० ग्रा०

१ मात्रा दिन में ३ बार भोजनोपरान्त हीमोग्लोबिन सामान्य होने तक।

(४) **रक्तस्रावी विकार होने पर**—कैल्शियम लैक्टेट ६०० मि० ग्रा०+ विटामिन सी २५० मि० ग्रा०+विटामिन 'के' १० मि० ग्रा०/१ मात्रा—ऐसी १ मात्रा दिन में २-३ बार जल से।

उपद्रवों की चिकित्सा—

१. **डिसेण्ट्री**—रोगानुसार डिसेण्ट्री में बतलाये अनुसार।

२. **न्यूमोनिया एवं ब्रॉन्को-न्यूमोनिया**—

℞ बेञ्जिल पेनिसिलीन (Benzyl penicillin)

मात्रा—५००,००० यूनिट दिन में २ बार मांसपेशीगत।

लाभ न मिलने पर—ब्रॉड स्पेक्ट्रम एण्टीबायोटिक—टेट्रासाइक्लीन, एम्पीसिलीन आदि का प्रयोग।

(३) **राजयक्ष्मा**—१. शय्या पर पूर्ण विश्राम।

२. उच्च कैलोरी का आहार।

३. एण्टी ट्युबरकुलस ड्रग्स+कालाजार निरोधी औषधि (पेण्टामिडीन) का उपयोग।

(४) **अतिसार**—सल्फाग्वानेडीन २ गोली+कार्बो-केओलिन १२० मि० ग्रा०+पल्व ईसबगोल १ ड्राम/१ मात्रा—ऐसी १ मात्रा प्रति ३ घण्टे पर सौंफ के अर्क में मिलाकर।

नोट—दिल्ली के आस-पास इसका प्रभाव अधिक होने के कारण इसे 'दिल्ली व्रण' तथा अतिजीर्ण रूप में होने के कारण 'प्राच्य व्रण' भी कहते हैं।

○ इस उपद्रव के अन्तर्गत सूर्य के प्रकाश में आने वाले अंगों पर पेपूल (Papule) के समान उत्पत्ति होती है। कुछ समय बाद इसकी पपड़ी बाहर निकल आती है और व्रण दिखलाई देने लगता है।

चिकित्सा-व्यवस्था—१. एन्थियोमेलीन (M. B.)—½ मि० ली० मांस-पेशीगत। क्रम से ½ मि० ली० प्रति तीसरे दिन बढ़ा कर २ मि० ली० की मात्रा में १५-२० इञ्जेक्शन दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. आयरन—आर्सेनिक योग तथा विटामिन्स का प्रयोग।

३. द्वितीयक संक्रमण के लिए—एण्टीबायोटिक+सल्फा ड्रग्स का प्रयोग।

स्थानीय चिकित्सा—'डाइथ्रैनोल' या 'सिगनालिन' को व्रण पर १५ दिन तक लगायें।

साथ ही—बर्बेरिन सल्फेट १५ मि० ग्रा० + डिस्टिल्ड वाटर १ मि० ली० दोनों को मिलाकर त्वचा में व्रण के चारो तरफ इञ्जेक्शन दें।

१० दिनों का विराम देकर पुनः प्रयोग करें। ३-४ बार ऐसा करने से व्रण की पूर्ण निवृत्ति हो जाती है।

अथवा—इमेटीन हाइड्रोक्लोराइड ५% सोलूशन—१०-२० बूँद व्रण के चारों ओर त्वचा के नीचे इञ्जेक्शन दें।

बचाव—१. मच्छरदानी लगा कर सोयें।

२. रोगी को अलग रखकर चिकित्सा करें। ⊡

संक्रामक रोग 7/31

ब्रूसेलोसिस
(Brucellosis)

पर्याय—अण्डूलेण्ट फीवर (Undulant fever), माल्टा फीवर (Malta fever), एबॉर्टस फीवर (Abortus fever)।

परिचय—It is an infectious disease caused by 'Brucella organism' transmitted by direct contract with hogs, cattle and goats, characterized by undulant or intermittent, rise of temperature, chill, headache, loss of weight, irritability, splenomegaly, mild arthritis and relative lymphocytosis.

○ माल्टा फीवर एक संक्रामक रोग है। जिसमें शीतपूर्वक ज्वर का आक्रमण, शिरःशूल, भार में कमी, उत्तेजनशीलता, सन्धिशोथ आदि लक्षण हो जाते हैं।

कारण—ब्रूसेला ऑर्गेनिज्म (Brucella organism)।

संक्रमण—१. संक्रमित दूध पीने (To drink infected milk)।

२. संक्रमित पशु के सीधे सम्पर्क में (Direct contract with infected animal)।

संचयकाल—३ सप्ताह।

रोग-लक्षण—१. रोग का आक्रमण धीरे-धीरे होता है।

२. रोगी की भूख मारी जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. शिरःशूल।

४. रोगी कभी-कभी काँपता है।

५. प्लीहा स्पर्श-लभ्य मिलती है।

६. रोग की गम्भीर अवस्था में न्यूट्रोपेनिया तथा लिम्फोसिटोसिस मिलता है।

७. रोगी अत्यधिक दुर्बल हो जाता है।

८. रोगी के पैरों तथा जोड़ों में हल्का-हल्का ज्वर होता है।

९. गले में जख़्म होकर खाँसी का आना।

१०. टेम्परेचर रुक-रुक कर आना अथवा लगातार रहना।

उपद्रव (Complications)— ○ डिप्रेशन तथा विक्षोभनशीलता।

○ सबएक्यूट आर्थ्राइटिस।

निदान (Diagnosis)—१. ब्लड कल्चर करने से। २. एग्लूटीनेशन टेस्ट।

चिकित्सा—℞ टेट्रासाइक्लीन (Tetracyclin) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कै० मुख द्वारा प्रति ६ घण्टे पर ७ दिन तक।

साथ ही—स्ट्रेप्टोमाइसिन (Streptomycin)

मात्रा—१ ग्राम I/M ३ इञ्जेक्शन ७ दिन तक।

नोट—इन दोनों औषधियों को साथ-साथ प्रयोग किया जा सकता है। तत्पश्चात् ७ दिन विराम देकर पुनः औषधि प्रारम्भ की जाती है।

○ इस प्रकार ७ दिनों का बीच-बीच में विराम देकर ४ कोर्स तक औषधि चलायी जाती है। इससे रोग के दुबारा रिलैप्स होने की सम्भावना नहीं रहती है।

निर्देश—कम से कम २१ दिनों तक औषधि चिकित्सा-क्रम को चलाना चाहिए। □

संक्रामक रोग 7/32

हर्पीज जेनीटेलिस
(Herpes Genitalis)

परिचय—पुरुषों में होने वाला यह एक विचित्र रोग है, जो वायरसजन्य होता है। इसमें रोगी के शिश्नमुण्ड (Glans penis) किन्तु नन्हें-नन्हें दानें (फुंसियाँ) निकल आती हैं। यह एक तीव्र संक्रामक रोग है।

कारण—यह 'वायरस' के द्वारा होता है तथा निर्धन वर्ग के पुरुषों में अधिक मिलता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आक्रमण—इस रोग का आक्रमण बार-बार होता है।

लक्षण—○ शिश्नमुण्ड पर नन्हें-नन्हें दाने या फुंसियाँ संख्या में ३ या ४ अथवा अधिक निकल आती हैं।

○ इन फुंसियों की एक विशेषता होती है कि पेनिसिलीन चिकित्सा इस पर बिलकुल प्रभावकारी नहीं होती।

चिकित्सा (Treatment)—

℞ क्लोरम्फेनिकाल (Chloramphenical) २५० से ५०० मि० ग्रा० मात्रा—१-१ कैपसूल दिन में ४ बार १ सप्ताह तक।

साथ ही दानों पर—क्लोरोमाइसिटीन एप्लीकेब (Chloromycetine applicab) आइण्टमेण्ट १० दिन तक दानों पर लगायें। तत्पश्चात्—

आई ड्राप—रिडीनौक्स (Ridinox eyedrop) (वैल फार्मा) दानों पर लगायें।

नोट—तीव्र आक्रमण के समय रोगी को स्त्री-समागम से पूर्ण परहेज रखना चाहिए। □

संक्रामक रोग 7/33

ग्रेनूलोमा वेनेरियम
(Granuloma Venereum)

पर्याय—ग्रेनूलोमा वेनेरियम या रतिज कणिकागुल्म।

परिचय—इस रोग में रति-सम्पर्क (Sexual intercourse) द्वारा संक्रमित होने पर जननेन्द्रिय (शिश्न) पर अति जीर्ण स्वरूप के व्रण उत्पन्न हो जाते हैं।

प्रसार—उष्ण प्रदेशों में। दूषित जन रति-सम्पर्क के बाद ही इसकी उत्पति मानी जाती है।

लिंग (Sex)—स्त्री एवं पुरुष दोनों में समान रूप से।

संचयकाल—१८ से २५ दिन। किंचित् २-३ मास बाद तक।

लक्षण—१. उपसर्ग के १८ से २१ दिनों के अन्दर जननेन्द्रिय की त्वचा पर श्लेष्मकला के ऊपर व्रण उत्पन्न हो जाते हैं। यह व्रण पीड़ा रहित, तीव्रता से प्रसार करने वाले तथा जीर्ण स्वरूप के होते हैं।

○ इन व्रणों में लाल रंग के कणिकार्बुद (Granulomata) उत्पन्न होते हैं। जिनको दबाने मात्र से रक्तस्राव (Bleeding) होने लगता है।

२. व्रण शनैः शनैः सम्पूर्ण जननेन्द्रिय पर फैलकर उदर, ऊरु तथा अण्डकोष की त्वचा पर भी उत्पन्न हो जाते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. व्रणों से पर्याप्त मात्रा में दुर्गन्धित पूय का स्राव होता रहता है।

४. पुराने व्रणों का स्वयं रोपण होता है और उसके स्थान पर नवीन व्रण बनते जाते हैं।

५. त्वचा पर इन व्रणों का प्रसार धीरे-धीरे महीनों में होता है, किन्तु श्लेष्मकला में यह बहुत शीघ्रता से फैलता है।

६. यदि इनका उपचार न किया जाय तो इनका प्रसार सीवनी, मलद्वार, मलाशय आदि समीप के अवयवों में भी हो जाता है।

७. श्लेष्मकला के व्रणों का रोपण नहीं होता है, वे स्थायी स्वरूप के व्रण बने रहते हैं।

८. व्रण पीड़ारहित होते हैं और इनके होने पर स्वास्थ्य पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है।

९. व्रण वस्तु के कारण कभी-कभी लसवाहिनियों में अवरोध उत्पन्न हो जाता है, जिससे जननेन्द्रिय पर श्लीपद के समान मिथ्या हस्तिचर्मण्यता (Pseudo-elephantiasis) उत्पन्न हो जाती है। यह कभी-कभी वृषणों पर भी उत्पन्न होते देखी जाती है।

उपद्रव (Complications)—इस रोग में निम्नलिखित सम्भावित उपद्रव हो सकते हैं—

१. मलाशय-योनि भगन्दर (Recto-vaginal fistula)।

२. मूत्राशयशोथ (Cystitis)।

३. गवीनीमुख-शोथ (Pyelitis)।

नोट—उपरोक्त उपद्रव व्रणों की दीर्घकालिक उपस्थिति के परिणाम स्वरूप होते हैं।

चिकित्सा—℞ स्ट्रेप्टोमाइसिन (Streptomycin)

मात्रा—१ ग्राम प्रति १२ घण्टे पर मांसपेशीगत दिन में २ बार ८-१० दिनों तक।

अथवा—टेट्रासाइक्लीन (Tetracycline) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—२५० मि० ग्रा० दिन में ४ बार ८ दिन तक।

नोट—इन औषधियों से निश्चित ही लाभ मिलता है।

असफलता मिलने पर—℞ 'एन्थियोमेलीन', 'स्टिबोफेन' तथा 'यूरिया स्टिबामाइन'।

मात्रा—४-८ ग्राम की संयुक्त मात्रा में प्रवेश करना।

तत्पश्चात्—१½-२ माह के विराम के बाद पुनः प्रयोग करना चाहिए।

सावधान—यह एक अत्यन्त विषाक्त औषधि है। अतः इसका प्रयोग सावधानीपूर्वक करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिम्फोग्रेनुलोमा इन्वीनेल
(Lymphogranuloma Inguinale)

पर्याय—लिम्फोग्रेनुलोमा वेनेरियम, लिम्फोपैथिया वेनेरियम, क्लाइमेटिक बूबो (Climatic bubo), वंक्षणीय लसीका कणिकागुल्म ।

परिचय—यह संक्रमित व्यक्ति के साथ सहवास करने के बाद उत्पन्न होने वाला वाइरस जन्य विकार है, जिसमें जननेन्द्रियों तथा निकट के अंगों में विसर्प के समान व्रण बन जाते हैं। साथ ही सम्बद्ध लसग्रन्थियों की शोथमूलक ग्रन्थिवृद्धि तथा सामान्य ज्वर आदि लक्षण भी मिलते हैं।

कारण—ग्राम-निगेटिव आर्गेनिज्म 'डोनोवेनिया ग्रेनूलोमेटस' के द्वारा होता है।

संक्रमण—इसका संक्रमण सीधे स्त्री-पुरुष के ग्रसित अवस्था में सम्भोग (Intercourse) से होता है अथवा सीधे बैक्टीरिया के द्वारा होता है।

लिंग (Sex)—स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में अधिक।

संक्रमण-क्षेत्र—प्रायः सभी देशों एवं स्थानों पर।

संचयकाल—८ से ८० दिन। कभी-कभी ८ से २१ दिन।

लक्षण—१. मैथुन करने के लगभग ३ सप्ताह के अंदर ही रोग प्रकट हो जाता है। इसमें पहले शिश्न पर एक छोटा-सा व्रण (Primary sore) उत्पन्न होता है, जो देखने में स्वच्छ तथा त्वचा के ऊपर चिपका हुआ प्रतीत होता है। व्रण की सतह सफेद रंग की होती है तथा परिधि के चारों ओर लाल रंग का घेरा (Zone) होता है। कुछ समय के पश्चात् यह व्रण स्वयं भर जाता है।

२. वंक्षण की लस-ग्रन्थियों में शोथ उत्पन्न हो जाता है। प्रारम्भ में इसके ऊपर की त्वचा लाल रंग की होती है, जो कुछ समय बाद नीले-बैंगनी रंग की हो जाती है। लसग्रन्थियों में पीडनाक्षमता (Tenderness) तथा पूय की उत्पत्ति हो जाती है। इन ग्रन्थियों में वेदना बिलकुल नहीं होती है। यह बाद में फूट जाती है।

३. कभी-कभी ऐसा भी होता है कि गुदा के चारों ओर की लसग्रन्थियाँ सूज जाती हैं, जिससे गुदा का द्वार बन्द हो जाता है, परिणामस्वरूप रोगी को पाखाना उतरना बन्द हो जाता है। गुदा की लसग्रन्थियाँ पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में अधिक फूलती हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४. उपसर्ग प्रारम्भ के १ से १½ माह बाद रोगी में कम्प के साथ अनियमित अथवा अर्ध-विसर्गी (Remittent) स्वरूप का ज्वर आने लगता है, जो ८-१० दिनों में स्वतः शान्त हो जाता है।

५. मलाशय की लसग्रन्थियों में पूय उत्पन्न होकर वे फट जाती हैं, जिससे भगन्दर तथा नाड़ीव्रण की उत्पत्ति हो सकती है। स्त्रियों में योनि-मलाशय भगन्दर (Vulüo-anal fistula) होता है।

नोट—○ इस रोग में कभी-कभी 'टाइफाइड' के समान अथवा अनियमित स्वरूप का ज्वर १-२ मास तक बना रहता है।

○ इस रोग के व्रण के ठीक होने में २ महीने से लेकर १½ वर्ष तक का समय लग सकता है। इसलिए रोग का इलाज नियमित रूप से करना होता है।

रोग का अनुमान—अवैध रति-सम्पर्क का पूर्व इतिहास, जननेन्द्रिय पर Superficial primary sore की उपस्थिति तथा वंक्षण की लसग्रन्थियों की शोथयुक्त वृद्धि का अनुमान कर रोग को आसानी से पहचाना जा सकता है।

निदानात्मक परीक्षण—१. जीवाणुओं का कल्चर।

२. अलसर के स्क्रेपिंग की परीक्षा में 'डोनोवान बॉडीज' की खोज।

चिकित्सा—℞ सल्फाडायजीन (Sulphadaizine) या एल्कोसिन

मात्रा—१-२ गोली दिन में ३ बार ८-१० दिनों तक।

स्ट्रेप्टोमाइसिन (Streptomycin)

मात्रा—१ ग्राम दिन में २ बार मांसपेशीगत १० दिनों तक।

अथवा—टेट्रासाइक्लीन (Tetracycline) ५०० मि० ग्रा०

मात्रा—१-१ कैपसूल प्रति ६ घण्टे पर १० दिनों तक।

साथ ही व्रण की 'एण्टीबायोटिक औषधियों से ड्रेसिंग। एवं—

रोगी को विटामिन 'बी'-कॉम्प्लेक्स का सेवन करायें।

नोट—इस रोग में पेनिसिलीन की कोई अपेक्षा नहीं होती।

निम्न चिकित्सा-क्रम से उत्तम लाभ होते देखा गया है—

℞ स्ट्रेप्टोमाइसिन (Streptomycin)

मात्रा—२ ग्राम प्रतिदिन I/M १० दिनों तक।

इसके १ दिन बाद (Alternatively)—

टेट्रासाइक्लीन कै० (Tetracyclin) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल दिन में ४ बार १० दिनों तक।

अथवा—एम्पीसिलीन (Ampicillin) ०·५ ग्राम

मात्रा—१ कै० दिन में ४ बार १०-१४ दिनों तक।

टेबलेट एनाल्जिन (Tab. Analgin)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार १० दिनों तक।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थानीय चिकित्सा—○ बद (Bubo) का फोमेण्टेशन (With wet mag-sulph compress)।

○ गुदा में संकोच होने पर गुदा को विस्फारित करें।

□

संक्रामक रोग 7/35

रोहे
(Trachoma)

पर्याय—आँखों के रोहे, कुकरे, पोथकी।

परिचय—यह आँखों का एक तीव्र संक्रामक रोग है। इसमें आँख की ऊपर की पलकों के अंदर के वर्त्म पर सूक्ष्म एवं लाल अंकुर पैदा हो जाते हैं। आँखों से पानी आता है और पलकें मोटी तथा भारी हो जाती हैं। अन्त में पलकों की नेत्रवर्त्मकला मोटी हो जाती है। पलकों के बाल अंदर को मुड़ जाते हैं। कनीनिका धुँधली पड़कर रोगी की दृष्टि का नाश हो जाता है।

कारण—यह 'सिटैकोसिस' नामक विषाणु से होता है।

संक्रमण-क्षेत्र—भारतवर्ष के सभी प्रदेशों में सभी रोगों की अपेक्षा रोहा एक बहुत ही घातक एवं व्यापक रोग है, जो दृष्टिक्षीणता ही नहीं बल्कि अंधापन का भी एक प्रबल कारण है।

रोहा-नियंत्रण अग्रगामी प्रॉजेक्ट—(Trachoma control pilot project) के सर्वेक्षण के अनुसार इसकी व्यापकता पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, गुजरात, मध्य प्रदेश, बिहार तथा असम में सर्वाधिक है। देश के शेष प्रदेशों में भी रोहे का प्रकोप मिलता है।

प्रभावित होने वाले वर्ग—वैसे सभी वर्ग के लोग रोहे के रोग से प्रभावित होते हैं; विशेषकर निम्न वर्ग के लोग अज्ञानता एवं लापरवाही के कारण इस रोग से आक्रान्त होकर अपनी दृष्टि खो बैठते हैं।

इस रोग का प्रारम्भ २ से लेकर ३ महीने की उम्र में ही हो जाता है। विद्यालय जाने के पूर्व तथा विद्यालय जाने वाले उम्र के बालकों तथा बालिकाओं में इस रोग की सक्रिय अवस्था मिलती है।

रोग-संचरण—रोग का प्रसार निम्न प्रकार से होता है—

१. रोगग्रस्त रोगियों के साथ सीधे सम्पर्क के कारण।

२. अप्रत्यक्ष सम्पर्क, संक्रमित तौलिये अथवा तकिये का प्रयोग। एक से अधिक व्यक्तियों की आँखों में कान्तिवर्धक कागज तथा सुरमा लगाने के लिए एक ही अँगुली अथवा सलाई का उपयोग।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ मक्खियाँ—इस रोग को फैलाने में मक्खियों की भी विशेष भूमिका होती है और उन ऋतुओं में यह व्यापक रूप से फैलता है, जब मक्खियों की संख्या अधिक होती है।

○ धुआँ, धूप, धूल-गर्द तथा गाँव के पोखरों आदि के गन्दे पानी से भी रोग का संक्रमण हो जाता है।

नोट—इस देश के विभिन्न क्षेत्रों में रोहे का विशुद्ध रूप देखने को नहीं मिलता है। इसके साथ जीवाणु-संक्रमण भी रहता है।

संचयकाल (Incubation period)—३ से लेकर ७ दिनों तक।

लक्षण (Symptoms)—प्रारम्भ में इसका कोई लक्षण नहीं होता है, किन्तु जैसे-जैसे रोग बढ़ता है, वैसे-वैसे—

१. थोड़ी बेचैनी, प्रदाह, प्रकाश-असह्यता (Photophobia), पानी आना अथवा श्लेष्म सपूय स्राव (Muco-purulent) जैसे लक्षण प्रकट होने लगते हैं। रोग के अधिक बढ़ जाने पर आँख की रोशनी भी घट जाती है।

२. पहले आँखों में सूजन आती है और साबूदाने के समान दाने (Follicles) अथवा दानों के सूखने के बाद मोटी झिल्ली जम जाती है तथा स्वच्छ-पटल (Cornea) के ऊपर रक्तवाहिकाओं के छा जाने के रूप में दिखलाई देते हैं।

३. अधिकांश रोगी अपने रोग से अनभिज्ञ-से होते हैं, क्योंकि प्रारम्भिक अवस्था में उन्हें किसी प्रकार की पीड़ा नहीं होती है। परन्तु जब रोग अधिक बढ़ जाता है अथवा अन्य जीवाणुओं का द्वितीयक संक्रमण हो जाता है तब रोगी के नेत्रों में खुजली होने लगती है और नेत्रों से पानी अथवा मवाद आता है। नेत्र के पलक आपस में चिपक जाते हैं। रोशनी में आँख खोलने में कष्ट होता है। नेत्र सदैव लाल दिखलायी देते हैं।

४. कभी-कभी नेत्र भारी होते हैं और उनमें पीड़ा होती है।

५. रोग की तीव्र अवस्था के बाद अनुतीव्र तथा चिरकारी अवस्था आती है और इस रोग के लक्षण दबने लगते हैं तथा रोगी रोग-मुक्त होने लगता है। प्रायः यह देखा गया है कि १०-१५% रोहे के रोगी बिना किसी चिकित्सा के भी रोग-मुक्त हो जाते हैं।

६. इस रोग को प्राकृतिक रूप में ठीक करने के लिए कई वर्ष लग जाते हैं। उपचार के अभाव में पलकों अथवा स्वच्छपटल (Cornea) में विकृति उत्पन्न हो जाती है। पलकें मोटी तथा भारी हो जाती हैं। बरौनियाँ अन्दर की ओर मुड़ जाती हैं अथवा पलकों के किनारे अन्दर की ओर मुड़ जाते हैं, जो कॉर्निया (Cornea) पर घाव बना देते हैं।

७. जिन रोगियों का रोग पुराना हो जाता है, अथवा जिसकी चिकित्सा भलीभाँति नहीं की जाती, उसकी कॉर्निया में अपारदर्शिता हो जाती है और

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहाँ तक कि उसकी दृष्टि भी खराब हो जाती है। कुछ रोगियों का पूरा-पूरा कॉर्निया (Cornea) रोग से प्रभावित हो जाता है।

रोग-संक्रमण का प्रभाव—१. रोहा के संक्रमण से प्रायः नेत्रश्लेष्मकला का व्यपजनन (Degeneration) तथा जीरोफ्थेल्मिया (Xerophthalmia) हो जाता है।

२. इससे रोगक्षमता उत्पन्न नहीं होती। इसका पुनः आक्रमण सम्भव है।

निदान (Diagnosis)—इस रोग के निदान के लिए विश्व स्वास्थ्य संगठन (W. H. O.) के अनुसार निम्न में से किन्हीं २ की उपस्थिति आवश्यक है—

○ पुटक (Follicles) की उपस्थिति।

○ कॉर्निया के ऊर्ध्व भाग में रक्तवाहिनियों का छा जाना (Pannus)।

○ कॉर्निया के ऊर्ध्व भाग में इपीथेलियल केराटाइटिस की उपस्थिति।

नोट—कुछ केसिस में निदान के सम्बन्ध में ये सभी लक्षण नहीं पाये जाते हैं। इसके लाक्षणिक स्वरूप में स्थान के अनुसार अन्तर हो सकता है।

○ रोहा का प्रारम्भिक निदान प्रायः कठिन होता है।

चिकित्सा—(१) **सामान्य चिकित्सा**—

१. रोगी को स्वस्थ व्यक्तियों से अलग रखें।

२. रुग्ण व्यक्ति के वस्त्र, रूमाल, तौलिये आदि दूसरे में प्रयोग न करें।

३. स्वस्थ व्यक्तियों में 'आर्जिरोल' अथवा 'एल्बुसिड' की २-३ बूँदें प्रातः सायं आँख में डालें।

(२) **औषधि-चिकित्सा** (Medicinal treatment)—

℞ ऑरियोमाइसीन कैपसूल या टैरामाइसीन कैपसूल

मात्रा—१-१ कै० प्रति ६ घण्टे पर २४ घण्टे में ४ बार।

साथ ही—सल्फाडायजीन (Sulphadaizine)

मात्रा—१ गोली दिन में ३ बार।

अथवा—सल्फाडायजीन १ गोली + सीवाजोल १ गोली + टैरामाइसिन १ कै० + विटामिन 'बी'-कॉम्प्लेक्स २ गोली/१ मात्रा—ऐसी १ मात्रा दिन में २ बार जल के साथ।

○ **दिन के समय आँख में**—'लोकुला' या एल्बुसिड आई ड्राप ३०% दिन में २ बार डालें।

अथवा—एक्रोमाइसिन ऑफ्थेल्मिक सस्पेंशन (Acromycin ophthelmic suspension) दिन में २ बार डालें।

○ **रात्रि के समय**—पेनिसिलीन आई-आइण्टमेण्ट या टैरामाइसीन आई-आइण्टमेण्ट अथवा एक्रोमाइसिन ऑफ्थेल्मिक सस्पेंशन सोते समय २ माह तक डालें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—सबसे उत्तम यह होगा कि प्रतिदिन शाम के समय सिल्वर नाइट्रेट लोशन (१० ग्रेन प्रति औंस) पलकों पर लगाकर 'बोरिक लोशन' से धोयें।

निर्देश—प्रारम्भ से ही एण्टीबायोटिक का प्रयोग करने से सिल्वर नाइट्रेट की आवश्यकता नहीं रह जाती है।

○ अब आधुनिक औषधियों के प्रयोग से पुराने से पुराने रोहे की चिकित्सा सम्भव हो गई है। हो सकता है कि इसकी चिकित्सा में कुछ अधिक समय तक इन औषधियों के सेवन की आवश्यकता पड़े।

रोहे जन्य विकृतियों का उपचार—इन विकृतियों की चिकित्सा तत्काल आवश्यक होती है। चिकित्सा के अभाव में कॉर्निया सदैव के लिए धूमिल हो जाता है।

○ यदि पलकों की बरौनियाँ पलक के किनारों सहित अन्दर की ओर मुड़ गई हों तो अन्तर्वर्त्मता संशोधन (Entropion corrcetion) द्वारा चिकित्सा करनी चाहिए।

○ स्वच्छपटल के घाव में (In corneal ulecr)—नेत्र-चिकित्सक से चिकित्सा करायें।

सुविधा प्राप्त न होने पर—नेत्र को गरम पानी से सेंक कर 'एट्रोपीन' आई आइण्टमेण्ट आँख में लगाकर पट्टी बाँध दें।

○ 'जीरोफ्थेल्मिया' जो ट्रैकोमा के द्वारा होता है, उसकी चिकित्सा बहुत कठिन है।

रोकथाम (Prophylaxis)—

भारत सरकार द्वारा इस रोग के उन्मूलन के लिए विश्व स्वाथ्य संगठन (W. H. O.) की सहायता से एक योजना का शुभारम्भ किया गया है, जिसमें रोहे ग्रस्त क्षेत्रों में 'ब्रॉड स्पेक्ट्रम एण्टीबायोटिक' का प्रयोग किया गया और इसके उत्तम परिणाम निकले हैं।

○ इन औषधियों में—टैरामाइसिन, एक्रोमाइसिन, एरिथ्रोमाइसिन में से किसी एक का प्रयोग दिन में २ बार (१ माह में केवल ५ दिन) लगातार ६ माह तक आखों में लगाने के रूप में किया जाता है।

ट्रैकोमा की चिकित्सा में प्रयुक्त विशिष्ट चिकित्सा-क्रम—

℞ टेट्रासाइक्लीन हाइड्रोक्लोराइड २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल दिन में ३ बार।

साथ ही—को-ट्रीमोक्साजोल (Co-trimoxazole)

व्या० नाम—सेप्ट्रान (Septran) या बैक्ट्रिम (Bactrim)

मात्रा—२ गोली दिन में २ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा—ओरीप्रिम D. S. १ गोली दिन में २ बार।
टेट्रासाइक्लीन ऑफ्थेल्मिक आइण्टमेण्ट १%
मात्रा—दिन में २ बार तथा सोते समय आँख की पलक में लगायें।
व्या० नाम—सूबामाइसिन ऑफ्थेल्मिक आइण्टमेण्ट (डेज) ⊡

संक्रामक रोग 7/36

जर्मन मीजिल्स
(German Measles)

पर्याय—रुबेला (Rubella)।

परिचय—यह एक संक्रामक रोग है। किन्तु इसका संक्रमण मीजिल्स की अपेक्षा कम होता है।

प्रसार—बिन्दु संक्रमण (Droplet infection)।

व्याधि की विकृति—१. बालकों की अपेक्षा वयस्कों में अधिक गम्भीर।

२. जब यह व्याधि सगर्भा में प्रथम ४ महीनों में होती है, तब भ्रूण (Foetus) में विकृति आ जाती है।

कारण—रुबैला वाइरस।

लक्षण—१. ज्वर किंचित् ३८° सें० (१००° फा०) ४८ घण्टे तक रह सकता है।

२. शिरःशूल तथा शरीर पर विस्फोटों की उत्पत्ति।

३. अरुचि, मितली एवं वमन की उपस्थिति।

४. दुर्बलता एवं लेसीटच्यूड (Lassitude)।

५. आर्थेल्जिया (Arthralgia) लगभग २५% केसिस में।

चिह्न (Signs)—१. तापक्रम बढ़ा हुआ मिलता है।

२. पल्स ब्रैडीकार्डिया से सम्बन्धित।

३. गर्दन में स्तब्धता (Stiffness in neck)।

४. चेहरा कान्तिहीन (Flushed) होता है।

५. प्रतिश्याय (Nasal catarrh) के लक्षण।

६. कंजंक्टिवाइटिस की उपस्थिति।

७. दूसरे-तीसरे दिन शरीर पर विस्फोट निकलते हैं। यह पहले मस्तक तथा गर्दन पर निकलते हैं और शीघ्र ही धड़ तथा शाखाओं में फैल जाते हैं। प्रायः तीसरे दिन विस्फोट गायब हो जाते हैं।

८. पोस्टीरियर सर्विकल लिम्फ ग्लैण्ड्स बढ जाते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोर्स—रोग की सम्पूर्ण अवधि २–३ दिन की होती है। ५–८ केसिस में रिलैप्स हो जाता है।

उपद्रव (Complications)—१. द्वितीयक जीवाणु संक्रमण (Secondary bacterial infection)।

२. हर्ट ब्लॉक (Heart block)।

३. मेनिंगो-इन्सेफेलाइटिस (Meningo-encephalitis)।

४. मिले-जुले उपद्रव—पर्प्यूरा, मसूड़ों में शोथ, न्यूराइटिस, गर्भपात आदि।

चिकित्सा—इसकी कोई विशिष्ट चिकित्सा नहीं है। केवल लाक्षणिक चिकित्सा ही होती है।

बचाव (Prophylaxis)—ह्यूमन गामाग्लोबुलिन (Humen gamma globulin) ७५० मि० ग्रा० दें। □

संक्रामक रोग 7/37

कुष्ठरोग
(Leprosy)

पर्याय—हेन्सन्स रोग (Hansen's disease), एलिफेण्टिएसिस ग्रेकोरम (Elephantiasis graecorum), कुष्ठ या कोढ़।

परिचय—It is an infectious disease caused by myobacterium leprae characterized by involvement of peripheral nerves resulting in nodular infiltration and anaethesia of skin, muscular atrophy and trophic ulcers.

○ कुष्ठ एक संक्रामक रोग है, जिसमें त्वचा तथा श्लैष्मिककला में या शरीर पर स्पर्शशून्य मण्डल अथवा धब्बे—दोनों उत्पन्न हो जाते हैं। यह रोग वर्षों तक चलता रहता है।

○ चिकित्सकों के लिए कुष्ठ एक महत्त्वपूर्ण रोग है। भारत में इस समय लगभग ३ करोड़ व्यक्ति कुष्ठ के रोगी हैं। विश्व में कुष्ठ रोगियों की संख्या १५ करोड़ के लगभग होने का अनुमान है।

○ इस रोग में तंत्रिकाओं अथवा त्वचा और अधस्त्वक् ऊतकों में विशेष परिवर्तन हो जाते हैं। विश्व में जितने कुष्ठ रोगी हैं, उनका पाँचवाँ हिस्सा केवल भारत में है।

कारण—'मायोबैक्टेरियम लेप्रा' के द्वारा होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संक्रमण—○ रोगी के स्पर्श से संक्रमण बहुत ही कम होता है। रोगी के नासास्राव तथा खुले हुए घावों से निकलने वाले स्राव अधिक संक्रामक होते हैं।

○ जीवाणु सम्भवतः रगड़ खाकर सूक्ष्म तंत्रिका सीमान्तों में घुस जाता है। कटाव और घाव से भी दण्डाणु का प्रवेश हो सकता है। बहुत से विरले केसों में दण्डालु गैस्ट्रो-इण्टेस्टाइनल एवं रेस्पिरेटरी ट्रैक्ट से भी प्रवेश कर जाता है।

प्रभावित होने वाले भाग—इस रोग के धब्बे (Lesions) शरीर के शीतल भागों (Coolar parts of the body) जैसे—त्वचा, ऊर्ध्वश्वसन मार्ग (Upper respiratory tract), अण्डकोष, आँख का अग्र भाग, पेरीफेरल नर्व्स तथा हाथ-पैर पर स्थापित रहते हैं। पेरीफेरल अलनर नर्व्स तथा पेरोनियल नर्व्स विशेषरूप से प्रभावित होती हैं।

संचयकाल—३ से ५ वर्ष अथवा इससे भी अधिक।

रोग का प्रारम्भ—○ प्रायः इस रोग का आरम्भ त्वचा पर उत्पन्न हुए कुछ धब्बों के रूप में होता है। रोगी चिकित्सक के पास प्रायः उस अवस्था में पहुँचता है, जब कि ऐसे धब्बे एक या अधिक मात्रा में काफी दिनों से उत्पन्न हुए होते हैं। इन धब्बों में न तो खुजली होती और न ही अन्य किसी प्रकार का कष्ट होता है। तब इस बात की सम्भावना की जाती है कि यह कुष्ठ के ही धब्बे हैं। ऐसे रोगी के कपड़े उतरवा कर सम्पूर्ण शरीर की त्वचा पर बारीकी के साथ ऐसे धब्बों का निरीक्षण करना चाहिए।

रोग के प्रकार—कुष्ठ के निम्न प्रकार होते हैं—

(१) **लेप्रोमेटस लेप्रोसी** (Lepromatus leprosy : LL)—

१. इस प्रकार के कुष्ठ का संक्रमण अधिक होता है। धब्बे संतुलित आकार में (Symmetrically) अग्रमस्तक (Forehead), भौंह (Eye brow), नाक, गाल, कान, कलाई, कोहनी, घुटनों तथा चूतड़ों पर फैल जाते हैं।

२. यह धब्बे मेकुलर, नोडुलर अथवा पेपुलर प्रकार के होते हैं।

३. त्वचा पर पड़े हुए धब्बे चिकनाई लगे प्रतीत होते हैं।

४. भौंह के बाल झड़ जाते हैं।

५. धब्बों में पसीना न आना, बालों का उड़ जाना—ये प्रमुख लक्षण हैं।

६. ऊर्ध्व श्वसनमार्ग की श्लेष्मकला तथा आँत का ऊपरी भाग प्रभावित होता है।

७. चेहरे तथा अग्र मस्तक की त्वचा मोटी हो जाती है।

८. इअर लोब्युल्स पेण्डुलस हो जाते हैं।

९. वृषण (Testis) में अतिवृद्धि होकर स्टेरिलिटी उत्पन्न हो जाती है।

१०. पैरों के निचले भागों में शोफ (Oedema) की उपस्थिति मिलती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

११. ऐसे रोगियों में प्रायः मोटी तंत्रिकाएँ देखने को नहीं मिलती।

(२) **ट्यूबरकुलॉयड लेप्रोसी** (Tuberculoid Leprosy : TT.)—

१. इस प्रकार के कुष्ठ में सबसे पहले शरीर में जगह-जगह लाल रंग की शीतपित्त (Urticaria) अथवा लाल रंग की फुंसियाँ दिखलायी देती हैं। इन फुंसियों में तीव्र स्वरूप की पीड़ा होती है। फुंसी जैसे धब्बे बहुत दिनों तक बने रहते हैं।

२. धब्बे की विशेषता यह होती है कि यह संवेदनशून्य (Anaesthetic) होता है। अर्थात् यदि इस पर अंगुली अथवा अन्य कोई वस्तु चुभाई जाय तो रोगी को पता नहीं चलता है। कुछ समय के बाद इस धब्बे की संवेदनशून्यता इतनी बढ़ जाती है कि यदि इस पर कोई ठंडी अथवा गर्म वस्तु लगाई जाय अथवा इसके ऊपर नोचा जाय तो रोगी को पीड़ा की अनुभूति नहीं होती है।

○ कभी-कभी संवेदनशून्यता इतनी अधिक बढ़ जाती है कि रोगी के हाथ में अँगुलियों के बीच सिगरेट दबी होती है और वह अन्य लोगों से बात-चीत करता रहता है। बातों में अधिक व्यस्त रहने पर उसकी सभी अँगुलियाँ जल जाती हैं, पर रोगी को उनके जलने का तनिक भी आभास नहीं होता है।

३. नर्व्स धीरे-धीरे मोटी हो जाती है और कभी-कभी उसमें 'न्यूरोटिक पेन' भी होने लगता है।

४. लिम्फ नोड्स बढ़ जाते हैं।

५. धब्बे के ऊपर की त्वचा के बाल गिर जाते हैं और पसीना आना बन्द हो जाता है। जबकि त्वचा के अन्य स्थानों पर पसीना आता है।

६. कुछ रोगियों में उभरे हुए लाल रंग के धब्बे (फुंसियाँ) दिखलाई देते हैं। इसके बाद इन गाँठों का मुँह खुल जाता है और वहाँ गहरा जख्म बन जाता है।

७. पलकें, भौंह आदि तथा पैर आदि की अँगुलियों, नाक की श्लैष्मिक कला आदि अंग सड़ कर गिरने लगते हैं। कभी-कभी फेफड़ों में जलन एवं प्रदाह होकर रोगी की मृत्यु भी हो जाती है।

८. कुछ रोगियों में बाहों, टाँगों, हाथों तथा पैरों में स्पर्शशून्यता के साथ साथ झुनझुनाहट-सी होती है, जबकि त्वचा पर धब्बे दिखलाई नहीं देते हैं।

नोट—उपरोक्त समस्त प्रकार के रोगियों में पेरोनियल तथा अलनर तंत्रिकाएँ मोटी हो जाती हैं और दबाने पर उनमें पीड़ा होती है।

याद रखिये—कुष्ठ का यह प्रकार सांसर्गिक (Contagious) नहीं होता है, क्योंकि इसके धब्बों में जीवाणु की उपस्थिति नहीं होती।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३) **बॉर्डरलाइन** (Borderline : BB.)—यह प्रमुख रूप से 'डाई-मार्फस टाइप' कहलाता है। इसमें 'TT.' और 'LL.' प्रकार के 'पोलर टाइप' लक्षण होते हैं।

(४) **बॉर्डरलाइन ट्युबरकुलायड** (Borderline tuberculoid : BT.) इसमें त्वचा के धब्बे 'टयुबरकुलायड' से मिलते-जुलते हैं। पर वह मिले-जुले छोटे तथा अनुषंगी (Satellites) होते हैं। इसमें हाथ तथा पैरों में विरूपता (Deformity) उत्पन्न हो जाती है।

रोग के सामान्य लक्षण—इस रोग में निम्न लक्षण देखने को मिलते हैं—

१. त्वचा पर विशेष प्रकार के धब्बों की उत्पत्ति।

२. त्वचा की विवर्णता।

३. स्पर्श-शून्यता विशेषकर ताप एवं स्पर्श-ज्ञान का अभाव।

४. भौंह के बालों का तथा विकृत स्थानों के बालों का नाश।

५. कर्णपाली का मोटापन एवं सिंह के समान रोगी की आकृति।

६. विकृत स्थान में पसीने का अभाव।

७. वातनाड़ितों की स्थूलता तथा स्पर्श में कठोरता।

८. दुर्गन्धित नासास्राव की उपस्थिति।

९. कुछ में वृषण में प्रसार होने से पौरुष-शक्ति नष्ट होकर स्टेरिलिटी उत्पन्न हो जाती है।

१०. परिसरीय वातनाड़ी शोथ अथवा उनका पैरालिसिस।

११. अस्थियों का विनाश।

१२. बुखार कामन नहीं।

१३. हस्त एवं पादतल की त्वचा का मोटापन अधिक स्पष्ट होता है।

१४. नंख मोटें, चिपटे तथा नौका के समान हो जाते हैं। नखों पर चौड़ाई में विदार उत्पन्न होकर उनका स्वाभाविक रूप नष्ट हो जाता है।

१५. वातनाड़ियाँ शनैः-शनैः स्थूल हो जाती हैं एवं अंगुष्ठमूल (Root of the thumb) के हस्ततलीय भाग की पेशियों का क्षय हो जाता है। अनामिका एवं कनिष्ठिका में संकोच उत्पन्न हो जाता है।

१६. छोटी अस्थियों का शोषण होने के कारण अंगुलियाँ तथा अँगूठा नष्ट हो जाते हैं।

१७. नाखूनों में विकृति उत्पन्न होने के साथ ही साथ त्वचा पर Perforated ulcer उत्पन्न हो जाते हैं।

प्रकार के अनुसार विकृत जन्य लक्षण—शरीर में जीवाणुओं के अनुसार रोगी के शरीर में निम्न विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. जब जीवाणु तंत्रिकाओं में निवास करते हैं तब 'ट्युबरकुलर लेप्रोसी' के लक्षण उत्पन्न होते हैं। इस कोढ़ के बढ़ जाने पर एक या दोनों हाथ-पैर टेढ़े तथा विकृत हो जाते हैं।

२. जब जीवाणु त्वचा को अपना स्थान बनाते हैं, तब लेप्रोमेटेस प्रकार के कुष्ठ पैदा होते हैं। इस कुष्ठ के बढ़ने पर रोगी की भौंह, नाक, कान तथा अन्य अंग मुख्यरूप से चेहरे की त्वचा बहुत मोटी हो जाती है। जिससे रोगी का चेहरा भयानक रूप से विकृत हो जाता है। चेहरे की इस आकृति को **'कोढ़ी चेहरा'** (Leanine face) कहते हैं।

विशिष्टता जो अनेक रोगियों में देखने को मिलती है—अधिकांश रोगियों में दोनों प्रकार का मिश्रित रोग मिलता है। रोग के अधिक बढ़ जाने पर नाक बैठ जाती है और हाथ-पैर की अँगुलियों (Fingers) के अन्तिम पोरुवे गल कर गिर जाते हैं और रोगी कुरूप एवं अपाहिज हो जाता है।

○ भारत में सड़कों पर, रेलवे स्टेशनों पर, गंगास्नान-पर्व पर गंगा के निकट भीख माँगने वाले, अयोध्या नगरी से लेकर सरयू नदी के स्नानघाट तक प्रायः इसी अन्तिम अवस्था के कुष्ठ रोगी दिखलाई पड़ते हैं।

निदान (Diagnosis)—उपरोक्त लक्षणों के आधार पर रोगी का निदान आसानी से हो जाता है।

परीक्षा—○ नाक के अन्दर की श्लैष्मिककला को खुरच कर परीक्षा की जाती है। बैसिलस लेप्रो (बैक्टीरियम लैप्रो) की उपस्थिति मिलने पर रोग का असंदिग्ध निर्णय हो जाता है।

○ नर्व वायोप्सी (Nerve biopsy) अथवा लिम्फ नोड्स वायोप्सी (Lymphnodes biopsy) निदान हेतु करनी चाहिए।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—लेप्रोसी का निम्न रोगों से पार्थक्य करना चाहिए—

१. ल्युपस वल्गेरिस (Lupas valgaris)।
२. फिरंग।
३. ओरीएण्टल सोर।
४. डर्मल लीशमेनिएसिस।
५. परिसरीय वातनाड़ी शोथ (Peripheral neuritis)।
६. वर्धमान मांसक्षय (Progressive muscular atrophy)।
७. सोरिएसिस (Psoriasis)।
८. श्वेत कुष्ठ (Leucoderma)।

उपद्रव (Complications)—इस रोग में निम्न उपप्रवों की सम्भावना होती है—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. वृषण-ग्रन्थियों का अपजनन तथा नपुंसकता ।
२. नेत्रव्रण तथा दृष्टिनाश ।
३. ट्रॉफिक अलसर ।
४. अस्थिनाश ।
५. हाथ-पैर की अँगुलियों का पूर्ण विनाश ।
६. मांसक्षय तथा शाखाओं की विकलांगता ।

साध्यासाध्यता—

१. जिसको एक बार कुष्ठ हो जाता है, वह आजीवन कुष्ठी ही रहता है ।

२. टचुबरकुलर लेप्रोसी में रोगी २ से १० वर्ष के अन्दर ही अन्दर मर जाता है ।

३. सामान्य रूप से औसतन कोढ़ी ६ वर्ष तक ही जीवित रहता है ।

४. लेप्रोमेटस प्रकार का कोढ़ी १०-२० वर्ष तक जीवित रहता है ।

नोट—फिर भी कुष्ठ रोग की साध्यता (पूर्वानुमान—Prognosis) विशिष्ट औषधियों की सात्यमयता, रक्तावसादन गति की स्वाभाविक मर्यादा तथा शारीरिक दृष्टि पर निर्भर करती है ।

चिकित्सा—

(१) सामान्य चिकित्सा (General treatment)—

१. रोग के मूल कारण को दूर करें ।
२. रोगी को सबसे अलग रखें ।
३. रोगी के सामान्य स्वास्थ्य को उन्नत बनायें ।
४. रोगी के मानसिक स्वास्थ्य तथा उसकी अवस्था में सुधार करें ।
५. आयरन तथा कैल्शियम का प्रयोग यथेष्ट मात्रा में करें ।

६. रोग के संक्रमण से बचाव के लिए स्वस्थ व्यक्ति का रोगी से सम्पर्क न होने दें । सेवा-सुश्रुषा के लिए नर्स को चाहिए कि रबर के दस्ताने पहन कर ही रोगी के शरीर को हाथ लगाये ।

७. यह भी सलाह दी जाती है कि प्रारम्भिक केसों में भी चिकित्सा कम से कम दो वर्षों तक चलायी जाये । लेप्रोमायुक्त रोगियों की दशा में पूर्ण समाप्ति (Clearance) में २ से ५ वर्षों तक का समय लगता है ।

८. कुष्ठ-पीड़ित जनपदों में मलेरिया, अंकुशमुख कृमि विकार (हुकवर्म), कालाजार, अमीबिक डिसेण्ट्री (Amoebic dysentry), श्लीपद, फिरंग आदि हीनपोषण के रोग तथा बेरी-बेरी, स्कर्वी आदि मिलते हैं । कुष्ठ रोगियों में इन रोगों के प्रति छान-बीन कर समुचित व्यवस्था करें ।

९. रोगी को चिकित्सा में पूर्ण सफलता मिलेगी; इसका उसे विश्वास दिलाना चाहिए । प्रत्येक अवस्था में शारीरिक क्षमता तथा बल-पुष्टि बनाये रखने का यत्न करना चाहिए ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. चिकित्सा में लगाने और खाने की औषधियाँ समान रूप से व्यवहार में लानी चाहिए।

११. प्रारम्भ से ही सभी रोगियों की चिकित्सा नियमित रूप से की जाय तो २ वर्षों के अंदर रोगी रोग-मुक्त हो सकता है। साथ ही कोई विरूपता भी नहीं रह जाती है।

निर्देश—○ गवर्नमेण्ट की ओर से इसके लिए 'लेप्रोसी रिलीफ एसोसिएशन' बनी हुई है तथा सभी प्रान्तों के बड़े-बड़े नगरों में तथा अन्य स्थानों में जहाँ यह रोग अधिक होता है, इस रोग के चिकित्सार्थ गवर्नमेण्ट की ओर से चिकित्सालय खुले हुए हैं। जैसे ही इस रोग का पता चले, रोगी को इन चिकित्सालयों में भेज देना चाहिए।

○ चिकित्सक को इन रोगियों की स्वयं चिकित्सा न करके इनको विशेष चिकित्सालयों में भेजना चिकित्सक तथा रोगी दोनों के लिए हितकर है।

(२) औषधि-चिकित्सा (Medicinal treatment)—

℞ क्लोफाजीन (Clofazine)

व्या० नाम—लैम्प्रेन (Lamprene) (सुहृद्-गायगी)

मात्रा—१०० मि० ग्रा० सप्ताह में २ बार।

नोट—इसके प्रयोगकाल में अतिसार, लाल रंग का मूत्र, शरीर की त्वचा पर लाल रंग के धब्बे (Leisons) निकल आते हैं।

○ यह एक नवीन औषधि है जिसका सबसे उत्तम परिणाम निकला है।

साथ ही—रिफामीसिन (Rifamycin) मात्रा—६०० मि० ग्रा० नित्य

साथ में—डिप्सोन (Dipsone) १०० मि० ग्रा० टेबलेट

व्या० नाम—एवलोसल्फोन (Avlosulphone)

नोट—अधिकांश चिकित्सक एवलोसल्फोन का व्यवहार निम्न मात्रा में करते हैं—

○ निम्न मात्राएँ ६० कि० ग्रा० शरीर भार वाले व्यक्ति के लिए प्रयुक्त हैं—

१. पहले महीने में ५० मि० ग्रा० सप्ताह में २ बार।

२. दूसरे महीने में १०० मि० ग्रा० सप्ताह में २ बार।

३. तीसरे महीने में १५० मि० ग्रा० सप्ताह में २ बार।

४. चौथे-पाँचवें महीने में २०० मि० ग्रा० सप्ताह में २ बार।

५. छठे माह में ३०० मि० ग्रा० सप्ताह में २ बार।

○ उपरोक्त चिकित्सा-क्रम से लाभ मिलता है।

१. ट्यूबरकुलायड रोगियों में ६-१२ महीनों में।

२. लेप्रोमेटस लेप्रोसी के केसों में २-५ वर्ष में।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्देश—उपरोक्त औषधियाँ २-३ महीने तक लगातार सेवन कराने के बाद २ सप्ताह तक चिकित्सा स्थगित रखी जाती है। तत्पश्चात् उपरोक्तानुसार चिकित्सा पुनः चालू कर दी जाती है।

बच्चों में—उपरोक्त मात्रा की $\frac{1}{3}$ मात्रा देनी चाहिए।

उपरोक्त चिकित्सा के साथ ही—

℞ इञ्जेक्शन विटामिन बी$_{१२}$

मात्रा—१०० माइक्रोग्राम मांसपेशीगत सप्ताह में १ बार।

आयरन टेबलेट—१ गोली दिन में २-३ बार।

नोट—○ यदि डिप्सोन रिएक्शन कर रही हो तो—स्टेराइड्स (Steroids) का प्रयोग करें।

○ जो रोगी सल्फोनामाइड्स के प्रति सेन्सिटिव हों, उन्हें—

स्ट्रेप्टोमाइसिन का एक कॉम्बीनेशन १ ग्राम मांसपेशीगत दें।

साथ ही—आइसोनियाजिड (Isoniazid) ३०० मिग्रा० दिन में १ बार।

ट्यूबरकुलायड लेप्रोसी चिकित्सा का एक अन्य व्यावहारिक क्रम—

१. ℞ क्रूड लिवर एक्स्ट्रेक्ट-२ मि० ली० मांसपेशीगत
कोर्स—१०-२५ इञ्जेक्शन।

२. फरसोलेट (ग्लैक्सो), फेरोनिकम या फेरामाइन
इनमें से कोई १ गोली दिन में २ बार भोजनोपरान्त।

३. ईस्टर्न सीरप—१ चम्मच + प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट (Amenozyne)
मात्रा—४ चम्मच भोजन के $\frac{1}{2}$ घण्टे बाद दिन में २ बार जल के साथ।

नोट—उपरोक्त औषधियों का १-१$\frac{1}{2}$ मास तक प्रयोग कर स्वास्थ्य में उन्नति कर निम्न प्रकार से लेप्रोसी-नाशक औषधियों का प्रयोग करें—

१. एव्लोसल्फोन (Avlosulphone) १ गोली + रुब्रागान १ कै०

मात्रा—दिन में १ बार सप्ताह में ६ दिन, प्रत्येक ३ मास बाद १५ दिन का अन्तर देकर।

चिकित्सा कोर्स—२-३ वर्ष तक।

२. ईस्ट टेबलेट (Yeast tab.) ४ गोली दिन में २ बार; साथ ही—
'हेप्टाग्लोबिन' २ चम्मच भोजन के $\frac{1}{2}$ घण्टे बाद दिन में २ बार।

३. आयोडाइज्ड मूग्रोल (Iodised moogrol)
अथवा—हिडनोक्रीओल (Hydnocreol)
मात्रा—२-५ मि० ली० I/M सप्ताह में १ बार १-१$\frac{1}{2}$ वर्ष तक।

४. विटामिन बी$_{१२}$ ५०० मि० ग्रा० + विटा बी$_{१}$ १०० मि० ग्रा० + क्रूड लिवर एक्स्ट्रेक्ट १ मि० ली० मिलाकर सप्ताह में २ बार प्रत्येक ६ मास में १० इञ्जेक्शन।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. कैल्शियम ग्लूकोनेट १० मि० ली० + विटामिन-सी ५०० मि० ग्रा० I/V मार्ग से सप्ताह में २ बार; प्रति माह ६ इञ्जेक्शन।

६. ई० सी० सी० ओ० (E. C. C. O.) या ई० सी० एच० (E. C. H.) धब्बों की स्थानिक चिकित्सा में अन्तस्त्वचीय मार्ग से। ३ सप्ताह बाद पुनः प्रयोग करें।

○ प्रयोग अवधि—२ वर्ष तक।

नोट—उक्त प्रकार से चिकित्सा करने पर 'सल्फोन' का हानिकारक प्रभाव नहीं होता है। शारीरिक स्वास्थ्य ठीक होकर लाभ अधिक मिलता है।

○ 'एव्लोसल्फोन' की अपेक्षा 'सल्फेट्रोन' अधिक निरापद पाया गया है। इसका प्रयोग निम्न क्रम में किया जाता है—

℞ सल्फेट्रोन १ गोली + कैल्शियम पेण्टोथ्रिनेट ५० मि० ग्रा० + बीकोजाइम या विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स फोर्ट १ कै०—मिलाकर दिन में ३ बार प्रति तीसरे दिन। सप्ताह में ३ दिन। ६ माह के प्रयोग के बाद १ माह तक बन्द रखें।

चिकित्सा-क्रम—३ वर्ष तक चलायें।

शेष पोषक तथा बलकारक (Tonics) पूर्व की भाँति दें।

लेप्रोमेटस लेप्रोसी का चिकित्सा-क्रम—

शरीर को उन्नत करने के लिए—१-१½ मास तक टॉनिक्स का प्रयोग पूर्ववत् किया जाता है। तत्पश्चात्—

℞ सल्फेट्रोन १ गोली दिन में ३ बार १ माह तक।

मात्रा—२ गोली दिन में ३ बार २ माह तक।

प्रतिक्रिया न होने पर—३ गोली दिन में ३ बार २ माह तक।

३ माह के बाद १५ दिन विराम। इसके बाद—

९ गोली प्रतिदिन के क्रम से २-३ वर्ष तक।

साथ ही—आयरन, विटामिन बी-काम्प्लेक्स तथा 'हेप्टोग्लोबिन' का पर्याप्त मात्रा में नित्य प्रयोग करें।

एवं—C. C. C. O. १ मि० ली० ५ मि० ली० सप्ताह में १ बार मांसपेशीगत २ वर्ष तक।

प्रतिक्रिया की चिकित्सा—चूँकि कुष्ठ की चिकित्सा में सल्फोन (डिप्सोन) का लम्बे समय तक प्रयोग करना पड़ता है। अतः शरीर में इससे प्रतिक्रिया होना अवश्यम्भावी है। ऐसी अवस्था में प्रतिक्रिया रूप में—धब्बों का आकार में बढ़ना, कम्प के साथ ज्वर, नवीन धब्बों की उत्पत्ति, जोड़ों में पीड़ा, लिम्फ नोड्स का बढ़ना, चेहरे और पैरों पर शोथ आदि लक्षण मिलते हैं।

निराकरण—१. डिप्सोन का सेवन तत्काल बन्द कर दें।

२. शय्या पर पूर्ण विश्राम।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—यदि रोगी 'लेमप्रीन' ले रहा हो तो उसे जारी रहने दें।

३. ज्वर तथा पीड़ा के लिए—एस्प्रिन ०.५ ग्रा० दिन में १ बार दें।

अथवा—

प्रेडनीसोलोन	१ गोली
कैल्शियम पेन्टोथिनेट	१० मिग्रा०
कैल्शियम ग्लूकोनेट	३०० मिग्रा०
विटामिन-सी	१०० मिग्रा०
हिस्टाण्टिन टे०	१ गोली
	१ मात्रा

ऐसी १ मात्रा दिन में ३ बार। प्रतिक्रिया कम होने पर दिन में २ बार।

यदि नये धब्बे प्रकट हो रहे हों तो—लार्गेक्टिल ३० मि० ग्रा० टेबलेट दिन में २ बार।

उग्र स्वरूप की प्रतिक्रिया में—प्रेडनीसोलोन ५ मि० ग्रा० टेबलेट ७ दिन तक। तत्पश्चात् मात्रा घटाते हुए बन्द कर दें।

नोट—प्रतिक्रिया समाप्त होने पर—डिप्सोन ५-५ मि० ग्रा० सप्ताह में २ बार से प्रारम्भ कर पूर्ववत् दें।

लेप्रोसी-चिकित्सा का सारांश—

℞ डिप्सोन (D. D. S.) ५०-१०० मि० ग्रा० नित्य मुख द्वारा।

○ यदि रोगी में बुखार और कामला उत्पन्न होने लगे तो D D S को रोक कर—

क्लोफाजीमीन (Clofazimine) दें।

रिफैम्पिन (Rifampin) १० मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर। नित्य ६०० मि० ग्रा० मुख द्वारा।

D. D. S. + रिफैम्पिन दें। यह औषधि अधिक मंहगी है।

D. D. S. रेसिस्टेण्ट लेप्रोमेटस लेप्रोसी में—

थिलाडोमाइड (Thiladomide)

मात्रा—१००-४०० मि० ग्रा० नित्य मुख द्वारा।

नोट—Deformity में—सर्जिकल चिकित्सा तथा ओर्थोपेडिक (Orthopaedic) करेक्शन लाभकर होता है।

बचाव (Prophylaxis)—कोढ़ की चिकित्सा करने वाले चिकित्सक तथा परिचायक के लिए—

स्वस्थावस्था में—डिप्सोन २५ मि० ग्रा० टेबलेट सप्ताह में केवल १ बार।

१. नवजात शिशु को—२ मि० ग्रा०।

२. ३-१० वर्ष के बालक को—१०-१५ मि० ग्रा० सप्ताह में १ बार। ⊡

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चेचक/मसूरिका
(Small Pox)

पर्याय—मसूरिका, शीतला, बड़ी माता, चेचक, वेरीओला (Variola)।

परिचय—यह एक तीव्र संक्रामक रोग है, जिसमें एक विशेष प्रकार की पिडिकाएँ निकलती हैं; जो पहले साधारण रक्तवर्ण की होती हैं, फिर तरल मय होकर पक जाती हैं और अन्त में उन पर खुरंट बन कर शनै-शनैः झड़ जाती हैं।

नोट—इसका सफल टीका (Vaccine) निर्मित हो जाने के कारण अब इसका पूर्ण निराकरण किया जा चुका है। अब इसके केसिस देखने को नहीं मिलते हैं। इसीलिए अध्ययन की दृष्टि से यहाँ इसका अति संक्षिप्त में विवरण दिया जा रहा है।

कारण—वेरिओला वायरस (Variola virus) इसका प्रमुख उत्पादक कारण है।

आयु—४ वर्ष की अवस्था तक इसका सर्वाधिक प्रकोप। कभी-कभी युवावस्था में भी।

ऋतु—फरवरी से अप्रैल माह तक प्रकोप होता है।

संक्रमण—मुख, नासा तथा श्वास-मार्ग की श्लेष्मकला द्वारा शरीर में वायरस का प्रवेश।

संचयकाल—७-२१ दिन। औसतन १२ दिन।

लक्षण—(१) **ज्वर**—१. रोग का प्रारम्भ शीतपूर्वक ज्वर के साथ होता है।

२. ज्वर के समय—कपाल, कटि एवं पिण्डलियों में तीव्र पीड़ा, मितली, वमन, आक्षेप तथा प्रलाप के लक्षण।

३. ज्वर-वृद्धि के साथ—प्यास की अधिकता, गर्मी, त्वचा की शुष्कता, चेहरा लाल तथा जीभ मलावृत।

४. ज्वर १०३-१०४° फा० तक ४ दिन तक बराबर बना रहता है।

५. चौथे दिन ज्वर कम होकर विस्फोटों का निकलना प्रारम्भ हो जाता है।

६. २-३ दिन के बाद विस्फोटों में संक्रमण के कारण ज्वर पुनः प्रारम्भ हो जाता है।

७. खुरंट बनकर सूखने के बाद ज्वर का पुनः शमन हो जाना।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ **चेचक में ज्वर की स्थिति—**

१. प्रारम्भ में ४ दिन तक—तीव्र ज्वर।

२. इसके २-३ दिन तक—ज्वर का शमन।

३. पुनः १ सप्ताह तक—तीव्र ज्वर का अनुबन्ध।

(२) विस्फोट (Rash)—

१. वास्तविक विस्फोट ज्वर प्रारम्भ के तीसरे या चौथे दिन पहले मस्तक एवं कनपटी पर निकलते हैं। इसके पश्चात् क्रम से चेहरे, अग्रबाहु, मणिबन्ध, मध्य शरीर, पीठ, उदर, मुख की श्लेष्मकला तथा आँखों के भीतर निकलते हैं।

नोट—विस्फोट सर्वप्रथम ललाट पर और अन्त में पैरों के तलवों पर निकलते हैं, यही इनकी विशेषता है।

२. दाने निकलने के बाद क्रम से ज्वर आदि लक्षणों की न्यूनता हो जाने के कारण रोगी को कुछ आराम मालूम होता है। विस्फोट निकलते समय शरीर में कुछ खुजली होती है।

३. विस्फोट के पास की त्वचा रक्तवर्ण की होती है।

४. विस्फोटों में तनाव होने के कारण त्वचा तथा शरीर में वेदना, कण्डू एवं बेचैनी रहती है।

५. पूय उत्पत्ति के कारण ज्वर बढ़ जाता है। कोई उपद्रव न होने पर ३-४ दिन के बाद विस्फोट निकलने के अनुक्रम से शुष्क होने लगते हैं।

६. धीरे-धीरे विस्फोटों के सूखने पर उनके स्थान पर खुरण्ट बन जाते हैं और तीसरे-चौथे सप्ताह में झड़ जाते हैं। किन्तु हाथ-पैर के तलों के खुरण्ट कुछ देर से गिरते हैं।

७. खुरण्ट निकल जाने के बाद दाग बीच में कुछ दबे-से दिखलायी देते हैं।

८. त्वचा के अतिरिक्त होंठ, मुख, गुदा, स्वरयन्त्र, कण्ठनलिका, अन्न-मार्ग, आमाशय, मलाशय, योनि, नेत्र आदि स्थानों पर भी विस्फोट निकलते हैं। यह प्रायः पूयदार नहीं होते।

९. पूय युक्त विस्फोटों की अवस्था में शरीर से एक विशेष प्रकार की गन्ध निकलती है।

प्रकार—गम्भीरता की दृष्टि से चेचक के अनेक भेद हैं—

१ अल्प विस्फोट युक्त सौम्य प्रकार—ज्वर का अभाव, द्वितीयक संक्रमण रहित तथा दाने कम होते हैं।

२. असम्मिलित (Discrete) दाने अधिक एवं पृथक्-पृथक् संख्या में।

३. सम्मिलित प्रकार (Confluent)—दानों के अधिक निकलने से फोड़ा जैसा रूप। प्रारम्भ से ही विषमयता।

४. कृष्ण मसूरिका (Black small pox)—अन्य स्रोतों से रक्तस्राव, विषमयता एवं मृत्यु।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. रक्तस्रावी प्रकार—यह सबसे अधिक मिलने वाला प्रकार है। इसमें विस्फोटों के निकलने के पश्चात् रक्तस्राव होता है और अन्त में मृत्यु।

निदान—विशेष अन्वेषण (Diagnosis)—

१. ब्लड में ल्यूकोसाइट काउण्ट नीचा होता है।

२. कॉम्प्लीमेण्ट फिक्सेसन टेस्ट पॉजीटिव (+) होता है।

३. अगर जेल डिफ्यूजन टेस्ट पॉजिटिव (+) होता है।

चिकित्सा—इसकी कोई विशिष्ट चिकित्सा नहीं है। केवल उपस्थिति के आधार पर शोथ (Inflammation) तथा द्वितीयक संक्रमण (Pastules) की चिकित्सा की जाती है—

१. त्वचागत लीजन्स का द्वितीयक संक्रमण से बचाव—

℞ टेट्रासाइक्लीन कैपसूल २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल दिन में ३ बार ६ठे दिन से प्रारम्भ कर १३वें दिन तक दें।

२. पास्टचुल्स के लिए एण्टीसेप्टिक ड्रेसिंग—फूरासिन आइण्टमेण्ट लगायें।

३. पीड़ा के लिए—सीरप ड्राईक्लोफॉस सोडियम

व्या० नाम—ट्राईक्लोरिल ४ मि० ली० दिन में २ बार।

४. अतिसार के लिए—टेट्रासाइक्लीन हाइड्रोक्लोराइड २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल दिन में ३ बार।

५. कंजंक्टिवाइटिस में—१०% लोकुला अथवा १०% सल्फासिटामाइड सोडियम सोल्युशन की २-३ बूंदें आँख में डालें।

६. परम तापक्रम (Hyperpyrexia) में-

(i) शिर पर बर्फ की थैली रखें।

(ii) कोल्ड स्पॉन्जिग—शरीर को शीतल जल से पोंछना।

७. शिरःशूल एवं कटिशूल—'सेरीडोन' अथवा इस्जीपायरीन का उपयोग।

८. वमन—क्लोरप्रोमेजीन अथवा प्रोमेजीन हाइड्रोक्लोराइड

मात्रा—२५-५० मि० ग्रा० मुख द्वारा दिन में २-३ बार।

उपद्रवों की चिकित्सा—

१. केराटाइटिस तथा कॉर्नियल अलसर—

एट्रोपिन ($\frac{1}{2}$ प्रतिशत), ऑक्सीटेट्रासाइक्लीन (टैरामाइसिन १%) आइण्टमेण्ट आँख में लगायें। एक दिन के अन्तर पर 'एट्रोपीन सल्फेट' तथा यलो ऑक्साइड ऑफ मरकरी आई आइण्टमेण्ट लगायें।

२. रक्तस्रावी प्रवृत्ति में—

(i) कैल्शियम ग्लूकोनेट सोल्युशन १०%—२ मि० ली०।

विटामिन-सी ५०० मि० ग्रा०—१ मि० ली०।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.,

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दोनों को मिलाकर दिन में १ बार ग्लूटियल मांसपेशी में अग्र भाग पर लगायें।

(ii) विटामिन 'के' १० मि० ग्रा०—१ मि० ली० I/M दिन में १ बार।

व्या० नाम—केपलिन (Kepllin) (ग्लैक्सो), केफाडीन (Kaphadine) (लिली कं०)।

विषमयता—ग्लूकोज २५%—५० मि० ली०+विटामिन 'सी' ५०० मि० ग्रा०+विटामिन बी$_1$ ५० मि० ग्रा० मिलाकर I/V दें।

निर्देश—रोग के प्रारम्भ से ही विटामिन 'सी' का उपयोग करें।

बचाव हेतु चिकित्सा (Prophylactic treatment)—

○ प्राइमरी वैक्सीनेशन—१-२ माह की उम्र में करना आवश्यक होता है। एवं—

○ रिवैक्सीनेशन—प्रति ३ वर्ष पर।

○ 'स्माल पॉक्स वैक्सीन' का प्रयोग चेचक से बचने के लिए अत्यधिक सफल सिद्ध हुआ है।

स्माल पॉक्स का सफल चिकित्सा-क्रम—

१. **रोग-प्रारम्भ के समय से**—विटामिन 'सी' २५०-५०० मि० ग्रा० पूर्व पाचित प्रोटीन के साथ दिन में २-३ बार।

२. **विस्फोट उत्पन्न होने पर**—'फूरासिन' का पेण्ट।

पूय की उत्पत्ति होने पर—'स्ट्रेप्टोपेनिसिलीन' या 'नेवासल्फ' का पाउडर या लोशन लगायें।

३. साथ ही पूय उत्पत्ति के ६ठे-७वें दिन से—टेरामाइसीन (Terramycin) २५० मि० ग्रा०

मात्रा—१ कैपसूल प्रति ४-६ घण्टे पर ओरली।

अथवा—१०० मि० ग्रा० प्रातः-सायं I/M ६–७ दिनों तक।

४. **खुरण्ट सूखने की स्थिति में**—पुनः 'फूरासिन' का प्रयोग करें। तथा 'मल्टी-विटामिन ड्राप' तथा दूसरे टॉनिक्स देना प्रारम्भ कर दें।

५. **खुरण्ट निकल जाने पर**—दागों पर कार्टिसोन मलहम इफकॉर्लिन (Efcorlin) या केनालॉग (Kenalog) या 'बेटनोविट-एन आइण्टमेण्ट' दिन में ३ बार हलके हाथों से लगायें।

६. **रात्रि के समय खुजली तथा चुनचुनाहट होने पर**—'एण्टीहिस्टामिनिक आइण्टमेण्ट' लगायें।

नोट—उपरोक्तचिकित्सा-क्रम से चिकित्सा करने पर चेचक के दागों का नामों निशान मिट जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग के पश्चात् की दुर्बलता—

○ रक्त की वृद्धि के लिए मांस, यकृत् तथा अस्थिमज्जा से निर्मित योग, आयरन, आर्सेनिक, कैल्शियम, विटा० ए०, डी०, सी० (Vit. A, D, C) आदि का पर्याप्त मात्रा का प्रयोग ।

○ 'फेरीलेक्स', 'सीरप मिनाडेक्स', 'फैराडोल' आदि का व्यवहार करना चाहिए । ⊡

संक्रामक रोग 7/39

राजयक्ष्मा
(Tuberculosis)

पर्याय—तपेदिक, यक्ष्मा, राजयक्ष्मा, राजरोग, टी० बी०, क्षयरोग, शोष, थाइसिस, कंजप्शन ।

परिचय—माइकोबैक्टीरियम ट्युबरकुलोसिस (Mycobacterium teuberculosis) नामक जीवाणुओं द्वारा उत्पन्न शरीर के विभिन्न भागों के संक्रमण को यक्ष्मा कहते हैं ।

यह एक विश्वव्यापी रोग है । संसार का कोई भी देश इससे बचा नहीं है । ऐसा अनुमान है कि संसार भर में ६ करोड़ व्यक्ति इस रोग से पीड़ित हैं । इस रोग से पीड़ित रोगी उन देशों में अधिक पाये जाते हैं, जहाँ लोगों को उत्तम पौष्टिक भोजन उपलब्ध नहीं होता है । साथ ही लोगों को घनी एवं गन्दी आबादी वाली बस्तियों में रहना पड़ता है । यह एक सामाजिक रोग है जिसका समाज से गहरा सम्बन्ध है । निर्धनता और गरीबी रोग उत्पन्न करने में विशेष सहायक होती है । इस दृष्टि से यह रोग भारत में विशेषकर बड़े-बड़े नगरों की गन्दी बस्तियों के लोगों में अब भी अधिक देखने को मिलता है । वास्तव में अपर्याप्त भोजन, थोड़े से स्थान में बहुत से व्यक्तियों का तंग गलियों के मकानों में रहना जहाँ सूर्य का प्रकाश कठिनाई से पहुँचता है, रोग उत्पत्ति में विशेष सहायक होता है । इसके विपरीत जैसे-जैसे लोगों का रहन-सहन बढ़ता जाता है, पौष्टिक आहार एवं सूर्य के उचित प्रकाश मिलने आदि की व्यवस्था से सुधार होता जाता है, वैसे-वैसे यह रोग अपने आप कम होता जाता है ।

कारण—इस रोग का उत्पादक कारण 'माइकोबैक्टीरियम ट्युबरकुलोसिस' नामक बैक्टीरिया है । इसे 'बैसिलस ट्युबरकुलोसिस' भी कहते हैं । इस जीवाणु का पता 'राबर्ट कॉख' नामक वैज्ञानिक ने लगाया था, अतः उसके नाम पर इसे 'कॉख का बेसिलस' (Koch's bacillus) भी कहा जाता

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। सूक्ष्मदर्शक यंत्र से देखने पर इसका आकार डण्डे की भाँति दिखलायी देता है।

व्याधि का प्रकोप—१५ से ४५ वर्ष की अवस्था में अधिक। छोटे बालकों तथा वृद्धों में भी छिट-पुट प्रकोप होता है।

लिंग (Sex)—स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषों में अधिक होता है। किन्तु बाल्यावस्था में ५-१५ वर्ष की कन्याओं में बालकों की अपेक्षा अधिक देखने को मिलता है।

व्याधि की उत्पत्ति में सहायक—१. धूल एवं धूम्रयुक्त वातावरण में काम करने वाले, बड़े-बड़े कारखानों, दूकानों आदि में कार्य करने वाले व्यक्तियों में इसका प्रसार अधिक होता है।

२. अस्वास्थ्यकर स्थानों में निवास, सूर्य का प्रकाश एवं शुद्ध वायु का अभाव, आर्द्र वातावरण एवं अधिक भीड़-भाड़ आदि कारणों से रोग-प्रसार में सहायता मिलती है।

३. वक्षप्राचीर पर चोट लगने से भी प्रायः यक्ष्मा का प्रकोप देखने को मिलता है।

४. मानसिक त्रास, अवसाद, असन्तोष आदि से हीनतामूलक भावनाओं की अधिकता रोग उत्पत्ति में सहायक है।

५. मीजिल्स, हूपिंग कफ, फ्लू, बार-बार होने वाला न्यूमोनिया, मदात्यय, फिरंग, हृदय रोग आदि व्याधियों के बाद यक्ष्मा रोग की पर्याप्त सम्भावना रहती है, क्योंकि इन व्याधियों के आक्रमण के बाद शरीर विशेष प्रकार से हीन क्षमतायुक्त हो जाता है, जिससे यक्ष्मा सम्बन्धी विकारों की सम्भावना बढ़ जाती है।

६. मधुमेह के रोगियों में यक्ष्मा एक प्रधान उपद्रव माना जाता है।

७. प्रसव के पश्चात् लम्बे समय तक बच्चे को दूध पिलाने (स्तन्यपान कराने) तथा बार-बार और जल्दी-जल्दी गर्भधारण करने से रोग के प्रकोप में वृद्धि होती है।

संक्रमण किस प्रकार फैलता है—○ इसका संक्रमण ९०% या इससे भी अधिक बिन्दुक संक्रमण (Droplet infection) द्वारा फैलता है। प्रायः यक्ष्मा-ग्रस्त रोगी के थूक एवं बलगम में रोग के जीवाणु उपस्थित रहते हैं। होता यह है कि यक्ष्मा-ग्रस्त रोगी जब बोलता है अथवा खाँसता है, तब उसके मुँह से बलगम की अति सूक्ष्म बूँदों की फुहार निकलती है। बलगम की इन सूक्ष्म फुहारों में रोग के जीवाणु (M. Tuberculosis) पर्याप्त मात्रा में उपस्थित रहते हैं। यह बलगम की फुहार ६ से लेकर १५-२० फुट दूर तक चली जाती है। यह जीवाणु किसी स्वस्थ व्यक्ति के मुख अथवा नासिका में प्रविष्ट होकर उनके फुप्फुस आदि अंगों में रोग उत्पन्न कर देते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ आहार द्वारा संक्रमण—ऐसा संक्रमण प्रायः दूध के माध्यम से होता है। यह यक्ष्मा-पीड़ित गाय का दूध पीने से होता है। यह देखा गया है कि रोगी व्यक्ति का थूक कहीं घास पर फेंक दिया जाता है, जहाँ इसके जीवाणु बहुत समय तक जीवित रहते हैं। जब वही जीवाणु युक्त घास कोई गाय खाती है तो वह भी संक्रमित होकर रोगग्रस्त हो जाती है। ऐसी रोगी गाय का संक्रमित कच्चा दूध पीने से व्यक्ति यक्ष्मा से ग्रस्त हो जाता है।

○ रोग-प्रसार की तीसरी विधि यह होती है कि शरीर के किसी एक अंग में पूर्व उपस्थित यक्ष्मा-जीवाणु रक्त अथवा लिम्फ के द्वारा किसी अन्य अंग में पहुँच जाते हैं तो उस स्वस्थ अंग को भी यक्ष्मारोग-ग्रस्त बना देते हैं।

○ कभी-कभी मानव प्रकार का जीवाणु भी आँतों में यक्ष्मा रोग की उत्पत्ति कर देता है। इस प्रकार की अवस्था तब आती है, जब फुप्फुसों के यक्ष्मा से पीड़ित व्यक्ति अपना ही बलगम निगल जाता है। संक्रमित बलगम के साथ जीवाणु आँतों में प्रवेश पा जाते हैं और इण्टेस्टाइनल ट्युबरकुलोसिस उत्पन्न कर देते हैं।

○ जब कभी जीवाणुओं का प्रवेश रक्त में हो जाता है तब वे रक्त-परिसंचरण (Blood circulation) के साथ शरीर के किसी भी अंग में पहुँच कर यक्ष्मारोग की उत्पत्ति कर देते हैं।

नोट—इस प्रकार से मानव-शरीर में कोई भी ऐसा अंग नहीं है जो यक्ष्मा रोग से पीड़ित नहीं हो सकता।

○ यह जीवाणु कमरे के फर्श, धूल, वस्त्र आदि में लग कर बहुत समय तक जीवित बने रहते हैं। कमरे की धूल में मिले जीवाणु सफाई के समय उड़कर श्वास के साथ आसानी से शरीर में प्रविष्ट हो सकते हैं।

रोग के लक्षण कब प्रकट होते हैं—जब लोगों में शरीर के अन्दर रोग-क्षमता (Immunity) समुचित मात्रा में नहीं होती है, तब ऐसे लोग क्षय के जीवाणुओं का शिकार हो जाते हैं।

लक्षण एवं चिह्न—यक्ष्मा शरीर के किसी भी अंग को आक्रान्त कर सकता है। अंग-विशेष के अनुसार ही लक्षण व्यक्त होते हैं। भिन्न-भिन्न अंगों के ग्रस्त होने से जो लक्षण उत्पन्न होते हैं, उन्हें स्थानिक लक्षण कहते हैं। इसके विपरीत कुछ ऐसे भी लक्षण होते हैं जो सबमें कामन (Common) होते हैं, इनको सामान्य लक्षण (General symptoms) कहते हैं। अतः यक्ष्मा रोग के लक्षणों का अध्ययन निम्न दो शीर्षकों के आधार पर किया जाता है—

○ सामान्य लक्षण (General symptoms)।

○ स्थानिक लक्षण (Localized symptoms)।

(१) सामान्य लक्षण (General symptoms)—यक्ष्मा के सामान्य लक्षण निम्न प्रकार के होते हैं—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१. अरुचि (Anorexia)।
२. दुर्बलता (Weakness)।
३. शरीर का भार प्रतिदिन कम होते जाना।
४. नींद में कमी।
५. रात्रि के समय पसीना का अधिक आना।
६. सन्ध्या के समय हल्का-हल्का ज्वर (९९·५–१००° फा०) रहना।

○ भोजन में अरुचि या भूख न लगना अथवा शरीर-भार का दिन-प्रतिदिन घटते जाना, रात्रि स्वेद तथा सन्ध्या के समय ९९·५–१०१° फा० टेम्परेचर–इस रोग के ३ प्रारम्भिक लक्षण हैं। इनमें से केवल एक ही लक्षण उपस्थित हो सकता है। तीन में से दो लक्षण उपस्थित होना क्षय (T. B.) रोग के सूचक चिह्न हैं। यदि किसी रोगी में उपरोक्त तीनों लक्षण बराबर बने रहें तो यह समझ लेना चाहिए कि रोगी निश्चित ही क्षयरोग से पीड़ित है।

नोट—यह लक्षण ३–४ सप्ताह से अधिक रहने पर ही इस रोग का अनुमान लगा लेना चाहिए।

○ यदि इन ३ लक्षणों के साथ ही यह भी इतिहास मिले कि इससे पूर्व भी उसके परिवार में अन्य कोई क्षयरोगी रहा है अथवा इस समय भी है तो उस रोगी का क्षयरोग से ग्रस्त होना पूर्णतः निश्चित है। चिकित्सक का यह कार्य है कि वह पता लगाये कि रोग किस अंग में है। अंग-विशेष के अनुसार निम्न स्थानिक लक्षण मिलते हैं।

(२) स्थानिक लक्षण (Localized symptoms)—

(क) फुप्फुस (Lungs) अथवा फुप्फुसीय यक्ष्मा—

यक्ष्मा रोग फुप्फुसों में सबसे अधिक मिलता है। फुप्फुसों के इस रोग से प्रभावित होने पर फुप्फुसीय यक्ष्मा फेफड़ों का यक्ष्मा रोग (Pulmonary tuberculosis) कहलाता है। इसका परिचय निम्न प्रकार दिया जाता है—

○ It is an infectious disease caused by M. Tuberculosis, charactrized by asthenia, slow rise of temperature, loss of weight, cough and occasionally by sudden haemoptysis. The sedimentation rate is raised.

श्वास के द्वारा क्षय जीवाणु फुप्फुसों के वायुकोषों तथा प्रणालियों में जाकर बैठ जाते हैं और वहाँ पर छोटी-छोटी ग्रन्थियाँ बन जाती हैं। रोग की वृद्धि में ग्रन्थियाँ (Nodules) मृदु होकर पूय युक्त हो जाती हैं और फिर फट जाती हैं। पूय और स्राव कफ के द्वारा बाहर निकल जाता है और वहाँ पर कोटर (Cavitation) बन जाते हैं। जब तक ग्रन्थियाँ नहीं फूटती हैं तब तक श्लेष्मा में पूय नहीं निकलता है। साथ ही टी० बी० बेसिलस भी बाहर नहीं निकलते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ खाँसी, वक्ष में पीड़ा, रक्तनिष्ठीवन (Haemoptysis), कष्टश्वास आदि इसके कुछ विशिष्ट लक्षण होते हैं। जिनका वर्णन निम्न प्रकार से है—

१. **खाँसी** (Cough)—○ आरम्भ में रोगी को खाँसी थोड़ी-थोड़ी आती है। कुछ समय के पश्चात् इसमें वृद्धि होती चली जाती है और एक ऐसा समय आता है जब रोगी निरन्तर खाँसता रहता है।

○ पहले रोगी को सूखी खाँसी आती है, परन्तु कुछ समय के बाद पतला श्लेष्मा निकलने लगता है।

○ रोग जैसे-जैसे बढ़ता जाता है, कफ गाढ़ा होता जाता है। एक समय ऐसा आता है कि वह पूय के समान दिखलायी देने लगता है। कफ में कभी-कभी रक्त की लाल धारियाँ मिलती हैं। साथ ही—

(i) कफ कभी-कभी झागदार पतला जल के समान तरल अथवा सामान्य गाढ़ा होता है।

(ii) कफ क्रमशः पीला पड़कर रेखायुक्त हल्दी के समान हो जाता है।

(iii) कफ बहुत भारी होता है। कभी-कभी कुछ हरे रंग का, झागदार, बँधा हुआ और बताशा के सदृश होता है। जल में डालने से कफ डूब जाता है।

(iv) समय-समय पर कफ में सामान्य रक्त की रेखा भी रहती है।

(v) जैसे-जैसे फेफड़े (Lungs) का क्षत बढ़ता है, वैसे-वैसे कफ की मात्रा भी बढ़ती जाती है।

(vi) पूययुक्त कफ के साथ रक्त के अधिक निकलने से उसका रंग ईंट के चूर्ण के समान हो जाता है।

(vii) कभी-कभी अत्यन्त गाढ़ा और छोटे-छोटे चक्र के आकार वाला कफ निकलता है।

नोट—कभी-कभी यह भी देखा गया है कि टी० बी० के रोगी का कफ उपरोक्त लक्षणों से शून्य होता है।

२. **वक्ष की पीड़ा** (Chest pain)—फुप्फुस के आक्रान्त भाग के ऊपर के फुप्फुसावरण में कुछ समय के पश्चात् शोथ उत्पन्न हो जाता है। इसके कारण रोगी को उक्त स्थान पर श्वास को ऊपर खींचते समय (गहरी साँस लेने में) अथवा खाँसते समय पीड़ा महसूस होती है।

३. **रक्तनिष्ठीवन** (Haemoptysis)—जीवाणु संक्रमण के परिणाम-स्वरूप फुप्फुस का टिशू नष्ट हो जाता है, जिससे रक्तकेशिकाएँ (Capillaries) नग्न हो जाती हैं। परिणाम यह होता है कि रोगी जब खाँसता है, तब इन केशिकाओं की दीवारों से रक्त छनकर बलगम के साथ आने लगता है। जिससे कफ में रक्त की रेखाएँ दीखने लगती हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ रोगी के खाँसने के प्रवेग के समय यदि कोई बड़ी धमनी अथवा शिरा विदीर्ण हो जाती है तो बहुत बड़ी मात्रा में रक्त निकल कर रोगी में स्तब्धता के लक्षण उत्पन्न होकर तत्काल मृत्यु हो जाती है।

४. **श्वासकष्ट**—○ प्रारम्भ में इसका कोई विशेष लक्षण नहीं होता है। केवल श्वासकष्ट का इतना लक्षण मिलता है कि थोड़ा परिश्रम करने अथवा तेजी से चलने-फिरने में श्वास फूलने लगता है। श्वास की गति बढ़ जाती है, जिससे रोगी को कुछ समय बाद विश्राम की आवश्यकता पड़ जाती है।

○ कुछ समय के उपरान्त जब फेफड़े का टिशू गल-गल कर बलगम के साथ बाहर निकलने लगता है तो रक्त को ऑक्सीजन और भी कम मिल पाता है। ऐसी स्थिति में रोगी को विश्राम की अवस्था में भी कष्टश्वास प्रतीत होता है।

(ख) स्वरयांत्रिक यक्ष्मा (Laryngitis tuberculous)—

कुछ केसिस में यक्ष्मा का संक्रमण स्वरयंत्र (Larynx) को भी आक्रान्त कर देता है और यक्ष्मज स्वरयंत्र शोथ (Tuberculous laryngitis) की अवस्था उत्पन्न हो जाती है।

○ इस रोग में कंठनली के अंदर 'टचुर्बकिल्स' हो जाते हैं। कंठनली के कोमल भाग में प्रायः क्षत हो जाता है अथवा कंठनली के अस्थि भाग का केरिज एवं निक्रोसिस हो जाता है। श्लेष्मकला में भी कुछ उभरे हुए छोटे दानेदार टचुर्बकिल्स एकत्रित हो जाते हैं। अन्त में सभी स्थान क्षतयुक्त हो जाता है। सन्धि में पूय पड़ जाने से तरुणास्थि नष्ट हो जाती है।

○ इस रोग में सामान्य लक्षणों के अतिरिक्त रोगी का गला बैठ जाता है, जो इसका प्रमुख लक्षण है। रोगी किसी शब्द का उच्चारण करने में असमर्थ रहता है।

(ग) आन्त्रिक क्षय (Intestinal tuberculosis)—पल्मोनरी टचुबरकुलोसिस के बाद इण्टेस्टाइनल टचुबरकुलोसिस का संक्रमण सर्वाधिक मिलता है। इस प्रकार के यक्ष्मा से अधिकांश महिलाएँ ही प्रभावित होते देखी जाती हैं, विशेषकर जिनकी उम्र २० से ४० वर्ष के बीच होती है।

○ इसमें छोटी आँत का अन्तिम भाग तथा बड़ी आँत का प्रारम्भिक भाग ही अधिक प्रभावित होता है। आँत की दीवार में ग्रन्थियाँ पड़ जाती हैं, जो मृदु होकर फट जाती हैं और पूययुक्त मल आता है। ये व्रण इधर-उधर अथवा दीवार के अन्दर की तरफ फैलते जाते हैं। यदि कोई धमनी आदि व्रण में आ जाये तो उसके कट जाने से रक्तस्राव होने लगता है। अथवा व्रण की वृद्धि होकर आँत की सम्पूर्ण दीवार को अतिक्रमण करके पेरीटोनियम में शोथ उत्पन्न हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आन्त्रिक क्षय में निम्नलिखित लक्षण मिलते हैं—

१. उदरीय वेदना (Abdominal pain)—(i) प्रारम्भ में कब्ज और वेदना होती है। उदरीय वेदना एक प्रधान लक्षण होता है। वेदना अधिकतर दक्षिण श्रोणिप्रदेश (Right iliac region) में मिलती है।

(ii) पीड़ा अधिकतर खाना खाने के बाद उत्पन्न होती है।

(iii) वमन होने अथवा मल-विसर्जन के उपरान्त पीड़ा कुछ कम हो जाती है।

(iv) उदर निकला हुआ होता है और हाथ लगाने पर पीड़ा होती है।

(v) पीड़ा सदैव ऐंठन प्रकार की होती है। साथ ही रोगी की आँतों में गुड़गुड़ाहट सुनाई देती है।

○ पीड़ा कभी-कभी अधोजठर प्रदेश अथवा नाभि पर भी मिल सकती है।

२. प्रवाहिका (Diarrhoea)—आन्त्रिक क्षय के रोगी को दिन में चार-पाँच पतले दस्त आते हैं और उसके साथ श्लेष्मा की भी उपस्थिति मिल सकती है।

३. मलावरोध (Constipation)—कभी-कभी रोगी को कब्ज भी हो जाता है। उसे कभी पतले दस्त आते हैं तो कभी कब्ज हो जाता है; ऐसा क्रम बराबर चलता रहता है।

४. भार में कमी (Loss of weight)—रोगी का भार दिन-प्रतिदिन घटता जाता है। वह काफी दुर्बल हो जाता है। अरुचि तथा भोजन के बाद उदर-पीड़ा के भय से रोगी आहार ही नहीं लेता है।

○ आन्त्रक्षय रोग युवतियों में अधिक होता है।

○ इसके होने पर भी बहुत से रोगियों में कोई विशेष लक्षण नहीं मिलते हैं। कुछ समय पश्चात् जब व्रणभाव अधिक हो जाता है, तब इस रोग का सूचक लक्षण अतिसार होने लगता है। दिन-रात में अनेक दस्त होते हैं। पहले दस्त पतले तथा दुर्गन्धित होते हैं, जो साधारण औषधियों से ठीक नहीं होते हैं।

○ पेट में विशेषकर दक्षिण निम्न भाग में शूल (Colic) की तरह का दर्द होता है। जो बिना खाये भी होता है और खाने पर बढ़ जाता है।

○ नाभि के आस-पास अथवा शेषान्त्र-उण्डुकीय प्रदेश (Ileocaecal region) में स्पर्शक्षमता का लक्षण मिलता है।

○ छोटी आँत में व्रण पर मलावरोध होता है और बड़ी आँत में व्रण होने पर अतिसार का लक्षण विशेष होता है। इस प्रकार से कभी मलबन्ध तो कभी अतिसार रहता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ पेट में अफारा (Flatulence) भी रहता है।

○ अतिसार के अतिरिक्त—सायंकालिक ज्वर, रात्रि के समय पसीना आना, कृशता, भोजन में अरुचि, पाण्डुता आदि क्षयरोग सूचक लक्षण भी होते हैं।

○ **बालक में**—आन्त्रक्षय होने पर उसे सायंकालिक ज्वर रहता है। व्रणों के कारण भोजन-रस के भलीभाँति विलीन न हो सकने से रोगी अत्यन्त कृश हो जाता है। पेट फूला रहता है और अतिसार की उपस्थिति मिलती है; जो औषधियों से ठीक नहीं होता है।

(घ) मस्तिष्कावरण के क्षय में (In tuberculous meningitis)—

इस प्रकार के क्षयरोग में क्षयरोग के सामान्य लक्षणों के अतिरिक्त रोगी के सिर में दर्द बना रहता है। कुछ केसिस में वमन भी होता है। इसके अतिरिक्त हाथ-पैर में अत्यन्त वेदना, अनिद्रा, उत्क्लेश आदि लक्षण भी मिलते हैं। रोगी में शीघ्र ही गर्दनतोड़ ज्वर के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। रोगी कठिनता से ७ दिन जीता है।

सूचना—इस प्रकार के यक्ष्मारोग का वर्णन स्वतन्त्ररूप से 'मस्तिष्कावरणशोथ' नामक चैप्टर में किया गया है।

(ङ) अस्थिगत यक्ष्मारोग (Bones tuberculosis)—

बोन्स टी० बी० बालकों एवं नवयुवकों में विशेष होता है। इस प्रकार का क्षयरोग छिद्रयुक्त अस्थियों विशेषकर वर्टिब्रल (Vertebral), हाथ-पाँव की छोटी अस्थियों (Carpus and tarsus) में मिलता है।

अस्थि पर चोट लगने पर वहाँ फेफड़े की किसी नर्म हुई 'लिम्फ ग्लैण्ड्स' अथवा प्रारम्भिक क्षयरोग (Primary infection) से सम्बन्धित रोगग्रस्त ग्रन्थि से रक्तवाहिनी के द्वारा क्षय जीवाणु पहुँचता है, जिसके परिणामस्वरूप अस्थि के अन्दर वाले कोमल भाग में क्षयांकुर बनने लगते है। इसके पश्चात् उसमें Caseation तथा पूयभाव (Softening) होकर वहाँ शीत-विद्रधि (Cold abscess) का निर्माण हो जाता है। अथवा जीवाणु अस्थि के अन्दर और बाहर वाले भाग को खाते हैं, जिससे अन्दर का स्रोत चौड़ा हो जाता है और अस्थि का पृष्ठ अथवा उसकी Plate पतली हो जाती है, जिससे अस्थि पोली हो जाती है।

अस्थियों का क्षय २ रूपों में होता है—

१. **पूययुक्त अस्थिक्षय**—जिसमें Cold abscess बनती है, उसे 'Suppurative tuberculous caries' कहते हैं।

२. **शुष्क अस्थिक्षय**—इसमें अस्थि पतली तथा पोली-सी हो जाती है। इसे शुष्क अस्थिक्षय (Osteoporosis) अथवा 'Tuberculous caries' कहते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ 'कैरीज' का रोग किसी लम्बी या चपटी अस्थि में हो सकता है। जब पृष्ठ पर 'Cold abscess' बनता है, तब इसका पता चलता है।

(१) अँगुलियों की अस्थि का क्षयरोग—हाथ की ऊपर से किसी प्रथम (Proximal) अंगुली की हड्डी में यह रोग होता है। इसमें अँगुली की पहली पोर (शरीर की ओर वाली) धीरे-धीरे तकुए की भाँति फूली हुई दिखलायी देती है। त्वचा का रंग श्वेत-सा प्रतीत होता है। वह लाल नहीं होती है। थोड़ा-थोड़ा दर्द रहता है, किन्तु दबाने तथा छूने से दर्द नहीं होता है। रोग के बढ़ने पर अंगुली मोटी हो जाती है।

(२) पैर की अस्थि का क्षयरोग—पैर की किसी भी छोटी अस्थि में क्षयरोग हो सकता है, जिससे उस अस्थि के अन्दर के स्पंज-सदृश भाग तथा अन्दर के स्रोत में कैरीज हो जाता है और बाहर की प्लेट स्नायुभाव के बढ़ने से फूल कर मोटी हो जाती है। प्रायः जिस अस्थि में यह रोग होता है, वहाँ पर पैर में सूजन दिखलायी देती है। 'Os calcis' में यह रोग विशेषरूप से होता है, जिससे एड़ी के एक ओर अथवा दोनों ओर उभार हो जाता है। रोगी एड़ी को बचा कर चलता है।

○ एस्ट्रागेलस (Astragalus) में क्षयरोग होने पर—गिट्टे के आगे अथवा पीछे की ओर पाँव पर उभार होता है। इस हड्डी पर दबाव पड़ने से दर्द होता है। रोगी पौचों के भार चलता है।

(३) पृष्ठवंश—रीढ़ का क्षयरोग (Spinal caries, Tuberculous spondylitis)—अस्थियों के क्षयरोग (Bones T. B.) में आधे से अधिक रीढ़ का क्षयरोग होता है। रीढ़ की हड्डी में भी आठवें थोरेसिक वर्टिब्रा से लेकर चौथे लम्बर वर्टिब्रा तक के प्रदेश में क्षयरोग विशेषरूप से मिलता है। इस रोग का जीवाणु फुप्फुस तथा हिलार ग्रन्थियों से आता है।

○ इस प्रकार का क्षयरोग बालकों तथा २५ वर्ष से नीचे के नवयुवकों में विशेषरूप से मिलता है। लड़कों की अपेक्षा लड़कियों में यह अधिक होते देखा जाता है।

○ वर्टिब्रल बॉडी (Vertebral body) में यह रोग अधिक होता है। बालकों में ऑस्टियोमाइलाइटिस के रूप में होता है। इसमें धड़ आगे की ओर झुक जाता है तथा पीठ पर उभार या कुबड़ापन दीखने लगता है। इस अवस्था में कुबड़ेपन का लक्षण बहुत स्पष्ट होता है। यदि २-३ पिण्ड रोगग्रस्त होते हैं तो पीछे का उभार और भी स्पष्ट हो जाता है। पर कई एक कसेरुक पिण्ड के आक्रान्त होने से यह स्पष्टता नहीं मिलती है।

○ चिकित्सा होने पर कैल्सीफिकेशन होकर पूयभाव सर्वथा शुष्क हो जाता है और सभी रुग्ण कसेरुओं में अस्थिभाव होकर रोग समाप्त हो जाता है, फिर भी कुब्जता सदा के लिए बनी ही रहती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ युवकों में यह रोग कसेरु के अग्रिम भाग में होता है। इसमें संक्रमण से सन्धिगत डिस्क शीघ्र नष्ट हो जाती है और वहाँ पर किलाटीभवन (Caseation) होकर एण्टीरियर लिगामेण्ट के पीछे एक पूययुक्त क्षय विद्रधि बन जाती है। जहाँ से पूय अन्य कसेरु अस्थियों के आस-पास ऊपर-नीचे फैल जाती हैं। इस विद्रधि के कारण सुषुम्नाकाण्ड पर दबाव पड़ जाने की आशंका रहती है।

पृष्ठवंश क्षयरोग के प्रारम्भिक लक्षण—

१. बालक या युवक को सर्वप्रथम कमर में दर्द की शिकायत रहती है।

नोट—○ यदि किसी बालक में कमर-दर्द १५ दिन से अधिक रहे और किसी युवक में कमर-दर्द ३ मास तक रहे तो इस रोग की आशंका करनी चाहिए। अथवा—

○ रीढ़ की हड्डी की गतिशीलता में कमी आ जाय अर्थात् कमर अकड़ जाय अथवा कमर में विषमता (Deformity) हो जाय तो भी इस रोग की आशंका करनी चाहिए।

○ यदि रोगी बालक क्रोधी तथा चिड़चिड़े स्वभाव का हो जाय, थोड़े परिश्रम से थक जाय और रात के समय कुछ ज्वर उपस्थित रहे तो रोगी की एक्स-रे परीक्षा करनी चाहिए। यदि उसमें Disc space अर्थात् टिकिया वाला भाग तंग हो तो भी इस रोग की आशंका करनी चाहिए।

○ यदि किसी रोगी को अपनी टाँगें कमजोर लगने लगे तो भी शंका करनी चाहिए। ऐसा संस्तम्भी अधरांगघात (Spastic paraplegia) उत्पन्न होने से होता है।

○ यदि रीढ़ की हड्डी के पास या दूर कोई सवर्ण गोल-सा उभार हो जाय तो भी इस रोग का सन्देह करके एक्स-रे परीक्षा करनी चाहिए।

२. रोग-वृद्धि लक्षण—रोग बढ़ने पर निम्न लक्षण मिलते हैं—

(i) रोगी के झुकने, एक पार्श्व की ओर धड़ मोड़ने अथवा शरीर में झटका लगने से कटि-प्रदेश में पीड़ा होती है। रुग्ण वर्टिब्रा को टकोर करने से उसमें पीड़ा अनुभव होती है।

(ii) रोगी बालक खेलना-कूदना छोड़ कर लेट जाता है, क्योंकि चलने-फिरने पर उसे दर्द अधिक प्रतीत होता है।

(iii) पृष्ठवंश का लचीलापन कम हो जाता है तथा स्तब्धता (Rigidity) का लक्षण उत्पन्न हो जाता है।

(iv) कटि-प्रदेश (Lumber region) में रोग होने पर पीठ इतनी अकड़ जाती है कि धड़ को झुकाना, पीछे को फैलाना अथवा बाजू की ओर फिराना कठिन हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(४) ग्रीवा कसेरुओं में रोग होने पर रोगी को एक ओर देखने के लिए अथवा सारा शरीर घुमाना पड़ता है।

(४) **वंक्षणसन्धि क्षय** (Hip joint tuberculosis)—एक हजार अस्थि-क्षय रोगियों में ८-१० रोगियों में वंक्षणसन्धि का क्षयरोग मिलता है। यह रोग बालकों में अधिक होता है। यह रोग इस सन्धि में 'साइनोवाइटिस' के रूप में प्रारम्भ होता है।

लक्षण—१. बालक एक पैर से लंगड़ाता है। साथ ही उस प्रदेश (Hip) में दर्द रहने लगता है।

२. चलने-फिरने में दर्द होता है, अतः बालक अधिकांश समय तक लेटा रहता है। बालक स्वस्थ पार्श्व पर लेटता है।

नोट—जब कभी किसी बालक में उपरोक्त लक्षण मिले तो इस रोग की आशंका करनी चाहिए। साथ ही यह देखना चाहिए कि बालक की वंक्षण-संधि की गतिशीलता घट तो नहीं गई है।

३. बालक की परीक्षा करने पर पेल्विस (Pelvis) रोगग्रस्त सन्धि की ओर मुड़ा दिखलायी देता है।

४. रोगी की कमर भी एक बाजू की ओर कुछ खम खा जाती है और रोगग्रस्त पैर की ओर कुछ उठी हुई दीखती है।

५. पैर को झटकाने या ट्रोकेण्टर पर टकोर करने से बालक को सन्धि में दर्द होता है।

६. यदि रोगी कमर के भार सीधा लेटे तो रुग्ण सन्धि की ओर की टांग कुछ संकुचित रहती है तथा रोगी की कमर टेबुल से कुछ उठी रहती है।

○ रोग का निश्चय करने के लिए एक्स-रे परीक्षा करनी चाहिए।

(च) **अन्य अंगों का यक्ष्मा रोग**—जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है कि यक्ष्मा शरीर के किसी भी अंग में विकृति उत्पन्न कर सकता है और इस दृष्टि से प्रायः यक्ष्मा का संक्रमण हृदयावरण, पेरीटोनियम, मस्तिष्क, अस्थियों सन्धियों, लिम्फग्लैण्ड्स, त्वचा तथा नेत्र में पाया जाता है। परन्तु इस सन्दर्भ में स्मरण रखना चाहिए कि यक्ष्मा का प्राथमिक विकार स्थान (Primary focus) शरीर में फुप्फुसों (Lungs) तथा आँतों में होता है और अन्य अंगों मे संक्रमण इन स्थानों से ही रक्त और लसीका के माध्यम से पहुँचा करता है। अतएव फुप्फुस तथा आँत के यक्ष्मा की सम्भावनाओं पर पहले विचार करना चाहिए।

रोग-निदान (Diagnosis)—यक्ष्मा का निदान करना प्रायः सरल होता है। रोगी का इतिहास, विभिन्न प्रकार के परीक्षणों एवं अन्वेषणों (Investigation) से यह रोग सहज पहचान में आ जाता है।

चिकित्सक के पास जैसे ही कोई रोगी यक्ष्मा चिकित्सा के लिए आता है

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अथवा इस रोग की सम्भावना है तो सर्वप्रथम रोगी में सामान्य लक्षणों एवं स्थानीय लक्षणों का पता लगाना चाहिए। सामान्य लक्षणों में—अरुचि, सन्ध्या कालीन ज्वर, रात्रि स्वेद, शरीर-भार का दिन-प्रति-दिन घटते जाना, पाण्डुता आदि मिलने पर यक्ष्मा का सन्देह करके फेफड़ों तथा आँत सम्बन्धी स्थानीय लक्षणों की जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। ऐसा करने से रोग का निदान बहुत कुछ मायनों में हो जाता है।

इसके पश्चात् निम्न परीक्षण करवाने चाहिए—

१. कफ या थूक परीक्षण (Sputum examination) और यक्ष्मा-निदान—यक्ष्मा-निदान के मुख्य साधनों में सबसे महत्त्वपूर्ण और अचूक साधन थूक या कफ (Sputum) में यक्ष्मा-दण्डाणुओं का पाया जाना है। इसलिए इस परीक्षण पर जितना भी प्रयास किया जाय उतना ही उचित है एवं सहायक भी। अन्य साधनों से प्राप्त हुए परीक्षण-फल से हम सही निदान के चाहे कितने ही समीप क्यों न चले जायें, निश्चित निदान तो यक्ष्मा-दण्डाणुओं के पाये जाने पर ही निर्भर है। वक्ष-परीक्षा एवं वक्ष ऐक्स-रे परीक्षा छाती में विक्षति का प्रमाण देते हैं, किन्तु यह विक्षति किस कारण से है यह निश्चित रूप से नहीं बतलाते। केवल कफ की जाँच ही यह सिद्ध कर सकेगी कि रोगी को यक्ष्मा है या नहीं। इन मामलों में भूलें अधिक देखने को मिलती हैं। अतः उपचार प्रारम्भ करने के पूर्व यक्ष्मा दण्डाणुओं को खोजने के लिए बारबार कफ की जाँच कराना चिकित्सक के लिए उचित है। कफ की परीक्षा माइक्रोस्कोप से होती है। यदि उसमें यक्ष्मा-दण्डाणु मिलते हैं तो फिर यक्ष्मा के होने का कोई सन्देह नहीं रह जाता है।

○ इसके लिए कफ एकत्र कर 'नीलसन विधि' से अभिरंजन कर माइक्रोस्कोप परीक्षण किया जाता है। जब एक घन मिलीलीटर कफ में १ लाख के लगभग दण्डाणु हों तभी स्लाइड पर एक-दो दण्डाणु दीख पाते हैं। इसलिए इन्हें खोजने के लिए और भी साधन प्रयोग में लाने पड़ते हैं। इन अन्य साधनों में सान्द्रण विधि (Concentration method) मुख्य है। जब कफ की स्लाइड को अभिरंजित करके देखने से भी यक्ष्मा दण्डाणु दिखलायी नहीं देते तो सान्द्रण विधि से उन्हें कफ में एकत्रित करने का प्रयत्न किया जाता है। कफ में कुछ ऐसे पाचक पदार्थ मिलाये जाते हैं, जिनसे श्लेष्मा घुल जाता है और दण्डाणु श्लेष्म से अलग होकर पात्र-तल में उतर जाते हैं, जहाँ पर वह सुगमता से खोजे जा सकते हैं।

○ यक्ष्मानाशक औषधियों से उपचार प्रारम्भ करने के पहले ही बार-बार स्पूटम-परीक्षण आवश्यक है, क्योंकि उपचार से दण्डाणुओं की संख्या कम हो जाती है और सम्भव है कि वे न भी दीखें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्पूटम-परीक्षण से यक्ष्मा-निदान में निश्चित प्रमाण—

जब अभिरंजित स्लाइड पर चार या चार से अधिक बार अम्ल स्थायी लाल रंग के निश्चित रूप के दण्डाणु दीखें तभी उन्हें यक्ष्मा दण्डाणु मानकर यक्ष्मा रोग का निश्चित निदान किया जाता है। कभी-कभी एक ही दण्डाणु दीखता है, तो परीक्षण फिर से दोहराया जाता है। कई वैज्ञानिक तो यह आवश्यक समझते हैं कि जब तक १० दण्डाणु न दीखें, तब तक यक्ष्मा का निश्चित निदान नहीं मानना चाहिए। इससे कम संख्या में दण्डाणुओं का पाया जाना संदेहजनक है और उसके आधार पर निश्चित निदान नहीं किया जा सकता। अतः उचित प्रकार से कफ इकट्ठा करके फिर जाँच करनी चाहिए।

कुछ अन्य चिकित्सकों की दृष्टि में—कफ में क्षय के जीवाणु (यक्ष्मा दण्डाणु) उस समय निकलते हैं, जब आक्रान्त फेफड़े के ऊतक गल कर निकलने लगते हैं, अतएव रोग की प्राथमिक अवस्था में पहले तो बलगम निकलता ही नहीं और यदि निकलता भी है तो उसमें जीवाणु मौजूद नहीं होते। अतः कफ में जीवाणु के न मिलने पर यह समझना कि रोगी क्षयग्रस्त नहीं है, भारी भूल है। रोग के अन्य सामान्य तथा स्थानीय लक्षण मौजूद होने तथा E. S. R. उच्च होने पर तत्काल चिकित्सा प्रारम्भ कर देनी चाहिए।

आन्त्र के यक्ष्मा की सम्भावना में—मल का कल्चर (Stool culture) एवं सुग्राह्यता (Sensitivity) परीक्षण करवाना चाहिए। इस परीक्षण में रोगी का मल लेकर उपस्थित जीवाणुओं का संवर्धन किया जाता है, तत्पश्चात् माइक्रोस्कोप से उनको पहचाना जाता है। मल में यक्ष्मा के जीवाणुओं की उपस्थिति रोग का एक महत्त्वपूर्ण निदानात्मक चिह्न होता है।

२. ई० एस० आर० परीक्षा (E. S. R. test)—यदि परीक्षण में E. S. R. ऊँचा मिलता है तो उसका अर्थ है कि रोगी में सक्रिय रूप से क्षय रोग मौजूद हो सकता है। इसे यक्ष्मा के निदान में ७५% प्रमाण मानना चाहिए।

नोट—यक्ष्मा के अतिरिक्त कुछ अन्य रोगों में भी E. S. R. बढ़ जाया करता है, इसलिए इस परीक्षण की उपयोगिता अन्य परीक्षणों जैसे—एक्स-रे परीक्षा आदि के साथ है। केवल E. S. R. की वृद्धि देखकर यक्ष्मा का निश्चयात्मक निदान नहीं किया जा सकता।

३. एक्स-रे परीक्षण—फुप्फुसीय यक्ष्मा (Pulmonary tuberculosis) में इस परीक्षा का विशेष महत्त्व है। बहुत से स्वस्थ दिखलाई पड़ने वाले भी यक्ष्मा के रोगी होते हैं, जिनका अन्य परीक्षणों द्वारा निर्णय नहीं हो पाता है। थोड़ा भी सन्देह होने पर इसका उपयोग अवश्य करना चाहिए।

○ फेफड़ों में साधारण एक्स-रे पर्याप्त होता है। आँतों के यक्ष्मा का पता लगाने के लिए बेरियम मील (Barium meal) नामक औषधि खिलाकर

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बार-बार एक्स-रे लिये जाते हैं। आँतों के यक्ष्मा का पता लगाने के लिए यह परीक्षण (बेरियम मील) विशेष महत्त्व का है।

○ फुप्फुस यक्ष्मा (Pulmonary tuberculosis) एक ऐसा रोग है, जिसकी विकृतियों की इतने विविध प्रकार की छायाएँ एक्स-रे पर दीखती हैं कि वे अन्य कई वक्ष-रोगों की छायाओं जैसी दीख सकती हैं। अतएव केवल एक्स-रे के चित्र के आधार पर यक्ष्मा का निश्चित निदान नहीं किया जाता है। तथापि एक्स-रे ऐसा साधन है जिससे रोग की प्रारम्भिक अवस्था में उसका पता चल जाता है। चाहे यक्ष्मा वक्ष में हो, उदर में हो, या वृक्क में हो; प्रायः सभी अंगों के यक्ष्मारोग के परीक्षण के लिए एक्स-रे अद्वितीय साधन है। फिर भी यह ध्यान रखना चाहिए कि रोग-निदान में एक्स-रे एक सहायक साधन है। रोग का निश्चित निदान मात्र इसी के भरोसे पर नहीं किया जा सकता है, क्योंकि श्वसनीजन्य कार्सीनोमा (Bronchogenic carcinoma), फुप्फुस विद्रधि (Lung abscess), फुप्फुस सिस्ट, श्वसनी-विस्फार (Bronchiectasis) आदि कई रोगों में भी एक्स-रे चित्रण से वैसी ही छायाएँ मिलती हैं जैसी कि यक्ष्मा में। अतः यक्ष्मा का निश्चित निदान तो अन्य साधनों से ही होता है, जैसे—कफ या थूक की जाँच में यक्ष्मा दण्डाणु पाये जाने पर।

○ छाती की एक्स-रे परीक्षा मुख्यतः २ प्रकार से की जाती है—

१. फ्लोरोस्कोपी (Fluoroscopy)।

२. रेडियोग्राफी (Radiography)।

○ एक्स-रे परीक्षा करने पर फुप्फुस के शिखर के पास अस्पष्ट किनारों वाला धुँधला-सा श्वेत बदली का प्रदेश (Sub apical infiltration) दिखलायी पड़ता है। टयुबरकुलर ब्रॉन्को-न्यूमोनिया हो जाने से उत्पन्न स्नायु तन्तु या फाइब्रस अवयव की लाइनें दिखलायी पड़ें तो भी इस रोग का सन्देह करना चाहिए। इस प्रदेश में बिखरी हुई छायाएँ भी दीख सकती हैं।

○ स्मरण रखना चाहिए कि एक्स-रे परीक्षा में कभी-कभी फुप्फुसों पर बहुत से छोटे-छोटे धब्बे जैसे दीखते हैं। यह धब्बे उन रोगियों में मिलते हैं जो पूर्व में इस रोग से ग्रस्त हुए थे और स्वयं ठीक हो गये थे अथवा चिकित्सा में क्षयरोग का पूरा कोर्स कर लिया था। इन रोगियों में चेचक जैसे धब्बे जीवन भर बने रहते हैं। यदि यक्ष्मा के अन्य लक्षण न मिलें तो केवल धब्बों के आधार पर ऐसे रोगियों की चिकित्सा नहीं करनी चाहिए।

○ यदि फेफड़े में केविटी बन गई है तो वह काले रंग के छल्ले के रूप में दिखलायी पड़ती है।

प्लास्टिक की गोलियों से क्षय रोग का निदान—

ब्रिटिश चिकित्सकों के एक दल ने प्लास्टिक की सूक्ष्म गोलियों की सहायता से क्षय रोग के निदान की एक विधि विकसित की है। प्रचलित विधियों की तुलना में यह विधि सस्ती और सरल है। इसमें प्रमस्तिष्क-मेरुदण्ड द्रव

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(Cerebro-spinal fluid) का नमूना लेकर इसे अत्यन्त सूक्ष्म आकार वाली प्लास्टरीन कणिकाओं के एक निलम्बन में मिलाया जाता है। इन पर ऐसे प्रतिरक्षी एण्टीबॉडी की परत चढ़ी होती है, जो क्षयरोग के जीवाणु द्वारा उत्पन्न एण्टीजनों से ही क्रिया कर सकती हैं।

○ यदि रोगी के मस्तिष्क में क्षय के जीवाणुओं का संक्रमण हो चुका होता है तो उससे निकाले गये प्रमस्तिष्क मेरुद्रव में जीवाणुओं द्वारा उत्पन्न एण्टीजन विद्यमान होंगे, जो पालिस्टरीन कणिकाओं पर लगी एण्टीबॉडी से प्रतिक्रिया करेंगे। इसके परिणामस्वरूप निलम्बन में एकत्रित कणिकाएँ इकठ्ठी होने लगेंगी जिन्हें आसानी से देखा जा सकता है।

○ यह विधि परीक्षणों में बहुत सफल रही है। इस विधि से **मस्तिष्क में क्षय रोग** (Tuberculos meningitis) के जीवाणुओं के संक्रमण के **कारण** होने वाली मौतों को रोकने में सफलता मिलेगी।

सापेक्ष निदान (Differential diagnosis)—यक्ष्मा के सही निदान के लिए निम्न रोगों से भेद करना चाहिए—१. निर्बलता या शक्तिहीनता इत्यादि **व्याधियों से ग्रस्त** रोगी यक्ष्माग्रस्त समझ लिये जाते हैं। २. अपचन, मानसिक चिन्ता एवं थकावट। ३. अवटु-अतिसक्रियता (Hyperthyrodism)। ४. अवटु-विषाक्तता (Thyrotoxicosis)। ५. अदृश्य कार्सीनोमा। ६. बार-बार जुकाम होना। ७. दमा। ८. हे फीवर। ९. इओसिनोफीलिया या उष्ण-कटिबंधीय इयोसिनरागी-कोशिकाबहुलता। १०. मिट्रल स्टेनोसिस (हृदय रोग)। ११. फुप्फुसजन्य हृदयरोग (Cor-pulmonale)। १२. पूयरक्तता (Pyaemia) एवं सेप्सिस। १३. गोणिकाशोथ (Pyelitis)। १४. प्रसवोत्तर पूतिता (Puerperal sepsis)। १५. हॉजकिन्स रोग। १६. ल्यूकीमिया एवं १७. फुप्फुस-सम्बन्धी रोग।

उपद्रव (Complications)—यक्ष्मा में निम्न उपद्रवों की सम्भावना रहती है—रक्तष्ठीवन, स्वरघात, पूययुक्त फुप्फुसावरणशोथ, उदरावरणशोथ, मस्तिष्कावरणशोथ, उन्माद, प्रलेपक ज्वर, संधियों एवं अस्थियों आदि अंगों में क्षयमूलक विकार, न्यूमोथोरेक्स, फाइब्रोसिस, श्वासकृच्छ्र, यक्ष्मज विद्रधि (Cold abscess), श्वसनीविस्फार (Bronchiectasis), कम्पेन्सेटरी इम्फाइसीमा, फुप्फुसविद्रधि, ट्युबरकुलस लैरिञ्जाइटिस, ट्युबरकुलस इण्डो-ब्रॉन्काइटिस, यक्ष्मज आन्त्रशोथ, सीरमी कलाशोथ (Inflammation of serous cavities) आदि।

पूर्वानुमान (Prognosis)—○ व्याधि की प्रारम्भिक अवस्था में निदान, पूर्ण विश्राम, निश्चिन्त जीवन, प्रारम्भ से ही उचित व्यवस्था का पर्याप्त समय तक प्रयोग, पोषक आहार, शुद्ध वायु एवं खुले वातावरण में निवास, सुलभ आर्थिक साधन, उपद्रवों का अभाव आदि से यक्ष्मारोग साध्य होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ प्रारम्भ से ही सर्वसाधन-सम्पन्न चिकित्सा के उपलब्ध होने पर रोग साध्य हो जाता है। १ वर्ष तक पूर्ण विश्राम आदि के साथ औषधि-प्रयोग, तत्पश्चात् १ वर्ष तक विश्राम एवं पोषक आहार-विहार के सेवन सहित तीसरे वर्ष प्रतिबंध के साथ क्रमशः थोड़े-थोड़े समय के लिए सक्रिय जीवन का अभ्यास एवं ब्रह्मचर्य का पालन करने से यक्ष्मारोग काफी साध्य हो जाता है।

○ यक्ष्मादण्डाणु-नाशक औषधि उपचार लगभग १८ माह तक चलाया जाता है। उक्त समय तक नियमित रूप से लगातार उपचार लेने पर भी यदि यक्ष्मा दण्डाणु रोगी के कफ में पाये जायें तो रोगी का भविष्य उज्ज्वल नहीं माना जाता। गुहिकाओं (Cavities) की विद्यमानता भय को बढ़ा देती है, किन्तु यदि बार-बार कफ-परीक्षण किये जाने पर यक्ष्मादण्डाणु न मिलें एवं संवर्धन में भी न उगाये जा सकें तो रोग नियंत्रित माना जाता है।

○ आज औषधि-विज्ञान ने इतनी उन्नति कर ली है कि बहुधा रोगी रोगमुक्त हो जाते हैं और ९०% रोगी अपने व्यवसाय में फिर से लौट सकते हैं। किन्तु कई अभागे फिर भी रोग-मुक्त नहीं हो पाते और वर्षों तक संक्रामक स्थिति में ही जीवित रहते हैं। इस प्रकार वे सदैव ज्वालामुखी के मुख पर ही बैठे रहते हैं। यह कहना कठिन होता है कि वे कब अस्वस्थ होकर मृत्यु के सन्निकट चले जायें।

○ कुछ रोगी ऐसे भी होते हैं, जो एक चिकित्सक से दूसरे और दूसरे से तीसरे के पास भागते-फिरते हैं। वे कभी उपचार लेते हैं तो कभी रोक देते हैं और कभी वे चिकित्सा-प्रणाली ही बदल देते हैं। वे स्थिरमति होकर धैर्य पूर्वक लगातार उपचार नहीं लेते। अतः वे प्रायः चिरकारी तथा असाध्य रोग स्थिति में पहुँच जाते हैं। इस कारण वे अत्यन्त कठिनाई से ठीक हो पाते हैं। उपचार की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि रोगी लगातार १८ माह तक चूक किये बिना औषधि उपचार लें। ३-४ माह के उपचार के समय के दौरान रोगी का ध्यानपूर्वक निरीक्षण करने के बाद चिकित्सक यह समझ पाता है कि रोगी में कितना संयम है और यह रोगमुक्ति की ओर जा रहा है या नहीं और जा रहा है तो किस गति से।

○ **एक्स-रे परीक्षा से पूर्वानुमान**—पूर्वानुमान के सम्बन्ध में एक्स-रे महत्वपूर्ण सूचना देता है। रोगी के यक्ष्माग्रस्त आन्तरिक फुप्फुसों की क्या अवस्था है, यह एक्स-रे पर भलीभाँति दीख सकता है। उपचार के पहले के एक्स-रे चित्र की तुलना समय-समय पर लिये गये चित्रों से की जाती है। विभिन्न प्रकार की रोग-दशाओं में परिवर्तन को ध्यानपूर्वक देखकर मूल्यांकन किया जाता है। निःस्राव का अवशोषण, धुंधली श्वेत छायाओं का छोटा होकर सीमांकित होना, गुहिकाओं का छोटा होना या बन्द हो जाना रोग-मुक्ति और प्रगति के सूचक हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नई छायाओं की उत्पत्ति, दूसरे फुप्फुस खण्डों में रोग का प्रसार, प्लूरा में तरल निःस्राव, गुहिकाओं (Cavities) का बड़ा होना आदि रोग-वृद्धि के सूचक हैं।

○ प्रायः यह देखा जाता है कि लगभग पचास प्रतिशत रोगी अपना उपचार दो या तीन माह लेकर बन्द कर देता है। उपचार की सुलभता पर रोगी का भविष्य निर्भर करता है। चिकित्सा-केन्द्रों से दूर रहने वाले अज्ञानी रोगी तो उचित चिकित्सा के बिना ही रह कर अपना जीवन खो देते हैं। अथवा फिर चिकित्सा-केन्द्र होते हुए भी कई रोगियों का रोग-निदान नहीं हो पाता। कुछ लोग आर्थिक कठिनाइयों के कारण अपनी औषधियाँ खरीद सकने में असमर्थ होते हैं।

कई रोगी केवल औषधियों से स्वस्थ नहीं हो पाते। लगभग १०% रोगियों को शल्य-चिकित्सा की आवश्यकता होती है। शल्य-चिकित्सा के साधन देश के बहुत ही कम केन्द्रों पर उपलब्ध हैं। यक्ष्मा रोगियों में से केवल १५-२०% ही उचित औषधि उपचार ले पाते हैं। अतः शेष रोगियों का भविष्य अंधकार-मय होता है।

महिलाओं में गर्भावस्था उनके शरीर के लिए भारस्वरूप होती है और उनके स्वास्थ्य को गिराती है। ऐसी परिस्थितियाँ रोग-मुक्ति में बाधक होती हैं।

रोग-पुनरावृत्ति का भय—यक्ष्मारोग की यह प्रकृति है कि रोगी के स्वस्थ हो जाने पर कई वर्षों के बाद भी रोग की पुनरावृत्ति हो सकती है और स्वस्थ हुए रोगियों में से लगभग १०% में रोग की पुनरावृत्ति होती है। इसके निम्नवत् अनेक कारण हैं—

१. यक्ष्मा-नाशक औषधियों का सेवन एक-डेढ़ वर्ष से कम समय तक ही करना अथवा लगातार सेवन न करना अथवा कम मात्रा में सेवन करना एवं अनुपयुक्त औषधियाँ लेना, २. रोग-मुक्ति के बाद विश्राम की कमी, ३. जीवन में भाग-दौड़, ४. तरह-तरह के शारीरिक तथा मानसिक भार, ५. बार-बार एवं जल्दी-जल्दी प्रसव होना, ६. शरीर का धूप में तपना, ७. पौष्टिक एवं सन्तुलित भोजन की कमी, ८. कॉर्टिकोस्टेराइड्स औषधियों का प्रयोग, ९. मधुमेह रोग की उत्पत्ति तथा १०. जब तक गुहिकाएँ हों या रोग विरोहित न हुआ हो तब तक लगातार औषधियों को लेते रहने पर भी अथवा औषधियों के बन्द कर देने पर रोग बढ़ जाने का भय सर्वदा बना रहता है।

चिकित्सा का उद्देश्य—संक्षेप में चिकित्सा के निम्नलिखित उद्देश्य हैं। इनकी पूर्ति करना सफल चिकित्सक के लिए परम आवश्यक है—

१. रोगी के सभी कष्टों को मिटा कर उसे पूर्ण स्वस्थ करना।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. रोगी को संक्रामक स्थिति से मुक्त करना अर्थात् माइक्रोस्कोप द्वारा बार-बार जाँच करने पर भी उसके कफ में यक्ष्मा दण्डाणु न पाये जायें और संवर्धन में भी न उगाये जा सकें।

३. फुप्फुस एक्स-रे में यह पाया जाय कि रोग विरोहित हो गया है और सभी केविटीज बन्द हो गई हैं। कुछ समय के अन्तर से बार-बार कई मास तक लिये गये एक्स-रे चित्रों में भी रोग-सक्रियता का कोई प्रमाण या चिह्न न रहे।

४. इतने सुदृढ़ तौर पर रोग विरोहित हो जाये कि उसकी पुनरावृत्ति न हो पाये।

५. रोगी अपने व्यवसाय का सभी कार्य भली प्रकार कर सके और वह अपने परिवार का पालन कर सकने लायक स्वस्थ और समृद्ध हो जाये।

○ रोगी अपने आप को कितना ही स्वस्थ अनुभव क्यों न करे, किन्तु उसके कफ को सूक्ष्मदर्शी यन्त्र से देखने पर उसमें तथा संवर्धन की जाँच में यक्ष्मा दण्डाणु जब तक पाये जायें तब तक रोग सक्रिय ही माना जायेगा।

चिकित्सा (Treatment)—यक्ष्मारोग चिकित्सा निम्नलिखित ७ विभागों में सम्पादित होती है—

१. विश्राम-चिकित्सा।
२. आहार-चिकित्सा।
३. निवास-स्थान।
४. रसायन-चिकित्सा (Chemotherapy)।
५. लाक्षणिक चिकित्सा।
६. शस्त्रकर्म।
७. रोग-निरोधी प्रतिरक्षीकरण।

(१) **विश्राम-चिकित्सा**—आजकल रसायन-चिकित्सा के आविष्कार के उपरान्त रोगी को चिकित्साकाल में पलंग पर लेटे रह कर आराम करना आवश्यक नहीं रह गया है। वास्तव में यदि कोई व्यक्ति रोजगार में लगा रहे तो वह अपनी चिकित्सा के लिए आवश्यक धन जुटा सकता है ओर अपने परिवार का पालन-पोषण भी कर सकता है।

ज्वर, रक्तनिष्ठीवन (Heamoptysis), औषधि-प्रतिक्रिया (Durg reaction) तथा रोग-पुनरावर्तन (Relapsing) के समय विश्राम आवश्यक होता है।

(२) **आहार-चिकित्सा**—यक्ष्मा रोगी को समस्त चिकित्सालयों में पौष्टिक तथा बलवर्धक आहार देना चाहिए। उसके भोजन में प्रोटीन तथा विटामिन्स की मात्रा अधिक होनी चाहिए। रोगी को प्रतिदिन आधा लिटर दूध + २ अण्डे + ३-४ पके केले भोजन के अतिरिक्त सेवन कराना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाकाहारी रोगियों को अण्डों की जगह छेने के रसगुल्ले देना चाहिए। मक्खन, घी, मांस आदि का उपयोग प्रशस्त है। यक्ष्मा के रोगियों में उनकी पुष्टि के लिए मछली का तेल (Fish liver oil), माल्ट, ताजे फल आदि का पर्याप्त मात्रा में प्रयोग करना चाहिए। विटामिन्स तथा कैल्शियम योग विशेष महत्त्व रखते हैं।

(३) **निवास-स्थान**—यक्ष्मानाशक सफल औषधियों (रसायन-चिकित्सा) के आविष्कार के बाद अब निवासस्थान का महत्त्व कम हो गया है। फिर भी स्वच्छ ताजी हवा एवं सूर्य का प्रकाश रोगी को मिलने से उसके स्वस्थ होने में पर्याप्त सहायता मिलती है।

(४) **रसायन-चिकित्सा** (Chemotherapy)—रसायन औषधियों के आविष्कार के बाद अब इस रोग की चिकित्सा कराने के लिए रोगी को अस्पताल में भर्ती होना आवश्यक नहीं है। घर पर रह कर भी उसका इलाज कराया जा सकता है। रोगी का थूक-कफ (Sputum), वक्ष एक्स-रे, रक्त तथा मल-परीक्षा (Stool test) करके यक्ष्मा दण्डाणु की उपस्थिति तथा अन्य सामान्य तथा स्थानीय लक्षण मिलने पर रोगी को चिकित्सा द्वारा २-३ माह का अग्रिम चिकित्सा-क्रम दिया जाता है। रोगी उसी औषधि चिकित्सा-क्रम के अनुसार नियमित रूप से औषधि लेता रहता है और प्रति ३ माह पर अपने चिकित्सक को एक्स-रे परीक्षा, कफ-परीक्षा आदि की रिपोर्ट दिखलाता रहता है और आगामी मासों के लिए पुनः चिकित्साक्रम लेकर अपनी औषधि लेने लगता है। लेकिन इस स्थिति में इस बात का ध्यान रखा जाये कि रोगी के कपड़े एवं प्रयोग की सभी वस्तुएँ एवं रहने का कमरा आदि अन्य परिवारीय जनों से अलग रहे।

आज की नवीनतम रसायन-औषधियों (Chemotherapy drugs) ने यक्ष्मा की चिकित्सा को बहुत सरल बना दिया है। यदि रोगी नियमित रूप से इन औषधियों को लेता रहे तो निश्चय ही रोगमुक्त हो सकता है। इस चिकित्सा से मृत्युदर भी बहुत कम हो गई है। अब केवल वही रोगी मरते हैं, जो चिकित्सा आरम्भ करने में काफी विलम्ब करते हैं अथवा जो नियमपूर्वक औषधि-सेवन नहीं करते हैं।

रसायन-चिकित्सा का सिद्धान्त—यक्ष्मा की चिकित्सा में रसायन-चिकित्सा के निम्न सिद्धान्त हैं—

१. दो या दो से अधिक रसायनों का एक साथ प्रयोग करना चाहिए। इसलिए औषधियों को मिश्रण के रूप में प्रयोग करना चाहिए।

२. औषधियाँ उचित और पर्याप्त मात्रा में प्रयोग में लानी चाहिए।

३. रसायन-चिकित्सा उस समय तक चलानी चाहिए, जब तक यक्ष्मा के जीवाणु पूर्णरूप से समाप्त न हो जायें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—○ इस प्रकार से उपरोक्त सिद्धान्तों का परिपालन करते हुए चिकित्सा करने पर रोगी निश्चित ही पुनः स्वस्थ हो जाता है।

○ रसायन औषधियाँ अमोघ अस्त्र हैं। यक्ष्मा चाहे किसी भी अंग-विशेष में हो, ये सबमें समान रूप से उपयोगी हैं। यदि चिकित्सा में कहीं अंतर आता है तो वह केवल स्थानीय लक्षणों के अनुसार होता है। इसकी लाक्षणिक चिकित्सा एक पृथक् शीर्षक के अन्तर्गत आगे के पृष्ठों में दी गई है, ताकि स्थानीय लक्षणों की विभिन्नता के अनुसार चिकित्सा में परिवर्तन किया जा सके। यह अतिरिक्त चिकित्सा रसायन-चिकित्सा के साथ-साथ की जाती है।

यक्ष्मा-निरोधी रसायन औषधियाँ और चिकित्साक्रम में उनका मिश्रित रूप में प्रयोग—

नवीनतम रसायन औषधियों (यक्ष्मा-निरोधी) में—पाइराजीनामाइड, पास (PAS), रिफैम्पीसिन (Rifampicin), थियासीटाजोन (Thiaceta-zone), एथैमबूटौल (Ethambutol) आदि हैं। इन औषधियों का मिश्रित प्रयोग निम्न रूप में प्रशस्त है—

प्रथम ३ मास की चिकित्सा (३ औषधियों द्वारा)—

१. ℞ इञ्जे० स्ट्रेप्टोमाइसिन (Inj. Streptomycin)

मात्रा—१ ग्राम मांसपेशीगत प्रतिदिन।

नोट—४० वर्ष से अधिक उम्र वालों को ०.७५ ग्राम स्ट्रेप्टोमाइसिन पर्याप्त रहता है।

२. ℞ पाइराजीनामाइड (Pyrazinamide)

व्या० नाम—यूनीपायरानामाइड (Unipyaranamide)

मात्रा—२०-३५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर प्रतिदिन।

नोट—एक दिन की कुल मात्रा निकाल कर विभाजित मात्रा में दें।

अथवा—पैरा एमीनो सैलीसिलिक एसिड (PAS)

व्या० नाम—पास डूमैक्स (PAS Dumex)

मात्रा—६ ग्राम दिन में २ बार।

अथवा—रिफैम्पीसिन (Rifampicin)

व्या० नाम—रिफामाइसिन (Rifamycin)

मात्रा—४५०-६०० मि० ग्रा० प्रतिदिन केवल १ मात्रा में।

नोट—रिफामाइसिन कैपसूल दो प्रकार के उपलब्ध हैं। एक में १५० मि० ग्रा० और दूसरे प्रकार के कैपसूल में ३०० मि० ग्रा० औषधि रहती है।

३. ℞ आइसोनियाजिड टेबलेट (Isoniazid)

व्या० नाम—आइसोनैक्स टेबलेट (Isonex tab.)

मात्रा—३०० मि० ग्रा० की १ गोली प्रतिदिन १ बार।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोट—आइसोनेक्स टेबलेट ५० मि० ग्रा० और १०० मि० ग्रा० की शक्तियों में उपलब्ध है। ३०० मि० ग्रा० वाली टेबलेट को आइसोनेक्स फोर्ट (Isonex forte) नाम दिया गया है।

अथवा—आइसोनियाजिड (Isoniazid) ३०० मि० ग्रा० +
थियासीटाजोन (Thiacetazone) १५० मि० ग्रा० टेबलेट

नोट—दोनों औषधियों के सम्मिश्रण का व्यापारिक नाम 'आइसोजोन फोर्ट' (Isozone forte) है।

मात्रा—आइसोजोन फोर्ट की १ गोली दिन में केवल १ बार दी जाती है।

अगले १५ मास में चिकित्सा (२ औषधियों से) निम्न प्रकार करनी चाहिए—○ इस समय इन्जे० स्ट्रेप्टोमाइसिन बन्द कर देना चाहिए।

१. पास (P.A.S.) या रिफैम्पीसिन या पाइराजीनामाइड—इनमें से कोई एक औषधि उपरोक्त मात्रा में चलाते रहना चाहिए।

२. आइसोनेक्स भी उपरोक्त मात्रानुसार देते रहना चाहिए।

निर्देश—कुछ रोगियों को स्ट्रेप्टोमाइसिन उपयुक्त नहीं पड़ती। वह उसके प्रति अतिसुग्राहित होते हैं और प्रतिक्रिया (Reaction) स्वरूप उनमें कुछ लक्षण उत्पन्न होने प्रारम्भ हो जाते हैं। इन रोगियों को स्ट्रेप्टोमाइसिन न देकर निम्न प्रकार से चिकित्सा करनी चाहिए—

प्रथम २ मास में (३ औषधियों से चिकित्सा)—

१. ℞ रिफैम्पीसिन (Rifampicin)
व्या० नाम—रिफामाइसिन कैपसूल (Rifamycin cap.)

मात्रा—४५० मि० ग्रा० (५५ किलो से कम भार पर) प्रतिदिन।
६०० मि० ग्रा० (५५ किलो से अधिक भार होने पर) प्रतिदिन।

नोट—इस प्रकार निकाली हुई मात्रा नाश्ते के पश्चात् दिन में केवल एक बार Single dose के रूप में देना चाहिए।

२. ℞ एथैम्बूटौल (Ethambutol)

मात्रा—१५ मि० ग्रा०/प्रति किलो शरीर भार पर प्रतिदिन।

○ इस औषधि की टेबलेट २०० मि० ग्रा०, ४०० मि० ग्रा०, ६०० मि० ग्रा० और ८०० मि० ग्रा० की शक्तियों में आती हैं।

प्रयोग-विधि—रोगी के शरीर-भार के अनुसार मात्रा निकाल लेना चाहिए। फिर इस मात्रा को दिन में केवल १ बार दोपहर के समय खाने के बाद देना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

३. ℞ आइसोनियाजिड (Isoniazid)

मात्रा—३०० मि० ग्रा० केवल १ बार रात्रि में भोजन के बाद दें। ३०० मि० ग्रा० औषधियुक्त टेबलेट आइसोनेक्स फोर्ट (Isonex forte) के नाम से आती है।

४. ℞ मल्टी-विटामिन्स टेबलेट (Multi-vitamin tab.)

मात्रा—१ गोली प्रतिदिन।

अगले ७ मास की चिकित्सा (दो औषधियों से)—

इस समय 'एथैमबूटौल' बन्द कर दें।

○ रिफैम्पीसिन एवं आइसोनियाजिड यथावत् चलने दें।

आवश्यक सुझाव— ○ समस्त रोगियों को पूरे चिकित्सा-क्रम के दौरान मल्टी-विटामिन्स की एक गोली प्रतिदिन देते रहना चाहिए।

○ बालकों में आयु अथवा शरीर-भार के अनुसार औषधियों की मात्रा निर्धारित कर देनी चाहिए।

यक्ष्मा का एक अन्य सस्ता चिकित्सा-क्रम—

℞ स्ट्रेप्टोमाइसिन इञ्जे० (Streptomycin Inj.) ०.७५ ग्राम

मात्रा—१ इञ्जेक्शन मांसपेशीगत प्रतिदिन।

नोट—इस प्रकार से १०० इञ्जेक्शनों का कोर्स पूरा किया जाता है।

साथ ही प्रतिदिन—I N H ३०० मि० ग्रा०+P A S १२ या १५ ग्राम मुख द्वारा।

○ ३ महीने तक उपरोक्त रीति से प्रारम्भिक चिकित्सा का पूरा कोर्स करने के बाद अगले डेढ़ वर्ष (१८ माह) तक चिकित्सा जारी रखी जाती है। इस चिकित्सा में रोगी को P A S सेवन कराने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि उसे आइसोजोन फोर्ट (Isozone forte) प्रतिदिन एक बार देते रहना काफी होता है।

सुविधा—यह एक सस्ती चिकित्सा है। यह उपचार काफी सस्ता पड़ता है, जिसे एक गरीब व्यक्ति भी वहन कर सकता है।

चिकित्सकों के सुझाव—

○ स्ट्रेप्टोमाइसिन इञ्जे० प्रतिदिन लगाने से कुछ केसिस में उपद्रवस्वरूप गम्भीर रूप के चक्कर आने लगते हैं तथा चलने में परेशानी होती है। इसलिए—

○ आजकल चिकित्सक केवल एक माह तक रोजाना 'स्ट्रेप्टोमाइसिन' का इञ्जेक्शन लगाते हैं; उसके बाद १ दिन छोड़कर २ महीने तक तत्पश्चात् सप्ताह में २ बार तब तक लगाते हैं, जब तक १०० इञ्जेक्शनों का कोर्स पूरा नहीं हो जाता।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्देश—४० वर्ष से अधिक उम्र वाले रोगियों में स्ट्रेप्टोमाइसिन के इञ्जे० प्रतिदिन न लगा कर १ दिन छोड़ कर दो महीने तक तथा इसके बाद सप्ताह में २ बार तब तक लगाना चाहिए, जब तक १०० इञ्जेक्शनों का कोर्स पूरा न हो जाये।

नोट—○ यक्ष्मा रोगी को औषधि-सेवन कम से कम २ वर्षों तक जारी रखना चाहिए, भले ही रोगी के लक्षणों में सुधार होता रहे और ऐक्स-रे प्लेट पर रोगग्रस्त क्षेत्र साफ दिखलायी देने लगें।

○ जिन केसिस में २ वर्ष से पहले उपचार बन्द कर दिया जाता है, उनमें रोग के पुनराक्रमण (Relapse) अधिक देखने में आये हैं।

कुछ चिकित्सक टी० बी० की चिकित्सा निम्न प्रकार से करते हैं—

१. प्रारम्भिक उपचार प्रथम ६ सप्ताह तक (३ औषधियों से)—

℞ इञ्जे० स्ट्रेप्टोमाइसिन सल्फेट (Inj. Streptomycin sulphate)

व्या० नाम—एम्बीस्ट्रिन-एस (साराभाई)

मात्रा—१ ग्राम इञ्जेक्शन मांसपेशीगत प्रतिदिन।

साथ ही—आइसोजोन फोर्ट (Isozone forte) (फाइजर) या नियाजोन (टी० सी० एफ०)—१ गोली प्रतिदिन।

नोट—आइसोनेक्स फोर्ट—यह आइसोनियाजिड ३०० मि० ग्रा०+ थायासिटाजोन १५० मि० ग्रा० का सम्भावित योग है। इन दोनों की अलग-अलग टेबलेट भी आती हैं।

निर्देश—इस चिकित्सा-क्रम से अधिकांश दशाओं में लाभ हो जाता है। यदि रोग बढ़ गया है और फेफड़ों में कैविटीज बन गई हैं तो उपरोक्त क्रम को तब तक चलाया जाता है, जब तक रोग पूर्ण नियन्त्रण में नहीं आ जाता।

२. बाद की चिकित्सा केवल २ औषधियों से कम से कम ६ से ९ मास तक—

१. स्ट्रेप्टोमाइसिन के इञ्जे० बन्द कर दें।

२. आइसोजोन फोर्ट (Isozone forte)

मात्रा—१ गोली प्रतिदिन भोजनोपरान्त।

अथवा—रिफैम्पीसिन ४५०-६०० मि० ग्रा० रोगी के भार के अनुसार प्रातःकाल खाली पेट दें।

साथ ही—आइसोनेक्स (फाइजर) ३०० मि० ग्रा० की गोली।

मात्रा—१ गोली दिन में केवल १ बार भोजन के बाद।

साथ में—अन्य लाक्षणिक चिकित्सा।

○ 'रिफैम्पीसिन' क्षय रोग की एक नवीनतम सर्वश्रेष्ठ औषधि है। इसे भी अन्य क्षय-रोगनाशक औषधियों के साथ दिया जाता है, अकेले नहीं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ क्षय-चिकित्सा के दौरान रोगी को प्रतिदिन विटामिन बी$_6$ ४० मि० ग्रा० की १ गोली अवश्य देते रहना चाहिए, जिससे 'आइसोनियाजिड' का विषाक्त प्रभाव नष्ट होता रहे।

(५) यक्ष्मा की लाक्षणिक चिकित्सा (Symptomatic treatment of T. B.)—क्षय रोग में उत्पन्न हुए लक्षणों की चिकित्सा उपरोक्त रसायन-चिकित्सा के साथ-साथ अतिरिक्त चिकित्सा के रूप में की जाती है।

१. खाँसी (Cough)—क्षयरोग में रोगी को हर समय खाँसी आती रहती है। इसके लिए—'शर्बत वसाका' अथवा 'कोडीन फॉस्फेट शर्बत' का १-१ चम्मच (५ मि० ली०) दिन में ३ बार दें।

अथवा निम्न योग दें—

℞ कैल्शियम ग्लूकोनेट	१०० मिग्रा०
कोडीन फॉस्फेट	१०० मिग्रा०
इक्स्ट्रेक्ट ग्लिसराइला लि०	४ मिली०
शर्बत वसाका	३० मिली०

इसमें सें १-१ चम्मच जल मिलाकर दिन में ३ बार दें।

अथवा—रोगी को रात के समय खाँसी अधिक परेशान कर रही हो तो—

लिंक्टस कोडीन (Linctus Codeine)

मात्रा—१ चाय चम्मच सोने से पूर्व।

टेबलेट फीनोबार्बीटोन ३० मि० ग्रा०

मात्रा—१ गोली सोने से पूर्व।

○ कास के शमन के लिए फेन्सेडिल कफ लिंक्टस (Phensedyl cough linctus), कॉस्कोपिन (Coscopin), ग्लाइकोडीन टर्प वसाका (Glycodein terp vasaka) आदि में से किसी का भी उपयोग किया जा सकता है।

२. रक्तनिष्ठीवन—कफ के साथ खून आना (Haemoptysis)—यक्ष्मा के रोगी को कभी-कभी १–२ पाइण्ट तक थूक या कफ के साथ रक्त आता है। ऐसी अवस्था में रोगी को पूर्ण विश्राम एवं तरल आहार दें एवं कास-बेचैनी-अनिद्रा आदि के शमन की व्यवस्था करनी चाहिए। रोगी को लिटा कर रखना चाहिए। उसके कंधे एवं सिर को सीधा तकिये पर रखना आवश्यक होता है। रोगी को खाने के लिए ठोस वस्तु न दें। उसे केवल दूध दिया जा सकता है।

(i) कास-शमन के लिए—खाँसी में बतलाये गये फार्मूला (कैल्शियम ग्लूकोनेट युक्त) के साथ शर्बत फाल्कोडीन २ मि० ली० प्रति ३० मि० ली० मिक्श्चर के लिए प्रयोग करना चाहिए। इसे दिन में २-३ बार दें। इससे खाँसी शान्त हो जाती है। अथवा—फेन्सेडिल कफ लिंक्टस दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(ii) **यदि रोगी को बेचैनी हो रही हो तथा खाँसी अधिक हो तो**—१० मि० ग्रा० मॉर्फीन सल्फेट के वायल को १ मि० ली० डिस्टिल्ड वाटर में घोल कर अथवा बने हुए घोल का S/C इन्जेक्शन दें। साथ ही मॉर्फीन देने के बाद रोगी को फीनोबार्बीटोन ३० मि० ग्रा० की ½ गोली दिन में २ बार दें।

उपरोक्त के अतिरिक्त रोगी को—ग्लूकोज २५%—५० मि० ली०+ विटामिन 'सी' ५०० मि० ग्रा०+कैल्शियय क्लोराइड १० मि० ली० मिलाकर I/V धीरे-धीरे दें।

अधिक रक्तस्राव की स्थिति में—डेक्स्ट्रावेन (Dextraven), प्लाज्मोसान (Plasmosan) या पेरिस्टान (Peristan) को I/V ड्रिप द्वारा बिन्दु-बिन्दु क्रम से दें। इसी ड्रिप में रक्त को रोकने वाली औषधि (Coagulants) यथा—क्लाउडेन (Clauden) अथवा प्रीमेरिन (Premarin) को भी मिला सकते हैं।

नोट—अधिक रक्तस्राव की स्थिति में इस व्यवस्था के साथ-साथ 'पेथिडीन' अथवा 'मॉर्फीन' का प्रयोग अवश्य करें।

सूचना—इस व्यवस्था के साथ कुछ रोगियों में वमन का कष्ट हो जाता है। ऐसी स्थिति में रोगी को 'लार्गेक्टिल (Largactil) २५ मि० ग्रा० की मात्रा में I/M दे सकते हैं।

यदि रोगी के कफ में रक्त बार-बार आ रहा हो तो—कैल्शियम लैक्टेट १० ग्रेन+सोडियम गार्डीनल ½ ग्रेन+विटामिन सी (सीलिन-ग्लैक्सो) २०० मि० ग्रा०+विटामिन-के १० मि० ग्रा०+क्लाउडेन (Clauden) १ गोली/१ मात्रा—ऐसी १ मात्रा दिन में २–३ बार ८–१० दिनों तक दें।

३. **पार्श्वशूल (छाती का दर्द Chest Pain)**—यह लक्षण फुप्फुसावरण में शोथ होने पर उत्पन्न होता है। इसमें स्थानीय चिकित्सा के रूप में—लिनीमेण्ट कैम्फर, लिनीमेण्ट टैरीबिन्थ अथवा ए० बी० सी० (Lint—A. B. C.) मालिश के रूप में प्रयोग में लाना चाहिए। साथ ही खाने के लिए निम्न योग दें—

कोडीन फॉस ½ ग्रेन+सोडियम गार्डीनल ½ ग्रेन+सिवाल्जिन १ गोली+ ईस्ट १ गोली/१ मात्रा—ऐसी १ मात्रा दिन में १–२ बार आवश्यकतानुसार।

४. **अतिसार (Diarrhoea)**—यक्ष्मा रोगी में अतिसार की वृद्धि का लक्षण चिन्ताजनक माना जाता है। इसके लिए भोजन में दूध की मात्रा कम करके छेना का उपयोग कराना चाहिए। 'पाचक योगों' से व्याधि में आंशिक लाभ मिलता है। P. A. S. तथा I. N. H. से लाभ मिलता है। इसके साथ ही कैल्शियम ग्लूकोनेट I/V द्वारा सप्ताह में २ बार देने से अतिसार में पर्याप्त लाभ मिलते देखा गया है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ अतिसार के अधिक कष्ट में निम्न योग विशेष लाभकारी होता है—

सल्फागुवानेडीन १ गोली + इण्टरोक्वीनल १ गोली + पेप्सिन ५ ग्रेन + एंलीसेटिन (Allisatin) ½ गोली + डोवर्स पाउडर ५ ग्रेन + सोडामिण्ट १ गोली/१ मात्रा—ऐसी १ मात्रा दिन में २–३ बार अतिसार में लाभ होने तक।

५. **अरुचि एवं अग्निमान्द्य**—यह लक्षण प्रायः रोग के प्रारम्भ में मिलते हैं। इसके लिए रोगी को भोजन के पूर्व 'इलिक्जिर नियोगाडीन' (Elixir Neogadine) अथवा 'लिसीमीन' (Lysimine) का सेवन करायें। भोजन के बाद डीजीप्लेक्स (Digeplex) अथवा विटाजाइम (Vitazyme) का प्रयोग करायें।

(६) **यक्ष्मा में शस्त्रकर्म चिकित्सा** (Surgical treat. in T. B.)—

जब कभी किन्हीं विशेष कारणों से रसायन-चिकित्सा (Chemotherapy) असफल सिद्ध होती है तब शल्य-चिकित्सा का सहारा लिया जाता है। इसमें रोग-ग्रस्त भाग को काट कर निकाल दिया जाता है।

○ यक्ष्माग्रस्त फुप्फुस के किसी खण्ड, खंडांश तथा पूरे फेफड़े को शल्य क्रिया द्वारा काट कर निकाल फेंकना शल्य-चिकित्सा द्वारा यक्ष्मा उपचार की आधुनिक प्रचलित रीति है। जब से आधुनिक रसायन औषधियों का अविष्कार हुआ है, तब से इस चिकित्सा की उपयोगिता और भी बढ़ गई है। क्योंकि शल्य-क्रिया के बाद रोग-वृद्धि का भय अब कम हो गया है। यक्ष्मा की चिकित्सा में यह क्रम प्रचलित है कि रोगी को यक्ष्मादण्डाणुनाशक औषधियाँ दी जायें और लगभग ८-१० माह के लगातार उपचार के बाद यदि उसकी ऐसी दशा पायी जाये जिससे यह आशा न हो कि रोगी औषधि-सेवन से रोग-मुक्ति होने की स्थिति में आ सकेगा तो ऐसे रोगी को शल्य-क्रिया द्वारा फुप्फुसोच्छेदन के लिए उपयुक्त समझा जाता है। रोगी के यक्ष्मादण्डाणुओं में औषधि-प्रतिरोध शक्ति उत्पन्न होने के पूर्व उच्छेदन चिकित्सा हो जाना उचित है। यदि औषधि प्रतिरोध शक्ति उत्पन्न हो जाती है तो उच्छेदन शल्य-क्रिया के बाद रोग-प्रसार के उपद्रव तथा अन्तःपूयता होने का भय रहता है।

नोट—अब तो शल्य-चिकित्सा ने उल्लेखनीय सफलता प्राप्त कर ली है। इसमें रोग-ग्रस्त फुप्फुस को काट कर निकाल दिया जाता है और उसके स्थान पर दूसरा 'कृत्रिम फेफड़ा' प्रत्यारोपित कर दिया जाता है।

वक्ष-संधान (Thoracoplasty)—यह एक स्थायी चिकित्सा है। यह चिकित्सा शल्य-क्रिया द्वारा की जाती है। इस शल्य-क्रिया में छाती के ऊपरी भाग की तीन पूरी और दो से चार अधूरी पसलियाँ; इस प्रकार पाँच से सात या और अधिक पसलियाँ पीठ के पीछे से आगे के छोर तक निकाल ली जाती

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। वक्ष-संधान का मुख्य लक्ष्य गुहिका बन्द करना ही है। वक्ष-संधान एक बृहत् शल्य-क्रिया है जिसे दो, तीन या अधिक क्रमों में ३-३ या ४-४ सप्ताह के अन्तर पर सम्पन्न करना होता है।

वक्ष-सन्धान समय की कसौटी पर खरा उतरा है। लोकप्रिय शल्य-चिकित्सा तथा वरणात्मक अवपात चिकित्सा द्वारा यह आज भी यक्ष्मा का सिद्ध उपचार है। जहाँ औषधियाँ निष्फल हो जाती हैं और एक ही फेफड़े के ऊर्ध्व भाग में रोग होता है, वहाँ यह उपचार सफल होता है।

कई बार वृद्ध रोगी तथा मधुमेहग्रस्त व्यक्ति उच्छेदन-चिकित्सा (Resection treatment) सहन नहीं कर पाते। उच्छेदन की अपेक्षा वक्ष-संधान निरापद है। वक्षसंधान वक्षगुहा को छोटा करने के लिए भी उपयोगी है। जब प्लूरल गुहा (Pleural cavity) में अन्तःपूयता (Empyema) हो, गुहा चिरकारी हो गई हो और यह आशा नहीं होती कि उसके नीचे का फेफड़ा (Lung) पूर्ण स्वस्थ होकर फिर से फूल सकेगा, तब वक्षसंधान करके ऐसी गुहा बन्द कर दी जाती है।

(७) **रोग-निरोधी प्रतिरक्षीकरण चिकित्सा**—बी० सी० जी० (अर्थात् Bacillus Calmette and Guerin) जग-विख्यात नाम है। बी० सी० जी० वैक्सीन का टीका है, जिसमें जीवित गो यक्ष्मा दण्डाणुओं को इतना शक्तिहीन कर दिया जाता है कि वे रोग उत्पन्न नहीं कर सकते, किन्तु शरीर में यक्ष्मा रोग से लड़ने की विशिष्ट कृत्रिम प्रतिरोधक शक्ति पैदा कर सकते हैं। बी० सी० जी० (B. C. G.) का टीका भुजा के ऊपर के भाग में कन्धे के नीचे लगाया जाता है।

○ इस वैक्सीन का प्रभाव लगभग ३ से ५ वर्ष तक रहता है। इसका प्रयोग बच्चों को कराया जाता है। इस वैक्सीन से यक्ष्मा के प्रति रोगक्षमता (Immunity) उत्पन्न हो जाती है और बच्चा जीवन भर यक्ष्मा रोग का शिकार नहीं होता है।

○ वैक्सीन देने के पूर्व एक टेस्ट कर लिया जाता है, इसको ट्युबरकुलीन (मोण्टू Mantoux) टेस्ट कहते हैं। इस टेस्ट के निगेटिव (Negative) होने पर ही इस वैक्सीन का प्रयोग करते हैं। इसका अभिप्राय यह है कि व्यक्ति में क्षयरोग-कारक जीवाणुओं के प्रति प्राकृतिक प्रतिरोधात्मक शक्ति नहीं है, इससे इन्हें वैक्सीन देने की आवश्यकता है।

वैक्सीन देने की विधि—वैक्सीन देने की अनेक विधियाँ हैं। किन्तु भारत तथा विश्व के अधिकांश भागों में अन्तस्त्वक् रीति (Intradermal method) प्रचलित है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (W. H. O.) ने भी इसे अपनाया है, क्योंकि इस रीति से निश्चित मात्रा में बी० सी० जी० दण्डाणु शरीर में प्रवेश कराये जाते है और इस रीति में त्रुटियाँ होने की सम्भावनाएँ भी कम हैं। इसे

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माण्टू (Mantoux) पद्धति से दिया जाता है। टीका बायें कन्धे के नीचे डेल्टायड पेशी के ऊपर की त्वचा में लगाया जाता है।

बी० सी० जी० वैक्सीन की मात्रा—वैक्सीन को १ मि० ली० इञ्जे० जल में घोल कर बनाते हैं।

प्रथम मात्रा—०.५ मि० ली०।

इसके १५ दिन बाद—१ मिली लीटर दूसरी मात्रा दें।

नोट— ○ इञ्जे० के २-३ दिन बाद उस स्थान पर सूजन-सी आ जाती है। कभी-कभी व्रण बन कर वहाँ निशान बन जाता है।

○ बच्चे के जन्म के दूसरे या तीसरे दिन यह वैक्सीन दी जाती है और इस समय मोण्टू टेस्ट की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

○ बी० सी० जी० वैक्सीन के वायल को रेफ्रिजीरेटर में बर्फ ताप (४° से १०° सें०) पर रखा जाता है। इससे वैक्सीन की शक्ति १ वर्ष तक सुरक्षित रहती है। अन्यथा इसे निर्माण की तिथि के २ सप्ताह के अन्दर ही प्रयोग कर लेना चाहिए।

यक्ष्मा रोगी की उत्तरचर्या—

यक्ष्मा रोगी में उत्तरचर्या का एक अपना विशिष्ट महत्त्व है। यक्ष्मा उपचार हेतु आज सर्वोत्तम रसायन औषधियाँ (Chemotherapy drugs) उपलब्ध हैं। प्रायः अधिकांश रोगी इनके उपचार से स्वस्थ हो जाते हैं, फिर भी यक्ष्मादण्डाणु शरीर में जीवित रहते ही हैं। अतएव यक्ष्मा की पुनरावृत्ति की सम्भावना सदैव बनी ही रहती है।

○ यदि औषधियाँ लगातार डेढ़-दो वर्ष तक ली जायें, सभी केविटीज (Cavities) बन्द हो जायें, कफ/थूक में यक्ष्मादण्डाणु लेप तथा संवर्ध में (In culture) न पाये जायें तो ऐसे रोगियों में इसकी पुनरावृत्ति का भय कम रहता है। फिर भी कुछ रोगियों में पुनरावृत्ति होती ही है।

○ अतएव यक्ष्मा-नाशक औषधियाँ बन्द करने के पूर्व ऐक्स-रे, कफ-परीक्षण आदि के द्वारा यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि रोग विरोहित हो चुका है। इसके बाद भी नियमित रूप से कम से कम ५ वर्ष तक समयानुसार रोगी की परीक्षा बार-बार होती रहनी चाहिए ताकि यदि पुनरावृत्ति हो तो रोग बढ़ने के पूर्व ही उचित चिकित्सा प्रारम्भ की जा सके।

○ वृद्धों, मधुमेह तथा सिकताश्मता के रोगियों एवं मदिरा के अभ्यस्त व्यक्तियों के सन्दर्भ में विशेष सावधानी की आवश्यकता है। धूप में अधिक श्रम करना, भोजन में पौष्टिक पदार्थों की कमी, विश्राम की कमी तथा फेफड़ों के अन्य रोग जैसे—न्युमोनिया, दमा, धूलिमयता आदि रोगों के कारण भी यक्ष्मा की पुनरावृत्ति होती है। ○ अतएव पूर्ण स्वस्थ हो जाने पर भी प्रत्येक रोगी

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को प्रति वर्ष चिकित्सक की सलाह के अनुसार वक्ष एक्स-रे एवं थूक की जाँच करानी चाहिए। इसके अतिरिक्त यदि कभी भी कोई सन्देहात्मक लक्षण दृष्टिगोचर हों तो तुरन्त चिकित्सक की सहायता लेकर सन्देह का निवारण कर लेना चाहिए। □

संक्रामक रोग 7/40

एड्स
(AIDS)

पर्याय—'एक्वायर्ड इम्यून डिफिसियेन्सी सिण्ड्रोम' (Acquired Immune Deficiency Syndrome)। संक्षिप्त नाम—ए० आई० डी० एस० (एड्स)। इसे हिन्दी में 'अर्जित रोगक्षम हीनता संलक्षण' कहा जा सकता है।

○ किन्तु सुविधा की दृष्टि से इसके प्रचलित संक्षिप्त नाम 'एड्स' से ही इसे विश्व के अधिकांश देशों में जाना जाता है।

परिचय—It is a serious and fatal disease characterised by widespread damage to the immune system of the body with susceptibility to unusual cancers and severe infection caused by a virus called H. T. L. V. III, LAV or ARV.

○ एड्स ऐसी बीमारी है, जिसमें मनुष्य की रोगरोधक-क्षमता का बिलकुल ह्रास हो जाता है। जिससे रोगी न केवल शारीरिक एवं मानसिक रूप से दुर्बल हो जाता है, अपितु साधारण ज्वर, कास, प्रतिश्याय आदि होने पर उनके प्रभाव को वह सहन नहीं कर पाता है। वह या तो अत्यधिक कष्ट में होता है या अन्ततः मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

○ यह एक जानलेवा संक्रामक रोग है, जो वायरस से फैलता है। इस रोग में रोगी का शरीर सड एवं गल कर समाप्त हो जाता है।

एड्स विषयक जानकारी एवं इसकी भयावहता—

विश्व में इसके बढ़ते प्रकोप से सभी चिन्तित हैं। इसके शिकार सबसे अधिक अमेरीका में हैं; परन्तु एड्स ने सम्पूर्ण पश्चिमी विश्व को अपने शिकंजे में कस रखा है। अब तो भारत भी इससे अछूता नहीं रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन (W. H. O.) के अनुसार विश्व के कम से कम ८० लाख से १ करोड़ लोग एड्स रोग के विषाणुओं के शिकार हैं। संगठन का मत है कि एड्स रोग फैलाने वाले एच० आई० वी० विषाणु एशिया में तेजी से फैल रहे हैं। सन् २००० तक विश्व में लगभग ६० लाख वयस्क एडस की बीमारी से पीड़ित हो जायेंगे। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अध्ययन के अनुसार २१वीं सदी

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की दहलीज़ पर कदम रखते समय विश्व में डेढ़ से दो करोड़ लोग एच० आई० वी० संक्रमण से ग्रसित होंगे।

इस रोग का प्रसार तेजी से होता जा रहा है। विश्व के प्रमुख देशों, यथा—ब्रिटेन, अमरीका, फ्रांस, इटली, जर्मनी, यूगोस्लाविया तथा ब्राजील आदि देशों में व्यापक रूप से फैलता हुआ यह घातक रोग जापान, सिंगापुर, इण्डोनेशिया आदि देशों में भी प्रसारित हो गया है। विश्व के प्रायः सभी देशों में एड्स के केसिस में निरन्तर वृद्धि हो रही है।

सर्वप्रथम सन् १९८१ में कैलिफोर्निया में 'एड्स' का रोगी पाया गया। सेण्टर फॉर डिजीज कण्ट्रोल, एटलांटा ने २ रोगियों के न्यूयार्क तथा २ के कैलिफोर्निया में न्यूमोनिया से मरने की पुष्टि की जो कि एक जीवाणु न्यूमोसिस्टीस कैरोनी से मरे। ये चारों ही समलैंगिक सम्बन्ध वाले थे। दिसम्बर १९८१ तक इस तरह के अनेक रोगी मिले, जिनमें यह पाया गया है कि उनमें रोगरोधी-क्षमता की कमी है और सन् १९८२ में इस स्थिति का नाम एड्स दिया गया।

○ एड्स कैंसर से भी अधिक घातक रोग है। कैंसर का तो कुछ इलाज भी सम्भव है, किन्तु एड्स का अद्यावधि कोई भी सन्तोषजनक उपचार नहीं।

○ सम्पूर्ण विश्व में एड्स ने लोगों के मन में गम्भीर दहशत उत्पन्न कर दी है। इस समय हर देश अपने को इससे असुरक्षित समझ रहा है। ○ भारत में भी एड्स प्रभावित लोगों की संख्या निरन्तर बढ़ रही है।

रोग उत्पादक कारण—एक स्वस्थ व्यक्ति में एड्स को उत्पन्न करने वाले निम्न कारण हो सकते हैं—

(१) प्रधान कारण—

○ विषाणु (वायरस)—एड्स रोग को उत्पन्न करने वाला प्रमुख कारण इसका एक विषाणु है, जिसे 'एच० टी० एल० बी० ३' कहा जाता है। यह यौन सम्बन्धी २१वाँ विषाणु है।

○ एल० ए० वी० (LAV) जिसे लिम्फेडीनोपेथी एसोसिएटिड वायरस कहते हैं। यह एक वैज्ञानिक समूह द्वारा प्रमाणित नाम है।

(२) सहायक कारण—

○ समलैंगिक यौन सम्बन्ध—एड्स रोग-ग्रस्त व्यक्तियों में से तीन-चौथाई से भी अधिक (७८%) व्यक्ति समलैंगिक यौन-सम्बन्धों के कारण प्रभावित हुए हैं।

○ एड्स पीड़ित व्यक्ति के साथ मैथुन करने से।

○ एड्स विषाणु संक्रमित सिरिञ्ज एवं नीडिल द्वारा नशीली औषधियों का सेवन करने से। लगभग ऐसे १५% व्यक्ति इस कारण प्रभावित हुए हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ एड्स पीड़ित व्यक्ति का रक्त दूसरे व्यक्ति को चढ़ाने से। ऐसे प्रभावित रोगियों की संख्या ५% है। 'हीमोफीलिया' नामक रोग से ग्रसित रोगी, जिसमें रक्त का ८ नम्बर तत्त्व बार-बार दिया जाता है। ऐसे प्रभावित रोगियों की संख्या लगभग ०·३% है।

○ शेष रोगियों में यह बीमारी वेश्याओं के माध्यम से आती है।

○ एड्स पीड़ित माता के गर्भ से पैदा होने वाले बच्चों में भी इस रोग का संक्रमण होता है। यह रोग गर्भ के शिशु तक को प्रभावित करता है।

○ कुछ लोगों का विचार है कि शेष १% रोग होने का कारण एड्स रोगी के थूक, वीर्य, पेशाब आदि के संसर्ग से अथवा संक्रमित व्यक्ति का आलिंगन-चुम्बन अथवा उसके वस्त्र, बिस्तर आदि के उपयोग से।

○ वैज्ञानिकों ने इस धारणा को गलत बतलाया है कि हाथ मिलाने, चुम्बन लेने अथवा खान-पान या मल-मूत्र विसर्जन के लिए एक ही स्थान के उपयोग आदि से एड्स का विषाणु संक्रमित होता है।

पाश्चात्य सभ्यता की देन यौन सुख के विविध मार्ग जैसे—समलैंगिकता, उभयलिंगता, गुद-मैथुन आदि का सम्बन्ध भी एड्स रोग से है। पाश्चात्य देशों में १०% यह रोग गुद-मैथुन करने वालों में होता है। हमारे देश में ऐसा अनुमान है कि यह रोग वेश्यालय और वह स्त्री-पुरुष जो मैथुन-क्रिया भिन्न-भिन्न पार्टनर के साथ तथा अनेक बार करते हैं, इस व्याधि के शिकार होते हैं। दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता, मद्रास जैसे महानगरों में इस व्याधि से पीड़ित रोगियों की संख्या तेजी से बढ़ रही है।

एड्स विषाणु (AIDS Virus)—

ऐसा माना जाता है कि एड्स का रोग-कारक विषाणु अफ्रीका के हरे बन्दर में ५०,००० वर्षों से था, जो किसी तरह मनुष्य में आया और वहीं से मनुष्यों में फैला। १९८२ में डॉ० रॉबर्ट सी० गैली ने इसके रोगकारक पर शोध किया और पाया कि एड्स रिट्रो वायरस, जिसे 'ह्यूमन टी सेल ल्यूकीमिया वायरस' कहा गया है, से होता है। पाश्चर संस्थान के कुछ वैज्ञानिकों ने भी इस वायरस को रोग-कारक पाया और इसका नाम एल० ए० वी० (लिम्फो-एडिनोपैथी एसोसिएटिड वायरस) रखा। दोनों नामों में विवाद के बाद अन्ततः इसका नाम—एच० आई० वी० (ह्यूमेन इम्यूनो-डिफिसियेन्सी वायरस) रखा गया।

○ पाश्चर संस्थान के वैज्ञानिक मोण्टेग्नीयर—जिन्होंने एच० आई० वी० सर्वप्रथम प्राप्त किया था—का कथन है कि यह विषाणु ही अकेले एड्स का कारण नहीं है, बल्कि अनेकों सहकारक कारण भी इसके लिए उत्तरदायी हो सकते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ कुछ वैज्ञानिक इस बात से भी सहमत हैं कि वीर्य में इम्यून सप्रेसर पदार्थ होता है। बार-बार इस पदार्थ के प्रभाव से इम्यून तंत्र में विकार उत्पन्न हो सकता है। इसलिए गुदा द्वारा लैंगिक सम्बन्ध स्थापन में एड्स की अत्यधिक सम्भावना होती है।

एड्स का प्रसार एवं संक्रमण—

गोनोरिया तथा सिफिलिस की तरह एड्स भी लैंगिक रूप से प्रसारित होने वाला रोग है। लेकिन एड्स समलैंगिक सम्बन्धों से अधिक फैलता है। इसका सिद्ध कारण है, एड्स विषाणु की अधिकतम सांद्रता जो रक्त तथा वीर्य में होती है। इसके अतिरिक्त यह मूत्र, लार, माता के दूध एवं गर्भाशय स्राव में भी पाया जाता है। यह वायरस त्वचा से शरीर में प्रवेश नहीं करता है, यदि उसमें कोई खरोंच या घाव न हो। गुद-मैथुन (Anal sex) या गुदा यौन सम्बन्ध में सामान्य यौन सम्बन्ध की तुलना में अधिक घाव या खरोंच की सम्भावना होती है। कुछ अन्य तथ्य भी सामने आये हैं। वीर्य में रोगरोधी क्षमता को दबाने वाला एक पदार्थ होता है जो गर्भाशय तथा गुदा की दीवारों से अवशोषित होकर इम्यून तंत्र को प्रभावित करता है। गुदा से वीर्य का अवशोषण गर्भाशय की तुलना में अधिक तेजी से होता है और इसलिए इस स्थिति में एड्स होने की तीन गुना अधिक सम्भावना होती है।

○ गुद-मैथुन एक अति अनर्थकारी विकृति है। प्रकृति ने जननेन्द्रिय को इतना कोमल बनाया है कि उसे कठोर स्पर्श से बड़ी हानि होती है। स्त्री-योनि मार्ग से एक चिकना द्रव पदार्थ स्रवित होता है, जिसकी सहायता से पुरुष की इन्द्रिय सुगमता से अन्दर पहुँच जाती है। परन्तु गुदा की रचना आड़ी-टेढ़ी होती है इसलिए गुद-मैथुन से इन्द्रिय टेढ़ी हो जाती है। इससे एड्स, गर्मी, सुजाक आदि भयंकर रोग हो जाते हैं। जिससे यह कर्म किया जाता है उसका शुक्राशय बिगड़ कर उसमें नपुंसकता आ जाती है और एड्स हो जाता है।

वास्तव में एड्स के वायरस रक्त या वीर्य के माध्यम से ही शरीर में प्रवेश कर सकते हैं। इसके लिए योनि का गुदा में कटाव और घाव होना जरूरी है, जिससे एड्स वायरस को शरीर में प्रविष्ट होने का मार्ग मिल जाता है।

○ गुद-मैथुन में गुदा का मार्ग संकीर्ण और सख्त होने से कटाव-फटाव होता ही है और यह स्थिति बन जाती है। अतः गुद-मैथुन और कुँवारी कन्या के साथ एड्स रोगी का मैथुन करना एड्स रोग को उत्पन्न करने में प्रमुख कारण सिद्ध हुआ है।

○ पुरुष से स्त्री और स्त्री से पुरुष में एड्स के फैलने के विस्तृत अध्ययन से पता चलता कि पुरुष से स्त्री में रोग के पहुँचने की सम्भावना अपेक्षाकृत

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधिक है। यह सम्भावना ऋतुकाल में स्थापित यौन-सम्बन्ध में और भी बढ़ जाती है और इस स्थिति से स्त्री से पुरुष में रोग फैलने की सम्भावना भी उतनी ही होती है।

○ इण्ट्रावीनस इन्जेक्शन (I/V) के लिए एक ही सुई को स्टारलाइज्ड किये बिना प्रयोग करने से एक-दूसरे में रोग-प्रसार हो सकता है। यह स्थिति इण्ट्रावीनस ड्रग्स लेने वालों में अधिक देखी गई है। सर्वेक्षण में पाया गया कि २४% पुरुष तथा ५१% स्त्री एड्स रोग सुई की साझेदारी से प्राप्त करता है। रक्तदाता से प्राप्तकर्त्ता में भी रोग फैल सकता है। हीमोफीलिया के रोगी को निरन्तर रक्त दिया जाता है, जिससे रोग फैलने की अत्यधिक सम्भावना होती है। १–२% एड्स रोगी बच्चे होते हैं, जिनमें से १७% इसी विधि से रोगी बनते हैं। ८०% एड्स रोगी बच्चे अपनी माता से रोग प्राप्त करते हैं। यह सम्भावना गर्भ के नवें महीने में अधिक होती है। माता के दूध से एड्स प्राप्त करने की भी एक घटना मिली है। माता से बच्चे में एड्स के आने की २५ से ४०% सम्भावना होती है।

○ वेश्याएँ एड्स वायरस के लिए एक घड़े का काम करती हैं तथा रोग के फैलाने में सबसे ज्यादा उत्तरदायी साबित हो रही हैं।

एड्स रोगी : विस्तृत आँकड़े—

एड्स जब सर्वप्रथम सामने आया तब लगभग १० मिलियन लोग इससे पीड़ित थे, जिनमें से ८५% सिर्फ यू० एस० ए० में थे। एड्स रोगियों में से ९३% नर थे। जेम्स चीन का मानना है कि १९८० के दशक में विश्व में १ मिलियन रोगी थे जिनमें से ७००,००० अफ्रीका में तथा २००,००० अमेरिका में थे। उन्होंने ९० के दशक में इनके ९ मिलियन तक पहुँचने की सम्भावना व्यक्त की है। अमेरिका में ९० के दशक में ५०,००० से ६०,००० नये रोगियों की सम्भावना थी। थाइलैण्ड में ४००,००० लोग एड्स से संक्रमित हैं। वहाँ पर वेश्यावृत्ति चरमोत्कर्ष पर है। वहाँ के पर्यटन व्यवसाय का मूल आधार ही है—'सेक्स इंडस्ट्री'। परिणामतः वहाँ एड्स का जानलेवा रोग खूब फल-फूल रहा है। इस देह-व्यापार से जुड़े खतरे थाईलैण्ड के निवासियों के जीवन में क्या रंग दिखायेंगे, यह कल्पना करके ही मन भय से काँप उठता है। WHO (वर्ल्ड हैल्थ आर्गनाइजेशन) के अनुसार सन् २००० ई० तक एड्स रोगियों संख्या ४० मिलियन हो जायेगी। इसमें विश्व के १५५ देश शामिल हैं। अप्रैल १९९१ तक एक मिलियन नये एड्स रोगी सामने आये जिनमें आधे से अधिक उप-सहारा अफ्रीका में, एक-चौथाई दक्षिणी एवं दक्षिण-पूर्वी एशिया तथा एक-छटांश लैटिन अमेरिका में थे। इस प्रकार ९०% रोगी सिर्फ विकासशील देशों में थे। अफ्रीका सम्भवतः एड्स का जन्मस्थान है। जैरे में २५% वयस्क

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एड्स रोगी होते हैं। यह संक्रमित सुई से रोग पाते हैं। **एक सर्वेक्षण के अनुसार ८०% अफ्रीकी लोग वेश्याओं के सम्पर्क में आते हैं। साथ ही—एक औसत आदमी के प्रति वर्ष ३२ लैंगिक सहयोगी होते हैं।** युगाण्डा विश्व में एड्स की 'राजधानी' है।

भारत में एड्स की स्थिति—

भारत में एड्स के लिए सर्वेक्षण १९८५ में प्रारम्भ किया गया। अप्रैल १९८६ में मद्रास की १० वेश्याओं में यह रोग पाया गया। जून १९८८ तक लगभग १२०,००० लोग इसके संक्रमण के आस-पास थे। जिनमें से ३७० में एच० आई० वी० संक्रमण हो चुका था। इनमें से २२ (१५ भारतीय एवं ७ विदेशी) में एड्स रोग हो चुका था। केवल एक ने रक्त ग्रहण से तथा शेष ने लैंगिक सम्बन्धों से रोग प्राप्त किया था। १४ भारतीयों और २ विदेशियों की एड्स से मृत्यु हो गई। बाकी ३०५ में एड्स का संक्रमण था। इनमें से १३७ पुरुष तथा १६८ महिलाएँ थीं। एक विश्लेषण के अनुसार ३०५ में से ९५ वेश्यायें, ६६ बहुलैंगिक सम्बन्धी मादा, एक समलैंगिक सम्बन्धी, ५ रक्तदाता, १ रक्त-प्राप्तकर्त्ता तथा ३१ अन्य थे।

जनवरी १९८९ में भारत के २१ राज्यों में एड्स के रोगियों की संख्या ७६३ थी, जो सितम्बर १९९१ में यूनियन मिनिस्ट्री ऑफ हैल्थ के अनुसार ५८७९ हो गई। वर्ल्ड हैल्थ ऑर्गेनाइजेशन के अनुसार भारत में ५००,००० लोगों में एड्स संक्रमण की आशंका है जो २००० ई० तक ५ मिलियन हो जाने की सम्भावना है। अभी देश में पूर्ण पक्व एड्स रोगियों की संख्या १२५ है जिनमें से २७ पंजाब में और ४६ कर्नाटक में, ३७ बम्बई में और १५ दिल्ली में हैं। पंजाब में ३५ व्यक्ति एड्स से मृत्यु को प्राप्त हो चुके हैं। पंजाब में १११५ सीरा पॉजिटिव केस हैं।

○ एड्स उत्तर प्रदेश में भी अपने पाँव पसार चुका है। आगरा, लखनऊ और कानपुर में पिछले दिनों १०९ लोगों में एड्स के जीवाणु पाये गये।

○ एक अनुमान के अनुसार इस दशक के अन्त तक विश्व के कुल एड्स मरीजों में से २५% भारतीय होंगे।

○ **विदेशियों एवं पर्यटकों द्वारा प्रवेश में एड्स का विशेष खतरा है।**

एड्स रोग बड़े पैमाने पर अपने देश में बर्मा से जुड़े मणिपुर से आ रहा है। क्योंकि वर्मा को ड्रग्स-स्मगलिंग का सर्वोपरि स्थान माना जाता है। उसी से जुड़ा प्रदेश अपना मणिपुर है, जहाँ बड़े पैमाने पर लोग ड्रग्स लेते हैं। समलैंगिकता, वेश्यावृत्ति, पेशेवर खून देने वालों का खून ग्रहण करना तथा ड्रग्स सेवन एड्स के प्रमुख कारणों में है।

अमेरिका में एड्स रोगी के इलाज में डेढ़ लाख डालर खर्च आता है अर्थात् भारत में यह खर्च एक रोगी पर ३½ लाख रुपये होगा।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ **याद रखिये**—यह एक यौनजनित रोग माना गया है। आम धारणा है कि यह समलैंगिकों के विकृत सम्बन्धों से जनमा एक संक्रामक 'गुदा रोग' है। इतरलिंगी अथवा उभयलिंगी सम्बन्धों से पीड़ित लोग इसे सुख की चाह में अपने प्रेमियों तक पहुँचा रहे हैं। नशाखोर इस मामले में उनके विशेष मददगार हैं।

एड्स के पूर्वरूप—

रोग के प्रारम्भ में कुछ रोगसूचक लक्षणों में—

- ○ शरीर-भार में कमी।
- ○ कृशता।
- ○ अजीर्ण की उपस्थिति।
- ○ उद्भिजता।
- ○ हृल्लास।
- ○ मन्द-मन्द ज्वर की अनुभूति।

इन पूर्व लक्षणों एवं निम्न परीक्षाओं के आधार पर 'एड्स-संभावित व्यक्ति का पता लगाया जा सकता है—

○ **सी० डीप लसिका कोश**—रक्त में इनकी सामान्य गणना ८००-९०० × १० × ३/लि० होती है। किन्तु इस रोग की पूर्वावस्था में यह धीरे-धीरे कम होते जाते हैं।

○ **एच० आई० वी० पीश्यकोर एण्टीजन**—इनकी उपस्थिति इस रोग के आक्रमण का सूचक है।

○ **माइक्रोग्लोबुलिन की उपस्थिति**—सीरम में इसकी अधिक मात्रा होना एड्स रोग-सूचक पूर्व चिह्न हैं। इसकी सामान्य मात्रा १.७ मि० ग्रा०/लि० होती है। यह एड्स रोग में ५ मि० ग्रा० या अधिक हो जाती है।

○ **नियोप्टेरिन परीक्षा**—सीरम में इस परीक्षा से भी रोग की सम्भावना तथा निदान का पता चलता है। स्वस्थ व्यक्तियों में इसकी सामान्य मात्रा ५.४ ५ एन० मोल०/लि० होती है। एड्स में यह २० या अधिक हो जाती है।

एड्स रोग के सामान्य लक्षण—

इस रोग में कुछ महीनों से लेकर एक दशक तक (लगभग ७ वर्ष) रोग के चिकित्सकीय लक्षण प्रकट नहीं होते। इस बीच संक्रमित व्यक्ति स्वस्थ दिखलायी देता है। केवल एच० आई० वी० प्रतिपिण्डों की जाँच ही एक ऐसी विधि है, जिसके द्वारा लक्षण न प्रकट होने की अवधि में भी एच० आई० वी० (HIV) संक्रमण की पहचान की जा सकती है।

याद रखिये—संक्रमित अलाक्षणिक व्यक्ति ही संक्रमण का प्रमुख स्रोत हैं, क्योंकि ऐसे संक्रमित व्यक्तियों की संख्या सबसे अधिक है। साथ ही उनको यह पता भी नहीं कि वे संक्रमित हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ इस रोग की गुप्तावस्था में कोई विशिष्ट लक्षण नहीं मिलते हैं। यह संक्रमण से लेकर १ वर्ष तक का समय प्रकट होने में ले सकता है। इसके लक्षण धीरे-धीरे प्रकट होते हैं, जो इस प्रकार हैं—

○ **अज्ञात लक्षणों वाला बुखार**—रोगी को निरन्तर बुखार रहता है। साथ ही इसकी विशेषता यह है कि यह ज्वर प्रतिकारक (Anti febrile) औषधियों से नहीं उतरता है।

○ **रात्रि के समय पसीना आना**—रोगी को रात के समय अत्यधिक पसीना आता है। यहाँ तक कि उसे पंखे के नीचे बैठने पर भी पसीना आता रहता है।

○ **वजन का निरन्तर घटते जाना**—पौष्टिक आहार तथा प्रोटीन एवं विटामिन्स से भरपूर आहार लेने पर भी रोगी का वजन (Weight) निरन्तर घटता जाता है।

नोट—ऐसे रोगी को बड्स से सावधान हो जाना चाहिए।

○ **अतिसार**—रोगी को एक लम्बे समय (चिरकाल) तक अतिसार रहता है, जिसका कोई कारण नहीं होता है। दस्त बन्द करने वाली औषधियाँ (Anti-diarrhoeal drugs) देने से दस्त तो तत्काल बन्द हो जाते हैं, पर पुनः चालू हो जाते हैं।

श्लेष्मग्रन्थि शोथ—श्लेष्म-ग्रन्थियाँ बार-बार फूल जाती हैं, विशेषकर गले में वंक्षण एवं कक्षासन्धिगत शोथ।

नोट—व्यक्ति के शरीर में कम से कम ३ गाँठें निकलती हैं। ये गाँठें प्रायः बगल तथा जाँघ में होती हैं। ये अन्य अंगों पर भी निकल सकती हैं।

○ **दुर्बलता**—रोगी का शरीर कमजोर हो जाता है और उसे निरन्तर दुर्बलता की अनुभूति होने लगती है।

○ **श्वेत रक्तकणों का घटना**—व्यक्ति के रक्त में श्वेतकणों (W.B.C.) की संख्या घटने लगती है। इसके घटने का कारण खोजना चाहिए। 'कैंसर' तथा 'एड्स' में ही इन कणों की संख्या घटती है।

○ **संक्रमण**—रोगी की रोग-निरोधक अथवा रोग-प्रतिरोधक क्षमता समाप्त हो जाती है। निरन्तर उत्पन्न होने वाली दुर्बलता के कारण रोगी अनेक संक्रामक रोगों की चपेट में आ जाता है।

○ **पाचन-संस्थान की विकृति**—रोगी व्यक्ति की पाचन-शक्ति समाप्त हो जाती है।

○ **मांसपेशियों की दुर्बलता**—रोगी के शरीर की मांसपेशियाँ दुर्बल हो जाती हैं।

○ **कष्टदायक खाँसी की उत्पत्ति**—रोगी व्यक्ति को कफयुक्त खाँसी अत्यन्त कष्ट के साथ आती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ **व्रणोत्पत्ति**—गुदामार्ग में व्रणों की उत्पत्ति हो जाती है, जो किसी भी चिकित्सा से ठीक नहीं होती।

○ **जननेन्द्रिय विकार**—पुरुष-जननेन्द्रिय पर कण्डूयुक्त श्वेत दागों की उत्पत्ति हो जाती है। स्त्रियों में गुदा एवं योनिमार्ग से श्वेत जलीय स्राव की अधिकता होती है।

○ **त्वचीय विकार**—त्वचा पर विविध प्रकार के चकत्ते निकलते हैं। अर्थात् त्वचा पर मण्डलोत्पत्ति, जो बाद में शोथ एवं त्वचा-प्रवर्तन में बदल सकता है। व्रण शीघ्र हो जाता है।

Acute infection occurs 4-6 weeks after infection and is usually a symptomatic. An influenza-like illness may occur with fever, myalgia, arthralgia, headache, nausea, sore throat, rash, transient lymphadenopathy and rarely meningo-encephalitis. A period of a symptomatic infection then follows and this may last from a few months to many years.

(Churchill's Practice of Medicines)

अन्य सम्भावित लक्षण--

* मुख अथवा गले में मोटी श्वेत परत का जमना।
* शारीरिक क्षीणता, सुस्ती एवं नियमित बदन-दर्द।
* शिरःशूल, भ्रम एवं दृष्टि का धुंधलापन।
* दिल में निरन्तर रहने वाली घबराहट।
* मुख भर आना।
* दिन में गर्मी की अनुभूति एवं रात्रि के समय शीत लगना।
* नासा, सिर तथा छाती में कफ का भरा होना।
* शारीरिक तथा मानसिक क्षमता में कमी की अनुभूति।
* सतत थकान एवं बेचैनी।
* मुँह या भोजन की नली में सफेद चित्तियाँ होना।
* मस्तिष्क एवं मेरुरज्जु द्वारा नियन्त्रित क्रियाओं में अव्यवस्था।
* मानसिक विकृति, स्मरण-शक्ति का ह्रास, अन्तर स्पष्ट करने की शक्ति का ह्रास आदि।
* अनेक प्रकार के त्वक्विकार एवं संक्रमण का बार-बार होना जैसे— टी० बी०, फंगस तथा वायरस संक्रमण।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

AIDS RELATED COMPLBX	
SYMPTOMS :	Lethargy ○ Malaise ○ Fever ○ Night sweats ○ Weightloss >10%, ○ Diarrhoea > 1 month.
SIGNS :	Oral candidiasis / leucoplakia, tinea dermatitis / eczema / folliculitis, pityriasis, versicolar, impetigo, mollus cum contagiosum/warts, herpes simplex, herpes zoster, hepatosplenomegaly, PUO>2 months, persistent generalized lymphadenopathy.

प्रारम्भ में निम्न लक्षणों का प्रादुर्भाव होता है—

* लगातार रहने वाला बुखार।
* रात्रि-स्वेद।
* शरीर-भार का तेजी से गिरना।
* अतिसार की प्रवृत्ति।

कुछ समय बाद रोगी के शरीर में जब घातक संक्रामक रोगों का आक्रमण होता है, तब व्याधिक्षमता के अभाव में रोगी शीघ्र ही तमाम रोगों के चपेट में आ जाता है। एड्स का वायरस जब मस्तिष्क में प्रवेश कर जाता है, तब २०% रोगियों में अनुमानतः निम्न लक्षण देखने को मिलते हैं—

* स्मरणशक्ति का ह्रास।
* निर्णय लेने की क्षमता में कमी।
* रोगी में समानधर्मी वस्तुओं में अन्तर करने की क्षमता का अभाव।
* कभी-कभी आंशिक रूप से रोगी पक्षाघात या अंगघात का शिकार।
* अन्ततः शरीर के स्नायुतन्त्र एवं शारीरिक क्रियाओं पर से उसका नियन्त्रण समाप्त।

पी० सी० दास : टेक्स्ट बुक ऑफ मेडिसिन के अनुसार एड्स रोगी के Clinical Features—

○ Disease starts slowly.
○ Lowgrade fever.
○ Evening sweats with marked weakness and tiredness lasting for several weaks.
○ Anorexia ○ Nausea ○ Vomiting diarrhoea.

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ Weight loss ○ Headache ○ Blurring of vision.

○ Delirium.

Respiratory Symptoms : ○ Cough ○ Pain chest

○ Breathlessness.

○ Itching on the private parts or history of discharge through anus or vagina.

○ प्रारम्भिक एड्स काफी समय तक रहने के बाद गम्भीर एड्स में परिवर्तित हो जाता है। गम्भीर एड्स के लक्षण निम्न प्रकार हैं—

○ सर्वप्रथम फेफड़ों एवं ज्ञान-तन्तु तक उसका संक्रमण पहुँच जाता है, जिससे उपरोक्त अवयवों को अत्यधिक क्षति होने की सम्भावना होती है।

○ 'कार्पोसीज सार्कोमा नामक कैंसर के विकास की सम्भावना अधिक रहती है। यह त्वचा का एक घातक कैंसर है।

○ कभी-कभी रोगी के गालों पर सफेद दाग एवं उसके आस-पास छोटे-मोटे रोयें हो जाते हैं।

○ जिन रोगियों में त्वचा का कैंसर होता है, उनके मुख एवं गले में 'कैंडिडा एल्बिकैन्स' नामक कवक का संक्रमण अवश्य मिलता है। जिससे रोगी को बोलने एवं खाने में कष्ट तथा पीड़ा होती है। ऐसे रोगी अतिसार उत्पन्न करने वाले जीवाणु ('टॉक्सो-प्लाज्मा गोंडी' एवं 'क्रिप्टोस्पोरिडियम') के सरलता से शिकार हो जाते हैं।

○ रोगी का शरीर ऐंठने लगता है, उसकी चाल लड़खड़ाने लगती है और उसके पैरों का नियन्त्रण समाप्त हो जाता है।

○ व्यक्ति में ज्वर तथा दस्त का प्रमाण काफी बढ़ जाता है। ज्वर तथा दस्त का उपचार करने पर भी नहीं मिटता है। इसके परिणामस्वरूप रोगी मृत्यु की ओर अग्रसर होता है।

अन्य घातक लक्षणों की सम्भावनाएँ—

○ एड्स के रोगियों में—एनीमिया, ल्यूकोपीनिया, लिम्फोमेनिया, मादक न्यूमोनिया, गम्भीर कामला एवं कैंसर जैसे अनेक गम्भीर एवं मादक रोग उत्पन्न होकर शीघ्र बढ़ते हैं।

○ ऐसे रोगियों में टी-४ कोशिकाओं की संख्या बहुत कम हो जाती है।

याद रखिये—○ कुछ रोगियों में 'कायरस ज्वर' अथवा फ्लू जैसे लक्षण मिलते हैं, जैसे—सर्दी-जुकाम, थकावट, शरीर-भार में कमी, पेट में गड़बड़ी, लसीका-ग्रन्थियों में सूजन आदि।

'ऐसे लक्षणों को ए० आर० सी० (ARC : Aids related complex) कहते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ 'लिम्फनोड्स' में सूजन आने से अनेक रोगियों में अकारण ही फेफड़ों में संक्रमण हो जाता है। इसे पी० सी० पी० (निमोसिस्टस कैरिनी निमोनिया) कहते हैं।

चिकित्सक इस अवस्था को 'अवसरवादी संक्रमण' (अपारच्यूनिस्ट इन्फेक्शन) कहते हैं।

○ किसी भी चिकित्सा का अनुकूल लाभ न होना तथा क्रमशः रोग-वृद्धि होना एड्स की सम्भावना को दर्शाता है।

○ यह बहुत ही घातक रोग है। इसकी विशिष्ट चिकित्सा का न होना, इस रोग के सन्दर्भ में पर्याप्त जानकारी का अभाव एवं बहुत समय तक रोग का गुप्त रहना तथा कोई लक्षण प्रकट न करने से रोगी की मृत्यु निश्चित है।

एड्स लक्षण : एक दृष्टि में—

* अज्ञात लक्षणों वाला बुखार; १ माह से अधिक अवधि तक।
* शरीर-भार में कमी। शरीर के वजन में अकारण १०% की कमी।
* रात्रिस्वेद एवं घबड़ाहट।
* लसीका ग्रन्थियों में शोथ। सम्पूर्ण शरीर में सूजी हुई लिम्फ ग्रंथियाँ।
* एक माह से अधिक समय तक लगातार आने वाले पानी जैसे दस्त।
* मुँह तथा भोजन की नली में सफेद चित्तियाँ।
* त्वचा का रंग बदलना।
* गुदामार्ग में बिना कारक के व्रणोत्पत्ति।
* सतत् थकान एवं बेचैनी।
* श्वेतकणों का घटते जाना।
* विभिन्न प्रकार के त्वक् विकार।
* बार-बार होने वाला हर्पीज जोस्टर।
* नासा, सिर एवं छाती का कफ से भरा रहना।
* श्वसनक ज्वर (न्यूमोनिया आदि) का होना।
* अकारण १ माह से अधिक समय तक कष्टदायक खाँसी की उपस्थिति।
* गम्भीर मानसिक विकृतियाँ एवं स्मरण-शक्ति का ह्रास।
* निर्णय लेने की क्षमता का ह्रास।
* शिरःशूल, भ्रम एवं दृष्टि का धुंधलापन।
* मुख तथा गले में मोटी श्वेत पर्त। मुख और ग्रसनी में फैला कैंडिडा संक्रमण।
* रोग की तीव्रावस्था में वायरस ज्वर अथवा फ्लू जैसे लक्षण।
* रोग की घातक अवस्था में आधुनिक त्वचा रोग—कार्पोसीज सार्कोमा।
* किसी भी चिकित्सा का अनुकूल लाभ न होना एवं क्रमशः रोग-वृद्धि।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

याद रखिये—आरम्भिक अवस्था में व्यक्ति को इस बात का एहसास नहीं होता कि उसे 'एड्स' हो गया है। पर जब इसके विषाणु बढ़ने लगते हैं तो फिर उसे बचाना मुश्किल हो जाता है।

○ It is a serious and fatal disease characterised by wide-spread damage to the immune of the body.

एड्स रोग का निदान—

एड्स रोग के निदान के लिए विश्व स्वास्थ्य संगठन और कुछ मान्य अन्तर्राष्ट्रीय चिकित्सक संघों एवं चिकित्सकों ने कतिपय मापदण्ड निर्धारित किये हैं, जिनके अनुसार रोगी की रक्तगत विभिन्न परीक्षाएँ (Blood tests), एक्स-रे, प्रभावित अंग की त्वचा (Infected skin) एवं मांस आदि का परीक्षण (बायोप्सी) आदि विभिन्न विकृति-विज्ञानीय परीक्षणों एवं दर्शन-स्पर्शन तथा प्रश्नों द्वारा रोगी का सूक्ष्म निरीक्षण एवं परीक्षण करने के पश्चात् ही व्याधि का विनिश्चय होता है।

एड्स के रोगी एवं किसी भी रक्तदाता के रक्त की निम्नलिखित जाँच करनी चाहिए—

○ इम्यूनोब्लॉटिंग अथवा वेस्टर्न ब्लॉटिंग टेस्ट (Immunoblotting or western blotting test)।

○ रेडियो इम्यूनो-परसीपूडियोन एनालिसिस (Radio-immuno-percipudin analysis)।

○ इलीसा टेस्ट (इन्जाइम लोन्क्स इम्यूनोसॉर्बेण्ट एनालिसिस (Elisa enzyme lonkes immuno-sorbent analysis)।

इस तकनीक द्वारा रक्त में किसी विशेष विषाणु की एनालिसिस का पता लगाया जा सकता है। परीक्षणों में व्यक्ति के रक्त में उत्पन्न खास प्रोटीन एल-जी-ई (Protein lge) की मात्रा की जाँच की जाती है। जो कि एच० आई० वी० वायरस की Autigenie profin के प्रभाव से उप्पन्न होती है। 'इलीसा टेस्ट' इसी पद्धति पर आधारित है। इनमें से ब्लड बैंकों द्वारा इसी विधि का उपयोग किया जाता है।

एड्स को पहचानने के लिए सिरोलॉजी (सीरम-विज्ञान) का सहारा लेना पड़ता है। एलीसा तकनीक के अपने दोष तो हैं। इसलिए कभी-कभी 'वेस्टर्न ब्लॉट' परीक्षण से सही स्थिति का पता करना पड़ता है।

'एलीसा' तथा 'वेस्टर्न ब्लॉट' विधियों से रक्त की जाँच मँहगी पड़ती है और इन परीक्षणों में समय भी अधिक लगता है।

○ हाल ही में मिल्टन टॉम ने एक उत्तम और सस्ती जाँच प्रक्रिया (डिप्सटीक) की खोज पड़ताल करके प्रतिपिण्ड की उपस्थिति का पता

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगाने के लिए की है। इससे जाँच प्रक्रिया में एलिसा की तुलना में ८ गुना कम खर्च आता है और इसमें समय भी कम लगता है।

डिप्सटीक जाँच प्रक्रिया—इस जाँच में कंधे के आकार की प्लास्टिक की पट्टी, जिसके ८ दाँतों पर एड्स वायरस एच० आई० वी०-१ पेप्टाइड लगे होते हैं, को रक्त नमूने में १० मिनट के लिए रखा जाता है। यदि रक्त में एच० आई० वी० प्रतिपिण्ड (एण्टीबॉडीज) उपस्थित होता है तो यह पेप्टाइड प्रतिजन (एण्टीजन) से युक्त हो जाता है। इस पट्टी को रक्त से निकाल कर धोने के बाद सिग्नल प्रतिकारक में रखा जाता है।

○ यदि धब्बे लाल होते हैं तो रक्त को एच० आई० वी० प्रतिपिण्ड के लिए सकारात्मक माना जाता है। यह टेस्ट २० मिनट में हो जाता है और ९८% संवेदनशील है।

डिप्सटीक का विकास 'अन्तर्राष्ट्रीय विकास शोधकेन्द्र' कनाडा (DRC) की मदद से हो रहा है और भारत में भी १६ मार्च सन् १९९२ से इस क्षेत्र में कार्य किया जा रहा है। भारत पहला देश है जिसने इस किट का व्यावसायिक उत्पादन स्पेन डायग्नोस्टिक्स ऑफ गुजरात में करना शुरू किया है। इसे 'स्पेन कम्बाइण्ड्स विजुअल' के नाम से वितरत किया जायेगा।

याद रहे—इन परीक्षणों के बिना भी निदान पूर्वरूप, दर्शन-स्पर्शन एवं प्रश्नों के द्वारा अनुभवी चिकित्सक, जो प्राथमिक निदान करते हैं (जो प्रायः सही होता है) उनमें सामान्यतः निम्नलिखित लक्षण मिलते हैं—

○ Poor nutrition.

○ Temperature may be raised.

○ Pulse shows tachycardia.

○ Flate or raised purple blotches are present on the skin.

○ White coating on the mouth or throat.

○ White itchy spots on the genitalia.

○ Generalised lymphadenopathy is very common.

○ Nodes are usually moderately enlarged, firm, mobile and painless.

○ Karposi's sarcoma may develop.

○ दौर्बल्यता—रोगी अपने शरीर में किसी रोग विशेष का अनुभव किये बिना एवं अपना सामान्य आहार नियमित लेने पर भी अधिक दुर्बलता का अनुभव करता है।

○ ज्वर—व्यक्ति में महीनों तक ज्वर आता रहता है। उसके बताने एवं देखने पर ज्वर का वेग प्रातःकाल की अपेक्षा सायंकाल एवं रात्रि में अधिक होता है। किसी-किसी को सतत-दिन बराबर बना रहता है। साथ ही किसी में

 CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुक्तानुबन्धी होता है। यही नहीं १०१–१०२° फा० तापक्रम गिरकर एकाएक ९७–९८° फा० पर आ जाता है।

○ **अतिसार**—रोगी को दिन में ३-४ बार अथवा इससे भी अधिक पानी की तरह पतले दस्त आते हैं। **यह स्थिति महीनों तक निरन्तर चलती रहती है।**

○ **शरीर-क्षीणता**—रोगी के बतलाने अथवा उसका भार ज्ञात करने पर मालूम होता है कि वजन बराबर गिरता जा रहा है। (अपने सामान्य शरीर भार का ९०% से अधिक ह्रास)।

○ **कास**—रोगी में अत्यन्त कष्टदायक शुष्क खाँसी बनी रहती है।

○ **त्वचीय चिह्न**—शरीर पर कहीं-कहीं अथवा सम्पूर्ण शरीर पर कण्डू-शोथयुक्त फुंसियाँ निकली दिखलायी देती हैं।

○ **विसर्प**—शरीर के किसी भी भाग में विसर्प के लक्षण तथा चिह्न दृष्टिगत होते हैं।

○ **मुखपाकीय चिह्न**—मुख एवं गले में एक विशेष प्रकार का श्वेत सन्तानिका युक्त पाक की उपस्थिति मिलती है।

○ **लसीका ग्रन्थिशोथ**—रोगी के कक्षा, वंक्षण, गर्दन आदि स्थानों पर लसीका ग्रन्थियाँ शोथयुक्त मिलती हैं। जिनकी संख्या एवं आकार बढ़ता जाता है।

○ **रात्रिस्वेद**—प्रायः रात्रि के समय में अधिक पसीना आता है, जो शरीर के ऊपरी भाग में मिलता है।

○ **न्यूमोनिया**—इस व्याधि में सबसे अधिक होने वाला एवं अधिक कष्ट-प्रद उपद्रव है। इसमें पी० सी० एफ० प्रकार का न्यूमोनिया अधिक होता है।

रोग का पूर्वानुमान—

○ ५०% मृत्यु जो बढ़ कर ९०% तक सम्भावित है।

○ उचित चिकित्सा के अभाव में अधिक घातक।

○ अनुमान के अनुसार ६०% लोग। वर्ष के अन्दर और ८०% व्यक्ति लगभग ३ वर्ष के अन्दर मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं।

○ लाक्षणिक चिकित्सा के द्वारा रोगी का जीवन कुछ महीनों से लेकर कुछ वर्षों तक बचाया जा सकता है।

○ निर्बल, रोगक्षमता-शक्तिशून्य, उपद्रव युक्त सम्पूर्ण लक्षणों से युक्त रोगी निश्चय मर जाता है।

○ **इस व्याधि में मुख्यतः रोगप्रतिरोधक-क्षमता समाप्त हो जाती है। जिससे रोगी न केवल शारीरिक एवं मानसिक रूप से दुर्बल हो जाता है, अपितु साधारण ज्वर, कास एवं प्रतिश्याय आदि होने पर उसको सहन नहीं**

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर पाता है। जिससे वह या तो अत्यधिक कष्ट पाता है अथवा मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

औषधि-चिकित्सा—

एड्स के उपचार के लिए अब तक कोई पूर्ण प्रभावी औषधि निर्मित नहीं हुई है; फिर भी अनेकों प्रयास इस क्षेत्र में प्रभावशाली रहे हैं।

No satisfactory antiviral drug has been produced yet and all the currently available drugs have important toxic adverse reactions.

वायरस रोग होने के कारण इसकी कोई विशिष्ट चिकित्सा नहीं है। अमेरिका और अनेक यूरोपीय देशों में ऐसी औषधियों की खोज जोर-शोर से चल रही है जो इस रोग के वायरस को नष्ट कर सके। फिर भी कतिपय निम्न औषधियों पर निरन्तर अनुसंधान चल रहे हैं जिनके बारे में यह अनुमान है कि ये औषधियाँ वायरस की उत्पत्ति एवं उनकी वृद्धि को रोकने में सक्षम हैं।

एड्स के उपचार के लिए अब तक कोई उचित समाधान नहीं मिला है, फिर भी इसके इलाज के लिए आजकल निम्न दो बातें मुख्य हैं—

○ सहायक देखभाल तथा ○ अन्य जीवाणु-विषाणु परजीवी के संक्रमण से बचाव के लिए औषधि।

○ Drugs like Phosphonoformate H P A 23—Antimonistungstate and Suramin are used. L Interferon is also used. For opportunist infection 'Co-trimoxazole' or 'Inj. Pentamidine' are given.

○ **एच० पी० ए०-२३**—यह पेरिस के पाश्चर संस्थान के द्वारा विकसित औषधि है। अभी परीक्षण जारी है।

अन्य औषधियाँ—

○ **सुरामिन**—इस औषधि का उपयोग अफ्रीकी देशों में निद्रा रोग (Sleepeng sickness) की रोकथाम में होता है। एड्स में भी इसके कुछ अच्छे परिणाम देखने को मिले हैं।

यह औषधि एड्स वायरस को मनुष्य शरीर में 'रिवर्स ट्रान्सक्रिप्टेज' नामक इञ्जाइम्स उत्पन्न नहीं करने देती और इनको टी० लिम्फोसाइट्स पर आक्रमण करने से भी रोकती है।

○ **ऐजिडोथाइमिडीन (जीडोकुडिन—ए० जेड० टी०-३)** नामक औषधि काफी महत्त्वपूर्ण रही है। यह एक नवीनतम औषधि है, जिसके प्रयोग से प्रभावशाली परिणाम सामने आये हैं।

यह औषधि 'रिवर्स-ट्रान्सक्रिप्टेज इञ्जाइम्स' के कार्य को रोक कर विषाणु डी० एन० ए० के संगठन को अवरुद्ध करती है। यह ३-१ घण्टे के

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्दर आँतों से शोषित होकर शरीर में पहुँच जाती है। इसकी क्रियाशीलता यकृत् में समाप्त हो जाती है।

○ इस औषधि को ६ सप्ताह तक देने से अवसरचारी संक्रामक रोगों में कमी आकर प्रतिकारिता में कुछ वृद्धि होती है। इससे भूख खुलती है एवं वजन बढ़ता है। मुँह के छाले एवं बुखार का शमन होता है।

ए० जैड० टी० के साथ नई औषधि 'डाई डिआक्सीसाइटीडीन' के प्रयोग से दूसरे हानिकारक प्रभाव भी दूर हो जाते हैं। फिर भी इसके प्रयोग से 'रक्तहीनता' (डेबिलिटेटिंग एनीमिया) उत्पन्न होती है।

सावधान—यदि यकृत् ठीक प्रकार से काम नहीं कर रहा है तथा उसमें रुधिर का प्रवाह कम है तो ए० जेड० टी० की क्रियाशीलता पूरी तरह से समाप्त नहीं होती, जो शरीर के लिए हानिकारक सिद्ध होगी।

○ टी० आई० बी० ओ० (टेट्रा हाइड्रो बेन्जोडायजो पाइलोन)—

यह एक नवीन औषधि है, जो ए० जेड० टी० की तुलना में पाँच गुना अधिक प्रभावी है।

जापान के शोधकर्त्ता डॉ० ताकाशी कितामुरा तथा उनके सहयोगियों ने पाया कि टी० आई० बी० ओ० (डिआक्सीनोजोरीमायसीन) नामक औषधि एड्स विषाणु को परिपक्व होने से रोकती है। ब्रिटेन के चिकित्सकों ने एड्स रोगकारक विषाणु के नाश में इसे सहायक बतलाया है।

○ सी० डी० ४ रीसीन (C D 4 रीसीन युक्त औषधि)—इस औषधि का प्रयोग अमेरिकी वैज्ञानिकों ने किया है। यह औषधि प्रभावित कोशिका से जुड़ कर उसका नाश करती है और एड्स विषाणु के स्रोत को समाप्त करती है।

○ रिबीवरिन—इस औषधि का उपयोग कुछ देशों में एड्स की चिकित्सा के लिए किया जा रहा है। वैसे यह औषधि लगभग ७०% से भी अधिक देशों में 'फ्लू' की चिकित्सा में उपयोग में लायी जा रही है।

○ अल्फा इण्टरफेरोन—इस औषधि का उपयोग एड्स की प्रारम्भिक अवस्था में कुछ परिणामों के साथ किया जा रहा है।

यह एक प्रोटीन है, जो कि स्वाभाविक रूप से हमारे शरीर में श्वेत रक्त कणों द्वारा निर्मित होती है। यह प्रोटीन भी वायरस के प्रतिकूल कार्य करती है।

○ फॉस्फोनो फोर्मेट—यह औषधि भी पर्याप्त उपयोगी सिद्ध हो रही है। पर अभी इस पर अनुसंधान जारी है।

○ एण्टीमोनो औटंगस्टेट—इस औषधि का उपयोग कई देशों में एड्स की चिकित्सा में किया जा रहा है।

CC-0. Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ **टियाज इञ्जेक्शन**—एड्स की चिकित्सा में यह इञ्जेक्शन पर्याप्त सफल सिद्ध हो रहा है। ऐसी घोषणा बल्गेरिया के चिकित्सा वैज्ञानिकों ने की है। यह औषधि एड्स के जीवाणुओं को मनुष्य के शरीर में फैलने से पूर्णतया रोक देती है।

○ **ट्राइमेट्रेक्रेट**—यह एक कैंसररोधी औषधि है, जो एड्स के रोग पर उपयोगी सिद्ध हुई है। साथ ही राष्ट्रीय कैंसर संस्थान इसका विकास कर रहा है।

○ **एम० एम० आई० (M. M. I.)**—यह औषधि अफ्रीका में विकसित की गई है जो एड्स रोगियों के शरीर में प्रतिरोधी-क्षमता को पुनः विकसित करती है।

यह औषधि एड्स के विषाणुओं से मुकाबला करने वाले तत्त्वों का शरीर में निर्माण करती है तथा रोगी को पूरी तरह से ठीक कर देती है।

○ **गबारथन**—जनवरी ९० में कैलिफोर्निया की 'आई० सी० एन० फार्मास्युटिकल्स' ने यह औषधि तैयार की है, जो एड्स रोग को फैलने से रोकती है। पर यह नये रोगियों पर क्रियाशील हो रही है।

○ **टीबो**—इस औषधि की थोड़ी-सी मात्रा लेने से ही एड्स के विषाणुओं का शरीर में बढ़ना रुक जाता है। इसके अविष्कारों का कहना है कि यह अब तक निकली दवाओं से बेहतर है।

○ **इण्टरफेरान-गामा और इण्टरल्यूकिन-२**

यह 'टी' कोशिकाओं से निकाला हुआ प्रोटीन है। यह विषाणुओं की बढ़ोत्तरी को रोकती है।

इन औषधियों का प्रयोग ४ से ८ सप्ताह तक किया जाता है। यह प्रथम सप्ताह में टी-४ लसीका कोशिकाओं को बढ़ाते हैं। यह बढ़ोत्तरी चौथे सप्ताह में पूर्व स्थिति में आ जाती है। चिकित्सा ८ सप्ताह तक चलायी जाती है।

नोट—ये औषधियाँ एच० आई० वी० विषाणुओं को कम करती हैं। रक्त की लसीका कोशिकाओं को बढ़ाती हैं एवं 'कार्पोसिस सार्कोमा' को छोटा करती हैं।

○ **इसके अतिरिक्त एड्स रोग की चिकित्सा के लिए निम्न चिकित्सा विधियों का भी परीक्षण किया जा रहा है—**

○ अस्थिमज्जा प्रत्यारोपण।

○ प्लाज्माफेरेसिस (Plasmapharesis)।

(१) लसीकोशा संक्रमण एवं अस्थिमज्जा-प्रतिरोपण—

एड्स के रोगियों में प्रतिकारिता बढ़ाने के लिए लसीकोशा संक्रमण एवं 'अस्थिमज्जा प्रतिरोपण' के प्रयोग भी किये गये हैं। इनके प्रयोग से रोगियों में कुछ सफलता भी मिली है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ अभी तक एड्स के रोगियों में जैविक अपरिवर्तकों एवं 'प्रतिविषाणु औषधियों' का उपयोग एक साथ नहीं किया गया है। यद्यपि यह एक आदर्श चिकित्सा हो सकती है।

(२) **प्लाज्माफेरेसिस**—इस प्रक्रिया के अन्तर्गत रोगी के शरीर से रक्त के जलीय भाग को निकाल दिया जाता है और उसके शरीर में रक्तकणों को प्रविष्ट कराया जाता है।

अवसरचारी संक्रामक रोगों की चिकित्सा—

एड्स रोगी में रोग-प्रतिरोधक क्षमता नष्ट हो जाती है, जिसके परिणाम-स्वरूप अवसरवादी जीवाणुओं के संक्रमण की तीव्र सम्भावना रहती है। इन रोगों की चिकित्सा एक अत्यन्त कठिन कार्य है। इनके कुछ निम्न कारण हैं—

○ अवसरचारी संक्रामक रोगों के निदान में विलम्ब।
○ चिकित्सा हेतु उचित एवं विशिष्ट औषधियों का अभाव।
○ रोगियों में औषधियों से होने वाले प्रतिकूल प्रभाव।
○ चिकित्सा के पश्चात् अवसरचारी संक्रामक रोगों का पुनः होना।

एड्स के मरीजों में दूसरी समस्या 'कार्पोसिस सार्कोमा' (त्वचा का आधुनिक कैंसर रोग) का होना है। इसकी चिकित्सा 'रेडिएशन' से की जाती है एवं कुछ विशिष्ट औषधियों की भी सहायता ली जाती है।

○ इस चिकित्सा के अन्तर्गत अवसरचारी संक्रामक रोगों की अधिक सम्भावना रहती है। इन दोनों कारणों से मृत्यु से रोगी को लम्बे समय तक बचाकर नहीं रखा जा सकता।

> **विश्व स्तर पर अनेकानेक शोध जारी हैं, परन्तु अब तक के लिए पूर्ण प्रभावी औषधि नहीं ढूंढी जा सकी है। अतः एड्स वस्तुतः एक लाइलाज रोग बना हुआ है।**

○ एड्स की चिकित्सा में इनका उपयोग लाभकारी पाया गया है—

○ डी० डी० आई० (D. D. I.), डी० यू० आई० (D. U. I.), ए० एल० डी० यू० (ALDU), बी० डब्लू० ए० ५०९० M. M. L. को भी लाभकारी माना गया है।

○ जीडोवुडाइन, सीडीज, लांग एक्टिंग सल्फा एवं ट्राईमिथोप्रिम, डिक्स्ट्रान सल्फेट, रेट्रीवीर आदि।

○ अमरीका में विकसित औषधि 'ए० एल० ७२१' विषाणु के बाहरी आवरण को तोड़ देने में सक्षम है।

इस औषधि के उपयोग से विषाणु नई स्वस्थ कोशिकाओं पर आक्रमण नहीं कर सकते।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ विटामिन 'सी' (सीलिन Celin) जो शरीर में प्रविष्ट विषाणुओं को निष्क्रिय करने की शक्ति रखती है तथा शरीर को प्रतिरोधी शक्ति देती है साथ ही इस रोग को उभरने से रोकती है।

○ चिकित्सा में वैज्ञानिकों के वर्तमान तथा दूरगामी प्रयास ○

वैज्ञानिक एड्स के रोगी की नष्ट हुई प्रतिरोधी क्षमता को वापस लाने के लिए नये तरीकों की खोज में लगे हुए हैं। इस प्रयास में—

'आइसो प्राइनोसिस' नामक औषधि ब्रिटेन में विकसित की गई है, जो प्रारम्भिक अवस्था में उपयोग में लायी जाती है।

नोट—यह औषधि शरीर को 'रोगप्रतिरोधी शक्ति' प्रदान करती है।

एड्स की नवीन आविष्कृत औषधियाँ : एक दृष्टि में

○ एच० पी० ए०–२३
○ सुरामीन
○ एजिडोथाइमिडीन (जीडोवुडिन–ए० जेड० टी०–३)
○ रिकीबरिन
○ अल्फा-इंटरफेरोन
○ फॉस्फोनो फोरमेट
○ एण्टीमोनी औटंगस्टेट
○ एम० एम० आई० (M. M. I.)
○ गबारबन
○ टीबो
○ टियाज़ इन्जेक्शन
○ सी डी ४ रीसीन (C D 4 Resine)
○ टी० आई० बी० ओ० (टेट्राहाइड्रोबेन्जोडायजो-पाइनोन)
○ डाई डिआक्सी साइटीडीन (नवीन औषधि)
○ इण्टरफेरान–गामा और इण्टरल्यूकिन–२
○ ट्राइमेट्रेकेट (एक कैंसररोधी औषधि)

अन्य चिकित्सा-विधियाँ—

○ अस्थिमज्जा-प्रत्यारोपण
○ प्लाज्माफेरेसिस
○○ चिकित्सा शोध जारी।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एड्स शोध जारी है—

आज यह खुशी की बात है कि एक ऐसी ओषधि की खोज हो चुकी है, जिससे एड्स को रोका जा सकता है। 'एड्स' रोगियों की चिकित्सा के लिए **'रेट्रोविर'** नामक औषधि विकसित की गई है। यह औषधि एच० आई० वी० नामक एड्स वाहक पर नियन्त्रण कर सकती है। इस औषधि के सेवन से रोग का आक्रमण देर से होगा। साथ ही जो मनुष्य इस बीमारी की गिरफ्त में होगा, उन्हें रोग से छुटकारा मिलेगा।

'रेट्रोविर' नामक औषधि को अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त हो गई है। इस बात की जानकारी वरोज वेल्कम (इंडिया) लिमिटेड के अध्यक्ष डॉ० विद्याधर 'ओक' ने दी है। भारत में यह औषधि अब उपलब्ध हो सकेगी।

○ **एड्स का विकास रोकने के लिए—**

* जापानी सफेद चींड़ का सत लाभकारी पाया गया है। यह ७० से ९०% तक सफलता में सहायक है।

* सत के चूरे+पोलीसेकराइड के संयुक्त घोल से निर्मित लेप का प्रयोग रोगग्रस्त कोशिकाओं पर लगाया जाता है।

नोट—प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि इस लेप के लगाने से ३ दिन के अन्दर १०% और ७ दिन के अन्दर ५०% भाग में एड्स का विकास रुक जाता है।

○ 'एजिडोथाइमिडीन' नामक औषधि एड्स के रोगियों के जीवन काल को लम्बा बनाने में सहायक होती है।

○ **एड्स से बचाव—**

एड्स व्यभिचार (गुद-मैथुन) या वेश्यागमन, नशीली दवाओं के सेवन आदि से फैलता है। अतः एड्स से बचाव के लिए सर्वप्रथम मनुष्य को इन अप्राकृतिक कार्यों का परित्याग करना चाहिए। अपरिचित व्यक्ति के साथ शारीरिक सम्बन्ध का पूर्ण परित्याग होना चाहिए। इञ्जेक्शन की सुई को विषाणु मुक्त होना चाहिए।

विश्व के वैज्ञानिक एड्स का इलाज ढूंढ़ रहे हैं। बहुत से परीक्षण किये जा रहे हैं, लेकिन जब तक इसका कोई इलाज नहीं मिल जाता तब तक लोगों को बहुत सावधानी बरतनी होगी। स्वास्थ्य मन्त्रालय का कथन है कि एड्स की बीमारी फैलाने वाले तीन प्रमुख तत्व हैं—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ वेश्यागमन ।

○ नशीली औषधियों का सेवन ।

○ एड्स संक्रमित रक्त का ट्रान्सफ्यूजन ।

लेकिन दुर्भाग्य से इन तत्त्वों को एड्स के विषय में सबसे कम जानकारी है । आज भारत में जरूरत इस बात की है कि केवल स्कूलों और कालेजों में ही नहीं बल्कि सार्वजनिक सभाओं का आयोजन करके एड्स जैसी खौफनाक बीमारी से सम्बन्धित जानकारी आम लोगों को दी जाये और यह बतलाया जाये कि वे इससे बचाव हेतु किस तरह की सावधानी बरतें । यही एक रास्ता है एड्स पर काबू पाने का ।

○ विश्वव्यापी अभियान चलाकर रोकथाम के उपायों का प्रचार करना चाहिए ।

○ संदिग्ध व्यक्ति के साथ यौन-सम्पर्क न करें । मादक द्रव्यों के सेवन से पूर्ण वर्जित रहें । रक्ताधान एवं सूचीवेध में सतर्कता पूर्ण प्रयोग से बचाव हो सकता है ।

एड्स की रोकथाम के लिए ३ दिशाओं में प्रयत्न किये जा रहे हैं—

○ एड्स के कारण होने वाले संक्रामक रोग एवं नवघटन नियोप्लाज्म की रोकथाम ।

○ विषाणु के विरुद्ध विशेष औषधियों का उपयोग ।

○ अपूर्ण प्रतिकारक प्रणाली को बढ़ाने या पूर्ण रूप से ठीक करने का प्रयत्न ।

भारत में एड्स की रोकथाम—

भारत में एड्स की रोकथाम एवं नियन्त्रण के लिए एक मध्यकालीन योजना शुरू की गई है, जिसके लिए ३३ करोड़ रुपया निर्धारित किया गया है ।

इस रोग के विषय में सही जानकारी देने के लिए देश में निम्नलिखित जाँच केन्द्रों एवं चिकित्सा केन्द्रों में व्यवस्था की गई है—

○ ग्राण्ट मेडिकल कालेज, बम्बई ।

○ कलकत्ता मेडिकल कालेज, कलकत्ता ।

○ एस० सी० बी० मेडिकल कालेज, कटक ।

○ उस्मानिया मेडिकल कालेज, हैदराबाद ।

○ एस० एम० एस० मेडिकल कालेज, जयपुर ।

○ के० जी० मेडिकल कालेज, लखनऊ ।

○ मद्रास मेडिकल कालेज, मद्रास ।

○ अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एड्स शोध जारी है—

आज यह खुशी की बात है कि एक ऐसी ओषधि की खोज हो चुकी है, जिससे एड्स को रोका जा सकता है। 'एड्स' रोगियों की चिकित्सा के लिए 'रेट्रोविर' नामक औषधि विकसित की गई है। यह औषधि एच० आई० वी० नामक एड्स वाहक पर नियन्त्रण कर सकती है। इस औषधि के सेवन से रोग का आक्रमण देर से होगा। साथ ही जो मनुष्य इस बीमारी की गिरफ्त में होगा, उन्हें रोग से छुटकारा मिलेगा।

'रेट्रोविर' नामक औषधि को अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त हो गई है। इस बात की जानकारी वरोज वेल्कम (इंडिया) लिमिटेड के अध्यक्ष डॉ० विद्याधर 'ओक' ने दी है। भारत में यह औषधि अब उपलब्ध हो सकेगी।

○ एड्स का विकास रोकने के लिए—

* जापानी सफेद चींड़ का सत लाभकारी पाया गया है। यह ७० से ९०% तक सफलता में सहायक है।

* सत के चूरे+पोलीसेकराइड के संयुक्त घोल से निर्मित लेप का प्रयोग रोगग्रस्त कोशिकाओं पर लगाया जाता है।

नोट—प्रयोगों से ज्ञात हुआ है कि इस लेप के लगाने से ३ दिन के अन्दर १०% और ७ दिन के अन्दर ५०% भाग में एड्स का विकास रुक जाता है।

○ 'एजिडोथाइमिडीन' नामक औषधि एड्स के रोगियों के जीवन काल को लम्बा बनाने में सहायक होती है।

○ एड्स से बचाव—

एड्स व्यभिचार (गुद-मैथुन) या वेश्यागमन, नशीली दवाओं के सेवन आदि से फैलता है। अतः एड्स से बचाव के लिए सर्वप्रथम मनुष्य को इन अप्राकृतिक कार्यों का परित्याग करना चाहिए। अपरिचित व्यक्ति के साथ शारीरिक सम्बन्ध का पूर्ण परित्याग होना चाहिए। इन्जेक्शन की सुई को विषाणु मुक्त होना चाहिए।

विश्व के वैज्ञानिक एड्स का इलाज ढूंढ़ रहे हैं। बहुत से परीक्षण किये जा रहे हैं, लेकिन जब तक इसका कोई इलाज नहीं मिल जाता तब तक लोगों को बहुत सावधानी बरतनी होगी। स्वास्थ्य मन्त्रालय का कथन है कि एड्स की बीमारी फैलाने वाले तीन प्रमुख तत्त्व हैं—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ वेश्यागमन ।

○ नशीली औषधियों का सेवन ।

○ एड्स संक्रमित रक्त का ट्रान्सफ्यूजन ।

लेकिन दुर्भाग्य से इन तत्त्वों को एड्स के विषय में सबसे कम जानकारी है । आज भारत में जरूरत इस बात की है कि केवल स्कूलों और कालेजों में ही नहीं बल्कि सार्वजनिक सभाओं का आयोजन करके एड्स जैसी खौफनाक बीमारी से सम्बन्धित जानकारी आम लोगों को दी जाये और यह बतलाया जाये कि वे इससे बचाव हेतु किस तरह की सावधानी बरतें । यही एक रास्ता है एड्स पर काबू पाने का ।

○ विश्वव्यापी अभियान चलाकर रोकथाम के उपायों का प्रचार करना चाहिए ।

○ संदिग्ध व्यक्ति के साथ यौन-सम्पर्क न करें । मादक द्रव्यों के सेवन से पूर्ण वर्जित रहें । रक्ताधान एवं सूचीवेध में सतर्कता पूर्ण प्रयोग से बचाव हो सकता है ।

एड्स की रोकथाम के लिए ३ दिशाओं में प्रयत्न किये जा रहे हैं—

○ एड्स के कारण होने वाले संक्रामक रोग एवं नवघटन नियोप्लाज्म की रोकथाम ।

○ विषाणु के विरुद्ध विशेष औषधियों का उपयोग ।

○ अपूर्ण प्रतिकारक प्रणाली को बढ़ाने या पूर्ण रूप से ठीक करने का प्रयत्न ।

भारत में एड्स की रोकथाम—

भारत में एड्स की रोकथाम एवं नियन्त्रण के लिए एक मध्यकालीन योजना शुरू की गई है, जिसके लिए ३३ करोड़ रुपया निर्धारित किया गया है ।

इस रोग के विषय में सही जानकारी देने के लिए देश में निम्नलिखित जांच केन्द्रों एवं चिकित्सा केन्द्रों में व्यवस्था की गई है—

○ ग्राण्ट मेडिकल कालेज, बम्बई ।

○ कलकत्ता मेडिकल कालेज, कलकत्ता ।

○ एस० सी० बी० मेडिकल कालेज, कटक ।

○ उस्मानिया मेडिकल कालेज, हैदराबाद ।

○ एस० एम० एस० मेडिकल कालेज, जयपुर ।

○ के० जी० मेडिकल कालेज, लखनऊ ।

○ मद्रास मेडिकल कालेज, मद्रास ।

○ अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ एस० के० आयुर्विज्ञान संस्थान, श्रीनगर।
○ मेडिकल कालेज, त्रिवेन्द्रम।
○ इंडियन कौंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च, नई दिल्ली।
○ क्रिश्चियन मेडिकल कालेज, बंगलोर।
○ नेशनल इन्स्टीटच्यूट ऑफ वायरोलॉजी, पूणे (महाराष्ट्र)।
○ जे० जे० हॉस्पिटल, बम्बई।
○ राजेन्द्र मेमोरियल इन्स्टीटच्यूट ऑफ मेडिकल साइंस, कदमकुआँ, पटना।
○ पी० जी० आई०, चंडीगढ़।

देश में पेशेवर रक्तदाताओं से एड्स रोग फैलने का खतरा निरन्तर बढ़ रहा है। अतः देश में स्थित सभी ब्लड बैंकों को आवश्यक सावधानी बरतने के स्पष्ट निर्देश जारी कर दिये गये हैं। सभी ब्लड बैंकों एवं अस्पतालों को यह स्पष्ट निर्देश है कि किसी भी रोगी को रक्त देने से पहले उसकी जाँच अवश्य कर ली जाय।

○ एड्स के फैलने को निम्न माध्यमों से भी रोका जा सकता है—

○ ऐसे सभी स्थलों, जहाँ समलैंगिकता की सम्भावना है, पुरुष व महिला वेश्याओं के स्थलों, नशा करने वाले समूहों के स्थलों एवं जेलों में बन्द कैदी इत्यादि का व्यापक रूप से सर्वेक्षण किया जाना चाहिए।

○ विदेशों से आने वाले प्रत्येक व्यक्ति के पास एड्स-मुक्त प्रमाणपत्र होना अनिवार्य कर देना चाहिए।

○ व्यापक रूप से सर्वेक्षण कराने के लिए समाज-सेवी संस्थाओं, मेडिकल कालेज, एन० सी० सी० तथा सेना का सहयोग लिया जाना चाहिए। ताकि त्वरित सर्वेक्षण द्वारा एड्स को फैलने से रोका जा सके।

याद रखिये—यदि आप किन्हीं कारणों से एक से अधिक पुरुषों या स्त्रियों के साथ यौन-सम्बन्ध रखने को विवश हैं, तो एड्स से बचने के लिए कण्डोम का प्रयोग अवश्य करें। इसके लिए आजकल वीर्यनाशक क्रीम लगे कण्डोम मिलते हैं। आज कण्डोम को एड्स का सबसे सुरक्षित 'गार्ड' माना जा रहा है।

○ एड्स वैक्सीन का सफल प्रयोग एवं परीक्षण जारी—

वाशिंगटन में एक प्रायोगिक वैक्सीन के प्रयोगशाला के बन्दर के ऊपर प्रयोग किये जाने से यह साबित हो गया है कि यह वैक्सीन एड्स ग्रस्त खून की कोशिकाओं को रोग लगने से सुरक्षित रखता है। इस प्रकार का एड्स रोग मुख्यतः इन्जेक्शन से मादक द्रव्य लेने वालों को होता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बर्मिंघम स्थित 'अलवामा' विश्वविद्यालय की पेट्रीसिया फुल्ज ने बताया कि जिन बन्दरों को यह वैक्सीन लगायी गई थी, वे एक वर्ष तक एड्स की बीमारी से दूर रहे। इसके बाद उन्हें दूषित खून का इन्जेक्शन लगाया गया।

उन्होंने कहा कि इससे यह साबित होता है कि हम सही रास्ते पर हैं। 'फुल्ज' ने कहा कि यह बड़ा कठिन कार्य है, क्योंकि दूषित कोशिकाओं में यह ताकत होती है कि वे और अधिक विषैले तत्त्वों को जन्म दें।

सबसे पहले चिम्पाञ्जियों को वैक्सीन लगायी गई तथा बाद में एड्स ग्रस्त खून की कोशिकाओं को इन्जेक्ट किया गया। ३ बंदरों को टीका लगाने के बाद एड्स से ग्रस्त चिम्पैञ्जी की खून वाली कोशिकाओं की दो खुराकें दी गईं। प्रयोगकर्त्ताओं ने उसके बाद तीनों बंदरों का समय-समय पर इस आशय का परीक्षण किया कि कहीं उन्हें एड्स रोग ने ग्रसित तो नहीं कर लिया है।

७ महीने बाद एक बंदर की मृत्यु हृदय की धड़कन बंद हो जाने से हो गई जो कि एड्स से ग्रस्त नहीं था। मृतक बंदर की टिशुओं की ६ सप्ताहों तक जाँच की गई। परन्तु उनमें एड्स के कोई भी लक्षण नहीं पाये गये। बाकी अन्य २ बंदरों पर भी पूरे १२ महीनों तक एड्स के कोई चिह्न नजर नहीं आये।

डॉ० 'फुल्ज' ने यह भी बतलाया है कि खून की दूषित कोशिकाएँ इसलिए प्रयोग में लायी गईं, क्योंकि मादक द्रव्यों का सेवन करने वाले प्रायः दूषित सुइयों का ही इस्तेमाल करते हैं। जिन लोगों को एड्स होता है, उनके सुई में खून का कुछ कतरा लगा रह जाता है। अधिकतर सुइयों को बिना शोधित किये इस्तेमाल कर लेते हैं।

एड्स वायरस के हमले का पहला निशाना रक्त की सफेद कोशिकाएँ होती हैं। क्योंकि यह कोशिकाएँ मुख्यतः खून की दौड़ के साथ सारे शरीर में घूमती रहती हैं।

डॉ० फुल्ज के अनुसार इस वैक्सीन के प्रयोग से एड्स के लिए दवा ईजाद की कुछ अच्छी सम्भावनाएँ नजर आ रही हैं, परन्तु अभी भी इसमें बहुत कुछ करना बाकी है।

○ इसी तरह तमाम प्रयासों के उपरान्त पेरिस के वैज्ञानिकों नें भी 'एड्स वैक्सीन' निर्मित कर ली है। पर अभी इस पर परीक्षण जारी है।

○ अमेरिकी औषधि-निर्माता 'ब्रिस्टल मेयर्स' ने एड्स के खिलाफ एक शक्तिशाली टीका ईजाद करने का दावा किया है, जिस पर परीक्षण जारी है।

नोट—एड्स रोग के विस्तृत अध्ययन के लिए लेखक की 'दीप पब्लिकेशन' हॉस्पिटल रोड, आगरा—३ से प्रकाशित 'एड्स रोग और उसकी आधुनिक चिकित्सा' नामक पुस्तक का अवलोकन करना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ एड्स विषयक सम्पूर्ण जानकारी : एक दृष्टि में ○

रोग के कारण

* HTLV III, LAV or ARV. (प्रधान कारण)
* समलैंगिक यौन-सम्बन्ध ७८% ।
* एड्स पीड़ित व्यक्ति के साथ मैथुन ।
* वेश्यागमन ।
* संक्रमित सिरिञ्ज एवं नीडिल द्वारा नशीली औषधियों का सेवन (१५%) ।
* एड्स पीड़ित व्यक्ति का रक्त दूसरे व्यक्ति को चढ़ाने से ५% ।
* एड्स पीड़ित माँ के गर्भ से ।

एड्स प्रसार एवं संक्रमण

* समलैंगिक सम्बन्ध (गुद-मैथुन)
* रक्त या वीर्य के माध्यम से ।
* I/V के लिए एक ही सुई को विसंक्रमित किये बिना प्रयोग करने से ।
* वेश्यायें रोग-प्रसार में सबसे ज्यादा उत्तरदायी ।
* रक्त एवं प्लाज्मा के आधान से ।
* संक्रमित गर्भ की माँ से नवजात शिशु में ।
* संक्रमित माँ के दुग्धपान से ।
* लालास्राव (Salivation) ।
* अश्रु द्वारा प्रसारण ।

नोट—यह व्यक्ति के साधारण मेलजोल से नहीं फैलता ।

रोग संचय काल

* ६ मास से लेकर ६ वर्ष तक । औसतन २-५ वर्ष ।
* किसी-किसी में १० वर्ष बाद भी लक्षणों की उत्पत्ति ।

पूर्वरूप

* शरीर-भार में कमी ।
* कृशता *मितली *मंद-मंद ज्वर की अनुभूति ।
* अजीर्ण की उपस्थिति ।
* उद्विग्नता ।

सामान्य लक्षण

* गुप्तावस्था में कोई लक्षण नहीं ।
* लक्षण धीरे-धीरे प्रकट ।

प्रमुख लक्षण

* शरीर के वजन में अकारण ही १०% की हानि ।
* एक माह से अधिक समय तक बने रहने वाले दस्त ।
* एक माह से अधिक अवधि तक लगातार रहने वाला ज्वर ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गौण लक्षण

* अकारण १ माह से अधिक अवधि तक रहने वाली खाँसी।
* पूरे शरीर में खुजली।
* बार-बार होने वाला हर्पीज-जोस्टर।
* मुख और ग्रसनी में फैला 'कैंडिडा' संक्रमण।
* दीर्घकालिक निरन्तर फैलने वाला हर्पीज सिम्प्लैक्स संक्रमण।
* सम्पूर्ण शरीर में सूजी हुई लिम्फ ग्रन्थियाँ।
* रात के समय अत्यधिक पसीना।
* दुर्बलता।
* पाचन-संस्थान की विकृति।
* मांसपेशियों की दुर्बलता।
* गुदामार्ग में व्रणोत्पत्ति।
* पुरुष जननेन्द्रिय पर कण्डूयुक्त सफेद दाग।
* स्त्रियों में योनि/गुदा मार्ग से श्वेत जलीय स्राव की अधिकता।

अन्य सम्मिलित लक्षण

* सुस्ती एवं नियमित सिर-दर्द।
* दिल में निरन्तर रहने वाली घबराहट।
* दिन में गर्मी एवं रात में शीत की अनुभूति।
* नासा, सिर एवं छाती में कफ।
* सतत थकान एवं बेचैनी।
* मुँह या भोजन नली में सफेद चित्तियाँ।
* स्मरणशक्ति का ह्रास।
* शिरःशूल, भ्रम एवं दृष्टि में धुंधलापन।
* संक्रमणों का बार-बार उत्पन्न होना।
* अनेक प्रकार के त्वक् विकार।
* आंशिक पक्षाघात या अंगघात।
* शारीरिक क्रियाओं पर से नियंत्रण समाप्त।

गम्भीर लक्षण

* फेफड़ों एवं ज्ञान तन्तुओं को संक्रमण द्वारा नुकसान।
* घातक त्वचा कैंसर (कार्पोसिस सार्कोमा)।
* शरीर में ऐंठन एवं लड़खड़ाती चाल।
* पैरों का नियंत्रण समाप्त।
* ज्वर तथा अतिसार का प्रभाव अधिक।
* दस्त का उपचार करने पर भी असफलता। रोगी का मृत्यु की ओर प्रस्थान।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* अनीमिया *ल्यूकोपीनिया *लिम्फोमेनिया *मादक न्यूमोनिया *गम्भीर कामला रोग एवं कैंसर से रोगों की उत्पत्ति ।

गम्भीर लक्षण

* टी-४ कोशिकाओं की संख्या बहुत कम ।
* कुछ रोगियों में 'वायरस ज्वर' अथवा 'फ्लू' जैसे लक्षण (Aids Related Complex ARC.) ।
* कुछ में पी० सी० पी० न्यूमोनिया (निमोसिस्ट्स कैरिनी निमोनिया) अर्थात् अवसरवादी संक्रमण ।

विशिष्ट संकेत—किसी भी चिकित्सा का अनुकूल लाभ न होना एवं रोग में क्रमशः वृद्धि ।

रोगी-परीक्षा में

* उम्र—वयस्क ।
* लिंग—स्त्री-पुरुष दोनों ।
* बढ़ा हुआ बुखार ।
* साधारण पोषण (Poor nutrition) ।
* भूख की कमी ।
* अल्प नाड़ी गति (टेकीकार्डिया) ।
* मुँह एवं गले में श्वेत स्तर का मिलना ।
* जननांग पर सफेद रंग के धब्बों का मिलना ।
* लसीका ग्रन्थिशोथ की उपस्थिति प्राप्त ।
* गाँठों में वृद्धि का मिलना—घूमने वाली एवं दर्दरहित ।
* संक्रमण के इधर-उधर प्रसारित होने से कॉर्पोसीज सार्कोमा का निर्माण ।
* शेष लाक्षणिक निदान से ।

अन्वेषण

* रक्त एवं शरीर के विभिन्न तरल को एकत्र कर वायरस का कल्चर करना ।
* रक्त के नमूने के परीक्षण में (Blood sample examination) गणना करने पर—

  A. लिम्फोसाइट्स—मात्रा कम $< १·५ \times १०$/लीटर ।

  B. टी हेल्पर की गणना—कम $< ०·३ + १०$/लीटर ।

  C. रिवर्सल ऑफ टी—(T 8 Ratio $< ०·९$ ।
* स्क्रीनिंग टेस्ट—एण्टीबॉडीज की उपस्थिति के लिए (वायरस के विरुद्ध) । इसके लिए 'एलीसा' टेस्ट एवं 'वेस्टर्न ब्लॉट किट टेस्ट' किया जाता है ।

  नोट—हमारे देश के बड़े-बड़े मेडिकल कालेजों में एवं हॉस्पिटल्स में 'वेस्टर्न ब्लॉट किट टेस्ट' की सुविधा प्राप्त है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सस्ती, उत्तम एवं नवीन जाँच प्रक्रिया

'डिप्सटीक'—एड्स वायरस के प्रतिपिण्ड की उपस्थिति का पता लगाने।

टेस्ट २० मिनट में। ९०% संवेदनशील।

हमारे देश में 'स्पेन कम्बाइण्ड्स विजुअल' के नाम से प्रसारित एवं वितरित।

उपचार

* अब तक कोई समाधान नहीं। अनेकानेक चिकित्सकीय परीक्षण जारी।
* चिकित्सा के लिए निम्न २ बातें मुख्य हैं—

१. सहायक देखभाल, २. अन्य जीवाणु-विषाणु परजीवी के संक्रमण से बचाव के लिए औषधि।

औषधि उपचार

* एच० पी० ए०-२३ अथवा—
* फॉस-फोनोफॉर्मेट, एण्टीमनी स्टंगस्टेट एवं सुरामिन आदि औषधियों का उपयोग एड्स के विरुद्ध किया जा रहा है।
* एल-इण्टरफेरोन (L-Interferon) का भी उपयोग।
* डाई डिआक्सीसाइटीडीन (नवीनतम औषधि)
* 'टियाज' इन्जेक्शन विशेष लाभकारी।

अन्य औषधियाँ—*ए० जेड० टी०-३ *रिकीवरिन * गबारवन *टीबो *CD4 रीसीन *M. M. I. *अल्फा इण्टरफेरोन *फॉस्फोनो फॉर्मेट *टी० आई० बी० ओ०

* इण्टरफेरान-गामा और इण्टरल्यूकिन-२।
* ट्राइमेट्रेकेट (एक कैंसर रोधी औषधि)।
* डी० डी० आई०, डी० यू० आई०, ए० एल० डी० यू०, बी० डब्लू० ए० ५०९० M. M. L. भी लाभकारी।

अन्य चिकित्सकीय विधियाँ

* अस्थिमज्जा प्रत्यारोपण।

एवं—

* प्लाज्माफेरेसिस।

नोट—अभी सभी औषधियों पर शोध जारी है।

बचाव

* गुद-मैथुन, वेश्यागमन, नशीली दवाओं के सेवन का पूर्णतया परित्याग।
* अपरिचित व्यक्ति के साथ शारीरिक सम्बन्ध का पूर्ण परित्याग। वेश्या या कालगर्ल्स से सम्भोग न करें।
* ड्रग एडिक्सन से बचें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बचाव

* निरोध का उपयोग ।
* एड्स पीड़ित रोगी का रक्त दूसरे को न दें ।
* जिन व्यक्तियों पर एड्स से संक्रमित होने का संदेह हो, उनसे यौन सम्बन्ध न रखें ।
  जो व्यक्ति I/V द्वारा नशे की औषधि लेने के आदी हैं उन्हें दूसरे की टीके की सुइयाँ प्रयोग न करें ।
* रक्त अथवा अन्य उत्पाद चढ़ाने से पूर्व उस रक्त अथवा द्रव में एड्स विषाणु की उपस्थिति की जाँच ।
* रक्त के हर नमूने की जाँच आवश्यक ।
* विदेशी यात्रियों तथा अन्य देशों से आने वाले भारतीयों के रक्त की जाँच ।
* किसी भी व्यक्ति का रक्त लेते समय उसमें एड्स वायरसों की उपस्थिति की जाँच । उपस्थिति मिलने पर रक्त न लेना । एच० वी० आई० का संदेह होने पर जाँच करवाना अनिवार्य कर दिया जाय ।
* इञ्जेक्शन की सुई को प्रयोग से पूर्व प्रत्येक बार अच्छी तरह विसंक्रमित करना ।
* स्वयं को पश्चिमी देशों की उन्मुक्तता तथा समलैंगिकता से बचायें ।
* रोग के प्रति जागरूकता बढ़ाने हेतु अभियान ।

बचाव हेतु वेक्सीन निर्माण

* वैक्सीन निर्माण के प्रति प्रयत्न जारी ।
* 'अलबामा विश्वविद्यालय' एवं 'पेरिस के वैज्ञानिकों' तथा अमेरिकी औषधि निर्माता 'ब्रिस्टल मेयर्स' द्वारा एक एड्स प्रायोगिक वैक्सीन का निर्माण । परीक्षण जारी ।

○ सब कुछ मिलाकर एड्स अभी बेकाबू; बचाव ही एकमात्र उपाय । तमाम वैज्ञानिकों द्वारा निरन्तर परीक्षण एवं शोध जारी । एड्स मानवता के लिए एक भारी खतरा ।

□

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अष्टम खण्ड

*

कतिपय सामयिक रोग
और
उनकी प्रभावी चिकित्सा

 CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संक्रामक पीलिया
(Infectious Hepatitis)

पर्याय—वायरल जन्य यकृत् शोथ, इन्फेक्टिव हेपेटाइटिस, संक्रामक कामला, इपीडेमिक जॉण्डिस, तीव्र संक्रमण जन्य यकृत् शोथ, वर्षा ऋतु बीमारी, पीलिया रोग।

परिचय—यह एक विषाणु (A अथवा I H) द्वारा उत्पन्न होने वाला रोग है, जो मल-संदूषण के द्वारा फैलता है। इसका प्रसार भारत के अनेक नगरों में होता है। इसे 'संक्रामक पीलिया' या केवल 'पीलिया' भी कहते हैं। वास्तविक पीलिया (Jaundice) जिसे 'पाण्डु' या कामला कहते हैं, इससे बिलकुल भिन्न रोग है और इसमें सूक्ष्म जीवों की कोई भूमिका नहीं होती है।

याद रखिये—○ वैसे तो पीलिया कई प्रकार का होता है और उसके कारण भी भिन्न-भिन्न होते हैं, जैसे—पित्त-नलिका में फँसी पथरी से पीलिया, लिवर कैंसर से पीलिया, पैंक्रियाज़ के कैंसर से पीलिया, लाल रक्तकणों के जल्दी-जल्दी नष्ट होने से पीलिया और कुछ दवाओं के कुप्रभावों से पीलिया। लेकिन इसका सबसे मुख्य कारण वायरस विषाणु द्वारा होने वाली लिवर की सूजन (हिपेटाइटिस) है।

○ संक्रामक पीलिया बहुत अधिक प्रचलित रोग है। जनरल प्रैक्टिस में इसके अनेक रोगी देखने को मिलते हैं। क्योंकि यह एक वायरल जन्य रोग है तथा एक से दूसरे बहुत से लोगों को हो सकता है।

○ यह रोग छोटे बच्चों तथा युवाओं में अधिक देखा जा सकता है।

○ जब रोगी की आँखें, त्वचा और मूत्र का रंग पीला हो जाता है तो इसकी पहिचान में कठिनाई नहीं होती है। परामर्श के लिए आने वाले अधिकांश रोगी कुछ अन्य लक्षणों की भी प्रारम्भ में शिकायत करते हैं, जिससे वायरल हेपेटाइटिस को बहुत प्रारम्भिक स्टेज पर ही पहिचाना जा सकता है, जिससे उपचार में बहुत सफलता मिलने के साथ-साथ जटिलताओं से भी बचा जा सकता है।

गर्मी आने के साथ ही कानपुर में पीलिया का मौसम भी आने की तैयारी करने लगता है। पिछली बार इस रोग ने यहाँ पर कई जानें ले लीं थीं। आगरा शहर भी वायरल हेपेटाइटिस (संक्रामक पीलिया) से आंशिक रूप से प्रभावित हो चुका है।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग का प्रसार—गर्मियों का मौसम प्रारम्भ होते ही कुछ रोगों के कीटाणु अधिक सक्रिय हो जाते हैं। इनसे कई प्रकार की बीमारियाँ होने का भय रहता है, जैसे—पीलिया, टायफाइड, पेचिश एवं पेट से सम्बन्धित अन्य रोग।

○ **इस रोग में रोगी का जिगर प्रभावित हो जाता है।**

○ रोग के कीटाणु दूषित भोजन, गन्दे पानी, बाजार में बिकने वाली चाट तथा कटे हुए फलों एवं गन्ने (Sugarcane) के रस द्वारा शरीर में पहुँचकर हानि पहुँचाते हैं। बाजार में बिकने वाली बर्फ से भी यह रोग प्रसारित होता है।

○ पाठशाला, स्कूल, कालेज, छात्रावास, शिविर, सैनिकवास प्रभृति स्थानों में यह अधिक होता है।

○ दूषित खाद्य-पेय पदार्थों से संक्रामक रूप में फैलने का स्वभाव इसमें अधिक होता है। अतः जहाँ पर बालक, युवा तथा पुरुष संख्या में अधिक इकट्ठे होते हैं, वहाँ पर यह जनपदोध्वंस के रूप में प्रकट होता है।

○ युद्ध-स्थल पर यह रोग महामारी के रूप में फैलता है।

रोग के प्रमुख कारण—

○ यह एक विषाणु (A अथवा I H) द्वारा उत्पन्न होता है, जो मल-संदूषण के द्वारा फैलता है।

○ यदि दूषित रुधिर का आधान (Blood transfusion) किया जाता है तो भी संक्रमण फैल सकता है। यकृत् शोथ से पीड़ित व्यक्तियों के निकट सम्पर्क से भी रोग फैल सकता है।

○ जानपदिक अवस्थाओं (Epidemic) में पानी, दूध आदि से भी रोग का प्रसार होता है।

○ रोग का वायरस रोगी के पाखाने में निकलता है।

○ मुख्यतः पीलिया लिवर की सूजन से होती है; जिसे 'हिपेटाइटिस' कहते हैं।

○ हिपेटाइटिस एक संक्रामक रोग है।

○ लिवर में सूजन वायरस विषाणु से होती है।

रोग के प्रमुख लक्षण—

○ सम्प्राप्ति काल १५-५० दिन।

○ शीत लगकर ज्वर
○ सिर-दर्द एवं व्याकुलता
○ कामला

} यह तीनों लक्षण रोगी में प्रारम्भ से ही उपस्थित मिलते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ कुछ दिनों से लेकर २ सप्ताह तक के समय में कामला में वृद्धि होती है।

○ अरुचि (Anorexia)।

○ हृल्लास (Nausea) एवं वमन (Vomiting)।

○ अतिसार (Diarrhoea)।

○ जैसे-जैसे यकृत् बढ़ता जाता है, वैसे ही उसके ऊपर के भाग में पीड़ा (किसी-किसी में तीव्र पीड़ा) होती है।

○ **रोग-प्रारम्भ की सूचना**—मूत्र में पित्त की उपस्थिति एवं आँखों के हलके पीलेपन से प्राप्त होती है।

○ पित्तवाहिनी का अवरोध जैसे-जैसे बढ़ता जाता है, पीलिया गहरा होता जाता है। पुरीष अधिक मटमैला एवं मूत्र अधिक काला होने लगता हैं। इस अवस्था में यकृत् अधिक स्पर्शलभ्य (Palpable) हो जाता है।

○ कुछ समय के उपरान्त रोगी में सुधार होने लगता है। भूख लगने लगती है, मूत्र का रंग बदलने लगता है, पीलिया कम होने लगता है और यकृत् अपने स्वाभाविक आकार में आ जाता है।

○ ३-७ सप्ताह में अधिकांश रोगी धीरे-धीरे रोग-मुक्त हो जाते हैं।

कुछ रोगियों में लक्षण इतने मृदु होते हैं कि पीलिया प्रायः अनुपस्थित रहता है।

रोग की अवस्थाएँ—इस रोग का समूचा चित्र ३ चरणों में बाँटा जा सकता है। प्रत्येक चरण लगभग १ सप्ताह तक रहता है।

(१) प्रथम अवस्था : पूर्व पीलिया अवस्था (Pre-ecteric phase)—

* जब रोग प्रारम्भ होता है, तब उसे भोजन के प्रति अरुचि हो जाती है। यहाँ तक कि वह भोजन देखना पसन्द नहीं करता।

* जी मिचलाना।

* बुखार बढ़ना, कँपकँपी आना।

* सिर-दर्द, कमर-दर्द, हाथ-पैरों में दर्द।

* जोड़ों में दर्द शुरू हो जाना।

* अत्यधिक कमजोरी और थकावट।

* गला खराब होना, खाँसी तथा नाक बहना।

* पेट के ऊपरी भाग में दर्द मामूल होना।

* लगातार उल्टियाँ होना।

* एक सप्ताह तक पीलया के लक्षण स्पष्ट नहीं होते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* इस सप्ताह में शरीर का वजन २½ किलो तक कम हो जाता है।

(२) दूसरी अवस्था (Jaundice stage)—

* पीलिया इतना स्पष्ट हो जाता है कि रोगी के अतिरिक्त दूसरे लोग भी देख सकते हैं। पीलिया स्पष्ट होते ही ज्वर स्वतः कम हो जाता है।

* भोजन के प्रति इच्छा जागृत हो जाती है।

* पाखाना का रंग सफेद एवं बहुत गहरे रंग का होने लगता है।

* किसी-किसी के शरीर में खुजली होना।

* शरीर का वजन घटते जाना।

(३) तीसरी अवस्था (Normal stage)—

* रोगी का दैनिक जीवन सामान्य हो जाता है।

* सभी कुछ खाने की इच्छा।

* खोया हुआ भार पुनः वापिस।

* पीलिया के समस्त लक्षण समाप्त होकर अधिकांश रोगी स्वस्थ हो जाते हैं।

○ **केवल ५-१०% रोगी** यकृत् के कारण अचेत होकर मृत्यु के मुँह में पहुँच सकते हैं, विशेषकर गर्भवती महिलाएँ।

याद रखिये ○ लगभग ९९% रोगियों का इतिहास उपरोक्त प्रकार का होता है। शेष १ % में मृत्यु सम्भव है। मृत्यु उस अवस्था में सम्भव है जब किसी तरह का उपचार न किया जाय।

○ दूसरे सप्ताह में जैसे-जैसे पीलिया समाप्त होता जाता है, रोगी का ज्वर कम होता जाता है। रोगी अथवा उसके सम्बन्धियों को उसकी आँखें पीली देखकर पीलिया का संकेत मिलता है।

○ तीसरे सप्ताह में लगभग शरीर का पीलापन समाप्त हो जाता है।

रोग की पहिचान—

○ शरीर में पीलापन जो आँखों में स्पष्ट दिखलायी देता है।

○ यकृत् को दबाने पर पीड़ा, ज्वर, लिवर में असुविधा, यकृत् का बढ़ा हुआ आकार आदि चिह्न देखकर रोग का निदान हो जाता है।

○ **यदि रोगी समर्थ है और टेस्ट की सुविधा उपलब्ध है तो**—प्रथम सप्ताह में रोगी की रक्त-परीक्षा जिसमें S.G.O.T, एवं S.G.P.T. दो प्रकार की प्रोटीन का पता लगा लेना चाहिए।

○ मूत्र-परीक्षा में बिलीरुबिन की उपस्थिति का पता लगाया जा सकता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोगी के परिणाम—

○ कुछ रोगी बहुत शीघ्र अपने को पूर्ण स्वस्थ अनुभव करने लगते हैं; जब कि कुछ में २-३ महीने का समय लग जाता है।

○ स्वास्थ्य-सुधार होते समय अपथ्य के सेवन से रोग का आक्रमण पुनः हो सकता है।

○ कुछ रोगियों में सुधार नहीं होता है और यकृत् धीरे-धीरे क्षतिग्रस्त होता रहता है।

○ कभी-कभी रोगी में पुनरावर्तन होते रहते हैं।

याद रखिये—यदि युवावस्था में कामला हो और इससे पूर्व पाचन-सम्बन्धी विकार पाये जायें, साथ में पीले रंग का मूत्र तथा मटमैला पुरीष आ रहा हो तो यह संक्रामक पीलिया के सूचक चिह्न हैं।

चिकित्सा-विधि—

○ वायरल जन्य रोग होने से इसकी कोई विशिष्ट चिकित्सा नहीं है।

○ रासायनिक पदार्थ (Chemo-therapeutic) एवं एण्टीबायोटिक भी प्रभावशाली नहीं होते।

○ औषधि-चिकित्सा की अपेक्षा भोजन-व्यवस्था ही उपयोगी है।

○ रोगी को परिवार के अन्य सदस्यों से उस समय तक दूर रखें, जब तक पीलिया के लक्षण स्पष्ट न हो जायें।

○ पूर्ण विश्राम, जब तक पीलियापन बिलकुल समाप्त न हो जाय।

○ बचाव हेतु परिवार के अन्य सदस्यों को टीका लगवायें।

सहायक चिकित्सा एवं पथ्य-व्यवस्था—

○ रोग के प्रारम्भ से तथा बाद तक भी कई सप्ताह तक भोजन में कैलोरीज की मात्रा ३ हजार तक होनी चाहिए।

○ फल का रस, ग्लूकोज आदि से कार्बोहाइड्रेट्स की कमी पूरी की जाती है।

○ भोजन में प्रोटीन की मात्रा भी पर्याप्त होनी चाहिए।

○ इसमें मूली का उपयोग लाभकारी है।

○ गरिष्ठ भोजन जैसे—पूड़ी, पराठा, कचौड़ी आदि नहीं देना चाहिए।

○ मदिरा का सेवन कम से कम १ वर्ष तक नहीं करना चाहिए।

○ भोजन में चिकनाई का पूर्ण परहेज रखें।

सावधान—१% भाग्यहीन रोगियों में यह रोग गम्भीर रूप ले लेता है और उनकी मृत्यु हो जाती है। यदि रोगी में कम्पन जैसे दौरे पड़ने लगें,

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोगी दिन में सोये और रात में जागे, अंट-शंट बकने लगे या स्मृतिनाश हो जाय, रोगी अत्यन्त उत्तेजित हो उठे, रोगी के हाथ-पैरों में अवांछनीय गति होने लगे, रोगी अर्धमूर्च्छित या बेहोश होने लगे, रोगी विस्तर से उठ-उठ कर भागने लगे या जोर-जोर से चिल्लाने लगे, खून की उल्टी, कोलतार जैसी चिकनी टट्टी, मूत्र में खून आना, तिल्ली का आकार बढ़ जाना, मूत्र की मात्रा कम, पैरों में सूजन तथा पीलिया का ६ मास से भी अधिक रहना—ऐसे रोगी को चिकित्सक से अविलम्ब परामर्श लेना चाहिए। अथवा रोगी को तत्काल अस्पताल भेज देना चाहिए। साधन-सम्पन्न अस्पताल में ही उचित चिकित्सा से रोगी के बचने की कुछ आशा की जा सकती है।

संक्रामक पीलिया की औषधि-चिकित्सा—

○ शय्या पर पूर्ण विश्राम।

○ प्रेडनीसोलोन ४०-६० मि० ग्रा० प्रतिदिन/१ मास तक। तत्पश्चात् धीरे-धीरे कम करते जायें।

○ ग्लूकोज २५% आई० वी० (I/V) वमन के समय।

○ विटामिन 'बी' तथा 'सी'।

यदि गम्भीर स्वरूप की मितली तथा वमन की स्थिति हो तो—

○ इञ्जे० ५% ग्लूकोज २००० मिली०+
इञ्जे० बीजेक्टिल (Inj. Bejectel) २ मिली०+
इञ्जे० रिडोक्सोन (Inj. Redoxon) ५०० मि० ग्रा०+
इञ्जे० केपेलिन (Inj Kapilin) १० मि० ग्रा०

○ कै० बीकोसूल्स (Cap. Becosules) १ कै० नित्य।

यदि खुजली हो (If Pruritus)—लैक्टो-कैलामिन लोशन लगायें।

○ लिवर इक्स्ट्रेक्ट विद बी-कॉम्पलेक्स

मात्रा—२ मि० ली० मांसपेशीगत।

अथवा—निओमेथीडीन १० मि० ली० इण्ट्रावीनस

सिरप मिथिओनिन विद कोलीन फोर्ट

(Syrup Methionine with coline fort)

मात्रा—२-२ चम्मच, दिन में ३ बार।

यदि साथ में जलोदर भी हो तो—

इञ्जे० मर्सेलिल (Inj. Mersalye)

मात्रा—१-२ मि० ली० मांसपेशीगत।

कष्टदायक खुजली के लिए—कैल्शियम इञ्जे० अथवा—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्गोटामीन टार्ट्रेट—१ मि० ग्रा० दिन में ३ बार।
स्थानीय चिकित्सा में—एल्कलाइन लोशन।
रक्तस्राव की स्थिति में—विटामिन 'के' + ब्लड-ट्रान्सफ्यूजन।

सावधान—संक्रामक पीलिया के रोग में जनरल प्रैक्टिस के अन्तर्गत आये रोगियों को चिकित्सकों द्वारा बहुत-सी औषधियाँ दी जाती हैं, पर उनसे कोई विशेष लाभ नहीं होता; बल्कि कुछ औषधियों का तो दुष्प्रभाव ही होता है।

○ इस रोग में निद्रा लाने वाली औषधियाँ देना तो रोगी के जीवन से खेलने के समान है। अतः यदि आवश्यकता अनुभव की जा रही हो तो इन्जे० 'स्टेमेटिल' अथवा 'सिक्विल' की बहुत कम मात्रा मितली होने पर दी जा सकती है।

पीलिया में क्या न करें—

○ जहाँ तक सम्भव हो बुखार उतारने वाली औषधियाँ (पैरासिटामोल, मेटासिन, क्रोसिन, केलपोल, एस्प्रिन, डिस्प्रिन) न लें।

○ वायरल हिपेटाइटिस के रोगी टेरामाइसीन एवं टेट्रासाइक्लीन औषधियाँ न लें।

○ डेकाड्रान, बेटनीसोल, वाइसोलोन जैसी स्टेरॉयड औषधियों का प्रयोग चिकित्सक की सलाह के बिना न करें।

○ गन्ने तथा अन्य दूषित फलों के रस से बचें।

○ शराब अथवा शराब मिले टानिकों का इस्तेमाल न करें।

○ कमजोरी होने पर भी ऐसे रोगी डूराबोलिन जैसे—एनाबोलिक हार्मोन का सेवन चिकित्सक की सलाह बिना न करें।

○ मॉर्फीन एवं लार्जेक्टिल दवाओं से यथासम्भव बचें।

○ डायबिटीज के रोगी को यदि वायरल हिपेटाइटिस हो जाये तो वे डायोनिल, यूग्लूकोन, डायामाइक्रोन, डायबिनीस, रेस्टिनोन दवाओं के स्थान पर रोग ठीक होने तक कुछ समय के लिए डॉक्टर की सलाह से इंसुलिन का सावधानीपूर्वक प्रयोग कर सकते हैं।

○ कच्चे दूध का सेवन न करें।

पीलिया से कैसे बचा जा सकता है—

○ खाने-पीने में स्वच्छता का विशेष ध्यान रखें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ यदि रोग के व्यापक रूप से फैलने की सम्भावना हो अथवा यदि रोग व्यापक रूप से फैल चुका हो तो पानी उबालकर तथा छान कर पीना ही अधिक उत्तम रहेगा।

○ कच्चा दूध न पिये।

○ जहाँ तक सम्भव हो घर का ही ताजा, हलका एवं सुपाच्य भोजन करें।

○ अन्य पेय पदार्थ (गन्ने और मौसम्मी का रस, ठंडाई, लस्सी, मठा, शरबत) स्वच्छता से बने और रखे हों तभी ग्रहण करें।

○ खाने-पीने की वस्तुएँ धूल और मक्खियों से बचा कर रखें।

○ तरकारियों और सब्जियों को भली-भाँति धोकर ही प्रयोग करें।

○ बाजार में बिना ढँके, कटे, सड़े, गले फल न खायें।

○ भोजन ग्रहण करने से पहले या परोसने से पहले हाथ भली-भाँति धोयें।

○ किसी लेबोरेटरी टेस्ट के लिए रक्त का नमूना लेने वाली पिचकारी तथा नीडिल का पूर्णतः विसंक्रमित होना अत्यन्त आवश्यक है। अपने लिए अलग डिस्पोसेबिल सिरिञ्ज तथा नीडिल का प्रयोग करना अधिक उत्तम रहेगा।

○ अनावश्यक रूप से अपने आप बिना डॉक्टर की राय के रक्त की जाँच कराने से जहाँ तक सम्भव हो बचें।

○ खून की कमी होने पर यदि खून चढ़ाना आवश्यक हो तो स्वस्थ व्यक्ति का ही खून चढ़ायें।

○ हिपेटाइटिस से बचने के लिए टीका लगवाने के सम्बन्ध में चिकित्सा-विशेषज्ञ से परामर्श लें।

○ रोगी को झाँड़-फूक से कोई लाभ नहीं। शरीर की स्वच्छता आवश्यक है। □

8/2

कतिपय सामयिक रोग

क्यों हो जाती है शरीर पर सूजन ?

परिचय—शरीर पर सूजन आ जाना एक आमतौर पर दिखने वाला लक्षण है। सूजन पूरे शरीर पर आ सकती है अथवा शरीर के किसी एक भाग पर।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर पर सूजन अनावश्यक रूप से द्रव के एकत्रित हो जाने से हो सकती है अथवा त्वचा के नीचे अनावश्यक रूप से ऊतक (टिश्यू) की बढ़त से। पहली स्थिति में सूजन वाले भाग को दबा कर देखने पर वहाँ गड्ढा-सा बन जाता है, जब कि दूसरी स्थिति में सूजन ठोंस होती है।

वास्तव में सूजन अपने-आप में कोई एक रोग न होकर बहुत से रोगों का एक लक्षणमात्र है और इसीलिए डॉक्टर इन रोगियों से मूल कारण को मालूम करने के लिए कुछ अन्य मौजूद लक्षणों की भी जानकारी करते है; उदाहरणार्थ—मूत्र की मात्रा कम तो नहीं है ? ○ क्या साँस फूलती है ?

कहीं से खून तो नहीं बह रहा, भोजन से प्रोटीन युक्त पदार्थों का समुचित समावेश है अथवा नहीं। रोगी शराब तो नहीं पीता, उसे भूख कम तो नहीं लगती, टट्टी में कीड़े तो नहीं आते, कब्ज तो नहीं रहती है। रोगी डेकाड्रान, बेटनीसोल, बाइसोलोन, डेक्सोना, डेल्टाकॉर्टिल जैसी स्टीरॉयड दवाओं का सेवन कर रहा है क्या ? इसके लिए अन्य शारीरिक परीक्षण कराये जाते हैं।

शरीर पर सूजन आने के मुख्य कारण और उनकी पहिचान इस प्रकार है—

रक्त और प्रोटीन की कमी से सूजन

○ गरीबी और अज्ञानता के कारण भोजन में प्रोटीन पदार्थों का समुचित समावेश न होना, शरीर में आँतों से चिपके 'हुक वर्म्स' कीड़े द्वारा रक्त चूसते रहने से, पेप्टिक अलसर या कैंसर से लगातार धीरे-धीरे रक्त रिसते रहने से, बवासीर के मस्सों से रक्त बहने से, गुर्दों के कई रोगों में मूत्र में प्रोटीन निकलते रहने से तथा लिवर के पुराने रोग सिन्होसिस में प्रोटीन पर्याप्त मात्रा में न बनने से शरीर में रक्त एवं प्रोटीन की कमी हो जाती है, जिससे शरीर पर सूजन आ जाती है।

लिवर रोगों से सूजन हो जाना

वायरल हिपेटाइटिस (पीलिया, जॉण्डिस) का यदि त्वरित एवं समुचित उपचार न लिया जाय तो यह क्रॉनिक स्टेज में पहुँच कर लिवर कोशिकाओं को नष्ट करता रहता है, जिससे खतरनाक पुराना रोग 'सिन्होसिस' हो जाता है, जो लगातार बहुत वर्षों तक अधिक मात्रा में शराब पीने से भी हो सकता है। एक खास प्रकार की सिन्होसिस हमारे देश के छोटे बच्चों में देखने को मिलती है, जो शायद पीतल के बर्तन में उबला दूध पिलाने से हो जाती है।

लक्षण जो देखने को मिलते हैं—सिन्होसिस का रोग जब अधिक बढ़ जाता है तो पेट की झिल्ली में द्रव एकत्रित हो जाने से रोगी का पेट फूला नजर आता है, पेट पर शिराएँ उभरी दिखलायी देती हैं, तिल्ली का आकार

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बढ़ जाता है, खून की उल्टी हो सकती है और अन्दर खून बनने के कारण टट्टी कोलतार जैसी चिकनी एवं काली आती है।

सिन्होसिस से ग्रसित लिवर शरीर के लिए आवश्यक प्रोटीन (एल्ब्युमिन) पर्याप्त मात्रा में नहीं बना पाता, जिससे पैरों पर सूजन आ जाती है।

उपचार—ऐसे रोगी को भोजन में नमक कम और कार्बोहाइड्रेट्स (गेहू, चावल, ग्लूकोज, चीनी) प्रचुर मात्रा में दें। साथ ही प्रोटीन पदार्थ (दाल, अण्डे की सफेदी, दूध) भी पर्याप्त मात्रा में दें।

सावधान—बेहोशी का प्रथम लक्षण प्रकट होते ही प्रोटीन पदार्थ रोक दें। ऐसे रोगी शराब व शराब मिले टॉनिक, अफीम, लार्गेक्टिल आदि औषधियाँ का कदापि सेवन न करें।

गुर्दों के रोगों से सूजन

गुर्दे शरीर के विषैले पदार्थों को मूत्र के जरिये बाहर निकालने के साथ-साथ रक्तचाप तथा शरीर में पानी, सोडियम, पोटैशियम, अम्लता तथा क्षार का भी नियमन करते हैं। गुर्दों पर विपरीत प्रभाव डालने वाले एक खास प्रकार के जीवाणु, स्ट्रेप्टोकॉकस से जब बच्चों का गला खराब हो जाये अथवा त्वचा का संक्रमण हो जाये तो उचित उपचार के अभाव में यह जीवाणु एक विषैला प्रभाव छोड़ते हैं, जो रक्त द्वारा गुर्दों में पहुँच कर उनमें सूजन उत्पन्न कर देते हैं। इसको एक्यूट ग्लोमेरूलो-नेफ्राइटिस कहते हैं और इसमें पूरे शरीर पर मुख्य रूप से आँखों के नीचे सूजन आ जाती है और पूरा शरीर फूला नजर आता है। मूत्र में प्रोटीन आने लगती है और मूत्र की मात्रा बहुत कम हो जाती है, लेकिन ब्लडप्रेशर तथा ब्लड यूरिया बढ़ जाता है।

चिकित्सकीय परामर्श—ऐसे रोगी को आराम करायें। भोजन में चावल, ग्लुकोज, चीनी तथा मक्खन दें, लेकिन प्रोटीन (दाल, अण्डा) तथा नमक बहुत कम मात्रा में दें। प्रभावी औषधियाँ जैसे टेट्रासाइक्लीन आदि चिकित्सक के परामर्श के अनुसार लें।

नेफ्रोपैथी डायबिटीज के कारण अथवा किसी अन्य कारण से है तो पूरे शरीर में सूजन आ जाती है, क्योंकि मूत्र में प्रोटीन निकलने के कारण रक्त में इसकी मात्रा बहुत कम हो जाती है।

चिकित्सा—इस जटिलता से बचने के लिए डायबिटीज के रोगियों को डायबिटीज पर समुचित कण्ट्रोल रखना आवश्यक है। डायबिटीज में नेफ्रोपैथी यदि हो जाये तो इन्सुलिन लेना आवश्यक हो जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हृदय फेल होने से सूजन

हृदय फेल्योर के रोगी में सूजन मुख्यतः पैरों पर दिखलायी देती है। जो लोग कुर्सी पर बैठकर अपना कार्य करते हैं, वे प्रायः शाम के समय पैरों पर सूजन आने की शिकायत करते हैं। जो रोगी बिस्तर पर लेटे रहते हैं, उनके पीछे कमर से निचले हिस्से में सूजन देखी जा सकती है। जब रोग अधिक बढ़ जाता है तो पेट की पेरिटोनियम झिल्ली में द्रव एकत्र हो जाने से पेट भी फूला नजर आता है और लिवर तथा तिल्ली का आकार भी बढ़ जाता है। फेफड़े की प्लूरा झिल्ली के बीच भी द्रव एकत्र हो सकता है।

हृदय फेल्योर के कुछ रोगियों में रक्त नलिकाओं से द्रव निकलकर अचानक फेफड़ों में भरने लगता है, जिससे उसको साँस लेने में अत्यन्त कठिनाई होती है। यह स्थिति बहुत खतरनाक होती है, जिसके उपचार के लिए तत्काल ऑक्सीजन तथा त्वरित असर करने वाली मूत्रल औषधि फ्रूसेमाइड देनी पड़ती है।

हृदय फेल्योर के रोगी को नमक कम मात्रा में दें एवं सिगरेट, बीड़ी, शराब का सेवन वर्जित करें।

हृदय फेल्योर के मूल कारण जैसे—बच्चों में रीयूमेटिक हृदय रोग (जोड़ों के दर्द तथा बुखार से सम्बन्धित) बड़ी उम्र पर कोरोनरी हृदय रोग (हार्ट अटैक) या किसी भी उम्र में हाई ब्लड-प्रेशर से होने वाला हृदय रोग आदि।

फेफड़े के रोगों से शरीर पर सूजन

यह देखा गया है कि लगातार बहुत दिनों तक सिगरेट, बीड़ी, हुक्का, चिलम पीने से या बहुत समय तक धूल भरे वातावरण में कार्य करने से प्रौढ़ावस्था में ब्रोन्काइटिस की बीमारी अथवा उपचार के अभाव में दमा के रोगियों में हृदय के दाहिने कक्ष पर विपरीत प्रभाव पड़ने से वह कक्ष फेल होने लगता है जिससे पैरों पर एवं सम्पूर्ण शरीर पर सूजन आ जाती है। दोनों फेफड़ों में टी० बी० के व्यापक प्रकोप से भी यह स्थिति उत्पन्न हो जाती है। टी० बी० के रोगी में कभी-कभी गुर्दों से प्रोटीन रिसने लगती है, जिससे रक्त में कमी हो जाने से पूरा शरीर फूल सकता है। इसलिए धूम्रपान से बचें और यदि यह व्यसन है तो शीघ्रातिशीघ्र त्याग दें तथा टी० बी० और दमे का उपचार विधिवत् करें। सिगरेट-बीड़ी से जब फेफड़ों में कैंसर बन जाता है तो वह नजदीक के लिम्फ ग्लैण्ड्स में फैल जाता है, जिससे इनका बढ़ा हुआ आकार समीप की शिराओं को दबाता है, जिसके कारण गर्दन और चेहरे पर सूजन आ जाती है और आँखें सामने की ओर उभरी-सी लगती हैं। धूम्रपान रोकने से फेफड़े के कैंसर से होने वाली मृत्युदर को बहुत कम किया जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फाइलेरिया से सूजन

इस रोग में सूजन प्रायः एक पैर या हाथ में होती है, जो मच्छरों के काटने से फैलने वाले परजीवी कीड़े से उत्पन्न होती है। इस प्रकार की सूजन को अँगुली से दबाने पर गड्ढा नहीं पड़ता है, यह इसकी विशेषता है। लेकिन प्रारम्भिक अवस्था में गड्ढा पड़ सकता है। जब कीड़े लिम्फ नलिकाओं को अवरुद्ध कर देते हैं, तो हाथ-पैरों पर सूजन तथा हाइड्रोसील जैसे लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। लिम्फ नलिकाओं के फट जाने पर पेट की पेरिटोनियम झिल्ली में दूध जैसा सफेद द्रव एकत्रित हो जाने से कुछ रोगियों का पेट भी फूल जाता है।

दूरगामी प्रभाव—प्रारम्भिक अवस्था में समुचित उपचार न लेने पर फाइलेरिया के बार-बार आक्रमण होने से पैर बहुत अधिक फूल सकता है, जिसे फीलपाँव (Elephentiasis) की संज्ञा दी जाती है।

बचाव—फाइलेरिया से बचाव के लिए मच्छरों से बचने के भी सभी उपाय आवश्यक हैं।

थायरॉयड हॉर्मोन की कमी से सूजन

थायरॉयड हॉर्मोन की कमी से होने वाले रोग को हाइपोथायराइडिस्म (मिक्सीडिमा) कहते हैं, जिसमें रोगी पूरे शरीर पर सूजन आने की शिकायत करता है, लेकिन वहाँ पर अँगुली से दबाने पर गड्ढा नहीं पड़ता। अनेक व्यक्ति अज्ञानता के कारण इसे गुर्दे का रोग समझ कर बार-बार मूत्र की जाँच, ब्लड-यूरिया तथा क्रियेटिनीन कराते रहते हैं और कभी-कभी तो फ्रूसेमाइड (लेसिक्स) जैसी मूत्रल दवाएँ भी लेते रहते हैं, लेकिन इनसे कोई लाभ नहीं मिलता।

रोग लक्षण—इस प्रकार हैं—

* ठंड बिलकुल सहन न होना।
* मलावरोध (Constipation)।
* नाड़ी का मंद चलना।
* आवाज भारी तथा फटी-फटी सी।
* सुस्ती।
* खून की कमी।
* हाथ-पैर की मांसपेशियों में दर्द।
* दुर्बलता (Weakness)।
* त्वचा का सूखा होना।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* बालों का झड़ना एवं रूखा होना।
* मासिकधर्म में गड़बड़ी।

मासिकधर्म के समय सूजन

कुछ महिलाओं में देखा गया है कि उन्हें मासिकधर्म से आने पूर्व शरीर पर सूजन आ जाती है और मासिकधर्म समाप्त होने पर सूजन भी समाप्त हो जाती है।

कारण—रक्त नलिकाओं पर हॉर्मोन का प्रभाव माना जाता है।

उपचार—* महिला को पूर्ण विश्राम।

* मानसिक तनाव से बचें।

* फ्रूसेमाइड या लेसिक्स १ गोली दिन में एक बार २ दिन तक।

गर्भवती महिला में सूजन

इस प्रकार की सूजन अधिकांश गर्भवती महिलाओं में गर्भ के अन्तिम मास में देखने को मिलती है। यह सूजन पैरों के निचले हिस्से में होती है।

कारण—* पैरों में मामूली सूजन बिना किसी खास कारण के।

* कुछ में एक खास प्रकार की खतरनाक जटिलता (टॉक्सीमिया आफ प्रेग्नेन्सी)।

लक्षण—* सूजन के साथ-साथ ब्लड-प्रेशर भी बढ़ जाता है।

* मूत्र में एल्ब्युमिन आने लगती है।

* झटके आने लगते हैं और महिला बेहोश हो सकती है।

याद रखिये—○ इसलिए समय-समय पर गर्भवती महिला का ब्लड-प्रेशर नापना तथा यूरिन की जाँच (एल्ब्युमिन के लिए) आवश्यक है।

○ प्रोटीन, खून की कमी, लिवर, गुर्दे, हृदय, फेफड़े आदि रोगों के कारण भी हो सकती है।

विटामिन 'बी'$_1$ की कमी से सूजन

यह एक महत्त्वपूर्ण विटामिन है। इसकी कमी से 'बेरी-बेरी' तथा हृदय रोग हो सकता है, जिसमें पैरों पर सूजन के अतिरिक्त साँस फूलना, हृदय की धड़कन तथा पैरों की माँसपेशियों में दर्द रहता है।

चिकित्सा—इसके उपचार के लिए विटामिन 'बी'$_1$ (थायमीन, एन्यूरीन) सूचीवेध द्वारा देते हैं। इसे हमेशा जाँच करके ही दिया जाता है, क्योंकि कभी-कभी यह माफिक नहीं आती है।

भोजन में—गेहूँ, चना, फलियाँ, अण्डा आदि का प्रयोग करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

औषधियों से सूजन

जब दमे के रोगी, रीयूमेटॉयड आर्थ्राइटिस के रोगी, अल्सरेटिव कोलाइटिस के रोगी या मस्तिष्क की झिल्ली की टी० बी० के रोगी—ये बहुत दिनों तक अधिक मात्रा में चिकित्सक की देख-रेख के बिना स्टेरॉयड दवाएँ (जैसे—डेक्सामेथासोन, बीटामेथासोन, प्रेडनीसोलोन इत्यादि) लेते रहते हैं तो उनके शरीर पर खासतौर से चेहरे पर सूजन आ जाती है।

○ गर्भ-निरोधक गोलियों के बहुत दिनों तक इस्तेमाल से भी कुछ महिलाओं के शरीर पर सूजन आ सकती है।

शरीर शोथ की पेटेण्ट औषधि चिकित्सा

○ लैसिक्स (Lasix) (हैक्स्ट)—१ गोली दिन में २ बार। साथ ही रेडॉक्सिन (साराभाई) १०० मि० ग्रा०।

○ बिनर्वा (Benerva)—(रोश) ५० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में २ बार खिलायें। तीव्र रोग में—१-२ मि० ली० मांसपेशीगत दें।

○ थायराइड (वरोज वेल्कम)—३० मि० ग्रा० की १ गोली दिन में १ बार। इससे मोटापा कम होकर शरीर की सूजन घटती है।

○ लेनोक्सिन (Lanoxin) (बरोज वेल्कम)—हृदय के रोग से उत्पन्न शोथ में लाभकारी। ०.२५ मि० ग्रा० की १ गोली नित्य सेवन करायें।

○ नेविड्रेक्स (Navidrex) (हिन्दुस्तान सीबा-गायगी)—१ गोली दिन में ३ बार।

○ डायटिड (Dytide) (एस्कायेफ)—२-४ गोली प्रतिदिन कई मात्राओं में बाँट कर दें।

○ नेफ्रिल (Nephril) (फाइजर)—१ मि० ग्रा० की १ गोली दिन में २-३ बार दें।

○ कैसिलान-बी$_{१२}$ (ग्लैक्सो)—२ बड़े चम्मच पाउडर दूध में मिलाकर दिन में २-३ बार दें।

गर्भवती के शरीर की सूजन

○ एसिड्रेक्स (Esidrex) (हिन्दुस्तान सीबा गैगी)—२५ या ५० मि० ग्रा० की गोली दिन में १ या २ बार दें।

○ डायटिड (Dytide)—नाश्ता के बाद २ गोली तथा भोजन के बाद १ गोली नित्य।

○ हायथैल्टान (Hythalton) (सुहृद-गैगी)—प्रारम्भ में ५० मि० ग्रा० प्रतिदिन तत्पश्चात् १००-२०० मि० ग्रा० हर तीसरे दिन एक ही मात्रा में दें। यह १०० मि० ग्रा० की टेबलेट में उपलब्ध है।

CC-0. Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ प्लैस्ट्यूल्स बी$_{१२}$ (Plastules B_{12}) (नि० वाईथ) १ कै० दिन में ३ बार भोजन या दूध के साथ ।

○ नैफ्रिल—१ गोली दिन में २ बार । बाद में आधी से दो गोली या हर २-३ दिन पर दें ।

○ बुमेटानाइड (Bumetanide) (साराभाई)—आधी से दो गोली दिन में कई बार ।

○ कैल्सियम सैण्डोज (Calcium Sandoz) (सैण्डोज)—१० मि० ली० के एक एम्पुल का सूचीवेध धीरे-धीरे शिरा में प्रतिदिन लगायें ।

नोट—यह शोथनाशक तथा शक्तिवर्धक ओषधि है । ⊡

कतिपय सामयिक रोग 8/3

वमन : कारण पहिचानिए

रोग-परिचय—उल्टी होना अपने-आप में कोई रोग नहीं है । बल्कि अधिकांश रोगियों में यह किसी अन्दरूनी रोग का बाहरी संकेत मात्र है तथा बहुत से रोगियों में तो यह एक लाभदायक क्रिया है । उदाहरणार्थ जैसे ही कोई व्यक्ति जाने-अनजाने में कोई विषैला पदार्थ खा-पी लेता है तो शरीर उसे बाहर निकालने का प्रयत्न करता है ।

○ **उल्टी आने के अनेक कारण हैं—**

प्रमुख कारण गैस्ट्राइटिस—आमाशय की म्यूकस मेम्ब्रेन की सूजन उल्टी होने का सबसे आमतौर पर देखा जाने वाला रोग है । इसके मुख्य कारण—

○ एस्प्रिन तथा बूटाजोलिडिन जैसी दर्द-निवारक औषधियों अथवा शराब का सेवन ।

○ विषैले पदार्थों जैसे—तूतिया इत्यादि का खाना या पीना तथा वायरल बुखार ।

○ शरीर में किसी भी प्रकार का संक्रामक रोग (जीवाणु, वायरस या परजीवी जनित) ।

उपरोक्त कारण गैस्ट्राइटिस पैदा करके उल्टी की शिकायत उत्पन्न कर सकते हैं ।

बच्चों में तो कोई संक्रामक रोग जैसे—खसरा, मूत्रतंत्र का अथवा कान या गले का संक्रमण होते ही उल्टी की शिकायत हो जाती है ।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गैस्ट्राइटिस जन्य उल्टी के लक्षण—गैस्ट्राइटिस का रोगी जो कुछ खाता-पीता है, उल्टी में निकल जाता है। रोगी को कभी-कभी खून की भी उल्टी हो सकती है तथा उसकी टट्टी भी कोलतार जैसी काली और चिकनी हो सकती है। बहुधा ऐसे रोगी पानी तक ग्रहण नहीं कर सकते।

निदान—'गैस्ट्राइटिस' के निदान में 'एण्डोस्कोपी' जाँच-विधि का विशेष महत्त्व है।

उपचार—ऐसे रोगियों को मुँह से कुछ न देकर ग्लूकोज तथा खनिज लवण का उचित घोल शिरा द्वारा देना पड़ता है। लेकिन यदि रोगी मुँह से ग्रहण करने की स्थिति में है तो उसे गरम करके ठंडा किया गया दूध, पानी, तथा खनिज लवणों का घोल थोड़ी-थोड़ी मात्रा में देते हैं। इसमें रेनिटिडीन, फेमोटिडीन एवं एण्ट एसिड दवाएँ उपयोगी हैं।

○ आमाशय की पुरानी सूजन 'हैलिकोवैक्टर पाइलोरी' नामक जीवाणु से भी हो सकती है। इसके उपचार के लिए 'विस्मथ लवण' पर्याप्त उपयोगी सिद्ध हुए हैं। विटामिन बी$_{१२}$ की कमी से होने वाली गैस्ट्राइटिस के उपचार के लिए इस विटामिन को इन्जेक्शन द्वारा देना अनिवार्य होता है।

पेप्टिक अल्सर—आमाशय, डुओडिनम अथवा भोजन नली के निचले भाग में बनने वाला घाव मुख्य रूप से एण्डोस्कोपी जाँच-विधि से पहचाना जाता है। रोगी पेट के ऊपरी भाग में दर्द और जलन तथा कभी-कभी उल्टी की भी शिकायत करते हैं। कभी-कभी खून की भी उल्टी होती है। इस प्रकार से लक्षण युक्त उल्टी मिलने पर रोगी में पेप्टिक अलसर से ग्रसित होने का संकेत मिलता है। ऐसी स्थिति में स्वस्थ व्यक्ति का रक्त चढ़ाने की जरूरत पड़ती है।

अलसर के रोगी तो दर्द में राहत पाने के लिए अपने आप ही गले में अँगुली डालकर उल्टी करते रहते हैं।

उपचार—इस प्रकार की उल्टी मिलने पर मुख्य कारण (पेप्टिक अलसर) की चिकित्सा करनी पड़ती है जिससे उल्टी का स्वतः नियंत्रण हो जाता है। पेप्टिक अलसर के उपचार में आजकल एण्ट एसिड दवाएँ तथा रेनिटिडीन, फेमोटिडीन, सुक्रेल्फेट, विस्मथ लवण आदि दवाएँ बहुत प्रचलित हैं, जिनसे आशातीत सफलता मिल रही है और अब ऑपरेशन की आवश्यकता बहुत कम रोगियों में ही समझी जाती है।

आमाशय में रुकावट—प्रायः आमाशय में रुकावट होने से रोगी को उल्टी की शिकायत मिल सकती है। ऐसी स्थिति निम्न दशाओं में मिल सकती है—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पेप्टिक अलसर का प्रारम्भिक दशा में निदान न हो अथवा निदान होने के पश्चात् समुचित उपचार न किया जाय तो जटिलता होने पर आमाशय का द्वार सँकरा पड़ जाता है, जिसे 'पाइलोरिक स्टेनोसिस' कहते हैं। यह दशा आमाशय के कैंसर में भी उत्पन्न हो सकती है।

सही निदान के लिए—'एण्डोस्कोपी' एवं 'बेरियम मील' एक्स-रे चिकित्सक के परामर्शानुसार कराने चाहिए।

उपचार—ऐसे रोगी को रेनिटिडीन, फेमोटिडीन, एण्ट एसिड जैसी दवाओं में अपना धन व समय बर्बाद नहीं करना चाहिए, क्योंकि अधिकांश रोगियों में ऑपरेशन आवश्यक होता है अन्यथा रोग बढ़ कर लाइलाज हो सकता है।

छोटी आँत में रुकावट—रोगी उल्टी के साथ-साथ पेट-दर्द, पेट का फूलना, टट्टी एवं अपानवायु के न खारिज होने की शिकायत करते हैं। यह रुकावट—आँत में मरोड़ या ऐंठन पड़ जाने से, आँत का एक भाग दूसरे में घुस जाने से, आँत में टी० बी० की सूजन हो जाने से अथवा राउण्ड वर्म्स या एस्केरिस हो जाने से हो सकती है।

इसके निदान में—पेट का सादा एक्स-रे महत्त्वपूर्ण है।

उपचार के लिए—ऑपरेशन की आवश्यकता हो सकती है, लेकिन कुछ रोगी दवाओं से ही ठीक हो जाते हैं। ऐसे रोगी को मुँह से खाने-पीने को कुछ न दें और किसी योग्य चिकित्सक से तुरन्त परामर्श लें।

बड़ी आँत में रुकावट—ऐसी स्थिति कैंसर रोग में होती है। इसमें रोगी को भूख नहीं लगती और वह उल्टी, कब्ज, पेट-दर्द एवं पेट फूलने की शिकायत करता है।

निदान—बेरियम एनिमा तथा कोलोनोस्कोपी (एण्डोस्कोपी) उपयोगी जाँच-विधियाँ हैं।

निर्देश—कैंसर का निदान बहुत ही प्रारम्भिक स्टेज पर होना अत्यन्त आवश्यक होता है, अन्यथा रोग लिवर तथा अन्य अंगों में बहुत शीघ्र फैलकर लाइलाज हो जाता है।

कब्ज (Constipation)—निरन्तर कब्ज रहने से भी रोगी में उल्टी की शिकायत हो सकती है। इसमें बड़ी आँत में रुकावट जैसे लक्षण मिल सकते हैं। ऐसा अधिकतर वृद्धावस्था में होता है।

इसके बचाव के लिए—चोकर सहित आँटे की रोटी लें। हरी पत्तेदार स्वच्छ सब्जियों का तथा फलों का भोजन में समुचित मात्रा में प्रयोग करें। मानसिक तनाव से बचें और नियमित रूप से उचित व्यायाम करें। इसमें ईसबगोल की भूसी लाभदायक रहती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

याद रखिये—कब्ज यदि किसी रोग जैसे टी० बी०, कैंसर, डायबिटीज, अमीबा आदि के कारण है तो उसका उपचार पहले करना चाहिए।

एपेंडिसाइटिस—एपेण्डिक्स में सूजन हो जाने पर रोगी पेट-दर्द, उल्टियाँ तथा बुखार हो जाने की शिकायत करते हैं। ऐसे रोगियों के रक्त में श्वेत रुधिर कोशिकाओं की संख्या बढ़ जाती है।

उपचार—ऐसे रोगी को दर्द-निवारक दवाएँ न दें तथा निराहार रखकर अविलम्ब चिकित्सक से परामर्श लें, क्योंकि अधिकांश रोगियों में ऑपरेशन आवश्यक होता है। लेकिन ऐसा करने से पहले यह भी ध्यान रखें कि दर्द कहीं किसी अन्य कारण से तो नहीं है, जैसे—यूरेटर में फँसी पथरी से, पेट में कीड़ों से, अथवा अमीबा से—जिसमें प्रायः ऑपरेशन की आवश्यकता नहीं होती है।

हिपेटाइटिस—आँखों से न दिखलाई पड़ने वाले अत्यन्त सूक्ष्म जीव, वायरस से होने वाली और दूषित जल एवं अन्य पेय या भोज्य पदार्थों के प्रयोग से फैलने वाली लिवर की सूजन का एक मुख्य लक्षण 'उल्टियाँ होना' है। इसलिए चिकित्सक ऐसे रोगियों की पीलिया या जॉण्डिस के लिए शारीरिक परीक्षण करके आवश्यकतानुसार रक्त में बिलीरुबिन, एस० जी० पी० टी० तथा मूत्र में पित्त रंग तथा लवणों की जाँच कराते हैं।

उपचार—ऐसे रोगी को निम्न व्यवस्था दें—

- पूर्ण विश्राम आवश्यक।
- भोजन में—चावल, उबला आलू तथा ग्लूकोज दें।

परहेज—चिकनाई वर्जित।

औषधियों में—टेट्रासाइक्लीन, क्लोरप्रोमाजीन, मॉर्फीन जैसी दवाएँ कदापि न दें।

- **विशा-निर्देश**—झाड़-फूंक में समय बर्बाद न करके कुशल चिकित्सक से अविलम्ब परामर्श लें।
- लगातार उल्टियाँ होने पर मुँह से कुछ न देकर चिकित्सक के परामर्शानुसार ग्लूकोज, खनिज लवण तथा विटामिन्स का घोल शिरा द्वारा बहुत सावधानी से प्रयोग करें।
- शराब मिले टॉनिक्स अथवा शराब से पूरी तरह परहेज रखें।
- रोगी में यदि कोई मानसिक परिवर्तन देखें तो उसे तुरन्त अस्पताल में भरती करा दें।
- बचाव में खान-पान की स्वच्छता आवश्यक है।

लिवर सिन्होसिस—वायरल हिपेटाइटिस की जटिलता से अथवा बहुत दिनों तक अधिक शराब पीते रहने से लिवर सदैव के लिए खराब हो जाता है

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और वह सिकुड़ कर कड़ा पड़ जाता है। ऐसी स्थिति में लिवर की कार्यक्षमता घट जाती है।

ऐसे रोगियों में निम्न लक्षण मिलते हैं—

- ○ जी मिचलाना।
- ○ भूख नहीं लगना।
- ○ उल्टी आना।
- ○ पेट फूलना।
- ○ पैरों पर सूजन।
- ○ कुछ रोगियों में तिल्ली का आकार बढ़ जाता है और खून की टट्टी होने लगती है। साथ ही टट्टी के रास्ते खून जाने लगता है। जिससे टट्टी कोलतार जैसी काली होने लगती है।

○ जब रोगी में उल्टियों के साथ उपरोक्त लक्षण भी मिलने लगें तो वायरल हिपेटाइटिस का त्वरित और समुचित उपचार करें।

○ शराब का सेवन पूर्ण रुप से वर्जित करें।

शराब से हिपेटाइटिस जन्य उल्टी—लगातार अधिक शराब पीने से लिवर में सूजन हो जाती है, जिससे बहुत से रोगी उल्टियाँ होने, बुखार, पेटदर्द और पीलिया की शिकायत करते हैं।

○ ऐसी स्थिति में शराब तत्काल त्याग देना अत्यन्त आवश्यक है।

गैस्ट्रो-इण्टेराइटिस जन्य उल्टी—दूषित जल, अन्य पेय पदार्थ या भोजन ग्रहण करने पर उनमें उपस्थित अतिसूक्ष्म जीव व बैक्टीरिया आँत में पहुँचकर आमाशय तथा आँत में तीव्र सूजन उत्पन्न कर देते हैं, जिससे रोगी को कुछ ही घण्टों में **उल्टियाँ, पतले दस्त और पेटदर्द** की शिकायत हो जाती है।

उपचार—जब कभी ऐसा रोगी प्रैक्टिस में आये तो उसका त्वरित उपचार आवश्यक है; अन्यथा रोगी की जान को खतरा उत्पन्न हो जाता है। इसके उपचार के लिए—

विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा सुझाये गये सूत्र के अनुसार स्वच्छ जल में नमक, पोटेशियम क्लोराइड, ग्लूकोज एवं सोडियम बाइ कार्बोनेट का घोल प्रारम्भ से ही पिलाना शुरु कर दें; अन्यथा रोगी के शरीर में खासतौर से बच्चों में जल तथा खनिज लवणों की कमी हो जाने से—○ ब्लड-प्रेशर तथा मूत्र की मात्रा कम हो जाती है; रोगी का पेट फूलने लगता है और वह सुस्त हो जाता है तथा उसे बुखार हो जाता है। ऐसी स्थिति में—शिरा द्वारा नमक, अन्य खनिज लवणों तथा ग्लूकोज का घोल देना चाहिए।

बचाव—

○ खाने-पीने की वस्तुओं को मक्खियों से बचा कर रखें।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

- खाना बनाने और परोसने में सफाई रखें।
- स्वच्छ जल ही ग्रहण करें।
- खाना खाने से पूर्व हाथ को भलीभाँति धोयें।

वमन होना प्रायः आमतौर पर देखी जाने वाली शिकायत है, जिसके कारण होते हैं—अमाशय, लिवर, एपेण्डिक्स और आँत के विभिन्न रोग जो वमन के लिए उत्तरदायी होते हैं। वमन होने के कुछ अन्य मुख्य कारण इस प्रकार हैं—

पेट के कीड़े—बिना भलीभाँति धुली हरी पत्तेंदार तरकारी खाने पर उसमें उपस्थित राउण्ड वर्म्स या एस्केरिस के अण्डे आँत में पहुँचकर बड़े हो जाते हैं और पेटदर्द तथा उल्टी के लक्षण पैदाकर देते हैं। कभी-कभी तो पूरा कीड़ा ही उल्टी में निकल आता है।

पित्ताशय में सूजन—गाल-ब्लैडर की तीव्र सूजन में रोगी पेट के ऊपरी भाग में अचानक भयंकर दर्द, जी-मिचलाना, बुखार एवं उल्टियों की शिकायत करते हैं। यह दर्द पीठ और कन्धे में भी प्रतीत हो सकता है।

उपचार—रोगी को मुँह से कुछ न कुछ देकर शिरा द्वारा ग्लूकोज, नमक एवं अन्य आवश्यक लवणों का घोल सावधानी से देते हैं। बहुत से रोगियों में पित्ताशय में पथरियाँ भी मिलती हैं। इसमें प्रायः ऑपरेशन की आवश्यकता पड़ती है।

अग्न्याशय की सूजन—पैन्क्रियाज़ नामक अति महत्त्वपूर्ण ग्लैण्ड पेट के मध्य-ऊपरी भाग में भीतर की ओर स्थित होती है, जिसमें तीव्र सूजन हो जाने पर रोगी अचानक भयंकर पेटदर्द और उल्टियों की शिकायत करते हैं। रोगी की नाड़ी तीव्र चलने लगती है। ब्लड-प्रेशर एवं मूत्र की मात्रा कम हो जाती है। रोगी की दशा थोड़े ही समय में बहुत खराब हो जाती है, क्योंकि प्रायः आँत, पेरिटोनियम झिल्ली, फेफड़े और उसकी झिल्ली की जटिलताएँ हो जाती हैं।

उपचार—ऐसे रोगी को मुँह से कुछ न देकर उसे दर्दनिवारक दवाएँ इञ्जेक्शन द्वारा तथा नमक का घोल तथा कैल्शियम का घोल शिरा द्वारा सावधानी पूर्वक देते हैं, जिसके लिए किसी योग्य चिकित्सक से अविलम्ब परामर्श करना आवश्यक होता है।

मूत्रवाहिनी में पथरी—गुर्दे से पेशाब की थैली में मूत्र ले जाने वाली नलिका 'यूरेटर' में फँसी पथरी जब नीचे खिसकती है तो रोगी के पेट में एक तरफ अचानक तीव्र शूल उठता है, जो सामने नीचे टेस्टीज या वृषण अथवा महिलाओं में योनिमार्ग की ओर बढ़ता मालूम पड़ता है, रोगी को बार-बार जलन और दर्द के साथ पेशाब होता है जिसमें खून भी आ सकता है। ऐसे अधिकांश रोगी उल्टियों की भी शिकायत करते हैं।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवश्यक निदान—भलीभाँति तैयारी के बाद पेट का सादा एक्स-रे कराते हैं, जिसमें प्रायः पथरी या स्टोन की छाया आ जाती है। मूत्र की जाँच कराने पर प्रायः लालरक्त कोशिकाएँ तथा मवाद के कण मिलते हैं। कुछ रोगियों में अल्ट्रासाउण्ड तथा आई० वी० पी० एक्स-रे भी आवश्यक होता है।

उपचार—पथरी के रोगियों को पानी अधिक पीना चाहिए और पालक तथा टमाटर से परहेज रखना चाहिए। समयानुसार ऑपरेशन की व्यवस्था करनी चाहिए।

गुर्दों के रोग—उल्टी होने के कारण महत्त्वपूर्ण होते हैं, लेकिन लोगों का ध्यान इस ओर सहज ही नहीं जाता। जीवाणुजनित गुर्दों की तीव्र सूजन (एक्यूट पाइलोनेफ्राइटिस) खास कर बच्चों में तो केवल ज्वर तथा उल्टी से ही प्रारम्भ हो सकती है। इसलिए बच्चों में मूत्र की जाँच आवश्यक होती है।

○ गुर्दों के दीर्घकालीन संक्रामक रोग (क्रॉनिक पाइलोनेफ्राइटिस) दोनों गुर्दों में पथरियाँ, डायबिटीज का गुर्दों पर दुष्प्रभाव, प्रोस्टेट ग्रन्थि का बढ़ा आकार समुचित उपचार के अभाव में गुर्दों की कार्यक्षमता कम कर देते हैं जिससे रीनल फेल्योर की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। ऐसे रोगी लगातार उल्टियाँ होने, भूख न लगने, सिरदर्द, बेचैनी, खून की कमी इत्यादि की शिकायत करते हैं। ऐसे रोगियों के रक्त में ब्लड यूरिया तथा क्रियेटिनीन जैसे विषैले पदार्थों की मात्रा बढ़ जाती है।

उपचार—इन रोगियों में ग्लूकोज, चावल, चीनी आदि लाभदायक होते हैं। डायलिसिस एवं गुर्दा-प्रत्यारोपण की आवश्यकता पड़ सकती है।

हार्ट अटैक—जब हृदय के पिछले-निचले भाग की मांसपेशियों का रक्त-प्रवाह अचानक रुक जाता है तो रोगी अचानक छाती में दर्द और उल्टियों की शिकायत करने लगते हैं। इसका कारण पेट की खराबी नहीं समझ लेना चाहिए। ई० सी० जी० एवं रक्त में एस० जी० ओ० टी० टेस्ट निर्णायक हो सकते हैं।

चिकित्सा दिशा-निर्देश—रोगी को तुरन्त पूर्ण विश्राम करायें और किसी योग्य चिकित्सक से परामर्श लें।

हृदय फेल्योर—बच्चों में जोड़ों के दर्द तथा बुखार से उत्पन्न हृदयरोग (रीयूमेटिक हृदयरोग) के कारण सँकरे अथवा फैले हुए हृदय के वाल्व से; कोरोनरी धमनी में जमे रक्त से; उच्च रक्तचाप से; वायरल बुखार के हृदय को मांसपेशी पर दुष्प्रभाव से; क्रॉनिक ब्रॉन्काइटिस से; फेफड़ों के दीर्घकालीन रोगों से जब हृदय फेल हो जाता है तो पैरों में सूजन आ जाती है। लिवर का आकार बढ़ जाता है, रोगी को पेटदर्द होता है और आमाशय तथा आँत की शिराएँ रक्त के एकत्र हो जाने से फूल जाती हैं, जिससे रोगी उल्टियों की

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिकायत करते हैं। इन रोगियों को दी जाने वाली डिजिटेलिस, एमीनोफायलिन एवं फ्रूसेमाइड दवाओं के दुष्प्रभाव भी उल्टी के लिए उत्तरदायी होते हैं।

उपचार—उपरोक्त दवाओं को खाली पेट न लें। उल्टियाँ रोकने की दवाएँ जैसे—'डोमपेरिडोन' लें एवं हार्टफेल्योर का समुचित उपचार करें। नमक कम मात्रा में लें, आराम करें लेकिन पैरों को हिलाते-डुलाते रहें जिससे उनकी शिराओं में रक्त जमने न पाये।

मस्तिष्करोग जनित उल्टियाँ—ब्रेन ट्यूमर, मस्तिष्क में घाव या फोड़ा (ब्रेन एब्सिस), मस्तिष्क की वाइरल से सूजन (एनसेफेलाइटिस), मस्तिष्क की झिल्ली की सूजन (मेनिञ्जाइटिस) चाहे टी० बी० से हो अथवा मवाद पैदा करने वाले जीवाणुओं से—इन सभी रोगों में उल्टियाँ होना एक मुख्य लक्षण होता है। लेकिन अज्ञानतावश रोगी तथा उसके रिश्तेदार बहुत दिनों तक समझते रहते हैं कि शायद पेट के किसी रोग के कारण उल्टी हो रही है और इसीलिए वे बहुत दिनों तक डायजीन जैसे एण्टएसिड, रेनिटिडीन एवं उल्टी रोकने की 'प्रोक्लोरपेराजीन' जैसी दवाएँ लेते रहते है, लेकिन इससे कोई खास लाभ नहीं मिलता। ऐसे रोगी की विस्तृत जानकारी लेने पर ये बहुधा सिरदर्द, बुखार तथा आँखों को रोशनी कम होने की शिकायत करते हैं और बहुत से रोगी पूर्णरूप से चैतन्य नहीं रहते जबकि कुछ रोगी तो बेहोश भी हो जाते हैं।

ध्यान रखें कि उल्टी पेट रोग के कारण है तो रोगी बहुधा जी-मिचलाने की भी शिकायत करेगा लेकिन मस्तिष्क के कारण तो प्रायः ऐसा नहीं होगा।

यदि मस्तिष्क रोगों का उपचार तत्काल न किया गया तो अन्धापन, बहरापन, फालिज या लकवा तथा मस्तिष्क-क्षीणता जैसी जटिलताएँ भी उत्पन्न हो जाती हैं। इसी तरह ब्रेनहेमरेज का अटैक (मस्तिष्क धमनी का फट जाना) होने के कारण ही—सिरदर्द, पैरालिसिस ओर बेहोशी होने के अलावा रोगी को उल्टियाँ भी बहुत होती हैं।

उपचार—यह बहुत ही आवश्यक है कि ऐसे रोगी को मुँह से एक बूँद भी पानी न दें और रोगी को एक करवट में लिटायें ताकि उल्टी में निकला पदार्थ श्वासनली को अवरुद्ध न कर दे। अन्यथा रोगी की मृत्यु हो सकती है।

माइग्रेन जनित उल्टियाँ—आधाशीशी के रोगी सिर में एक तरफ दर्द होने के अलावा उल्टियों की भी शिकायत करते हैं।

उपचार—○ ऐसे रोगियों को तनाव से बचना चाहिए।

○ सादा सुपाच्य भोजन और भरपूर नींद।

○ चिकित्सकीय परामर्श से सावधानीपूर्वक दर्द-निवारक दवाएँ लें।

सिर में चोट—हेड इञ्जरी के रोगी को भी उल्टियों की शिकायत हो जाती है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपचार—यदि रोगी बेहोश है तो उसे एक करवट में लिटायें। 'कैट स्कैन' जाँच कराने पर यदि ब्लड क्लॉट है तो आपरेशन की आवश्यकता पड़ सकती है। मैनिटोल एवं डेक्सामेथासोन शिरा द्वारा उपयोगी होते हैं।

निषेध—इन रोगियों को मार्फीन न दें।

फूड एलर्जी—कई रोगी कोई खास भोजन जैसे अण्डे से लगभग २ या ३ घण्टे के बाद उल्टी होने की शिकायत करते हैं। कुछ बच्चे दूध पीने के बाद उल्टियाँ करते हैं।

औषधियों से भी उल्टी—आश्चर्यजनक रामबाण दर्दनिवारक दवा मार्फीन, अमीबा जनित लिवर के फोड़े में बहुत प्रभावी दवा इमेटिन, हृदय फेल्योर में उपयोगी दवा डिजिटेलिस, दर्दनिवारक तथा बहुप्रचलित एस्प्रिन, दमा रोग में लाभदायक एमिनोफायलिन उल्टियों के लिए उत्तरदायी हो सकती हैं। अतः इनका कुशल चिकित्सक की ही देखरेख में सेवन करें।

उपवास—दीर्घकालीन उपवास से अथवा भोज्य पदार्थ तथा विटामिन की कमी से भी उल्टियाँ हो सकती हैं। इन दशाओं में यूरिन में कीटोन का टेस्ट भी कराते हैं।

गर्भावस्था—जी-मिचलाना तथा उल्टियाँ होना गर्भधारण के प्रारम्भ के महीनों में खासकर प्रातःकाल सामान्य बात है।

उपचार—अनावश्यक दवाएँ कभी न लें; क्योंकि क्या पता कौन-सी दवा गर्भ में पलते हुए शिशु को नुकसान पहुँचा दे।

गर्भवती महिला के अन्य कारणों के अलावा उल्टी होने का एक प्रमुख कारण हिपेटाइटिस का भी ध्यान अवश्य रखें, अन्यथा निदान में देर होने से तथा उचित उपचार के अभाव में यह पीलिया रोग गर्भावस्था में तो अत्यन्त ही खतरनाक माना जाता है।

मनोभाव से सम्बन्धित प्रतिक्रियाएँ—ये भी अक्सर उल्टियों की शिकायत उत्पन्न कर देती हैं। उदाहरणार्थ—बालक प्रारम्भ में जब स्कूल जाता है, नवयुवक जब फौज में भर्ती होता है या लड़की शादी के बाद जब ससुराल जाती है तो वहाँ नये लोग तथा नये प्रकार का वातावरण पाती है; फलस्वरूप डर, घबराहट अथवा मानसिक तनाव से ऐसी स्थिति में उल्टियाँ आ सकती हैं, पर शरीर के वजन में कोई अन्तर नहीं आता है।

उपचार—यदि रोगी को केवल एक या दो उल्टियाँ हुई हों तो कोई खास उपचार की आवश्यकता नहीं होती है। यदि लगातार उल्टियाँ हो रही हों तो उनका रोकना भी आवश्यक हो जाता है। चूँकि पानी, नमक, पोटाशियम क्लोराइड एवं अन्य खनिज लवणों की कमी हो जाने से शरीर में अनेकानेक जटिलताएँ उत्पन्न हो जाती हैं।

CC-0 In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके अतिरिक्त उल्टी होने का मूल कारण मालूम करके उसका भी त्वरित एवं उचित उपचार लें। पानी तथा खनिज लवणों की उचित पूर्ति आवश्यक होती है। दवाएँ हमेशा चिकित्सक के परामर्श से ही लें।

आवश्यक दिशा-निर्देश—

○ औषधियों से होने वाली उल्टियों से बचाव तथा उपचार के लिए अच्छा तो यही होगा कि इन दवाओं का सेवन अनावश्यक रूप से न करें। साथ ही उत्तरदायी दवा का सेवन रोक दें।

○ विषैला पदार्थ खाने या पीने पर, खून की उल्टी होने पर तथा आमाशय और आँत में रुकावट के लक्षण मालूम होते ही रोगी को अस्पताल जाना चाहिए।

○ मस्तिष्क अथवा उसके चारों ओर की झिल्ली में सूजन का संदेह होते ही तत्काल उचित जाँच करानी चाहिए जिससे रोग का प्रारम्भ में ही उचित उपचार हो सके।

○ बेहोश रोगी को मुँह से एक बूंद भी जल न दें तथा उसे एक करवट में लिटायें।

डायबिटीज़—यदि डायबिटीज़ को नियन्त्रण में न रखा गया तो बहुत से रोगियों में ब्लड-शुगर अत्यधिक् बढ़ जाता है, जिसके परिणामस्वरूप रोगी को उल्टियाँ आने लगती हैं।

उपचार—○ ऐसे रोगी की जाँच तुरन्त करायें तथा डायबिटीज़ पर इन्सुलिन से कण्ट्रोल करें।

○ इस दशा में मुँह से लेने वाली डायबिटीज़ की टेबलेट डायोनिल, रेस्टीनॉन; डायबिनीज, डायामाइक्रान आदि न लें। □

कतिपय सामयिक रोग 8/4

मस्तिष्कगत रक्तस्राव

(Brain Haemorrhage)

परिचय—इसमें अचानक रक्तनलिका फट जाती है, जिससे निकला रक्त एक स्थान पर जमा होकर मस्तिष्क के विभिन्न भागों पर दबाव डालता है, परिणामस्वरूप उस भाग की कार्यविधि सुचारुरूप से नहीं हो पाती।

कारण—इसके निम्न कारण हैं—

* उच्चरक्तचाप इसका प्रमुख कारण है। यह कारण प्रायः अदृश्य रहता है।

* मस्तिष्कगत नलिका का गुब्बारेनुमा फूला भाग अथवा अन्य जन्मजात गुच्छेनुमा विकार का फट जाना।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* सिर पर चोट (हेड इञ्जरी)।
* ब्लड-कैंसर।
* रक्त में प्लेटलेट कणों की अत्यधिक कमी।
* रक्त को पतला करने वाली दवाओं की अधिकता।

लक्षण—इसके लक्षण इस प्रकार हैं—

* प्रारम्भ में रोगी अचानक भयंकर सिरदर्द की शिकायत करता है।
* चक्कर आने लगते हैं तथा उल्टियाँ होने लगती हैं।
* रोगी के हाथ-पैरों में अवांछनीय गति एवं झटके भी आ सकते हैं।
* पहले रोगी सुस्त दिखलायी देता है तत्पश्चात् अर्धमूर्च्छित-सा लगता है। अन्त में गहरी बेहोशी छा जाती है।
* अब रोगी की साँस तेजी से चलने लगती है और फिर यह अनियन्त्रित हो जाती है।
* रोगी को तेज बुखार हो जाता है। साथ ही उसकी आँखें एक ओर घूम जाती हैं।
* बहुत से रोगियों की बोलने की शक्ति समाप्त हो जाती है।
* कभी-कभी रोगी के एक हाथ, एक पैर तथा चेहरे का लकवा या फालिज।
* रोगी का सिर पर हाथ ले जाना।

चिकित्सा—रोगी को तत्काल अस्पताल के इमर्जेन्सी वार्ड में भर्ती करा दें।

कतिपय सामयिक रोग 8/5

रक्तवमन

परिचय—इस रोग में उल्टी में रक्त आता है। रक्तवमन अर्थात खून की उल्टी एक भयावह एवं आकस्मिक स्थिति होती है। इसमें यदि निदान तथा उपचार में तत्परता न बरती जाय तो रोगी का बचना कठिन हो जाता है।

रोग के कारण—

* पेट का अलसर (पेप्टिक अलसर)।
* औषधियों का अतर्कसंगत उपयोग एवं आमाशय-प्रदाह तथा विभिन्न प्रकार की दर्दनिवारक दवाएँ।
* पोर्टल हाइपरटेंशन।

अन्य कारण—○ पेट का अर्बुद (कार्सीनीमा ऑफ स्टमक); ○ आहार-तन्त्र में भीषण चोट। ○ रक्त की बीमारियाँ; जैसे—पर्प्यूरा एवं हीमो-

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फीलिया। ग्रसनिका-प्रदाह (ईसोफेजाइटिस) तथा मैलोरीबीज सिण्ड्रोम (लगातार वमन के फलस्वरूप पेट की श्लेष्मा पर्त का क्षतिग्रस्त होना) आदि।

रक्तक्षय के कारण—रक्तवमन में हुए रक्तक्षय की मात्रा के अनुसार ही इसके लक्षण होते हैं—

* प्रारम्भ में रोगी को कमजोरी अनुभव होने लगती है।

* रक्तवमन न रुकने पर कमजोरी बढ़ती जाती है।

* चेहरा व शरीर पीला पड़ने लगता है।

* नाखून सफेद हो जाते हैं। ○ शनैः-शनैः शरीर पर सूजन आने लगती है। शरीर के अन्य भागों में सूजन बढ़ती जाती है।

* रोगी को चक्कर आने लगते हैं।

* अत्यधिक रक्तक्षय की स्थिति में रोगी की हालत यहाँ तक बिगड़ जाती है कि उसे मूर्च्छा भी आ सकती है।

चिकित्सा-निर्देश—

* जितनी जल्दी हो सके रोगी को निकट के अस्पताल में भर्ती करा दें।

* यदि रोगी उपरोक्त वर्णित औषधियाँ (एस्प्रिन, फिनाइलबूटाजोन, स्टेरॉइड) ले रहा हो तो तुरन्त रोक दें। चाय, काफी तथा गर्म खाद्य पदार्थ न दें।

* पूर्ण विश्राम आवश्यक है।

* रोगी को ढाढस बंधायें।

* यदि रोगी अलसर का इलाज ले रहा है तो उसे लेने दें।

* रक्तवमन के रोगी को कोई भी एण्टासिड औषधि; जैसे—डायजीन, डाइसोजेल, एलकेन एम० पी० एस० या जैल्यूसिल एम० बी० एस० आदि में से कोई एक २ से ४ चम्मच पिला दें। इसे ३-४ घण्टे बाद पुनः दें।

* दूध ठंडा ही दें। यदि दूध को बर्फ से ठंडा किया हो तो अधिक लाभ की आशा की जा सकती है।

अस्पताल में चिकित्सा—

अस्पताल में भर्ती होने के पश्चात् रक्तवमन में हुए रक्तक्षय के अनुरूप रोगी को ग्लूकोज ड्रिप लगायी जाती है तथा रक्त चढ़ाया जाता है।

रोगी की जीवन-रक्षा हेतु रक्त बाजार से न खरीद कर यदि उसे मित्र-कुटुम्बी ही रक्त दें तो स्वस्थ रक्त पाकर जहाँ रोगी शीघ्र स्वास्थ्य-लाभ कर सकता है, वहीं रक्त की प्रतिक्रिया तथा प्राणघातक रोग जैसे—'एड्स' आदि के संक्रमण का भी भय नहीं रहता।

ब्लड-ट्रान्सफ्यूजन (रक्त चढ़ाने) के साथ ही साथ रक्तवमन के कारणों की गहन चिकित्सा की जाती है। रोगी के पेट में नाक के रास्ते नली

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(रायल्स ट्यूब) डालकर स्रावित रक्त को निकाल दिया जाता है। साथ ही तरल खाद्य पदार्थ ऐण्टासिड एवं अन्य औषधियाँ भी इसी नली से पहुँचाई जाती हैं।

याद रखिये—रक्तवमन के कारण का पता लगाने, रक्तस्राव का स्थान देखने व उसे रासायनिक पदार्थ द्वारा रोकने (सील/केमिकल कॉटराइजेशन) हेतु अन्तःदर्शीय मशीन (एण्डोस्कोप) की भी सहायता ली जाती है।

○ औषधीय एवं अन्तःदर्शीय उपचार से रक्तवमन न रुकने पर आकस्मिक शल्य-चिकित्सा की भी आवश्यकता पड़ सकती है।

रक्तवमन से बचाव—

* पेट में उपस्थित किसी भी प्रकार के अल्सर का पूर्ण एवं नियमित उपचार आवश्यक है।

* दर्दनिवारक औषधियों से स्वयं उपचार न करें।

* एस्प्रिन, स्टेरायड औषधियाँ तथा फिनाइल बूटाजोन आदि औषधियों से बचें अथवा डाक्टर की सलाह पर ही लें।

सावधानी—कभी भूल कर भी यह दवाएँ खाली पेट न लें।

* मद्यपान व धूम्रपान से बचें।

* पेट की अन्य बीमारियों जैसे—अतिअम्लता (हाइपरएसिडिटी), ग्रासनली-प्रदाह (ईसोफेजाइटिस) आदि का भी समय पर उपचार करायें।

* उपरोक्त बीमारियों में भोजन में पूर्ण परहेज आवश्यक है। अधिक मिर्च-मसाले, गर्म खाद्य पदार्थ, गरिष्ठ भोजन, चाय-कॉफी आदि से बचें।

* पेट से सम्बन्धित कोई भी लक्षण प्रकट होने पर विशेषज्ञ चिकित्सक से जाँच व उपचार करायें। ⊡

कतिपय सामयिक रोग 8/6

घेंघा रोग

(Goitre)

पर्याय—गलगण्ड, गिल्हड़, ब्रॉन्कोसील (Bronchocele)।

रोग-परिचय—गले की गाँठ बहुत दिनों से बढ़ी हो या पुरानी हो जाय तो उसे घेंघा रोग कहते हैं। यह रोग विशेषकर युवावस्था में होता है।

रोग के कारण—आयोडीन की कमी तथा कैल्शियम की मात्रा आवश्यकता से अधिक होना।

औषधि-चिकित्सा—

○ थायरॉयड (Thyroid)—३० मि० ग्रा० की आधी गोली दिन में १ बार प्रारम्भ कर २ गोली नित्य दें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ मिल्क आयोडीन (Milk iodine)—५ मि० ली० हर तीसरे दिन मांस में लगायें।

○ 'टिंक्चर आयोड़ीन' घेंघा पर दिन में २-३ बार फुरेरी से लगायें।

○ रोगी को आयोडीन युक्त नमक खाने में दें।

○ इबेरोल (Iberol)—१-२ गोली नित्य दें। अथवा २ छोटा चम्मच दिन में २ बार भोजन के बाद दें।

अन्य औषधियाँ—

○ रॉक्सिन (Roxin) (नि० कैडिला)—वयस्कों को प्रारम्भ में ½ से १ गोली (५० से १०० माइक्रोग्राम) दें। तत्पश्चात् ३-४ सप्ताह के अन्तर पर ३५ से ५० माइक्रोग्राम बढ़ाते हुए २०० से ३०० मि० ग्रा० तक प्रतिदिन दें।

अथवा—प्रोलॉइड (Proloid) (नि० वार्नर)—¼ से ½ गोली दिन में २-३ बार। फिर धीरे-धीरे मात्रा बढ़ाते हुए ½ से ३ गोली प्रतिदिन दें।

सावधान—हृद्-वाहिनी रोगों, अधिवृक्क अपर्याप्तता में वर्जित।

○ इण्टोडोन (Entodon) (बायर)—घेंघा के ऑपरेशन में रोग की तीव्रता एवं आवश्यकतानुसार १-२ या ४ मि० ली० का इन्जेक्शन मांस में प्रति तीसरे दिन लगायें।

अनेक वैज्ञानिक इस रोग का कारण एक विशिष्ट प्रकार के जीवाणु मानते हैं जो पेय पदार्थों में उपस्थित रहते हैं और पीने के साथ ही अन्दर प्रविष्ट होकर घेंघा रोग पैदा करते हैं। ▣

कतिपय सामयिक रोग 8/7

साँस फूलना

चिकित्सक की जनरल प्रैक्टिस में ऐसे अनेक रोगी आते हैं, जिनकी साँस फूलती है। कुछ रोगियों को यह तकलीफ कई वर्षों से होती है, जबकि कुछ रोगी हफ्ते-दस दिन से या घण्टे दो घण्टे से यह परेशानी महसूस करने लगते हैं। साँस फूलने की तकलीफ वाले रोगी अपनी नित्य दिनचर्या के कार्य भी पूरा नहीं कर पाते हैं। वह अपने में अतिशय कष्ट महसूस करते हैं। कुछ रोगी बात भी नहीं कर पाते हैं। कुछ रोगी लेटने पर साँस फूलने की शिकायत करते हैं, जबकि बहुत से रोगी अधिक चलने पर या सीढ़ियों पर चढ़ने में या मेहनत का कोई कार्य करने पर ऐसी शिकायत करते हैं।

अन्य लक्षण—साँस फूलने के अतिरिक्त कुछ रोगी निम्नलिखित लक्षणों की भी शिकायत करते हैं—

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

* खाँसी-जुकाम
* कफ या बलगम आना
* खाँसी में खून आना
* कमजोरी
* भूख न लगना
* कब्ज रहना
* श्वसन-क्रिया में सीटी की आवाज
* पैरों पर या सारे शरीर में सूजन
* रक्ताल्पता
* छाती में दर्द उठना
* पसलियाँ चलना
* छाती में दर्द या जकड़न
* बलगम ठीक ढंग से बाहर न निकल पाना
* पेट-दर्द या सिर-दर्द की शिकायत
* जीभ तथा नाखूनों का नीला पड़ जाना
* अचानक अधिक पसीना आना
* मुँह से झाग निकलना
* हाथों में कंपन
* मूत्र की मात्रा बहुत कम या अधिक
* सांस में विशेष प्रकार की दुर्गन्ध
* जोड़ों में दर्द आदि।

शारीरिक परीक्षा आवश्यक—चूंकि 'साँस फूलना' अपने-आप में कोई रोग नहीं है, बल्कि यह कई रोगों के कारण हो सकता है। अतः रोगी को कोई दवा देने से पहले यह निश्चित कर लेना चाहिए कि साँस फूलने का मूल कारण क्या है ? जैसे कि एड्रीनलीन नामक दवा ब्रॉन्कियल अस्थमा (दमा) के तीव्र अटैक में बहुत लाभकारी है, जबकि यही दवा उच्च रक्तचाप तथा हृदय के वाम कक्ष के फेल होने पर साँस फूलने का अटैक होने पर बहुत हानिकारक सिद्ध होती है।

अतएव रोगी के लक्षणों की विस्तृत जानकारी करके हृदय, फेफड़े, नाखूनों, जीभ एवं पेट आदि की भलीभांति जांच कर एवं ब्लड-प्रेशर नापने के बाद आवश्यकतानुसार रक्त, मूत्र एवं बलगम की जांच, एक्स-रे चैस्ट, ई० सी० जी० इत्यादि कराये जाते हैं।

समय बर्बाद किये बिना त्वरित उपचार आवश्यक—

जिन रोगियों की अचानक साँस फूलने लगती है, उन्हें इमर्जेन्सी उपचार की तत्काल आवश्यकता होती है; उदाहरणार्थ—

○ श्वासनली में फँसी किसी बाहरी वस्तु को तुरन्त बाहर निकालना।

○ फेफड़े की झिल्ली में एकत्र हवा या तरल पदार्थ को बाहर निकालना।

○ उच्च रक्तचाप अथवा हार्ट अटैक का दौरा पड़ने के कारण हृदय के वाम कक्ष के फेल हो जाने से फेफड़ों में उफने द्रव को मूत्रल दवाओं से बाहर निकालना।

○ रक्त की अधिकाधिक कमी (अनीमिया) के रोगी में रक्त चढ़ाना और ऑक्सीजन देना आदि।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पल्मोनरी एम्बोलिस्म—जब हर्ट-अटैक के रोगी अथवा किसी बड़े ऑपरेशन के बाद रोगी बहुत दिनों तक बिस्तर पर पैर को बिना हिलाये-डुलाये लेटे रहते हैं तो टाँगों की शिराओं में रक्त-प्रवाह के शिथिल पड़ जाने से उनमें रक्त जम जाने की आशंका रहती है। यह जमा रक्त (थक्का या ब्लड क्लॉट) शिरा से हट कर रक्त-प्रवाह द्वारा फेफड़े की धमनी में फँस जाता है, जिससे **रोगी को अचानक बहुत तीव्र साँस फूलने का अटैक हो जाता है और साथ में छाती में दर्द भी उठता है और खाँसी में खून भी आने लगता है। यह दशा अत्यन्त गम्भीर मानी जाती है।**

उपचार—○ इसमें रोगी को पैर चलाने की सलाह दी जाती है, जिससे रक्त का प्रवाह सुचारु रूप में बना रहे।

○ गम्भीर स्थिति में रोगी को तुरन्त अस्पताल में भर्ती करायें।

हर्ट फेल्योर से साँस फूलना—हृदय का कार्य सुचारु रूप से न हो पाना साँस फूलने का एक प्रमुख कारण होता है। ऐसे कुछ रोगी बहुत समय तक साँस फूलने का कारण ब्रॉन्काइटिस या ब्रॉन्क्रियल अस्थमा समझ कर गलत उपचार लेते रहते हैं, लेकिन रोगी का ब्लड-प्रेशर नापने पर, उसके हृदय की परीक्षा करने पर एवं ई० सी० जी० तथा चैस्ट एक्स-रे कराने पर साँस फूलने के मूल कारण का पता चल जाता है।

○ हृदय के वाम कक्ष के फेल हो जाने पर रोगी प्रारम्भ में केवल घूमने-फिरने पर अथवा मेहनत का कार्य करने पर ही साँस के फूलने की शिकायत करते हैं। कुछ रोगियों में रात को सोते समय साँस फूलने के अटैक होते हैं, और वे अचानक उठकर बैठ जाते हैं, जिससे उन्हें कुछ राहत मिल जाती है।

रोग और अधिक बढ़ जाने पर उनके फेफड़ों में अचानक कभी-कभी द्रव निकलता है, जिससे साँस में उन्हें बहुत भयंकर तकलीफ हो जाती है। प्रायः रोगी की जीभ नीली पड़ जाती है, मुँह से झाग निकलने लगती है और अधिक पसीना आने लगता है। यह अत्यन्त गम्भीर स्थिति होती है।

उपचार—ऐसे गम्भीर रोगियों को तत्काल अस्पताल में भर्ती कर देना चाहिए, जिससे उसको ऑक्सीजन तथा शिरा द्वारा तुरन्त असर करने वाली मूत्रल दवाएँ जैसे—फ्यूरोसेमाइड (लेसिक्स) इत्यादि दी जा सकें।

सावधान—ऐसे रोगियों में ब्रॉन्कियल अस्थमा का होना न समझ लेना चाहिए; अन्यथा इसमें कारगर औषधियाँ, यथा—एड्रीनलीन एवं इफेड्रिन का प्रयोग ऐसे रोगियों की दशा और भी बिगाड़ देगा। इन रोगियों को शिरा द्वारा ग्लूकोज नमक का घोल (Normal saline) देना भी बहुत हानिकारक सिद्ध हो सकता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. .

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हर्ट-फेल्योर के बहुत से रोगियों के पैरों पर सूजन आ जाती है, लिवर का आकार बढ़ जाता है, पेट में दर्द की शिकायत हो जाती है और सांस फूलने लगता है।

उपचार—○ नमक बन्द करें। ○ मूत्रल दवाएँ सुबह के समय दें।

हृदय के वाल्व खराब होने से सांस फूलने में तकलीफ—बाल्यावस्था में स्ट्रेप्टोकोकस नामक जीवाणुओं से गला खराब होने पर इन जीवाणुओं से निकले विषैले पदार्थ कभी-कभी बच्चों के जोड़ों (घुटने, कुहनी, कलाई का जोड़, टखने का जोड़, कन्धे के जोड़) में सूजन एवं दर्द उत्पन्न कर देते हैं और कुछ बच्चों में हृदय में भी सूजन हो जाती है जिससे मुख्यतः इनके वाल्व खराब हो सकते हैं; लेकिन जोड़ों का दर्द ठीक हो जाता है, जबकि हृदय में दीर्घकालीन खराबी उत्पन्न हो जाती है, जिसका मुख्य लक्षण 'सांस का फूलना' होता है। इस तकलीफ के कारण बच्चे स्कूल नहीं जा पाते हैं और बार-बार अस्पताल में भर्ती होते रहते हैं और कभी-कभी तो सारी रात बिस्तर पर बैठ-कर गुजार देते हैं।

उपचार—इन रोगियों में डिजिटेलिस नामक दवा का प्रचलन आज भी बहुत है, लेकिन दीर्घकालीन लाभ के लिए प्रायः ऑपरेशन की आवश्यकता होती है। शल्यक्रिया से वाल्व को बदला जा सकता है अथवा तंग हो गये वाल्व को चौड़ा किया जा सकता है, जिसके फलस्वरूप रोगी को बहुत राहत मिलती है।

फेफड़े में द्रव—हृदय के वाम कक्ष के फेल हो जाने पर उत्पन्न दशा (कार्डियक अस्थमा), फेफड़ों के तीव्र संक्रामक रोग जैसे न्यूमोनिया से, विषैली गैस जैसे कार्बन मोनोक्साइड से, अधिक ऊँचाई पर पर्वतारोहण से, मस्तिष्क की झिल्ली की अथवा मस्तिष्क की सूजन (मेनिञ्जाइटिस अथवा एन्सेफेलाइटिस) से अथवा शिरा द्वारा आवश्यकता से अधिक द्रव चले जाने की दशा में रोगियों के फेफड़े में द्रव भरना शुरू हो सकता है, जिससे रोगी की सांस बहुत तीव्र गति से चलने लगती है। रोगी सांस फूलने से अत्यधिक परेशान हो जाता है, विशेषकर उस समय जब रोगी लेटा हो। इसलिए ऐसे रोगी या तो स्वयं उठकर बैठ जाते हैं या डॉक्टर उनको ऐसा करने को कहते हैं।

हृदयावरण में द्रव एकत्र होना—अनेक ऐसे रोग हैं जैसे टी० बी० से, रीयूमेटिक जनित हृदयरोग से अथवा चेस्ट में चोट लग जाने से हृदयावरण की पर्तों के मध्य द्रव एकत्र हो जाने से रोगी को सांस में तकलीफ हो जाती है।

उपचार—मूल कारण के इलाज के साथ-साथ एकत्र द्रव को निकालने की भी आवश्यकता पड़ सकती है, जिससे रोगी को तत्काल आराम मिल जाता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ **साँस फूलने की तकलीफ : एक दृष्टि में—**

बाल्यावस्था में—हृदय या जन्मजात रोग, डिफ्थीरिया, न्यूमोनिया।

युवावस्था में—न्यूमोनिया, इओसिनोफीलिया, फेफड़े की टी० बी०, हृदय के वाल्व के रोग।

प्रौढ़ावस्था में—हर्ट अटैक, उच्च रक्तचाप, क्रॉनिक ब्रॉन्काइटिस।

○ साँस फूलने के जिम्मेदार ये कुछ रोग किसी भी उम्र में हो सकते हैं। ब्रॉन्कियल अस्थमा, न्यूमोनिया, हर्ट फेल्योर, अनीमिया या खून की कमी, फेफड़े की टी० बी० तथा श्वासनली में किसी बाह्य वस्तु का फँस जाना आदि।

निर्देश—साँस में तकलीफ महसूस करने वाले रोगी का उपचार साँस फूलने के कारण तथा अन्य कोई जटिलता है, तो उसी के अनुसार करना आवश्यक है।

साँस फूलने की तकलीफ से बचाव—

○ सिगरेट, बीड़ी, हुक्का पीने की आदत शीघ्र से शीघ्र त्याग दें।

○ मोटापा होने पर व्यायाम एवं कम कैलोरी का भोजन लेकर वजन कम करें। घी कम मात्रा में लें।

○ ३० वर्ष की उम्र के आस-पास वाले व्यक्ति अपना ब्लड-प्रेशर समय-समय पर नपवाते रहें। उच्च रक्तचाप होने पर उस पर समुचित कण्ट्रोल रखें।

○ शराब की आदत प्रारम्भ से ही न डालें। यदि पीते हों तो तत्काल त्याग दें।

○ रक्त में कोलेस्ट्रोल इत्यादि वसा की मात्रा नियन्त्रित रखें।

○ मानसिक तनाव से बचें।

○ डायबिटीज़ के लिए कम से कम एक बार ब्लड-सुगर टेस्ट अवश्य करा लें और यदि यह रोग हो तो उस पर समुचित कण्ट्रोल रखें।

○ फेफड़े की टी० बी० होने पर चिकित्सक के परामर्शानुसार उपचार बहुत पहले से नियमित रूप से प्रारम्भ कर दें।

○ बच्चों का गला खराब होने पर त्वरित उपचार आवश्यक है।

○ धूल, धुआँ से बचें। दमे के रोगी धूल, धुआँ, सर्द हवा, अधिक परिश्रम आदि से सदैव बचाव करें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिशिष्ट २

राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रम

स्वास्थ्य कार्यक्रमों का मुख्य उद्देश्य संचारी रोगों पर नियन्त्रण या उनका उन्मूलन तथा ग्रामीण क्षेत्रों में इनके उचित इलाज की सेवाएँ उपलब्ध कराना है।

राष्ट्रीय कुष्ठरोग उन्मूलन कार्यक्रम

सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं सामाजिक दृष्टि से कुष्ठरोग एक गहन समस्या है। इस समस्या के निवारण हेतु सरकार ने राष्ट्रीय कुष्ठरोग उन्मूलन कार्यक्रम चलाया है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य इस रोग से पीड़ित रोगियों का प्रारम्भ में ही पता लगाना और रोगियों का घर पर ही इलाज करना तथा इस प्रकार यथासम्भव कम समय में संक्रामक रोगियों को असंक्रामक बनाना तथा लोगों को स्वास्थ्य सम्बन्धी शिक्षा प्रदान करना है।

इस कार्यक्रम का उद्देश्य बहु औषधीय उपचार प्रणाली को अपना कर २००० ई० तक समस्त क्षेत्रों से कुष्ठरोग का उन्मूलन है।

इसके लिए विशिष्ट बहु-औषधीय उपचार पद्धति—कुष्ठरोग के उपचार में एक औषधि की अपेक्षा कई दवाइयों के सम्मलित प्रयोग से अत्यधिक प्रभावी परिणाम मिले हैं। इस उपचार-पद्धति के पूर्व एकल औषधि पद्धति 'डैपसन्स मोनोथेरेपी' का प्रयोग किया जाता था।

'रिफैम्पिसीन' और 'क्लोफाजिमिन' नामक दो दवाईयाँ कुष्ठरोग के जीवाणुओं के विरुद्ध बहुत अधिक प्रभावकारी पायी गई हैं। इन औषधियों को डैप्सोन के साथ मिलाकर देने पर कुष्ठरोग-निवारण में बहुत अधिक लाभ पहुँचता है। औषधियों के इस संयोजन से कुष्ठरोग का ६ महीने से २ वर्ष के भीतर पूर्णतः उपचार किया जा सकता है। भारत सरकार ने इस उपचार के लाभ एवं प्रभावोत्पादकता को महत्त्व दिया है। विश्व स्वास्थ्य संगठन इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन एवं प्रशासनिक आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायता दे रहा है।

राष्ट्रीय एड्स कार्यक्रम

एड्स ऐसा रोग है, जिसमें मनुष्य में रोग-प्रतिरोधक क्षमता का ह्रास हो जाता है। भारत में एड्स वायरस की खोज सर्वप्रथम फरवरी १९८६ में की गई थी। तब से काफी समय गुजर चुका है। सांख्यिकी दृष्टि से पिछले तीन वर्षों में एड्स से ७६ लोगों की मृत्यु हुई है। स्वास्थ्य एवं परिवार-कल्याण

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्रालय के अनुसार देश में एच० आई० वी० पॉजिटिव रोगियों की कुल संख्या ६६३८ है। जिनमें वरीयताक्रम में सर्वाधिक रोगियों की संख्या महाराष्ट्र में (२०२९) है। दूसरे, तीसरे तथा चौथे स्थान पर क्रमशः तमिलनाडु (१५०६), मणिपुर (१४५१) तथा दिल्ली (४७९) हैं। अनधिकृत सूत्रों के अनुसार देश में एच० आई० वी० पॉजिटिव रोगियों की संख्या १० लाख से २० लाख के बीच है।

सन् २००० तक एड्स के १० प्रतिशत केस विकासशील देशों में होंगे, जिसमें भारत भी शामिल है। अक्टूबर १९८९ में उत्तरपूर्व भारत में जाँच करने पर खून का केवल एक नमूना पॉजिटिव सिद्ध था। किन्तु जून १९९० में खून के १५०० नमूनों की जाँच में से भयत्रस्त ५४ प्रतिशत नमूने पॉजिटिव निकले। देशभर में दिन-प्रतिदिन तेजी से फैलते जा रहे एड्स रोग का यह एक खतरनाक संकेत है।

अपने देश की सीमा से लगे बंगलादेश में एड्स पीड़ितों की संख्या ११ हो गई है। पाकिस्तान में भी एड्स से अनेक रोगी ग्रसित हैं।

वाराणसी में एड्स रोगी की मृत्यु

वाराणसी, २२ अगस्त (यू० यू०), ज्ञानपुर तहसील के एक गाँव के एड्स रोग से पीड़ित एक व्यक्ति की मृत्यु हो गई। जिले में एड्स से मरने की यह पहली घटना है। सुन्दरलाल अस्पताल के चिकित्सकों के अनुसार ३ वर्ष पूर्व मृतक में एड्स के लक्षण पाये गये थे। ये लक्षण जाँच के बाद मिले। यह व्यक्ति बम्बई के एक निजी संस्थान में कार्यरत था। अनुमान है कि बम्बई में ही उसे एड्स की बीमारी लगी।

एण्टीबॉडी की उपस्थिति के आधार पर एड्स वायरस के परीक्षण के लिए एन्जाइम लिंक्ड इम्यूनोसोवेण्ट एस्से (Elisa) तथा वेस्टर्न ब्लॉट विधि का प्रयोग किया जाता है। **हाल ही में एक उत्तम और सस्ती जाँच-प्रक्रिया 'डिप्सटीक' की खोज 'मिल्टन टॉम' ने एड्स वायरस के पीतपिण्ड की उपस्थिति का पता लगाने के लिए की है।** इस जाँच-प्रक्रिया में एलिसा की तुलना में आठ गुना कम खर्च आता है। साथ ही इसमें कम समय लगता है।

○ डिप्सटीक का विकास अन्तर्राष्ट्रीय विकास शोध-संस्थान, कनाडा की मदद से हो रहा है। भारत में भी १६ मार्च १९६२ से इस क्षेत्र में कार्य किया जा रहा है। भारत पहला देश है, जिसने इस किट का व्यावसायिक उत्पादन 'स्पेन डायग्नोस्टिक्स ऑफ गुजरात' की सहायता से करना शुरू किया है। इसे 'स्पेन कम्बायड्स विजुअल' के नाम से वितरित किया जायेगा।

एड्स-निवारण के लिए विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से सरकार प्रयास कर रही है। सम्पूर्ण देश में एड्स सम्बन्धी सूचना प्रदान करने के लिए दिल्ली

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में तीन, पूना में एक और वेल्लूर में एक सूचना केन्द्र स्थापित किये गये हैं। इसी प्रकार विभिन्न राज्यों के विशेष शहरों में ४३ निगरानी केन्द्र भी स्थापित किये गये हैं। इसके अतिरिक्त बम्बई में स्थापित एड्स अनुसंधान एवं नियंत्रण केन्द्र है।

○ इस परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीय एड्स कार्यक्रम की शुरूआत एक सुखद संयोग ही है। इस कार्यक्रम पर अनुमानित व्यय की राशि एक अरब डालर है, जिसमें से ८५० लाख डॉलर विकास शाखा (I D A) द्वारा आसान किस्तों पर ऋण के रूप में दिया जायेगा। यह ३५ वर्षीय ऋण होगा, जिसका मामूली दर से ब्याज चुकाना होगा। एशिया में एड्स की रोकथाम के लिए बैंक द्वारा दिया जाने वाला यह पहला ऋण है और यह विश्वस्तर पर दूसरी स्वतंत्र एड्स योजना होगी। बची हुई राशि विश्व स्वास्थ्य संगठन (W H O) तथा भारत सरकार द्वारा उपलब्ध करायी जायेगी। इसमें विश्व स्वास्थ्य संगठन का १५ लाख डॉलर का तथा भारत सरकार का १३५ लाख डालर का योगदान होगा। विश्व स्वास्थ्य संगठन तकनीकी सहायता के अतिरिक्त परामर्शदाताओं की नियुक्ति भी करेगा।

इस कार्यक्रम की विशेषता—यह एक दीर्घकालीन योजना (५ वर्ष की) होगी, जिसमें प्रतिबद्ध तथा विशिष्ट लोगों की सेवाएँ ली जायेंगी। कार्यक्रम के क्रियान्वयन तथा देख-रेख के लिए एक शीर्ष निकाय की व्यवस्था है, जिसमें अन्य सदस्यों के अलावा वित्त मंत्रालय का एक प्रतिनिधि भी होगा। यह प्रतिनिधि उन मामलों का निपटारा करेगा जो योजना-निदेशक के अधिकार क्षेत्र से बाहर की होगी।

इस कार्यक्रम के मुख्य घटक निम्नलिखित हैं—

○ प्रत्येक राज्य तथा केन्द्र शासित प्रदेश में एड्स कक्ष की स्थापना करना।

○ एड्स के बारे में जन-शिक्षा को प्रोत्साहन देना।

○ रक्त-आपूर्ति में सुरक्षा के उपायों को मजबूत करना। इसके अतिरिक्त निम्न बातों पर ध्यान दिया जायेगा—

○ प्रदत्त रक्त की विशेष जाँच करना।
  पेशेवर रक्तदाताओं की भूमिका को कम करना।

○ चिकित्सकों तथा सामाजिक कार्यकर्त्ताओं को विशेष प्रशिक्षण देना।

○ रतिरोगों की रोकथाम के उपाय करना।

○ प्रशिक्षित चिकित्सकों का एक ऐसा दल तैयार करना जो अधीनस्थ स्तर के चिकित्सकों को प्रशिक्षित कर सके तथा एड्स सम्बन्धी ज्ञान का प्रचार-प्रसार कर सके।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ इसकी सही जानकारी ही इसका बेहतरीन बचाव है।

○ आइए मिल-जुल कर काम करें और भारत को एड्स-मुक्त क्षेत्र बनायें।

राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम

भारत द्वारा चलाया गया राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम किसी भी संचारी रोग के विरुद्ध चलाया जाने वाला विश्व का सबसे बड़ा कार्यक्रम है।

कालाजार नियन्त्रण कार्यक्रम

देश में कालाजार की स्थिति के निरीक्षण का उत्तरदायित्व राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम निदेशालय का है।

बिहार और पश्चिमी बंगाल में कालाजार एक गम्भीर जनस्वास्थ्य समस्या बन गई है। समस्त प्रभावित क्षेत्रों में नियंत्रण सम्बन्धी नीतियों को कारगर बनाने हेतु वित्तीय कठिनाइयों को ध्यान में रखकर सरकार द्वारा कालाजार की घटनाओं के आधार पर क्षेत्रों की प्राथमिकता निर्धारित की गई है।

राष्ट्रीय फाइलेरिया नियन्त्रण कार्यक्रम

राष्ट्रीय फाइलेरिया नियंत्रण कार्यक्रम १९५५ से चल रहा है। अनुमानतः ३६·७ करोड़ लोगों के फाइलेरिया रोग से ग्रस्त होने की सम्भावना है। ९ करोड़ ९० लाख लोगों में इस रोग के लक्षण दिखलायी पड़े हैं तथा २·५ करोड़ लोगों के रक्त में इस रोग के जीवाणु मौजूद हैं।

इस कार्यक्रम में निम्नलिखित बिन्दु शामिल हैं—

○ मच्छर-रोधी और लार्वा-रोधी उपाय करना।

○ माइक्रोफाइलेरिया से पीड़ित रोगियों का पता लगाने तथा उनके उपचार के लिए फाइलेरिया क्लीनिक्स की स्थापना करना।

○ भूमिगत नालियों की विधिवत् व्यवस्था करना।

यह कार्यक्रम केवल शहरी क्षेत्रों में चलाया जा रहा है। यह कार्यक्रम १३ राज्यों तथा ४ संघराज्य क्षेत्रों में चलाया जा रहा है, जिनमें फाइलेरिया के रोगी अधिक पाये जाते हैं। देश भर में २०४ फाइलेरिया नियंत्रण यूनिट, २७ फाइलेरिया सर्वेक्षण यूनिट और १८६ फाइलेरिया नियंत्रण क्लीनिक हैं।

राष्ट्रीय दृष्टिहीनता नियन्त्रण कार्यक्रम

देश के लगभग ३०० लाख व्यक्ति नेत्र रोग से पीड़ित हैं। इनमें से १२० लाख अंधे हैं और १०० लाख व्यक्तियों को ऑपरेशन द्वारा ठीक किया जा सकता है।

यह शत-प्रतिशत केन्द्र द्वारा प्रायोजित कार्यक्रम है। १९७६ में शुरू किये गये राष्ट्रीय अंधता नियंत्रण कार्यक्रम में जन-संपर्क के माध्यमों और शिक्षा

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विधियों के विस्तार द्वारा आँखों की देखभाल सम्बन्धी गहन स्वास्थ्य शिक्षा देना, सचल ईकाइयों और कैंपों द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में नेत्र के लिए सेवाओं को पहुँचाना और सामान्य स्वास्थ्य सेवाओं के अभिन्न अंग के रूप में नेत्रों की देखभाल के लिए स्थायी आधारभूत ढाँचे की स्थापना करना है। इस कार्यक्रम में १९८१-८२ से मोतियाबिन्दु के ऑपरेशन को उच्च प्राथमिकता दी जा रही है।

राष्ट्रीय कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में चलती-फिरती नेत्र इकाईओं के माध्यम से लोगों को नेत्र-चिकित्सा तथा आँखों की देखभाल के बारे में जानकारी देना तथा जनस्वास्थ्य की वर्तमान प्रणाली के अन्तर्गत आँखों की चिकित्सा सुविधाओं के लिए बुनियादी ढाँचा तैयार करना है।

देश के विभिन्न भागों में उपकरणों से युक्त ८० चलती-फिरती ईकाइयाँ हैं। प्रत्येक इकाई प्रति वर्ष १,५०० से २,००० तक ऑपरेशन करती हैं। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत जिला अस्पतालों के विस्तार की दृष्टि से उनमें १३० जिला ईकाइयाँ खोली गईं। ६० मेडिकल कालेजों के नेत्र-चिकित्सा विभागों को विकसित कर उन्हें सामुदायिक नेत्र इकाई केन्द्र बना दिया गया है। ९ नेत्र-विज्ञान संस्थानों को क्षेत्रीय संस्थान का दर्जा दिया जा चुका है। चलती-फिरती ईकाइओं के अतिरिक्त ४०४ अस्पतालों में ऐसी सुविधा उपलब्ध कराई जा रही है, जिससे कि प्रत्येक जिले में एक नेत्र इकाई प्रारम्भ की जा सके। ९ नेत्र-संस्थानों और 'डा० राजेन्द्रप्रसाद नेत्र-विज्ञान संस्थान' नई दिल्ली को प्रशिक्षित कर्मियों के विशेष प्रशिक्षण, अनुसंधान और विशेष सन्दर्भ सेवाओं हेतु मदद प्रदान की जा रही है।

राष्ट्रीय क्षयरोग नियन्त्रण कार्यक्रम

यह रोग सार्वजनिक स्वास्थ्य की एक और गम्भीर समस्या है। भारत की कुल जनसंख्या का १·५ % भाग फेफड़ों की टी० बी० (क्षयरोग) से पीड़ित है। आज भारत के ३७८ जिलों में जिला क्षयरोग केन्द्र कार्यरत हैं। शहरी क्षेत्रों में ३३० क्षयरोग क्लीनिक भी काम कर रहे हैं। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र भी क्षयरोग का पता लगाने और इसके इलाज सम्बन्धी कार्य-क्रमों में अपना योगदान दे रहे हैं। राष्ट्रीय क्षयरोग संस्थान, बंगलूर (स्थापना १९५९ में) चिकित्सा तथा अर्धचिकित्सा अधिकारियों को प्रशिक्षण प्रदान करने के साथ-साथ राष्ट्रीय क्षयरोग कार्यक्रम पर भी नजर रखता है।

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत चल रही आवश्यक गतिविधियों का पिछले ५ वर्षों में पर्याप्त विस्तार हुआ है। यदि पारस्परिक विधि से क्षयरोग का उपचार किया जाये तो इसमें कम से कम १२ से १८ माह तक का समय लगता है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'रिफैम्पिसिन' तथा 'पाइराजिनामाइड' युक्त अल्प अवधि की केमोथिरेपी दवाओं को अब राष्ट्रीय क्षयरोग नियंत्रण कार्यक्रम के अन्तर्गत जिला स्तर पर विभिन्न चरणों में लागू किया जा रहा है।

○ अब तक २१२ जिलों में इस उपचार पद्धति को लागू किया जा चुका है।

राष्ट्रीय घेंघा रोग (Goitre) नियन्त्रण कार्यक्रम

स्वास्थ्य की निरन्तर चली आ रही एक और समस्या हिमालय क्षेत्र में पाया जाने वाला घेंघा रोग है। हाल के गहन अध्ययनों द्वारा सिद्ध हो चुका है कि देश के लगभग १७ करोड़ लोग आयोडीन की कमी से उत्पन्न होने वाली ऐसी बीमारियों के शिकार हैं। १२२ जिले ऐसे पाये गये हैं, जो आयोडीन की कमी से उत्पन्न रोगों के प्रकोप के क्षेत्र हैं। अनुमानतः भारत की ४·५ करोड़ जनता इस बीमारी से किसी न किसी रूप में ग्रसित है।

राष्ट्रीय घेंघा रोग नियंत्रण कार्यक्रम अब प्राथमिकता के आधार पर चलाया जा रहा हैं। सरकार ने १९९२ तक के समय में पूरे देश में प्रयुक्त होने वाले नमक को आयोडीन युक्त करने का लक्ष्य निर्धारित किया है। इस कार्यक्रम को विभिन्न चरणों में पूरा किया जायेगा।

राष्ट्रीय घेंघा रोग नियंत्रण कार्यक्रम के प्रभावी कार्यान्वयन तथा उस पर नजर रखने के लिए राज्य तथा केन्द्र शासित प्रदेशों को एक-एक घेंघा नियंत्रण सेल खोलने के निर्देश दिये गये हैं। १७ राज्यों/केन्द्र-शासित प्रदेशों में ऐसे सेल स्थापित किये जा चुके हैं।

रोग-निरोधक टीका कार्यक्रम

सरकार ने १९७८ में रोग-निरोधक टीके लगाने का व्यापक कार्यक्रम शुरू किया, जिससे डिफ्थीरिया, काली खाँसी, टिटनस और तपेदिक से होने वाली बाल-मृत्यु पर नियंत्रण किया जा सके। ये टीके शिशुओं तथा गर्भवती महिलाओं को लगाये जाते हैं। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत पोलियो के टीके लगाने की शुरूआत १९७९-८० में, टिटनेस टॉक्साइड (स्कूली बच्चों को) १९८०-८१ में, बी० सी० जी० १९८१-८२ में तथा खसरे के टीके की १९८५-८६ में हुई।

रोग-निरोधक टीके लगाने का काम वर्तमान स्वास्थ्य रक्षा-प्रणाली के अन्तर्गत ही किया जाता है। ये सेवाएँ शहरी इलाकों में, अस्पतालों, औषधालयों मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य केन्द्रों में तथा ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों तथा उपकेन्द्रों में उपलब्ध हैं। स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता ऐसे गाँवों और उपकेन्द्रों में टीका लगाने का विशेष प्रबन्ध करते हैं। जो स्वास्थ्य केन्द्रों से दूर हैं, वे स्वयं जाकर टीके लगवाते हैं। आज यह कार्यक्रम बहुत आगे बढ़ चुका है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिवार-नियोजन कार्यक्रम

भारत की जनसंख्या-स्थिति गहन चिन्ता का विषय है, क्योंकि समग्र सामाजिक-आर्थिक विकास पर इसके गम्भीर प्रभाव पड़ते हैं। राष्ट्र को आज जिन अत्यधिक कठिन समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है, उनमें से एक है—जनसंख्या में वृद्धि की उच्चतम दर।

परिवार-कल्याण कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य प्राथमिक आधार पर सुनियोजित और उत्तर-मातृत्व उपलब्ध कराना है, जिसमें माता-पिता के दो बच्चों का सीमित परिवार लड़का या लड़की अथवा दोनों का चुनाव करके परिवार नियोजन की किसी भी पद्धति को स्वेच्छा से अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना है। ये परिवार स्वास्थ्य-सेवाएँ पूर्ण स्वस्थ प्रजनन-पद्धति को अपना कर उपलब्ध कराई जा रही हैं।

लोगों को विभिन्न गर्भ-निरोधी पद्धतियों को अपनाने और सामाजिक एवं सांस्कृतिक सीमाओं को छोड़ने की जानकारी दी जा रही है। इसके परिणाम स्वरूप पिछले कुछ वर्षों के गर्भ-निरोध के विभिन्न साधनों को अपनाने वालों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई है।

मातृ तथा शिशु स्वास्थ्य सुरक्षा कार्यक्रम (एम० सी० एच०), जो परिवार-कल्याण कार्यक्रम का एक अभिन्न और महत्त्वपूर्ण भाग है, को सातवीं योजना में उच्च प्राथमिकता दी गई। सातवीं योजना में शिशु-मृत्युदर को ९० प्रति हजार पर लाने तथा उसी के अनुरूप मातृ-मृत्यु दर को कम करने का लक्ष्य रखा गया था। गर्भवती महिलाओं और शिशुओं के स्वास्थ्य-प्रतिरक्षण की विश्वव्यापी लक्ष्यपूर्ति की दिशा में विश्वव्यापी प्रतिरक्षण कार्यक्रम (यू० आई० पी०) १९८५ में प्रारम्भ किया गया है। यह इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है। इस कार्यक्रम के तहत देश के सभी जिलों को शामिल किया गया है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिशिष्ट २

विभिन्न रोगों में भोजन-व्यवस्था एवं पथ्यापथ्य

दमा तथा अन्य श्वासरोगों की स्थिति में

○ दमा तथा अन्य श्वासरोगों की स्थिति में अपने भोजन पर विशेष ध्यान देना चाहिए और ऐसा कोई भी खाद्य पदार्थ नहीं खाना चाहिए जिससे एलर्जी का प्रभाव हो और गैस बने। दमा के रोगियों को रात्रिकालीन भोजन बिलकुल हलका तथा सोने से तीन चार घंटे पहले लेना चाहिए।

○ ऐसे रोगियों के लिए शहद तथा लहसुन विशेष उपयोगी रहता है। सप्ताह में एक बार उपवास लाभदायक रहता है।

○ श्वासरोगों में विटामिन-सी (सीलिन) काफी लाभदायक है। ऐसे रोगियों को प्रतिदिन ३ गोली (१५०० मि० ग्रा०) नाश्ता में, दोपहर के भोजन तथा रात्रि-भोजन में एक-एक कर कुछ दिनों के लिए लेना चाहिए।

○ इन रोगों में कब्ज तथा पेट की गैस दूर करने के लिए विशेष ध्यान देना चाहिए। प्रतिदिन ८-१० गिलास पानी पीना चाहिए। परन्तु भोजन के साथ पानी पीना उपयुक्त नहीं।

○ तम्बाकू का सेवन वर्जित।

○ दूषित वातावरण से अपने को दूर रखें।

याद रखिये—पाश्चात्य चिकित्सक भी अब इस तथ्य को मानने लगे हैं कि कोई भी ऐसी औषधि नहीं जो दमा को ठीक कर सके। उनका विचार है कि एलर्जी दूर करने वाले भोजन पदार्थों को न खाने से दमा को दूर रखा जा सकता है।

सिरदर्द/माइग्रेन के रोगियों में

○ ऐसे रोगियों को कोई ऐसा भोजन नहीं खाना चाहिए जिससे एलर्जी हो। ○ भोजन में ऐसे पदार्थ लेने चाहिए जिनमें विटामिन 'डी' तथा 'ई' पर्याप्त मात्रा में हों। ○ शराब, चाय का प्रयोग बिलकुल बंद कर दें या बहुत कम करें। ○ अटैक की स्थिति में जहाँ तक हो सके अंधेरे किन्तु हवादार तथा शान्त कमरे में पर्याप्त समय तक आराम करें। ○ कई बार स्नान तथा खुली हवा में सैर करें।

गैस-ट्रबल में भोजन-व्यवस्था

○ जिन खाद्य पदार्थों के खाने से गैस की शिकायत हो, ऐसे पदार्थों का त्याग करना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ गैस वाले व्यक्ति को कब्ज दूर करने का उपाय करना चाहिए।

○ तली हुई वस्तुएँ, मिर्च-मसाले वाले पदार्थों को नहीं खाना चाहिए।

○ भोजन को अच्छी तरह चबा-चबाकर खाना चाहिए तथा एक समय में भरपेट नहीं खाना चाहिए। थोड़े-थोड़े समय के अन्तराल पर कुछ हलकी वस्तु जैसे फल, बिस्कुट या थोड़ा-सा ठंडा दूध लेना चाहिए।

नोट—गैस के रोग में गर्म दूध व दही कम लेना चाहिए, क्योंकि यह गैस उत्पन्न करते हैं।

○ भोजन के साथ पानी नहीं पीना चाहिए। हाँ, भोजन के मध्य में थोड़ा-सा पानी लिया जा सकता है। भोजन से आधा घंटे पूर्व तथा एक घंटे बाद पानी पीना चाहिए। रात्रि का भोजन सोने से २-३ घंटे पहले लेना चाहिए और रात्रि का भोजन लेने के बाद थोड़ा-सा चलना-फिरना चाहिए।

○ गैस वाले रोगी के लिए खाने के साथ लहसुन की कुछ कलियाँ तथा भोजन में अंकुरित दालों का सेवन गुणकारी रहता है।

याद रखिये—चिंता तथा अशांति बदहजमी तथा गैस के प्रमुख कारण हैं अतः इनसे यथाशक्य दूर रहना चाहिए।

जिगर के रोगियों में भोजन-व्यवस्था

○ मैदा व खोया की वस्तुएँ, चीनी, आलू-कचालू तथा तले हुए पदार्थ बिलकुल न खायें। जहाँ तक हो सके नीबू, प्याज, अदरक, ककड़ी, मूली, मौसम्मी तथा संतरा लें।

○ सुबह खुली हवा में सैर एवं हलका व्यायाम करें।

शरीर पर शोथ हो जाने पर—

ऐसे रोगी को—भोजन में नमक कम और कार्बोहाइड्रेट (गेहूँ, चावल, ग्लूकोज, चीनी) तथा प्रोटीन युक्त पदार्थ (दाल, अण्डे की सफेदी, दूध) प्रचुर मात्रा में दें। लेकिन बेहोशी का प्रथम लक्षण प्रकट होते ही प्रोटीन वाले पदार्थ देना रोक दें। ये रोगी शराब, शराब मिले टॉनिक्स, अफीम, लार्जेक्टिल (बेहोशी की अंग्रेजी दवा) कभी न लें।

उच्च रक्तचाप तथा भोजन

अधिक मोटे तथा भारी शरीर के रोगी को कम कैलोरी वाला भोजन लेना चाहिए; जैसे—घी, तले पदार्थ, अण्डे, मछली, चर्बी वाला मांस, मक्खन, शुष्क मेवे—बादाम, अखरोट, काजू, नारियल; आलू, चावल, मक्की आदि स्टार्च वाले पदार्थ बहुत ही कम मात्रा में अथवा बिल्कुल ही न दें। हरी सब्जियाँ तथा ताजे फल ले सकते हैं। उच्च रक्तचाप के रोगी को भोजन में 'नमक' बिलकुल बंद कर दिया जाता है जो कि उचित नहीं होता है। यदि

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ रोगी इसका पालन करते भी हैं तो भोजन अरुचिकर होने से उनका शरीर कमजोर पड़ने लगता है। रोगी को लैसिक्स जैसी डचूरेटिक्स देने के कारण मूत्र के बार-बार आने से वैसे भी शरीर में नमक की कमी हो जाती है। यदि नमक बिलकुल ही बंद करा दिया जाये तो रोगी को अत्यधिक थकान का आभास होने लगता है और कमजोरी आने लगती है। अतः नमक को भोजन में बिलकुल बंद कराने के बजाय न्यूनतम मात्रा में लेने की सलाह देनी चाहिए।

हृदयशूल (Angina Pectoris) में रोगी की भोजन-व्यवस्था

हृदयशूल के रोगी को इस बात के लिए आश्वस्त कराना बहुत आवश्यक है कि उसका रोग इतना जानलेवा नहीं है कि उससे उसकी मृत्यु हो जायेगी। ऐसे रोगी को कुछ परहेज का पाबन्दी से पालन करने को कहा जाये। रोगी के शरीर के भार को कम किया जाना नितान्त आवश्यक है। ऐसे रोगी को धूम्र-पान तथा मदिरा सदैव के लिए छोड़ देनी चाहिए। अधिक परिश्रम यहाँ तक कि अधिक दूर तक चलना भी ऐसे रोगी के लिए उचित नहीं है। उन्हें विश्राम अधिक करना चाहिए।

○ अधिक चाय, कॉफी तथा किसी प्रकार के तम्बाकू का प्रयोग नहीं करना चाहिए। भोजन बिना चिकनाहट के हो। अति आवश्यक होने पर केवल सब्जी में अल्पमात्रा में स्नेह का प्रयोग किया जा सकता है।

○ मक्खन, अण्डा, मांस, चर्बी बिलकुल न लें। स्वच्छ ताजे फल तथा सब्जियों का प्रयोग करें।

मधुमेह में भोजन-व्यवस्था

○ प्रत्येक प्रकार के मधुमेह के रोगी को अपने भोजन में कार्बोहाइड्रेट की मात्रा न्यूनतम रखनी चाहिए। मधुमेह के रोगी को कुछ विशेषज्ञों द्वारा अधिकतम वसा (High fat diet) वाले भोजन का परामर्श दिया जाता है। किन्तु इससे मोटापा आदि एवं रक्त में वसा की मात्रा के बढ़ने का भय होता है। इस कारण मूल भोजन 'प्रोटीन' ही मधुमेह के रोगी के लिए उत्तम माना गया है। मधुमेह के रोगी पर भोजन सम्बन्धी ऐसे प्रतिबन्ध न लगायें जिसका वह पालन न कर सके। वह अपने सामान्य भोजन की मात्रा को कम से कम कई भाग में बाँट लें तथा दिन में ३-३ घण्टे के अन्तर पर कई बार भोजन कर सकता है।

○ निरीक्षणों एवं परीक्षणों से जब किसी रोगी में मधुमेह का निदान हो जाये तो कुछ भोज्य पदार्थ तथा पेय उसके लिए पूर्णतः निषिद्ध कर दिये जायें; जैसे—'शुगर' (शक्कर, गुड़, चीनी, बूरा, खाण्ड), मधु, किसी प्रकार की मिठाई, चाकलेट, आइसक्रीम तथा ऐसे पदार्थ जिसमें शक्कर का प्रयोग किया हो तथा शुष्क मेवे (Dry fruits), मदिरापान आदि।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन पदार्थों के सेवन में कोई छूट न दी जाये। मक्खन, घी और तेलों का प्रयोग भोजन में न्यूनतम मात्रा में व कभी-कभी ही किया जा सकता है।

○ मधुमेह के रोगी को भूख सामान्य से अधिक लगती है, जो इस रोग का लक्षण है। अतः वह कुछ भोजन तथा पेय पदार्थ आवश्यकतानुसार ले सकता है। जैसे—कम मात्रा में दूध एवं बिना चीनी की चाय एवं कॉफी जिसमें सेक्रीन डाली जा सकती है। सोडा, नारियल का पानी, बिना क्रीम-मक्खन वाला दूध (सेपरेटिड मिल्क), शोरवा, सब्जियों का रस, मूली, शलजम, गाजर, टमाटर, पपीता, तरबूज, मीठी मौसम्मी, नींबू, संतरा आदि। मीठे फलों को न्यून मात्रा में लेना हितकर है। शोरबा (Soup) के स्थान पर सलाद उत्तम है।

○ भोजन में सभी प्रकार की दालें ली जा सकती हैं। चपाती तथा चावल की मात्रा प्रत्येक भोजन में कम कर दें।

○ मांसाहारी व्यक्ति उत्तम मांस तथा मछली का प्रयोग दोनों समय के भोजन के साथ कर सकते हैं। किन्तु इन दोनों में चिकनाई की मात्रा अधिक नहीं होनी चाहिए।

○ शाकाहारी रोगी के भोजन में हरी पत्तियों वाली शाक-सब्जियों की मात्रा अधिकतम होनी चाहिए।

○ आलू, शकरकंद, रतालू, अरबी आदि का पूर्ण निषेध।

○ साधारण पाचक भोजन अति उत्तम है।

नोट—○ वसा का सेवन कम करें तथा शक्कर का सेवन किसी भी रूप में न करें।

याद रखिये—मधुमेह रोग धीरे-धीरे और काफी लम्बे समय तक बढ़ते-बढ़ते होता है और बाद की अवस्था में प्रायः असाध्य हो जाता है। ऐसी अवस्था में औषधि-सेवन की अपेक्षा संतुलित एवं पथ्य आहार का सेवन तथा अपथ्य पदार्थों का सर्वथा त्याग करना ही उपयोगी एवं हितकारी सिद्ध होता है।

निम्नलिखित सब्जियाँ तथा फल मधुमेह में लाभकारी हैं—

○ तुलसी की पत्तियाँ—हैदराबाद में स्थित खाद्य एवं पोषण विभाग ने शोध एवं अनुसंधान के आधार पर तुलसी की पत्तियों में कुछ ऐसे प्रभावकारी तत्त्व पाये जाते हैं जो रक्त में शर्करा की मात्रा को नियंत्रित करते हैं।

○ मेथी का दाना—नवीन शोधों से यह ज्ञात हुआ है कि मेथी मधुमेह के रोगियों की रक्त में शर्करा की मात्रा को भी नियंत्रित करता है। यह रक्त में शर्करा के स्तर को बढ़ने से रोकता है। यदि साधारण मधुमेह हो तो केवल ६ ग्राम (लगभग ½ तोला) मेथी के दाने का चूर्ण बनाकर रात में जल में भिगो दें और सुबह उठकर छान कर पियें।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ **प्याज एवं लहसुन**—रक्तशर्करा के स्तर को नियन्त्रित करने में प्याज और लहसुन भी लाभदायक पाया गया है। साथ ही यह भोजन के पचन-पाचन में सहायता करता है।

○ **ककड़ी**—ककड़ी में इन्स्यूलिन से मिलता हुआ एक पदार्थ पाया जाता है।

○ **करेला**—करेला मधुमेही व्यक्ति के लिए रामबाण औषधि है। आधुनिक वैज्ञानिकों ने इसकी गोलियाँ बना लीं हैं। जब तक यह गोलियाँ बाजार में उपलब्ध नहीं होतीं तब तक करेले का कम से कम एक चाय की चम्मच भर रस दिन में २ बार अवश्य सेवन करना चाहिए।

○ **जामुन की गुठली या जामुन**—१०० ग्राम जामुन प्रातः १० बजे और सायं ४ बजे अवश्य खाना चाहिए। जामुन का मौसम न होने की स्थिति में इसकी गुठली पिसवा कर चूर्णरूप में पानी से निगल लेना चाहिए। इससे रक्त में शर्करा का नियंत्रण होता है।

○ **नीबू और खट्टे फल**—शोधों से यह ज्ञात हुआ है कि मैंगनीज नामक खनिज इन्स्यूलिन के उत्पादन में अधिक सहयोग देता है। यह अधिकतर नीबू के वंशज (Citrus fruits), यथा—नीबू, सन्तरा, मौसम्मी, माल्टा, नारंगी में पाया जाता है।

○ **शाकाहारी भोजन सबसे उत्तम**—'मिनेसोटा' विश्वविद्यालय अमरीका के डाक्टर डेविड स्नीडेन, जो महामारी विशेषज्ञ हैं, ने २५,००० व्यक्तियों के आहार सम्बन्धी आदतों का २१ वर्षों तक अध्ययन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला कि मांसाहारी भोजन जितना ही कम प्रयोग किया जाय उतना अच्छा है। क्योंकि इसके सेवन से मधुमेह रोग हो जाने की सम्भावना रहती है।

व्यसनों का त्याग—

○ **कॉफी**—फिनलैण्ड के वैज्ञानिकों ने १३ देशों के मधुमेह सम्बन्धी आकड़ों के अध्ययन के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला है कि कॉफी पीने वाले व्यक्तियों को मधुमेह हो जाने की पर्याप्त सम्भावना रहती है। शोधों द्वारा यह भी प्रमाणित हो चुका है कि जो स्त्रियाँ गर्भावस्था में सुबह-सुबह कॉफी का सेवन करतीं हैं, उनके बच्चों को जन्म से ही मधुमेह रोग लग जाता है।

○ **धूम्रपान**—धूम्रपान से १५ मिनट पश्चात् रक्तशर्करा का स्तर २० से ४० मिलीग्राम प्रतिशत बढ़ जाता है। धूम्रपान का विनाशकारी प्रभाव विटामिन 'सी' पर भी पड़ता है, जिससे शरीर की रोग-प्रतिरोधक क्षमता निरन्तर घटती जाती है।

○ **मदिरापान**—मदिरापान से भी यकृत प्रभावित होता है और उसमें ग्लाइकोजिन के रूप में श्वेतसार भंडारण की क्षमता घटती है, जिससे रक्त में 'रक्तशर्करा' का अधिक स्तर बना रहता है। मदिरा पीते रहने से मूत्र का

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निष्कासन अधिक होता है जिससे जलीय घुलनशील विटामिन मूत्र द्वारा बाहर निकल जाते हैं। जिनमें विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स श्वेतसार के चयापचय के लिये अति आवश्यक है।

भोजन के लिए निषिद्ध पदार्थ—

○ ग्लूकोज, मिश्री, चीनी, जैम, जैली, गुड़, मिठाई, आइसक्रीम, केक, पेस्ट्रीज, चॉकलेट, ओवल्टीन, बोर्नविटा, हार्लिक्स, कोको, न्यूट्रामूल या मीठे बिस्कुट।

○ तले हुए पदार्थ (पूरी, पराठा, पकौड़ी, समोसा, दालमोठ, मठरी, पापड़ी, तले हुए चिप्स), मैगी या चीज़ एवं अन्य प्रक्रियत (Processed) खाद्य पदार्थ।

○ सूखे मेवे, बादाम, मूंगफली, तिल, खजूर आदि।

○ आलू, शकरकन्द, घुंइया, जिमीकन्द, साबूदाना, सिंघाड़ा, कटहल के बीज, राजमा।

○ केला, शरीफा, गन्ना, नारियल या गरी, चीकू, आम, अंगूर।

○ अल्कोहल युक्त पेय पदार्थ।

○ व्यावसायिक ठंडे पेय।

यह आवश्यक है कि आप छक कर केवल २ बार भोजन न करें, बल्कि प्रत्येक ४ घण्टे के उपरान्त खायें ताकि रक्तशर्करा का स्तर अधिक न बढ़ने पाये।

पीलिया रोग में भोजन-व्यवस्था

○ रोग की अवस्था में (जब तक सीरम बिलिरुबिन बढ़ा रहे) तली हुई चीजें, दूध, दाल (प्रोटीन युक्त खाद्यपदार्थ) आदि का पूर्ण परहेज रखना चाहिए।

○ हरी सब्जियाँ, मूली, गन्ने का रस, नीबू, ग्लूकोज (पानी में घोल-कर), आलू एवं अन्य शर्करा युक्त पदार्थों का अधिक सेवन करना चाहिए।

○ यदि रोग व्यापक रूप से फैल रहा हो तो पानी उबालकर पीना चाहिए। कच्चा दूध न पियें।

○ जहाँ तक सम्भव हो घर का ही ताजा, हलका, स्वच्छ और सुपाच्य भोजन करें।

○ रोग की अवधि में रोगी को शारीरिक अथवा मानसिक परिश्रम नहीं करना चाहिए।

गन्ने का रस अथवा लस्सी आदि की दूकानों पर सफाई की कमी, गंदगी की अधिकता, छूत एवं संक्रमण के कारण उक्त रोग अधिक फैलता है। अतः सफाई का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ रोग के प्रारम्भ से तथा बाद तक भी कई सप्ताह तक भोजन में कैलोरीज की तीन हजार मात्रा तक होनी चाहिए।

○ फल रस, ग्लूकोज आदि से कार्बोहाइड्रेट की कमी पूरी की जाती है। भोजन में प्रोटीन की मात्रा पर्याप्त होनी चाहिए। मूली तथा मूली का शाक लाभप्रद है।

○ खाने में घी या अन्य चिकनाई बिलकुल बंद न करें। सब्जी का छौंक लगाने में थोड़ा-सा घी अथवा तेल इस्तेमाल कर सकते हैं। सिंकी हुई डबल रोटी पर भी एक छोटा चम्मच मक्खन लगाकर दे सकते हैं।

भोजन में परहेज—रोगी को भोजन में अधिक घी, तेल, तला हुआ भोजन, मिर्च, मसाले, अण्डा, साबुत दालें, मीट, पापड़, चटनी, अचार, मेवा, नमकीन, चाय, कॉफी, बाजार के पेय पदार्थ बिलकुल न दें। बीमार व्यक्ति के लिए किसी भी प्रकार की नशीली चीजों (शराब, सिगरेट, पान-मसाला, तम्बाकू, पान) का प्रयोग बहुत ही हानिकारक होता है। सब्जियाँ बनाने में हल्दी का प्रयोग करें। ऐसी धारणा है कि पीलिया के रोगी को हल्दी नहीं देना चाहिए, जब कि बहुत से परीक्षणों के द्वारा यह साबित हो चुका है कि हल्दी शरीर को नुकसान नहीं पहुँचाती है।

○ इस बात का विशेष ध्यान रखें कि भोजन बिलकुल ताजा एवं स्वच्छ हो। यदि किसी कारण से होटल आदि में भी खाना पड़े तो सलाद, कच्ची सब्जियाँ, दूध या दही से बनी अन्य वस्तुएँ न खायें। बाजार की बर्फ बिलकुल प्रयोग न करें। गन्ने का रस वैसे तो पीलिया रोगी के लिए लाभकारी होता है, लेकिन यदि गन्ना ठीक से साफ करके रस निकाला जाये और बाजार की बर्फ भी उसमें न डलवायें तभी रोगी को यह रस दें। पीलिया रोगी को ग्लूकोज भी अधिक मात्रा में न दें। इससे भूख कम हो जाती है और पेट भी खराब होने का डर रहता है।

जब रोग का असर कम होने लगे (भूख अधिक लगने पर) तो रोगी को दाल का पानी और बिना घी की रोटी भी दे सकते हैं। पीने का पानी साफ होना चाहिए; यदि हो सके तो पानी उबला हुआ तथा ताजा प्रयोग करें।

यदि डायबिटीज के रोगी को पीलिया हो जाये—तो ऐसे रोगी को मीठा भोजन न दें। इन मरीजों को भोजन में एक छोटी चपाती, थोड़े से उबले हुए चावल, कम मीठे बिस्कुट (मेरी अथवा अरारोट के बिस्कुट) दे सकते हैं। यदि रोगी का वजन अधिक नहीं है तो उसे उबला हुआ एक आलू, आधा केला, बस-बारह दाना अंगूर तथा आधा चीकू भी दे सकते हैं। साबूदाना, ग्लूकोज, गन्ने का रस, नीबू का मीठा शरबत या अन्य मीठे शरबत न दें। लौकी, तोरई, डिण्डा आदि सब्जियाँ अधिक मात्रा में दें। शेष भोजन सामान्य पीलिया के रोगियों के समान ही दें।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

याद रखिये—रोगी की झाड़-फूंक न करवायें और रोगी के शरीर की स्वच्छता का भी ध्यान रखें।

मलेरिया ज्वर में आहार-व्यवस्था

○ इस ज्वर में उपवास करना आवश्यक नहीं है। ज्वर के वेग काल में उपवास कराना चाहिए। वेग न रहने पर हलका एवं सुपाच्य आहार दें।

○ गेहूँ, जौ की रोटी, मूँग की दाल का पानी, बथुआ, करेला, परवल, पपीता आदि खाने को देना चाहिए। अगहनी या साठी चावल दे सकते हैं।

○ नारंगी, सेव, खजूर, अनार, मुनक्का, किशमिश तथा गो-दुग्ध हितकारी हैं।

○ मांसाहारी व्यक्तियों को मुर्गा, तीतर का मांस दिया जा सकता है।

आन्त्रिक ज्वर में आहार-व्यवस्था

आन्त्रिक ज्वर (टाइफाइड फीवर) में जो सम्भावित उपद्रव होते हैं, उनसे बचने के लिए समुचित पथ्य की व्यवस्था, शरीर की नियमित सफाई एवं उत्तम परिचर्या का प्रबन्ध करना चाहिए।

प्यास और जलन की अधिकता में मुसम्मी का रस थोड़ा-थोड़ा कर पिलाते रहना चाहिए। अथवा नारियल का पानी ४-६ चम्मच कई बार पिलाते रहें। दूध पीने को दें। मीठा सन्तरा, मुसम्मी, सेव इनमें से किसी एक का रस १-२ बार नित्य पिलाया जा सकता है। चौथे सप्ताह में यदि ज्वर रहे तो पूर्ववत् दूध एवं फलों का रस देते रहें। यदि ज्वर कम हो और रोगी को क्षीणता प्रतीत हो रही हो तो धान का लावा, साबूदाना, हॉर्लिक्स आदि दिये जा सकते हैं।

○ ज्वर समाप्त हो जाने पर सबसे प्रथम २-३ भोजन में परवल देना चाहिए। इसके लिए परवल का छिलका और कड़ा बीज निकाल कर पतला चीर कर हल्दी, धनिया, जीरा, मरिच और इलाइची का महीन मसाला डाल रसेदार सब्जी बनाकर नीबू निचोड़ कर खाने को दें। इसके अभाव में मूँग की दाल का पानी दिया जा सकता है।

○ २-३ वक्त के बाद मुलायम रोटी का छिलका (४-६ घंटे पूर्व गूँथे आँटे की) और मूँग की दाल तथा परवल दें। अदरक और नीबू से रुचि बढ़ती है।

सावधान—○ ज्वर काल में अन्न का सेवन अति हानिकारक है।

○ मानसिक और शारीरिक दृष्टि से पूर्ण विश्राम आवश्यक।

फाइलेरिया ज्वर में भोजन/पथ्य-व्यवस्था

○ गेहूँ, जौ, चना, मूँग, अरहर खाने में उपयुक्त है।

○ गरम-मसाले, लहसुन-प्याज, परवल, सहिजन, करेला, बथुआ, सरसों का तेल लाभकारी है।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ नया चावल, नया उड़द, तिल आदि खाने को न दें।

○ दही, गुड़, रबड़ी-मलाई, मिठाई और खट्टे पदार्थ वर्जित हैं।

○ बैंगन, खटाई, कोहड़ा, मछली आदि भारी तथा चिकने पदार्थ खाने को बिलकुल ने दें।

○ नदी या तालाब का पानी पीना पूर्ण वर्जित है।

याद रखिये—रोग शान्त हो जाने के बाद भी ६-८ महीने तक भोजन के साथ नित्य लहसुन का सेवन करना चाहिए।

सावधान—दही, चावल और केला खाने के अभ्यस्त हों तो उसे छोड़ देना चाहिए।

खसरा में पथ्य एवं भोजन-व्यवस्था

○ बच्चे को पौष्टिक आहार, दूध, रोटी, सब्जी, दाल, दलिया, जीवन-रक्षक घोल आदि नियमित रूप से देते रहें। उसका खाना-पीना बंद न करें।

○ ज्वर के समय दूध, बार्ली, साबूदाना, अरारोट तथा मिश्री का चूर आदि दे सकते हैं। पेट में गड़बड़ी रहने पर छेने का पानी अथवा पानी में बना सागू और पानी में बना अरारोट दे सकते हैं। दूध देना उपयुक्त नहीं।

○ शारीरिक क्षमता बढ़ाने के लिए विटामिन ए०, डी०, सी०, पूर्वपाचित प्रोभूजिन (Protein) के योग; कैल्सियम-लौह के योग पर्याप्त समय तक देना चाहिए।

○ मक्खन, दूध, अण्डा, ताजे फलों का रस विशेष महत्त्व रखते हैं।

सर्दी-जुकाम में पथ्य एवं भोजन-व्यवस्था

○ जुकाम में गर्म पानी पीना तथा उपवास श्रेयष्कर होता है। यदि ३ दिनों तक केवल गर्म पानी पिया जाय तथा-पूर्ण उपवास न रख सकने पर चिकनाई रहित बहुत कम भोजन किया जाय तो बिना औषधि के भी जुकाम ठीक हो सकता है।

○ दिन में कई बार गर्म पानी में नीबू डाल कर पीने से जुकाम में विशेष लाभ मिलता है।

○ इस रोग में गुड़, तेल, मिर्च, खटाई, घी, दूध, मक्खन, दही, चिकने-तले एवं गरिष्ठ पदार्थ वर्जित हैं।

खाँसी में पथ्य एवं भोजन-व्यवस्था

○ जौ तथा गेहूँ की रोटी, साठी चावल, पुराने चावलों का भात, बिना छिलकों की उड़द की दाल, परवल, तरोई, बथुआ, सहजन, अदरख, प्याज, केला, खरबूजा तथा गाय अथवा बकरी का दूध—ये सभी पथ्य हैं।

○ सूखी खाँसी वालों को रात को सोते समय सूखी मलाई तथा मिश्री

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ औटाकर ठंडा किया हुआ पानी पीना सर्वोत्तम रहता है।

○ कफयुक्त खाँसी वाले रोगी को पुराना चावल, मूँग की दाल का पानी, पीपर, सूखी मूली का यूष एवं लघु आहार दें।

○ यक्ष्माजन्य कासरोग में लघु अन्न, पुराना चावल, मूँग की दाल का पानी, मांस रस और भात, मीठे फल, गाय या बकरी का दूध आदि पथ्य हैं।

निषेध—गरिष्ठ पदार्थों का सेवन, बाजरा, चना, आदि रूक्ष पदार्थों का सेवन, व्यायाम, लालमिर्च, खटाई, आलू, अरबी—ये सभी अपथ्यकर हैं।

विसूचिका/हैजा में पथ्य एवं भोजन-व्यवस्था

○ हैजे के रोगी को पहले लंघन कराना चाहिए। जब रोग से छुटकारा मिल जाय तब उसके बलाबल एवं अग्नि को देखकर हलकी वस्तुओं का पथ्य देना चाहिए। प्याज का रस इसमें लाभकारी है।

○ रोग-मुक्ति के पश्चात् पहले मूँग या मसूर की दाल का पानी (जीरा, मरिच, हींग और लहसुन से छौंककर) सेंधानमक डालकर थोड़ी मात्रा में देना चाहिए। फिर रोगी की रुचि तथा पाचन-क्षमता के अनुसार नीबू का शर्बत, फलों का रस, दही लस्सी बरफ डालकर, मट्ठा आदि दें। क्रमशः पुराने चावलों + मूँग की दाल की खिचड़ी, करेला, तरोई, अदरक, सिरका, नीबू आदि से युक्त हलका और अल्प मात्रा में भोजन लें।

○ **याद रखिए**—पेशाब न होने तक कोई भी पथ्य देना वर्जित है। प्यास मिटाने के लिए केवल बर्फ का पानी या बरफ का टुकड़ा चूसने के लिए देना चाहिए। रोगी को अधिक से अधिक ठंडा या गर्म पानी पीने को देना चाहिए।

निषेध—खीरा, ककड़ी, खरबूजा, तरबूज, टिण्डा, काशीफल भूल कर भी न दें। विरुद्ध अन्न चावल या गेहूँ, पूड़ी, हलवा, उड़द, चना, आलू, अरबी, कोहड़ा, कटहल तथा गरिष्ठ एवं चिकने पदार्थ नहीं देना चाहिए।

न्यूमोनिया/ब्रॉन्को-न्यूमोनिया में पथ्य व्यवस्था

बुखार की स्थिति में रोगी को शान्त भाव में सर्दी को बचाते हुए गर्म कपड़े ओढ़कर रहना चाहिए। तालमिश्री डालकर औटाया हुआ गुनगुना पानी, दूध, साबूदाना, बार्ली, अरारोट, हॉर्लिक्स मिल्क, खड़ी मसूर की दाल का पानी, हलकी और ताकत देने वाली चीजों के अलावा और कुछ नहीं देना चाहिए। फलों का रस थोड़ी मात्रा में देना उत्तम रहता है। ज्वर के आरोग्य हो जाने के बाद—रोटी, पावरोटी, मछली का शोरबा और धीरे-धीरे अन्न पथ्य में देना शुरू कर देना चाहिए।

○ पीने के लिए कुछ-कुछ गर्म पानी दिया जा सकता है। बकरी का दूध उत्तम रहता है। अभाव में गाय का दूध दिया जा सकता है। परवल की

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रसेदार सब्जी दी जा सकती है। करेला, पपीता एवं केला रुचि के अनुसार दिया जा सकता है। भोजन सुपाच्य एवं पौष्टिक होना चाहिए।

○ अनार, मीठी मुसम्मी, मुनक्का, किसमिस, अंगूर देना चाहिए।

○ परवल की सब्जी, मूँग की दाल और रोटी खाने में दी जा सकती है।

पाषाणगर्दभ/मम्प्स में पथ्य एवं भोजन-व्यवस्था

○ रोगी को तरल द्रव आहार दें। रोग-मुक्ति के बाद बलकारक, सुपाच्य एवं पौष्टिक आहार दें। एक सप्ताह तक पूर्ण विश्राम करायें।

○ परिश्रम और स्त्री-सम्पर्क से तब तक बचें जब तक शरीर में पूर्ण बल न आ जाये।

यक्ष्मा/टी० बी० में पथ्य एवं आहार-व्यवस्था

○ इस बीमारी में प्रायः पाचनशक्ति घट जाती है एवं भूख नहीं लगती है। खाने पर भी पाचन नहीं होता है। इसलिए जब तक ज्वर बढ़ता रहे (३७ से ३८° सें०) उस समय रोगी को केवल जलीय पदार्थ जैसे—दूध, साबूदाना, अरारोट, हार्लिक्स मिल्क के अलावा कुछ और नहीं देना चाहिए। गरम दूध सुबह, तीसरे पहर, शाम को और रात में; अथवा भूख के अनुसार सभी समय दूध दिया जा सकता है। १ लीटर तक दूध नित्य लेना आवश्यक है।

○ बीमारी की पुरानी अवस्था में—प्रातः ज्वर ९९–९९½° फा० तथा तीसरे पहर १०१–१०२° फा० तक रहता है। इसी समय भूख के अनुसार ९–१० बजे पुराने महीन चावल का भात, मछली का शोरबा, मूँग की दाल का जूस, शहद, मिश्री। तीसरे पहर—दूध, बढ़िया बिस्कुट और रात में सूजी की रोटी, दूध, मिश्री आदि दिया जा सकता है। पेट की गड़बड़ी में छेने का पानी उत्तम पथ्य है।

○ यदि रोगी में भूख अच्छीं रहे ओर पाचन अच्छी तरह होता हो तो तीसरे पहर देशी घी में पकाकर २–४ पूड़िया केवल चीनी या नमक के साथ दी जा सकती हैं।

○ अधिक कमजोरी आने पर मांस का शोरबा में नं० १ ब्राण्डी १ ड्राम मिलाकर पिलाने से लाभ होता है।

○ थाइसिस में चावल, गेहूँ, मूँग, चना, मक्खन, दूध, घी, मांस (मांसाहारी को), मीठा पका केला, कटहल, खजूर, फालसा, नारियल, मुनक्का, किशमिश, मिश्री, आँवला, थोड़ी ब्राण्डी, मिर्च, जीरा, सेंधानमक—ये सब पथ्य हैं।

बकरी का दूध सर्वोत्तम है। अभाव में गो-दुग्ध दें। बकरी के दूध से निकाला गया मक्खन अति हितकारी है। अभाव में गाय या भैंस के दही से निकाला मक्खन मिश्री-मधु के साथ लेना चाहिए। इसमें बकरी का घृत

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वोत्तम होता है। अभाव में गाय-भैंस का घी लिया जा सकता है। प्रतिदिन १००–२०० मि० ली० ताड़ी पीना सर्वोत्तम रहता है।

○ मांसाहारी जीवों तथा जांगल जीवों का मांस, पका केला, आँवला, सहजन की फली, परवल, सौंफ, सोंठ, अदरक, काली मिर्च, पीपर, लौंग, दालचीनी, कुल्थी, धनियाँ, जीरा, लहसुन, अनार का सेवन पथ्य है।

निषिद्ध पदार्थ—पान, उड़द, हींग, खट्टी चीजें एवं तीखे पदार्थ, कसैली चीजें, लाल मिर्च, खाटाई, सेम आदि।

अब तो नवीन औषधियों के निकल आने से रोगी के लिए प्रोटीन युक्त भरपूर पौष्टिक आहार की व्यवस्था की जाती है। यहाँ तक कि रोगी को सभी कुछ खाने के लिये कह दिया जाता है।

संग्रहणी (Sprue) में पथ्य व्यवस्था

इस रोग में तक्र (मट्ठे) को अमृत माना गया है। पुराने साठी चावल, अरहर-मूँग की दाल का यूष, गाय का मक्खन निकाला हुआ दही, बकरी का दूध, फल, मिश्री, जामुन आदि पथ्य हैं।

अधिक परिश्रम, उड़द, मटर, खीरा, ककड़ी, चाय-कॉफी, दूध, नारियल, पत्तों के शाक, खटाई, लाल मिर्च, तली हुई चीजें, भारी अन्न एवं नमकीन रस—ये सभी अपथ्य हैं।

○ दाल का पूर्ण निषेध करें।

अतिसार में पथ्य एवं भोजन-व्यवस्था

पुराने चावल का भात, मूँग की दाल, मसूर की दाल का पानी, कच्चे-केले का शाक, टमाटर, अदरक, लहसुन, हींग, बेल, आँवला का मुरब्बा, जीरा, मट्ठा, बकरी का दूध आदि अतिसार में दिये जा सकते हैं। नये अतिसार में साबूदाना दें। अनार एवं सन्तरे का रस दे सकते हैं। पुराने अतिसार में पुराने चावलों का भात अरहर की दाल के पानी के साथ दें। साबूदाना भी भी उपयुक्त है।

इलेक्ट्राल पाउडर दिन में कई बार पिलायें।

पेचिस में भोजन एवं पथ्य-व्यवस्था

○ प्रथम २४ घण्टे रोगी को केवल चावल का पानी तथा जल अथवा ग्लूकोज मिला जल ही दें। तत्पश्चात् दूध, फल, हॉर्लिक्स आदि दें। इसके बाद साबूदाना जल में बनाकर दें। तत्पश्चात् इसे दूध में बना कर दें। अन्त में अकेला दूध ही दें। इसके बाद चावल, फल का रस एवं दूध दें। साधारण भोजन १ माह तक।

○ अथवा प्रथम २४ घण्टे तक रोगी को केवल जल, चावलों का पानी या ग्लूकोज मिश्रित जल पर ही रखना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ दस्तों से जल अधिक निकल जाता है, अतः रोगी को प्रतिदिन ३-४ लीटर पीने को दें। तीव्रावस्था में ग्लूकोज का शर्बत अथवा इलेक्ट्राल पाउडर गर्म जल में घोलकर बार-बार दें।

○ पुराना चावल, मूँग की दाल, पतली खिचड़ी, कच्चे केले की सब्जी, टमाटर, आँवला, लहसुन, मट्ठा, दही, एवं बकरी का दूध—यह सब रोगी के लिए पथ्य हैं।

○ पुराने रोग में दूध हितकारी है।

निषेध—गेहूँ, उड़द, ईख, गुड़, मदिरा, वनस्पति घी या तेल में तली चीजें, कटहल, आलू, सेम, तीक्ष्ण एवं भारी पदार्थ वर्जित हैं।

एमीबिएसिस में पथ्य-अपथ्य

○ लघुपाकी पौष्टिक आहार दें। ○ मट्ठा, धान के लावा का माँड़, दलिये का रस, अनार एवं बकरी का दूध इसमें पथ्य है।

○ रोग की पहली अवस्था में सहता-सहता गाय का दूध प्रति बार ५-६ चम्मच एक या दो दिन तक पिलायें।

निषेध—१. बिना उबला हुआ जल न पियें।

२. खट्टे पदार्थों से पूर्ण परहेज करें।

बीमारी की जीर्ण अवस्था में—खाने के तत्काल बाद 'कॉड-लिवर आयल' की २-४ बूदें दें।

○ पूर्ण विश्राम आवश्यक। ○ पेटदर्द की तीव्र अवस्था में हॉट बैग से सिकाई करें।

रक्तातिसार (Malaena) में पथ्य-व्यवस्था

○ दूध, हॉलिक्स, बार्ली वाटर, बर्फ का शीतल जल कुछ दिनों तक दें। ○ शय्या पर पूर्ण विश्राम करें।

आन्त्रशूल, उदरशूल में पथ्य एवं भोजन-व्यवस्था

○ रोग की प्रारम्भिक अवस्था में दूध देना बिलकुल बन्द करें। मूँग और मसूर का रस (पानी) दें। खाने में—सुपाच्य भोजन, मीठे फलों का रस, चाय-बिस्कुट, डबलरोटी आदि दें। ○ जब दर्द न रहे तो पुराने चावलों का भात, पेठा, करेला, आँवला, पका पपीता, कच्चे नारियल का पानी आदि दें। ○ भोजन के साथ पानी कम से कम पिलायें।

निषेध—भारी पदार्थ, उड़द, शराब, दही, पत्तों वाले शाक, ज्वार-बाजरे की रोटी, लालमिर्च, अरहर की दाल, अरबी, मट्ठा, दही, खटाई एवं देर से पचने वाले भोजन।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आमाशयशोथ (Gastritis) में पथ्य-व्यवस्था

○ आमाशय को पूर्ण विश्राम दें। चौबीस घण्टों के बाद फलरस या थोड़ा-सा दूध दें। जलाल्पता की स्थिति में शिरामार्ग से तरलाधान करें। हलका पौष्टिक आहार एवं विटामिन बी-कॉम्प्लेक्स युक्त भोजन दें।

○ जीर्ण आमाशयशोथ में दुग्ध एवं मधुर फलों का रस सेवन करायें।

जीर्ण अतिसार में पथ्य-व्यवस्था

○ कर्ड (Curd) तथा मखनिया दूध (Butter milk) दिया जा सकता है। ○ पुराने अतिसार में दूध बहुत हितकारी है। परन्तु दूध में ३ गुना पानी मिलाकर औटायें और जब दूध मात्र शेष रह जाये तब पिलायें।

○ गेहूँ, उड़द, भारी जल, गुड़, काशीफल, खीरा, ककड़ी एवं खट्टे पदार्थ अपथ्य हैं।

बड़ी आँत की सूजन (Ulcerative colitis) में पथ्य-व्यवस्था

○ आहार पूर्णतया पौष्टिक एवं विटामिन्स से भरपूर हो। ○ दूध और मट्ठा सर्वोत्तम है। किसी-किसी को दूध अनुकूल नहीं पड़ता है। १ दिन में ३ लीटर तक दूध दिया जा सकता है। दूध में 'प्रोटीनेक्स' मिलाकर दिया जा सकता है। स्थिति में सुधार होने पर अधिक कैलोरी एवं प्रोटीनयुक्त आहार दें।

○ तीव्रावस्था में—फलरस, ग्लूकोज तथा साबूदाना देना चाहिए। कुछ लोगों का कहना है कि ५-६ किलो सेव का गूदा यदि रोगी को नित्य दिया जाये तो रोग शान्त हो जाता है।

निषेध—डेयरी प्रॉडक्ट्स का पूर्ण परित्याग।

गैस्ट्रिक अलसर में पथ्य एवं भोजन-व्यवस्था

○ तेल, मसालेदार उत्तेजक आहार का सेवन न करें। खाद्य पदार्थों में उबले हुए खाद्य का समावेश करना चाहिए। रोगी को दिन में ३ घण्टे से अधिक भूखा न रहने दें। खाना कम किन्तु पौष्टिक होना चाहिए। तीनों समय के खाने के बीच एक कप दूध तथा बिस्कुट दे सकते हैं।

○ यदि हाइपर एसिडिटी की शिकायत हो तो उसका भी उपचार करायें। खाना चबा-चबाकर वह धीरे-धीरे खाना चाहिए।

○ **इंग्लैण्ड के एस्टन विश्वविद्यालय के औषधि-विज्ञान विभाग के अध्यक्ष डॉ० डेविड लुइस के अनुसार पेट के अलसर के लिए 'केला' सबसे प्रबल शक्तिशाली है। हरे केले की सब्जी खाना सर्वोत्तम रहता है।**

उल्टी और दस्तों की बीमारी/गेस्ट्रो-इण्टेराइटिस में पथ्य-व्यवस्था

○ यदि रोगी को लगातार उल्टियाँ न हो रही हों तो पानी, खनिज लवणों तथा ग्लूकोज का मिश्रण बहुत संतोषजनक रहता है। इसमें नमक,

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोडियम बाइ-कार्बोनेट, पोटेशियम क्लोराइड तथा ग्लूकोज की एक निश्चित मात्रा रहती है। जिसे स्वच्छ पानी में मिलाकर घोल तैयार किया जाता है। इसे थोड़ी-थोड़ी देर बाद आवश्यकतानुसार दिया जाता है। इसके उपलब्ध न होने पर (विशेषकर दूर-दराज के गाँवों में) ८ छोटे चम्मच चीनी और १ चम्मच नमक को १ लीटर स्वच्छ पीने के पानी में मिलाकर घोल तैयार करें, जिसमें थोड़ा-सा नीबू का रस मिला सकते हैं। यदि पतले दस्तों के प्रारम्भ होते ही यह घोल रोगी को दिया जाय तो शरीर में पानी तथा खनिज लवणों की विशेष कमी नहीं होगी तथा शिरा द्वारा (I/V) भी घोल देने से बचा जा सकेगा।

○ पानी छान कर और उबाल कर पियें तो अधिक उत्तम रहता है।

○ अन्य पेय पदार्थों (शर्बत, लस्सी, मट्ठा, ठंडाई, दूध) तथा भोजन को ताजा ही ग्रहण करें।

○ रोगी को पूर्ण विश्राम दें।

○ वमन की शान्ति के लिए रोगी को बर्फ के टुकड़े चुसवायें।

○ रोगी को आरम्भ से ही भोजन न देकर केवल फल रस और चाय ही दी जाय। सुधार होने पर धीरे-धीरे अर्ध तरल, फिर लघु आहार दिया जाता है। २–३ दिन बाद पतली खिचड़ी दें।

○ प्रारम्भ में रोगी को केवल जल तथा कच्चे नारियल का पानी ही पिलाना चाहिए।

निषेध—○ बाजार की धूल भरी दूषित चाट, पकौड़े तथा कटे फलों का उपयोग वर्जित है।

○ सड़क के किनारे की धूल भरी लस्सी, मिल्क शेक तथा ठंडे पेयों का उपयोग न करें।

○ सील-बन्द डिब्बों की रखी आहार सामग्री प्रयोग न करें।

○ गन्दे ढंग से बनाई गई आइस्क्रीम, कुल्फी एवं बर्फ न खायें।

○ **बच्चों को कच्चा दूध न पिलायें।**

सावधान—मांस, मछली एवं पकौड़ियाँ जो कम पकाई गई हों, उनका भोजन नहीं करना चाहिए।

अर्श/पाइल्स में पथ्य-व्यवस्था

○ मक्खन, शर्करा अथवा मथा हुआ दही का सेवन करना चाहिए।

○ हलका, सादा, सुपाच्य और तेज मिर्च-मसाले व खटाई रहित भोजन करना इस रोग की चिकित्सा से भी अधिक लाभप्रद होता है। लिहाजा बवासीर के रोगी को परहेज करना चाहिए।

○ तले हुए, लाल मिर्च व मसालेदार खटाई युक्त, बादी करने वाले तथा उष्ण प्रकृति के पदार्थ खाना कतई बन्द रखें। अरहर की दाल, बैंगन,

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अरबी और बेसन की चीजें न खायें। छिलके वाली मूँग की दाल, तोरई और लौकी, पालक और हरी सब्जियाँ तथा कच्चे सलाद का सेवन जरूर करें।

○ इसमें मांस और अण्डे तथा ज्यादा गोल आलू, गरम मसाले से बनी चीजें, लहसुन, प्याज, केकड़ा, मादक द्रव्य, चाय, कॉफी आदि खाना-पीना तथा रात को जागना वर्जित है।

अनीमिया/रक्ताल्पता में पथ्य एवं भोजन-व्यवस्था

○ रक्तक्षीणता के उपचार में आहार में सुधार करना सबसे महत्त्वपूर्ण है। मैदा, पालिश किया चावल या चीनी आदि जैसे परिशोधित आहार शरीर के लिए बेहद जरूरी लौह से हमें वंचित कर देते हैं। लौह हमेशा खाद्य में प्राकृतिक रूप में लेना चाहिए।

○ कच्चे फलों व सब्जियों का सेवन करें। पर्याप्त लौह वाली सब्जियाँ यथा—पालक, हरी प्याज, गाजर, मूली, चुकन्दर, अरवी, टमाटर और छिलका सहित आलू लेना चाहिए।

○ केला एवं परवल लाभकारी हैं। सेव, अंगूर, आलूबुखारा, किशमिश लिये जा सकते हैं।

○ गन्ने का शीरा, शहद, फलियाँ, सोयाबीन, गेहू, बिना पालिश किया चावल, दूध, पनीर एवं अण्डे ले सकते हैं।

○ चुकन्दर रक्तक्षीणता के उपचार में उपयोगी है।

○ चुकन्दर का रस लाल रक्तकणों की कोशिकाओं को पुनर्जीवित एवं पुनः सक्रिय कर देता है और प्रतिरोधी क्षमता को बढ़ाता है।

○ रक्तक्षीणता का यह उत्तम उपचार/पथ्य है।

○ याद रखिये—आरम्भ के ५ दिनों तक रक्तक्षीणता के मरीज को उपचार की शुरूआत ताजे फलों के आहार के साथ करनी चाहिए। इन दिनों में उसे ५-५ घण्टे के अन्तर पर ३ बार ताजे रसीले फलों का आहार लेना चाहिए। इन ५ दिनों के बाद—

○ अगले १५ दिनों तक उसे फल और दूध का आहार लेना चाहिइ। इन दिनों फलों का आहार पहले ही जैसा रहता है, पर दूध लेना प्रारम्भ हो जाता है।

○ फल और दूध का आहार १५ दिनों तक लेने के बाद मरीज को संतुलित आहार लेना आरम्भ करना चाहिए। जैसे—बीज, गिरी, अनाज एवं सब्जियाँ तथा फल।

○ पर्याप्त मात्रा में लौह, विटामिन, प्रोटीन आदि न खाने से हम रक्त-क्षीणता के शिकार हो जाते हैं। परिष्कृत खाद्य भी रक्तक्षीणता पैदा कर सकते

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। जबकि संतुलित आहार और आवश्यक तत्त्वों से पूर्ण आहार लेना शुरू कर हम न सिर्फ इससे बच सकते हैं, बल्कि इसका उपचार भी कर सकते हैं।

यकृद्-वृद्धि/जिगर का बढ़ना में पथ्य-व्यवस्था

○ पूर्ण विश्राम आवश्यक है। ○ यकृत पर गर्म सेंक करें।
पथ्य के रूप में—कच्चे पपीते का शाक एवं पका पपीता खाने में दें।
○ बुखार की स्थिति में—साबूदाना एवं अरारोट का सेवन।
○ दूध, शाक-सब्जी और मांस का उपयोग।

मलावरोध (Constipation) में पथ्य एवं भोजन-व्यवस्था

○ कम चिकनाई वाले आहार, जैसे—गाय का दूध, पनीर, चोकर मिले आटे की रोटी, मौसम्मी फल, दाल के स्थान पर सब्जी, बथुआ तथा पालक का विशेष उपयोग।

○ उबली गाजर एवं पके अमरूद सर्वोत्तम है। ○ प्रातः नित्य ठंडे पानी से स्नान एवं ठंडा पानी पीना उपयोगी है। ○ आम, अंगूर, किशमिश, मुनक्का, खजूर, संतरा, नाशपाती, पपीता, कागजी नीबू का उपयोग करें।

○ सबेरे भात, तीसरे पहर फल, रात में चक्की में पिसे चोकर सहित आटे की रोटी लें। मूँग की दाल अधिक खाना वर्जित नहीं है। मछली-मांस नुकसान करते हैं। विशेष इच्छा हो तो सप्ताह में केवल एक बार मछली ली जा सकती है। गर्म मसालेदार तरकारी और लहसुन खाना मना है। सिझाया हुआ प्याज लाभप्रद है। तीसरे पहर रोटी के साथ शहद या गुड़ खाना चाहिए।

○ रोज सवेरे और रात में सोने से पूर्व २५० मि० ली० के लगभग ठंडा पानी, भोजन के प्रायः १ घण्टा पहले और २ घण्टा बाद आधा गिलास कुनकुना पानी नियमित रूप से पीना चाहिए। इससे पाचन में सहायता मिलती है और कब्ज दूर होता है।

अल्प एवं विटामिन रहित भोजन कब्ज करते हैं।

अजीर्ण (Indigestion) में पथ्य एवं भोजन-व्यवस्था

○ इसमें अनेक प्रकार के व्यायाम, अग्निदीपक मृदु आहार, कटु एवं तिक्त द्रव्यों का सेवन करना चाहिए।

○ आहार में—थोड़ी मात्रा में दूध और रोटी लेना चाहिए।

○ भोजन के पूर्व अदरक की पतली कतरन में नीबू रस, सेंधा नमक, लहसुन के टुकड़े, हरी धनियाँ की पत्ती एवं भुना जीरा का चूर्ण रुचि के अनुसार खिलाना चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

○ उपवास के समय अदरक तथा नमक चूसना चाहिए। उपवास के बाद जब भोजन करना अभीष्ठ हो तो रोगी की रुचि का ध्यान रखते हुए आँवला, अदरक रस, धान का लावा आदि देना चाहिए।

याद रखिये—तीव्र विरेचन, मल-मूत्र एवं अधो वायु का रोकना, सेम, मटर, मांस, अधिक जल का सेवन, आलू, जामुन, असात्म्य भोजन, विरुद्ध आहार आदि सभी अपथ्य हैं।

जलोदर में पथ्य एवं भोजन-व्यवस्था

○ नमक रहित आहार की व्यवस्था। ○ हलकी और ताकत देने वाली सभी प्रकार की चीजें दी जा सकती हैं। ○ जौ का माँड, मूँग, सेम, करेला, शलजम, परवल, मूली, पालक, बैंगन, तीखे पदार्थ, मट्ठा, लहसुन, पुराने और महीन चावल का भात आदि पथ्य हैं।

○ इस रोग में नमक खाना मना है। नया चावल, खिचड़ी, दही, खट्टी चीजें, रसीले पदार्थ, पानी, सूखा साग, सूखी मछली, नमक—ये सभी निषिद्ध हैं।

○ **नमक से रक्त का जलीय अंश बढ़ता है।**

मेनिञ्जाइटिस में पथ्य एवं आहार-व्यवस्था

○ बर्फ का टुकड़ा चूसने को और बर्फ का पानी पीने को दें।

○ बेदाना, अंगूर, संतरा आदि फलों का रस और छेने का पानी तथा ग्लूकोज सुपथ्य हैं।

○ गर्दन पर लगातार ठंडे पानी की धारा अथवा बर्फ की थैली रखें।

टाँसिलाइटिस/तालुमूलग्रन्थि-प्रदाह में पथ्य एवं चिकित्सा

○ **प्रदाहिक अवस्था में**—जब रोगी दूध अथवा अन्य पतले पेय पदार्थ पीने के अतिरिक्त और कोई चीज नहीं खा सकता, उस समय दूध ही उत्तम पथ्य है। इस अवस्था में दूध ठंडा कर पीने को देना चाहिए। उसके साथ बर्फ मिलाकर भी दिया जा सकता है।

○ बर्फ के टुकड़े मुँह में रखकर चुसवाने से भी लाभ मिलता है और प्रदाह घटता है।

पकने का उपक्रम या पकने की स्थिति में—पीने को गर्म दूध दें। दूध-सूजी, दूध-साबूदाना और अंगूर, बेदाना आदि फलों का रस थोड़ा-थोड़ा देना चाहिए।

फैरिञ्जाइटिस में पथ्य-व्यवस्था

नये प्रदाह में—सभी तरह की पतली चीजें खाने को देना चाहिए। कड़ी चीजें खाना बिलकुल वर्जित है। गले का भीतरी अंग कोमल रखने के लिए गले में ग्लिसरीन लगाना चाहिए।

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लैरिञ्जाइटिस में पथ्यापथ्य

साबूदाना, बार्ली, अरारोट, हॉर्लिक्स मिल्क तथा दूध प्रभृति समस्त पेय पदार्थ कुछ गरम ही देना चाहिए।

डिफ्थीरिया में पथ्य-व्यवस्था

दूध, शोरबा, मुर्गी के बच्चे का शोरबा (चिकेन ब्रॉथ), तथा मुर्गी के अण्डे का पीला अंश दूध में मिलाकर और उसमें थोड़ी चीनी या मिश्री का चूर देकर रोगी को पिलाना चाहिए। बीच-बीच में साबूदाना, बार्ली, अरारोट, हॉर्लिक्स मिल्क आदि दें।

यदि रोगी मुँह से न खा सके, तो मलद्वार की राह से आहार प्रदान करने की व्यवस्था करें।

एपेण्डिसाइटिस में पथ्य एवं भोजन-व्यवस्था

इसमें आहार जहाँ तक सम्भव हो, लघु और थोड़ा होना चाहिए। अधिक मात्रा में खाने पर अधिक मल का संचय होगा। इस बीमारी में अधिकांशतः मलावरोध रहता है, इसलिए पेट साफ रखना अति आवश्यक है।

सन्धिवात/रीयूमैटिज्म में पथ्य

पहली अवस्था में जब बुखार बढ़ा हुआ रहता है, उस समय गरम पानी ठंडा करके खूब ज्यादा मात्रा में पिलायें। यदि दूध सहन हो तो दूध दिया जा सकता है, अन्यथा छेने का पानी, अरारोट और बार्ली पीने को दें। यदि रोगी को चाय पीने की आदत हो तो दिन में १ बार चाय दी जा सकती है।

ज्वर उतर जाने पर—सूजी की रोटी, पावरोटी, आलू, परवल, साग-सब्जी, ब्रॉथ इत्यादि खाने को दें।

○ **इसमें मांस-मछली खाना वर्जित है।**

गठिया वात/गाउट में पथ्य एवं भोजन-व्यवस्था

रोगग्रस्त व्यक्तियों को—नित्य सबेरे और तीसरे पहर २५० मि० ली० अन्दाज में गरम पानी पीना विशेष लाभदायक है। रोग की प्रथम अवस्था में केवल गरम पानी या दूध देना चाहिए।

आरोग्य अवस्था में—एक समय भात और एक समय रोटी, दाल, दूध, आलू, परवल इत्यादि। यदि रोगी कमजोर हो जाये तो भोजन के पूर्व नित्य १ ड्राम नं० १ ब्राण्डी गर्म पानी के साथ सेवन कराना चाहिए।

○ इस अस्वास्थ्यकर बीमारी में—एक वर्ष पुराना चावल, गेहूँ, दूध, घी, पनीर, छेना, लहसुन तथा फलों में—अनार, बेदाना, आम, फालसा, अंगूर आदि लाभदायक हैं। मांस-मछली न खाना ही अच्छा है। बहुत आवश्यकता हो तो कभी-कभी बकरे का मांस या मछली बहुत कम मात्रा में दे सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निषेध—चना, नया उड़द, मूँग, साग, सेम के बीज, केला, ताड़ की गिरी, शीतल जल, मधु, पान, सुपारी, उपवास, मैथुन।

○ **इसमें सात्त्विक आहार विशेष लाभदायक होता है।**

एड्स रोगी में पथ्यापथ्य

रोगी जिन पथ्यों की इच्छा करे, वंही पोषक पथ्य दिये जायें। मक्खन, मलाई, घृत एवं दुग्ध उपयुक्त पथ्य हैं।

आहार द्रव्यों में—मधुर, रजशीतवीर्य, वृष्य रसायन आदि ओजवर्धक द्रव्यों का नित्य प्रयोग करना चाहिए। मूँग की दाल, चने की दाल, मिसी हुई रोटी (गेहू+चना मिली), चावल, दूध, घी, शक्कर, परवल, लौकी, पालक, चौलाई आदि का शाक। उबालकर ठंडा किया पानी का सेवन। अंगूर, अंजीर, मुनक्का, किशमिश तथा लीची का सेवन करना तथा नमक रहित भोजन करना उचित है।

○ **भोजन पौष्टिक, बृंहण, ओजवर्धक एवं रुचिकारक होना चाहिए।**

भोजन में दूध से निर्मित पदार्थ—पनीर, मलाई आदि का सेवन लाभकारी होता है। गेहू, उड़द, राजमा, साठी चावल, बथुआ, सेम, आलू, कटहल, केला, आम, संतरा, नारियल, अनार, मोसम्मी, अंगूर, सेव, नाशपाती, खजूर, खरबूजा, बादाम एवं काजू का उपयोग किया जा सकता है।

अपथ्य—तेल, खटाई एवं कार्श्य पदार्थ त्याज्य हैं। मादक द्रव न दें। स्त्री-प्रसंग से दूर रहें। अधिक मैथुन, रात्रि-जागरण, मांस, अण्डा, मद्यपान, उष्ण द्रव्य, चाय, कॉफी, नशीले पदार्थ या औषधियाँ, गरम मसाले, नमकीन पदार्थ आदि का सर्वदा त्याग करें। क्रोध, शोक, ईर्ष्या का परित्याग करना एड्स निवारक है।

○ **एड्स की बीमारी में ब्रह्मचर्य के नियमों का पालन करना नितान्त आवश्यक होता है।**

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुक्रमणिका

(प्रस्तुत अनुक्रमणिका में रोग या लक्षण के प्रमुख नाम के साथ-साथ उनके पर्याय भी सम्मिलित किये गये हैं, जिससे एक ही रोग के विविध नामों से उन्हें इसमें ढूँढा जा सकता है।)

रोग नाम	पृष्ठ
अ	
अग्निमांद्य	३
अजीर्ण	३
अरुचि	१२
अरोचक	१२
अम्लता	३२
अफारा	४५
अमीबा-रुग्णता	१०७
अन्त्रावरोध	१३०
अरक्तता	१४८
अनीमिया	१४८
अर्श	१८१
अन्याशयशोथ	२३५
अल्सरेटिव कोलाइटिस	२९९
अन्तःपूयता	४८६
अन्तर्हृत्शोथ	६११
अल्परक्तदाब	६३४
अतिरक्तदाब	६४२
अमूत्रता	६६३
अविशिष्ट मूत्रमार्गशोथ	७१४
अन्तराबन्ध	७२१
अनिद्रा	७४०
अन्त्रयक्ष्मा	१४०
अन्त्रगुल्म	२०२
अन्त्रज्वर	९५८
अन्त्रकृमि	१२९
अपतंत्रक	७५६

रोग नाम	पृष्ठ
अर्धकपारी	७८९
अतिरक्तदाबजन्य शिरःशूल	७९७
अपस्मार	८१८
अनन्तवात शूल	८२९
अधराङ्गघात	८३९
अर्धांग पक्षाघात	८४१
अर्दित	८५२
अपतानिका	८५५
अल्पकैल्शियम रक्तता	८५५
अलर्क विष	१०४२
अग्निविसर्प	१०४७
अरुण ज्वर	११००
अस्थिभंजन ज्वर	११०७
अण्डुलेण्ट फीवर	१११९
अर्जित रोगक्षमहीनता संलक्षण	११७२
आ	
आध्मान	४५
आनाह	४५
आमाशयिक शूल	६५
आमाशय शोथ	७९
आमाशय प्रदाह	७९
आमातिसार	८८
आमप्रवाहिका	१०७
आँत में रुकावट	१३०
आँत की टी० बी०	१४०
आमाशय का विस्फार	१४६
आमाशय-विस्तृति	१४६

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग नाम	पृष्ठ
आमाशय व्रण	२१९
आमाशय का कैंसर	३१३
ऑक्युपेशनल डस्ट डिजीज	४९८
आर्टीरियोस्क्लेरोसिस	६५३
आधे सिर का दर्द	७८९
आनन पक्षाघात	८५२
आमाशयान्त्रशोथ	८८४
आतसक	१०२९
आमवातिक ज्वर	१०५०
आरक्त ज्वर	११००
आँखों के रोहें	११२५
इ	
इण्टेस्टाइनल ऑब्स्ट्रक्शन	१३०
इण्टेस्टानल ट्यूबरकुलोसिस	१४०
इण्टेस्टाइनल वर्म्स	१५७
इडियोपैथिक स्टेटोरिया	२१४
इपीडेमिक जॉण्डिस	२५८
इण्डस्ट्रियल पल्मोनरी डिजीज	४९८
इस्कीमिक डिजीज आफ द हर्ट	५७२
इण्डोकार्डाइटिस	६११
इनकॉण्टीनेन्स ऑफ यूरिन	६२२
इन्फेक्शन ऑफ यूरिनरी ट्रैक्ट	६९५
इन्सोम्निया	७४०
इम्पोटेन्सी	७६९
इन्फर्टीलिटी	७८३
इपीडेमिक पेरोटाइटिस	८९०
इन्फ्लूएञ्जा	९०८
इपीडेमिक कटॉरल फीवर	९०८
इपीडेमिक टाइफस	११०३
इन्फेक्टिव हेपेटाइटिस	१२०३
इपीडेमिक जॉण्डिस	१२०३
उ	
उदरावरणशोथ	१९०
उदरशूल	६५

रोग नाम	पृष्ठ
उण्डुकपुच्छशोथ	२०२
उदर में पानी भर जाना	२५०
उदरगत यक्ष्मा	३२८
उदर रोगों की पेटेण्ट मिश्रित औषधि चिकित्सा	३३७
उदकमेह	७२४
उन्निद्रता	७४०
उन्माद	७४५
उन्मत्तता	७४५
उष्णवात	१०२१
उष्णकटिबन्धीय इओसिनोफीलिया	४७०
उष्णकटिबन्धजन्य प्लीहावृद्धि	११११
उपदंश	१०२९
ऊ	
ऊरुस्तम्भ	८३९
ऊर्ध्वश्वास	४७८
ए	
एनोरेक्सिया	१२
एवॉर्ट्स फीवर	१११९
एसिडिटी	३२
एमीबिएसिस	१०७
एपेण्डिसाइटिस	२०२
एसाइटीज	२५०
एब्डॉमिनल ट्यूबरकुलोसिस	३२८
एक्यूट नेजल कटार	३५५
एम्फीसीमा	४७८
एम्पाइमा	४८६
एक्यूट ट्रेकियो ब्रॉकाइटिस	४९७
एटीलेक्टेसिस	५००
एल्वियोलर सेल कार्सिनोमा	५१०
एम्फीसीमा हार्ट डिजीज	५२५
एञ्जाइना पेक्टोरिस	५७२
एनूरिया	६६३

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग नाम	पृष्ठ
एक्यूट पाइलोनेफ्राइटिस	६८७
एल्कोहल एडिक्शन	७५२
एपिलेप्सी	८१८
एपीलेप्टीफार्म न्यूरेल्जिया	८२९
एनसेफेलाइटिस	८६३
एण्टेरिक फीवर	९५८
एलिफैण्टियेसिस	९७८
एरिसिपेलस	१०४७
एड्स	११७२
एक्वायर्ड इम्यून डिफिसियेन्सी सिण्ड्रोम (AIDS)	११७२
ए० आई० डी० एस० (एड्स)	११७२
क	
कब्ज	५४
कोष्ठबद्धता	५४
कॉन्स्टीपेशन	५४
कॉलिक	६५
कुपोषण संलक्षण	३८
क्रोहन्स डिजीज	१४४
कृमिरुग्णता	१५७
कॉलीमिया	१७८
कॉलीलिथिएसिस	२४५
क्यों हो जाती है शरीर पर सूजन	१२१०
कटारल जॉण्डिस	२५८
कोलीसिस्टाइटिस	२७१
कैंसर ऑफ द बक्कल कैविटी	३०६
कैंसर ऑफ द स्टमक	३१३
कैंसर ऑफ द लिवर	३२४
कैंसर ऑफ द गालब्लैडर	३३१
कैंसर ऑफ द कोलन एण्ड रैक्टम	३३४
कोराइजा	३५५
कॉमन कोल्ड	३५५

रोग नाम	पृष्ठ
कास	३७२
कफ	३७२
कटारल न्यूमोनिया	४१५
कोर पल्मोनेल	५२५
कलेजे का धड़कना	५२९
कार्डियक अरेस्ट	५४५
कार्डियक फेल्योर	५५५
कोरोनरी हर्ट डिसीज	५७२
कोरोनरी थ्रोम्बोसिस	५८८
क्रॉनिक रीनल फेल्योर	६९७
कटिस्नायुशूल	८०२
कटिवेदना	८०७
कटिवात	८०७
कमर का दर्द	८०७
कम्पवात	८१२
कर्णनाद	८३२
कनफेड़	८९०
कुक्कुरखाँसी	८९७
काली खाँसी	८९७
कंठरोहिणी	१००८
कॉलरा	१०६२
कालातिसार	१०६२
कृष्ण ज्वर	१११२
काला ज्वर/काला बुखार	१११२
काला-जार	१११२
क्लाइमेटिक बूबो	११२३
कुकरे	११२५
कुष्ठ रोग	११३०
कोढ़	११३०
कंजप्शन	११४४
क्षयरोग	११४४
क्षयोदर	३२८
ख	
खाँसी	३७२

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Panini Kanya Maha Vidyalaya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग नाम	पृष्ठ
खसरा	९४२
ग	
ग्रहणी शोथ	३८
गैस्ट्राल्जिया	६५
गैस्टोडायनिया	६५
गैस्ट्राइटिस	७९
ग्रीहर्टर रोग	२१४
ग्रहण्याशय व्रण	२१९
गाल स्टोन	२४५
गवीनीमुख वृक्क शोथ	६८७
गुर्दे की पथरी	७०७
गुल्मवायु	७५६
गृध्रसी रोग	८०२
गैस्ट्रो-इण्टेराइटिस	८८४
गलसुआ	८९०
गर्दनतोड़ बुखार	९८६
गनोरिया	१०२१
गर्मी की बिमारी	१०२९
ग्रेनूलोमा वेनेरियम	११२१
गलगण्ड	१२२९
गिल्हड़	१२२९
ग्वाइटर	१२२९
गुर्दे की सूजन	६६५
घ	
घुमेर	८३२
घेंघा रोग	१२२९
च	
चिरस्थायी आमातिसार	३८
चित्तविक्षेप	७३१
चेहरे का लकवा	८५२
चक्कर आना	८३२
चिकिन पॉक्स	९५२
चूहे काटे का बुखार	११०२
चेचक	११४०

रोग नाम	पृष्ठ
छ	
छाती की जलन	२८
छोटी माता	९५२
ज	
जठर-अत्यम्लता	३२
जठरशोथ	७९
जलोदर	२५०
जलन्दर	२५०
जीर्ण यकृद् रोग	२८३
जीर्ण पूय कास	४२५
जीर्ण फुप्फुस जरा कास	४८९
जरा श्वास	४८९
जानपदिक मस्तिष्कशोथ	८६३
जियार्डिया-रुग्णता	८८०
जियार्डिएसिस	८८०
जूड़ीताप	९१८
जलसन्त्रास	१०४२
जर्मन मीजिल्स	११२९
जीवाणुमेह	६८७
ट	
टी० बी०	११४४
ट्रापिकल स्प्रू	३८
ट्रॉपिकल इओसिनोफीलिया	४७०
ट्रैकोमा	११२५
टिटेनी	८५५
ट्युबरकुलोसिस	११४४
टाइफस ज्वर	११०३
ट्राइजेमिनल न्यूरेल्जिया	८२९
टेकीकार्डिया	५४७
ड	
डिसेण्ट्री	८८
डाइलेटेशन ऑफ द स्टमक	१४६
डायफ्राग्मेटिक हर्निया	२९३
डायबीटिज़ मेलिटस	७१७

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग नाम	पृष्ठ
डायबीटिज़ इन्सीपीडस	७२४
डिमेंशिया प्रीकॉक्स	७३१
डिस्यूरिया	६६१
डिफ्थीरिया	१००८
डेंग्यू ज्वर	११०७
डेण्डी फीवर	११०७
डम-डम ज्वर	१११२
त	
तीव्र उदर	६५
तमक श्वास	४३३
तीव्र श्वासप्रणाल-श्वसनीशोथ	४९७
तीव्र गोणिकावृक्क शोथ	६८७
तंत्रिकादौर्बल्य	७२९
तंत्रिकावसाद	७२९
तनावजन्य शिरःशूल	७९६
तिजारी	९१८
तन्द्रिक ज्वर	९५८
तपेदिक	११४४
तीव्र संक्रमणजन्य यकृत् शोथ	१२०३
त्रिधारा तन्त्रिकार्ति	८२९
थ	
थोरेक्सिक पेन	५१९
थाइसिस	११४४
द	
दुष्ट प्रतिश्याय	१०८
द्विकपर्दीकपाटिका-अक्षमता	६२२
दण्डक ज्वर	११०७
दौरे पड़ना	८१८
ध	
धमनी जरा रोग	६४२
धमनीकाठिन्य	६५३
धमनी का कड़ा होना	६५३
धमनी जठरता	६५३

रोग नाम	पृष्ठ
न	
नान-ट्रॉपिकल स्प्रू	२१४
नजला	३५५
नेजोफैरिञ्जियल कटार	३५५
नासापाक	३५५
न्यूमोनिया	३९८
न्यूमोकोनिओसिस	४९८
नासागुहाशोथ	५२०
निम्न रक्तचाप	६३४
नेफ्राइटिस	६६५
नान-स्पेसिफिक यूरेथ्राइटिस	७१४
न्यूरेस्थीनिया	७२९
नींद न आना	७४०
नपुंसकता	७६९
नॉक्टर्नल इमीसन	७७८
नर्तन रोग	८१२
नाड़ीप्रदाह	८१४
प	
परिफुफ्फुस निःसरण	५०६
पायरोसिस	२८
पेट का दर्द	६५
पेचिस	८८
प्रवाहिका	८८
पाइल्स	१८१
पेरिटोनाइटिस	१९०
पायोजेनिक कोलेञ्जाइटिस	२१२
पूयजन्य पित्तवाहिनी शोथ	२१२
पेप्टिक अल्सर	२१९
परिणामशूल	२१९
प्रपाचीय व्रण	२१९
पैंक्रियाटाइटिस	२३५
पित्ताश्मरिता	२४५
पित्ताशय की पथरी	२४५
प्रवेशी कामला	२५८

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग नाम	पृष्ठ
पित्ताशय शोथ	२७१
पित्ताशय शूल	२७१
पित्ताशय का कैंसर	३३१
प्रतिश्याय	३५५
प्लूरिसी	४६०
पसली का दर्द	४६०
पल्मोनरी एम्फीसीमा	४७८
पल्मोनरी फाइब्रोसिस	४८९
प्रादेशिक अन्त्रशोथ	१४४
पोर्टल सिस्टेमिक इनसेफेलोपैथी	१७८
प्लूरल इफ्यूजन	५०६
पल्मोनरी थ्रोम्बो-इम्बोलिज्म	५०८
पल्मोनरी एडीनोमेटोसिस	५१०
पल्मोनरी हर्ट डिसीज	५२५
पेरीकार्डाइटिस	५९९
पुरःस्थग्रन्थिशोथ	७०५
प्रोस्टेटाइटिस	७०५
प्रोस्टेट-वृद्धि	७०५
पौरुषग्रन्थि का शोथ	७०५
पेन इन थूरेश्रा	७१६
पागलपन	७४५
प्रीमेच्योर इजाकुलेशन	७६९
पॉली न्यूराटिस	८१४
पेरिफेरल न्यूराटिस	८१४
पैराप्लेजिया	८३९
पैरों का लकवा	८३९
पक्षाघात	८४१
पारकिन्सोनिज्म	८५६
पार्किन्सनता	८५६
पूतिजीवरक्तता	८७२
पूयरक्तता	८७५
पाइमिया	८७५
पाषाणगदर्भ	८९०
परटूसिस	८९७
पूयमेह	१०२१
पोलियोमाइलाइटिस	१०८६
पुनरावर्ती ज्वर	१०९८
पोथकी	११२५
पीलिया रोग	१२०३
परिवार-नियोजन कार्यक्रम	१२४३
पाण्डुरता	१४८
फ	
फ्लेटचुलेन्स	४५
फुप्फुस शोथ	३९८
फुप्फुस पाक	३९८
फुप्फुस प्रदाह	३९८
फुप्फुसावरण शोथ	४६०
फुप्फुसावरण प्रदाह	४६०
फुप्फुस-तन्तुमयता	४८९
फुप्फुस विद्रधि	४९३
फुप्फुस-धूलिमयता	४९८
फुप्फुसपात	५००
फुप्फुस-निपात	५००
फेफड़े का पिचक जाना	५००
फुप्फुसी घनास्त्र अन्तःशल्यता	५०८
फुप्फुस कैंसर/फेफड़े का कैंसर	५११
फुप्फुस रोग जनित हृदय-नैर्बल्य	५२५
फालिज	८४१
फेसियल पैरालिसिस	८५२
फ्लू	९०८
फाइलेरिया रोग	९७८
फीलपाँव	९७८
फाइलेरिएसिस	९७८
फॉसियल डिफ्थीरिया	१००८
फिरंग रोग	१०२९
फ्लो ऑफ बाइल	१०६२
ब	
बदहज्मी	३

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग नाम	पृष्ठ
बर्निंग पेन	२८
बद्धोदर	१३०
बवासीर	१८१
बिलियरी केलकुलस	२४५
व्रणीय-वृहदन्त्रशोथ	२९९
बड़ी आँत की सूजन	२९९
वृहदन्त्र एवं मलाशय का कैंसर	३३४
ब्रॉन्काइटिस	३८३
ब्रॉन्को-न्यूमोनिया	४१५
ब्रॉन्कियेक्टेसिस	४२५
ब्रॉन्कियल अस्थमा	४३३
ब्रॉन्कोजेनिक कार्सिनोमा	५११
ब्रॉन्कियल कार्सिनोमा	५११
ब्रैडीकार्डिया	५४४
ब्लडप्रेशर	६४२
बैक-एक	८०७
बहुतंत्रिकाशोथ	८१४
ब्रेन एब्सिस	८५९
बॉटुलिज्म	८७८
बालपक्षाघात	१०८६
बार-बार आने वाला बुखार	१०९८
ब्रेक बोन फीवर	११०७
ब्रूसेलोसिस	१११९
बड़ी माता	११४०
ब्रेन हीमोरेज	१२२६
ब्रॉन्कोसील	१२२९
बॉकिओलर कार्सिनोमा	५१०
भ	
भ्रमि	८३२
भारतीय काल ज्वर	१११२
म	
मन्दाग्नि	३
मुखपाक	१८
मुँह आना	१८
मुँह का पकना	१८
मलावरोध	५४
मलबन्ध	५४
मुखगुहा का कैंसर	३०६
मायोकार्डियल इस्कीमिया	५७२
माइट्रल इन्कॉम्पीटेन्स	६२२
माइट्रल रेगर्जीटेशन	६२२
माइट्रल बाल्व का कार्य न करना	६२२
मूत्रकृच्छ्र	५६१
मूत्रत्याग करने में पीड़ा या जलन	६६१
मूत्र-अंसयति	६६२
मूत्र का अपने आप निकलन जाना	६६२
मूत्रघात	६६३
मूत्राशयशोथ	६८२
मूत्रपथ का संक्रमण	६८७
मूत्रविषयमता	६९७
मूत्रविषसंचार	६९७
मूत्रमार्ग का दर्द	७१६
मधुमेह	७१७
मनःश्रान्ति	७२९
मानसिक अशान्ति	७२९
मेनिया/इन्सैनिटी	७४५
मद्यसार व्यसन	७५२
मास्टर्बेशन	७७६
मिरगी	८१८
मेनियर रोग	८३२
मस्तिष्क-विद्रधि	८५९
मस्तिष्कशोथ	८६३
मस्तिष्क ज्वर	८६३
मम्प्स	८९०
मलेरिया	९१८
मौसमी बुखार	९१८

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग नाम	पृष्ठ
मीजिल्स	९४२
मॉबिली	९४२
मियादी बुखार	९५८
मोतीझरा	९५८
मन्थर ज्वर	९५८
मधुकर ज्वर	९५८
मस्तिष्कावरण शोथ	९८६
मेनिञ्जाइटिस	९८६
मस्तिष्क-सुषुम्ना ज्वर	९८६
मूषकदंश ज्वर	११०२
मोहक ज्वर	११०३
माल्टा ज्वर	१११९
मसूरिका	११४०
मस्तिष्कगत रक्तस्राव	१२२६
मूर्च्छा	५४२
य	
यकृत्-संन्यास	१७८
यकृत्पात	१७८
यकृत्शोथ	२५८
यकृत्-प्रदाह	२५८
यकृत् सिरोसिस	२५३
यकृत् का कैंसर	३२४
युवा-सुलभ जीर्ण कास	४७०
यूरीमिया	६९७
युवासुलभ उन्माद	७३१
योषापस्मार	७५६
यक्ष्मा	११४४
र	
रक्तक्षीणता	१४८
रक्तभार-वृद्धि	६४२
रक्तवमन	१२२७
रीनल यूरीमिया	६९७
रक्तमेह	७१६
रक्तचापन्यूनता	६३४

रोग नाम	पृष्ठ
रक्तपूयता	८७५
रक्त में पूय का संचार होना	८७५
रोबियोला	९४२
रोहिणी	१००८
रैबीज	१०४२
रुमैटिक ज्वर	१०५०
रुमैटिक फीवर	१०५०
रिलैप्सिंग फीवर	१०९८
रैट-बाइट फीवर	११०२
रतिज कणिकागुल्म	११२१
रोहें	११२५
रुबेला	११२९
रोमान्तिका	९४२
राजयक्ष्मा	११४४
राजरोग	११४४
राष्ट्रीय कुष्ठ उन्मूलन कार्यक्रम	१२३७
राष्ट्रीय स्वास्थ्य कार्यक्रय	१२३७
राष्ट्रीय कुष्ठ उन्मूलन कार्यक्रम	१२३७
राष्ट्रीय एड्स कार्यक्रम	१२३७
राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम	१२४०
कालाजार नियंत्रण कार्यक्रम	१२४०
राष्ट्रीय फाइलेरिया नियंत्रण कार्यक्रम	१२४०
राष्ट्रीय दृष्टिहीनता नियंत्रण कार्यक्रम	१२४०
राष्ट्रीय क्षयरोग नियंत्रण कार्यक्रम	१२४१
राष्ट्रीय घेंघा रोग नियंत्रण कार्यक्रम	१२४२
रोग निरोधक टीका कार्यक्रम	१२४२
परिवार-नियोजन कार्यक्रम	१२४३

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग नाम	पृष्ठ
रीजिनल अन्त्रशोथ (इण्टेराइटिस)	१४४
ल	
लास आफ इपीटाइड	१२
लंग एब्सिस	४९३
लोहित ज्वर	११००
लाल बुखार	११००
लम्बेगो	८०७
लासक	८१२
लकवा	८४१
लीशमैनियेसिस	१११२
लिम्फोग्रेनुलोमा इन्वीनल	११२३
लेप्रोसी	११३०
लो ब्लड-प्रेशर	६३४
व	
वायुप्रणाल शोथ	३८३
वायुप्रणाल-विस्तृति	४२५
विन्गार्टन्स सिण्ड्रोम	४७०
वायु प्रकोष्ठ-विस्तृति	४७८
वक्ष का दर्द	५१९
वायुविवरशोथ	५२०
वल्वुलाइटिस	६११
वृक्कशोथ	६६५
वृक्कप्रदाह	६६५
वस्तिशोथ	७८२
वेसीलूरिया	६८७
वृक्क शूल	७०७
विखण्डित मनस्कता	७३१
वॉझपन	७८३
विवर शिरोवेदना	७९८
वर्टिगो	८३२
वायरल एन्सेफेलाइटिस	८६३
विचित्र रोग	८६३
वातश्लैष्मिक ज्वर	९०८

रोग नाम	पृष्ठ
विषम ज्वर	९१८
वेरीसेला	९५२
विस्फोटिका	९५२
विस्फोटक ज्वर	९५२
विसूचिका	१०६२
वंक्षणीय लसीका कणिका गुल्म	११२३
वेरीओला	११४०
वायरलजन्य यकृत् शोथ	१२०३
वर्षा ऋतु की बीमारी	११०३
वमन : कारण पहिचानिए	१२१७
स	
स्टोमेटाइटिस	१८
स्प्रू	३८
संग्रहणी रोग	३८
सीलियक डिसीज	२१४
सिरोसिस ऑफ द लिवर	२८३
सामान्य सर्दी	३५५
साँस की बीमारी	४३३
सुपुरेटिव न्यूमोनिया	४९३
स्वतःस्फूर्ति वातवक्ष	५०३
स्पॉण्टेनियस-न्यूमोथोरेक्स	५०३
साइनूसायटिस	५२०
सिनकोप	५४२
सरकुलेटरी अरेस्ट	९४५
सिस्टाइटिस	६८२
सॉफ्ट सोर	७१३
सीजोफ्रीनिया	७३१
समय-पूर्व अपसारण	७६९
स्वप्नदोष	७७८
सियाटिका	८०२
सकम्प पक्षाघात	८५६
सेप्टीसीमिया	८७२
सेरिब्रो-स्पाइनल फीवर	९८६

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोग नाम	पृष्ठ
सुजाक	१०२१
सिफिलिस	१०२९
स्कार्लेट फीवर	११००
संक्रामक पीलिया	१२०३
संक्रामक कामला	१२०३
साँस फूलना	१२३०
सिर चकराना	८३२
श	
श्वेतातिसार	३८
शूल	६५
शरीर का पीलापन	१४८
श्वसनी शोथ	३८३
श्वसनक ज्वर	२९८
शैंकराभ	७१३
शिर:शूल	७८७
श्वसनी-फुप्फुसशोथ	४१५
श्वसनी-विस्फार	४२५
श्वसनिका दमा	४३३
श्वासरोग	४३३
श्वसनिका कार्सिनोमा	५१०
श्वसनीजन्य कार्सिनोमा	५११
शैंकरायड	७१३
शिरोभ्रम	८३२
शीत ज्वर	९१८
श्लीपद	९७८
श्लीपद ज्वर	९७८
शूलास्थि ज्वर	११०७
शीतला	११४०
शोष	११४४
शीघ्र हृदयता	५४७
ह	
हाइपोक्लोरहाइड्रीया	३
हृद्दाह	२८
हर्ट बर्न	२८
हाइपर क्लोरहाइड्रीया	३२
हेल्मिन्थिएसिस	१५७
हेपेटिक कोमा	१७८
हेपेटिक फेल्योर	१७८
हीमोराइड्स	१८१
हेपेटाइटिस	२५८
हायटस हर्निया	२१३
हृदय का धड़कना	४२९
हृत्कम्प	५२९
हृद्रोध	५३७
हर्र-ब्लॉक	५३७
हृत्मन्दता	५४४
हृदयावरोध	५४५
हृत्क्षिप्रता	५४७
हृदय की अतिशीघ्रता	५४७
हृत्पात	५५५
हर्ट फेल्योर	५५५
हृदय का फेल होना	५५५
हृत्शूल	५७२
हृदयशूल	५७२
हृद्धमनी घनास्रता	५८८
हृदय की धमनी में रक्त जमना	५८८
हृदयावरणशोथ	५९९
हाइपोटेन्सन	६३४
हाई ब्लडप्रेशर	६४२
हीमेचूरिया	७१६
हिस्टीरिया	७५६
हस्तमैथुन	७७६
हेड-एक	७८७
हेमिप्लेजिया	८४१
हस्तपाद आकर्ष	८५५
हूपिंग कफ	८९७
हाथीपाँव	९७८

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हस्तिचर्मता	९७८	हैजा	१०६२
हाथीपगा	९७८	हड्डी-तोड़ ज्वर	११०७
हर्पीज़ ज़ोस्टर	१०३९	हर्वीज़ जेनीटेलिस	११२०
हाइड्रोफोबिया	१०४२	हेन्सन्स रोग	११३०

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधार ग्रन्थ-सूची

Churchill's Pocket Book of Medicines.—Patere Hayes Thomes W. Mackay.

Sevil's System of Clinical Medicines.

Essentials of Cardiac Therapy —K. K. Datey & A. A. Hingorani.

Davidson's Principles and Practice of Medicine—John Macled

Current Medical Diagnosis & Treatment.
—Marcus A. Krupp. M. D.; Milton J. Chatton. M. D.; David Werdegar, M. D.

Medicines for Students and M P H. Practitioners —Dr. K. Chaudhuri

Mims India/Cims

Modern Treatment —Santosh Mukherji

Medicines for Students —A. F. Golwalla M. D., F. A. C. C., F. C. P. S.

Clinical Pathology —S. N. Thomus

Modern Treatment —Nautial

Cancer Diagnosis Tatha Chikitsa—Dr. Priya Kumar Chaubey.

Treatment of Mental and Nervous Disease.— Dr. Priya Kumar

Text Book of Medicine —P. C. Das.

Modern Allopathic Treatment —Dr. Shiv Kumar and Dr. Kalicharan.

Adhunik Chikitsa Shastra —Dharm Dutt Vaidhya

Sankramak Roga Vigyan —Kaviraj Balakram

Allopathic Nidan Evam Chikitsa —Dr. Vijaya Rikh.
—Dr. Rajesh Bhatia etc.

Clinical Digdarshika —Civil Services Pariksha 1992

Kaya Chikitsa —Dr. Ganga Sahay Pandey.

Others Medical Journels and Health Magzines.

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

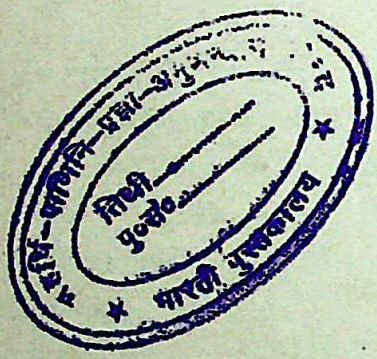

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0.In Public Domain. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.